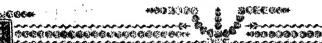
वीर	सेवा	मन्दिर	
	दिल्ल	ती	
	*		
	23	109	
क्रम संख्या	2 1 XC	(४४) निरं	ıcı
काल नं			
ख़गड़			





वर्ष ६ छं } वीरनिर्वाण सचित्र खास अंक {वीर सं, २४३९ कार्तक.



संपादक:-मूलचंद किसनदास कापडीआ-सुरतः

Secretaria de la cuerca del la cuerca de la cuerca de la cuerca de la cuerca del la cuerca







国ののの作品性のでき

*estables established

* CONTROL CONT

O

The state of the s

30000

नवीन वर्षारमें नम्र याचना १ श्री कैलास पर्वतनी यात्रा ६५ आ वर्षे शांति स्थापो— २ कचन केवां बदवां जोइए १ ७३ उन्नति (हिंदी) ७५ स्थाद्किय नोंध १ स्याद्वाद महाविद्यालय—काशी ८० आत्मोन्नति (हिंदी) ८१ स्थाद्किय नोंध १ स्याद्वाद महाविद्यालय—काशी ८० आत्मोन्नति (हिंदी) ८१ स्थाद्वाद महाविद्यालय—काशी ८० आत्मोन्नति (हिंदी) ८१ सानिस ब्याधि १० सहारमा दादाभाईना नियमो १० सेतवाल भट्टारकनी योजना १० सेतवाल सेवाल सेवाल १० सेवाल सेवाल सेवाल १० सेवाल	विषयानुक्रम		आपणे कवा थवुं जोइए ?	46
आ वर्षे शांति स्थापो— २ कचन केवां वदवां जोइए ! ७३ ए जैन दिगंबर तणो—विजय— २ उन्नति (हिंदी) ७५ रंपादकीय नोंध ३ स्थादवाद महाविद्यालय—काशी ८० का न व्यापेन विजय परिचय १ अप्रमोजिति (हिंदी) ८१ इस अंकके वित्रोंका परिचय १ अप्रमोजिति (हिंदी) ८१ पहोंच—अवलोकन २४М १४ ज्ञानाने योग्य दान ८४ पहोंच—अवलोकन २४М १४ ज्ञान संस्थाओ १० उत्र ति (हिंदी) १४ ज्ञान संस्थाओ १० प्रा त्र ति (हिंदी) १० ज्ञान संस्थाओ १० प्र त्र त्र त्र का कोई नहिंदि (हिंदी) १० ज्ञान संस्थाओ १० प्र त्र त्र त्र का कोई नहिंदि (हिंदी) १० ज्ञानवरो माटे शिखामणो १० प्र त्र त्र त्र का कोई नहिंदि (हिंदी) १० इंक पण बोधक अने रमुर्जा १०० प्र त्र त्र त्र त्र मारे हिंदी १०० समयिन्धिक अने रमुर्जा १०० प्र त्र त्र त्र ते		9	श्री कैलास पर्वतनी यात्रा	६५
प जैन दिगंबर तणी—विजय— २ उन्नति (हिंदी) ७५ ग्रंपादकीय नोंध ३ स्याद्वाद महाविद्यालय—काशी ८० कार्य- वण्णना [काशीनुं वर्णन] ८ आत्मोजित (हिंदी) ८१ इस अंकके चित्रोंका परिचय १ मानसिक व्याधि १० पहोंच—अवलोकन २४M जैन समाचार संग्रह २४N जैन समाचार संग्रह २४N तिन प्रभावार संग्रह १२८० Lord Mahavir's Candles The Soul (By H. Warren, London) २७ तिक्ष क्षेत्र काहि है (हिंदी) ३४ कत्तां कोई नहिंहे (हिंदी) ३४ कत्तां कोई नहिंहे (हिंदी) ३४ ना (मराठी) ३० तामर महात्म्य ३० तामर महात्म्य ३० तामर महात्म्य ३० श्रीमतोने शिखामण ४६ श्रीमतोने शिखामण ४६ समयिन-धुनिदर्शनम् (संस्कृत) १०८ श्रीमतोने शिखामण ४६ जैन जातिकी दशा (हिंदी) ११० जैन मणाचा प्रचार (मराठी) ५३ अमदावाद बोर्डिंगनो मेलावहो ११३ पारसमणि ५४ विनोद-वाण ११६	_	1	कचन केवां वदवां जोइए 🗸	50
स्थाद्कीय नोंध कार्यादकीय नोंध कार्याचार हैं। कार्याने वर्णन कार्या कार्याचान योग्य दान क्ष्मानान योग्य दान क्षमानान योग्य दान का्याधि का्यामाने योग्य दान क्षमानान योग्य दान का्याधि का्यामाने योग्य दान क्षमाने योग्य दान का्याधि का्यामाने योग्य दान का्याधि का्यामाने योग्य दान क्षमाने योग्य दान का्याधि का्यामाने योग्य दान क्षमाने योग्य दान का्याधि का्यामाने योग्य दान का्याधि का्यामाने योग्य दान का्याधि का्यवि कांयि कांयि कांयवि कांयवि कांयवि कांयवि कांयवि कांयवि कांयवि क	1	3	उन्नति (हिंदी)	७५
कारि वण्णना [काशीनुं वर्णन] ८ आत्मोन्नति (हिंदी) ८१ जमानाने योग्य दान ८४ पहोंच—अवलोकन २४		• 1	स्याद्वाद महाविद्यालय-काशी	60
इस अंकके चित्रोंका परिचय पहोंच-अवलोकन रथा जैन समाचार संग्रह Lord Mahavir's Candles The Soul (By H. Warren, London) The Pevalence of Jainizam White is wanted Most / 32 कत्तां कोई नहिंह (हिंदी) कामर महात्म्य नी अधुनिक स्थित अधुनिक स्थित अधुनिक स्थित अधुनिक शिखामण अभिमनेद शिखरजी तीर्थ अभिमनेद शिखरजी तीर्थ परसमाण अभिद्रां विनोद न्याण		,	आत्मोन्नति (हिंदी)	6?
पहोंच-अवलोकन जैन समाचार संग्रह Lord Mahavir's Candles The Soul (By H. Warren, London) The Pevalence of Jainizam White is wanted Most कर्ता कोई नहिं हैं (हिंदी) कर्ता कोई नहिं हैं (हिंदी) कामर महात्म्य नी आधुनिक स्थित अप्रिमंद शिखरजी तीर्थ अभिमेद शिखरजी तीर्थ परसमाणि पर विनोद-त्राण भानांसक व्याधि शा माटे मित्रता तृटे ? शो माटे मित्रता तृटे ? शो महात्मा दादाभाईना नियमो भहात्मा दादाभाईना नियमो		,	जमानाने योग्य दान	68
पहाच-अवलोकन जैन समाचार संग्रह Lord Mahavir's Candles The Soul (By H. Warren, London) The Pevalence of Jainizam White is wanted Most कर्ता कोई नहिंह (हिंदी) कर्ता कोई नहिंह (हिंदी) कामर महारम्य नी आधुनिक स्थित अधुनिक स्थित अधुनिक स्थित अधुनिक स्थित अधुनिक स्थित अधुनिक स्थित अधुनिक प्रिक्त अधुनिक दिश्वत अधुनिक विश्वमण अभिमेद शिखरजी तीर्थ जैन मणाचा प्रचार (मराठी) परसमाण अभ्याचाद वोर्डिंगनो मेलावडो २९९ विनोद-याण १९९ अमदावाद वोर्डिंगनो मेलावडो १९९ विनोद-याण		1	मानसिक व्याधि	९,०
Lord Mahavir's Candles The Soul (By H. Warren, London) The Pevalence of Jainizam White is wanted Most कत्तां कोई निहं हैं (हिंदी) तामर महात्म्य नी आधुनिक स्थित अधुनिक स्थित अधुनिक स्थित अधुनिक शिखरजी तीर्थ अभ्याचा प्रचार (मराठी) जैन संस्थाओ १२ केतां कोई नहिं हैं (हिंदी) ३५ तामर महात्म्य नी आधुनिक स्थित अधुनिक स्थित अधुनिक शिखरजी तीर्थ अभ्याचा प्रचार (मराठी) उने जोन जातिकी दशा (हिंदी) १५० जैन जातिकी दशा (हिंदी) १५० जैन मणाचा प्रचार (मराठी) १५३ विनोद-वाण १५६	•	*		e ?
The Soul (By H. Warren, London) The Pevalence of Jainizam White is wanted Most कर्ता कोई नहिं है (हिंदी) कर्ता (संस्कृत) प्रकृता (संस्कृत) श्रीमंतोन शिखामण श्रीसंगेद शिखरजी तीर्थ श्री जैन जातिकी दशा (हिंदी) जैन मणाचा प्रचार (मराठी) परसमाण पर्य विनोद-याण श्री विनोद-याण		1		
London) 27 सेतवाल भट्टारकनी योजना % श्र विनोद नाण १९% ते प्र विनोद नाण १९%		25		
The Pevalence of Jainizam White is wanted Most 32 जिनों माटे शिखामणी 30 कर्ता कोई निहें हैं (हिंदी) ३४ जिनों मेहिहासिक समालोचन ९७ हंक पण बोधक अने रमुर्जी १०० कामर महात्म्य ३० रतलाम बोर्डिंगनो मेलावडो १०३ मितोने शिखामण ४६ समयसिन्धुनिद्शनम् (संस्कृत) १०० श्रीसमेद शिखरजी तीर्थ ४७ जिन जातिकी दशा (हिंदी) ११० जैन मणाचा प्रचार (मराठी) ५३ अमदाबाद बोर्डिंगनो मेलावडो ११३ पारसमाणि ५४ विनोद-वाण ११५		27		
कर्ता कोई नहिं हैं (हिंदी) ३४ जैनोनुं ऐतिहासिक समालोचन १,७ विनोद महाहम्य ३० रतलाम बोर्डिंगनो मेलावडो १०२ मिराठी) ४४ एकता (संस्कृत) १०८ श्रीमेतोन शिखामण ४६ समयमिन्धुनिद्द्यनम् (संस्कृत) १०९ श्रीसमेद शिखरजी तीर्थ ४७ जैन जातिकी दशा (हिंदी) ११० जैन मणाचा प्रचार (मराठी) ५३ अमदाबाद बोर्डिंगनो मेलावडो ११३ पारसमाणि ५४ विनोद-वाण	•			
त्रिता काई नाह ह (हिंदा) २४ हंक पण बोधक अने रमुर्जी १०० कामर महात्म्य ३० रतलाम बोर्डिंगनो मेलावडो १०३ नी आधुनिक स्थिति ४४ एकता (संस्कृत) १०८ श्रीमेतोने शिखामण ४६ समयमिन्धुनिद्द्यनम् (संस्कृत) १०९ श्रीसमेद शिखरजी तीर्थ ४० जैन जातिकी दशा (हिंदी) ११० जैन मणाचा प्रचार (मराठी) ५३ अमदाबाद बोर्डिंगनो मेलावडो ११३ पारसमाणि ५४ विनोद-वाण ११५	What is wanted Most	32		
कामर महात्म्य ३० रतलाम बोर्डिंगनो मेलावडो १०३ नी आधुनिक स्थित ४४ एकता (संस्कृत) १०८ श्रीमेतोने शिखामण ४६ समयिमन्युनिदर्शनम् (संस्कृत) १०९ श्रीसमेद शिखरजी तीर्थ ४० जैन जातिकी दशा (हिंदी) ११० जैन मणाचा प्रचार (मराठी) ५३ अमदाबाद बोर्डिंगनो मेलावडो ११३ पारसमाणि ५४ विनोद-वाण ११५	कर्त्ता कोई नहिंहै (हिंदी)	३४		***
कामर महात्म्य ३० रतलाम बोडिंगना मलावडो १०३ नी आधुनिक स्थिति ४४ एकता (संस्कृत) १०८ श्रीमेतोने शिखामण ४६ समयिमन्युनिदर्शनम् (संस्कृत) १०९ श्रीसमेद शिखरजी तीर्थ ४० जैन जातिकी दशा (हिंदी) ११० जैन मणाचा प्रचार (मराठी) ५३ अमदाबाद बोडिंगनो मेलावडो ११३ पारसमाणि ५४ विनोद-वाण ११६	्र ना (मराठी)	30	•	,00
नी आधुनिक स्थिति ४४ एकता (संस्कृत) १०८ श्रीमंतोने शिखामण ४६ समयमिन्धुनिद्द्यनम् (संस्कृत) १०९ श्रीसमेद शिखरजी तीर्थ ४० जैन जातिकी दशा (हिंदी) ११० जैन मणाचा प्रचार (मराठी) ५३ अमदाबाद बोर्डिंगनो मेलावडो ११३ पारसमाणि ५४ विनोद-वाण ११६	a contract of the contract of	30	रतलाम बोर्डिंगनो मेलावडो	?03
श्रीमेतोने शिखामण ४६ समयमिन्धुनिद्द्यनम् (संस्कृत) १०९ श्रीसमेद शिखरजी तीर्थ ४० जैन जातिकी दशा (हिंदी) ११० जैन मणाचा प्रचार (मराठी) ५३ अमदाबाद बोर्डिंगनो मेलावडो ११३ पारसमाण ५४ विनोद-वाण ११६		88	एकता (संस्कृत)	306
श्रीसमेद शिखरजी तीर्थ ४० जैन जातिकी दशा (हिंदी) ११० जैन मणाचा प्रचार (मराठी) ५३ अमदाबाद बोर्डिंगनी मेलावडी ११३ पारसमाणि ५४ विनोद-बाण ११५		73	समयसिन्युनिद्शनम् (संस्कृत)	200
जैन सणाचा प्रचार (मराठी) ५३ । असदाबाद बोर्डिंगनो मेलावडो ११३ पारसमाणि ५४ विनोद-वाण ११५		1	जैन जातिकी दशा (हिंदी)	990
	A	4.3	अमदाबाद बोर्डिंगनी मेलावडी	993
मनुष्य देह ५३ आमचे क्षुद्र विचार (मराठी) ११८	पारसमाणि	43	विनोद-वाण	996
	मनुष्य देह	43	आमचे क्षुद्र विचार (मराठी)	336

त्यागीओंके अलग २ फोटों.

(१) श्रीमान दिगंबर मुनि श्री अनंतकीतिजी, (२) श्रीमान त्यागीजी ऐलक मन्नालालजी, (३) श्रीमान त्यागीजी क्षेत्रक मन्नालालजी, (४) पंडिताचायंबर्ध्य भट्टारक श्री चारूकीर्तिजी (५) त्यागीजी आनंदीलालजी, (६) ब्र. शीतलमसादजी, (७) बाबा भगीरथजी वर्णी और उदासीन लाला गेंदनलालजी के बहुतही बदीआं आर्रग्लेन पेपरोपे मुद्रित किये हुवे अलग २ फोटों सीसेमे जडवाने योग्य तैयार है. प्रत्येकका मुल्य सिर्फ ०) एक आना १०० प्रतिका मुल्य स्ट. ४) इच्छा हो तो शीव्रही मंगाईए.

मेनजर, दिगंबर जैन पुस्तकालय-सुरतः

चित्रोंनी नामावली र

	वित्रामा मामावल	1		20174020
नंबर	नाम	प्र ष्ठ		श्री क्षेत्र स्तर्वा
9		मुख पृष्ठ		कोल्हापुर जैन
2	मुनि अनंत कीर्तिजी	6		प्रो. ए. बी. व
ع	त्यागीजी पन्नालालजी	4	३३	प. कलाप्पा भ
3	भट्टारक श्री चारूकीर्तिजी	0		अण्णाप्पा नान
4	त्र. शीतलपसाद्जी	e,	३५	बी. पी पाटी
ξ	त्यागी आनंदीलालजी	१६	३६	बा. सूर्यभानुज
Ġ	वाबा भगीरथजी वर्णी	१६	३७	अनंतराज पां
4	उदासीन ला. गेंदनलालजी		३८	नमीनाथ पाग
9	कुंवर दिग्विजय सिंहजी	१७	₹€.	तान्या नेमीना
	चंद्रसेन जैन वैद्य	وع	35	अमदावाद दि
88	पं. गोपालदासजी बरेंग्या	ર્જ	38	लाला रामचंद्र
	पं. पन्नालालजी बाकलीवा		४३	वाबु अजित प्र
	जे. एल. जेनी बेरिस्टर	28V	४३	``चैतनदासर्ज
\$8			88	''जुगल किशं
	शेठ माणकचंद्रजी जे. पी.	₹8H	86	''ज्योतिप्रसाद
	दोशी हीराचंद नेमचंद	₹8H	`8€	
	शेठ रामचंद्र नाथा	₹8 H	. ४७	
१८	पं. धन्नालालजी	₹81	35	·
१९	बी. माणेकचंद बैनाडा	२ <i>8</i> 1	1	मा. दीपचंदः
30	दोशी रावजी सखाराम	₹8I	40	
२१	झवेरी ठाकोरदास भ.	₹81	ا <i>ن</i> ې و د د د	
	साहु शेठ सलेखचंद्जी	₹8p	५३	परी. लल्लुभा
२३	शेठ विनोर्दाराम वालचंद	સ્પ		छोटा लाल घे. पं. एषः. के.
२४	वालचंदजी के ४ पुत्रां	३२		वाडीलाल मो
	मुंबाई जैन बोर्डिंग			झवेरी माणेक
२३	ला ला घमंडी लालजी			गांधी नहालच
२७	लाला देवीसहायर्जा			शेठ लालचंद
	श्री समेदशिखरजी			मुनिम धरमच

₹९	श्राविकाश्रम, मुंबाई	४९
३०	श्री क्षेत्र स्तवनिधि	५६
३१	कोल्हापुर जैन बोर्डिंग	५६
३२	प्रो. ए. बी. लड्डे एम. ए.	५७
३३	प. कलाप्पा भ. निटवे	40
38	अण्णाप्पा नानाप्पा लेंगडे	५७
३५	बी. पी पाटील, होसुर	५७
३६	बा. सूर्यभानुजी विकल	६४
३७	अनंतराज पांगल	६५
३८	नमीनाथ पांगल	
30.	तात्या नेमीनाथ पांगल	r
38	अमदावाद दि. जैन बोर्डिंग	ر ال
88	लाला रामचंद्र I. C. S.	७३
83	वाबु अजित प्रसादजी एम 🛶	.०३
४३	''चैतनदासजी वी. ए	
88	''जुगल किशोरजी	
Se.	'ज्योतिप्रसादजी ः	
'કે દ	Mr. H. Warren.	
४७	कलाप्पा अनंत उपाध्याय	69
85	शेठे लक्ष्मीचंदजी बमराना	66
86.	मा. दीपचंदजी उपदेशक	66
40	श्रीमती चतुरवाई. गुंजोठी	48
68	भूपालराव आ. जीरगे	८९,
بديا	परी. लल्लुभाई एल. सी. ई	. ९६
43	छोटा लाल्घ. गांधी	९ ६
48	पं. एपः. के. लालन	0,0
u _i u _i	वाडीलाल मोतीलाल शाह	e (5
५६	झवेरी माणेकलाल घे.	१०४
<i>ખ</i> , છ	गांधी नहालचंद सां.	१०४
46	शेठ लालचंद कहानदास	904
49	मुनिम धरमचंदजी	१०५

ॐ नम:श्री बीतरागाय।

નાહનાં અચ્ચાંએાના માતા પિતાએને ખુશ ખખર.

પ્રાચીન આર્ય વૈદકની અમૂલ્ય ઐાષધી

🍇 बालजीवन गुटिका. 💸

अधियं प्रिय जालंड संशंडत अने निराणी होय अने तेने कों आपने आनंद ઉपके, अेवी हरेडनी धर्छा होय छे, पण आपनाक आणसंथी એटले तेना भाताना लेकिनाहि व्यवहारमां नियमितपण्डं न होवाथी, अभर आलंडोने वणतसर अने हलेडा आहार न आपवाथी, तेम वधु अने कर आहार आपवाथी विशेर अनेड डार्चें थी ते डामल प्रदृतीवाणा जालंडा अनेड राशेना अपाटामां आवे छे. ते जालंडा अज्ञान होवाथी शुंधाय छे ते डही शहता नथी अने हरान थाय छे, तेथी हीने हीने तेमनी प्रदृति अशंडत अनी तेओ सुंडाता कर्या छे.

આ ગુટિકાએ જૈન મુનિ હર્ષકીર્તાસૂરિ નામના **આચારે લખેલા આર્ય** વૈદક પ્રથમા આધારથી. તેને જોઇતી વનસ્પતિએા ઘણા પ્રયાસ**થી મે**ળવી. તેમના લખ્યા મુજબ શુદ્ધતાથી બનાવી છે. સમય પ્રમાણે સારા વૈદાની સલા**હથી**

तेमां थाउँ। हेरहार करेंबा छ

આચાર્ય શ્રી પાતાના અનભાવથી લખે છે છે—"આ ગુટિકા છાત્ર વર્ગને જાણે કરપવૃક્ષ સમાન ફળીબૃત થાય છે, હુમેશાં આપવાથી ખાલકાતું પેટ માટું થયું, હાથ પગ ત્રીણા થવા, અગિમાંઘ, સાધારણ જવર, જાણું જવર, અજાણું, ઝાટા કળજ થવા અગર વધુ થવા, જતાદિકૃમિ વિકાર, ખાસી; કર્ક, દમ, શ્વાસ. પેટમાનું દુખવુ, યકૃત આદિ રાગો થવાથી ખીલકુલ ધારતી રહેતી નથી. અને કાઇપણ રાગ હાય તો તેના સમૂળ નાશ થાડા વખતમાંજ થાય છે. અગટેલું લાહું! સુધરે છે. કંડુ, ખુજલી, ગુમડાં વિગેરે ઉપરના રાગોના નાશ થાય છે. અલકા સશકત. નિરાગી અને પુષ્ટ ખને છે. રકત અને માંસની વૃદ્ધો થાય છે. હાલમાં કેટલેક ડેકાણે નાહનાં બચ્ચાંઓને અફીમ જેવા કેફી પદાર્થો આપવાની કુટેવા છે. પણ તેવા પદાર્થાથી ગુણુ આવવાનું બાજીએ રહી ઉલટા બાલકા અશકત, રાગી, અને નિસ્તેજ એવા બની અનેક રાગોના સ્થાનરૂપ બને છે; તેવા પદાર્થો નહિ આપતાં આ ગુટિકાઓ આપવાથી થણાજ ક્યારા થયા છે. આ ગુટિકાઓ ર–૩ માસનાં બાલકાથી પ–૬ વરસનાં બાલકા સધી અપાય છે.

આ પ્રાચીન અને ગુણકારી ગુટિકાના લાભ ગરીખ લાેકા પણ લઇ શકે, એ માટે કીંમત પણ ઘણી જુજ એટલે ૬૦ ગુટિકાની ખાટલી ૧ ના ફકત આઠ માના રાખી છે. ૩ ખાટલીના રા. ૧ પાસ્ટેજ જુદું. વેપારી લાેકાને કમિશન સાર્'મળશે. ઢેંક ઢેંકાણે એજ'ટા જોઇએ છે. અમા અત્રેથી ઘી, ગાળ; તમાકુ, મરચાં, મગફળી વિગેરે માલ ચાગ્ય કમિશન લઇ રાેકડેથી અથવા વી.

પી. થી ખરીદી કરી માકલીશું.

પત્ર વ્યવહારનું સરનામું:---

मेसर्स आर. टी. एस कुं॰, निपाणी (बेलगाम)

ધર્મ અર્થ, કામ અને માેક્ષ એ ચારે પુરૂષાર્થીનું સાધન શરીર છે. શરીર ટકવાના મુખ્ય આધાર આરાગ્ય અને શક્તિ ઉપર છે તથા આરાગ્ય અને શક્તિ મેળવવાનું તથા તેઓને

ટકાવવાનું મુખ્ય સાધનઃ—

આતંકનિયદ ગોળીઓ.

શરીરને તંદુરસ્ત અને બળવાન બનાવવામાં બિન હરીફ સાબીત થઇ છે. અસંખ્ય લોકોએ ને લાલ લીધા છે અને એને માટે અસંખ્ય સર્ટિપ્રિકેટા મહ્યા છે તથા મળે છે. એ ગાળીઓ દરેક ઝાતુમાં અને દરેક જાતની તળીયતવાળાને માફક આવે છે. હિંદુ, મુમલમાન, પારસીઓ અને યુરોપિયના પણ ઘણા ઉમંગથી તેના ઉપયોગ કરે છે અને પુરતા ફાયદા મેળવે છે. એ ગાળીઓ ખાવાથી પાચન શક્તિ સુધરે છે, લોહીના સુધારા તથા વધારા થાય છે. વીર્યસાવ વગેરે નળળાઇનાં કારણા તદન નાબુદ થાય છે. મગજ તથા છાતીના દુખાવા તેમજ કેડ અને પગની કળતર મટે છે અને શરીર પુષ્ટ થાય છે. કિંમત ગાળી કર ની ડબબી ૧ ના રૂપિયા ૧ એક સામદી ડબીઓ ખરીદનારને મળતી લેટ કમીશનના નિયમાં જાણવા માટે પ્રાઇસલિસ્ટ મંગાવી વાકેક થાઓ.

કામ શાસ્ત્ર. શરીર રક્ષા અને નીતિના નિયમા જાજાવા મંગાવા **તદન મફત.** વૈદ્ય શાહ્યી **મણિશ કર ગાવિ દછ** આતંકનિયહ ઐાપધાલય જામનગર. (કાઠિયાવાડ.)

उपहारोंके पोस्टेज सह इस पत्रका वार्षिक मुल्य है. १०१२-० है. और इस सचिव स्वास अंकका अलग मुख्य रु. १) है.

।। श्री वीतरागाय नमः ॥

शेठ प्रेमचंद मोतीचंद दिगंबर जैन बोर्डिंग तरफथी प्रकट थतुं मासिक

·**∰ दिगंबर जैन. ∭** THE DIGAMBER JAIN.

जराजरत्याः स्मरणीयमीश्वरम् । स्वयंवरीभूतमनश्वरिश्रयः ।। निरामयं वीतभयं भवच्छिदं । नमामि वीरं द्वसुरासुरेः स्तुतम् ॥

वर्ष ६ द्वं.] वीर संवत २४३९. कार्तिक. विक्र. सं. १९६९. [अंक १ लो.

→ भ नृतनवर्षारंभे नम्र याचना. भ<

અહા ! વાંચકા સજ્જના જૈન બ્રાતા, નવું વર્ષ નિર્વિધ નિર્ભય નિવારા, દિયે ખુધ્ધિ રૂડી કરૂં કામ સવા, ખર્સ દ્વિચારા ઠસ ધર્મ વીત્યાં વર્ષ આજે મને પાંચ **કામા** આણંજો સ્નેહીએં બાળ જાણી, નવીન વર્ષ છઠ્ઠા રૂડામાં પ્રવેશ; દુઈ ધ્યાન વાંચા વિચારા મનેથી. વળી વગથી વાંચકાને. મુકી સ્વાર્થ પરમાર્થને સાધવાને. કરાવા વળી **ગ્ર**ં**શ** ઉ**દધાર** જાઓ આંખ ખાલી ખીજા પ'થ ન્યારા, **ખની ખાયલા ઘર** મહીં બેસવાથી. સુકી મન દઈ ધન વળી તન્નથી જો, મટે અવદશા ઉજાતિ કામ થાયે. ધ્વજા ધર્મ ફડકે રહે ના નિરાશા.

નસું બેસતા વર્ષમાં જગ્ત ત્રાતા: વળી કામનાં કષ્ટ સર્વે વિદારા. ٩ મળે જે થકી પુષ્ય અમૃત મેવા; સાચા, વસ ના કિ દુષ્ટ મિશ્યાત્વ કાચા ૨ પુરા, કહિ કાર્ય કા મે' કીધાં જો કસુરા: કરા માક હેતે વદુ નમ્ન વાણી. 3 સજી વસ્ત્ર રૂડાં તમા હાથ ખેસું: કધારાને અજ્ઞાન કાઢા :કનેથી. 8 વિના સ્વાર્થનાં ટાહેલાંને મુકાને; કરા કમ્મરા ધર્મ પ્રસરાવવાને. પ સડયા ને પડયા જે મહા બુરી રીતે; નવા તાપણે ફાવીયા ખુબ સારા. È કૃદિ થાય ના ધર્મ ઉદ્ઘાર એથી: મચા રાત્રિ દિને ખરી ખ'તથી તા. O વળી કલેશ કે કાશનાં બીજ જાયે: ખરે એજ મુજ 'જીવનની' અલ્પ આશા.૮



आ वर्षे शांति स्थापो सुखद शोवकरा स्वामि श्री निर्विकारी.

પ્રારંભે વર્ષ નવે પરમ પ્રભુતા પ્રેમથી પાય વંદુ, રૂડી રીતે સુધારી પ્રતિ દિન ચડતું તેજ દો દીન અધુ; ભક્તો ભાવે નમે છે શુભકર શુભ કરા શુધ્ધ ખુધ્ધ વધારી, આ વર્ષે શાંતિ સ્થાપા સુખદ શીવકરા સ્વામી શ્રી નિર્વિકારી. ૧ તારી ભારી કૃપાથી અચળ સુખવે સર્વ કામા સધાયે, તારી દૃષ્ટિ દયાથી જગત જય મળે ચિંતવ્યું સદ્ય થાયે; આપા એવી સુશક્તિ નિશદિન પ્રેમે વીનતિને સ્વિકારી, આ વર્ષે શાંતિ સ્થાપા સુખદ શીવકરા સ્વામી શ્રીનિવિકારી. ર માયાળુ છે દયાળુ જનમ મરાણના દુઃખને કાપનારા, આધિ વ્યાધિ વિદારા જન તન મનના તાપને ટાળનારા; વિદા વૃધ્ધિ કરોને અતુલ સુખ ભરા વિત્ત ભંડાર ભારી, આ વર્ષે શાંતિ આપા સુખદ શીવકરા સ્વામી શ્રીનિવિકારી. ૩ (સર્યયા) સુપત શ્રીવકરા સ્વામી શ્રીનિવિકારી. ૩ (સર્યયા) સુપત શ્રીવકરા સ્વામી શ્રીનિવિકારી. ૩

आ 'जैन दिगंबर' तणो थाजो विजय अविन तळे.

٩

ર

3

પ્રતિમાસ આવીને અમારૂં તિમિર સદ્ય હુડાવતું, વળી નવીન તત્વા સાથ કંઈ કંઈ દિશા ખતલાવત: શું ધર્મ છે જૈના તહ્યા એ જ્ઞાન તેનાથી મળે; આ 'જેન દિગ' બર' તણા થાજે વિજય અવનિ તળ. શાંત રસ લાવી અમારા હૃદય પટમાં રેડતું, ને દિવ્ય વાણી વીરની આવી અહીં ઉખેલતું: તે વાંચતાં આ જીગર કેરી ક્રોધ અગ્નિ તા આ 'જૈન દિગ'ખર' તહેા થાંજો વિજય અવની તળે. સિધ્ધાંતના ખહુ સાર લાવી શાસ્ત્રબાેધ સમજાવતું, વળી લઈ પ્રસાદી પ'ડિતાની વ્હે ચી સહને આપત; શાથી ઉદય છે આપણા એ તત્વ તેમાં તા મળે; આ ' જૈન દિગ'બર ' તહેા થાંજો વિજય અવનિ તળે. નહિ દામની કંઈ આશ છે પરમાર્થને દેખાડતું, ભેટો તણા ભ'ડાર લાવી **કાર્ય દક્ષ દર્શાવ**તું; વળી જેને હીરાએ৷ તણા ફાટા ધરે છે આગળે, આ 'જૈન દિગ'ખર' તાણા થાજો વિજય અવનિ તળે. चेतन-(महुवाकर).

िक्षाय कीय नोंध है में संपादकीय नोंध है में कार्यकार कार्यकार

दिगंबरं जैनिमदं सुपत्रम्।
स्वातिं यथाप्तं हि तथैव यातु॥
सुबोधकैर्धार्मिक लेखवृन्दे।
युतं सुदा प्राह्ममिति त्रवीमि ॥१॥
दिगंबरम्याप्तमथाद्य षष्टम् ।
वर्षं विलोक्येव महान् हि हर्षः॥
मवेत्र केषां मनिस प्रकामम्।।
महाजनः सादरप्जितस्य ॥२॥
वर्षेः शरास्त्रेः किमनेन कार्यम्।
कृतं भवत् दृष्टि पथो न दृरम्॥
चित्राणि नाना रससंस्व्यभाषा।
विभान्ति जैनोन्नति देऽत्र पत्रे॥३॥

This is the first time that Journal this with appears English Articles. Upto yet!no journal has been published with articles in six languages and decorated with so many photos in the Digamber Jain Community, as has been done this time by this journal for which we are very glad. This special number contains articles from various illustrious persons from different parts of the country in different languages namely.-English, Sanskrit, Prakrit,

Hindi, Marathi & Gujarati, and has done its best to decorate it with 58 photos of some of the Jain Tyagis, Tirthas, educated, illustrious and wealthy persons and public institutions.

We are highly obliged to Proffesor Jagmandarlal Jaini M. A. Bar-at-law (Allahabad), Mr. Herbert Warren (London), Proffesor A B. Latthe M. A. (Kolhapur) and Mr. P. V. Jagdisa Aiyar M. A. Assist. Musium, Madras for sending in their intellectual articles for which we heartily thank them & no doubt they deserve them.

We prey Lord Mahavir that the current year may prove happy and prosperous to all human beings and give us sufficient power to serve the community to the extreme.

આહા! આજતા સમય કેવા આનંદ તેર છે! આજે વીર ત્રવીન વર્ષારમ નિર્વાણ સવત ૨૪૩૮ પૂર્ણ થઇ ૨૪૩૯ની

શરૂઆત થાય છે. વિક્રમ સંવત ૧૯૬૮ ભદલઇ ૧૯૬૯ શરૂ થાય છે અને તેજ સાથે આ માસિક રૂપી નૃતન બાળક પણ લાલન પાલનમાં પાંચ વર્ષ પૂર્ણ કરી આજરી છટ્ટા વર્ષમાં પ્રવેશ કરે છે. નવીન વર્ષની ખુશાલીમાં ઘેર ઘેર બારણે માતીના ચોક! પૂરાય છે તથા લાઉન સારાં સારાં વસ્ત્રો સજને નવાન વર્ષને નૃતન શક્યી લજવે છે તેમ આ બાળક પણ આ નવીન વર્ષે અવતવા સ્ત્રરૂપમાં નવીન

વસા સજ જનસમાજ આગળ બેસતા વર્ષની અભાર⊾ભાદી આપવા ઉપસ્થિત થાય છે. જ્યારથી આ બાળકના જન્મ થયા છે. ત્યા રથી આ બાળક દર વર્ષે નવીન નવીન સુધારા 'વધારા કરતું રહેવાને ચુકતું નથી, તેમ આ વર્ષે તા આ બાળક એવા માટા સધારા વધારા સાથે અને ઉત્તમ પેરશકમાં સજજ **થ**દને ઉપસ્થિત થયું છે કે જેવા જૈતોમાં પ્રથમજ છે. આ બાળકની આટલી **ખધી પ્રગતિ થ**વાનું કારણ કંઇ હશે હા. શા માટે નહિ શકારણા વગર તેહ થાયજ નહિ. આટલી બધી પ્રગતિ આ બાળ-કની થવાનું કારણ ખીજાું કાંઇ નહિ, 461 એના પાલન પાપશ એના કરનારાની ઉપરની પ્રેમાળ દર્ષ્ટિજ હશે. બીજું વળી શાં હોય ?

ગત વર્ષના આ પત્રના પ્રથમ અ ક જરા માટા અને દશ કાટા સાથે સાધારહા રીતે સુશાભિત પ્રકટ થયા હતા, જેને જૈન સમાજ તરકથી વિશેષ આદર મળવાથી છ **માસ થયાં અમાતે એવા** વિચાર ઉદ્દભવ્યા હતા કે જો આવતા વર્ષે નવા વર્ષના સચિત્ર ખાસ અંક. બીજા સાર્વજનિક પેપરા કહ્વાને શક્તિવાન થાય છે તેવા જો કાઢીએ. તા વળી આ પત્ર કેટલું બધું લાેકપ્રિય ચાય ? આ અમારા વિચારા દિનપ્રતિદિન બળવત્તર થતા જઇ પ્રથમ અમાએ એવા વિચાર કરેલા કે નવીન વર્ષના અંક ૨૦-૨૫ ફાટા સાથે ૭૫ પ્રષ્ટના પ્રકટ કરવા અને તે માટે અમાએ પ્રયાસ આરંભ્યા, એટલે તે વિચારને એટલા 2ેકા અને તે માટે અમને એટલી સામગ્રી મળવા લાગી કે અમા ૪૦ કારા સાથે ૧૦• પ્રષ્ટતા અંક પ્રકટ કરવાના ઠરાવપર આવ્યા પણ તે પછી દીવસે દિવસે એટલે આખરે દિવાળી સુધીમાં તેા અગ ખાસ અ'ક માટે

અમાને એટલી ગંજાવર સામગ્રી અને સહાતુ-ભૂતિ મળી આવી કે આખરે અમારો અાગલાે વિચાર કેરવી ધારવા કરતાં ત્રણ ધણા ખર્ચ કરી અા પત્રતા આ ગંજાવર ખાસ અંક **પ**્રકા**ટાએ**। ૧૫૦ પ્રષ્ઠતા સશામિત કરી પ્રકટ કરવાને અમા શક્તિવાન થયા છીએ. અને તે સાથે એક બે નહિ પણ આ અંક હીંદી, ગુજરાતી, મરાઠી, સંસ્કૃત, પ્રાકૃત અને ઇંગ્લીશ એવી છ ભા **પાંચા**તા લેખા સહિત એટલે આખા હિંદુ-સ્તાનના જૈતાને બ્રિય થઇ વડે તેવા પ્રકટ થઇ શક્યો છે. આ અંકમાં પ્રકટ કરવા માટે અમાને એટલા બધા લેખા મળેલા છે કે તે **ખધા જો પ્રકટ કરીએ, તેા અ**ગથી ત્રણ **ઘણા** માટા આ અંક શઇ જાય. જેથી અમારે ધાર્થા લેખા નાચારીએ મુસતવી રાખવા પડ્યા છે. પણ બાકી રહેલા સારા લેખાને હવે પછીના અંકામાં ક્રમવાર અવશ્ય પ્રક્રટ ક્રસ્-વામાં આવશે આખી જૈત કામમાં આવું પગલું કાે તરકથી ઉઠાવવામાં આવ્યું નથી. જેથી આ પ્રથમજ પ્રસંગ છે. માટે પ્રથમ પ્રસંગમાં જે કાંઇ ત્રુટિ જણાય, તે માટે વાંચકવર્ગ માકળ મત રાખશેજ એવી અમારી ધારણા છે. આ અંકમાં કુલ્લે ૫૮ કાટાઓ દરેકના પરિચય (જીવતચરિત્રો) સાથે એટલા માટેજ પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે કે તે દરેક કાેટાના દર્શત અને પરિચયથી જનસમાજમાં જાગ્રતિ થવા પામે અને તે વિદ્વાના, શ્રીમાના. દાનવીરા, સાગીએ! અને જાહેર સંસ્થાએ!ના ગુણા અને કાર્યોનું અનુકરસ બીજાઓ કરી શકે. આમાં એક ફેરટા એવા નથી કે જે માત્ર મનતે ખુશી કરવા માટેના બનાવડી હૈાય, પણ દરેક ફાટાથી વાંચકને નવું નવું જાણવાતું અને જોવાનું મળે તેમ છે. ખાસ અંક પ્રકટ કરવામાં બાબુ જ્યાતિ-પ્રસાદજ એ. જે. દેવખ'દ, શ્રીયુત તાત્યા

ત્રશ્રીતાથ પાંગળ, શા. નાનચંદ ્યું mail ખી. એ. પં. દીપચંદ્રજ ઉપદેશક વ-ગેર જે જે ગઢરથાએ અમાને જે જે મદદ કરેલી છે તે માટે તેમના તથા આ અંક મા 🤰 લેખા વગેરે માહલનાર બંધુઓના તેમજ સરતના પ્રેસામાં ભાળખાધ કામ કે ફાેટા છા-પવાની વિશેષ સગવડ ન હોવા છતાં પશ સરતના જૈન પ્રેસે આ અંક ધણીજ કાળછ-પૂર્વક અને ત્વરાથી તૈયાર કરી આપ્યા છે, ते भारे भी जीत प्रेसनी धन्यवाह पूर्वक आ-ભાર માનીએ છીએ તથા આ માટે ચાર **ઇ'ગ્લીશ આ**ર્ડી કલાે લખો માક લનાર ચાર ઉત્તમ કેમવાયલા ગઢસ્થા મી૦ જાગમંદરલાલ જૈતી એમ. એ. ખેરીસ્ટર એટ લા, યુરાપાઅન જૈન હર્બટ વારન લંડન, મી • એ. ખી. લકે એમ. એ. કાલ્હાપુર અ-તે મીરુ પી. વી. જગદીસા આયર એમ. એ. (મરાસ)ના અમા વિશેષ આભારી થયા છી ખે.

આ અંકમાં જે જે ઇંગ્લીશ અને સંસ્કૃ-ત લેખા પ્રગટ કરવામાં આવ્યા છે તે ધણાક વાંચ-કાના સમજવામાં ન આવવાથી દરેકના મન-માં એ ઉત્કંઠા રહી જવાની કે આ લેખમાં શું લખેલું હશે ? માટે આ ઇંગ્લીશ અને સંસ્કૃ ત ક્ષેખાનું ગુજરાતી ભાષાંતર પશ્ચ હવે પછી-તા અપૈકામાં કુમવાર આપવાતા અમે તિશ્વય કર્યો છે. આજ સુધી અમ પત્ર વિશેષ કરીને ગુજરાતી ભાષામાંજ પ્રકટ થતું હતું, પણ અનેક સજ્જનાની સચના ઉપરથી હવેલી દરેક થ્યાંકમાં હિંદી ભાષાના લેખો પણ પ્રકટ કર-વામાં આવશે કે જે આખા હિંદુસ્તાનના જેનાને ઉપયાગી થઇ પડશે. છેવટમાં એટલુંજ જણાવી શું કે આ બાળકનું આ છકું વર્ષ નિર્વિધને પસાર થાઓ. ધારવા કરતાં પણ વધુ લાભ એ બાળક અમાપી શકે તથા દીન પ્રતિદીન આ ભાળકને વધુને વધુ રૃષ્ટ પુષ્ટ ભનાવવાને તે વીર ત્રસુ અમાને અધિક સામર્થ્ય અર્પસુ કરાે! ઇત્યલમ્

प्रिय हिंदी पाठकगण ! हमेरी मात भाषा गुजराती है, और हमने हिंदी भाषा वा व्याकरणका कुछभी शिक्षण नहि लिया है और सरत जैसे शहरमे संबाईआदि जैसी हिंदी छपानेकी साभिता नहि है, तौभी हमेरा मात्र परिचयद्वारा हमने इस साचित्र खास अंकमे हिंदी लेखों प्रकट करनेका (और अब प्रत्येक अंकमे हिंदी लेखभी प्रकट करनेका) साहस किया है. जिसमे हमेरा अनुमान है कि भाषा शुद्धि, व्याकरण शुद्धि वा प्रुफ संशोधनमे त्रुटियां रही होगी, जिसके लिये आपके हम क्षमाप्रार्थी है. इस सचित्र खास अंक प्रकट करनेमे हमकं देवबंदनिवासी बाबु ज्योतिप्रसादजी ए. जे. ने कितनेक ब्लोकों, तस्वीरों और जीवन-चरित्रों भेजकर हमकुं बहुतही सहायता दी हे जिसके लिये आपका हम धन्यवाद पूर्वक आभार मानते हैं, और यहि इज्छा करते है कि ऐसे ही वीर सहायकों जैन समाजमे ज्यादेतर उत्पन्न होकर जैन समाजका कल्याण करों. तथास्त.

લખવાની અત્યત જરૂર છે, જે માટે અમા ચાર વર્ષ થયાં કેટલાક પ્રયાસ કર્યા કરીએ છીએ. જેથી કેટલાક ભાઇએ પાતાના ચાપડાઓ તથા પત્ર વ્યવહારમાં જૈન સંવત લખતા થયા છે. તેા પણ હજુ હમારા ધારવા મુજબ જૈત કામમાં વીર સંવત લખવાના જોઇએ તેવા પ્રચાર થયા નથી, તેમ ડુંડાળા સુંઢાલા મિથ્યાત્વી દેવ **ગણપતિના** ચિત્રાવાળા કાર્ડો લખવાન પણ હજા પ્રદેપુર બંધ પડ્યું નથી, જે અમાન મળેલા નવીન વર્ષની મુખારકખાદીના કાર્ડી ઉપરથી જણાઇ આવે છે, માટે સર્વે જૈન ભાઇઓને હમે એક વખત કરીથી **અ**ાગ્રહપૂર્વક સચિત કરીએ છીએ કે તમા તમારા નામામાં કે કાગળ પત્રના વ્યવહારમાં આ વર્ષથી વીર સંવત લખવાનું બુલના નહિ. જો તમને એ લખવું શુલ બુલામણવાળું કે અકલામણરૂપ લાગે, તો તે સાથે વિક્રમ સાંવત પણ લખજો એટલેક આ વર્ષે वीर संवत र४३७ विक्रम संवत १८६७ना-એ મુજય જો લખશા, તા પછી એવીજ 2ેવ તમને પડી જશે અને મહાલીર સ્વામી માર્ટ ગયાને કેટલાં વર્ષ થયાં છે તે તમને અદુર્નિશ સમરહામાં રહેશે.

હું હું હું મુંબાઇ ઇલાકામાં ઘણાં વર્ષા થયા મુંબઇ સમાચારતું પંચાંગકારાતા અને 'ગુજરાતી'તું અમ્ભાર એમ બે સાર્વજિતિક પંચાંગા દર વર્ષે પ્રગ્રહ

થાય છે અને ત્રસ્યુ વર્ષ થયાં તેવું એક પંચાંગ નામે ગુજરાત સમાચારનું પંચાંગ વડાદરેથી પ્રક્રેટ થાય છે, જેમાં હિંદૂ પારસી, મુસલમાન ખીસ્તી વગેરે દરેક ધર્મના જુદા જુદા સંવતો લખવામાં આવતા, પસ્ જૈન વીર સંવત બીલકુલ લખવામાં આવતા જ નહાતા (અને માત્ર શ્વે. જૈન તહેવારાજ

લખતા હતા) જેનું કારણ તેમનું અજાણપણું અને આપણા જૈનાનું આળસજ હેાવું જોઇએ. આથી અમાએ આ ત્રણે પંચાંગકારાને સ્ક્રેજ સચના કરતાં તરતજ તેએ!એ એ પંચાંત્રામાં જૈન સંવત અને દિર્ગંભર જૈનાના ત્હેવારાની ટીપ દાખલ કરવાને હવે પૂર્વક ઘ≈છા દર્શાવી હતી. એટલે અમે તે બાતમી તરતજ પુરી પાડી હતી, જેથી વ્હાલા વાંચકા ! અમાપના જાણવામાં અલ્યુંજ હવે કે આ વર્ષે એ ત્રણો પ'ચાંગામાં જેન સ'વત ર૪૨૯ તથા દિયાંબર જૈનોતા તહેવારાની ટીપ **કાખલ થ**ઇ સુકર્યા છે, અને **બધા સ'વતાની વચમાં** જૈન સંવત અત્ર સ્થાન ભાગવે આ માટે અમાએ ત્રણે પંચાંયના પ્રકટ કર નારાગ્યોના ધન્યવાદ પૂર્વક આભાર માની એજ મુજબ દર વર્ષે ચાલ રાખવાને આગ્રહ કરીએ છીએ.

જી છું હું આપણી મૃત્યાઇ દિશંબર જેન પ્રાંતિક કેાન્કરંસની છેલ્લી મુંભાઇમાં પ્રાંતિક બેઠક ખામગામમાં કેાન્કરંસની ભારમી જરા યોડી એટલે ભેઠક વૈશાખ માસમાં થઇ હતી તેને છ મહીના

તો પૃરા થયા નથી, એટલામાં નવું વર્ષ ખેસી ચુકયું છે, જેથી આ વર્ષની ખેઠક કયાં થશે તેના નિચારવમળમાં મું મઇ ઇલાકાના ભાઇ-એ ગુંથાએલા હશે જ તેટલામાં જ અમાને પ્રકટ કરતાં અત્યાનંદ થાય છે કે આવતી ભારમી ખેઠક આવતા માસમાં મું ખાઇમાં જ મહાન રથાત્સવ અને તેરહિ પપુજન વિધાન પ્રસંગે થનાર છે. આ કાન્કરંસની ખેઠક મું ખાઇમાં થઇ ગયાને ૭-૮ વર્ષ થઇ ગયાં છે અને તે વખતે તેા ગુજરાત પ્રાંતમાં કાન્કરંસમાં અંગ લેવાના ઉત્સાહ ઘણાજ મદ હતા, પણ હવે અમારા ગુજરાતના ભાઇઓ

આ કે:ન્કરસમાં ઉલટબેર ભાગ લે છે, જે પાવાગઢ, તારંગા વગેરે સ્થળે મળેલી ખેઠકાથી રપષ્ટ વિદીત થાય છે. મુંબાઇ, મુંબાઇ ઇલા-કાનું તથા હિંદુસ્તાનનું એક કેદ્રસ્થાન છે, हेटला ह हि. केन आगेवानाव એ નિવાસ રથાન છે, કાેન્કરંસન્ પણ જન્મરથાન છે તેમ ૫-૭ વર્ષ થયાં કાન્કર સની એઠક કાઇ માટા શહેરમાં થઇ નથી, જેવી આ વખતે આપણી આ કાન્કરંસની ખેઠક કંઇ અંલાકિક ३५० धारण हरी शहरी में निर्विवाह छे. ગત વર્ષે ખામગામ દૂર હેાવાથી ગુજરાતના ભાઇએો લાભ લઇ શક્યા નથી, જે**થી** આ વર્ષે અમારા ગુજરાતના ભાઇએ။ ગંજાવર સંખ્યામાં કાન્કર સના લાભ લેશેજ. અમાને પૂર્ણ આશા છે. અમારા વ્હાલા વાંચકાે! કાન્કરંસ ભરાવાને માત્ર એકજ માસ બાકી છે માટે આળસ તજી માસમાં મંબાધમાં મળનારી આપણી આ કાેન્ફરંસમાં ભાગ લેવા સત્વર તૈયાર થાએો. ચ્યા કાન્ક્રર સમાં કયા કથા ઠરાવા મકાવાની જરૂર છે. જેનું લીસ્ટ અમા આવતા અંકમાં પ્રકટ કરવા ઇ-છીએ છીએ, જેથી દરાવા સચનાઓ દરેક બંધુએ અમને માગસર સુદ ૧ સુધીમાં માકલી આપવી.

્રહ હું હું આ અ'કમાં રતલામ ખે_રેડિંગના વાર્ષિક મેળાવડાના રિપાર્ટ વાં-

રતલામ બાહિંગની ચવાથી વાંચકાને જ-ઉન્નત દશા. હાશજ કે એ બાર્ડિ-ગમાં શરૂઆતમાં પ જ

વિદ્યાર્થીઓ હતા (અને કેટલાકા અકળાતા હતા કે એ બોર્ડિંગ તે કેમ ચાલશે?) પણ હાલ ૪૨ વિદ્યાર્થીઓ એના ઉત્તમ રીતે લાભ લઇ રહ્યા છે તથા રતલામ રાજ્યની પણ આ બોર્ડિંગ તરફ બહુજ મહેરબાની છે. વળા વાગડ પ્રાંતમાં વાંચનના વિશેષ ફેલાવા થાય એ માટે આ વર્ષથા એ એાર્ડિંગમાં અમદાવાદની એાર્ડિંગની માકક વીઝીટર્સ કમીટી નીમવામાં આવી છે અને તેની વાર્ષિક પ્રી માત્ર ર. ર) જ લઇ તે મેમ્ખરાને ર. ૧ા૫ તું આ પત્ર ભોઢ આપવાના દરાવ થયા છે, જેથી આ એાર્ડિંગની વીઝીટર્સ કમીટીના મેમ્ખરા થવાને અમે વાગડ અને માળવા પ્રાંતના ભાઇઓને સ્થવીએ છીએ.

9 9 9

અમદાવાદની આપણી બાર્ડિંગના છેલ્લા મેળ વડા પ્રસંગે એની

અમદાવાદ ભાડિંગ વીઝીટર્સ કમીટીના મે-માં લાઇફ મેમ્પ્યર. મ્યરા, જેની વાર્ષિક ધી રૂરા. ૩ લેવાય

છે તેમને રૂ ૫૦) લઇ લાઇફ મેમ્પ્યર પણ નીમવાના ઠરાવ થયેલા છે, જેથી હવે એ બાર્ડિંગની વાઝાટર્સ કમાડીના જે જે મે-મ્પરાને લાઇફ મેમ્પ્યર થવાની ઇચ્છા હાય, તેમણે તે સંપાંધીના પત્ર અમદાવાદ લખી જણાવવા. જો ગુજરાત વર્ના કયુલર સાસાયડી-ના માફક આ કમીડીના લાઠફ મેમ્પરાની સંખ્યા થાય તા ભવિષ્યમાં આ કમીડી કંઇ અવતવું કાર્ય કરી શકશેજ એમ સંપૂર્ણ આ-શા રહે છે.

🔊 अछछीं चीजैं. 🦑

राजोंके योग्य बासमती, रामजवान, चावल, पहाडी आछ, अदरक, अखी, शहद, चाय, औरंजपीको, हल्दी, सौंठ, काली जीरी, मोम, रीठे, इंघन, कोयला, चूना, पत्थर, साल, तुन, शीसमके शहतीर, कडी चल्ली.

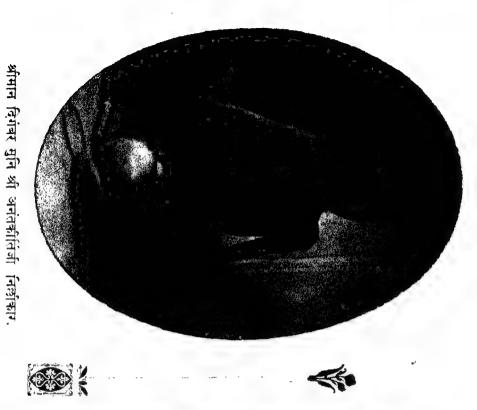
मंगानेका पत्ता-

कवलसिंह जैन ढांडीपुर रोड (दहरादुन) શ્રીયુત વાડીલાલ માતીલાલના પ્રયાસથી કાચીનમાં જેના અને હિંદુઓ માટે ગુજરાતી અને મેટ્રીક સુધીના શિક્ષણ માટેની સ્કુલ ખાલવા માટે રા. ૧૦૦૦૦) તું કૃંડ અને માસિક રા. ૨૦૦) તી ઉપજ થાય એવા કર નંખાયા છે તથા હેદ્રાબાદ (દક્ષિણ)માં સ્થાનકવાસી જૈને કેાન્ફરંસ આવતા મહામાસમાં ભરવાનું આમંત્રણ મળ્યું છે. વળી આ ઉત્સાહી ગ્રહ્યથે અમદાવાદમાં મેટ્રીકની પરીક્ષા વખતે પોતાને ત્યાં ત્રણે પીરકાના ૪૦ વિદ્યાર્થીઓને ઉતારા આપી દરેક સગવડ કરી આપી હતી. ધન્ય છે એમની નિસ્વાર્થકૃત્તિ અને સમાજ- સેવાને!

का(सय वण्णना (काशीनुं वर्णन)

(ભાષામાં રચનાર:—માવજ દામજ શાહ, પી. પી. જૈન હાઇસ્કુલ, મુંબાઈ.)

अत्थि सारय संठाणं पण्डिया मोय मंजुला कासी बाराणसी सञ्जा, नयरी पुञ्ज पुञ्जया 11211 पंडिआ रम्मा, सत्थ संदोह संदरा हम्माणि पहट्टाणं विलुक्तह भव्य 11211 वारण कोसाणं महायिआ अज्ञयण वाया हुन्ति महाहस्स सुजुत्ता जुत्ति 11311 विज्ञा विणय संपण्णा जणा जस्सि सुपस्सइ मञ्जेव इन्द्वन्द्व्व पठनं भागया कत्तु 11811 पनरत्थात्थ. वोम्म गंगव्य आगया गंगा ''कासि करवत सञ्जं'' ठाणं खायं महीतले 11411 महारञ्जो: दरभंगा पाठशाला पद्माङ्गिआ पुञ्ञा कासिय मज्जेव. विसोहइ मुकुटव्व HEH क्वीन्स कोलेज सञ्जाय, अञ्जा पुञ्जा पवित्तियी सालाव भूसणं कासिय जस्सि लुक्ड सह 11011 ''काशी विश्वनाय'' इति मनो रम्मं थलं जहा देवासुरालयम्भिव. 11211



श्रीमान त्यागी ग्याग्ड प्रतिमाधारी ऐंत्रकं पत्नालालजी महाराज.







बझचारी श्री शीतलप्रसादजी, संपादक, ''जैन मित्र''-मुंबाई.

खास अंक के चित्रोंका परिचय.

आ सास अंकमा जे जे तीर्थों, त्यागीओ, श्रीमानो, विद्वानो तथा जाहेर संस्था-ओना फोटाओनो संग्रह आपवामां आव्यो छे, ते सर्वेनो जो ट्रंक परिचय आपवामां न आवे तो ए फोटाओना दर्शनथी समाजने कंई पण लाभ न थवा उपरांत आ अक पण छुख्लो लागे, ए हेतुथी दरेक फोटानो ट्रंक परिचय अमो गुजराती के हिंदी भाषामां अत्रे पकट करीए छीए. जो बधां चित्रोनां लंबाण जीवनचरित्रो आपीए, तो ते आ अंक माटे घणुं विस्ताररुप अने वळी वांचकने कंईक कंटाळारुप थई पडे. जेथी हाल तो दरेकनी ट्रंक माहीति रजु करीए छीए अने जेना जेना लंबाण चरित्रो प्रकट थवानी जरुर छे अने जे अमोने मळी चुक्यां छे, ते अमो हवे पछीना अंकोमां अवकाशे प्रकट करता रहीशुं.

(१) संसारवृक्ष याने मोहरस स्वरुप.

311

भववन भटकत पथिकजन, हाथी काल कराल।
पिछे लागा हो दुःखित, पड़ो कूप विकराल।। १॥
पकड़ शाख बट वृक्षकी, लटको मुंह फैलाय।
अपर मधु छत्ता लगा, पड़ी बृंद मुंह आय॥ २॥
निशदिन दो चृहे लगे, काटत आयु डाल।
निचे अजगर फाड़ मुख, है निगोद भवजाल॥ ३॥
चार सर्प चारों गती, चारों ओर निहार।
हैं कुदुंब माखी अधिक, चुंटत तन हरबार॥ ४॥
श्रीगुरु विद्याघर मिले, देख दुःखी भवजीव।
हो दयाछ टेरत उसे, मत सह दुःख अतिव॥ ५॥
मुंद मधु है विषयसुख, ताकी लालच काज।
मानत नहिं उपदेशको, कर रह्यो आत्म अकाज॥ ६॥
आयु डाल कुछ कालमें, कट जावेगी हाय!।
निचे पड़ वहु काल लों, भुगते फल दुःखदाय॥ ७॥

પ્રિય વાંચકા ! આ પત્રના મુખપૃષ્ઠ (પુઠાં) ઉપર તમા એક ચિત્ર જોઈ રહ્યા છા, જે ચિત્ર એક સાધારણ ચિત્ર નથી, પણ તેમાં ધાયું જ માર્મિક અને બાેધક તત્વ સમાયેલું છે અને તે જાણવાની દરેકને અભિલાયા થાય એ નિર્વિવાદ છે, માટે તેના ટ્રેક પરિચય આપવા યાંગ્ય ધારીએ છીએ.

અનેક જીવાથી ભરેલી આ સંસારરપી भटपी सभान ओड भारा गहन वनमां हैंव-**યાંગે કાઇ એક મુસાફ**ર આવી ચડયેઃ દ્વેા, वनमां यभराजनी पेंडे हेाधायभान અને ઉ'ચી સંદ કરીને પાતાના ર્ચાવતા એક ભયંકર **હાથી** જેયા તે હાથાન **જોઇ તેથી ભ**યભીત થઇને તે મુસાફર દાેડવા **લા**ગ્યાે, અને **હાથીની** આગળ દાેડે ેા દાેડતાે તે એક કુવા આગળ આવી પહેાંચ્યા, જે કુવા ધણાજ અધારા અને ઉંડા હતા. ભાન ભુલેલા તે મુસાધરના પગ કુવામાં પડયા પણ પડતાં પડતાં તેના ઢાથમાં પાસેના એક વડની લટકતી સુળી આવી ગઇ, જેથી તેને पडडी ते बटडी रहें। (के प्रभाषे हुर्गम નર્કમાં નારકી જીવા ધર્મનું અવલ બન કરે છે તે પ્રમાણે व्या अथलीत नुसाइरती સ્થિતી થઇ).

હવે એ મુસાકર દાથીના ભયથી ભય-બીત થકને નીચે જુએ છે તે તે કુવામાં યમરાજની માકક માં કાડીને પહેલા એક મજગર જોયો. ઉંચે જોયુ તે તે પકરેલી વડની મુળીઓની ડાળને એક સફેદ અંત એક કાળા એવા એ ઉંદરા હંમશાં નપી રહ્યા છે, કે જેમ રાત્રિ અને દિશ્સ અથન કૃષ્ણપક્ષ અને શુકલપક્ષ મનુષ્યના આયુષ્યતે કાપે છે. એ સિવાય તે કુવામાં ચાર ક્યાયા અથવા ચાર મિતની માકક બહુ લાંયા અને ભયાનક ચાર દિશાઓમાં કરતા ચાર સપ્ જોયા. હવે આ સમયે પેલા પૂંઠે પડેલા હાથીએ ક્રોધમાં આવીને તે ઝડને સંદથી

પકડીને જોરથી હલાવ્યું, જેથી તે ઝાડ **ઉપર** એક મધપુંડા હતા, તેમાંની મધમા ખીએ। ઉડી, અને સઘળી માખીએા પેલા મુસા<mark>ક્રના</mark> શરીરપરચોંડી અને તીવડં ખદેવા લાગી. આ પ્રમાણે ચારે તરફથી લીટંળાઇને અસહા અને મર્મ બેદી પીડા આપવાવાળી માખીઓથી ઘલસ-ઇને અતિશય દુ:ખી થઇને તે મુસાક્રર ઉપર <mark>જોવા</mark> લાગ્યા; એટલેઁ ઉંચું માહું કરતાંની સા**યેજ પ્ટલ ઉપર ભાજેલા મધપૃડામાંથી એક નાતુ**' મધતું ડીયું તેના હેાઠે ઉપર આવી પડ્યું, ત્યારે તે મૂર્ખાનંદ નર્કના જેવા દુ:ખથી પણ અધિક દઃખને કંમ પણ નહિં ગણકારતાં તે મધનાં ટીપાંના સ્વાદને ચાખીને પાતાને બહુ સખી માનવા લાગ્યાે, અને તેમાંજ આશક્ત થયેલા તે મૃદ ખીજાં ટીપાંની આશામાં લટ-કૈલાજ રહી પાતાને સુખા માનતા સમય વ્યતિત કરે છે.

હવે તે સમયે કર્મસંયોગે વ્યાકાશ માર્ગે વિદાર કરતા. દયાના સાગર અને પર-માર્ચી પ્રકૃતિના કાઇ એક **વિદ્યાધરતું વિમાન** ત્યાં આગળથી જતું હતું, તેઓની દ્રષ્ટી પેલા દુઃખમાં ડુબતા અને સ્વલ્પ સુખથી સંતા-ષ માનના મુસાકર તરફ પડી એટલે તુરતજ તેમના હૃદયમાં દ્રયા સ્પ્રુરાયમાન થઇ. વિદ્યાધરે તરતજ ત્યાં વિમાન અટકાવ્યું અને વિમાન-માંથી નીચે ઉતરી તેની પાસે જઇ તેને કુવામાં પડતા ભચાવવા પ્રયત્ન કરવા લાગ્યા અને મુસાકરને કહ્યું:—ભાઇ ! તું મધનાં ટીપાંની **લાલચમાં** લટકી રહ્યો છે, પણ **ઉપ**ન રથી પેલા એ ઉંદરા તારી પકડેલી મુળાને વિના વિશ્વમે વારાક્રસ્તી કાર્યાજ રહ્યા છે, માટે હજી પણ ચેત, અને મારી સાથે ચાલ. હું તને મદદ આપું, અને ઉપર ખેંચી લઉં."

પેલા મધના લાલચમાં ત્રપટાયલા મુસા-કર તે નિઃસ્વાર્થી પુરૂષને કહેવા લાગ્યાે---" ઉભા રહાે, હું હમણાં આવું છું. મધતું એક ટીપું પડે તે ચાખી લઉં અને હમણાં આવું છું. એમ કેટલાક ટીપાં ચાખ્યાં પણ તેનું " હમણાં અવું છું, ''પુરંથયું નહિં. આખરે વિદ્યાધર કંટાળ્યા અને તેઓ પાતાને માર્ગે ચાલતા થયા.

પેક્ષા મુસાફર કાંઇ મધ્યી ધરાયાનિકિ, પરંતુ ઉદરાએ પાતાનું કાર્ય પૂર્ણ કર્યું. મુળી કપા-ઇ રહેતાની સાથેજ પેક્ષા આશાવંત મુસાફર ઢળ દેતા કે કુવામાં પડ્યા અને સર્પ તથા અજગરના લક્ષ થયા ! (તર્ક કુંડમાં પડ્યા)

વ્હાલા વાંચકા! ઉપરના કર્ણનમા ગહન વન છે તે આ સસાર રૂપી અટવી છે અને મુસાકર છે તે સસારી જીવ છે. દ્રાયી છે તે મૃત્યુ (યમરાજ) છે વડની મુળી તે આયુ-ધ્ય છે. કુવે! છે તે સંસાર છે. અજગર છે તે નિગેદ છે. ચાર સપ છે તે ચાર ગતિ-ઓ છે. સફેદ અને કાળા ઉદર તે રાત્રિ અને દિવસ (શુકલપક્ષ અને કૃષ્ણપક્ષ) છે, કે જે આયુષ્યન કાપી રજ્ઞા છે. મધમાખી-ઓ ડંખે છે તે શરીરના રાગે છે, અને ગુણ્યુણાટ કરે છે. તે કુટુંભી જના છે. મધનાં ડીપાંતા સ્વાદ છે તે માત્ર છાન્દ્રય જનિત સુખાભાસ છે અન વિદાધર છે તે ધ્યાંગુરૂ છે

આ પ્રમાણે આ નાનકડાં અને શાસ્ત્રીય ચિત્રનું ગુઠત્વ છે સંસારી જ્વાનુ સુખ તે સુખ નથી, પણુ માત્ર વિજળીના ચમકારા માક્ક સુખાભાસ છે. દુઃખ તેા ડુંગર સમ્માન છે અને સુખ માત્ર તલ જેટલું છે. એ કારસુથી સંસારી મનુષ્યોએ પાતાન મળેલા ઉત્તમ ચિંતામણી રતન સમાન મનુષ્ય ભાવ વયા એશઆરામમાં ગુમાવવા જોઇએ નહિં, પરંતુ જેમ બને તેમ માહનુષ્ણાના સાગ કરવાના અને સંસારયી ઉદાસીન ભાવ ધારસ્યુ કરી માલ્લ મેળવવાના ઉદ્યમ આરંભવા જોઇએ અને ત્યારેજ ચોર્યાશી લક્ષ જીવયોનિ માથી કાંઈ પુષ્ય યોગે પ્રાપ્ત થયેલા મનુષ્ય જન્મની સાક્ષ્યતા થયા. તથારતુ.

(२) श्रीमान दिगंबर मानि अनंतकीर्तिजा:-दक्षिण केनेरा जिल्हे के कारकलसे बारा मीलपर निल्लीकार ग्राम के आप अत्यंत श्रीमान श्रावक थे. आपने प्रह-स्थाश्रममें आपकी पत्नि तथा परिजनादी सा-थ लेके संपूर्ण भारत का प्रवास किया और समेदशिखर, चंपापुरी, पावापुरी आदी सब तीथोंका दर्शन किया. चार वर्ष हो गये, आप के प्राममे प्लेगका बहोत पसार हवा. जीसमें आपकी पत्नीका अंत हुवा. उसी दिनसे आपके दिलमें संसारकी नश्वरता उपजी. और भाईबंधका कर के नम दिगंबरी (निर्मंथ) दिशा धारण की. प्रस्तुत आप चात्रमीस में मुडबीद्वीसे २० मैलपर निल्लीकारके समिप-स्थीत नीलगीरी पर्वतकी गुफामे निवास करते है. केवल तीन चार दिनका उपोषण करके पारणे के निमित्तसे मध्यान्ह के समयकं आहार के छिये निक्षीकार गाममे जाते ह. श्रावक आपकुं विधियक्त आहार देते है. अंतराय हो तो आप आहार हेते नहीं. आप हमेशा गुफामे ही रहते है आर ध्यान में मग्न रहते है. श्रावकों का संघ जम गया. तो आप उपदेश देते हैं. आप के चारित्र की महिमा उधर सर्वत्र विश्रुत है, जीससे बडेर अंग्रेज ऑफिसर आपके दर्शनकं आते है और आपका दिगंबरत्वका कौतुक करते है. आपकी नय अंदाज मात्र २९ वर्षकी है

और दिक्षा छेनेकुं मात्र चार वर्ष ही हुवे हैं. हमारे सरीखे क्षुद्र जीवोंकुं भव-समुद्र पार करनेकुं समर्थ असे श्री अनंत-कीर्तिजी मुनिराज चिरकाल जयवंत रहो. धन्य है ऐसे त्यागी महात्माकुं जो इस विषम पंचम कालमेभी ऐसी घोर तपश्चर्या कर सकते हैं.

(३) श्रीमान त्यागी ग्यारह प्रतिमा-धारी ऐलक पनालाखजी महाराजः-पींछी, क्संडळ और कोषीन (लंगोट) मात्र परिग्रह रखनेवाले इस त्यागी महात्मा जबसे पांच छ वर्ष हुए सारे हिंदस्तान में गामों-गाम विचर कर धर्मापदेश का पान रहे हैं तबसे आबालवृद्ध सभी आपसे परिचित है. आपका जन्म स्थान झांझरी (जी. परतापगढ) है और आप नसिंहपुरा ज्ञाति के हैं. अभी आप ऐलक श्रावककी सब क्रिया अच्छी तरह से पारुते है और जहां आप विचरते है उस सभी ग्रामों मे आप के धर्मापदेश सें बहुत कुछ सुधारा होता रहता है. आप चार्त्रमासमें एक स्थानपर और फिर ८ मास तक कोई ग्राममें पांच दिनसे अधिक नहि ठहरते है और आखडी सह विधिपूर्वक आहार मिलता है, तौही ग्रहण करते है. कार्तिक और वैंशाख इस दो मासमें एक वरूत याने वर्षमे दो वरूत आप अपनी मुष्टीसं केशलोंच करते है तब हशारों जैनों एकात्रित होते हैं और बहुत कुछ दान

पूण्य और सुधारा होता है. इस चातुर्मास आपने झालरापाटन शहरमें किया और अभी कार्तिक सुद १२ के दिन महान रथात्सव हांकर आपका केशलेंच सानंद और विधिपूर्वक हो गया है. हम यही इच्छा करते हैं कि आप चीरंजीवी होकर जैन समाजका ज्यादेतर उपकार करते रहे. (आपका बृहत् जीवनचरित्र आगामी कीसी अंकमे दिया जायगा)

(४) श्रीमद पंडिताचार्यवर्य भड़ा-रक श्री चारुकीर्तिजी:-आपका जन्म दक्षिण कन्नडमेंही हुवा. चालीस वर्ष तक ग्रहस्थाश्रम पूर्ण करके आपके गुरुकी आज्ञासे पट्टपर भट्टारक पद पर अधिष्टित हुवे. आप संस्कृत भाषा के अच्छे जानकार पंडित है. नित्य प्रातःकाल के ३ घंटे तक निद्रासे जागृत होकर दत्तभक्ति, पंचस्तोत्र, तत्वार्थ सूत्र आदीका आपके ओजस्वीनी दिव्य ध्वनिसे पाठ करते है. आठ तक स्तोत्र पाठ होने बाद आप वहां के प्रत्येक मंदिरमे जाके दर्शन करते है फिर स्नान करके सामायिक, ध्यान, जपादि कार्य बारा घंटे तक करने है. फिर आहार लेके आन्हीक पूजा करते हैं. तप्ताश्चात सायान्ह पूजा करते हैं. रात्रि के नउ घंटेकुं फिर दिश्रांति छेते हैं. पृजादि संपूर्ण कार्य नित्यशः आप करते आपने श्री जैन पाठशाला स्वर्ग. बाबु देवकुमारजी के हस्तसे खोली है. जीसमे

करीब ५० लडके और बालिका व्यवहार शिक्षण और धर्म शिक्षण छेते है. पाठशाला. का रु. ३००००) का फंड आपकी पास है और भट्टारक के संस्थान की पूंजी करीब एक लक्ष की है. आपके पश्चात कोई अच्छा पंडित भट्टारकके तस्तपर बैठनेकुं नहि भिलता, ऐसा देखके आपने संस्थानकी सर्व व्यवस्था (मयी] पंचोंके नामसे कर दी है. भट्टारक दुराचरणी निकले, इससे लोगोंका उनके परका श्रद्धान कम होने लगा पेसा आपका मत है. आपका ब्रह्मचर्य धगधगीत है. भगवान स्तोत्र पठन करनेके समय आपकी तेजस्वी और प्रभावशाळी दिव्य ध्वनि सर्व लोको-के दिलपर बहोतही असर करती है. आप के हस्तगत श्री सिद्धांत शास् और अत्य-त्तम मौल्यवान रत्नोंकी ३२ जस्वी जीन प्रतिमा है और आपका सरहतने भंडारभी बडा है, जीसमें अनेक अमो 🧸 जैन प्रंथ ताडपत्रोंपर लिखित है. आप आजकलके मद्दारकोंके समान पालखी, म्याना, घोडा-का ढंग नहि रखते हैं. जह जानेका हो वहां स्वयं चलके जाते हैं, 🧢 से आपके महारक पदका संपूर्ण भारत बड़ा अभिमान हैं, और आ सुपारक कालमे ऐसाही भट्टारक होन आवश्यक है. प्रस्तुत आप मुडबीदरी (दक्षिण केनेरा) मे निवास करते है. आपका ग्रम जीवन हमारे और जैन धर्मके हिता परमात्मा चिरायु करे!

(५) ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी:-आपका जन्म सन १८७८ में छखनउमे हुवा है. आपकुं ९ वर्षकी उमरसे भट्टा-रक मुनिद्रकीर्तिके निषित्तसे आजन्म दर्शनका नियम है (यदि दर्शन न मिले ता दो माला फेरनेका नियम है) और सन १८९७ से नित्य प्रति स्वाध्याय करनेका नियम छिया है, जिससे ही आप आजकल जैन समाजका बहुत कुछ उप-कार कर रहे हैं. आपने इंग्लीश और धर्म शास्त्रका भी अच्छा ज्ञान पाप्त किया है. सन १८९७ से आप महासभा के जल्सेमे सामिल होने लगे, 'जैनगजर' मे लेख भी देने लगे और जब बाब देवक-मारजीकी संपादकीमे 'जैनगजट' छखनड-मे छगता था, तब तक आप 'जैनगजट' का सब प्रबंध देखते रहते थे. सन १९०४ में पिताका और १९०५ में प्लेगसे ८ दिनके भीतर माता, स्त्री व भाई पन्ना-लालका १८ वर्षकी अवस्थामे मृत्यु होनेसे आपके चित्तमें वैराग्यका ख्याछ आया और फिर विवाह न करके आत्म-कल्याणकी वांच्छा हुई. भाइओंका आग्रह परभी आपने फिर विवाह न किया. फिर काशी स्यादवाद पाठशालाके स्था-पना सवय और सहरानपुरमे पहा सभा-के अधिवेशनके समय श्रीमान शेठ माणे-चंदजी जे. पी. से मिलाप होनेसे मुंबा-इमे आकर ज्यापार और धर्मध्यान करने-

का विचार हुवा और सन १९०६ मे मंबाई आकर जवाहरातकी दलाली करते रहे और शेठ माणेकचंदजीके धर्म धार्मिक मिवतासे प्रतिदिन करते रहे. आपके सहायता बडे भाई अनंतळालने जवाहर के व्यापार-में करीब एक छाख रुपया पैदा किया, परंत तर्तही सन १९०९ में विमार होकर मर गये और कुछ न कह सके, न दाना-दिभी कर सके और आप वम्बई से छखनड गए तब वे न थे. इस दृश्यने मनकं कहा कि तु अब जो साध्य है उस्की और क्यों नहि झकता? फिर अवसर पा सन १९१० मे श्रीमान ऐलक पद्मालाल नी की पास सोलापुर मे केञ्चांच के समय ब्रह्मचये वत नियम-पूर्वक धारण किया (यद्यपि साधन तो चार पांच वर्ष पहलेसे था) जीससे आज तीन वर्ष हुवे आप ब्रह्मचानी हो कर जैन समाजका कल्याण कर रहे हैं. आप मुंबाई प्रांतिक सभा का पाक्षक पत " जैन मिल " का संपादन कार्य चार वर्ष हवे अच्छी योग्यतासे कर रहे और प्रत्येक धार्मिक उत्सर्वों में सामिल हो कर अच्छेर व्याख्यानों देते रहते है. आपका चातुर्वास जयपुर, काशी और इस वर्ष मुलतानमे होनसे तीनों स्थानों-मे अच्छी धर्म जाग्रति पदाहुई है। आप नित्य मति दो समय विधिपूर्वक सामायिक

करते है और ८ व १४ का उपवास करते है. आप मात्र चार पांच घंटे ही निंद छेते हैं और रात्रि दिन धर्म कार्य करते रहते हैं. हम यही कहते हैं कि आप इससेंभी ज्यादे धर्म सेवा कर सके और चिरायु होकर जैन समाज का कल्याण करते रहे.

(६) श्रीमान श्रावकोत्तम गृहत्यागी श्री आनंदीलालजीः—दशा हुमड ज्ञाति परताबगढ (माळवा) निवासी आपका जन्म संवत १८९७ में हुवा है, जीससे आज आपकी अवस्था ७२ आप सं. १९१६ में १९५३ तक सर-कारी जागीरदारी दीवानी फोजदारी कामदारी करते थे. आपके तीन प्रत्नों हुवे, जीस्मे एक मीज़द हैं. आपने सं. १९४८ सं स्त्रीकी मौजुदगीमें बीस्त्रवत ले लिया है. सं. १९५३ में स्त्री गुजर गइ, तबसें १९६० तक घरमे उदासी-नतासें रह कर धर्मसेवन करते रहे और १९६० में घर छोड़ दिया और देशाटन करते रहे. आपका चातुमीस परताबगढ, बड़नगर, इंदोर. उदेपुर, मंदसोरः अजमर, रतलाम और इस वर्ष कोटाम अनुक्रमसे हुवा है. आप मात कमंडळ कलसा पीतलका और दो घोती ओर एक दुपट्टा माल रखते है शासा-नुसार जघन्य प्रतिपाके भेटमें उत्क्रष्ट उदासीन श्रावक ग्रह धन परिग्रह के त्यागी है और बाह्य प्रवृत्तिसें दशमी

प्रतिमा मालुम होती है इस वास्त पींछी कमंडळ निह रखते है. और यहो।पिनत रखते हैं. और यहो।पिनत रखते हैं. उंचे पदस्थ चढ़नेकी आपकी बहुत आकांक्षा है, परंतु आपकी अवस्था बहुत हुद्ध होनेसे श्रावंकाक आग्रहसे नियम-पूर्वकही प्रतिद्वाओं धारण की है. जहांर आप विचरते है आपके धमोंपदेशसे बहुत कुछ सुधारा होता है और इस वर्ष कोटा (Kotah) मेंभी आपके चातुर्माससे बहुत कुछ धर्म जागृति हुई है. यह हुद्ध त्यागी महात्मा चिरायु हो यह हमेरी मनोकामना है.

(७) बाबा भगीरथजी वणी:-ह-स्तिनागपुर के श्री रुपभ ब्रह्मचर्याश्रम के आप संस्थापक व प्रचारक है और सप्तम ब्रह्मचर्य प्रतिमा के धारी है. देखिये आपकी शांत छिब कैसि प्यारी है! आप बढ़े कोमल हृदय और सरल परीणामी तथा सच्चरित निर्मल आप संस्कृत भाषा के मेमी और ज्ञाता है और आपने ही काशी स्यादवाद पाठशाला की स्थापना कराई है और मेरठ जील्लेके कितनेही अजैनोंको जैन बनाया है. आपके चित्त-में जैन धर्मकी हीनावस्थाका बड़ा खेद है. उसकी उन्नति की सर्देव भावना भाषा करते हैं. आप मथुरा मांत के रहनेवाले और वैष्णव संपदायमें हशोद्भव है. जन्मसे रामायण के त्रेमी थे, किन्त जैन

धर्म के संसम् से वह सब राग रंग भूछ कर आत्महित साधन में संछन्न है और अभी हस्तीनागपुर के बह्मचर्याश्रममें रह कर आश्रम का कार्य चला गहे है.

(८) उदासीन परोपकारी लाखा गेंदनछालजी:-आपभी रु. ब्रह्मचर्याश्र-मके संस्थापक और प्रबंधक है. आप संसारसे उटासीन है और नित्य नियम स्वाध्याय व सामायिक करना ही आपका तप व व्यापार है. आप मंद कषायी, विद्याप्रेमी, कार्यदक्ष और व्यवहार कुशल है. दो वर्ष हुए आप रु. १०० के मासिक पर म्युनीसीपछ सेक्रेटरी ये, उस समय आपने कितनेही मनुष्योंसे हिंसाका करना छुड़वाया है और बोर्डकी ओरसे हिंसाके कार्य नहि होने दिये हैं. आप जात्युक्रतिका सद्विचार करते रहे है और संसारको असार जानकर सदाके लिय आर्थिक लाभसे पराङ्मुख हुए है. क्यों न हो ? आप जैसे बीरही परमार्थ साधनमें तत्पर होते हैं और सांसारिक परपंचोसे छड़कर धर्मपताका फहराते है. सबसे प्रथम आपनही समेदशिखरजीपर महा सभाके अधिवेशनमें आश्रमके स्था-पनार्थ हा. १०००) नकद दान किया था, उस समय आपके इस साहसपर अनेक धनवानोंके हृदयभी कांप उठे थे. आपके पूर्वज रामपुरके रहने वाले थे, परंतु आप अकसर सहरानपुर या रुडकी-

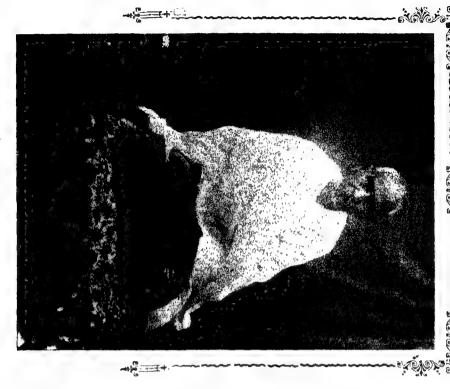
ही रहा करते थे. आप अग्रवाळ वैश्य जातिके वंश भूषण है. शारीरिक और आर्थिक दशासे सुखसंपन्न है. वड़ा पुत एफ. ए. क्लासमें जयपुर समीतीमे पढ़ता है और छोटा आश्रममें प्रविष्ट है. बीका वियोग है इस लिये ब्रह्मचर्य व्रत के पूर्ण सेवी है. अभी आपने जैनसमाज के अपना जीवन अपण किया है और हस्तीनागपुर के ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम के आधिष्ठाता और संचालक आप ही है.

(९) श्रीमान कुंवर दिग्विजयसिं-इजी जैन:-आप कट्टर आर्घ्यसमाजी विद्वान पंडित थे और उस समाज के उपदेशक भी थे, परंतु इटावा मे जैन विद्वानोंके संसर्गसे आपने श्रद्धापूर्वक जैन धर्म धारण किया है. और आजकल जैन समाजका उपकार कर रहे हैं. आप संस्कृत, हिंदी, उर्द और इंग्लीश भाषा के अच्छे ज्ञाता है, जहां र शास्त्रार्थ या जैन तत्व मकाशीनि सभाका दौरा होता है आप अवश्य पंधारकर जैन धर्मका प्रकाश और विजय करते हैं. स्त्री होते हुवे भी आपने इस २७ वर्ष की उम्रमें ही शील-व्रत धारण किया है. आपका जीवन चरित्र ' जैन तत्व पकाशीनि ' सभाद्वारा हिंदी भाषामे प्रकट हो गया है, जीससे हम स्थानाभाव के कारण आगामी अंकमे आपका बृहत जीवन चरित्र गुजराती भाषामे प्रकट करेंगे. आप जैसे रत्न याने

विद्वान पंडित जैन कोमको प्राप्त हुवें है, जीससे अ की शांत छांवे इमने इस वर्ष के पंचांगां में प्रकट की है. आपका निवास करते विधुपुरा पोस्ट बङ्गुरा जील्ला इटा है.

(१० रीयुत चंद्रसेनजी जैन बैद्य, ईटावा:-अ '; " जैन तत्व प्रकाशीनि " सभा के सुंग्य मंत्री है और इस सभा द्वारा जैन 😂 की बहुत ही उन्नति कर शाज तक रहे हैं. अपने जैन धर्म के तत्वें: की ५०००० देक्ट मुफत या अरुप मुल्यमे इस सभाद्वारा असीम परीश्रम करके प्रकट की है. और आगामी आप "जैन तत्व प्रकाश" नामका मासिक पत्रभी निकालनेकी तैयारी मे हैं. इस नव यूवक बंधुका (सचित्र) जीवन चरित्र इम आगे चनुर्थ वर्षमें प्रकट कर गये है जीससे इस बख्त ज्यादे खीखनेकी आवश्यक्ता नहि है.

(११) स्याद्वाद् वारिधि वादि
गज केशरी पंडित गोपालदासजी बरैयाः—
मोरेना (ग्वालियर) निवासी इस महान
नर रत्नको कौन निह जानता है ? विद्याप्रेमी, अपूर्व विद्वान, जैन धर्म की
उन्नति के लिये अहर्निक पयत्नशील रहनेवाले इस महापुरुषका सचित्र जीवन चरित्र हम हिंदी भाषामें गत वर्षमें प्रकट
कर चुके हैं, जीससे फिर ज्यादे न लिख
कर इतनाही कहते हैंकी आप जैन समाज-





बाबा भगीरथजी वर्णी अने उदासीन परोपकारी लाला गेंदनलालजी-हर्मानापुर.



少年茶茶茶茶茶



श्रीयुत चंद्रसेन जैन वेंच-इटावा. (कैनतत्वप्रक्षांशिनी सलाना भंजी तथा इत्साही. ખंजीक्षा અने धर्मभेभी अवक्र भध)

के एक अपूर्व विद्वान और उद्धारक है. आप महा सभा के विद्या विभाग के मंत्री बहुत समय तक रहे है और गत वर्षमें दक्षिण महाराष्ट् जैन कोन्फरंस के बेलगाम के अधिनेशन में आपकुं अध्यक्ष-स्थान दिया गया था. अभी दो तीन सालसे आपने मोरेना में जैन सिद्धांत पाठबाला स्थापन की है, जीसमें नित्य आप चार पांच घंटे तक विद्यार्थीओंकं न्याय और काव्य निःस्वार्थ वृत्तिसे मंबाईमें पढाते है. दिगंबर जैन प्रांतिक कोन्फरन्सका स्थापन होना और "जैनमित्र" पत्रका आपकी संपादकीमें जन्म होकर इस पत्रद्वारा जैन समाजमे बहुत कुछ धर्म जाग्रति उत्पन्न होना आपकेही अपूर्व और निस्वाधी परिश्रम-का फल है. आपकी विद्रता और जैन समानमे आपका प्रभाव देख कर कित-नेक जैन पंढितों इषीवश होकर आपका मभाव घटानंके छिये प्रयत्नशील रहते है, तौभी आएका मभाव और आएकी योग्यता बढ़ती ही जाति है.आपके रचे और मकट किये हुने ब्रंथों जैनसिद्धांत दर्पण, जैन सिद्धांत प्रवेशिका, सार्वधर्म, भूगोल मीपांसा, सुशीला उपन्यास आदी मत्येकक्कं जानने और प ने योग्य है.

(१२) पंडित पन्नाछालजी वाक-छीबाछ जैंन:-मुजानगढ़ (बीकानेर) निवासी बास्त्रह्मचारी इस पंडितकां

सारी जैनसमाज अच्छी तरहसे पिछानती है, क्योंकी आपने बहुत कुछ जैनेपुस्तकों अनुबाद या संपादन करके प्रकट किये है, जीससे आपके नामसे सब परिचित है, परन्तु आज इमसब भाइओंको आपके फोटोका दर्शनभी कराते हैं. आपकी अस्वि-कारता होने परभी आपका फोटो हमने गुप्त रीति से माप्त करके मकट किया है जीसके लिये आप के हम क्षमामार्थी है. आपके असीम उद्योगसे ही दिगंबर जैन समा-जमे जैन ग्रंथों छप कर प्रकट होने की शरुआत हुई है. मुंबाई में "जैन ग्रंथ रत्नाकर कार्यास्रय " नामका रडा भारी दिगंबर जैन पुस्तकालय स्थापन हो कर शुद्ध ग्रंथों मिलनेकी सुभीता होना और " जैन हितेषी" नामका हिंदी मासिक पत्न स्थापित होना आप के अतुल्य परि-श्रमका फल है. अभी आप काशीये निवास कर रहे है और वहां स्यादवाद रत्नाकर कार्यालय और "स्यादवाद ग्रंथमाला" की स्थापना की हे, जीसके द्वारा आपने दो तीन ग्रंथ प्रकट किये है और अभी महान अपूर्व्व शास्त्र "श्री आदी प्राणजी " नवीन और सरस हिंदी अनुवाद साहत छपा रहे हैं. आपने आपका जीवनसर्वस्व जैन समाजकं अर्पण किया है और रातिदिन समाज सेवाके कार्यमे छगे रहते हैं. जहां तक हमने तलास की है आप दिन रात मिल

कर १९-२० घंटे तक कार्य करते रहते है और माल चार या पांच घंटे ही अल्प निंद छेते हैं. आपका बृहत् जीवन-चरित हमकु पं. छाछारामनी द्वारा माप्त हुवा है, परंतु स्थानाभावके कारण वह हम आगामी कीसी मौके पर प्रकट करेंगे.

(१३) लाला जगमंदरलाल जैनी एम. ए. बोरिस्टर एट हो. अहाहबाद Prof. J. L. Jaini M. A. Bar-atlaw, Allahabad):-आपका जन्म सन १८८१ में सहारनपुरमें हुआ है. पिता-श्रीका नाम लाला पनालालजी है. आपने सन १९०१ में (२० वर्षकी उन्नमें) बी. ए. की परीक्षा पास की और फिर १९०३ में एम. ए. की परीक्षा अव्वल नंबरमे पास की, जीससे आपकं वीकटो-रीआ ज्युबीलीं मेडलभी मीला था. पदनेमें आपकी बुद्धि इतनी तेज थी की आप प्रत्येक परीक्षामें अञ्चल नंबर आते थे और गवर्नमेंट स्कोलरशीपभी मीलती थी. इसी वर्षमे आप म्युर सेंट्ड कोडेजके गव-नेमेंट बोर्डिंग हाउसके सुप्रीन्टेन्डंट और आर्ट विभागके आ. प्रोफेसर नियत हुवे. आपका धार्मिक श्रद्धान अच्छा होनेसे और समाज सेवाका ख्याल आपकुं होनेसे आपकी संपादकीमें ''जैनगेझेट" Gagette) नामका इंग्लीश मासिक पत्र निकाला गया (जो अब तक चल रहा है) सन १९०५ मे आप महासमा और जन यंग मे-

न्स एसोशीएशनके जल्सेमे सामील होकर आप एसोसीएशनके बंगाळ मांतके प्रमुख नियत हुवे और आपने स्नीशिक्षण डिपार्ट-मेंट स्थापित किया. फिर सन १९०६ में आप लाँ (Law) के शिक्षण के (England) रवाना लिये इंग्लांड हुए और १९०९में बेरिस्टर एट लो. की परीक्षामें उत्तीर्ण हुवे और वहां आपने। पं० एफ. के. लालन और युरोपीअन जैन हर्बर्ट वोरनसे मीलकर International Jain Association इंग्लांडमें स्थापित किया और आपही उसके प्रेसिडंट हुवे. आप और मी० लालनके उपदेश से ही मी० हर्बर्ट वोरनने जैन धर्म प्रहण किया है. संवत १९१० मे आप हिंदुस्तान वापिस आये और श्रवण बेलगुलमे गोमटस्वामिक अभिषेकमे सामील हुवे और वहां आप जैन लो कमीटी Jaia Law Committee के सेकेटरी नियत किये गये. जब तक आप इंग्लांड थे, आपका 'जैन गेझेट ' मो. ए. बी. लड्डे एम. ए. और फिर लाला सुलतानसिंहजी वकील मेरठकी संपादकीसे प्रकट होता रहा और बापिस आनेपर फिर आजतक आप 'जन गेझेट '-कुं चला रहे हैं. आपने आत्मानुशासनजी प्रथका इंग्लीशमे अनुवाद करके 'जैन गेझेट ' द्वारा प्रकट करके जैन समाजका बहुत कुछ उपकार किया है. समेदशिख-रजीके कार्यके लिये भी आप हरवस्त

सहाय करते रहते हैं. अभी आप अलाह-बादमे बेरीस्टरका व्यवसाय कर रहे हैं. और 'जैन गेझेट' कुं भी नीकाल रहे हैं. धन्य है आपकी तेज बुद्धिकों जो आपने मात्र ३१ वर्षकी आयुमे इतनी योग्यता प्राप्त की है. हम यही चाहते है की आप जैसे बुद्धिमान नररत्नों जन समाजमे ज्यादेतर उत्पन्न होकर जैन समाजका कल्याण करों.

(१४) बाबु जयकुमार देवीदास चवरे बकील बी. ए. बी. एल.-अकोला:-आपका जन्म सं. १९३५ मे कारंजामे हवा है. आप सन १९०५ तक अभ्यास करके बी. ए. बी. एल. की परीक्षामे उत्तीर्ण हुए है और आजकल अकोलामे वकीलातका व्यवसाय कर रहे है. संस्कृतमे आपकी योग्यता अच्छी होनेसे बी. ए. की परीक्षाके समय आप संस्कृत विषयमे अ-व्वल नंबर आनेसे बाबु देवकुमारजीके नामका एक मेडल जैन यंग मेन्स एसोसीएशनद्वारा आपकुं मिला है. आपने बहुत परिश्रम कर के अकोलामे जैन बोर्डिंग स्थापन की है और अभी तीन चार वर्ष हुवे अंतरीक्षजी तीर्थ के लिये अकोलामे दिगंबरी श्वेतांबरीमें दाना चल रहा है उसके लिये आप तन, मन, धनसे अहर्निश असीम परिश्रम कर रहे हैं. आपके चचा जीनवरदासजी संस्कृ-तके अच्छे पंडित है, और उन्होंके परि-श्रमसे कारंजामे संस्कृत पाठशाळा चलनेका

प्रबंध हुवा है. आपके कुटुंबमे ३५ धादमी हैं जो एकही जगेपर संपसे कारंजामें रहते हैं. आगे वहाड व मध्य प्रांतिक दिगंबर जन समाकी औरसे 'जैन माग्योदय' नामका मराठी मासिक पत्र निकलता था उसके संपादनका कार्य आपने ४ वर्षतक किया था. आपकुं जैंन धर्मसे भी अच्छा प्रेम हैं और अकोला बोर्डिंगकी उन्नति और अंतरिक्षजी केसमे दिगंबरीकी ओरसे आप अहर्निश तनतोड़ परीश्रम कर रहे हैं. धन्य है आपकी समाज सेवाको!

(१५) श्रीमान दानवीर जैन कुछ भूषण शेठ माणेकचंद हीराचंदजी जे. पी. मुंबाई:-वीसाहुमड ज्ञाति मंत्रेश्वर गोत्री आपका जन्म स्थान सुरत है. आपकी दान-बीरता और समाज सेवाके लिये सारी जैन आबालवृद्ध सबही आपकं अच्छी तरहसे जानतेही है. आपका जीवन परीचय आगे पकट हो गया है, जीससे ज्यादे न लिख कर इतनाही कहते हैं की आप जैन समाजमे एक शिरोमणि नर रत्न है. आपने आजतक अंदाज तीन चार लाख रुपये विद्या वृद्धिके लिये खर्च किये हैं और रुपया सवा लाख लगाकर मुंबईमे हीराबाग धर्मशाला निर्माण की है. महासमा, मुंबई मांतिक सभा आदी बहु-तेक सभाके सभापति और तीर्थक्षेत्र कमिटी के महामंत्री हैं, और अनेक संस्थाओं जार तीथोंके आप मेम्बर और ट्रस्टी है.

यद्यपि आपने ज्यादे शिक्षण नहि प्राप्त किया है तामी आपका ध्यान विद्या मृद्धि-के लिये अहर्निश लग रहा है. आप लख-पति होने परभी सादाई और सरल परी-णामसें रहते है. दिगंबर जैंन समाजमे गत १५-२० वर्षमे जो कुछ उन्नति हो रही है वह आपकेही अतुल्य परिश्रमका फल है. समाजके प्रत्येक कार्य आप अगुए होकर तन. मन धन लगाकर करते रहते है, आपकी निष्पक्ष बुद्धिसें आपका जैन समाजमे इतना प्रभाव है कि सभी कार्यों आप्रकी संमतिपूर्वक होता है. और आज कल आप दिगंबर जैनोंके वाइसरोय जैसे गीने जाते हैं. आपके गुणोंकी कदर करके ब्रीटीश सरकारने आपको जे. पी. का पद प्रदान किया है और दिगंबर जैनोंकी ओरसें 'दानवीर जैन कुल भूषण'का पद प्राप्त हुवा है. अभी आपकी आयु ६१ वर्षकी है. हम यही चाहते है कि इस दानवीर महान नर दीर्घाय होकर आपकुं इससेभी ज्यादे धार्मिक सेवा करनेका बल प्राप्त हो और महाशयों अन्य धनादय आपका अनुकरण करों.

(૧૬) શેક હીરાચંદ નેમચંદ દાશી આ મેજ સ્ટ્રેટ, સાલાપુર:—આ શેઠતું સચિત્ર જીવન ચરિત્ર અમા અગાઉ પ્રથમ વર્ષમાં વિસ્તારરપે આપી ગયા છીએ, તેથી અત્રે એટલું જ જણાવીએ છીએ કે એએ ધનવાન તેમજ વિદ્વાન પાંડિત પણ છે તેમ મંગ્લીશવું પણ એમણે સાર શિક્ષણ લીધેલું

છે અને આ ગ્રહસ્ય મુળાઇ પ્રાંતિક સભાતા સ્થયી ઉપ સખાતિ છે તથા મુંબર્ણ પ્રાંતિક સભા, દક્ષિણ મહર્છ જૈન સભા તથા વનાડ મુખ્ય પ્રાંતિક સભાની એકના પ્રમુખ નીમાયા હતા. એમણે જૈન કામની ઉન્ન તને માટે એ લો ખધા પ્રયત્ન ક્ષાધા છે અને કર્યા જાય છે કુ જે લખવાને અત્રે સ્થાન નથી. અમણો ગીરનારજમાં મંદીર વધાવી પ્રતિષ્ઠા કરી છે તથા સાલાપુરના પ્રસિદ્ધ ધનાઢય ગ્રહસ્થ અને વ્યાપાર્ગ તરીકે એએ જોશીત છે. સરકાર તરફથી પહા એ આ ઑનર ! મેજરડ્રે-ટની પડવી મેળવી શક્યા છે તેમ દાન પ્રણ્યમાં પણ દુબના સારા વ્યય કર્યા છે. વળી અએ એક જાણીતા ક્ષેખક તેમ વકતા પણ છે. એમણે જૈંત કામમાં પ્રથમ માસિક પત્ર નામે 'જૈત ખેત્ધક'' સવત ૧૯૪૧માં કાઢ્યું હતું, જે ૧૪ વર્ષ સુધી જાતે ચલાવી કાલ્હાપુરના પં. કુલાપ્યા ભરમાપ્યા નીટવેતે સોંપ્યું હતું, જે હજુ ચાલજ છે. એએા કેટલાક જાહેરખાતાં-આના મેમ્બર તથા અનેક ફંડાના ટ્સ્ટી છે, તેમ હીરાચંદ ગુમાનજી જૈન બોર્ડિંગ મુંખા-**ઇના જતરલ સક્રેટરી પણ છે. આપ** એક ધનવાન પુરૂપ છતાં જૈન કામની ઉન્નતિ માટે અહિતિશ પ્રયત્ન કર્યા કરે છે, જે બીજા ધનવાનાએ અનુકરણ કરવા યાગ્ય છે. વળી એએ શેઠ માણેક્યંક હીરાચંદછ જે. પી.ના ખાસ મિત્ર તથા સલાહકાર છે અને આ શેડની અક્કલ અને મદદથી શેઠ માણેકચંદછ ઘણાં નવીન ખાતાંએા સ્થાપન કરી **શક્યા** છે. હાલ વ્યાપની ઉમર પક વર્ષની છે, છતાં પણ વ્યાપાર ધંધા કરવા ઉપરાંત જૈન ધર્મની સેવા બજાવવાને પણ ચુકતા નથી.

(૧૭) શેઠ રામચંદ નાધા રંગછ ગાંધી, વ્યાકલુજ:—વ્યાપાર વ્યતે દાન પુષ્ય માટે જાણીતા થએલા શેઠ નાથા રંગ-જીતા એએ હમા પુત્ર છે, જેએ બ્યાપાર

કુશળ ઉપરાંત વિદ્વત્તા, અને દાનવીરતામાં એક્કા છે, તેમ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધર માટે એમના પ્રયાસ અત્યત્તમ છે. એમની પેઢીઓ, મુંબાઇ. સોલાપુર, બીજાપુર, આકલુજ, બર્સી, પંદ-રપુર, વગેરે સ્થળ જગ જાહેર છે. એમના તરફથી રા. ૨૫૦૦૦) ખરચી આકલુજમાં મંદિર, રા. ૨૫૦૦૦) જૈન ધર્માં મૃતિ કંડમાં સ્કાલરશીપ, પ્રંથ છર્જ્યોદ્વાર તથા અનાથાલય માટે, રા. ૫૦૦૦૦) સોલાપુરમાં શેઠ નાથા રંગજી જૈન બાર્ડિંગ માટે. રા ૫૦૦૦) મહા-સભાના પરીક્ષાલયમાં તથા હઝાર બબ્બે હઝારની અનેક સખાવતા કરવામાં આવેલી છે. એએં) અન ર્નેક સંસ્થાના મેમ્બર તથા ટ્રસી છે, તેમ મુખાઇ પ્રાંતિક દિ. જૈન-સભાના પાવાગઢના આધ્યવેશનના એએ જ પ્રમુખ નીમાયા હતા. અમના ગ્રંથ જીર્આદ્વાર તરફ એટલા બધા પ્રેમ છે કે અનેક પ્રથા આપાંતર. ઉતારા કે શહ કરાની પાતા તરફથી અલ્પ મુલ્યમા પ્રકટ કરાવ્યાજ જાય છે, જેવા કે સ્વામિ કાર્ની કેયાનુપ્રેક્ષા, પરીક્ષા મુખ, પ'ચાધ્યાયી, ધર્મ પરીક્ષા, જૈન સિદ્ધાંત પ્રવેશિકા, ગામટસાર, વિશ્વસાચન કાષ વગેરે. આ શેઠ ધનવાન સાથે તિદાન પહા છે તેમ એક ગંભીર લીચારવાન અને ઉદ્યાર પુરૂષ છે. **હાલ અ**ગમતી ઉમર ૫૦ વ-વંતી છે. અમા એજ ઇચ્છીએ કે એએ! દીર્ધાયુષી થઇ આધી પણ વધુ દાન પુરુષ કરાે અને બીજા શ્રીમાના એમના ગુણાનું વ્યતુકરણ કરાે.

૧/ ૫'ડિત ધન્નાદા લઇ કાશ કી-વાલ, મુખાઇ:—માં સાદા ગ લીર વિચાર-શીલ પુર્લ મુંલાઇ પ્રતિક સનાની મ્થાપના સમયે ઘણા લાગ લીધો હતા તથા વિદ્યા વિભાગના મત્રા તથા મહામત્રી પણ કેટલે ક વખત સુધી હતા. એઓ જૈન સિહાંતના અચ્છા જાણકાર છે, જૈન કામને જામત ક-રવાને માટે એઓ દિદ્યાં કર્યા કરે છે તથા દરેક જાહેર કાર્યમાં એએ આગળ પડતા ભાગ હે છે. વળી એમના પરિશ્નમથી મહા-રાષ્ટ્ર ખેડેલવાલ જૈન પંચ મહા સભા સ્થા-પન થઇ તેના પ્રમુખ પણ એએ.જ નીમાવલા છે અને તે સબા દ્વારા અનેક સુધારાએ થવા જાય છે. હાલમાં એમની દેખરેખ નીચે 'સ-ત્યવાદા' નામનું હિંદી માસિક શરૂ કરવામાં આવ્યું છે, જેને જૈન ક્રામ તત્ક્થી સારા આદર મધ્યા જાય છે.

(૧૯) ભામુ માણુક ચંદ્રભ, ભૈનાહા, નુ ખાઇ:—કલકતા નિતાસી આ ઉત્સાહી યુવક વ્યંધુ મુંવ્યાઇ પ્રાંતિક દિ. જૈત કાન્ફર સન્ના ખે વર્ષથી મહામંત્રી છે, જે કાર્ય એટલા ઉત્સાહ, ખંત અને યાગ્યતાથી કરે છે કે એમના મત્રાત્યમાં સભાના સ્થીતીમાં સુધારા થતા જાય છે. એએમ એક લેખક છે તેમ દરેક ધાર્મિક કાર્યમાં પણ અપ્રગણ્ય ભાગ લે છે.

(૨૦) શેઠ સાવજ સખારામ દાશી, સાલાપુર:-અંઓ શેઠ હીનચંદ તેમચદ દાશીના બિતિંગન થાય છે. એઓ વિદ્વાન, તેમજ ધર્મ કાર્યમાં ખહુ કુશળ છે. એઆ મુંબઇ દિગંભર જૈન પરીક્ષ લયના તથા દક્ષિણ મહારાષ્ટ્ર જૈન કેલ-રંસના ડ્રેક્ટ કમીટીના મંત્રી છે. એમના ખંતીલા પ્રયાસથી આ બન્ને ખાતાંઓ ઉત્તમ રીતે ચાલી જૈન સમાજના બહુજ ઉપકાર કરી રહેલા છે.

(રર) શેંડ ઠાકારદામ ભાગવાનદાસ ઝવેરી, મુખાઇ:—ઝાનાન શેંઠ માણેકચંદ હીરાચદજ છે. પા. ના બાણેજના ભ ણે જ આ ઉત્સહી વૃત્રક બધુ છે, જેઓ માણેકચંદ પાનાચદની ઝવેરતની પેઢીમાં બહુ મે.ખતાથી વેપાર ચલાવે છે. એએ મુંબાઈ પ્રાંતિક સભાના ઉપદેશક વિભાગ, દિગંભર જૈન હિરેક્ટરી તથા હીરાચંદ ગુમાનજી જૈન બોર્ડિંગના સેક્રેટરી છે, જેથી એ ખાતાંઓ મણી સારી રીતે

ચાલે છે. એમના વિદ્યાદાન તથા શાસ્ત્ર દાન તરફ એટલા પ્રેમ છે કે હાલમાં એમણે પાતાના સ્વગં. પિતાશ્રીના સ્મરહ્યાર્થે ર. ૩૫૦૦)ની સ્થાયી રકમ કહી છે, જેમાંથી ર. ૨૦૦૧)ના વ્યાજમાંથી વિદાર્થીએ ને સ્કાન લસ્સીપ અને ર. ૧૫૦૦)ના વ્યાજમાંથી દર વધે એક પુસ્તક નવીન પ્રકટ કનવી સુરતમાં તથા 'દિશંતર જૈન 'ના શ્રાહુંકાને બેટ અપ-વામાં આવનાર છે, જેથી એમના પિતાશ્રીનુ નામ ત્યેરકાળ સુધી સચવાઇ રહેશે.

(२२) श्रीमान साहु शेठ सलेख-चंदत्री रईस, नजीबाबाद (बीजनोर):-आप सौम्य मृति, सरल परीणामी, शील स्वभानी और अनुभनी पुरुष है. आप जीतने धनवान है उससे बहुत बढ़ कर धर्मात्माभी है. समाजभे आपकी मान्यता-अच्छी है और धर्म ध्वानमें आप अधिक समय व्यतित करते हैं. नित्य स्वाध्याय करनेका नियम है. आपकी इतनी हदाव-स्था होने पर भी धर्म आवका क्षरीर स्वस्थ है. आवका हृदय इतना कोमछ है की दूसरे का दुःख देख कर आपके अश्वर्भे आधु भर आते है. आपकी योग्यतासें आप ऑनसी पेकीस्टेट भी नियत हुने हैं. आपका बहुतसा ्रव्य जातिसेवा और धर्म कार्योंमें सद्व लगता रहता है. आपके सुपीत साह जुगमंदर-दासभी है, जो समाजके कार्योंने बहतपा भाग छते है और महासमा के मंत्री भी कीतंनेक समय तक थे. इम यही चाहतं

है की इस धर्मात्मा सरल परिणामी हुद्ध घनिक शेठ चीरंजीवी रहीं.

(२३-२४) स्वर्गीय श्रीमान शेठ विनोदीराम वालचंद और ४ पुत्रों, झाल-रापाटन सीटी:—परलोक निवासी इस धर्मात्मा धनिक पुरुषसें सारी जैन समाज परिचित है. सारे हिंदुस्तानमें व्यापार कुशलता और धर्म प्रेम के लिये आपका नाम बढ़ा वि-र्व्यात है. आपके सुयोग्य चार पुत्रों शेठ दीपचंदजी, शेठ माणेकचंदजी, शेठ लालचंदजी और शेठ नेमीचंदजी है, जीनके चित्रोंभी राजवंशी ड्रेसमें पाठक देख रहे है. आपका जानने योग्य और अनुकरणीय जीवनचरित्र हमकुं भिला हं, जो स्थाना-भाव के कारण आगामी मार्गशिषके अंकमें अवश्य प्रकट किया जायगा. पाठकगण धर्य्य रख्लें.

(૨૫) શેઠ હીરાચંદ ગુમાનજ જૈન એ.ડિ. મફલ, મુંભાઇ:—શેઠ માણેકચંદ હીરાચંદજના ખંતીલા વિદ્યાપ્રેમથી એમના કુડું ખીએ! તરફથી પાતાના પિતાશ્રીના સ્મર- ણાંચેં રૂા. ૯૫૦૦૦) ની ગંજાવર સખાવતથી આ સંસ્થા કરવી સન ૧૯૦૦ ના વર્ષથી મુંબાઇમાં સ્થાપન થયેલી છે, જેના દિગંબરી શ્વેતાંબરી અને સ્થાનકવાસી સવેં જૈતા ભેદ ભાવ વગર લાભ લઈ રહ્યા છે. જૈનામાં સાથી પ્રથમ આ બાહિંગના સ્થાપના થયા પછી એનું અનુકરણ કરી ત્રણે દિરકામાં અનેક સ્થળે બાહિંગા થઇ છે. આ બાહિંગમાં રહેવાની, ખાવા પીવાની, લાય પ્રેરી, ધર્મ શિક્ષણ, વાંચનાલય, કસરતશાળા, દેરાસર વગેરેની

એવી ઉત્તમ સગવડ છે કે જેની ખરાવરી કાઈ પણ બીજી એહિંગ કરી શકતી નથી. વળી આ બોર્ડિંગ કરી શકતી નથી. વળી આ બોર્ડિંગ અને એના ડ્રસ્ટીઓનો જેન કેમને એટલા બધા વિશ્વાસ બેસી ગયા છે કે એના ડ્રસ્ટને અમદાવાદ બોર્ડિંગ, રત-લામ બોર્ડિંગ, ઉદેપુર પાઠશાળા વગેરે ૮-૧૦ ધાર્મિક ફંડાના આશરે રા. ૧૦૦૦૦૦) ની વ્યવસ્થા કરવાનું સોંપી દેવામાં આવ્યું છે, અમાને તા લાગે છે આ બોર્ડિંગના ડ્રસ્ટ ફંડને બિવિબ્યમાં ગુજરાત વર્નાક્યુલર સોસાયટીની માફક અનેક સંસ્થાઓના લાખા રા. ના વહિવટ સોંપાશેજ કેમકે આ ફંડની કાર્ય કુશળના દિનપ્રતિ દિત પગભર થતી જાય છે.

(२६) श्रीमान राय बहादुर लाला घमंडीलालजी रईस, मुज़फरनगर:--उक्त लाळा साहबका जन्म जैनामवाल उच्च ग्रानेमे हवा है, परंतु कालके प्रभावसे आपका बाल्य काल बड़ी दीन दशामें कटा है. इस समयकी कहानी यदि कोई लाला साहबसे सुने तो एक वार तो अवस्य रोने लग जाय. हम उस समयकी कहानी गा-कर पाठकको कष्ट देना पसंद नहिं करते. अतः आप धर्मात्मा पुरुष है. आपने धर्मके प्रभावसे और अपने बाहुबलसे बहुत संपदा पैदा की है. भारत सरकारसे आपको राय-बहादरिका पदक और ऑनररी मेजीस्ट्रेटी मिली हुई है. सबसे बडी वात आपमे यह है कि आप इस पंचम कालमे हर प्रकारसे सब जीवोंको खुश रखना चाहते है. उदा-हरणके लिये अभी दि. जैन महासभामे धनिक मंडली और विद्वान मंडलीकी दो

पार्टी हो रही है जीसमे आप निष्पक्ष हो कर दोनोंमे मिलते रहते है. आप सरीखे सज्जन पुरुषांका त्थिर रहना जैन जातिका अहोमाग्य है.

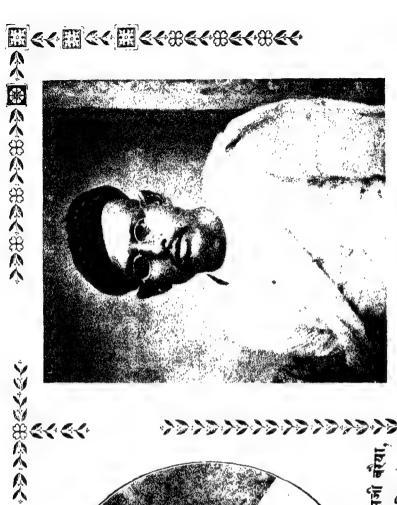
[२७] श्रीमान लाला देविसहायजी रईस, फिरोजपुर [पंजाव]:-आपका जनम जनामवाल उच्च कुलमे हुआ है. आपका चित्त धर्मकी ओर अधिक झुका हुआ है. आप जन अनाथाश्रम [दिल्ही] को रु. १००) मासिककी सहायता देते रहे हैं और बहुतसे तीर्थ क्षेत्रोंका जीणोंद्धार कराते रहे हैं. आपकी दानवीरता इससे मलीमांति विदित होती हैं. आपने समेदिशालरजी तीर्थकी रक्षाके लिये बहुत कुल कार्य और द्रव्य व्यय किया हं और महासमामें भी आप एक अमगण्य पुरुष है.

(२८) श्री समेदशिसरजी तीर्थः— २० तीर्थकरोंकी निर्वाणभूमि इस परम पित्र महान तीर्थक्षेत्रका संक्षिप्त इतिहास ईसी अंकर्मे पृष्ठ ४० से ५२ तक दिया गया है जीस्कुं पाठकगण एक दफे ध्यानपूर्वक अवश्य पदकर पुण्य संचय करों.

(ર૯) 'અ વિકાશમ''- મુંબાદ:- માત્ર ર. ૩૫૦૦)ના કંડથી આ સરતાની સ્થાપના ત્રણ વધે ઉપર પ્રથમ અમદાત્રદમાં શેઠ માણેકચંદ હીરાચંદજીનાં વિદુધ! પુત્રી મગન ખહેનના તન, મન અને ધનના અથાગ ભાગ દ્વારા ખત્ર ગુજરાત પ્રાંત માટે કરવામાં વાલી દ્વી, પણ પછી સર્વેના અનિપ્રાય મુ. બ એ સરથાને બે વર્ષ થયાં મુંબઇમાં

તારદેવપુર જાલીલી ભગમાં લાવામાં આવી 🎙 અને આખા હિંદુરન ના જૈન બહેના લાંભ લઇ શકે એવી સગવડ કરવ માં આવેલી છે. એના મદદનીય સાલાપુર નિવાસી શ્રીમતી કંકુ **ण्डेन तथा भाँ ५ से ध**रानियासी श्रीभनी असीता મહેન છે. જેએ! ગાત્રમની ઉત્કતિ પુષ્કળ ખટપટ કરી રહ્યા છે. હાલ આ મ્માત્રમમાં માત્ર ફ હક્કિયો તુજ સ્થાયી કંડ 🛂, જયારે માસિક ખર્ચ રૂ. ૩૦૦) છે, જે ખર્ચ માસિક મદદથી અથવા તા છૂટી છૂટી મદદ મેળવીને નિભાવવામાં આવે છે. જેથી દ્રવેક જૈન મધ્યે આ ગંજાવર ખતાન वभते। वभत अवश्य महह आपता रहेव જો મુસ્યે. આ સંસ્થાના હાલ ૯ વિધવા, ૪ સાધવા અને ૧૩ કમારિકાએ મળી ૨૬ આવિકાઓ લાભ લઇ રહી છે, જેમાં ૯ **દક્ષિત્રુતી, ૬** ઉત્તર હિંદુસ્તાનની અને ૧૧ ગુજરાત કાઠી આવાડની છે. આશ્રમમાં હાલ શિક્ષણના ૪ ધારસ છે. જેમાં માક્ષશાસ્ત્ર, જૈન સતીઓના ઇતિહાસ, છઢાળા, કવ્ય સગ્રદ **ષ્ટ્રા**વક વનિતા બાેવિની, પચકલ્યાણક, જૈન ભાલગુટકા વગેરે ધાર્મિક તથા નિશાળને લગતું સર્વે વ્યવહારીક શિક્ષગ પણ અવાય છે તેમ ભરત, સીવણ, સુંથણ તથા પાક શાસ્ત્રતું પણ શિક્ષણ આપવામાં આવે છે અને વિદ્યાર્થી-કાએામાંથીજ દરરાજ બે જહા વારી મુજબ રસાઇ કરે છે અને અઠવાડી ભામાં એક વખત વખત સારૂં જમણ અપાય છે. એના સંસ્થા-મક અને સંચાલક શ્રીમની મગન બ્હેન પાતાનું રાજમ્હેલ જેવું મકાન મુકીને રાત્રિ हिन आश्रमभांक रही तन भन धनने। लाग આંપી આ આશ્રમને થાડી મુંડીમાં ઉત્તમ **રીતે ચલાવી રહ્યા છે, જે ખીના જ**ણાવતાં अभने अत्यंत भुशाबी इपके छे. अभे। પૃત્રિ**છીએ છીએ કે આ સંસ્થા**તું ચીરસ્થાયી કું કું કું વખતમાં માહું શાંએા અને શામતા મગન ખ્હેનને હાથે આ સંસ્થા વધુ ઉત્તત દશાએ પહેંચા. આ આશ્રમની નિયમાવલી, રિપાર્ટ, દાખલ થવાનું ફાર્મ વગેરે જુબીલી ભાગ, તારદેવ, મું બાઇને ઠેકાણે મંત્રીને લખ-વાયી મળી શકે છે.

- (35) શ્રી ક્ષેત્ર સ્તલનિ ધ:— આ અતિશય ક્ષેત્રના ડુંક ઇતિહાસ અમા ગત વર્ષનાજ ખાસ અકમાં વિસ્તારથી અપા ગયેલા છીએ, જેથી એટલુંજ જણાવીએ છીએ કે દક્ષિણમાં સધર્ન મરાઠ રેલ્વેના ચીકાડી સ્ટેશનથી ૨૦ માઇલ ઉપર આ તીર્થ એક અતિશય ક્ષેત્ર છે તથા દર વર્ષે પાસ વદ ૦))ને દીને અત્રે ગ જવર મેળા ભરાય છે વધુ માહીતિ મેળવનારને ગત વર્ષના ખાસ અંક એક વખત અવશ્ય વાંચવા ફરીથી ભલામણ છે.
- (31) દિંગ ખર જૈન બાર્ડિંગ હાઉસ કોલ્હાપુર:—ક-૭ વર્ષ થયાં આ બાર્ડિંગ શેઠ માણેક યંદ છતા પ્રયાસ અને રા. ૧૮૦૦ ગી સખાવતથી સ્થાપન થયેલી છે, જેને હવે એ વિભાગના ભાઇઓની તથા કાલ્હાપુર સરકારની સારી મદદ છે તથા શેઠ માણેક ચંદ છ પણ હજુ આ બાર્ડિંગને જુી જુદા રીતે મદદ કર્યા કરે છે એ વિભાગના દિ. જૈન વિદ્યાર્થીઓ એ સંસ્થાના લાભ મી એ. ખી. લઠ્ઠે એમ. એ. ની દેખરેખ નીચે સારી રીતે લઇ
- (3ર) ત્રેક્સર આ હુલા પ્યા ભાભા છે. લકું એમ એ. કે હહાપુર:—આ ઉગી કેળવણી લીધેલા અને ધર્માત્સાઢી પુરૂષ રાજા-રામ કે છે જના પ્રોફેસર છે તથા દક્ષિણ મહારાષ્ટ્ર જૈન સભાના એક ખાસ અમેસર, સ ચાલક તથા વિદ્યા વિભાગના મંત્રી તથા કાલ્હાપુર ખેર્ડિંગના સેક્રેટરી છે. કાલ્હાપુર મ્યુનીસાપાલીટીના એએ! ત્રેમ્બર છે. વળા મેએા જંમણીતા લેખક તેમ વકતા પણ છે.



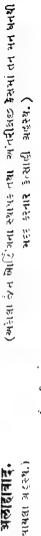
पंडित पन्नाह्मालजी बाकलीबाल, सुमानगढ़.

'અનેક પુરતકાના સ પાદક, અનુવાદક અને પ્રકાશક તથા જેન ચંચ રત્તાકર કાયોલય [મુંખાદી], 'જેનહિતેયી' પત્ર અને સ્યાદ્વાદ મંધસાળાના સ્યાપક કાયોલય મિળાદી

स्याद्वाद वाशिध वादि गज केशरी पं. गोपाळदासजी बरैया. मोरेना (ग्वालियर).

Geln wildn) (મહાસભા વિલા વિભાગ તથા મુંખાઈ પ્રાંતિક દિ. જેન કાન્ફર સના માછ મહામ'ત્રી, 'જેતમિત્ર'ના માછ સ'પાદક અને વ્વર્ણીતા







(ઇલિશ જેન ગેર્સના સંપાદક અને ધર્મપેમી કેળવાયલા ત્રદુરય.)

म्रस जैन ति. प्रम.

મ્માં ઉત્સાહી મહસ્યે લાલા **જુગમ**ં દરલાલ **જૈનીના વિક્ષાયત જવા દરમ્યાન** ખે ત્રણ વર્ષ સધી કંગ્લીશ માસિક પત્ર 'જૈત ગેઝેંટ ' સારી રીતે ચલાવ્યું હતું. જેનાની સંખ્યા કેમ ઘડી છે તથા કેમ વધી શકે તથા કેલ-વણી કેમ વધી શકે તે માટે આપ ક્ષેખા વખતાવખન પ્રકટ કરે એએ જૈતાના ત્રણે પીરકામાં સંપ ચાદનાર છે, તેમ કાલ્હાપુરથી પ્રકટ ધતું 💮 અડવાડિક પત્ર ' પ્રગતિ આણી છત વિજય ' ખાસ એમની દેખરેખ નીચજ ઉત્તમ રીત ચાલી રહેલું છે. આ કળવાયલા ગ્રહસ્થના એક ઇંગ્લીશ લેખ પણ આ અંકમાં વાંચંકાના જોવામાં આવશે.

(३१) पं. कल्लाप्पा भरमप्पा निटवे कोल्हापुर:-आ विद्वान पंडित 'जैनबोधक' मासिक पत्नना १०-१२ वर्ष थयां संपा-दक छे. अनेक स्थळे एमने हाथे मंदीर मतिष्टाओ थयेली छे. कोल्हापुर राज्यनी एमनी तरफ असाधारण महेरबानी छे. एमणे कोल्हापुरमां जैनेंद्र पेस १३ वर्ष थयां खोळेलं छे, जे द्वारा अनेक पुस्तको बहार पढ़ी चुक्या छे अने हाल एक वर्ष थयां कोल्हापुर स्टेटतुं सर्व काम एमनेज मळे छे. संस्कृत ग्रंथोनो मराठी अने हिं-दीमां अनुवाद करवामां अने ते बहार पाडवामां एञा एटला बाहोश, खंतीला अने उस्ताद छे के आज सुधीमां एओ महापुराण पूर्वार्थ (मराठी. श्लोक सं. १२०००), सागार धर्मामन, सम्यक्त कौमुदी, उपासकाचार, वसुनंदी श्रावका-चार, रत्नकरंड श्रावकाचार, प्रश्लोत्तर रक्षमालाः देवागमस्तोतः, पंचास्तिकायः समयसारः, भगवती आराधनासार वगेरे धणा नाना मोटा ग्रंथो मराठी के हिंदी अनुवाद सहित गुद्ध छपावीने जैन धर्म अने जैन कोमनुं कल्याण करी रहेला छे। आ निद्वान पंडित चीरंजीवी रहे।

(38) શ્રીયુત અહુણાપ્યા નાનાપ્યા લે'ગડે શાહાપુર, બેલગામ:—સંસ્કૃતના વ્યાપારી છે. એએા દક્ષિણ મહારાષ્ટ્ર જૈત સભાના ક્ષેત્ર કમીડીના સેક્રેટરી છે તથા એમણે હોસુરમાં ખ્ટપટ કરીને પાઠશાળા સ્થાપન કરાવી છે, જેના મંત્રી એએાજ છે.

(3૫) શ્રીયુત ભરમપ્યા પદર્મપ્યા પાટીલ, હાંસર (બેલગામ):—આ ઉત્સાહી બધુતા કાશીયથી હાંસરમાં 'શ્રી જૈન તાના- તકર્મ વાંચનાલય ' નામની સંસ્થા ૧૦ વર્ષ યાં ખુસેલી છે અને તેના મંત્રી એઓજ છે. દરેક ધાર્મિક કાર્યમાં તથા દક્ષિણ મહારાષ્ટ્ર જૈન સભામાં આ બધુ અય્રગણ્ય લાભ લઇ સાર્ક કાર્ય બજાવે, છે, તેમ એએ મરાકી પત્ર "શ્રી जिनविजय" માસિક રૂપે હતું ત્યાં સુધી ત્રણ વર્ષ સધી એના સંપાદક હતા સ્થને ઘણીજ સરી રીતે એ પત્ર ચલાવતા હતા. સ્થાનીય જૈન પાઠશાળા અને બાર્ડિંગની કમીડીના એલ્એા સભાસદ પણ છે. સારાંશ કે આ એક સુયાગ્ય અને પ્રયત્ન શીલ બધ્ધ છે.

(३६) बाबू सूर्यभानु जी जैन बिकल, देवबंद (सहरानपुर):—आपका जन्म नकुड जील्ला सहरानपुरमे जैनाग्रवाल उच्च गृरानेमे हुआ है. आपने बकालतका पास करके देवबंद मे काम करना मारंभ किया और साथही जैन जाति की हीन

दशका ध्यान करके ईस के सुधारकी और भी चित्र समाया, क्योंकि आपने भार्मिक ज्ञानभी अच्छी तरहसे माप्त कर किया था. आज जैन जातिमें जा जागति दीख पडती है वह सब आएके असीम परिश्रमका नतीजा है. भारतवर्षीय दिगंबर जैन महासभा का ढांचा बनाना और इसको चळाना तथा उर्दु " जैन हितोपदे-शक " पत्र निकाल कर उर्दु पढे भाइयांमे धर्मका प्रचार करना और महासभाके मुख पत " जैन गजट " को अपनी संपादकी स मथ्य निकाल कर जाति में उसका यशयोग्य आदर सन्मान कराना तथा जैन ग्रंथोंका प्रकाश और प्रचार विरोधा-मि के भभकते रुपे प्रवाहमें पड़ कर और अनेक कष्ट उठा कर भी करना और डंके की चेंद्र विजयी होना तथा "ज्ञान प्रका-शक" और "जैन प्रकाशक" आदि पत निकाछ कर जातिका उपकार करना यह सब आपके सराहनीय कार्य हैं. आजकल आप एक महान कार्य कर रहे है, जीससे जैन जातिको अवस्यमेव बहुत लाभ होगा। आपका समय जितना जाति सुधार में छगता है जतना समय गृह कार्य में न लगा और न लगेगा. आप सचे जाति सुधारक है. आपकी जाति सेवा बहुत प्रशंस-नीय है,जोससे जैन समाज आपको आभारो है. आज हम उक्त बाबू साहवकी सीम्य मृतिका दर्शन अपने पाठकोंको कराते हैं.

(३७-३८-३९) श्रीयुत स्वर्गीय कवि अनंतराज, श्रीयुत नेमीनाथ और श्रीयुत तात्या नेमीनाथ पांगळ, बासी:-पिता, पुत्र और पौत्रका यह तीनों फोडो है. स्वर्गीय कवि अनंतराज जोतियाका १८३७ जन्म इस्वीसन सेतवाल समानमे बार्सामे हुआथाः आपने घर्षज्ञान बहुत अच्छा प्राप्त कियाथा और आप गाने बजानेमे बहुत प्रवीण थे. आपने मराठी के साथ २ हिंदीका अभ्यास कि-या था और नित्व पति शास्त्र स्वाध्याय करते थे. शास्त्र सुनानेकी तथा कीर्तन करनेकी आपकी कथन शैली अपूर्व थी. आप लातुर गादी के भट्टारक श्री विशाल-कीर्ति के अच्छे सलाइकार थे. आप बासींमें प्रासिद्ध व्यापारी गीने जाते थे और दो तीन वरूत म्युनिसीपाछीटी के मेम्बर भी हुए थे. आपकुं नाडी परीक्षा अच्छो थी और गरीबोंकुं मुफ्त दबा देते थे. आप स्वयं स्फूर्तिमान कवि भी थे, जीस से आपने हिंदी और मराठी बहुत सें कविताओं भी बनाई है, जीस्में पंच-स्तोत की हिंदी पद्यावली के लिये पकी बहुत ख्याति हुई थी. राचेन एक हिंदी पदकी प्रथम पंक्तिका नमुना इप पाठकोकुं सुनाते है:-गाफल मत रहना अग्यान, एक दिन निकल जायगा पाण, इत्यादी. आपका स्वर्गवास धर्मच्यान साइत इस्त्री सन १९०२में हुँआ

है. आपकं एक पुत्र श्रीयुत नेमोनाथनी पां-गर है, जो साधारण बिद्दान, अच्छे कीर्तन-कार और सेत्राल समाजने प्रमुख पंच गीने जाते है. भट्टारक विशालकीर्तिके पीछे दसरा स्रयोग्य भट्टारक बैठानेके छिये आप उद्यम कर रहे हैं. आपका स्वभाव शांत है और शांततासे शत्रुक्वंभी भित्र बना छेते है. बासींमें जीनेंद्र भगवानकी पाछखी ५०-६० वर्षसे छिंगायत छोक बाजारमें नहि निकालने देते थे, जस्कि लिये आपने असीम प्रयत्न करके गत वर्षसे पालखी निकलवाना शह कराया है. आपकं तीन पूर्तो है, जीस्मे एक पुत्र एक रत्नही माप्त हुआ है, जीनका नाम श्रीयुत तात्या नेमी-नाथ पांगल है, जो भान कल जैन सपा-जमें जैन इतिहास शोधकके नामसे विख्यात है. मी. पांगछने धर्ष शास्त्र, संस्कृत, इंग्छीश, मराठी और हिंदीका अच्छा ज्ञान प्राप्त किया है. बालपनसे आपक्कं स्वाध्याय करनेका निषम है. आपने ' वंदे जीनवरम्' नामका मराठी मासिक पत्र शुरु किया है, जो आज कल निपाणीसें प्रकट होता है. आप एक अच्छे लेखक है और बहुतसें पर्तोंमे आपके छेखीं आते रहते हैं. फिर आपका जैन इतिहास संशोधनपर बढ़ाही मेम है. आपने संशोधन करके श्री कुंद-कुंदाचार्य, श्री वादीमसिंह, शुभचंद्राचार्य, भगवद् नीनसेनाचार्य, पं. आश्राधर, नेपी-चंद्र सिद्धांत चक्रवर्ति, श्रीमान मानतुंगा-

चार्य आदी आचार्योंके जीवन चरित्रों मराठीमे लिखकर प्रकट कराये है और " तीर्थंकर चरित्र " नामका मराठी पुरुतक पकट किया है जीसकी संपादन प्रणालीसे खुश होकर बड़ोदा नरेशने रु(.१५०) इनाम दिया है. आपका छिखा हवा महाबीर चरित्रमी शीघडी छपने-वाला है. डक्तन (दक्षिण) की दि. जैन हिरेक्टरी तैयार करनेका कार्य आपकं ही शें माणेकचंद्रजी द्वारा सींपा गया है, जो आजकल योग्यतासे कर रहे हैं. लेखकके साथ २ आप अच्छे बन्ता भी है. प्रिय पाठक ! इसी अंकमे आप मनि श्री अनं-तकिर्ति और महारक श्री चारुकीर्तिजी के परीचयका सिचल दर्शन कर रहे है वह आपके मयत्नका ही फल है, क्योंकी आपने है। इन दोनों फोटों और इनका परिचय माप्त करके इसके भेज दिया था. यद्यपि आपकी आयु २७ वर्षकी है तौभी इतनी उम्रवें आप इदसें ज्यादे कार्य कर रहे है. ऐसे पर्वोत्साही युवकषंयु चीरंजीबी रहो.

(૪૦) શેઠ પ્રેમચંદ માતીચંદ હિ. ગંભર જેન બાહિંગ સ્કુલ, અમદાવાદ:-ગુજરાત પ્રાંતમાં નાના ગામામાં ભણુલાની સગવડ ન હોવાથી તથા ગરીબાઇને લીધે ઘણા બાળકે:ને વિદ્યાર્થી વાંચેત રહેવું પડતું હતું તે ન જોઇ શકાયાથી શેઠ માણેક્ચંદ હીરાચંદજીએ દશ વર્ષ ઉપર માત્ર રા. ૫૦૦૦) કાઠી અમદાવાદમાં 'ગુજરાત દિશંભર જેન બાર્ડિંગ' તી સ્થાપના કરી અને તે પછી બ વર્ષમાં પોતાના સ્વર્ગવાસી ભત્રિન્ન શેઠ

પ્રે**મચંદ મે**ાતી ચંદના સ્મરણાર્થે તેમના માત્રશ્રી **રૂપાંબાઇ પાસે** રા. ૩૫૦૦૦) અપાવી ઉપલા ના-**મધી આ** બાહિંગને સ્થાયી કરી છે. હાલ એમાં આશરે રા. ૪૨૦૦૦) તું સ્થાયી કુંડ છે, જે કાર્ય તરફ જોતાં ઘહુંજ એાછું છે, જેથી **૪૦થી વધુ વિદ્યાર્થીઓ દાખ**લ કરી રાકાતા **નથી, સાટે ચ્યા** ખાતાને દરેક ભાઇએ વખતા વખત મદદ આપવા રહેવું જોઇએ. આ થા-**િંગનું** કાર્ય કેવું ચાલે છે તે આ અંકમાં એના મેલાવડાના રિપોર્ટમાં દર્શાવેલું હોવાધી અત્રે લખવાની વિશેષ જ ફર નથી, પણ એટલું તાે કહ્યા વિના ચાલતું નથી કે આ બાહિંગ ના સ્**યાપક સ્**વર્ગ. શેઠ પ્રેમચંદ માતીય દ્વા માતુશ્રી શ્રીમતી રૂપાંબાઇ હજુ **બાર્ડિયને** વખતા વખત મદદ કર્યાજ કરે છે. વ્હાલા વાંચકા ! આ '' દિગ'બર જૈન '' પત્ર જેના તમે લાભ લઈ રહ્યા છા, તે પણ પાંચ વર્ષ થયાં આ બાર્ડિંગ તરફથીજ પ્રકટ થાય છે. જો આ બાર્ડિંગની સ્થાપના થઇ ન હાત **તા ગુજરાતી ભાષ**ાતું માસિક પત્ર થવું અને તેની આટલી બધી ઉન્નતિ થયી **આકાશ** કુસુમવતજ હતું એમ કહેવામાં કાંઇ ખાટું નથી.

(४१) श्रीमान शी. लाला राम-चंद्रजी एम. ए. आई. सी. एस., लाहीर:— आप अण्वाल सिंघल गील दिगंबर जैन कुलमें उमन हुवे हैं. आपकी जन्म भूमि दिल्ही हैं. आप लाला मनोहरलालनी के पुत्र और लाला घनेशीलालनी के पौत औरा लाला विधीचंद्रजी के पहरोत हैं. आपके घरमे चार पीडियों से सरकारी अंग्रेजी कार्य की नौंकरी चळी आ रही हैं. आप के पिता रेल्वे दफ्तरमे वर्षों तक

नीकरी कर आजकल २० ७५) पेन्सन पाते हैं और धर्मध्यान करते हैं. आपका जन्म इस्त्री सन १८८९ में हुवा बाल्यावस्था बहत है। थी. जब आप ४। वर्ष की माताका वियोग हो गया था. आप वर्ष की उम्र में पढ़नेको बैठे, इस मौके पर इनके पितानी लाहीर तसरीफ ले आये थे, यहां के दकतर में आ गये थे. आप गव-नेमेंट स्क्रुलें ग्रहसें तालीम पाई. जब दश वर्ष और दश महीने की उम्र हुई तब सने १९०० में आपनें भिडिल पास किया! आप बारह वर्ष दश महीने की उम्रमें ऐट्टैंस (मेट्टीक) पास हुवे जीसमे अन्तरु दर्जेमें पास हुवे ! और सर्न १९०४ में जबकि १४ वर्ष दश महीने की उम्रधी एक. ए. पास हुवे, अब्बल दर्जेमें आये. वजीफा भिक्रा और स्याजीमें अव्वल नंबर रहे. और सन १९०६ में बी. की परीक्षादी जब कि १६ वर्ष महीने की उम्र थी, जीसमें पंजाब युनि-वर्साटीमें अञ्चल आये ! और ३२ माह-वारी का वज़ीफा मिला और तगमे मिले ओर सन १९०७ में जब १७ वर्ष दश महीनेकी उम्रथी, अंग्रेजीमें १ वर्ष में एम. ए. दिया और रयाजी में एम, ए, की जीस को डबल एप. ए. उस परीक्षार्मे तमाम पंजाबमे

रहें और सन १९०८ सें (प्रथम) वर्ष सरकारी गवनेमेंट दो श्रोफेसर काछिजमें असिस्टंट (005 माहवारी से नियत हुवे, जहां बद्दत अच्छी तरह काम किया और १९१० ता० २७ आस्टको आप स्टे-ट स्कोलरशीप प्राप्त कर के विलायत (इंग्ळांड) को रवाना हुवे. पार्च सन १९१२ में आएने केम्ब्रीज युनिवसींटीका मुकावलेका इमृतिहान दिया, जीसमें रयाजीमें अन्वल रहे और सिनीयर स्कोलर केपबीज (Cambridge) युनीवर्सांटीके हुवे और तीनसी पींड (रु. ४५००) स्कोलरशीप अलावे पहले स्कोलस्कीप ६०० पेंडि (रु. ९०००) और इनाम मिला, सन १९११ में आपकी योग्यता से आपकं दीनीटी कोलेन की और स्कोलस्शीप मिली १९१२ में (इसी वर्षमें) आई. सी. एस. का इम्रतिहान दिया याने सीवील सरवीस डिप्टी कमिस्नरीकी परीक्षा दी. और अभी गत मासमेही २१७७ मार्क प्राप्त करके ६७ वी पदवीमें आइ. सी. एस. में पास हुने हैं. सारी जैन समाजमे आजतक एकभी आइ. सी. एस. नहिं हुवा है और आपनेही मथम इतनी ब्रहत योग्यता माल २३ वर्षकी उम्रमेंही प्राप्त की है ! धन्य है आपकी तेज बुद्धिको! हम आ-पका चरित पड़कर चिकत हुवे है और पाठ

कगणभी चिकत होवेंगे कि इतनी अल्प उम्रमें आपने कैसी योग्यता पाप्त करके जैन समाजकं एक सीवीकीअनसे सुशोभित किया है. आप विद्या पहनेके साथर धर्म-दर्शनादि जैन आचरणकाभी विचार रखते करते रहे, आपको हरसाछ इनाम मिलती रही और शुरुसे आखीर तक गवनभंट कोलेनमे पढते रहे. यदि आपक्रं गर्वनेभेंट स्कोलरशीप न मीली होती. तौ आप इतनी योग्यता नहि प्राप्त करसक्ते, इसलिये हमेरी जैन समाज न्यायक्षील ब्रीटी-श गवर्नभेंटकी आभारी है. आपकी शादी १२वर्षकी उम्रमें हुईथी और सन १९०६में आपकी स्त्रीका वियोग हो गया था. अब वलायतसें आनेपर शादी कीजायगी. बीचमे पढ़नेकी वजेहर्से शादी नहीं की. आपका आचरण बहुत श्रेष्ठ रहा है और आपको अपने चाल चलनकी दुरुस्तीका बहुत रुपाल रहता है. आपको इतनी बड़ी पद-वीकी परीक्षा देनेपरभी मानने बिल्कल नहीं असर किया और शील स्वभाव सज्जन गुणग्राही परीपकार धैटयीदि गुणोंने आपसें भिवताही कर रख्ली है. अब अस्प समयमे आप हिंदुस्तान आवेंगे और किसी स्थान-पर कलेक्टरकी पदवीकुं प्राप्त करेंगे. जो जैन समाजमे प्रथमही कलेक्टर होगा.

(४२) श्रीमान बाबु अजितप्रसादजी एम. ए. एठ. एठ. बी. गवर्नमेंट प्लीडर, ठखनडः-आपका जन्म सं. १९३१ मे नसीराबादमें हुआ है. आपके पितामह चौभरी बनारसीदासजी महान प्रतिष्ठीत और राज्य मान्य व्यक्ति थे. आपने उच्च इंग्लीश शिक्षण लेकर एम. ए. एल. एल. बी. की डीमी पाप्त की है और हाईकोर्ट वकील, पङ्कीक प्रोसीक्युटर और गवर्नमेंट प्लीडर नियत हुवे है. आपका धार्मिक शिक्षणभी अद्वीतीय है. १२ वर्षकी अवस्थामें आपकुं तंत्वार्थ सूत्र कंठगत था. परीक्षामुख, पमे-यकमलमार्तंड आदी संस्कृत प्रंथींका अध्य-यनभी किया है. शास्त्रसभामे नित्य उप-स्थित होते थे और पर्वादीमे जीनपूजा मिक भावसे करते थे. आपका धर्मानुराग, शास परिचय, तत्वविवेचन दिनप्रतिदिन बुद्धिगत है. गत दशलाक्षाणिक पर्वमे आपने सीमला जाकर धर्मांपदेश दिया था. आप रुषभ ब्रह्मचर्याश्रमके मंत्री है और भारत जैन महामंडल, जैन शिक्षाप्रचारक समीति जयपुरके सभापति हो चुके हैं. महासभा और स्याद्वाद् महाविद्यालयकी मेनेजींग कमीटीकेभी आप मेम्बर है. हमारी प्रार्थना है कि आप चीरंजीवी हो और जैन जातिके उपकार और जैन धर्मकी प्रभावनाके निमित्तकारण हों.

(४३) श्रीयुत बाबु चैतनदासजी बी. ए. लखनउ:-आपका जन्मस्थान मल्हीनुर (सहरानपुर) है. ८ महीनेकी अव-स्थामे आपके पिताश्रीका वियोग होनेसे आपके ज्येष्ठ आता लाला गोर्धनदासजी,

जो कानपुरमें डिप्टी मेजीस्ट्रेट हैं इन्हींकी विद्योपर्जन करके बी. ए. रक्षामें आप पास हुवे हैं. पहनेमे आपकी तेज बुद्धि इतनी थी कि आपने एक दिनमें उर्द व्याकर-णके ८० पृष्ठ कंठगत करके सबको चिकत कर दिया था. आप भारत जैन महामंडल, जिन यंगमेन्स एसोसीएशन ओफ इंडिआ] के स्थापक और महामंत्री है. और जैनोंके तीनों संपदायमे संप होनेके लिये आप अतीव परिश्रम कर रहे हैं. जाति सेवाका मेम आपके कुलमे सर्वत्र विस्तृत है. बाब सुरजभानुजी वकीलका नाम ऐसा कौन जैन है नही जातनाः दि. जैन महासभाके वास्तवि-क स्थापन करनेवाले, महापदेशकों के गुरू और परस्पर विरोध और क़रीतिओं के निराकरणमें अप्रगामी बाबु सुरजभानुजी आपके भानजे हैं. बाबु बनारसीदासजी एम. ए. जो वरसोंतक महासभाके स. महामंत्री रहे हैं और लाला खूबचंद्रजी जीन्होंने सहरानपुरमें प्रतिष्ठा कराईंथी, आपके रिशते-दार है. आपका धर्म्मस्नेह और जातिप्रेम अनुकरणीय हैं.

(४४) श्रीयुत जैन वीर बाबु जुगल-किशोरजी मुख्तार, देवबंद:—आपका जन्म सरसावा (सहारनपुर) में जैनाश्रवाल कुलमे हुवा है. जैन समाज आपके नामसे मली-मांति परिचित होगा, कयोंकि बहुत समय व्यतीत नहि हुवाकि आपने दि. जैन महा-समाके मुख पत्र "नैनगजट"की संपादकी करके जैन जातिको जीवित कर दिया है. आपकी संपादिकके वस्त्रमें जनगजटके १८०० प्राहकों होजाना आपके लेखों और सुप्रबंधकाहि प्रभाव था. आप संस्कृतके अच्छे विद्वान, शास्त्रोंके ज्ञाता और उपदेश दाता है. आपकी विवेचन शक्ति मनोज्ञ है. आप देवबंदमे मुस्तारकारी करते है. आप वड़े कोमल परीणामी और सरल स्वभावी है. जैन समाज आपको सन्मानकी दृष्टीसे देखती है.

(४५) जैन कवि बाबु ज्योतिप्रसा-टजी ए. जे. देवबंद:-आपका साचित्र जी-वन परिचय हम गत वर्षके खास अंकमे प्रकट कर चुके है, जीस लिये ज्यादे न लिख कर इतनाही ज्यादे कहते है कि आप जसे स्वतंत्र, निर्लोभी और समाजसेवी पुरुष विरलेही हैं. आपकी कविता बहत बदकर होनेसे आपकुं जैन कविकी उपाधी मिली है. आपकी स्वतंत्र समाज-सेवासे असंतृष्ट होकर जैन अनाथाश्रम कमे-टीने आपकी संपादकीसे और अनाथाश्र-मकी तर्फसे निकलता हुवा 'जैन प्रचारक उर्द पत्र दो मास हुवे बंद कर दिया, क्योंकी आजकाल समाजके कितनेक धनी पुरुष खुशामदी हो रहे है, इस कारण स्वतंत्र सेवकोंसे रुष्ट है. ' जैन प्रचारक ं बंद होनेका हाल सुनकर ऊनके पाठकोंमें हाहाकार मच गया और आपकुं बहुतसे पत्र मिले कि कुछभी देर न करके आप तुर्तही दुसरे नामका स्वयं मालकीका उर्दु पत्र निकालीए, जीससे आपने मारत सर-कारको रु. ५००) जमानतमें देकर तुर्तही " जैन प्रदीप" नामका पत्र निकालनेका डेक्लेरेशन लिया (यदि आपके हितक्कष्ठु-ऑने कोशीश न की होती, तो आपकुं विना जमानतके डेकलेरेशन मिलनेकी पूर्ण संभावना थी) और "जैन प्रदीप" निका-लना ग्रुरु कर दिया है जीस्का प्रथम अंक हमकुं मिल चुका है. आपकी जाति हि-तेषिता इसही बातसे प्रकट होती है कि तनमन धन लगाकर आप अतुल्य जाति-सेवा कर रहे है.

(४६) युरोपीअन जैन मी. इर्बर्ट-बोरन, लंडन European Jain Mr. H.Warren London :--आपकुं जैन धर्मका श्रद्धान करानेवाले आपके मित्रों मी. एफ. के. लालन (Mr. F. K. Lalan) और मी. जे. एल जैनी एम. ए. बेरिस्टर अट हो (J. L. Jaini M. A. Barrister at law, आपकी आसपास ही बैठे हुवे है. आपने इन दोनों महाशयों द्वारा श्रद्धापूर्वक जैन धर्म स्वीकार किया है. और आप इतने बुद्धिमान है कि अब आप जैन धर्मके विषयमे अच्छे २ लेख और व्याख्यान देते रहते है. इस अंकमेही आपका एक इंग्लीश लेख मौजूद है. यदि जैन धर्मका प्रसार युरोपीयन देशों मे करनेमे आवें तो क्यों नहि अपूर्व्व लाभ हो ?

(४७) श्रीयुत कल्लाप्पा अनंत उपाध्याय, कोल्हापुर:-आपने धार्मिक और संस्कृत शिक्षण अच्छा माप्त किया है. विशारत परीक्षामेगी उत्तीर्ण हुए है. आप मराठी और संस्कृत कविता अच्छी तरहसे बनासकते हैं. आपके छेख कविता आदि 'जिनाबिजय' और 'बंदेजिनवरम्' में प्रकृट होती थी. वर्तमानमे दो वर्षसे आप मराठी अष्टानिक पत्र '' प्रगति आणि जिनविजय '' के संपादक है और अभी ही आपने 'सप्त तत्व विचार ' नामक मराठी मंथ प्रकृट किया हैं.

[४८] श्री. शेठ लक्ष्मीचंद्रजी रईस. बमरानाः-आप विद्यापेमी, जाति हितैधी धनिक पुरुष है. आप स्यादवाद महा विद्या-लय, ललितपुर जैन पाठशाळा, मोरेना **जैन सिद्धांत पाठशाळा आदी के** सहायक आप महासभा के सभासद और बंदेलखंड दि॰ जैन मां० सभा के मंत्री है. द्रोणागीरी क्षेत्र की शोचनीय दशा पर ध्यान देकर आपने ही उसका किया है. बुंदेलखंड प्रांतमे विवाहादीमें जो करीतिओं प्रचालित थी जीन से निर्धनोंको आपात्तिओंका अनेक कारण सामना करना पडता था, उनको अपने अपने बह बलसे दूर करनेका अपूर्व साहस कीया है. लखपती होनेपरभी नियम बनाकर भरी सभा में सबसे पहिले अपनी भन्निजी के विवाहमें उनका स्वयं पालन करना स्वीकार किया, और निज व्ययसे नियमों छपा कर प्रकट कर दिया है, आप

बड़े जीवदया प्रेमी हैं. अभी ही आपके द्रव्य द्वारा बाबु दयाचंद्रजी जैन बी. ए. गोयलीय ने 'मनुष्याहार' नाम ट्रेक्ट अंप्रे-जीसें हींदीमें उल्था करके छपाकर २००० प्रत विना मुल्य वितीण करा दी हैं. जैन जाति आपकुं उच्च दृष्टी से देखती हैं और सरकारमें भी आपका यथेष्ट सन्मान है.

(૪૯) માસ્તર દીપચંદછ ઉપદેશક. નરસિંહપુર:--આ ઉત્સાહી, ખેતીલા, ધર્મ પ્રેમી, નિર્લાબી અને વિદ્વાન ઉપદેશક**થી** કાઈ ભાગ્યેજ અજાણ્યું હશે. એમના જન્મ સં. ૧૯૩૭માં નરસિંહપુર(C. P.) માં પરવાર ત્રાતિમાં થયા છે. અને પિતાશ્રીનું નામ શેઠ નાથુરામજ છે. એએા હિંદી વર્નાકિયુલરની પરીક્ષામાં પહેલે ન'બરે પાસ થવાથા એમને સને ૧૮હહમાં સ્કુલ માસ્તરની મળી હતી તથા એમણે ઉર્દ, સંસ્કૃત અને અંગ્રેજીનું પણ સાધારણ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું હતું. સતે ૧૮૯૮માં એમણે તરસિંદ્ધપુરમાં એક સભા સ્થાપન કરી તથા એક પુસ્તકાલય અને પાકશાળા એજ સભાના આશ્રય અને એગના પરિશ્રમથી ખુંેેેેેેેલી છે. ઇ. સન ૧૯૦૫માં એએા મુખાઇ દિ. જૈન પ્રાંતિક સભાના ઉપદેશક નિમાયા, પણ તબીઅત ઠીક ન રહેવાથી **૬ મહીના પછી સ્યાદવાદ** પાકશાળા કાશીના સુપ્રીન્ટેન્ડંટ નીમાઇ ત્યાં ૮ મહીના રહી સારૂં કાર્ય ખજ્યવ્યું. પછીથી પાછા પ્રાંતિક સભાના ઉપદેશક નીમાયા છે. અંત પ⊸૭ વર્ષ દરમ્યાન ગુજરાત અને મહા-રાષ્ટ્ર પ્રાંતમાં ઉપદેશક તરીકે એમણે ભ્રમણ કરવાથી ગામે ગામ ધણોજ ધાર્મિક સુધારા અને ધર્મ જાગ્રતિ થવા પામી છે તથા અનેક તીર્થા અને સ્થાનાના દર્શન એએા કરી શક્યા છે તથા ગુજરાતી અને મરાડી ભાષાના



श्रीमान दानवीर जैन कुलभूषण शेट माणेकचंद हीराचंद जे. पी. मुंबाई. दि, जेन महामभाना प्रमुख तथा नियापमा जग जाणांता दानी अने नामी प्रहस्थ.



शेठ हीराचंद नेमचंद दोशी ऑनररी मेजीस्ट्रेट, सोलापुर,





शेट रामचंद्र नाथारंगजी गांधी, आकलुज.

Ja'n Press, Surat.



पंडित धनाछालजी कासलीवाल मुंबाई.

(ભાગીતા વિદ્વાન અને ખ ડેલવાલ મહાસભાના પ્રમુખ)



वात्रु माणेकचंदजी बैनाडा मुंबाई.

(મુંબાદ રિ. જૈન પ્રાંતિક કા.ના ઉત્સાવી મહામંત્રી)



शेट रावजी सखाराम दोशी, सोलापुर, हैं। (दि. केन परीक्षाबयना भंत्री तथा दक्षिण भार केन क्षेत्र) કાન્ક્ર સની ફેક્ટ કમીટીના સેંક્રેટરી.)



शेंट टाकोरदास भगवानदास झेंगी, मुंबाई.

(प्रांतिक केन्द्रस-७ पहेशक विभागना सेक्वेटरी तथा મુંભાઇ જૈન બાહિંગના જે આ, રેક્કેટરી.)

मुरत जैन त्रि. प्रेस.

પરિચય પહ્યુ થઈ ગયો છે. તેમ પ્રેક્ટીશને લીધે હાલમાં એમની વકત્કૃત્વ શક્તિ અત્યંત ખીલી નીકળેલી છે. હાલમાં એ ત્રણ માસ થયાં શરૂઆતને માટે એઓ અલાહળાદ ખા- ડિંગના સુપ્રીન્ટેન્ડંટ નીમવામાં આવ્યા છે તથા એમના ભાઇ કાલુરામજી પણ રતલામ ખા.ના સુપ્રીન્ટેન્ડંટ છે. પ્રથમ પત્નિના મૃત્યુ પછી એમણે આજન્મ સ્ત્રી માત્રના ત્યાગ કર્યો છે અને પંચાણુત્રત ધારણ કર્યા છે. તેમ એમના કાર્યથી પ્રાંતિક સભા અને ગુજરાત પ્રાંત ધણાજ સંતુષ્ટ છે.

(૫૦) શ્રીમતી ચતુરભાષ ગુંજોડી (સાલાપુર):—આ એક વૃદ્ધ, અને ધાર્મિક સ્ત્રી રત્ન છે. એમના પતિનું નામ શેઢ રૈવચંદ ધનજી ગુંજોડીકર હતાં, જેઓ ૧૯૪૯માં પરક્ષાકવાસી થવાથી એમને પક્રમે વર્ષે વૈધવ્ય દશા પ્રાપ્ત થઇ છે. અને એમની ઉમર હર વર્ષની છે. એમને શેડ ગુલાળચંદ અને માણેકચંદ એમ બે પત્રા છે જેઓ પણ ધર્મપ્રેમી છે. ધણી તીર્થયાત્રાએ। અને વ્રત વિધાના કર્યાં છે તથા રાજ સાસ્ત્ર સાંભળવાના તથા નિત્ય પુજનના નિયમ છે. જો કે આ વૃદ્ધ ખાનુને લખતાં વાંચતાં આવડતું નથી, છતાં પણ સ્ત્રી કેળવણી માટે એમની લાગણી વિશેષ છે. પાતાની વહુને પણ હાલ શિક્ષક રાખી બન આવે છે. આળંદની જૈન પાકસાળાને રૂ. ૧૫૦૦)ની રકમ એમણે પોતાના નામથી અર્પેશ કરી છે તથા ભાગી પન્નાલાજીના શું જાડી પધારવા વખતે રૂ. ૧૦૦૦) સોલાપુ-રની પાઠશાળાને એટ આપ્યા હતા તથા આ વૃદ્ધ ધર્માત્મા સ્ત્રીના વિચાર સાેલાપરમાં શ્રાવિકાશ્રમ કાઢવાના હાેવાથી એમના પુત્રાએ એમના નામથી રૂ. ૧૧૦૦૦) કાઢી સોલાપુ-રમાં 'ચતુરબાઇ શ્રાવિકા વિદ્યાલય' ત્રણ ચાર માસ થયાં સ્થાપન કર્યું છે.

(પ1) શ્રા ભૂપાલરાવ આપ્પાછ છર રે (કાલ્ક્રાપુર):—આ બહરથ કાલ્ક્રાપુરમાં પ્રસિદ્ધ વ્યાપારી, ધર્માત્મા અને દક્ષિણ મહારાષ્ટ્ર જેન કાન્કર સના પ્રમુખ મેમ્બર છે. એમણે કાલ્ક્રાપુરમાં એક સ્વતંત્ર અને એક બાર્ડ ગમાં એમ મળી બે મંદિરા બધાવી તેની પ્રતિષ્ઠા કરી છે તથા વખતાવખત તીર્થ તથા મંઘ જાર્જોદ્ધાર માટે સેંક્રેડાની રકમા આપ્યાબ કરે છે. વળી એમણે ર. ૩૦૦૦) ભુદા કાઢી મહાપુરાણના ઉત્તરાધ્ધે ભાગ પ્રગટ કરવાનું કામ પંકલ્લાપ્યા ભરમાપ્યાને સોંપેલું છે, એજ એમના પ્રચાહાર પ્રત્યેના પ્રેમ બતાવી આપે છે.

(પર) પરી. લલ્લુભાઇ પ્રેમાન દરાસ એલ. સી. ઇ. મુંબાઇ:-- બારસદ નિવા-સી વીસા મેવાડા ज્ञાતિ આ ઉત્સાહી અને ફેંળન વાયલા વ્યંધ્રથી ગુજરાત પ્રાંત ભાગ્યેજ અન્ત-^{હ્}યા હશે. એએ એ ઇગ્લીશનું સાર્ પ્રાપ્ત કરી એલ. સી. ઇની પરીક્ષા પસાર કરી છે, જેથી અને એમની ચાલાકીથી મંખાઇમાં એએા ઇન્ક્રમટેક્ષ ખાતામાં સારી નાકરી ઉપર છે તેમજ એ વર્ષ ઉપર તાે છ માસ સુધી મુંબાઈમાં ઇન્કમટેલ કઢોક્ટરની જગ્યાએ ધણા ભારે પગારે એકટિંગ નીમાયા હતા. આ નાકરીમાં એમની પ્રમાશિકતાને **લીધે એએોના વખાસ આખા મુંબઇમાં થાય** છે. એએ પાતાની જ્ઞાતિની ઉન્નતિ માટે વખતાવખત પ્રયાસ કરી આગળ પડતા ભાગ હૈ છે તથા મુંબઇ માંતિક સભાના સહાયક મહામંત્રી બે ત્રણ વર્ષ સુધી એએ! હતા. તેમ અમદાવાદની પ્રે. મા. દિગંભર જૈન બાર્ડિંગના એએા શરૂઆતથીજ સેર્ફેટરી હતા. અને બે વર્ષ ઉપર જર્મનીને પ્રવાસે જવાથી એ એ હાતું રાજીનામું આપ્યું હતું, પણ જર્મન નીથી પાછા કરવા પછી એએ રતલામ દિ. જૈન બાર્ડિંગના સેક્રેટરી નીમાયા છે અને

જે કાર્ય ઘણી ચાલાકી અને યાે અતાથી કરી રહેલા છે. સને ૧૯૧૦માં એએ પાેતાના બધુ મનુભાઇ સાથે અનાજ અને બીઆંનાં વ્યાપાર માટે જર્મનીને પ્રવાસે ગયા હતા. જયાં વ્યાપારી પેદી સ્થાપી ત્યાં વર્ષેક દહાડા રહી પાછા કર્યા હતા અને નાેકરી ઉપર કાયમ રહી હાલ પણ એએ ભારે પરીક્ષા માટે શિક્ષણ લઈ રહ્યા છે. આપણે ઇવ્છીશું કે તેમાં એએ વિજયી થાેઓ.

(પ3) શા. છાઢાલાલ પેલાભાઇ ગાંધી. અંકલેશ્વર:-વીસા મેવાડા ગાતિ અંકલેશ્વર નિવાસી આ ધર્મપ્રેમી. ઉત્સાહી અને કેળવાયલા ખંધુ પણ ગુજરાત પ્રાંતમાં જાણીતાજ છે. એએ પાતાની ત્રાતિની ઉન્નતિ માટે વ્યહ્જ પ્રયાસ કરી રહેલા છે. એમનાજ પ્રયાસથી અંકલેશ્વરમાં પાડ-શાળા ખુલી હતી અને તેના એએોજ મ'ત્રી હતા. એમને ધાર્મિક જ્ઞાન સારૂં હોવાથી પાતે પણ પાઠશાળામાં શિક્ષણ આપતા અને લલિતા ખહેનને પણ સંસ્કૃતનું જ્ઞાન આપી તેમના માર્પને અંકલેશ્વરની બીજી સ્ત્રાંઓને પણ કેળવણી અપાવી છે. એમના પ્રયાસથી અંકલેશ્વરમાં હાલ ૩૦ વર્ષની અંદરની કાઇ પણ સ્ત્રી અભુણ નથી એટલુંજ નહિ પણ માટી ઉમરતી સ્ત્રીઓ પણ સ્વાધ્યાય કરતાં શીખ્યાં છે- અ'કક્ષેશ્વર મંદીરની સુધારણા. पातानी ज्ञातिमां अञ्न, सीमांत, यज्ञीपवित **અાદીના રીત રીવાજો જૈન વિધિયી** કરવાના પ્રવેશ. વરકન્યાની ઉમરતું પ્રમાણ, જ્ઞાતિ જમણમાં યાગ્ય સુધારા વગેરે એમનાજ ખંતીલા પ્રયાસથી થયેલા છે. તેમ ત્યાંની પાંજરાપાળના એએા સેક્રેટરી પણ છે. વળી મું ભાઈ પ્રાંતિક સભામાં તથા દરેક મેલાવડા પ્રસંગે એએ આગળ પડતા ભાગ હ્યે છે. 'શ્રાવિકાશ્રમ'ની સ્થાપના અમદાવાદમાં થઇ ત્યારથીજ એએ એ ખાતાનાં મંત્રી હજા સુધી છે અને તે કાર્ય યોગ્ય રીતે ખંતથી ખજત્વે છે. આ ઉપરાંત એએોએ ગુજરાતીં માહીતિ સાથે 'જેંત લગ્ન વીધિનું' પુસ્તક લખીને તૈયાર કર્યું છે તથા એક પદ્યમય લિખીત ત્રંથમાંથી શ્રી " ભક્તામર મહાત્મ્ય-" ની કથાએા અનુક્રમે લખીતે આ પત્રમાં એક વર્ષ થયાં પ્રકટ કરી રહ્યા છે.

(ux) પં. કતેહચંદ કપરચંદ લાલન, મુંભાઇ:--આખી જેન કામ આ વિદાન, ખંતીલા, જાણીતા ક્ષેખક, વકતા, અને ધર્મેિસાહી અગ્રગણ્ય ગ્રહસ્થથી ભાગ્યેજ અજાણી હશે. એએા શ્વેતાંબર જૈનધર્મી હેાવા છતાં પણ જૈનોના ત્રણે ફિરકા એક ભાવ વગર જોનારા છે અને ત્રણે કિર-કામાં સાંપ કરવા માટે એએ ઉદ્યોગ કર્યા કરે છે. એમણે કેટલાંક ધર્મ પુસ્તકા રચીને ખહાર પાડ્યા છે તથા એમની વક્તત્વ શક્તિ એટલી તેજ છે કે જ્યાં એમનું ભાવણ શાય છે ત્યાં શ્રાતાઓની દુધ ઝામે છે. વળી ત્રીજે ઈંગ્લાંડ (વિલાયત)ની વર્ષે એમણે भसाइरी डरी हती, ते हरम्यान भी० 'હર્બર્ટ વેરરન' (Mr. Herbert Warren) નામના વિદ્વાન યુરાપીઅનને ઉપદેશ આપી જેન ધર્મી ખનાવ્યા છે, તથા ત્યાં એક જૈત સભા સ્થાપન કરી આવ્યા છે. એમતી स्वत'त्र सभाक सेवा**थी तथा श्री**भनी भान्यता આપ્યી જૈત કામમાં ચવાથી કેટલાક શ્વે. સાધુઓએ એમના ઉપર પાલીતાણામાં પાતાની પુજા કરાવવાનું આળ મુક્રી શ્વે. જૈત ફામને ભ'ભેરી હતી, પશ્ચ સત્યનાજ વિજય શાય છે તેમ એમના વાંકા વાળ પણ **ચ**યો ન**થી** અને એમની પ્રતિષ્ઠા આખી જેન કામમાં વધતીજ જાય છે ત્યારે એમના ઉપલાનિમિત્તને લીધે શ્વે. જૈનામાં ભારે કલઢ અને ફાટપુટ પડી હઝારાે રૂપ્યા નકામાં ખર્ચાંધ વકીલ ખેરીસ્પ્રેશના ધર ભરાઇ રહ્યા છે! એએ તા તદન અલગજ રહી ગયા છે અને

શ્રાવકા ફેાકટના માંહાેમાંહે લડી મરે છે, અને પાતાની કાન્ફરંસ પશુ બે વર્ષ થયાં ભરી શકતા નથી. અમા અચ્છીએ છીએ કે શ્વે. જૈન કાેમમાં આ નાહકનાે ઝઘડાે તાકીદે

શાંત થાએ!.

(૫૫) શ્રીયુત વાડીલાલ માતીલાલ શાહ, અમદાવાદ:—જાણીતા ક્ષેખક, વક્તા, ગ્રંથકર્તા, જેનાના ત્રણે કિરકામાં સંપ થવા માટે અહર્તિશ ઉદ્દયાંગી અને નિડરપણે સ્વ-તંત્રતાથી જૈન કામના નિઃસ્વાર્ધ સેવા બજાવ-નાર આ વિદ્વાન સ્થાનકવાસી જૈન ખધુ છે. જેઓ અમદાવાદના 'જેન સમાચાર' અઠવા-ડીક પત્ર અને 'જૈન હિતેચ્છુ' માસિકના મા-લિક અને સંપાદક છે (હાલ 'જૈન સમાચાર' થાડા સમય માટે વધ પાડેલું છે). જો નિડર-પણ ઉત્તમ વિચારાથી સ્વતંત્ર રીતે ભરપૂર લખાતું કાઇપણ પત્ર હોય તે તે એમનુંજ પત્ર છે. એમની જ્તૃતિ સેવા એટલી અગાધ છે કે એમતે ગત વર્ષે ધર્મસેવા બજાવવા જતાં ખે માસની સાદી કેદની શિક્ષા પણ થઇ હતી, છતાં પણ તે સ્પાનંદથી ભાગવી જૈત સમાજમાં વધુ જ્વણીતા થયા છે. સ્થાનકવાસી જૈન કાન્કરંસની ઉબતિ માટે એએ દત્તચિત્ત રહે છે. અમારા વિચાર મુજબ આખા ગુજરાતના જૈનામાં ક્ષેખન શક્તિમાં એમના નંબર પહેલા છે. ટુંક સમય-માં એએ 'મારી જેલ યાત્રા' નોમે પુસ્તક પ્રકટ કરનાર છે જેને ઉત્તેજન આપવા સર્વેને અમારી ભલામણ છે,

(પદ્દ) રોઠં માં એકલાલ ઘલાભાઇ ઝવેરી, સુરત: –વીસા એાસવાલ જ્ઞાતિ આ 'વે. જેન બ'ધુ પણ ત્રણે દિરકામાં સંપ ચા- હનાર તથા જાણીતાં હેખક, વકતા અને વિદાન હોવા સાથ ધનવાન પણ છે. એમનું જન્મસ્થાન વડાદરા છે. એમણે ઝવેરાતના તથા ખાણોના વ્યપારમાં સારૂં ધન ઉપાર્જન કર્યું છે. એમણે વડાદરા પાંજરાપાળમાં ૧૨ વર્ષ સુધી ઉત્તમ રીતે એા. સેક્રેટરી તરીક

કાર્ય કર્યું હતું અને તે પછી વ્યાપાર માટે રંગુન જવાનું થવાથી ત્યાં જઇને પણ ત્યાં પાંજરાપાળ સ્થાપી છે તથા નવું જૈન મંદિર તથા ધર્મશાળા સ્થાપન કર્યાં છે. ૧૯૫૬ના દુકાળ વખતે રંગુન ફેમીન રીલીક કંડના એએ સેક્રેટરી હતા. વળી વડાદરામાં ચાર વર્ષ સુધી મ્યુનીસીપલ મેમ્બર નીમાયા હતા. દિગંભર *વૈતાંભરમાં ખીજાઓ જેમ બેદ ગણ છે, તેમ અા ગ્રહસ્થ તેવા છર્ષાળુ ગણતા નથી, જેથી એએ! આપણી મુંબાઇ બાહિ'ંગના ધારા ધડવામાં મદદગાર થયા હતા તથા બે વખત ધાર્મિક પરિક્ષક નીમાયા હતા. એએા શેઠ માણેકચંદછના ખાસ જાના તથા એમને શ્વેતાંબરી અને भित्र દિગં બરી **ખ**ંતને પ્રથાતા સારા પરીચય છે. વળા શ્વે. જૈન કાન્કર સના એક આગેવાન અને કેટલાક ધાર્મિક કડાના એએ ટ્રસ્ટી છે. આ ગ્રહસ્થ પાતાના ધર્મ ખંધુઓનું હિત કરવા સતત પ્રયત્ન કરે છે. જેથી કેટલાક **ઇર્ધાળએા એમને હેરાન કરવા ચકતા** નથી એ પણ પચમ કાળની બલીહારી છે! એમણે 'સ્વાનુભવ **દર્પે**શ ' નામે દિગ'ળરી હિ'દો પુસ્તકના અનુવાદ કરી તે પ્રકટ કહું તે માટે એમને કાંઇ પછ્યા ગાછ્યા વગરજ શ્વે. જૈન કાેન્કર'સની સબજેકટ કમીટીએ એમની સાથે કંઇ પણ સંબંધ ન રાખવા એવા ઠરાવ કરેલાે. પણ તે પાછળથી તેમને રદજ કરવા પડેલા હતા. વળા લાલન-શીવછ પ્રકરણ! માં એએાને લાલનની હકીકત સત્ય લાગવાથી તે વિરૂધ દિલચાલથી તેઓ અલગ રહ્યા, તેથી સુરતમાં એમના ન્યાતીલા રાવ **બહાદર શેઢ નગીનચંદ ઝવેરચંદની એક નાની** પાર્ટીએ નગરશેઠની સત્તા ક્ષાપીને તેમને પાતે કલ્પેલા સંઘથી તથા પાતે કલ્પેલી ન્યાતથી દર કર્યા છે. જ્યારે સરતના *વે. સંઘના ૧૪ આની ભાગજ એમના તરફ છે! આ સંબ'ધી હાલ સુરતમાં બદનક્ષીની કરીયાદા

મહીનાઓ થયાં ચાલી રહેલી છે અને તેમાં જૈનોના હઝારા રૂપ્યા બરબાદ થઇ વકીલ બેરિસ્ટરોના ઘરા ભરાવા ઉપરાંત સુરત મું- બાઇના કેટલાક *વે. જૈનો વ્યાપાર ધ'વાથી પહ્યુ ખરાબ થાય છે અને આ કુસ પના અંત આવતા નથી એ શાચનીય છે. અમા એજ ઇચ્છીએ છીએ કે આ ઝધડાઓના તાકી દે અંત આવા ભરબાદ થતાં નાહ્યાં અટંકા.

(૫૭) ગાંધી નહાલચંદ સાંકળચંદ, સાનાસણ:—દશા હુમડ ગાંતિ સાનાસણ (પ્રાંતિજ) નિવાસી આ બ્રહસ્થ ધાર્મિક કાર્યોમાં વખતાવખત સારી મદદ આપ્યા કરે છે અતે હાલમાં ખેક વર્ષ થયાં એમણે પ્રાંતિજમાં ર. ૫૦૦૦) આપી 'બ્રાવિકાશ્રમ' ખાલ્યું છે, જે હાલ સારી સ્થિતિમાં ચાલુ છે.

(પ૮) શેઠ લાલચંદ્ર કહાનદાસ. **લડાકરા:**—વીસા મેવાડા ગાતિ આ ગ્રહસ્થથી ગજરાત પ્રાંત જાણીતાે છે. એમના પિતાશ્રીએ વડાદરામાં ખંડેરાવ ગાયકવાડ અને મલ્હારરાવ માયકવાડના વખતમાં રૂપાના તથા તાંબાના સીક્ષા પાડવાના કાૅન્ટ્રાકનું કામ બાહાશીથી કર્ય હતું તથા તેમણે પાતાગઢના વ્યક્રચારી રત્નકીર્તિજીને મળી પાવાગઢ નીર્થના લાપ (હાલ હવાલ) થઈ ગયાે હતાે તે સં. ૧૯૩૩થી પાતે ખટપટ કરી એ તીર્થના ઉદ્ઘાર પ્રયત્ન કરવા માંડ્યા અને તેમાં કળાસન થયા. ભાદ તેઓ ૧૯૪૦માં સ્વર્ગવાસી ચવાથી <mark>તેમના ખ</mark>ીજા પુત્ર કેશવલાલ અને સુનીલાલ મલકચંદની દેખરેખ નીચે એ તીર્થના વહી વર આવ્યા. પછીઆ બ'નેના સ્વર્ગવાસ થવાથી સં. ૧૯૪૯થી શેડ લાલચંદભાઇ આ પાવાગઢ તીર્થના ઉધાર માટે વ્યસીમ પ્રયત્ન કરી રહેલા છે. એમના વડીલબાઈ કેશવલાલના સ્મરણાર્થે એમણે ફા. ૧૨૫) ખરચા ં અન્યમતસાર ક્ષાંપ્રહ " નામે એક પુસ્તકની ૫૦૦ પ્રતો

છપાવી મકત વેહેંચી હતો તથા; ર. **૨૦૫૧)** ચાંપાનેર મંદિરના મંડપ બાંધાવી આપ્યા હતા. સં. ૧૯૬૫માં એઓએ બડવાણી સિદ્ધ ક્ષેત્રનાં દર્શન સંધ કાઢીને પગ રસ્તે કર્યા હતાં. તેમાં ૩ ૩૦૦૦ ખરચ્યા હતા. જેમાં ૪૫૦ જેનાએ તથા શ્રીમ**દ ભ**ડારક ગુણ્**ય**ં ડ્રજી પણ હતા. સં. ૧૯૬૪માં એમની ખટ-પટથીજ પાવાગઢમાં મુંબાઇ દિ. જૈન પ્રાંતિક સભાની પાંચમી એઠક થયેલી અને તેના સ્ત્રાગત-કાર પ્રમુખ એએજ હતા. તેમ મુંબાઇ નિવાસી શેડ સુનીલાલ હેમચંદ જરીવાળા, તથા વેડચ-વાળા ઇચ્છાળાઇએ પાવાગઢ તીર્ધમાં એ **મ**ે-દિરાના ઉદ્ધાર રૂપ્યા ૮-૧૦ હજાર ખરચીને એમના ઉપદેશથીજ કરેઢા. જેની પ્રતિષ્ઠા સં. ૧૯૬૭માં કરેલી, ત્યારે પણ મુંબા<mark>ઇ પ્રાંતિક</mark> સભાની આદેમાં ખેડક કરવામાં આવી હતી. એકંદરે આ પાવાગઢ તીર્થમાં એ ધર્મશાળા. નવીન ૩ મંદીર તથા પગલાંની છત્રી થયાં છે તથા ખગીચાની જમીન સરકાર તરકથી મકત મેળવી છે. ૧૯૬૭ સધી એએમ એક-લાજ એ તીર્થના વહીવટ સારી રીતે કરતા હતા, પણ એ વર્ષથી એક તીર્શની કાયદેસર મેનેજીંગ કમીટી નીમાપ્ર છે અને તેના એકે-ટરી અને કાપાધ્યક્ષ એએોજ છે.

(૫૯) શ્રીયુત ધરમચંદ્ર હરેલ્ડિયર વનદાસ સાંનમ, પાલીતાણા:—અંકલેશ્વર નિવાસી વીસા મેવાડા ત્રાંતિ આ ધમ પ્રેમી વધાવૃદ્ધ ત્રહરથ છે. એઓ પચીસેક વર્ષ થયાં પાલીતાણા તાર્થના સુનિમ તરીકે નિમાયલા છે અને એએ પાલીતાણા તાર્થના તથા મંદીરના વહીવડ અને ત્યાં સાફસફાઇ એવી તા ઉત્તમ રીતે રાખ છે કે એની બરાબરીમાં કાઇ તાર્થની ઉજલામણ નથી. એમની ધાર્મિક શ્રદ્ધા તથા સ્વાધ્યાય પ્રેમ અગાધ છે. આજ સુધીમાં ત્રેપેએ એ ઉપદેશ આપીતે સેંકડા જેનોને નિલ સ્વાધ્યાયના નિયમ આપ્યો છે

તથા સ્વાધ્યાય માટે પુસ્તકા પણ ખનતી સગવ્યંડ પુરા પાડે છે, તથા બધા પત્રાના શ્રાદકા વધારવાને એએા પ્રયત્ન કર્યા કરે છે. એમણે હાલમાં 'ચાવીસઠાણા ચર્ચા' નામે પુસ્તક વીસ્તાર સાથે હિંદીમાં લખીને તૈયાર કરીને અમને માકેલેલું છે, જે અમા થાડા સમયમાં એમના જીવનચરિત્ર સાથે પ્રકટ કરવા કચ્છા રાખીએ છીએ.

पहोंच-अवलोकन.

"वैद्य"-મુરાદાબાદથી પ્રકટ થતું માસિક પત્ર. વર્ષ ૧ અંક ૧–૨. સંપાદક વૈદ્ય શંકર-લાક્ષ હરીશંકર જેત વૈદ્ય, મુરાદાબાદ વાર્ષિક મુલ્ય રૂ ૧). આ નવીન દિલ્દી માસિકમાં શ-રીરના રાગા તથા વૈદકને લગતી માહીતિના લેખા સારા જોવામાં આવે છે. લવાજમ પણ જીજ છે. આ માસિકની દરેક રીતે અમા કૃતેહ ઇચ્છી હિંદી વાંચકાને એના ત્રાહક થવા ભલામણ કરીએ છીએ.

સાવ ધર્મ અને જૈન ધર્મ:-આ એ બંગાળી ભાષાની ટ્રેક્ટા ભંગીય સાર્વ ધર્મ પરીષદ દારા બાલુ દેવેંદ્રપ્રસાદે પ્રકટ કરી છે. જેના પહેલાના કુલ્લે ખર્ચ શેઠ નૃત્યા રંગજી ગાંધીએ અને બીજીના ખર્ચ પુરૂપાતમલાલ જેની (ક્તેહપુર)એ આપ્યા છે. બંગાળ પ્રાંતમાં બંગ ભાષામાં જૈન ધર્મના ફેલાવા કરવા માટે આ પરીષદ ઉત્તમ રીતે કાર્ય કરી રહી છે, જેને સર્વ જૈનોએ મદદ કરતા રહેવું જોઇએ.

जैन प्रदीप:—देवबंद (सहरानपुर)से मकाशित नवीन ऊर्दु मासिक पत्र. वर्ष १ अं. १. बाबु ज्यातिप्रसादजी ए. जे.ने इस पत्र निकालना शुरु किया है जिस्कुं उर्दु पढ़े जैनोंकुं अवस्य आश्रय देना चाहिए. (१) सनातन जैन धर्म (२) श्री महाबीर स्वामी और विषाली:—पं. पत्नाक्षाक्षण णांक्षीवाद्यना मंत्रीत्यमां काशीमां श्री केंन्र धर्म प्रयारीष्ट्री सक्षा स्थापन थएं छै, के द्वारा सस्ती कींमते के महत केंन्न धर्मने क्ष्मती हें महत केंन्न धर्मने क्ष्मती हें हैं। काइना श्री हैं, के कारा स्था जहीं जहीं भे दें हैं। युनीवाक्ष अध्यमाक्षाने नामे प्रकट थछ छै. स्थानीने महत सने केंन्री माटे हरें हनी कि. स्था मोनोक छे. १०० प्रतना इ २) छै. स्था मंत्रे देहें। हरें के स्था मांत्रे व्यापना क्षा हों।

सप्त तत्व विचार:—६क्षिख् महाराष्ट्र केन डेन्डर सनी ट्रेडट डभीटीनी आ पांचभी ट्रेडट छे, केमां छव अछव वगेरे सप्त तत्वेन नुं विवेचन भराठीमां डरेंड् छे. डिं. ०)न मणवानुं स्थण—सुप्रीन्टेन्डट, केन भोडिंग, डेनस्हापुर.

श्री अभिनंदन दि. जैन पाठशाळारिपोर्ट:—લિલતપુરમાં એક વર્ષ થયાં શેઠ મધુરાદાસછ, બાલુ ચૈતનદાસછ વગેરેના પ્રયાસથી આ નામની પાઠશાળા સ્થાપન થઇ છે તેના આ પ્રથમ રિપોર્ટ છે, જે જેતાં જહ્યાય છે કે હાલ એમાં ૨૨ વિદ્યાર્થી ભણે છે તથા બાળ પરીક્ષા, પ્રવેશિકા પરીક્ષા અને પંડિત પરીક્ષાના ક્રમ શીખવાય છે, જેથી ખુંદેલખંડ પ્રાંતમાં સંસ્કૃત શીખનારા માટે આ ઉત્તમ અને સગવડરૂપ સંસ્થા છે. આ વર્ષમાં કુલ્ક્ષે આવકરૂપ સંસ્થા છે. આ વર્ષમાં આવી રહેવા ખાત્રાની પણ સગવડ કરવામાં આવી છે. અમા આ સંસ્થાની હરેક રીતે કૃતેહ ઇચ્છીએ છીએ.

જૈન ધર્મ પ્રસારક સભાના ૨૯-૩٠-૩૧ મા વર્ષના રિપોર્ટ:—ભાવનગરની આ સભા રાખેતા મુજબ ઉત્તમ પ્રકારનું કાર્ય કરી રહેલી છે એટલે વિશેષ સમાલાચનાની જરૂર નથી. शास्त्रार्थ-अज्ञमेरका पूर्व रंग:— આર્ય સમાજીઓ સાથે અજમેરમાં જૈનોને જે ગંજા-વર વાદવિવાદ અને માંખિક શાસ્ત્રાર્થ ગત વર્ષમાં થયા હતા તેના ૧૨૦ પાનાંના આ પૂર્ણ હૈવાલ હી'દીભાષામાં છે, જે દરેક જને અવશ્ય વાંચવા અને સંગ્રહ કરવા યાંગ્ય છે. કિ. ૦) ના મળવાનું સ્થળ: – મંત્રી જૈન તત્વ પ્રકાશીનિ સભા– છટાવા સીટી.

ખ્लेगनी जडीः—યાંદલા નિવાસી ટીક-મચંદ તસેરા જૈને એક વન્સપતિની જડી અમને અભિપ્રાયાર્થ માકલી છે જે માટે તેઓ જણાવે છે કે એ જડી શુટ્ટી પ્લેમની માંઠે અને તાવ બન્ને માટે ઉપયોગી છે. તેમ એનાથી શરીરના બીજા રાગા પણ દૂર થાય છે. ગરીઓને પાસ્ટેજ સાથે ∘)≈ાાની ટીકીટ બીડવાથી મક્ત મળે છે, તથા શક્તિવાલા પાસેથી બ≈ લેવાય છે. મળવાનું સ્થળઃ— ટીક્રમચંદ તસેરા, મંત્રી, જૈન સભા, થાંદલા. (રતલામ.)

जैन समाचार संग्रह

મુ'બાઇમાં મહાન રથાત્સવ અને દિગ'બર જૈન કાેન્કર'સનાં બેઠક

આવતા માસમાં નાતાલના તહેવાર પ્ર-સંગે એટલે આગસર થદ 3 થી વદ હ તા. રદ્દ-૧-૧૨ થી તા. ૧-૧-૧૩. સુધીમાં મુંબાઇમાં માટા ઠાઠમાઠથી તેરહ દિપ પૂજન વિધાન અને મહાન સ્થાતસવ દિગંભર જેન પંચ તરફથી થનાર છે, જે પ્રસંગે આપણી મુંબાઇ દિગંભર જેન પ્રાંતિક કાન્કરસની વાર્ષિક એઠક ભરવાતું આમ ત્રણ થવાથી તે આમંત્રણ કાન્કરંસ કમીટીએ સ્ત્રીકાર્યું છે, જેથી આવતા માસમાં આપણી પ્રાંતિક કાન્કરંસની આરમી એઠક મુંબાઇમાં માટા ઠાઠમાઠથી થતાર છે, જે માટે મંજાવર હિલ ચાલા ચાલા રહેલા છે, તેમજ સ્વાગત કમી- દીતા પ્રમુખ લાલા પદમચંદ્ર ખેતાડા અને સેક્રેટરી લાલા ભાગમલ પ્રભુદ- યાલ નીમાયા છે. આ કા-કરંસની નવમા ખેઠક વૈશાખ માસમાં ખામગામમાં થઇ હતી, જેથા આ બેઠક દશમા ગણાવી જોઇએ, પથ્યુ અગાઉના ખે વર્ષમાં અધિવેશન થયેલું ન હતું, તેથી મહામંત્રીની સચતા મુજબ આ બેઠકને ભારમી ખેઠક ગણવામાં આવી છે. આ વખતે કાન્કરંસમાં મુંબાઇમાં કે જ્યાં સર્વે બાબનની સ્લીતા છે ત્યાં ભરાવાથી આપણી કાન્કરંસ કંઇ અલાકિક રૂપજ ધારણ કરશે એવા દરેક સંભાવના છે.

ત્યાગી પ-નાલાલજના કેશલાચ:--શ્રીમાન ત્યાગીજ અંલક પત્તાલાલજના કેશ-લાચ કારતક સુદ ૧૨ ને દીને અલસ પા-ટુલુ સીટીમાં ગંજાવર રથાત્સવ પ્રસંગે ભારે ઉત્સાહથા થઇ ગયા છે, જે પ્રસંગે ભાષ્યુ સુદરલાલજ ખેનાડાએ એક ઉત્તમ ભાષ્યુ આપ્યુ હતું તે આ અંકની સાથે વધારા તરીકે વેચવામાં આવેલું છે, જે વાંચવા સર્વેને ભલામથું છે. વધુ વીગત વધારા રૂપે અથવા આવતા અંકમાં પ્રકટ થશે.

શ્રી દવસ શકા વર્યાશ્રમના બીજો વાર્ષિક મેલાવડા કાર્તક સદ ૮થા ૧૫ સુધામાં હરતાનાગપુરના વાર્ષિક જંગી મેળા પ્રસંગે ભારે ઉત્સાદથી થઇ ગયા છે.

ાં फज्जल चां શંધ:— કાસીકલાં નિવાસી મું શા લડુરમલ જૈનના ઉપદેશથી ફિરાજપુર મીરકામાં જૈન વૈષ્ણવ અને શ્વાલસ્થાએ મળી આતિશભાજી, પુલવાડી, વેશ્યાનૃત્ય ન કરવાના તથા લગ્નમાં લેવાતા કેટલાક કરાે હવે એ! છા કરવાના લેખીત કરાવ પાતાની પંચમાં કર્યો છે.

પરીક્ષાનું પરીજામ:— મુરતની કુલ-કાર કન્યાશાળાની વાર્ષિક પરીક્ષા ગયા માસમાં ક્ષેવાઇ હતી જેમાં બેઠેલી ૮૬માંથી ૧૫ કન્યા-એ પાસ થઇ છે તથા ધર્મ શિક્ષણની પરીક્ષા-નું પરીજામ પણ ૮૬ ટકા માવ્યું છે.

સૃત્યુના સ્મરહ્યુંથી શાસ્ત્રદાન:—શા કેશવલાલ ત્રીભાવનદાસના પ્રયાસથી પાદર્શ નિવાસી હરીલાલ જીવહાદાસની વિધવા ભાઇ મંછા તરફથી તેમની સ્વર્ગવાસી પુત્રી ઇચ્છા-ના સ્મરહ્યાથી અમુક રકમ શાસ્ત્રદાન માટે કાઢવામાં આવી છે, જેમાંથી એક પુસ્તક 'દિગંભર જેત'ના બ્રાહકાને ભેટ તરીકે વેંચી શકશે.

પાસ થયા:— અમદાવાદ બાર્ડિંગ માંથી આ વર્ષની પરીક્ષામાં અગ્રેઝ છઠ્ઠા ધારુ સુધીની પરીક્ષામાં એકેલા કરમાંથી રહ વિદ્યાર્થીઓ પાસ થયા છે, જેમાં હઠ્ઠા ધારુ માંથી ર વિદ્યાર્થી તો પાતાના કલાસમાં પહેલે અને બીજે નંખરે પાસ થયા છે, જે વધુ ખરી થવા જેવે છે.

મુલતાનમાં મુધારા:— 46 ચારી શી-તલપ્રસાદજીએ ચાતુર્માસમાં મુલતાનમાં ધર્મી-પદેશ કરવાથી ત્યાં ઘણા જૈનાએ, સ્વાધ્યાય કરવાના તથા ફટાણા ગીતા, હાથી દાંતની ચુડી, શીપના બટન વગેરે નંહિ વાપરવાના નિયમા લીધા છે તથા એક પુરૂષ નામે અ-મૃતલાલજી અને એક બણેલી સ્ત્રી નામે હરીબાઇ એમ બે શ્વેતાંબર જૈનાએ બહાપૂર્વક દિશંબર જૈત ધર્મ સ્વીકાર્યો છે.

અનામાં કર્માં પશુષણ પર્વમાં શ્રીયુત હરજીવનબાઇ રાયચંદે દશ લક્ષણીક ધર્મ ઉપર દરરાજ જાહેર વ્યાખ્યાન આપ્યું હતું તથા એ વખતે પુરસાના શા. માતીચંદ બાઇચંદની મીલ્કત સંબંધમાં તેમના ભત્રીજ અને પુત્ર-વધુ વચ્ચે પડેલી તકરાર પતાવી નીચે મુજબ રકમ ધર્માદા અપાઇ છે-રૂ. ૨૭૫) અમદા- વાદ દિ. જૈન ખાર્ડિંગમાં, રૂ. ૨૨૦) દહેરા-સર વગેરેમાં, રૂ. રહાા અમેરાદની ઇંગ્લીશ સ્કુલમાં, અને રૂ. રહાા આમેદના સદાવત ક્ંડમાં પ્રળી રૂ. ૫૫૦ ધર્માદા કઢાયા છે. વળા અણારની ખે વિધવા વચ્ચે ૫ ડેઢા ટેટા પતાવી આપી કાર્ટમાં ખરચાતા નાણાં ભચાવી દેવામાં આવ્યા છે. તથા અપેશારના શા. કેવળદાસ બહેચરદાસે ગારણીના જમણ માટે ના રૂ ૧૦૧) તેમાં ન વાપરનાં તેમાં રૂ. ૫૧) 6 પ્રેરી તે આમેદના દહેરાસરના જ્યોંદ્રાર ક્ંડમાં આપી દીધા છે, જે અનુકરણીય અને ધન્યવાદરૂપ છે.

શ્રી ગીરનારજ તીર્થના સને ૧૯૬૮ તા વીગતવાર હીસાય અમને મળ્યા છે જે જોતાં જણાય છે કે એના પ્રય'ધ કમીટીના હાથમાં આવવા પછી સુધરવા માંડયા છે તથા એ વર્ષમાં કુલ્લે આવક રૂ. ૪૪૧૫॥≈॥ની થ⊎ છે.

અંતરીક્ષજ કેસ:— આ કેસના ઠરાવ તા ૧૩માંએ હતા તે દીને કેસ ચાલતાં અંતરીક્ષંજીતા ફાટા લેવાની શ્વેતાંખરીની અરજી મુલતવી રાખવામાં આવી છે તથા દિગે ખરીતા લેખીત જીવાય દાખલ કરવાના ઠરાવ તા. ૭-૧૧-૧૩ (માગસર વદ ૦))) ના પડ્યા છે, એ અગાઉ મેજરટ્રેટ મી. દીધે એક દિવસ ખાસ સારપુર પધારી અંતરીક્ષજીની મૂર્તિ જોવા આવનાર છે, જે પ્રસંગે દિગં ખરી આગેવાનાને હાજર રહેવાને મી. ચવરે વડીલ સ્થાના કરે છે.

પ્યારામતીમાં પં. નાના ગમચંદ્ર નાગ દ્વારા સારા ઉપદેશ અપાય છે.

મહાસભાની ૧૭મા બેઠક મયુરામાં ગયા માસમાં ત્યાંનાજ શેઠ દામાદરદાસજીના પ્રમુખપણા તીચે વાર્ષિક મેળા પ્રસંગે થઇ ગઇ છે, જેમાં મહાવિદ્યાલયને કાશીના વિદ્યા-લયમાંથી જીદું પાડવાના અને તે ખુરઇ, **લલીતપુર, અલીગઢ કે ખુર્જાં વગેરે** સ્થળે લઇ જવાના કરાવ થયા છે!! વધુ વીગત આવતા અકમાં.

જૈતામાં પ્રથમ સીવીલીયન:-લાહાર નિવાસી દિગંખર જૈત બધુ પ્રેા. લાલા રામચંદ્રજી એમ. એ. એ માત્ર રઢ વર્ષની વમે આજ સુધીમાં બધી પરીક્ષાએા ઉત્તમ રીતે પસાર કરી હાલ વિલાયત માં આછ. સી. એસની (ક્લેક્ટરની) પરીક્ષા પ્રસાર કરી છે. ડુંક સમયમાં આ બાઇ હિંદુસ્તાન આવતાંની સાથેજ કાઇ રથળે ક્લેક્ટર નીમાશે. આખી જૈત કામમાં આ પ્રથમજ સીવીલીયન થયા છે, જેમના ફાટા તથા હિંદી જીવનચરિત્ર આ ખાસ અંકમાં આ-ધેલું છે જે વાંચવા સર્વેને ખાસ ભલામણ છે.

રામટેક તીર્થમાં કાર્તક સુદ ૧૩ થી ૧૫ સુધીમાં વાર્ષિક મેળા ભરાઇ ગયા છે.

'જૈન તત્વ પ્રકાશક' નામે નવીન દ્વિંદી માસિક પત્ર ઇટાવાથી પ્રકટ થનાર છે.

શ્વેતાંભર જૈત કેાન્ફર સંતા પ્રયાસ-થી દશેગ પ્રસાગે થતા ૧૨૦ સ્ટેટમાં પશુવધ બંધ થયા હતા અને આ વર્ષ ભળાણા, રંગ-પુર, હાથીપુરા, રામપુરા, મહુઆ, કહોલ, હેંચ વગેરૈના સ્ટેટાએ કરાતા પશુવધ બધ કર્યો છે.

કેળવણીનું પ્રમાણ:-મુંબાઇ ઇલાકામાં હાલ ૧૦૦૦માં હ૧૮ પારસી લખી વાંચી શકે છે ત્યારે જૈનોમાં ૩૧૯ જ તેમ કરા શકે છે તેમ અગ્રેજી ભણનાર પારસી જ્યારે દુઆરે ૩૪૫ છે ત્યારે જૈન માત્ર ૧૮ જ છે. પારસી કામની ચડતી અને જૈન કામની પડતીનું કારજ આ પ્રમાણે કેળવણીના અભાવજ છે.

ગામટસ્વામી તથા તીથ° કરોના ફારાઓ વૈચાતા અટકાવવા માટે મુંબાદમા લાલા પરસ દયાળજી દ્વારા કેસ ચાલતા હતા, તે સંબંધમાં રાજા સ્વીવર્મા, અનંતરિાવાજી વગેરે ફાેટા વેચનારાઓએ એવા ફાેટાઓ ન**િં** વેચવાનું લેખિત કહુલ કર્યું છે.

મસુરમાં રાજ્ય ભવનના વિદ્વાનામાં જૈન વિદ્વાન તરીકે પ. શ્રી. દાર્થલીજિન**દાસ** શાસ્ત્રીને નીમવામાં આવ્યા છે.

સાલાપુરમાં શેક નાથા રંગછ બાર્ડિ ગતું મકાન બાંધવાના પાયા નાંખવાનું મૂહત ગયા માસમાં કલેકટર મીઠ હેમને હાથે ભારે કારથી થયું હતું.

શ્રપણ એલ્ગુલની પાસે ચાર માઇલ ઉપર નવી રેલ્વે બંધાવાની સગવડ થાય છે.

આ અને આવો અંક:—વર્ષની અધવચે કે વર્ષની છેવટે નહિ પણ પહેરાજ અંક અગાઉથી લવાજમ લેવાના નિયમ થવાથી ત્રાહક કે મેન્પર જેમનું લવાજમ અગાઉથી આવો ગયેલું હતું તેટલાનેજ આ ખાસ અંક પ્રથમ માકલવામાં આવ્યા છે અને જેમનું લવાજમ ખાકી છે તે મેન્પરોને રે. ગાનના વી. પી.થી અને આહેરોને રે. ગાાનના વી. પી.થી આ ખાસ અંક આદ દિવસની અંદર માકલવામાં આવશે. તે જેમને મળે તમણે અવસ્ય સ્વીકારી લેવા. કાઇ પણ જીના ત્રહાક હવે મનીઓર્ડર કરવા તત્રદા લેવી નહિ. આવતા અંક માગસર સુદ શ્ને ખદલે સુદ ૧૫ સુધીમાં પ્રકટ કરવામાં આવશે.

અના વર્ષના આહાકોને ર. ૧)ની કિંમન તેના આ ખાસ સચિત્ર અંક તદન ભેટ આપવા ઉપરાંત રૂ. ૨)ના મુલ્યના ૮ પુસ્તકો ભેઠ આપવામાં આવશે, જે પૈકીના ભેટના ૨ પુરતકો શ્રી हનુમાન ચારિત્ર અને મનોરમા આ અંક સાથળ સર્વને ત્વાના કરવામાં આવ્યા છે અને બાકીનાં ભેટનાં પુરતકા તૈયાર થતાં જશે તેમ તેમ માસિકની સાથે રવાના કરવામાં આવશે. બાકીના પુરતકા માટે કેલ્ઇએ ઉઘરાણી કરવી નદિ. નવીન વર્ષનું સચિત્ર જૈન પંચાંગ પણ આ અંક સાથે સર્વે બાદકાને ભેટ આપવામાં આવેલું છે તે સ્વેંએ સંભાળી લેવું.





•

Jond Mahavina's Candles.

(By:-Jagmander Lal Jaini M. A. Barrister at-law.)

In his Modern Painters Ruskin speaks of the Arts as follows: -"But I say that the art is greatest which conveys to the spectator, by any means whatsoever, the greatest number of the greatest ideas; and I call idea great in proportion as it is received by a higher faculty of the mind, and as is more fully occupies. and in occupying, exercises and exalts, the faculty by which it is received." Much in the same strain we may speak of Religious. Tas greatest religion is that which conveys the greatest number of ideals; an ideal being great in proportion as it comprehen is Time and Space to a greater extent and brings the human soul in touch with Truth & Bliss & Peaco with greater & swester cogoncy. When powers of Reason are exhausted & the human soul in its inquiries into matter & in its 'yearnful' groping after Truth & Eternity is left in the dark, then it is that soft dissatisfaction steals into the soul & as often as not dissent & distress make new hewilderment & fresh revolts in its unfathomable depths. These depths are verily beyond the grasp of Reason. Primitive feelings reign these in contemptaous independence of Reason, the Sovereign & sole guide of our Sciences. It is these depths beyond it is propropriate to give a thought to

Reason which coccasionally tragedy, grim comedy, incredible selfsacrifice, unadulterated selfishness up into the world of action & matter. The ideals of which Religion consists concern more with these than anything else. The common constitution of human nature gives all men women at least a few common impulses & a few common sentiments & sins. The greatest religion is that which soothes these impulses, gradifies these sentiments & guards against these sins. Again the greatest religion will be that which is open to every human being without the mediation of any person or thing. On this Devali (flatsi) occasion when Indras & Indranis & all the gods & goddesses of the sixteen heavens came down in joy unmeasured to celebrte the attainment of Nirvana (Aale) by the last Tirthankara of the Jainas. Lord Mahavira લાંડે મહાત્રીર in Pavapuri પાવાull in Behar, 2438 years ago, & when now the Hindus & many non-Hindus too illuminate their homes, shops & public places as if to symbolise on earth the great light & bliss that was then experienced in the heavens by the ware nearer the heart-beats of the Universe than most of us are on this occasion of brilliance & purity.

the legacy of light that the last Lord left to us. Descriton of ideals, impurity of actions & choked narrowness of motives & sympathies made the Light dim to our moral weakness have robbed us of the enthusiasm that leads on to it; & the selfish pursuit of gilded dirt has bowed us double to seek the fithy glory of worldly attainments so much that our eyes seldom meet the pure gazes of the stars & our ears hardly ever hear the white massages they single down to us, & our souls shut up in cages of clay alar! Sing & feel that they are clay, identical with the clay of their prison-house! In the days of old the prisons were as strong as now, but the most of civilisation was not so elaborate & deep & broad as it has been made by two millenniuns or more of constant labor of the million of mea-& women that have been & Escape now has become almost possible; escape, I mean, from low ideas & sinful lives. A few years ago I remember having read about an experiment by a few thousand Americans to live the life of Christ. -i.e. life of Love & Sprifter, Truth & Parity. The experiment was for a week only. But from the very fire. day, the aspirants began to full of & hardly any struggled on in the life to the end of the 1th day. And all declared that in conditions of modern life it was impossible to live the life of Christ! Need I say that the strict details of Jaina householders' ascetics' lives are much severer than

the discipling enjoined on its followers by the Churches of Christianity? But it is not to be concluded that the pursuit of Jainism is, therefore, impossible. Possibly the American experimenters committed a mistake. They might not have taken into consideration what in Jaina philosophy is called the sig wit or the spirit of the times. Ancient principles of Jainism (or of Christianity) to be of us now have to be clothed in modern practices. This is alone where the enlightened moderns come into conflict with the orthodox old-viewed folk of the honest type. I say 'of the honest type', for there be some who are so wedded to customary parrow-mindedness confirmed by ineradicable ignorance that they would twit & disbelieve even a Kevalagyani Fraguet (an all-knowing ascetic), if one were to ride on air from the Videhas into India:

Well, then, what is the Light, left in our custody by Lord Mahavir. And is it not the greatest light, because it is Truth itself? Briefly characterised the Light teaches us (1) Spiritual independence which connotes unlivided freedom & untimited responsibility. The send depends up in none else for its progress, & note else is responsible for the digralision & listress which the soul may be affected with. This doctrine evidently frees us from all evils & heartburning which we are apt to suffer by laying our ains or sorrows at the doors of others, because we fancy them either to have done something which

they ought not to have done, or to have omitted to do something which they ought to have done. Also it would be seen that this doctrine- the only true doctrine of Independence-shows the basic identity of Daty with true Self interes:, Its practical consequences are also golden. It does away with all prophets & priests to intercode between TRUTH & the human SOUL. Thus our salvation is neither attained nor accelerated by buying it from or bribing any being human or superhuman by our vows, lives, earnings or bodies. The price of Everlasting life is itself, namely Liviing, To attain it for ever, live it now. Peace, purity, both of them passionate & steady, are its tests & attributes. An inward light that for ever shines & encourages & inspires & becomes the truest life-current even in our mortal bodies, is its dearest attainment. (2) It teaches us the essential universality of the Brotherhood of not only all men but of all that lives. The current of life in the lowest living organism is as sacred subtle, sensitive, mighty & eternal as in Juliet, Cleopatra, Caesar,, Alexander, Christ, Mahomet & Lord Mahavira himself. This is the undying basis of our fraternity for all. ever-ready feeling of this great lesson, which purity learns in no time, is a great safeguard, in fact a perfectly sure cure for the soul killing cancer of vanity, pride, self-glorification, contempt of others, cruelty in sports, carelessness of subhuman & also of human living beings. The great

principle of Ahinsa which is the glorious child of this real universal Brotherhood of Everything living.

and any constructive for the second property of the second property of the second of the second of the second

The above two lessons are the two Great Candles that were left by Lord Mahavira to illumine for ever the seen & unseen vastnesses of Loka dis & Aloka wait & on the Dewali Can'a day we pray our brethren the readers of the 'Digambara Jaina' "દિષ્યાસ જેન to light these two candles with all the pure fire of enthusiasm & aspiration after Eternity in their souls & at least for some time to feel nearer the great golden goal dashed with rose & electricity & blue Infinity where our Lords live & where Joy & Peace reign Supreme for ever & for ever!

Joy & Peace to All !!!

Allahabad.) J. L. Jaini
July 25 1912. f

The Soul.

Its Development according to Jainism.

(By:-Mr. Herbert Warren, London S. W.)

to send an article within a fortnight about the Jain religion, for publication in the November issue of the "Digamber Jain," "(Example)" and not having much leisure for the purpose, I may be excused if I do not write something quite fresh. The following lines are based upon old matter.

Jainism is one of the faiths of the world; it maintains that "non-injury" (abinsa angle at) is the highest religion. Its philosophy teaches that living beings have the power of knowing, that that which is known is reality, and that truth is knowledge purged of intoxicating elements. The Jain scriptures are handed down as being the teachings of those who have in the past purged their knowledge of all intoxicating elements such as anger, and have reached permanent commissience.

The word reality just used has many meanings, but as meant in this philosophy that which is real is called substance (dravya द्रव्य). Space is real, matter is real, soul is real, But the substance of the universe is not, never was, and never will be one homogeneous mass, nor one individual being; matter never changes into soul, and one soul never becomes another. Each of us can consider the universe as divided into self and not self. That which is not self is made up of living beings and of lifeless things. Each of us, therefore, is a social being: there are others. And one's right relation to them is that of kindness. The lifeless, insentient things have no feeling and we cannot pain them.

Any living being may be regarded as a soul. That which in the living being is seen by the eye and touched with the hand is not the soul; but the soul is not absent in the 'man, butterfly, tree, or whatever visible example we take. They are living souls; the soul in its completeness is

in each one of them. But it is not pure; and it is not reasonable to assume that it over has been pure. Metals are not found in the pure state, gold has to be refined, and the soul has to be developed. By reason of the impurity in the soul its qualities are obscured. The substance of the impurity is matter (pudgale, ysa or dravya karma gou sh). Attraction and repulsion are properties of master. When matter is in combination with the soul, repulsion becomes aversion, and takes the form of anger, and pride. Attraction becomes attachment, and takes the form of deceitfulness and greed. These forces become the means whereby we give ourselves wrong belief, and do wrong things like killing, lying, stealing &c. They are impelling forces to wrong action; but they do not compel us; anger may impel us, but not compel us to injure someone; we are free and have the power to refrain. Anger is not a quality of the pure soul any more than the dirty colour of muddy water is a quality of water; water is white or colourless; the soul is for giving.

The souls just mentioned, man, butterfly, tree, are in the process of development. Acording to my understanding of the Jain belief, there is an infinity of souls whose development is already completed; and there is also an infinity of souls (avyaktamithyatva nigoda (morest launce launce) whose development has not begun. The undeveloped condition has no beginning but it has an endi

the fully developed condition (Siddha ship) has a beginning but no end.

During the process of development the living being goes through a series of rebirths until it reaches the state where it lives without any material body, gross or fine, and in which all its infinite qualities are liberated and there is no hindrance to or disturbance of its free natural action (jnana ste darshana she, and charitra 4(3). During the process of development there are four planes of existence on which the living being may be born (1) angel (deva हैव), (2) human, भनुष्य (3) animal, તિયંચ vegetable, mineral, (4) hell, નર્ક, According to the life, whether good or bad, in any one life in any of these states, so will the next life be fortunate or unfortunate; fortune and misfortune are not accidental, we reap as we sow.

The pure soul is invisible and intangible, and it is only the matter (pudgale usa) in combination with the soul that renders it in a sense visible, giving the soul a visible body, either fine as in the case of spirits (devas 24) or gross like our The body is no factor of the soul: we are different from the body we have. Instead of thinking that the visible man has a soul, it is better to think that we are a soul and have a body; because then we do not identify, ourselves with our body, thinking we have a soul which is in us but is not ourself. In thinking that we are a soul having a we identify ourself with the soul, and regard the body we have as being something different from us, which is the truth.

If we disregard all that is visible and tangible in a man, what is there left to be called a being? Consciousness is left, memory is left, belief is left, feeling is left, attention and choosing are left; all these qualities are invisible to the eye. The man's sight of a butterfly is known directly or immediately only to himself (not speaking of Kevali 2401) the man's belief or feeling of conviction that the butterfly feels and does not like pain is invisible to the eye of any one; and the man's determination not to hurt the butterfly .- all these qualities are invisible to the eye and intangible by the hand; they are not qualities of the body; they are qualities of the soul. Matter is never conscious, whether it be in combination with or out of combination with a living soul; the brain no more couscious during life than after life; it is the soul and not the brain that is conscious. You can never get consciousness into matter: you can never make a sewing machine or any other machine conscious; if you could it would cease to be a machine and would be a living being.

The qualities of the soul are infinite, but the characteristic quality is knowledge. Even trees know what to take and what to reject as nourishueut. Where there is no knowledge there is no soul, and where there is soul there is knowledge. When all impurity (pudgala) in

dravya and bhava karma engerilis removed from the soul, then the knowledge is unlimited and no mistakes are ever made. Other qualities of the soul are blissfulness, (uninterrupted blissfulness when once the soul is pure), compassion, pity, right belief or conviction; right conduct, everlasting life, sameness of individuality (one soul is always itself), &c, &c. Each soul is always one, higherself and lower-self simply mean the same self in a higher state or lower state, it is the same one self.

During the process of development the chief business of life should be, of course, to remove from ourselves the impurities that we have in combination with us, such as anger, pride, deceitfulness, greed, fear, hardheartedness, thoughtlessness, etc., and so liberate the natural qualities of the soul and finally attain the pure state.

The means of doing this are summed up in the words "non-injury" (ahinsa **[3:41); we injure ourselves and others by unlimited desire to possess property, by unchastity, by stealing, speaking untruth, and by killing or hurting living beings. If we wish to make spiritual progress we should refrain as much as possible from these behaviours.

In closing this article four difficulties may be mentioned, namely, it is or rather for us was difficult to get the human incarration; have ing got the human life it is difficult to come across true teaching; having got the human life and come across true teaching it is difficult to believe it; and beliving it, it is difficult to practice it or act in accordance with it,

If any of the above article is not in accordance with the Jain teachings I shall be pleased to be corrected by letter in English to me care of the Editor.

H. WARREN.

Sep. 11th 1912.

THE PREVALENCE OF JAINISM IN SOUTHERN INDIA.*

(By:-P. V. Jardisa Aivar M. A Assist Museum, Madras.)

That Jainism had its share in the spreading of religious thought, art and architecture throuhout various parts of South India, is evident from existing Epigraphical records and stone sculptures which are scattered throngout parts of the presidency of Madras. From a traditional point of view also, this view is supported-in an annual festival conducted in the temple at Shiyali, Tanjore District. On a particular day, a ceremony locally known as Sramanalai Kalugethngirathu i. e., impaling the Jaims is performed. This village, has at one time been an important contre for Juliam, when the Tamil Sairs Saint and pret Tirunana Sambundar, who was born

^{*}For the information contained in this article. I am included to the Apanel Reports of the Laciatological and Engraphical Departments published by the Government of Madras.

village about the seventh century A, D., attempted to stamp out Jainism there.

The village of Vallimalai in the North Arcot District has several. Jaina rock inscriptions, huge statues and caves which are of extreme interest. Some of the caves have coloured paintings originally made by their Jaina founders. Some images there, were installed by the Jaina preceptor Aryanandin (and right). In the village of Ukkal of the same district is a Chola inscription of A. D 100s relating to the defaulters of land revenue, which includes Sramanas (Jainas).

A private library at Tanjore had at one time, an extensive collection of manuscripts by Jaina authors, and this shows that on various subjects, such as, logic, mathematics &c., besides religion, they were well-conversant Of these, the Syadvadamanjari augrenal written by Mallishena uri algebrara is a commentary on a poem in praise of the Jaina Saint Srivardhamana Maghar composed by Hemachandra (A. D. 1092-1173).

On the West Coast the village of Mudbidri Hself uear Mangalore situated on a chain of hills was an important Jaina centre. It was called Bidire and Venupura or Vamsapura (in which Venu or Vamsa is the sanskrit equivalent of bidaru, "a bamboo"). There are several temples known as "basti" dedicated to the different Tiruthankaras dating from about the tiffeenth century. Even during recent years, in the course of

excavation works for archaeological purposes, some excellently carved Jaina stone sculptures have been unearthed at numerous places including sultan's battery in the Wynad, Danavalapad in the Cuddapah District and other places. Kalugumalai in the north of the Tinnevelly District is a place where such remains a e found and which are well known to all Indian archaeologists. In Coorg, (হুমু) almost the only permanent temple buildings constructed in imperishable stone, are those belonging to the Jainas. (For a list of thes; see Mr. Rea's List of Monuments in Coorg).

The Madura, Tinnevelly and other Districts have numerous rock-cut caves and temples having Jaina sculptures and inscriptions. Near Alagarmalai is a cavern relating to the Jaina teacher Ajjandi and at Anamalai in the former district are well known remains of the same religion.

In Ginigee in the South Arcot District, where once a chief of the Vijayanagar line of kings ruled, we have the 24 Tirthankaras; carved on a big boulder of rock. In Tiruparithikuuram near Conjeeveram, which was the capital of the Pallava kings, a Jain temple is still in existence. The sculptures at Kalugumalai in the north of the Tinnevelly District are famous as I have above noted. Messrs Fergusson and Burgess the first of Indian archaeologists have specially described them in their well-known works on archicelure and archaeology.

Jaina remains, rock-cut, carved and structural, are found at many places in the Madras Presidency, not strictly confined to the few examples before cursorily alluded to. At some of these sites, Jainas still remain as the greater or a fractional part of the population. At others, the Jaina people have entirely disappeared and only their monumental remains, which are of a high order of artistic merit, still remain in existence.

One other place we might also mention as having been a chief centre of Jainism in the northern parts of the presidency and that is the hilly district of Ramatirtham situated some miles east of Vijianagaram in the Vizagapatam District and now a celebrated centre of Hindu worship. The remains discovered there by the archaeological survey, testify to its once having been a Jaina seat subsequent to its desertion by Buddhists. The earliest buildings in Hampi or Vijayanagar, (Bellary District) are Jaina, probably contemporary with or earlier than the first settlement of the Hindu Kings who founded the Vijavanagar kingdom. Near the village of Hampi are many Jaina temples all grouped together. The buildings themselves have not been destroyed, but remain, wantonly though they have suffered through the unchecked growth of vegetation. The Jaina images of worship have however all been removed, as no one of them now remains. In addition to the group above mentioned there

are other isolated examples of Jaina temples at scattered places in the Vijayanagar site. There are also some Jaina temples (or "bastis" as they are called) at Chippagiri, near Guntakal, all built in the style of those at Vijayanagar.

The Jainas have, in early times settled themselves in numerous widely scattered places in Southern India and made some success in settlement, but they had to contend with a well combined and powerful religious influence, adverse to them. To this cause is no doubt due to the paucity of the Jaina population now in existence.

We owe to Mr. Rea of the Archaealegical Department, Madras, some measures of thanks for the preservation and identification of most of these that were unknown before, and which, as the result of his survey throughout this Presidency has brought them to knowledge so that they have been preserved by the Government of Madras on his recommendation.

MADRAS P. V. JAGADISA 3rd Oct. 19/2 AIYAR.

WHAT IS WANTED MOST.

(By:-Proficsor A. B. Latthe M. A. Kolhapur.)

an article and yet unable to refuse to comply with the persistent wishes of Mr. M. K. Kapadia, I am noting

ションシングンシング

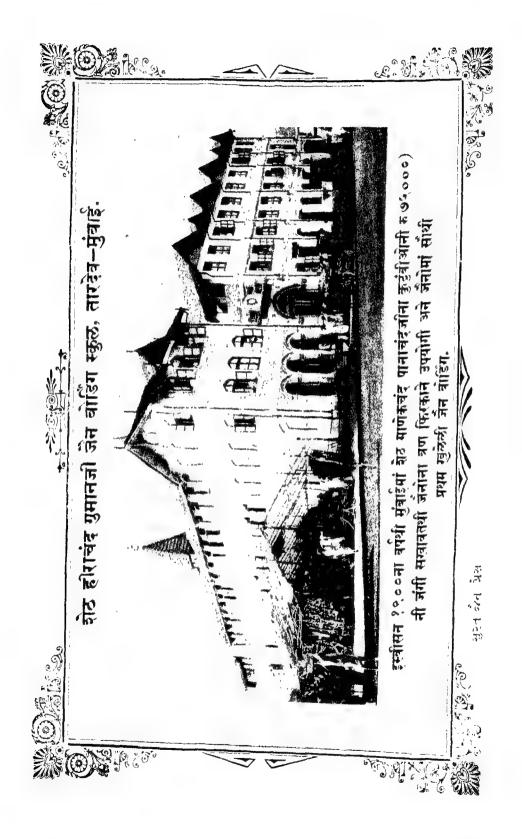
かんかんかんかんかんかんかん

श्रीमान शेठ विनोदीराम बाळचंदजीके चार पुत्रों−(१) शेठ दीपचंदजी (२) शेठ माणेकवंदजी (३) शेठ ळाळचंदजी

पिताने पगने चालनार व्यापार बुराल, धर्मप्रमा, दानी अने उत्साद्ध श्रीमान प्रहरूथों. ओर (४) शेंट नेपीचंद्जी-झालरापाटण सीटो.

多型的条件 多型型的条件 多型型的存在 化乙基苯基甲 机燃烧性燃烧性燃烧性燃烧性燃烧性燃烧性性增加性增加性增加性增加性增加性增加性 医多种的复数 化水平分子 医腹腔性





down a few stray thoughts with a hope that they will attract some attention from the educated as well as the munificient among us.

What do we—as Jains want most at this moment! The form of the question at once eliminates a good many of the ordinary answers.

I want to consider the needs of us emphasise the point, as Jains, I because there are many people whose narrow vision does not enable them to see that we need do nothing as Jains except what we want because of our being Jains. The political and economic questions are of the class of things which we ought to think of only as Indians and nothing else. But in addition to being we are a community charged with a special trust. That trust in a word is the maintenance intact of the Jain ideal of life laid down by the kevalins. Our special need therefore is that we must try to raise our community to such standards of efficient life us will enable as to realise the ideals of our prophets.

Are we on our way to attain that level of life? I think we are not. Firstly we are dwindling down year after year. Secondly our little community is a house divided against. Thirdly we have reduced our power to the lowest limit by cutting the community into numberless castes. This is one thing. Another thing is that we have ignored what really constitutes the essence of Jain life—I mean the rational spirit of search

after truth or what is technically called Samyagdnyan. (सभ्यव्हाल) That makes us all Jains only in name. Supposing we attain to the height of civilization as it is conceived by others, shall we be satisfied with the: progress thus made? Supposing we are exactly what the English or the Americans are, shall we say that as Jains we have done our duty? I think we shall still be perfectly backward as a Jain community. When therefore we talk of English education, technical education, commercial progress, securing a share in the government of the country and so forth. there is really very little relevent to the needs of our community except only indirectly. But whon we talk of reviving the ancient form of Panditic scholarship, we are in a way at the centre of the problem.

Are we tackling that problem sereously! Obviously our orthodox people are very anxious about our religion; and could they grasp the situation, we should not be far from a satisfactory solution of the crucial problem of Jain progress. The failure of the orthodox is due to one cause. They are attempting the hopeless task of transforming the twenteeth century into the days of Shri Mahaveer (30 મહાવીર). They would forget the history of twenty-six centuries. By founding Pathashalas of the primeval type, they would think of producing our Akalank wee's and Nikalanks (Gsa's). What is the result? They bardly attract any intellegent boys to these antequated seminaries and

after years of arduous toiling, they find themselves as far from their ideal as ever before. The experience is discouraging not only to the orthodox but to every one who cherishes the sublime hope vivifying Jain ideals.

What is the remedy? To my mind, it consists in modernising the institutions where we have to train up typical Jain spirituality through the ages to come. That is not done by the absurd insertion of a readers or book-keeping in carriculum of our Pathashalas. The aim of these nurseries of Jains lives ought to be to associate the best in the discoveries of the west with the highest in the lore of the past They should be Colleges in which the Jain boys would imbibe Jain principles in their best form and yet would become able to hold their own against the literery and scientific savants of the west. Such should be the place from which Jain types would be evolvedtypes that shall not be at a disadvantage | in any walk of life and shall yet live up to Jain ideals. That would be the Aligarh of the Jains.

There are two dangers before the the Jains today. Their young men would forget Jain ideals and be aborbed in the atmosphere of modern ideas. If they fight shy of this fate, they will die out like all useless objects in the world. The safety of Jainism lies in the adoption of means which shall enable Jains to steer clear of the two dangers. The one means is that we must create one or institutions that shall bring out men who will survive the struggle for existence as being the fittest in the modern world and shall neverthless grow under the shades of Jain discipline,

Has the Jain community men who would work out such an institution and men who shall provide the sinews of war?

Kolhapur 11th October 1912. A. B. Latthe.

♦> सृष्टि कर्ता कोई नहीं है. ६

इस अनादि अनंत सृष्टिका, कर्ता हर्ता निहं कोई सार।
पूर्वा पर विचार कर देखों, पक्ष त्यार्ग कर त्यों निर्धार ॥ टेक ॥
जो कहते हो कर्ता हर्ता इक्षर को इस जगका सार।
तो कर्ता है कीन ईशका, फिर ताका है को कर्तार॥
कर्ता के कर्ता विचारते, निहं आवे कहु पारावार।
ऐसे अनवस्था दूषणका, कही कौन विध हो परिहार॥

इक्कर जो है स्वयं सिद्ध तो, स्वयं सिद्ध क्यों नहिं जगसार।। पहिले मृष्टि बनानेके वह, कहां रहता था किस आधार। कहां से सर सामान मंगाया, कहां वैठ जग रचा जुसार।। निराधार कैसे रहता था, कौन हेतु कीनो संसार। निराकार ईश्वर से कैसे, पगट हुवा यह जग साकार।। जो साकार कहा ईब्बर तो, सर्व व्यापि नहिं जगत मंझार । यदि कार्य कुछ सिद्ध करन को, रच्यो ईश्वर यह जग सार।। तो कैसे कृत कृत्य हुवा अरु, सर्व शक्ति धर कैसे सार। विना हेतु जो सृष्टि बनाई, तो बालकवत् हुवा खिलार । अज्ञानी सम करे चेष्टा रचना कर करता संहार॥ अथवा रची गगवश मृष्टि, और द्वेषवश करे संहार॥ जो इक्वर नहिं रागी द्वेपी, तो समान रचता संसार। ब्राह्मण क्षत्री वैदय उँच क्यों, शुद्र नीच कीने कतीर॥ आपिह ज्ञानी ध्यानी भक्ती, दानी पंडित रचे उदार । और वेक्या मदिरा पानी, हिंसक ज्वारी चोर छवार॥ आपि सुबुध कुबुद्धि दाता, आपि फल सुख दुःख दातार । कहो ज पहिले रचे सरीखे, पीछेसे ये हो गये जुर । कर्म शुभाशभ लगे जु करने, ईश्वर को नहिं दाप लगार॥ तो कैसा वह विकाल ज्ञानी, जो इतना नहिं किया विचार । कि आगे ये जग के जीवीं, छोपेंगे मम आज्ञा सार॥ तातें रचता समझ सोच कर, जो चळते नियमानूसार॥ कहो जु न्यायधीशवत् ईश्वर, पुण्य पापका फल दातार । तो फिर कैसे कही ईश को, इस अनादि जगका कर्तार॥ रुड़ा मथम जगजीव परस्पर, देखे आप तमाशा सार । पीछे न्यायधीश हो कैसे, दण्ड देय बहु अचरजकार।। तासे जो हो न्यायधीश तो, निहं संभवे जगत कर्तार।। कहो जु प्रथम रचा इशे जग, फिर माया भरमाया सार। तो माया बलवान ईश्वसे, पृथक् हुई द्वैत करनार।। जो माया पगटी ईश्वर से, तो क्यों वश निह राखी सार ।

पूर्वापर ॥ १ ॥

पूर्वापर ॥ २ ॥

पृर्वीपर ॥ ३ ॥

पृवीपर ॥ ४ ॥

पूर्वापर ॥ ५ ॥

पृवीपर ॥ ६ ॥

अथवा मार डालता माया, तो होता सुखिया संसार॥ ऐसे ईश कौतुकी को फिर, कैसे कहा दया भंडार॥ ब्रह्मा रचे विष्णु जो रक्षे, और महेश जु करे संहार । तो ये कौन कहां से आये, क्यों रच रक्ष करे संहार।। जो प्रगटे अद्वैत बृह्मसे, लीला मात्र कहे। य सार । तो दयाल अरु न्यायी कैसा, सज्जन देखां हिये विचार ॥ कहो मथक तो द्वैत हुवा, फिर रहा न ईश्वर जग कर्तार॥ जो कहते हो सर्व व्यापी, ईव्वर का इस जगत मंझार। जल थल नभ जड चंतन सबमें, ब्याप रहा निश्चय कर्तार ।। तो क्यों नहिं जग एक रूप सब, क्यों जड़ चेतन भेद अपार । मत मतांतर भेद हुवे क्यों, क्यों करते हो तुम तकरार॥ जो ईस्वर है तुम घट व्यापी, सो ही हम घट व्यापी सार ॥ बही ईइवर हम घट व्यापी, मेरे मुख से करे उचार । कर्ता इर्ती में नहिं जगका, भ्रम में व्यर्थ पड़ा संसार।। तातें बच ईश्वर का मानो, छोड़ो पक्षपात दुखकार । व्यर्थ दोष पत देव ईश को, कह कर उसे जगत कर्तार।। ईस अनादि अनंत सृष्टिका, रचे न कोई कर संहार।। दो पदार्थ जग चेतनका ही, जग में दीखे सब विस्तार। और सब है व्यर्थ कल्पना, वस्तु म्बस्त्य विचारी यार॥ दर्शज्ञान युत अमृतीक, चैतन्य पदारथ जीव अपार । मूर्तीक जो विना चेतना, और वस्तु सब जड़ निर्धार!! अविनाशी ये दिव्य (द्रव्य) दृष्टि से, विनाशीक पर्यत्य मंझार ॥ चेतन भाव शुभाशुभ करके, कर्म आश्रव करे अपार । मिथ्याञ्चत योग ममाद्रक, कपाय से बांधे विधिकार ॥ तिनका फरू ग्रुख दुख ये भोगे, केल करे जड़ बस्तु मंझार । आश्रव रोके कर्म नशाव, तो पावे निज पद अविकार।। सो परमातम नित्य निरंजन, नमं "दीपचंद" बारंबार । पूर्वापर विचार कर देखों, पक्ष त्याग कर हयो निर्धार ॥ इति ॥ मा. दीपचंदजी उपदेशक.

पूर्वापर ॥ ७ ॥

पूर्वापर ॥ ८ ॥

पृत्रीपर ॥ ९ ॥

पुत्रीषर ।।१०॥

पूर्वापर ॥११॥

।।१२॥

प्रभावना.

(ळेखक:-रावजी सखाराम दोशी, सोलापुर)

जैन धर्मांत सम्यग्दर्शनाची आठ अंगे सांगितलीं आहेत, त्यांत आठवे अंग प्रभावना आहे याबद्दल अमृतचंद्र सूर्गोनीं आपस्या पुरूषार्थसिद्धुपाय प्रथांत असे म्हटले आहे किं-

आत्मा प्रभावनीयां रत्नत्रयं तेजसा सततमेव ॥ दान तपो जिनपूजा विद्यातिशयेश्च जिनभर्मः ॥

अर्थ:—आपला आत्मा रत्नत्रयाचे ते-जाने नहमीं प्रभाव युक्त करावा म्हणजे आपल्या आत्म्याचे ठिकाणीं सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र यांची नेहमीं दृद्धी होईल असा प्रयत्न करीत असाव तसेच सत्यात्रीं दान देणें, जिन पूजा करणें, तप करणें आणि विषेचा प्रसार होईल असे करणें इत्यादि इत्यानी जैन धर्माचा प्रभाव बाढाविणें यास प्रभावना म्हणतात.

गृहस्थी श्रावकांच्या सम्यग्दर्शनाची सार्थकता आठ अंगें पाळल्यान होते. आप-ल्या आत्म्याचे गुण परोपकार बुद्धी ज्याचे ठिकाणी आहे त्याचेच वाढतात. प्रभावना करण्यास वाटेल त्या वेळेस काल असतो, परंतु प्रभावनेचे जे मार्ग आहेत, ते मार्ग कालानुसार बदलावे मात्र लागतात. सर्वच मार्गाची जरूरी आहे, पण अमुक एका मार्गाची जरूरी विशेष दाखिवण्यास काला-ची जरूरी आहे. एक वेळ असा काळ होता कि जुलमी राजांच्या जुलमानें जैनांची देनालयें नष्ट झाली होती, त्यानेळेस देनालयें बांचून धर्माची प्रभावना होत होती ती येथ पर्यंत की मुयारा मध्यें देखील लोक मूर्ती बसवून आपली कामगिरी करीत होते. या गोष्टी करण्यास जैन केव्हांच चुकले नव्हते. तसेंच पूजा उधापनें इत्यादि किया देखील आमचे जैन लोक मक्तीनं करीत असत व मध्याही या गोष्टी करण्यास चुकत नाहींत.

पूर्वी एक काळ असा होता कि कवळी, श्रुतकेवळी, अंगपूर्वधारक ज्ञानी लोक आपल्या ज्ञानाचा प्रसार उपदेशाच्या मार्गाने करीत होते. जो पर्यंत पठन पाठन शक्ती व धारणा शक्ती बळकट होती तो पर्यंत शास्त्रों लिह्न ठेवण्याची जरूरी वाटत नव्हती म्हणजे शास्त्रों पूर्वी नव्हती असे काहीं नाहीं, तर पुढील काळ बाइट येईल असा विचार करून आपले ज्ञान शास्त्रातून लिह्न ठेवणें कर्तव्य समजून तसें करण्याचा परिषाठ ठेविला. त्यानंतर जस जसा काळ आला तशा तशा पद्धतिने धार्मिक, न्याय, व्याकरण, काव्य, वंद्यकी, जीतिष इत्यादि विषयातर श्रंथ लिहून जी खरी प्रभावना केली आहे तिचा परिणाम क्षणिक राहणारा नसून अनेक प्राणीमात्राचें त्या पासून हित झालें व पुढेंही होणार आहे. व सध्या होत असले-ले दिसत आहे अशा जिनवाणीची प्रभा-वना आमच्या जैन समाजाकडून जशी व्हावयास पाहिजे तशी होत नाहीं. सध्याचा

काळ आपली शासें मुयारामध्यें अगर आलमारीत रचून ठेवण्याचा नसून त्याचा उपयोग सध्याच्या प्रंसंगानुसार त्याची भाषां-तरे करवृन जैन समाजास करून देण्याचा आहे. अज्ञा गोष्टीची सध्या फार जरूरी आहे व त्यांतच प्रभावना अंग पाळले जाइल. सध्या या बाबतीत थोडासा प्रयत्न होत आहे, परंत याही पेक्षां जास्त व्हावयास पाहिजे. हैं काम आमच्या मुंबाई प्रातीक सभेनें अथवा दक्षिण महाराष्ट्र जन सभेने हाती **घेतले पा**हिजे. एक चांगला फंड या साठीं जमावेला पाहिजे, व त्या फंडाचे उत्पन्नांतून एक दोषे पंडीत ठेऊन हिंदी, मराठी, गुज-राश्री, इंग्रजी भार्षेत ग्रंथ लिहवून थोडया किंमतींस विकण्याची सांय केली पाहिजे. अशा योग्य रितीनें केल्या शिवाय शुद्ध व उत्तम प्रंथ निघणार नाहीत. ग्रंथ छापवू नये, अशा प्रकारचे वेड आतां समाजांतून निघून गेले आहे, कारितां इकडे आमच्या समाजाचे लक्ष लागले पाहिजे.

दुसरे आपल्या आत्म्याची उन्नित करणें जरूर असते. तसेंच आपली संतिति योग्य शीलवान व विद्वान निघेल अशी योजना करणें यांतही प्रभावना अंग पाळलें जातें. श्रावकानीं विद्येचा अतिशय करणें म्हणजे सर्व समाजांत जैन धर्माचा प्रसार होईल अशी योग्य विद्वान माणसे आम्ही तयार केल्या शिवाय आम्हांस आमच्या समाजांची उन्नित करता यावयाची नाही.

जे आई वाप आपस्या मुला मुलीस **योग्य** शिक्षण देऊन विद्वान करीत नाहींत, ते आपले कर्तव्य करीत नाहींत व त्यांचे कडून प्रभावना अंग पाळलें जात नाहीं असे समजावे. मुलामुली बद्दल आईबामांचे कर्तव्या-ची जाणीव नसल्या मुळें. वालविवाहा सार-च्या बाईट चालीस समाजांत जागा मिळाली आहे. बालविवाहानं मुलामुलीचे शिक्षण होत नाहीं, मगते आपल्या आत्म्याची उन्नति कशी करतील : त्यानां अयोग्य काळी माता होण्याचा प्रसंग येतो. त्यामुळे होणारी संतती अल्पायुषी व निम्तेज होते अशा या अवनत स्थितीस आणणारे आईबापच होत. तसेंच बालपणी वैधव्य दशा आल्यामुळे अत्या-चारा कडे प्रवृती होते. वंगेर अनिष्ट परिणाम बालविवाहानं होतात व त्या योगं आसिक उन्नतीस अडथळा वसतों. मग प्रभावना व्हावी म्हणून कोरडी ओरड कल्याने काय होणार ! जैनांची लोक संख्या कमी होण्याची हीच कारणे आहेत. मग इतर समाजास जैनी बर्नावण्याचा प्रयत्न करण्याची याग्यता आमच्यांत काट्टन असणार !! जब आम्हांस खरी प्रभावना करावयाची असेल तर बाल-विवाहाची चाल एकदम बंद झाली पाहिजे व आपल्या मुलामुर्लास बरेच शिक्षण देऊन विद्वान करण्याचा प्रयत्न केला पाहिजे. म्हणजे योग्य प्रमावना होईल.



श्री भक्तामर महात्म्य.

(લેખક, શા. <mark>છાેટાલાલ ધલાભા</mark>ઇ, અંકલેધર) [ગયા અંકથી ચાલુ.]

> - ३३३ ६८६ - । कथा ११ मी

वक्तं क ते सुरनरे। रगतेत्रहारि निःशेष निर्जित जगन्नितये। पमानम् । विवं कलं कमलिनं क निशाकरस्य यद्वासरे भवति पांडुपलाशकल्यम्॥ १३॥

અથ⁶:-દેવતાઓ, મનુષ્યા અને નામ પ્રમુખના તેવાનું દરશુ કરનાર એવું અને ત્રશુ જગતને વિષે રહેલા ચંદ્ર, કમળ આદિક ઉપમાને છતનારું એવું, તમારું મુખ કર્યાં ક અને દિવસને વિષે ખાખરના પાંતરાના જેવું ધીકકું પડી જનારું એવું, તેમજ વળા કલ ક વાળું એવું ચંદ્રમાનું બિંબ તે ક્યાં કે

અગી ખારમા તીર્ઘ કર **શ્રી શ્રેયાં સનાધ**ે ને સ્મરી ગણુધર વલયના તેરમા મંત્ર ભક્તા-મર સ્તાત્રના તેરમા કાવ્યને વિષે કહેલી ૧૧ મી કથા આચાર્ય શ્રી વર્ણવે છેઃ

આ તેરમા કાવ્યમાં ઉંકા अर्ह णमो उक्त मदीणं ॥ એ મંત્ર મુંફલા છે. એ મંત્ર યથા ત્રિધ જપવાથી ભૂત પિશાચ દૂર નાશે છે એટલુંજ નહિંપણ ચાર પણ ચારી કરવા પામતા નથી.

અ'ગદેશમાં ચ પાવતી નામે નગરી ના રાજા કહ્યું રાત દિવસ વિ'હ્યુને ભજતો હતો.એ વિ'તુભક્ત રાજા માહાંધકારથી પાતાની રપવતી, કપટ કલામા કુશળ, કુશીલા, મુખમે રામ આર હદયમેં છુરી રાખનારી, જીને મધ અને હૃદયે ઝેરવાળી કલાવતી નામની ઓમાં રચીપથી રહ્યાં હતો. વળી કલાવતી ધર્મને ખ્હાને ઢાંગી સોંગી જોગી સાધુને આદર આપવા ચુકતી નહીં. એક દિવસ એક જોગીને પોતાના દ્વારે આવેલા જોઇ તેને નમસ્કાર કરી, સ્તુતિ કરી આદરમાન આપી મહેલમાં બોલાવ્યો. આડીતેડી વાત થયા બાદ રાષ્ટ્રીએ જોગી પાસે વિશાચની વિદ્યા સાધવા મંત્રની યાચના કરી.

જોગી-એ વિદ્યા તે બહુ કૃક્ષ્યુ છે! તું તે કેવી રીતે સાધશે! એ કંઇ દાંસીખેલ તથી!

રાષ્ટ્રી-તમે વિધિ તે કહેા, જો મારાથી થશે તો કરીશ.

જોગી-રાષ્ટ્રી, સાંભળ, પહેલાં મદ્રની ધારા દઇ ભૈસાવલીના વધ કરવા! રજસ્વલા અનું વસ્ત્ર, ત્રીશ્લ અને પૂજાની સામગ્રી લઇ અયાવસ્થાને દીને સ્મશાન ભૂમિપર જ છુકના હાડ કાંની માળા લઇ હાંગમાં માં હતી બળી આપવી તે વખતે મનમાં શંકા લાવવી નહીં! અને મત્ર જપવા! અમ કરવાથા પિશાચણી પ્રત્યક્ષ થશે. એટલે માહન, ઉચ્ચાટન, વશીકરણ, થંભન, ઉદ્ધાટ, માત્રણ આદિ વિદ્યા તને પ્રાપ્ત થશે. અને નિશાચણી તારી કિકરી થઇ રહેશે. જો સાધનમાં જરા વાર લાગી કે તુ ડરી, તે છેમ જાણજે કે તારા છવ તે લેશ!!

રાષ્ટ્રી—છવ લેશે એજને? જો હું એ વિદ્યા નહિ સાધું તા મારૂં નામ કલાવતી ન**હિ!** મને મંત્ર આપા.

જોગીએ મત્ર આપ્યા. એક મહિનામાં રાષ્ટ્રીએ મે**લી વિદ્યા** સાધી; એટલે પિશાચની તેની આશાતુ સાારણી થઇ.

રાજ્યનાં **મંત્રી સુમતિ** વિદ્યા, મંત્ર વિશ્વારદ, ધર્મધુર ધર સમ્યકત્વ ગુણુધી અલં-કૃત જૈતધર્મી હતા, તેતા સ્ત્રા **લક્ષણવતી** . શુભલક્ષણા પતિ આદ્યાનુસારિણી **ઉ**ંચ્ય કુળ દીપક મધુરવાણીથી કુટું બમાં તેમજ **સેક્કમાં પ્રિય** હતી.

હવે એક દિવસ રાજ અને મંત્રી વચ્ચે માત્ર અને ધર્મ શાસપર ચર્ચા સાલી.

મ'ત્રી—સયશ્રી, ધર્મનું મૃળ કરણા છે, દયા વિના જપ, તપ, ધ્યાન, ક્રિયા, કર્મ અને વેદ પુરાણ નિષ્ફળ છે. જેમાં દયાનું અંગ નથી તે ધર્મ જુઠા છે જેમ વગર વરસાદે વાવેલું અનાજ, ઉગવા અશક્ત, અગઢ સમુદ્રમાં ચાલી બીજે પાર જવું મૃશ્કેલ, તેમ દયા વગર ધર્મ હોવા મૃશ્કેલ. દયા વગરની કરણી વૃથા છે; હિંસા પાપ વિષ સમાન છે, નદીઓમાં ગ'ગા, પર્વતમાં સુદર્શન. ભૂપતિમાં ચક્રવિત તેમ ધર્મમાં દયા શ્રેષ્ટ્ર છે મહારાજા, ગ્રાધરે જૈન ધર્મ ઉત્તમ કહ્યા છે તેનું કારણ પણ દયાજ છે.

રાજા—(ગુરસે થઇ) જગતમાં વૈશ્વવ ધર્મ ફેલાયલો છે તે શું ખાટા છે કે તમે તા ખાટા ખાલા લાગા છે કે પાંડિત ઢાક કહે છે કે વિશ્વ જ્યાતિ ગર્ભિત છે. લોકમાં કહેવત ચાલે છે કે અંતે વિશ્વૃત્તેલકમાં જવાતું છે, એ બધું ખાટું કે ભાંચા, જાઓ; તમારૂં એ કથત મારે સાંમાયવું જ ત્યા. મંત્રીએ રાજાના ગુસ્સાને પારખી લઇ વિષય પલટાવ્યા, અને તેમને શાંત પાડી પાતાને સ્થાનક મયા, પરંતુ રાજાના મનની વ્યાધિ મટી નહોતી, તેથી માટું ઉત્તરેલું માલમ પડતું હતું.

રાણી કલાવતી-(રાજાનું મુખ ઉતરેલું જોઇ) સ્તામનાથી હવાના હાર !આજ આપનુ લદ્ભન કરમાયેલું કેમ ? આપને દિલગીર જોઇ પ્રતે ગલરામણ થાય છે!

રાજા-પ્રિયા, તને જેઝ એટલે મારી દિલગીરી દૂર થઇ સમજ એ તા પ્રધાન પોતાના ધર્મની વાત કરવા માંડી અને આપણા

ધર્મને વખાડયા એટલે હું સેજ વિચારમાં ખેડા હતા.

રાણી-મધુકર, એમાં વિચાર શા ? આજેજ હું પ્રત્યક્ષ બનાવી આપીશ કે કરો! ધર્મ સારા છે?

રાણી ગર્વિષ્ટ હતી તેથી તેણે સાય'કાળ વખતે (સાંજે) દેવીને આરાધી એટલે પિશા-ચણી આવી પોહોંચી.

રાષ્ટ્રી—હે માતા! તું હમારી શાભા રાખે ત્યારે ખરી! તતે જલ્દી ખાલાવવાનું કારણ હમારા શત્રુ સુમતિ છે. તેતે જધ માર-પીટ અને હમારા ધર્મ અંગીકાર કરાવ!

આ સાંભળી પિશાચણી રજા લઇ સુ<mark>મતિને ત્યાં ગઇ. **સુમતિમ**ંત્રી</mark> સામાયિક કરતા હતા. એટલે ધ્યાનમાં લીન હતા તથા નાસાથ દર્ષ્ટિ રાખી મુનીની માકક જનેશ્વ-રમાં લવલીન હતા. એ સ્થિતિમાં સમૃતિને જોઇ પિશાચણીએ સર્વ ભૂત પ્રેતને બાલાવ્યા. કાદીના હાથમાં ત્રિશલ, કાંઇપાસે ચક્ર, કાંઇ વાસે ગઢા એમ બવાં કર દ્વથી આરલામ લઇને भूतप्रेत आच्या. देशिये वाधनं, ते। देशिये સિંદનું, કાઇએ સર્પાનું, એમ વિધવિધ વિક્રીયા રૂપ તઇ સુમતિને ડરાવવા તેની સન્મુખ જતા. પણ તેઓ સામાયિક, ધ્યાન અને જીતે ² ૧૨ ભગવાનની ભક્તિ **આ**ગળ તે જમ શકતા નહિ એટલે પાછા કરતા. સુત્રતિ પણ ડરતા નહાતા. આખી રાત એ મુજબ વીતી. સુમતિએ પણ માન છાડ્યું નહિ. અને સવાર થતાં ગણધર વલય (લકતા भरस्तोत्र) ने। तेरमे। भत्र वक्त्रं क्वते काल्यनु રમચ્ણ કર્યું કે તરતજ **રાહિણી દેવી આવી**.

રાહિણી—વત્સ, મને કેમ આરાધી? મંત્રી—માજી, બુએા, આ રહ્યા ભૂતાે. હવે તમને જોકતેજ નાશે છે તે. મને તાે



राय वहादुर लाला घमंडीलालजी रईस, ऑनररी मेजीस्ट्रेट मुज़फरनगर (यु. पी.) (प्रतिद्वित श्रीमान अने विद्वान प्रहस्थः





श्रीमान लाला देवीसहायजी जैन रहीस, फिरोज्पुर छावणी. (जाणीता अग्रगण्य अने धर्म प्रेमी उत्साही ग्रहम्थ) એ રાષ્ટ્રીતું કામ લાગે છે. ઐન ધર્મને સહાય થવા તમાને આરાધવામાં આવી છે.

રાહિણી—ધર્મના ફળને લીધે કાઇ પણ સહાય કરે! સબુર કર, એ બધાને ઠેકાણે કરું છું.

મંત્રી—મા**છ, એમને અક્ષય દાન** દેજો. **રાહિણી**—વાહ! વાહ! આટલા લય આપનાર તરફ પણુ અલય દાન! હા, હા. એજ જૈન ધર્મનું રહસ્ય. એજ તેની ઉત્તમતા છે.

રાહી શૃષ્મિ સહ સા ભુજા થઇ દંડ લઇ ભૂત પિચાશની તરફ મુખ કર્યું કે તરતજ ભૂત પ્રેતને વધુ ડર લાગ્યા અને તેઓ વધુ નાશવા લાગ્યા.

રાહિઓ—કેમ ન્હાસા છા ? ઉભા રહાે. તમારા નાક કાપી તમારા બધા ગુણા ફાેક કરૂં! ખરૂં કહાે કે તમને કાેળુ માેકલ્યા ! ભૂત પ્રેતા પિશાચણીને આગળ કરી હાય જોડીને કાંપતા ઉભા રહ્યા.

પિચાશણી—(થર થર ધુજતી હાય જોડી)—" માતા, મને માક કરા! મને રાણીએ માકલી છે."

રાહિણી—" શું તું નહેાતી જાણતી કે આ સુમતિ જેવ ભકત છે! સમ્યક્તી છે! સમ્યક્તી છે! સ્વાનસ્થ છે" એમ કહી ખધા ભૂત પ્રેત અને પિશાચણીને ખાંધી લીધા.

પિચારાણી—માતા, મારામાં વ્યવ<u>શ</u>સ્યુ ભરાયલા છે. હમે પાપ કર્યું! આટલીવાર જવા દા અને અમને છેાડા.

મંત્રી (**રાહિણીને**)—માતા, એના મંધ છેહા, એનું કર્યું એ બોગવશે.

વૈક્ષિણી—સાધુ પુરૂષ, એ લણાને દુ:ખ દે છે માટે એ છોડવા યોગ્ય નથી. રાષ્ટ્રીનું કહ્યું કરી તારા જેવા સાધુ પુરૂષને દુ:ખ દેતાં–અરે મારાથી એ કર્યા પણ નહીં ?

સુત શ્રેત અને પિશ્વાચણા રાહીણીને પગે પડી સુમતિ પાસે આવી **યાચના** કરવા મંડ્યા—''હે જીને ધરના ભક્ત ! તમા હમારાથી શ્રેષ્ટ છા, તમા દયાળુ છા, તમા હમાને જી-વતદાન આપો. હમારા અપરાધ ક્ષમા કરા. હવે હમાને જૈન ધર્મ આપા કે જેથી હમારા કર્મ કપાય, એટલે આગળ કંઇ સારી ગતિ થાય. ''

મંત્રી-જગતમાં ઉત્તમક્ષમા આદિ દશ્ય ધર્મ વિખ્યાત છે. એ દશ ધર્મ દઢતાથી મહુષ્ કરનાર અમરનાથ (મેાક્ષ) તે પામે છે, એના જેવા બીજો ધર્મ નથી. તમા મન વચન કાયાએ જૈન ધર્મ આદરા. જો ભવાદધિ (સંસાર સમુદ્ર) તરવા હાય તા જીવદ્રથા કરવા સતત વિચાર રાખા અને પ્રયત્ન કરા. તેમ નહીં કરશા, તા સંસારમાં અમ્યા કરશા.

એ પછી ભૂત પ્રેત પિશાચણીનું છોડી દઇ રેહિણી વિદાય થઇ એટલે પિશાચણીએ રાણીને એ હકીકત કહી અને ઉપદેશ આપ્યા, જેથી રાજા રાણીએ પણ જૈન ધર્મ અં-ગીકાર કર્યાં, વ્રત લીધા, સુમતિનું સન્માન કર્યું અને તેના ઉપકાર માન્યા. પછી તેની પાસે મંત્ર માંગ્યા અને હંમેશ તેના પાઠ કરવા માંડયા. રાજા દિન પ્રતિદિન જૈન શા-અમાં પ્રવીણ થયા અને કેટલક દિવસે તેણે મહાવત અંગીકાર કર્યાં, પરિષઢ સહ્યા, મુનિ થયા, અંતકાલે તેણે સાંન્યાસ લીધા અને પછી કેવળશાન ઉત્પન્ન થઇ, ઉત્તમ તેજસુકત મુખ થયું અને આયુ પૂર્ણ થતાં અમરપદ (માક્ષ)ને પામ્યા.

कथा १२ मी.
संपूर्णमंडलक्षशांककलाकलाप
शुश्रागुणास्त्रिभुवनं तव लंधयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं
कस्ताभिवारयति संचरतोयथेष्टम् ॥१४॥

चित्रं किमत्र यदि ते तिद्शांगनाभि नीतं पनागपि मनो न विकारपार्गम् कल्पांतकास्टमरुता चलिनाचस्टन किं मंदराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ॥१५॥

અથ:--મંપૂર્ણ ચંદ્રની કાન્તિ જેવા તમારા ઉજ્જવલ યુણા, ત્રણે જગતને ઉલ્લંધન કરીને વ્યાપિ રહ્યા છે, કેમકે ત્રણે જગતના અત્ય એકલાજ સ્વામિ છા; તેથી તમારા આશ્રય કરીને રહેલા તે યુણાને પ્રચ્છા પ્રમાણે વર્તનાં કાર્ણ અટકાવી શકે એમ છે? ૧૪.

હે પ્રભા ! દેવાંગત એ તમારા મનમાં કિંચિત માત્ર પગ વિકાર સાવી શકે તરિ તેનાં શું વ્યાશ્વર્ય છે ! કેમક પ્રસય કાળ હૃ પવતથી તમામ પર્વતા કેલે છે, તેપણ મેફ પર્વતનું શિયર શું ડાલે છે! અર્પાત્ કદાપિ નહિ. ૧૫.

भक्ताभर स्तात त्रज्ञांतरस्थ ने। वैद्र भते पंदरमें भंत्र उँ हाँ अई णमो विद्रल महीण अने उँहाँ अई णमो दशपुर्वाण अनुक्रमें भक्ताभर काव्यता वैद्रम अने सहरमां काव्य मां भूनीश्राणे गर्कित राणेते। छे पस्ति व्यथी त्रसुकर्मनी निर्करार्थे सारमान

તીર્થક શ્રી શ્રી વાસુ અથ મુની શ્રી તે મત્રના કળ નિશે કથ કહે છે કથા ઉપરાંત એ મંત્રનું વિરોધ કળ એ છે કે ચાલાના મંત્રને વિધિ સહિત જપવાથી વૈતાલા દિક્યી થયેલા ઉપત્ર્ય ટળે છે, અને પંદરમા મંત્રને વિધિ સહિત જપી મુખે તેલ લગાવી કરળારમાં જવાથી સત્નાન મળે છે.

મેત્રાડ દેશનાં કેતુપુરી નગરી ઘરાતી પંક્તિ અને જાતાવી સુશાનેત હતી. તેન રાજ શિતવર્તા હવી ઘોડા અનંદ પુષ્કળ વિભૂતિ સહિત દૃષ્ટી દદ દઇ પ્રજાને પળી રતિસમ કલાવતી શુશીલા, સંયમ યુકતાજન ધર્મ પરાયજા રાજી કલ્યાજા સાથે સખ ભોગવી ન્યાય નીતિથી રાજ્ય કરતા હતા, રાણી કલ્ય છી મિથ્યા મનનું ખહત કરી પ્રતિદિન પ્રાત:પૂજા, અભિષેક અષ્ટ વ્યથી કરતી, લકતામર કાવ્યનું પઠન કરતી, ગુફના મુખયી શાસ્ત્ર પૂરાણ સાંભળતી, કુકયા તરફ જરાએ લક્ષ નિર્દ આપતી, યતિ વ્રનીના આદર કરતી અને ત્રેપન ફ્રિયાનું ખાયરણ કરતી હતી

હવે એક દિવસ રાજા વનક્રીડાએ ગયા. ત્યાં કામમુક ગાળી ખાધી, તેથી અસંત ક્ષુધા લાગી એટલે ભુક્યાભક્ષ્યતા વિચાર ન કરી રાજાએ વિકારી વસ્તુ ખાધી, **કામે** શ્વરીરની વ્યાકુળના વધારી અને હૈયાહેયના વિચાર જો નહીં. કહેતા છે કે–''ઉંધ ન જામે ત્રે ખટ ભૂખન જામે સુધા ભાત, ⊭શકત જુએ જેતંક∞જાત" તેય કામી **અધ** પુરુષને સર્વ સ્ત્રી સમાન ભાસે 🦃 રાજના વિચાર ક્બહિયુક્ત થયા અને તેમને ધેર नाभनी हासीपर આવી **સ**ાંત પાત SIM હે**ાવાથી** અટકાવે કાત ? વચું! રાણીને ખૂબર પડતાં મનના વેમને શાત પાડી (મનાગત)--ખાના ખરાવ્યા અવનતાતું વ્યારેપાયું ! 🤨 🐐 કુલની પ્રતિષ્ઠ ગામ! હવે ઉત્તન કૃષ્યન. આશા વિન્મી ! જયા કુલાકુલતુ જ્ઞા[ં] ન**હીં** ત્યાં કુકુલની ઉપ્તત્તિ! ખેર, પણ રાખવી કેમ ? દ્રા. શીલ મહાવન ધારણ કરૂ ! કાના દેવ ? મારૂં શરીરજ દેવ સક્ત છે. શરીરતે શુ ? શરીર મારું ક્યાં છે ! ત્ય રે શરીતને શે ભાવનાર શુંગાર મારાં ક્યાં ? ૩૫ શું કામતું ? ત્યારે તા સર્વ ભાગ તે ભુજંગ (લર્ષ) લમાદ ! પરિગ્રહ યુક્ત ઘ- તે મસાના ! બવાતક દુઃખત સ્થાન ! જમ, જાસ, જગમાં છે-ત મે સુખ રૂપ જાસ્યુ તે દુઃખરૂપ ભાન્યું! હવે કુટ વતી મેડી પશ્રમાં રાખા મેહ ક્ષ ફાસીએ લટકો સંલાર સમુદ્રમાં ડુઝી રહેવા કરતાં

ભડા કાડા મહિયાસ તાડી જીવપ લગવાનની લિકિત રૂપ નાવ જોડી સુક્તિયુંની પહેંચુ કે ત્યાં અચળ સુખ મળે. ખીરને વ્યક્લે નીર મળે તેરએ શુ ! પુષ્પ શૈયાને ભદલે કંટક શૈયા હાય તાએ શુ ! કાના પતિ, અને કાના સોહાગ ! હવે મારે મન વૈંરાગ્ય! વૈરાગ્ય!! ખસ, વૈરાગ્યથા મને સુખ, કુડુ ભને સુખ અન કુકુલનું જશે દુઃખ!!! ઠીક ત્યારે, આજયીજ મેં નક્કી સંસાર છાડ્યા! અને પ્રભુયા રનેહ જોડ્યા!! મોહ પાસ ફેડ્યાં!!!

રાચ્યા એ ડીલ મહાલત ધારણ કર્યું, પણ તાના કામ વદના શ્વમાં નહોતા. ત રાષ્ટ્રા પાસે ભાગ્યા, તામુજતાએ નાહે ફાવ્યા. રાજા કેમ ?

> **રાષ્ટ્રાં**—તમારા હૃદયને પુછા તેમ? **રાજા**—પતિનું હૃદય તે સતાનુ ! **રાષ્ટ્રા**,—તથાજ ગ્નલ્યુ ફાતનું!!

રાજા— ત્વાન પતિ ॥ કૃત્ત શુ ? સતીની માટે હમેલ પત્ર કર છતા. ક*ે* !

રાહ્યા—કળ કેતા લગ હોળ, તાત વા સાગત હાય કાઇ હિંા, શાભા કહ છ તાન! રાળામાં ગુસ્સ વેક રાષ્ટ્રાળા હેથ પઢડી

તેનાપર પ્રહાર કર્યા, તેને પત્ન ગપર વસડા, તાેમ્ય રાષ્ટ્રા ન ખાસી કે ન હસા, પચ્ચુ નાત ધરી રહા.

રાજા (મનામત) હઠીલી થઇ છે, પશુ દુષ્ટ એક તખત સમગ્તું પછી હો તત્તજ તા મુદ્ર આને સાગવા સારી, તાજ અન્ક ક્યા નયા મળતા ? (રાચીન) કુલવાંતેની અ તાલ રાષ્ટ્રી-કુરયાને ધાળવા અહ્યીતા પ્રાત ?

રાજા ાવશેશ ગુરસે થયા. તેણુ રાચીન ઉચકી મહેલ પાછળ વાવ હતી, તમાં તેને પટકી પાતે પલગ પર સુધ ગયા. રાચીને ઉચકવામાં આવી, સારથી ગણધરવલયના (મક્તામર સ્તાત્રના) મંત્ર ૧૪ અને ૧૫ તું ૧૮ન રાણીએ કરતા માંડયું હતું અને વાતના પાણીએ રાણી પહેંચે, તે પહેલાં ઝંભાદવીએ આવી સિંહાસન સ્મી તેપર રાણીને સહી સલામત બેસાડી દીધી, અને પાતે તેના મોંઢા આગળ નૃત્ય કરવા લાગી અને તેના અનુચર વાજીત્ર, તાલ, મૃદ્દ ગ વગાડવા માંડયા.

રાજાને કાને આ અવાજ ગયા, જેથાં તે ચાંકયા. ખારાંઅથાં તે જુએ છે, તા રાષ્ટ્રી સિંહાસનપર ખેઠી હતી અને સિંહાસ-નના તજથા રાષ્ટ્રીના તેજમાં પણ વધારા થયા હતા. આથા રાજા તે વાવ પાસે ગયા.

अ स्माद्धवी—र हुष्ट, डियाहिन भाति-दिन राग्न ! त अ ध यछ सुराहा राष्ट्रात्त वगर विवेड आंध डुपमां नाभी! ठीड यखें डे ओखे म त्रने। जनप डेथी. ते नीय नारी साथे वणी दिनस अपडूल डर्यु अने तेथा सातमा नर्डतु न्य खु आध्य. ढवे तने श्रं शिक्ष डइ १ तु अना अखु आखे छे १ अ संवना छ. साझ । शरेनमधी डूण मंडन गुण्या छे, तेना साथे त आहरी डरण् भरभन भरता!

રાજા— માતા, ક્ષમા કરા મેં મિતિ હતે દુષ્ટ કાર્ય આદર્શું ઠીક થયુ. વિવિ અ મળ બાવી. લાખ ભુતનાંથા પાડવ ઉગર્યા તે પન્યુ ા વિવ જ સુદ્ધાન રાઠ માટે શુળી નું ાસ હાસન થયુ, ત પન્યુ વિધિયાજ. શ્રી તાળા લન્દ્ર તથા ત પન્યુ ા તિવચજ. મન પન્યુ ા વિવાજ સ્ત્રબુ નહું કશું? બહુશું કહું ? ક્ષમા કરા નાતા, ક્ષમાં કરા. હું હવ મન્યુ પર્વત અવુ નાઢં કરં. દેતા, તનારી સાક્ષા અ પ્રતિશા લાલ છુ; મા શીનવા આપો; કલ્યાથી રાચી લિતાય બીજી બધી આ માતા સમાન છે.

દેવી-કલ્યાના રાષ્ટ્રીએ મન વચન કા-યાથી શીળ મહાવત લીવું છે. હવે એ કર્મની ફાંસીમાં પડે એમ નથી, રાજા–મારે પણ શીલ મહાવ્રત અંગીકાર છે.

અાટલું એાલતાંજ રાણી સિંહાસન ઉપરથી ઉઠી અને તે ઉપર રાજાને એસાડયા અને તેની પૂજા કરી. રાજાનું માન ગળી મયું. તેણે વિવિધ જાતના વસ્ત્રાભૂષણ મં-ગાવ્યા.

રાહ્યી—મહારાજ, મારે એ આબૂપણ નકામા છે. મેં જૈન **દિક્ષા** લેવાના નિશ્વય કર્યો છે.

પછી રાષ્ટ્રીએ દિક્ષા લીધી અને મેાક્ષ માર્ગના રસ્તા પકડયા. પ્રજમાં ઉત્તમ ખ્યાતિ પ્રસરી અને મંત્રના મહિમા વધ્યા, તેમજ મનવચન કાષાથી શીલ વ્રત પાળવાથી રાજ-રૂપ કલ્પાંત કાળના પ્રહાર રૂપ પ્રચંડ પવનથી પશુ મેરૂ સમાન અચળ વૃત્તિથી મળેલા કૃળના ચુશુગાન પ્રજમાં પ્રસર્યા. બારમી કથા સંપૂર્ણ. (લેખ અપૂર્ણ.)

हिंदनी आधुनिक स्थित.

(લેખક:-ગજેન્દ્ર) ---->>≪----કાહરા

એક વખત એવા હતા, જાતા માલ વિદેશ, પરદેશી આવે નહિ, જરા ન થાયે એશ. બાયકાટ બકવા કરે, હુજુ ઘણી છે વાર; સંપકરા સા સાથમાં, થાયે દેશ ઉધ્ધાર

રાળા અથવા કાવ્યછંદ. કાગળ પેન્સિલ ટાંક આંક ટાંચિણયે ભાળું, મળે ન દારા સાથ થાય દરજીનું દિવાળું; હુન્તર ધંધે હદ દેશમાં વાગ્યા હેંકા, મરા તરત અકળાઇ વિલાતી ન મળે પે ખા. ૧ મક્તે રાખા રાપ લાવી મીલ કાપડ ચરખા, બાંઇલર બગડે લેશ ટગર ટગ લાળા મરખા

ખગડે એક કામ ખીલા પાટી કે ચક્કર. કહા તમારે દેશ ખતે છે એક ક્રકકડ. ર છત્રિ વિવિધ પ્રકાર ભૂએા પરદેશી આપે, निदं आवे निक देश हरे। शं पर्धा तापे: વસ્ત્રા વિવિધ પ્રકાર મળે તા પહેરા વાધા. लते निक निक हैश वेशमां इरशा नागा. 8 ટીંચર વિવિધ પ્રકાર વિવિધ વિધગાળીબાટલ સ્પીરીટ મલમ શામરીય, પરિમાં કરજો ટાટલ લાખા જાયે દામ દવા દારૂમાં ખપતી, भेण नहीं को अस्त्र डाइटरी धंधे करेती ४ ભલે ભલે મુજ ભાત કવા પરદેશી ચા**ખા**. भनाववा निक देश ६-नर डाइटर **शिक्षहाणाः** દેશી આવધ નામ કામ કરજો કંઇ દેશી. ચરક અને શશ્રુત ગ્રથમાં લેજો ગાતી પ નાર્ણા લાખા લેખ જ્તય ધડીઓળ ભાજ્યાં. अने नहीं निक देश तिकीरी वणायां ताणां લાકડીઆમાં લાખ જાય હિંદથી કાંચકિ દર્પણ તેલ રહ્યું ના તેમાં ઝાલ્યું. ક અર્થ શાસ્ત્રના પાઠ ગાંખીને કરિયા પાઠે. ધન સચયને માટ હજામત શોખ્યા હાથે; કાતર અન્ત્રા હુસ તરેણી નાતમ જ્યાંથી, આવે નહિ નિંજ દેશ હજામત કરશાક્યાંથી. ચિત્રા વિવિધ પ્રકાર વિવિધ ગાળા ઝગઝગતા, જાઓ જરા ધરદાર શાબીતા હાથે તકતા; સુવા છત્ર પસંગ રંગ એક્શાડ ગદેશે. ત મળે દેશા એક મળે પરદેશી ધકેલે. ૮ ધર સ'સારી કાય હશે ધરમાંની ચીજો, જીઓ વિલાકો આપ મળે ના દેશી બાજો; ચ[ા]યુ કાતર શ્રેષ્ટ **સુડી** બારીના પડદા, મળે ન બાજું નામ પડે પરદેશી ગડદા. & જાિકટ પાકિટ કાટ વળી લાકિટ વિદેશી, ન મળે જાતું એક થીગડું ધરમાં દેશી, હાંડા ગાયર ત્રાંશ માલ દેશી ના પામા, ટીન તપેલાં **હાય થયે**। ઠીકરના જામા. ૧૦ पटन भभीश ट्वाब ट्रंड ताणां तिन्त्रेरी, વાર્નિશ ડામર લાખ રખર ખ્લાકિંગ બિક્ષારી;

થાય વિલાતી કટ ચાહ કાંપીને ક્રાંકા, આહ્સકીમ આહેસ માહમય હાય વિલાકા. ૧૧ કાગળ કવ્વર કર્યાર્ડ નાટપેપર છાક બાઇન્ડર, સ્ટીલ હાલ્ડરને પેન પથર પાટિને પથ્થર; વિવિધ રંગ રશના છ બિલારી ખડિયા સંદર, પૈન્સ્ટેન્ડ શુકસ્ટેન્ડ ખેલ, રખ્યરસીલ ચુંદર. ૧૨ જુઓ બગીચે ઝાડ વિલાતી સર્વ જણાયાં, નહિં સુગંધિ સાર કૂળા નહિ મિષ્ટ ગણાયાં; પતરાં સાંકળ ચુંક ઇશ્કર ઘરપર નળીયાં, રંદા કરસી સિમેંટ લાદિ પરદેશી ભળિયાં. જાઓ જઇઝ૮ પ્રેસખીળાં રૂલ શાહી વિક્ષાતી, સર્વ વિલાતી કામ નામ પણ હાય વિલાતી; રમતાં ખાળક ચિત્ર ખાવલાં આપ વિલાકા, દળ વિલાતી લોટ ઘંટિ ઘરન મળે કેખા ૧૪ બળ કદી ઘર ગામ વિલાતી બંબા આવે, સંદે જ ૧ સિંચાય પલકમાં આગ બુબાવે: દાેરા **રેશમ** ઉત કસળ મખ્મલ્લ પ્રકાશે. ધાતિ પાતિ સર્વકહાે શું હિંદીએ છે. ૧૫ ફેટિન બર્મિયા પ્યુન અશ્વરથ હોય વિદેશી, પૈસા અરધા પાઇ રૂપૈયા ન મળે દેશી; પાઉંડ ગીનિ ને નેહ કરે દમદોટ બજારે. તીનક મીનિટ ને કલાક માસ સનવાર મળારે ૧૬ **ગૈલ ૪૮ ક**'ચ યાર્ડ માપ સહૂ થયાં વિદેશી, તાેલ રતલ તાેળાય એહમાં ન મળે દેશી જેલર જેલા જડજ નામ હાદા નહિં હિંદી **એાલ**ંતા ગુડબાઇ નમન પરદેશી વંદી. ૧૭ ઇશ્કિ ખંદા ≇માપ રાેફ રાખે પરદેશી, ધ્ય કપુર ઉદબત્ત પુજા પાત્રા પરદેશી; વિલાયતી તાવેલ નાટકા હાય વિદેશી, ભજન રૂદન ને ગાન એહ પણ મળે ન દેશી. ૧૮ શીરપર સુંદર પાલ ટાપી રમાલ દુપદા, ધરા અંગ પાસાક વિદેશી લાગ્યા ચડ્ડા: લખા કહીં જો પત્ર તેહપર ટિકિટ વિદેશી, તાર ટેલિફાન યંત્ર મંત્ર પરતંત્ર પ્રદેશી. ૧૯ બખ્યા **ખાટલ હાય દેશ**ની દાલત નાઠી, ચક્રમા જાતા અધ ધર્માધળ બનશે માઠી: કંગા સાધુ તેલ ધરોા દાંતે જે ભૂડી, કરવા દાતણ ખુસ ગારસી જોતાં નૂકી.

બાઇશીકલપર ચડી ઝડપથી ચાલા અક્કડ, સીકલ કરી છે દેશ જાણ્યું ના જરિયે ક્રક્કડ; ટટે રખ્યર ચાક ઠેયક ઠેય પડશા હેઠા, કહા ખતે શું દેશ કારિગર ઐવા દીઠા. ૨૧ ખ'દ્રક ખખ્તર ટાપ ક્રિસ્ચ ભાલાને તાેપાે, રફલ તમંચા માંહિ દારૂ પરદેશી રાેપાે; ખને નહિં નિજ દેશ એક પણ હાય કડાઠા, મળે ત કાર્તુસ કેપ ચુપ્પ થઇ જાય ભડાકા. ૨૨ એન્જીન ગાડી સર્વ ગર્વ બળિયાના તાડે. પરદેશી સ્લીપાટ તેહ પર ઝડપે સહ અંગ્રેજી કામ બાલીમાં બેશ ચલાવે, સ્ટેશન માંહિ ટિકિટ તેહ પરદેશી આવે. ૨૩ નહિ કા દેશી નામ કામ સહ ઠામ સપાટી પરદેશોપર પ્યાર દેશની દાેલત નાઠી; ચાઢ ચિર્ટ ચંપ્પીન સાહ લીમ્લેટ લવડંર. ભુસુકામાં બુલિભાત ખુડેની થાય ગવંડર ૨૪ સુતાર સાેની કામ સફ એાઝાર વિદેશી, કરવત કાનસ આદ્ય એક નહિં એમાં દેશી: ધણ એરણને મૂપ સાંણશી વળી સમાણી, લુદ્વાર લાહાં લાખ ધમજામાં જાય કમાણી ૨૫ દરજ દાલત જાય ખરીદે સીંગર સંચા. કારીગર શું ખાય વિચારા હીંદી પાંચો ધાળી પ્રસ્થિત કામ નામ નહિં દેશી જેમાં થાય પરદેશી તેમાં ૨૬ વણકરને ર'ગાટ સંચા લાખા ક્ષેખ સહ પરદેશી ચાલે, થાય ઝડપથી કામ ઝડપ નહીં દેશી ઝાલે; રહ્યું હજામત કામ જેહ સંચાવિહા ચાસે, કાતર અસ્ત્રા આધ હાથ ૮૫૮પિયા ઝાલે ૨૭ એમાં પણ ઇગ્લિશ રીશ નહિં કરશા ભાઇ, થયું વિદેશી સર્વ દેશીમાં ન મળે પાઇ; દિતાળી દિન મધ્ય સમય ધન, દ્રષ્ટિ ટાંકે, નીચે દ્રવ્ય અનત કુડ કુડ થાય इंडाई २८ મુંબઇ મધ્ય બજાર દીઠાં પરદેશી કુ-તાં, નહિં દેશીનું નામ ગધેડાં ખચ્ચર કરતાં, પરદેશી બહુ ખાલ બગાડી ચુજેર ભાષા, અભાગા એારત વાળ ખાલમાં કરે તમાસા.

श्रीमंतोने शीखामण.

(ત્રગગરથી)

[હેખક:-હાથાંચદ માર્ફ્ડકચદ શાહ, સુંભાઇ.]

સહ શ્રીમંતા મુખ્યાન, શ્રવણ ધરજોર; કઇ દશ સુધારા યાય, એવું કરજોરે; इस हुर्भणने धन हान, हु: भड़ां ढरकोरे; आ अवसागर सब सात, रहेके तरकोरे; १ આપી હવર હદ હિ દે વધે, કરજા તે ાં કામ; દેશી દુ:ખ દુરે થતાં, રાઝે શ્રી ભગવાન. ર કૃરિ કૂલકામા ફેર; લાખ ઉડાવારે, કરિ ન્યાતવરામાં નામ, દેશ કુળાવારે; કંઇ રેચાને માટા ધામ, નામ કરાવારે, કંઇ જે. પી. નેસી એસ ચાંદ ધરાવારે ક સાખો-તેમાં શું દહાડા વળ્યા, સમજો શાહા શેઠ, નજરેથી નીરખી જીઓ, દેશ પડયા છે ઢેઠ. ૪ સહ ધન ખરચા ધનવાન, દેશ સુધારાર, નહિ મમતે રહા મસ્તાન, કામ કુધારારે, शीह हाडीने हरलार, हाम छवाराण, क्या भेरिएरने द्वार, शीह पधारारे. प આપી-ઘર મેળ કામા પતે. પચે નાંદ પંચાત: કારટમાં કામા જતાં, મળે વીસના સાત ક સદુ ધન્ય ગણા ધનવાન, ધશ કુપાયરે, મળા લીક્ષ્મ લીલા લ્હેર શ્રેષ્ઠ કમાચેરે, ધન્ય માણકના ગુખ શેઠ, સાથેક થાયેરે, નહિં માત્ર ઉતારા વેઠ, વ્યથ કમાયેરે. હ **આપી-**માનવ'તા માર્જોક જ ભા, હીરાચ'દના તબ; સાર્ધકતા કેવી કરી, સદ વિચારા મન. સહ મુંબાઇમાં વખબાય, દેશ વિદેશેરે: ગુણી માણકતા ગુણ ગાય, કાવ્ય કથાયેરે: કુઇ બાંધ્યા માટા ધામ, લાખ પતાયરે; કંઇ કેળવસાના કામ, શ્રેષ્ઠ મહાયેરે. ૮ સાખી-થયા તેના થાએ ઘણા, માર્ચક સમ મુણવાન; દેશ દશાને જોઇને, કરિયાં કેવાં કામ, હ વહું ભાળ ભાગ ભતાં ભાગ, બાજન વાર્યાર, નાઢે બાજા કા બળવાન, જણાવે ખાસીરે; ખુદુ ખર-યા લાખા દામ, દૂજર ધધરે; કહેા બાજા કામએ કામ: કરીયા હિ દેરે. ૧૦ **આ ખી**-લીમ તે શાધી જુઆ, મધી મહાવા નામ; માણેક સમ બીજો કહેા, કોલાં હાેય કામ. ૧૧ શ્રી મોંકર ભાર્હિ ન ધામ, અક્ષર જેવુ રે; બન્યુ સ્વર્ગ સમાન અધામ; જાણા તેવું રે; न्यां विषितिष क्रोध रीत, ज्ञानक यायरे; न्या हशन करवा क्षाक; नित्ये कायरे. १२ **સાખી-ડીરાભાગ** જેવું વહ, બાજુ મેટું ધામ; નામ પિતાનુ દીપપ્યું, કાંધુ રૂડું કામ. ૧૩ લાં દ્વાગ્રહાતુ વામ, બાંધ્યુ સાર રે; બહુ દર્દી રહવા કાજ, રાખ્યુ ન્યાર રે, જ્યાં <u>દ</u>્રભળ માટે માન, એાયલ પામરે, જ્યાં દુ.ખીયાનાં <u>દુ</u>:ખ જાય, દ્રદે વિરામેરે. ૧૪ સાખી-દ:ખ ટાળ દાર્દેતહ્યું; આપે જીવતદાન; પૂન્ય થકી પરિયા તરા, રિ છે, શ્રી ભગવાન. ૧૫ ધરી દશ્ચતથી દિન દાઝ, માઠ મહાવારે. કરી સરકૃતની કાલેજ શાસ્ત્ર શીખાવારે, જ્યાં ત્યાય અને ાસદ્વાત, જ્યાતિય જાગુરે, જ્યા મત દશન વટ્ કર્મે, સાધ્ય લાગાવેરે. ૧૬ **આપી** - જારા દેશ દારેદ્રનો, યાત્રા ગૃહ સંભાળ; જાવ વ્હેમ કુચાલન, ભણતી બહુએ બાળ. ૧૭ શાં 'શાલકાશ્રન' બેશ ખ્ત સુધાર્ધુર; ત્યાં લેતી સીના બાળ, ત્રાન રસાળું રે सां भरत श्री रखूना काम, पाक पकावरे; वणी शुबका ने शुक्तगान, दाशीय के गावरे. १८

श्री समेदशीखरजी तीर्थ.

वर्णन तीर्थस्यळाचे मंगळपद ज्ञानसीरूय दायकसें। संसार जन्मदुःखे वारितसे रवि जसा तमास तसें॥१॥

(एक आधुनिक कवि)

પરમપૂજ્ય પરમપવિત્ર મહાન સિદ્ધક્ષેત્ર શ્રી સમેદશ્રીખરજીનું વર્ણન વાંચતાં જાણે તે દુર્ભીનથી સામું જણાતું હોય તેમ જણાય છે. સિદ્ધક્ષેત્રના જૈન મત મજબ બે પ્રકાર છે. એક સિદ્ધક્ષેત્ર એટલે જે ઠેકાણે પરમ પૂજ્ય તીર્થકર માફ્ષે ગયલા છે અથવા જ્યાં કેવળી, અને સિદ્ધ સ્ત્રફ્ર થયા છે તે અને બોજો અમાંતશ્ય ક્ષેત્ર એટલે જે સ્થાન મુનિ, મનાહર મૂર્નિ વગેરેના પાગથી પૂજ્ય થયું હોય તે. એવાં સિદ્ધ ક્ષેત્ર ૧૯ છે. અન અનિશ્ય ક્ષેત્ર ૨૧ છે, તેનાં નામ નીચે પ્રમ એ—

સિહ્ફોત્રો—૧ સમેદ શિખર, ર શ્રી ગીરતાર, કર્યા તારાપુર, ૪ શ્રી ચપાપુર ૫ શ્રા માંગી તું ગી ૬ શ્રુ નુકતાનિર, ૭ શ્રી નિહ્દ વરકુટ, ૮ શ્રી પાતામઢ, ૯ શ્રા શેત્રું જા ૧ શ્રી હતાણી ૧૧ શ્રા સેતાગી ગી ૧૨ શ્રી નૈતા ગીરી, ૧૩ શ્રી દેવસાગીરી ૧૪ શ્રા તરગાછ ૧૫ શ્રી કૃચલાગરી ૧૬ શ્રા ગજપંચ ૧૭ શ્રી રાજ્યુદ્દી, ૧૮ શ્રી યુણ્ય ૧૯ શ્રા પટણા

भितिशय देने — १ अथे। ध्या, रतन्युरी. 3 श्रान्ती नगरी ४ अनारस पित छपुरी १ यंद्रपृरी ७ इन्द्रअपुर ८ है शाला ७ इ पित्र १० शारीपुर ११ इंटिनन पू. १२ ऑहपूर १३ देशी आन थ १४ अन्ति पास । थ १५ में मरस्तामी १६ विद्यान छ. १० भित्र छ १८ कैना मेदी, १७ मू ते मेदी. २० अदिक्षेत्र छ. २१ आछु.

એ પ્રમાણે ૧૯ સિલ્લોને પૈકી સવંધી ક્ષેષ્ઠ અને પવિત્ર એવું જે શ્રી સમેદશિખરછ તીર્થ તેનું વર્ણન વાંચકા સમક્ષ આજે અમે સચિત્ર રજી કરીએ છીએ.

આ ક્ષેત્રનું સમેદગિરિ, સમેદાયલ, સમેદશિખર અને શિખરજી એવાં નામ છે.
તેન સિવાય બીજા લેહિ એ પહુડને પારસનાથ પહાડ એ નામથી એલબ છે. એ
પહાડપર જેનાના પરમપુજય ૨૪ તિર્થકરા
પૈકી ૨૦ તીર્થકરા, અસંખ્ય મુનીએ સાથે
મેલ્લે ગયા છે. બાકીના ૪ શ્રી રૂવલનાથ, શ્રી
વાસપુજય, શ્રી મહાવીર, અને શ્રી નેમીનાથ,
એ અનુક્રમે કૈલાસ, ચંપાપુરી, પાવાપુરી
અને ગીરનાર પર્વતપર માસે ગયા છે.

'કરા તેવું પામા 'એવું જૈત ધર્મનું આ પુરુવક્ષેત્રનું દર્શન તત્વ છે. તેા માત્ર કરવાથી જીવાએ કેટલાંક અશુભ કર્મનાં આસ્ત્રવ બાંધેલાં **હે**ાય, તે તૂટી **શુભમાર્ગી** જીવ છેવટે જન્માંતનાં કર્મથા મક્ત મે ક્ષાધિકારી થાય છે, તાપણ અને પુરુષ ક્ષેત્રનં દર્શન થવું એજ ભાગ્યની વાત છે બવા જીવા સિવાય તેનં પ્રાણીઓને કેટલાક નથી. અભવ પ્રયત્ન કર્યા છતાં તે ક્ષેત્રન દર્શન ન આવે છે. આંખે જરતામાં જ **રાગ થ**ઇ અધત્વ આવે છે અને એકદમ પાછા કૃરવું ાડે છે. રાજા શ્રે અકના સળધમાં આવે જ વલ્લે ત્ર મળા આવે છે. મુનીના ધાર ઉપસર્ગ કર્યાંથી તેને નર્ક ગતિ પ્રાપ્ત થઇ, પછી શ્રી ભાવાન મહાવાર સ્વામીનું સમાશાયા રાજ-ગૃહાત વિપુલાચળ પરંતપર ગયું ભારે તેતા દશ થા તેનુ નિર્શકર ગેત્ર બધાયું, તાપણ હતા હતિ ખંધ કર્માન થતાં રિયક્ત ખંધ નાત્ર કર્મો ાયે. પછી તે સમેદમીરિ દેશ ્માટે નીક્લ્યાં. યારે તસ્તામાં વિવિધ પ્રકારનો સાક્રેટ તેની પાછળ તરતજ લાગ્યાં હતા. સારાંશ કે શુભ

ક્રમોના ઉદય સિવાય અન્ ક્ષેત્રતું દર્શત કાઇને **પશું નથી**.

કપાળ અંગ્રેજ સરકારનું રાજ્ય **હિંદસ્થા**નમાં શરૂ થતાં જ્યાં ત્યાં રેલ્વેના પ્રસાર થયા. તે પહેલાં આ ક્ષેત્રનું દર્શન ત્રણા પ્ર-યાસથી અને મહાન ખર્ચથી થતું. તેથી પૈસાદાર સિવાય ખીજાઓને તેના લાભ કવચિતજ મળતા. યાત્રા કરતાં ઘણી ઘણી જાતનાં સંકટ ં ભાગવવાં પડતાં. નદીઓ. વગેરેમાંથી પાર થતાં **ધણો** ભાય લાગતા. વળી કાઇ કાઇ ટેકાણો નશીય જોગે લટારના દાયમાં સપડાઇ જવાવી જીવતયાત્રા પૂરી પણ થઇ જવી; પણ હાલમાં શ્ચિખરજથી સાત કાશપર રેલ્વેના ખે કાંટા નીકળેલા છે. તેથી યાત્રા સપૂર્ણ સખકર થાય ે છે. આ મેં કાંટા પેકી એક મધુપુરથી ગી-રીડી Giridih જાય છે. અને બીજો અડ સ્ટેશનથી પ્રસ્તી (Isri) જાય છે. પ્રસ્તીયી મધવન ચાદ મૈલ છે.

તથાપિ ડુંગરાથી પગ રસ્તે જતાં ઇઝો-થી શિખરજી ક્કન છ મૈલ દ્ર રહે છે, પરંતુ આ ડુંગરથી રસ્તો લગ્ના ખરાય હૈાવાથી યાત્રાળું એ રસ્તે ન જતાં ઇઝોથી મધુવન સુધી પાકી સડક ભાંધેલી છે ત્યાં થઇને જાય છે. ઉત્તર હિદુસ્થાનના યાત્રાળુને ઇઝોના માર્ગ સરળ પડે છે

ઇસ્રીથી જનારાને નાગપુર, ચક્રધરપુર અનારા, ત્રાેમા, ઇસ્તી એ માર્ગ ઠીક છે. એ મ્રિયાય ઇસ્ત્રીના સ્ટેશનપર ગીરીડી પ્રમાણે ગાડાંની વિશેષ સગવડ નહિ હોવાથી ત્યાં જનારાને લણા ત્રાસ પડે છે. ગીરીડીથી જનારાને લણા ત્રાસ પડે છે. ગીરીડીથી જનારા લોકોને ચક્રધરપુર, આસનસાલ, અને મધુપુર એ ત્રણે ઠેકાણે ગાડી ત્રદલવી પડેછે. ગીરીડીમાં જેત ધર્મશળા હોવાથી ઉતારને કાઇ પ્રકારની તકલીફ પડતી નથી.

ગારીડાથી ખેલ ગાડીમાં જ 1 ત્રીજ મેલપર પૈખાતાંડ, ચાથા ચૈલપર ગુજિયાઠી. ર્મલપર ભંદર કુપી છે. મ્યાઠમા મેંલપર ખડાકર, અહીં--- ખડાકર એ નામની એક માટી नहीं अने तेने डांडे छेड़ श्वेतास्थर भंदिर અતે સરકારી પાસ્ટ ઓકિસ છે. અને પાલ-गंक कवाना रस्ता त्यांथीक नीडले छे. પછી નવમા મેલપર કવદેશ, ૧૧ માં મેલપર પાંડેડી. તેરમા મેલપર માં ઝેડી. ચાદમા મેલ પર પીરતાંડ, ખંદરમા મેલ પર ચિરપ્યી लकार, अने सेलिमा मैसपर रस्ते। कहा पडे छे. तेमां कमणी तरु हुन्तरीयागनाः ડાળી તરકના શાખરજી જાય છે ર્મેલપર વીરનગઢ **સ્પ**તે અરાડમા મૈલપર **મધવન** એવાં નામા व्यावे छे શિખરની તલાટીમાં દિમ ં બરની /વીસ પંથીએની એકઅને તેરા પંશી-એ તી એક એવી ખે) તથા સેતાંખરીની એક એવી ત્રણ ધર્મસાળા છે. યાત્રાળુઓને ઉત્તર-વા માટે દરેક પ્રકારની સગવડ દરેક ધમેશાળામાં ઉ-તમ પ્રકારે હેાવાથી વે વખતે જનારા લાેકાને દ:ખ પડતા નથી. વીસપ'થી ધર્મશાળામાં નાનાં માટાં ૯ મંદિરા છે. તેરાપંથી ધર્મકાળામાં ૮ અને શ્વેતાંમ્યર ધમેશાળામાં ૧૦ મંદિરા તેજ પ્રમાણે ઉતરવાને વીસપંથી કારીમાં ૧૭૫, તેસપંથી કાર્યમાં ૫૬, અને *વે નાંબર કાદીમાં ૧૪૭ એારડીએા કરેલી છે, તેમ વાસણ પાણીની પણ સારી સવડ છે.

આ કાેકીથી હતત્રા જવાને એક રસ્તાે તીકળે છે. ત્યાં જવામાટે દિવસ ઉગ્યા પહેલાં બહાર નીકળવું જોઇએ, નહિ તો રસ્તામાં રાત પડવાના સંભવ છે. પ્રાતઃ કાળે (ચાર પાંચ વાયતે) અછ દ્રવ્ય લઇ નીકળતાં પહા-ડતી ચંડી અને ઉત્સાદ જનક હવા, અને આસપાસના ભાયને જોતાં ઘણા આનંદ થાય

परमपुज्य परमपधित्र महान तीर्थक्षेत्र थ्री समेदाशिखरजी [२४ तीर्थ करो वैकी २० तीर्थ करोत्री निवाण भूमिनो देखाव.)

" दिगंबर जैन " (सुरत्)

ं **आविकाश्रम**ा मुग्य मंचालक अने स्थारक योगनी गोडिना **मनानवाहै**, मुगोदेंडर **यहो।दाबाई** तथा अस्थाम करनी आविकोओना मृष,)

છે. આ પર્વતની સર્વ ટાચાથી પાસોનાથ પ્રભાની ટાચ પણી ઉંચી છે. તેની ઉંચાઇ મમૂદની સપાટીથી ૪૪૮૮ પીટ છે. તેથી એ ટાય ઘણી ઉંચી લાગે છે. પ્રાચીન કાળમાં મા પર્વત ઉપર સિંહાનાં ટાળે ટાળાં કરતાં, પશ યાત્રાળુઓ ત્યાં જવા માંડતાં તે કુમી થયાં છે. વાધ વગેરે હિંસક પ્રાણીએા પણ લાં અસં-ખ્ય હતાં, પણ હાલમાં કવચિત દેખાય છે, પરંત આજ સધીમાં કાઇ પણ યાત્રાળને bon કરી નથી. મેના પાપટનું મધર ગાયન. કાકિલતા, કહાંત્રિય આલાપ, ખુલખુલ પક્ષીના દીર્ધ અવાજ વગેરેથી એ પ્રદેશ આનંદદાયક લાગે છે. યાત્રાએ નીકળેલા લોકાને આ સ-ધળાથી બહજ ઉત્સાદ વધે છે. વળી પ્રાત: કાળના શીતળ અને સગંધ મિશ્રીત વાય પક્ષીઓના કર્ણ મધર આનંદ સ્વરા અને તે સઘળાના પ્રતિ ધ્વનિ સાંભળતાં અલાકિક આનં દ્યાય છે. અને જાણે આપણે **સ્વર્ગ તુ**ં સુ-ખ ભાગવતા હાઇએ એવું જણાય છે. યાત્રાળુ પાસે ભિલ્લ લોકા પાતાના મધર સ્વરાથી નીચે મુજબ બાલી ભિક્ષા માંગે છે:-

दरशब दीने पारसनाथ, सबके काज स्थारनवाले.
नेया मेरी लडी मझधार, तांपे लेवट हे मतबार,
मैं हाहा लाउं अपार, मेरे काज संभारनवाले, ॥१॥
चिलप मंदिरजीको आप, जपले नंदीश्वरका जाप,
वेतो देते सक्ति हैं आप, त्रिलोकी के ओहदावाले॥२॥
(२)

सामळीआ पारसनाथ, शीखरपर भल्ने बीराजोजी; भल्ने बीराजोजी, शिखरपर भल्ने बीराजोजी-सामळीआ.

એ પ્રમાણે મધુવનથી સરાસરી દોઢ કે શર પર ગયા પછી ચાહાની વાસ આવે છે. સાંતી 'ચાઢા' લચ્યા પ્રસિદ્ધ છે. તેના ખંગાળા પ્રાંતમાં ઘણા ઉઠાવ થાય છે. એની સલળા પ્રાંતમાં ઘણા ઉઠાવ થાય છે. એની સલળા સંભાળ એક યુરોપીયન ગૃદસ્થ રાખે છે. એમ કહેવાય છે કે તેના ઇન્નરા કેટલાક વરસ્થી પાલગંજના રાજ્ય પાસેથી તેણે લીધા

છે. ધણે ઉંચે ચઢયા પછી એ માર્ગ આવે છે. જમણી તરફના રસ્તા ડાક ભંગલા પાસેથી થઇ શ્રી પાર્શ્વનાથની ટાચ તરફ જાય છે. અને ડાખી તરફના શ્રી કુંયુનાથની ટાચ તરફ જાય છે. યાત્રાળુઓ ડાખી તરફના રસ્તા તરફ જાય છે અને સર્વે ડુંકનાં દર્શન કરી પાર્ધનાથની ડુંક પર જઇ બીજે રસ્તે ઉતરે છે. ડાંમી ભાજા તરફના રસ્તાએ ચઢતાં પ્ર**થમ** "ગ'ધવ[°] નાળું" નામની એક જગા આવે છે. સાંધી લગભગ એક મૈલ ચઢયા પછી "સીતા નાળુ" ओ k નામની ખીજી આવે છે, ત્યાંનું પાણી એવું ઠંડું છે કે તેમાં હાય નાંખતાં જાણે આપણે ખરકમાં કેમ હાથ નાંખ્યા હાય! એનું જણાય છે. તે પછી બીજાું નાળું આવે છે, ત્યાંથી યાત્રાળુઓ પાણી ભરી લે છે, તે પાણીના ઉપયોગ પહાડપર ચઢયા પછી પ્રક્ષાલન, પૂજન વર્ગેરમાં કરે છે. આ જગાની ડાળી બાજુ**એ ક્ષેત્રપા**ન ળતું દેવલ આવે છે. સીતા નદીના પૂલ એાળંગ્યા પછી પગથીઓ માવે છે અને ખરૂ વિક્ટ ચડવાનું હવે જહાય છે. કાઇ કાઇ ડેકાએ ચડાઅ એવું મુશ્કેલ છે, કે યાત્રાળને ઠેકા**એ** ટેકાએ વિશ્વાંતિ લીધા સિવાય ચાલત નથી. સારાંશ કે સીતા નાળાંથી ત્રણ મૈલ ચહયા પછી શ્રી કુંયુનાથની ટુંક (પહેલી ટુંક) સધી જરા અધરું પડે છે.

એ પ્રમાણે પહેલી ડુંક જતાં એાછા-માં ઓછા ચાર કલાક લાગે છે. શ્રીકું શુનાથની ડુંકમાં ગહુધરતુ એક નાતું મંદીર છે, ત્યાં ૨૪ તીર્થ કરની અને ગહુધરની ચરહ્ય પાદુકા છે. એ પુરાતન ન જહ્યાતાં પાછળથી બાંધેલું હોવાથી તે વિશે પુષ્કળ તર્ક થાય છે. એ કું શુનાથની ડુંકપર શ્રી કું શુનાથ ભગવાનની સાથે ૯૬૩૨૯૬૯૪૨ સુક્તિ પદે ગયા છે. એ ડુંકનું " ગ્રાનધર ડુંક" એવું બીજું નામ છે. તેના દર્શનની એક કરાડ પ્રાથિધાયવાસ કરવાના ફળ બરાબર પુણ્ય થાય છે, એમ જૈન શાસ્ત્રનું કહેવું છે. એ પહાડપર જેટલી ડું કા છે તે સર્વપર તિર્થકરાની ચરસ્ય પાદુકા છે અને તે સર્વ મ દિરા-સંગમરમરના છે. પ્રત્યેક ટુંક દુર હોવાથી દર્શન, પાદ પ્રક્ષાલન, ગંધ લેપન અર્ધ પ્રદાન એ સિવાય વધારે ધર્મ કાર્ય કરવાના યાત્રાળુ-એ તે વખત મળતા નથી, કારસ્યુ કે પાછા સુર્યાંસ્ત પહેલાં ઉતરવામાં માહું થાય છે.

કું શુનાથની દ્વકનાં દર્શન કર્યા પછી જમણી તરક વળીને શ્રી નેમીનાય, શ્રી અ-રદ્વનાથ, શ્રી મલ્લીનાથ, અને શ્રી શ્રેયાંસનાથ તીર્થકરાની નિવાંસ ટ'કનાં દર્શને જવાય છે. में यार टंडा पर यडवं लड़ डहरा नथी. में પૈકી પહેલી પર શ્રી નેમિનાથ ભગવાન ૯૯૪૫૦૭-હજર મુની સાથે, ખીજા પર અરહનાથ તીર્થકર હહ્હહહ્હ૦૦૦ મુની સાથે, ત્રીજીપર શ્રી મલ્લીનાથ તીર્થકર ૯૬ કરાેડ મૃનિ સાથે, **અને ચાથાપર શ્રી શ્રેયાંસનાથ** તીર્થકર ૯૬-૯૬૦૫૯૫૪૨ મુત્રી સાથે માેક્ષે ગયા છે. એજ પ્રમાણે નેમીનાથ ટુંકનું દર્શન કળ ૧ કરાેડ પ્રાથધાપવાસ કરવા બરાબર, શ્રી અર-હતાથ ટુંકનું દર્શન કુળ ૯૬ કરાેડ અપવાસ કરવા ખરાબર, અને મલ્લીનાથ તથા શ્રેમાંસનાથ में दंडनं दर्शन इण अनुइमे १ हरी। अन પવાસ કરવા ખરાખર છે.

એ પછી શ્રી પૃષ્પદંત તીર્થકરતી ટુંક તરફ વળવું પડે છે, તે સ્થળે શ્રી પૃષ્પદંત ભગવાન ૯૯૯૦૦૭૪૮૦ મૃતી સાથે મેહલે અયા છે. એ ટુંકનું "સુપ્રભકૃટ " એવું પણ નામ છે. તેના દર્શનથી એક કરાે પ્રાથમા-પવાસ કરવાનું પુષ્ય મળે છે. પછી શ્રી પદ્મ પ્રભુતી "માદતકૃટ" નામની ટુંકનું દર્શન થાય છે, તે પર શ્રી પદ્મપ્રભુ ભગવાન હઢ૮૭૪૭૫૭ મૃતી સાથે ધાર તપ કરી માલે મામ છે. એ ટુંકના દર્શનથી એક કરાેડ

પ્રાેષધા પવાસનું પુરય મળે છે, એવું શાઇન-માં લખેલું છે. પછી શ્રી મુનિસુવત, શ્રી ચંદ્ર પ્રભૂ, શ્રી આદીનાથ, એ ત્રણુ તીર્થ-કરાની ટુંકના દર્શન થાય છે તેનું અનુક્રમે "નિર્જરકૃટ, લિલિસ્કુટ" અને "કૈલાસ-ગિરી" એવાં નામ છે, ત્યાં ચકલું ઘણું મુશ્કેલ છે. પહેલાં જે ટુંક આવેલી તે સર્વથી ઉંચી અને ચક્વાને વિકટ એવી ચંદ્રપ્રભુની લિલિસ્કુટ છે. નિર્જરકુટ અને લિલિસ્કુટના દર્શનના મહિમા શાસ્ત્રમાં અનુક્રમે ૧ કરાડ અને ૧૬ લાખ પ્રાેપધાપવાસ કરવા બરાબર કહેલા છે.

આ ઠેકાણે વાંચક વર્ગ એવા પ્રક્ષ કરશે કે શ્રી આદિનાથ ભગવાનની નિર્વાણ ભૂમિ કૈલાસ પર્વત છતાં આ ઠેકાણે તેની ડું કે કેમ જણાવે છે! તેના ખુલાસા એ છે કે જો આ હું ડાવસપિણી કાળના દાપથી ચાર થાંચૈકર (આદિનાથ, નેમિનાય, વાસપુજ્ય, મહાવીર) બીજે સ્થળે માલે ગયા, તો પ્રત્યેક જળ પ્રલય પછી બીજ લેગ પાતાના પૂર્વના સ્થળમાંજ નિર્માણ થાય છે, એવા કાંઇ નિયમ ન હોવાથી આ પર્વત કદત જયાંના ત્યાં કાયમ રહે તેથી હવે પછી થનારા ૨૪ તિથંકરા એજ ગીરી પર માલારાહણ કરશે, એ કારણથી આ સ્થળે ૨૪ ટું કે! કરી છે અને તે સર્વે વંદ-નિય છે;

પછા વિધ્યુતવર નામની શ્રી સીતળનાથ તીર્યકરની ડુક અને શ્રી અનંતનાથ તીર્થકરની સ્વયંબ્ધુટ નામે ટુંકનું દર્શન થાય છે. પહેલી ટુંકપર શ્રી સીતળનાથ ભગવાન ૧૮૪૨૩૨૪૨૯૦૫ મુનીઓ સાથે અને બીજી પર શ્રી અનંત સ્વામી ૯૬૭૦૭૦૭૦૭૦ મુનીઓ સાથે નિર્વાબુ ગયા છે. પછી શ્રી ધવલદ-તકૃટ શ્રી સંભ હનાથ તિર્થક્રાની અને ચાંપાપુર ક્રટ (શ્રી વાસ્યુહત્ય સ્વામીની) અને આનંદ ફ્રટ (અભિનંદન પ્રભુતી) એ ત્રશ્યુ નિર્વાણ ટ્રંકનાં દર્શન કરી અતુક્રમે ૧ કરાઢ, ૪૨ લાખ, અને ૧ લાખ પ્રાથધાપવાસ જેટલું ફળ મળે છે. એ પૈકી પહેલી ડુંકપર ૯૭૨૪૨૫૦૦ અને ત્રીજી ડુંકપર ૭૩૭૦૭૦૪૨૭૦૦ સુનિરાજો માેલે ગયા છે

आन ह इरनां हरीन हरीने इत्तरती બાજાંમે ઉતરતાં એક સુંદર મંદિર આવે છે, તેને જેતામ્બર લોકા ધરમટ મંદિર "અને દિમ ખર લાક" જસ માંદિર" ગણે છે. એ ઠંકાણે મુખ્ય ગર્લેદ્વાર (ગલારા)માં સામળી આ પાર્શ્વ-નાથતી શ્વે. સંપ્રદાયની મૃતિ છે. અને આળા બાજૂતી આરડીએામાં દિગંખરીની મૂર્તિ છે. ભાજીએ થડા પાસીના એક કંડ છે. ત્યાં શ્રુશાખરા જાત્રાળું એ જળપ્રાશન કરી પાતાની તરશ મટાંડે છે. જળ મદિરની પશ્ચિમ ભાજુએ ચડી પુત: કું યુનાથ તિર્ધકરની ' જ્ઞા-નધર ફટ ' આવે છે, ત્યાં સુધીમાં પંદર ટુંકના તિર્થકરનાં દર્શન થાય છે. પછી पर्वतनी अभी लालुओ पश्चिम तरह वणवानु એ પંદર ટંકનાં નિર્મળન અતે કરતાં અશકતને 8 છે. પછી ૯ ટ્રંકના દુ કલાક લાગે દર્શન જલદી શાય છે, કારણકે બાકીની ડંક પાસે પાસે છે. તેમજ તેપર ચહતું અલક્ નથી. પર્વતની જમણી બાજુએ શ્રી કું શુનાથ ની જ્ઞાનધર કટ, શ્રી નેમિતાથની મિત્ર કૂટ, શ્રી અરહનાથની 'નાટક કુટ'શ્રી મહત્લી નાયની 'સંવલ કુટ ' શ્રી શ્રેયાંસનાયની સં-મુલ કૂટ, શ્રી પુષ્પદંતની સુપ્રભ કૂટ, શ્રી પદ્મમભનાથની માહન કુટ, શ્રી મુનિસુવત ની નિર્જર કૃટ, શ્રા ચંદ્રપ્રભુની લલિત કૃટ, ્રશ્રી રૂપભનાથની કૈક્ષાસગિરી, શ્રી શીતળનાથની વિદ્યુતઘર કૃટ, શ્રી અને તનાયની સ્વય શ્રુ કુટ, શ્રી સંભવનાથની ધવલદત્ત ફૂટ, શ્રી વાસુપુન્ત્ય-નાથની ચંપાપુર કટ, શ્રી અભિનંદનનાથની

આતંદ કૂટ, એ પ્રમાણે પંદર ડુકા છે, અને ડાબી તરફ શ્રી ધર્મનાથની સુદત્તવર ફૂટ, શ્રી સુમતિનાથની અવિચલ કુટ, શ્રી શાંતિનાથની પ્રભાસ કટ, શ્રી મહાવીરની પાવાપુર કટ, સુપા-ર્યાં નાથતી પ્રભાસ કટ, શ્રી વિમલનાથતી સુધી-રકળ કુટ, શ્રી અજીતના**થની સિદ્ધવર કુટ**, શ્રી નેમિનાથતી ગીરતાર કુટ અને શ્રી પાર્ધાના-થતી સ્મરણ ભદ્રકુટ, એમ તવ ટુંક આવે છે એ પૈકી ધર્મનાથ ટંકપર ૧૯૧૯૦૯૦૯૭૫૫ व्यने समितिनाध ५८५२ १८४७२८१७००, શ્રા શાંતિનાથ ડ કપર ૯૦૯૦૯૯૯૯, સુપા**ર્ય** ટંકપર ૪૯૮૪૭૨૭૭૪૨. શ્રી વિમળનાથ ટંકપર 190 ६ 00 ६७४२, અજીતનાથ દું કપર १/०४००००० पार्श्वनाथ दु इपर८४०००० મુનીઓ માક્ષે ગયેલા છે. સુપાર્ધ અને અજતનાથની ડેકાના દરીન કરતાં દરેકને ૩૨ કરાડ પાલ્ધાપવાસનું પુરવક્ષળ મળે છે. અને બાકોની દરેક ટુંકતુ ૧ કરાડ પ્રાથધા-પવાસનું ફળ મળે છે, પરંતુ શ્રી પા**ર્શ્વનાથ** ડુકતું એક વખત દર્શન **કરવાથી માણસ** જન્મ મરણુના ફેરાથી વિમુક્ત થાય છે એવા આ ડુંકાના મહિમા પુરાણામાં વર્ણવેલા છે.

ત્રીમત્ પાર્ધનાથની ટુંક અતિશય ઉંચી એટલે સમુદ્રની સપાટીથી ૪૪૮૮ પીટ ઉંચી એટલે સમુદ્રની સપાટીથી ૪૪૮૮ પીટ ઉંચી હેાવાથી યાત્રાળુઓને ઘણી ઉંચી જણાય છે. આ ટુંકપરથી સમેદાચમનું 'પારસનાથ' એવું નામ પહેલું છે. એ ટુંકથી જરા વધારે ઉંચા ચંદ્રપ્રભુની ટુંક ચઢવાને એટલી કઠેશું નથી. એ ટુંક જવાનાં ઉત્તમ પગથીઓ બાંધેલાં છે. મંદિર એટલું સુંદર, મનોહર અને આનંદકારક છે કે ત્યાં જતાંજ મનમાં જે આનંદ થાય છે તેનું વર્ણન થઇ શકતું નથી. મૃદિરમાં ઠેકાણે ઠેકાણે કાઢેલા નકશા, મધ્ય ગભારાની જમીનપર રંગબેરંગી પથરા. ઉપર ચિત્રેલા ગાલીચા અને ચુનાનું કામ જેતાં એટલે ઉંચે એ સામાન આલુવામાં

કેટલા ખર્ચ અને મેદેનત પડી હશે. તેની ફ્રક્ષ્યના થઇ શકતી નથી. શિખરજીનાં દર્શન કર્યા પછી પણ ત્યાં વધારે વખત રહ્યા સિવાય મનની શાંતિ થતી નથી. પર્વત પર ખાલી નજર ફેંકતાં હાથીપર કાઢેલાં ચિત્ર વિચિત્ર પટ્ટા જેવાં જણાય છે. ઇસ્રીના સ્ટેશન સુધી જોતાં. મ'દમ'દ વહેતા પરમાત્સાહી વાયુ, વનકળ પુષ્પોથી અલંકૃત થયેલાં નિર નિરાળાં ઝાડાે, મધુર મધુર પક્ષી આદિઓના અવાજો, સર્ય કિરહાયી પ્રપ્રક્ષિત થયેલી વૃક્ષવેલી એ કત્યાદિથી તે પર્વત ઉપર એવી શાલા થયેલી જણાય છે, કે ત્યાંથી નીકળવાનું મન **થતું નથી**, પહાડ પરની વૃક્ષપંક્તિ વાચુ વડે હાલવાથી મન માહિત થાય છે અને જારો નાયકા ક્રેમ નાચતી હોય એવા ભાસ થાય છે. ઠેકાએ ઠેકાએ ભગરાઓ ગુંજારવ કરી મૂકે છે. સારાંશ કે પૂર્વની બાજીએ સંસ્થાલ, अने तेनी पाछण डर्जरीयाग छल्ली, पाछ-ળ બંગાળ અને બિહાર. ઉત્તરની બાજાએ મુંગર જીલ્લા અને દક્ષિણે ગયા જીલ્લા, વંગેરે વિવિધ પ્રદેશથી વિંટાએલા, આ પર્વત જગ-तमां अत्यंत रमशीय अने प्रेक्षशीय स्थले। પૈકીનું એક હોય એવું જણાય છે.

પાર્શ્વનાય ડુંકથી જે ઉત્તરને રસ્તો છે, તે રસ્તે એક મૈલ જતાં એક ડાક ખંગલો આવે છે, તે દેકાએ અગ્રેજમાં એવું બાર્ડ મારેલું છે કે જૈન અને ઉચ્યકળના હિંદુ સિવાય કાઇએ આગળ જવું નહિ અને જનારા-એ પગમાં જોડા રાખવા નહિ. આ ડાક ખંગલામાં યુરાપિયન અધિકારી ઉનાળામાં હવા ખાવા આવે છે. આ ખંગલાની ખાજાએ એક ધાડશાળા કરેલી છે. અને તેમાં એક બે ઘર છે. પણ તે ધાડશાળા અને તે ઘરા ડાક ખંગલા પ્રમાણે સારી સ્થિતમાં નથી.

આ પર્વતનું ચઢા સુમારે ત્રણ કાસ, અને કુંચનાથ ડુંકથી પાર્શ્વનાથ ડુંક સુધી

દર્શન ત્રણ કાસ, અને ઉતરણ ત્રણ કાસ મળી સર્વ પર્વત વંદના નવ કાશ છે. સારો સશકત માણુસ વિશેષ ન થાલતાં તુરતા તુરત વંદના કરી પાછા વળે છે, પણ દુર્ભળ માણુ-સને બરાબર બાર કલાક લાગે છે. શિખર-જીની ત્રણ વંદના, અને એક પ્રદક્ષિણ કર-વાના યાત્રાળુઓને નિયમ દ્વાય છે, અને તેમાં આજામાં આજા ૮–૯ દિવસ લાગે છે.

આ પહાડપર એક વખતે **ચર**ાબીતું કારખાતું કાઢવાના ધણા પ્રયત્ન કરવામાં આવ્યા હતા, પણ કલકત્તા હાઇકાર્ટમાં પ્રસિદ્ધિ પામેલા પિગરી કેસમાં (Pigri case) વિરુદ્ધ પક્ષને યશ્ચ ન મળવાયા તેમના હેવ નિષ્કળ ગયા. કેટલાક દિવસ **ઉ**પર B. N. R. अने E. I. R. रेल्वेना आध्वारी-આને આ પહાડપર જગા આપી બંગલા <u> અંધવાની પરવાનગી આપવામાં આવી **હ**તી, પર</u>ં ત જૈત સમાજના પ્રષ્કળ ખળલળાટ ને અસ તાેષ જોઇ, દયાળુ સરકારે પચાસ **હજાર** રૂપી**મા** રાકડા અને દરસાલ બાર હજાર રૂપીઆ લેવાનું કુ્યુલ કરાવાથી એ પદ્ધાડ કાયમના પટાથી દિ. જેનાના તાળામાં આપવાનું વચન આપ્યું છે. પણ દિગંખર શ્વેતાંખરીની તકરારને લીધે આ પટા હજા નક્કી થયા નથી. શ્વિન ખરજીનાં જેને દર્શન થાય એ જીવને ધન્ય છે. તેના પુષ્યના પાર નહિ, પરંત જેમને પ્રસક્ષ દર્શનના સુયાગ ત મળે તેમને અમે ઉપર આપેલી માહિતી અને ચિત્ર વડે અન પ્રસક્ષ (પરાક્ષ) દર્શનના લાભ ખાસ થશે. એવી ખાત્રી છે.

विंशतिस्तु जिनवरिंदा अमरासुर वांदिता श्रीतन्त्रोशाः । सम्मेदगिरि शिखरे निर्वाण गता नमस्तम्यः ॥१॥ यो जनः पठाति त्रिकालं सम्मेदवर्णन सुमंगलदं । भुनासी नरसुरसोरन्यं पश्चात् स लमते निर्वाणम् ॥२॥

''नंदे जिनवरम्" भराठी भासिक (निपाधी, ખેલગામ) ઉપરથી ગુજરાતી व्यतुवाद.

जैन सणांचा प्रचारः ।

(लेखकः-श्रीयुत भरमप्पा पदमप्पा पाटील, होसूर-बेलगांव.)

अलिकडे कित्येक शतकांपासून आमच्या जैन समाजांत अन्यमती लोकां-च्या निकट संसर्गानें भिथ्या सणांचा (मि-थ्या त्योहार) प्रचार फार झाला आहे, तो कमी करून आपल्या समाजांत जैन सणांचा (जैन स्योहार) प्रचार हरप्रयत्नें करून कर-ण्याची अत्यंत जरूरी आहे, म्हणून त्या संबंधानें या लेखांत थोडासा ऊहापोह करावयाचा आहे.

आपल्या लोकांत भिथ्यामती लो-कांच्या देखादेखीनें व अति परिचयानें अलि-कडे भिथ्या चाली फारच शिरल्या आहेत त्या दूर सारून सम्यक्ता कडे आपली भन्नाचे बळावेणें फारच अगत्याचें आहे. आमच्या समाजांत फक्त मिथ्या चालीच शिरल्या आहेत असें नाहीं, तर मिध्या सण सद्धां फारच बोकाळले आहेत ! नाग-पंचमी, गणेश चतुर्थी, होळी इत्यादि सण याच वर्गा पैकीं आहेत. हे सण जैन धर्मी मुळींच नव्हेत, तेव्हां हे सण आम्ही जैन लोकांनी मानणें म्हणजे आपल्या मिथ्यात्वा-चा फळसच झाला म्हणावियाचा!! आपळे सण कांहीं कमी नाहींत; पण ते प्रचारांत आणणारेमात्र पाहिजेत. नंदीश्वर,अष्ट्रान्डिक. पर्येषण (दश छक्षाणिकवत) पर्वे, दीपमा-

छिकोत्सव इत्यादि प्रसंग व बहुतेक प्रत्येक माहिन्यांतून येणारी ब्रतें हीं जैन सणासारखींच आहेत, परंतु हे सण सार्वज-निकपणानें कसे साजरे कराने, हे आमच्या लोकांना परिचयाच्या अभावीं माहीत नाहीं. आतां नुक्तेच कोठें सभा वगैरे स्थापन होऊन धर्म जागृति सुरू झाल्या पासून आमच्या लोकांना आपल्या मिथ्या प्रवृत्ती-ची जाणींव थोडथोडी होत आहे.ही मोठया सुदैवाची गोष्ट आहे

दुसरी गोष्ट ही कीं, आपण मानतीं त्या सणापैकीं भिथ्या सण कोणते व जैन सण कोणते. हें सर्व साधारण छोकांस सलभ रीतीनें समजण्यास आमच्या विद्वान पुढाऱ्यांनीं अजून एखादा आधानिक सरळ मार्ग लोकांस उपलब्ध करून दिल्या सारखें दिसत नाहीं. त्यामुळे. डोळे असून आंधळ्या प्रमाणें या बाबतीत आमच्या चांचपडत जावें लागत आहे. करितां हर्ष्टी पचारांत आहेत त्या नवरात, दसरा, नाग-पंचभी, दिवाळी इत्यादि सणां पैकी जैन धर्माचा दृष्टीनें कोणते सण श्राह्म व कोणते सण त्याज्य आणि जैन धर्मी सण आणखी कोण कोण ते नवीन प्रचारांत आणण्या सारखे आहेत या विषयीं वर्तमानपत्रांतून थोडे दिवस चर्चा करून, मागाहन या संबंधीं आमच्या विद्वान पुढाऱ्यांनी एक पुस्तक प्रासिद्ध करावें आणि त्यांत जैन सण कोणकोणत्या मितीस येतात, हें कमवार

दाखन्न, ते सण कसे साजरे करावे व त्यांचे विधी काय काय आहेत या संबंधी त्यांत स्पष्ट खुलासा करावा. या प्रमाणे 'जैनसणांच दिग्दर्शक' असे पुस्तक तयार होतांच त्याचां देशपरत्वे निरनिराळ्या भाषांतन भाषांतरे करवन त्यांचा सार्वत्रिक रीतीनें सुलमपणें मचार कराया. नंतर वर्तमानपत्रद्वारें, उपदेश-कां मार्फत व समादिकांत्न या पुस्तकांत सांगितस्या प्रमाणें जैन लोकांनीं आपले सण मानावे. अशा रीतीनें सारखी चळवळ करावी व तदनुसार पढाऱ्यांनीं आपापल्या गांबी सण साजरे करण्याची प्रवृत्ती चाल करून आपल्या उदाहरणाने या बाबतीत लोफांना किता घालून द्यावा. म्हणजे या योगें करून मिथ्या सणांची प्रवृत्ती आमच्या समाजांतन थोडथोडी कमी होऊन जैन सणांचा प्रचार झपाटयानें होइल, अशी पूर्ण उमेद आहे.

मनुष्यसमाज हा लामाविकतः उत्सविमय आहे. म्हणून त्यांतील जैन समाजही या तत्त्वास कांहीं अपवादात्मक नाहीं हैं उपड आहे. अर्थात् जैन लोकही उत्सविमय असावेत, यांत कांहींच आश्चर्य नाहीं. हर्लीच्या नवीन वातावरणांतील लोकांना प्राचीन चाली प्रमाणें साध्या व एक मार्गी धार्मिक पद्धतीच्या उत्सवानें समाधान होणें शेंडें कठीण आहे. करितां सांप्रतच्या सुधारणेच्या काळाला अनुसहत थोर प्रसाने अयंत्योत्सव व निधनोत्सव करण्याची

ज्या प्रमाणें चाल पडत चालली आहे त्या प्रमाणें आमच्या पूज्य तिर्थंकरांच्या जन्म दिवशीं व निर्वाणिदवशीं उत्सव साज़रे करण्याची चाल आमच्या समाजांतून पाडली पाहिजे. म्हणून आमच्या तिर्थंकरांच्या जन्मितिर्थाची व निर्वाण तिथीची माहिती ही सदरह पुस्तकांत दाखल करून, हे दिवस सणा प्रमाणें कसे साजरे करावे, हें सविस्तर दाखवावें. म्हणजे त्या प्रमाणें लोकांस वागण्यास मुलभ जाईल.

सारांश, अशा प्रकारें प्रयत्न करून जैन सणांचा प्रचार केल्यास मिथ्या सणांचें व मिथ्या चार्लाचें निर्मूलन आमच्या समा-जांतून आपोआप होईल, अशी मला हढ आशा आहे. कारतां आमच्या पुढान्यांनीं खस्य न वसतां अशा दिशेनें खटपट कराबी अशी आमहाची विनंती आहे.



>>

(સખક:-સો. કે. ઇનામદાર, મુખાઇ.)

पःरसमिश्यमां अवा अशु समायसी छे है तेने के वस्तुनं स्पर्श थाय ते वस्तुनं सुवर्श्वमां इपान्तर था। जाय छे. केने आ अहलुत मिश्र आप थे। छे ते आ सृष्टिना साज केटली, अरे तेथी प्रश्न विशेष समृद्धि ले। गर्थ छे. हे। याधिपति हुथेर लं अरीनुं कराम तेने अपाय छे, सर्व हे। छे तेनुं होसत्व हरवा तेथार था। छे; दूं हाभां ते स्पेक मुद्धान

નર તરિકે પૂજાય છે. આવે દેવા ગુહાલુકત મિલ્ પ્રાપ્ત કરવા એ કંઇ જેવા તેવા સહેલા વાત નથી. આવે! અમૂલ્ય મણિ ઢાલતા સમ-યમાં પ્રાપ્ત થવા દુર્લભ છે. કાંઇ વિરલાજ <mark>ચ્યા મહાન ગુષ્યુક્ત મણિ પ્રાપ્ત કરી શ</mark>ક્યા હશે. આપણને કાઇ કહેશે કે, "ભાઇ! મારી ક²છા છે કે હું તમને પારસમણિ પ્રાપ્ત કરાવી અાપું." આ વચન શ્રવણ થવાથીજ **અ'તઃકરસમાં કેટલાે બધા અવર્ણનિય આન** દ પ્રાપ્ત થાય છે! ખરેખર, આ આરાા આપતાર મહાત્માનું સ્પાપણે સર્વ કામ છોડી કશ્વરતલ્ય પુજન કરવા મડી પડીએ છીએ, તે મહાત્માની અહારાત્ર સેવા કરીએ, પાણી માંગતા પહેલાં દુધ હાજર કરીએ, તે કહે તા એક માસના નકારડા ઉપવાસ કરીએ; ટ્રંકામાં અમુલ્ય વિભૂતિ પ્રાપ્ત કરવા અર્થે આપણે ગમે તેવું પણ અસલા દુઃખ વેઠવા તૈયાર થઇએ મણા પ્રાપ્ત થયા પહેલાં ઉધમાં સ્વપ્તા પણ તેનાંજ આવ્યાં કરે અને હવામાં વિતિધ પ્રકા રતા કિલ્લા પણા ત્યાંધવા મંડી પડીએ. જ્યારે આવું દુ:ખવેઠી પણ આપણે આ સ્પર્શમિશ લેવા ધુમુએ. 32148 તા તે જ્યારે તે વિના ખર્ચ અને વિના શ્રમે પ્રાપ્ત કરાવી આપનાર કાઇ મહાત્મા મળે તા, છે કાે માઇના પૂત કે તે ક્ષેત્રા ના કહેશે? ના, કામજ ના નહિ કહે. સર્વ કામ રાજી રાજી થઇ જાય અને આનંદની લહરિઓમાં મન તરંગપર સ્વાર થઇ જાય: અરે! ખાટ-**લામાં** પડેલી સા વરસની આંધળી અઢી **ડેાસી પણ શક્તિ નહિ છતાં** દેાડવા પ્રયત્ન કરે. સાંભળા હ્યારે, આ પારસમસિતે પ્રાપ્ત કરવાના (હસ્તગત કરવાના) સહેલામાં સહેલા અને વહેલામાં વહેલા એક રસ્તા; "જાણ્યા કાયડા કાડીના " એમ થવાથા જો તેમ તે પ્રાપ્ત કરવાના અધિકારી નહિ હશે તો તમારા નશીખમાં તેના ઉપનાગ કરવાનું સરન્યું

ર્નાહ હશે, તો તમારે તે તે મહિલું લાખો ગાઉનું છેડું જ સમજ છો. તેમા કદાચ તે દેખવા પામશા, તાપણુ તે મહિલું છતાં તમે પત્થર અને દેશના રૂપમાંજ જોશા અને છેવટ નિરત્સાહ થવાથા પાતાના દોષ નહિલ્લાના અન્યને દાષારાપણ કરી આ ચમત્કા-રિક મહિલું મેળવવા તલપાપડ થયેલા મનનું પાણી એકદમ ઉતરી જશે.

અા મિણમાં એવા તા દૈવી ગુણ સમાયલા છે કે તે પ્રાપ્ત થતાં મનુષ્યના દેવ ળતી જવાય છે. દુશ્મના **લજને ક્યાંય પ**ક્ષા-યત કરી જાય છે કે તેમના પન્તા **લાગવા** પણ દર્લભ છે. આ મણિ પ્રાપ્ત કરનાર દુનિ-યાના રાજ્ય થયેલા જણાય છે. કુમેરભંડા રીતી સકળ સમૃદ્ધિ તેમના દિસાબમાં કાદ ભાસે છે. ખરેખર! આ દેવી ગુણાલંકૃત મણિ અક્ષય सुभ प्राप्त क्रावे छे. શું ત્યારે તે મણિ ધાપ્ત કરવાની ઉત્કંદા અધિક પ્ર**બળ થ**તી જાય છે*? ત્યા*રે સાંભળા શ્રદ્ધા રાખા, અને મતુષ્યના દેવ બની જાવ. જારેમાં આ દૈવી પારસમાસ તેજ " सत्संग-संतसमागम " छे. डेभ श्रीडडा पडी ગયા ? ધ્યાનમાં રાખજો કે આ મણિ તમારા સુવર્ણ બનાવનાર મહ્યિની પેઠે ક્ષચ્ચિક સુખ અર્પનાર નથી. તેનામાં એવી તા ચમતકતિ છે કે તે બકતાને તેમજ તેના આખા કુટુમ્બને तार्र छे. तीर्थः फलती कालेन सदः सद्ग्रह संगमः॥ તીર્થ યાત્રા તા કાઇક સમય કળ આપે છે, પણ સદ્યુર સગમનું કળ તા તરતજ મળે છે. આવા અમૂલ્ય સત્સંગના પ્રતાપે મ**તુ**ષ્ય કામ क्रेमिहि पर्रार्यु केवा संताध काय छे हे पुनः દાખ્ટી ગાચર થતા નથા. પારસમંભા તથા તેનાથી પ્રાપ્ત થયેલું ધન તો કાઇ હરી પણ જાય, પણ આ અક્ષય સુખદ્વાતા સત્સંગથી પ્રાપ્ત થયેલું એંધ્વર્ય કાઇથી આહું કરી શકાય તેમ

સત્સં મની કેટલી ઉચ્ચતા છે તે દેવર્ષિ તથા વિશ્વામિત્રના અતિથ્ય સત્કાર પ્રસંગે ભાપેથી વિદાયગીરીથી જણાઇ આવે છે. વિશામિત્ર રૂપિના હજારા વર્ષના તપના પ્રભાવ કરતાં વિવિશ્વિષ્ટના એક ક્ષણમાત્રના સત્સંગના अतापना विकथनाह थाय छे. शं त्यारे सत्संग દૈવી પારસમશ્ચિથી અધિક મૃદયવાન નથી ? શાં તેની કીંમત આંકી શકાય તેમ છે? તો શા માટે મહાત્માના સંગ ન કરવા? ચંદ્ર-કાનત નામક પુરતકનાં આપ્યાનમાં " દેવને છાયા હાતા નથી " એટલું પણ અનિચ્છાએ શ્વતપ્રકૃષ્યના એક વાક્ય કાનમાં પડી જવાથી भे भे। २ भरक हशाभांथी (अरीने राज्यने। તેમજ રાજ કન્યાના હકદાર થયા હતા. એ સત્સંગ સિવાય કાના પ્રતાપ હાવા જોઇએ? જ્યારે સત્સંગતા આવા દેવી પ્રતાપ છે હારે **છવતુ**ં કલ્યાણ કરનાર, સત્ય માર્ગે ગમન **કराવना**र तेमक अक्षय सभ अर्थनार सह ચારૂના શા માટે વ્યાશ્રય લેવા નહિ જોઇએ ! શાં માટે આપણાં જીવન અધિક યશસ્વી અને અધિક ઉચ્ચતર ખનાવવું નહિ જોઇએ ? કામકાજમાંથી પણ સમય ખરાવી શા માટે **આચાર્યીના મુખર્યી એાધક** કથા વાર્તાઓમાં • મન પ્રેરવું ન જોઇએ ? શા માટે ભારત-વર્ષમાં શાંતિના માર્ગ પ્રસારનાર પવિત્ર તિર્થ-કરા નાં પ્રનિત આખ્યાના શ્રવણ કરવાં ન **જોઇએ ? શા માટે પ્ર**ભુરસમાં મનને તકુપ भनावव न की अभे १ लगारे हैंथी भकाते। **અતપશી પાસે** ખુલ્લા મૂકી દીધા છે સારે ઉપનામ કરવા શા માટે પછાત પડી જવે જોઇએ ? આવાં અપ્રતિમ, અસ્પલિત, અ-ગહિત અને અક્ષય સુખા અર્પનાર નિઃસ્વાર્થી વ્યાયાર્થી-મહાત્માઓ-સદગરઓના આપણી અધિક દઢ કેમ ન કરવા જોઇએ? **ખરેખર**ાજે સત્સંગ-પારસમણિ પ્રાપ્ત કરી शक्या छे तेमत्र अवन धन्य छे !!!

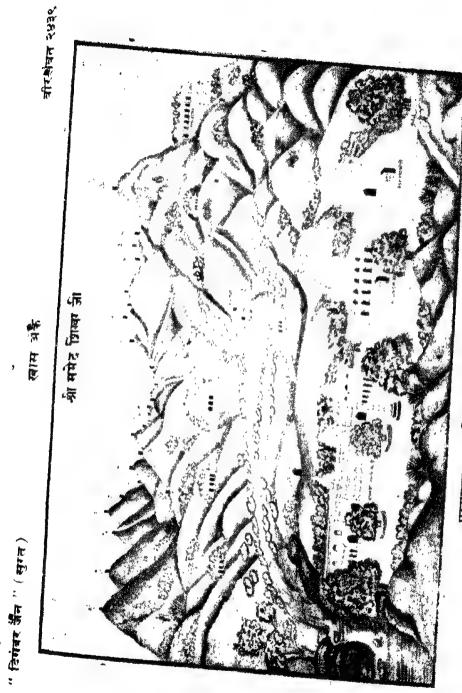
मनुष्यदेह

(સેખક:-હરીલાલ જેશ ગલાઇ ચુ. ઉના.)

સ્વંસ્થાન શ્રી વૈકું દેપુરી પરસ ધામના અધિપતિ ભક્ત વત્સલ મહારાજધીરાજ, ગરૂડજીના સ્વાર, પાંડવાના પ્રતીપાળ, સ્વર્ગના શીરામણી, અનાચનાથ, કંષ્ટ દેવના દેવ, અંતરજમી મહામંગળ સ્વરૂપ ધનસ્યામ અખંડ લક્ષ્મીજના અલંકાર ગારક્ષણના રક્ષાપતિ પાવક જગત એાધા હરણ શ્રી ભગવંતની ખાસ હજુરમાં! મુ. સ્વર્ગપુરી. અરજદાર સ્વંસ્થાન પંચભુત દેહના અમૃત સાકથી લી. આપના સ્વારુપાથી ભુતલ વીશે જન્મ ક્ષેનાર સ્વભગુરી મંદમતી લઘુ બાળકના જય જીને દ્ર આપની પવિત્ર સેવામાં અંગીકાર કરશાજી.

ધણી નમ્રતાની અરજ સાથે અરજ શુજારવાની કે હે કપા સિધ લગવાન! આપે ચામને ઉત્પન્ન કરવાને રૂડા **હેતુ**થી આપ<mark>ની</mark> ગદન ગતિ અને અલાકીક લી**લાએ કરીને** પ્રથમ માતુશ્રીના ઉદરમાં ગર્ભ શુળ સ્પાપ્યા. સારભાદ પ્રતીદ્વીનના નવમાસ પુરા **થયેથી થ્યમાને સારી સમ**જાતી **સાથે ચ્યા રવધ્ન** તુલ્ય સંસારમાં કશ્વરી લક્ષ દિલે ભગવત ભજન કરવા અને વ્યવહારીક કાર્યમાં અન-શરી ચાલવાને અને આ *ચ્પાત્મપ્ર*રીત' राज्य करवाने भे। क्ष्या! परंतु आत्म नगरीनी અંદરજ કેટલાક લચ્ચા સ્વભાવના અમલકારા મળી નીધાન કરીને રહેલા છે. તે અમલદારા આપના હુકમનું અપમાન કરી ધારાશર રાજ્ય नितीं अ यक्षाववाने विधन क्षावे छे ते आन શામીવાર હત્રુર રાશન થવાને વિવેચન 43° W.

પ્રથમ તેા જીવરાજભાઇ નામના **રાજ્ય** છે; મનજીભાઇ વઝીર છે; કામ**દેવભાઇ** કામદાર છે; ાધજીભાઇ ફાજદાર **છે; હાાલજી**



परमपुज्य परमपावित्र महान नोर्थक्षेत्र श्री समेदादीखरजी िश्र तीर्थ करो पैकी २० तीर्थ करोनी निर्वाण भूमिनी देखाव.)



वार मवत रधरू

काम सरकरी छै: भेरद्वालाम मामसतहार छै; પરનિંદા પાલીસ પટેલ છે: અહંકારની કાટ-વાળી છે: જડતાપહાં જમાદારન છે: અહી-ભાઇ રાજપટરાણી છે: છેભીયાઇ ચે!વટાઇ કરે છે: ઉપરના અમલદારા મળી પાતાના श्रीरुकोरशी अणातहार वापरुतां अभाउं ભાન કાપી તંમારા તરકના કલ્યાસ થવા रस्ते अवताने अटडावे छे. पछी अमारा नीर **ઉપાય ने पराधीनपञ्चाने क्षीधे अगवत अगन** नहीं भगतां भनक लाध दरराक अत्यक्ष सारा ખેદગ પ્રપંચમાં સ્થી મચી રહેલા છે. આવા ખાટા વિચારમાંજ આત્મપુરીનું આયુષ્ય લગ-ભગ ચાલીશ પચાશ વરશનું પહેાંચી આવતાં મનજીમાઇ આત્મપુરીનું રાજ ખાઇ બેસે છે અને પછી તરતજ જરામાં ગલાઇ નામના રાજા આવી સદરહ રાજગાદી પાતે કરે છે. વળા સદરહ રાજા પાતાના નવીન સીકદા બજાવવા માટે નગરીના વાવટા શ્યામ રંમના હતા તે સંકેદ રંગના કરી નાંખે છે. તે સિવાય ધણા કેરકાર કરી નાંખે છે. માત્મપુરીનું મુળ માંડાણ એવું છે કે જે શહેરમાં દશતા દરવાજા છે તેમાંના મુળ જે મહાટા દરવાજો છે તેમાં ખત્રીશ શાહકારા દુકાના ચલાવે છે; માંતેર કાઠા છે; નવસે નવાણું શહેરીએક છે. આ પુરીમાં ઈંગલા પીંચળા સખમજી પવાણી નામના ઘાટ છે. આવા માટા અદભત નગરને જસશંગ રાજ્યો પાયમાલ કરી નાખ્યું. વળી તેઓ રાજાની ધણી સખતાકથી નગરીની સાત પ્રેરી પણ સીથળ વીથળ કરી નાંખી, મસ્તક પુરી ડાલવા માંડે છે. કરહાપુરી ઉજદ થાય છે. ક્ષાચનન પુરીતું તેજ કમી કરે છે. નાશોકાપુરી વલા કરે છે. મક્ષાપરીના સ્વાદ ખેંચી લે છે. શહેરમાં વેપાર થવે! અંધ પડવાથી બત્રીશ શાક્રકારા દકાના ઉપાડી ચાલતા શાય છે. ચરમાપુરી પણ ઘરમરી જાય છે તે નગરીના

आमेरेन आमहार ते। ते।इरी छाडी राष्ट्रनामुं આપી દે છે. બુદ્ધીબાઇ રાજ્ય પટરાણી મુત્રાઇ જાય છે. છંભીખાઇનું ચાલકાઇન વજન હશે જાય છે. આટલા શંરકારા થયા. એાછામાં પર પાડવાને જરાસંગ રાજાના ઉપરી સરદાર કાળ નામના સરદાર આવી નગરીના દશે દરવાજે સીલમારી સ્થંભને રાકી દેવાની તૈયારી કરે છે. તે વખતે મનજીનાઇ વઝીર અકળાતા ભયભીત થયું આખર વેળાએ આપની સ્તૃતિ વંદન કરે છે. હે કપાળ ભગ-વાન ! માતુશ્રીના ગર્ભવાશમાં જે સ્તૃતિ સાથ સમજૂતી કરેલી હતી, કે હું હંમેશાં ભગવત ભજન કરીશ, તેા મહારા ક્રમનશીયના માંદા ગ્રદ ચડી આવતાં જાણીયુંઝી આ ખાટી ગકલત કરી. આ ખાટા સંસારમાં કામ, ક્રોધ માહ, મદ, લાભા એ દળ્ટાએ મારૂં હીત ળગાડયું, પરંતુ હવે મારા આ<u>મુ</u>ષ્યના જેટલા દીવસ બાપી હાેય તેટલી મુદતમાં અજાકપા થવી ન જોઇએ, કારણ કે પત્ર સપત્ર થવાને સુકે છે, પણ શરણે આવેલ પુત્ર ગમે તેવા अपराधी है।य ते। पश भावतर स्तेद पर्वक ખાળામાં ખેસાડવાના સ્વભાવ સકતા નથી, ते। हे उपासिन्धु सगवान! आपता जगत આપ્યાનાં માટા પતિ છે। વળી જેમ માંથી માછલી જાદી પડવાથી મરહા પામે છે, તેમ હું આપના આશરા વિના મરણ તુલ્ય છું. આવી અરજ ગુજારું છું, તા ધ્યાનમાં લા પંચલત દેહના અમલદારાએ अल्लो अन्दा अपराध धर्या है।य ते કરી આપગ્રીના વહ હસ્તાક્ષરના કપા કરી આપી આપના કામળ ચરણમાં દાખલ #3 miles

નાટ-આ માર્મિક પણ અતિ ઉપયાગી લેખ દરેક વાંચકને ક્રી ક્રીને ધ્યાન પૂર્વક વાંચ-વાને અમા આગ્રહ કરીએ છીએ.

સંપાદક.

आपणे केवा थवुं जोइए ? अथवा खरी स्वतंत्रतानां साधन.

- CAN BE MI

લેખકઃ–શ્રીયુત વાડીલાલ માતીલાલ શાહ સંપાદક 'જૈન સમાચાર' અમદાવાદ.)

The human being should be healthy, active, brave, intelligent, truthful, honourable, clean in life and kindly.

88 88 88 88

The growing need is for men who can be religious without, being narrow-minded, obedient to authority because understanding whereon authority rests, free while reverencing Law, self disciplined without asceticism, with a culture not limited by books, and above all trained in habits of exact thought and therefore able to use the mass of material which is now presented to us.

Stanley De Brath,

M. Inst. C.E.

1. સ્વતંત્રતા અને ખરા સુખની આસા રાખનારે સ્વ-રક્ષણ, સ્વ-સુખ અને સ્વ-આનંદું માટે જાત ઉપરજ આધાર રાખવા જોઇએ. અને તેમ કરવા માટે તેનાં સાધના પણ મેળવા ક્ષેવાં જોઇએ. સ્વ-રક્ષણનું સાધન શરીરભળ છે. સ્વ-સુખનું સાધન મનાબળ અને દ્રવ્ય છે. સ્વ-આનંદ માટે પ્રેમ, પરે!પ-

કાર ખુદ્ધિ અને પરમાત્મા પિછાન એ સાધન છે. માટે અંગકસરત, વ્યવહાર, દ્રવ્ય, ગીત-વાદ્ય આદિતું જ્ઞાન, પ્રેમ અને પરમાર્થ તથા તત્વજ્ઞાનના અનાદર કરવા તે પાતાનાજ પગ-માં કુહાડા મારવા જેવું છે.

(अ) स्व-रक्षण.

ર. શરીર-બળની વાતને તા કાઇ ભાગ્યેજ યાગ્ય સત્કાર આપતું હશે. શરીર **ભિચા**રૂં જુલમી મનના નીચ ગુલામ જેવું ગણાય છે. તાત્કાળિક તંગી પુરી પાડવા સઘળી. તામે-દાર પ્રજાને સખત વેરાથી અને લૂંટથી પાડનાર અને પછી ખીજાં સંકટ સમયે તદન નિર્ધન અને નિર્બળ થયેલી પ્રજા પાસેથી પાતે ગમે તેટલું બળ કરવા છતાં **કાંઇ** પણ નહિ મળી શક્યાથી ચીડાઇ-રીબાઇ દુસ્મનના હાથથી માર ખાઇ દુ:ખી થતાર મુર્ખે રાજ્ત જેવું આપણું મત છે. આપણે જાણવું જોઇએ કે આપણે પદાર્થ (Matter) અને આત્મા (Spirit) એ ખેતા ખતેલા છીએ અને તેથી ખન્તેને કેળવવાની જરૂર છે. જયારે આત્માની કેટલીક સિહ્સ્થિા પદાર્થના જોરથીજ મેળવી શકાય છે ત્યારે શા સારુ આપણે શરીર તરફ આટલા ખેદરકાર રહેવું જોઈએ ?

ક સુભાગ્યં કહેા કે દુર્ભાગ્યે કહેા, આપણે પરતંત્ર બન્યા છીએ. સારા ભાગ્યે તે પરતંત્રતા બહાદ્દર લાંકાની છે, તેથી આપણાં મન, શરીરને કેળવવાની જરૂર થાડીજ જુએ છે. કારણ કે હમણાં બળવાખારના જુલમ નથી, લાદીની નદીઓ જેવાની નથી, ત્રાસ-દાયક સમાચાર એાચીંતા સાંભળી ચાકવાનું નથી. દેશના તો શું પણ પંડના દુશ્મન સાથે પણ લાકડી ઉપાડવાની જરૂર નથી. એવી શાન્ત પરતંત્ર અને એશ આરામની સ્થિતિમાં હમણાં આપણે છીએ, પણ શું સઘળા જમાના એક સરખા જાય છે કે ઇતિહાસ શું પુરાવા

આપે છે? શાંત ક્ષેત્રામાં તરવારાના નાચ અને જુલમધી પીડીત ભૂમિમાં તદન શાન્તિના દાખલા કેટલા ખધા દેશમાં જોવામાં આવ્યા છે? ભ્રમણુ-ફેરફાર-ઉથલપાથલ (Revolution) એ તો દરેક વસ્તુના સ્વભાવ છે. કુદરતનાજ કાયદા છે. નાના સરખા ભ્રમણ વખતે આપણે કેવા ડરી જવાના? જયારે દેશમાં કાંઈ પણ ઉથલપાથલ સંખંધી વિચારની ગપ માત્ર સંભળાય છે ત્યારે રાંક, બાયલા અને સુખ ચેનના શાખીન લોકાનાં મન કેવાં વ્યય થઇ જ્ય છે? નજીકના દેશમાં કેવા ત્રાસદાયક વિચારા જન્મ પામે છે!

૪. અને વિવાદની ખાતર ઘડીક ધારો કે પ્રતાપી રાજયકર્તા ન્યાય અને તરવારથી આપણું હંમેશને માટે રહ્મણ કરી શકશે, તો પણ શું આપણું સદા પોતાના મંડળના દુશ્મનના ભયથી મુકત હેાઇશું? જયારે પંડના દુશ્મનોથી આપણાં ઉપર અને આપણાં જ્હાલાં જેના ઉપર ભુલમ ગુજરાય ત્યારે તેને અટકાવવા અને યાગ્ય વેર લેવા અંગ- ખળની મહત્વતા કાણ નાક્યુલ કરશે!

પ. કસરત વિના શરીર (તેમજ મન) અવ્યવસ્થિત થઇ જાય છે. દેખીતા ભવિષ્ય ના તાત્કાળિક લાભરૂપાં જીસ્સા થાડીકવાર તે નવા ઉદ્યોગમાં આપણને ટટાર રાખે છે, પણ તે જીસ્સા થાડીવારમાં નાશ પામે છે અને શરીર લથડવાથી ઉજજડ થયેલું મન પછા હમેશ કરતાં વધુ દિલગીર રહેછે. દુનિયાની હજારા ખુખીઓ અને આનં દાં, કૃત્યા વિગેરે તરફ તે અણગમાંથી ઉત્પન્ન થયેલી એદરકારીથી જુએ છે.

 આ તો અનુભવેઢા સિદ્ધાંતજ છે
 માણસ કામના બાજાયા ઘસાતા નથી, પણ રીઢા ચાય છે, દુ:ખથી કુંઘસાતા નથી પણ અનુભવ અને વખતે કામના પાઠ શીખે છે, પણ માત્ર નિયમિત કસરત અને શરીરના શ્રમ વિનાજ ખવાઈ જાય છે. આવી રીતે ખવાઇ ગયેલા માણસને નાનાં સરખાં કામ પણ બાજા રૂપ લાગે છે અને સાધારણ વાત સમજવી તે એક શાસ્ત્ર સમજવા જેવું મુશ્કેલ થઇ પડે છે.

9. કસરતથી કેળવાયલા શરીરવાળાનું મન પણ સહેલાઇથી કેળવી શકાય તેવું હોય છે. કેટલેક દરજ્જે ઇદ્રિયદમન તે માણસ કરી શકે છે. સ્વાર્થ પરાયણતા, કામવિકાર અને બીક્ણપણાને લીધે ઉત્પન્ન થતા કાયાના શરમ ભરેલા ડર એ સર્વને તે ઘણે અ'શે જીતી શકે છે.

૮. વિચારા કરવામાં ક્ષુદ્ધિની જરૂર અને અમલમાં મૂકવામાં દઢતા (will)ની એ દહતા OY 3 ? છે. પરિણામ છે અને માનસિક પ્રશીન પુષ્ટી પ્રથમ તા શારીરિક પુષ્ટી ઉપર આધાર રાખે છે. એદી, કાયર, ફેક્સી ગયેલા માણસ ધારવા–વિચારવામાં કમતાકાત હેાય છે અતે જે કાંઈ ધારે-વિચારે તેને અમલમાં મુકવાની દહતા તેનામાં હોતી નથી. તે ક્ષણીક અને તરંગી જસ્સાએને આધિન હોય છે. વિષય વૃત્તિના ગલામ ખને છે. અસમર્થ હોવા છતાં ક્રોધને વશ જલદી થાય છે, દુનિયાથી કંટાળે છે: છાકરમત તેના દરેક કામમાં જણાઇ આવે છે

૯. એથી ઉલડું ચંચળ શરીરવાળાનું મન ચંચળ (active) અને રઢ હોય છે. બીક, કાયરતા, નિચતા, પશુવૃત્તિ, વિષય-વૃત્તિ, સ્વાર્થ, ક્ષાણિક જીસ્સાઓ, એ સર્વને કેટલેક દરજ્જે તે ધૃતકારી શકે છે. તે ખરૂં કામ કરતાં, ટટાર ચાલતાં, પ્રસંગને યાંગ્ય ભાષણ કરતાં શરમાતા નથી.

૧૦. આ પણ સમજવાનું છે કે શરીરને ખવરાવી, પીવરાવી, કસરત આપી હૃદપુષ્ટ કરવું તે કાંઈ, સારા ધાસપાલાથી હૃદપુષ્ટ કરી તેને વધ કરનાર કસાઈની પેંદે, તેને વિકારાના તાએ કરવા સારૂ નહિ, પણ એ હેલુથી કે આ અતિ દુર્લભ મનુષ્ય-દેલમાં જ્યાં સુધી આ જવ છે ત્યાં સુધી કાંઇપણ સુકૃત્ય તે કરી શકશે માટે તેને સાચવવું. ધડીયાળના કાંટા એકલાજ કાંઇ વખત આપતા નથી, પણ સાંચાથી પ્રેરણા પામેલા કાંટા વખત આપે છે—આ ઉદાહરણ સમજવાનું છે.

૧૧. શરીર તેમજ મનને જેમ પુરતી કસરત વિના રાખવામાં ભયંકર પરિણામ સમાયલું છે તેમજ તેમના ઉપર ખાસ–કરીને મત ઉપર હદથી જાદે બાજો નાંખવામાં પણ ભય કર પરિણામ સમાયલું છે. એક કામથી केम आपण्डी शक्ति (energy) मां थाउँ। इ ધટારા થાય છે તેમજ એક વિચારથા પણ શક્તિના વ્યય થાય છે. કંટાળા ઉપજે એટલા દરજળ સુધી કાષ્ટ્ર કામ કે વિચાર ખેંચ્યા કરવામાં એકસરખુંજ નુકશાન છે. કેટલાક એવા હાય છે કે તેમનું મન આખા દિવસ વિચાર કર્યાં જ કરે છે અને રાત્રે પણ તેમનું અઝ પાવાળું મગજ તે વિચારાના પ્રતિધ્વનિ કર્યા સિવાય ઝંપતું નથી. આવાં કાંઈ ખીજા કરતાં વધારે અથવા વધારે સંગીન (Solid) કામ કરી શકે છે એમ નથી, તેથી ઉલડું ભભકામાં રહેલા માણસ જેમ સાદા-ઇને વધારે પસંદ કરે, તેમ તે માણસ વિચા-રાથી કંટાળે છે અને ટેવ પડવાથી કંટાળવા છતાં તેમાં કાયમ રહે છે, પરિષક્વ વિચાર કરી શકતા નથી અને દુઃખમય ભ્રમણામય भेणा गुजारे छे. "के वभते के अम ते વખતે તેનાજ વિચાર " એ સાેનેરી કાનુન છે. પથારીમાં પડયા પછી તેા હરકાઈ જાતના

વિચાર નજ કરવા એવા નિશ્વય કરવા જોઇએ. અનુભવ એમ કહે છે કે પથારીમાં પડયા અગાઉ કરેલી શુદ્ધ પ્રાર્થના, વિચારાને મનથી દૂર રાખવામાં સારી સાધનભુત થાય છે. આવતી કાલ માટે જરૂરની શક્તિ (energy) શાની ઉંધમાંથી પેદા કરવાની છે, માટે તે ઉંધના કલાકા અગર તે ઉંધની શાન્તીમાં ધટારા થવા ન દેવા જોઇએ. "હર કાઈ એક કામ કે એક વિચારમાં ઉા ગી હાઇએ, તે વખતે ખીજ વિચારામાં ભૂલા પડન્વામાં ઘહું જોખમ સમાયલું છે."

૧૨. કસરત શરીરના દરેક અંગને મળવી જોઈએ. હાથ, પગ, શરીર, જીલ, આંખ વિગેરે દરેક અંગને નિયમિત રીતે કસરત આપવી જોઈએ. આપણા હાથ, પગ, શરીર વિગેરેની ગતિ ધાર્યા પ્રમાણે ઝડપથી થઇ શકે, આંખ સ્થિર તાકીને નજર કરી શકે, તજર ડકાવી શકે અને અવલાકન કરી શકે, જીલ તથા કંઠે શુદ્ધ જીણા સ્વરથી માંડીને ખુલ્લી માેડી ગજના કરી શકે—સાદ ચડાવી ઉતારી શકે, ભય, શાક, દયા, હાસ્ય. આશ્ચર્ય વિગેરે ધાર્યા પ્રમાણે લાગણી સાંભળનારના મનમાં ઉત્પન્ન કરે એવા ઉચ્ચાર કરી શકે એવી કસરત આપવી જોઇએ.

૧૩. જેમ જુઠું બાલવું, ચારી કે વ્યાલચાર કરવા, ખુન કરવું એ વિગેર માટા અપરાધ છે, અને એવું કરનારને આપણું ધિક્કારવા જાંઇએ; તેમજ પુરતી ઉંધ અને આરામ લેવા, પુરતી રીતે દરેક અંગને કસરત આપવી, ખાયલી શરમા તજવી, ટટાર ચાલવું અને ઇટાથા બાલવું એ વગેરે શારી-રિક કરજો તાડનાર પણ માટા અપરાધી છે, અને તેને પણ એટલાજ ધિક્કારવા જોઇએ. કહેવાની જરૂર નથી કે પહેલા અપરાધા કરનારની પેઠે આ અપરાધીઓને પણ ભારે શિક્ષા કુદરત કર્યા સિવાય કદી છાડતી નથી.

(ब) स्व-सुख.

૧૪. સ્વ–સુખ માટે મનને કસરત આપવી જોઇએ. કાેઈ વસ્તુ, દેખાવ કે **ખનાવ** અવ-ઢાકવાની, મનમાં ઉતારવાની, ખીછ વસ્તુ દેખાવ કે બનાવ સાથે સરખાવવાની— મનન કરવાની અને તેમાંથી સત્ય કાઢી અને તે સત્ય જો અમલમાં મુકવા જેવું હોય તાે. તેને અનુસરવાની દઢના રાખવાની કસરત એ ખરેખરી જરૂરની કસરત ધા**ગ્રં ભ**ણેલા પણ આ કસરત વિના ધંધામાં કામના નથી. થાડું ભણેલા છતાં આ કસરતથી કસાયલા મનવાળા, ખેડુતમાંથી રાજ્યદ્વારી પુરૂષા બન્યા છે. ચ્યા કસરતના પાયા અગાઉ કહેલી અંગકસરત છે તે પણ ભૂલવું તું જોઇએ. વળી એ પણ યાદરાખવુ જોઇએ કે કાઈ પણ જાતની પુર્ણ—શારીરિક કે માનસિક–એક કદકે આવી શકતી નથી, પણ વિવેકસર અને નિયમસર ખંતથીજ આવે છે. એક સામટી કસરત−શારીરિક તેમજ માશસિક–વિનાશકારક છે.

૧૫. નીતિની કસરત એ મનની કસરત તેનોજ પેટા ભાગ છે. મન ળનાવાનું અવ-ઢાકન કરવા સરખામણી કરવા સત્ય ખેંચવા અને સત્ય અમલમાં મુકવા શક્તિમાન થાય તેજ નીતિ છે. માત્ર અપરાધથી દૂર રહેવું એનેજ નીતિ કહી શકાય નહિ. નીતિની કસરતની પદ્ધતિમાં બેન્જામીન પ્રાંકલીનનું અનુકરણ કરવા જેવું છે. તેણે કેટલાક ઉપયોગી નિયમા લખી રાખ્યા હતા. તેમાંના દરેકને અમલમાં પ્રકવાના રહ દરાવ કરી એક કિનયમ એક પ્રખવાડીઆ સુધી પાળવામાં કેટલી ભુઢા થતી તે નોંધતા અને તે ભુઢા કરાવનાર લાલચા સાથે હવે પછી કેમ યુદ્ધ કરવું તેના રસ્તા શાધતા.

૧૬. અહીં થાડાક શાસ્ત્રીય (Scientific) નિયમ સમજાવવા જરૂરના છે.

- (૧) નીતિ એટલે દરરાજની શક્તિ (energy) ના કહાપણના ભર્યા ઉપયાગ (The Wise Direction of the daily stock of Energy is Morality).
- (ર) મન તેમજ તન સંબ'ધી દરેક કામ વારંવાર થવાથી સહેલું થાય છે એને ટેવ કહે છે.
- (૩) શરીરના સંચા ટેવ પ્રમાણે દારાય છે. અને "તનમનના દરરાજની શકિતનું, ઉમદા વિચારા અને ઉમદા કૃત્યાની ટેવમાં રૂપાંતર" તેનેજ મનુષ્યત્વ (character) કહે છે.
- (૪) કુમાર્ગ વપરાતી શકિત દુઃખ દાયક નથી, પણ શકિતને કુમાર્ગે દારનાર તન મનની અજ્ઞાનતા એજ વિનાશકારક છે. ત્રાન ઘણી વખતે ખત્તામાંથીજ મળે છે.
- (૫) ધર્મએ ઉપયોગ છે; ધર્મએ છંદગી છે. અને જે ધર્મ અથવા નીતિ નાનામાં નાતા તેમજ મેપ્ટાંમાં માટાં ખાનગી તેમજ જાહેર કામમાં મૂર્તિમાન થતી નથી તેને ધર્મ અથવા નીતિ કહેવાયજ નહિ.

(Religion is life; and the virtues do not exist at all except in so far as they are being translated into daily and hourly practice.)

- (૬) મનુષ્યત્વ (character)માં સડે! ઉપ્તત્ર કરનાર સ્વાર્થ, આળસ, માજ શાખ, વિષય ક્ષાલપીપાણું, તથા બીકણપણું એટલા કારણાથી દૂર થવા માટે જે દહતા કરવી તે ધર્મ છે.
- (૭) ઝુદ્ધિ સાથી ઉપયોગી છે, પણ તેનાથી મનુખત્વ (character) વધુ ઉપ-યાગી છે. માહ્યુસે પ્રાર્થના, જ્ઞાન અને મનુ-ષ્યત્વની પ્રાપ્તિ અર્થેજ કરવી.

૧૭ યાદશક્તિની કસરતને આજકાલ અજ્ઞાન કરતાં વિદ્વાન* જના તરફથી વધારે ગેરઈન્સાફ મળે છે. કેળવણીના હિમાયતીઓ યાદ શક્તિની કસરતને ગાપ્પણ વિદ્યા માને છે, પણ આ એક માેડી ભૂલ છે. અલખત્ત યાદ શક્તિ કરતાં વિચાર શક્તિ વધારે ખીલવવી જોઇએ તે ખરૂં છે; પણ યાદ શક્તિ તે વિચાર શક્તિના પાયા અથવા સાધન છે. એ બૂલવું જોઇતું નથી.

૧૮ વેપાર રાજગારમાં કે હરેકાઇ કામમાં વધારે ફતેહ મળવાનું કારે પણ પણ મનની ડહાપણભરી કસરતજ છે કે જેમાં અવસાકન શક્તિ, વિચાર શક્તિ, સરખાવવાની શક્તિ, યાદ શક્તિ, દઢતા વિગેરેના સમાવેશ થાય છે. આપણા વધુ ભણેલા જુવાના ધંધામાં કે દુનિયાદારીમાં તદન કઢંગા અને અતડા

* જે વખતે લેખન-કળાના શાધપણ થયા નહતા. તે વખતે રામાયણ અને મહાબારત જેવાં માઢાં અને એવાંજ અદુભૂત ઇલિઅડ અને ઓડાસી નામનાં વીરરસ કાર્ગ્યા રચાયાં હતાં અને આપણા ભાટ હાકા જેમ વ'શાના વ શાના ઇતિહાસ-કથાએ। અને કાવ્યા માઢે રાખીને તે ઉપર પાતાને ગજરાન ચલાવે છે તેમ શ્રીસ દેશમાં પણ કેટલાક લોકા તે કાવ્યા ગાઇ સંભળાવી હૃદર પાષણ કરતા. એ વખતના લાકાની યાદશકિત એટલી જબર-જસ્ત હતી તેનું એક કારણ એ કે તેમને યાદ-શક્તિ સિવાય ખીજાં સાધન હતાં નહિ. જેમ સગવડતાં સાધન વધતાં જાય છે તેમ આપણને કુદરત તરફથી અપાયલી શક્તિઓની કેળવણી તરક **બેદરકારી વધ**તી જતી જોવામાં આવે છે. આ **બેદરકારી નુકશા**નકારક છે. યાત્રા અથવા સાધ્રદર્શન અર્થે દેશાવર જવાના રીવાજથી જે તન્દરસ્તી, સહુનશીળતા, અવલાકનશકિત વિગેરેને કસરત મ ળતી, તે **હવે રેલ્**વે મારફત જવાથી મળા શક્તી નથી. સગવડ અને પુષ્કળતા એ બે આપ્રમાણે **માશસ નતને કાયર બનાવે તા તે સગવડ** અને પ્રષ્કળનાના ખાટા કપયાગજ થયા સમજવા.

જણાય છે, તેનું કારણ એ છે કે તેમણે આ અમુક બાબતામાં મનને કસરત આપી નથી. ઝડપ અને સફાઈની ટેવ પણ દરેક કામમાં વધુ ફાવવા માટે અવસ્ય કેળવવી જોઇએ અને તે કામ કાંઈ પુસ્તકા ઉપરથી થઇ શકશે નહિ, પણ દુનિયાદારીમાં પડવાથી દુનિયાદારીના આકરા દેખાતા અને રંગ વિનાના કામામાં શરીરને ગતિમાન કરવાથીજ અને તે ગતિ દઢતાથી કાયમ રાખવાથીજ થઇ શકશે.

૧૯ નિશાળમાં માત્ર પુસ્તકનું જ્ઞાન આપવાની પદ્ધતિને જર્મનશાળાપદ્ધતિ ખાટી પાડી ખતાવે છે. ત્યાં સુતારકામ, ગાયનકળા, વાદ્ય–કળા, રસાયણ વિગેરે વિદ્યાએાના પ્રયાગા, નિશાન તાકવાનું કામ, ચિત્રકામ, ડીલ, ખા-ગતું કામ, તરવાની વિદ્યા, અંગકસરતના ખેલ શરીરશાસ્ત્ર વિગેર વિદ્યાઓ (Science) અને હુનરા(Art)શીખવવામાં આવે છે. આથી ત્યાંના ભાળકા શરીર અને મનની **ચ**પળતા, છટા. સકાઇ અને ગ્રહણશક્તિમાં ઇંગ્લાંડના કરતાં પણ વધુ ચઢીઆતા છે. <mark>મી. ધ્યાથ નામન</mark>ા એક વિદાન જર્મન લેખક અને શિક્ષક આ **ભાષ્યતમાં પાતાના દેશનું અનુકર**જી કરવા દરેક દેશને ભલામણ કરે છે કે જ્યાં સુધી શાળાઓમાં આવી સવડ ન કરવામાં આવે ત્યાં સધી સમર્થ જેનાએ પાતાના ઘેર આ-માંની બનતી સથડ કરી લેવી એ ઘા<u>ર</u>ા **કાયદાકારક છે.**

, કન ૨૦ હમણાં આપણે સ્વસુખની વાત કરીએ છીએ. સ્વસુખ માટે મનની કસરતની જરૂર વિષે આપણે વિચાર કરી ગયા. હવે ખીછ જરૂર પૈસાની છે તે વિષે વિચાર કરીએ:—

ર૧ ખીન અનુભવી યુવાન પૈસાની ભાબતમાં ઘણો બેદરકાર જેવામાં આ**વે છે.** તે જાણતા નથી કે તેનું મન ગમે તેટલું માટું હશે, ગમે તત્ત્વ જ્ઞાનથી ભરપૂર હશે, તે ગમે તેવા સ્વતંત્ર વિચારના હશે. દુવ્યાપાજન તાપણ અતેં દુહ્ય વ્યય જેવા સંસારમાં સદા બનતા આ-વેલા ખનાવાના તે અપવાદ થઇ શકશે નહિ अभे केम ते ते अधनथी छटवा वधारे कोर **કરશે तेम ते भेडीये। वधारे सल्ल**ड गंडाती क्रशे अने तेम तेना हाथ प्रश्वधारे छोलात! જરી. પૈસા જ્ઞાન, બળ, અને પુણ્ય પણ ઉપાર્જન કરાવે છે. પૈસા સલાદશાંતિ તેમજ લઢાઇના કર્તા અને ભત્તાં છે. સ્વ-એવા અને પર-સેવા તેનાથી થઇ શકે છે. ધર્મ જેમ શક્તિને નહિ પણ શક્તિના ખાટા ઉપયોગને ધિક્કારે છે, જેમ જુવાનીને નહિ પળ જુવા-નીના ગેર@પયાેગને ધિક્કારે છે. સ્ત્રીને નહિ પણ માહતે ધિક્કારે છે, પ્રેમને નહિ પણ વિષય વૃત્તિને ધિક્કારે છે. તેમ પૈસાને નહિ પણ પૈસાની પ્રાપ્તિ અયોગ્ય રસો અને અયોગ્ય રસ્તે વ્યયને ધિક્કારે છે. પૈસા તા માત્ર એક ખીજાનું ઉપયોગીપાયું અદલબદલ કરવાનું સાધન છે. ખરા માણસ આ વસ્તને પાતાના **અ**ાશય માનતા નથી, પણ આશય મેળવવામાં સહાયબત એવા સાધનામાંનું એક સાધન માને છે. વહાવસ્થા, ઓચિંતી આપત્તિ કે યુવાનીની અધવચમાંજ આવતાં હજ્તરા તન અને તેથી વધારે ભયંકર મનનાં દરદા વખતે પૈસા એક માટા દીલાસા અને હિંમત છે. માટે તેને વ્યાજળી રીતે મેળવવામાં અને ડહાપણથી સાચવવામાં લક્ષ આપવું જરૂરનું છે.

રેર. પણ પૈસા મેળવવામાં ઘણી ભૂલા યાય છે. ધર્મિષ્ટ કહેવાતા અને વિદ્વાન ગણાતા ઢાંકા પણ તેની પ્રાપ્તિ માટે ગેરવ્યાજળી રસ્તા પકડે છે. "મીઆં ચારે મૂંદે અને અલ્લા ચારે ઉંટ" એ કહેવતની સત્યતા માટે અનુ-ભવ પાતેજ શાક્ષી પુરે છે. હરકાઈ અયાગ્ય રસ્તે મેળવેઢા પૈસા દુશ્મનના માણસની પેઠે આપણા ઘરમાં કાખલ થઇ આપણા આખા ઘરને ઉપાડી ચાલતા થાય છે. અને આમ થાય છે ત્યારે ખાટા ઢાભનાં ખુરાં કળ જાણવા છતાં છેતરાયા માટે બેહદ પસ્તાવા અને કઢાય થાય છે.

ર ૩. કેટલાએક વધારે નફાની આશાથી ચાલ ધંધા છાડી અચાકસ કામમાં પડે છે. આ પણ પૈસો રળવાની ખરી રીત નથી. કેટલાક અમુક દેકાણે સાનું કલ્પી એની પાછળ પાતાના તન અને મનની ખધી શક્તિના તથા ખીન્ત કર્તવ્યોના ભાગ આપવા તૈયાર થાય છે. આના જેવી ખીજી મુર્ખાંઇ એક પણ નથી. આપણા કર્તવ્યામાં ખલેલ પહેાંચે. એવાં કામ કદી આરંભવા ત જોઇએ, જે જગાએ અને જે ધંધાથી આપણાં કર્ત્તવ્ય બજાવવા સાથે ગુજરાન ચાલી શકતું હોય તે કર્વવ્યતું ઉલ્લંધન થાય એવું કામ કે જગા કદી સ્વિકારવાં નહિ. એવી લાલચને "પુરૂપ રજા તા પેટીઉં કાઢે અને નસીબ રજા તા ઘર ભરે" એ જુની કહેવતથી ધકકેલી કાઢવી कांध्रे स्व-शाधनना विचारा अने अस्त-શરીર અને મનની કસરત-પ્રાસંગિક માટી મસાકરી–પાતાના આશ્રિત જનાનાં ખાસ કરીતે સ્ત્રી-પત્રાદિકનાં ગુણ જ્ઞાન અને શક્તિની કેળવણી તરફ કાળજી-યથાશક્તિ સ્વદેશ સેવા પ્રત્યાદિના કત્ત્વવ્યમાં સમાસ સમ-જવાતા છે.

ર૪. માબુસને માથે આટલાં બધાં આવશ્યક કર્તવ્યા હોવાથી અને જમાના સખત રપધાંના હોવાથી આ વખતમાં તન અને મનનું પૃર્ણ નિરાગીપણું અને ચપળતા વિના સુખ અને કૃતેહની આશા ભાગ્યેજ રાખી શકાય અને એટલા માટે ખરા સુખની આશા રાખનારે જ્યાં સુધી આ બધાં કર્તવ્યનું ભાન અને કર્તવ્યો બજાવવાની શક્ત ન આવે ત્યાં સુધી

परेखेत स्थिति केवी को भमहार स्थितिमां न कित्तु के कितम छे. या नियम पाणवा कतां हित्स रेप वरस है वधु व भत हुं वारा रहेवुं पडे किस थाय ते। पखु केक सुभने। रस्ता छे. शित व्याव्या पहेलां हशज्या शित तथा मन-शांतिना व्यय हरवानी तैयारी हरवी के व्यात्मधात निह ते। थीकुं शुं ? स्व-रहाखु अने स्व-सुभनां साधन मेणव्या पड़ीक समा हिता विषय छे तेमां पड़वानी वियार हरवे। को छेके.

(क) स्व-आनंद.

રપ. સ્વરક્ષણ કરવા સમય થયા હાઈએ. જુંદગીને જરૂરનાં સુખનાં સાધન મેળવી શક્યા હાઇએ તાજ પછી સ્વ-આનંદ માટે ઇચ્છા કરવી જોઈએ. દુશ્મન તરક્થી ગલ-સાટમાં હાઈએ, ખાવાપીવાનાં ફેકાણાં ન હાય, હજારા દુગ્ધાઓ અને દરદામાં સડતા હાઈએ ત્યાં પછી આનંદ કેવા?

મતને આનંદ માટે અલળત **६२०** के से ताप करूरना छे. संताप એટલે જે છે તે ખસ ગણી ખેશી રહેવું તે નિદ પણ મનની શાંતિને ધકેકા લાગે અને કર્ત્તવ્યનું ઉલ્લંધન થાય એવી અને એટલે દરનને ઇચ્છાએ ન કરતાં પ્રમાણિક અને **યથાશક્તિ** પુરૂષ પ્રયત્નવદે જે કાંઇ બનાવી શકાય તેથી તૃપ્ત થવું તેનેજ સંતાય ગણાય છે. સ્વ-આનંદમાં પરણેત જીંદગી, કાવ્યકળા, વાશકળા, ગીત-કળા, મુસાક્રી વિગેરે વિગેરે જાદી જાદી ઇન્દ્રીએમને મઝાનાં સાધનના સ-માવેશ થાય છે. તેથી ચડતી પાયરીના આ-નંદમાં ધ્યાન, ભક્તિ, આત્મશોધન, પરમાર્થ, **ક્રદરત કર્શન** વિગેરે અંતર આનં દાેના સમાવેશ થાય 🕏.

૨૬. અમ એ પ્રકારના આનંદમાંના પ-હુેલા પ્રકારના આનંદ સ્થળામાં જો માણસ આડે! ઉતરી જાય તે! તે આનંદરથળા મડી મૃત્યુદ્વાર ખતે છે; અને એથીજ કેટલાંક ધર્મા-માં હસવાની, ગાવા વગાડવાની, પરણવાની, આદિ કત્યાની મના કરી છે. પણ જેમ વી-જળાથી ખન થઇ શકે છે તેમજ તેનાથી સે કડા દરદા પણ મટી શકે છે માટે તેના સદા નિષેધ ઇચ્છવા તે ભૂલકારેલું ગણાય, તેમ સ'સારીઓને આ આન'દસ્થળા રખેને અત્યદાર થઇ પડે એ ડરથી તેના તદ્દન નિ-ષેધજ કરવા તે પણ ભૂલ **ભરેલુંજ ગહાય.** જૈન ધર્મતો સુશ્રાવકમાં રૂપને પણ એક સુ**શ** અને અવસ્થના ગુણ તરીકે ક્ષેખે છે. દરેક વસ્તુ માફક રૂપ, પ્રેમ, સ્ત્રી, દ્રવ્ય, સત્તા કે ત્રાનના જેવા ઉપયોગ કરીએ તેવું **પરિ**ણામ આવે, જૈત્વધર્મ વ્યભિચારથી દ્વર રહેવા તથા સ્વસ્ત્રી સેવનમાં પણ ઘણાજ મિતવ્યયી થવા સખત ભલામણ કરે છે, તે સ્વચ્યાન'દ બદલાઇને મૃત્યુદ્વારનું ૨૫ ધારણ ન કરે તેવી चेतव्या साउक छे. स्त्रीविषय वृत्ति त्रिः કરવાના સંચા નથી પણ શક્તિમાનનું ઘરાયું છે. ગાન, શાક્ત અને શાંતિને શાશનાર ડાકણ નથી, પણ સત્કાર્યી કરતાં કંટાળનાર પુરુષને હિંમત, આશા, દીલામાં અને **આનંદ આપી** બમણી શક્તિથી પાછા સત્કાર્ય ઉપર માકલી આપનાર દેવદૂત છે. ટુંકમાં સ્ત્રી પુરૂષની સલાયક (complement) છે. આ વિનાના ર્સ્નાના જે કાંઈ હેત સમજવા તે તેટલે દર-નજે માણસને માણસાઈમાંથી દૂર કરી પશ-પણામાં લાવનાર છે અને આ લાક તથા પરલાકના સખને બાળનાર અગ્નિ સમાન છે.

રહ. ખરી સ્વતંત્રતાનાં સાધના સંભ'ધી ખાલતાં જે ત્રણ સાધનાનું વિવેચન કર્યું તે એક બીજાથી જાૃદાં નથી, પણ એક બીજા'થી સંકળાયલા છે. જેમ નીતિ, ધર્મ અને તાંદુ-રસ્તી જાૃદાં પાડી શકાનાં નથી તેમ આ ત્રણ બાબતોના વિવેચનમાં જે જે જરૂરીઆતો



(माणीता टेन्ट्स, नेन शतहम्म शायक अने वह जीनवम्म् नामीं (सोलापुर.) श्रीयुत तात्या नेमीनाथ प्रांगळ. ना मानी मपारक,) स्वर्गाय शायुन अनंतराज पांगळ (बासी) पिना. शीयुन नेपीनाथ अनंतराज पांगळ, वासी. पुत्र.

भताषी ते ते जूरी पाडी शक्षय तेम नथीं.

- વિષયતી પૂર્ણાંહુતીમાં મહાપુર્ષાના
 કેટલાંક મહદ્ વચના ટાંકવાં જરૂરના સમ-જીએ છીએ:—
- 1. હું ઉ^{લ્લ્}યો તેા સ્વપ્ત આવ્યું કે છંદગી સુંદરતા ભરેલી છે; ભગ્યો તેા જોયું કે છંદગી ક-ર્તવ્ય રૂપ છે.
- ર. દાન એ શક્તિ છે; સમતા એ સુખ છે, પ્રમાહ્યુક ઉદ્યોગ એ સ્વતંત્રતા છે.
- 3. જીંદગી એ મઝા નથી. તેમજ જીંદગી શાકમય નથી. તે વિજળા જેવી વેગી અને તેનાજ માક્ક તેને પાતાને રસ્તે જવા દેતાં વિનાશકારક છે પણ પ્રયત્ને તેને વિચાર શક્તિની પાછળ વળવાથી સુખમય છે.
- ૪. સુખ અને દુઃખ છંદગીની વાત છે. તે કર્મ અનુસાર આવી મળે છે, અને કર્મતા કડીએા માહ્યસ પાતે છે.
- પ. વૃત્તિથી વૈંરાગ્ય ઇચ્છવા યોગ્ય છે. કર્મ (action) ના વૈરાગ્ય ધિક્કારવા યાગ્ય છે. શ્રી કૃષ્ણુ અજી નને કરેલા કર્મના બાધ દેશ તથા આત્મકલ્યાણ માટે અવશ્ય અનુકર-ર્ણાય છે.
- દં. જેન માર્ગમાં કહેલી ૧૨ ભાવનાઓ, દુનિયાના મહાપુરૂષોનાં ચરિત્રસચક નામા, જંદરની માટે આપણા ધારેલા આશયો, ચાલુ વર્ખતમાં કરવા ધારેલા કામા, આપણી અજ્ઞાનતા અને ખામીઓની યાદી, એ સર્વનું દર સવારે પ્રાર્થના પછી ૩૦ મીનીટ સુધી મનન કરવાથી શાંતિ, શક્તિ, ભુરસો, અને જ્ઞાન મળે છે.
- ૭. માણુસના વિચાર જેમ સાંકડા તેમ તે પાતે દુ:ખી વધારે. જેટલે અંશે સ્વાય સાથે પરમાર્થ ભેળાતા જાય તેટલે અંશે તે સુખી થતા જાય છે.

(સંપૂર્ધ્યુ.)

श्री कैलास पर्वतनी यात्रा अने प्रत्यक्ष दर्शननो पत्र

ગ્યા પત્ર જેમાં બ્રહ્મચારી લામચીદા-સજીની કૈવાસ પર્વતની યાત્રાના હેવાલ લખે-લા છે. તે પત્ર શ્રીમાન શ્રદ્ધચારી શીતલ-પ્રસાદજને અલીગદના પંડિત ખ્યાલીરામ્રજ પાસેથી જાના કાગ<mark>ળા તપાસતાં મળી આવ્ય</mark>ો હતા. તે પત્ર અતિ ઉપયાગી અને જૈન કામને જાણવાલાયક <mark>હોવાથી બ્રહ્મચારી શીત-</mark> લપ્રસાદજીએ આ પત્ર એક નાના પુસ્તકર્ષે હાલમાં બહાર પાડી 'જૈનમિત્ર'ના ગ્રાહકાને વે ચેલાે છે, તેના ભાષા તદન જાની હિંદી ભાષા હોવાથી અમારા ગુજરાતી અને દક્ષિણી ભાઇઓના સમજવામાં આ પત્ર બરાબર આવે એ હેતુથી એ આખા પત્ર ગુજરાતી ભાષાં-તર કરી અત્રે પ્રકટ કર્યો છે. જો કે આ પત્ર વાંચતાં કંઈ આશ્ચર્ય જેવું લાગે છે, પણ એ તદન જુઠું બનાવટી હેાય એવું તાે લા-ગતુંજ નથી અને ઘણી બાખતે. મળતી પણ આવે છે. શ્રી કેલાસગિરિ પર્વત આપણા પરમ પુજ્ય પ્ર**થ**મ તીર્થકર શ્રી કૃષભના<mark>યછની</mark> નિર્વાષ્ય ભૂમિ છે, જેથી શાધ કરીને આ પર્વ-તના પત્તા લગાડવા એ આપણું ખાસ કર્તવ્ય છે. માટે સર્વે વાંચકવર્ગને વિન્નપ્તિ કે અનાપ આ પત્રને પ્રથમથી છેવટ સુધી ધ્યાનથી પૂર્ણ વિચાર કરીને વાંચશા અને આ પરમ પવિત્ર ક્ષેત્રની તપાસ તથા પ્રાપ્ત કરવામાં થવાના પૂર્ણ સકળ મનાેરથ કરશા. આ પત્રમાં ઘણી બાળતા તા **અનુભ**ન વમાં ક્ષેત્ર જેવી છે.

બ્રહ્મચારી લામચીદાસછના કૈલાસ-યાત્રાના પત્ર.

હું સૂર્યવંશી ક્ષત્રી નામે લામ<mark>ચીદાસ</mark> ગાલાલારે જેના સાસ્ત્ર કથનાવુસાર વિક્રમ

સંવત ૧૮૦૬માં હિંદુસ્તાનની ઈશાન દિશામાં **મ્યાવેલા હિમાલય પર્વતની નજીકના ભુતાન દેશના ગિરમધ્ય નગરતા રહેવાસી ચીતની યાત્રા માટે** નીકલ્યાે. હું અલ્પમતિ શુદ્ધ ધર્મ **યાગ ધારણ ક**રી ઘરનાે માહ છાડી મારા <u>વાહમતા</u> સર્યવંશી રાજા બલવીર્યસિંહને **છાેડી ૧૫૦** ગાઉ જઇ પ્રથમ કામર્રદેશ **અથવા કામર** નગરમાં ગયા કે જ્યાં જતદ મંત્ર વિદ્યાનું જોર ઘણું છે. ત્યાંથી ૪૦૦ ગાઉ ચાલી વ્યક્તા મુલકના કિરીટમ દેશના કાશી તગરમાં આવી. પહેાંચ્યા અહીં આંની **અં**ચ્યા ગીક્ષેટનું કામ ઘર્ષ્ય સાર્ક કરે છે. તેઓમાં લાજ કાઢવાના રિવાજ બીલકુલ નથી. ત્યાંથી ૨૦૦ ગાઉ ચાલી મધ્યમ વ્યક્ષ દેશના **ચ્યાવા શહેરમાં ગયા કે જે ચ્યા દેશના** રાજા-ની રાજધાનીનું મુખ્ય શેહેર છે. રાજા અને **વધી પ્રજાના ધર્મ વાહ છે.** ત્યાંથી ૩૫૦ ગાઉ ચાલી કપુરી દેશના કેશવ નગરમાં ગયા. અહી અગર, તગર, કપુર, બામસેની કપુર ધર્સ્યુ થાય છે. અહીંઆના કપુર વીગેરેની સુર્ગંધા બીજા કપુર કરતાં સાંગણી વધારે <mark>છે. અહીંઆંના પહાડામાં સાેનાચાંદીની ખાણાે</mark> છે.

ત્યાંથી નીકળી કાચીન દેશની સીમા ઉપરના વ્હાવલ પહાડની પાસેના હેવા નગરમાં ૨૫૦ ગાઉ ચાલી આવી પહોંચ્યા. આ પહાડ-પર બાહુબલીજની ઘણી મોટી કાયાત્સર્ગ પ્ર-તિમાઓ જગ્યાએ જગ્યાએ માલુમ પડે છે. અહીંના ભાહસાક બાહુબલી ગુરૂ અવતાર પા-તાના જાણી આશા વદમાં માટે મેળા ભરી પૂજા કરે છે. ઉપદેશ કરનારાની માક્ક આ પ્રતિમાઓનો એક હાથ ઉંચા રહેલા છે.

ત્યાથી નીકળી વિંધ્યદેશના હોવી નગરમાં ક૦૦ ગાઉ ચાલી આશ્યો. આ શેહેર રાજ્ય-ધાનીનું છે અને બધી પ્રજા બાહ ધર્મ પાળ છે. અહીંઆની પ્રતિમાંઓ બે તરેહની છે. એક તો બે ઢાથ જોડી સવાલ પૃછતા રાજા

શ્રેણીકની અને બીજી ઉપદેશ આપનારની પેર્ટે એક હાથ ઉંચો રાખેઢા એવી ગાતમસ્વામીની છે. જ્યાં જ્યાં ગાતમસ્વામીની માનતા છે ત્યાં ત્યાં ગાતમ સન ચાલે છે. અને આ દેશમાં કંઇ કંઇ આમેડના જૈની રહે છે. તેમની પ્રતિમાંઓ સિદ્ધના અમકારની હૈાય છે. ત્યાંથી ૧૬૦૦ ગાઉ ચીન મુલકના ગિરગમદેશ ઢાંકલ નગ-રમાં આવ્યા. આ તગરના કાટ ૧૮ ગાઉના અને બજ્તર પ ગાઉ લાંબા અને બે ગાઉ પહેલો છે. અહીંના રાજા પણ અહીંજ રહે છે અને આ આખા દેશ રાજા પ્રજા સધળા જંગાડા જૈની કહેવાય છે. અને તેઓ અવ-ધિનાનને પુજે છે. મન:પર્યયજ્ઞાનને પણ અવધિત્રાન સાથે બેગું ગણે છે. કાઈક ઠેકાણે બાહમતી પણ રહે છે. ત્યાંથી ૯૦**૦ ગાઉ** પશ્ચિમમાં ચીત મુલક ખીસમ દેશ (Pekin) શેહેરમાં આવ્યા. આ શેહેરના કાંટ ૪૦ ગાઉનાે છે તેમાં એક એક દિશામાં ૮ આઠ દરવાળ એટલે એકંદર ૩૨ દરવાજા છે. પ્રત્યેકદરવાજાથી સીધા લાઇનબધ્ધ બજારા છે એટલે ચારે દિશાના મલી ૧૪ થાય છે. તેવાં ખે બાજુ મળી ૧૨૮ બજાર જાણવાં. અને કાટ મુરજ ૮૮ છે તે દરેક ૧૦ ગજ પહેલા અને ૩૦ ગજ ઉંચા છે. આપ્યા શહેરમાં તમામ મકાન ક્રીમતી પથરાના બનાવેલા છે. દેટ માટીનું કામ તાે જેનેવામાંજ આવતું નથી. કુવા, નહુર, પ્રુવારા, સડક વિગેરે સર્વે પૃથ્થરનાજ છે. પ્રુલવાડી અહુજ સુંદર કૂલા સહિત ખિ<mark>લે</mark>લી જેતેવામાં આવે છે. કળની ગાડી રસ્તાએોમાં અને ધુમાડા કહાડતી હાેડીઓ નેહેર અને દરિયા (નદી)માં કરે છે. ટેલીફાનના તાર લાગી રહેલા છે, તે ત્રણ ઘડીમાં ૧૦૦૦ ગાઉની ખબર પહાંચાડે છે. વિદ્યાના મંદિરા (સરસ્વતી ભવન પાડશાળાઓ) વણા છે. કમ્પાસનું **કામ અહીં** આશ્રર્યકારક રીતે ચાલે છે. આખી દુનિયામાં પણ અહીંના કારીગરા (Masion)

સમય (time) સૂચવે છે. વર્ણમાલાના અક્ષરા અહીં ૯૫૦૦૦ છે. દરેક શખ્દના અક્ષર એકાંત છે. રાજ્ય બહુજ તેજથા ત્રાલે છે. ચારને શીક્ષા ઘણીજ થાયછે. રાજદરભાર ૮ ગાઉ લાંબા छे ब्रिक्स क्रांश नियमना सारी रीते पाणना-રાઓ છે. લોકાના રંગ ગારા બહ, પણ કાન્તિ હી**ણ છે.** સઘળા ક્ષાેક **સ**ત્ય નિષ્ટ છે. શેહેરના પૂર્વમાં **હોંગકાર** નામની નદી છે, જેના ધાટ સારા પથરતા બાંધેઢા છે. ચત્ર સદી ૫ થી ૧૫ સધીના મેળા ભરાય છે તેમાં બે કરાડ ૨૦૦૦૦૦૦ માણસ ભરાય છે. શહેરની ઉત્તર દિશામાં કાટની જોડે એક કિલ્લા છે તે ૧૬ લાંબા અતે ૧૬ પટવાળા ગાઉ મિનારા ૬૪ ગુમટદાર છે. અંદર તેના એક કાંટ અને બાદર ચાર છે. તે કિલ્લાએ આઠ ધાતના બનેલા હાવાથી લહાઇ-ના કામમાં ઘણા કામના છે. કિલાની અંદર રાજમેહેલ અને દરભાર છે, ત્યાં સાનાના ચિત્રેલા હીરા પાના વિગેરેથી શણગારાયલા સંગેમર્મરનાં તખતા છે. કિલાની આજુબાન ભૂએ ધણી પહેાળા તેહેર છે. દરબાર આગળ જવાઢીરથી જડેલા કઠેરા છે. જે વણા ગીચ ભતેલા છે તેમાં લાખા કળા ચાલે છે અને પ્રવાસ ઉડે છે. ચીનના રાજ્ય મહા સભટ ધીરવીર અલંગશાહ સર્યવંશી બાધમતી છે. રાજ્ય ધરો દુર સુધી ફેલાયલું છે. તેનાં રાજ્યમાં ૫૬ સૂબેદાર (માટા રાજાઓ) છે. તાતાર બે ટીબેટ, કારીયા ચીન. મહાચીન. ખાસચીન કાચીન આદિ એમાંજ આવે છે. કિલા અને શહેરના કાટ ઉપર હમેશ ૧૦૦૦ **તાપ ભરે**લી તૈયાર રહે છે. દરવાજા ઉપર એક એક હજાર સવાર પાંચા હથિઆર સાથે તૈયાર રહે છે, અને જ ંજારી ગાલા, અનેક્ર ગાલા, શસ્ત્રગાલા, ભમ્બગાલા. દમ્બગાલા, શેલચક્ર એરંબચક્ર, કિરચ. ઝેરપાયલી ઉની ઉની કળા. મંત્રના બાણા, વગેરે બહુજ મજગ્રુત તૈયાર

રહે છે, તેમની છાવણી પશ્ચિમમાં ૪૦ ગાઉના ઘેરમાં રહેલી છે, તે નીચે પ્રમાણે છે:— ૪૦૦૦૦ ઘોડા, ૧૦૦૦૦ હાથી, ૩૦૦૦૦ ઉંટ, ૧૦૦૦૦૦ પાયદલ (પગે ચાલનારા સિપાઇએા), ૧૦૦૦૦૦ તાપ, ૧૦૦૦૦૦૦૦ હથિયાર (શસ્ત્ર), ૪૦૦૦૦ રા-જપુત્ર, ૫૦૦૦૦ રાજપુત્રિઆ, ૩૨૦૦ સેવક અને ૪૧૦૦ દાસી.

ચ્યા ગણત્રી કિલ્લાના દરવા**જા ઉ**પર લખેલી છે. ચીન દેશમાંજ પેકિન શેહેરથી ૩૦૧ ગાઉ ઉપર એક ડુંગર છે, તેમાં દરેક રંગની ખાણ છે, તેજ રંગવડે ચીનાઈ કપડાં છપાય છે. કળતું કામ <mark>ધર્સાજ થાય છે</mark>. ક-જાેથી ૨૦ વાસ ગજ લાં**ઝ કપડું** જાત-જાતનું વણાય છે. કાઇએક બેટથી કાઈક જાનવરનું ઉત આવે છે. તેનીજ મુખમલ અને ઉતની બનાવટ થાય છે. આ મુલકમાં કેરકેર નદીઓ છે અને ધાટે ધાટે **હો**ડીઓ પણ ચાલે છે. ત્યાં સલળા ક્ષાક ભાદમતી છે. કાઈક ઠેકાણે જૈન પણ છે. ત્યાં તેમના એક કનપૂસ નામના અવતાર ગાતમ અવતારથી ૧૦૦ વર્ષ પછી થયેલા છે તે ખાસ ચીનના ક્ષેકા તેનેજ માને છે અને તેનીજ શાખાઓ (Branches) ચાલે છે, હંપણ ત્યાં તેમના સન ૨૩૧૮માં ગયા હતા અને ૧ વર્ષસધી ત્યાંજ રહ્યા હતા. બાહુનાં દહેરાં ઘણા કોંમતી છે. આ મુલકમાં આદે પ્રકારના જૈની છે. ખાશ ચીનમાં તુનાવાર કારિયામાં પાતકે, ઘં-ધેરવાલ અને <mark>બાધાનાર: ટિબેટમાં સાદનાવારે.</mark> તાતારમાં સાહનાવારે. મહા ચીનમાં જંગાડા કાચીનમાં અમેડના જૈની છે અને પેકિનમાં તુનાવાર જૈનીઓનાં ૩૦૦ દેહરાં શિખરબંધ છે તે પણ જડાવથી જડેલા છે અને પ્રતિમા-એ કાયાત્સર્ગ અને પદ્માસન છે. તેના એક હાથ મસ્તક ઉપર છે તે જાણેક લાચજ કરે છે. દેહેરાસરા ખહુ ચિત્રેલાં છે. ક્ષત્ર લીલા

પશાના દાખડાની પેડે અને સોના ચાંદીના કલ્પવસો ખનાવેલાં છે. દેહેરાઓમાં ઘણીજ રચના છે, કારણુંકે તેઓ દિક્ષા કલ્યાબુકના પૂજકા છે. શાસ્ત્રા ચીતાઇ ભાષામાં છે, ધર્મના ઉદ્યોગ સારા માલુમ પડે છે.

પછી પૈકિન શેહેરથી ૧૫૦૦ ગાઉ પશ્ચિમમાં તાતાર દેશના સાગા નગરમાં આવ્યો. તાંના દહેરાસર પાતકે ઘંઘેરવાલ જૈનીઓનાં છે. ત્રષ્યું પ્રતિમા ગ્રા ગજ ઉંચી ૧૫ ગજ પહેાળા અને બહુ મનાહર ચાથા આરાતી છેલ્લા સમય પ્રમાણે છે. તેમના બન્ને હાથ ઉપર રહેલા છે. પાતક જૈની તા એમ કહે છે કે આ ધર્મના દાતા સદાકાળ બેલે હાથ ઉંચા કરી થયાર્થ ધર્માપદેશ કરે છે. ઘંઘેરવાલ કહે છે કે આ ત્રણક્ષાકના નાથ સમવશરણમાં ભવ્યોને સંબોધે છે.

ત્યાંથી ૧૧૦૦ ગાઉ પશ્ચિમમાં ટિબેટના મુંત્રાર દેશ વરજંમમનગરમાં આવ્યો. એ નગર મહા સુંદર છે. તેને ૩૦ કે દર છે અને ખજાર સાત ગાઉ લાણું છે. અને તેમાં બધાનારે જૈની રહે છે. જૈનીઓનાં ઘર ૮૦૦૦ અને દેહરાસરા ૨૦૦૦ છે. કેટલાક દહેરામાં ત્રાય, કેટલાકમાં પાંચ અને કેટલાકમાં સાત સાત ઘુમટા હાય છે. કળશ કાઇપર સા અતે કે કાઇપર બસા બસા હાય છે. તેમના દેહેરાઓમાં અહેતની માતા (મરૂદેવી) ના બિંખો છે અને અગાસીએમાં રત્ન વપવાના ચિન્હા (નિશાન) છે. સે ળ સ્વપ્તાનાં ચિત્ર કાઢેલાં છે અને પુલની શધ્યા ચીતરેલી છે. આ ઢાઢા ગર્બ--જન્મને પૂજે છે.

ત્યાંથી ૪૦૦ ગાઉ નાના ટિબેટને પાછળ મૂકીને પશ્ચિમ અને દક્ષિણના ખુણામાં માટા ટિબેટના એફલ શેહેરમાં આવ્યા. તે શેહેર અતિ રૂપાળું છે, જેના કાટ ૨૪ ગાઉ અને બજાર ૬ ગાઉનુ છે. તાંના રાજા જૈની છે અને માવરે જ્ઞાતિના જૈતી છે. તે શેહેરમાં

નદીને સામે પાર ૨૦૦૦૦ જૈન મંદિરા હશે. સાં જેઠ વદી ૧૪ ના દિવસે બહુજ ધામુધ્રમથી મેજા ભરાય છે. તેજ દરિયાને (નદીના) ક્રી-નારે ૧૫૦ ગજ ઉંચા જડાઉ રૂપાના ચિત્રે &ા સંગેમર્મરતા સુદર્શન મેરૂ છે અને તેની પૂર્વ પશ્ચિમ વિદેહના આકાર બની રહેલા છે, તેમાં નાની નાની નદિઓ પણ બનાવેલી છે. તેમની પ્રતિમા બહજ નાની તરતના જન્મ્યા બાળક જેવાં, જન્મસમયની મુકીવાળી હોય છે. તે મેળામાં સવારના વખતે હ<mark>ુલ એક માણસ</mark> વસ્ત્રાભુષણ પહેરી પાતે ઇન્દ્રનું રૂપ ધરીને પ્રતિ-માને મેરૂ ઉપર લઈ જાય છે અને ત્યાં ધણા માણમા મેરૂ ઉપર ચઢીને પ્રભુના ૧૦૦૮ કળશથી અભિષેક કરે છે. અને પાંચ દિવસ સુધી પ્રભુતે રથમાં બેસાડી બહુ ધામ-ધ્રમથી વરઘોડો કાઢે છે. આવાે ઉત્સવ કરતા વાર્જા વગાડતા વગાડતા પ ગાઉ ચાલીને શહેરમાં લાવે છે. આજ દેશમાં સાહના જૈની છે. તેઓ રાજ્ય અવસ્થાને પુજે છે. **એ** રાજય અવસ્થા અને જન્મ અવસ્થાના માન-નારાચ્યામાં બેદ તાે ઘણાજ છે. પણ વિરાધ નથી. બન્ને વચ્ચે એક ઉત્સવ થાય છે. ત્યાંથી ૮૦ ગાઉ ટિબેટમાંજ દક્ષિણ દિશામાં એક રૂપાળ નહાનું વન છે, તેમાં માન સરાવર (Lake) છે, જે સરાવરમાં કમત્ર ફૂલી રહે છે અને ચકલા ચકલી આદિ પક્ષિયા વિવિધ જાતની કરે છે. દાડમ, અખરાટ, તિગેરે જાત જાતના વૃક્ષોનુ વન છે. વતની નજીક સિલવન નગર છે. જેના કાટ ા ગાઉના અન બજાર બે બે ગાઉના છે. ત્યાં ર્જન પંચી રહે છે. હું ત્યાં ૧ વર્ષ સુધી રહ્યો અને દિક્ષા કલ્યાણકના પૂજકાનાં આગમ શાસ્ત્ર સાંભળાને મે**ં અગ્યારમી પ્રતિમાં અ'ગી**-કાર કરી, પરંતુ કઠેણુ વતસાતમી પ્રતિમા-નાંજ પાળી શક્યો. તે નગરમાં એોનાં ૧૦૪ મંદિર શિખરબ'ધ

મહા મતાગ્ય છે અને વનમાં ૩૦૦૦૦ મે દિરા **છે. તેમાં પર ચૈ**ત્યાલય નંદી**શ**્દ્વીપની નકલ-નાં ખતેલાં છે. અને માન સરાવરતી દિશામાં એક મતાગ્ય સ્થળ છે. ત્યાં કાંઇ **. સપ્તય દનમાનન** પિતા પવનજયકમારે રાયણ ની મદદે લંકામાં જતાં અકીયાં પડાવ નાંખ્યા હતા. એવી દંતકથા લેંધમાં યાલે છે પણ હાલ તાે તે વન ધાસું છે. પાંચમા આરા છે. મે તા મારા જીવનના ભારાશા છાડી દર્શન કર્યા હતાં. ભાય છતાં ત્રણે અકાઇયાંમાં ત્યાં મેળા ભરાય છે ત્યાંથી **આગળ દક્ષિણ દિશામાં હન્**વર દેશમાં દશ દશ પંદર પંદર કાસ (ગાર) ઉપર વીશપ'થીનાં ધણાં ગામ અને દેહેરાસર જોવામા આવતા એટલે તે લોકા મને રોક અને કહે 'ક **માગળ ક્યાં જાએ** છે શે ત્યાં માર્ગનથી ખહુ ભાષ છે અને કાઇ જતું નથી. તમે પણ ન જાએ પરંતુ મે કાંઇની વાત માની નહિં અને આગળ ચાલતોજ ગયા અને ૬૦ ગાઉ માનસરાવરથી હતવર દેશની ઉત્તર દિશા-માં ધર્માય્ય નગરમાં આવ્યાે. તે નગર ધહા અદ્ભુત છે, કાટ પથરના ૨૪ ગાઉના અન ખે એ ગાઉનાં ખજારા ચાપડના આકારનાં છે. તે નગરની સામી બાજુએ માટે વન છે તેમાં ત્રણ પંથી. વીસ પંથી. તેત્રીસ પંથી. ત્રેપન પ'થી, તથા અનેક પંથિયાનાં લાખા દેહેરા-સરા છે. આ વન કૈલાસથી દક્ષિણ દિશામા નીચે પૂર્વ પશ્ચિમ લાંબુ ૬૦૦ ઉત્તર દક્ષિણ કાઇ ઠેકાણે ૨૦ કેાઇ ઠેકાણે ૪• ક્રાઇ દેકાએ ૮૦ ગાઉ છે. હન્ તર દેશમાં રાજા પ્રજા બધા જૈનીજ છે અને તેઓ સપ-વંશી ચંદ્રવંશી ક્ષત્રી છે. તે દેશમાં જૈન દેહેરાસરા લાખા છે ગ્યા નગરમાં ૧૫૦૦ ધર છે. કાઈ દેહેરાસર એ ગજ તા કાઇ ત્રશ ગજ ઉંચા શિખરવાલા છે. પહા મ્પંદર માંગહા (ચાક) નથી.

કાઇ દેહરા નરા અહુ માટા શિખર ખંધી છે. वेही (पवास ।) शेला इपानी ६४ अक्षरना ર-તેરથી જડેલ છે જેમાં મતાગ્ય અને શહ જિન્બિંબો છે. ત્યાંના ઢાકા જંગલના જાન-વરે થી ગઢ બીએ છે. બધા નગરાના ઢાટ-ના દર તાજાઓ સાજના એક પ્લાેર દહાડાથી ળાંવ કરી દેશામાં આવે છે. તેથી ત્યાંના ર**હે**-વાસોના મન તનુ ધણા રાકવા લાગ્યા. કે ત્યાં જંગલી જાતવરા સિંહ, વાલ, વગેરે કાછ તમને ખાઇ જશે માટે અહીં રહીતે દર્શન કરાે. અહીંથી દમેશ દર્શન થાય છે. સવારમાં દર્શન કરજો. જુઓ, અહીંથી ૪૦ ગાઉ સુધી વન છે, ત્યાંથી આગળ ૪ ગાઉ સગરગંગ નદી છે. અને ૩૨ ગાઉ **હ'ચે**। ત્યાંથી ડુંગર કૈલાશ છે, આ કૈલાશનાં દર્શન બસો <mark>બસ</mark>ો ગાઉથી થાય છે. અને જયારે બરક ઓગળી જાય છે ત્યારે **દેહે**રા**સરા પ**ણ દેખાય છે. પણ મે**ં કાઇની વાત માની નહિ**ં. અતે દર્શનતી અભિલાષાથી નિડર **થઇ**િ આગળ ચાલ્યા, અને એવા વિચાર પણ નક્કી કર્યા કે સગરગંગતું નાળું ૪ ગાઉ અને પહેાળું અપાવશે તે શી રીતે શકારો ? અને વળી ત્યાંયી ૩૨ ગાઉના ડુંગર શી રીતે ચઢાશે. હું તા શ્રીજીની આરાધના કરીતે ધી ા ધીમે ચાલ્યા. એમ કરતાં કરતાં સગરગગ નાળા આગળ આવી પહેાંચ્યાે. પણ ચઢાય શી રીતે ? થાકયા. અને નાળા ઉપરજ વીતરાગ ભાવાથી યાગ ધ્યાન ધરી આખડી (નિયમ) લઇ કાયે_:ત્સર્ગ કર્યો, અને નિયમ લીધા કે જો કૈલાસનાં દરોન **થ**શે, બીજા ૨૩ મહારાજની નિર્વાશ નાં દર્શન કરી પરિગ્રહ ભાગ કરીને દિગંબર મુનિ થઈશ, બાવીસ પરીષદ્ધ સહન કરીશ. અને જો દર્શન નહીં થાય તા અહાર પાસીના બીલકુલ ત્યાગ કરી <mark>અહ્નીંજ સમાધિ</mark> મરણ કરીશ, આવી રીતે ૪ દિવસ વીતી ગયા, ત્યારે એક વ્યંતર દેવ માણસનું રૂપ ધરી આવીને મને પૂછવા લાગ્યાે. તમા કાસ

છા ? મેં કહ્યું કે હું પ્રભુતા સેવક છું. કૈલાશનાં દર્શનની *પ*ચ્છા છે. સારે વ્યંતરે કહ્યા – તું ગાંડે છે કે શું ? શી રીતે દશન કરીશ ? જા તારાથી દર્શન ચવાનાં નથી. ત્યારે મેં કહ્યું તમે કાણ છે ? તમે મતે **ગાંડા કહી દર્શનમાં અંતરાય પાડા છા. હ**ં ત્રાંડા નથી. તમે મતે દર્શન માટે **રાેકા** છેા **તેથી તમે હી**નધર્મી (ધર્મ રહિત) છેા. વ્યંતરે કહ્યું-લાઇ, તું અજારયા છે. જો, આ ૪ ગાઉનુ નાળું અને ૩૨ ગાઉ ડુંગર! શી રીતે દર્શન થશે ? હારે મેં-કહ્યું તમે જાઓ, **બાહ્યરા નહિ. થ**વાનું હશે તે થશે. ત્યારે વ્યંતરે મને સાધુ જાણીને દયાભાવથી કહ્યું-આંખા બધ કર. મેં બંધ કરી એટલે તેઓ મને ઉઠાવીને કૈલાશ ઉપર લઇ ગયા અને <mark>એ પહેાર</mark> (છ કલાક)માં બધાં દર્શન કરાવીને **પાછે**ા ત્યાંજ લાવીને ચાલ્યા ગયા. દર્શન કરતાં ચ્યા વ્યંતરે મને બધી લકીકત મ દિરાની ઉત્પત્તિ, ડુંક, મેવા, વનસ્પતિ-ધાતુઓની ખાછા. મુનિઓની નિર્વાણ ભ્રમિ, પ્રતિમાએાના આકાર, વિગેરેની સમજૂતી આપી જ્યારે મને છૂટા કર્યા લારે મેં પુષ્કયું–મહારાજ, તમે કાેણ છેા ! તેેે કહ્યું કે હું વ્યાંતર છું. ખવરદાર! ને કહીશ નહીં. એમ કહી અદશ્ય (અક્ષાપ) થઇ ગયા.

ભાઇએા, મેં આવી રીતે કૈલાસનાં દર્શન કર્યા અને મને ઘણા આનન્દ થયાે. તમાે બધા ભવ્યા દર્શન કરાે. આથી કર્મવધ છૂટી જશે.

કરિનની હકીકત.

દર્શનની હકીકત એવી છે કે પ્રથમ તો ક્ષ્યભદેવની ડુંક વાંદી કે જે રત્નજડીત હુ-મઢવાળી છે તેમાં પ્રસુછનાં પગલાં છે. આ ડુંક દલીશુ દિશામાં સાનાની ખાગુપર ૮૦૦ ધનુષ ઉંચી આવી રહેલી છે. તેના અપૂર્વ મહિમાં છે. સાંથી આગળ સાના, ચાંદી, તાંશુ વાંગેરે ધાતુનાં ૭૨ મ દિરા છે. તેમાં એક મંદીર ભરત રાજાનું રતનજડાઉ મંદિર છે. આ માંદિર ૧૦૦૦૦ ધતુષ ઉંચું, લાંભુ પહેાળું ૧૦૦ ધન્ય, ઘમટ ૨૦૦ ધનુષના, ચુલકા ૧૦૦ ધનુષની અને કળશા રતનજદિત છે. તેમાં ત્રણ ચાવીશીઓની ૭૨ પ્રતિમા અતીત, અનાગત અને વર્તમાન તીર્થકરાની, એમના શરીરના પ્રમાણની રત્નજડીત અને દેવાેથી વંદનીય એવી ખીરાજમાન છે. આ **મંદિરમાં** ૮૪ જાતનાં રત્ન જડેલાં છે. પ્રતિમા પદ્મા-સન છે. આ ૭૨ મંદિરા ભરતે, અથવા તેમના પુત્રાએ અથવા કાણે બનાવ્યાં તે નક્કી કહી શકાતું નથી. એ ૭૨ મ'દીરામાં એક રત્નતું, ૩ સોનાનાં, ૧૦ ફપાનાં, ૨૬ તાંબાના અને **૨૨ ખીજી ધાતુઓનાં છે. જેની રક્ષા દેવા કરે છે.** તે મંદિરાનાં દર્શન મે મન વચન કાયાથી કર્યા પછી મુનિયાની નિર્વાણ ભૂમિ વાંદી.

कैलासगीरीनुं चित्र.

કૈલાસગિરિતું ચિત્ર આ પ્રમાણે છે**-**ઉત્તરમાં રૂપાની ખાશ, પશ્ચિમમાં પાષાશની, દક્ષિણમાં સાેનાની, અને પૂર્વમાં તાંબાની ખાચ છે. અને ખીજા જંગઢામાં બીજી બીજી ધાતુઓની ખાણા છે. ચારે દિશામાં એક યાજનના આઠ સિવાન (શે) છે. તેથી એનું નામ અષ્ટાપદ પડ્યું છે. પર્વતની પ્રદક્ષણા ૪૦ યોજન (૧૬૦ ગાઉ) ની છે. વન ધણાં ઘાડાં છે. બધા પર્વતાનાં મંડળામાં આ મંડળ માટું છે. નંદન વનની પૈકે સુંદર છે. ઉ**દ્યા**ત રૂપ છે. વચ્ચાવચ માટ તળાવ છે. જેમાં પાણી ઘણું ઉંડું છે અતે તેમાં કમળ પુલી રહેલાં છે. અનેક પ્રાણીએા જેમ હંસ, સારસ, ચકલા, દેડકા. માછલાં વગેરે ક્રીડા કરે છે, જાત જાતના મેવા તથા છ ઋતુના કળ પુલ કુલી રહ્યાં છે. દેવ વ્યત ર વીગેરે દ^શનને માટે આવે છે. તેઓ સાં રહી અનેક જાતની ફીડા કરે છે. ક્ષેત્ર એવું તા રમણીય છે કે તેની મહિમા વર્ણવી જાય નહી. કારણ કે જે જ્ઞાન મને ત્યાં દર્શન કરતી વખતે થયું હતું તે અહીં રહ્યું નથી, વચમાં કૈલાસગીરીનું શિખર ૩૨ ગાઉ ઉંચું આવી રહેલું છે. તેની તળેટીમાં ધણા જીવાના વાસ છે. અષ્ટાપદસિંહ, વાધ, મૃગ, સિંહ, ચીત્તા રીંછ, અજગર, માટા માટા વીંધ જંગલી અને ઝેરી જાનવરા પણ ધર્યા છે. ચિ'તામણિ, પદ્મરાગમણિ, લાલમણિ, સર્પમણિ સર્પતે માથે પણ જોવામાં આવે છે. માના ત્યાં હજુ ચોથા આરાજ ચાલે છે. ભગવાન આદિનાથના સમયથી હજા સધી એવા ને એવાજ ચાલે છે. તેને ધન્ય ભાગ્ય છે કે જે આ પર્વતની વંદના કરે. કારણ કે ભરકથી ડુંગર ઢંકાયલા રહે છે ને યાત્રા થવાની કઠણ છે. અને આ વખતમાં કાઇની કાયાની ચાવી સહનન (મજ**ણ**તાઇ) નથી. रिधति दती अने प्रसम सधी रहेशे.

પછી હું તે નાળા ઉપરથી જે માર્ગે ગયા હતા તેજ માર્ગ ઉપર પાછા આવ્યા. ચ્યતે એક પદ ભૈરવ રાગમાં **બના**ગ્યું અને બધા જૈનોને દર્શનનું કળ ખતાવ્યું. આવી રીતે હું યાત્રામાં સફળ થઈ ૧૮ વર્ષે પાછા દેશમાં આવ્યા. ૧ વર્ષ સુધી ધર્મશાળા માં રહ્યો અને મારી પાતાની લીધેલી સગર ગંગ ઉપરની આખડી (પ્રતિજ્ઞા) યાદ કરી હતી અને તેજ પ્રમાણે પ્રથમ હિખરજીનાં દર્શન કર્યાં. પછી ચંપાપુર, પાવાપુર, રાજગૃહી, કજલીવન, રેવાતટ, વગેરેનાં દર્શન કરી પશ્ચિમ-માં સાનાગિરિ, મકસીપાર્શ્વનાથ, આવછ. विद्यायण वन, शक्यंथा, शिरनारक्रनी वंहना કરી. પછી દક્ષિણની બાજુમાં ભાવનગર, ગામઢસ્વામા. તૈલંગ દેશ. દ્રાવિડ દેશ. કર્યાંટક, વગેરેનાં ચૈત્યાલયોના દર્શન કર્યો. પછી દક્ષિણુથી નૈંત્રક્ષ્યમાં જૈંતબદ્ગી, મૂળબદ્ગી, તલઘટ દેશ, ત્રાવનકાર, કાવર્ણના ચૈંસાલયાની વંદના કરી, પછી ખધી જત્રા કરીતે ત્રણ વધ્યુધી જૈનબદ્ગીમાં રહ્યા અને ત્યાંથી મારી જત્રાનું વર્ણન લખાવીને ૧૦૪ માટા માટા માટા માત્ર માટા માટે જે જેમકે કૈંશલદેશ, કુર- જાંગલદેશ વગેરે. આવી રીતે મેં મ્હારી બધી જત્રા બાવીસ વર્ષમાં પૂરી કરી માટે હે ભવ્ય છવા! મન વચન કાયાથી વંદના કરા અને સાવના લાવા.

पद प्रभाती.

गिरि कैलाशके दर्शन कीजे जासों होय
निस्ताराजी ॥टेका॥
मोटान देशसे चल रस्तेमें जिन मत अधिक
अपाराजी ॥
तरह तरहकी आम्नाय देखी विम्च रत्नमई
सिंहाराजी ॥१॥
नौ हजार शतआठ चौरानव कोस चले
पग धाराजी ॥
गही मृमि पैरन से यात्रा पहुंचे गंग
उपराजी ॥२॥
धरो ध्यान न आहार आखडी चीत गए
दिन चाराजी ॥
इक व्यंतर ले गया हमको दर्श पाय

નાટ-હ્રાહ્મચારી લામચીદાસજીએ વિક્રમ સંવત ૧૮૨૮ માં દડક દેશ અને દંડકવનની ઉત્તર દિશાં જઈ વસ્ત્રત્યાગ કર્યો. અને ત્રિષ-ખુ નામે મુનિ પાસે દીક્ષા લીધી. અને કેશ, હાચ કરી નમ્ર મુદ્રા ધરિ મુનિવ્રત અંગીકાર કરી કાયાત્સર્ગ યોગ ધ્યાન ધરી માનથી સન્યાસ મરજા કીધું.

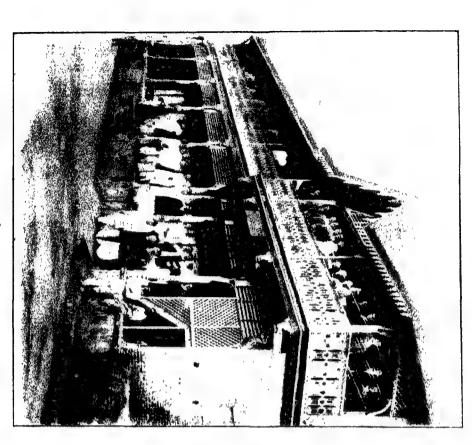
निर्वाराजी ॥३॥

मनम टाक ऋषभको वंदो सम्यक ज्ञान चिताराजी. केर सवर्ण मई मंदिर बन्दे बिंब रतनमई राजेजी ॥४॥ ताकी महिमा बरणी न जाई नहि बुद्धि मेद कहुं साराजी, दोय पहरमें वह व्यंतरने छोडा गंग किनाराजी ॥५॥ जिन रास्तेसे गमन कियाथा उन रस्तों उल्टानाजी ! वर्ष अठारमें उस्टे फिर आयो देश मझाराजी ॥६॥ वर्ष चार फिर हिन्द महनमें दर्शन निर्वाण पधाराजी। जैन मूलबद्री तक पहुंचे छांडा मोह स्रसाराजी ॥७॥ संवत् १८२८ समय भये नग्न ब्रह्मधाराजी। कामनीदास प्रभु दंडकवनमें तुमरे नाम अधाराजी ॥८॥

પત્રની નાટ—શ્રાવકળના, શ શય કરશે. નહિં. જે બ્રાવક નિઃસંશય સમ્યક્ત (શહે) શ્રી ભાએ તેને જરૂર દશેન થશે. ધમ જે પ્રકારે છે નિશ્વય અને વ્યવહાર, નિગ્રંગ નિશ્વય છે અને વ્યવહાર નિક્ષ જાણવું. લગતાનન વાણી જે થઇ છે તેના નિશ્વય કરવે. નિઘ અપાર છે. વ્યંતત્ને ઘણી ઘણી શક્તિ હું ય છે. તપને લીધે ભવ્યાન દશન કરતે છે. ખરૂં સમજો અને જીતવર્મમાં શંશય કરશે! નહિં. શાસ્ત્રમાં કહ્યું છે કે અયે ધ્યાયી છ ત્તરમાં ૧૬૦૦ કાસ (યાઉ) કેલાસ છે તેન પર્મા ૧૬૦૦ કાસ (યાઉ) કલાસ વ્યાચા પાર્ચ પર્મા પૂર્વ, પછી ઉત્તર, પછી પશ્ચિત જે.

પાછી દક્ષિણમાં ૯૮૯૪ ગાઉ સુધી જઇ આવ્યા. કલાસગિરિ ટિબેટ ચીનના દક્ષિણમાં હન મરદેશની પેલી બાજાએ છે. તેની તળેટી-માં ઉત્તરની બાજાએ ધીધર વન જાણવું. વ્યાંતરને માટે સાંભળતું હતું કે એ<mark>ની પશ્ચિમ</mark> દિશામાં પાય ણની ખાણ ઉપર હ**ન્તુ એક શિલા** ઉપર પહેલા રૂલ્લામાવલ મહેશનું ભવન હતું. તેમાં તે રહેતા હતા. તે ભવન ૮૦૦ ધનુષ લ્સું હતું. તે ઋષ્યભ દેવના <mark>પધારવાથી પડી</mark> ગયું હતું. માત્ર સ્થાન (મુકામ) રહી ગયું હતું. તે ફક ત્યાં હવે લાખ વર્ષ સુધી રહ્યો હતા. એતું પૃણ અહ્યુપ ૮૩ લાખ પૂર્વની હતું. એનું શરીર ૫૦૦ ધનુષતું હતું. એ સ્થાને ૧૧મા રૂદ્ર મહાદેવ પણ ત્યાંજ રહ્યા હતા. અંજ લિખિત લામચીદાસે સવત્ ૧૮૨૮ ફાગણ સુદી પ રવીવારના દિવસે પૂર્ણ કરી.

નાહ:--આ પત્ર સર્વેએ વાંચ્યા પછી आयीन शाध भाण धरनारा कैनाय के के રસ્તાઓ, શહેરા, સ્થાના, જન મંદિરા, જેનાની વસ્તીનું વર્ણન આ પત્રમાં ખતાવેલું छ तेना पनता मेळ ी। जोहं से. शांध भाज ચાત્રવામાં આવશે હ તાતાર, ટીબેટ અને ચીનમાં જૈન પ્રાંતમાઓ, જૈન શાસ્ત્રો અને લે કે.ના પ*ાં* મળી શકરો, કેમકે આ વાત ૧૫૦ વયની પુરાણી છે તેમજ કૈક્ષાસ ખકત ભામગા એક સંધ કાઢી ટિખેટને ર-તેથી સગરગંગ નાળાં સુધી અવશ્ય જાય અંત ઘશીશ કરે તે સંભવ છે કે કેલાસછ અથવા અશુપદ્ દર્શનના માર્ગ **સુગમતાથી** પ્રાપ્ત થમ જાય. હાલમાં આ પર્વત સુધી પ-હાંચવાનાં રેલ્વે, ગાડી વગેરે અનેક સાધન છે. વિજ્ઞાનની સહાયતાથી કાર્યની સફળતાના સં-ભવ વર્ષ રાક છે, જેથા કે⊪ઈ **ચ**તુર ઈજીનીયર ડારા રસ્તો પણ કીક થઇ **શકે છે. સાથી** પ્રથમ ક્રાઇએ ચાન દિખેટના મુલકના પ્રેક્ટો



शेट पेमचंद मोतीचंद दिगंवर जैन बोर्डिंग स्कुल-अपदावाद.



The state of the state of

シンシンンのおさくらくらく



बाबु चननदासर्जी बी. ए. हडसास्तर गवनसँट हाइस्कृळ-लग्बनद. (भारत केन भटभ धणना भटभ श्री अने केन्सना श्रोप दिस्हासो

(भारत कर मा म अना म तम्म श्रा आन अनाना अन् क्ट्रिसा । स्रोप मादनार अन्तानी अने भारीता श्रेणवारता शहरथः) क्ट्रिस्टार्ड अन्तर्भाव कर्मानी अने भारता । अन्यक्तिकार्थ अन्तर्भवक्तिकार ।

THE LEVEL OF CRESTER STATES OF THE PROPER PROPER PROPERTY.

(ધર્મપૈમી અને વિદાન કેળવાયલા ચહરથા)

्रैश्रीमान बाबु अजित्यमादजी एम. ए. एल. एल. वी. विकल े हाईकोर्ट, पटलीक प्रासीक्युटर और गवर्नमेंट प्लीडर-लखनेट. નકશા મંગાવવા જો-એ અને તેમાંથી જે શકે રાતા ખતાવેલાં છે તે શેધી કાઠવા પછી પ્રથમ ત્યાં કાઈ સાથે પત્ર વ્યવદ સ્વલા વામાં આવે અને પછી ત્યાં જઇને બાતમી મેળવવામાં આવે તો જૈન ઇતિહાસમાં નવીન અજવાળું પડી શકે.

સ'પાદક.

ભાદ્રપદ શકલ ચાય—પાંચમને હિને સકળ માનાંખર આમ્નાયવાળા જૈતાના પૂર્ય વર્ષ પર્શ્વાસ પૂર્ણ થયાં અને શ્રી દિગંળર સમ્પ્ર-દાયના એજ પર્વના કે જે "દશ લક્ષણી" પર્વ તરીકે ઓળખાય છે, તેના પ્રારંત થયા. આ દિતિય પર્વ-દિવસામાં લેખકના સ્દ્રમાગ્યે એક સભ્રાવક-જાત શૈંશીના પરંતુ પરમ ઉદાર આશયવાળા. વર્તમાનકાળમાં આનંદ દેવને યાદ કરાવનાર મંબઇ પધાર્યા શ્વેતાં મર સંપ્રદાયવાળા સજાવક જે પાતાનાં નામ જાહેર થવાજ ન ৮২છે તેવા સફ મૃદ્ધરથે છ દિવસ સધી ઉપદેશામૃત એવું વર્ષાવ્યું કે ક્ષેખક તથા બીજી પંદરવીશ માણમની મંડળા તેનું પાન કરી આ પર્વ દિવસામાં અપૂર્વ શતિ પાસ્યા. અમારી ધણીક ખામી^{ગે} ! અમે જોઇ શક્યા અને વર્તમાનકાળ જેને ધ્રસાક લાક નિંદે છે, તે કાળમાં પ્યુચ્યાવાં શ્રાવક રત્ના હાવાથી અમને તા એમ લગ્યં કે જાણે સહરાના ઉષ્સનમ રસમાં પસ શાંતિ-જનક કુલ બાગ (oasis) છે ખરા. એ ત્રાહ્મી મુખ્ય સોળ વિષયના એ.ધ કરે છે. અને तेत દ્રષ્ટાંતા પછી પાતાપર--અહમાપર એવી રીતે ઘટાવે **छे हे श्रेला तुरतक-तेकवेणायी याताना** હદયની શહિ કરા અભિમાનને માળી સરળ-

પશ્ચે તેવું અલ્યાન કરવાને તતાર થયા છે. સવળ શ્રેતાની ખત<mark>ી થય, કે ક્રાઇ પણ</mark> તેજ ઉત્તદેગ હૃદ્ય સુધી અમર કરે છે કે हे ते हत्यमांथा नीक्षेत्रे। है।य क्षेटसंकर निदः, परंत वक्ताना हृहयने વિશહ લે છે; અને તદનમાર મન, વચન કાય ને પાતાના આત્મજળવડે ચલાવી અપાઈલામ થેહાજ સમયમાં સંપાદન કરે છે. તેવહાશ્ર એ સોળ વિષયે માંથી અમને રશ ક્ષત્રએ કરાવ્યા છે. આ દરો વિષયા એમની ઉપદેશ શેલ થી માત્ર ધી તાંબર જૈતોજ નહિ પાંચ અપ્તીલ જૈત વર્ષને તેમજ અખીલ માનવ જાઈકને ભન્ચક ઉપગારી છે. મનુષ્ય જન્મમાં પણ નારકી જેવા. મહાકચ્છ નારા અસાધ્ય રાગોતી મટાડતારા, પશુપણાં માંથી મતુષ્યપણું લાવનારા, એટલુંજ દેવત્વ દેખાડનાં એમનાં વચના છે. આટલી પ્રસ્તાવના ⊾री वेणा 11/6 વિષય ન લખતાં તેમનાં ઉપદેશાસત જે અમે 20-24 करेते। भे કર્ય છે તેના વિસ્તાર આ 'દિયંત્રર જૈન ' દારાએ નિશેષ જૈન બાંધવા અને બ્હેનાને મળા એવા આશવધા એ સોળ વિષયામાંથી ક્રમપર લક્ષ અમાપ્યા સિવાય ઉત્તરના વિષય તેમના બાધના અતુવાદ રૂપ લેખક અહીં લખ છે.

મનું ય પ્રાણી કેવા ભાગ્યવંત છે કે તેમને વચત નામના એક ઘણાજ કિમતી ઉપુત્ર થાય છે. ખાપણેત્યાં પુત્ર પેદા થાય, તાં તે પુત્રપર એ જણાના હક હેય છે. એક તાં અંતા અને બીજો હુર્ંપના પરંતુ આ વચન રૂપ પુત્રના હક આપણે એકલાજ પેદા દરી એ છીએ, તેવી સર્વથા તેનાપર આપણાજ ડ્રુ છે. આમાં આકું કંઇ લાગેવળને નહિ, આંતા પુત્રમાં પુત્રપતું કંઇ લાગેવળને નહિ,

१-हेटवाड केन्द्रियां श्रेष्ट

अभय व्यक्ति भेतिभोतानी भेणे भातेल **% अल करे छे. को** विशिक्षण होय. ते। भाने મનુષ્ય જન્મના લાભ પામે છે. અને **ભીજાને મે**ન્ક્ષે પણ પહેાંચાડે છે. વચન પુત્ર भेषाना पिताना अनेक अधीता-अअधीता **માંધના** કાપી મકત કરે છે. એટલંજ નહિં **५७: '**डें। इंड वयन ते। राज्य सिंदासन्पर श्विताने भेसाउता होय तेव करे हरे छे. भरंत આ પત્રને કેટલાક પિના આગમાં-ધળમાં મેલા ધેકા કરવા દે છે. કેટલાક તેને નાગાન **નાગા** રાખે છે. કેટલાક દાગીના પેઢેગવે છે. પાસ વસ્ત્ર વિનાના નાગા રાખે અને કેટલાક श्रांडक्षे करे. प्रश्न स्तान न करावे व्यावे। મુત્ર કદાચ પાતાના હાવાથી પ્રિય લાગે. પરંત **બીજાને** તે વહાલા કેમ લાગે ! આવા પત્રને **म्हार** हैरववे। तेना इत्तां धरमांक राभवे। में डांशंड ज्यवहारे भेगई न ग्रशाय, पर'त ले ते भील क्षेत्राने अने आपक्षते भने। **ગમ લાગે તે**લું કરવું હેય. તા અન નીચે अभाशे करवु की हुकी, अने ने प्रश् यथ की મેહેલી, ખીછ, ત્રીજી, અને ચાથી આ ચારે क्षिया करवा पछी, प्रतने लढार जवा हेवे। ते। अवश्य विश्व वदशक्ष थशे आहंबी वात **इरी ने**व्रश्रश्रीय, तेना ६५नय व्या अहारै લગાડયા--

જેમ પુત્ર જન્મ્યા પછી ધરમાં રમે છે, તેમ વચન હૃદયમાં-મનમાં પેદા થયા પછી મૂખમાં રમે છે. જેમ પુત્રને આપણે મૂખમાં રમે છે. જેમ પુત્રને આપણે શુદ્ધ જળથી નવડાવીએ છીએ. તેમ વચનને "સત્ય" રૂપ જળથી નવરાવી જોઇએ. જો "સત્ય" રૂપ જળથી નવરાવી અસત્ય ધુળ અને નિંદા રૂપ કાદવ તેના પરથી દૂર કરવામાં આવે, તા વચન રૂપ પુત્ર મનુષ્ય જનની શ્રેષ્ટ્રવર્તની ચેત્યાપને તા તે અવશ્ય માનનીય સંધ્ર પડશે. હવે વચન "સત્ય " દાય અર્થાન તેમાં અસત્યરૂપ ધુળ કે નિંદા રૂપ કાદ હતા હતા. પરંત તે 'પથ્ય'ન હોય અર્થાત

'ાટેતકર'ન હોય તેા સ્વ≥છ સ્નાન કરેલ ખાળક પણ નગ્ન હેાવાથી વ**લ્લભ** લાગે. માટે જેમ પુત્રને લુગડાં પહેરાવીએ छी थे. तेम वियार धरवा है ते वयन श्रीताने દિતકર કેમ થઇ પડે, જો દિતકર દ્વાય તાજ તે ''બાલવ'' મનું ખ જતિના અરધા ભાગને ते भाननीय धशे. એકલ सत्य ंदशे परंत હિતકર ન દશે તા તે ચાયાય ભાગેજ અસર કરશે. વળી જેમ પુત્રને સ્નાન કર્યા પછી વસ્ત્ર પહેરત્વીએ છીએ. તેમ વચનને (હિતકર કરવા) રૂપ વસ્ત્ર પહેરાવવાં જોઇએ. પત્ર સાહામણા લાગે, માટે આપણે તેને શક્તિ અનુસાર અ.ભૂપણાવડે ભૃષિત કરીએ છીએ, તેમ વચનમાં પણ પ્રિયતા-કામળતા ગુણ દર્શતારૂપ સાના-મેત્તી-હીરાના દાગીના पहेराववा कोश्मे. को आ अहारे यथाइस કરવામાં આવે. તે વચન જ્રાતવર્ગના કે વાંચક वर्भना पेला सागने भाननीय थशे. तथापि की ते सर्व भाननीय धरवे। है। य. ते। પૃત્રને આપણે સ્તાત, વસ્ત્ર, આભૂષણો ઉપરાંત તીલક પણ કરીએ છીએ તેમ તે વચનમાં પૂર્ણ પ્રતીતિ લાવવા આપત પુરુ-યતી ગવાહી રૂપ-સાક્ષીરૂપ તીલક કરવું की हुओ अर्थात् अज्ञ भुःसर स्मे वयन देवि જોઇએ. જેનદસનની આજ્ઞા એ પ્રકારની હોય છે. એક તત્વરાધ્યેએ સ્યાદવાદ શકત અને બીજી લ્યવહાર દ્રષ્ટિએ શાસ્ત્રાનુસાર આમ यारे अ मे विल्लित प्यन अवश्य सर्व भान-નીય થાય, અવા એ બાવક શિરામિસના ઉપદેશ દતો. આ ઉપદેશ હતો. આ ઉપદેશ વાંચકને નવીન નહિ લાગે, તથાપિ અનુભવ हरवाने ओड, भे, डे त्रल वभत प्रयेश डरी कोताधी पेतानेक तेनी भात्री थशे. दं हामां તેની અસર બીજા કાન સુધી પહેંચે અર્થાત બી જાને સંભળાવ્યું એટલે થઇ રહ્યું, તથી. પણ જેવખત મગજમાંથી નીકળતે વખત શ્રોતાને-વાંચકને-મનન કરવા, પરંદ્ર

મનન ઉપરાંત તેની અસર નથી. માત્ર છુહિને સ્પર્શ કરે છે. આગળ તેની ગતિ થતી નથી કે માણુસ તેને વિચારમાં આવ્યા પછી આચારમાં પણ મૂકી શકે. તેમજ જે વચન હૃદયમાંથી નીકળે છે, તેની અસર શ્રેતાના હૃદયપટને ઉઘાડી સૂતેલા આત્માને જાગન કરે છે, તથાપિ જે વચન આત્માના ઉપયાગ પૂર્વક વદાય છે, તેની અસર શ્રેતાના આત્મા સુધી પહેાંથી તેના હૃદયને નિમળ કરે છે, વચન, જે વિભૂપિત કરે છે અને કાવાપાસે તેની ક્રિયા રૂપ વસ્ત્ર પહેરાવી પરમપટે સ્થાપ નાર થાય છે, માટે વચન તે!—

સત્ય, પૃથ્ય, પ્રિય, અને અત્રા પુરસ્સર હાર્યા જોઇઅ, તેજ શુકલપટપર જે રંગ ચડાવવા હોય તે ચડી શકે.

લઘુત્રસ્ત્ર વીરન'દી (લાલન)

SAKAKAKAKAKA ZAKAKAKAKAKA

प्रिय पाठको! आज कल उक्त शब्द पर बहुत ही चारों तरफ विचार हो रहा है और इसके फैलानेके लियेभी पूर्ण प्रयक्त चल रहा है. इसमें कोई संशय नहीं है कि कुछ वर्षों में अवस्य ही हम लोगोंकी दशा का फेरफार हुवा है, परंतु वास्तविक लाभ जो होना चाहिये था नहीं हुवा. इसका कारण यह है कि अभी तक हमारे देशवांसियों व जातिवालों और धर्म धारि-योंने इसके (उन्नति) के सच्चे भागर लक्ष्य नहीं दिया. और जिनका कुछ लक्ष्य है भी व द्रव्यहीन है इसी लिये वे लोग या ते। अपने विचार प्रकाशित करतेही नहीं और

कदाचित करतेभी है तो तुरंतही रूक्मिके लाल उन्हें टकासा उत्तर दे देते है कि "पराया लिए श्रीफलसा" उठाकर फोड दिया, तुम्हें क्या सकर कि लक्ष्मीजी कितने कप्टले प्रसन्न होती है. कुछ सर्चना पड़े तो याद हो. बंधुवो! यह तो आप जानते हैं कि विद्या और ह्यू नेमें सदैक्से अनवनाव रहता है. वे दोनों कभीभी भिन् लकर नहीं चाहतीं, जैसा निम शिक्षित स्रोक से विदित होता है:—

ज्ञूरं त्यजाभि वैधव्यादुदारं रुज्ज्या पुनः। सापत्न्यात् पंडितामपि तस्मात् कृपण-माभयेत्।

अर्थात-शूरबीर के पास विधवा होने के डरसे, उदार के पास लज्जा जानेके भयसे और पंडित के पास सौक (विद्या) के भयसे नहीं जाती हूं, और इसी लिये कृपण के आश्रय रहती हूं क्यों कि वह भेरी अच्छी खातरी करता है. इत्यादि और विना परस्परकी सहायसे कुछभी कार्य होना असाध्य है. कहा है—

साई पुर पाला पड़ो, आसमान से आय, पंगु अंधको छोडके, पुरजन चले पराय; पुरजन चले पराय अन्ध इक मती बिचारो, बंगाको पीठ. दीठ बाके पगु धारे; कहें गिरधर किंदराय मतेस चलि-यो भाई, विना मतेका राज्य गया राव-नका साई.

अर्थात् किसी नगर के बाहिर पाठा

[एक मकारकी ओस] पड़ी हुई सुनकर नमजन सब देखनेको गये, परंतु अधे और लंगडे रह गये. तब दोनोंने सलाहकर चल-नेका मनसुबा किया. तो अंधाने हंगडेको मस्तक (पीठ) पर रखा और लंगीने रास्ता बताया. इस इसी प्रकार सलाहसे दोनों इच्छित स्थान पर पहुंच गये और रावन यद्यपि हैसंडी प्रतिनारायण था. ठौभी अपने भाई विभीषण से विरोध करने के कारण मारा गया. तात्पर्य-इस असार सं-सारमें जो आंख और पांच वाले थे. वे तो कभी के पार निकल गये और निकल जा-बेंगे, परंतु अब तो अंधे और लंगडे ही रहगये है, सो यदि वे दोनों भिल जाय तो देशक उन्नति होना कुछ कठिन नहीं है और हमेशा से यही नियम भी इला आता है. देखिये, हमेंशा से और आज भी बड़े बड़े राजावों के यहां मंत्री, पुरोहित आदि रहते हैं जो बिलकुल राज्याश्रित ही अपनी आजीवका चलाते हैं, परंतु राजा उन्हें **आश्रित नहीं समझते. उनके** पर विचार करते और बताए हुवे मार्गपर अवलंबन करते हैं. इसी से निष्कंटक राज्य चलता है और जब मंत्री पुरोहतादि से बिगड़ जाती है. तभी शत्रु को प्रवल होने का मार्ग मिल जाता है. जैसे विभे पण के विगड़ ने से र मचन्द्रजी को सहारा मिल गया. आंख और पांव चाहे परापर एक दूसरे घुणा करे, परंतु यह निश्चय है कि एक

के विना दूसरे का कार्य कभी नहीं चल सक्ता है.

शास्त्र वहता है कि यथार्थ में बेही अंबे हैं जिनको ज्ञान नहीं है. और संगदे वेही हैं जिनके पास द्रव्य (सक्ष्मी) नहीं है. इन दोनों में विशेषता यह है कि अंधा तो टक्ष्मीवान् होते हुवे भी चोरों से चौकसी नहीं रख सक्ता और किसी समय सर्वस्व खोकर लंगडा होजाता है. इस से आं**ख** तो थी ही नहीं और पांव टूट गया. तब पडा पडा दु:खसे जीवन समाप्त करता है. परंतु लंगडा निर्धन होने पर भी येनकेन प्रकारेण प्राप्ति की हुई थोड़ी सी सम्पत्ति की भले प्रकार चौकसी रखता है. और बदाने की चेष्टा करता रहता है, तो दुःछ कालमें वह धनी हो जाता है अर्थात् वह अपने पांव को लकडी आदि के सहारे से टीक कर लेता है तो आंख तो थी ही आंर पांव से भी सहारा मिल गया, तब सानन्द आयु पूर्ण करता है अर्थात् ज्ञानी पुरुप लंगडे के समान है. और अज्ञान धनी अंधे के समान हैं. सो यथेष्ट लाभ तो दोनों के मिलने परही होता है, तथापि विदान अपनी युक्ति बलसे भी कार्य जो एक प्रकार असंभवसा दीखता, संभव कर लेते हैं. जैसे िमस पनी वि-सेन्टने हिन्द कालेज बड़ा उनारसमें बना दिया. मदनमोहन मास्वीय ने एक हिन्दू बोर्डिंग प्रयाग में बना दिया

और एक हिन्द विश्व दिद्यालय बनाने की चेष्टा कर रहे हैं. जिसमें प्राय:सुफल मनो-रथ हुवे. परंत अज्ञान धनी अपने आपको श्रेष्ठतम् समझकर रूक्मीदेवीके जारुसे गाल फुलाये पंच इन्द्रियों के विषयमें मझ हुवे, पूर्व संचित लक्ष्मीका अनुचित व्यय कर दरिद्र हो जाते हैं, अथवा कई एक कृपण उसे (ला६म) को सम्हाटते संहालते मर जाते हैं. यहां तक कि ख़द भी खाते पहि-रते नहीं, फीर दान के नाम तो कान ही नहीं रखते थे. सो वेभी उसे कंकर पत्थर की तरह यही पड़ी छोड़ जाते हैं, तात्पर्थ-निर्धन ज्ञानी भी किसी प्रकार मूर्ख ब क्राण धनीसे अच्छा है. चाहे उसे हमारे इंद्रीगोचर पैहिक सुख न मिलते हों. परंतु वह अट्ट सुर्खोका साधन कर सक्ता हैं.

यह पहिले ही कह चुका हूं कि विद्या और छक्षी पास निवास नहीं करती हैं. जसा कि मायः आजकाल देखनेमें आता है. ओर कदाचित् काकतालीय न्यायवत् कहीं हों भी, तो वहां विषय कषायों की मबलता देखनेमें आती है, जिस से वह विष मिश्रित दूर समान माणघातक हो जाती हैं. भिश्री न होती और खाली दूध ही होता, तो इतनी हानी न होती. तात्रथे-उन्नति का मबल बाधक कारण अपने मुंह भिया भिटकू हाना ही है. अर्थात्—पंडित लोग तो अपने आपको बृहस्पति का अव-जार समझकर सर्वोच नित रहे हैं. वे चाहते हैं

कि धनीलोग हमारी सेवा करें, आज्ञा माने, कुवचन सुने और अपनी लक्ष्मी से हमारी आवश्यकतावोंकी पूर्ति करें. और ऐसा ही समझ कर कभी कभी अनाप सनाप भी वक्षने लग जाते हैं. और घनिक लोग अपने कान बंद किये हुवे इनको बावले समझ कर चुपकी लगा लेते हैं. वश यही दोनों उन्नति के साधक जो हैं, सो ही बाधक बन केटते हैं. यह बात यहां तक बढ़ती कि फिर न वे उनकी सुन्ते और दोनों अपनी अपनी ढ़ाइ चांवल की खिचड़ी पकाया करते हैं. सो यदि ये दोनों पंगु अंध की तरह परस्पर निल जावें, तो उन्नति की म

अब कहीं कहीं यह भी देखने में आता है कि-हमारे श्रीमान लोग सदैव किसी न किसी मकार अपनी उदारताका परिचय दियाही करते हैं. और पंडित लोग भी अपनी शक्ति लोक कल्याण का प्रयत्न करते रहते है, परंतु वास्तिक कल्याण, व उन्नति का मार्ग न जानने से भी यथेष्ट लाभ नहीं होता हं. जंसे बम्बई जानेवाला कलकते का मार्ग पकड़े, तो जितना जितना चलता जायगा उतना उतना ही दूर जायगा. इसी लिये यहां उन्नति का स्वरूप व लक्षण बताया जाता हं. अवनति प्राप्त अर्थात् जो जावस्था उनकी यथार्थ में होना चाहिये, उससे च्युत हुवे जीवों को पुनः ससली अवस्था में ला देना इसीका नाम

''डबति'' है.

यह जन्मति दो मकार की है. एक लांकिक और दुसरी लोकोत्तर. लीविक उम्मति उसे कहते हैं जिससे जीव नीति पूर्वक उपार्जन किये हुवे द्रव्य से धर्म करते हुवे इंद्रीविषयों रक्षा को जिना किताइयों के भोग कर सके. और लोकोत्तर उन्नति उसे कहते हैं, जिससे इन्द्री विषयों को विनाशीक सार रहित क्षणस्थायी संखाभास समझकर सचे आत्महित में प्रवर्तन करना है. पत्येक पुरुषका कर्तव्य है कि लौकिक, उन्नति करते हवे लोकोत्तर को न भूले अर्थात-उसपर इस प्रकार दृष्टि रक्खे ताकि यह छांकिक उन्नति उससे विपरति न होने पावे और अन्तमें यह उसी की साधन रूप हो. क्यों कि जैसे विना अंक के शून्य की कुछ कीमत नहीं होती, उसी तरह लोको-स्तर विना लोकिक निरर्थक हु. वह केवल विषय कथायों में फंसाकर हमकी दुर्गति में पहुंचा देगी. लैकिक उन्नति तो प्रायः क्रोग कर रहें हैं परंतु वह भी वर्तमान एक होसे दंग से हो रही है कि जिससे लाभ की अपेक्षा हानि दृष्टिगोचर होती है.

देखिये, जब कोई वृक्ष लगाता है तो फल भी खाया चाहता है, परंतु वह वृक्ष बहुने पर फल न देकर उठते बैठते किर फोड़े, पग तोड़े, पगडी उतारे, तो किस्य कारानेबालेका कैसा भाव होगा. आजकल बिचारे बृद्ध पिता व जाति के अमेश्वर जब अपनी सन्तानों को पढाते और वे एम. ए.; बी. ए.; बी. एल आदि की डि-गरियां पा हेते हैं, तब अपने वृद्ध पितादि को ओल्ड फूल (old fool!) नोन सन्स (nonsence) जादि शब्दों में स्वागत दर के बोटते हैं. उनको पगड़ी अंगरला आदि देशी इस (प्रहिराव) पहिने हुवै देखकर घुणा करते. हिन्दी की, यन्दी कह कर अपने दोस्तों के साम्हने उन्हें आते हुवे देख कर लजाते हैं ! पर अफसोस यह ह कि इन लोगोंने जिन जिन के इन बाह्य चिन्हों (पोशाक, खाना बोलना रहन सहन) देखकर अपने बापदादों के रिवाजको बदल कर आप को उन्नति प्राप्त समझने रुगे हैं. सो यदि उन्हों ने उनके आंतरिक गुणेका (स्वदेश प्रेम, स्वजाति प्रेम, स्वध्म प्रेम) अनुकरण किया होता तो ठीक था. इस में तो केवल उन्होंने बाह्याडंबर से खर्च ही माथे पर चढ़ा कर देश व द्रव्य धर्भ कर्म से द्रोह किया.

देशी पोशाक सिरसे पैर तक सा-धारण स्थितिवाले को आजकल ५) में हो सक्ती हैं जब, कि ५) रु. नई पद्धित के जुतों ही को बस नहीं होते हैं. देशी पोशाक बोड़ी महनतसे अल्प समय में उतारना बदलना हो सक्ता था, जिससे देव दर्शन, पूजन, नित्य कर्म और शुद्धतापूर्वक साम-पान हो सक्ता था, परंतु यहां तो केमल बुंद

सोलनेमें ही १५ मिनट लगें, तब कहिये कीन नित्य कर्म करे! फिर क्या जहां इसी मकार खाने को मिले वहीं जा टिफिन उड़ाने लगे. पर आप देखेंगे कि इतने इंमेज भारतमें रहते हैं और वहतों का जन्मभी भारतमें हुवा है, दो दो पीडी गुजर गई परंतु उन्होंने आपके देश की पोशाक रहन सहन इत्यादि कुछभी न लिया और न अपना छोड़ा, सो यह दशा तो हुवी पाइचात्य विद्या प्रेमीयों की. अपनी हुद्धों की सुनिये कि सांप निकल गया पर लकीर ही पीटा करते हैं. वे जानते हैं कि हम जिस करते आये हैं, उसी तरह करते हुवे हमारा कल्याण व उन्नति हो जायगी; परंतु अब वह समय नहीं हम प्रणाहियोंसे उन सब काम चलाना चाहें तो न चलेगा. चतुराई वहीं है जो द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, को देखकर की जाय. इतनी बात जरूरी है कि अपने मूल मन्तव्य न छूटने पावें. चाहे उपायों में फेरफार हो जावे आर वे उपाय भी हमारे धर्मधातक न हों, अवस्य ही करना चाहिये. समयानुसार रीति रिवःजं-में धर्म के अविरुद्ध फेरफार कर दिया जाय तो कुछ हानि नहीं हैं.

सोचनेकी वात है कि जब पाहिले रेल नहीं थी. तब प्रायः लोग यातो लंबी सफर करते ही नहीं थे, और करते भी, तो वर्षों में अनेक आपित्यां उठाकर इन्छित मुकाम पर जाते थे. अब आजभी कोई कहे कि हमारे बाप दादे तो कभी रेल में नहीं बठे, तो हम क्यों बठे? ऐसा मानकर जहां रेलसे १ दिनमें ५) रु. के सर्कमें विना तकलीफ जा सक्ते हैं वहां ६ महिने में १००) रु. खर्च कर तकलीफ उठाकर जाबे व डांक में पोष्ट कार्ड व लिकाफापर चिट्ठी न लिखकर आदमी के हाम दूर देशांतर में भेजे. पासमें उज्वल कपढे होते हुवे चिथडे पहिने, तो कहिये क्या ऐसा आदमी बुद्धिमान कहावेगा ? क्या पित्त के रोगी का बचाव गर्म दवा से और कुफ-वाले को टंडी दवा से हो जावेगा ? सिवाय इस के कि उस के माणांत हो जावे.

अफसोस है कि जैसे व्यर्थ की कई रीत रिवाजें रुकीर के फकीर हुवे वाद्याडंबर रूप पकड रहें हैं, अभ्यंतर रिवाजों को जसे जप, तप शील, संयम, यम, नियम, प्रमाणीकता, दयाद्धता, निकपटा, वरागता आदिको वयों नहि पकड रखा? क्यों नहिं पूर्वजों के अनुसार महावर्धी हो जाते, तो सच्चे रूहिवाले कहलाते, पर खीरका सांझा महेरी को व्यारा, तो कहिये क्या लाभ होगा? अफसोस शत् अफसोस! यह सब साद्धिया के (स्रशिक्षा) के न होने का कारण है. नव शिंक्षतों को एकांतसे दूषण देना भी योग्य नहीं हैं वयों

कि बाद उनके माबार्गेने उन्हें बाल्यावस्था से अपने कुछ की रीति रिवाज धर्म और साभारण वर्ताव की शिक्षा दी होती, तो यह दशा क्यों होने पाती ? शुष्क पाइचात्य माषा पढाई, उसीका यह नतीजा हवा. जब इन नव शिक्षकों से कुछ मार्ग और रूप चलते देखा, तब आप और भी रूटि को ज़ोरसे पकड़ बंठे. पर अब चल नहीं कत्ती, सब भी नामदीं खुदाने दी मार मार से क्यों चंके अपनी टें टें करा ही करते, इस में होता क्या है कि सांड़ सांड़ रहें और बादी का चुग हो. सामर्थवान टेक पकड रहे. मध्यम दर्जे के व गरीब स्थितिवाले बीचही में घिसटने लगे. तात्पर्य यह ह कि हम लोगों को प्रत्येक कार्य विचारपूर्वक करना चाहिये.

मैं कह गया हूं कि उदारता दिखानेवाले धनिक बहुत हैं परंतु "हथा हािष्ट समुद्रेषु, हथा हुप्तेषु भोजनं" के अनुसार कोई अपने यहां एक या इस से भी अधिक मांदर होते हुवे और नवीन बनवाते हैं. कोई सैंबड़ों बिंब बिना पूजा प्रक्षाल की रहते देखते हुवे भी बिंब प्रतिष्ठा कराते हैं. कोई थोड़ी बाहवाह के लिये बड़े बड़ भोज्य (जीमन) दिया करते हैं. कोई इंटं. मंडुवा, भाट, भांडो को लुटाते हैं. कोई नाटक थियेटर व व्यर्थ देशाटन में उड़ाते हैं. कोई बसाधियां पाने के लिये हजारों

रुपया भेट वर्गरे में दिया करते हैं.

रुड़के लड़िक्यों के जन्म समय, स्टानािंद्र के समय व मरण समय "नामक्ती" में बहुत रुपया लुटाया करते हैं, परंतु वहीं रुपया यदि विचारपूर्वक स्वर्च किया जाय, तो वंशक उन्नात हो। (अपूर्ण)

―-->><---

स्याद्वाय महाविद्यालय-काशी.

(સ્થતાર-મીં માવજ દામજ શાહ, મુંબાઇ) વસંત-તિલા

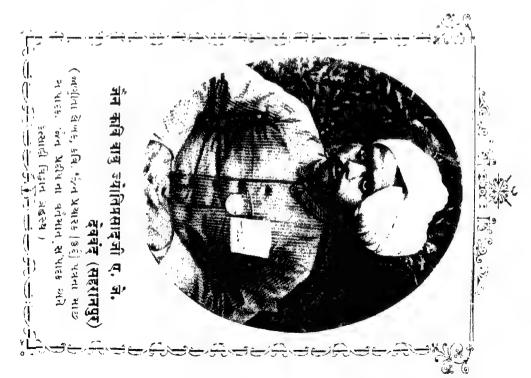
ગંગા તરંગ ઉછ્જો પ્યુવિંગ વૃંદ, વાયુ વહે શિતળતે વળી મદંમદ; આવ્યું વિમાન નભથી તટ ઉપરેશું ? ગીવીસુ વાણી વદતાં સુરમંડળા શું ? ૧

ને ત્યાં કરે પદન પાઠન નવ્ય રીતે, કિતુ લાગુ વિવિધ પુરતકરવર્ઝ ચિત્તે; ત્ય ન્યાય વ્યાકરણ કાવ્ય અને કથાએ! સાદિત્ય ચેપુસલ્ત્યાં ક્રમ એ જણાતા ર

જ્યાં જૈનતત્ત પણ રચ્ય દીસે ભણાતું, જ્યાં દેવગંદ પણ એ ભણવા ચહાતું; એ રચ્યને વિવિધ કાતુક મિશ્ર રથાન, એ લુંન કે ક જગમાં દજી અન્યરથાન. ૩

"રય દ્વાદ વાદ વદતા જિન પારશાળા, એ ક્ષેત્ર ત્યાં વિજયતું હજાુ એજ ધારા; નિદ્દાજના નિવિધ કેલવણી લઇને; પામા સદા દિજય ભારતવર્ષમાં તે ૪





→ अत्मोन्नतिः भ् ←

(लेखकः-ब्रह्मचारी शीतलमसादजी, संपा-दक, ''जैनमित्र" मुंबाईः)

जिस लिये जगतजन हितेषी सन्त-पुरुष अनेक प्रकार उद्यम कर परजीवी को धर्मामृतका पान कराते हैं व उनके कल्याणार्थ अनेक शब्दशासींकी रचना कर असीम परिश्रम करने कराते हैं बह कार्य एक आत्मांऋति ही है। धार्भिक संस्थाओं का स्थापन, संघटन, अवन्य, उनके लिये योग्य संत का निर्मारण, उस क्षेत्र में धर्म प्रवर्त्तक सामग्री का एकती करण, तथा उस सामग्रीद्वारा पुजापाटादि धार्मिक कार्यों में जनसमूह का प्रवेत्तरन इत्यादि जो कुछ बाह्य व्यवहरण है वह एक "आत्मोक्ति" के ही प्रयोजन से है। सांसारिक विषयों को विष सपान अनुभव कराना, शरीर से निस्वृहत्व बनाना, व जीवन योवन की अनित्यता का भाव जमाना केवल माल एक आत्मोन्नति के वास्ते है। नाना प्रकार धार्मिक समाचार पर्तों को विचित्र धर्मिस्थितिकरन छेखीं से सम्पादित होना, उनके मुदित व मकाशित होने का यत्न करना कराना तथा उनको पहना, सुनना और मनन करना केवल मात्र एक " आत्मोन्नति " ही के अर्थ है। श्री विम्ब मतिष्ठा, र्थोत्सव,

महा पूजादिद्वारा ध्रमभभावना करने का उद्यम व उसके लिये अनेक धूमधाम वादित्र गानादि क्रिया का उद्भावन तथा बढेर सभामंडपों को अनेक मनोहर सामिध्रयों से सुराज्यितकरण मात्र एक आत्मोन्नति ही के हेतु है । वडेर संस्कृत विद्यालय, प्राथमिक पाटशाला, छा**लाश्रम** श्राविकाश्रम आदि संस्थाओं को स्थापित भें तन असीम मन धनका उपयोग करना, उनके प्रवन्धार्थ अनेक सभा व दमिटियों का बनाना, तथा अनेक ग्जिट्यों को लिखकर सफेद कागज़ों का काला करना केवल एक आत्मोन्नति ही के कारण से हैं।

वास्तवमें आत्मोन्नित ही मानवजीवन का सीन्दर्य है। यही सर्वोच साध्य
एक सन्च हितेपो का आंतर्राक मनन है।
इसके बल से यह जीव अपने में रही हुई
यृद् वाक्तियों का मकाश करके अमृत्य
चमन्त्रत शुद्ध रख के समान हो कर मतापशाली सूर्य के सहय हो जाता है। जो
उस आत्मोन्नित का गंसक है उस रिसक
व्यक्ति को वर्तमान में सांसारिक दृष्टि अपेक्षा
सुख रूप व दुख रूप अवस्था कुछभी मदोन्मत व खेदित न बना कर खुगंधित गुलाब के
फूलों के सनान मातिभासित होती है।
आत्मोन्नित के शांतिमय उपवन में विहार
करने वाले साध को कोधादि कपायों की
उक्तक आक्रमणता वाधित नहीं करती।



मो. जगमंद्र्रहाल जैनी बेग्स्टिंग, युरापिअन जैन हर्द्ध बोग्न अने पं. लाउन. (संउनमां विवायका अस्ति)



जो इस मंत्र के साधन में तल्लीन हो जाता है उसको नरक का वासभी रुचिकर होता है तो इस दुनियां का कांटेदार वास तो रमणीक भासता ही है। जो सत्य धर्म दुनियां की गरज से नहीं किन्तु धार्निक अभीपाय से है वह इसी आत्मोन्नति को ही अपना उद्देश निश्चित करता है। प्यारे जैनीयो ! तुम्हारा माननीय धर्म तुमको यही शिक्षा देता है कि तुम आत्मोन्नति करो-यदि आत्मोन्नतिका मयोजन रखते हो तब तो तुम जैनी हो अन्यथा नहीं। आत्मोन्नति के उद्देव्यं विना सम्पूर्ण व्य-बहार-धर्म के उपायों का साधन करना और उनसे निराकुल मुख की वांछा करना तैल के वास्ते वालू रेत को पालना है, आम्र फर्हों के लिये बबूल के वृक्षों बोना और सींचना पानी छि।द्रित के **छिये** पार होने होना आहह तथा सम्मेदाशिखर जानेके छिय दिइछी से क्वाहौर जाने वाकी ट्रेनपर सवार होना है. प्रिय जैनियो ! जैसे निमक विना अन्ना-दिके रचित अनेक व्यंजन स्वादिष्ट नहिं भासते तैसे आत्मोन्नति विना आपका सर्व धर्मपयत्न अस्वादिष्ट और अरुचिकर है । इस जीवका यथार्थ हित आत्मोन्नाति करना ही है।

आत्मा का सर्व द्रव्य, नो कर्म और विभावके कर्म वन्धनों से छूट कर अ- र्थात् मुक्त होकर निज स्वाधीन अतीन्द्रिय सूख अर्थात् मोक्ष के अविनाशी आनन्द-का लाभ करना सो ही आत्मोकति है। इसी मोक्ष सुख का भयत्न करना इस जीव का परम धर्म (duty) है ऐसा ही कहा है।

श्लोक.

मैती सस्वेषु मोदं गुणवित करुणं के भिते देह भाजि । मध्यस्थस्वं मतीपे जिनवचित रितं निम्नहं क्रोधयोधे । अक्षार्थेभ्यो निष्टत्तिं मृतिजननभवाद्गीति-मत्यन्त दुःखा ॥ द्रे जीवत्वं विद्यत्स्व च्युत निख्छमले मोक्ष सौख्येऽभिल्ञाषम् ॥४२१॥ (अभितिगति)

भावाध-रे जीव ! तू समस्त आजियों से मैत्री कर, गुणवानों से प्रमोद भाव धर, दुःखी जीवों पर दया विस्तार, विषयों पर माध्यस्थ भाव जमा, जिन याने सर्वज्ञ वीतराग अरहंत के वचनों में रम, क्रोध योधा को वशमें छा, पांचों इन्द्रियों के विषयों से मन हटा, अति ही दुखदाई मरण और जनम रुपी भवावछी से भय खा, तथा सर्व महों से रहित मोक्ष के सुख में अपनी रुचि टान।

और भी कहा है:-

श्लोक.

एको में शाश्वतात्मा सुखमसुखसुको ह्यानदृष्टि स्वभावो । नान्यत्किक्षिणं म तनुधनकरण स्त्रातृ भार्या सुखादि ॥ कर्मोद्भतं समस्तं चपलमसुखदं तत्र मोहो मुधा मे । पर्यालोच्योति जीव स्वहितम्बितयं सुक्ति मार्गे श्रयत्वम्॥४१६॥ (अभितिगति)

भावार्थ—"मेरा आत्मा एक अकेला है, अविनाशी है, स्वयं सुख और दुःखका भोक्ता है, ज्ञानदर्शन स्वभावधारी है; यह शरीर, धन, इन्द्रियें, भाई, स्त्री, संसारिक सुख आदि कोई भी दूसरा मेरा अपना नहीं है। यह सर्व अन्य पदार्थ कमों के निभित्त से उत्पन्न हैं, चपल अर्थात् अनित्य हैं, तथा दुःख के देनेवाले हैं; इनमें मोह करना मेरी अज्ञानता है, ऐसा विचार कर है जीव! तू अपने आत्माको हितकारी और सत्त्यार्थ मोक्षमार्ग काही आश्रय ग्रहण कर"

भिय जैनियों तथा अन्य मुमुश्च बन्युओं ! इस क्षणिक मनुष्य पर्याय पाने का यही सार है, जो निज मैळ काट परम शुद्ध मूर्ति होने का यत्न कीजिये । इस यत्न के मार्ग में चलने की रुचि ही तुम्हारे मार्ग को सुगम बनानेवाली है। यदि तुम साहसी, बिल्रष्ट, धीरधीर और अकंप हो तो इस यत्न

की सिद्धि का शीघ उपाय ग्रहो। और यदि शक्तिहीन, अधीर और सकंप हो तो शनैः शनैः माप्त कराने वाले उपाय में चलने लगो। यदि धीरे भी गमन करोगे परन्तु सखी रूपि सहित वर्तोंगे तो तुम्हारा थोड़ा भी साधन रुचि विना अति हहत साधन से कहीं बढ़ चढ़ कर है।

यह जैन जाति, हा खेद! जो बीस वर्ष में १४ लाख से १२॥ लाख ही रह गई, अज्ञान के महा अन्धकार में पढ़ी गोते खा रही है अपने जैनपने के नाम-को लजा रही है, तथा अपने घर में ज्ञान महोद्धि क्षीर समुद्र का परम मीठा वारि होने परभी उस की अमृत मई घूंट के धीने से विरक्त हो रही है।

जीवों को वेखबरी की नींद से
छुड़ाकर जगाने वाले, उनको आत्मोकाति
के ज्ञान का महत्व वताने वाले, तथा उन
के सन्मुख स्वयं आत्मसागर से सुधा
गागर भर धीने और पिलानेवाले खेद
है! इस समय अभाववत हैं।

कहां गए वे परम निग्रन्थ मुनि जो अपनी बालकवत निविकार यथाजात मुद्रा के ही दर्शन देने से संसाधि निकट भव्य जीवों को आत्मोकति की रुचि करा देते थे, अपनी अमृतमई स्तोक परम मतापशाली वचन किरणावली से अनेकों का मिथ्यातजल सोख आत्मोन्नति के भयत्न के छिपे उद्यमी वना देते थे, तथा अपने आत्माधीन चारित की विवेकता के मकाशमें अनेकों को स्वतन्त्र की झलक करा देते थे।?

आत्मोत्रोति के दृष्टान्त ही आत्मोत्नित पथ पद्धेक हैं। वर्तमान में जब
बृद्धिश राज्यका द्यांतिमय धर्म निरावाध
शासन है; तब धीर जानयों को उड़ना
चाहियें और परम छुख प्रदायक पथ को
सत्त्यार्थ उद्योग की गति से विद्यों से
निर्भय हो तप करना चाहिये और अन्य
साहसियोंको चलाना चाहिये। भावाथे—
स्वयं नमूना बनकर आत्मोत्नित करना
चाहिये और आत्मोत्नित के सद्ये छुग्य
कंटक रहित जैन धमेमय साधन का
विस्तार करना चाहिये।

यह वह समय है कि जो इस का उपयोग किया जाय तो आत्मोन्नति के साधक अनेकानेक मुनि, ऐलक, शुलक, शुलक, ब्रह्मचारी हो सक्ते हैं, जो स्वयं मोक्ष के अनुपम सुख विलास के आस्त्रादी होते हुए इजारों लाखों को सतप्थका मकान्न करते हैं, जगत में होनेवाली घोर पशु हिंसा को हटा सक्ते हैं, तथा अनेकों को दश्य नाटक के दर्श के बना सक्ता हैं. इति

—३३३ स्ट्रि जमानाने योग्य दान

(લેપ્પક:-શા. જવણલાલ કસનદાસ કાપડીચ્યા, સુરત.) ગુજરાતના સાધારણ વસ્તીવાળાં એક ગામમાં કરતુરગંદ ગુલાભચંદ નામના એક શેઠ રહેતા હતા. તેઓ જતે જેન દતા. તે ગામમાં તેમની ન્યાતના પાંચ સાત ધરા હતાં તથા બી જે હલકી વર્ણના હિંદુઓનાં હતા. શેઠની બજારમાં દુકાન હતી, જ્યાં તેઓ કાપડ ગાધીયાલું વીગેર પરચુરલા માલ વેચતા હતા. ગામની વસ્તીના ઘણા વર્ગ અલથા હતા. ગામની વસ્તીના ઘણા વર્ગ અલથા હતા, તેયા શેઠને વ્યાપારમાં ઠીક નેફા રહેતા. યખતે કેટલીક ચીજેમાં તા દાદા બમણાજ પૈસા પગવતા, કેમંક ગામમાં તેમના જેવા બીજી ઝાઝી દુકાના નહોતી. આથી તેઓએ વેપારમાં ઠીક નાશું બેમું કહે.

આવી રીતે વ્યાપાર કરતાં કરતાં ધણાં વર્ષ થઇ ગયાં. શેઠને દિવાળી નામની સ્ત્રી હતી. તેને પેટ અત્યાર સુધી ચાર સંતાનો હતી. તેને પેટ અત્યાર સુધી ચાર સંતાનો પદા થયા હતા, પણ કર્મ સંધાં ગે તેમાંથી માત્ર એક છાંકરીં જ ઉછરી આવી હતી. બાકી જ છાંકરો અખે ત્રણ વધના થઇ મરસ્તું શરસ્યું થઇ ગયા હતા. રહતાં ઉમર હાલ લગભગ પચાશેક વર્ષની વરુ હતાં. તથાન પેટે તેમની પછા પેઢાંનું નામ કાયમ રાખ એવા એક પણ પુત્ર નાં હોવાથી રાત્રિ દિવસ બળાપા થયા કરતા, અને મનમાને મનમાં ઝુરાયા કરતા, પણ એમાં ઉપાય શાે ? એ કાઇ અજારની ચીજ હતી કે માંધ્ય સુદ્ધે પણ મળા તેમ હતુ ?

આ પ્રમાણે પ્રશ્ચાતાન અને ભળાપાને લીધે તેઓતું અંગ ધીમે ધીમે સુકાવા લાગ્યું. ચિંતા મહા સુરી ચીજ છે. કહેવત**ે કે** ચિંતા અધિક ચિતા થકી, ભાળી કરે છે પિન્ન; ચિતા બાળી દે રહેજમાં, ચિંતા તે નિશદિન.

તેમ ફિકરમાં ને ફિકરમાં તેમને શરી-રમાં ઝીણા તાવ લાગુ પાયા, અને મહિ ના પંદર દિવશમાં તા તાવે પ્રખળ રૂપ પકડ્યું. સર્ગા સ્નેહીઓમાં ખબર ફેલાઇ અને લાગતાવળગતા સર્વે શેઠની માંદગીની ખબર સાંભળી ચિંતાતુર થઇ શેઠતે ત્યાં ખબર લેવા આવવા લાગ્યા. કાંઇ કહે ડેાકટર- ને ખાલાવા. કવા કરવી શરૂ કરી. અને ક રામભાણું આવધાના ઉપચાર કરવામાં આવ્યા, પણ ધૃળ ઉપર લીંપણ, કશાની ટીકી લાગેજ નહિ, એમ મહિના દોઢ મહિના જીદા જુદા વૈદાની દવા કરી આખરે કંટાળ્યા અને રાગ પણ ધીમે ધીમે હવે વધી ગયા હતા, તેમની સ્થિતી જોઇ દરેકને એમજ લાગવા માંડયું કે આ માંદગી એઓને જીવલેશું છે.

તેમની એકની એક છેંાકરી વીજળી, કે જેને બહારગામ પરણાવેલી હતી તેને તેડાવવાના કાગળા લખાયા અને કાગળ પોંહો-ચર્તાજ છેાકરી તથા જમાઇ માતી ચંદ્રભાઇ બનતી ઉતાવળે આવી પહોંચ્યા.

વળા શેકના એક ભાણેજ હતા તેને પણ મુલાકાત લેવા માટે તેડાવ્યા, તે પશુ ખૂબર સાંભળી તુરત આવી પહે.ચ્યાે.

શેઠના સર્વ સમાં સંબંધોઓ એકત્ર થઇ મયા અને રાત દિવમ ચાકરી કરવા સર્વે મંડ્યા રહેતા શેઠની પાસ પૈકે પુષ્કળ હતા. લગ ભગ પચારાક હજારનું સાળું હશે. શેઠની ચાકરો પૈસાને લીધે સારી થતી હતી કેમેંક આજે સમાસંબંધી પૈસાનાજ સગા વિશેષે કરીને હોય છે. નિધેનની કાઇ પુરી ખન્યરે પુછતું નથી. પણ આ તો દરેકના મનમાં આશા કે શેઠને કે!ઇ વારસ નથી એટલે કાંઇને કાંઇ પણ આપણે આપશેજ. એવી આ-શામાંને આશામાં તેઓની પાસે હંમેશા મા-ખીતી માક્ક અમણી રહ્યા હતા અથવી માનળતા ઉપર મંકાડા વીંટળાયા કરે તેમ મળતા અને વળમતા રહ્યા હતા.

શેઠના ભાણેજ સુમતિચંદ્ર વહુ વિ-ચારવાળા, ડાહ્યા, ઠેરેલ સ્વભાવના અને નિ-ક્રોબી હતા, તેને આ સર્વે રંગ ઢંગ જોઇ અનેક વિચાર ઉત્પન્ન થવા લાગ્યા. તેને એક વિચાર સુઝરે અને તે એ હતા કે મા-માની સર્વે મિલ્કતની એક યાદા કરી તેમાં-થી અમુક રકમ તેએ તા મરણુ બાદ શુભ માર્પે વપરાય, તથા અમુક રકમ જે યે અ લાગે તે સગાંઓને આપવી તથા બાકીની તમામ મિલ્કત તેમની અના કબજમાં છ-વન પર્યાત રહે, કે જે તેમની રજાકજાએ તેમની પુત્રીને મળે.

અને વિચાર તેણે પોતાના મામાને ખાનગીમાં જણાવ્યા. કેમકે હાલ જમાના સ્વા-યેના છે. ધર્મ કરતાં કર્મ આ ડે આવી ઉભાં રહે. કાેં મને વખતે વાત નહિ રૂચે તે ભિચા-રાને ખરી સલાહ :આપતાં સંતાપ ઉત્પન્ન થાય. મામાને બધી વાત પે.તાના મનની જણાવી.

શેઠના સ્વભાવ શાંત હતા, તેમજ આગળ પાછળના વિચાર કરવાવાળા હતા,
તેથી ભાજેજના વિચાર તેઓને યાગ્ય લાગ્યા,
પાતે પુર્રા મહેનતે અને પરસેવા પાડી એકઠા
કરેલા પૈસાની યાગ્ય વ્યવસ્થા થાય તે કાને
નાંદ' ગમે ? દા! એવા ઘણા મૃદ્ધ સુહિના
માણસા પણ બગતમાં છે કે તેઓને માહરૂપા રાદ્દાસે વશ કરી લીધેલા હાવાથી સમયાનકુળ આવા સદ્દ વિચાર પણ કડવા ઝેર જેવા
લાગે છે અને કશી વ્યવસ્થા કર્યા સિવાય કાળને
શરણ થઇ જાય છે, જેથી ઘણા વખતે કંકાસા ઉભા થાય છે. અને સગાં સ્નેહીઓ લઠી
વઠીને હેરાન થાય છે તથા કાર્ટમાં પણ પાંહાચી પૈસાની પાયમાલી કરે છે.

રોઠે કહ્યું—" ભાઇ સુમતિ ! તું, માતાચંદ, તથા આપણી ન્યાતના ખુશાલચંદ અને પાનાચંદ એ ચાર જણાઓને દ્રસ્ટી નીમીને એક વીલનામું તૈયાર કરાવ, તેમાં મારી મિલકતમાંથી રૂ. ૧૦૦૦૦) શુલમાર્ગે તથા ન્યાતિ જમણ વીગેરેમાં વાપરવા; રૂા. ૫૦૦) રાક્કા અથવા એક હીરાફડીની કંઠી જમાઇ મેાતીચંદને આપવી, ભાણેજ સુમતી-ચંદ્રને ર. 800) રાકડા તથા બીજાં સંગાઓ ને જે ડ્રેસ્ટીઓને તથા મારી ઓને યાંગ્ય લાગે તે આપવું. ખાકીની તમામ મિલ્કતની સંપૂર્ણ વારસ મારી ઓ દિવાળી છે. તેની રજે કન્ન બાદ વાપરતાં ખરચમાં જે મિલ્કત બાકો રહી હોય, તેમાંથી અડધી શુલમાર્ગે તથા અડધી મારી પુત્રી વિજળીને મળે. મિલ્કતની સંપૂર્ણ દેખરેખ ડ્રસ્ટીઓએ રાખવી કે જેથી ખાટે રસ્તે નાબું તકરક થવા ન પામે; સર્વે કાર્ય મારી બ્રી તથા ડ્રસ્ટીઓની સલાહથી થાય " વિગેરે વ્યવસ્થા વીલમાં લખવા જણાવી.

મુખિતિ ચંદ્રને પણ શેઠના વિચાર પ-મંદ પડ્યા. તેણે તરત એક સારા કાયદાથી વાકેક્દાર માણસ પાસે જઇ વીલનામું તૈયાર કરાવ્યું. અને શેઠની પાસે લઇ આવ્યા. અને શેઠની તેના ઉપર સહી કરાવવા માટે સઘળું અથથી ઇતિ સુધી વાંચી સંભળાવ્યું, તે વ-ખતે તમામ સમાં સ્તેહીઓને તથા ટસ્ટીઓ-તે પણ બાલાવ્યા હતા; તેઓની રૂબર વીલ-નામા ઉપર શેઠે સહી કરી, અને તેમાં લ-ખ્યા પ્રમાણે વર્તવાને ટ્સ્ટીઓ વીગેરેને ભલા-મથા કરી.

શેઠના મંદ્રવાડ ધામે ધામે વધતાજ ગયા, દ્વાની કર્યા ટીકકી લાગીજ નહિં, પ- આ લાગે ક્યાંથી ? આયુષ્યરૂપી ડાળ ડુટી ત્યાં હજારા ઉપાય નકામા છે. આયુષ્ય પુરં ચતાંજ તેઓ કાળને શરણ થયા, અને જેમ પીજરામાંથી પક્ષી ઉડી જાય, તેમ જીવ ઉડી ગયા. ખાલી પડી રહ્યું વિના મુલ્યનું ખાળીઉં કે જે કશા ઉપયોગમાં પણ આવતું નથી. મહા મહેનતે પણ નહિ મળી શકે તેવું અને જેને સાચવાને સગાંઓ રાત્રિ દિવસ મચ્યા રહેતા, તે હવે અકારં ઝેર જેવું લાગવા માં- ડશું અને જેમ અને તેમ જલદીથી તેને ધર

માંથી દર કરી તેના નાશ કરવાના પ્રયત્ન શરૂ થયા. પુરૂષોએ તેમના મૃતક શરીરને ક-ચકચાવીને બાધ્યું અને સમશાનમાં બાળીને રાખ કરવા સારૂ ઉપાડી ચાલવા માંડ્યું. તે વખતે જોય હ્યા ! સ્ત્રીઓની ધમાલ. જાણે તેને ધરમાં રાખી મુકલું કેમ નહિં હોય ? તેમ લાંભા લાંભા હાથા કરી. માટા ભરાડા પાડી, લાજ અને મર્યાદાને છાપરે મુકી છાન તી ખુલ્લી મુકી, ભર બજારમાં અને હઝારા લાકાની સમક્ષ. રડી કટીને કાલાહળ **મચાવી મક-**યા કે જાણે ખરેખર તા તેઓનેજ લાગ્ય છે. પશ આ બધા ઉત્પાત સાડાત્રણ દિવસનાેજ હૈાય છે. મરેલ માહ્યસ ક્રદિ પાછાં વાનું નથી કે તેના મૃતક શરીરને રાખી મુકાવાનું નથી એવું સંપૂર્ણ સ્ત્રીએ જાણે છે. છતાં સ્તેહને લીધે કે પછી લોકાને દેખા-ડવાને પણ તેમ કર્યા વિના રહેતી નથી. જો કે પાતાના નિકટના સ્નેહી મરી જાય. દરકાઇને દિલગીરી તે ઉપન થાયજ. તે દિલગીરીને નિર્લજ દેખાવમાં રજા કરી નિંદા પાત્ર થવું એ બહુ હલકું દેખાડનાર ગણાય છે.

શેઠ મરી ગયા તેજ દિવસથી ત્યાતની સ્ત્રીઓ જાણે મેાસમ જાગી હોય તેમ સવાર સાંજ રડવા કુટવાને એકઠી થવા લાગી અને ઘરના માણસા કાંઇ હોય તેમ થવા લાગ્યું. ઘરના માણસા કાંઇ આખો દિવસ રડતા અને કુટતા બેશી રહેલા હોતા નથી, પણ તેઓ આવીને સામું બેસે એટલે તેમને રડયા વિના ચાલતુંજ નથી.

આ પ્રમાણે થાડાક દિવસ રડવા કુટવાનું કામ જોરમાં ચાલી, પછી ધીમે ધીમે થાંડુ પડી ગયું. શેઠ કાંઇ પાછા આવ- વાનાએ નહોતા અને આવ્યા પણુ નહિ. આખરે રડી રડીને પાતાની મેળજ ચાક્યા. કહેવત છે કે "થાક ત્યારે પાક, વાર્યું નહિ કરે પણ હાર્યું કરે;" તેમ થયું.

એક તરફ જ્યારે આવી રીતે રડવાનું કામ સાલતું ત્યારે બીજી તરફ મેાદિક મિછાનની પણ તૈયારી ચાલતી. બે ત્રણ દિવસ બારમા તેરમા ચઉદમા વીગેરેને નામે સારી રીતે મનમાનતી રીતે જમ્યા, પણ જમતી વખતે પેલી દેખાતી દિલગીરી કાશુ જાશે ક્યાં સંતાઇ ગઇ હતી તે જણાતું નહેાતું. એ તેા રડી રડીને આંખોપર ગરમી ચડી ગઇ હશે તે ખાસા ઘી દુધના તર મલીદા ખાઇ શંડક કરતા હશે!

ખાઇ પીતે સર્વ સમાં વહાલાં એ પર-વાર્યા. વીલમાં લખ્યા પ્રમાણે સમાં એને જે કાંઈ આપવાનું હતું તે અપાયું. શીરપાવ બળ્યા એટલે તેઓની દિલગીરી દર્યામાં હુબી મધ. સર્વે પોતપોતાને ગામ અને ઘેર વિદાય થયા અને હવે રહ્યાં એકલાં પેલાં દીલગીરીમાં હુખેલાં દીવાળી શેઠાણી. તેઓને ઘર સનું રમશાન જેવું લાગવા માંડયું કેમે દે ઘરમાં કાઇ વાત કરવા જેવું પણ માણુસ રહ્યું નહેાતું. ડાસા મરી ગયાને બહાને અને ખાવા પીવાને સારૂ સર્વે પડયા પાથરા રહેતા, પણ ખાવાનું ખલાશ થયે ચલીઆ ઉડી જય તેમ સા પાતપાતાને ઘેર વેરાઇ ગયા.

થ્યા પ્રમાણે દિવાળી શેઠાણી સીઝાઇ સમ્પડાઇને પેતાના કાળ વ્યતિત કરવા લાગ્યા. પૈસા તા ઘણાએ હતા, પણ માણુસ વિના એ પૈસા તેમને ઝેર જેવા લાગતા હતા. શેઠને મરી ગયાને લગભગ અગીયાર મહિના થવા આવ્યા એટલે તેમનું વર્સી! હવે વાળવું જોઇએ એવા વિચાર દિવાળી શેઠાણીના થયા.

વર્સી વાળવાનું એટલે ખીજું કાંઇ નહિં, પણ વળી પાછા અધુરા રહેલા માદિક મિષ્ટાન ઉડાવવાના અને મુવેલાને નામે તાગડ ધીન્ના કરવાનું તેજ. ઘણાઓ એમ સમજે છે મુવેલાની મરણ તિથીએ સારૂં સારૂં જમવાથી મુવેલાને તે પહેંાંચે છે, તેથી તેમની તૃપ્રિ થાય છે અને તેથી તેઓ ખુશ થાય છે. આ પ્રમાણે ધ્યાલાણાને પણ જમાડવાથી તે મરે-લાને પાંહાંચે છે, એવી માન્યતા મિથ્યાત્વી સહવાસથી બાળા ઢાંકાના હદયમાં પેસી જ્ય છે, પણ તેઓ એમ નથી સમજતા કે પાસે ખેડેલા બાપને છાંકરાના ખાવાથી તૃપ્તિ થતી નથી, તો કાેશ જાે કાં માનાથી તૃપ્તિ થતી નથી, તો કાેશ જાે કાં માનાથી તૃપ્તિ થતી નથી, તો કાેશ જાે કાં માનાથી તૃપ્તિ થતી નથી, તો કાેશ જાે કાં માં સીતે ત મિ થતી હશે તે તેઓ બુલી જાય છે અને કકત પોતાના પેટની તૃપ્તિ કરવાને અને છે. ભને લ્હાવા હેવાડવાને મુવેલાં માણસાને વ ચમાં વિના કારણે અાડે લાવી વગાવે છે. શેઠાણીએ પાછાં દિકરી, જમાઇ, ભા છોજ વિગેરે સગાંઓને તેડાવ્યાં, તેઓ આ–

શેઠા**ણી**એ પાછા દિકરી, જમાઇ, ભા એજ વિગેરે સગાંઓને તેડાવ્યાં, તેઓ મા– વ્યાં અને પાછું ધર ચીકાર બરાઇ થયું. લાડુની તૈયારી પણ શરૂ થઇ અને લાકદેખ-ડામણા બાઇડીઓના બેઠળ રાગડાએ**ા પણ** શરૂ થયા.

આ તરફ સુમિતિઅંદ કે જે બહુ ડાલો અને વિચારવંત હતા અને જેને આવા વિ-ના કારણાના પેટપૂજાના ખરચા તરફ જાહુ તિરસ્કાર હતા, તે એક બાજુ બેડા બેડા કં-ઇ કંઇ વિચારમાળામાં ગુંથાઇ રહ્યા હતા. તેને યાદ આવ્યું કે મામાએ શુપ્ત માર્ગે ખર-ચવાને જે રૂપીઆ વીલમાં જણાવ્યા છે તેના તેના હજી કશાપણ ઉપયાગ થયા નહિં અને આ ખાનીપીનીમાં ગુલતાન થયેલાએ તે વા-તને યાદ પણ કરતા નથી, પણ આ પ્રસંગે સર્વે એકત્ર થયા છે, તા વિચાર કરવાના ડીક સમય છે, એમ ધારી તેણે બીજ ત્રસ્ટીઓને તથા દીવાળી શેઠાણીને બાલાવ્યાં એટલે તે-એા આવ્યાં.

સુમતિ-મામી, મામાએ વીલમાં જણા-વેલા શુભમાર્ગે ખરચવાના રૂપીઆના હજી આપણે કંઇ પણ ઉપયોગ કર્યો નથી, તો હવે એ ફપી આ ક્યાં અને કેવી રીતે વાપરવા તેના વિચાર કરવા મેં તમને બેાલાવ્યા છે અને તે આપણી કરજજ છે. એ ફપી આને ઉપયોગ તુરતજ થવા જોઇએ પણ તેને બદલે લગભગ વરસ દિવસના ગાળા વીતી ગયા, છતાં આપણે કાંઇ કર્યું નહિં. ધર્મનાં કામ પાંગળા હોય છે. તેને ચલાવાએ સારે ચાલે છે, માટે હવે શું વ્યવસ્થા કરવી તે જણાવા.

દીવાળી—ભાઇ, શેઠની યાદગીરી કાયમ રહે એવે કાઇ માર્ગ પૈસા વપરાય તા સારં, કેમકે તેમ થવાર્યા શેઠના ખરી મહે-નતના કમાળીના નાષ્યુંના સદ્દુપયાગ થયેલા મુશ્યાય!!

ખુશાલચંદ—"એ રૂપીઆમાંથી આખું ગામ જમાદતું. તથા આપણી ન્યાતતું પંચ (ચાખડું) જમાદતું, ગામ ક્ષાકતે એક દિવસ અને ન્યાતીલાને એ દિવસ જમાડ- વામાં લગભગ રૂપ્યા આઠે દસ હજાર ખરચ થશે અને તેટલા રૂપીઆ એ છેજ, તા એમ કરવાથી ગામમાં તથા ન્યાતમાં વાહવાહ થશે અને શેઠતું નામ હંમેશને માટે યાદગાર થશે."

પાનાય'દ—'' એ મને પસંદ નથી કેમકે માત્ર એક કે બે દિવસના જમણમાં નજીવા જીલના સ્વાદને ખાતર દશ હઝાર ક્ષ્મૈયાના ૃધુમાડા ઉડાવી મટેલું બનાવવું, એથી કાંઇ હમેશને માટે યાદગીરી કાયમ રહે એવું મારી ધ્યાનમાં ઉતરતું નથી. લેહિકા ખાઇ જશે તેટલીજ વાર સારૂં કે નરસું, કલાક બે કલાક કે એક દિવસ ગામ ગપાટા મારશે. "ખાધું ને માં ખાલી, તમામ અમૃત ચીજ નર્ક કડમાં ચાલી " અથવા કેટલાક વિદ્ય સંતાવીએ અને કાગદત્ત્વાળા તેમાંથી ખામી શાધીને તેની ઉલટી નિંદા પણ કરે છે, માટે એના કરતાં તા એ રૂપીઆમાંથી ગામમાં એક નવું મંદિર બનાવવું અગર

કાઇ અવ્યવસ્થિત મ દિરના જ્ર્ણોદ્વાર કરાવવા અથવા આપણા ગામના મ દિરમાં ચાંદીના કમાડ તથા આરસ વીગેરે જડાવવામાં ખરચ કરવા એવી મારી ધ્યાન પહોંચે છે કેમકે એમ કરવાથી હમેશને માટે નામ પણ કાતરાઇ રહેશે અને લાકા ધર્મધ્યાનમાં પણ ઉત્સાહી શશે "

માતીચ'દ-પાનાચ'દ, તમે કહા છા તે વ્યાજળી છે. આપણાં શાસ્ત્રામાં પણ તીર્થા-હાર, છહોં હાર, મંદિર બાંધવા, પ્રતિષ્ટા કરાવવી. ચતર્વિધ સાંધને દાન. શાસ્ત્રાહાર, જનપુજા, જીનપ્રતિમા વીગેરમાં દાન કરવાથી મદ: પણ્ય પ્રાપ્ત થાય છે તથા યશ પણ મળે છે એવ જહાવેલ છે. પણ હવે એ નાણાં આપણે કરે માર્ગે વાપરવાં એજ વિચાર કરવાના છે. ઢાલમાં કર્ય માર્ગે દાન કરવાથી ધર્મના મહિમા વધે. જાગૃતિ ઉત્પન્ન અને કામનું કરવાલ થાય એ જોવાનું છે. મંદિર બંધાવવું કે જીઈ હાર કરાવના એ પણ કાંઇ ખાંટું કાર્ય નથી, પણ આજે જમાના કાંઇ જાદાજ આવી રહ્યા છે. અક સાસ! સાથે મારે કહેવું પડે છે કે હાલમાં સંખ્યામધ મંદિરા અપૂજ્ય પડી રહે છે. તીર્થસ્થળ ઉપર અને ગામામાં હંપદ हें।सातासीना ચક્રમાં પહેલા લડી વઢીને પરવારતા નથી. દેટલાક બહુઓ તે। મંદિર છતાં મુદ્દલ દર્શન પણ **કર** તા નથા. પાતે જેન છે એટલ જ ભણે છે, પરંતુ જૈન એટલે શાં? એવા જો માત્ર ટુંકા સવાલજ તેમને પુછા, તા ખાસા માટીના પુત્રળા જેવા ટગર મગર જોયા કર-વાના. જવાબ શાં આપે ? કાંઇ શીખ્યા હાય કે શાસ્ત્ર નજ રે પણ નિહાળ્યાં હાય ત્યારે કેની? માંદિરાતા લાખા અને કરાડાતા કિંમતના બનેલા હાલ મેાજીદ છે. પરંતુ તેની વ્યવસ્થા કરનાર કે ભકિતથી પુજન કરનાર કાઇ ભાગ્યેજ હાય



बसराना । त्वतिपुर । (धनस्था पेसी प्रतिष्ठित श्रीसात अहत्था,

> सास्टर दीपचंद्रजी परवार, नरसिंहपुर, सी. पी. (मृंआर्टीड टेंग्न केन्क्स्सना उपहेशक अकादणाह केन कोर्टिंशना सुप्रेटिंग्डरेट तथा अकरातमां धर्म कारति

કરતાર કત્સાહી બ યુ.)





(દક્ષિણું ન. જેન કેન્ફ્સેસના પ્રમુખ મેમ્બર અને કોલ્હાપુર **બાર્ડિંગમાં સન્ય મેદિર નિર્માપિત કરતાર ઘન** પ્રેમી ત્રાંમાત ગહેરવ

(साक्षापुरमां ३ ११०००)ना भरवे पातानी द्यातिमां पाताना નામથી શ્રાવિકાશમ ખાલનાર ધર્મધર્મા, હદાર અને

વયાં ટક્ક વિક્ષવા બાદ્ર)

છે. આમ ચવાતું કારણ તપાસીશું તે ચા-ખ્યું જ જણાશે કે કામમાં અનાન રૂપી અં ધકાર સજ્જ કે ફેલાયલા છે. અને એ અન્ના-નતા દુર થઇ ત્રાન રૂપી દીપક જ્યાં સુધી પ્રકાશમાન થાય નહિં, ત્યાં સુધી ગમે તેટલા મંદિર બનાવા કે હજારા રૂપીઆ ખરચી જ્રણે બ્ધાર કરાવા, પણ ધારેલી ઉમેદ કદી પણ કૂળી બુત થઇ શકે નહિ, કેમકે અત્રાન-તામાં આરૂદ થયેલા અભણ જેના તેના લા બ કેવી રીતે લઇ શકે ? માટે તેવાઓને ત્રા-ન પ્રાપ્ત કરાવવા માટે કેલવણી અને વિદ્યા-દાનમાં પૈસાના ઉપયાગ થવા જોઇએ.

સુમતિચંદ્ર—મારા મનમાં પણ એજ હતું. માતાચંદ ! તમારા વિચાર મને તા પ-સંદ પડયા, પણ આપણા બધાના એકમત કરી વ્યવસ્થા કરવી જોઇએ.

સુમતિચારે પાસે ખેડેલા સર્વેને પુઝર્યું – "તમારા ખધાના શું વિચાર છે? માતાચંદે જે વિચાર જણાવ્યા, તે તમાને પસંદ પડયા કે નહિં!"

સર્વેએ પણ દા કહી, અને સુમતિચંદ્ર ને કહ્યું કે-" કેટલા કેટલા રૂપીઆ અને ક્યાક્યા ખાતામાં વાપરવાં તે તમાજ જણાવા."

સુમિતચંદ્ર—"એ ર, ૧૦૦૦)નું સ્થાયી કંડ રહેવા દેવું અને તેનું વ્યાજ ઉત્પ ન્ત કરવું અને તે વ્યાજ ચતુર્વિધદાન (આ હારદાન, અલયદાન, આપધદાન, શાસ્ત્રદાનનો છે. કેલવણી અને ધર્મમાનના અલાવે આપણા મને સ્વીન્તમ જૈન ધર્મ હીન દશાએ પહોંચી ગયા છે, તેથી જેમ બને તેમ શાસ્ત્રાદાર કરાવી શાસ્ત્રદાન કરવું. હાલમાં પૈસા ખરચી શાસ્ત્ર ખરીદ કરે એવી આપણા ઘણા ખર આળમુ જૈનામાં ઉલટ નથી, તેથી જેમ બને તેમ મદ્દત વાંચન પુરૂં પાડવું અને તે માટે વ્યાજમાંથી અડધા રૂપીઆ દર વયં

શાસ્ત્રદાન પાછળ એવી રીતે ખરચવા. કે એ રૂપીઆમાંથી દર વર્ષે એક ઉપ**યાગી પ્રાચીન** શાસ્ત્રનું ગુજરાતી ભાષાંતર કરાવી તેવી ૨૦૦૦ પ્રતા બાળખાંધ લીપિમાં બહાર પડાવવી અને તેનું નામ શેઠ ''કસ્તરચંદ ગલાખચંદ સમારક શ્રંથમાળા" "એવું આપવું અને **પછી દર** વર્ષે તેના મણકાંઓા (નંબરા) બહાર પાડવા, અને તેમાંથા ૧૫૦૦ પ્રતા 'દિગંભર જેન' પત્રના ગ્રાહકાને ભેટ આપવા :માટે માેકલી દેવી કે જેથી વિના પાસ્ટેજે આપ્યા હિં<mark>દસ્તાન</mark>-માં ગામેગામ ને શહેર શહેર વહેંચાઇ જાય એટલે શેઠન નામ તથા કીર્તિ અમર રહે અતે શાસ્ત્રદાનનું અગાધ પુરુષ પ્રાપ્ત થાય. તેમજ ૫૦૦ પ્રતા વધે તે પછી આપશી ન્યાતમાં ઘરદી દે એકેક વહેં ચી દેવી. તેમ વળી મારા વિચાર એવા પણ છે કે દરેક વધું તેમની સ્મારક ગ્રાંથમાળામાં તેમના કાટા અતે ડુંક પરિચય આપતા રહેવું. આ પ્રમાણ અડધા રૂપ્યાની વ્યવસ્થા કરવી અને ભાષ્ટીના અહધામાંથી ગરીબ, નિરાશ્ચિત અને અપંગ એવા લાંકાને કેળવણી અને આહારદાન આપવું અથવા તેવાં ખાતાંઓમાં મદદ પાંદાચાડવી તથા ગરીબ નાચારેઃને મકૃત દ્વા પુરી પાડવાનાં ખાર્તા હૈાય, તેમાં મદદ કરવી તથા આકૃતમાં કસી પડેલા જીવાને ઉગારવાના કામ (અલ-યદાન)માં વાપરવા, તથા જ્યાં ધાર્મિક દેળવ-ણી અપાતી હાય એવાં ખાતાં**એ** જેવાં કે વ્યક્ષચર્યાશ્રમ, જૈત અનાયાશ્રમ, શ્રાવિકાશ્રમ, સ્યાદાદ મહાવિદ્યાલય તથા બાર્ડિંગા અને પાદશાળાઓમાં પણ મદદ કરી એ અડધા વ્યાજ-ते। अपयाग स्वी."

સુમતિચંદ્રની વાત સર્વેને પસંદ પડી, અને એજ પ્રમાણે વ્યવસ્થા કરવાતું નક્કી કરી સર્વ છુટા પડ્યા.

मानासिक व्याधि.

(લેખક:--રા. દરજીવન રાયચંદ શાહ આમાદ)

હાલના વખતમાં દામ દામ શારીરિક વ્યાધિયાને માટે સરકાર તરકથી તેમજ પરાપકારી શુદ્ધશ્રો તરકથી મોટી સંખ્યામાં જાદા જૂદા પ્રકારનાં દવાખાનાં એનક પ્રકારના સાધન અને સગવડ સાથે ઉલાં કરવામાં આવે છે, જેથી પ્રજાજન રાગ મુંકત થઇ ને અનેક પ્રકારના આશિવદા વર્ષાવે છે ત્યારે તેવા વખતમાં એક એ વિચાર પણ ખાસ કરવા જેવા છે કે શારીરિક વ્યાધિની પેઠે માનસીક વ્યાધિ જેવું કાંઇ છે કે નહીં ? જો હોય તા તેના એલપેલપ્યાર હાઇ શકે કે નહીં ? જો હોય તા તેના એલપેલપ્યાર હાઇ શકે કે નહીં ? જો હોઇ શકે એમ સલ વત હોય તો તે માટે શું શું કરવા જેવું છે, એ સર્વે બાખતોના વિચાર કરવા અવશ્યક છે.

પ્રથમ માનસીક વ્યાધિ કાર્ને કહેવા ? એ! નક્કી થવું જોઇએ. જયારે શરીરમાં विधार अभन्न थाय छे त्यारे नेते आरीरी ह **્યાધિ કહેવામાં આવે** છે ત્યારે વિકારાને માનસીક વ્યાધિ કહેવામાં કાંઇ વાંધા **અાવે એ**વું જણાતું નથી અને કામ, ક્રાેધ **માહ** કાત્યાદિ જેને આપણે મનાવિકારા કહીએ છીએ ते एधा भानसी इ વ્યાધિયાજ **છે એમ નક્**રી થાય છે. આ માનસીક વ્યાધિ-**ચાથી સમાજના** ધણા ખરા માણસા દાલ **વ્યતિક પ્રકારતાં** દુઃખ ભાગવતા માલમ પડે છે. અને ધ્રણાખરા શારીરિક વ્યાધિયા થવાન કારણ ધણીવાર માનસીક વ્યાધિયાજ હેલ્ય છે **એટલંજ નહીં** પણ શારીરીક વ્યાધિયા દર કરવાને માટે ધણીવાર મનને નિવિકારી ગ ખવાની ખાસ અગત્ય પડે છે, હતાં પણ અમાશ્ચર્ય જેવું તો એ છે કે જ્યારે અનેક માણસા પાતાના શારીરિક રાગાને માટે તેમજ

વાઢાલાં ભાળબચ્ચાંના શારીરિક પાતાનાં વ્યાધિયાને માટે કરીયાદ કરતાં સાંભળીયે છીએ: ત્યારે કાઇ પણ માણસ **અથવા કા**ઇ પણ બાળકની માટે ભાષ પાતાને અથવા પાતાના બાળકને અમક પ્રકાર**ના માનસીક** વ્યાધિ થયા છે એવી કરીયાદ કરત જ નથી. અને કરીયાદજ નથી ત્યાં પછી તેના ઐાષધા• પચારની પુછપરછના તા સવાલજ ક્યાં રહ્યા ! આ સ્થીતિમાં મારા જૈન ખાંધુઓનું હું **ખાસ** લક્ષ ખેસું છું કે હાલમાં જેટલા ઉપદેશકા સમાજ સુધારહાનું અથવા ધર્મોપદેશ કરવાતું કામ કરે છે. તેમણે પહેલાં જૈન સમાજના માટા વર્ગમાં જે માનસીક વ્યાધિયા ગયા છે તેને નિર્મળ કરવાના ખાસ પ્રયત્ન કરવા જોઇએ છે. કેમકે નિર્વીકારી મન હોય છે તેમાંજ ધર્મના અને પરાપકારના સંરકારા જોઇએ તેવા પડી શકે છે. અને તેઓજ કાંઇ પણ કર્તવ્ય કરી શકે છે. વળી मनपव मनुष्या णाम कारणं बंध मोक्षयाः से वाडय प्रभाषी तेभक्र--

'મન ગયા તાે સધ્ય ગયા મનપે' સર્વ મદાર'

એ વાકયાનુસાર મન ઉપરજ સંસારના બધા આધાર છે. અને માનસીક વ્યાધિયાનું મુખ્ય ઓપલ ઉપદેશજ છે પણ ઉપદેશ એ શબ્દ લખવામાં તેમજ ખાલવામાં જેટલા સહેલા અને સરળ છે તેટલા તેના ઉપયોગ કરવા સહેલા નથી, ઉપદેશકા કેવા જોઇએ! ઉપદેશ કરવાની શૈલી કેવી બ્નેઇએ અને ઉપદેશ સભાઓ ભરીને કરવામાં આવે છે તે ઉપરાંત માણુસે તેની નાડ (!) તપાસીને પણ ઉપદેશ કરવાને બદલે એકાંતમાં ઉપદેશ કરવાની બદલે એકાંતમાં ઉપદેશ કરવાની ખાસ અમસ છે.

અા મહત્વના અને ગંભીર સવાલની બાબતમાં અત્ર માત્ર આ લેખથી સાદી સચનાજ આપવી યાેગ્ય ધારી છે. અનુભવથી આપણે જાણીયે છાએ કે જૈન વર્ગમાં તેમજ ઇતર વર્ગમાં પણ અનેક પ્રકારના કલેશ ક'કાશ તેમજ દુ-ર્ગુણા જોવામાં આવે છે. અને તે સધળાં માનસીક વ્યાધિયોનેજ આભારી છે. છેકજ પ્રાચિનકાળથી તે આજ સુધી એવાં દવાખાનાં જેવાં કે દેવાલયા, મંદિરા, ભટ્ટારકા, પંડિતા, ઉ પદ્રેશકા અને બ્રહ્મચારીઓના ૩૫માં—ચાલતાં **અ**ાવેલાં છે. પણ કાળે કરીને જેમ દરેક વ• स्त्रतं स्वइपं इरवाध लाय छे तेज नियम પ્રમાણો આ સર્વેતું રૂપ ફેરવાઇ ગયું છે. અન્ ને હું ચાકશ કહું છું કે જ્યાં સુધી મન– ની ભ્રમીકા જોઇએ તેવી તૈયાર થાય ત્યાં સધી જેમાં ધર્મ અને પરાપકારના કરેલા ઉપદેશાની અસર થવાની નથી એટલંજ નહીં પણ ઐદ્ધિક તેમજ પારલાકાક કલ્યાણ પણ સાધી શકાવાનું નથી. મારા નન્ન અભિપ્રાય એવા પણ છે કે જેવા રીતે પુનામાં લાક માન્ય ગાપાલ કૃષ્ણ ગાખલેએ " સર્વન્ટસ ઓક ઇન્ડીયા સાસાયટી " નામના વર્ગ ઉધા-ડયા છે તેવાજ રીતના માનસીક વ્યાધિયા દર કરવાને માટે વૈદ્યા તૈયાર કરવા સાર એક વર્ગ ઉધાડવાની જરૂર છે, અને તેમાં નવા જમાનાને અનુસરીને પહોંત પુરઃસર શિક્ષણ થ્યાપી વૈદ્યા (ઉપદેશકા) તૈયાર કરવાની જરૂર છે. યાજના અમલમાં મુકવાની કેટલીક અગત્ય છે, તથા તેથી ભવિષ્યમાં કેવા કેવા લાના થવાના સંભવ છે તે યથાર્થ રીતે સમ **જાવવા સારૂં એક નાનુ સરખું** પુસ્તક છપાવી **બહાર પાડવા જેવું છે, અને તે પુસ્તકમાં** શ્યા વિષયના ધણા પેટા ભાગા પાડી તે ઉપર **ધ**ર્ણું ઉપયોગી લખાસ લખી શકાય એમ છે. હું અપાશા રાખું છું કે:- અપા વિષયને ઇતર ભાષામાં પ્રગટ થતાં સ્વધર્મી અને બીજા ઉપાડી લેશે. અને કાંધ ผมย์ **જાહેરપત્રે**! **ક્ષેખક** મારી સૂચતાને વ્યતસરીને થાડા વખ તમાં એકાદ નિબંધ લખી બહાર

शा माटे मित्रता तूटे ?

૧ સરળ પરીહ્યામથી નહિ વર્તવા**થી.** ૨ પૈસાના વ્યવહારથી.

૩ દરેક ભાગ્યતમાં સંશય વૃત્તિ રાખવાથી. ૪ સ્વકૃત્ય વિષે વ્યર્થ અભિમાન કરવાથી.

પ નાની નાની ભાખતામાં **મન ધાલીને** તેનાજ વાંરવાર વિચાર કરતા રહેવા**શી**.

૬ સ્વાર્થ માટે અથવા ¦પાતાના **લાભ** માટે અન્ય પુરૂષની કીર્તિને કલંક લગાડવા**ને** નિશંકપણે મ≃યા રહેવાથી.

૭ મિત્રાની પાછળ તેએોની નિ**ંદા અગર** હાંસી કરવાથી.

૮ આપણા મિત્રાના ધરમાંની ગુપ્ત વા**તે**] અન્ય લોકોને કહેતા ફરવાયી.

૯ આપમતલબીપ<mark>ણાથી અથવા કુટિલ</mark> પરીણામાથી.

૧૦ આપણા મિત્રાએ આપ**ણને માન** આપવું અને આપણાજ ગુ<mark>ણની પ્રશંસા</mark> કરવી એવી ઇંચ્છા કરવાથી.

૧૧ મૈત્રી માટે મિત્ર સમાગમમાં વખત ગળવા એટલે નકામા વખત ગુમાવ**વા એમ** સમજવાયી.

૧૨ સ્તેહ એ પરસ્પર સેવા બજાવવા**તું** એક અપૂર્વ સાધન છે એમ નહિ **જાણતાં** તે માત્ર ચેન ઉડાવવાના એક માર્ગ **છે એવી** ભાવના રાખવાથી.

૧૩ આપણા અતરંગના દ્વારા પૂર્ણ રીતે માકળા કરીને લોકોને તેની અંદર લે-વાની કાશીસ નહિ કરવાથી.

૧૪. અસભ્ય, કૃત્સિત, માર્મિક અથવા મનને ખાદું લાગે એવા હેતુથી ઉપહાસકારક વચન બોલવાથી.

૧૫ સ્તેહના પ્રધાન પાયા પૂર્ણ અતે સરળ વિશ્વાસજ છે એ બૂલી જવાથી. ૧૬ ફકત ઉપરા ઉપરી વાતાથી રતેહ વૃદ્ધિ ન પામતાં અતરંગ સવાથીજ તેના વિકાશ થાય છે એ તરફ દુર્લક્ષ્ય કરવાથી.

, ૧૭ વાર વાર બીજાની મદદની માત્ર **આશા રા**ખવી, પણ જ્યારે બીજાને આપણી ,મદદની જરૂર હેાય ત્યારે બહુ જરૂરી કામ .**હેાવાથી અગર** એક ક્ષણુભર પણ પ્રુરસદ !ન હેાવાથી.

> **આ** વગેરે કારણાથી મિત્રતા તૂટે છે "કુસુમ ³⁷



(લેખક–મી૦ માત્રજી દામજી શાહ, મુંબાઇ)

સુષ્ટિમાં દિનાનુદિન અમુક અમુક હદે **આગળ વધવા માટે બંધારણ કરવામાં આવતું** જણાય છે. તેના આ સમયની અપેક્ષાએ જો લાભાલાભ તપાસવા યત્ન કરીયે, તા પ્રથમ કારિ આપણને અધિક ગમાણમાં દસ્ય થશે: એ સ્વાભાવિક છે. આપણે વર્તમાન રિથતિન **અવલંબન કાના પ્ર**તાપે કરીયે છીએ તે તરક દર્ષ્ટિપાત કરશા, તાે જણાગ આવશે કે આ-પણા વિદેશીય પાક્સિમાત્ય બ'ધુએાએ **આપજા દેશમાં** વાસ કરીને નવીન શેલીઓ શિખવાડી છે તેઓનાં અત્ર વસવાટ દરમ્યાનજ હાઇરકલ, કાલેજ, લાઇથેરીએા, ઉદ્યોગગૃહો **અતે કળાભવના ખુ**લવા પામ્યાં છે, એટલુંજ નહિં, પરંતુ ટુંક સમયમાં એક સ્થળેથી ખીજે સ્થળે વિજળીની માક્ક સંદેશા માકલ-વાતું સામર્થ્ય, પણ તેના અતુકરણ અને પ્રતાપનેજ આભારી છે. આપણા હિંદમાં પહેલ વહેલાં લાર્ડ મેકાલાએ ઇંગ્લીશ કેલવણી **ફેલા**લવાતું બીજ રાેપ્યું અને તેના પ્રતાપે અનાપણ કાર્યદક્ષ થયા હઇએ તા તે

સત્યજ છે. જો કે હાઇસ્કુલા, કાલેજો, લાઇ-છેરીઓ તેમજ ઉદ્યોગગૃહે**ા પ્રાચીન સમયમાં** નહોતાંજ, એમ મ્હારે કહેવાનું કંઇ પણ પ્રયોન જન તથી. અલખત તે તમામ હતાં, પરંદ્ર કાળકુમે તે સર્વે ખેત્રણ સેકડામાં જી પ્રાય: થઇ ભાંગી તૂટી ગયા હતાં. શબ્દાંત**ર વડેજ** તે તમામને આપણે જાણવા માંગીએ, તા વિષ્ધવિદ્યાલય, પાદશાળા, વિદ્યાશાળા, મઠ, પસ્તકશાળા, વગેરે તેને કહેવામાં આવતાં દતાં. દાલ પણ કહેવામાં તેમજ આવે છે, પરંત સધરેલી પહતિ મુજબ તેમાં પહેલાની મંત્ર્થાઓની સ્થિતિ કરતાં અત્યારે ધણા કેર-કાર થવા પાસ્યા છે. લગભગ સાે બસાે કે ત્રણસા અને ખહુતા ચારસા વરસા દરસ્યાન અને કુ મુસલમાન પાદશાહા થઇ ગયા. અલાઉદીન ુખની જેવા કેક રાજ્યએા થઇ ગયા કે જેણે જૈન દેવાલયા. શિવાલયા. પુસ્ત કશાળાએ ભાળી રાખ કરી નાંગ્યા કેક સપટ દયટ કરી નાંખ્યાં. એટલુંજ નહિં પણ ક્રંઇ નિશાની જોવા પામીયે તેવી સ્થિતિ પણ આપણા માટે રાખી નથી. તેઓનાં સમયમાં એક ખીજાને મારી નાંખવા એ તેા ઘણું સુલબ **હતું. આવે**ા વિકરાળ રૂપ સમય પસાર **ચ**તાં ધ્**રીટીશ** સરકારના ન્યાયી શાસનમાં આપણે સર્વ કાઇ આવી વસ્યા છીએ. આવા શાંતિમય રાજયમાં આપણું કાઇ નામ લેનાર નથી એ આપણો કેટલું હવે. પામવા જેવું છે? તે સ્વયં વિચારશા. હવે આવા સમયમાં આપણે પણ યુરાેપીય વિદ્વાનાની માક્ક નવાં નવા ઉન્નતિ સાધક ખાતાઓ ખુલ્લા મુકવાની અગત્ય છે. જો કે આપણામાં અનેક ખાતાંઓ જોવામાં આવે છે. છેલ્લાં ખેત્રણ વરસા મુકી દઇને આપણા દિગંભરી, શ્વેતાંભરી અને સ્થાનકવાસી બંધુએામાં જેવી રીતે શ્રીમતી કાન્ક્રર**ંસ દેવી** અનેક ઉત્કર્ષનાં કાર્યો કરતી જોવામાં આવે છે, તેવાં ખાતાંઓ સષ્ટિમાં દિગ'ત સુધી પાતે

કેલાય અને ચિરકાળ સધી દિનાનદિન ચડતી કળાએ પહેાંચે, એવું કાર્ય કરવાની હું જુએ ધણી આવશ્યકતા છે. અતારે સામાન્ય રીતે જોઇએ તાજ જણાઇ આવશે કે આપણી જૈત કામનાં ખાતાં સ્થાપન થતી વખતે સિંહ માકક શરવીરતા ખતાવે છે. પણ થાડા સમય ગયા પછી શિપાળની માકક અને કંઇક વધારે સમય ગયા પછી ગળીયા બળદની માકક अने अंते मुळं नास्ति कुतः शाखा। સ્થિતિમાં આવી પડે છે. સજ્જના! આ જાણી **અ**ાપ સ્ત્રય વિચારશા કે આપણે હજા કેટલા સમય સત્કાર્ય કરવાની પાછળ પસાર કરવાની જરૂરછે? **અ**ાપણામાં અનેક પ્રકારની દર્ભળતા જોત્રામાં આવે છે, તે બધી ક્યારે દુર કરવામાં આવ-શે, અને ખરેખરા કાર્યદક્ષ યુરાપીયન બાંધ-વાતી માકક તેઓના એકજ ગુણ લઇને કાર્યમાં મચ્યા રહેવાની પીક્ષાસાપી ક્યારે સમ-જીશં ? એ ખરેખર ચિંતનીય છે. આશા છે કે આપણા માન્યવર અગ્રેસરા જે જે ખાતાંએ! ખાલે, તેમજ જે જે ખાતાંઓને નભાવવાનું માથે લે છે તે તે સર્વે "યાવસ્ચંદ્ર દિવાકર" સૃષ્ટિમાં જયવંત વર્તો ઈત્યલં.

મહાત્મા દાદાભાઈ નવરાજજીનું નામ હિંદી પ્રજ્ઞના હૃદયમાં કાતરાઇ રહ્યું છે. એ મહાત્મા જેવી ભારતવર્ષની અપૂર્વ સેવા બી-જા કાઇપણ હિંદીવાને ભાગ્યેજ બજાવી હશે.

મહાત્મા દાદાભાઇની જન્મગાંઠને દિવસે મુંભાઇના એક વર્તમાન પત્રના અધિપતિ તહેમને અબિવંદન આપવા ગયા હતા, તેએ શું મી દાદાભાઇએ સન્માન કર્યું, અને ધન્ય- વાદ આપ્યા. એ જોક અધિપતિ સાહેળને આનંદ થવા ઉપરાંત આશ્ચર્ય પણુ થયું, કાર- ણકે ૮૬ વર્ષના વૃદ્ધ થવા છતાં પણુ મહાત્મા દાદાભાઇ હૃષ્ટ, પુષ્ટ, અને પુરતા તંદુરસ્ત ઉપરાંત, આનંદી ચ્હેરાત્રાળા, ભવ્ય પુરૂષ જ શાતા હતા, જ્યારે બીજા કેટલાક એહલીજ ઉમ્મરનાં માણસાનાં ડાચાં એસી ગયલાં, ચામડી ઉપર કરચલીએ આવી ગયલી, આંખાંથી પાણી ગમતું, અને શરીર સુકાઇ ગયેલું જણાય છે. મહાત્મા દાદાભાઇને અધિ પતિ શ્રીએ એક પ્રસ પુછયા કે "આપનું શ રીર આટલું બધું તંદુરસ્ત રહ્યું છે તેનું કારણુ શું કં"

મહર્ષિ દાદાભાષ્ટએ હસ્તે વ્હેરે સાથી પહેલાં એજ ઉત્તર દીધા કેઃ—

૧ મહેં હજુસુધી કાઇપણ દિવસ દાર્ફ પીધા નથી

ર મહે' માંસના સ્પર્શ પણ કર્યા નથી.

૩ ^ગહે કદીપણુ તંબાકુ ખાધા, પીધા, કે સુ[:]ધોા નથી.

૪ ક્લેં કાંઇ દિવસ તીખા તમતમતા મરર્ચા મશાલાવાળા પદાર્થી ખાધાં ન**થી.**

૫ કહેં અથાણાં વિગેરે ખાધાં નથી.

ક હું હજુસુધી તમા ગુણુની પાસે ગયા નથી અર્થાત્ ગુસ્સામાં ખુબ ઉસ્કેરાઇ જઇ મારામારી કે ધમાધમી કરી નથી,

૭ રહેં હમેશાં સખત મેહેનત ક**રી છે** અર્થાત્ પુષ્કળ કામ કર્યું છે.

८ २६ हरेड आमडाक हररेाक निय-भित रीते ड्युँ छे,

આટલું કહેવા ઉપરાંત શરીરના સંરક્ષણુ-તે માટે નીચે લખવા પ્રમાણેના દશ્ચ નિયમા પણ કહ્યા છે:—

૧ સ્થ્લ દેહનું આરોગ્ય એ કાંઇ ખર્ આરોગ્ય નથી. સ્થલ અને સુદ્ધમ એ અન્ને શ્રાસીશ વિકાર રહિત હોવાં એઇએ. ર શરીર, મન અને આત્મા, એ ત્રણેની જેવડે ઉત્તરાત્તર ઉત્નતિ થાય એવાં કામ કરવાં એ આરાગ્યતાના ખરા નિયમ છે.

3 આ રાગ્ય રહેવાને માટે માત્ર સુખ પૂર્વક ખાલું પીલું એજ નિયમ નથી પણ સદગ્રણામાં પ્રવૃત્તિ રહેવી જો⊎એ કે જે વહે આયુષ્ય વધે. સર્વેએ આ વાત ધ્યાનમાં રાખવી જો⊌એ.

૪ રથ્લ અને સક્ષ્મ એ બન્ને શરીરને પરસ્પર સંભધ છે. એ બેમાંથી એક વગર ખીજું શરીર ટકી શકતું નથી. રથ્લ શરીરને સ્થ્લ અને સક્ષ્મને સક્ષ્મ ખારાક આપવા જોઇએ. નિયમિત ખાવું, પીવું એ સ્થલના અને સદયુષ્ણ, સદાચાર વિગેરે સક્ષ્મના ખારાક છે.

પ તાવ, ખાંસી, ક્ષય ઇસાદિ રાગા સ્થ્લ શ્રરીરના અને કામ, ક્રોધ, ઇયાં, દ્રેય, આળસ વિગેરે સહ્સ શરીરના રાગા છે.

ં કુ સાત્વિક આહાર શરીરને નિરાગી રાખે છે અને મનને સત્વ ગુણી બનાવે છે.

૭ તામસી અહાર જેવા કે મદ્ય, માંસ, મદીરા વિગેરે મનને તમાગુણી, દુર્ગુણી અને નીચ બનાવે છે.

૮ પરાપકાર, દયા, ક્ષમા, સ્વાર્થ લાગ, નિર્લિકતા, ઉત્સાહ, હિમ્મત, સ્વજન વાત્સલ્ય, અને સ્વદેશ સેવા વિગેરે ઉત્તમ ગુણા મનને ઉત્તત બનાવે છે અને શરીરને આરાગ્ય રાખીને આયુષ્ય વધારે છે.

હ શારીરિક અને માનસિક એ બંન્ને પ્રકારની આરાગ્યતા થવાથીજ આનંદ મળે છે, આયુષ્ય વધે છે અને આષ્ણ મળે છે.

મહર્ષિ દાદાભાઇ નવરાજજીના આ વાક્યા પ્રત્યેક હિંદીવાને પાતાના ઘરમાં ક્ષણા રાખવાં જોઇએ. પાતાના ઘરમાં સ્ત્રી, પુરુષા, અને બાળકાને રાજ એ વાક્યા વંચાન વવાં જોઇએ અને તે પ્રમાણે વર્તતાં શીખવું જોઇએ. કેટલાક મદ્ય, માંસના શાખીનાએ પણ એ ઉપરથી બાધ લેવા જોઇએ કે ઉક્ત મહાતમાશ્રા વિલાયત જેવા થંડા દેશમાં રહેવા છતાં તેઓ કદી પણ મદ્ય, માંસને સ્પર્શ કરતા નહોતા!

આજે 'દિગંમર જૈન'ના નવા વર્ષ**ના** અંક પ્રકટ થાય છે, તેમાં જે જે વાંચક **બં**-ધુએા આ લેખ વાંચે તેમણે મહાત્મા દાદા-ભાઇના શબ્દાે સ્મર્ણમાં રાખી **તે પ્રમાણે** વર્તવું જોઇએ.

સર્રથા (સુરત)

દક્ષિણ તથા વરાડ પ્રાંતમાં સેતવાળ જેનાના વસ્તા આશરે ૨૦૦૦૦ છે, જેના ભટારક નામે વિશાળકોર્તિજી ઘણાજ વિદ્વાન હતા પણ તેમના કાળ કરવા પછી હાલ ૨૦ વર્ષ થયાં એ ગાદા ખાલી છે. આ ભટારક નકી કરેલા પંચના માણસા અનંતરાજ જોતીયા પાંગલ, દત્તાત્રય અપણા સુભણે (સાલાપુર) વગેરે પંચપણ કાળવશ થવાથી તેમની જગ્યાએ પંચ તરીક શ્રીયૃત તેમીનાથ અનંતરાજ પાંગળ (યાર્સી), બાપુરાવ ખેખેંડ (સાલાપુર), પહેરીનાથ કાશીનાથ, પાંડપુર, તુળસીરામ શાનાખા, ધારાસીવ, તથા નાગાખા તાત્યા કુરકુટ સેતવાલ શાંતિના લદારક પદના જાર્બોહાર કરવા હાલ પ્રયન્ન કરી રહ્યા છે.

સ્વર્ગીય શૈંક ગુલાખસાવજી દારા જૈત બાર્ડિંગમાં આ વર્ષે મેટ્રીક્યુલેશન પરીક્ષામાં બીજા વર્ગમાં પાસ થએલા હેાંશીઆર વિદ્યાર્થી શ્રીયુત બાલકૃષ્ણુ શહાકાર જે મેહિ શાંસારમાં વિરક્ત વૃત્તિથી અને 🎎 ધર્મ તથા જૈન સમાજની સેવા કરવા માટે આત્મા ર્પણ કરવાને તૈયાર છે તેને શેઠ ગુલાળસાવજના કત્તક પત્ર માતીલાલજની સંમત્તિથી પંચના પુરુષા શ્રીયુત નેમીનાથ અનંતરાજ પાંગળ અને શેઠ વામન માતીરામ દેવધાળે. સાલા-પરના પ**ંચની સ**ંમત્તિથી સાલાપર **જૈન** પાઠ-શાળામાં ધર્મ શિક્ષણ ક્ષેવાને માટે લાવીને રાખેલા છે. શેક હીરાચંદ નેમચંદજી દાશીએ પણ વ્યાલકષ્ણને પસંદ કર્યા છે અને એમની ટ્રેખરેખ નીચે પં. બંસીધરદ્રારા સર્વાર્થસિદ્ધિ, જૈને દ્રવ્યાકરણા, ધર્મશર્મા બ્યુદ્ધ કાવ્ય, ન્યાય દીપીકા વગેરે વગેરેનું શિક્ષણ હાલ ચાલે છે. િ વિશાળકીર્તિછ**ે**ના **अ**द्राइ इ બ્રી મઠ (ગાદી) લાતરમાં છે અને લાતરની ગાદી ઉપર શ્રીયુત ખાળકુષ્ણ હવે પછી ભદારક પદ ઉપર સ્થાપિત થશે.

સેતવાળ ત્રાતિમાં બટ્ટારકની સ્થાપના કરવાને માટે ઢાલ નાગપુર, સોલાપુર, ખાર્સી, વૈરાગ, પાંગી વગેરે ગામામાં ટીપ થઇ છે અને વહાડ, દક્ષિણ મહારાષ્ટ્ર વગેરે જ્યાં જ્યાં સેતવાળ કામ છે ત્યાં ત્યાં પંચના માણસા ટીપ માટે કરનાર છે. જેઓ આસો સુદ ૧૫ પર દેઉલગાંવ, કાર્તક સુદ ૧૫ પર શીરપુર, ભાતકુળો અને મુક્તાગીરી, માગસર સુદ ૧૫ ઉપર કુંયલગીરી અને પોષ સુદ ૫ પર ઉપળદ જનાર છે. આ કાર્ય માટું છે અને તે યાગ્ય રીતે થવાની જરૂર છે

નાગપુર, વર્ધા, દક્ષિણ મહારાષ્ટ્રના સે-તવાળ ભાઇઓની આ કાર્યમાં એવી સંમત્તિ છે કે ભટ્ટારક સારા, વિદ્વાન અને કાર્યકર્તા હેાવા જોઇએ, જેથી સાલાપુરમાં અભ્યાસ કરાવ્યા પછી બાળકૃષ્ણને પં. ગાપાળદાસજી બરૈયા પાસે ધાર્મિક ઉચી કેલવણી સંપાદન કરવાને માકલવા. પં. ગાપાળદાસજીએ પણ શિક્ષણ ભાપવાના સ્વીકાર કર્યા છે. સારાંશ કે યાંગ્ય અને વિદ્વાન ભટારક ખેસાડવાનીજ પંચની અભિલાષા છે. શ્રીયુત ભાળકૃષ્ણુને ખી. એ. પાસ કરાવીને ભટારક બનાવવાની પંચાને ઘણી ઇચ્છા હતી, પણ ખી. એ. થવા માં ૪–૫ વર્ષ અને પછી ધર્મિક કેલવણીમાં ૫–૬ વર્ષ અર્થાત ૧૦ વર્ષ સુધી એ કાર્ય લંખાવવું પંચને ઠીક ન લાગવાથી શ્રીયુત ભાળકૃષ્ણુને હવે અંગ્રેજ કેલવણી મુકાવી ધા મિંક શિલેણ શરૂ કરાવ્યું છે. સર્વે જૈન કામ આ કાર્યમાં પંચને સહાય આપશેજ એવી પંચને ઘણી આશા છે.

आपना सेवड, तात्या नेभीनाथ पांगक्ष, भार्सी. जानवरो माटे केटलीक शिखामणो.

પ્રિય વાંચક વર્ગ ! અગાઉ અમા જણાવી ગયા છીએ કે મતુષ્યાતા માટામાં માટા**થી તે** નાનામાં નાના જીવ સાથે કેવા સંખંધ છે. કાઇ કાર્યભાર એવા નથી કે જેમાં આપણને જાન વરતી મદદ લીધા વગર ચાલે. મતૃષ્યના સ્વાર્થને માટે સારામાં સારી વસ્ત ચ્યનાજ.કળ, પૂલ. મેવા વગેરે સિવાય થી, દુધ વગેરે ઉનાળા શિયાળાને માકક સતરા**ઉ કે** ગ**ર**મ **डायड को जानवरी द्वारा आपख़**ने भेले छे. પાણી અને હવા જેવી જરૂરની ચીજોને સાક રાખવાને પણ પક્ષીએા સારી મદદ આપે છે, જેથી જે જાનવરા દ્વારા મનુષ્યા પાતાના ખારાક પાશાક વગેરે પ્રાપ્ત કરે છે તે ઉપકાર ધ્યાનમાં રાખીને તેમની સાથે કેવું વર્તન રાખવું જોઇએ તે સંબ'ધી કેટલીક શિખામણા અત્રે જણાવવામાં આવે છે, કેમકે જાનવરા દ:ખી અને કમજોર રહેવાથી મનુષ્યની તાંદુ-

જારે ઉપર પહું તેની ખડુ માઠી અસર પડે છે. આ સંખંધી ઉગ્લાંડની રાયલ સાસાયટી (R. S. P. C. A.) ની એક ત્રેક્ટ ના કંપક સારાંશ નીચે ખતાવવામાં આવે છે.

શિખામણા.

૧ જો કાઇ જનાવરને તમારે ત્યાં રાખ વાની ઇચ્છા હોય તાે સાથી પ્રથમ તેને તાં દુરસ્ત અને સારી હાલતમાં રાખવાના ખરાબર માઠવાલું કરાે, જો તમારે ત્યાં તેને આરામ પહોંચે એવી ગાઠવાલું ન હોય તા તે જાનવરને રાખવાના વિચાર કદી કરતા નહિઃ

ાર જાતવરા સાથે દયા અને પ્રેમથી વર્તી અને કાઇ કાઇ વખતે તે ભય અથવા કંઇ દુ: ખથી જીદ ઉપર ચઢી જાય છે ત્યારે તેની અસલ હાલત વિચાર ન કરતાં તેના દુ: ખતું ખર્સ કારણુ જાણવું જોઇએ.

ક જાનવરાને એકજ જગ્યાએ રાતિ દહાઉં ખંધ રાખવા અથવા એકજ જગ્યાએ ઉલા રાખી મુકવા તે તંદુરસ્તીને હાનિ કર્તા છે. કેમ્ કેમ્ઇ વખતે જાનવરા તરફ પ્રેમ અને ખ્યાનથી વર્તવું અને ખુશીથી હાથ ફેરવ વા તેમ તેના સાથી જાનવરાને હરવા ફરવાના સમય આપવા એ બહુજ લાભકારક છે.

૪ દરેક જાનવરને ખરાખર સુકી અને સાક હવાદાર ખુલ્લી જગ્યામાં રાખવાથી તે ખુ શ રહે છે. તેમને સુતેલા અથવા આરામ લે તા હૈાય તે વખતે એકદમ ઉઠાડવા જોઇએ નહિ.

પ જો કાઇ લયકારી ચીજ પાસે હોય તો તે દ્વર કરી દેવી જોઇએ કેમકે આપણા સ્વાધીનમાં રહેવાથી તેઓ બીલકુલ આપણે આધિનજ રહે છે. આવી દશામાં તેમની યથા શેડ્યા સંભાગ કરવી એ આપણું મુખ્ય કેતિએ છે.

કૃ જાનવરાને સાક, તાજો અને સાંસી જાતના ખારાક આપવા જોઇએ. તેના પ્રાસ પાણીના વાસણા રાજ સાક કરવા તેમજ દુધ આપવાવાળા પશુ, ગાય, બેંસ વ્યક્તી વગેરેને જે લોકા ખરાવ્ય ચારા આપે છે, તેઓ સાર સ્વચ્છ દુધ મેળવી શકતા નથી અને તેજ કારખુથી કેટલાક સાહેબ લોકા બજારમાંથી દુધ લાવવા કરતાં પાતાના દેખતાં જાનવરનું દુધ દહાવાડીને સેવાનું પસંદ કરે છે.

૭ જાનવરાતે યથાયાગ્ય ન્દ્રવાડવાના પ્રબંધ રાખવા જોઇએ. ન્દ્રવાડવાથીં જાનવર ખુશ રહેવા ઉપરાંત તેની કેટલીક બીમારીએ! દુર થાય છે. જેઓ મેદાનમાં રહેવાનું પસંદ કરે છે તેમને મેદાનમાં રાખવાં જોઇએ.

૮ કામ કરવાવાળા જાનવરા દિવસતું કામ પુરં કરીને આવે ત્યારે તેમને આરામ માટે કેટલાક ટાઇમ આપવા જોઇએ. અને તેમના પગ વગેરે અંગા તપાસવા જોઇએ.

૯ કેટલેક સ્થળ કેટલાક ગેલાળી આ પશુંઓની લાદ જેવી ખરાખ ચીજો ખવાડીને દુધ મેળવે છે, પણ તેવું દુધ શરીસ્ને લાભને બદલે તુકશાન કરે છે. દુધનાં વાસણો! સાફ કરીને સુક્રવી નાંખવાં જોઇએ, અને દુધ દેહવા પહેલાં ગાય ભેંસાના થાના સારા પા- બીથી ધાવાં જોઇએ, તેમ હાથ પણ સાફ કરવા જોઇએ તેમ દાહીને તરતજ દુધને ઉનું કરલું જોઇએ. કેમકે દાહવા પછી ઉનું કરવામાં ન આવે તા થાડીવારમાંજ તેમાં ઝેરી સુક્ષમ છવા ઉત્પન્ન થઇ જય છે.

આ બાબતોની તપાસ ન રાખવાથી દુધ ખરાબ થાય છે અને તેથી અનેક જાતની ખરાબીઓ ઉત્પન્ન '્થાય છે, જેથી આ ખ-રાખીઓથી બચરાને સાટે અ'ગ્રેજ લેહા બ-જારનું દુધ ન વાપરતાં ખેતે હેરી ફોર્મ



परीन लहुभाई प्रेमानंददास एक. सी. ई. मुंबाई.

(અમદાવાદ બાહિંગ તથા મુંબાઈ દિ. જેત કોન્ફરેસના બાઇ બેકેક્સી તથા રતલામ બાહિંગના સેકેક્સી અને અથગાડ્ય કેળવાયલા ચહસ્ય.)



(ખુંબાર્ટ 'શ્રાવિકાશન તા માંત્રા, ભક્તારાર માહા મ્યતા લેખક અને કસાહી ધર્મોનેમી બધુ)

JAIN PRESS SURAI

पंडित फते६चंद कपुरचंद छालन मुंबाई.



(જાણીતા લેખક, વકતા, પ્રાથકર્તા, ઇપ્લાડમાં જે ઇ કે કેકાવતાર અને જેકોના છે. ફિશ્મમાં એન્સ પ **ચાહ**નાર કેત્સાહી તે. જેન ભાધ)

· 电电子通过电影电影电影中心中间,一个人就是自己的一个人。

श्रीयृत वादीलाल मोतीलाल हाह, अमदाबादः "कैन सभायार" अने "केन द्विनेन्ध"ना संभादक तथा ब्राणीता क्षेत्रक, यक्षा, अंथवर्ग, कैनोता अस् दिरकामां संभ बादुनार अने निदर्भांचु स्वतंत्र रीत कैन अभरी जैना करनार स्थानक्षासी अन्सादी जैन अभ्यु,



(Dary farm) ખનાવે છે અને ત્યાં સારી રીતે પશુઓની રક્ષા કરે છે જેથી તેઓ સાર્ દુધ મેળવી શકે છે.

પ્રિય ભંધુઓ ! નુઓ કે આપણા અગ્રેમ બંધુઓ જનવી સાથે કેવા વર્તાવ રાખે છે અને પોતાને ખાસક સારા બનાવવા તે કેવા ઉત્તમ પ્રબંધ કરે .છે, જેથી સર્વે સ્તાજનોને મારી સવિનય પ્રાર્થના છે કે તમા અને અમા પહ્યુ જાનવરાની સાથે યથાયાગ્ય પ્રેમથા વર્તા અને તેમને સાફ અને તાજો યારા પાણાં આપીને સારી હાલતમાં રાખા અને ઉપર જણાવેલી બાળતા ઉપર પણ અવશ્ય ધ્યાન રાખા.

પ્રાથી સેવક

अमेछसर्वंद पी. जे. आ. सेक्रेटरी



दक्षिण (कानडा, मलबार)
किनाराना जैनोनुं ऐतिहासिक समालोचन.

ચંદ્રશું ખેતના વખતમાં ઉત્તર હિંદુસ્થાનના પાટલીપુત્ર અને ઉજ્જયની વાગેરે ભાગામાં ભાર વરસના સખત દુકાળ પડયા હતા અને તેને લીધે શ્રી ભદ્રભાહુ સ્વામી વીગેરે સેંકડા જેન સાધુ ઉત્તરમાંથી દક્ષિણના કર્ણાટક પ્રાંતમાં આવ્યા અને તેમણે ત્યાંજ નિવાસ કરી તે ભાગમાં પહેલાંના કરતાં જૈન ધર્મના પ્રચાર કર્યો એ વાત શ્રવણ બેલગુલના ચંદ્રગીરી ઉપરના ૨૩૦૦ વર્ષના ભદ્રભાહુના વખતના પ્રાચીન સંસ્કૃત શીલાલેખ ઉપરથી (Rock Inscription) સર્વને માલુમ છે.

તેમજ અશાકના પણ ત્રીજા શતકના લેખ ઉપરથી કેરલ પુત્રના રાજ્યમાં અર્થાત્ મલભાર દક્ષીણ કાનડા વીગેરે પ્રાંતમાં તે વખતે જૈન અને બાહ તત્ત્વના બધે કેલાવા થયા હતા જગજાહેર છે. અશાક પહેલાં જૈન ધર્મી હતા અને તેણે ભારેલી ખીછ કાન્સીલ (સભા)માં જૈન ધર્મના ત્યાગ કરી तहन जाइ थया अन्वा पुरावा भण छे ते ઉપરથી અને બીજા અનેક પુરાવા ઉપરથી દક્ષિણ હિંદુસ્થાનમાં ળાહના કરતાં જૈન પ્રચાર પ્રાચીન કાળમાં હતા એ વાત સ્પષ્ટ છે. પહેલાંના કદ'-વ્ય રાજા, જે વનવાસમાં રાજ્ય કરતા હત-तेमक तुध्व क्षेष्ठि। ७५२ राज्य सःता शक्य નારા અને એક પલ્શવ પછી તે પ્રાંતમાં રાજ્ય કરનારા ચાલકય વંશના રાજા નિ:સંશય જૈન હતા. ખેલગામ પ્રાંતના હાલસી (Halsi) ઉર્ષે (Palasika) ગામમાં છનમંદિરા આજ ચાલુકય વંશના જૈન રાજાઓએ ખાંધ્યાં હતા. **ચ્યા** ઉપરથી, તેમજ વળી મેસુર પ્રાંતમાં પહેલાં રાજ કરનારા ખલ્લાળ રાજચ્ચાના ઇ-તિહાસ ઉપરથી વિષ્ણવર્ધન સુધીના રાજા ખરેખર જૈન હતા.

મેસુરમાં—પહેલાના રાજકુમારાથી પૂજાયેલા એવા રાજવાડીની પશ્ચિમ દીશાના જીન
મંદિરા અને વીશમા તીર્થકર શ્રી નેમિનાચની
યક્ષદેવી ચામુંડી પણ તેમની ઇષ્ટદેવી સમકાલીન હતાં એવું મૈસુરના ચામુંડી દેવના મંદિર, ચામુંડી પર્વત (Hill) વીગેરે ઉપરથી
સાખીત થાય છે. રાષ્ટ્રકુટ રાજ્યમાંના માન્ય
ખેટ (મલખેડ) વીગેરે પ્રદેશમાં પ્રાચીન જૈન
મંદિર અને કાંજીવરમમાંના ખીજાં દેવાલયા
પણ જૈનનાં હતાં અને તેમની આજે આવી
સ્થિતી થયેલી છે અર્થાત્ તે તે દેવળામાં હિ દુ
દેવતા ખીરાજમાન થયેલા છે એવીજ સ્થાતી
ચિન્દ માત્ર નામનાંજ રહ્યાં છે એવીજ સ્થાતી

भैसुरना यामुंडी वीगेरे देवलानी शह छे भने कैन धर्मना राज्ययिन्ह आल लुप्त प्रांथः थर्छ गया छे. शंहरायायं पछी इहं पराज्य हिंदू धर्मी थया ते पहेलां कैन धर्म यालता हिंदू देवला, शिहपहाम वीगेरे ते वणते कैन, वेण्डाव के क्येंड्य हणी भणीने यालता हता सेतुं प्रवादी खारे छे.

પૂર્વના પાત્રકેસરી, સમંતભદ વીગેરે અનેક ત્રિદ્ધાન ધ્યાદમણ પંડિત જૈન થયાનાં અનેક ઉદારણા તેની પુષ્ટિમાં મળા શકે છે. અ. ૯૭૦ થી ૧૦૩૯ ના વખતની પરિસ્થિતિ વિષે લખતાં મુસલમાન લેખક—અલબેરણી એટલે મલળાર પ્રદેશના લાક (Samanies) શ્રમણ—શ્રાવક હતા એવા ઉલ્લેખ કર્યો છે. મતલખ કે શંકરાચાર્ય પછી જૈતોની રાજ્ય સત્તા નરમ પડવા લાગી એમ જણાય છે.

એ પહેલાં દક્ષિણમાં જૈન ધર્મની સાથે હિંદુ, વિષ્ણુ. શીવ અને ભાદ ધર્મ પણ હતા એવું ઇતિહાસ ઉપરથી માલુમ પડે છે. અકલંક સ્વામીએ રાજસભામાં વ્યાહ વાદ <u>इ</u>री આશરે મા શતકમાં ભાહના સંપૂર્ણ પરાજય કરી દક્ષીણમાંથી કાઢી મુક્યા અને પક્લવ વંશના હિયશીતલ રાજાને જૈન ખનાવ્યા. આ વખતથી બાહતી જે મડની શરૂ થઇ, તે હંમેશની થઇ અને હિંદસ્થાનમાંથી તેમના પગ નીકળી ગયો. તે વખતે હદપાર થયેલા વાષ્ધે લંકા તરક વળી સીક્ષાનમાં પાતાના ઝું કા સ્થાપન કર્યો કે જે અદ્યાપિ પણ ચાલે છે.

સમ'તભદાચાયે પણ કાઇક શીવ-કાટી નામના શૈવ રાજાને શીવ ધર્મથી પરાંગ-મુખ કરી જૈન ખનાવ્યા, પણ તે રાજા કાશીના કે કાંચીના હતા તે એક સવાલ છે. સારાંશ કે ઇ. સ. ના આઠ નવમા સેંકા સુધી જૈનાની રાજસત્તા દક્ષિણમાં ઘણી હતી એ , ઇતિહાસ જાણનાર નાક્ષ્યુલ કરશે નહીં.

તે પછી પણ મૈસુરના રાજ, મધુરાના રાજ, દ્વારસમુદ્ર (હાલિખિડ) ઉપર રાજ કર- નારા ભલ્લાલ રાજા જૈનધર્મી હતા. ચાંમુડ રાજા, પાંડય રાજા, પીરપાંડય, વિનયાદિત્ય ભલ્લાળરાય, ખીડીદેવ વીગેરે રાજા જૈની હતા. રાષ્ટ્રકુટ વંશના અમાધવર્ષ વીગેરે જૈન રાજાએ મલખેડમાં પાતાની સત્તા જમાવી હતી.

કેલ્લાપુરના સિલ્હાર રાજ્ય, ધારવાડના તેમજ ચોળવંશના અને પાંડય રાજાઓ પણ જૈનજ હતા. કલ્યાણપુરના વસવા પહેલાં બીજલ ક વીગેરે જૈન ધર્મી રાજા હતા. ગંતુર પરગણામાં પણ જૈનની રાજય સતા અને પ્રાપલ્ય હતું એ ઉપરથી દક્ષિણમાં જૈન રાજસત્તા પહેલાં ઘણી હતી એવું ઇતિહાસ જાણનાર ક્ષ્મુલ કરવા લાગ્યા છે કારણ કે તે વખતના શિલા સેખ અને તે અરસામાં થઇ ગયેલા જૈનાચા-યોએ અને જૈન પ્રંથકારાએ આ વાત પ્રંથામાં સાબીત કરવામાં કંઇ બાકી રાખ્યું નથી. તે વખતના જૈન મ દિરા કળા કાશાલ્ય, શિલ્પ કામ વીગેરે જ્યું અવસ્થામાં છતાં પણ આ વાતની સાલી પુરે છે.

ઇ. સ. ના દશમાં સૈકાથી ધ્યાસણોની સત્તા જેનો કરતાં અધિક થવા લાગી, તેથી જેનોએ પોતાનું રહેઠાણ દક્ષીણ કાનડા તરફ કાયમ કર્યું. ઉત્તરમાં મલખાર તરફ કાલ્લાડીરી રાજ્યઓ (Kollatiri Princes) ચાલુક ક્યોની સ્વારીઓથી પોતાનો ખચાવ કરતા હતા અને ધામે ધીમે ધ્યાસણ સત્તા દઢ થવા લાખી. દક્ષીણ કાનડા સુધી જેન રાજસત્તા ઉપરજ હુમલા થવા લાગ્યા, પણ તે વખતે જેન રાજ તે હુમલાની સામે પોતાનું રક્ષણ કરવા સમયે હતા. ઇ. સ. ૧૧૩૭ દરમ્યાન ખલ્લાળ રાજ વિષ્ણુવધંત, જ્યારે રામાનુજાન્યાર્યનો શિષ્ય થઇ પફેકા વૈષ્ણુવ થયો ત્યારે

कैन राजसत्ता उमाडेाल धर्मनरम धवा लागी

હું મચ શહેરમાં તે વખતે રાજ કરનાર જૈન રાજાના વંશજ ભૈરવાચાર્ય વાડિયરે (Bairaw Wodear) હુમચમાંથી ની ળી તુલું દેશના કારકળ શહેરમાં પાતાની રાજધાની સ્થાપી હતી અને તેણે પણ જૈન ધર્મની ઉન્નિત કરવામાં ખાકી રાખી નહોતી. તેની પહેલાંના કારકળના જૈની રાજા જેવા કે દેવ રાજા (સન ૧૩૩૪) વીર પાંડય (સન ૧૪૩૨) અને ભૈરવાચાર્ય એમણે કારકળની સુમારે ૪૧ પુટ ઉંચી શ્રી બાહુ ખળીની અને ચતુમું ખ ખસ્તીની ચીરકાળ સુધીની વ્યવસ્થા કરવા માટે આપેલા દાનપત્ર ઉપરથી જૈન હાકનું રાજ્ય તે વખતે ખરેખરૂં ચાલતું હોવું જોઇએ એમ સાબીત થાય છે. ભેરવાચાર્યની પ્રબળ સત્તાને લીધે સર્વને અચંબા થતા હતા.

તેના દરભારમાં વિદ્વાન જૈનાચાર્ય અને અન્ય ધર્મીઓ વચ્ચે જેગી વાદવિવાદ થયો હતો, કે જેમાં અન્ય ધર્મીઓને સજ્જડ હરાવ્યા હતા. યશાધર ચરિત્રના કર્તા વાદીરાજ જૈન મુની અને કવી તેમની સાથે ભૈરવાચાર્યના દરભારમાં અન્ય ધર્મીઓએ વાદ કર્યાના ઉલ્લેખ હમચના શીલાલેખમાં સ્પષ્ટ છે.

આ વેળા જૈન રાજાઓમાં અને બીજા-ઓમાં ટંટા બખેડા થતા હતા, તો પણ વિશે પતા જે તે પાતપાતાનું રાજ્ય સંભાળી બેસી રહેતા હોવાથી તેમની સ્થિતી છેક ખરાબ થઇ નહોતી પછી વિજયાનગરના રાજાની સ-તા જેમ જેમ વધતી ગઈ, તેમ તેમ તેમ-ની નજર આ જૈન રાજા તરફ વળવા લાગી. આ વખતે મુડબિદરીના ચાટર, નંદાવરના ખાંગર, આલડ ગડીના આજલર, બેલ ગડીના મુલ્લર, મુલકીના સાવંત વીગેરે સંસ્થાનિક ખંડણીયા રાજા હતા. વિજયાનગરના હરીહર સાથે મંગફાર પ્રાંત ઉપર જયારે પાતાની સે ના માકલી તે વખતે આ બધા જૈન રાજાઓ પાતપાતાની સેના લઘ तैयार संख्या અતે जया रे થયા હારવા લાગ્યા. त्यारे વિજયનગરના રાજાનું સ્વાસિત્વ કબલ કર્યું. પછી સાળમાં સૈકામાં જ્યારે વિજયનગરની પડતી દશા થવા આવી. ત્યારે આ જૈન રાજાઓએ કરીથી સ્વત'ત્ર થવાના પ્રયત્ન કર્યાં અને કેટલાક વખત સંધી તેઓ તેમાં કાવ્યા, પણ વિજયનગરના રાજા તરકથી મંગલાર અને બારકરના મુલક ઉપર સન્તા **એસાડનારા એડ્રવ. ઇક્કેરીયા લીંગાયત** રા-જાઓ તેમને દુખાવવા લાગ્યા. <u>ખસવાએ ધણા</u> જૈનાને લીંગાયત બનાવી પેતાની ધર્મસન્તા વધારવાના પ્રારંભ કરવાથી જૈન લિંગાયતામાં ધણા દ્વેષ પેઠા. તેના પરિણામે આ સ્થિતિના લાભ લઇ ઇક્કેરીઆના લિંગાયતાએ ઉર્દ્યાં માર્ય કરનારા જૈનાની પડતી દશા આશી અને સારથી જૈન સંસ્થાનિક રાજાઓ તેવીજ સ્થિતિમાં રહી ગયા. જૈનોની આ સ્થિતિ પણ ઘણા કાળ ટકી નહીં. ઇ. સ. ૧૬૦૮ના સુમારે વ્યાંકટપ્પાર્વકે બારકુટમાં જૈનાને ખરાબ કરી ત્યાંના દેવાલયા અને સારી સારી ઇમા-રતા જમીનદોસ્ત કરી નાંખી. આ પ્રમાણે જેનાની પડતી થઇ. અને ચાટર, ખાંગર, સાવંત વગેરે જે સંસ્થાનિક હતા. તે તેને તાએ થયા. આ સ્થિતિ પણ ધણાં વધે ટકી નહીં. હૈદર-અલી અને ટીપુ સુલતાને આ પ્રાંતમાં ચઢાઇએ! કરી જૈન રાજાંઆનું નામ નિશાન પણ રહેવા દીધું નહીં, તાપણ આખરે જ્યારે સ-તાધિપતિ ખિટીશ સરકારે ટીપુનું રાજ્ય લઇ લીધું, ત્યારે आ जैन स स्थानिक राज्यभोने पेन्शन आप्यं. આ પ્રમાણ જૈન રાજ્ય દંડધારી સન્તા-ધિપતિના લય થયા અને જૈન ક્ષત્રીઓન રાજ્ય આખા દક્ષાણ ભાગમાંથી નાશ પામ્યું.

ખંડણીયા રાજા હતા. વિજયાનગરના હરીહર શંકરાચાર્ય, રામાનુજાચાર્ય વીગેરેની સાથે મંગક્ષાર પ્રાંત ઉપર જ્યારે પાતાની સે ધર્મસ-તા નીચે જૈન ધર્મી બ્રાહ્મણોને લિં

માયત ખનાવ્યા, રાજાઓ પણ જૈન ધર્મ છાડી હિંદુ ધર્માનુયાયી થયા અને ' યથા રાજા તથા પ્રજા ' પ્રમાણે બધી પ્રજા પણ અન્ય-મતી થા ગઇ. પહેલાં એક કાળે બધે મલબાર અને દક્ષીણ કર્ણાટક પ્રદેશોમાં કરોડા ઉપર વ્યાપેલા પ્રચંડ જૈન સમુહ આજે હજાર ઉપર આવ્યા છે અને તેમની પણ સ્થીતિ અત્રાનમય થઇ ગઇ છે!!!

ચ્યા દક્ષિણ કાનડા પ્રાંતમાંના પહેલાંના જૈન ક્ષત્રીઓ પૈકીના સારી ખ્યાતિ મેળવ-નારા હેાવાથી તેએન સારા જમીનદાર આપરદાર ગણાય છે. તેઓમાં હાલ મુડબિદ્દરી, કુજમશેદી, દૃગણ સેવ'તા, મુલકી રાજા, આળડંગડી, તિમપા **ચ્યાજક્ષરા મુખ્ય હોવાયી દરેકને સરકાર** ત્તરકથી અનુક્રમે રા. ૭૯૫;૩૩૦;૨૨૫; રૂપીઆ પેન્શન મળે છે. મળલી, ધર્મ સ્થળ, આરળ, નિલ્લીકાર વીગેરે જગ્યામાં જૈન લાેક શ્રીમાંત છે. મુડબિદરી, કારકળ, વેત્ર, એ જેન ધર્મ-ગુરૂએોનાં સ્થળ છે. અહીંઆનાં મંદિરા પણ માટાં અને શિલ્પકળાના નમુના રૂપે છે. આ પ્રમાણે દક્ષિણ કાનડાના જેનાનો સ્થીતિ છે. મલભારમાં બીલકુલ જૈનોની વસ્તી નથી.

હાલ મુ. મુડબિદરી તાત્યા **નેમીનાથ** પાંગળ દિ, જે. ડાય-તા. ૩૦-૮-૧૨ રેકટર ફેાર ડેક્કન.



टूंक पण बाधक अने रमुजी दृष्टांता.

ज्यां संप त्यांज रुक्ष्मी.

કાઇ એક ધર્મવંત ગ્રહસ્થ સુતા હતા તે લખતે લક્ષ્મીએ આવીને તેને કહ્યું કે " હે શેઠ, હું તારા ઘરમાંથી જવાની છું, માટે તારે મારી પાસે જે વરદાન માંમલું હૈ! ય તે માંગ, હું દેતી જાઉં."

શેંદ્રે જાગ્રત થઇને કહ્યું-" હું આજે અત્યારે નહીં માગું, કાલે મારા કુટું બ વર્ષને પુછીને પછી માંગીશ."

'લક્ષ્મી-ભલે, કાલે' માંચળે.

પ્રભાતે શેડે કુટું બ વર્ગને એકઠા કરીને પૂછયું—''આપણી લક્ષ્મી તો હવે જવાનું કહે છે, પણુ એક વરદાન માંચવાનું કહી ગઇ છે, તો હવે તમે બધા કહેા તે માર્ગું.'' ઉત્તરમાં કાઇએ કાંઇક દ્રવ્ય માંગવા કહ્યું અને કાઇએ કાંઇ બીજું વરદાન માગવાનું કહ્યું અને સાઇએ પોતપાતાની ઇચ્છા : પ્રમાણે જુદી જુદી માંગણી કરવા કહ્યું. છેવટે શેઠના નાના દીકરાની વહુ બહુ સદ્દગણી અને વિચક્ષણ હતી તેને શેડે પૂછયું એટલે તેણે કહ્યું—હે પોતાછ! લદ્ધમી રહેા કે ન રહા, પણ આપણા કુટું બમાં સ્તેહ સુસંપ અચળ રહે એવું વરદાન માંગા."

શેકને ગળે એ વાત ખરાખર ઉત**રી, એ** ટક્ષે રાત્રે લહ્મા આવી અને શેકને કહ્યું કે "વરદાન માંગ, એટલે શેઠે કહ્યું—"મારા કુઢું ખ માં નિરંતર સુસંપ રહે એવું વર**કાન આપ."**

લક્ષ્મીએ કહ્યું-''હવે ભારા**થી જવાશે** નહિ. કારણુંકે તેં સંપ માંગ્યાે **છે, તાે જ્યાં** સંપ છે ત્યાં મારે રહેવુંજ જોઇએ **અર્યાત્** જ્યાં સંપ છે ત્યાં લક્ષ્મીના નિવાસ છે.'

આ પ્રમાણે કહીને લક્ષ્મી અદશ્ય થઇ અને રોઠ સંપ તથા લક્ષ્મીના નિવાસવડે સહ કુંદું બ નિરંતર સુખી થયા.

આ દર્શાંત ઉપરથી ખહુ વિચાર કરવા જેવું છે કે સંપની કેવી અગત્ય છે તે આ દર્શાંત બરાબર સમજાવી આપે છે. હાલમાં જે જે કુટુંથા દુઃખી ચતા દર્શાંએ પડે છે તે સલળામાં સંપના અભાવ અને કુમાંપની દૃદ્ધિજ દેખાય છે તેમ જે જે કુટુંથા અદ્યરી સ્થિતિમાંથી નખળી સ્થિતિમાં આવતા જણાય છે તેમાં પણ પ્રથમ પિતાપુત્રમાં, ભાઇઓ ભાઇમાં તથા સાસુ વહુંઓમાં કુસંપની ઉત્પ-તિ થયેલી જોવામાં આવે છે અને તેને પરી- ણામે લક્ષ્મીના વિનાશ થાય છે. જે સંપ રાખવામાં કાંઇપણ મહેનત નથી, તેમ ખીલ- કુલ ખર્ચ પણ નથી અને અનેક પ્રકારના વિત્યાદિક ગ્રહ્યુની તથા લક્ષ્મીની પણ જે શ્રિક્ર કરે છે તેને જાળવવા માટે સમજી મનુષ્યા પણ પ્રયત્ન કરતા નથી એ કેવી મૂર્ખતા?

એક વખતે શક્રને લક્ષ્મીએ કહ્યું है— गुरवो यत्न पुज्यंते, यत्न वित्तं नयार्जितं । अदंतक्रुह्मे यत्न, तत्र शक्न वसाम्यहं ॥

જ્યાં ગુરૂજન પૂઝય છે, જ્યાં ન્યાયો પાર્જીત દ્રવ્ય હાય છે અને જ્યાં દંતકલહ જે કુસ'પ તે હોતો નથી ત્યાં હે શક્ર, હું વસું હું.

આ નાના સરખા શ્લાક પણ બહુ મનન કરવા યાંગ્ય છે. કુસંપતા પ્રવેશ એક ધરમાં, એક કુટું બમાં, એક ત્રાતિમાં, એક સમુદાયમાં, એક ગામમાં તેમજ એક ''દેશમાં" જ્યાં જ્યાં જેવામાં આવે છે ત્યાં તો સર્વ સ્થાનક તેના માઢાં કળ પ્રત્યક્ષપણે અનુભવવામાં આવે છે, તે હતાં તેનાથી દુર રહેવાના વિચાર કરવામાં શા કારણે માણસા પાછી પાની કરે છે તેનું મામ દુર્ભાગ્યના ઉદય શિવાય બીજું કાંઈ પણ કારણ જણાતું નથી, માટે સુત્ર મનુષ્યાએ દરેક પ્રકારના પ્રયત્ન વડે કુસંપના પ્રવેશના અટકાવ કરવા, જેવી સફમા, સુખ, સંતાષ, શાંતિ, ધર્મા સ્થાન, પુરય ભંધ અને સાલત સ્વર્ગાદ સુખની સાધાન, પુરય ભંધ અને માલત સ્વર્ગાદ સુખની

गुरु करतां पंच विक्षेत्र.

ગ્રંથાએ એક રીતે ગરૂ કરતાં વિશેષ છે કેમકે તે માંગ્યા વગરજ શિક્ષણ આપે છે: અને તે છતાં કેટલાક **શિક્ષકની** પેડે તે કઠાર શબ્દ બાલતા નથી કે કદિપણ ગુસ્સે થતા નથી. વળી તે આપણી પાસેથી કંઇ પસ ધનની ઇવ્છા રાખતા નથી. તમે જ્યારે પણ તેની પાસે જશા, ત્યારે ઉધતા જણાશે નિદ્ધ અને તેમને પ્રશ્ન કરવાથી કાંઈ પણ વાત તે તમારાથી છુપાવી રાખશે નહિ. તેનું બાલવું તમને નહિ સમજાય, તા તેથી તે નાખશ થતા નથી. અને તમે અનાન હા તા તેથી તે તમને હસતા નથી. ખરેખર! ત્રાનથી ભરપર ગ્રંથાના સંપ્રહ એ આ પૃથ્વીમાં ખધા ધન કરતાં ^રહડીયાતું ધન છે, અને આવા સંત્રદ્વની તુલના કાઈપણ બીજી સારી વસ્તુ સાથે થઇ શકે તેમ નથી; જેઓને સસ. સખ. ત્રાન. અને ભક્તિ પ્રસાદિ મહત્તાએ! પાતાના કરી **લેવાના કચ્છા હાય તેઓએ તા** પ્ર[']થાના સ'ગ્રદ કરવાની અને તે વાં<mark>ચવાન</mark>ી હાંશ અવશ્ય રાખવીજ જોઇએ.

પ્રિય વાંચકલંદ, આથી આપને વિદીત થયું હશે કે ગુરૂ કરતાં પ્રંથ વિશેષ છે, માટે જેમ બને તેમ પ્રંથોનો સંપ્રદ અને વધારે ફેલાવા થાય તેમ કરવું એ દરેક માણસતું કર્તવ્ય છે, તો લગ્નમાં, સીમ'તમાં, ગરબામાં, ઘતામાં તેમજ પ્રભાવનાઓ ભીગેરે ખાજ શુભ પ્રસંગામાં કાચની ત્યા ચીનાઇ પ્રતસની તેમજ એલ્સુમીનમ લીગેરે વિદ્યાયતી ફેશાનની માહીતી રૂપ અપવિત્ર ચીજો નહિ વેંગતાં દિગંબર જૈન પુસ્તકાલયોમાં મળતાં સ્વાર્ધ કેર્ડિયા અર જૈન પુસ્તકાલયોમાં મળતાં સ્વાર્ધ કર્તરનાં તેમજ સ્વદેશ પ્રતિ અહિલાયા કર્તિયા થાય તેવાં પુસ્તકા ક્રેમી આ દેશના કરોડા રૂપીમાં પરદેશ જલાં અડકાલયોમાં માગ્યશાળી થાય.

Ê

बेरीस्टरनी होंशीआरी.

મી. ખાલુભાઇ ખેરિસ્ટરને એવી **ટેવ હતી કે સતી** વખતે હમેશાં પાતાનું **ંધડીયાળ ગ્રળકતા લીસા અ**છેહા સાથે પાતાનાં ઉશીકા નીચે મકતા. હવે એક રાત્રે અચાનક **ૈતે ધડીઆ**ળ ઉશીકાની નીચેથી ખસી **ંથ્યને ખેરિસ્ટર સાહે**બને તે રાત્રે *ખ*રાબર - ઉંધ નહિ આવતી હાવાથી ધડીઆળ તેમના પગ પાસે આવી ગયું. તેટલામાં બેરિસ્ટર ું<mark>સાહેબના પગ ઘડીઆ</mark>ળના છેડાને લાગ્યાે. આ 'ક'ડી. લીસી અને જરાક લાંબી ચીજ પગને ્રિ**મડકવાથી બેરિસ્ટર સાહેબ એકદમ**ં ઝબડી લિકયા અને એકદમ ખુમા પાડતા પથારીમાંથી ખંહાર નીકળી ગયા અને પાતાની ઢ ઢાંળીને સુમા પાડવા લાગ્યાઃ—" અરે ઉઠ ં**ઉ**ડ. પથારીમાં કંઇક એરી જનાવર છે. ' ઉઠ, ઉઠ. "

બૈરી ખીચારી ખ્હીકથી તરત ઉડી. આ વખતે કમનસિએ ખત્તી અઝાવેલી હતી. ં**ખેરી**સ્ટર સાહેબ અને ળૈરીએ અંધારામાં ધાંધલ મચાવી મૂક્યું અને આમ તેમ દીવા-્સળાની પેટી શાધવા માટે દેાડવા લાગ્યા, પણ રખે તે છેરી જાનવર પથારીમાંથી નીક-ુળીને ખહાર ફરતું હોય તે માટે વધારે વધારે ગભરાા લાગ્યા! ખેરિસ્ટર સાહેળ કરતાં તેમની બૈરીની આંખા વધારે તેજ હતી એટલે તેણે અછેાડાના ચળકવાથી અને ધડી-આલના "કટ કટ " થતા અવાજથી જોઇ **અતે જાણી** લીધું કે તે જાનવર કાઈ નહિ પણ કોરી સાપનું ખચ્ચું છે અને હજા · **પથારીમાંજ પ**ડેલું છે! એટલામાં તેના હાથમાં ું <mark>એરિસ્ટર સાહે</mark>ળની રૂપાની મૂંઠની માટી · **જાડી લાકડી આ**વી ગઇ એટલે તરતજ તે લાકડી ધણીને આપતા ખેલી—" ઢા, આં/

લાકડી, દખાવા સાપને, પણ જો જો હં, ઉછળીને તમારે ગળે ન વળગી પડે."

એરિસ્ટર—ચાલ તું દુર રહે; તે લુચ્ચાને આપણી પથારીમાં વગર પરવાનગીએ આવવા-ના સ્વાદ ચખાયું છું."

આટલું ખાલતાંની સાથેજ ખે ચાર કૃટકા તે બિચારા સાનાના નાજુક સાપ ઉપર જોરથી બેરિસ્ટર સાહેએ કકડાવી કાઢમા, તેટલામાં ખેરિસ્ટર સાહેએના શાર ભંકારથી જાગી ઉડેઢા નાકર હાથમાં વાલસીટ લઇને દાખલ થયા અને ખધાં નીચાં નમીને સાપ મરી ગયા કે જીવતા છે તે જોવા જય છે, તા સાપને બદલે પોતાના સા રૂપીઆના ધડીઆલના અને અછાડાના ખુરદા થઇ ગયેઢા જણાય છે. ખેરિસ્ટર સાહેએ આજ સુધી પાતાની તમામ હાંશીયારી જે કામે લગાડી હાય, તો આ સોનાના કટ કટ કરતા નાનકડા સાય ઉપરજ છે.

* * स्त्रीनी वेदरकारीनुं परीणाम

એક બાઇને ત્યાં અથાણું થતું હતું ત્યારે એક તરફ કેરીઓ કપાતી હતી અને બીજી તરફ રાઇ પ્રીણાતી હતી. અથાણું કરવા માટે કેટલાંક સગાંવહાલાં અને પાડાશીઓ સાથે છેંકરાં લઇને આવેલાં હતાં. બધા અથાણુંના કામ પાછળ મંડ્યા હતા. વાતાના તડાકા મારતાં જાય અને કેરીના કટકા મામાં મૂકતાં જાય, પણુ પેલી તરફ દોઢ વર્ષના બિચારા ચમન શું કરે છે તે કાે છુ જુવે છે કે ચમન લાઇએ તા રાઇ પ્રીણેલી કથરાટમાં હાથ ઘાલી ચાટવા માંડયું હતું અને આંખે પણુ લપેડા કર્યા હતા. જ્યારે તે એકાએક ચીસ પાડી ઉદેયા, ત્યારે બધાંને ખબર પડી. જુવે છે તા ચમનલાઈ આંખો ચોળવા મંડયા છે અને વ્યારે વધારે ક્ષામાં પાડે છે. ઘણીએ

મહેતત કરી, ઘણીએ દવા કરી, પણ ચમન ની આંખા સારી થઇ નહિં. હતા તેની આંખે ખરાખર દેખાતું નથી. નિશાળમાં ભાળવા જવાતું નથી, અને અજવાળાની રહામે પણ જોવાતું નથી. અર્થાત્ બિચારાએ ન્હાનપણ-થીજ આંખા જેવું રત્ન ખાયું!

> क्ष क्ष क्ष रहवा कृटवानुं माढुं परीणाम

એક રદ વર્ષની યુવતીને ચાર પાંચ મા-સતા ગલે હતા. એટલામાં પાતાના પિત્રાઇમાં એક જાવાન અને જરા શ્રીમંત પુરૂષનું મરહ્ય થયું. આપણામાં રડવા કુટવાના રિવાજ છે તે એટલે સધી કે સ્ત્રી માંદી હોય કે સાછ. પણ તેને રડવા કટવા જવુંજ જોઇએ. સ્ત્રી માંદી હાય કિંવા નહિ જવાનું સળળ કારણ હૈાય. છતાં જેતે રડવા નહિ જાય, તેા તેની નિન્દા થાય છે. પેલી યુવતિ પણ રડવા કુટવા જતી હતી પણ શરીરે અસખ હોવાથી તેનાથી લશ્કરી હબે ધડામાર કુટાતું નહેાતું. પછી એક દીવસ ખહાર ગામથી કેટલાંક ખેરાં કાણ કરવા **આ**વ્યા, તે દિવસે એ બાઇ પણ કુટવા ગઇ. રાજ કરતાં આજનું કૃટવું બહુ સખત હતું. કેટલાંક ભૈરાં તાે છાતિ અડધી ઉધાડી મુકીને છાતિ ઉપર ધડાધડ કટના હતા. કેટલાંક ખૈરાં-ની છાતિમાંથી લેહી પણ નિકળતું હતું! આ વખતે પેલી યુવતિ પણ સખત રીતે કૃટતી હતી. આવું સખત કુટવાનું કામ બે ત્રણ કલાંક ચહ્યું. આ પ્રકારે સખત કટવાથી કેટલાંક સખત બાંધાનાં ભૈરાંઓને તા લાહી નિકળીનેજ રહ્યું અને કેટલાંકના હાડકાં, હાથ અને છાતી દ: ખવા આવ્યાં, પણ પેલી યુવતિ-ને ગ**લ**િશ્રાવ થઇ ગયો. કેટલીક દવાએો કરવા છતાં સારૂં થયું નહિ. પરિણામે હિંસ્ટિરિયા થઇ ગયા. ચાંપતી દવા કરવાથી તે વખતે તેને આરામ થયા, પણ ત્યારથી ક્ષય રાગ થઇ ગયા. અત છેવટે ત્રણ વર્ષે તે યુવતિનું મૃત્યુ થયું !

माटलुं उघाडुं मुकवातुं परिणाम.

એક મહસ્થે ધરમાં વાપરવાને માટે ગાળનું માટલું લાગીને આવે આપ્યું. અચિ તેને કાડી રાજ થાડા થાડા ગાળ વાપરવા માંડયા. મહિના એ મહિના પછી તે ગ્રહસ્થના ધરમાં કંઇક પ્રસંગ આવતાં ૨૫-૩૦ માણ-સોને જમવાતું કહ્યું. ગાળના લાડું વીગેરે જમણ ખનાવ્યું હતું. ખધા જમી રહ્યા પછી ઘેર જતાંજ કેટલાકને ઉલટી ઝાડા થયા. અને કેટલાકને કલાક એ કલાક થયા. એ પ્રમાણે જેટલાએ લાદ ખાધા હતા તે બધાનેજ કાલેરા જેવું થયું. બધાને ઘેર રડારાળ થઇ રહી હતી. ડાંકટરને બાલાવી મેગાવ્યા હાંશી-અાર ડાકટરે બારીકાઇથી તપાસ ચંલાવી જર્ણાવ્યું કે ગાળના માટલામાંથી ગાળ વાપ**યે** હતા. તેમાં ઘીઢાડીના ગળ પડયા હતા. અને તેનુંજ ઝેર ખાનારાએાને ચક્રી ગયું હતુ. ગાળનું માટલું સારી પેડ્ડે ઢાંકીને રખાયું ન હતું, ધરધણીને ત્યાં પણ કાેેેલરા થઇ ગયા હતા. બધાંને દવા આપવામા આવી. જેથી ઇશ્વરકપાએ એક બે જહા સીવાય બધાજ ળચી ગયા. જો **અ**ંચિંગ ખાવાપીવાની જણસા ઢાંકી રાખવાની બારીક સંભાળ રાખે. તે આવું ભયંકર પરિણામ થતાં અટકે.

સરૈયા (સુરત.)

रतलाम बार्डिंगना समारंभ.

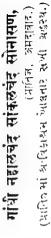
કિવાન સાહેખની હાજરી અને ઉત્તમ ભાષધ

રતલામના શેઠ માણેકચંદ પાનાચંદ દિગંભરી જૈન બાર્ડીંગ હાઉસના પ્રથમ વાર્ષિક મેશાવડા : આસા સદ ૧૪ની સવારે નવ વાગતે ખાસ ઉભા કરેલા મંડપમાં દૃંદાદમાઠથી થયા હતા, જેમાં દુંભાઈ, સુરત, વડનગર, ઇંદાર, મંદ-સોર, ગડી, ડુંગરપુર, કાટડી, ખાચરાદ, દાહો દ, રામપુર વગેરે સ્થળેથી આશરે ૧૦૦ તથા રતલામ રાજ્યના અમલદાર વર્ગ તથા શહેર-ના પ્રતિષ્ઠીત શહસ્થા મળા ૫૦૦ ગ્રહસ્યા કાંજર હતા. પ્રથમ નિદ્યાર્થીઓએ મંગલાચરણ કરવા પછી દાનવીર જેન કે. શેઠ માણેકચંદ જની દરખાસ્ત અને શેઠ કસ્તુરચંદજી ગંગા-રામ ગુલાબચંદવાળાના ટેકાથી રતલામ સ્ટેટ ના દિવાન સાહેબ રાયબહાદુર પં૦ બ્રીજમાહ-નાથ થી. એ. એલ. એલ. બી. તે પ્રમુ-ખાસ્યાન અપાયું હતું. બાદ વિદ્યાર્થીઓનું સાથત થવા પછી સેક્રેટરી લલ્લુબાઇ પ્રેમાનંદ દાસ શ્રેસ. સી. ઇ. એ. પ્રથમ વર્ષના રિપાર્ટ વાલતાં જણાબ્યું હતું કે—

ા રીપાર્ટ રજા કરતા પહેલાં મને જસાવવાને ખુશી ઉપજે છે કે, આ ફાની **દ્રતિઓમાં** જ્યાં છે દગીના ભરાસા નથી, જ્યાં મહુષ્યના આત્મા લાગુલ ગુર સ્વધ્નવત સારા તજી દેવાં વાર કરતા નથી, જ્યાં કુષ્ટ કુમાળ કેર વર્તાવી દીધો છે ને પાપી **પૈકાએ જ્યાં** ક્ષાકાના કરચરઘાણ વાળી દીધા છે, ત્યાં 'જે હાથે કરશે તેજ **આવશે ' શિવાય બધું** જ્યાંને ત્યાં પડી વહી કાં પાસ કાં કાં માથે જતું નથી. સહતાનથી આ બાડીંગના સ્થાપકાએ બાર્ડીંગ ઉદ્યાહ્વાનું જે પ્રથમ પગલું ભર્યું છે, તે ઘણું પ્રશંસનીય છે. તેમાં વળી આ વાગક છહોા જ્યાં આપેથી દિગંભર જૈન કાંમ બીજી **ખધી કામ કરતાં કેળવણીમાં તદ્દન** પછાત છે એટલુંજ નહીં, પરંતુ વેપાર, હુનર, ઉદ્યો માદિ ખાખતમાં પણ તેવીજ અધમ સ્થાતિ क्री के, तेवा लागना भध्य स्थान रतवा-મમાં શક મા. પા. દિ. જે, એા. ઉધારી છે, જે જેટલું જ વખાણવા લાયક છે તેટલ જ ઉપયોગી છે.

આપણી જૈન કામમાં દર વર્ષે લાખા રૂપી માર ખરચાય છે, પણ તે કકત મંદિર ભધાવવામાં કે પ્રતિષ્ટાદિ કરાવી જમણવારમાંજ થાય છે; પરંતુ જમાનાને અનુસરી જોતાં સ્થાપકાને એમ લાગ્યું કે અન્ય કામાની સરખામણીમાં કેળવણીની બાબતમાં આપણી કામ ધણીજ પછાત છે, ને જે ઉચી કેળવણી ઢેવાની પ્રચ્છા કરે તેમને રહેવાની ને જંન ધમના નિયમા પાળા અબ્યાસ કરવામાં ધણી અડચણા પડતી તે અડચણા દુર કરવાના હેતુથી સ્થાપકાએ પ્રથમ મુંભઇમાં ને તે બાદ અમદાવાદ, કાલ્યા પુર વિગેરે સ્થળોએ આવી સંસ્થાઓ ધાર્મિક નાન સહિત આપવાની ઉઘાડી, છેવટે અત્રેપણ તેવી સંસ્થા સ્થાપી છે, જેના આ બાદ બાન શ્રીમ તેવી સંસ્થા સ્થાપી છે, જેના આ બાદ બાન શ્રીમ તેવીએ દાખલા ઢેવા જેવા છે.

મહાશયો, આપણે વિદિત છે કે ગત વર્ષ અનસા શદી ૧૨ ને દીને અનજ જો ઉપર લવ્ય મંડપ નાંખો શ્રીમાન રતલામ તરેશ ક્રેપટન સર સન્જનસીંહજ શ્રીમાન સાહેબ બહાદર કે. સી. એસ. આઈ ના પ્રમુખપણા**ધી** તેમના આશરા નીચે આ સંસ્થા સ્થાપન કરવાના મેળાવડા ભારે ઠાઠથી કરવામાં આવ્યા હતા, જે વખતે શ્રીમત સરકારે કળવણીના ઉત્તેજનાર્થે હં મેશતે. માટે આ બાર્ડિંગતે વાર્ષિક રા. ૧૫૦) દાહસા જેવા સારી મદદ આપી આપણી કામતે આભારી કરી કમીટી અંતઃકરણપૂર્વક સરકાર સાહેબના ઉપકાર માને છે, આ સંસ્થાના સ્થાનિક પ્રભંધ એક પ્રબંધકારિણી સભા મારફત થાય છે અને હાલના સપ્રીટે ન્ડંટ મી. કાળુરામ જૈન સંતાપકારક કામ કર્યા જાય છે. આ સંસ્થામાં પેઇંગ વિજ્ઞાર્થી : રાવ્ય) માસિક આપી દાખલ થાય છે. ज्यारे शक्ति विनानाने आशी (नीन पे⊌अ). तरीके हाणुब करवामां आचे छे. साख वर





JAIN PRESS SURAT (HITTER



गेट माणेकलाल देखामाई झवेशी–सुरत. सन्दर्भाया केम्पर सन्दर्भ देख श्रम्भा कर शास्त्रक

(ત્વણીતા વિદ્વાત, શીમાન, લેખક, વસ્તા ંઝેત કોમમાં સુ પ્રચાલનાર તથા તે, જત કોન્ફરસના એક અગ્રેસર બે. જેત ખેલુ.) くというというというというというという。そのからからなるなくのからなからなからなからない。



(भाषायह है, कैन क्षिक्षंत्र क्संदीना केल्प्सी नामे पाषायह नीयना बद्धार माट समिस्य भटार समार जसादी अधन्य) गुठ लालचंद कहानदाम वहादगा.



(पाक्षीताष्ट्रा पातमा इतम अने अनुस्त्रणात प्रभ'घ करतार मुनिम तथा श्रीयुन यग्मचदजी हग्जीवनदास मुनिस पाळीताणा. स्याध्याय प्रमी, धमे प्रमी अने चंपात्र ब्रहस्थ) સમાં રજીરાર ઉપર કદની સંખ્યા છે, જેમાં રપતી હાજરી છે. તેમાં ૧૯ હુમક પ ખં- દેવવાળ અને ૧ ખધેરવાળ છે, જેઓ દાહો ક, કાટડી, ગડી, રતલામ, કશલગઢ, ગરાઠ ભાઉગઢ, પ્રતાપગઢ, મંદસાર, રામપુર, ગાત- મપુરા વગેરેના રહીશ છે અને તેમને હિંદી ખીજીથી અંગ્રેજી નાથી ચાપડી સુધીનું શિસ્સા મળે છે.

આ વર્ષમાં એકંદર ખર્ચર. ૧૯૭૦ લાદના થયા છે. ધાર્મિક શિક્ષણ આપવાને માટે સારા પ્રયાસ ચાલે છે. અને સુપ્રીટેન્ડંટે એક વર્ષમાં સારું ધર્મ શિક્ષણ આપ્યું છે. સ્કુલમાં જવાના વખત બાદ કરતાં બાકીના આખા વખત વિદ્યાર્થીઓ આ સંસ્થાના મકાનમાં સુપરી-ન્ટેન્ટની ચાલુ દેખરેખ નીચે રહેવાથી વિનય વિવેક સાથે ધાર્મિક ત્રાન મળતું હોવાથી વિદ્યાર્થીઓને માનસિક, નૈતિક, ધાર્મિક વિગેરે કેળવણી મેળવવામાં આ સંસ્થા એક આશી-વાદ સમાન થઇ પડી છે. વળી અત્રે કસરત પણ શીખવાય છે.

આ પ્રસંગ મારે ભુલવું જોઇતું નથી કે અમા મુંબઇ બાર્ડાંગની મેનેજંગ કમીટીના મેમ્બરા મુંબઇ રહેવાથી આ ખાતાતે પડતી અગવડા દુર કરવામાં સહાયક મી. કે. કે. નાણાવટી એમ. એ; મી. ડાંકટર સાહેબ વિગેરે દરબારી ગૃહસ્થાએ તથા શેઠ કસ્તુર-મંદજ તથા શેઠ રીખવદાસજ વિગેરે ગૃહસ્થા એ પ્રસંગાપાત કરેલી મદદ માટે તેમના કમીટી તરફથી અંત:કરણુપૂર્વક હું આભાર માનું છું.

ઉપર જણાવ્યા પ્રમાણે સગવડ હોવા જતાં પણ ત્યા સંસ્થા સંપૂર્ણ બનાવવા માટે તીચેતી સચતા કરવા રજા લ**ક**ે છું—

૧ હાલતું મકાન એક ભાડાનું મકાન છે, તેમાં ફક્ત ૩૦–૪૦ વિદ્યાર્થી માંભુમાંસુ રહી શકે છે, પહા જમાના પ્રમાણે દેશસર. લાયબ્રેરી, કસરતશાળા, બાજનગૃહ (સ્સાંડા) વિગેરે માટે અલાયદા એારડા સહિત હવા અજવાળાવાળા નવા મકાનની જરૂર છે.

ર આવા મકાન માટે જોઇ**તી અને** પુરતી જગાની સગવડ કરી આપવા અમે અત્રેના માહારાજશ્રી જેમના આશરા નીચે આ ખાતું ચાઢે છે, તેમને નમ્ન અરજ કરીશું.

૩ દુષ્કાળ અને પ્લેગ વિગેરે દેશને પ્રતિ-કુળ અનેક કારણોને લીધે આપણા દેશની પલટાયલી દશા જોતાં આ ખાતાના વિદ્યાર્થી-ઓને (એન્જીનીઅરીંગ કાલેજ) ઇજનેરી પાઠશાળા, (મેડીકલ કાલેજ) ડાકટરી પાઠશાળા, (ટકનીકલ ઇન્સ્ટીટયુટ) કળાભુવન વિગેરે ધંધાદારીની શાળા-પાઠશાળાઓમાં જેમ અને તેમ વધુ સંખ્યામાં માંકલવા જોઇએ, અને તેમ કરવાને દરેક ખાતામાં જોઇતી સ્કેશલર-શીપ આપી, વિદ્યાર્થીઓને ભણાવવા જોઇએ, આ કાર્ય ઉપાડી હેવા માટે મારા દિગંભર શ્રીમંતાનું ખાસ ધ્યાન ખેંચું છું.

૪ આ બાજુ માટા વરા, જમ્હુવાર, લગ્ન, સીમંત અને નાતનાં લાહ્યું વિગેરે દરેક શુભ કે અશુભ પ્રસંગે આ ખાતાને કંઇક કાયમની રકમ મળવાના બંદાબરત કરવા દરેક વિભાગના અમેસરનાતીલાઓને વિનંતી છે.

પ આ ખાતાની અગત્યતા સમજવવાની તથા ભવિષ્યમાં થવાના લાગોની માહીતી આ-પવાના કામમાં આ પ્રાંતના દરેક વિભાગના અગ્રેસર અને કેળવાયલા ગૃહસ્થાની ક્રજ છે એમ સમજવું જોકએ છે.

ક છેવટમાં જણાવવાનું કે આપણા જૈનામાં ધર્માદાષ્ટત્તિની ખામી નથી. દર વરસે સેંકડા બલ્ક હજારા રૂપીઆ જુદી જુદી રીતે વ્યવહારિક કાર્યોમાં ખરચાય છે, અને એવી રીતે પુન્યતી નીક તા વહીજ રહી છે, **પરંતુ તેના પ્રવાહની દિશા કેળવણીના** ઉ-તેજન તરફ માત્ર ફેરવવાની જરૂર છે. પાતા-ના **ધર્મ બંધુએોનું ભ**લું કરવાની દરેક સુત્ર જનતી કરજ છે. માટે મારા વહાલા ભાઇએ!, **ચ્યા ખાતાને સદા સ્મરણમાં રાખી તેને જાય** તું કરવા માટે તેની દિનપ્રતિદિન વૃદ્ધિ માટે व्यने ६२ शते विधाना अभभं ६-तेलन **આપવા** ઉત્સાહી રહેશા એવી આશા છે. વગેરે. રિપાર્ટ વંચાયા પછી પં. કસ્તરચંદછ ઉપદે-શંક વિદ્યાર્થી થતા કાયદા અને બેર્ડિંગની આવ-શ્યકતા વિવે તથા મી. મીરાચંદે કેટલુંક **વિવેચન** કરવા પછી સુરતવાળા મુળચંદ કસનદાસ કાપડીઆએ આ બાેઈંગથી કેવું **કેવું કાર્ય થ**યું છે અતે આગળ કેવા સુધારા થવાની આશા રહે છે તે તથા બોર્ડિંગથી થતા **લાભ અને** આવા કાર્યોને સર્વએ તન મન **ધનથી મદદ કરવાની આ**વસ્યકના વિષ અસ-રકારક ભાષણ દ્વિંદી ભાષામાં કર્યું હતું તથા સભા ઉપર મં. દીપચંદછ ઉપદેશકનું રચેલું હિંદી ગાયન વાંચી સંભળાવ્યું હતુ, બાદ ૪ વિદ્યાર્થીઓએ વિદ્યા અને લક્ષ્મી વચ્ચેના સંવાદ ભજવી ખતાવ્યા હતા તથા એક અંગ્રેછમાં સ્તૃતિ ગાઇ હતી, બાદ પ્રમુખે (દિવાન સાહેબે) લગભગ ગાા કલાક સધી ઉત્તમ ભાષળ આપ્યું હતું, જેની મતલય નીચે મુજય હતી:--

दिवान साहेबनुं भाषण.

आ बोर्हिंग गत वर्षे स्थापन थयान आजे एक वर्ष निर्विध्ने पूर्ण थयुं जाणी मने आनंद थाय छे अने कार्यकर्ताओंने सारी रीते कार्य चलाववाने माटे मुबार-कबादी आपुं छं. अत्रे आवी शाख लाकोमां फेलातो जाय है. अते स्थानकवा-

तरतज आ बोर्डिंगनी स्थापना शेठ माणे-कजीए छेक मुंबाईथी आबीने करी छे ते जणावतां मने विशेष आनंद थाय छे. भाई मुळचंदजीना कहेवा मुजब आप भाईओनो मारुं भाषण सांभळवानो वि-शेष आग्रह होवाथी हुं विद्या विषे केटलुंक विवेचन अबे करीशः विद्यार्थी थता फा-यदाओ तो सर्वे जाणोज छो, पण विद्याने अभावे आपणे हुं हुं नुकशानो खमवा पडे छे ते तरफ नजर करतां जणाय छे के विद्याने अभावे हिंदुस्तान पडती दशा-ए आबी गयुं छे. जो तमे युरोपनी साथे हिंद्स्ताननो मुकाबलो करशो, तो जणाशे के हिंदस्ताननों करोड़ों रुपियानो मारू जे युरोप जती हती तेने बद्छे आजे आपणे युरीपनी अवजी रुपियामी माळ मंगावबी पडे छे. युरोपमां छाखनी दोछत कंड हिसाबमां नथी, पण त्यां तो मीळीअन (दश लाख) पर हिसाब छ तेम दोलत पण रुपियाथी नहि पण पौंडथी गणाय छै. जेथी दोलतनी साधारण आंकणीमां पण ते लोको १५० घणा आगळ वधेला छै. त्यां तो ओछामां ओछो दोह करोडनो आसामीज धनवान गणाय छे. हिंद्स्तान-ना लांको वेपारी नथी, पण युरोपना वेषारीओना आडतीया जेवाज वनी गया छे. जुओं के राली ब्रधर्सनी कंपनी केवो मोटो सी जैन कोलेन खुली, पछी रजपुत व्यापार चलावे छे, पण अने तो वे भागी-बोर्डिंग हाउस खुल्युं अने ते पछी आज नेपार चलात्रतां लढीने कोर्ट जाय छे. आम थवातं कारण विद्यानो अभावज छे, माटे आखा देशनी हाळत सुधारवाने माटे विद्यानी जरुर है. भणवाथी परमारथ साधी शकाय छे. मनुष्यनी जींदगी एक सोकटांबाजीनी रमत जेवी छे. सोकटां-बाजीमां सामे रमनार होय छे, पण संसाररुपी वाजीमां सामे रमनार तरीके कोई नथी, पण आपणे क्रसंप, विमारी, खोटी बातो अज्ञान वंगरे दश्मनोथी जीत मेळववी जोईए. ए संसाररुपी बाजी खेळतां आवडवं जोईए ते माटे विद्यानी जरुर छे, माटे अते जे बोडिंग खुळी छे तेनी सर्वेष कदर करवी जोईष, मात्र राजा साहेब उपरज विश्वास राखी तमारे वेसी रहेवं जोईए नहि. जो तमे कार्य शरु करो तो जरुर राजा साहेब मदद आपे खरा. बहारना लोकोए आवीने अते आ कार्य कर्यु छे तेनो दाखलो रुई रतलामना भाईओए पण आवां खातांओतुं अनुकरण करवं जोईए. बापदादाना रिवाजने पकडी राखवाना हवे समय नथी. में सांभळ्यं छे के अते जुदी जुदी न्यातोनां हालमां ७५ तुक्ताओं (जमणों) थनार छे जेमां लगभग सबा बे लाखनुं पाणी थई जशे तेने बदले जो आवी रकम विद्यादानमां स्वरचाय तो केटलो लाभ थाय! वापदा-दाना रिवाजो फेरववा माटे हिंमतनी **जरुर छे अने दाख**ला तरीके रतलाम सरकारे पोताने त्यां दशेरापर दर वर्षे श्राद

निमित्ते आशरे ह. २०००) खरवी ब्राह्मणो जमाहता भारे ते खरच हालमां बंध करी चलावी ते खर्चपांधी रु. १५०) ना मासिक रचे ब्राह्मणोनी एक बोहिंग चार करवा हुकम क्यों छे जे तमारे अनुकरण करवा जेवं छे. स्त्री शिक्षणना अनेक फायदाओ छे, माटे अते स्त्री शिक्षणनी अत्यंत खामी होवाथी श्रविका पाठशाळा खोलबानी जरुर छे तेम विधवाश्रमनी पण जरुर छे. अत्रेना भाईओ जे धर्मादा फाळो वेपार-मांथी काढे छे तेमांथी विद्यादान पाछळ कंईने कंई रकम खरचवा जोईए. आपना रिपोर्टमां बोर्डिंग माटे मकाननी जरुर दशोववामां आवी छे. माटे जो बोर्डिंग तुं मकान वांधवामां आवशे तो राज्य तरफथी रजपुत बोडिंग हाउस बंधावानुं छे तेनी साथे आपतुं बोडिंग हाउस बांघ-वाने राज्य तरफथी मफत जग्या पुरी पाडवामां आवशें. आ मेळावडातुं प्रमुख-स्थान तमोञे मने आपवा माटे तमारो हं आभारी थवो छुं, बगेरे.

એ પછી પરી. લલ્લુભાઇ તથા મી. મુળચંદ ભાષ્ટએ સર્વેના આભાર માનનારું વિવેચન કરવા પછી પાન ગુલાળ હાર તારા લઇ ૧૧ વાગતે મેળાવડા વિસર્જન થયા હતા.

આ મેલાવડા પ્રસંગે માળવા પ્રાંતિક સભાના ઉપદેશક પં. કસ્તુરચંદજી ખાસ પધાર્થા હતા, જેમનું આગલી રાત્રે શેઠ ગંગારામ ગુલાભચંદજીના પ્રમુખપણા નીચે વિદ્યાવૃદ્ધી ઉપર અચ્છું ભાષણ થયું હતું, જેમાં ૫૦૦ની હાજરી

હતી. તેમ મેલાવડાની સાંજે શેઠ મૃતીરામ ગારધન મંદસોરવાળાના પ્રમુખપણા નીચે સભા મળી હતી, જેમાં પ્રથમ વિદાર્થીઓની ધાર્મિક શિક્ષણની તપાસ લેવામાં આવી હતી : જેથી આનંદ પામીને પ્રમુખે ર. પ) તથા શાંદ ગંગારામ ચુલાળચંદ તથા તેમના પુત્રી ં તરક્ધી 🖁 રૂ. ૫)–૫) મળી રૂ ૧૫) વિદાર્થીને **ઇનામ માટે આપવામાં** આવ્યા હતા તેમ **આ પ્રસ**ો મી. મુલચંદ કસનદાસે જણાવ્યુ હતું કે અત્રે પણ એમદાવાદની માર્ક બાહિંગની એક વિઝીટર્સ કમીટી નીમવામાં આવી છે જેની પી માત્ર રૂ. ર) જ રાખવામાં આવી छ अने के भेम्भरा धश तेने इ. १॥ नु 'દિશંભર જૈન' પત્ર મકૃત મળવાની ગાેકવણ થઇ છે માટે સર્વેએ મેમ્બર થવું જોઇએ, केथी तेक वभते ३० भेभ्भरा नांधाया हता. તેમ તે પછી પં. કસ્તરચંદજીએ ૧ા કલાક સુધી પાંચ અહ્યુવત ઉપર ભાષણ આપ્યું હતું. એકંદરે ધારવા કરતાં આ પ્રથમ મેલા વડા વિજયા નિવડ્યા હતા અને ૨૫ વિદ્યા ર્થી તા હતા અને બીજા ૧૭ વિદાર્થીઓ હાલ દાખલ કરવામાં આવ્યા છે, જેથી હવે **૪૨ વિદ્યાર્થીઓ આ ઉ**ન્તમ ખાનાંના લાભ લઈ રહ્યા છે.

—>>><<-→₩ एकता. Ж<-

एकता देवता यत्न, वर्तते सर्वतोमुखी । भान्तिरुवातिरिष्टस्य, भाप्तिस्तत्नपदे पदे॥

ऐक्यं नाम लोकेऽनध्यं महारत्नं । निस्त्रिलाभीष्टसम्पद् सम्पादकः कल्पतरुः। धर्मोद्धाराय निरन्तराय उपायः । चिरन्त-नाज्ञानान्धतमसोपहतानां सर्वदाऽवनित समुपालीढानां ज्ञातिनामृत्थानसपर्थं साम-धर्षे । अथबाऽल्लमालापेन । यदपीह असाध्यमनासाद्यमप्राप्यमगम्यञ्चान्यै रुपा-यैस्तत् सर्वमप्यनयैकतया साध्यमासाद्य म्प्राप्यं गम्यञ्च भवतीति प्रव्यक्तप्रायमेतत् पोर्वापर्याखोचना चतुरचेतसां।

अद्य ये (योरुप जापान देशीया) उन्त्रति शिखरावलाम्बना निःशेषदेशाधि-ष्ट्रितजनान[†] शिरोमणीयन्ते तत केवलमै-क्यस्यैव माहात्म्यम्। ये (योरुप देशीयाः) स्वदेशोत्पन्नं विपन्नमालोक्य ज्ञातिभ्रातरं तद्विपत्त्रतीकाराय प्राणानपि तृणाय न म-न्यन्ते । ये च स्वथमींद्धाराय सर्वस्वं परि-जिहीपेन्ति । ये महात्मानो विपन्नमुद्धा-र्यंव पाँरपवन्तो न तु पारस्परिक कलहेन। तास्तान धार्मिक व्यापारान् सर्वे साधार-णोपकारकान् समृत्थाप्येव धार्मिका नतुतेषु तेषु धार्मिक कार्येषु विविधान् विद्यानुप-स्थाप्य । धन्यास्त । धन्या च सा भगवती वसुधा यत्रैताह्याः कर्मठा एकता समब-लिम्बन उत्पद्यन्ते । कथं न ते लोके सर्वी-ग्रगण्याः स्युरेषाञ्चेतस्येवंविधोभावः थाऽतिथ्यंकुमे आदरया दृष्या च पत्र्यामः। एपामाराध्यदेवतां भगवती " मेकताम " प्रतीक्ष्यामहे च तमम्युद्यशास्त्रिनं समय मुन्सुके लोंचेनेर्यदा वयमपि (जैनाः) पार-स्परिक मनोपाङ्गियं, धर्मज्ञात्युन्नति बाधा-करमपनीय सर्वतीभावनएते समाराधन तत्पराः सन्तः कार्यक्षेत्रेऽवर्ताणी भविष्यामः। काशीस्य स्यादादमहा विद्यालयस्याधिष्ठाता नम्हकिशोर जैन ।

नम्द्रकिशोर जैन् •>>>>≷≮€स्

समयसिन्धु निदर्शनम्

प्रचण्डदोदेण्डमण्डितमण्डलाग्रम्बण्ड-ताखण्डभूमण्डलसपत्नतते रिव दाशरथे रप-राजितमन्त्रोपमानानेकान्तवाद्रस्यविजितानि खिळसवेम्पन्ययोगप्राभाकरकापिळजेमिनी-यमीमांसकताथागतयवनार्घ्यादिसन्दोहस्य जैनदृन्दस्य व्रतशैलशिखरासीनशीलहिमानी पतनश्मितऋष्णवत्मेकुण्डायां सीतायामिवा भिभूतायां निर्मलपरदाराभिभवकृतिबद्धपीर-करेण रावणनेव मिथ्यादकुत्कु छहु द्वहा चछने-कान्तश्रद्धनिविडान्धकारेण सौगतमीमांसका-धनेकैकान्तदर्शनादर्शकसन्दोहेन सद्दस्तुस्वस्त्य सम्पादनशीलसद्रष्टिविजितनिखिलैकान्त-वादवृत्ती जैनवृत्री जनजात्यपराग्व्यया परिनिन्दिततस्पक्षक्रक्षिकक्षाक-ख्यातायां क्षीकृतजनसंक्षेत्रासज्जनकपरमियपात्रभात-दुष्कृत्यवृत्तेः सद्बत्योवधारित नियोजकवृत्ति-वृत्तीतरवृत्तीभीषणस्य विभीषणस्येव. परिनिन्दितानन्तसंसृतिसंसरणकारणार्य्य-म्मन्याद्यनेकधर्मसंथारिवस्तुस्वरूपापलायैका-न्तवादष्टचेः कवलीकृतकक्रभ्काननायेवा रणवारणसिंह्शावकसान्निभस्य श्रीमत्कुंवर दिग्विजयसिंहस्यसाहायाहु ध्वेत्रतापतपनस-न्तापतापितारीतितात वीररसोचितनि।खिङ-छध्मलिसितलक्ष्मण इव मिध्यैकान्तवशावशङ्क-तार्यम्मन्य ताथागताद्यनेकपत्तमतङ्कलमदोत्पा-टनपदु केसरीव केसरीनिश्रेयसाभिछा। षेपिथ-कपाथयसिक्रिभसम्यग्ज्ञानदानपाछितासि-ळाचळाचळः स्याद्वाद्रत्त्नरत्नाक्ररो वादि-गणकंसरी विद्वच्छिरोमणिः गोपाछदासः

स्वपक्षिपक्षेतरपक्षपिक्षिनिकेतनळङ्कायामिबा-यनिकेतनार्यपुरे (अजमेरनगरे) स्वीयपरा-क्रमपौरुषपगजिताखिलसपत्नतितुमुळसं-गर इव मौखिकशास्त्रार्थे स्वरिप्रनिवानार्य-कार्यकारिण आर्यम्मन्यार्यसंज्ञकान् जिगाय।

निरवद्यापि या जैनजातिः किंचित्कालात् माग्भित्सितासीत् सेवाखण्डपातिष्टत्या-दिमण्डनेनसीतेव, पूर्वापरिवरुद्धवाक्संद-लनदक्षानेकान्तवादाद्यनेक शारद्दिधचन्द्र-चित्रकावच्छुभ्रगुणगणमण्डनेन मिथ्यान्ध-कारापगमधवळीकृताशाक्षेषसंक्षिस्वान्तसम्मा-निता सञ्जाता।

यत्रत्रव्यद्धस्मणविभिषणोषमानसिद्वचार भूषण भूषितोद्धवशक्तिसमन्वित परवादिसिंह-सिन्निम विद्वच्छिरोमणिश्रीमद्गोषास्ट्रास-कुंवरिद्ग्विनयसिंहादिपुरुषरत्नानामृत्या-दस्तत्र कथन्न सद्धमध्वजोङ्घासःसमुङ्कस तुत्रां विश्वसमयसिन्युवेगोष्यचिन्तनीयः कथितश्च केनिविद्विचार चतुरिचत्तानुभवि महाकविना—

समयएवकरोतिबलाबलंग्राणगदन्तइतीब-शरीरिणाम् ।

शर्दिइंसरवापरुषीकृतस्वरमयूरमयूर रमणीयताम् ॥

भोजैनहन्द्वान्धवाः ! इदानीं सर्वे-रीत्यानुकूलसमयादिसामग्रीः संप्राप्य सर्वत सार्वेजैनधर्मप्रचारयन्तुतत्रभवन्तोभवन्तःइत्य-भ्यर्थयामोवयमितिपङ्कवितेनालम् ।

> विनीतः—मक्खनलाल जैन. मुरेनास्यजैनासदांतपाठशाकीयस्थातः

जैन जातिकी दशा और उसके सुधारका उपाय.



ए कौमके प्यारो ए कौमके दुलारो । ए कौमके जवानो ए कौमके कुमारो ॥ गुफुलतकी नींद छोड़ो सुस्तोको अब उतारो । बैठो संभलके अरु कुछ कौमी दशा निहारो॥

पहुंचे कहांपे इस दम इस वातको विचारो ॥१॥

पहिळे इमारा मस्तक उंचा जहानमें था । सारे जहांका नकुशा अपनेही ज्ञानमें था । दौंछतका देर सचमुच कुनो मकानमें था । अमृत कहें हैं जिसको अपनी ज़बानमें था ।।

वीरत्वका नमूना वांकी कमानमें था ॥२॥

चर्ची धरमका करना यस काम था तो यह था। दुखको पराये हरना वस काम था तो यह था।। विपतोंने धीर्य धरना वस काम था तो यह था।पूरा वचनको करना वस काम था तो यह था।।

सच्चे धरम पे मरना वस काम था तो यह था ॥३॥ श्रेयांस कैसे दानी थे बंसमें इमारे ! सुकुमाल कैसे ध्यानी थे बंसमें इमारे ॥ अकरूंक कैसे ज्ञानी थे बंसमें इमारे । लाखीं धरमके वानी थे बंसमें इमारे ॥

धर्मज्ञ सारे प्रानी थे वंसमें हमारे ॥४॥

अब बंसकी हुई है अपने ख़राब हालत । घेरे हुए है उसको चारों तरफसे शामत ॥ घररमें आ बिराजी कम्बरख़ अवजहालत। जाती रही है उल्फृत और मिट गई है दौलत।।

अफ़सोस हो गई है रुख़सत हमारी ताकृत ॥५॥

वह बल कहां गया है यांकी कमानवाली। वह गुण कहां गया है आगमके ज्ञानवाली।। वह जस कहां गया है कीरति महान वाली। वह धन कहां गया है हीरोंकी खानवाली।।

अफ़सोस सब लुटाया उंची दुकानवाली ॥६॥ पैसा न एक पल्ले दौरूत भटा कहां फिर। पृष्ठे न बात कोई इज्ज़त भटा कहां फिर काठीको थाम चलना ताकत भटा कहां फिर। आपसमें लड़के मरमा॥ उन्फ्रेंस भटा कहां फिर।। महदूद ख़ुदको रखना शोहरत भला कहाँ फिर ॥७॥ श्रादी में ज़र गंवाना अब काम हो गया है। रंडियोंको लानचाना अब काम हो गया है।। फुलबारियां लुटाना अब काम हा गया है।मुदोंका माल खाना अब काम हो गया है।।

गाली गलोज गाना अब काम हो गया है ॥८॥ कौमी अनाथ बाळक दरर फिरें हैं मारे । मरती है विधवा बहनें भूखी विलास हारे ॥ कितने ही दीनभाई भूखे मरें बिचारे । मांगे हैं भीख घरर कफनी गलेमें डारे ॥

अफ़्सोस पर नरींगे जुं कान तक तुम्हारे ॥९॥ विद्याकी कुछ न पृछों क्या चीज़ विद्या है। दर इससे लगे रहा है गोया यह कुछ वकाहै॥ विद्या विलान जाना हमने कि धर्म क्या है। पूछे जो कोई हमसे जीन धर्म चीज़ क्या है॥

देंगें जवाब है बस ! यंथोंमें जो लिखा है. ॥१०॥ यंथोंमां जो लिखा है. ॥१०॥ यंथोंमां इंग सुनिये हमने जो करके छोड़ा। अलगरियोंमें उनको वस वंद कर के छोड़ा॥ नहीं भूप तक दिखाई जीस दिनसे घरके छोड़ा। बेखोंफ़ हो चूहोंने उनको कतरके छोड़ा॥

पर हमने दम विनयका दमरमें भरके छोड़ा ॥ ११॥ मेके कगाके हमने रानक बढ़ाके छोड़ी । घोड़े व हाथियोंकी कैने कगाके छोड़ी ॥ क्यार छुनाऊँ शोभा जोर दिखाके छोड़ी। सब नामकी ग्रज़से दौलत छुटाके छोड़ी॥

असली ग्रज़को लेंकिन जड़से मिटाके छोड़ी ॥१२॥ इमने प्रभावनाका सामान खोके छोड़ा। जिन धर्मका दिलेंसि अधान खोके छोड़ा॥ अपने बढ़ोंका आदर सन्मान खोके छोड़ा। अपने भले बुरेका सब ज्ञान खोके छोड़ा॥

इमानकी तो यह हैं इमान खोके छोड़ा ॥ १३ ॥ भैरोंको इमने सच्चे दिलसे मनाके छोड़ा। काळीपै काले बकरे का सर कटाकै छोड़ा॥ मुरगोंको शीतलाके उपर चढ़ाके छो ,।। कबरोंपै इमने पीरोंकी सर नवाके छोड़ा॥

शिवजीका लिंग अपनें दिलमें जमाके छोड़ा. ॥१४॥ ए कौंमके सपुतो ए आन बान बालो। कुछ तो शरम करो अब अर्जुन के बान बालो॥ जो हों गया सो बेहतर आगे को संभालो। कौमी बुराईयोंको अब कौमसे निकालो॥ दो चार हाथ मारो पर को मको बचालो ।।१६॥ इस दम भला है मौका यह की मको जितादी। मौसम बहारका है जुल तुमभी गुल खिलादी।। बल्टीको झट सुलट दौ बिगड़ीको झट बना दौ। भैरीको जैन मतकी चारों तरफ़ बजादी।।

कुछ काम करके अपना बल गैरको दिखादो ।) १५ ॥ दस बीस ब्रह्मचर्य आश्रम बनाके रहना। दस बीस जैन कालिज कायम करा के रहना॥ दस बीस अनाथालय फ़ोरन खुला के रहना। दस बीस पुस्तकालय दिलसे सजाके रहना॥

दस बीस औषधालय प्राप्तक खुलाके रहना ॥१७॥ कोमी बिरादरोंको सीने छगा के रहना । कोमी बुराइयों को सचमुच भगा के रहना॥ रंडी के नाचकी जड़ जड़ से मिटा के रहनां। शादी गुमी के खर्चों को तुम पटाके रहना॥

है जैन क़ौम मुरदा उसको जिलाके रहना ॥१८॥ जीन पर्भका नक़ारा जगमें वजाके रहना । ग़ेरों को इस धरमकी अज़मत दिखाके रहना ॥ हिंसाका नाम जगमें बिल्कुल मिटाके रहना। दुनियामें जिन धरमका सिका जमाके रहना॥

यह धर्म है महारथ इसको चला के रहना ॥१९॥ द्रव्योंकी सत्य चर्चा सबको सिखा के रहना। तत्वोंका भेद असली सबको छनाके रहना॥ इश्वर का रुप सच्चा सबको दिखाके रहना। सीधा जो मोक्ष मार्ग सबको बताके रहना॥

सिथ्यात्वका अंधेरा जगसे सिटाके रहना ॥२०॥ जिन धर्म शास्त्रों का परचार कर के रहना। प्राचीन शास्त्रोंका उद्धार कर के रहना॥ घरत्में शास्त्रों के भंडार कर के रहना। चारों वरणसे हरदम तुम प्यार कर के रहना॥

ृ दुनियामें हर किसीका उपकार करके रहना ॥२१॥ अब काम कीजियेगा दिलमे विचार कर के। मैदां में आइयेगा आलस उतार कर के॥ कुछ दान दीनियेगा अपनोंका प्यार करके। धन चीज़कया है देदी जांतक निसार करके॥

मांगे हैं भीख ''ज्योती" पल्ला पसार कर के ॥२२॥

वाबु ज्योतीप्रसादजी ए. जे. संपादक, "जैन प्रदीप" (उर्दु पत्र)
____DEOBAND, देवबंद (सहरानपुर)

अमदावाद बोर्डींगनो मेळावडो

લગ્નની હકના ડરાવ અને લાઇફ મેમ્બરની યાજના

શૈક પ્રેમચંદ્ર માતીચંદ દિમંબર જૈત માર્ડિંગ સ્કુલના દશમા વાર્ષિક મેળાવડા આસા વદાર તે દીને સવારે ટામ વાગતે ખેડિંગના ભવ્ય મકાનમાં ભારે ઉત્સાહથી થયેા હતા જેમાં મ'બાઇ, સન્ત. અ' કલેધ . આમાદ, વહાદરા, ડુંગરપુર, તથા અમદાવાદની આસપાસ્ના ગામાના આસરે ૧૦૦ તથા સહેરના પ્રતિશીત ગ્રહસ્થા વગેરે મળી આશરે ૨૦૦ ગ્રહસ્થા હાજર હતા. પ્રથમ વિદ્યાર્થીઓએ મગળા ચરણ કરવા પછી પરી. લલ્લભાઇની દરખાસ્ત અને શેઠ માણેકચંદજ જે. પી.ના ટેકાથી ખેડા જીલ્લાના માજી ડેપ્યુટી કલેક્ટર અને એા. મેજસ્ટેટ રા ્યા જીવણવાલ પ્રાષ્ટ્રજીવનદાસ લાખીઓને પ્રમુખત્થાન અપ યું હતું બહ સન્માનસચક ગાયન થવા પછી સેક્રેટરી લલ્લભાઇ લક્ષ્મી ચંદ ચે કર્સાએ બા-ર્હિંગના ગત વર્ષના રિપાર્ટ વાંચતાં જણાવ્યું હતું કે:---આ સંસ્થા સતે ૧૯૦૩થી રથાયન થયા ને દશ વર્ષ પૂરાં થયાં છે સુધી આશરે ૧૫૦ વિદ્યાર્થી છે। આ બાર્ડિયના લાભ લામને ને કરી તથા ધંધે લાગી ગયા છે. કુલ્લે દાખલ સંખ્યા ૪૬મા ૨૩ પેઈન ૧૫ હા-ક્રમેં ઇંગ અને ૮ તેઃન રાઈય છે. એ વર્ષે મેટ્! કની પરીક્ષામાં બેઠેલા ત્રણમાંથી એક વિદ્યાર્થી પાસ થયા હતા. કુલ્લે આવક રૂ. ૩૨૩૪ના થઇ હતી, જ્યારે રૂ. ૩૨૬૨ા ભ્યાના ખરચ થયે! છે, એટલે ૨ ગ૮)તા ઘટાડા પડયા છે. આ भावा : ઝી ન वर्गना १२४ में स्परी હાલ છે, જેમને " હનાયા જેન " भन्न भक्त अभाष छे. गुजरातना २०००

ધરાની વસ્તીના પ્રમાણમાં આ મેમ્પર નજીવી છે તા સર્વેએ એ સંખ્યા સંખ્યા વધારવા પ્રયાસ કરવા જાંમાન ધાન મિક શિકાના ૫. કાશી મારુ વહાલા તામ સા-રી રીતે આપે છે. જેની પારલા નુંબાઇ हि कैन परिक्षावय तरम्या क्षेत्रयंती लेमां ૩૧ માંથી રહ પાસ થઇ કેટલાકને કનામા પણ મહ્યાં છે. તેમજ પરિક્ષાલયના મંત્રી તરકથી સારા અલીપાય મળ્યા છે. આ વર્ષે જમનારની કલ્યે સંખ્યા ૧૧૨૧૫ એટલે સગસરી કાંગ્લી હતી. આ સંસ્થાને એ વર્ષમાં મદદ આપતારા ગટરથાના હં ઉપ-કાર માનું છું. આ વર્ષથી વિદ્યાર્થીઓએ એક 'વિદ્યાવલાસ મિત્રમંડળ' સ્થાપુર્સ 🖻 જેમાં દર રવીવારે ભાષણા યાય છે. જેથી િદ્યાર્થીએ વક્તત્વ શક્તિમાં પણ કેળ**વાવ** છે. આ વર્ષે શ્રીમતી રૂપાંતાઇ ત કથી રાજ ૩૦૦૦) તે ખરચે અત્રે નવાન ધર્મશાળા ખાંધવામા આવી છે, જેથી હવે યાત્રાણને ઉ રવાતે સારી સગવડ થઇ છે. 'આ' સંસ્થા તરફથી પાંચ વર્ષ થયાં "દિમાં ખર જીવન" नामन् मासिक पत्र सुरत्थी श्रीयुत भूगशंह કસનકાસ કાવડીઆના તંત્રીવણા નીચે પ્રકટ થાય છે. જેથી ગુજરાતમાં ધર્મ જાયતિ ઘણી થવા પાંગી છે. આ પત્રનું કામ નિય માંત અને ઉત્તમશીતે નિસ્વાર્થ અસીમ ્રિશમ કરીતે ચલાવવા માટે **આ ભાધના** હું અંત:કરહાથી આભાર માનું છું. અપારે બીજા ઘર્ભા પત્રા માદ્દક સંખ્યાની કમી અતે અવ્યવસ્થાને લીધે ખાનમાં ચાલે છ त्यारे व्या पत्रभां नियमीत रीते भंभावर લામ અપાઇ ચાથા વર્ષમાં કલ્લે રાજ્ ૧૩૨-૧૧-૦ ના વધારા પડ્યા છે જે ભાઇ મુળ-શાંદભાશના અસીય અને નિસ્ત્રાર્થ પ્રયાસન કળ છે. આ વર્ષે સુપોરેન્ડંટ મીગ ગંગાશંક-રે સંતાષકારક કાર્ય કરી પાતા તરફથી શ,

રંગ) મદદ આપી છે, જે ધન્યવાદ રૂપછે. આ સંસ્થાનું સ્થાયી કૃંડ નાનું હોવાથી આથી વધુ વિદ્યાર્થીઓ રાખી શકાતા નથી માટે સવેં ભાઇઓ વખતો વખત આ સંસ્થાને મદદ આપતા રહે, તો વધુ વિદ્યાર્થી રાખી શકાય. જો લગ્ન સીમંત, અત્યુના સ્મરણાર્થ, વગેરે પ્રસાગે આ સંસ્થાને મદદ આપવામાં આવે તો સહેલાઇથી ઘણી મદદ પહેંચી શકે. અત્રે અપાતી મદદથી ચારે દાનનું પૂગ્ય દાંસલ થાય છે. હવે અત્રે અલગ દહેરાસર લાંધવાની જરૂર છે, જે માટે દાઇ સખી પ્રહસ્થને ધ્યાન આપી પોતાનું નામ અમર કરવા હું સ્ત્યના કરે છું વગેરે.

એપછી શેઠ માણેકચંદછની દરખાસ્ત स्पेनि दर्शक्त साधना देशथी रा. था. साध-શ્રીકરે ઉમી આશંકરના મૃત્યુ માટે દિલગીરી પ્રદર્શક દરાવ થયે। હતા, બાદ પં. કરતરથં-દંછ ઉપદેશક, શ્રીયુત નગીનદાસ પુરુષાત્તમ-ાદાસ સંધવી, દિવાન બદાદર અંબાલાલ સાકેરલાલ એમ. એ. મી. મળચંદ આશારામ. - શ્રીયુત મુલચંદ કસનદાસ કાપડી આ, મીરાચંદ છ, શ્રીયત ભાપુજ જગનાય, શેઠ માણેક્ય દજ વગેરેના સમયને અનુસરતા ઉત્તમ આપણા થયાં હતાં. ખાદ પ્રમુખને હાથે વિદાર્થીઓને રાકડ તથા પુસ્તકાનું ઇનામ વેચાયું હતું જે પછી પ્રમુખે પાતાનું ભાષણ કરતાં જ-જણાવ્ય ક્રે-આ મ'સ્થાના રિપાર જોતાં જણા-ય છે કે દર વર્ષે વિદ્યાર્ધીની સંખ્યા ઘટની ल्य छे, केनुं आरख ओछी आवड अने **ક્ષાેકાન કેળવણી તરફ એા**છ્ય લહ્ય હોવ **જોઇએ. અ!** ખાતાનું કુંડ વધારવા માટે મર્વેએ મદદ કરવાની જરૂર છે. મેમ્બરની સાંખ્યા પણ ૧૫૦ પરથી ૧૨૪ થઇ છે જેથી તેમાં વધારા થવાની જરૂર છે, આજે સંબંધી ધારવા કરતાં વધુ લંબાણ **મ્યુતે હત્તમ વિવેચના** શક ગયાં છે. જેથી

વધુ ન જણાવતાં એટલુંજ જણાવીશ કે જેમ જેમ કેળવણીમાં વધારા થતા तेम तेम व्यवस्य उन्नति थवानीक. સંસ્થાના પાયા મજબુત હાય તા તે કાળ સુધી ટકી શકે. અભણ વિદ્યાર્થીએ! માટા થાય છે ત્યારે તેને ખળાપા થાય છે એ જગ જોણીતી વાત છે. શ્રીમાનાએ પણ ભ-ણવાની જરૂર છે. અત્રે આ સભામાં **આંગો**ન ના પણ હાજરી જોઇ મતે આનંદ શાય છે. અત્રે થયલા ભાષણા સાંભળી તમે સાહકાર યતા નહિ પણ એમાંથી કંઇતે કંઇ ચોરી લઇ જળે અને ગ્રહણ કરજો. આ સંસ્થા દશ વર્ષ થયાં નિર્વિ^દને સાલ્યા કરે છે તથા મોની સ્થાપના પછી અત્રે બીજી એ ત્રણ બાર્ડિંગા ખુલી છે જે જાણી મને વિશેષ આતંદ છે. શેઠ માણેકચંદજીએ અતેક સ્થળે બોર્ડિગા ખાલી તમારી કેટમ ઉપર ભારે ઉપ-કાર કર્યો છે, જેતું તમારા શ્રીમાનાએ અત-કરણ કરવું જોઇએ કેમકે ઉજ્ઞતિના મળ પાયા विद्याल के वर्गेरे से पछी गायता वर्गेरे यह સવેંના ઉપકાર મનાઇ પાન ગુલાળ હાર તારા લઇ ૧૧ વાગતે મેલાવડા વિસર્જન થયા હતા.

વીઝીરસ કમીટીની એકક.

એજ રાત્ર ૮ થી ૧૨ વાગતા સુધી વાઝીટર્સ કમીટીતી ખેઠક શા. જેઠાલાલ જેઠી- સનદાસ (જેઠાલાલ પ્રેમાન દ્વાળા) ના પ્રમુખ- પણ તાંચે થઇ હતી, જેમાં પ્રથમ એ કમી- ટીના એ. સેફ્રેટરી મી. કેશવલાલ ડાજ્ઞાભાઇ-એ રિપાર્ટ વાંચી સંભળાવી હવે પછી કાઇ બીજ પ્રદેશ્યને સેફ્રેટરી નીમવાની સ્ચના કરી, જેથી શા. ચીમનલાલ જેશ ગભાઇ હર-જીવનદાસને સર્વાનુમતે વીઝીટર્સ કમીટીના સેફ્રેટરી નીમવામાં આવ્યા હતા. બાદ મી. મુલ-ચંદ્ર કસનદાસ કાપડીઆની લંભાણ વિવેચન પૂર્વક દરખારત અને તેને કાળીદાસ જેશીંગભાઇ

(વીસા મેવાડા), ચીમનલાલ જેશીંગભાઇ (નૃસીંગ-પૂરા), જીવાભાઇ વહાલચંદ (દશા હુમડ), શેઠ માણે કચંદજી (વીસા હુમડ), શ્રીયુત હરજીવનભાઇ રાયચંદ, પં. કરતુરચંદજી ઉપદેશક વગેરેન! લંભાણ વિવેચના સાથે ટેકાથી સર્વાનુમતે નીચેના ઠરાવ થયા હતા:—

અ'કલેશ્વરના વીસા મેવાડા દિગ' ખર જૈનની પાંચે એકત્ર મળીને એક એવા લેખિત ઠરાવ કર્યો છે કે "કન્યા ની ઉમર દશ વર્ષની થવા સિવાય વિવાહ કે લગ્ન કરવાં નહિ તથા કન્યા કરતાં વરની ઉમર એાછામાં એાછી **૬ વર્ષ વધારે હૈ**ાવી જોઈએ. આ ઠરા-વના ભ'ગ કરનારને :ખ'ન્ને પક્ષને ગ્રા. ૫૦૧) દંડ આપવા પડશે" આવા ઉત્ત મ. હિ'મત ભરેલાે અને સખત ઠરાવ 241 કરવા માટે સભા અ કલે ધ્વરના વીસા મેવાડા ભાઇઓને ધન્યવાદ આપે છે અને એનું અતુકરણ કરવાને ગુજ-રાતના સાજિત્રા વીલાગના વીસા મેવા-ડા ભાઇએા, એારાણ પ્રાંતિજના દશા હુમડ ભાઇએા, નૃસીંગપુરા, તથા વીસા હુમડ ભાઇએાન સૂચના કરે છે તેમજ ઉપત્ની ન્યાતે રાેટી વ્યવહાર ત્યાં ખેટી ભ્યવહાર કરવાના જે ઠરાવ કરેલા છે તેની પણ આ સભા નાંધ લે છે.

આ ઠરાવ થવા પછી "હિંદુ સંસારનું દિગ્દર્શન અને તેમાં થવા જોઇતા સુધારા" એ વિષય ઉપર જે ૧૦ વિદ્યાર્થીઓ એ ઇના- મી નિખંધો લખેલા હતા તે સાંભળવામાં આવ્યા હતા ને તેના પરીક્ષક તરીકે ૪ ગ્રહસ્થાને નીમ્યા હતા. આમાંથી ઉત્તમ નિખંધવાળા એ વિદ્યાર્થીને રે. ૬) અને ફ્રે. પ) નું અનુક્રમે

ઇનામ પરી. લલ્લભાઇ **ત**રકથી તેમના સ્વન્ય ર્ગવાસી બંધુ મતુભાઇના સ્મરણાર્થે અપાનાર્ છે). એ પછી પ્રમુખે ડુંક વિવેચન કરી, વિ^{દ્યા}વિલાસ મંડળને રૂ. ૧૦) **બેટ** અ**ાપી**... થાેડિંગની વિઝીટર્સ **કમી**ટીના મેમ્બરાે રૂ. પઢ) લઇ લાઇક મ્મ્બરા પણ કરવાની સૂચના કરી હતી, જે ઉપાડી લઈ તેનાે વિચાર કરવા ૧૨. ચંહસ્થાેની કમીટી નીમાઇ **હ**તી (જે કમીટીએ ચ્યા સભા બરખાસ્ત થતાં તરતજ બેસી ૩. પં૦) લઇ લાઇક મેમ્બર કરવાના ઠરાવ વધુ મતે કર્યો હતા.) જે પછી રૂ. ૨૭૫) પુરસા વાળા શા. માતીચંદ્ર ભાઇચંદ્ર તરકથી, રૂ. ૩૫ સા. કેશવલાલ ડાયાભાઇ તરફથી, રૂ. ૨૦૦) 🕩 **શા.** ગુલાબચંદ લાલચં**દ** આમાદવાળા તરક્**યા** ખાહેંગને મહ્યા હતા તથા કેટલીક બીજી રકમ 🧀 પેણ ભરાઇ હતી. જે પછી પ્રમુખના આભાર 🕒 મનાઇ મેલાવડા વિસર્જન થયા હતા. વળી મા વખતે આગલે દિવસે રાત્રે પણ એક સભા શેઠ રૂપ્ચંદજ ગારધનદાસ મં**દ**સાર-વાળાના પ્રમુખપણા નીચે થઈ હતી, જેમાં પં. કરતુરચંદજ ઉપદેશકે ધા કલાક સધી " વિદ્યાવૃદ્ધિ ' ઉપર ઉત્તમ ભાવણ આપ્યું **હતું**.

ॐॐॐ≮८६≮८६ विनोद–बाण.

(લેખકઃ—િધનાદી)

સ્વાર્થ આગળ સવે નકામું.

કચરાભાઇ કંજીસ એક દહાડા સાક ભાજ ખરીદવા ખજરમાં ગયા. તેઓના નામ ' પ્રમાણે તેમની ખાસીયત સોંઘું શાધીતે લેવાની પડી ગયલી હતી, પછી ભલે, ગમે તેા તે કચરા હોય કે ગમે તેા જીવ હિંસાથી ભરેલું હાય. તેમને તેની કર્યા પરવા હતી ? એમને તાે માત્રપૈસા ભચાવવા એજ કામ હતું.

બધી ઃચીજના ભાવ પ્રછતાં આખરે સસ્તુ શાક વેંગણા પૈસાના દાઢ શેરના મળતા હતા, તે લેવાના વિચાર થયે! તેઓ તાળા-વવાની તૈયારી કરતા હતા. એટલામાં તેમના પડાંસી ડાહાભાઇ પણ યાં આવી પહોંચ્યા તે**એ** કચરાભાઇને કર્યું કે, ભાઇ, આ શું ખરીદ કરા છા ! આપણા જૈનાથી વેંગણા તા ખાયાજ નહિં, કેમકે એ આવણા ધર્મ-માં મ્મલના કહેલું છે. એમાં બહુ બીયાં **હાવાચી**ઃ તેટલાજ છવા ઉપન્ન થવાની શસ્ત્રિ છે. એક ખીમાંથી એક ઝાડ ઉપન્ન ચાય છે તેમ **અને કાળી માં શી અને ક** ઝાદ ઉપનન શાય છે. લીલાં ખી એકેન્દ્રી જીવની સંદામાં છે. તેથા <u> ખહુ-</u> બીજવાળાં ફળ ખાવાથી અનેક જીવની હિંસાના ભાગી ચવાય છે અને મદા દેવ લાગે છે. બસે! બીજું શાક જરા માધું છે તા શાંચલ ! ધર્મ કરતાં કાંધ્ર પૈસાની વધારે ક્રિંમત છે ? માટે મેહેરબાની કરી લાભને દુર મુક્ત થાડા દાષવાળાં શાક વીગેરે ખરીદા.

& & & & કેળવણીના વાખા

લે હું રૂભાઇ લડકાળા જ્યારે જાંએ! લારે ઇસ્કાટાઇટ થઇ કરતા માલમ પડે. ખાપદાદા ખાસું ગાંડ તે ગરદન એક કરીતે રળી ગયેલા, એટલે એમને તો પેઠા કરવાના જંજાળજ પતી ગયલી. ખાવું. પીલું, તે માજમાત્રા કરવી એજ એમના ધધા! બેઠાં ખાય એટલે શરીરમાં પણ આળશ ભાઇ સન્ય કરીતે પેં! ગયેલા. દિવસનાં અરાઢ કલાક તા ઉ ચમાંજ ગળે. ધનવું શાન તો મોંડું જ. એ પૈસા દેવ કરવનુ પણ કપાંધી સુત્રે કે શાન હેમ્ય ત્યારે કેની ! લુવ્યા હોકાનામાં પચાવી ભય, તેની પરવા નહિ, પણ કેળનામાં પચાવી ને સ્ત્રેને તાવ અપને. એઓને

સમજાવે પણ કે ાણ ? સમજાવે તેના સામું થાય, કેમકે પૈસાના દાર કાંઇ જુદાજ હાય છે. આ બધું થવાનું કારણ જુઓ, તો ચાપ્પુંજ જણારી કે કેળવણીના વાખા. અન્દ્રાન માણસમાં આળસ જલદી પ્રવેશ કરે છે, દન્દ્રીયા પણ આળશને લીધે પાતાનું મના ગમતું કાર્ય કર્યા કરે છે અને તેથી અનેક ખરાબ આદતા પડી જાય છે.

83 - 83 - 83 ' વગર વિચાર**તુ' કાર્ય**ા

એક વખતે મુર્ખાનંદ નામના એક માશસ બજારમાં કરવા નીકળ્યા કરતાં કરતાં તેની નજરે પાછ ખાતાની કાગળ નાંખવાની પેટી . જોવામાં આવી તે. જોઇ તેના મનમાં વિ-ચાર આવ્યા કે. આજે મારે પેલા મિત્રને માગળ લખવા છે તે ટીકોટ જોઇશે. તે આ દેશીમમાંથી લઇ લઊં. એમ વિચારી ખી-સામાંથી પૈસા કહાડી પેડીના કાગળ નાંખવા નાં બાકાંમાં નાંખ્યા ને બાધ સાહેબ ટીકીટ-ની વાટ જોતાં ઉભા, પણ ટીકીટ આપે કા-હા, એના દાદા !! માહે કાંઇ માસ્તર બેઠે-લા દતા કે આપે. થાડીવાર **થઇ** ટીકીટ **ખી**-' કીટ કાંઇ મળી નહીં, લારે માટેથી ભુમ પાડવા માંડી કે અલ્યા માસ્તર ! a' લચ્ચા છે કે છે શં ? મારા પૈસા લાધા ને ટીક્રીક કમ નથી આપતા (પણ જુવાબ કયાંથી મળ ? લાખ ડેના પેટારા શં ખાલવાના હતા! આખરે નીરાશ થઇ પસા ખાઇ ઘેર ગયો. મુજબ બીતસમજન અજ્ઞાનતાથી કુપાત્રને કોધેલું દાન પણ નકામું જાય છે. દનથી જે મહાન પુષ્યતું કૃળ મળવું જોઇ-એ, તે કદાપાં મળતું નથી કેમકે જેમ બીન-અક્રમના મુર્ખાન'દે પૈસા ગુમાબ્યા તેમ દોતારાના પૈસા વગર વિચાર્યા કપાત્રદાનથી નકામાં જાય 🚱 ને તેનું કશું 🛊 ળ મળતું નથી ! !

કર્સું એજ કામ, વિચારથી શું વળે? ધનકાર એનનું ધ્યાત ધર્મ કાર્યતસ્ ઠીક લાગેલું હતું. તમત પુજન આંભપેક कीवाने। तथा पराज वीभेरे सांभगवाना शाप પણ સારેર હતા. દરરાજ સવારનાં નિયમ પ્રમાણ મ દિવમાં આવ્યા વગર વહેજ નહિં, જના મારું થયું હોય અને પુજન જાવાનું કે શાસ્ત્રજી સાંભળવાનું અધુરૂં રહી જાય, તે तेमनुं हृदय लड् हु: भी थनुं. आभी हिनस પ્રશાસાય થયા કરતા કે '' મેં મુખિલોએ આજે ગઢ જંજાવની ખરપરમાં ને નહિં કારહાની પટપટમાં વખત ગમાલ્યા. જેવી મેંડ થાઇ ગયું, પણ કિકરનહિં, હવે કાલથી કદી પછા એવા ખેટા લખલ ખારામાં કે કેકાશનાં ઉમાં વહીત નોર્દાસવારમાં જરા વહેલી વૈદી **ઘરતાં** કાર્ય હતારી મામ્સ અને વેળાત્મર માંદિવે જાઇશા. '' આ પ્રમાણે તેમની ધર્મકાર્યનાં સારી ઉચી હતી ઉપદેશ સામગીને દ્વાન ક-રવામાં પણ તેમનું દીલ દેહસાવું હવુ. પગ **માહિતી કર્મ** તેમના દીલમાં સજ્જડ ચાટેલું દ્રતું, તયા અત્તરાય કેમી પણ કાંઇ એહ્યું જોરં વાપરતું નહેતું, તેવી દાન કરવાના વિચારતો ઘરોતએ થાય, પણ **દાનાંતરાયભાઇ** ઝઢાલેતા કે વિચારમાં વમત નાંખી દે અને કાર્ય કરતાં રાકાણ કરી દે, તેમ તેઓના લાભ પણ છુટેકા નહેાતા. કકત વિચાર થાય એન ટલુંજ, પશ કોઢીયાં પેટી નોયા વામાત્ર આજે નહિં તેત કાર્ક કરીશ. એમ આળસમાં ઉલટને સમાવી દેવા, પગ્ " કર્યું એ કામ અને બીડાવી તેજ હામ" એંં સંકલ્પઃ મનમાં નહેાતેલ તેથી ધારેલ કાર્મ હસ્ત્ર ઃશકલામાં, તેએ। અશક્ત નીવડતા હતા. એજ એમની ખરી, ખામી હતી. વિ-ચાર કરે વળે શું ! ખાય તાંજ પેટ ભરાય. नकके कोवाकी डांक लिये यही नकी, तेम ધર્મ કાર્ય કરવાની રૂચી થાય કે તરતજ

અનેક વિધ્તા આવતાં હેત્ય, તેા પણ તે**ને** અટકાવી ઉપજેલા વિચારાને અમસમાં મુક-વા જોઇએ તાેજ ખ**રેખરે પુરુષ** ઉપાર્જન થાય.

પુરાણા પૂંછડાને પાણીચું!!

જાણીને સાંતે પાઉ મજે છે કે રતાતામ ન**રેશ** સજ્જનસિંદ્રજી બહુદ્દર નઃમ ત્રમાણે કૃષ્ય કરી વતાવ્યું છે. જુના જમાનાથી પેસી ગયેલા એક દિવસમાં માલ ઉડાવી પેક્પર દ્વાય કેરવવાના રીવાજ એક એ એાછા કર્યો છે કે દરોરાતે દિવસે ખાસા બે ત્રશ હજાર **લાહભા**ટોને જમાડવામાં આવતા હતા. તે પાછળ લગભગ દેઃઢ હજાર ચકરડાં ઉડી જઇ પૈસાતું. મટાડું, ખતતુ હતું, તે આપણા સુવિચારી સજ્જન તરેશથી સાંખી શકાયું નહિં, તેથી મિર્જાન-મેળા. બધ કર્યો. જોઇ કર્યો આમૃત્રશ્વાથીને લ ડુલાટોના પેટકટારા ! હાય વાય કરી ભૂત રા! મહારાજની કંઇ કંઇ સરપાવ! પોથી માંતા રીગણા જેવા કંઇ કઇ વહેમ અને ગપાઇક ગાળાથી ગામ ગજાવી મુક્યું [મુક હારાજાએ આ કામ કાંઈ પૈસા બચાવવા ખાતર કર્યું નહેાતું. તેમએ તા[ા]ના**સાના** સદૂપયાગ કેમ કરવા તેની શિક્ષા લીધેલી હતી. એટલે એ બચાવેલા નાશાં જેટલીજે રકમ. એટલે મહિતે દાહસા મદદ સાથે બાહાલ ખાર્ડિંગ ઉત્રાહનાર છે, જેમાં રાજના શ્રાહ્મસું ભાજન થશે. અનેક અ**નવ**ન ભડજીતા પુત્રા કેળવણી લેશે, સંસારીક અને ધાર્મીક રીતરીવાજો સુધરશે, અને માત્ર એક દિવસના એ त्रण दलर अब भाजनने ભકલે ત્ર**ણશાને પાંસેઠ દિવસ ભાદાએ**∉ંજબી⁴ હઝારેઃ ધ્યાહાણા જમ્યાનું મુળ પ્રાપ્ત થશેકુન વ્હેમને વચમાં લાવીને જે અક્કલખાજો! પુરા**લ**ં પૂછકું છેાંડતાજ નથી, તેઓને આ સખત ચાલુકના સમાટાના દાખલા છે? જે

મને વ્હેમમાં પૈસાની પાયમાલી સાથે દેશની અને કામની પણ પાયમાલી થતી અટકાવવા માટે આવાજ અમુલ્ય ઉપાયા રામબાણ છે. ધન્ય છે! સજ્જનસિંહ તમારી કેળવણીને અને ધન્ય છે તમારી દીંમતને!!!

─->>≪-आमचे क्षुद्र विचार.

लेखकः-कोठारी हीराचंद सखाराम, दुधनी.

या भरतखंडात वर्तमान काली सर्व समाजात विशेषतः या आमच्या जैन स-माजात असा एक असाधारण नियमच होउन राहिला आहे किं, कांहीं मंडळी समाजोन्नति व धर्मोन्नतिच्या कामी उत्तर हिमालया पासून तो थेट कन्याकुमारीके पर्यंत 'जैन जयतु शासनम्' करण्याच्या सटपटीस दंड थोपटून तयार झाली, किं कांही मंडळी प्रतीपक्षी यांचा दीर्घ प्रयत्न हाणून पाडण्यास व आपल्या अज्ञानरुपी गाढ अंधकारांत प्रमाद रुपी निशान फड-विण्यास लांग चढवून तयार जणुकाय उन्नतिरुपी अंकुराच्या बरोबर अवनतिकारक कीटकाची उत्पति होत असते! एक पक्ष जागोजाग सभास्थापन करून उन्नती फरू इच्छितो तर दुसरा पक्ष त्या समेत फोणी सामील न होण्याचा यत्न करितो! एक पक्ष जागोजाग पाठशाळा, बोहींगे, आविकाश्रमे उघडविण्यांत आपल्या इष्ट

हेतूची सिद्धता मानतो; तर दुसरा पक्ष प्रतिपक्षि यांच्या कार्यालयांत आपुली मुले न पाठाविण्यांत व त्या कार्यालयास तिळमात्र देखील मदत न देण्यातच आपली इति कर्तव्यता समजतो। एक पक्ष आधानिक मद्रण कलेनें जैन ग्रथांचा सर्वत्र प्रसार करण्यात व जागोजाग सरस्वती अवने (वाचनालये) उघडण्यात उन्नतिकारांचें आद कर्तव्य समजतोः तर दसरा पक्ष प्रतिवाद्यांच्यां कर्तव्यास एक प्रकारचे पातक व स्वतः हस्त लिखीत प्रंथांची भाक्त पूजा आदि विनयाचा अतिरेक करण्यांतच खरें धर्मा-चरण समजतो ! एखादा मनुष्य सद्पदेश देऊन उन्नात करु इच्छितों; तर दुसरा मनुष्य त्याच्या क्षद्र दोषाकडे पाहून 'लोकासांगे ब्रम्हज्ञान आपण कोरडे पाशाण' असे तत्काळ म्हणूं लागतो. व त्याच्या सदुप दोषाकडे मुळींच लक्ष देत नाहीं अर्थात चितारी कुरुप म्हणून त्याने काढलेली चित्रें ही कुरुप अशी त्याची समजून झालेली असते कित्येक आपल्या मानापानां साठीं प्रमुख ब धन सं-पन्न म्हणविणारे लोक धर्मघात होत असता देखील अज्ञ बालका प्रमाणें एखाद्या गोष्टीचा हट्ट धरून राहण्यातच श्रेष्टत्वाची ध्वजा चढविली असे समजतात तर कित्येक त्यानां त्या दुराग्रहरूपीं पिशाचा पासून सोड-विण्या करितां हजारों रूपये खर्च करून दीर्घ पयत्न करण्यातच आपले जीवन सा-

फल्य समजतात; कोणी पुष्कळ द्रव्य खर्च करून जिन मंदिर बांधविण्यांत व विंब प्रतिष्टा करविण्यांतच सुधारणा समजतो तर कोणी पुष्कळ द्रव्य संपादन करुन एक कवडी देखील सन्मार्गी खर्च न करितां केवल लक्षाधीश व कोटयाधींश म्हणविण्यां-सुधारणेच्या शिखरावर आपण भाहोंत असे समजतोः कोणी आपणास समाजधूरीण म्हणविण्यातच सुख मानतो तर कोणी आपले नांव लांबलचक पद्व्यांनीं युक्त असलेले पाहून संतोष मानतो; एकूण जो तो कोणत्या तरी दिशनें स्वार्थ साध-ण्यातच निमम असलेला दिसून येतो.

आम्ही आमच्या मोठ मोठ्या दुर्गुणांकडे न पाहतां दुसऱ्याच्या लहानशा दोशाकडें तेव्हांच लक्ष पोचिवतो एवढेच
नव्हें तर आम्ही त्या सत्पुरूपाच्या सहुणा
कडे दुलर्क्ष करून समाजातींल एकी रूपी
सतीचे शीलमंग (दुफळी) करण्यास प्रवृत
होतो ही एक प्रकारे आमची सवयच होऊन
राहिली आहे.

रोटी व्यवहार.

एखादा जैन गुजराच्या घरीं किंवा एखादा गुजद जैनाचा घरीं जेवल्यास त्यानें समाजाचा मोटा गुन्हा केला असे आपणांस बाह्रं लागते इतकेच नव्हे तर आम्ही सम-समान जातींत (पंचम, चतुर्थ, सेतवाळ, कासार वगैरेत) देखील परस्परांत रोटी

व्यवहार करणे अप्रशस्त समजतो, परंतू आम्ही 'जिनानुयायिनः जैनः' ही उक्ती लक्षात आणून आम्ही सर्व जैन धर्मीबांधव एक आहोंत; व आम्हा सर्वांचा देव गुरू धर्म एकच आहे तर जेवणासाठींच कोठे घोडे अडतें; इकडे तिळमात्र देखील लक्ष देत नाहीं. आपल्या सारखा जाति भेदाचा क्षुत्रविचार श्रीमद् विद्वत्शिरोमणी व सम्मार्ग-दर्शक श्रीमद् भटाकंलक देव यांच्या ठीकाणीं असता तर त्याना अंसरव्य बोद्धाचे जैन करताच आले नसते. त्याच प्रमाणे पुष्पवती चेलनादेवीच्या टीकाणी जर हा विचार असता तर बाद्ध मतानुयायि महामंडलेश्वर श्रेणीक राजाला जैन धर्मासह क्षायक सँम्य-क्त प्राप्त करून घेतां आलेच नसते; त्याच प्रमाणे पुण्यवती हाच विचार जर आमचे अंजिक्यवादी परमत खंडक समस्त भरतस्वंडात विजय पताका फडकवि-णारे आणि भावी तिर्थंकर असे श्री संमत-भद्राचार्याच्या ठीकाणी असतां तर विष्ण मतान्यायि शिवकोटी राजादिकाला जन दिक्षा घेताच आली नसती व श्री मगवती-आराधना नांमाचा प्रंथ आज आमच्या पाह-ण्यात आला नसतां, एवढेच नव्हे वरिल सत्पुरूषांच्या प्रयत्नाभावीं जनांचे नांव देखील लुप्त-प्राय झाले असते. करितां सद्धर्म प्रति पालक हो, आमच्या या क्षद्र विचाराची होळी करून सर्व जैन बांधवांनी समाज प्रेम वृद्धास्तिव एक मेकाच्या घरी नि शंकपणें

ाग्रेटीन्यलहार करित असावे हेंच शहाण-ज्यानिं कर्तज्य होय.

श्विक्षण.

्रिक्षणाच्या कामी तर आमचा असमान भारच मागसलेला आहे त्यातल्या स्यांत सीयानां शिक्षण देणें म्हणजे आपला ्र**परः प्रकारें अपमान करून घेण्याचे साधनच** ्राचार करणे असे आम्ही समजतो; वित्ये-काली तर अज्ञी समजूत झाली आहे की, क्रियानां विकाबिले म्हणजे आपणास चुली **्रक्काञ्याः लागतील**ः व शिकलेल्या क्रियाँ गैर नार्रीच्या होतील. असे मानुन स्नि शिक्षणा-च्या कामी आन्ही आळा घालण्याचा प्रयत्न करित असंतो परंत ज्याप्रमाणे परुषाचे अंतिम ध्येय मोक्ष सुख आहे ह्या प्रमाणे खि-यांचेंहि अंतिम ध्येय मोक्ष सुखच आहे असे आम्हांस ठाऊक नसावे काय? जसे प्रुषानां मोक्ष सख प्राप्त करन घेण्यांस ज्ञानाची आवश्यकता आहे; तसेच किंवा त्याहुनहि अधिक प्ररुपापेक्षा स्त्रियानां मोक्ष मिळाविण्या-साठीं शिक्षणाची अंत्यत जरुरी आहे. कारण ्रियानां आपस्या मोक्षमार्गात आह येणाऱ्या स्क्रीवेद नांग कर्माचा नाश करन हानां अद्या-्यी आपस्या सारखीं पुरुष पर्याय प्राप्त करुन ध्यावयाची आहे. असे अस्न आमच्या या भोठेकगांची धर्में मारणाऱ्या व इतरासही न समजणाऱ्या आप मतलबी गुरुवांस उघड

दिसणारी शिक्षणाची उणीव उक्षात मेळन ये हे आमच्या क्षियांचे द्वर्देक्च होय. 🖦 शिक्षणानं बाल संगोपान, आरिर संरक्षण, आहार शुद्धता, आदरातिथ्य, शुद्धाचरण, योग्यायोग्य खर्च, पतीपेम, घरातील टापटीप, व काट्बीक सुघारणेच्या कामी साहयता मिळ्न ऐहिक संसार मुखाचा गाडा सुरळीत चालतो एवढेच नःहेतर पुरुषाना पारमार्थीक सुख मिळविण्यांस देखील शिक्षीत सियाच साहयकारी होतात असे सुशिल स्नियांच्या चरित्रावलोकनाने सहज दिसून येईल. परंपु सती सीता, अंजना, द्रौपदी, सुलोचना, विशल्या, मंदोदरी, सोमा, ब्राम्ही, सुंदरी, नीली, महाराणी रेवती, चेलना, मदनासुंद-दरी, दमयंती इत्यादि सुशीक्षीत स्नियाच्या चरित्राकडे आमच्या या अदूर दृष्टी समा-जांचे मुळीच कक्ष गेले नाही याबदल आ-म्हास राहून राहून आश्चर्य वाटते. सद्ग्रह-रथहो! समाजोन्नति व धर्मोन्नति रुपी इमा-रत बाधण्यापुर्वी भावी पीटीच्या कल्याणार्थ स्त्रि शीक्षणरुपी भक्तम पाया घालण्याची वर्तमानकालीं अत्यंत जरुरी आहे हे प्रत्ये-कांनी पूर्णपणे लक्षात ठेऊन तद्नुकुल बर्त-णुंक इच्छित कार्याची ।सिद्धता लवकरच दिसृन येइल. (अपूर्ण)

The state of the s

"दिगंबर जैन "ना सचित्र खास अंकनी खुशालीमां घडियालोनी बक्षीस !!!

(मात्र कार्तिक सुद १ थी मार्गशीर्ष सुद १ सुधीज) बगडेली धातु शुद्ध अने पुष्ट करवावालो

क्षे धातुपुष्ट मोदक 💸

आ मोदक (लाडु) देशी खांड, घी, मेवो तथा जंगली जडीबुट्टीनो बनेलो, रूपेरी वरखथी शणगारेलो अने खावामां स्वादिष्ट दरेक वस्वते ताजो तयार रहे छे. जो तमे तमारा शरीरने रुष्टपुष्ट बनाववा चाहता हो, तो आ "धातुपुष्ट मोदक" ३० दिवस सुधी जरुर वापरो, जेथी धातु संबंधी ५७५ जातना रोगो दूर थइ शरीरमां अजब ताकात आवशे.

आ मोदकना गुणोने जोइने अमारा आगला ग्राहको कहे छे के "अमे अनेक जन्यानी दवा करी वहु रूप्या गुमान्या, तोपण आवी प्रभावशाळी दवा अमने मळीं नथी. (आ मोदक जाणे अमृतना लाइज छे!). एना सेवनथी अमने अपूर्व्व बक्क अने शक्ति प्राप्त थइ छे."

आ मोद्रक्ती जेटली किंमत लड्ड तेटली ओली छे, ५ण गरीव तवंगर सर्वेने माटे अमे आ जुज किंमतज गर्खी छे. ३० दिवस सुधी सवार सांज वंको क्स्वत खावानी द्वानुं मोटुं बोक्स रु. २॥≈ पोस्टेज जुदुं.

घडीआळतुं इनाम आ प्रमाणे मळ्हो:-

एक बोक्स मंगावनारने बर्मा टाइम्पीस मफत मळशे.

े बोक्स एकी वस्त्रते मंगावनारने आलेरामवार्युं वर्मा टाइमपीस मफत मळशे.

तण बोक्स मंगावनारने एक रास्कोप सीस्टम खीसानुं घडीआळ मफत मळके.

(मुदत पुरी थतां आ इनाम निह मळशे, माटे तरतज मंगावो.)

मळवानुं स्थळ:-याबु मदनलाल जैन वैद्य, सक्पुरा, नं. ३२ इरावा सीटी EtawAh City.



भू वेद्य ५०%

नवीन हिंदी मासिक पत्र.

यह "बैंद्य" प्रतिमास प्रत्येक घरमें उपस्थित होकर एक सबे बैंद्य या डाकटर-का काम करता है। इसमें स्वास्थ्य रक्षा के सुलभ उपाय, आरोग्य द्याख के नियम, प्राचीन और अर्वाचीन बैद्यक के सिद्धान्त, भारतीय आपिधियोंका अन्वेषण, खी और बालकों के किटन रागोंका इलान आदि अच्छे अच्छे लेख प्रकाशित होते हैं। इसका बापिक फीस केवल १) ए० मात्र है। नमुनेका अंक पत्र लिखकर मंगाइये।

प्रथम अंक प्रकट हो गया है और द्वितीय अंक बीब्रही प्रगट होगा।

पत्ता-वैद्य शंकरलाल हारिशंकर जैन,

आयुर्वेदोद्धारक औषघालय-मुरादावाद.

🦓 સંસાર જીવન 🫞

આ ૧૦૦ પુષ્ટના સુશાભિત અને સાર્વજનિક પુસ્તકમાં સ'સારમાં સ્ત્રીના દરજૂજો કેવા છે અને સ્ત્રી જાતિ કેટલી ઉપયાગી છે તેનું આબેઠુળ અને રસીલું વર્ણન ગુજરાતી ભાષામાં છે. કિં. રૂ. ૦-૬-૦ પાસ્ટેજ જીદું. મળવાનું સ્થળ.

મેનેજર, દિગંબર જૈન પુસ્તકાલય–સુરત.

ભુખ મરતાં સંકડા કનર શ્રીતાને બચાવા ! બચાવા !!

શ્રી નડીયાદ હિંદુ નિરાશ્રીત ફંડ તરફથી આખા ગુજરાતના આખરૂદાર હિંદુ કુંદુંખા, વિધવાઓ, અપંગા કે જેઓ લજ્જાના માર્યા અનાથાશ્રમ, દુ કાળ ફંડ, સદાવત આદી જાહેર સ સ્થાઓમાં લાભ લઇ શકતા નથી, તે ઓને અન્ન, વસ્ત્ર, આષધ વિદ્યાભ્યાસ આદીની ગુપ્ત મદદ અપાય છે. દુષ્કાળ પીડીત પ્રદેશામાં મદદ પહોંચાડવા જુ દા જુદા ૨૫ ગામામાં પ્રાંન્ચ એક્સિસ ખાલી છે. હાલમાં ૮૦૦ નિરાશ્રીતા આ ફંડના લાભ લે છે અને માઘવારીને લીધે પુર જોરથી તેમાં વધારા થતા ર હે છે. આ ક્'ડ પાસે કાંઇ ચાપણ ન-થી, જેથી તેના સર્વ આધાર પ્રાપ્ત થ-તા દાન ઉપરજ રહેલા છે.

બ'ધુએ! દયા કરા, દાન કરા અને ક'ઇ નહિ તા એક રૂપીએ! પણ માકલાવી નિરાશ્રીત કંડના દાનવીરાના લીસ્ટમાં આપનું પુષ્યશાળી નામ નાંધાવી બૂખે મરતા દેશબ'ધુએ!ના પ્રાણ બચાવા. રૂા. ૧ અને તેનાથી વધુ દાન આપનાર દયાળુ સદ્દ્રગઢસ્થાનાં નામ માસિક રિપાર્ટમાં પ્રકટ થાય છે. મા-સિક રિપાર્ટમાં પ્રકટ થાય છે. મા-સિક રિપાર્ટ દરેકને મક્ત મળે છે.

લી કે સેવકા. ચંદુ**લાલ ન દલાલ અને મુ**ળજીભાષ્ટ કાસરવાલા.

સેકેટને એા –શ્રી હિંદુ નિરાશ્રીત ક્'ડ, નડિયાદ (ગુજરાત) જમાનો બદલાયો છે.

જેઓ હંમેશાં છાપાંઓ વાંચે છે તેઓ નકલીઓઓની જાહેરખબર વાંચીને તુરત કહે છે કે એ તા નકલીઓ છે એટલે કે હાલના જમાના કેળવણીના છે અને એથી અસલ કાષ્યુ અને નકલ કાષ્યુ તેની પરીક્ષા કેળવાયલા ગૃહસ્થા તુરત કરી શકે છે. અમારી જગજાહેર શક્તિની દવા ભાદશાહી યાકુતી અનંગ વિલાસનો દિવસે દિવસે વધારે ફેલાગ થતા જાય છે અને દર વરસે હજરા રૂપીઆની આ રાજવંશી દવા ખપે છે. નકલીઓઓ ધુળ અને કચરાપઢી જેવી હલકી દવાઓની આગળ અથવા પાછળ યાકુતી એવું પુંછડું તગાડીને જાહેર ખબર આપે છે અને એથીજ જાહેર પ્રજાને ઘણીવાર અમે ચેતવણી આપેલ છે અને હાલ પણ ચેતવણી આપવાની જરૂર છે કે ભાદશાહી યાકુતી અનંગ વીલાસ સરકારમાં રજસ્ટર થયેલી છે અને તેના સરકારી રજસ્ટર નંબર ૨૩૧ છે. નકલીઓઓની બનાવડી યાકુતી ખાવાથી શરીરને નુકસાન છે અને એથીજ ખાસ ધ્યાનમાં રાખવું કે ભાદશાહી યાકુતી અનંગ વીલાસ તથા અમારાં જવનોદદ ઔષધાલયમાં બનતી તમામ દવાઓ રાજકાટમાં અમારા ઔષધાલયમાંજ મળે છે. અમારી કાઇપણ દવા કાઇને વેચવા આપેલ નથી તેમ અમારા કાઇ એજન્ટ પણ નથી.

બાદશાહી યાકુર્તા-

-અનંગ વિલાસ.

(આ દવાના સરકારી રજીસ્ટર ન'બર ૨૩૧ છે.)

આ દવા શક્તિની દવાના રાજા છે. રાજા રજવાડા તથા પૈસાદાર લોકા આ રાજ-વંશી દવા ખહુજ પસંદ કરે છે. આ દવા ઉમદા દેશી વનસ્પતીની અનાવટ છે. નવું લોહી અને નવું વીર્ય અનાવનાર તાકાત માટે ઉંચામાં ઉંચી દેશી દવા જોઇએ તો આદશાહી યાકુતી અનંગ વિલાસ છે. આ દવા વાપરવામાં કાઇ જાતની પરેજીની જરૂર નથી. ૪૦ ગાળીની ડબી એકના રૂપીયા દશ.

બાદશાહી યુનાની લેપ.

(આ દવાના સરકારી રજસ્ટર નંબર ૧૯૫ છે.)

ઉમદા દવાઓમાંથી આ લેપ બનાવેલ છે અને તે શરીરની નસાને પુરતી તાકાત આપે છે. નબળી પડી ગયેલ નસાને પુરતું જેર આપી ખરૂં પુરૂષાતન લાવવા માટે આ લેપ ક્રેતેહમદ ઇલાજ છે. આઉં સ એકની ડબીના રૂપીયા આઠ. તમામ દવાઓતું પાષ્ટ ખર્ચ જીદું. ડાકટર કાલીદાસ માતીરામ–રાજકાટ–કાઠીયાવાડ.

અાળકને રૂષ્ટ પુષ્ટ બનાવવાના **ઉ**પાય.

શું તમારે તમારાં બાળકાને નિરાગી, સુંદર, હસસુખા અને આનંદી ખનાવવા છે? જો તેવીજ ઇચ્છા હાય તો ડાં. બી. કે. શાહનું –

🎉 शिशुजीवन 🗽

વાયરા. આ દવા બાળકાના તાવ, જીર્જીજવર, ધ્ધરસ, સલેખમ, દમ, ક્ષય, હાથપગતું પાતળા થવું, પેટ માેટું થવું, પિત્ત વગેરે રાગા મટાડી બાળકને નિરાગી, સુંદર, આનંદી અને રૂપ્ટ પુષ્ટ બનાવે છે, માટે એક વખત વાપરીને ખાત્રી કરા. કિં. રૂ. ૦–૧૦–૦

सस्ती अने सारी जुलाबनी गोळीओ.

શું તમારે વગર ઇજાએ શરીર શુદ્ધ કરવું છે ? જો એમજ વિચાર હાય તો હમારી જુલાબની ગાળીઓ વાપરા. ખીજી ગાળીઓથી જયારે ગળું ખળે છે ત્યારે અમારી ગાળીથી તેવું કાંઇ થતું નથી. ખીજી ગાળીઓ જયારે પાંચ સાત ખાવી પહે છે. ત્યારે હમારી ક્કત બે ગાળીજ માટા માણસને ખાવી પહે છે. નાનાં ખચ્ચાંને પણુ આ ગાળી આપી શકાય છે. દશ ગાળીની ડબીની કિ. માત્ર એક આના. સામઠી લેનારને રૂ ૧)ની ૩૦૦

આ સિવાય નીચેની દવાએ પણ અમારે ત્યાંથી મળે છે:---

કક્ સીરપ	રૂ. ૧ે ૨ -૦	તાવની ગાેળીઓ	3.	0-2-0
ટાનીક સીરપ	३. १−८ -०	ખાંસીની ગાળીએા	₹.	o- <i>\xi</i> -0
हीवर भीक्ष्यर	३. ०-१२-०	દાદર (દરાજ)ના મલમ.	₹.	0-8-0
પ્રમેહની દવા	३. ०-८-०	દંત મંજન	₹.	0-8-0
ખરજવાના મલમ	3.0-8-0	ચુર્ધુની ગાળીઓ	₹.	0-3-0
કાલેરા મીલ્ચર	₹. 0-८-0	સુવાવડના કવાથની પડી	₹.	9-2-6
નયાનાન' દ	₹. 0-८-0	માથાના દરદનાે મલમ	₹.	0-16-0

^{એજ'ટસ} કે, એફ. શાહ.–અમદાવાદ

શા. ચીમનલાલ જીવાભાઇ ક્રુરમસદ (ખેડા) ડાં૦ બી૦ કે૦ શાહ નાસ્ સ્ટેશન (આણંદ, ખેડા).

પાેસ્ટેજ માકલવાથી ગરીણાેને મકત.

्ट्रै त्रण रत्नो 🗐

જો ગુણ ન કરે તે**ા** પૈસા પાછા.

ờ नेत्र जीवन ৫

આ અદભૂત સુરમાં માતી અને લામસેની કપુર વગેરે નાંખીને ખનાવેલા છે, જે આંજતાની સાથેજ ગુણ માલમ પડે છે. હઝારે સ્ઈનોએ એની પ્રશાસા કરેલી છે. એના આંજવાથી આંખની કમજોરી, પાણી ઝરપવું, જાળું, કુલું, માતીઆની પ્રથમ અવસ્થા વગેરે આંખના રાગા દુર થાય છે તેમ નીરાગી અવસ્થામાં આ સૂરમાં આંજવાથી આંખનું તેજ વધે છે. કિં. શીશી એકના રા. ૧) એકથી ચાર શીશી સુધી પાસ્ટેજ ખર્ચ રા૦ ગ. સફેત સુરમાં યાને નેત્રજીવન ન ર:—જેઓ આંખમાં જરાપણ કાળાશ પસંદ કરતા નથી તેમને માટે આ સફેત સુરમાં ત્યાર કરેલા છે જે વિશેષ કરીને પુલા અથવા છારી ઉપર ઉપયોગી છે. નેત્ર જીવન નંગ ૩ :—જેને નજળાથી આંખે દેખવામાં તક-લીફ પડતી હોય તેને ઉપયોગી છે, કિંમત ત્રણેની સરખીજ છે.

🍪 भरमाकर. 🥦

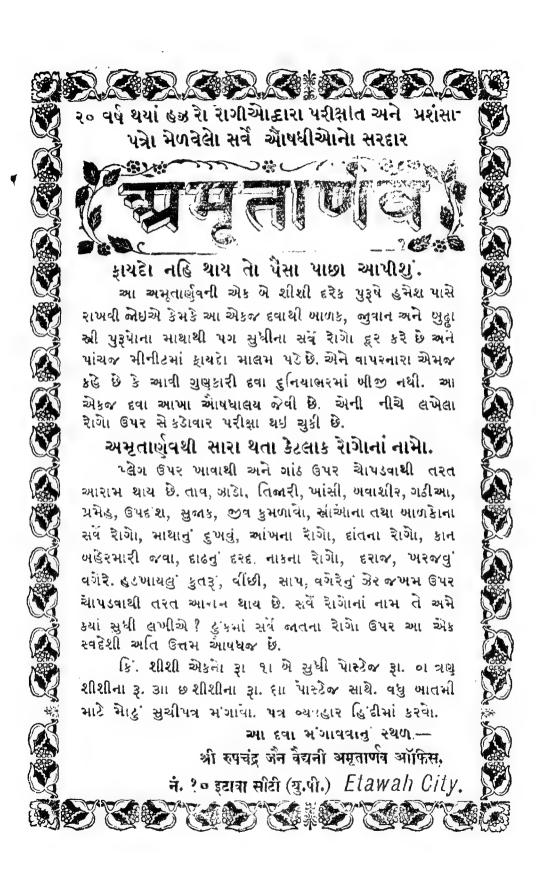
આ દવા રસાયણ રીતે તૈયાર કરી છે, જે કાઇપણ રાગ ઉપર નુકશાન-કારી નથી. એના સેવનથી અજીઈ, મદાગી, આકરા, ખાટા એડિકાર, જીવકમ-ળાવા, વાયુશુળ, તાવ, ખાંસી, અતીસાર વગેરે પટના રાગા તથા બાળકની બીમારી જેવી કે ઝાડા હુધનું વાસીટ, પેટના હુખાવા વગેરે હુર થઇ પાચન શક્તી વધારવામાં આ દવા સાચું ભસ્માકરજ છે, વીંછીનું ઝેર પણ એ ચાપ-ડવાથી ઉતરી જાય છે. કિં. એક શીશીના છ આના. ૬ શીશીના ફા૦ ૨)≈ ખાર શીશીના ફા૦ ૪). ટપાલ ખર્ચ એકથી ચાર સુધી ૪ આના.

🦫 सुधा प्रवाह. 속

આ દવાથી અનેક જાતના પ્રમેહ જેવા કે વગર ઇચ્છાએ મળમૃત્રક્ષેપણ, સ્વપ્નમાં વીર્યપાત, પેસાબ જાડા થવા, વીર્યનું પાતળાપણું, હાથ પગ કમરના દુખાવા, ચકકર આવવા, સ્મરણશક્તિ ઘડી જવી વગેરે વિકારા દુર થઇ શરીર રૃષ્ટ પુષ્ટ થાય છે અને શરીરના રૂપમાં અલાકીક ફેરફાર થાય છે. સ્ત્રીઓને પણ આ સુધાપવાહ, ઉપયોગી છે. કિમત એક શીશોના રા૦ ૧). એકથી ચાર સુધી પારેટેજ રૂા૦ ા.

વધુ વીગત માટે અમારૂં માટું સૂચીપત્ર મ'ગાવા. પત્રવ્યવહાર બાળગોધ લીપી અને હિંદી ભાષામાંજ કરવા.

मेनेजर, " जैन पित्र कभीटी कार्याख्य"-करहल (मैनपुरी). Karhal.



"स्याद्वाद् ग्रंथमाला"ना ग्राहकोने

महान ज्ञास्त्र "आदीपुराणजी" पण मळशे.

પ્રથમ અમારા વિચાર આદીપુરાણ ગ્રાંથ જુદોજ આપવાના હતા, પણ ધણા ત્રાહકાની કુંચા એવી જણાઇ કે આદીપુરાણ શાસા પણ 'સ્યાદ્રાદ પ્રયમાળા' માંજ આપવું જોઇએ, જેથા હવે તીચે મુજબ નીયમાથી આદીપુરાણ પણ પ્રયામાળાના સાહકાને માકલવામાં આવશે.

"સ્યાહાદ મંથમાળા" દ્વારા जिनहातक અને ધર્મरत्नोद्योत આ બે માંથા બહાર પડી ચુક્યા છે અને ત્રીજો માંધ ધર્મપ્રસોત્તર (ટીકા સહ) આશરે ૫૦૦ પાનાંના તૈયાર થવા આવ્યો છે, જેના એક ભાગ માકલાઇ ચુકાયા છે અને બીજો ભાગ પણ આ માસમાં રવાના થશે. આવીપુરાળત્રી પણ છપાય છે, જેના આ માસધી દરેક મહિને ૧૨ કે ૧૫ કારમ (છુટાં પાનાં) પારટેજ બે આનાના વી.પી.થી ગ્રાહકાને માકલવામાં આવશે.

નાના નાના પ્રથા અને આદાપુરણજના કારમાં સાથે ૯૦ કારમ (આરં કે સાંળ પેક્છ) પહેંચતાં ગ્રંથમાળાનું લવાજમ રૂપ) પુરં થયેલું ગણાશે અને કરી રૂપ) વી. પી. થી લેવામાં આવશે. એ મુજબ ૯૦ કારમ કરી પુરાં થતાં એજ મુજબ રૂપ) લેવાતા રહેશે, જેથી જ્યાં મુધી એના કાયમ ગ્રાહક રહેવાની જરૂર પડશે. અમારીપુરાણજના કુલ્લે આશરે ૨૫૦ કારમ (માટાં ૨૦૦૦ પાનાં) થશે.

જેમને આદીપુરાણજી નહિ જોઇનું હોય તેમને નાના શ્રંથાજ માકેલી તેના ૯૦ ફેર્મનું રૂપ) લભજમ ગણવામાં આવશે તેમજ જેમને માત્ર આદીપુરાણજ લેવું હશે તેમને એજ શ્રંથ ૯૦ ફારમના રૂપ) ને હિસાએ એકલા પણ દર મહીને છુટાં છુટાં પાનાં દ્વાસ માકેલામાં આવશે. પણ રૂપ) તા અગાઉથીજ વી. પી. દ્વારા લેવાશે.

'સ્યાહાદ માં થમાલા'ના જેમને નવા પ્રાદ્ધ થવું હોય, તેમણે તાકાદે પત્ર લખી નામ નેંધાવવું અને તે સાથે એટલું પણ જણાવવું કે આદીપુરાણજી શ્રંથ પણ તે સાથે ક્ષેવા છે કે નહિ. ૯૦ ફારમ (આદે કે સાળ પેકજી)ની કિ. ૫) છે. નવા શ્રાહકાને નામ નેંધાવતાં ની સાથે પ્રકટ થયેલા ત્રણ શ્રંથા તરતજ વી. પી.થી માકલી આપીશું.

જો તમે જીનવાણીમાતાના ઉદ્ધાર અને જૈન ધર્મની ઉન્નતિ ચાહતા હો, તો નિજ ખર્ચથી ન ખતે, તો **દરેક મ**દીરના ભાંડારના દ્રવ્ય દ્વારા પણ દરેક મંદીર દીઠ સ્પાદાદ શ્રાંથમાળાના શાહક શાએા.

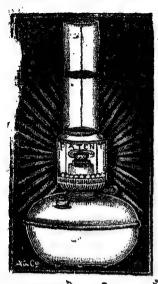
રૂ ૧ાા) માં ૩૦૦ પાનાનાં બે અપૃર્વ્વ ગ્ર[ે]થા.

"સ્યાદ્વાદ શ્રંથમાળા" દ્વારા પ્રકટ થએલા ૧૭૫ એને ૧૨૫ એમ ૭૦૦ પાનાંના એ નવીન ઉપયોગી શ્રંથા શ્રી ધર્મરત્નોદ્યોત રૂ૧)ની કિંમતે વ્યને जिनशतक રૂબાાની કિંમતે અમારી પાસેથી છુટક મળી શકે છે, માટે જરૂર હોય તેમણે તરત મંગાવી લેવું કેમકે નક્લાે જુજજ સીલકમાં છે. બંનેનું ટયાલ ખર્ચ ૦) દ્ર જુદું સમજવું.

पः।व्यवदारनुं स्थाः—

पन्नालाल बाक्लीवाल

मालिक-स्याद्वाद रत्नाकर कार्यालय-बनारस सीटी. Benaras city.



दावड़ाकी पेटंट अबरखकी चीमनी.

-गिरने से टुटती नहीं हैं,

-बत्ती तेज़ हो जाने से कभी टुटती नहीं है.

—जलते लेम्पपर हमारी चिमनी हो और उस

के उपर पानी गिरने से चिटकती नहीं है.

प्रकाश तेजस्वी आता है, (तुम्होरं पैसोंको हमारी चिमनी बचाती है.)
व्योपाविभों को भरपुर कमीशन-क्याटलम मुफ्न जलदी मंगाईबे.

वनानेवाहे-दावड़ा एन्ड कंपनी. गंम्भादेवी जैनी स्कुल के पास मांडवी पोस्ट-वम्बई.

१००० घड़ी मुफ्त.

हमेग काम देखके मुंबई निवासी शेठ चुनीलाल हेमचंद जरीवाले वड़े मसन हुए है. तसबीर नापसंद हो तो पुरे पैसे वापस देंगे.

छोट्टे फोटोग्राफ़ के उपरसे हमारे बनाये हुए (एनलार्नमेंन्ट) बड़ी तसबीरें इसरों से अच्छी हैं ऐसी हम चेलेंन करते हैं।

रु. ५) के साथ अपना अच्छा फोटोग्राफ़ भेजो और रु. ५) की नामदार सेहनशाह की तसवीर ३४×४४ ईच की अथवा तो सुंदर घड़ी जीत जान. घड़ी माल पहले आने वाले १००० साहेबों को दी जायगी.

१४×१८ ईचकी बड़ी तसबीर बनानके रूप २)

२०×२४ ,, ,, ,, ,, ,, ५) १६×२० ईवकी सीपीया रंग की मनमोहन हसवीर करने के रू० १२) सब फोटोग्राफ अच्छे और साफ होने चाहिये, ओड़र के साथ पुरे पैसे पहलेसे लिये जाते हैं.

एनलाजों फोट कंपनी. कोट, एमायर बील्डींग, होरनबी रोड-वम्बई

** नूतनवर्षाभिवंदन हैं कि

જશ રૂપ જગમાં નિવડા, નવું બેસતું સાલ; ઉન્નતિ કરવા કામની, દે મતિ દીને દયાળ, (શાદ લિવક્રીડીત)

ઉગ્યા દિનકર આજના સુખમઈ, સૃષ્ટિ રૂડી ઓપતા; ઝળકે ઝાકઝમાળ સર્વ સ્થળને, પૂર્યા રૂડા ચાક તો. ગારે ગીત વિનાદથી સહ જના, ગુણા ગૃથે વીરના; મ્હાલે માજ મુઝાહમાં મદ ભર્યા, વસ્ત્રા સજી હીરના. પુરું વર્ષજ 'વીસ ચાર અડત્રીશ, જાણે ડુખ્યું' દર્શથી; નૃતન ચાળીસ માંહે એક કમતું, બેસી ચુક્યું હુર્વથી. થાયે ઠામેઠામ બક્તિ વીર જીનની, વાજ ત્ર ખહુ વાજતાં, ભાવે ભજતા બક્ત ભેદ તજીને, ગાને કરી ગાજતાં. હું પણ કિંકર તેહના મતિ હિણા, યાસું કંઈ યાચના; કરશે તે કિરતાર પૂર્ણ સઘળી, પડશે કહી ખાંચના. હે પ્રભ! દીન દયાળ દાસ દીનના, સદ્દુણદ્ધિ દો સર્વને; થાયે કાર્ય તમામ સર્વ નીતિનાં, તાેડી ગહુન ગર્વને: રાગ દ્વેષ દુરે અસે દુરીજના, પ્રસરે દયા દીનતા; કાઢા કલેશ કવાય કપ જડથી, પામે ન કા હીનતા. વર્ષે વર્ષા વૃષ્ટિ વેગ વધતી. પાકે પરીધાન્ય ખહુ; ના રહે દુઃખી દરિદ્રી દેશભરમાં, સંતોષ પામે સહુ. થાયે દાન સુપાત્ર દુઃખી દીનને, પ્રેરા પ્રભુ સદુમતિ; સુધરે "જીવન" સર્વનું વળી મળે, સદ્ધર્મ ને સદુગતિ. : ૯ (જી. ક. કાયડીઆ, સુરંતા)

ر بعد الديم المام المراج المنظم ا والمنظم المنظم المن



स्तास अंकका विषयानुक्रमः

		विषय	म् ष्ठ	विषय '	पृष्ठ
	8	महावीर स्तुति [कविता]	१२६	श्री शांतिनाथका प्राचीन मंदीर	८९
	२	निर्वाणोत्सव [हिंदी काविता]	२२७	एक व्यंग दूर करण्यास उपाय	९ ३
	३	एवा 'दिगंबर जैन'नो विजय-पामजो	३१८८	आधुनिक केळवणी-काव्य	९५
	8	प्रभु-स्तूति [क्विता]	३.२९	फुलनी कळीपर विचार-काव्य	९६
	ч	दिव्य संदेशो [कविता]	8 ई ०	व्हाली ब्हेनोने हितसाधनना वे बो	ह ९७
	•	संपादकीय वक्तव्य (हिंदी-गुज.इं.)	५३१	विनोदी दुचका	९९
	ø	जैन समाचार संप्रह	९३२	जंजाळमांथी के वी रीते छुटवुं?	800
	<	स्वीकार-समालोचना(हिंदी-गुजराती)१४ ३३	मारा मित्रमी सालग्रेह	१०२
	९	विविध वतमान		बाळलझनी बळतरानो चितार-काव	य११०
		चित्रोंका परिचय (हिंदी-गुजराती)	36.39	सद्भक्ति -काव्य	११२
		नवीन जैन समाचार ू ४	10 C. 3 E	कर्मविरान प्रति निवेदनम् संस्कृत	1
		गगग कर्म वान्य वातात्व्यव[[त्वा]	४१ . ३७	पंचायत [हिंदी]	
		नता वर्ष माटे वे बोल	861,	प्रानीतिकतत्त्वम् [संस्कृत]	११९
		नया वर्ष माटे किंचित बोध	86	श्रमकाध यन्त्रके चित्रका परिचर	य१२२
		समभाव सिद्धि	90 80	शास्त्रोंके जिण पत्र-चित्रका परिच	य१२ इ
		पहेलुं सुख ते जाने नर्या !	५ ६ %	जिनवाणीकी वर्तमान हिनावस्था	6
	१७	राग अने द्वेष	6700	चित्रका परिचय [हिंदी]	82/
	१८	धार्भिक शिक्षणनुं समालाचन	£ 8 12	Jain Logie (B. Motilal Jain)	129
	19	An enterpretation of the	४३	भक्तामर महातम्य	१३७
		Jain Philosophy (Mr. H. Warren, London)	64.88	कृपण और दानीका संवाद[हिंदी] \$88
	20	Lord Mahavir's Court (J.	84	ब्तिकडा [हिंदी]	\$88
		L. Jaini M.A. Bar-at-law)	67 16	High-water mark of Jair Culture in Ancient India	11
	21	The present condition of the Jains and the ways	: :	(T. Kuppuswami Shastr	i
		to progress (Manilal H.		Taujore)	146
)	•	Udani M. A., LL. B.)	70go	साहित्य संपत्ति	१५२
,	? ?	प्रभुदर्शन अने ते केवी रीते करवां!	0886	कथमस्माकमभ्युदयः? (संस्कृत)	१५६
		स्त्रीसमाजना खोटा व्हेमो	७६ ४९	श्री जिनसंकट मोचनाष्टक-काव्य	१५८
		कत्याओनो वधारो केम नथी ?	UP 40	अशनिपात !-काव्य [मराठी]	१६०
	1	जैप्धर्म जगतव्यापी कैसे हो![हिंदी]	< 3 9 9	मारी नम्र याचना टा	इरल

श्री खास अंकके चित्रोंका अनुक्रम.

मंब	र नाम	पृष्ठ	नंब	र नाम	पृष्ठ
8	पट्लेख्या स्वरुप (रंगीन चित्र) टाइ	दुल	32	पं. वंशीधरजी जैन, सोलापुर	९ ६
	तीथकरकी माताके पोडश स्वप्न	(३३	दिवान कुमार रुपाकेशोरजी	٥,७
	श्रीमान ऐलक पन्नालालजी	ė.		श्री स्वामी कृष्णदयालुजी वैद	6'0
	ना. लोईहार्डिज और लेडी हार्डिज	१६			९,७
	दक्षिण महाराष्ट्र जैनसभा (स्तवनिधि)				१०४
	शेठ गुलावचंद हीरालालधुळीआ		<u>{</u>	व्रक्षचारी महावीरप्रसाद्जी	१०४
હ	पावागढ दुधीका तलावका मंदिर		}	हीरावाग धर्मशाला, बम्बई	१०५
<	श्रीमान रोठ कल्याणमलजीइंदोर	3,8	Ę0.	श्री मगनवाई-कंकुबाई-ललीतावाई	१०५
9	श्रीमान दान्वीर शेठ हुकमचंद्जी	३२	No.	म्यादाद महाविद्यालय, बनारम	१२०
१०	भारतः दिः जैनः महोविद्यालय-मथुरा	133	3 १	म्याः महाविद्यालयकी ईमारत	१२०
88	स्वर्गीय भट्टारक विशालकिर्ताजी ४	3 o F		सिद्धः श्रेत श्री पावापुरी	१२१
	_	e F	i	सिद्धक्षत्र श्री चंपापुरी	१२१
१३	ब्रह्मचारी हेमसागरजी	8 /	1	श्रीशांतिनाथजीका प्राचीन मंदिर	१२८
8 8	ब्रह्मचारी शांनिदासजी	88	ì		१२८
१९	रा. व. श्रीमान शेट पूरनसाहजी	80	Ī	भिद्धसेत्र श्री मुक्तागिरि	•
१६	राय बहादुर शेठ नेमीचंदजी,अजमेर	४९	1	श्री श्रुतम्कन्ध यंत्रका चित्र	इं <i>र्ड</i>
१७	राय बहादुर पं. शेठ मवारामजी.खुजी	ખુદ્	į.	पं. नाना रामचंद्र नाग फलटणकर	
82	श्री ऋपम ब्रह्मचर्याश्रम. हस्तीनापुर	لعين	6	बाबृ द्याचंद्र गोयलीय जैन ललीतपुर	
१९	लाला विशेश्वरनाथजी-लखनउ	६४	!	श्री जिनवाणीकी हीनावम्थाका चित्र	
२०	बाब् फतेहचंदजी ओसवाल-लखनउ	€8		Prof. Dr. Hermann Jacobi	144
₹ ?	जैनधर्मप्रचारणी सभा-मेरठ	દ્ખ		(Germany) Dr. Johannes Hertal P.	
२३ं	पं. पन्नालालजी गोधा (शेरगढ)	৩২		H. D.	144
२३	पं. पुत्तृलालजी-इटावा	હર		Mr. Herbert Warren Jaiu (Lendon)	114
	शेठ वालचंद रामचंद-सोलापुर	७३	53	Mr. A. Gorden Jain	111
२९	राय बान् गुलाबचंद्जी साहब छिपरा]७३	1 5 4	(London) Dr. Ambroilo Pollinga	144
२६	राय बान् गुलाबचंद्जी साह्य [छपरा] राय साह्य बान् छोटेलालजी-लखनः	3C0	101	(Italy)	145
40	बाबू गन्दाकसारमा-कासा	€ 2	100	Dr. Defort Lumbi (Halk)) 145
२८	जैनसिद्धांत पाष्ट्याला, मोरेना			Dr. A. Guerinot-Paris	145
२९	मृतपूर्व दिगंबर जैन संपादकसम्ह		,	वाव् मोर्तालाल जैन-आगरा	8.9
३०	वर्तमान दिगंबरंजन संपादकसमृह			भारत दि. जैन महासभा मथुरा	194
३१	न्यायाचार्य पं. गणेशपमाद्जी	€ €	C'O	स्रत जैन शीन्टींग प्रेस	१५३ 🏸

इस वर्षके १० उत्हारांकी पोस्टेज सह पैशानी बार्धिक मृत्य रु. १-१२-० है।

शेठ प्रेमचंद मोतीचंद दिगंबर जैन बोर्डिंग तरफथी प्रकट थतुं मासिक

·¥ दिगंबर जैन. ४

THE DIGAMBER JAIN

नमः श्री वर्द्धमानाय निर्द्धत कल्लिलात्मने । सालोकानां तिलेकाकानां यद्विया दर्पणायते॥

(राग माट-गुणवंती गुजरात, ए लय) जयवंता प्रभु वीर, हमारा जयवंता प्रभु वीर; शामन नायक धीर, हमारा जयवंता प्रभु वीर, -ए टेक. शास्त्र सरोवर सरस आपनं, तत्त्व रसे भरपूर; तेमां न्हातां तरतां नित्ये, झुद्ध थाय अम उर. हमारा० १ सान्विक भावे जेह प्रकाइयुं, वाम्तविक तत्त्व स्वरुपः आम्तिकतामां रमीये तेथी, आनंद थाय अनुष. हमारा० २ आप प्रकाशित ज्ञान वर्गीचे, खील्यां छे बहु फूल; सुगंधी वायुनी सरस ल्हेरथी, अमे थइए मस्गुल. हमारा० ३ आप विशाळ विचार भृमिये, उछर्यां कल्प अंकुर; रसभर तेनां फल चार्खाने, रहीशुं आप हजुर. हमारा० ४ नाम आपनुं निशदिन प्यारं, रमी रखं अम ऊर; तेनी खातर प्राण अर्पवा, अमे छीये मंजुर. हमारा० ९ मार्ग बतावा अम उपर जे, कर्यो महा उपकार: अर्पण करिए सर्व तथापि, थाय न प्रत्युकार. हमारा० ६ चरण आपना शरण हमारे, मरण जन्म भय दर; लोभी चातक रत्नचंद्र ज्यम, तम दर्शन आतुर. हमारा० ७ (स्था. मुनि श्री रत्नचंद्वनी-पाछणपुर.)

गजल |

घड़ी धनि आजकी है ये, हर्ष ही हर्ष छाये हैं ॥ टेक ॥ वरी है रानी शिव वीरा, वर्जे अनहद सुवाजे हैं॥१॥ करम उत्सव जु निर्वाण, सभी मिलि देव आये हैं। लिये आठों दरव करमें, सभी स्तुति उचारं हैं॥२॥ करें हैं नृत्य अप्सरनीं. मगन गुणगान किन्नर हैं। वचन, मन, काय गुभकरिके, जिनेश्वर पूज तत्पर हैं ॥ ३ ॥ किया संचय सुकृत येसा, सरव सुख जिससे मिलते हैं। देव इस विधि मना उत्सव. स्वर्ग अपने सिधारे हैं ॥ ४ ॥

49999089998690999 शभ (निर्वाण) दिव

वही दिन आज है प्यारा. वीर निर्वाण हवा है।। टेक ॥ वदी माबस जु कार्तिककी, दिवाली नाम ज़ाहिर है।। ५॥ आज गौतमजी गणधरने.

सुकेवल भी उपार्ज्या है। प्रकाशा मोक्ष मारगको, इसीसे शुभ कहाया है ॥ ६ ॥ चलो भविजन करें पुजा. हर्प दिलमें उमाया है। जपौ जिन नाम महावीरा. सरव कल्याण दाता है।। ७॥ परम शुभ है दिवस यैसा, लोक विपरीत कीना है। रुपयेलक्ष्मीको पूजे हैं, मोक्षलक्ष्मी विसारी है॥८॥ छोड़ गणधरकी पूजा जो. सग्व सम्पत्ति कर्ता है। रचें पूजा वो लम्बोदर [गणेश]. महा मिथ्यात्व फैला है ॥ ९ ॥ चतुर्विधि दान करना था, दानसे द्रव्य मिलता है। खेद ! जुआ रचा जाता, धरम और धन न'साता है ॥ १०॥ अमे तुमऽनादिसे जगमं. यही मिथ्यात्व पकडा है। पटो अब मित्र ! शास्त्रांको, हिताहित जान पड़ता है ॥ ११॥ करो श्रद्धान जिनवाणी, तजो मिथ्यात तुम प्यारे । मिलेगा सुक्ख अविनाशी, ''चन्द्र'' यह अर्ज करता है ॥ १२ ॥ अमोलकचन्द्र पी. जे. (इंदोर)

\$

🚝 एवा 'दिगंबर जैन'नो जग विजय ने जश पामजो.हि

અરપે રહસ્ય ધર્મનું છે જ્ઞાનથી ભરપુર જો, શિક્ષાઓ આપે પ્રેમથી ધાર્યું ન પક્ષપાત જો: સત્ય માર્ગ દાેરીને દ્વરે કરે દ્વરગૃણુજો, એવા 'દિગ'ળર જૈન'ના જગ વિજયને જશ પામનો. ઉદ્ગાર ઉત્તમ ઉરમાં ઉપજાવી તાેઉ ઉધ્વ જો. આનંદ અંતર અવનવા અરિદ્ધંતના દેનાર જો: સેવા બજાવી ધ્યાનથી આપ્યું છેજ્ઞાન ભંડારજો, એવા 'દિગ'ળર જૈન'ના જગ વિજયને જશ પામજો. વિરાધતા રાખી નથી ધાર્યાં છે એક સમાન જો. પ્રસરતી કિરતી અધિકી જગ્તમાં આ વાર જો: અધિક પ્રસર માન પામે એહ મનમાં ધાર જો: એવા 'દિગ'બર જૈન'ના જગ વિજય ને જશ પામનો. જેવી વૃતી નિજ ધર્મમાં રાખોછા તેવી રાખ જો. રહસ્ય અધિક' જાણવા સ્નેહે **'દિગ'ળર' વાંચજો**: ધાર્મિક અને સ'સારના અરપ છે શુધ્ધ વિચારેજો. અવા 'દિગ' બર જૈન'ના જગ વિજયને જશ પામનો.

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

(સદા સ'સારમાં સખ દઃખ સરખાં માની લઇએ.) ^રિદ્વિદાર ^જિદ્ધોજન દિવારા. ^રિદ્ધકાવર **દિ**લના ગમાર છું ગજરાજ 312 3[3⊕{[≥ રંગવાલા. દિલાવર. મહાવીરછ મદાંધ હું મનાલું **અ**નાહર **મ**ણીછેા. **બ**તાવીને **બ**ન્યા **બ**ળવાન MEM. ભહાદરી દિલાવર. ४३तिपति વસતે ત્યછ વતન પ્રમાશીવને ^કરળી. જય જય જગદીશ જગ્તનામ જમાવ્ય જનમી. हिझावर. **ં**ઇત:પર EASH. ઇચ્છના ઉઘજાની ઇચ્છ ના નમેરા **ત**રનાર ^{૧૦}ત-દનનાથ નથજતે. નમ દિલાવર.

(પુનશી અરજીન શાહ—ધુળીઆ)

૧-દિલાવર-બહાદુર, હિંમતવાન. ૨-દિલદાર-આત્માના સ્વામિ. ૩-દિલાજન-છવનાજેવું વહાલ. ૪-રતિ પતિ-મદન, કામ. ૫-રમાશીવને-માક્ષતે, ૬-રળી-પામી, મેળવી, ૭-ઇત:પર-દ્વે પછી, 6-ઇનની-પીડાની, ૯-ઇન જો-પ્રસ ૧૦-ન ન્ટનનાથ-પુત્રના ઘણી.

🗯 दिव्य संदेशो! 💥

(હરિગિત છદ.)

શ્રી આઘ ઇશ આરાચના પ્રગટી ત્રભુ દિ**ગ'બરી, અમૃતભરી** વાણિવદે આ લાકપર કરૂણા આરાગ્યતાના સાદાકા સા સાંભળા શ્રવણા ભરી, સંદેશ, મ્હારા સુચવશે માસિક શુભ દિગંખરી. હું દિવ્ય દઉ આશિષ એ માસિકનું શુભ સાધવા, અર્પિશ હુ[.] આ **નવિન વર્ષે** નિયમા એને નવા; જેનું પરિપાલન કરી પ્રાણી અખંડિત સુખના, અધિકારી થઈ ત્યજરો સદા સંતાપ સઘળા દુઃખનાે. ર કળિકાળનાં નરનારીએા ને ચરાપથીના **વ**ળિ એશને આરામ નિપરિત ખાનપાન કુઢ'ગથી; આરાગ્યનાં તત્વા ઘટાડી વિષયવશ્ય વધતાં જતાં, **રાતશરદનુ**ં આયુષ્ય તજીને અલ્પ મૃત્યુ પામતાં. 3 આયુષ્ય પૂર્ણ કીધા વિના મરવું તે આત્મઘાત છે, એ સમ નથી બીજું પાપ તે શાસ્ત્રા વિષ વિખ્યાત છે; એ પાપને અલ્પાયુથી ઉગારવા હું દિગ'બરિ માસિકમાં વસુ' આવી હું દિગ'બરી. ሄ દિગ'બરી માસિક તણા રાવનવડે આ જગ વિષે, સ્વલેક સમસુખ જામશે ને પ્રાણિ સા સુખ પામશે; ના'ના નિયમા પાળશે ને ચરતણા નરનારીએા, સુખ સિ'ધુનીજ છાળાવડે ભરશે મહેલ અટારીએા. પ નિર્દયપણ વળી કલેશ ઈર્ધા દ'ભતા પણ દુર જશે, વ્યાધિ ઉપાધિ મનતાી અહિંથી સમુળી નાસશે; **આ**રાગ્યના નિયમાે વંડ ક'ચન સ્વરૂપ કાયા **થશે**, માનવતું મ દિર થશે હરિના દિવસ એ આવશે. ٤ અમિધર અમીવૃષ્ટિ થશે ધરણી ભરાશે રસકસે, એહવા વખત પણ આવશે નેચર પુજા ઘરઘર થશે; રૈ!!! દિવસ પણ એ આવશે ને આવશે એ પણ ઘડી, સુ ખશાન્તિના સાગર વિષેને ચરની તરશે નાવડી. (એ. એન. રંગવાળા,)



दिगंबरं जैनिमदं सुपत्रम् । ख्याति यथाप्तं हि तथैव यातु ॥ सुबोधकेर्धार्भिकलेखवृन्दे । युतं सुदा प्राह्ममिति त्रवीमि ॥

This is the second time that this journal appears with English articles. Last year's special issue of this journal was published with four small articles while that of this year is published with five English very intellectual articles which occupy 24 long pages. Upto yet no other journal than this has appeared from the Jain community with articles in five different languages and decorated with so many photos to divert the readers for which we have every reason to be proud. This is the special issue in the beginning of Vir Nirvan Samvat 2440 and the first number of the seventh volume of ' Digamber Jain' containing about fifty articles in dive different languages, viz., English, Sanskrit, Hindi, Marathi & Gujarati,

from various illustrious personages from different parts of the country and no trouble has been saved to decorate it with the photos of some of the Jain Tyagis, Sidhakshetras, Public Institutions, and educated illustrious and charitable persons, making a totle, of fifty-nine, in which seven are of the western Jain literary persons as Prof. Dr. Hermann Jecobi, Mr.H. Warren, Mr. A. Gordon, Dr. Johannes Hertal and others.

We offer our heartfelt gratitude to our learned brethren, Mr. Herbert Warren (London), Prof. Baboo Jaguanderlal Jaini M. A. Bar-at-law (Allahabad), Mr. Manilal H. Udani, M. A., LL. B.; F. LL. C. (Bombay), Baboo Motilal Jain B.A. (Agra), and T. P. Kuppuswami Shastri M. A. (Assist. Govt. Musium, Tanjore) for sending in their valuable articles which they duly deserve.

Finally we pray our last Tirthanker Lord Mahavir that this year may prove happy & prosperous to all the living beings and give us sufficient power to serve the community to a better extent.

आहा ! आजनो ग्रम ।दिवस केवो आनंदनो छे! आजे नूतन वर्षमां भवेश महावीर निर्वाण सं. २४३९ बदलाइ जड २४४०नी शरुआत थाय छे, विक्रम संवत १९६९ बदलाइ १९७० शरु थाय छे अने तेज साथे आ मासिक रुपी नृतन बाळक पण दिन प्रतिदीन सुधारा वधारा साथ छ वर्ष पूर्ण करी आजे सातमा वर्षमां मध्य घरघर करे छे. नवीन वर्षनी खुशालीमां बारणे सुशोभित साथीआओ पूराइ, सुशा-भित शणगार रचाइ. संदर वस्त्री पहराइ अने मीठां मीठां स्वादीए भोजनो आरी-गीने सर्वे स्थळे नवीन वर्ष नृतन उजववामां आवे छे तेम आ बाळक आ नवीन वर्षे अवनवा रुपमां नवीन रंग-बेरंगी बस्ता ! सजीने जन समाज आगळ बेसतां वर्षनी सवारकवादी आपवा उपस्थित थाय छे. ज्यारथी आ बाळकना जन्म थया छे त्यारथी ते दर वर्ष नवीन नवीन सधारी बधारो करवाने चकतं नथी तम गय वंपी १२५ पानांनो सचित्र खास अंक वहार पाडयो हतो पण आ वर्ष तो १७५ पानांनो अने ५९ चित्रो अने रंगवेरंगी टाइटलथी सशोभित थइने आ बाळक प्रकट थाय हं के जेवो प्रसंग जैनोमां प्रथमज है. बाळकर्ना आटली वधी प्रगति थवानं कारण कंई हुशे के ? हा, शा माटे नहि ? कारण वगर तो कार्य थायज नहि. आटली बन्नी

प्रगति आ बाळकनी थवानुं कारण बीनं कांड

नहि, पण एना पालनपोषण करनारानी

मेमाळ दृष्टिज हुशे. बीनुं वळी शुं होय !

गत वर्षनो खास अंक जनसमाजमां एटलो बधो भिय थई पडयो हतो के तेनी १५०० प्रतो जोतजोतमां उपडी गई अने एवा गंजावर अंक कंई दर वस्तते बहार पडरा नहि एवी आहकोनी ख्याल हती अने अमारो विचार पण एवोज हतो के आवो गंजावर खर्च कंई दर वर्षे उपाडी शकाय नहि, पण गत वर्षनी खास प्रकट थया पछी बाहक संख्यामां जे मोटो उछाळो थयो तथी अमने एम लाखं के खास अंक वर्ष आवोज थतो रहे तो बाहक संख्यामां घणा माटो वधारो थई जाय अने पत्नने वध लोकप्रिय वनावी शकाय तेथी अमोए आ वर्षनो आ प्रथम अंक पण विशेष रुपथी प्रकट करवानी निश्चय करी वण मास थयां ते माटे सामग्री एकत्रित करवा मांडी हती. प्रथम अमारो विचार एवा हता के ३०-४० फोटा साथे १००--१२५ पृष्ठनो अंक बहार पाडवो पण धीमें धीमें अमीने ए माटे एटली बधी सामग्री मळी के ते विचार अमारे फेरवबो पड्यो अने आसरे आ १७५ प्रष्टनो अने ५९ चित्रोवाळो रंगवेरंगी अंक प्रकट करी शक्या छीए. आ अंकमां गुजराती,अंग्रेजी, हिंदी, मराठी अने संस्कृत एम पांच भाषाना ५० लेखोनो संग्रह है. आवो गंजावर अंक जैनोमां बहार पडतो होय तो ते आ प्रथमज छे.

आ अंक माटे अमोने एटला बधा लेखो. मळेला छे के ते जो बधा प्रकट करीए तो आधी त्रणकृणो मोटो आ अंक थइ जाय

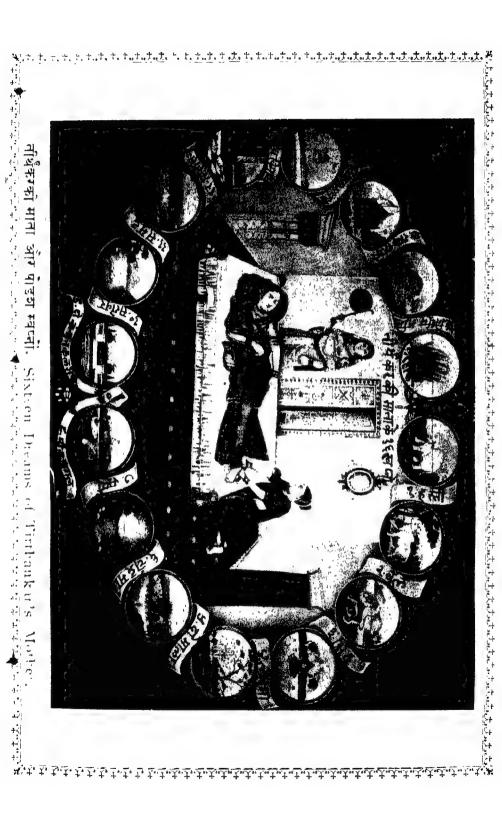
जेथी अमारे घणा लेखो लाचारीए मुलत्वी राखवा पडया छे, पण वाकी रहेला सारा लेखोने हवे पछीना अंकोमां क्रमवार अव-इय प्रकट करवामां आवशे. आ अंकमांना ५९ चिलो ते दरेकना परिचय साथे एटला माटेज पकट करवामां आव्या छे के ते दरेक फोटाना दर्शन अने परीचयथी जैन समाजमां जामति थवा पामे अने ते विद्वाना. श्रीमानो, दानवीरो, त्यागीओ अने जाहर संस्थाओना गुणा अने कार्योनं अनुकरण बीजाओ करे. आ अंकमां एक पण फोटो एवो नथी के जे मात्र मनने ख़शी करवा माटेनो बनावटी होय. पण दरेक चित्रशी बांचकने नवं नवं जाणवानं, जावानं अने मनन करवानं मळे तेम छे. गत वर्षना खास अंक करतां आ अंकमां विशेष ए जीवामां आवशे के एमां आपणी जाणीती संस्थाओं जेवी के ऋषभवद्मचर्याश्रम, मध्या महाविद्यालय, स्याद्वाद् महाविद्यालय, अन जैन सिद्धांत पाटशाळा मारेना वगरेना अप फोटाओं प्रकट करवा उपरांत वे लाखनुं विद्यादान करनार सखी शेठ कल्याणमळ-जीनो फोटो गंजावर खर्च करी रंगीन कल-रमां प्रकट कर्यों छे तथा महान खटपट अने शोधसोळ करी आज सधीमां प्रकट थई गएला अने प्रकट थतां दिगंबर जैन पत्रोना संपादकोना वे युप फोटाओ नवीन तैयार करीने तेना ईतिहास सहित प्रकट करवामां आव्या छे, तेमज लंडन, पेरिस, जर्मनी, इटाली वंगेरे पाश्चात्य मुलकना, जैन धर्म प्रेमी विद्वानोना ७ फोटाओ प्रकट करी शक्या छीए जेथी जैन विशेष अजवाळं पडश एम आशा छे.

आ अंक प्रकट ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी, पं. पनालाल बाकलीवाल, श्री नाधुराम प्रेगी, बाबू ज्योतिप्रसादजी ए.जे.,श्रीयुत तात्या नेमीनाथ पांगळ. मा. दीपचंदजी उपदेशक वगेरे जे जे बंधओए जे जे मदद करी छे ते माटे तेमना तथा आ अंक माटे हेखो. फोटाओ वंगरे मोकलनार बंधुओनो तेमज त्वराथी अने काळजीपूर्वक रीते अंक तैयार करी आपनार 'सुरत जैन' प्रेसनो अमे धन्यवाद्यवक छीए. तेमज मानीम आ खास लेखो लखी मोकलनार माटे अंग्रजी वंधुओं मी. जुगमंदरलाल जैनी वेरीस्टर. सी. हर्बर्ट बोरन, मी. मणीलाल एच.उदाणी. टी. ी कृष्पुस्वामी शास्त्री [तंजावर] अने वाय मोतीलाल जैन [आया]ना अमो विशेष आभारी थया छीए, छेवटमां एटलंज जणाबीहां के आ बाळकतं आ सातमं वर्ष निर्वित्रे पसार थाओ, धारवा करतां पण वय लाभ ए वाळक आपी शके तथा दिन प्रतिदिन आ बाळकने रुष्टपृष्ट बनाववाने हे शासन देव ! अमोने अधिक सामर्थ्य अपंण वर्गे.

आ अंक जोतांनी साथेज वांचकोने जणाशे के ए तैयार करवा पाछळ केटली बधी जहेमत उठाववी पड़ी हशे ? जो के अमोए आसोना अंकमां प्रकट कर्युं हतुं के आ अंक मोडामां मोडो कार्तक सुद १९

उपर प्रकट थहो ते छतां पण कार्तक सद १ थी दररोज अमोने 'खास अंक बी. पी थी तरत मोकलो' एवा पुष्कळ कागळो आव्या कर्या हता. पण आ अंक माटे एटली बधी सामग्रीओ एकत्र करवानी हती के पुष्कळ खटपट अने उतावळ करवा छतां पण एने प्रकट करतां कार्तक वद ७ थई छे. जो बधाज ग्राहको अने मेम्बरोनी फी अगाउथी आबी गई होत. तो तो आ खास अंक प्रकट थतांनी साथेज जुनां नवां वधां **प्राहकोने** एके दीने आ अंक रवाना थई जात. पण अमारे घणीज दिलगीरी साथे जणाववं पडे छे के त्रण महीना थयां अनेक रीते खबर आप्या छतां ग्राहको अने मेम्बरो मळी माल ३०० जणनुंज लवाजम वस्ल थयेलं होवाथी तेटलानेज आ अंक तरत मोकलवामां आव्यो छे अने बाकीना बधा आशरे १२००-१३०० ग्राहकोने आ अंक बी. पी. थी रवाना थतां केटलाक दिव-सनी ढील थशे, जे माटे बाहकोए जरापण नाराज थवानं नथी. जो खास अंक जल्दी मेळववानी आतरता हती तो वधाज ग्राह-कोए आळसने तजी दई दीवाळी पहेला मनीओईरथीज लवाजम मोकली दीधं होत. तो आ अंक तरतज मळी जात, पण हवे तो धीरजज राखवी पडशे. पुष्कळ वी. पी. ओ रवाना करवानां होवाथी तेमज समय समीप होवाथी आवतो अंक मागसर सुद १५ उपर प्रकट करवामां आवशे.

विय हिंदी पाठकगण ! हमारी मात-भाषा गुजराती है, हमने हिंदी भाषाका खास कुछ ज्ञान पाप्त नहि किया है और गुजरातके सुरत जैसे शहरमें बम्बई आदी जैसी हिंदी छपानेकी सभीता भी नहि है तौभी हमारा मात्र परिचयद्वारा हमने इस साचित्र खास अंकमें हिंदी लेखों लिखने और प्रकट करनेका साहस किया है, जिसमें हमारा अनुमान है कि भाषाद्याद्धि, व्याकरण-गुद्धि व प्रफ संशोधनमें त्रुटिएं रही होगी जिसके छिये आपके हम क्षमापार्थी है। इस सचित्र खास अंकमें प्रकट करनेके लिये 'वंदेजिनवरम' के प्रकाशक भी. लाटकर और 'जैन सिद्धांत भारकर'के संपादक शेठ पदमराजजीने कितनेक टलोक मेजकर जो कुपाद्यप्टि दिखलाइ है जिसके लिये आपके हम आभारी है। गत वपसे अंकमें हिंदी हेखोंकी विशेषता की है और अब 'दिगंबर जैन' के अंकोंमें भी हिंदी लेखों गत वर्षकी अपेक्षासे विशेष रुपमें प्रकट होते रहेंगे। हमारे हिंदी पाठकोंको गुजराती भाषाका परिचय हो सके इसलिये इस अंकर्मे कितनेक हेखों गुजराती भाषामें और देवनागरी लिपिमें प्रकट किये हैं जो भी हमारे हिंदी पाठकों-को राचिकर होगा । इस वर्षके सभी माहकी को यह खास अंक उपहार स्वरुप दिया गया है और इस वर्षमें रु. २) के मुल्यकी हिंदी और गुजराती भाषाकी छोटी बडी १० पुस्तकें भी उपहारमें मिलेंगी, जो तैयार होनेपर कमश्चः भेज दी





HALLEH IN INC.

Shriman Tvagi Gvarah Pratimadhari Ailak Pannalalji Maharaj श्रीमान त्यागी ग्यारह प्रतिमाथारी ऐजक पत्रालालजी महाराज.

MAIN PRESS SURAT.

जैन समाचार संग्रहः -->>>≪--

રતલામ બાહિ ગના મેલાવડા:— રતલામમાં શેઠ માણેકચંદ પાનાચંદ દિગંબર જૈન ખાેડિંગ સ્કૂલના બીજો વાષિક મેલાવડા **અ**ાસો સદ ૧૧ને દીને સવારે ખાસ મંડપમાં રા. રા. દોરાબજી ફરદુનજી દલાલ (મેમ્બર ઈનકાઉન્સીલ રતલામ સ્ટેટ)ના પ્રમુખપણા નીચે સારા કાકથી થયો હતો. જે પ્રસંગે દાહોદ, વડનગર, ઇંદોર, અંકલેશ્વર, પરતાયગઢ વિગેરે સ્થળેથી પધારેલા તથા રતલામ સ્ટેટના કારભારીઓ, શહેરના જ્વણીતા અને ખીજ બાર્ડિગાના વિદ્યાર્થીઓ મળા ૫૦૦ ની સંખ્યા હાજર હતી. પ્રથમ મંગલાચરણ થયા પધ્કી મી. કાંતીલાલ નાણાવટી ચેમ. એં. ની દરખાસ્ત અને માસ્ટર દર્યાવસિ હજના ટેકાથી મી. દલાલને પ્રમુખયદ અપાયું હતું. ળાદ શા. છાટાલાલ ઘેલાભાષ્ટ્રએ બાર્ડિંગના<u>ે</u> રિપોર્ટ વાંચી સંભળાવ્યા હતા જે પછી વિદ્યાર્થીએનએ પંચ પરદેશીના સંવાદ તથા કેટલાંક ગાયના કર્યા હતાં ત્યાર પ્રમુખ પાતાનું વિદ્વતાભરેલું લંબાણ ભાષણ આપી તેમાં શેઠ માણેકચંદછના આવું ઉપયોગી ખાતું ખાલવા માટે વ્યાભાર માના મી. નાણાવટીની ખદલી અત્રેથી થવા માટે દિલગીરી દર્શાવી **તેમને મળનારી ઉ**ંચી પદ્રી માટે ખુશી દેખાડી હતી. (પ્રમુખનું લંબાણ ભાષણ સ્થાનાભાવને લીધ હવે પછીના અંકમાં પ્રકટ કરીશું.) બાદ મા. દર્યાવસિંહજીએ કેટલુંક ધાર્મિક વિવેચન કર્યા પછી શેક કરતુરચંદજીએ પ્રમુખ તથા સવેલી આભાર માન્યા હતા તથા રતલામના મહારાજ્ય સાહે-બના પણ આભાર માન્યા હતા, બાદપાન, ગુલા**ય**, હારતારા, અત્તર અપાયા પછી ૧૧ વાગતે મેલાવડા વિસર્જન **થ**યા હતા. ખપારે વિદ્યા-ર્થીઓની ધર્મ શિક્ષણની પરીક્ષા લેવાઇ હતી

અને રાત્રે વડનગરવાળા શ્રીયુત કિરાેડીમલછના પ્રમુખપણા નીચે પં. કસ્તુરચંદછ ઉપદેશકે ' વીતરાગ વિજ્ઞાનતા ' ઉપર અનેક દલીક્ષાવાળું અસરકારક વ્યાખ્યાન આપ્યું હતું બાદ શેઠ અમરચંદજ એાસવાળ કેટલું ક વિવેચન કર્યા પછી વિદ્યાર્થીઓએ કેટલીક ખાસ કવિતાએા ગાઈ **સંભળાવી હતી અને** પ્રમુખે કેટલ ક વિવેચન કરી રતલામ ખાર્ડિ-ગના સ્થાપક તથા સુર્પ્રીન્ટેન્ડંટને ધન્યવાદ આપી રતલામના દિ. જેનામાં સંપ કરવા જેત્રલાલું વિવેચન કર્યુ હતું તથા એક જૈન સભા સ્થાપન કરવાની સચના કરતાંની સાથે તેજ વખતે એક 'જૈન સભા 'ની સ્થાપના યઇ હતી બાદ શા. છેાટાલાલ **ધેલાભાઇએ** સર્વે તો આભાર માની કેટલું ક વિવેચન કર-વાથી તેજ વખતે વીઝીટસ કમીટીમાં કેટલાક નવા મેમ્બરા દાખલ **થયા હતા અને આ** સભા ખરખાસ્ત થઇ **હતી. જે પ્રસંગે જૈન** અર્જનો મળી ૩૦૦ની સંખ્યા હાજર હતી.

आळंदमां गया मासमां एक धर्मादा दवाखानुं खोलायुं छे.

महासभानी बेठकः—भारत दि. जैन
महासभानी १८ मी बेठक मधुराजीमां गया
मासमां मेळा प्रसंगे सारा ठाठथी राय साहेब
लाला पन्नालालजी ओ. भेजीस्ट्रेट नकुडबाळाना प्रमुखपणा नीचे थई हती, जेमां
श्रीमान शेठ हुकमचंदजीने 'दानवीर' नी
पदवी आपवामां आवी हती तथा
केटलाक ठरावो थया हता तेमज शेठ
हुकमचंदजीए महाविद्यालयना फंडमां रु.
२००] मर्या हता तथा बीजी पण रु.
५००] नी उपज थई हती.

मृत्यु अने शास्त्रदानः-वडोदराथी शा. केशवलाल त्रीभोवनदास जणावे छे के अत्रेना शा. नारणदास गंगादास संघ-बीना पुत्र जमनादास आसो वद ०)) ने दीने मृत्यु पाम्या छे जेनी पाछळ अमुक रकम धर्मादा काढवामां आवी छे तेमांथी ह. ४१) 'दिगंबर जैन' ना प्राहकोने एक पुस्तक मेट आपवा माटे खास काढवामां आव्या छे.

बोर्डिंगमां सुधारो अने विद्यार्थीनी जहर:-इंदोरंनी रोठ हुकमचंदजी बोर्डि-गमां प्रथम करतां घणो सुधारो करवामां आज्यो छे अने हवे संस्कृत अने अंग्रेजी कंके शिक्षण अपाय छे. हाल एमां संस्कृत भणनारा १० विद्यार्थीओनी जहर छे, माटे भणवा ईच्छनारे ताकींदे अरजी करवी.

चुळेश्वरजीमां मेळो:-भीलवाडाथी धर्मचंद्रजी चौधरी जणावे छे के अत्रथी ३० माईल उपर पगरस्ते आवला श्री चुले-श्वरजी अतिशय क्षेत्रमां मागसर वद ९ उपर वार्षिक मेळो भरानार छै.

मृत्युना स्मरणार्थ द्वासदानः — गोरळवाला शा. पुंजीराम बहेचरदास जणावे
छे के चीत्रोडा निवासी शा. मुळचंद
मोतीचंद मृत्यु पाम्या छे जेमना स्मरणार्थ
ह. ५०) 'दिगंबर जैन' ना प्राहकोने एक
पुस्तक मेट आपवा शासदान माट काढी
गया छे. आ ह. ५०) अमने मनीओईरथी
तरतज मळी गया छे जे सामार स्वीकारीए
छीए. आज मुजब शासदान के विद्यादान
माटे काढेली रकम तरतज ज्यां त्यां मोकली
देवी जोईए.

અમદાવાદ બાહિં ગતા મેલાવડા:-શેઠ પ્રેમચંદ માનીય દૃદિ. જૈન બાર્ડિંગના ૧૧મા મેલાવડા આસા સદ ૧૩ને દીને સારા ઉત્સા-હથી રા. રા. ભાઇશંકર નાનાભાઈ સોલીસીટ-રના પ્રમુખપણા નીચે થયા હતા, જે વખતે ગુજરાત પ્રાંતના કેટલાક ભાઇએ**ા તથા અમ**• દાવાદના જ્વણીતા ગ્રહરથા મળી સંખ્યા હાજર હતી. પ્રથમ મંગલાચરણ થવા પછી દિવાન ખહાદર અંબાલાલ સાકરલાલ દેશાઈની દરખાસ્ત અને આમાદવાળા હરજી-વનલાઈ રાયચંદના ટેકાથી **લાઈશ**ંકર**લાઇને** પ્રમુખપદ અપાયું હતું. બાદ સેક્રેટરી **શા**. લલ્લભાઇ લખમાર્ચંદ ચાકસીએ બાર્ડિંગના **તથા** રૂપાઝ ઇ અને ચંપાબાઇના દેશી **દવાખાનાના** રિપાર્ટ વાંચી સભળાવ્યા હતા બાદ 'સિહ-રાજતી કચેરી 'એ વિષય ઉપર ત્રિદ્યાર્થીઓન ના સંવાદ થવા પછા રા. ચીમનલાલ નથુ-ભાઇ દાશી. િ. બ. ચ્યંબાલાલભાઇ. વૈદ જટાશ કર લીલાધર, મં. નંદનલાલછ (ઇડર), માસ્તર વર્ષમાત સ્વકપર્યંદ, સ. બાપછ જગ-નાય વંગરેએ કેલવણી તથા દેશી દ્વાખાના**થી** થતા લાગા વિષે વિવેચન કર્યું હતું, પ્રમુખ અસરકારક ભાષણ કરી બાર્ડિંગના કારાબારની પ્રશંસા કરી હતી અને વિદ્યાર્થી-ચ્યાન કિનામ વેચાયા પછી મેલાવડા વિ**સ**-જોન થવા હતા.

મળી નથી:-બાટવાસમાં ચારાયલી સ્પ્ર-ટીકની પ્રતિમાનો પત્તા દુંગરપુરમાં મળ્યો છે એમ ખળર મળી હતી પણ ત્યાં તે ગામવા-ળાએ જઇને તપાસ કરતાં તે પ્રતિમા તા બીજી જેવામાં આવી છે જેથી ભાટવાસમાંથી ગયેલી પ્રતિમાઓના પદ્યા હજી મલ્યા નથી.

रु. ३५००)नुं दानः—भादरवा मा-समां इंदोरनिवासी शेठ तीलोकचंदजी श्री चुलगीरी [वावनगजाजी] यात्रार्थे पधार्या इता, ज्यां जीणोद्धार करवा माटे रुपीया ३९००) नी रकम काढी आपी छे. आ शेठे ईंदोरमां जैन हाईस्कुल खोलवाने बे लाख रुप्यानी रकम काढी छे. ते रकममां मोटो बधारो करी आपवानुं सांभळवामां आबे छे.

हृदय विदारक जीवहिंसाः - इंडिथी शा. गोविंदजी बहेचरदास जणावे छे के अन्नेना मुसलमानो महोरमना महीनानी ७ मी तारीखे पीरोनी सामे दर वर्ष १०००० बकरानो वध करे छे ते बंध कराववा धुळीयानी पाणिरक्षक संस्थाए तरत ताकीदे कोशीश करवी जोईए. गये वर्ष पण ए दीने ९००० बकरानो वध थयो हतो.

श्री रुषभ ब्रह्मचर्याश्रमः—(हस्तीना-पुर)नो बीजो वार्षिक मेळावडो आ मासमां सुद ८ थी १५ सुधी वार्षिक मेळा प्रसंगे भारे उत्साहथी थयो हतो जेना वीगतवार समाचार आवता अंकमां प्रकट करीं छुं.

परताबगढमां कळशोत्सव:-परताब-गढमां दशा हुमड दिगंबर जैनोना पंच तरफथी जुना मंदिर उपर कळश चढाववा-नो भारी उत्सव मागसर सुद ५ ने दीने थनार छे.

पाळवा दि. जैन प्रांतिक सभाना मंत्री लाला भगवानदासजी (बडनगर) नीमायाथी हवे ए सभा संबंधी पत्रव्यवहार बडनगरज करवो.

खुशस्तवरः-टेहरीमां महाराजा साहेब-नी दादी श्री जीयादीसाहवाए मांसमक्षण- नो त्याग कयों छे तथा जे कोइ बाक्सण मांसाहारी हशे, तेने दान निह आपवानो नियम थयो छे.

પાલીતાણામાં દિ. જેન કાેન્ફરસ:-મુંબાઈ દિ. જૈન પ્રાંતિક કાન્ફર સની ગઈ **ં**બેઠક સમયે આમંત્રણ આપ્યા **મુજબ ઘાેઘા** ભાવનગરના ભાઇઓએ આવતા **માટા માસમાં** આ કાન્કસરંસની તેરમી ખેઠ**ક સિદ્ધક્ષેત્ર શ્રી** પાલીનાના (શત્રંજ્તજી)માં કરવાન ઉપાટી લીધું છે તેમજ કાન્ફરંસ તરકથી પણ એ માટે ગાયવો ચાલી રહેલી છે. ઘાંઘા ભાવનગરના ભાઇએોની એકસ્વા<mark>ગત</mark> કમીડી ભાવનગરમાં અસાવદી **૩ નેદીને ૧૮** પ્રદુરથાની નીમાઇ છે જેના પ્રમુખ ભાવન**ગર**-વાળા શેર વીકલદાસ ભીખાભાઇ ઉષપ્રમુખ શેઠ રાયચંદ ત્રી**બોવનદાસ ધોધા** વાળા અને સંક્રેટરીઓ શા. ત્રીભાવનદાસ દયાળજુ અને શા માએકચંદ **વેણીચંદ નીમાયા છે.** કાૈન્કરંસની એકંકા માદા સદ **૩–૪–૬ના** દીવસાએ થશે. તથા **પાંચમે રથાેત્સવ** ધ્વલ્ય દંઢ ઉત્સવ થશે તેમજ અસંગે શેઠ રાયચંદ ત્રીભોવન **ઘાઘાવાળા** તરકથી સમેદશિખરજીના પહાડની **૨૦ ડુંકાની** સંદર રચના કરવામાં આવનાર છે. રેલ્વે ભાડ એમાં કરવા માટે ખટપટ ચાલી રહેલી છે. કાન્ક્ર્રસના પ્રમુખ માટે ઇદાર કે સાલાપુરના જાણીતા ગ્રહસ્થતે નીમવાની ગાંદવણ ચાલે છે. એકંદરે આવતી કેાન્ક**રંસ** ખાતે કરવા માટેનું કાર્ય ઘણાજ ઉત્**સાદ્ધી** અને ત્વરાથી ઉપાડી લેવામાં આવ્યું છે. આ સંબંધી પત્રવ્યવહાર કરનારે નીચેને લખવં-રા. ત્રીભાવનદાસ દયાળજી સંક્રેટરી, પાલીતાણા દિ. જેન કાન્કરંસ એાપ્રીસ ઘોઘા દરવાજ્ય ભાવનગર.

અલુવામાં મળેલી પ્રાંતિક સભા-ના ઠરાવાઃ–જણાવ્યા મુજબ પ્રાંતિક દિ. જૈન હિતવર્ધક સભાની સાતમી બેઠક

માસો સદ ૨-3-૪ દીને લાકરાડાવાળા કાટ-ડીઆ વેચીઅંદ હાથીચંદના પ્રમુખપણા નીચે મળી હતી. જેમાં ૪૦૦ જણે લાભ લીધા હતા તથા એ તાલુકાના ઠાકાર સાહેબ પણ પધાર્યા હતા. પ્રમુખે ઘણુંજ અસરકારક ભા-**પણ આ**પ્યું હતું અને નીચેની મતલખના **હેરાવા થયા હતા. ૧** બાળ સગાઇ અને બાળ લાગન થતાં ખંધ કરી ૮ વર્ષ ઉપરની કન્યા સાથે ઓછામાં એછા ૧૧ વર્ષના વર સાથે સગામ કરવી તેમજ લગ્ન સમયે વરની ઉમર ૧૬ અને કન્યાની ઉમર ૧૩ની હોવી જોઇએ. **ર. મૃ**ત્યુ પાછળ રડવું કુટવું તથા જ્ઞાતિ **બાજન, મિ**થ્યાત્વી પર્વા, એકસ્ત્રીની હયાતિમાં ખીજી સ્ત્રી. કટાર્શાંગીતા વગેરે હાનિકારક રિવાજો હમેશ માટે છોડી દેવા અને આખા હાયના કાછલીના સુડાએાના રિવાજ દુર કરી **તૈને બદલે સીસમના** સુડા પહેરવા. ૩ મૃત્યુ પાછળ એ માસના સાકાચાર તેમજ લગ્નમાં કન્યાવાળા તરકથી સાત દિવસનાે ઉડાઉ ખર્ચ દુર કરી માત્ર ત્રણ દિવસનાં જમણા જાનવા-ળાને આપવા અને ક્ષાકાચારની હદ એક મા-**સની રાખવી.૪ છે**!કરાએાને ધાર્મિક-વ્યવહારીક **કેળવણી માટે અમદા**વાદ બોર્ડિંગમાં માેકલ વાની અને છેાકરીઓને પ્રાંતિજના શ્રાવિકાશ્રમમાં **માકલવાની ભલામ**ણ. ૫ જીવદયા માટે પ્રયાસ કરવા. ૬ સભાના કાર્ય માટે પાકુ ખ'ધારણ કરી ૧૨૫ મેમ્ખરામાંથી ૨૭ ની મેનેજીંગ **કમીટી ત્રણ વર્ષ માટે સુ**ંટણીથી નીમવામાં આવી. ૭ ખારાણ તરફના કેટલાક ભાઇએા આ સભામાં સામેલ ન થતા હોવાથી તેમાટે **ચ્યાવતા વર્ષ ત્રણ માસ ચ્યગા**ઉ વડાલીમાં **મીટીંગ મેળવવી, સર્વે સંપથી ભાગલે** તે માટે ખટપટ કરવી. ૮ આવતી બેઠક પાટનાકવામાં શા. છમનલાલ જેઠાલાલ દશેરાવાળાના પ્રમુખપદે ભરવી અને તેની સ્વાગત કમીટીના પ્રમુખ પાટના કુવાવાળા શા. રેવચંદ બહેચરદાસને નીમવા & ઠાકારથી ભારતસિંહજ (અલવા)

तथा भीका अधिकारी वर्भरेने। आसार भानवे। આ મુજબ દેરાવાે થયા હતા જે પ્રસંગે એા-નરરી ઉપદેશક શા. હાથીચંદ માણેકચંદ (સાનાસણ) અને શ્વે. જૈન કાન્કર સના ઉપ-દેશક શા. પ્રજાલાલ પ્રેમચંદનાં અસરકારક વિવેચના થયાં હતાં તથા આ બ'ન્તે ભાઇઓને શકાર સાહેબ તથા નહાલચંદ લક્ષ્મીચંદ સાની બી. એ. એલ. **એ**લ. બી. તરકથી સર્ટિપી-કેટા અપાયાં હતાં તેમાં ઠાકાર સાહેએ જણાવ્યં હતું કે આ ળાંને ભાઇએોના અહિંસા ધર્મ પર થયેલા છટાદાર ભાષણથી દર માસમાં ખ'ને એકાદશી અને શ્રાવણ તથા ભાદરવા સદમાં કાઇએ જીવહિંસા કરવી નહિ એવા પ્રતિ-મ'ધ કરવામાં આવ્યો વગે**રે**. વળી એ ગા**મના ળધા ક્ષત્રીએ**! એક્કા **ચ**ઇ એવા ક્ષિખિત કરાવ કર્યા છે કે અમે નવરાત્રી–દશેરામાં જીવ કરીશું નહિ. એકંદરે આ સભાનું કામ સક-ળતાથી થયેલું માલમ પડ છે.

सीमळामां दिगंबर जैन मंदिरनी स्थापना थइ छे.

अळाइबादनी सुमेरचंद दि. जैन बोहिंग माटे लेबायला नवा मकाननी वास्तु क्रिया सप्टेम्बर मासमां भारे ठाटथी थइ हती.

વધુ મદદ:—' ચાવીસ કાણાચર્ચા' નામે બેટ માટે ૨૫)ની મદદ સાલાપુરવાળા શેઠ દરીભાઇ દેવકરણ તરકથી મળી છે એમ મૃનિમ ધરમચંદછ જણાવે છે. હજુ એ માટે કા. ૭૫)ની જરૂર છે.

મારેનામાં મુહુર્ત અને મેલાવડા:-ગારેનાની જૈન સિહાંત પાકશાળાના મકાનના મુહુર્તાના અને વાર્ષિક મેલાવડા આસો સદ ૪ તે દોને શ્રીમાન પં. મુનાલાલછ મીશ્ર એમ. એ. સુળા સાહેળ (તવરધાર) ના પ્રમુ-ખપદ થેના હતા તેમાં ૫૦૦-૬૦૦ પ્રહસ્થા હાજર હતા. રિપાર્ટ સંભળાવ્યા પછી જૈન ધર્મપ્રચારક કુંવર દિગ્વિજયસિંહ છએ 'શિક્ષા કૈસા હોની ચાહિયે' એ વિષયપર તથા સ્યા. પ. ગાપાલદાસ છએ ' દેશકા અધાગતિકા કારણ શિક્ષાકો ન્યુનતા હૈ " એ વિષય ઉપર ઉત્તમ ભાષણા આપ્યાં હતાં તથા નવા વર્ષ માટે રા. ૪૫૫૬) નું બજેટ રજી કર્યું હતું. બાદ સિદ્ધાંત પાકશાળાના દરેક કાર્ય સંબંધી પાતાના ઘણાજ સંતાષ દર્શાવી એના સ્થાયી કંડની જરૂર દર્શાવી હતી. એ પછી વાજતે ગાજતે જઇ પ્રમુખે પાકશાળાનું નવું મકાન ખલ્લ મકવાની કિયા કરી હતી.

બ્રહ્મચર્યાશ્રમને ઇંદારની ભારે મદદ:— શ્રી રૂપલ બ્રહ્મચર્યાશ્રમના બ્રહ્મચરી: એમએ ગત માસોના બ્રમણ દરમ્યાન ઇંદારની યાત્રા કરી હતી, જ્યાં આશ્રમને ઉત્તમ સત્કાર મલ્યો હતો અને કૃપર દિગ્વિજયસિંહ છે પધારેલા હોવાથી અનેક જાહેર સભાઓ થઇ ઉત્તમ ભાષણા થયાં હતાં તથા બ્રહ્મચર્યાશ્રમ માટે સ્થાયી ફંડની જરૂર દર્શાવતાં શ્રીમાન શેઠ હુકમચંદ છએ રા. ૫૧૦૦), તેમનાં પત્નીએ ૫૧૦૦), ૧૦૦૧) શેઠ કલ્યાણમલ છ, રા. ૧૦૦૧) શેઠ કસ્તુરચંદ છ તથા બીજ પરચુરણુ રા. ૫૧૦૨) મળી ૧૭૩૦૪)ની મદદ સ્થાયી ફંડમાં મળી હતી.

ઝાંસીમાં પણ બ્રહ્મચર્યાશ્રમના બ્રમણ પ્રસંગે અનેક જાહેર સભાઓ થઇ સ્યા પં. ગાપાલદાસજી બરૈય્યા, બાબુ ભગવાનદાનજી. કુંવર દિગ્જિયસિંદજી, બાબુ દયાચંદ્રજી, બાબુ અજીતપ્રસાદજી (લખનઉ) વગેરેના જૈન ધર્મ સંબંધી ઉત્તમ વ્યાખ્યાના થયાં હતાં.

ં **નવાઝાંજ** (બારાબંકી)માં તા. ૧૬ <mark>થી ૧૯ નવે</mark> બર સુધી ગંજાવર સ્થા_તસવ **થનાર છે**.

જવિદ્ધિ અધ:—ક્લટણ તાળાના તડરમાંવ, આરડમાંવ, દિંગણમાંવ, તડવલે, કાળજ વગેરે ગામામાં શા. પદમશા લાલચંદ

અને વેણીચંદ મલુકઅંદ કાલુસકરના પ્રયાસથી નવરાત્રીમાં થતા પશુ વધ બધ કરવામાં આવ્યો છે.

પ્રયાસનું ફળ:—સિદ્ધિત્ર શ્રી આયુ-જીના મંદિરામાં યુરાપીયના ચામહાના યુટ સાથે દાખલ થતા હતા તેના અટકાવ કરવાને શ્વે. જૈન કાન્કરસ તરકથી નામદાર વાઇસ-રાયને બે વર્ષ ઉપર અરજી કરેલી હતી તેના નીકાલ થઇ ગયા છે. સરકારે જણાવ્યું છે કે યુરાપીયન વીઝીટરાને ચામહાંના યુટ બદલા તેને બદલે કેનવાસના સ્લીપર પહેરીને દાખલ થવાની બહાલી હિંદી સરકાર આપે છે.

રથયાત્રા ઉત્સવ:—ઝાલરાપાટનમાં આસો સુદ ૧૫ ઉપર માટે રથાત્સવ થયો હતો અને ધાર્મિક નાટક સારા ઠાઠથી **ભુજ**-વવામાં આવ્યો હતો.

વેશધારી ઐલક:—એક ધુર્ત પોતાનું નામ જીનસેન રાખી જાહેરમાં તમાવસ્થામાં રહી જૈનોને મંત્ર તંત્રને નામે ઠગવા માંડતા તે પકડાઇ ગયા છે. આરામાં જઇ એ ચતુમાંસ કરવા રહેલા ત્યાં એનું પાગળ પુટી જવાથી એાર્ચીતા કરો નાશી ગયા છે. આ ઠગ પાસે સાનેરી મુદવાળી ગુલાળી સાટીને મહેલી પીંછી અને ટાટીદાર કમંડળ છે. જો કાઇ સ્થળે આ ઠગ જણાય, તા તેને જૈનોએ કળજે કરી યાંગ્ય નસીઅન પહોંચાડવી જેનોએ કળજે કરી યાંગ્ય નસીઅન પહોંચાડવી જેનોએ.

अतिशय क्षेत्र थी रामटेक (नागपुर) मां रावेतानो वार्षिक मेळो कार्तकी १९ उपर भरायो हतो.

मुंवाइमां नवीन दि. जैन मंदिर बां-धवानो प्रबंध करवाने आसो सुद १४ ने दीने एक कमीटी नीमाइ छे, जेमां प्रमुख शेठ मुखानंदजी अने सेकेटरी शेठ पदमचंद भूरामलजी नीमाया छे.

सन्मानपत्र अने २५००)तुं दानः-इंदोरनिवासी श्रीमान शेठ कस्तुरचंदजीने नामदार सरकार तरकथी राय बहादुरनी पदवी मळेली छे ते माटे तेमने मुंबाइना **ढि. जैनो तरफथी मानपत्र आपवानो मे**ला-वडो आसो वद १ने दीने श्रीमान शेठ मा-**णेकचंदजी** जे. पी. ना प्रमुखपणा नीचे सुद् १५ उपर प्रकट करवामां आवशे. हीराबागमां थयो हतो, जेमां शेठ पद्मराजर्जा, पं. धन्नालालजी, माणेकचंदजी बैनाड़ा वगे- जैन पंचांग ' सर्वेने भेट मोकलवामां आव्युं रेनां अनेक भाषणो थयां हतां अने चांदीना े छे जे संभाळी लेवुं. आ वर्ष पण रु. १) नो कास्केटमां मानपत्र अपातां ते शेठ कम्तु-। आ खास अंक म्राह्कोने तदन मफत रचंदजीए आभार साथे स्वीकारी तेनो जुन आप्यो छे अने ते उपरांत रु.२)नी कि.ना वाव आपतां बनारसना 'स्याद्वाद महावि- हिंदी अने गुजराती भाषाना ओछामां ओछा द्यालय' ने रु २५००]नी रकम आपवा १० पुस्तको भेट आपवामां आवनार छे, कबुल्यं हतुं.

ग्राहको अने मेम्बरोने सूचनाः वर्ष वेसतांनी साथे हवे पहेलेज अंके अगाउथी लवाजम लेवाय छे, जेथी जे जे बाहको अने मेम्बरोनुं लवाजम अगाउथी आवेलुं हुतुं तेटलानेज आ खास अंक प्रथम मोक-वामां आव्यो छे. अने जेमनुं लवाजम बाकी छे, तेमां अमदावाद बोर्डिंगना मेम्बरोने रु. ३), रतलाम बीर्डिंगना मेम्बरोने रु. २) अने जुना के नवा बधाज ब्राहकोने रु १॥/ ना बी. पी. थी आ खास अंक (पोस्ट ओफीसमां सगवड थवा मुजब) बी. पी. थी मोकलवामां आवे छे. एक १०००-१२०० वी. पी. रवाना थतां जरा ढील थशे, माटे हवे तो ब्राहकोए धीरज राखी वी. पी. आवे त्यारे

ते स्वीकारी देवा तस्दी हेवी. हवे पछी कोड पण बाहके लवाजम के मेम्बर फीनो मनीओर्डर मोकलवोज नहिं. धारवा करतां आ अंक जरा मोडो प्रकट थयो छे तेथी, तथा सामटां बी. पी. रवाना करवाना होवाथी मागसरना अंक सुद ५ ने बदले

आ अंक साथे आ वर्षनं 'सचित्र जे जेम जेम तैयार थतां जशे तेम तेम र-वाना थरोज, जेथी भेटनां पुस्तको माटे कोइए पण उघराणी करवी नहिं.

Bar Bar Come स्वीकार-समालोचनाः

ग्रहस्थधम-[जिनेंद्रमतदर्पण तृतीय भागो:- संपादक ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी और प्रकाशक 'जैनामित्र' कार्यालय हीराबाग गीरगाम-मुंबाइ. पृष्ठ ३५०,कपडेकी जिल्द और मुल्य मात्र रु. १) - इस नवीन हिंदी संथ में अनेक दि. जैन शास्त्रोंके आधारसे प्रत्येक स्त्री पुरुषको जन्मसे मृत्यु तक पालनेकी सब क्रियाएं गर्भाधानादि बहुत सरस्ता पूर्वक दर्शाइ गइ हैं. सब मिलकर ३१ विषयोंका संम्रह है. १७ संश्कारों और ग्यारह प्रतिमाओंका वर्णन बहुतही योग्यता पूर्वक लिखा गया है. साथमे नित्यनियम पूजा भी सामिल करदी गई है और यह प्रंथ ''जैनिमित्र''के गत वर्षके प्राहकोंको उपहार स्वरूप दिया गया है. ऐसेही एक प्रंथकी आवश्यकता थी जो त्र. शीतलप्र-सादजीने पुर्ति करदी है जिस लिये दि. जैन कौम आपकी आभारी है. प्रत्येक प्रहस्थके घरमें यह प्रंथ अवश्य होना चाहिये. छपाइ सफाइ सुंदर है और मुल्य भी कम है. प्रकाशक के पाससे और दिगंवर जैन पुस्तकालय (मुरत)से भी मिल सकेगा.

प्रगति आणि जिनविजयः—कोल्हा-पुरथी प्रकट थता आ मराठी अठवाडीक पत्रे नवीन वर्षमां ९ फोटा साथेनो आ सुशोभित अंक प्रकट कर्या छे. जेमां महा-राणी ताराबाइ, कोल्हापुर सरकार अने स्वस्ति श्री जीनसेनस्वामी (महारक) ना फोटाओ आकर्षणीय छे.

द्वानानंद चौसर:-पासा डालकर खेलने योग्य यह ज्ञान चौसर (ज्ञानबाजी) मास्टर दीपचंदजी परवार (सुप्रीन्टेन्डंट सुमेरचंद दि. जैन बोर्डिंग, अलाहबाद) ने प्रकाशीत की है जिनका मुल्य मात्र ०)०॥। पौन आना है.

उपन्यास प्रचार:-वृंदावन (यु. पी.) से श्रीविश्वंभरनाथ व्रजवासीद्वारा प्रकाशित मासिकपत्र. वर्ष २. संख्या १४. मूल्य रु. २॥ इसमें सचित्र उपन्यासोंका संब्रह रहता है. इस अंकमें अरेबीयन नाइटस (द्वीतीय भाग) का चार चित्रोंसह अपूर्ण वर्णन है. इसका प्राहक होनेसे बडी२ पुस्तकें तयार हो सकती हैं.

सुवर्णमाछा:-मुंबाइथी प्रकट थती मुवर्णमाठानो आ दीपावलीनो अंक छे, जेमां 'सुभद्रा हरण'नुं वर्णन ८ चित्रो साथे बधी भाषामां छे. आ अंक बहुज सुंदर छे. हवे आ माला दर महीने प्रकट थवा लागी छे. वार्षिक मुल्य रु.र।छे.

दीपमालिका विधानः--संपादक, पं. नंदनलाल जैन, इडर (महीकांठा) मुल्य ०) आ पुस्तकमां दीवाळीना दीवसोमां करवानी विधि तथा पूजाओ वगेरेनुं हिंदी भाषामां वर्णन हो.

जैन तिथिद्र्षण:--वीर संवत २४४० नी तिथिओ अने त्रतिवधानो एमां दर्शा-वेठा छे जे पोस्टेज०)०॥ बीडवाथी नीचेने टेकाणेथी मफत मळे छे. मास्टर दंर्यावसिं-हजी सोधीया, नशियांजी, इंदोर.

नैनेंद्र प्रक्रियाः-बनारससे पं. पन्नालाल बाकलीवालद्वारा प्रकाशित ' सनातन जैन अथमाला' (संस्कृत)नुं आ त्रीजुं पुस्तक छे, जेमां जैनेंद्र प्रक्रिया (न्याकरण)नुं पुर्वार्द्ध वर्णन छे. आखा प्रथनी किं. ०॥ छे.

સુંદ્રી સુધોધ:—અમદાવાદથી પ્રકટ થતું આ સ્ત્રીયાપયાગી જીતું અને જાણીતું માસિક હવે ખાસ સચિત્ર વધારા સાથે પ્રકટ થવા માંડયું છે. સેખા ઘણાજ ઉપયાગી ચર્ચાય છે. વધારા સાથે વાર્ષિક મુલ્ય રા.૩)છે.

૧ રૂપિકત્તા અથવા વશીકરણ મંત્ર, ર શ્રી સુભદ્રા, ૩ આત્મશક્તિના ઉત્તય, ૪ વનિતા વ્યાખ્યાનમાસા, પ જેન કર્શનનાં મુળતત્વા ૬ Shrimad Yushovijayji આ છ પુસ્તકાના પ્રકટ કર્તા મેસસ મેંઘછ હીરજીની કુંપની (પાય-ધુની મુખાઇ) છે, જેની અનુક્રમે કિંમત •)≯ •)⊅ •)⊅ •)> ગં અને ગ છે. આ સંવે પુસ્તકા વાંચવા લાયક અને છપાઇ સફાઇમાં સુંદર છે.

હું કી વાર્તાઓ ભાત્ર ૧ લો:-સરતું સાહીસ વર્ધક કાર્યાલય (અમદાવાદ) તરફથી રા. ૧ા ના વાર્ષિક મુલ્યથી દર માસે વિવિધ પ્રથમાલા પ્રકટ થાય છે તેનું આ ૩૫૦ પાનાનું ૩૪ થી ૩૬ મું પુસ્તક છે. જેની ધ્લુટક કિ. માત્ર ાતા છે. આ વાર્તાઓ રસીલી અને બાધદાયક છે.

શ્વે. સ્થાનકવાસી જૈન કેાન્ફરસ પ્રકાશ:—અજમેરથી પ્રકટ થતું આ પત્ર હવે પાક્ષિક થયું છે જેના આ પ્રથમ અંક છે. હિંદી-મુજરાતી બંન્ને ભાષાના સેખા ચર્ચાય છે. સ્થા. જૈન કાન્ફરંસનું પ્રેસ પણ નવું પાતીકું થયું છે તેથી હવે એ પત્ર નિયમાત થવા દરેક સંભવ છે.

पद्मसुकुमाबकी भाग पहिला:--प्रका-शक हीराचंद मलुकचंद (काका) सोलापुर कि. ०॥। आनो एमां जैन गायन समाज कृत बराठी पदोनो संग्रह छे.

कन्या-पनोरंजनः -आरा (Arrah)
से जोकारनाथ वाजपेथीद्वारा संपादित सचित्र
मासिक पनः वर्ष १. अंक १. वार्षिक मुल्य
रु. १। इस नवीन मासिकमें कन्याओंके
उपयोगी अनेक विषयोंका संग्रह सचित्र
पक्ट होता हैं. मासिककी छपाइ और सुंदरता
अच्छी है. और मुल्य भी बहुत कम है.

मनोरंजन (हिंदी):—आरा Arrah से मीश्री इश्वरीप्रसाद शम्मीद्वारा संपादित सचित्र और मनोरंजक हिंदी सार्वजनिक मासिक पत्र. वर्ष १. अंक १०-११. वा-विंक मुल्य र. २। है. इसमें बहुत अच्छे२ विषयोंका संग्रह रहता है. मासिककी छपाइ सफाइ बहुत ही सुंदर और आकर्षणीय है. सब हिंदी पाठकोंको अवस्य माहक होना चाहिये.

મુંભાઇ દિ. જૈન પ્રાંતિક કા-કરંસના રિપાર્ટ:—આ કાન્પ્રંસના વીર સં. ૨૪૩૮ ના આ બારમા રિપાર્ટ જોતાં જણાય છે કે હાલ પ્રબધ, જૈનમિત્ર, ઉપદેશખાતું, પરીક્ષાલય અને વરાડ જૈન શિક્ષાપ્રચારક સમીતિ આટલાં ખાતાં ચાલે છે. આશરે માત્ર રા. ૧૭૦૦૦નું કંડ છે. છતાં પણ કાર્ય સાર્ર ચાલે છે. એના મંત્રી બાલુ માણેકચંદજી બૈનાડા ઉત્સાહી હોવાથી હવે દરેક કાર્ય નિયન્મીત રીતે થતું જણાય છે. કંડ ન હોવાથી હાલ ઉપદેશકખાતું બંધ થયેલું છે જે સજન્વન કરવા માટે કંઇ રથાયી પ્રંડ થવાની અન્સંત જરૂર છે.

જ બ લપુર હિ. જૈન એ હિંગના રિ-પાર્ટ:—આ બાર્ડિંગના સન ૧૯૧૩ના આ સાતમા રિપાર્ટ છે, જે જોતાં જ આય છે કે એ વર્ષમાં કુલ્લે આવક રા. ૪૫૭૮) અને ખર્ચ રા. ૨૨૯૬ા થયા છે. તથા સ્વર્ગીય રોઠ નારા-યણદાસજી તરફથી રા. ૨૦૦૦૦) મકાન માટે તથા રા. ૩૫૦૦૦)ના ઇમારત બાર્ડિંગના ખર્ચ ચલાવવાને માટે મળી છે, જેથી હવે આ બા-ડિંગ પગલર થઇ છે.

મુનિ માહનલાલજી જૈનસે ટ્રલ લાય-ષ્યરી.—મુંભાઇની આ જાણીતી કરે. જૈન લાયબ્રેરી અને સંસ્કૃત પાંડશાલાના આ



हिंदस्थानना प्रजाप्रिय भने भला वाइसरॉय लॉर्ड हार्डिज भने तेमनां हिंमतवान बातुः



दक्षिण महाराष्ट्र जैन कोन्फरंसनी माहा मासमां स्तवनिधिमां भरायळी १५ मी बेठकना प्रमुख तथा बीजा आगेवान गृहस्थो.

आगळ बेटेला गृहस्थी—(१) प्रो. लहे एम. ए. कोल्हापूर. (२) रा. सा. पाटील बी. ए. मंत्री. (१) श्रीयुत वावगोंडा पाटील अध्यक्ष, स्वागत कमिटी. (४) दानवीरशेठ माणेकचंदजी जे. पी. मुंबाई. (५) शेट रामचंद्र नाथारंगजी. अध्यक्ष. (६) रा. सा. चौगुले वकील, बेलगाम, (७) रा. सा. संगण्या अंकले-बेलगाम. (८) श्री. सन्माने. (९) श्री. धावते, सांगली.



शेट गुलाबचंद हीरालाल-धुळीआ महाराष्ट्रीय खंडेलवाल दि, जैन पंचमहासभानी गोदे गांवमां भरायली बेठकना प्रमुख.



सिद्धक्षेत्र श्री पावागट उपरना दुर्घाओं तळान आगळना मंदीरनो देखाव.

c. s. p.

૧૯૧૨-૧૩ના ત્રીજો રિપાર્ટ જોતાં જ શુપ છે કે આ લાય છે. સ્થાયીક ડ લગભગ રૂપ્યા પાણા લખ થઇ તેનું પાકું ટ્સડીડ થયું છે. આ વર્ષમાં ૬૦ વર્તમાન પત્રા આવતા હતા અને હવે ૪૭૨૨ પુસ્તકાના સંગ્રહ થયા છે, જેમાં ૧૫૬૨ જેન ધર્મનાં છે. એ વર્ષના ખર્ચ આશરે રા. ૨૧૦૦) થયા છે. એક દરે આ લાય હેરી મું બાઇમાં એક અતિ ઉપયાગી ખાતું નીવડયું છે અને એવીજ એક માટી લાય હેરી દિ. જેના તરફથી મું બાઇમાં સ્થપાવાની અત્યંત જ ૩૨ છે.

છાલાપાલા મરીમસાલા:-ભાગ ૧લો (આવૃતિ ખીજી) લેખક અને પ્રકાશક ડી.પી. માદનની કુંપની દ્વા વેચનાર (કણપીક, સુરત) કિ. રા. ગાા લગભગ ૧૫૦ પાનાનાં આ ગુજરાતી પુસ્તકમાં દરેક વનસ્પતિના ઉપયોગ કયા કયા દરદા ઉપર કેવી રીતે થઇ શકે છે, તેનું કમાવાર નામ સાથે અ સુધીનું ૨૫૦ વનસ્પતિનું વર્ણન છે તથા દરદે નું પણ કડ્ડાવારી લીસ્ટ આપેલું છે. દેશી વનસ્પતિ દેવા કેવા ઉપયોગી ગુણા ધરાવે છે, તે આમાં સ્પષ્ટ દર્શાવેલું છે. એકંદરે આ પુસ્તક સ્થવા પાછળ આ બાઇએ પુષ્કળ જહેમત ઉદાવેલી જણાય છે. દરેક જણે આ પુસ્તક મંગાવીને વાંચવા અને સંગ્રહ કરી રાખવા યોગ્ય છે.

મુંભાઇ સમાચારનું પંચાંગ:-મુંબા-દથી 'મુંબાઇ સમાચાર'નું સાર્વજનિક ઉપયોગી પંચાંગ ઘણાં વર્ષોથી પ્રકટ થાય છે, તેની આ ૧૯૭૦ની ૧૦૦માં આવૃતિ છે. પૃષ્ઠ ૨૦૦ અને કિં. માત્ર ૦)≈ા છે. એ વર્ષ થયાં એમાં વિશેષતા એ થઇ છે કે જૈનોના વીર સંવત તથા દિ. જૈનોના તહેવારા બીલકુલ છપાતા નહોતા તે હવે અમારી સુચના ઉપરથી પ્રકટ થવા માંડ્યા છે. પુંદા ઉપર પણ વીરસંવત ૨૪૪૦ છાપના જણાય છે. અમાન દેવન ચાવી સી:— સુરતનિવાસી ઝવેરી માણેકલાલ ઘેલાલ કંદારા લીખીત અને પ્રકાશિત આ ૨૫૦ પાનાંના રા. ૧)ના પ્રધ્ય કંકુળાઇના પુષ્યાર્થે બેટ મલ્યો છે, જે સાલાર સ્વીકારીએ છીએ. એમાં ધ્વે. આન દેવનજી મહારાજકૃત વીતરાગ સ્તુતિ શબ્દાર્ઘ, ભાવાર્થ અને પરમાર્થ સાથે વર્ણવેલી છે.

—->>≪-विविध वर्तमानः

->>€<--

એકને બદલે અનેકને ઘાંટાઃ-હ્રિંદ-રથાનમાં આજ કાલ **દેશી એકાની** સ્થીતિ દયામળી થઈ પડી છે. પ્રથમ પંજાબની પીપદસ એ'ક લાંગી, તેની સાથે પંજાબની એ ત્રણ એ કા ભાંગી ત્યાર બાદ મુંબાઇની ક્રેડીટ: બાેમ્બે બેકીંગ કંપની, કાઠીઓવાડ બેંક વગેરે ભાંગવાથી હીંદસ્તાનની પ્રશ્નમાં હાહાકાર વર્તાઇ લાખા મનુષ્યાના રૂપ્યા અત્યંત જોખ-મમાં આવી ગયા છે અને એ'દા ઉપરથી લાકાના વિશ્વાસ ઉઠતા જાય છે, જેની અસર બધા વ્યાપારાને લાગી છે અને મુંબાઇ**માં** અતેક કંપની અને પહેડીઓએ દ્વાળાં કાઢયા છે અને અનેક દેવાળાંતી છુમાં દીન પર દીન ચાલુજ છે, <mark>જેથી આ મામલા ક્યારે</mark> શાંત થશે તે કંઇ સમજાતું નથી! નખળીના છાંટાં દેશી કે કુરાપીઅન સારી સ**હ**ર બે કાને પણ ઉડ્યા છે અને હાલ તા બધીજ છે'કામાં નાઓ ઉપાડવા કે વસુલ કરવા સિવાય કંઇ પણ કામ (બીઝનેસ) થતું જણાતું નથી. એકને પાપે વહાણ ડુએ તે આનું નામ!

આપી **દુનીયામાં** મુસલમાતાની કુલ્લે વસ્તી ૧૭૫ કરાડની છે, જયારે જૈના ૧૭૫ લાખ પણ નથી!!

દાની સ્ત્રી:-પ્રયાગની એક કાયસ્થ સ્ત્રીએ પાતાની જ્ઞાતિમાં વિદ્યા પ્રચાર માટે રૂપ્યા પાંચ લાખનું દાન કર્યું છે.

खास अङ्के च्रित्रोंका परिचय।

इस सचित्र खास अङ्कमें जिन २ त्यागी, श्रीमान्, विद्वान्, और सार्वजनिक जैन संस्थाओं के चित्र प्रकाशित किये हैं उन सबका परिचय देना आवश्यक समज कर हम यहांपर उनका संक्षिप्त परिचय देते हैं।

(१) पद् लेइया स्वरूप।

माया कोध अरु लोग मद, हैं कषाय दुःखदाय । तिनसे रंजित भाव जो, लेक्या नाम कहाय ॥ षट्लेश्या जिनवर कहीं, कृष्ण नील कापोत । छड्डीं शुक्रल, परिणामहि ते होत ॥ काठियारे षट्भाव धर लेन काष्ठको चाले भूखे हुए, जामन वृक्ष कृष्ण वृक्ष काटन चहे, निल ज काटन लघुडाली कापोत उर, पीत सर्व पद्य चहै फल पक्वको, तोइं खाउं शुक्ल चहे धरती गिरे, लूं. पके निरधार ॥ जैसी जिसकी छेश्या, तेसा मिले. श्रीसद्गुरु संगति मनका

पुत्र वांचको ! आ चित्ताकर्षक अंक ना मुखपृष्ठ उपर तमो जे एक शुशोमित रंगीन चित्र जोइ रह्या छो, ते एक साधा-रण रमत गमतनुं चित्र नथी, परंतु तेमां घणुंज मार्मिक अने धार्मिक बोधक रहस्य समायलुं छे अने ते जाणवानी दरेक वांच-फने उत्कंठा थाय ए स्वाभाविक छे माटे तेनो दुंक परिचय आपवो योग्य धा-रीए छोए.

आ संसाररुपी गहन समुद्र अनेक द्रव्यथी भरेलो छे, जे द्रव्य छ प्रकारना छे. जीन, पुढ़ल, धर्म, अधर्म, आकाश अने काळ. जीवनुं मुख्य लक्षण चेतन छे अने चैतन्य गुणने लीधे तेने अनेक सारां नरशां कर्म उपार्जन करवानो प्रसंग मळे छे. सारां कमों करवाथी शुभलेश्यानो बंध थाय छे अने दुष्ट के हलकां कार्यों करवाथी अशुभ लेश्यानो बंध थाय छे. संसारी जीवोनी पुंठे हमेशां कषायरुपी चतुर चोरो लागेलाज रहे छे अने तेना मुख्य अनुचरो क्रोध, मान, माया अने लोभ आत्माने अनिष्ट कार्यो करवानी भेरणा करावे छे. हवे ए अनिष्ट कार्य करती वस्ततना आत्माना सारा के नठारा, खुशी थवाना के दिलगीर थवाना जे भाव (पारणाम) तेने लेक्स्या कहे-वाय छे. अने ए लेक्स्याना छ प्रकार कृष्ण [काळी], नील (गळीनो रंग), कापोत (कबु-तरना रंगनी), पीत (पीळो), पद्म (कमळना रंगनी) अने शुक्ल (सफेद) ए प्रमाणे छे.

आज छ प्रकारनी लेक्यानुं स्वरुप दर्शावनारं चित्र छे अने तेनी संपूर्ण समजण सहेलाईथी पडे, ए हेतुथी एक द्रष्टांतरुपे छ कटीयारानी वार्ता शास्त्रका-रोए नीचे मुजब वर्णवेली छे—

'एक समये छ कठीयाराओ पोताना उदर निर्याह माटे लाकडां कापवा जंगलमां गया. जंगलमां विशेष फरवाथी, महेनत करवाथी अने समय अधिक थवाथी तेओने भुख लागी. आ समये तेओ पासे खावानुं कंई निह होवाथी खोराकनी शोध करवा लाग्या. देवयोगे तेओने एक जांबुनुं हक्ष नजरे पड्युं अने तेना उपर असंख्य जांबुओ लटकतां हतां. आ जोई एक कठि-यारो बोल्यों के, माईओ, जुओ छो शुं १ ए झाडने थडमांथी कापी नांखीए के जेथी तमाम फळ आपणने मळशे. बीजो कहे के एम निह, आपणे आखा झाडनो नाश करवानुं शुं काम छे १ फक्त मोटां मोटां मोटां

हाळां कापीठ्यं एटलेज तमाम फळ नीचे पडशे. बीजो कहे एम नहिं, मोटां डाळानुं आपणे युं काम छे ? फक्त जे ढाळी उपर जांब छे तेनेज कापीशं तो फळ मळशे. चोथो कहे, पण डाळी कापीनें आपणे द्यं काम छे ? आपणे तो मात्र जांबुनुंज काम छे माटे फक्त जांबुना झप-खाज तोही लेवा. आ सांमळी पांचमो बोल्यो-अरे! पण वधां काचां अने पाकां सर्वे जांव तोडवाथी आपणने शो लाभ ? आपणे तो फक्त खावा जेवां पाका जांबुज तोडी लईशुं, तो बस थशे. आ प्रमाणे पां-चेना जुदाजुदा विचारो सांमळी छहो कठीआरो के जे शांत मनवाळी अने सारा नरसानो विचार करवावाळो हतो. तेणे विचार्य के मारे आखा झाडनुं, डाळीनुं, तमाम जांबुनुं के पाका जांबु तोडीने शं प्रयोजन छे ? आ वधा जे कापकुप के तोड-फोड करशे तेम करतां जे जांबु भौंय पर भीचे पढशे तेमांथी पाकां बीणीने खाईश. तो बस थशे.

आ प्रमाणे जुदाजुदा भावने धराव-नारा छ कठीआराओनुं चित्र आप सन्मुख रजु छ अने ते छए जणा पोतान। धारेला विचारने अजमाबी रहेला देखाय छे. इवे जेनो जेवो भाव, तेवुं तेने फळ! पहेला कठीआरानुं कार्य कुष्ण छेक्यानो, बीजानुं नीळ छेक्यानो, लीजानुं कापोत छेक्यानो, चोथानुं धीत छेक्यानो, पांचमानुं प्रा है- क्यानो अने छट्टानुं शुक्छ हेदयानो बंघ बांधनारं छे. दरेक कार्य करती वस्तते शुभ अशुभनो विचार करवानुं ज्ञान राखवुं एज चैतन्य द्रव्यनी सार्थकता छे अने एवा शुभ विचार प्राप्त थवा माटे सद्झाननी जरुर छे, परंतु सद्गुरु विना एवं ज्ञान मळवुं मुक्केल छे माटे हंमेशा सद्गुरुनो सत्संग करवो जोईए, अने तथी अनेक जातनां कर्म बंधनो छुटवानो, धर्मनो मर्म अने मर्म जाणवानो तथा अज्ञानरुपी अंधकारनो नाश थवानो अवसर मळी शके छे.

(२) तीर्थकरकी माताके पोड़श स्वप्तः— गर्भमें आनेके पहिले तीर्थकरकी माताको रात्रिके पीछले पहरगें जो १६स्वप्न मालम होते है। उन्हीं १६ स्वप्नका अलग २ चित्र, तीर्थकरकी माताका कृत्रिम चित्र स-हित इस चित्रमें दिख रहा हैं। स्वप्नोंका अलग२ नाम इस प्रकार है—१ हस्ती, २ बेल, ३ सिंह, ४ लक्ष्मी, ५ दो माला, ६ चंद्रमा, ७ सूर्य, ८ मीनयुगल, ९ दो कंचन कलश, १० सरोवर, ११ समुद्र १२ सिंहासन, १३ देविवमान, १४नाग-भवन, १५ रत्नराशि, १६ निर्ध्म अभि।

मातंग गो हिर रमा वरदाम चंद्र। मार्तंड भीन घटयुग्म तडाग वर्धि॥ सिंहासना वरविमान फर्नोद्रगेहा। रत्नप्रयाय दहना रजनी विरामे॥

(३) श्रीमान त्यागी ऐलक पन्नाला-रुशी महाराज:-आपका चित्र और परी-चय गत वर्षके खास अंकमें भी दिया गया था इस लिये फिर विशेष लिखनेंकी आव-इयकता निहं है। सारी जैन समाज आप को अच्छी तरहसे पिछानती है। यह फोटो गत वर्षमें जब आप स्रत प्यारे थे तव चंदावाडीमें लिया गया था, वही नवीन फोटो है। आपने चातुर्मास टोंक (जयपुर) में पूर्ण करके इस मासमें नवाई नगरमें केशलांच किया था जब सहस्रों जैन अजैन बंधुगण उपस्थित थे और वैरा-ग्यहश्यका अपूर्व्व महात्म्य प्रकट हो रहा था। ऐसेही त्यागिओंकी आवश्यकता दि-गम्बर जन काममें है।

(४) नामद्र वाइसराय छोट हार्डिज और आपकी सुयोग्य पिन छेडी हार्डिज:— गत वर्षमें नवीन देहली प्रवेश उत्सवके समयमें अपने न्यायी और शांतरवभावी वाइसरोय साहव प्राणघातक अकस्मातमें से बच गये थे जिसके उपलक्ष्यमें सारे हिंदुस्ता-नमें आनंदर मनाया गया था, इस लिये हमने भी उसी आनंदके लिये आपका चित्र इसी खास अंकमें आपकी धैर्यशील पत्निके चित्र सहित प्रकट किया है।

[५-६-७]दक्षिण महाराष्ट जैन को-न्फरन्स-स्तवनिधिकाश्रुप, शेठ गुलावचंद हीरालाल-धुळीआ और पावागढ तीर्थके एक मंदिरका दृश्यः-इन तीनों चित्रोंका परिचय फोटोंके साथमें दिया गया है।

(८) श्रीमान शेठ कल्याणमळजी बेंकर-इंदोर सीटी:--आपका जन्म सं. १९४२ मे हुआ था. आप अफीमके व्यापारीयोंमें

प्रसिद्ध व्यापारी और वेंकर भी है। आपके पिता शेट तीलोकचंदजीका स्वर्गवास सं. १९५९ में होनेपर आपने अपना ध्यान व्यापारकी तरफ आकर्षित किया और अपने पिताकी कमाई हुई सम्पत्तिको थोड़ेही सम-यमें अपने उद्योग द्वारा कईगुणी बना दी। आपने अपनी सुकृतकी कमाईमेंसे प्रथमही सं. १९६२ में उज्जैन शहरमें १ प्राचीन मंदिरका जीर्शोद्धार कराया, जिसमें करीच रु. १०००००) व्यय करके जैन धर्मकी प्रभावना की। स्वयासमे (ईदोरमें) एक पवित्र (देशी) औषघालय भी खोल रक्ता है, जिससे सर्व साधरणको असाधारण लाभ होता है, इसके अतिरिक्त एक हिंदी पाठशाला भी आपही की ओरसे चल रही है, जिसमें करीब १२५ विद्यार्थी विद्याध्ययन करके शेठजीको अमीत आशीर्ष दे रहे हैं। इन सर्व कार्योंसे महत्वतापूर्ण कार्य जिसकी कि वर्तमानमें अतीव आव-श्यकताथी उस कार्यके लिये आपने रु. ७५०) मासिक आमदनीका मृल धन [अंदाज रु. २०००० से भी ज्यादे देकर एक जैन हाईस्क्रक खोलनेका हद संकल्प किया है, जो कि थोड़े ही समयमें खुलने-वाला है। इस कार्यके लिये जैन समाज शेंठजीकी बहुत समय तक ऋणी रहेगी। सिर्फ अपनी समाजको ही नहीं, वरन् सा-र्वजानिक अन्य संस्थाओंको भी बडी२ रकमें प्रदान की है। हालमें रू.५००००) किंड

एडवर्ड होस्पिटल इंदोरमें औषधिदानके लिये दिये है। इन कार्योसे आपकी उदा-रता, दानवीर्यता पवलिकको भली भांति माछम होसकती है। आपने और भी छोटे मोटे अनेक कार्य किये है जो कि स्थाना-भावसे यहां प्रकाशित नहीं किये जा सकते है। आज तक जैन समाजमें किसी भी आप जैसा बडा विद्यादान नहीं किया है इस लिये हमारे हर्षकी सीमा नहि हैं और इसी हर्षके उपलक्ष्य में एवं आपके महत्वपूर्ण कार्यका अनु-करण अन्य श्रीमान् लोग कर सके, इसी हेतु से आपका प्रभावशाली फोटो विशेष स्वर्च उठाकर रंगीन कलरोंमें प्रकट किया है और आपका एक बस्टै फोटो 'जैन पंचागर्मे भी सामिल किया है। हमारी यही मनी-वांछा है की श्रीमान् शेठ कल्याणमलजी दीर्घा-युषी होकर इससे भी अधिक जैनजातिके उद्धार का कार्य करें और आपका अनु-करण अन्य श्रीमान भी करें।.

(९) श्रीमान दानवीर शेठ हुकमचंद नी साहेव—ईदोर--आपका सचित्र
परिचय महासभाके समेदिशिखर पर अधिवेशनके समय प्रकट किया गया था
इससे आपसे सारी जैन समाज अच्छी तरहसे
परिचित है। आपने अपनी स्थापित ईंदोर
की बोर्डिंग और धर्मशालाके लिये रुपैपा
५५०००) और ऋषम ब्रह्मचर्याश्रमका ध्रुव
फंड स्थापित करनेके लिये रु. १०२००)

का दान अभी ही किया है। आपने रु. १०००००) खर्च करके ईदोरमें नवीन सुशोभित मंदिर बनवाया है जिसकी प्रतिष्ठा भी आपकी तर्फसे होनेवाली है। विद्यादान की तरफ आपका लक्ष्य ज्यादे बढ़ता जाता है। आगे आपने रु. १००००) महासभाके प्रबंध खाताके ध्रुव फंडमें दिया था और अभीके मथुराके अधिवेशनमें भी रु. २५००) महासभाने प्रति दानवीरताकी कदर करके महासभाने आपको 'दानवीर' की उपाधिसे विभूषित किया है। आप चिरायु होकर इससे भी ज्यादे दानपूण्यका कार्य करें और विशेष सन्मानके पात्र हों, यही हमारी मनोका-मना है।

(१०) भारत दिः जैन महाविद्यालय [मथुरा] यूप फोटोः--दि. जैन महासभाकी ओरसे इस महाविद्यालयकी स्थापना अनुमान १६ साल हुए मथुरामें हुइथी जिसने प्रथम तो बहुत कुछ उन्नति बीचमें सहारनपुरमें प्रस्थान करनेसे वहां आशातीत उन्नतिके स्थानमें कुछ अवनति हो जानेसे महाविद्यालयको सन् १९०५में फाशीके स्याद्वाद महाविद्यालयके साथमें ंमिला दिया था, भरंतु अब गत वर्ष ता० १९--१--१३से किर अपनी जन्मभूमिमें ं**महाविद्या**लय काथम कर दिया गया है; जबसे महाबिद्यालय उन्नति पथपर आरुढ हुआ है, अभी इसमें ४० छात्र आरामसे अद रहे हैं और सब तेरहका अच्छा प्रवंप

है प्रबंधकर्ता जीम प्रमुख रा. ब. पं. शेठ मेवारामजी (खुर्जा), मंत्री श्रीमान श्रीमंत शेठ मोहनलालजी खुरइ और उपमंत्री मुन्शी मृलचंदजी वर्काल (मथुरा) है। इस ग्रुपमें नीचेकी तीन लाइनोंमें विद्यालयके उपस्थित ३९ छात्र एक्सी हेसमें विद्यालयम कर रहे हैं। ऊपरकी लाइनमें कर्मचारीगण है। बीचमें सुप्रीन्टेन्डंट बाबू पत्रालालजी चौधरी है, उनकी बांइ ओर प्रधानाध्यापक पं. जवाहरलालजी शास्त्री हैं और दाहिनी (राइट) ओर अंग्रजी मास्टर बाबू शीतल-प्रसादजी है और शास्त्रीजीकी बांइ ओर आनरेरी मुनीमीका काम शिखानेवाले लाला गुलाबचंदजी है। इस विद्यालयमें सब भाइओंने हर प्रकारसे सहायता करते रहना चाहिये।

(११) स्वर्गीय भट्टारक श्रीविशालकीर्तिभी [लात्र]:—आपका जन्म शेतवाल जातिमें हुवा था। आपके पिता हरीभाऊने पुत्र सर्जाव न रहनेके सबबसे बचपनसे ही आपको, आपके पूर्वाश्रमी मट्टारक नागेंद्र-किर्तिकी गद्दीको समर्पित किया था। लगेतिया नार्या पांगलने लात्रके पट्टपर परंपराकी रीर्तिसे अभिपिक्त किया था। जोतिया तात्याके स्वग्नर्थ होनेके बाद उनके पुत्र अनंतराजजीने आपको पं. त्रिजम्मणके पास लगमग ८—१० वर्ष तक संस्कृतका तथा धर्मशास्त्रका शिक्षण दिलाया। आपकी बुद्धि तीत्र होनेसे शिव्रही आप संपूर्ण विषयमें पारंगत हुए। योग्य वयोमान प्राप्त होनेपर

पंचींने आपके हाथमें गद्दीका तथा समाजके हितचितनका कार्य सोंप दिया। आप सदैव प्रान्तोपान्त परिश्रमण करके धर्मघोषणा देते थे और पहिले जमानेके अनुसार समा-जमें धर्मजागृति करते थे । लोगोंका मिथ्यात्व नष्ट करनेके लिये आप बहुतही परिश्राम करते थे। आप संस्कृत भाषाके पंडित और धर्मग्राम्बके स्योग्य ज्ञाता थे। आपका डॉ. भांडारकर, घो. पाठक महा-शय जैसे विद्वानोंके साथ हमेशा म्नेह रहता था और वाक्रमयके ऊपर हमेगा बादविवाद होता रहता था। जैनेतर पंडितांमें भी आपकी मान्यता अधिक थी। ब्राह्मण पंडित आपका धर्मज्ञान देखके मुग्ध रहते थे। आपने संस्कृत भाषामें भगवन्नेमिनाथ तीर्थंकरकी पूजा बनाई है जो बहत ही साहिस्यचातूर्यपूर्ण है। आप पूर्वपद्धति-के अनुसार म्याना, पालखी, आदि रखते थे और उसीमें सवार होकर अन्य प्रांतमं धर्मोपदेशके लिये विहार करते थे। आप-का प्रभाव देखकर जैनेतरमें भी आपकी बड़ी भारी प्रशंसा हुआ करती थी। आप नागपूर, मध्यप्रांत, वन्हाइ, महाराष्ट्र, मोगलाई आदि प्रांतोंमें रेलके अभाव के कारण पैदलसे विहार किया करते थे। आपकी गदीका स्थान नागपूर और हातूर है।

आपकी दिनचर्या मी अनुकरणीय थी। प्रातःकालपर स्नार्क बाद आप जिनेंद्र भगवानकी तीन घंटे तक पूजा व

स्वाध्यायादि प्रभावना करते थे। बाद आहार लेते थे। कुछ विश्रांतिके आप १-२ घंटे तक धर्मशास्त्र देखते थे। सायंकाल पर फिर सामायिकादिके बाद १-१॥ घंटे तक शास्त्रसभा करते थे। संस्कृत शास्त्र आप स्वयं पढते थे। गायन भजन-पृजन-विधान महोत्सवादिके करनेमें आपका बड़ा प्रेम था। नागपूरमें कारंजाकी गद्दीके भट्टारक होनेके समयपर स्वर्ग व्यालाब सावजी नागपुर निवासीने आपके हस्तसे तेराद्वीपका विधान कराया था, जिस समय आपकी चारों तरफ बहुत ही प्रशंसा हुईथी एकवार लगभग ४–६ सौ लोगोंके साथ एक बड़ा भारी संघ निकालकर आप सम्मेदजि-खरजीकी यात्राको पधारे थे, उस समय आपका आरामें कुछ दिनों तक संघके साथ निवास हुवा था। आप कट्टर वीस-पंथी होनेसे वहांपर आपका बहुत ही गौरव हुआ । श्रीमान् राजाबावृ, और बाबू देव-कुमारजीके पिता आदि आरा निवासी धार्मिकोने आपका वहुत आदर किया था। आपके प्रधान परामर्ष दाता-स्वर्ग ० अनंतराज पांगल, स्वर्ग. लालचंदभाई पुना, काशी-नाथ रामचंद्र वुबणे सोलाप्र और शेठ हिराचंद नेमचंद सोलापृरवाले भी थे।

पुराने जमानेके अनुसार आप शंक-राचार्यके माफक धर्म साम्राज्यके अधिपति [राजा] गिने जाते थे अतएव आपका वेषमी उसीके अनुसार था। जगह जगह-पर मंदिर बनवाना, प्रतिष्टा करना, सिद्धा- न्त शास्त्र लिखवाकर प्रसार करना, मिथ्या-त्व नष्ट करना, धर्मकी प्रभावना पुजादिक करके बढाना यह ही आपके जीवनका **सस्य कर्तव्य था।** आप अंतसमय पर ट्स्टीपंचोंके नामसे व्यवस्था करके शके १८७५ सं. १९६० को शुभध्यानमें स्व-र्गस्थ हुए उस समय आप लगभग ४० ४१ वर्ष के थे। आपकी गही आजतक स्वाली है। हर्षकीर्ति, पं. रामभार्ज, वाल-कृष्ण आदी को आपके गद्दीपर विठानेकी पंचोनें व्यवस्था कीथी लेकिन् वेही स्वयं पदच्यत हो गये ! आज जमाना विलक्क बदल गया है और योग्य पुरुपके विना पंचोंने किसीको भी इस पुज्य स्थानका अधि-कार नहीं देना यह हमें उचित मालुम पड़ता है।

(१२) स्वस्ति श्री वीरसेन स्वाधी
भट्टारक (कारंजा):-सेनगण गच्छनी
गादीना आ विद्वान् अने गुद्धाचरणी
भट्टारकनो जन्म कर्णाटक प्रांतमां पंचम
ज्ञातिमां थयो हतो जे वखते एमनुं नाम
चंद्रमा अथवा चंद्रच्या हतुं. तेओ मुड
बाइना भट्टारक चारुकीर्ति अने श्री ब्रह्मा
सुरी शास्त्री पासे अध्ययन करी घणुं सारं
ज्ञान मेळच्या पछी दक्षिणना प्रवासे नीकळेला तेवामां धरणगाममां पंतन सुखदासजीनी मुलाकात थतां तेमणे एमनी विद्वत्ता
जोईने विचार्युं के सेनगण गच्छनी कारंजानी
गादी १५ वर्षथी खाली छे ते ऊपर एमने
बेसाडवामां आवे तो योग्य थाय, जेथी ए

बाबत एमने विनति करतां ते एमणे कबुल कर्युं. जे पछी एमने सं. १९३६मां कारं-जामां भट्टारक देवेंद्रकीर्ति द्वारा बालासा मोतीसा द्वारा कारंजानी गादी उपर पट्टा-भिषेक थई एमनं नाम बीरसेन राखवामां आव्यं. महारक थवा पछी एमणे अभ्यास चालु राख्या, जेथा आजे एओ न्यान्य, काच्य अने अध्यास्म शास्त्रमां सारा पारंगत थया छे. प्राचीन जैन ग्रंथो तरफ एमनो प्रेम विशेष छ तमज तेओ विद्वान होवा साथे विरक्त पण छे. आ भट्टारकजीनी विद्वत्ता माट सोलापुर निवासी जाणीता विद्वान अने श्रीमान शेठ हीराचंद नेमचंद दोशीए एक वखते जैन बोधकमां उत्तम अभिपाय प्रकट कर्यो हतो. [आ महारफजी दीर्घायुपी थई जैन समाजनं कल्याण कराे. आवा सुयाेग्य अने सुआचरणी महारकोनोज प्रभाव पडे छे. विद्वता अने आचरणनी खामीने छीघे हाल गुजरात बग-रेना केटलाक भट्टारकोनो प्रभाव घटतो जई लोकोनी श्रद्धा महारकोपरथी ओछी थती जाय छे माटे भट्टारकनी गादी ऊपर तो जे योग्य विद्वान् पुम्त उमरवाळा अने सुआचरणी होय तेनेज वेसाडवानी जरुर छे. दोडादोडी करी अयोग्यने बेसाडी देवाथी पाछळथी अनेक अनुशी उमन थवानो भय रहे छे.]

(१३) ब्रह्मचारी हेमसागरजी महा-राज:-एमनो जन्म वीसा मेवाडा ज्ञातिमां ___57?___



श्रीमान शेठ तीलोकचंदजी कल्याणमलजी बेंकर- इंदौर

SHRIMAN SHETH THORCHANDS KALYANMALDI. PANKER & BRUM MERCHAN! INDOBE 1279

(खंगमें ' तीलेकचद् नेन हाइस्कृत ' खालनेके लिये क. २०००००) देनेवाले विद्याप्रमी नररत.)

सं. १९०५ मां करमसद [खेडा]मां थयो हतो. पितानं नाम रुघनाथदास अने एमनं प्रथम नाम रणछोडदास हतं. सं.१९५०मां पिताना मृत्यु पछी एमने वैराग्य उत्पन्न थयो जेथी १९५२मां करमसदनी प्रतिप्रा वखते दिक्षा लेवा तैयार थया. पण संबं-धीओना विक्षेपथी तेमां फाव्या नहि, जेथी वे मास पछी गामपीठ [सागवाडा] मां जई त्यां भट्टारक कनककीर्ति पासे जर्ड दिक्षा लीधी हती. एमनं शास्त्रज्ञान साधारण छे, छतां अनेक स्थळोए अमण करी धर्मापदेश आपी अनेक जैनोने वत नियमो लेवाडे छे. एमणे छेलो चतुमीस वारामती [पुना] मां कर्यो हतो. एमनी अवस्था हाल ६५ वर्षनी व्रह्मचारी अवस्थानी साते प्रतिमानी किया बराबर रीते पाळवाने आपने अमो आम्रहपूर्वक विनंती करीए छीए.

(१४) ब्रह्मचारी श्रीशांतिकसञी (मलकापुर):-एमनो जन्म खंडेलवाल ज्ञा-तिमां भरतपरमां सं. १९२३मां थयो हतो. एमणे शास्त्रनुं ठीक ज्ञान मेळव्युं छे. एओए वैदकनुं ज्ञान मेळवी पांच वर्ष सुधी वैद-कनो धंधो करवा पछी मातानां मरणथी संसारमां उदासीनता आववा लागी जेथी पछी सं. १९६४मां मलकापुरमां वेशी प्रतिष्ठा प्रसंगे देवेंद्रकीर्ति पास भद्रारक ब्रह्मचारीनी दिक्षा लीघी एओ हती. धर्मोपदेश सारी रीते आपी जाणे छे जेथी एमना उपदेशनी सारी असर थाय छे अने अनेक जणो त्रत नियमो हे

छेल्छं चोमासं एमणे मलकापुर (बुरुडाना) मांज कर्युं हतुं.

(१५) राय बहादुर श्रीपान श्रीमंत शेठ पुरनसाहजी-सीवनीः-आपका सं. १९१८में नागपूर जीलेमें जातिमें नत्थुसाहजीकी गृहलक्ष्मीसे हुआ था । आप समयानुसार साधारण महाराष्ट् विद्या प्राप्त करके व्यवसायमें उद्यमी हो गये थे क्योंकि पिताजी स्वल्प द्रव्य के साधारण अहस्थ थे। आपकी सतरहवें वर्ष की आयुर्ने पिताका मृत्य होनेसे और अन्य सहायक न होनेसे आपको बहुत विपत्ति पड़ी, तब कर्मयोगसे सिवनी निवासी श्रीमान श्रीमंत शेठ गोपाळसाइजीने (जोकि नत्थ्रसाहजीके आता थे) सन्तान न होने के कारण सं. १९३६में आपको दत्तक पुत्र बनाया । आपने १९५६में दुर्भिक्षके समयमें पर मास पर्यंत अनाथों को भोजन दिया था और उसी वर्षमें आप स्युनीसी-पल मेमबर और १९५७में काउन्सील के मेम्बर नियत १९५८में आपने सिवनीमें नवीन मंदिर निर्माण कराकर गजरथ प्रतिष्ठा की, और उसी वर्षमें आपने स्वर्गीय शेठ नेमीचंदजी छत्रपति के नामपर एक धर्मशास्त्रा सीव-नीमें बनवाइ और आप म्युनीसीपळ वाइस पेसीइंट नियत हुए। उसी वर्षमें आपने सम्भेद्रशिखरजीकी यात्रा की और वहां धर्म प्रभावनाके हेत्र नवीन जिन भवन निर्माण करनेका मुहुर्त किया, फिर सं. १९६६में

सम्मेदशिखरजी पर 80000 नरनारीयोंको इकत्रित करके और महास-भाका वार्षिक अधिवेशन कराकर गुजर्थ मतिष्ठा बढ़े समारोहके साथ की. हमभी उसी मेलेमें सामिल हुए थे। उस समयका अपूर्व दुश्य और आनंद अवतक याद आता है. आपने सभी ४०००० यात्रीओं-का यथोचित विंधिसे सत्कार करके सब पकारका प्रबंध वहां कर दिया था. १९६७में खप जीला स्कूलके प्रेसीइंट नियत हुए । सं. १९६९में अपने मंदिरका हिसान जो २५ वर्षसे पड़ रहा था उसको पंचोंके सामने प्रकट करदेनेसे उसी वक्त रु. १००००) और वस्त्राभरणसे मंदिरजीका कोष पूरित हुआ था। गत वर्षमें आप सेंट्रबंक सीवनी के प्रसीडंट होने के अति-रिक्त आपको बादशाह पंचम ज्योर्न के जन्मदिन के उपलक्षमें राय बहादूरका पद पाप्त हुआ है। आप स्रक्षाधीश होनेपर अठारइ गामोंके स्वामी है. आपको अनेक **धन्य गाद** है कि आप सरछ स्वभाव द्वारा राजाका, प्रजाका और जातिका यथासम्य यंथोचित उपकार करके उसके फलको प्रति-वर्ष प्राप्त हुवे, परंतु इस वर्ष के फलकी समनामें वे तृणवत् है क्योंकि ऐसे तो आप हमारी जातिके राय बहादुर तो क्या वरन राजा महाराजा भी कहे जाव तो थोड़ा है, परंतु इसमें संदेह नहीं कि सर-कार बहादुरने इस वर्ष राय बहादुरिका

पद प्रदान कर सुवर्णमें सुगंध कर दी है अतएव आशा है कि शेठ साहब अब और भी अपने मार्गको उन्नतिपर पहुंचा कर हम लोगोंको वर्तमान की अपेक्षासे अधिक महत्वता प्राप्त करनेकी चेष्टा करेंगे और इस हर्षमें आवश्यक जैन संस्थाओंकी आवश्यकाओंको पूर्ति कर यशके मार्गी बनेंगे.

(१६) राय वहादुर शेट नेभीचंदजी, अजिपर:—आपका घराना खंडेलवाल श्रावक कुलमें श्रेष्ट माना जाता है, कारण आप लक्षाधिपति होने के अतिरक्त आपके घरानेमें धर्मक्चीभी अनुकरणीय है। देखिये, पहिले आपके स्वर्गवासी पिता राय बहादुर सेट मूलचन्दजी साहिबका कुछ थोड़ासा हाल मुनीए.

१ शहरमें एक "महापृत चैत्यालय" मंदिर तयार करवाया है, जिसमें अलवर, जयपुरके कारीगरोंने अति मनोज्ञ काचका काम बनाया हैं और उपरकी मंजिलमें समयसरणकी रचना तथा सरस्वती मंडार में करीब २०० प्रकारकी संस्कृत प्राकृत भाषा बचनका की अनुमान ६०० पुस्तकें विराजमान हैं।

२ आगरे दरवाजे शहरसे बाहर एक नशियां '' सिद्धकूट चैत्यालय '' नामकी वनवाई है।

३ उपरोक्त निशयांके पासही आ-दीश्वर भगवानके पंचकल्याणकी रचना तथा तेरहद्वीपकी रचना रखनेको एक विशालाकार संगीन मकान बनवाया है जिसके नीचले मंजिलमें देहलीका बना हुआ घोडों का रथ तथा हाथी बगेरः दूसरी सवारियां रखी हुई हैं। यह मकान अजमेरके देखनेकी चीजों में मुख्य समझा जाता है, इस कारण इसे देखनेको बडेर लार्ड, लेडियां, राजा, महाराजा अभीर काबुल इत्यादि प्यारते हैं।

४ आप जिस समय सम्वत् १९०४ में और सम्वत् १९२४ में कमानुसार श्री शिखरजी व गिरनारजीकी यात्राको गये, तो साथमें श्रीजीका रथ था और रास्तेमें रथ याला व शास्त्र सभा आदि धर्म कार्य नित्य प्रति होते रहे और सम्वत् १९४८ में जैनविद्री मूडविद्रीकी यात्रार्थ गये, तय वापिस लौटते समय बम्बई नम्रमें एक बहुत भारी रथोत्सव किया था। इससे पहिले वहां ऐसा उत्सव नही हुवा था।

५ भगवानके पंचकल्याणककी रचना जयपुरमें बन कर तयार हुई तब सम्बत् १९९२ में जयपुरमें बहुत बड़ा उत्सव किया, उसमें करीबन् २ लाख मनुष्य इकत्र हुए. थे। उस मेलेमें जयपुर दरबारकी भारी मदत रही और दरबार १।२ दफा मेलेमें पधारेमी थे।

६ आपके कामोंसे खुश होकर हमारी न्यायशीला गवर्नमेन्टने आपको आनरेरी मिनस्ट्रेट बनाया और राय बहादुर पदसे विभूषित किया।

७ आप जब फलकत्ते पथारे थे तब

आपकी मुलाकात श्रीमान वाइसराय महो-दयसे हुई जिसके बाबत—'इन्डियन भिरर' नामक पत्न सा. १७ जनवरी सन १८९४ के अंकमें यो लिखता है—Wednesday the 17th January 1894 Yesterday afternoon His Excellency The Viceroy accorded a private interview at Government House to Rai Bahadur Seth Moolchand of Ajmer.

" Indian Mirar"

आपके पुत्र राय बहादुर सेठ नेभी-चन्द साहेब है, जिनका फोटो पाठकोंके सामने उपस्थित है। आपके साथमें जो खड़े हैं वह आपके पुत्र कुंवर टीकमचन्दजी साहेब है। अब इन दोनों साहिबोंका कुछ थोडा विवर्ण लिखते है, कारण पूर्ण चरित्र लिखनेसे एक वड़ी पुस्तक तयार हो जाय।

जन्म समय व कुटन्व परिचय-आ-पका जन्म सम्बत् १९१३ को हुवा। इस समय आप ५७ वर्षके है। आपके एक पुत्र व तीन कन्या हैं। पुत्र कुंबर टीकमचन्दजी साहेब भी एक पिताभक्त पुत्र है। इनका जन्म १९३९ को हुआ है। इनके दो पुत्र व दो कन्या हैं।

गवर्नमेन्टसे सन्मानित्-गवर्नमेन्टने आपको योग्व समझकर ग्वालियर रजिडे-न्टीकी व जयपुर रजिडेन्टीकी तथा भरतपुर, धोलपुर, करोलीकी एजंटी की व नीमच छावणीके खजानची नियत किये हैं और आनरेरी मेजिसदेट तथा राय बहादुर के

पदसे अलंकृत किया है और सन १९०३ व १९११ के दहली दरबारमें आप निमंत्रित किये गये थे।

देशी रियासतों से सन्मानित् आप ग्वालियर दरबारकी ओरसे मन्दसीर परगने के पोतदार हैं और भरतपुर, घोलपुर व करोली तथा निजामत शेरगढरियासतकोटाके खजानची हैं।

सर्व भियता-प्रजाकी तरफसे आप पहिले तो म्यूनीसिपल कमिइनर नियत हुए और अब उक्त कमेटीके वाइस चेम्समेन हो गये हैं और आपकी खुश मिजाजीसे यूरो-पियन आफिसर व देशी राज्याधिकारी बहुत खुश रहते हैं और अक्सर आपकी मुलाकात हुआ करती है.

कारोबार-आपके कलकत्ता, मुम्बई, आगरा, लश्कर, मन्दसोर, कोटा, जयपुर, जोधपुर, उदयपुर आदि कई दकानें हैं और हुंडी चिट्ठी व आड़तका काम होता है और कलकत्तेकी द्कानपर विलायतसे परवारा कारोबार होता है।

आपने स्याद्वाद महाविद्यालय काशी को रु. १०००) दिया है और हम आशा करते हैं कि अब आप इसी मकार समया-नुसार अपने द्रव्यका कुछ उपयोग विद्या-दानके लिये भी करते रहेंगे।

(१७) श्रीमान राय बहादुर शेठ मेवारामजी, आनरेरी मजिस्ट्रेट, खुर्जाः— आप मसिद्ध रानीवालोंके वंशज है। आपके पिता राय बहादुर ला. अमोलकरायजी थे, जिन्होंने कई लाख रुपया नवीन मंदिर बनवाने व बिंब प्रतिष्ठादि धर्म कार्योंमें व्यय कर अपनी उदारता व धर्मिप्रयताका परिचय दिया था। धर्मात्मा प्रतिमावान सज्जनोंके पुत्र भी वैसे ही होते हैं। हमारे चरित्रनायक सेठ मेवारामजी भी प्रकार उदार, परोपकारी, धर्मात्मा, जाति हितेपी सज्जन हुए। सबसे विशेप वात यह है कि आप विशेष लक्ष्मीवान होनेके साथर पंडित भी हैं। आपने वनारस संस्कृत युनिवर्सिटिकी प्रथम परीक्षा तथा व्याकरण और न्यायकी मध्यम परीक्षा पास की हैं। जिससे आपमें ''सोनेमें सुगंध'' की कहाबत चरितार्थ होती है। इसी बुद्धिमत्तादि गुणोंसे अलंकृत होनेक कारण आप सर्कारसे भी आदरणीय है। आप ''राय बहादुर'''आन-रेशी मजिस्टेंट", "म्युनिस्षछ कभिक्तर" जिला बुलंद शहरके " गवर्नभेंट देजरर " लाट साहबंक "दवीश" और बरेली "जैल कमेटीके पेम्बर्" हैं। आपकी बुद्धिमत्ताका पता इससे ही लगता है कि आपने इस हिन्दुस्तानके बड़े२ शहरों जैसे कलकत्ता, बम्बई, आगरा आदिमें पंद्रह-पंद्रह हजार श्रोताओंकी आम समामें बड़ेर प्रतिमाशाली सारगभित व्याख्यान देकर जैन धर्मका डंका वजाया है। आपके इन गुणोंसे मोहित होकर कई वैष्णव सँभाओंने आपको "मान-पत्र" देकर अपनेको कृतार्थ समझा हैं। आपने कई जगह आर्थ समाजादि अन्य मताबलिक्वयोंसे बाद विवाद करके उनके

पोच सिद्धान्तोंकी खूव धूल-उड़ाकर उन्हें परास्त किया हैं। आपकी उदारता और ्र और दयालुताका किंचित् मात्र उदाहरण यह है कि आप पत्येक दिन गरीब अपाहिज, दयाद्धताके पात्र आदिमयोंको दो रुपयाका सदावर्त बंटवाया करते हैं।

अंक १]

आपके पूज्य पिताजीने स्वर्गवासके समय रु. १२६०००) पुण्यकार्योके लिये दान किया था, जिसमें रु. ६००००) के ध्रव फंडसे एक संस्था अनाथालय बहुत अच्छा काम कर रही है. जिसकी विशाल इमारत हमारे चरित्र नायक सठ मेवारामजीने रु. १५०००० लगाकर तयार कराइ है। इस अनाथालयने कई असहाय बालकोंकी रक्षा कर उनको योग्य बना दिया है इत्यादि२ आपके सुकृत्योंका कहांतक वर्णन किया जाय ! आपकी उमर अभी ४० सालकी है । आपसे जैन समाज को अभी और बहुतकुछ आशा है।

जैन समाजके नेता महाशयोंने आप जैसे सर्वगुणसंपन्न व्यक्तिको '' श्रीभारत-वर्षांथ दिगम्बर जैन महा विद्यालय'' सभापतिके पद पर सुशोभित कर बहु बु-द्धिमानीका कार्य किया है। आशा है कि आपके समाप्रतित्वमें महाविद्यालय असीम उन्नति करेगा ।

(१८) श्री रुपभ ब्रह्मचर्याश्रम-हस्ती-नापुर:-प्राचीन कालके अनुसार इस संस्था का ज़न्म सं. १९६८ में परोपकारी बाबु गेंदनलालजी, बाबु भगवानदानजी

बाबा भगीरथजी वर्णीके सतत् उद्योगसे हुआ है जिसने दो वर्षके अल्प समयभें बहुत कुछ उन्नति करली है 🛚 इस संस्थामें अध्ययन करनेवाले ५ वर्षसे १२ वर्ष तक के ४८ छात्रों इस ग्रुप फोटोमें पाठक देख रहे हैं, दोनों किनारोंपर जो दो आदमी हैं वह प्रवेश श्रेणी व प्रथम श्रेणीके संर-क्षक है। बीचर्में जो है वह आश्रम कमेटी के भेम्बर श्रीमान लाला जगन्नाथजी, जैन जौंहरी दिल्ली निवासी है। आश्रमकी आय अंदाजन १५००) मासिक और व्यय १०००)मासिक पड़ता है. कार्थकर्ता-गणोंभे अधिष्ठाता, मैनेजर, प्रचारक विनाने-तन कार्य्य करते हैं। शेष कर्भचारी निर्वी-हार्थ वेतन लेकर काम करते हैं. प्रबंधके लिये एक कमीटी बनाइ गइ है जिसके सभापति श्रीमान साह शेठ सलेखचंदजी (नजीबाबाद) और मंत्री श्रीमान बाबू अजी-तप्रसादजी (एम. ए. एल. एल. बी. गव-र्नमेंट प्लीडर) लखनउ है. गत श्रावण मासमें आश्रामने भ्रमण किया था उस बख्त देहलीमें आधामके ब्रह्मचारीगणका फोटो लिया गया था वही यह फोटो है. आज-तक आश्रममें कुछ भी ध्रव फंड नहीं था परंतु अमणके समयमें इंदोरमें श्रीमान शेठ हुकमचंद्जीने रु. १०२००) देकर ध्रुव फंडका मुहर्त कर दिया है। आशा रहती है कि अब इस उपयोगी संस्थाके लिये अल्प समयमें बड़ी भारी रकमका ध्रव फंड

हो जायग्रा. हमारे भाइओंने इस आश्रम को हर समय हर प्रकारसे सहायता करते रहना चाहिये. विशेष हाल जाननेके लिये निम्न पतेसे पञ्चव्यवहार करनाः-अधिष्ठाता, श्रीरुषभ ब्रह्मचर्याश्रम--हस्तीनापुर (पोस्ट बहसुमा, मेरठ).

(१९) श्रीमान छाला विशेष्ट्राराधनी यहियागंज — छखनऊ: — आप एक बड़े धर्म - निष्ठ, सदाचारी, श्रावक हैं। आपका जन्म सम्वत् १८२५ में लखनऊ शहरमें हुआ। आपने अपनी कोठीमें छापा बाजारमें एक खुला हुआ विशाल चैत्यालय निर्माण क-राया, जिसकी प्रतिष्ठा गत असाड़ सुदी ११ को बड़े समीराहसे हुई। खुली छत और दालान शास्त्र सभाके वास्ते और दो कमरे ब्रह्मचारियों के रहने के लिये भी हैं।

श्रीचन्द्रप्रभुजीकी प्रतिमा बड़ी मनोज्ञ है। आप श्री गोमटस्वामीके मस्तकाभिषेक के समय श्रवण वेलगुल पधारे थे, और श्री सम्मेदशीखरजीकी यात्रा ३ वार की है। आपको यावज्जीवन दृढ़ नियम है कि सूर्यास्त के पश्चात् बार प्रकारमें से किसी प्रकारका भी आहार प्रहण नहीं करेंगे और १७ १८ प्रकार से अधिक वनस्पति कायको प्रहण न करेंगे। अंग्रेजी व हिंदुस्तानी अत्तार के वहांकी बनी हुई दवा नहीं खा-येंगे; बाजारका बना हुआ भोजन कदापि न प्रहण करेंगे, और यथाशक्ति पंच पापो-का भी त्याग है।

आपके जेष्ठ आता लाला प्रभदयाल-जीने एक शोभनीय और मुखपद धर्मशाला यहियागंजके सामने बनवाई श्रीमं)देरके है। आपके मतीजे लाला दामोदरदासजी २० वर्षसे लखनऊ जैनसमाजके मंत्री है। (२०)वाब फतेहचन्द्रजी ओसवाल।देग-म्बर जैन लखनकः—आप एक खानदानी, जौहरी और प्रतिष्ठित महाशय है। प्रक्षाल, पूजा, सामायिक,और स्वाध्याय नित्य करते हैं, और सामाजिक, कार्यों में सहायता करते हैं। पंचायती जैनमंदिर चौक (लखनऊ) आपने और आपके पितामह बाबू ऋपभ-दासजीने बनवाया, और उसमें श्रीनेमि-नाथजीकी प्रतिमा स्थापन की। आपके पिता बाबू सुमेरचन्द्रभीने लखनऊमें १९५७ के बलवे के समयमें दो जैन मंदिर जो खुदने लग गये थे, अहार्नेश परिश्रम कर के और अपनी जानको जोखममें डालकर करीब १५०-२०० मृत्तियां हटाकर अपने मंदिरमें विराजमान की, जहां वह अब तक विराजमान हैं और इस महान उपसर्गको निवारण किया। आप ८०० वार्षिक गांव की आमदनी जैन मंदिरमें प्रदान करते रहे, तीर्थ स्थानों पर बहुत द्वव्य लगायाः और अन्तमें समाधि मरण किया। आपके ज्येष्ठ आता बावू नेमिचन्द्रजीने प्रथम रथ-यात्रा लखनकमें की, और जैन धर्म प्रवर्धनी सभा' और जैन पाठशाला स्थापित की। आपके दूसरे ज्येष्ठ आता बाबू धर्मचन्द्रजी हमेशा सभामें शास्त्र पढ़ते हैं।

(२१) श्री जैनधर्म पचारणी सभा-मेरठ Meerut:-इस सभाका उद्देश जैन धर्मका प्रचार करना, समाजसे प्रचलित कुरितियोंको हटाना, धार्मिक और ठौकिक विद्याका प्रचार करना आदी है। हरेक जैन और स्पर्शवर्ण अजैन मात्र ०) मासिक चंदा देकर इस सभाका मेम्बर हो सकता है। प्रत्येक रवीवारको सभाका अधिवेशन होता है। सभाके सभापति बाब रिखब-दासनी बी. ए. विकल है। सेकेटरी बाब रिसालसिंह प्लीडर और बाब चम्पतलाल मान्टर, मीशन हाइन्कूल-मेरठ है। सभाकी ओरसे मेरट बहरमें १ जैन बोर्डिगहाउस भी है, जिसमें अन्य मामोंके ५०के लगभग विद्यार्थी रहकर कालिज तथा हाइस्कूलादिमें विद्याध्ययन करते हैं। पार साल ता० ८-११-१२को मेरठमं इस सभाका सा-लाना जल्सा बाबु प्यारेलाल एम. ए. वेरी-स्टर एट लो-मेरठके सभापतित्वमें हुआ था. उसी समयका यह ग्रुप फोटो है, जिसमें कुसिंपर वैठे हुए सभी मृहाशयोंका परिचय वहीं दिया गया है.

(२२) श्रीमान पंदित पत्रालालजी गोधा-शेरगढः-खंडेलवाल गोधा गोत्री, आपका जन्म सं. १९१५में इसागढ (ग्वा-लियर) में हुआ। प्रथम अवस्थामें तो आप एशआराममें पड़ गये थे परंतु सं. १९३८में बजरंगढमें त्यागी केशरीमलजीका समागम होनेसे आपको धर्मरुची हुई स्वौर

पश्चातापके लिये नियम लेकर २१ उपबास और २१००० अनादि सिद्ध मंत्रका जाप्य किया था। सं. १९४३ में बजरंगढमें बिंब पतिष्ठाके समय बाह्मणोंने हुछड फिसाद करके प्रतिमाओं को भी खंडित कर दी थी. जिस समय सबने नियम लीया कि आगे नवीन बिंब लाकर फिर प्रतिष्ठा करना। इस बारेमें राज्यका हकम लेनेके लिये आपने ह वर्ष तक असीम परिश्रम करके आखिर १९४९ में ईंदोरसे मेलाका हुकम शाप्त किया था और फिर वजरंगढमें गजरथ प्रतिष्ठा कराइ थी. पहिले अजमेरमें और फिर मंदसोरमें अजमेरवाले शेठ मुलचंद्जी की दुकानपर आप रहे थे. भंदसोरमें आप को पंडिता शृंगारबाई और पं. कस्तुरचंद-जीका समागम होनेसे आपकी धर्मरुची विशेष जायत हुई और आपने कोशीश करके वहां 'जैन कुमद चंद्रिका पाठशाला' स्थापित कर दी जो अब तक चल रही है। सं. १९५६से आप शेरगढमें शेठ मूलचंद-जीकी दुकानपर मुनीमका काम योग्यताके साथ करते है। आपका आचरण और वर्तन शुद्ध है । आपने विद्याध्ययन बहुत अच्छा किया है और द्रव्य संमद्द वचनिका लिखी है और तत्वार्थ सूत्रजीके उपर सर्वार्थसिद्धि, गोम्मटसार, राजवार्तिक, त्रीलोकसार आदी ३०--३५ प्रंथोंके अनुसार टीका भाषा वचनका लिखी है जिसका नाम 'सम्यग् दर्शन चंद्रिका' है जो अब तक कुछ अपूर्ण और अपकट है। आपकी लेखनशाकिमा

बिन धर्मका विशेष कल्याण करों।

(२३) पं. पुत्तकालजी-इटावाः आप का जन्म सं. १९३० को हुआ था। आप जातिके खरीवा हैं। आपके यहां स्वदेशी क्रक्ट्रेकी आदतकी दुकान होती है। आपने बाल्यकारुमें हिन्दी और साधारण संस्कृ-तकी शिक्षा माप्त की थी। पश्चात जैन शा-स्रोंको देखनेका आपको शौक हुआ जोकि आज तक वैसाही बना है। स्वाप बराबर उत्तरोत्तर उच सिद्धांत अंथोंका स्वाध्याय करते रहे । आपने किसी गुरुके पास शिक्षा पास नहीं की है तथापि अपनी तीक्षण बुद्धिद्वारा बहुत कुछ अनुभव प्राप्त कर लिया है। आपको धर्मप्रचार व जात्युन्नतिका बड़ा ख्याल है। आप श्री जैनतत्त्व पकाशिनी सभाके कोषाध्यक्ष है। इटावामें आपकी वजहसे शास्त्रसमा, चर्चा आदिका वडा भानन्द रहता है। इत्यादि वातोंके अलावा सबसे बड़े महत्त्वका कार्य आपने कंबर दिग्वजयसिंहजीको संबोधन करनेका किया है। इस कार्यसे जैन समाज आपकी बहुत आभास है। सबका तात्पर्ध्य यह है। के **बापु जैन समाजमें अ**च्छे जानकार, उत्साही, धर्मभेमी और सुधारकेच्छक नव युवक हैं।

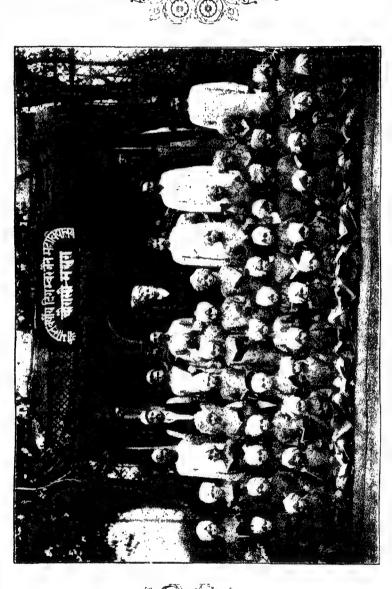
(२४) श्रीमान शेठ वालचंद रामचंद गांधी-सोखापुर:-शेठ हरीमाई देवकरणनुं नाम मुंबाई ईलाकामां जगजाहेर छे अने तेनाव यीत्र सेठ वालचंदमाई छे. आ कुटुंबनो परीचय त्रम वर्ष उपर अमो आषी गया छीए जेथी विशेष न लखतां एटलुं जणाबीशुं के आ पेढीए मंदिर, प्रतिष्ठाओं तथा विधादान वगेरेमां पुष्कळ खरच कथीं छे.
एमनी दुकानो अनेक स्थळे छे. अने हाल वाळचंद उगरचंदना नामधी व्यापार चाले छे. व्यापारमां आ शेठ एटला कुशळ छे के एमणे गये वपें मुंबाइमां रु.१००००००० (करोड)नुं रु एके तडाके जोर्खा लइ रुनो माव टकाव्यो हतो. आधी एमनी ख्याति व्यापार कुशलतामां घणी थइ छे. एमनुं कुटुंब बहोदुं छे अने सर्व एकसंपथी रहे छे.

(२५) श्रीमान राय वाबू गुलाबचंदणी साहब—छपराः—आपका जनम सं. १९१२ में हुआ। आपने विद्याध्यन अच्छा किया है। आप छपरामें म्युनिसीपल कमीशनर है सन् १८८७ से आप आनररी मेजीस्ट्रेट नियत हुए। और १९१० में आपने रु. २००००) छपराके होस्पीटल फंडमें स्थि। जिससें आपको राय साहबकी उपाधि मीली है। आपको धार्मिक श्रद्धा भी बहुत है जिससे आपने चंपानगर, कीस्कंधापुर आदीमें नवीन मंदिर और जीणोंद्धार क्याया है और आपने छपरामें 'मारतेश्वरी पाठशाला' की स्थापना की है. आप समेदशिखरजी उपरेली कोठीके सुयोग्य समापति मी है।

(२६) राय साहब बाबू छोटेलाल जैनी बेंकर व कन्दैकटर, लखनजः-आपका जन्म सन् १८७२ ई. में अकाम सुरादा-बादमें हुआ। आपके पिताका नाम लाला



श्रीमान दानवीर शेट हुक्यचन की स्पोटेब- हंदोर सीटी Shomme Denote Shorte Headermeleandij-- (NIVUET) (जाणीता विद्यातानी, धर्मधर्मा अने अग्रगण्य श्रीमान अने विद्वान नरराता)



भारतवर्षाय दिगंबर जैन महाविद्यालय चौरासी-मधुरा. Muttra.

जवाहरलालजी शास्त्री, अंग्रेजी (अध्ययन करनेवाले ३८ छात्रों. मुप्रीन्टेन्डंट बाबू पत्रालाल चौपरी. प्रधानाध्यापक पं. मास्टर बाब् शीतलप्रसाद्वी आदी). दिलसुस्तरायजी है। आपने गर्वनमेंट स्कूल सुरादाबादमें तालीम लेकर गर्वनमेन्ट रेलवेमें ठेकेदारीका काम शुरु किया और कामको मिहनत और दयानतदारीसे अंजाम देकर बहुत तरकी और नाम हांसिल किया। आप रिफा है आप तालीम गाहों और दीगरेनके कामोंमें अपने हत्तुल मक्द्र दान देते रहते हैं। सन् १९१३ में हमारी गर्वनमेन्ट आलियाने आपकी सरविस की कदर की और राय साहबका खिताब खता फरमाया है। आप लखनऊमें प्रतिष्ठित व्यक्ति थिने जाते हैं।

(२७) श्रीमान वाबू नन्दक्तिशोरजी-वनारमः - ग्रथवः छ वंशज ग्रापका जन्म रोहतकमें १९३९में हुआ। आपके पितामह लाला बलचंदजी बहुसुमाके दिवान थे। पिता लाला निहाल(संहजी जो आगे सब-रजीस्ट्रार थे अभी पेन्शनर है और आपके : द्रसरे छंडंबीजन भी तहसीलदार, रटेट काउन्सील मन्बर आदि सुवसिद्ध पदींपर स्थित है. आपने इन्ट्रेन्स पास कर एफ. ए. तक तालीम पाइ है। आप देहर्लीमें इन्क-म्टेक्स कमीशनरकं पदपर नियत थे परंतु १९०८ में आपकी धर्मपत्निका अचानक स्वर्गवास हो जानेके कारण इस असार संसारसे आपके विरक्त परिणाम हुए तथा श्रीमान बाबा भगीरथजी वर्णीके सद्यदेश व समागमसे और भी हह वैराग्यता हुई जिससे आपने अपने पदका त्याग कर स्वपर

कल्याण करनेके लिये १९१० में काशी स्याद्वाद जैन महाविद्यालयमें पदार्पण किया आपकी बजहसे विद्यालयने थोड़े ही समयमें ठींक उन्नति की है और कर रहा है जिसके लिये जैनजाति आपकी अन्त्यन्त आमारी है।

(२८) श्री जैन सिद्धांत पाठशाला-मोरेना:-यह पाठशाला दिन मतिदिन उ-व्यति पश्चपर आरुढ है जहां गत वर्ष १६ विद्यार्थी अध्ययन करते थे। इस वर्ष २१ देशान्तरीय और २० स्थानीय पढते हैं। यह सर्व संस्कृतकी प्रवेशिका परीक्षासे लगाकर शास्त्रीय व आचार्य्य परीक्षा तक के पटनेवालें हैं, इनमें कई विद्यार्थी ऐसे हैं जो स्वतन्त्र रूपसे शास्त्रार्थ व प्रभाव-याली व्याख्यान कर सकते हैं। पाठशाला के कितने ही श्रीमान् धीमान् **व सभा**-संस्थाएं सहायक हैं और सुयोग्य विद्यार्थी पाठशालासे गुजारा मात्र लेकर अध्यापन कार्य करते हैं। गत वर्ष संस्थामें ५१४७) 🗐 रुपयेकी आय और ४७५१॥=) रु० का व्यय हुआ था और वर्षके अन्त तक पाठ-शालाका निजका भवन व छात्राश्रम भी तियार हो गया है, इन सब बातोंसे ज्ञात होता है कि इस संस्थाके साथ समाजकी अन्तरङ्ग सहानुभूति है। क्यों न हो ? जिस संस्थाके द्वारा श्रद्धास्पद अंथोंका पर्यालो-चन और लुप्त प्रायः प्रंथोंका पुनरुद्धार हाता हो, उसके प्रति बज्जहृदयोंकी भी सहानुम्ति सम्भवित हैं।

फोटोंमें नं रके इधर आप जो कीसरे हुद्ध ज्याक वेख रहे है वही श्रीमान् स्माह्यादकारिकि, वादिगजकेश्वरी, न्याय-बामस्पति, पिन्दतवर्य गोपालदासजी बहेमा बंग्रम्थण इस संस्थाके आदि संस्था-पक व सञ्चालक हैं। इन्हींके शतसः प्र-स्माहे, साम्मित श्रीगोन्मटसार, लिब-सार, विलोकसार, पञ्चाध्यायी, अष्टसहली, इलोकबार्तिकादि संस्कृत प्राकृत अंथोंके जाता (विद्वान्) दृष्टिगत हुए हैं। पण्डितजांके हारा सम्पादित उक्त निरपेक्ष कार्योंके लिये उनक्र जितना उपकार माना जाय उतना कम है।

जापसे इधर दाहिने हाथपर जो अ-जमेरी पगड़ी बांधे बैठे हैं, यही न्याया-चार्य पाण्डत माणिकचन्द्रजी इस पाठशा-लाके प्रधान न्यायाध्यापक है। आप बड़े बुद्धिमान् व प्रतिभाशाली विद्वान् है।

टे वें व्यक्ति लड़केको गोदमें लिये बैठे है, बही आपके मुपरिचित और प्र-शिद्ध लेखक श्री नाथूरामजी पेमी हैं। जैन समाजमें हिन्दीभाषाके आदर्श लेखक केव-ल एक वही विद्वान् है, जिनके भौद सा-हिन्द्यकी हिन्दी संसारमें प्रचूर ख्याति है। आयक्त ''जैन हितेषी'' मासिक पत्र अपने सारणार्भित और अर्थगांभीर्ययुक्त लेखोंके कारण विद्वानोंका प्रेमभाजन व श्रद्धेय हो रहा है।

हनके पीछे जो १६वें व्यक्ति खड़े हुए हैं यही महाराष्ट्र खंडेलवालजातिके मुखपत्र 'सत्यवादी'के आनरेश सम्पादक व अंश्रकार श्रीयुक्त उदयलालजी काश्र**शीयाल** अपनी स्वतंत्र लेखनीके कारण समाजमें प्रसिद्ध विद्वान् हैं।

९ वें व्यक्तिके बराबरमें आप जिस टेढ़ी टोपीबाले शान्तिमुख, तन-युवक को देख रहे हैं; यही ब्रह्मचारी विश्वम्भरदा-सजी गार्गीय, इस संस्थाके आनरेरी सुयोग्य मन्त्री हैं। जो अपने निर्पक्ष और निर्मल चित्त होनेंका आदर्श सामने रख रहे हैं। वास्तवमें आजकल ऐसे ही निरपेक्ष और उत्साहियोंकी आवश्यकता हैं; जो संसारमें उपेक्षा रखकर और किसीसे अपेक्षित नहीं रहकर, समाजहितमें प्रवृत्त होवें। हम श्री सर्वज्ञ देवसे प्रार्थी हैं कि आप जैसे कार्य्यदक्ष सत्यिपय व्यक्ति प्रत्येक समाजके हित और गोरवयुद्धिमें कारण हों।

(२९) मृतपूर्व दिगंवर जैन संपादक-समृह:-१. ज्योतिप रत्न पं. जीयालालजी चौधरी--आपने ' जैन मकाश हिंदुस्तान ' नामका हिंदी और ऊर्दु मासिक पत्र सन् १८८३में और 'जीयालाल प्रकाश' नामका ऊर्दू मासिक सन् १८८९ में निकाला था जो थोड़े अरसेमें बंद हुआ था.

२ शेठ हीराचंद नेमचंद दोशी--सोलापुर--आपने 'जैन वाधक' नामका
मराठी मासिक सन १८८४में शुरु करके
१८९८ तक वड़ी योग्यतापूर्वक चलाया,
फिर कोल्हापुरसे १९११ तक प्रकट होता
था और दो सालसे बंद हुआ है।

३ लाला छोगालालजी विलाला, अ-जमेर--आपने " जैन मभाकर " नामका हिंदी मासिक १८९२ से १८९८ प्रकट किया और फिर बंद हो गया.

४ पं. पनालालजी बाकलीवाल-आपने नागपुरसे, ' जैन भास्कर ' नामका मासिक १८९७ में एक वर्षतक निकाला था और ' जैन हितेषी ^१ नामका मासिक बम्बइसे सन १९०३मे शरु करके १९०८ तक योग्यतापूर्वक चलाया और अब तक नाश्वराम प्रेमीद्वारा बहत अच्छी योग्यताके साथ प्रकट होता रहता है।

९ बावृ सूर्यभानुजी वकील, देवबंद--आपने ' जैन हितापदेशक ' नामका ऊर्दू मासिक सन् १८९३से १८९८ तक बड़ी योग्यतापूर्वक चलाया और फिर वंद हुआ. महासभाका मुखपत्र 'जैन गजट 'को आपनेही सन् १८९२में शुरु करके ४--५ वर्ष तक चलाया। 'ज्ञान प्रकाशकः' नामका हिंदी मासिक सन् १८९८में निकाला और थोड़े अरसेमें बंद हुआ। फिर आपने 'जैन भकाञ्चक' मासिक सन् १९०९में निकाला और १ वर्ष तक चलकर बंद हुआ। इस भांति आपने ४ पत्रोंकी सम्पादकी की ।

६. स्या. पं. गोपालदासजी बरैय्या. मोरेना-आपने 'जैनभित्र' नामका मासिक वम्बई दि. जैन प्रांतिक सभाकी ओरसे सन् १८९९ में निकाला और थोड़े अरसेमें उसकुं पाक्षिक करके सन् १९०८ तक दिया, जो अयतक ब्र. शीतलप्रसादजीद्वारा अच्छी योग्यता पूर्वक चल रही है।

७. स्वर्गीय बाबू देवकुमारजी रईस-आरा-आपने महासमाका मूखपत 'जैनग-जट' को वडी योग्यताके साथ २-३ साल तक चलायां था परंतु आपका २७ वर्षकी अल्पायमें अचानक स्वर्गवास हो जानेसे अब दसरे संपादकद्वारा प्रकट होता हैं।

८ बाबू जुगलिकशोरजी, देवबद्-आपने साप्ताहिक हिंदी 'जैनगजट'को २॥' साल तक बहुत योग्यतापूर्वक चलाया था, जिसकी बजहसे उस वंग्ल १८००तक माहक संस्था हो गइ थी, जो अब नहिं है ! ,

९ जे. डी. चवरे विकल, अकोला-आपने 'जैन भाग्योदय' नामका मसठी मा-सिक पत्र ४ वर्ष तक निकाला था और फिर वंद हुआ है।

१० वाबु जे. एक. जैनी बेरीस्टर-एट-लो-इलाहाबाद:-आपने ईंग्लीश मासिकः 'Jain Gazette' को सन् १९०४में नि-काल कर कई वर्षों तक बड़ी योग्यतापूर्वक चलाया और अवभी लखनउसे शुरू है।

११ पं. कलाप्पा भरमाप्पा नीटवे. कोल्हापुर-आपने ''जैन वोधक'' मराठी मासिकको १०-१२ वर्ष तक चलाया परंत अब फरीब दो सालसे बंद हुआ है।

१२ बी. पी. पाटी छ-होसुर:-आपने दक्षिण महाराष्ट्र जैन समाका मुखपत्र 'जिन विजय' मराठी मासिफको तीन वर्ष तकः महुत अच्छी योग्यतापूर्वक चलाकर छोड़ योग्यतापूर्वक चलाया था और फिर अंद होकर अब 'प्रगति-जिन विजय' के नामसे अष्टानिकके रुपसे प्रकट होता है।

१३ तात्या नेमीनाथ पांगल, वार्सी-आपने 'वंदे जिनवरम्' नामका मराठी मासिक सन् १९०८में शुरु करके दो साल तक चलाया था और अबभी निपाणीसे प्रगट होता है।

१४ ए. पी. चौगुले-वकील-बेलगाम-आपने दो साल तक कानडी मासिक 'जिन विजय' की संपादकी की थी जो अब वीरापुर (धारवाड)से प्रगट होता है।

भूतपूर्व शेष संपादक और पत्नाका हाल इस प्रकार हैं—(१) 'जैनी ' नामका यासिक इलाहाबादसे स्वर्गाय वान् बच्चु-छालजीने सन् १८९९में निकालकर १ वर्ष तक चलाया था. (२) 'जैन समाचार' मासिक, बाब् भगवानदासने सन् १८९६में १० माहा तक निकाला था. [३] 'चिन्न बिनोद' मासिक १९०४में एक ही अंक जैन कंपनीने बम्बईसे निकला था. (४) 'जैन प्रचारक' उर्दु मासिक, बाबु ज्योति-प्रसादजीने १९०८में निकालकर १९११ तक देवबंदसे चलाया और अब बंद हुवा है. (५) 'यतीम' उर्दू मासिक लाला चिरंजीलालद्वारा हिसारसे सन् १९०० में ३ अंक नीकलकर बंद हुआ है.

(६) 'जैन नारी हितकारी' हिंदी मासिक, बाबु ज्योतिप्रसादजीने सन् १९०९ में एक वर्ष तक निकाला और बंद हुआ। (७) 'जैन पिनका' मासिक, बाबू ज्ञानचंद्रजी द्वारा लाहीरसे सन् १८९७से १९०३ तक निकल कर बंद हुआ. (८) 'दीळ आराम' उर्दु मासिक, बाबु विहारीलाल द्वारा बुलंद-शहरसे सन् १८९७से १९०५ तक प्रगट होकर बंद हुआ. (९) 'जैन प्रदीप' हिंदी मासिक, जैपुरसे बाबू जमनालालजी द्वारा १९०९में ४ही अंक प्रगट होकर बंद हुआ. (१०)'जैनपताका' हिंदी मासिक, कलकत्तासे स्वर्गाय वाबु अमोलसचंदजी लोहाडाहारा सन् १९०७से १९०९ तक प्रकट होकर वंद हुआ। (११) 'जेन मार्तेड ' मराठी मासिक, वर्घासे जयचंद्र श्रावणेद्वारा सन् १९०२से १९०४ तक मकट होकर हुआ. (१२) ' जैन रत्नमाला ' हिंदी पाक्षिक पत्र पं. जवाहीरलाल शास्त्रीद्वारा सन् १९११में १६६ी अंक प्रकट होकर बंद हुआ. (१६-१४) " जैन बंध "और "जैन वाग् विलास' मराठी मासिक, वर्धासे प्रकट होकर बंद हुआ है । इस प्रकार भृतपृर्व ५८ दि. जैन पत्रोंका हाल हमको खोज करनेस मादम हुआ है।

(३०) वर्तमान दिगंवर जैन संपादक समूह:-इस गुप्तें वर्तमान १४ संपादकों का फोटों हैं जिनके नाम और वर्तमान पत्नों के नाम वहीं लीख दिये हैं। शेषेंमें 'जैन गजट' के वर्तमान संपादक लाला मिश्रीलालजी और 'सनातन जैन' कर्णाटकी (Sanatan Jain, Mudbidri Mysore) के संपादक नेमीसागरजी वर्णीका फोटो प्राप्त नहिं होनेसे और कामडी 'जिन

विजय' के वर्तमान संगदक आप्पाराम बरुर (वीरापुर) का फोटो समयपर प्राप्त न होनेसे प्रकट निह हो सका हैं। इस प्रकार दिगंवर जैनों में अभी १६ वर्तमान पत्रों प्रगट होते हैं, जिनकी भाषा हिंदी, गुज-राती, मराठी, कानडी, कर्णाटकी, उर्दृ और इंग्डिश ऐसी ७ प्रकारकी हैं।

(३१) न्यायाचार्य पं. गणेशत्रसाद-जी-सागर:-आपके नामसे हमारे बहतसे बंध परीचित होंगे । आपका जन्म मडावरा (झासी)में सं. १९३१में वैप्णव कुलमें हुआ। भापके पिता हीराठाळजी जैनीओंके समा-गमसे जैन धर्ममें कुछ श्रद्धा रखते थे. परंत एक दफे णमोकार मंत्रके प्रभावसे व्याघ्रसे वच गये तबसे जैन धर्ममें गाढ श्रद्धा तुई थी, जिस बजहमें पंडितजीमी जैनधर्मी वने और आपकी पहिन जो विष्णवधर्मी थी उनका देहांत होनेपर आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत लिया है। आपने बम्बई, जयपुर, आग्रा, मथुरा, खुर्जा, बनारस, लर्लातपुर आदी स्थानोंमें पं. पन्नालालजी, पं. धन्नालालजी, प्रातःस्मरणीय पं. बलदेवदासर्जाः, पं. मेवा-रामजी, नैयायिक सहदेवजी आदीकी पास पदकर न्याय, व्याकरण, काव्यमं अच्छी योग्यता प्राप्त करके जैन न्यायकी शास्त्रीय परीक्षामें उत्तीर्ण हुए है और बनारस कोलेजमें न्यायके ३ खंडोंकी परीक्षामें उत्तीर्ण हुए और आगेभी अभ्यास शुरु है। आपकी ही सूचना और प्रेरणासे बनारसंमं स्याद्वाद पाठशालाकी स्थापना हुई है।

सागरके उत्साही जैनोंके बुलानेसे आप कई वर्षसे सागरमें रहते है। वहांकी ज्ञान प्रका-शक जैन सभाके सभापति आपही है। आपने सागरमें 'सत्तर्क सुधातरंगीणी जैन पाठशाला' और बोर्डिंग स्थापन की हैं जिसमें २५०) मासिकका खर्च है और २० विद्यार्थी अध्ययन करते हैं। सागरमें कई वर्षोंसे क्संप था सो आपने एक वर्ष हुए मिटवा-देकर 'सागर जैन समाज' की स्थापना की हैं जिसका अधिवेशन प्रति शनीवारको होता है। आप दिनमें दो दफे शास्त्र वांचते हैं जिसका प्रभाव अच्छा पडता है। आपके उपर चीराजाबाईजी सीगेनकी बडी क्रपा है जिनकी तरफसे आपका भोजनादी खर्ची मिलता है और आप निःस्वार्थतासे जैन जातिकी सेवा कर रहे है। आप जैसेही गणवान, विद्वान और स्वार्थत्यागीओंकी आजकल आवश्यकता हैं। आप चीरायू होकर जैन जातिके ज्यादे कल्याण करें।

(३२) पं. वंशीधरजी जेन:—एमनो मुख्यत्वे अभ्यास मुंबईना संस्कृत जेन विद्यालयमां थया पछी पं. गोपालदासजी पासे गोमटसारनुं अध्ययन थयेलुं तथा बनारसमां जइ जेनेन्द्र महामाप्यमां परीक्षा आपी हती. वळी एमणे अष्ट सहस्री, प्रमेयकमलभातिंड वगेरेनुं अध्ययन कर्युं छे तथा केटलाक प्रंथो छपाववामां निस्वार्थे बहु महेनत करी छे तथा जेनेंद्र प्रक्रिया नामे प्रंथ लख्यो छे जे हाल छपाय छे. हाल एओ सोलापुरनी ऐ. पन्नालालजी जेन पाठशाला-

मां अध्यापक तरीके काम करी सर्वार्थ सिद्धि न्याय—काव्य बगेरे भणावे छे. एमने रोज कसरत (व्यायाम) करवानी नियम छे तथी चरिर प्रकृति सारी छे तथा एमने वस्त्रनी किम्मेत बहु छेतथी बणुं काम करी शके छे.

(३३) दिवान कुमार श्री रुपिकशो-रजी जैन रइस-विजयगढ (अलीगढ़)-गंगे-लवाल ज्ञाति उच कुलोत्पन्न आपका जन्म सं. १९४१में हुआ है और आप दिवान इंद्रप्रसादजी रईसके पुत्र और स्वर्गीय दिवान श्री नेतरामजी (जो विजयगढ़ नरेश श्री राव खमानसिंहजीके प्रधान मंत्री थे। के पीत्र है। आप धनवान और प्रतिष्ठासंपन्न होने के अतिरिक्त धर्मात्मा, विद्वान, सरल परी-णामी, शीलस्वभावी और अनुभवी पुरुष है। आप गंगेलवाल कुमार सोसायटीके संस्थापक एवम् सभापति है। आपने अच्छा ज्ञान प्राप्त किया है और आपकी विवेचन-शक्ति मनोज्ञ है और आपने वीसों प्रंथ रच-कर हिंदीं साहित्य तथा जैन जातिका बहुत उपकार किया है।

(३४) श्री स्वामी कृष्णदयातुनी वैद्य-फतेहपुर (जयपुर):-आपका जनम फतेहपुरकी पास एक गांवमें हुआ। जाति के ब्राह्मण होनेके कारण कुरु परीपाटीके अनुसार ही आपको शिक्षा दी गई। गांव के मूर्ख लोग अन्धपरम्पराके कारण पशु-औपर जो द्याणित अत्याचार करते थे वह माधी सहात्माको असम्म हो गया और महस्थाश्रमसे

भी घुणा हो गई और विचार किया की इस बंधनसे मुक्त होकर धर्मका प्रचार करं। फिर आपने मोह मायाको छोडकर सन्यस्त धारण कर लिया । आप एक वर्तमान अवस्थाके आदर्श महात्मा है। आपका विचार है कि जैसे मनुष्य है वसेही पशुपक्षी भी हैं। जसा प्राणोंका मोह मनुष्यको है वैसाही पशुपक्षियोंकोभी है, फिर अपनी आत्माको, और अपने मनको खुश करनेके लिये पञ्जोंको दुःख पहुंचाना भारी अन्याय हैं। आपने अनेक स्थानोंमें परिभ्रमण कर अहिंसा धर्मका प्रचार किया है और आप गुद्धान्त-करणसे जैन धर्मावलंबी है । आपकी वक्तृत्व शक्ति बडी ही ओजस्वीनी, तेजपूर्ण, हृद्यप्राही और हाम्यरससे भरी हुई होती है। आप चिराय होकर अहिंसा धर्मका ज्यादे प्रचार करें।

(३५) अखंड ब्रह्मचारीणी श्रीमती
गंगूबाई-डोणगांव:-द्या बाईचा जन्म संवत्
१९२९ साली डोणगांव येथं झाला। यांना
हें उंच पर मिळण्यास यांच्या बापाचे उत्तम
शिक्षण, सदुपदेश व गुद्धाचरण हेंच कारणीभृत झालें. पुष्कळांनी यांना लग्न करण्या
संबंधांत आग्रह केला, परंतु यांनी आपल्या
वक्तृत्व शक्तीने व ज्ञानानें त्यांची योग्य
समजून घातली. हली ह्या बाई ठिकठिकाणी जाऊन तेथील लोकांना आपल्या
गुद्धाचरणानें व सदुपदेशानें धर्ममार्गीस
हढ करितात. यांनी आपल्या बापा कडून
मिळालेल्या संपत्तिचा व्यय दान धर्म, तीर्थ-

यात्रा वंगरे सत्कृत्यांत करून टाकिला.

यांची वक्तृत्वशक्ति वरीच प्रगल्म असून
त्या मोठमोठ्या सभा व महिलापरिपदाया मध्यें अस्खलीत रितीने व्याख्याने वंगरे
देत असतात अशा तन्हेंने ब्रह्मचर्य, शुद्धाचरण, परोपकार वंगरे सद्धुणांनी युक्त
अशा ह्या बाई कड्न आमचा स्त्री समाज
भूषणीय झाला आहे. करितां ह्या बाईना
दीर्घायुप्य मिद्धन यांच्या कड्न समाजसेवा आणखी घडो अशी या लेखकाची
अनन्यमावें श्री ईशचरणी प्रार्थना आहे.

(३६) शांतिशिय ब्रह्मचारी महाबीर मसादजी (दिल्ली): --- आपका जन्म सं. १९४१ में दिल्लीमें पाहाडगंजीया खानदानीमें अगरवाल (वैष्णव) ज्ञानिमें हुआ। आपकुं बचपनसे ही साधुओंसे मिल-नेका शौक रहता था, और चाह कीसी मझब के और मिलत के क्यों न हो उसकी सुश्रुषा किया करते थे। एक दफे आपकं एकाएक प्लेगने आ घेरा जिससे आपकुं संसारसे नफरत हो गई और सोच लियाकी अगर इससे बचे, तो साधुओंकी तरह जींदगी बितायंगे। आयुष्कर्म बाकी रहनेपर आप अच्छे हो गये, फिर आपकी बहीनके बहुत समझाने परभी शादी नहि की। कुछ बिन दिल्लीमें नौकरी करके फिर तिजारतका बहाना करके गुजरातकी और चले आये और वहां गुरुकी तलास करते २ बंबई पहोंचे। वहां आपकुं हीराबागमें ब्र. टाकुरप्रसादजी कि जिन्होंने १५ दिन पही लेही त्यागी पन्ना-

लालजीसे दिक्षा लीथी, उनका मिलाप हुआ जिससे आपकी खोज करके स्यामी पन्नालालजीकी उमरावर्तामें मुलाखात की और अब आपने वैष्णव साधुओंकी करना छोड़ दी। अब एक दिन शास्त्रसभाम आपने यावज्जीव स्त्री मात्र के त्यागका नियम हे लिया. और त्यागीजीके साथ कुछ दिन तक रहने-के बाद सागर चले गये, वहां बिमारी होजानेसे संसारकी नश्वरता उपजी और श्री नैनागीरजी जाकर १०८ श्री जिस्सेन म्वामीके पाससे सातमी प्रतिमा धारण कर-के उदासीन हुए और स्वाध्याय करने लगे, तबसे आप सर्वसमय शास्त्र स्वाध्याय और उपदेशमें विताते है, और आजतक वहृतसे आदमीओंको स्वाध्यायका नियम दिलाया हैं। आपने प्रथम चातुमीस जैन-बिद्रीमें किया था। दुसरा बांदामें करके वहां पाठशाला कायम कराके कितनीक कुरीतियां छड़ाई थी और तीसरा अबका चार्द्धमांस वारामती [पुना] में किया था। आपका शास्त्रज्ञान दिनोंदिन बदता जाता है। आप-को स्वाध्याय करनेका और उसकी प्रतिज्ञा दिलानेका इतना शौक है कि अपना सारा समय स्वाध्यायमें ही बीताते हैं। जैसा आपके नामके साथ शांतिप्रिय लगाया जाता है वैसेही आप शांतस्वभावी है।

(३७) शास्त्रोंके जीर्णपत्र ट्रक्सा चित्र:-इनका परीचय १२६ वें एष्ट पर दिया गया है।

(३८) हीरावाग-धर्मशाला:-आ सार्वजनिक धर्मशाला मुंबाईमां गीरगाम रस्ता उपर दानवीर जैन कुलभूषण शेठ माणेकचंदजीना कटंबीओ तरफथी रुपीआ १२५०००) खर्चे ना ਬਧ थयां बंधायली छे, जेमां जैन उपरांत बधा हिंदुओने पण उतरवानी उत्तम सग-वड छे. वळी एमां एक देशी द्वाखानुं तथा 'जैनामित्र', जैनहितेषी, प्रांतिक सभा, तीर्थक्षेत्र कमीटीनी ऑफीसो, लेक्चर होल वगेरे पण छे. छेला वर्षमां एनो ११००१ मसाफरोए, तथा औपधालयनो २३७२६ जणे लाभ लीधो हतो. आ स्रशोमित धर्म-शालानी बांधणी, गोठवण अने व्यवस्था धणीज सारी छे अने एवा प्रकारनी धर्म-शाला मंबाइमां बीजी जणाती नथी.

(३९) श्रीमती मगनवाई, कंकुवाई अने लिखताबाई:—शेट माणकचंदना विदुपी पुत्री मगनबहेन, सोलापुरवाळा शेट हीरा-चंद नेमचंदनां विदुपी पुत्री ब्हेन कंकुव्हेन अने अंकलेश्वर निवासी लिलताब्हेन एम आ त्रणे ब्हेनोनी भेगी मसलत अने महान् पिरश्रमथी श्राविकाश्रम [संबाह]नी स्थापना श्रद छे अने आ ब्हेनोए आ आश्रमने पोतानुं जीवन अपण करेलुं छे, जेथी आ आश्रम उत्तरोत्तर उन्नतिपथपर आवतुं जाय छे. आ ब्हेनोनो लंबाण पराचय स्थाना-मावने लीचे हाल आपी शकायो नथी पण एटलुं तो जणावीए छीए के आ ब्हेनो स्थीजातिनी उन्नति माटे अतुल परिश्रम करी

रहेलां छे जेने जैनोए दरेक रीते मदद आपता रहेवुं जोइए.

(४०) श्री स्याद्वाद महाविद्यालय काक्षी:-इस महान उपयोगी संस्थाकी स्था-पना स्वर्गीय वात् देवकुमारजी रईस आरा, दानवीर शेठ माणकचंदजी जे. पी.: पं. पन्नालालजी बाकलीवाल आदीकी पेरणा और सहायतासे सं. १९६१मां हुई. आज तक इसमें से २० पंडित तैयार होकर अन्य २ स्थानों पर जैन धर्मका प्रचार कर रहे हैं और अभी ३५ विद्यार्थी प्रवेशिकासे शास्त्रीय और विशारद परीक्षा तकका अध्य-यन करते हैं. विद्यालयका भ्रव फंड सिर्फ रु. १७०००) काहे. उब एक वर्षका खर्चका अंदाजा रु. ५०००) है जो मासिक और इक मुष्ट सहायतासे पूर्ण किया जाता हैं. विद्यालयका आनररी अधिष्ठाता निःस्वार्थी परोपकारी वाब नंदिक्शोरजी है और अध्यापक हैं जिनमें ३ अवैननिक हैं। हमारे भाइओंको इस महान उपयोगी संस्थाको हर समय किसी न किसी प्रकारसे सहायता देते रहना चाहीए । फोटोंमं तीसरी लाइ-नमें जो कर्मचारीगण कुसीयोंपर बैठे हैं उनमेंसे दाहिनी तरफसे दसरे महाशय श्रीमान पं. उमरावसिंहजी सिद्धांत शास्त्री धर्माध्यापक व आनररी सुप्रीन्टेन्डंट और तीसरे महाशय श्रीमान बाव् सुमतिलालजी हेड क्लार्फ सहायक मंत्री व चौथे महाशय श्रीमान वातृ नन्दिकशोरजी आनररी अधि-ष्ठाता तुशा अन्य अध्यापकगण है.

(४१) श्री स्याद्वाद पहाविद्यालय-काशी:-जिस महान इमारतमें विद्यालयका निवासस्थान है वही बील्डींगका यह फोटो है।

(४२-४३) सिद्धक्षेत्र श्री पावापुरी और श्री चंपापुरी:- आ बन्ने सिद्धक्षेत्रोनो संक्षिप्त इतिहास पण स्थानाभावने लीधे हवे पछी प्रकट करीशुं.

(४४) श्री शांतिनाथका प्राचीन जैन मंदिर--झाळरापाटन शहर:-इस मंदिरका संक्षिप्त विवरण ८९वें पृष्ठपर दिया गया है।

(४५) सिद्धक्षेत्र श्री मुक्तागिरिः— आ सिद्धक्षेत्रनो संक्षिप्त इतिहास स्थानाभा-वने लीपे हवे पछीना कोइ अंकमां प्रकट करीगुं.

(४६) श्री श्रृतस्कन्य यंत्रका चित्रः – इस चित्रका परीचय १२२वं ष्टष्ठपर दिया गया है।

(४७) पंडित नाना रामचंद्र नाग फल्टटणकर:—ब्राह्मण जैन एवा आ पंडिते अनेक हिंदी, मराठी अने संस्कृत प्रंथोने अनुवाद के टीका करी प्रकट कर्या छे. आ पंडितनुं नाम जगजाहेर छे. एमनो ट्रंक परीचय अमोने मळी न शकवाथी ते प्रकट कर्यो नथी.

(४८) बाबू दयाचंद्र गोयलीय जैन बी. ए.-ललितपुर:-आपका जन्म सं. १९४५ स्थान गड़ी अबदुलाखां (मुजफर नगर)में हुआ। आपके पिताका नाम लाला जानचंदजी था, जिन्होंने ही आपकुं विद्या

संस्कार कराया और रातिदिन आपकी शिक्षाकी ओर उनका ध्यान रहा। आपने ऊर्द मिडिल पास करके देहरादनमें अंग्रेजी पड़कर एंट्रेंस पास किया। यहां रहते हुए सहरानपुरकी महासभाके जल्सेमें जानेका अवसर मिला, वहां बाब्र चेतनदासजीसे मिलनेसे जाति उन्नतिका उत्साह हो गया । उसी समयसे समाचार पत्र दे-खना, स्वाध्याय करना शुरु कर और एक जैन कुमार सभा भी वहां स्थापित की। जातियम के कारण बनारस कोलेजमें पट्नेके लिये काशी गये और स्याद्बाद दि. जैन पाठशालाकी बोर्डिंगमें रहे ही धर्म शिक्षण प्राप्त किया। फिर एफ. ए. पास करके बाव अर्जुनलालजी सेटी, ए. के पास जयपुर गये, वहां बी.ए. पास किया और यहां रहते हुए जैन शिक्षाप-चारक समितिके परीक्षा विभागका किया। बालकोंके हितार्थ 'वालवोध जैन धमे' चार भाग, बालशिक्षा, स्त्रीशिक्षा, बालगणित आदी पुस्तकें बनाईं । बी. ए. परीक्षासे दो मास पूर्व आपके पिताजीका देहांत हो गया, जिससे घरका कुल भार आपके ही शिरपर पड़ गया। आपने प्रतिज्ञा कर रख्खी थी कि, बी. ए. पास करके ही शादी करेंगे, जिससे बी. ए. पास होने बाद ही पढ़ी छीखी कन्याके साथही अपनी शादी की । अभी आप ललितपुरः हाइस्कूलमें हेडपास्तरीका काम करते हैं

और ८०) रु. मासिक वेतन पाते हैं। आप लिलतपुरकी अभिनंदन 'दि. जैन पाठशाला'के मंत्री है और 'भारत जैन महामंडल' के जीवदया विभागके मंत्रीका कार्य करते है जिसकी ओरसे अब तक ६० हजार पुस्तकें और इस्तीह्यर भिन्नर भाषाओं में प्रकाशित कर चुके हैं। सीता चरित्र, प्रधुन्न चरित्र आदि अनेक पुस्तकें लिखी हैं और आप इतनी छोटी वयमें जैन जातिका और जीवदयाका बहुत कुछ उपकार कर रहे हैं।

४९ श्रीजिनवाणीकी वर्तमान हीना-वस्याका चित्रः-इस चिलका परीचय १२८ वें प्रष्ठपर दिया गया है।

(90) Prof. Dr. Herman Jacobi-Germany मो. डो. हर्मन जे-कोबी, जर्मनी:-जैन धर्मतत्वोना अभ्या-सी अने अनेक थे. जैनसत्रोना अंग्रेजीमां प्रकटकर्ता आ जाणीता जर्मन विद्वाने पाश्चात्य प्रजामां जैनसाहित्यनो फेलावो करवामां सौथी अग्रगण्य भाग लीधेलो नगजाहर ६० वर्षनी जैफ अवस्थाए पहोंच्या छतां पण एओ जैनशास्त्रो तेमज बीजा शास्त्रोनुं अवलोकन करवामां हजु पाछा हठता नथी. वश्व ख़शी थवा जेवुं तो ए छे के आ वि-द्वान नर कलकत्तानी युनीवसीटीमां अलंकार-शास्त्र उपर भाषणो आपवाने डिसेम्बरनी १०सी.तारीखे अत्रे (हिंदमां) खास आवी पहींचनार छे, जे तकनो लाम लेवा जैनोए तैयार यह रहेवं जोडण-

(५१) Dr. Johannes Hertal P. H. D. डॉ. जोनस् हर्टल पी. एचः डी.--आ पाश्चात्य विद्वान भारतवर्षमां प्रच-लित पंचतंत्रना कर्ता जैनाचार्य छे एम सिद्ध करनारा तथा पूर्णभद्रकृत जैनपंच-तंत्र वगेरेना संशोधक छे.

[५२] Mr. Herbert Warren JainLondon मी. हर्बर्ट चोरन जैन-लंडन-आ
स्नेहींबंधु जैनधर्मना सारा अभ्यासी छे
अने एमणे चार वर्ष थयां जैनधर्म स्वीकार्यो छे. हालमां लंडनमां बाब् जुगमंदरलाल जैनी, एम. ए.--वेगेम्टर एट-लोना
प्रयासथी 'महावरि बधरहुड' नी स्थापना
थह ले तेना एओ पेसीडंट [प्रमुख] छे.
आ वंधुनो एक इंग्लिश आर्टीकल पण आ
अंकमां वोचकोना जोवामां आवशे.

[५३] Mr. A. Gordon Jain- Iondon मी.ए. गोर्डन जैन-लंडनः आ विद्वान प्रहस्थे पण पं. लालन, बाब् जुगमंदरलाल जैनी आदीना सहवासथी एफ वर्ष थवां जैनधर्म स्वीकायों के अने एओं 'महाबीर वधरहुड' ना सेकेटरी नीमाया के.

(९४) Dr. Ambrojio Balliny-Italy डो. एम्ब्रोजीओ बेलीनी, इटाली--आ पाश्चात्य विद्वान वासुपुज्यचरित्रना संशोधक तथा उपमितिभव प्रपंच कथा वगेरे प्रथानुं इटालीअन भाषामां भाषांतर करनार छे.

(५५) Dr. Beloni Philipi— Italy डो. बेलोनी फिलीपी-इटाली:-आ पाश्चात्य विद्वान श्रीहेमचंद्राचार्यकृत सटीक योगशास्त्रनुं इटालीअन भाषामां भाषांतर करनार अने श्वे. मुनि विजयधर्मसूरिनुं इ-टालीअन भाषामां जीवनचरित्र लखनार छे.

(५६) Dr. A. Guerinot-Paris— आ पाश्चात्य विद्वान जैन विव्लिओमाफी इत्यादिना कर्ता तथा जीवविचारोनुं फेंच भाषामां भाषांतर करनार छे.

(५७) बाबू मोतीलाल जैन, आ.

मास्टर गर्वनभेंट हाइस्क्ल--अ।गराः--आ

उत्साही अने विद्वान युवके न्यायदीपिका,

तत्वार्थम्ल्ल, परीक्षामुखसूल वगेरे प्रंथोने
आधारे 'जैन लोजिक ' Jain Logic ना
विषय उपर आ खास अंकमां एक मोटो
इंग्लिश आर्टाकेल लखेलों छे, जे बांचवाथी
आ बंधु जैनशास्त्रोनुं केटलुं उहुं ज्ञान धरावे
छे ते मालम पडी आवशे.

(५८) भारतवर्षाय दिगंबर जैन महासभाका गुर फोटो:—गत अधिन मासमें मथुरामें महासभाका १८ वा वार्षिक अधि- वेशन हुआ था उस बस्त पधारे हुए महाश्योंका यह गुप फोटो हैं। भिनमें कुर्सांकर बैठे हुए महाशयोंका परीचय वहीं दिया गया है।

(५९) सुरत जैन भीन्टींग मेसः—यह वहीं मेसके कर्मचारींगणका त्रृप फोटो है। जिन्होंने यह खास अंक बहुत योग्यतापूर्वक और शीष्रतासे तैयार कर दिया है।

37 37 8 46 46

न्तन जैनसमाचार.

-*•>*>>&&-ત્તીલાકચંદ જૈન હાઇસ્કલની સ્થા-ઇ દારનિવાસી પના:--જશાવવા મુજય શ્રીમાન શેઠ કલ્યા અલમજી **ઇ** દારમાં પાતાના પિતાજી**ના** સ્મરણાર્ધે **તીલાકચ**'દ હાઇસ્કુલ ખાલવાના દઢ વિચાર ઉપર આવ્યા પછી એની વ્યવસ્થા અને સ્થા-પના કરવાના વિચાર કરવાને આ શેડે શ્રીમાના અને વિદ્વાનાની એક મીટીંગ કકી નવે બરે સવારે તુકા-ગંજમાં પાતાની કાેઠી ઉપર શ્રી**માન શેઢ** પ્રમુખપણા નીચં મેળવા હુકમચા દજના હતી જે પ્રસંગે દાનવીર જૈન કુ. ભૂ. માણેકચંદજી જે. પી , સ્યા. વા. ન્યા. પંડિત ગાપાલદાસજ બરેવ્યા, **વકાચારી શાતલપ્ર**સા-દછ, ખાબ અર્જુનલાલછ શેરી, પં. ધનાલાલ-*છ* કાસલીવાલ, શેઠ પદમરાજજી રાનીવા<mark>લા</mark> વગરે તથા ઇ દારના જ્વણીતા ઘણા ગ્રહસ્થા જેવા કે સાર ખ. શેઠ કસ્તૂરચંદજી. શેઠ ઠાંકા-રલાલજી પાટાદી વગેરે પધાર્યા હતા **જેમાં** પ્રથમ બાબ અર્જુનલાલછ શેડીએ શેઠ કલ્યા-ણમલજીના વિચાદાનની પ્રશંસા કરવા બાર્બ જુગમંદરલાલ જૈની એમ. એ. બેરી**-**સ્ટર, બાય નંદકિશાેરજી, બાબ **દય.ચંદ્રજી** ગાયલીય વગેરે વિદ્વાનાની આવેલી સમ્મતિ વાંચી સ ભળાવી હતી અને કા સંસ્થા ખાલ-વી તે સંબ'ધીના આવેલા વિદ્યાર્થીએોના નામા વાંચીતે જહાવ્યું કે એમાં પ્રથમ નંબરે શા. દામાદરદાસ વજલાલ **વડાદરા**, બીજે નંખ**રે** પાર્શ્વદાસ વિદ્યાર્થી (કારી) અને ત્રીજે ન ખરે અનુપસિંહ વિદ્યાર્થી (કાશી) આવ્યા છે, જેને રા.૨૦,૧૦,અને પ)તું અતુક્રમે ઇનામ પ્રકટ કરવામાં ઓવ્યું તથા પાર્ધ્વદાસ વિદ્યા-ર્થીના લેખ વાંચી સંભળાવ્યા હતા. એ પછી કલ્યાણમલજીએ જણાવ્યું કે હાલના સમયમાં દિ. જેન કામમાં વ્યવહારીક અને

ધાર્મિક કેળવણીના ફેલાવાની અત્યંત આવત્ય-કતા હોવાથી તે માટે ઇ'દારમાં 'તાલાકચંદ જૈન હાઇસ્કલ ' ખાલવાને હું મારી પાતાની ! મીલ્કતમાંથી રા. ૨૦૦૦૦) કાઢું છું અને **તેની વ્યવસ્થા માટે એક ટ્રસ્ટ નીમવા મા**ગું **'છું. એ પ**છી કલ્યાગમલછું (પ્રમુખ) **શેઠ હકમચંદછ,** રા. બ. શેઠ કસ્ત્રસ્યંદછ, શોઠ સેવારામજ ઉજ્જન, શોઠ ઠાંકારલાલજ **પાટાદી, દાનવીર** શેઠ માણેકચ°દછ, પં.ધના-'**લાલછ. શ્રી સ**ગીરમલજ અને લાલા હજ્તરી-લાલજ (નીમચ) આ ૯ ટ્રસ્ટીએં નોમાયા **ંઅને હા**ઇસ્ક્લના ઉદ્**રા** નીચે પ્રમાણે દેરવ-વામાં આવ્યા (૧) અમાં સર્વે પ્રકારની 'વ્યવદ્વારીક કેળવણી હિ'દી ભાષામાં '**શીખવવી, (૨) વિદ્યાર્થીએ**। અ'ગ્રેજી સાદિત્ય સમજ શંક તેવી રીતે અંગ્રેજી કેળવણી ! આપવી (૩) વ્યાપાર તથા હુજ્ઞરની શિક્ષા ંના પ્રભ'ધ કરવા તથા (૪) ક્રેમમાં **દિગ'બર**ં **જૈનધર્મની શીક્ષા** અવસ્ય રાખવા પછી દ્રસ્ટીએોની સમ્મતિથી ૧૮ મદાશયાની **ંમેનેજંગ કમીટી** નીમાઇ હતી અને શેઠ હુકમચંદજએ પાતાના લઘુબાતા શેડ તીલાક-**ચંદ્રજીને ધન્યવાદ આપવા પ**છી સભા વિસર્જન થઇ હતી. પછી તા. ૭ મીએ મેનેજીંગ કમીટીની ખેઠક શેઠ કલ્યાણમલછના પ્રમુખપણા નીચે **થઇ હતી. જેમાં ૧૩ મેમ્યરા હાજર હતા અને નીચે મુ**જળ ઠેરાવેા થયા હતા. (૧) ટ્રસ્ટડીડ **પ્રમાણે** હાઇસ્કુલના પ્રખધ કરવા, (૨) હાઇ સ્કૂલના સેક્રેટરી ખુધમલ પાટણીને નીમવા, (૩) **પ્રીન્સીપાલ થ**વા માટે ભાગ અર્જાન લાલઇ શ્રેડીને પ્રાર્થના કરવી. (૪) હાઈરક-**લ ખાલવાનું** મહુર્તમાહા સુદ ૧૩ નું .રાખવું. (૫) રફલમાં ચલાવવાનાં પુસ્તકા તૈયાર કરવા છા. શીતલપ્રસાદજીને નીમવા અને તે માટ હાય છ માસને સાર રા. ५००) **ક્યાપ**વા, (૬) ટ્રેઝરર તરીકે શેઠ કલ્યાણમલ-

જીને નીમવા. (૭) સ્કૂલના ક્રસ્નીચર માટે રા. ૧૫૦૦) અમયવા. (૮) સીક્ષકા માટે માસિક રા. ૩૦૦)ના ખર્ચ કરવા. (૯) અન ભ્યાસક્રમ ખનાવવા માટે બાબુ અર્જૂનલાલછ શેડીને નીમવા અને તે કમીડીમાં પાસ કરા-વધા, એના ખર્ચ માટે રૂા. ૧૫૦) આપવા. એ પછી કમીટી વીસર્જન થઈ હતી. હાઇસ્કલ માટે દિતવાર્યા બજારમાં જે મકાન લીધેલું છે તે શેઠ માણેકચંદ્રજીને ખતાવતાં તેમાં યાગ્ય સુધારાવધારા કરવાની સૃચના ચ્યા શંકે કરી હતી જે **મરામતનુ**ં કામ હાલ ચાલું છે અને આ મુજબ આ **હાઇસ્કલની** સ્થાપના મહા સુદ ૧૩ન દોને માટા દાદમાદથી કરવામાં આવનાર છે. આ સંબંધી પત્રવ્યવહાર કરનારે નીચેને કંકાએ લખવું-**ઝુધમલ પાટણી, મ**ંત્રી, તીલેોકચંદ જૈનહોઇ-રકલ કમીડા આપીસ, નલિયા બાખલી-ઇંટ્રાર.

વડવાણીમાં મેળો:—સિદ્દક્ષેત્ર શ્રી વડવાણીમાં પાસ સુદ ૮ થી ૧૫ સુધીમાં વાર્ષિક મેળા ભરાતાર છે, જેમાં અનેક વિદ્વાતી પધારતાર છે. આ મળાતા લાભ ક્ષેવા શેઠ લાલાજી ચાંદુલાલજી સર્વેત આમંત્રણ કરે છે. આ તીર્થ આર. એમ. રેલ્વેના મઉસ્ટેશનથી પાકી સડેક થઇને જવાય છે.

શાસ્ત્રા પૂજન:—દિવાળીમાં વડવાણી-માં દિ. જેન પાકશાળામાંજ એકદા થઈ બધા ભાઇઓએ એક સાથ વહીષ્જન જૈનવિવિથી કરી હતી જે ક્રિયા પં. સાનપાળ જૈને કરાવી, તે વખતે મહાવીર ચરિત્ર વાંચા ખતાવ્યું હતું તથા રા. ૨૦) શાસ્ત્ર ખરીદવાને કૃંડ થયું હતું.

વાર્ષિક મેળાવડાઃ—શ્રી સ્યાદ્વાદ મહા-વિદ્યાલયના વાર્ષિક મેળાવડા તા. ૨૩ થી ૨૭ હિસેંબરે થતાર છે.

શ્રીયુત તાત્યા નેમીનાથ પાંગળે મુંબર્ધ (ગીરગામ) માં 'સુરસ ઘ'થ પ્રસાર**ક** મંડળી' રથાપત કરી છે જેતી તરફથી **સુરસ** સુધામાળાના વર્ષે કથીક પુસ્તકા થતાર છે. આ મંડળતી પ્રવેશ ધી રા. ૧) છે જેને મંડળ તરફથી પ્રક્ટ થતાં પુસ્તકા પડતર કિમતે મળશે.

ભાઇબલ જૈન મિત્રે' નવીન વર્ષમાં ક્ર્યાટા સાથેના સુશાભિત ખાસ અંક પ્રકટ

કર્યો છે.

અષાગરા જૈન એહિંગ ચાલુ કરવાને તથા તેના મકાનના ક્રંડમાં મદદની જરૂર છે જે માટે ભરાસેલાલ ઉત્તમચંદ બજાજ (રાજ્યકો-મંડી, આગરા) સર્વે જૈનાને અપીલ કરે છે.

ં જૈન ભાન ' નારું પત્ર સ્યા. વા. પં. ગાપાળદાસછ ખેરવ્યાદારા સંપાદિત થઇને તા. ૧ લી બનેવારીથી પ્રકટ થવાનું નક્કી થયું છે. શ્રાહક થનારે નીચેને દેકાણે લખવું:~પં. ઉદ્યલાલ કાશલીવાલ, હીરાવ્યાય ન'. ૪ મુંબઇ.

ંકશલાચઃ—શ્રીમાન ત્યાપીછ એલક પત્રાલાલછએ ટોકમાં ચાતુમાંલ પુરા કરી કારતક વદ ૩ ને દીને નવાઇનગર (જૈપુર) માં કેશલાય કર્યા હતા, જે પ્રસંગ માટા રથા-ત્સવ થયા હતા, અને અનેક સભાએા થઈ હતી.

અજબ શક્તિ ધરાવનાર પ્રાશ્વાત્ય વિદ્વાન:—ઈટાલીના ઉડીન શહેરમાં ડૉ. એલ. પી. ટેસટારી એમ. એ. પી. એચ. ડી. જે માત્ર ૨૫ વર્ષની ઉમરના છે તેમણે જેન સાહીત્યના ઘણાજ સારા અભ્યાસ કરેલા છે અને એએ ગુજરાતી, હિંદી, લેટિન, શ્રીક, અંગ્રેછ, ઈટાલીઅન, પ્રાકૃત, સંસ્કૃત, ઢૂંઢારી, વગેરે ભાષા સારી રીતે લખી અને વાંચી શક્ત્રાની અજબ શક્તિ ધરાવે છે. આ વિદ્વાનનો વધ્ પરિચય અમા હવે પછી પ્રકટ કરીશું.

વાલ ટીયરા માટે:-પાલીતાણા દ્વાન્ય-રંસમાં વાલ કાઅર થવા હવ્છનાર ૧૬ વર્ષ ઉપરની ઉમરના વિદ્યાર્થીઓએ પાસ સુદ ૧ પહેલાં ભાવનગર અરજી કરવી.

तैयार है!

नवीन

तैयार है!!

'दिगंबर जैन" सचित्र खास अंकका

अञ्जाल्बम (चित्र संग्रह)

हमारे बहुतसे पाठकों की यह शिकायत है कि आप के खास अंकमें जो फोटों दिये जाते हैं वह कागज़की दो ओर छपे हुए होनेसे कांचमें जडवानेमें दिकत होती है इस लिये हमने इस वर्षके खास अंकके सभी ५९ चित्रोंको अलग २ कागज़ के एकही ओर मुंदरताके साथ छपाकर और उसके साथमें सब चित्रोंका परिचय भी सामिल करके मुशोभित आल्बम (चित्र संग्रह) तैयार कराया है, जो कींचमें जड़वाने योग्य और वर्षों तक कमरेमें संग्रह करने योग्य है। बहुत कम प्रति तैयार की गइ है इस लिये आवश्यका हो तो शीष्रही मगाइए। मूल्य सिर्फ बारह आना ०॥ पोरटेज सह.

मेनेजर "विशंबर जैन"-सुरतः Surat

→ж नुतन वर्षारंभे मुबारकबादी. ३६

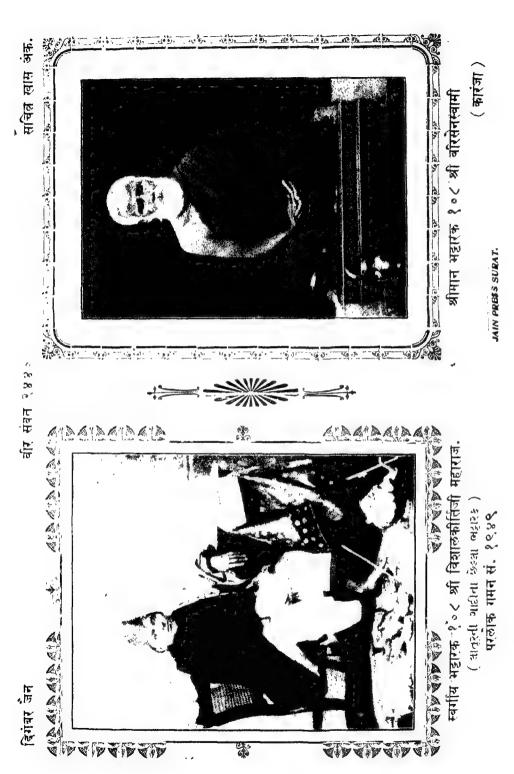
સિંધો કૃપાના નાથ જગના, નામ તારૂં સુસ્મરી, આ વર્ષ ગુતન સુખદ થાવા, સ્તવન તુજ કરીયે કરી; આ વર્ષમાં અતિ હર્ષમાં, ઉત્કર્ષમાં નિજ દેશના, તું પ્રેર પ્રેરક વિશ્વના. નિજ જૈન બંધુને સદા. ٩ વિસ્તાર વારંવાર સુખ, દાતાર ઉદ્યમ દેશમાં, નીતિ રમેશ! હમેશ વધતી, કર વિશેષ સમાજમાં; છલકપટ ખટપટ ને કુસ'પ, કઢોશ સર્વ પ્રભા! હવા, જિત્રેશ! ભારતવર્ષમાં, આ વર્ષ મુખકારી કરાે. ર निक देशद्रक्षना सुत्रने, निर्विध्न इरके विधदा ! વ્યાધિ ઉપાધિ નિવારી. ઉત્કર્ષ વધારા તે તહોા; એ ઇપ્રમાંહી અબીપ્ર સિહિ, પામજને જેવી નરા, જિનેશ! ભારતવર્ષમાં આ વર્ષ સુખકારી કરેા. 3 જયકારિણી ભયહારિણી, નયધારિણી વિદ્યા તણી, પતિપત્તને ગામગામે, વાહ કરજે વું યશ દશ દિશે જેના તાંગું, નિર્મળ ધવળ પ્રભું વિસ્તરા, જિનેશ! ભારતવર્ષમાં, આ વર્ષ મુખકારી કરેા. ٧ આરાગ્ય યોગ્ય કરા વિધાના હે તનજને જૈનનાં, ુ વૃક્ષુગણને સક્ષ્ય પાક, વતી અતીવ વસંધરા: જૈના તથા સંવક માતીની આશીશ અમરવેલી સમ લાહ પામા, એજ પ્રભૃત પ્રર્થતા,

(શાહ માતીલાલ ત્રીકમજારા માળવી-ખાકરાળ.)

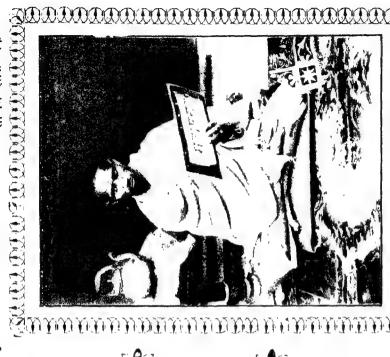
" दिगंबर जैन "नी प्रभु प्रत्ये प्रार्थना.

પામું યાવન વેગથી જન વિષ સંતાપ સાથે સદા, ગાજું ગારિગરાથી ગર્જન કરી હાનિ ન પામું કદા; રાચે ગ્રાહકવર્ગ પાેપણ કરી ન્તળી સ્વધર્મ વિધિ, માર્ગુ એ વરદાન નાથ**ે** મુજને આપે કપાતા નિધિ. ٩ સત્લ્રુંગાર ધર્ફ સુંબાધજ તણા પંદુર સુવાગ વસ્ત્રને. એમાપી ઉત્તમ વર્ણથી કર ધર ચર્ચા તણા અસ્ત્રને; સુંદર સપ્તમ વર્ષમાં વિજયથી વેગે તરૂં વાસિધ, માંગું એ વરદાન નાથ મુજને આપા કૃપાના નિધિ. ર પામે સા મુજ ત્રાહેશ જગતમાં દીર્ઘાયુ આરાગ્ય**ના**, धारे धर्भ विषे विशेष हटता संसार स वेगता; યાજે નિત્ય ઉપાય સદ્ય તરવા સ'સારના વારિધિ. 3 માર્ગુ એ વરદાન નાથ, મુજને આપા કૃપાના નિધિ.

(સરૈયા—સુરત)



"दिगंबर जैन"



とうから、これによりないないということには、 श्री आंनिदामजी महागज त्रहात्रागी

(मलकाषुर, बुलडाना

ब्रह्मचारी श्री हममागाजी महाराज

(शांत स्वभावी युरदातता मेर थुरद्भ अबबारी)

मनन करने योग्य वार्ताळाप।

टकचन्द्-जयचंदभाई! जयिजनेंद्र देव की। कहिये आजकल तो आप ईदके चांद होरहे हैं कि कुवेंमें बांस डालनेपरभी आपका पता नहीं लगता. भला यह तो बताइये कि आपके चेहरेपर उदासी क्यों है! सब कुशल तो है?

जयजिनेंद्र! श्रीजीके प्रभावसे सब कुशल ही है। आजकल पहाशय सत्यदेवजी (जो अमेरिका यूरोप आदि देशोंमें, जाकर आये हैं और सच्चे देशहितैषी हैं, जिन्होंने सत्य प्रन्थमालादि बहुतसी पुस्तकें अपने अनुभवद्वारा विदेशोंके चित्र सहित लिखकर तैयार की हैं) के व्याख्यानोंमें लगातार ४-६ दिनसे जा रहा हूं; इसीसे नहीं मिलने पाया। क्षमा की जियेगा कि आपको दूर होनेके कारण में इस बात की खबर भी न दे सका, परंतु आपको खबर तो अबस्य ही मिली होगी।

टंकचंद-जी हां, बहुत टीक है। आप को क्यों इतनी याद रहने लगी है? अच्छा भला यह तो बतावो कि ऐसी कौनसी मिश्रीका स्वाद उस व्याख्यानमें आया, जिसमें गड़ा गुप्प हो गये. भाई, सच कहता हं; मैं तो एक दिन गयाथा और अमुमान आधे घंटेके वहीं टहरा, परंतु मुझे तो राचिकर नहीं हुवा; इस लिये आप को

निमग्न देखकर विन्न करना टीक न समझकर विना ही मिले शीन लौट आया।

जयचंद-भला भाई साहेब, आप यह तो बताइये कि उसमें अरीचक होने की कौनसी बात थीं?

टेक चंद-एक तो यह कि सब लोग एक ही भाषा बोले, दूसरे सब लोग एक ही धर्म मानें, तीसरे सब लोग विद्या परें, चौथे सब लोगों का समान अधिकार हैं, पांचवें सब लोग विदेशोंमें जावें और वहां की विद्या पहें, छठवें सियों को भी पढ़ावें, सातवें पुस्तकें छपावें, आठवें सब लोग अपने अपने हाथसे मज़दूरी भी करें, सब लोग सब प्रकारका धंधा सीखें, नवमें साधु-सन्तों को दान भी न दें, इत्यादि २ प्रायः सभी वातें व्यर्थ लोगों को अम में डालने वालीं रहीं और धर्म कर्म का तो नाम ही उस व्यास्थान में नहीं आया था, तब भला, कैसे रीचक हो सक्ता है?

जयचंद-भाइ साहेब! क्षमा कीजिये. आप मैंरे मित्र हैं और विचारवान भी हैं, इसी लिये कहना उचित समझता हूं. होवे आकुरुता न जिन स्।नियेगाः लगाकर सत्यदेवका व्याख्यान रुचिकर महाश्य दशा ऐसी उन की ह्वा, होती है. में है, बीनबाद के महपी की बाबे के साथ कह सक्ता हूं कि उन की एक २ बात बिल्कूल सत्य और लाभ- दायक थी. भला, आप यह बताइये कि उन्होंने जोर बातें कहीं, उनमें धर्म से विपरीत कौन कौन थी; और उनके पालन करनेमें धर्मको क्या क्षति पहुंचती है?

टेकचंद-जी, सुनिये जब सब एक-ही भाषा बोलने (व्यवहार में लाने) लगेंगे तो अपनी भाषा मूल जावेंगे. और फिर अपने गुप्तभेद सब लोगों के सन्मुख पगट करना पड़ेंगे. बोली बदलने से पहि-नाब भी एकसा हो जायगा, फिर यह पंजाबी है, यह गुजराती है, दक्षिणी है, बुदेलखंडी है इत्यादि की क्या पहिचान रह जावेगी!

जयचंद-एक भाषा नागरी=जो संस्कृत की तोतली बेटी है) होजाने से धर्म की तो कोई क्षति नहीं होती है. क्योंकि बहुत से प्रान्थ तो नागरी ही में हैं, और जो संस्कृत में भी हैं. तो नागरी वाला संस्कृत को सरलता से सीख व समझ सक्ता है. रहा यह की पहिराव बदल जायगा और गुजराती, दक्षिणी, मारवाडी आदि की पहिचान न रहेगी. सो न रहने पर भी हानि क्या है? आखिर तो सब एक भारत माता के पुत्र हैं। एक से होने ही चाहिये। और गुप्त बात जो किसी के बिरोध में हो, तो अच्छा है कि वह खुल जाय और अच्छी बात प्रगट होनेमें कुछ हानि ही नहीं है और एक नागरी लिपि व भाषा के होजाने से लाभ यह है कि कोई भी आदमी चाहे जिस जगह सारे हिन्दुस्थान भर में चला जाय या पत्रव्यव-हार व व्यापार का सम्बन्ध करे, तो उसे किसी प्रकार की कहीं भी कठिनाई न होयेगी. यह अपने विचार दूसरों को बड़ी आसानी से समझा सकेगा.

टेकचंद-अच्छा, यह तो ठीक है, परंतु सब का एक धर्म केंसे हो सक्ता है?

जयचंद्र-जी साहेब, आप्त भगवानने जीव मात्र का एक ही धर्म बताया है. फिर तो मनुष्यों मनुष्यों को एक धर्म धारण करने में हानि ही क्या है? हां, यह और बात है कि सब ही एक सत्य धर्म पर विश्वास न टावें; परंतु एक धर्म होने में हानि तो है नहीं और एक धर्म में ठाने के टिये उपदेशक का विचार भी अच्छा है. कि सब लोग मिथ्यात्व को छोड़कर सत्य धर्म को प्राप्त होकर आत्म-कल्याण करें.

देव.चंद- अच्छा. यह भी मान लिया; परन्तु सवको विद्या एढना एढाना तो उचित नहीं है, वयों कि जब सब पह जावेंगे, तो फिर मजदूरों व नौकरों का मिलना कटिन हो जायगा. सब लोग बरा-बरी करने लगेंगे और शुद्रों को नहीं पदाना चाहिये इस से शास्त्र आज्ञाका लोप हो जायगा.

जयचंद-यदि सब लोग पढ़ गये और समान अधिकार मांगने लगे तो हानि ही बया हुईं ? इसी लिये तो यह कहा है प्रत्येक कि आदमी को सब प्रकारका धंधा सीखना चाहिये. ताकि मनुष्य परा-धीन न हो सके. कहामी है-"उद्यम नाना भांतिके, सीख जहां लग जीय; क्या जाने किस समयमें, कौन सहाई होय" और अधिकार तो जीव मात्रको मोक्ष तक जानेका है. फिर संसारी बातोंकी वात ही क्या है ! सिवाय वैष्णव सम्प्रदाय के कुछ पुराणों के और संसारका कोई भी मत किसी को चारों वर्णमेंसे पढ़नेको नहीं रोकता है और जय जैन शास्त्र के अनुसार शूदों को क्षुलक तक के बन लेन का अधिकार है, तो भला पढ़ने का अधिकार कैसे नहीं है ? विना पढ़े उन्हें इतनाबोधही कैसे हो सक्ता है / अब रहा यह कि नौकर नहीं मिलेंगे. सो भाई साहेब, यह कहां की भलमन्त्री है कि अपने चन्द रोजके स्वार्थके लिये दूसरे दीन प्राणियोंको उनके अधिकारोंसे वंचित रखना ? उनको आत्मकल्याण के मार्ग में कंटक विछाना आप ही क्यों न अपने पैरों आप खड़े होवें ताकि दुसरों का मंह न ताकना पड़े ?

टेकचंद—यह बात भी ठीक है; परंतु सिव होग विदेशों में जावे और विदेशी भाषा सीखे, यह मैं नहीं मान सक्ता; क्योंकि विदेशी भाषा पढ़नेवाले हमारे भारतीय युवक जब विदेशोंमें गये बिना ही स्वधर्म, कुलाचार, व रीति भांति आदि सब कुछ छोड़ बैठते है तथा अपने बड़े

बृढों और देशीभाइयों व गरीबों से धृणा करने लग जाते हैं; तब फिर विदे-शोंमें कैसे वे सदाचारी, और धर्मात्मा रह सक्ते हैं ! मेरे विकारसे तो जो विदेश में जाकर भृष्ट हो आया है, वही औरोंकोभी अपना साथी बनाने को चाहता है जैसे नकटा औरोंकी नाक देख नहीं सक्ता है।

जयचन्द्र—भाइ साहेब, यह बात ठीक है; परंतु यह दशा उन अध पंढे लोगों की होती है, जिन्होंने अपना घर तो देखा ही नहीं है और परका घर भी पूरा नहीं देखा. इसी लिये वे अममें पुड़ कर भटक जाते है. कहा है कि—

"नीम इकीम खतरे जान, निम मुद्धां सतरे इमान-"

तात्पर्य-विगाड़ अधूडे लेगोंसे ही होता है और इसमें अपराध आपकाही है। क्यों नहीं आपने बचपन से उन्हें अपने धर्मकी शिक्षा दी ? क्यों नहीं उन्हें कुला-चरण सिग्वाये ? क्यों नहीं उनको सहुणों का पात्र बनाया ? मैं कह सक्ताहं और कई नमूने भी ऐसे दिखा सक्ताहं कि जिन्होंने विदेशी माषा पढ़ी है व विदेशों में भी जा आये है, तिस परभी सच्चे देशहितैषी व स्वधर्मीन्नत्यभिलाषी है और अपना तन, मन धन भी इन्हीं परोपकारी कार्यों में न्योछावर कर रखा है। जैसे अर्जुनलाळ सेटी वी. ए; मदन पोहन माळवीय; सत्यदेवजी; मि० गोखले, जग

मंदिरखाल बैरिप्टर इत्यादि इत्यादि. इस-से स्पष्ट विदित होता है कि विदेश और विदेशी भाषासे किसीके विचार नहीं भिगड़ते है. न आचरण व धर्म भृष्ट होता है; किन्तु सत्यार्थ शिक्षा के अभावसे।

अब यदि आप यह कहिये कि जब हम लोगोंको देशमें ही नौकरी चाकरी व धंधा मिलता है और आजीवका चलती है तब विदेश क्यों जाना ! क्या विना बिदेश गये और विदेशी भाषा सीखे हमारा लौकिक व पारलैलिक कार्य नहीं बन सक्ता है ? तो उत्तर है कि निसन्देह नहीं बन सक्ता है कारण कि प्रधा तो राज्य ही विदेशी महानुभावोंका है, इस लिय राज्य भाषा पढ़ना अत्यावस्यक है, दसरे विज्ञान शास्त्र, अर्थ शास्त्र, तत्व शास्त्र, आदि सब लोकोपयोगी शास्त्र विदेशी भाषाओं में हैं: शिसरे आजकल विदेशी लोगोंका व्यापार बहुत बढ़ हर एक प्रकारके कल कारखाने यंत्रा-दिक विदेशोंमें ही तैयार है और उन की यथार्थ शिक्षा विना विदेश गये प्राप्त हो नहीं सक्ती है, कारण जो बातें वहां के बच्चों के लिये खेल है, वे बातें हमारे लिये बिलकुल नई, आरचर्यकारी, और कठिन माल्यम पड़ती है; यही कारण है कि विदेशी मनुष्य बहुत थोडी उमर-हम बूढों की बुद्धिको बाले जाकर चुकरमें डालदेते हैं, हम लोगोंको छोटी छोटी वातोंके लिये उन का मुंह ताकनी पड़ता है। हमारा खाना पीना तकभी सब उनके हाथमें हो रहा है। एक दिनको भी यदि वे लोग हमारे देशके कारखानोंसे छुटी ले लेवें तो हमारे हाथ पैर बंध जांय इत्यादि कारणों के लिये भी हमको विदेशी भाषा जानना और विदेशोंमे जाना अत्यान्वश्यक है।

हम लोगोंको अभी उनसे बहुतसी बातें सीखना है यदि आप कहिये कि हमारे पुराणों व शास्त्रों में क्या नहीं है जो औरों-से सीखें दे तो बताइये कि आप के यहां कान ऐसे महात्मा जानकार है. जो हम लोगोंको सिखावें । प्रथम तो वे शास्त्र ही अब आप के पास नहीं रहे कि जिनमें यह सब वर्णन था, दूसरे कोई जानकार नहीं, तीसरे जो कोई कुछ ऊट पटांग जानता भी है तो बह औरोंको सीखाकर उन्हें अपने बराबरी का बनाना नहीं चाहता है। चाहे तो मरजाय, पर और को न बताये. बस इसीसे आप की सब विद्या चल बसी ।

आप लोग केवल इसी बात को कह-कर बड़े बन रहे हैं कि यह सब विद्या हमारे पुराणों की है; परंतु विदेशों में जाकर देखिये व लोग कैसे प्रेमसे सबको सिखाते हैं? नित्य नई कलें निकालते हैं और अपने बुद्धिख से सारे देशको पाळावाल कर रहे है। अहा! धन्य है वह देश! जहां पर मिखारी भी मिक्षा मांगते हुवे नहीं दिसते हैं.! टेकचंद-वाह भाई! आपने तो बड़ा भारी व्याख्यान दे डाला। अजी, न बहुत खाना, न दूर जानाः बड़ों ने कहा भी है-"सनका तो अरु कोदों खाबोः काहे को पूत विदेश हि जाबोः"

और फिर वहीं धर्म का मर्म तो रह ही नहीं सक्ता है। जो विदेश में गये, सो ही साहेब बन आये. और तो कुछ न बनेगाः परन्तु टेबिलपर बैठकर कांटा और चमचे से, छुरी से काटकर और जूते आदि पोजाक पहिरकर सब जातियों के साथ सब भक्षाभक्ष खाना, सोडा हेमनेट चाय काफी पीना, नोकर को बहरा, मावाप को ओरुड फूल बिंदे मूर्ल । एवदेशियों को बैगर्स (भिक्ष्) आदि कहना, मुंछ मुडाकर विचित्र चेहरा बनाना, पानी के बदले कागज से मलद्वार पोछना आदि सिख आते हैं, अच्छा तो यही है कि घर में रह कर थोड़ा कमाना और पैर फैला कर सो रहना, शास्त्रोमें कहा है। कि कौन किस-का होता है, जीव अकेला पैदा होता है और अकेला ही मरता है, इस ाल्ये देश देश में क्या रक्ला है ! किसी पकार कमा कर खाना और बापदादों की रीति बनाये रहना।

जयचंद-बस भाई खूब कहा! आप की उक्त कहावत (सनकातो अरु कोदों खाबो, काहे को पूत विदेश हि जाबो) ने ही इस देश को (जो सोने की चिड़िया कह के प्रसिद्ध था) घूल में भिला दिया है. हाय अफसोस!! न जाने कब ये मिध्या कल्पना यें हमारे भाइयों के हृदय से दूर होंगी. भाइ टेकचंद जी! आप तो बड़े ही बुद्धिवान् हैं, परंतु न माल्स आप के ऐसे विचार क्यों हो रहे हैं ! पुराणों में देखिये ये सब कथायें भरी पड़ी हैं.

श्रीपाल, राजा श्रेणिक, कृष्णहरि. पांडवा दि सब ही विदेशों में गये और दिग विजय करके यश प्राप्त किया है. और भाई! सब ही एक से तो होते ही नहीं हैं. मान लीजिये कोई आप के कहने के अनुसार विदेश में जाकर या विदेशी भाषा पॅढकर बिगड भी गया, तो क्या वह कार्य भी खराब हो गया! क्या यहां ही रह ने और अंग्रेजी न पढनेवाले नहीं बिंगडते हैं ? विदेश और विदेशी लोग किसी को भी नहीं कहते हैं कि तुम हमारे जैसा खान-पान करो या हमारी नकल करो यह केवल हम लोगोंकी दिली निर्बलता है. मैं तो यह कहूंगा कि आप ही उन्हें कोट पतल्न पहिरने को लाचार करते हो. कारण कि जब कोई हेट कोट, पेन्ट, बूट, कालर, और नेकटाई बांधकर आता है. तब आप उसे बड़ी विनय के साथ बैठा हैते है, आदर करते हैं और जो पगड़ी अंग-रखावाला आया तो सीधे नहीं बोलते. इंग्रेजी पढ़े हुवों की आज्ञा सिरपर रखते. और संस्कृ तज्ञ पंडितों से पृणा कर ते हो ! तम यह उन्हे उल्टा सिस्ताना नहीं तो

क्या है ? और बाप दादोंकी बात कही सो ठीक है. बताइये, आपके दादा पर-दादा कब रेलमें याला करते थे? कब पाइपका पानी पीते थे ! कब तार भेजते **थे इत्यादि इ**त्यादि: परंत आप क्यों कर रहे हैं ? जाइये, पांव प्यादे और दूर देशांतरोंको आदमी के हाथसे भेजिये पत्र क्यों पोष्ट द्वारा भेज रहे हैं ? ताप्तर्य यह है, कि. कालके अनुसार जीवों के भावो में भी फेरफार हाता है. द्रव्य क्षेत्र की रीति रिवाज भी बदलती है। इस लिये जो इस चक्रमें पहिले ही से चेत जाता है बही सखी रहता है और जो सोच विचार में ही सुस्त पड़ा रहता है, वह धको खाकर पीछे पडा रह जाता है। इस लिये काल के अनुसार धर्म से अविरुद्ध रीति रिवाजो में फेरफार होना अत्यावश्यक है बेसे ही राज्यभाषा का, व व्यवहारिक भाषा का जानना भी आवश्यक है। यद्यपि ये भाषायें हमारी आत्माका कल्याण नहीं कर सक्ती है. तोमी आत्म कल्याण के मार्ग में यदि धर्मशिक्षा के साथ साथ पढाइ जांय तो अवस्य ही सहायक हो सक्ती है; क्यों कि मनुष्य की आर्थिक दशा यदि अच्छी होती है तो उस का चित और बातों में भी लगता है और यदि दरिद्रताने घेर रखा हो तो. तो उस दिन राप्त सिनाय रुपया पैसे के कुछ नहीं दिखता है। वह सदैव आतरौद

उस उपदेश फुपदेश कुछ भी नहीं लग सक्ता है, इस लिये कृपानाथ ! रूढी को छोडिये और उन्नित करने वाले लोगोंको देख कर अपनी इस अज्ञानांधकारग्रासित जैन समाज को उन्नत कीजिये. अब समय सोनेका नहीं है खूब जी तोडकर आप बालकों को सब प्रकारकी प्रकार का उद्यम, और सब प्रकारकी विद्या इस विचार से सिख लाइये कि हमारे देश के वालक अपने पूर्वजों या विदेशियों-के सद्रश व्यापार कशत होंवे और उत्तम व्यापार द्वारा द्रव्योपार्जन करके न्याय-पर्वक सुखाँ को भोगते हुवे धर्म और मोक्षका साधन कर सके।

श्री जिनधर्म के प्रसादसे आजकल चारों दिशाम फलाहार की महिमा फैल रही है। मद्य मासादि निकृष्ट पदार्थीसे धुणा होने लगी और धडा धड लोग इन्हें छोड रहे है. उन स्थानों में जिहां के लोग केवल मांसाहारी थे.] आज पूरी और शाक दूध मलाई आदि बहुतायत से मिलता है. इस लिये जो लोग अपने धर्म की रक्षा करना चाहें. वे विदेशोंभें जाकर भी अन्नाहार फलाहार खर्च से निर्वाह से भले प्रकार कम कर सक्ते हैं. हां यह बात अ-वश्य है. कि वहां के खर्च ऐसे बढ़े हुवे हैं कि जिस से अपने हाथ से बनाना या नौकर साथ में हे जाना प्रत्येक पुरुष भावोंसे कर्म का भार बढाता जाता है. को साध्य नहीं हो सक्ता है. इस लिये उन लोगों के हाथ का बनाया हुवा भोजन खाना पड़ता है। तात्पर्य छुवा छूतसे वचना हाल में वहीं कठिन है.। हां एक उपाय यह है. कि जै से यहां पर बोर्डिंग हाउस (छात्रालय) श्रीमानों ने बना रखें हैं और बना रहे हैं. यदि इसी प्रकार इंग्लेंड, न्यूयोर्क, चिकागो, आदि विद्याध्यंन के स्थानों में जैन बोर्डिंग हाउस बनाकर शुद्ध भोजन और धर्म शिक्षा का योग्य प्रवन्ध कर दिया जाय, तो निःसन्देह यह कमी दर हो सकी है.।

अब यहां शंका यह होती है कि जब अभी तक जैनियों का एक हाईस्कृल तक भी नहीं है तो फिर कालेज ब विदेशों में बोर्डिंग आदि का होना जेख-चिल्लीकैसे बिचार है; परंतु भाई टेक-चंदजी! यह शंका निर्मूल है. हम लोगों में दानियों की कमी नहीं और द्रव्यकी भी कमी नहीं है. यदि कमी है तो केवल समझने की: परंतु अहो भाग्य! यह कभी भी अब शीघ्र दूर होगी । हमारे श्रीमानों का ध्यान इस ओर खिंचने लगा है। देखिये दानवीर जैन कुल भूषण सेठ मा-णिकचंद हीराचंद जै. पी. बम्बई ने प्रथम ही विद्या मंदिरों की नींव डाली. फिर औरोंने भी यथाशक्ति अनुकरण किया। आज आप के सन्मुख श्रीमान सेठ तिले-कचंद कल्याण मलजी इंदौर का अनुकर

णीय २००००) का विद्यादान आप के नव युवक और जैन जाति के चित्त को कैसा उत्साहित कर रहा है, जिस से बहुत ही शीघ आर्टस्कूल के साथ धर्म विषय आवश्यक रखकर हाईस्कूल बनने-वाला है। इस लिये प्यारे भाई! यदि ये श्रीमान् लोग इस प्रकार से समया-नुसार अपना द्रव्य व्यर्थ [अनावश्यक] व्यय से रोक कर विद्यामंदिरों, सरस्वती भवनों और कला कौशस्य शालाओं. जात्राथम, अनाथाश्रम, ब्रह्मचर्याश्रम आदि में लगाने लगे, तो एक एक सेठ ही कई संस्थाओं को चला सक्त है। देखोना हर वर्ष इनके द्रव्य से रथ याला प्रतिष्ठा मेला आदि होते रहते है. । विवाहोमें संडे मस-तंड रांड भांड आदि हजारों रुपया खा जाते हैं। पुत्र जन्म की खुशी में व स्वजनों की मृत्यु के नुकते आदि में हजारो रुपयों की जूंटन करके घूरे भरे जाते है. सब उदारता नहीं तो क्या है ? उदारता अवस्य है: परंतु "समझ वा फर" है। इस लिये अपना कर्तव्य यह है. कि अब इन्हें इस समय की आवश्यक्ता की पूर्तिका उपाय बताबें.

(शेषमग्रे) मा. दीपचंद परवार-नरसिंहपुर (सी. पी.)

नवा वरस माटे बे बोछ.

જગતજનની પદ ધારણ કરનારી વીર **માતાએ** મને સંસાર સુખરૂપ કરનારી જૈન **મ**હિલાએ ા અને બાળાએા ! તમે ગયા વરસે જે જે ઉત્તમ કામા **६री गयां.** तेपीक रीते तमे ग्या नवी छवन-**કળા વધારનાર એવા નવા વરસમાં નવું કામ**, **નવી વિદ્યા. નવા અ**1શ્રમે:. નવી શાળાઓ. નવાં તીર્થદરાંના, અને નવું આત્મિક વધારવા જાગ્રત થશા. એવી અમારી પૃર્ણ ખાત્રી છે. ખહેના ! નવા વરસમાં જેમ બધી **રતએ નવા** અલ, નવા પાક અને નવાં કળા **અાપી જમીનને** આશીર્વાદરૂપ કરે છે, તેમ તમે પણ નવા કળાને ઉપ્તજ્ઞ કરનાર ભવિષ્યની માતાએ તે ચાન્ય શિક્ષણ આપી તૈયાર કરા, અને તમે આશીર્વાદરૂપ બના.

આપણા મુખારક વરસમાં આપણે કાંઈ સારાં કામના આર'લ કરવા જોઇએ અને તૈને પૂર્ણ કરવા ખંતથી મચ્યા રહી આપણા હેત પાર પાડવા **ઝી વીરની** પ્રાથભા કરવી જોઇએ.

હવે તે કામ એજ છે કે આપણી સ્ત્રી સમાજ, જે દિનપર દીન અધાગતિને પામે છે અને માહ નિંદ્રામાંથી વ્યવત થતી નથી. તેને જગાડવાનું કામ ચ્યા વરસમાં હાથ ધરવું જોઇએ. બહેના ! આપણી જૈતન કામ સિવાય બીજી સમાજતી બહેતા કવાં સારાં કામા કરેછે. કાઈ બહેના પુસ્તંકા રચે છે, કાઈ ચાપાર્નાઆં કાઢે છે. કાઈ ડાેકટરનાં કામ સીંબે છે. કાેઇ કવિતા ખનાવવામાં કશળ હોય છે, તેા કાંઇ સંગિતમાં પાસ થાય છે. કાઈ ચિત્રકારનું કામ શીએ છે. કાઇ પરાપદારાંથં પાતાનું છવન જગતના કલ્યાણ માટે અર્પણ કરે છે, તા રાહ્યું દેશ પરદેશ કરીને અહમહિતના ઉપદેશ કરે છે. આવી રીતે જોઇએ ઇએ, ત્યારે હવે તમે જૈન જ્હેનાએ પણ આમાંથી એ દેશ કરવા જવાના, કનામ આપવાના તથા

ચાર કામ હાથ ધરવાની કાશિષ કરવી જોઇએ.

પ્રથમ નવા વરસમાં જેટલી ગુજરાતમાં વિદુષી ગહેના હાય, તેમને અજ્ઞાનદશામાં કસાયલી હહેતોની ચિત્તરૂપી ભૂમિ સ્વચ્છ કરન વાને પાત પાતાના પ્રાન્તમાં ગામે ગામ જઇ ઉપદેશ કરવા અને તેના રિપાર્ટ એક વિદુષી ગહેનાના કમિટી હોય તેને સાંપવા જોઇએ.

ખીજાં કામ જે ગહેતા ભણેલીતી સંખ્યમાં ગણાતી હાય તેને વરસમાં ૧૨ ક્ષેખ તા જરૂર ''દિગ'બર જન" ઉપર સ્ત્રી ંકળવ**ા**ના માહલી આપવા પ્રતિના કરવી જાતે કે એ.

સ્રીજી વાત એ છે કે બંધ્ર**ે**મા તથા માતાઓએ પાતાની કન્યાઓને નિશાળમાં ૮ થી ૧૨ વરસ સુધી શિક્ષણ આપવા સુકલું નહી જોઇએ અને જે બાળવિધવા હાય એવી વટ, દિક્ર્યઓને શ્રાવિકાશ્રમમાં મેલ્કલી વર્ણ ચાર વરસ શિક્ષણ અપાવી કુળમાં શાંતિદાયક निवडवा छजासा इरवी ब्लेस्के, तेमक संधवा સાભાગ્યવતી *ગ*હોતે.ને માટે ખપારના વખતમાં કાંઇ ત્રાન લઈ શકે એવાં કલાસાે ઉધાડવા માટે દુત પ્રતિજ્ઞા કરવી જેવેઇએ.

ચોથી વાત એ છે કે દરેક પ્રવ્તમાં એકિક અ ધ્રમ ઉઘાડવા જોક્એ તેને માટે શિક્ષક બાઇએો તૈયાર કરવા એક મુખ્ય ટ્રેની'ગ દા-લજની માકક આશ્રમ રહેવું જોકએ અને સાથે પુરતકા પણ તેને અનુકળ છપાવવાં જ્વમાંએ.

આ પ્રમણે હાલ આપણે નવા વરસમાં આટલું કામ દરવાના નિશ્વય દરીશાં. આ કામ **મુંબાઇ શ્રાવી**કા**શ્રમને** માથે સાપવું ચાવ્ય થઇ પડશે.

ગહેના ! આ કામને માટે બધી ગહેના પાતાની ગાંદના પર્ચાનહીં કરી કરેક. માટે અમારી પાસે એક કુંડની ગાઠવણ કર-વામાં આવી છે. જેમાંથી વિદ્ધી ગહેતાને ઉપ-



राय बहादुर श्रीमान श्रीमंत राठ पूरनसाहजी साहब ऑनररी मेजीस्ट्रेट-सीवनी (छपरा)

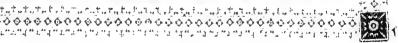
Rai Bahadur Shriman Shrimant Sheth Pooransahji — Seoni.

(જેત મદિરા, પ્રતિશાઓ અને જેન ધર્મની પ્રભાવના માટે લાખા રૂપ્યા ખર્ચનાર જાણાના જૈત ગ્રહસ્થ.) ዾኯዀፚፚፚጜጜኯኯፙጜዀዀዀዀቔፙፚፚፚጜዀፙ ፟ዾ፟ዾዾዾዾዾቝቝቝቔቔቝቝቝቝቝቝቝቔቔ ዹ፟ዄኯዸቒዹቝፙጜ፞ጜዹኍፚቑቑቔቚቝፚጞጞጜዀ









श्रीमान राय बहादुर शेठ नेपीचंद नी साहिब और आपके मुपुत्र श्रीमान कुंवर टीकमचंद नी साहिब-अन्धेर Shriman Rai Bahadur Sheth Nemichandji Saheh-AJMER.

(હિંદુસ્તાનમાં જાણીતા ધર્મપ્રેમી કરાડાપતી અને રાજમાન્ય દિ. જૈન પ્રહ્રથ)

ભાગવાનાં પુરતકા કે આશ્રમમાં રહેનારને માજન ખર્ચ વિગેરે મળે તેમ છે.

अंक १]

ખહેતા ! જયારે મારી ધતવાન વિધવા ખહેતા ધારશે કે અમારૂં જીવન અને ધન સમાજ-ને સાંપવં એ એક મદાન મંદિરમાં **भिराजभा**न કराव्या केटल' पुण्य छे. तीक આપણી ઉત્રતિ થશે. મારી કેટલીક પરાધીન-તાને પ્રાપ્ત ભયવાન બહેના જગતનાં કે સગાં સંબંધીના ડરથી પાતાનામાં શક્તિ છતે ધન કે જીવન અર્પણ કરવાને ડરે છે અને મનમાં મું ઝાય છે. તેમની મુઝવણ કાઢી નં ખાવનાર क्तेर्धशं ते। स्पेष्ठ प्रथयभाजि छे.

મારા **અ'ધ્યએા**. જેતે પક્ષપાતદ્રષ્ટિને છેાડી ખ્હેનાનું કલ્યાણ ઇચ્છે તા પાતાની ઉન્નતિમાં જે હાલ મહેનત પડે છે તેથી પા ભાગની પણ મહેનત ન કરવી પડે. માટે હવે બહેના ! ઉપરના કામને શરૂ કરવાં એ ચાર ખ્હેના પાતાના નામા તીચેને શરતામે માકલી સમાજનું કામ કરવા તપ્તર થશે એવી આશા રાખ છે. હવે આટલી સચના કરી મારી લેખિનીને વિશ્રાંતિ આપું છું.

ો સમાજની નાની ખહેન શ્રાવિકાશ્રમ તાડદેવ મુંબઇ સગન.

नवा वर्ष माटे किचिंत बोध.

(લેખક.-શા પુનસી અરજીન ધુલીઆ.)

शेर. સદા દૌર દારા દિખાતા નહી;

ગયા વખ્ત ફિર દ્વાથ આતા નહી. જેમ આજ સુધીની દિષવાળીઓ વહી ગઇ તેમ આવતી દિષવાળીઓ પણ વહી

જશે. જેમ ગયેલા વખત કાઇ કાળે કાઇ

ઉપાયે કરી મળનાર નથી. તેમ ગંઈ છ દગી પણ મળનાર નથી. ગઇ જંદગીમાં કાંઇક શભ કાર્યો તમાએ કાર્યા હશે. તા તમારા હદયમાં તે વિષે અત્યાનંદ થતાજ હશે. તેમ તે મુજબ કાંઇક ખુરા-અશભ કર્મા તમારા હરતે થયાં હશે તા તે વિષે કેટલા ખેદ થતા હશે. તે અશબ કાર્ય માટે તમાર અત:કરણ તીત્ર વેદનાઓથી પીડાતું હશે, તે વાંચનાર સત્રજનાની દ્રષ્ટી થહાર નહીંજ હોય તા તેવી અશભકૃતીને સુધારી શુભકૃતી **ધારણ કરવી** એ મતુષ્ય કર્તાવ્યજ છે. લાેભ. માન. માયાદિ વિકારાતે વશ થઇ આપણે કેટલી કરીયે છીયે, આપણને ન શાલતાં ન કરવા જેવાં કત્યા આદરીયે છીયે તે **અશુભ**ા **કાય**ે કરવાથી મોડું યા વહેલું **ચો**ડું **યા વધારે પ**-રિણામ આ છ દગીમાં અનુભવાય છે. ધારા ક ચોરીથી બ'ધન, વિષય સખથી દ્રષ્ટ રાગા. તા વિચારા કે આ મનુષ્યભવના દુષ્કત્યાથી, આ દેહથી આત્માને ત્યાસતાં આન ગળ શું શું દ્વ:ખા અનુભવવાં પડશે, કિયા પ્રકારના કુળા ચાખવાં પડશે. તેથી અજારવાજ છીએ. જેવા કળ વાવીશું તેવાં મેળવીશું. જેવું કર્ત વ્ય કરીશું તેવા કૃળા ચાખીશું. લીમડાના કળા હમેશી કડવાં તા આંખાના કળા મીકાંજ ખાઈશુ. આ છંદગીમાં **દૃષ્ટ રાગ થતાં** દવા મેળવવા યત્ન કરીયે છીયે તેમ આ સ'સાર૩પી વ્યાધિથી–ઉપાધિથી દૃર થવા ધર્મ-રૂપી દવા મેળવવા તત્પર થવુંજ જોકએ. સ'સાર સમુદ્ર તરવા માટે **ધમ'રૂપી નાવ*** મેળવવા ખાસ કરેક જૈન ખ'લુએ પ્રય-ત્ત કરવાજ જોઇએ.

આપણે સંસારની વ્યાધિમાં એટલાં મું ઝાયલા છીએ કે લગભગ ઘડી યા અરધી ઘડી પ્રભૂત નામ સ્મરણ કરનાર કાઈજ તત્પર થતા હશે. સંસારની વ્યાધિ તાે આખી જીંદગીભર લાગ-લીજ છે. આ ક્ષણભગુર દેહના લાબે અને પ્રીવારાદિ સંબંધિઓની માયામાં કસાઇ આ ઉત્તમ જૈન કુળના પૂર્વ પુન્યે પામેલા નરભવતે વ્યર્ધ ગુમાવીયે છીએ, પ્રભુના નામને સદાને માટે વિસારીયે છીએ. વિચાર કરા નાના યા માટા ગરીખ યા તવંગર રંક ય! રાજ્ય ખળવાન યા ખળહીન વિગેરે અનંત જીવાને કાળરૂપી દૈત્યે ખાધા છે તો આપણને કાળરૂપી દૈત્ય મુકી દેશે ! ના કદીજ ન- હી. એવું આપણે સમજ્યે છીએ, જાણીયે છીએ છતાં અજ્ઞાન લઘુ ખાળક માકક આ-પણો વખત ગુમાવીયે એ શું યોગ્ય કહેવાય !

ધમે બંધુએ ! આપણા અરિહંત દેવ યા ખીજ ચેવીશ તિથે કરીના નામમાં કિંવા તેઓના ગુણ ગાવામાં, યા તેઓને નમવામાં, તેમના વિષે પ્રેમ ન હોય એવા કાઇકજ જૈન, દરેક પંથમાં નિકળશે તો એવા શ્રીવિત્તરામ પ્રભૂતી આજ્ઞાની માન્યતા, અથવા તેમના ભંડાર રૂપ અનેક ગુણામાંથી એક પણ ગુણ સમજવા, સમજાયલા ગુણાનું હદયમાં સ્મરણ કરી અરિહંત દેવનું આરાધ્યન કરવું અને શુભ કાર્યમાં પ્રવૃતિ કરવી. ધાર્મિક વૃતી પ્રભૂ સમીપ ખંચી જઇ આનંદ કરાવે છેજ, તો શું શુભ વૃત્તિના વિચારામાં શું થાઇ સદા ચરણ સેવી પ્રભુપદમાં લીન થવું અને આવતા દૂ:ખોને દૂર કરી સૃખી થવા પ્રયત્ત કરવા એ ઉત્તમ માર્ગ નથી ?

સુખી થવું એ દરેક મનુષ્યને પ્રિય છે અને તે માટે મનુષ્ય કેટલાં પ્રયત્ન કરે છે. કેટલાંકને થાપ આપે છે, કેટલાંકને ખાટે માર્ગ ચડાવે છે, તા બીજાના મનને દૂ: ખી કરાવી સ્વહદયમાં આનંદ માને છે. એવા દૃષ્ટ કૃત્યોના કળ આપણને લીંમડાના કળ માફક કડવાંજ મળશે. એવાં બીજા કેટલાક અનેક દૃષ્ટ કાર્યો કરી અનેક ભવ કરવાનાં કર્મ બાંધિયે છીએ, તા એવા અવિચાર અધર્મરૂપી કાર્યોને ત્યારી સત્ય માર્ગે પ્રવૃત્ત થઈ ધર્મને ઓળખી ધર્મને માર્ગે ચાલી બીજાઓનું ભલું

ઇચ્છી તેઓની વૃતિને દઢ કરાવવી એથી બીજો ક્યો ઉત્તમ પરમાર્થીક ધર્મ છે? તો એવા ધાર્મીક અને પરમાર્થીક કાર્યો કરવા તત્પર થવુંજ જોઇએ.

આ નવું વર્ષ આપણે જુના વર્ષની વ્યવહારિક શુંકા તપાસીયે છીયે અને નવા વર્ષની શુંકામાં સ્મરણ તરિંક નેંધ લક્ષ્યે છીયે તો મારા અગાનીનાં કિંચિત બાધને આપણા હદયરૂપી શુંકમાં નેંધ કરજે, જેટલાં શુંભ શુંણો હોય તેનું સ્મરણ કરવાં અને નવા શુંણો ઉમેરી આ અસાર સ'સારફપી નદી ઓળંગવા તુંબડારૂપી ધમ'ને હદયે રાખવા મારા ધર્મ બ'ધુંઓને નસ વિન'તી છે.

જેમ આ નવું વર્ષ આપણને આનંદ આપે છે, અને તેથી પણ આપણાં શુભ કાર્યો વિશેષ આનંદ આપે છે, તો તેવીજ રીતે આ દિષવાળીના આનંદ જેવા આગળ આવતી જંદગીમાં આનંદ મેળવા, ધર્મનું ધ્યાન ધરી નરદેદનું સાર્થક કરા, મિલનતા તથા આળસાદિ શત્રુંઓને દૃર કરા. પ્રભ્ના સુણુગાનતાનમાં લીન થાઓ અને આગળની આપણી જંદગી સુખમય એવીજ રીતે વીતા, એવું શ્રી વિતરાગ દેવ પાસેથી માંગી અને તેવીજ રીતે આ ધર્મનું જ્ઞાન આપતું ''દિગ' ભર જેન' માસિક હમેશાં એવા સદ્ધામાં કુર્યા સુણાપી અમર રહા, એવું પણ વધારામાં કુર્યા આપી અમર રહા, એવું પણ વધારામાં કુર્યા આપી રજ્ય લઈશ.

ઑમ ઑમ ઑમ આનંદ આનંદ!!

समभाव सिद्धिः

Attainment of Universal Love.

લેખકતે એક વેળા એક સ્વજતે પ્રશ્ન કર્યો કે ભાઇ ''**દુનીસ્મામાં દ્રવ્ય કેટલું છે''** લેખકતા મૂખમાંથી આ પ્રજ્ઞનું ઉત્તર એવું નિકળા ગયું કે ''આજ દિવસ સુધી મનુષ્યે, મનુષ્યતે ઉપયોગી જેટલી મહેનત કરી છે તેટલું દ્રવ્ય છે, નથી તેથી પાઇવધારે કે નથી તેથી એોછી એટલુંજ નહિં, પરંતુ હજી પણ જેટલી જેટલી મેહેનત વધાર્યા જશે તેટલા પ્રમાણમાં દુનિયાના દ્રવ્યમાં વૃદ્ધિ થયા કરશે."

આજ પ્રકારે વાંચક સ્વજનામાંથી ક્ષેખ-કને કાઇ પ્રશ્ન કરે કે " સ'સારમાં સુખ કેટલું છે ?" લેખક શાઘ્ર ઉત્તર આપી દે કે– " સંસારમાં જેટલા જેટલા સમભાવ છે, તેટલું સંસારમાં સુખ છે. નહિ રતિ માત્ર વધારે કે નહિ આંછું અને જેટલા જેટલા સમભાવ વધ્યા છે અને વધતા જશે, તેના પ્રમાણમાં સુખ પણ વધશે અને વધ્યા કરશે."

આ પરથી વાંચનાર એવા સાર ખંચી શકશે કે લેખકના કહેવાના આશ્રય એવા છે કે દુનિયામાં હાલ લક્ષ્મા છે તેટલી કાયમ રાખવી હાય, ચંચળ ગણાતી લક્ષ્મીને સ્થિર કરવા હાય અથવા તા દિવસાનુદિવસ તેની દાહ કર્યાજ જવી હે.ય તા ઉપયાગ, મેહેનન-ઉદ્યાગ, છે તેટલા કાયમ રાખવા અને બીજન વધારના જવા. તેજ પ્રકારે સંસારભરમાં જેટલું સુખ છે, શાંતિ છે, આનંદ છે, તેને રિથર કરવા હાય તા સમભાવ-પ્રેમભાવ કાયમ કરવા અને તેઓને વધારવાં હાય તા સમભાવને વધારવાં.

સમભાવ તે શું 🕴

અમેરિકા ખંડના રાજ્ય બંધારણમાં પ્રથમ નિયમ એવા છે કે All souls are equal. સર્વ મનુષ્યા સમાન છે. તેમ જો તમે જૈની હો, તા સર્વ આત્મા સમાન છે. સર્વમાં આત્મત્વ એકફપ છે. જેમ અનેક અલંકારામાં સ્વર્ણ એક છે, તેમ અનેક જ્વામાં જીવત્વ, આત્મત્વ એક છે; એમ જોનું તે સમભાવ કે સાર્વઝ પ્રેમભાવ (Universal Love) ગણાય. જીવા ભિષ્નભિષ્ન, આત્માઓ ભિષ્નાભેષ્ન, પરંતુ તેમાં આત્મત્વ, જીવત્વ એક

છે એવું જોવું તે સમભાવે અખિલ વિશ્વના આત્માને જાયા કહેવાય. તેજ પ્રકારે પ્રાણુઓ લિન્ન બિન પણ તેમાં પ્રાણુત્વ એક એમ જોવું એ સમલાવે જોયેલું ગણાય. એનીજ પેઠે મનુષ્ય લિન્ન ભિન પરંતુ તે બધામાં મનુષ્યત્વ એક, એવું નિહાળવું તે સમલાવ ગણાય. જેમ સા, રી, ગ, મ, પ, ધ, ની; એ સાતેના એવાજ લિન્ન, તથાપિ હવાસુર તે એકજ. આવી રીતે પ્રેક્ષણ એકત્વ કરવું તેને સમલાવ કહે-વાય છે.

સમ પ્રાવ શાથી આવે છે?

અહમાના ગુણ્ધી-અહમાના સ્વાભાવિક ગુણ્યી-આત્માના એ રવાલાવિક ગુણને ઉપયો**ગ** (Consciousness) કહે છે. એવા ઉપયોગા આત્મામાં અનંત છે. પરંતુ તેમાં મૂખ્ય બાર ઉપયાગ કે ભાવ છે. આ બાર **ઉપયોગમાં** પ્રથમ ઉપયોગ તે સમભાવ સાધક છે. એ ઉપયોગને શાસ્ત્રમાં દર્શન-ઉપયોગ કહ્યા છે. આ ઉપયોગથી સર્વત્ર સમાનતા દેખાય છે. અને તે મનુષ્યમાં સ્વભાવિક છે. તે જોવું હોય તા મનુષ્ય જન્મતાંજ એક બાળક હાેય **તેને** સર્વત્ર સમભાવ દેખારી. આ ધર મારૂં કે પારકું, આ વસ્તુ મારી કે પારકો એવું બીલ-કુલ હોતું નથી. કારણ કે તેને દર્શન ઉપયોગ વડે માણસ તેને બધા સરખા લાગે છે. ધરા ળધા સરખા દેખાય છે, વસ્તુ બધી **સમાન** જોવાય છે. જેમ સરળ હૃદયનું બાળક સવ[°] સમાન દર્શન ઉપયોગે દેખે છે. તેમ અંતઃકરણના મનુષ્યને સર્વ મનુષ્યા, **સવ** જીવા સમાન દેખાય છે. આટલા માટેજ દર્શન ઉપયોગ એ પ્રથમ શાસ્ત્રમાં કહ્યા છે. અને બીજ ઉપયોગ આ દર્શન ઉપયોગના પાયા ઉપર છે, એમ ધારવામાં આવે તો તેમને વિષમભાવ કહે છે તેવું તેને ક્યાંય પણ **હોય** ર્નાહં. કારણ કે વિષમભાવ એ દર્શ નઉપયોગમાં નથી થતો, તેમ આત્મગ્રુણુથી નથી થતા પરં<u>ત</u>

મિથ્યાદર્શન કે જડભાવથી થાય છે-બ્રાંતિ કે અતાનથી ઉદ્દભવે છે. આ દર્શન ઉપયોગની ખરેખરી ખુંબી સવીત્ર એકન્સ અબેદતાને જોનારામાં પ્રગટ હોય છે. સર્વત્ર એક-સમ-અભેદ-પ્રેમ-અખંડ પૂર્ણ હાય છે. આ અબેદ ઉપાસીઓ કે અબેદના અનુભવીઓમાં વિપમ-ભાવના છાંટા પણ નથી હોતા. દાખલા તરીક **આત્મા,** પુદ્દગલ, આકાશ, કાળ, ધર્મ[°], અધર્મ[°]; એમ છ ભિન્નભિન્ન ત્રાન ઉપયોગ જાણવાના પ્રયત્ન નહિં આદરતા એ બધામાં દ્રવ્યત્વ છે. ક્રમત્વ તેજ સર્વત્ર એક દેખાય છે. તેઓએ દ્રવ્યત્વના છ ખંડ કરવા સાગતા નથી પણ **દ્રવ્યત્વ-દ્રવ્ય એને જો**ઇ દર્શન@પયાગનું સાધક સમભાવમાં અહો છે. આ દર્શન ઉપયોગ વેદાં-તમાં મુખ્ય છે અને દર્શનઉપયોગ જૈનમાં પણ **સમ્યક્દર્શન-સમતા-સમ**ભાવને પ્રથમ ગણેલું **છે તેથી વેદાંતને** અાન દધનાદિ જિનદર્શનનું **અ'ગ કહે છે. જૈતા અ**બેદ માન્યતાના વિરાધી **નથી. પરંતુ પ્રેમી છે. પ્રથ**મ તેમાં સમ્યગૃદર્શન એટલા માટે કહેલ છે કે, પ્રથમ કવ્યને ઓળ-ખવા-દ્રવ્ય તે શું તે જાઓ. આ કેવળ દર્શનઉપ-**યાગવાળા-અબેદ** ઉપાસી-સમસાવીઓમાં તે દર્શન ઉપયોગ વિનાનું હોવાથી તે જ્ઞાન નહિં **પણ અત્રાન છે અને** વિશેષ ક્લેશએ જગતમાં **અજ્ઞાનના છે. દર્શન**ઉપયોગ વડે જેના સમભાવ **દર્શનથી થયેા તેને છે**. દાખલા તરીકે જે માણસને એમ થયું કે હું મનુષ્ય છું અને સર્વ મનુષ્યા અને મારામાં મનુષ્યત્વ એકસર્ખું છે, એ ભૂલી જાય અને પ્રથમ એમ અજ્ઞાનથી જાણી **જાય કે હું મુસંલમીન છું અને આ હિંદ** છે-આ હિંદુ કાપર છે. હિંદુ એમ જાણે ક **મા મુસલમાન ય**વન છે, તેા એક કાકર એટલે પરદેશી ગણ્યા બીજાએ યવન એટલે પરદેશી ગણ્યા. પરંતુ પ્રથમ જો દર્શન એવું હાય કે **આપાંચુ બધા મનુષ્ય છીએ.** પછી સ્વદેશ અને પ્રદેશ મન્તે એકજ પૃથ્વીપર છે. એવું મુસન હાશ ત્યાં ભક્તિ ભરી આંખે નિહાળશે.

લમાન સમભાવીને દેખાય, તા પછી મતુષ્યત્વ એક, પૃથ્વી એક તાે વિરાધ કાની સાથે રહે. તેજ પ્રમાણે હિંદુ પણ-અમે બન્ને મનુષ્ય છીએ, એકજ ભૂમિપર વસીએ છીએ, માટે અમે બન્ને માનવ ખાંધવાે છીએ-એક પૃથ્વી રૂપા ભૂમિમાં વસીએ છીએ. આર્ય અને યવન એટલે સ્વદેશી અને પરદેશી, પણ પૃ^થવીર**પ** મહાન્ દેશના અમે ખન્ને માનવ બાંધવા છીએ. હવે જેને પ્રથમ મનુ^{હ્}યરૂપે આ બન્તેને જણાતું દર્શન હાેય, પછી એકને કાકર એટલે અજ્ઞાન જણાય તે તૈને બીજે માનવ બાંધવ જ્ઞાન આપે, પરંતુ તિરસ્કાર ન કરે. તેમ પાતાના માનવ બધુને જાદો ભિન્ન એમ ન દેખે. **હવે** તે જુદા જુદા ન દેખાય પણ વિદ્ધ વિદ્ધ परंत vaiacous रेपाय different diurrpified જणाय.

જેને દર્શન ઉપયોગ પ્રથમ ન હાય કે હોય તે ભૂલી ગયા હોય તા એકજ રૂપાે દેખવાને વસ્તુના વિધવિધ ભિન્ન ભિન્ન દેખાશે, પરંતુ જેને સવર્ણનુ<u>ં</u> દશર્ન થયું છે અને પછી જેને એક સુવર્ણમાં નાના પ્રકારના અલ'કારાે જણાય છે. તેને સર્વ અલ'કારપર સમભાવ રહેશે. ખે અલંકાર સરખા હાંશે તા બન્નેપર પ્રીતિ કરી એક વધારે સારા હાેશે, તેથા રાજી થશે અને જરા થાંડા સુંદર હાેશે તાે થાંડા સ્તેહ કરશે પરંતુ ખેદ નહિં પામશે. સુવર્ણ દેખા કું પછી સુંદરતા સર્વમાં દેખાઈ, પછી *ચ*ના ૨૦ ટકા સુંદર, આ ૫૦ ટકા સુંદર, આ ૭૫ ટકા સુંદર આમ સુંદરતા ચડતા ક્રમે હાેશે, પણ અભાવ વિરાધ કે ખેદ ન હાેશે. તેજ પ્રકારે જેને સમભાવ મનુષ્યમાં <mark>હાેશે. તે મનુષ્ય</mark> સામાન્ય વર્ગવાળા મનુષ્ય, નીચા વર્ગ^દના મનુષ્ય પર મનુષ્ય રૂપે પોતાના નાના બધુ ગણી તેનાપર અતુક પાની નજરે જોશે, સમાન વર્ગ-વાળાપર પ્રોતિની નજરે દેખશે ઉચ્ચ વર્ણ વાળા આમ દર્શ નથી સર્વાને સમાન જાણ્યા પછી જ્ઞાનથી જે જણાશે, તે વિધાવધ. અને એ વિધ વિધ જણાવ્યા પછી જે ઉપયોગને • કામે લગાડવાના તેને ચારિત્ર ઉપયોગ કહે છે.

केम दर्शन वर्ड सपर हेणाये, ज्ञान वर्ड विध विध स्वर, सारी, गम, पध, नीसा क्खांछ; पछी यरित्र वर्ड तेने गेहियी वगाइतां के थाय तेने सुस्परगान हे Harmony क्रिक्षेयमां आवे छे तेम को पण सुरने सांक्षेय अने सारी, गम, धनी, ने कांछे ते। पछी तेना सुरपरना नंथरने तेमक मनुष्यने प्रथम दर्शन अपेहना Unity पछी ज्ञान एपये। यथी अनेद छोड्या विना तेमांक विध विध Oivisity builty upon Unity पछी अनेदना पूर्व विध विधता. आ क्रमे काम क्षेनार पण समान सिद्ध थये। काख्ये।

માટે હે બાંધવા, જો તમે દિગ'બર સ'-પ્રદાયી જૈત હૈા તા પ્રથમ તમે શ્રી અહીં ત ભગવાનના હિતકર ઉપદેશ પ્રમાણે સર્વાને જૈતરૂપ ટૂંદેખા પછી તે ઉપયોગપૂર્વાક को तभने श्वेतांभर केन भूख धरता काणाय તા તે તમારા જૈન બાંધવા છે તેવું તેની સા**ધે** દયાનું વર્તાન રાખા. સમભાવ દર્શનને ન છોડા. જો તમે ધ્વેતાંબર સંપ્રદાયી હૈં તા તેજ પ્રકારે દિગમ્ભર જૈતા **પર પ્રીતિ રાખા અને તેમની બૃલ છે** એમ જ્યાં જણાય ત્યાં તમારા નાના બાંધવાે પર અનુક પાની દર્ષ્ટિથી જુઓ. જો તમે મંદિર માર્ગી 'વેતાં ખર હા, તા જે મંદિરમાર્ગી હાૈય તેના પર પ્રીતિ રાખા અને જે **સ્થાન**ક **વાસી** ^કવેતાંબર હેાય તેનાપર દયા કરેા કારણ કે તે તમારા નાનાભાઇ છે. જો કાઇને અધિક કાઈ જણાય તા તેની ભક્તિ કરા, મણ છળ્યાં નહિ.

જેના ચિત્તમાં દર્શન ઉપયોગે સમલાવ સિદ્ધથયો છે, તેને સર્વત્ર પ્રેમ પ્રેમ અને પ્રેમજ હોય છે. તેનું જ્વનજ પ્રેમમય હાય છે. પછી કાંઇ દ્રવ્યે, જ્ઞાને, સંપ્રદાયે, રૂપ, ગુણે સમાન જણાયા તો તેને દ્વેપ નથી આપતા પરંતુ પ્રીતિ, કારણ કે સમાન વ્યક્ષ છે. જો ગુણમાં ઓછા લાગે તા નાના ભાઈ જાણી તેના પર તિરસ્કાર નહિં પણ દયા લાવે છે. અને અધિક જણાય તા ભકિત કરે છે, પણ તેને કર્યા નહિ. માટે સવે કલ્યાણકાર સમભાવ સિદ્ધિ જેમ શાસ્ત્રમાં કહ્યું છે તેમ પ્રથમ સગ્યકદર્શન અબેદ (એક) પછી સમ્યક્તાનથી જોઈ (અનેક) અને પછી સમ્યક્તાનથી જોઈ (અનેક) અને પછી સમ્યક્તાનથી બેદાબેદ એટલે અબેદપૂર્વ કં બેદ અર્થાત્ builtion University

મહાત્મા હરિભાર કહે છે કે ધર્મ મિ-ત્ર્યાદિ યુક્ત હોય છે પરંતુ મિત્ર્યાદિ સમભાવ હાય તા દ્રિયામાં આવે છે. પ્રથમ સવ^ર સાથે ર્મની હોય છે. કારણંક સર્વ જીવ છે. "પછી મનુષ્યની સાથે બ્રીતિ રહે છે. મનુષ્યથી નીચા તીર્યંચ–નારકા ઉપર કરણા–અનુક પા રહે છે. અતે મનુષ્યથી ઉંચા દેવ, દેવાધિ દેવપર પ્રમાદ-ભકિત રહે છે. માટે **ધર્મને વર્તનમાં લાવ**ન નાર **પણ સમભાવ છે.** વ્યવહારમાં સમ અપૂર્વ હેાય છે કારણ કે સમભાવ વડે એકમ સતત્ તેમના હૃદયમાં પ્રવાહ રૂપ વહ્યા કરે છે. *ખાળ આમ અ*ણસમજે પણ સમાનતા સેવે છે. અમેરિકાના મતુષ્ય કંઇક <u> </u> સમજે સમાનતા જુવે છે. અને વેદાંતિઓ અનુભવે સવંત્ર સમભાવ વડે એક તત્વ દેખી રહે છે. અને આતા સર્વાના તેમ સિદ્ધાંત છે કે જ્યાં સમભાવ છે ત્યાં દુઃખતા અભવ છે અતે ત્યાં ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, કામ, તેની ઉત્પાત્ત-નાજ સંભવ નથી. એ પડરૂપિને જૈના કષાય કહે છે અને કષાયના અર્ઘ સ'સાર છે. જેને કષાય નથી એટલે ષડુરૂપિ નથી એટઢા સમભાવ છે. તે માક્ષમાં છે-અર્થાત મક્ત છે–તેના સંસાર નાશ પામ્યાે છે.

દર્શન ઉપયોગ એ નિરાકાર છે અને જેને એ નિ<u>રાકાર</u> ઉપયોગ નથી હોતો કે હોય. તે જતા રહે છે તેને જ્ઞાન ઉપયોગ થતા ન- થીજ. સાનું જોયા વિના જેમ જાદાજાદા અલંકારા ન જણાય, તેમ સામાન્ય ઉપયોગ વિના વિશેષ ઉપયોગ ન થાય. નિરાકાર ઉપયોગ પ્રથમ થયા વિના સાકાર ઉપયોગ ન થાય

આ ઉપરથી એવા પણ સાર ખેંચા શકાય કે દુનિયામાં દ્રવ્ય વધારવું હોય તો પ્રત્યેક મનુષ્યે ઉપયોગી મેહેનત કરતા જવી અને સંસારમાં સુખની અભિગૃહ કરવી હોય હોયતા સમભાવ વધરતા જવા.

કાઇને શંકા આવશે કે દ્રવ્યથી કર્યા આપણુને સુખ નથી મળતું કે સમભાવમાં સુખ ખાળવા જઇએ ?

દાખલા તરીકે અમેરીકા દેશ આજે પાતાની દ્રવ્ય સમૃદ્ધિમાં સર્વ દેશામાં શિરામણિ રૂપ છે. લક્ષાધિપતિજ નથી પણ ત્યાં અખ્જાધિપતિ હોાન લાખાની વાર્ષિક આવકવાળા હાય છે. આ દુનિયાની નજરમાં આજે પ્રત્યક્ષ પુરાવા છે. તે છતાં જેમને પ્રતીતિ ન થતી હોય તેમણે આજકાલ સગમ થઇ પડેલા અમેરિકાના પ્ર-વાશ કરવા અને તેમ જેનાથી હાલ ન ખર્ન તેણે અમેરિકાની ચડતી જે ૧૫૦ વર્ષનીજ છે તેના ઇતિહાસ ધ્યાનપૂર્વક વાંચવા. હવે જેને દ્રવ્યથી સખ મળે છે એ વાત નિવિ વાદ છે અને દ્રવ્યની ઉપ્રત્તિ દ્રવ્યની જનની મેહેનત છે તે કરવી **પરંતુ સમભાવ** અમે કર્યા હેવા જન એ? સફ@દ્યાગવંડ પ્રાપ્ત થયેલા વિજ્ઞાનશા-અ (Science) એ અમારૂં કલ્પવૃક્ષ અને કળા (sits) એને અમે કલ્પલત્તા ગણીએ છોએ આ વિજ્ઞાન-કળાવડે પૃથ્વીના પડમાંથી. આકાશના ગુબમાંથી, સમુદ્રના નળીઆમાંથી, વાતાવરણના મિત્રષમાંથી અમે લક્ષ્મીને ખેંચી **લાવીને સદ્**ઉદ્યાગને પરણાવીશું. નીતિશાસ્ત્ર પશુ જગતમાં પાતાના ડીડિંમ વગાડી રહ્યું -£ 69

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः अर्थात् अजवान दिवागी पुरुषने वरमाण આરોપવા લક્ષ્મી સામે ચાલી આવે છે. લ-ક્ષ્મીનું સામર્થ્ય એવું છે કે સુખતે ગમે ત્યાંથી તે આણી આપે છે. આ લાકમાંજ સુખતી જતક લક્ષ્મી છે એટલુંજ નહિં પરંતુ પરલાકના સુખ પણ સદ્દ@દ્યાગવડે ન્યાયાપાર્જિત લક્ષ્મીવંડ પ્રાપ્ત કરી શકાય છે, કારણુંક ધર્મ જે આ લાક અને પરલાકના સુખ આપવાના દાવા કરે છે તે પણ લક્ષ્મીથી થઇ શકે છે. જુઓ જનાના સાત ક્ષેત્રમાં પાયક શ્રાવક ગ-ણવામાં આવે છે. બાક! રહેલા છ એ ધર્મ-ક્ષેત્રા પાય્ય છે. કારણુંક શ્રાવકજ ન્યાયાપા-જિત લક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરી, તેવંડ પાષ્ય એવા ધર્મક્ષેત્રાને પાપી સુખનું પરલાકને માટે પણ ભાતુ ખાંધી લે છે.

આમ લક્ષ્મી આ ક્ષાેકમાં સુખ આપે છે, એ સર્વને પ્રત્યક્ષ છે, પરક્ષેાકમાં સુખ આપશે એ આગમ પ્રત્યક્ષ છે. તાે પછી સર્વ જીવની પ્રદ્યતિનું પ્રયાજન એ સુખ છે અને તે લક્ષ્મીથી મળે છે. માટે સમભાવને શાધવા શા માટે કૃાંકૃાં મારવા પડે!

ચ્યાનું ઉત્તર સરળ છે. જગતમાં દ્રવ્ય છે કે હા. જગતમાં દારિક છે કે હા. જેટલા ઉદ્યાગ છે એટલું દ્રવ્ય છે, જેટલું આળસ છે તેટલું દરિક છે. જગતમાં સુખ છે ? હા. જગતમાં દુ:ખ છે ? હા. જેટલા સમભાવ છે એટલા सहसार ઉદ્યાગ Co-operative Industry £3. જેટલા સહકાર ઉદ્યાગ છે તેટલું સખ જેટલા વિષમ ભાવ છે અને જેટલા વિભક્ત તેટલું દારિદ્રય ઉદ્યાગ છે અાટલુંજ નહિં પરંતુ લક્ષ્મીવડે સુખ પ્રા<mark>પ્</mark>ત થાય અને ન પણ થાય પરંતુ સમભાવવડે જો એકાંત સુખજ પ્રાપ્ત થાય છે, એટલુંજ નહિ પણ વ્યક્ષાંડની દશે દિશામાંથી દોડી આવે છે.

ચ્યાટલું સમભાવનું પ્રયોજન દાખવ્યા પછી હવે સમભાવ શું તે આ— સમભાવતા અર્થ—સમલાવતા અર્થ એવા છે કે સર્વથી તે સમજ્તય તેવા છે. કાર શુંક તેની ઉત્પત્તિ પ્રેમલાવ એ મનુષ્યને સહજ સિંહ છે. પોતામાં સર્વ કાઇને પ્રેમ હાય છે, અને જે માલુસ પાતાને શરીર એટલે હાથ, પા, મુખ, ધડ, માથું અને પાંચે ઇંદ્રિયા, તથા મન અને છુહિ એટલુંજ સમજતા હાય તા તેટલાપર પ્રેમ રાખે અને પ્રેમ રાખે તેટલા પુરતા આ અવયવા અને ઇંદ્રિયાપર સમલાવ—સરખા પ્રેમ રાખે અને જેટલા સરખા પ્રિયા તેટલું સખ મનુષ્યને વગર વિલંબે મળતું પોતાને જણાય છે.

વળી એક રસેંદ્રિયને લાગએ, અને તેનો જો બીજન બધા અવયવા અને ઇંદ્રિયાની સાથે સમલાવ દોય Sympathy Harmony તો સર્વ તેની સાથે સહકારી કાર્ય co-operation કરી તેને પૂર્ણ સુખ આપશે. તેજ પ્રકારે બીજા કાઇ અવયવ કે ઇંદ્રિનું પણ સમજવું.

આજ પ્રકારે કુટું બમાં પ્રેમીજન આખા કુટું ખતે પાતેજ સમજે છે. જ્ઞાતિમાં પ્રેમીજન જ્ઞાતિને પાતે સમજે છે. કામ-સમાજ-સંઘનો પ્રેમી સંઘને પાતારૂપ સમજે છે. પ્રજાપ્રેમી જન પ્રજાને પાતારૂપ સમજે છે. માનવપ્રમા માનવના Heumanity ને પાતે લેખે છે અને આત્મપ્રેમીજન સર્વ જીવ માત્રની સાથે પાતે અબેદભાવે-પ્રેમભાવે-એક્યભાવે-કે સમસાવે દેખાય છે.

હવે જેમ હંદિય એજ પાતાના એક અંશ છે તેમ કુટું બના પાતે પણ એક અંશ છે, પ્રજાના, માનવતા વગેરે પાતે પણ એક અંશ છે, પ્રજાના, માનવતા વગેરે પાતે પણ એક અવયવ છે. માટે તેની સાથે પ્રેમભાવપૂર્વક સમભાવ રાખી વર્તો છે અને તેથી સ્વનું, કુટું બનું, કામનું, સમાજનું, પ્રજાનું, મનુષ્યનું અને અખિલ જવાનું સુખ સમભાવે પ્રાપ્ત કરે છે.

સમભાવની પ્રાપ્તિ—સમભાવની પ્રાપ્તિ Metydas of Universal આત્માના દર્શન

ઉપયોગ વડે છે આપણા ફાની કાની સાથે સમભાવ છે તે દર્શન નામના આપણા સ્વાભાવિકવડે આ-પણે દેખીએ છીએ. આત્માના બાર ઉપયોગ જૈન શાસ્ત્રમાં જણાવેલા છે તેમાં દર્શન ઉપયોગ સમભાવ કે જનક છે. સમભાવ એટલે સામાન્ય ઉપયોગ જેમ અનેક અલંકારા હાય. તેમાં સવર્ણ સર્વત્ર સામાન્ય રીતે સમજાય છે-દેખાય છે તે દર્શનવકે દેખાય છે. પરમસુખ પ્રાપ્તિના સ્વતંત્ર પામવાના—મુક્તિ—માક્ષ પામવાના જૈનશાસ્ત્રે જે ત્રણ માર્ગી કહેલ છે, તેમાં પણ **દર્શન** તે પ્રથમ સુકર્યું છે. આ ઉપરથી સ્પષ્ટ થશે કે જેને મનુષ્યદેહ અંધન નથી પણ માેકાના માર્ગ છે તા પાતાપર સમભાવ રાખવા. કુટુંબ એ બંધન નથી પહા માલના માર્ગ છે તા કુટુંબપર સમભાવ દર્શન ઉપયોગવડ રાખવા. આજ પ્રકારે સંધ, શાસન. સમાજ-પ્રજા-માનવના અને જીવનાપર સમ-ભાવ રાખવા તા તે ખધન નથી પણ માલના માર્ગ છે.

અભેદતા—પ્રેમમયતા 과 સ્વાભાવિક ગુણ દર્શનવંડ પ્રાપ્ત થયા પછીજ ત્રાન ઉપયોગને કામે લગાડ**વા** જોઇએ. કાર-રણકે ત્રાન એ સાકાર ઉપયોગજનક છે, જુદા જુદાપણું જણાવનાર નથી. પરંતુ પ્રથમ જે દર્શન ઉપયોગ ન લગાડતા જાણવામાં જ્ઞાન ઉપયોગ લગહવામાં આવે તો જુદા જુદા બિન્ન ભિન્ન બેદ્યુક્ત જણાશે. જે વસ્તુત: તેમ નથી, પણ વિધવિધ છે. નાના પ્રકારના અબેદતાના ખાળામાં ઉત્સંગમાં રમતાં બાળકા-સ્વરૂપા છે. માટે સમભાવના જનક દર્શન ઉપયોગપૂર્વક જ્ઞાનઉપયોગને કામે લગાડવા જરૂરના જણાય **છે.**

> ઉટાકામંડ, } લધુતમ તા૧૪-૮-૧૩ **લાલન.**

पहेलुं सुख ते जाते नर्या !

By no means can a man come nearer to the God than by conferring health. (CICERO)

અર્થાત-મૃત્રબ્યાને આરાગ્ય અપવાથી પુરૂષ જેટલા પ્રભુતાના પદ સમીપ જાય છે. તેટલા ખીજા કાઇ ઉપાયથી જઈ શકતા નથી-સીસેરા, વર્ત માન પત્રા અને માસિક પત્રાના કાલમામાં, સ્ટેશન અને નાટયગૃહોના થીએ-**૮રામાં અને** માટા શહેરાની દિવાસા પર લાહી સુધારનારી, વિર્યંને વધારનારી. **અમૃતના જેવા 'શુજી કરનારી,** એવા સેંકડા ચમત્કારી ગુણાના બણગા પ્રકનારી **દવાએ!. ગાળાઓ** અને માત્રાએ! વાંચીતે **વૈદા અને** ડાંકટરાની વિપુત્ર સંખ્યા દિન પ્રતિ **દિન વધતી જ**તી જોઇને. શાળામાં અભ્યાસ કરતા વિદ્યાર્થીઓ કે જેઓ ભવિષ્યમાં નાગરી-**કાે–પીતાઓ થવાના છે. જેઓ**ના પર ભવિષ્ય ની ઉત્તતિના આધાર અવલંખી રહેલા છે. **તેઓ કમરમાંથી** વાંકા વળી ગયેલા. પાતળા હાથ અને યાતળા પગવાળા, ઉધાર શરીર હાય તા છાતીની પાંસળીયા જણાતાં, ડાચાં મળા ગયેલા, તેજ વિનાની આંખાવાળા. પ્રીકો સામડી અને પીકા વદનવાળા અને કેટલાંક તાં પાંચ સાત ચાપડીયાના દકતર ઉ-ચકવાને પણ કંટાળનારા, વર્ગમાં ટેકા વિના **ટટાર ખેસી નહિ શક્ત રા. કલાક ખેસીને** વાંસા માટે અને તેથી સતા સતા વાંચનાર વિદ્યાર્થીઓ-ને નિહાળાને આરાગ્યતાની આખતમાં માયાય કેટલાં દર્લક્ષ સચવે છે તે જાણાઈ આવે છે. આરાગ્યતા કે જેના પર આ પણા માનવ જવનની સાકૃત્યતાના આધા-र अपरेक्षा रहेंद्वा छे, अरख के निराणी शरी-ર સિવાય અનુષ્ય કાંઇપણ કરી શકતા નથી. તિરાજી મતુષ્યજ જચતમાં કરવા યોગ્ય કાર્યો

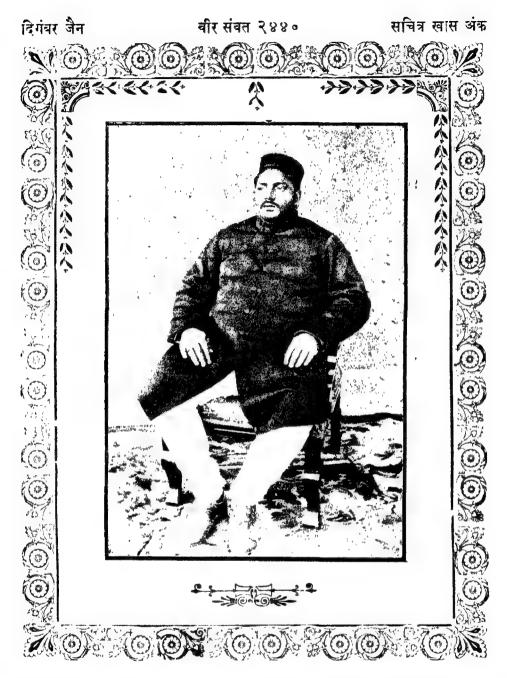
हरी शहे छे अर्थात् ते स्वार्थ अने परमार्थे भंने स्थाने हतुं छे हे धमार्थकाममाञ्चाणां, आरोग्यम् मूळ कारणम् अर्थत-धर्मः, अर्थः, हाम अने भेलि आ यारे पहार्यनी आप्तिनुं भुण हारण् आरोज्यताल छे. पश्चीभना विद्वानी पण् आरोज्य मागता हते छे हे—

O blessed health! thou art above all gold and treasure, tis thou who enlargest the soul, and openest all its powers to receive instruction and relish virtue. He that has thee hath little more to wish for, and he that is so wretched as to want thee, wants everything thee. (STERNE)

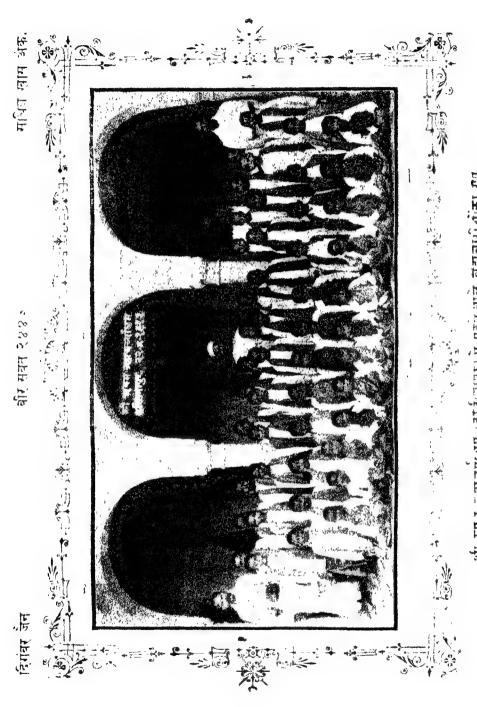
અર્થાત્-સુખદ આરાગ્ય! સઘળા સુવર્ણું અને દ્રવ્યના ભડાર કરતાં તું બ્રેષ્ટ છે; સુદ્ધિ-ને ખીલવનાર અને શિક્ષણ પ્રહણ કરવા માટે તેની અને સફ્ગુણ ઉપર અભિરૂચિ થવા માટે તેની સઘળા શક્તિઓને વિકાસને પમાડનાર તુંજ છે. જે મનુપ્યને તારી પ્રાપ્તિ થઈ છે, તેને આ જગતમાં ઇચ્છવા સરખું ચાકુંજ રહ્યું હોય છે, તારા વિનાના દરિદ્રી માણુસને તારી સાથે સઘળા વસ્તુઓના તાટા છે—સ્ટર્ન

અર્થાત્-આરાગ્ય એ સઉથી શ્રેષ્ટ ધન છે…મને આરાગ્ય અને તે પણ માત્ર એકજ દિવસ આપા; અને ચક્રવર્તી મહારાજા ઓના વૈભવને પણ હું હયી કઠાવીસ–(ઇમર્સન)

Better is the poor, being sound and strong of constitution, than the rich man grievously afflicted in his body. Health and good estate of body are above all gold, and a strong body above infinite wealth. There is no richness above a sound body and death is better than a life of continual sickness. (ECCLESIASTICUS)



श्रीमान राय बहादुर पंडित शेठ मेवारामजी, ऑनररी मेजीस्ट्रेट-खुर्जा. Shriman Rai Bahadur Pandit Sheth Mevaramji-Khurja. (श्रीमान, विद्वान, राजमान्य अने दि. जैनोमां अग्रगण्य जाणीता ग्रहम्थ)



श्री स्पृष् इत्याच्यायम् । हर्ष्यासम् में पृत्ते पाने बंदाचारी ग्रीका हुए. । बस्पाने समयमे देश्यीम अस्पन यह त्या सीवी ।

શરીર અત્યંત દુ:ખી શ્રીમાન મનુષ્ય કરતાં નીરાંગ અને ભળવાન શરીરવાંગા ગરીખ માણસ વધારા સારા છે. આરાગ્ય અને સારી શરીર સંપત્તિ સમસ્ત સુવર્ધ્ય કરતાં શ્રેષ્ઠ છે, અને સુદઢ શરીર અપાર ધન કરતા પણ ચઢી-આતું છે. નિરાગ શરીર કરતાં ચઢીઆતું કાર્કપણ શ્રીમંતપણ નથી, અને નિત્યના મંદવાડ કરતા મરણ વધારે સારું છે—(એકલેઝીયાસ્ટિક્સ)

Oh! it is excellent to have a giant's strength.

અસાધારહા શરીર બળ હોવું એ અહેા! બહુજ ઉત્તમ છે. (શેકસ્પીઅર)

Men generally let the body-the secred temple of the spirit on carth-take care of itself, nay, worse, they abuse it. A clean, rounded, muscular, elastic form, ready for any emergency, reliable study responsive to all calls upon it; healthful painless, feeling ever an affirmative pleasurable emotion in its currents of vitality, resisting the wear and tear of daily duties, and furnishing the soul a play-ground for geniality, good nature, enjoyment and even work itself. What a born 'What a treasure. (Luther. R. Marsh)

શરીર કે જે આ મૃત્યુ લોકમાં આત્મા તું પવિત્ર મંદિર છે. તેની મતુષ્યા ઘણું ક-રીને જરાપણ કાળજી રાખતા નથી; અરે! એથી પહ્યુ વધારે ખરાય એ છે કે તેઓ તેના દુરૂપયાગ કરે છે. સ્વચ્છ, ભરાવદાર, મજબુત, પ્રતિકૃળ પ્રસંગા પ્રાપ્ત થયા છતાં પણ પાનાની સુળ સ્થિતિમાં પાધું આવી જનાર, ગમે તેવા સાંકટના સમય માટે તત્પર, વિશ્વાસ કરવા લાયક, દઢ, ગમે તે કામને માટે તૈયાર, તન-દુરસ્ત, દુ:ખ રહિત, પાતાના ઓજસના પ્રવા હમાં સર્વદા નિ:શંક આનંદ રસનું ભાન કર નાર, નિત્યના ધંધાના રગડાથી પડતા ઘસારા સામે ટકી રહેનાર, અને પ્રસદ્યતા, સુસ્વભાવ સુખાષ્ણીય અને સાક્ષાત્ શ્રમને માટે પછુ જવ'ત્માને વિનાદનું સ્થાન અપ'નાર શરીર મળવું—એ આહા! કેવી અમુક્ય કુદરતી ખક્ષિસ છે! કેવા ઉત્તમ દ્રવ્ય કાશ છે.

(હ્યુથર આર. માર્શ)

પ્રિય વાંચકાં (ંગા પરથી કદાચ તમે પણ કહી ઉદશા કે તિરાગી રહેવા અમે પણ ઈચ્છીએ છીએ પણ તિરાગી રહેવું આ-પણા હાથમાં છે ?

તે પરમેશ્વર આપે છે. આપણે તો નિફ-પાય છીએ પણ હું છાતી ઠોકીને કહ્યું છું કે નિરાગી કે સેબી રહેવું તે આપણા હાંશ-માંજ છે. કુદરતી નિયમાનું આતાપાલન કર-વત્યી નિરાગી રહી શકાય છે અને તે વિર્દ્ધ વર્તન કરવાથી રાગી રહેવાય છે. તે નિયમા પાળવા મુશ્કેલ નથી. તમે તે ઘણી વખત સાંભળ્યું પણ હશે છતાં રૂપરેષા તરીકે જણા-વવું અયોગ્ય મણાશે નહિ.

(૧) નિત્ય સુર્યોદય પહેલા ઉઠી શાચા-દિક મુખમાજેન કરવું. (૨) સ્વધ્ર્ષ્ઠ જળથી સ્નાન કરવું અને સ્વચ્છ જળ પીવું. (૩) નિયમિત સમય પર તાજો; પશ્ય અને મિતા-દાર ખારાક લેવા અને તે ખુબ ચાવવા. (૪) સ્વાર સાંજ શુદ્ધ દ્વા હૈવી. (૫) જેટલી બની શકે તેટલી વ્યાયામ (કસરત) કરવી. (૬) મૈશુન સેવનની બાબતમાં મર્યાદિત રહેવું.

આવી રીતે જણીતા સાદા અને નજવા જેવા લગતા નિયમાં પાત્યા વિના હજરા કે લાખા રુપૈયા ખરચ્યે કે અતિ મુલ્યવાળી દવાઓના રગડા ગળામાં રેડીએ કે લાખા રુપદા ગળામાં રેડીએ કે લાખા રુપદાનારી, વિયંને વધારનારી, અપદાના જેવા ગુણાકરનારી એવા સે કડા ચમતકારી ગુણાનાં અણુગા પ્રકારી દવાઓ, ગાળામાં માત્રાઓ, રસા કે અમતા રાજ પાવાથી કે ડાંકટરા કે વૈકે ની ટાર્નિક (પાષ્ટિક) દવાઓ ખાવાથી કે વીજળાની વે ટીઓ પહેર્યથી, આખા શરીરના સઘળા ભાગમાં પ્રસન્નતા ઉપ્લબાનારી, તનનું અને મનનું કામ કરવાને

ઉત્સાહ અને શક્તિ આપનારી, દુ:ખથી ભરેલા સંસરમાં વિવિધ દુ:ખા આવી પડતા પણ તે-મને સંતાષપૂર્વંક સહન કરવાનું ખળ આ-પનારી ધર્મ, અર્થ, કામ અને માેક્ષ એ ચારે પુરૂષાર્થા તે સર્વાતમ પ્રકારે સધાવી આપનારી ઇન્દ્રિયાને, મનને અને છુદ્ધિતે પવિત્ર અને નિ-દેષિ તેમજ આનંદમાં રાખનારી ખરી નિરા-મતા મળતી નથી તે કુદરતી નિયમાના પ:લ-નથીજ મળી શકે છે.

અંતમાં સર્વતે નૃતન વર્ષ આરોગ્ય અને
 અાળાદી ભાગું ઇચ્છું છું.

વાડીલાલ મૃળજભાઈ સંઘવી. લી બડી

─ॐ४८६— राग अने द्वेष.

(લેખકઃ-હરજીવન રાયચ'દ શાહ-આમાદ.)

વીતરાગ ભગવાન (રાગ અને દ્વેષથી રહિત પરમેશ્વર) ના કહેલા ધર્મને પાળનાર જૈન વર્ગમાં, રાગ અને દ્વેષ કેટલા વધા ગયે- & છે, તેનું શું પરિણામ આવ્યું છે, તથા હવે, પ્રછીથી શું આવવાના સંભવ છે, એ વિગેર ભાખતા ઉપર મારા બધુઓનું લક્ષ ખેં- અવાનો આ હેપમાં મારા હતું છે.

રામ અને દ્વેષ શખ્દના અર્થ સામાન્ય રીતે પ્રીતિ અને અપ્રીતિ એટલા કરવા માં આવે છે, પણ મારા સમજવા પ્રમાણે એ ખેઉ શખ્દની આગળ " હૃદથી જારે છે. એટલા સાદા શખ્દ ઉમેરવાની જરૂર છે. મતલન હૃદથી જાદે પ્રપ્રીતિને રાગ કહેવા તેમ-જ હૃદથી જાદે અપ્રીતિને દ્વેપ કહેવા અને તેથી આ લેખમાં હવે પછીથી જ્યાં જ્યાં રાગ અને દ્વેપ શખ્દ વાપરવામાં આવેલા ત્યાં એજ અર્થમાં એ શખ્દો વાપરવામાં આવેલા છે, એમ ખાસ ધ્યાનમાં રાખલું.

ચ્યા માસિકના છઠ્ઠા વર્ષના **પહેલા અ**'-કમાં મેં " **માનસિક વ્યાધિ** " એ નામના એક લેખ લખ્યા હતા (જાએ દિગમ્ખર જેન, પુસ્તક ૬ ફું અંક ૧ લાે પૃષ્ટ ૯૦) તેજ વિપયમાં સમાવેશ કરવા જેવા આ ક્ષેખ પણ છે. રાગ અને ટ્રેપ એ પણ **એક માન**ન સિક વ્યાધિજ છે. આપણા સમાજમાં હાલમાં સંકંડ ૮૦ ટકા જેટલા રાગ દ્રેષ ફેલાયલે! છે, એમ દરેક વિચારશીલ પુરૂષને જણાયા સિવાય રહેતું નથી. રાગ અને ટ્રેષ સઘળા અનર્થાનું મળ છે. પૈસા મેળવવામાં રાગવાળા માણસ ન્યાય અન્યાય, સત્ય અસત્ય, પારકું પાતાનું કાંઇ પણ જોતા નથી અને તેજ મા-ણસને ક્ષેકિક ક્ષાબીની ઉપમા આપે 👂 તથા ક્ષાભથી જે જે અવગુણા આવે છે તે આવીને સાં હાજર થાય છે. પુત્રમાં, મિત્રમાં કે સ્ત્રીમાં રાગવાજા માબસ **પુત્રને** હૃદથી જાદે લાડ લડાવીને બગાંડે છે. તેણે વિ**દ્યા** ભણવા જવા દેવાને માટે. વ્યાપારાદિ કાર્યોને માટે વહાર ગામ જવા દેવામાં, અને ખાટે રસ્તે ચઢતા અટકાવવામાં પણ તે પાછા પડે છે. એટલુંજ નહીં **પશ** બાળલગ્નવિગેરે કાર્યો કરવાની પ્રવિષ્ઠા **થા**ય છે.

એ રીતે પાતાના પુત્રના કિંમતી છે દેગી તેના રાગના ભાગ થઇ પડે છે. બિત્રમાં રાગ થાય છે ત્યારે તેના ગુણ અને અવગુણ ઉપર લક્ષ રહેતું નથી, તેના ઉપર હૃદથી જાદે બરોશા રાખવામાં આવે છે, અને તેને હૃદથી જાદે છુટ આપવામાં આવે છે, જેથી પરિણામ કેવાં વિપરીત આવે છે તેના દાખલા શાધવા પડે તેમ નથી. એજ પ્રમાણ સ્ત્રીમાં રાગવાળા માલસ સ્ત્રીને આ- ધિન થઈ જાય છે અને હાલની કેળવણી વિનાની સીધા તેને પાતાની છુહિ અનુસાર રહેજે વર્તાયી શકે છે. જેથી કુડુમ્બ કહેશ, સાંકડું મન, મારૂં તારૂં અને વાંધા પાડવાની ટ્રેવ પડી જાય છે. તથા છેવડે ઘરને દેકાણે

ધંધાલીયું થઇ જાય છે. તદ્દપરાંત, આળરૂ-ને હાનિ પહોંચે છે તથા ધનના ખાટી રીતે વ્યય થઇ જાય છે તે તો જાદોજ. સ્વસ્ત્રીમાં રાગ થવાથી ઉપર મુજબ પતિણામ આવે છે અને જો **પરસામાં રાગ** થાય છે, તા તે<u>નુ</u>ં પરિણામ વ્યભિચારમાં આવે: જેથી તેના કુળરૂપ અનેક પ્રકારનાં **દુ:ખે**। ભાગવવાં પંડ છે. મેળવેલી **સ પત્તિમાં** રાગ થવાથી માણસ ક'ભ્યસ થાય છે. સ્વધર્મને વિષ રાગ થવાથી માણસ અ'ધક્કાળ થાય છે, અને અન્ય ધર્મા સામે અઘટતાં ચડાં કાઢવા માંઠે છે, તેમજ ધર્મને નામે છેવટે અધર્મની મર્યાદામાં પગ મુંક છે. અને તેના ખરા ખાટાના વિવેક જતા રહે છે. ટંકામાં એટલુંજ કે-નામ એ-ટલે હૃદથી જાદે પ્રાતિ, દુનિયાના કાંઇ પણ કાર્યમાં લાભદાયક થતીજ નથી. પણ ઉલટી તેનાથી હાનિજ થાય છે.

હવે દ્વેષના સંબંધમાં થાંડા વિચાર કરીએ. જેમ રાગના સ્વાદ શરૂઆતમાં મીકાસભરેલા લાગે છે, અને તેને લીધ માણુ-સ આગળ આગળ વધતા જન્મ છે તથા પરિણામે રાગી માણુસ પાતે દુઃખી થાય છે અને બીજાને દુઃખી કરે છે: તમ દ્વેષનું પણ થાય છે. દ્વેષથી માણુસમાંના ક્રોધ, અંદેખાઇ, માન, અને બીજા મનાવકારા પેદા થાય છે.

એ મનાવિકારા કેટલા ભયંકર છે તે વિષે લખવાની ખાસ જરૂર નથી. ફ્રાંધથી માણુસ ગાળા ભાંડે છે, માર મારે છે, ખુન કરે છે, આપઘાત કરે છે, વળા બાળવુ, સુડવું, ઇત્યાદિક બીજાં અનેક નિર્દય અને વિચાર રહિત કાર્યોમાં જોડાય છે. એ સઘળું દ્વેપતું જ પરિણામ છે. જેમ રાગ સારી અથવા માંડી, એમાંથી એક પણ બાબતમાં રાખવા જેવા નથી: તેમજ દ્વેપપણ સારી અથવા તહેરી લાગતી બાબતમાં અથવા કાઇ- પ્રણુ મતુષ્યમાં રાખવા જેવા નથી. મતલબંક

રાગ અને દ્વેષ બેઉ, માણસને પાતાના યાગ્ય કર્તા બ્યાર્થી અવળે માર્ગ જ દારાનાર અને લાભ માન, માયા, **કથાયાે** રાગ અને દ્વેષમાંથીજ ઉપજે છે. અને સઘળા મનેાવિકારાનું મૂળ પણ આગળ કહેવા પ્રમાણે રાગ દેષજ છે. ક્યાયાથી થતી હાનિ વિષે જૈન શાસ્ત્રામાં અને ખીજ અનેક જગ્યાઓએ (જેમકે ગુજરાત વ-ર્નાક્યુલર સોસ.ઇટીએ છપાવેલા ''**મનેાવિકા**-**૨** અને **આશા નિરાશા** વિષે નિબ'ધ'' વિષે ના પુરતકમાં) ઘણી સારી રીતે કહેવામાં આ-વેલું છે. રાગ અને દેવને જુદા જુદા માનીએ તેના કરતા એકજ વસ્તની અવળી સવળી બે **બા**જાએા હાય અને એવાજ સંબંધ હાય તેમ સમજાય છે. આપણા જૈનાના **તિર્થકરા**ને અનેક શ્રેષ્ઠ વિશેષણા આપેલાં છે, પણ તે સધળાં ગાણ ગણાયાં છે. અને **'વીતરામ** ભગવાન ' એ નામ ધણા માનપૂર્વક અને વાર'વાર ખાલવામાં આવે છે, આ ઉપરથી પ-ણ આપણને ખાસ સ્વીત **થા**ય છે કે વીત• રાગ દ્વેષથી રહિત. એટલે રાગપણ **પછ**ંએ માટામાં મેહું પદ પરમેધરપદને લાયક બનવાન राग સવેંધી રહિત થવું એ अभ्यत्यत् छे. राग द्वेष मली मसाम्।। એ વાક્યના અર્થ પણ એવાજ છે કે રાગ અને દ્વેષ વિનાનું મન હોય, તાજ તેને નિર્મન ળ મન કહી શકાય છે. આપણામાં સામાન્ય માણસા વાતચીતમાં વાર'વાર એમ કહે છે 🕏 '' અમુક માણસમાં જરાએ રાગ દ્વેષ નથી, એ તેા **પરમેધારના લેાક છે** " **અ**ાલું કહે-નાર અને સાંભળનાર, **દશલક્ષણીક ધર્મના** ધારણ કરનાર, અને વીતરાગ ભગવાનના શિષ્યોની રાગ દેષની બાબતમાં કેવી સ્થિતિ છે. તેના વિચાર કરીએ છીએ ત્યારે અતિશય દીલગિરી ઉપજ્યા વિના રહેતી નથી. વંશપરં પરાથી ઉતરી આવેલું આ એર હવે આપણી

નસેનસમાં વ્યાપિ ગયું છે. અને ચાવિસે કલા-કના જાગત અવસ્થાના વ્યવહારમાં તેમજ ઉંધમાં સ્ત્રપ્નાે પણ રાગ દ્વેષની અસરવાળાંજ **આવ્યાં કરે છે**. આ સ્થિતિને પરિણામે તન, મન, ધન, અને ધર્મના દ્રાસ **તેમાં આશ્ચર્ય પામવા જેવું શું છે** ? લડાઇ **ટંટા, અદે**ખાઇ, પક્ષપાત, અને સઘળા દૂર્ગુણા *છે*, એ રાગ દ્વેષના સેન્ય ૩૫ છે તે મૂર્તિ આન કપે આવીને આવર્ણ ચારે પાસે વીંટાઇ વળ્યા છે. જો શાંત મનથી બર બર વિચાર કરીને જેનેઇએ તા આપણાં હાલનાં **બધાં દુ:ખા અને** બુમ બરાડાનું મળ એજ છે. રાથા દ્રેષથી રહિત થવું એને જ **સામા**ઇક કહે છે. આ રાગ દેવ રૂપી માનસિક વ્યાધિનું સ્થળ રૂપ એજ શારિસીક રાત્રા છે. જેમકે રાગ શબ્દમાં એક માત્રા વધાર-વાશી જેમ "રાગ" શબ્દ થાય છે તેજ પ્રમાણ **રાગમાં પણ થો**ડાંકજ વધારા થવાથી રાગ **થાય છે તેમાં** જરા પણ સંશય જેવું નથી. अति सर्वत्र वर्जयंत व्यति व्येटले पधारे=६६थी જ્વદે હંમેશાં છાડી દેવું જોઇએ. આ સામાન્ય વાક્યમાં જે "અતિ" ઉપસર્ગતા નિષેધ કર વામાં આવ્યા છે તેજ શખ્દ પ્રીતિ, સ્નેહ. **અશ્વવા પ્રેમ શ**બ્દની આગળ ઉપસર્ગ તરીકે **ચ્યાવીને જોડાયાથી** રાગ થાય છે. એમ રાગ શ્રાબ્દના અર્થનું નિરૂપણ કરતાં આ ક્ષેખમાં **ચ્યાગ**ળ જહાવવામાં આવેલું છે. એ ઉપસગેજ આપણને અતિ ઉપસર્ગ **અ**ત્યંત દઃખ ઉત્પન્ન કરેલું છે. હવે એક બીજો પ્રશ્ન એ થાય છે કે આપણા જૈન વર્ગમાંથી ચાવિહાર કરનાર, કંદમૂળ **ખાનાર, સાલસકારણ અને દરાલાક્ષ**ણિક. વૃત કરનાર. ઉપવાસ અને એકાસણાં કરનાર. **સામાર્કા અને નવકાર મંત્રના** જાપ કરનાર એ વિગેર માણસાની સારી સંખ્યા છે ખરી, પશા એ બધામાંથી રાગદ્વેષ નહીં રાખનાર કેટલા તીકળશે ? વળી ભિન

પ્રકારની બાધાઓ લીધેલા માણુસા માલુમ પડે છે, પણ રાગ દ્વેષ નહીં રાખવાની બાધા (પ્રતિજ્ઞા) લીધેલા કાંઇ માણુસા છે કે? આ પ્રમાણે હાલતી સ્થિતિ કફાડી થઇ પડી છે. હાલમાં તીર્થક્ષેત્રામાં વૈતામ્બરા અને દિગમ્બરામાં ચાલતા અગડાનું મળ કારણ રાગ દ્વેપ નહીંના બીજું શું છે? તુકીં અને બાલ્કનનાં રાજ્યાની લઢાઇનું કારણ શું હતું! સવળી દિવાની અને ફાજદારી ફરીયાદોનું મૂળ શું છે? રાગ દ્વેપ કે કાંઇ બીજું! એ રાગ દ્વેપ દુનિયામાંથી નાબુદ થાય, તા પછી આ જગતની સુખશાંતિના કાંઈ પાર રહે ખરા!

આપણા ગામમાંથી અને આપણા ઘર-માંથા અટલે કડમ્બમાંથા જો રાગ દેષ ઢળી જાય. તો વિચાર કરી જાંએો કે આપણા સખમાં અને **સામ^ર્થમાં** કટલા બધા વધારા થાય [?] આપણને આના કે કેટલા બધા વધે ? અને ધર્મ પાળવામાં, ધન મેળવવામાં અને બીજાં કૃષ્સીત કાર્યો કરવામાં તેમજ **શારી**-**રીક બળ** બૃદ્ધિ વધારવામાં પણ આપણે કેટલા બધા કાવી શકાયે શકેટલા બધા આન ત્મરાત્રઓને આપણે છતી શકાએ કે કેટલા બધા દુર્ગુણા દુરધીજ તજી શકાય અને આ ખધું થાય તા તૈના **સ્વાદ** આપણને કેટલા સીકા લાગે? આવા વિચાર સાથેજ અાપણ આવતાની પણ કેવું ભરાઇ જાય છે અને રગ દેષ હમણાંથીજ દુનિયામાંથી પાતાના વંગાણાથી શરમાઇને ગાંસડાપાટલા कता रहे। दीय तथी सीसारहर था रही હોય. અમૃતની વૃષ્ટિ થઈ હોય, કે કલ્પવૃક્ષ-ની પ્રાપ્તિ થઈ હોય એવા આભાસ શ**ંથતા** નથી ! ત્યારે જે વસ્તુ તજવાના વિચારથીજ આપણને આશાદવી આવું સ્વપ્ત બતાવે છે, તેના જો ત્યાગ કરવામાં આવે તા ભવિષ્ય કાળ આપણને એવું સુખ પ્રત્યક્ષ મેળવી આપશેજ એમ નહીં માનવાનું શું કાંઇપણ ખાસ કારણ છે ખરૂં ? अलमीत बिस्तरेण.

धार्मीक शीक्षणनुं समालोचन. -333446

શ્વેતાંબર ફામમાં ચાલતા ધાર્મીક શી-ક્ષણની સાથે આપણા

ચ્યાપણી પાઠશા- દિગ'બર ધર્મના સંક્ષિ-ળાએા.

શન સરખાવતાં મા-લમ પંડે છે કે આ-

પણ એ ખાખતમાં ઘણા પછાત રહીએ છીએ. દેરક માટા ગામમાં તેઓની પાઠશાળા, બાર્ડી ગા અને વખતે જૈનહાઇસ્કલ પણ જોવામાં આવે છે, ત્યારે આપણી કામમાં જનહાઇ-રકલ તાં ભાજીએ રહી, પરંતુ પાકશાળાઓ પણ જોઈએ તેટલી નથી. મુંબાઈમાં રોક હીરાચંદ ગુમાનજ જૈન આડીંગમાં ધાર્મીક શીકાળ અપાય છે અને તેનાથી અલગન વિ-દ્યાર્થિઓને લાભ મળી શંક છે. પણ હજા તેમાં વિદ્યાર્થીઓએ વધારે ધ્યાન આપી શાસાના ઉંડા અભ્યાસ કરવાની જરૂર છે. અને કાર્ય-વાહંકા તરકથી ખાંડી ગમાં અપાતાં ધાર્મી કરભાવસો વધારે રસમય બનાવવાની જરૂર છે. વળી સર્વે સ્થળે ચાલતી પાઠશાળા તરક કાર્ય-કર્ત્તાઓએ વધારે ધ્યાન આપવાની જરૂર છે. ધર્મ તરક આપણા શ્રાવંકાની અભિરૂચી નથી અને વળી ભદારંકા વીગેરે આ બાબત તરક દર્લક્ષ આપતા હાવાથી આપણા ધર્મની પ્રભા-વના વધવી ખહુ મૃશ્કેલ છે.

ઘણી દીલગીરીની વાત છે કે ઉપદેશક ંખાતું ભંધ કરવાની જરૂર પડી છે. આપ-ઉપદેશક ખાતું.

ણે ભટ્ટારકાને ટેકસ આપી શકાએ છીએ. પણ ઉપદેશક ખાતું. જેના કાઇ ઉપર કાઈ જાતના હક કરી શકાય નહીં એવા ખાતા તરપ્ર કાંણ નજર શકા છે, તેઓ ગામે ગામ, ચકલે અને

માદલ્લે કરી પાતાના ધર્મના ઉપદેશ આપે છે. વળી એવું પણ બને છે કે એવા ઉપદેશકા તરપ જ્યારે રસ્તે જનારા એચાર માણસા પણ સાંભળવા ઉભા રહેતા નથી, તેા પણ તેઓ અુમા પાડી ભાષણ **આપ્યા**જ જાય છે. એમ કરતાં કદાચ તેઓને કડુ વચન, ગાળી પ્રદાન, અને મૃષ્ટિપ્રહાર પણ મળે છે, છતાં પણ પાતાના કામમાં જરા પણ નાઉમેદ **ઘ**તા નથી. આજ કાલ આપણા નામદાર ઇગ્રેજ સરકારનું રાજ્ય હિંદ્સ્<mark>થાન ઉપર લગભગ ૨</mark>૫૦ વર્ષથી ચાસ છે, તા પણ હિંદુ ઉચ્ચ કામમાંથી પાતાના ધર્મમાં લાવવાને અહજ થાડાનેજ લલચાવી શક્યા છે. તેા પણ લાખા રૂપીઓના ખર્ચ કરી ભાઈખલની સસ્તી નકલા છપાવી કરાડાની સંખ્યામાં મકત વહે ચ છે, પણ તેમના ધર્મ ફેલાવવામાં મુખ્ય અડચણ ગ્રાતિ-બેંદ છે. કારણ 'કે જો 'કાઇ સ્વધર્મ**માંથી** વિમુખ થાય, તા તેને જ્ઞાતિ બહુર મુકવામાં આવે છે. વળી તેઓ કહે છે કે જેને હિંદ-સ્થ નમાંથી આ ज્ञાતિબેદ દૂર થાય. કેળવણીના પ્રચાર થાય, રૈલ્વે જેમ બને તેમ વધારે विस्तारमां थाय अने आहे। समान केवां સમાર્જા ઉભાં થાય તા ખ્રિસ્તિ ધર્મને કેલાતાં વાર ન લાગે. ખીછ અડચણ એ છે કે સ્ત્રીએ! ઘણા જાના વિચારન વળગી રહેનારી હાય છે, માટે જ્યાં સુધી ઇંગ્રેજી કેળવણીના પ્રસાદથી ખિતિત ધર્મના સ્વાદ ચખાડવામાં નહીં આવે ત્યાં સધી આ ધર્મ કેલાવા મુશ્કેલ છે એમ તેમના મેત્રા માટા પાદરીઓનું કહેવું થાય છે. હવે વિચાર કરજા કે હિંદુસ્થાનની ઓજાત-ને કહે જાતની કેળવણી માફક સ્માવશે ?

આપણા પડેાશી શ્વેતાંબર સમાજમાં શાં થાય છે તે તો કરે ? ઇસુષ્પિસ્તના ધર્મમાં સંખ્યાં બંધ ઉપદે- **હરીફાઇની પરીક્ષાએા** જુઓ. તેઓ પાતાના ધર્મના પુસ્તકા સંખ્યા બંધ **છપાવા** લાવ્યા છે, લ્હાણીરૂપે પુસ્ત- | માેકલાવે છે. તેવું આપષ્ટામાં જલદી કા વેહેંચાય છે અને ઇનામરૂપે પારશાળાઓ એવી ધર્માભિમાની દરેક બધુને છજ્ઞાસા માં અપાય છે. વળી શ્રેણીયહ (series of થવી જેમુએ. books) પ્રસ્તાંકા પણ બહાર પંડ છે. **રાયચ'ડ્ર જેન શાસમાળા**ના ઘણા ઉત્તમ સંથા છપાયા છે.

થીએાસોપ્રીકલ સાસાયટીની હરીકાઈની દરેક માટા શહેરમાં પરીક્ષા क्रभ क्षेवाय છે तेवी दरीકाઈની परीक्षाओ। (Competitive examinations) ક્વેતાંબર સમાજમાં શરૂ થઇ ગઇ છે અને તેનાં ઇનામા ભારે રક્રમાના દરેક વર્ષ અપાય છે. પરીક્ષાઓથી સાથી વધારે લાભ થવા સંભવછે કારણ કે તેમાં જૈત તા શંપણ અન્યધર્મી પણ વાંચવા લલચાય છે. કંદ્રા વાર, ત્યારે આપણી દિગ'બર કામમાં આના ભાસ ક કંઇ હીક્ષચાલ પણ માલુમ પંડ છે ! અરે કેટલાકને ખબરજ નહીં હાય કે તેમનામાં ક્રેવાં ક્રેવાં નવીન પગલાં લેવાય છે! વળી મ્મન કળ ખારાકના હીમાયતીએ તરકથી આ વિષય ઉપર નીવાંધ લખાવાય છે, તેમાં ઉ-ત્તમ નીબ'ધ લખનારને રૂ. બસો સુધીનું **ઇનામ આપે છે.** તેવું કાંઇ આપણી કામ ક્રુફ્રો કે ? શ્વેતાંભર સમાજમાં એક સંટલ <u>હ્યાયબ્રેરી સ્થાપવા દરેક સ્વધર્મા બધ્ય પાસેથી</u> એાછામાં એાછી ચાર આના જેટલી પણ રક મ ક્ષેઇ એક માટું ફંડ કરવામાં આવે છે અને તેમાં પૈસા પણ દરેક ગામમાંથી ધીમે ધીમે આવતા જાય છે. વળી તેઓ ગજરાતી સાહિત્યની એક કીમતી સેવા બજાવી રહ્યા છે. જાના જાના ગુજરાતી પ્રથા, તેમની ભાષા, તેમના વિષયા, તેમની શૈલી વીગેરે બાબત ઉપર ચર્ચા ચત્રાવે છે. જાના પુરાણ લેખો. સ્તંભો, ગુરૂની **પદ્માવળીઓ**, યાત્રાનાં સ્થળ, તેમન ડુંકવર્ણન, વસ્તીના આંકડા, વીગેરે વોગેરે અધારામાંથી કાઢી હપાવી ઘેરે ઘર

0

આપણી કામના વિદ્વાન વર્ગ તરકથી

એવી એક વાંચનમાળા વાંચનમાળાની જરૂર તૈયાર થવી જો દુએ જેમાં ગુજરાતી તેમજ શાસ્ત્રીય મુળાક્ષર વીગેરથી માંડી બાધ-દાયક ધાર્મીક પાડા. કવીતાએો. તિર્ઘ કરાના જીવન ચરિત્રા, સ્તુતિ, વીગેરેના સમાવેશ કરવામાં આવે. વળી તે ઉપરાંત એકજ રસ્તે ન જતાં સામા-ન્ય વ્યવહારીક બાબતા આચાર, પદાર્થ વિઝાન ન. મસાકરી, અન્ય દેશાનું બ્યાન ઉમેરી રસીક અને ૨મજી ખનાવવી જેત્કએ. આ વાંચનમાળા નં. પ સુધી એવી ખુનાવવી જોઈએ કે ગામ-હીં કે સરકારી ગુજરાતી શાળાઓમાં બાળકાને જવાની જરૂર પટે નહીં. આથી **આઇ! અન** ઉપર ધર્મની સચાટ છાપ એવા પડશે ક એ વખતના સંસ્કાર કદી પણ ભુસાઇ જશે નહી અને મિથ્યાત્વી ધમ તરફની અિભરૂચી નાબદ થશે.

આબ વખત એવા આવ્યા છે કે આપણા પુજ્ય મુનિઓના જેવા. ગ્રુંથા ભાંડારનાં શાસ્ત્રા લખનાર નથી, પણ તેમની ટીકા કરવાની કે તેને સમજવાની શક્તિવાળા પજ નથી. જ્યારે વસ્તુસ્થીતિ આવી છે, તા કહેા વારૂ અાપણ કુંભકર્ણની નિંદ્રામાં રહેવું ક્યાં સુધી પાલવશે ? માટે આપણા જાના **શાસ્ત્રો** ભડારમાંથી કાઠી ઉધીઇમાંથી ખુચાવી **સ શાધન** કરી વધારે ઉપયોગમાં આવે તેવા ઉષાય મંદિરાના વહીવટ કરનારાએ ક્ષે-વા જોઇએ. **વિદ્વાન વર્ગ**ની કરજ એ છે કે . આવી ખાખતા તરફ લક્ષ દાંડાવી પ્રયાસ આ

દરવા જોઇએ. પહા **સરસ્વતી અને લક્ષ્મી** એક જગ્યાએ વાસો નહીં કરતી હાવાથી બિ-ચારા વિદાન વર્ગ લાચાર છે. પાંડીત પન્ના-લાલ બાકલીવાલને દિગંબર કામે કાટી ધન્યવાદ આપવા જાઇએ કે જેમણે અનેક ગ્રંથા હીં મત ઉત્તમ છપ:વા તેવાઓને પગલ* ભર્ય છે. ખનતી મદદ કરવી જોઇએ. દરેક દેશસરમાં એમની સ્યાદવાદ પ્રાથમાળાની નકલા વાર્ધીક લવાજમ રૂપીઆ પાંચ પાતા પાસેથી કે દહે-રાના ખર્ચર્થા ભરી જરૂર જરૂર મંગાવવી જોઈએ.

્રું હું હું મુંબાઇ, અમદાવાદ, મુરત અથવા વડાદરા જેવા મુખ્ય સેંદ્રલ લાયબ્રેરી. સ્થળે એક દિગંબર

જૈનશાસ્ત્રાની સે ટલ क्षायंत्री स्थापनी कीएक है कीमां तस्त क्षी-ખીત તેમજ અપેલાં શાસ્ત્રાના સંગ્રહ કરવામાં આવે. તેમજ તમામ જૈન ચાપાનીઆં. સીંકા, છાપાં વીગેરે મંગાવવા જોઇએ. આવી લાયબ્રેરીમાંથી જે કાઇ ગઠક્થને ખહારગામ પુસ્તક વાંચવા જોઈએ, તે તેના ખર્ચ માકલી આપવું જાઇએ અથવા કરતી લાયબ્રેરી (Travelling box) ના જેવી કાંઇક યોજના કરવી જોઈએ. વળી ગુજરાતી, ઈંગ્રે-જ શાળાઓ, બાર્ડી ગા. પાદશાળાઓમાં ધર્મ-ની અમુક બાબત ઉપર ઉત્તમ નિ**બ'ધ** (essay) લખનારને એક સારી રકમનાં પુ-રતંકા ઇનામ તરીકે આપવા જાઇએ. છ વ રસમાં ''દિગ પર જૈં/ન'' માસીંક ઘણાખરાની શાસ્ત્રપ્રતિ અભિરૂચી ઉત્પન્ન કરી છે, તેમાં શંકા નથી પણ હુજા આ માસિક સમગ્ર વિદ્વાન વર્ગમાં વધારે ઉત્સાહ સાથે વંચાય એવું બ-નાવવાની જરૂર છે. જેમ બને તેમ સ્મા મા-મીકતા વધારે સુધારા સાથે વધારે ફેલાવા થ- વાની અત્યંત જરૂર છે. બેટ તરીકે અપાતાં પુસ્તકે!ના વિષયો વધારે ગંભીર અને પુસ્તકા દળદાર થવાં જેઇએ અને તે માટે દાતારાએ પાતાના હાથ લંબા વધા જોઇએ.

આપણા અંવિર્ગ ધાર્મિક ક્રિયા અને ત્રાનની બાબતમાં દ-સ્ત્રી ઉપથાગી ક્ષિણની ઓગ્મા કરતાં સંસ્થાએ પછાત છે, માટે દરેક મેટા ગામમાં અને

ખતે તો નાના ગામમાં પણ એક સ્ત્રી ઉપ-યોગી સંસ્થા ખાલવી જોઇએ કે જયાં તેઓ ખપારના ખેત્રણ કલાક આવી ધર્મ સંખંધી પાઠ, પૂજા. સ્તુતિ, સ્તવન, ભરત, ગુંથણ, શીવણ, ઘરવૈદકનું વ્યવહારીક જ્ઞાન, (કે જેને અભાવે આજકાલ જરાક બાળક માંદુ પક્ષ્યુ કે તરન બગલમાં ઘાલી દાક્તરને ત્યાં દાડવું પડે છે) માંદાની માવજત વીગેરે વીગેરે બાબતનું થોકું થાડું જ્ઞાન મેળવે, તો ભવિષ્યમાં થનારી પ્રજાના કુમળા મન ઉપર સારી છાપ પાડી શકે. એક સ્ત્રી શીદ્ધક રાખી તેના તમામ ખર્ચ કાળે પડતા વેહેંચી નાંખવા જોઇએ.

આ ળધા વિચાર તો ધણા ઉત્તમ છે, પણ કદાચ કાઇ એમ ઉપસ**્ડાર** ધારે કે એમા પૈ**સાની** જ**ર**ર છે, ધણા વિ-

દ્વાન ઉપ્તન થાય, ત્યાં સુધી રાહ જોવાની જરૂર છે તા એ વાત પણ ખરી છે, કિંતુ સમય અને સવડ પ્રમાણે જો આપણે યથા-શક્તિ ઉત્સાહપૂર્વક કામ ઉઠાવીએ, તા થાડું કતા કરી શકીએ.

N. P.

AN INTERPRETATION OF THE JAIN PHILOSOPHY.

(He Understood by the Writer of this Article.)

Philosophy is born of reflection, especially about knowledge and reality. Long before we trouble to reflect upon these subjects, however, we have the usual metaphysical theories that things exist and that we can and do know what they are. What are houses, for instance, according to the metaphysics of the ordinary man? They are brick and mortar shelters, occupiers of a certain space, durable for a certain time, and inanimate. They are called real; and all this consciousness of what they are is called knowledge. The houses are not called illusions, nor are they thought of as ideas. The knowledge of them is not called dreaming, nor is it thought of as a property of the houses themselves. Before we begin to reflect upon these subjects we are not critical in any way about our knowledge being knowledge of reality as far as it goes; nor do we question the real existence of that which is known. We are convinced that we know; and we act upon the conviction that known things and beings are real-including ourselves. However, any endeavour to enrich our understanding of knowledge and reality is to enter the field of philosophy. The Jain philosophy is claimed to be very ancient. It maintains that knowledge is possible, and that that which is known is reality.

KNOWLEDGE.

Knowing is the nature of every living being, from the highest to the

The differentia of knowledge is consciousness, and in the lowest forms of life it exists in the sense of touch. One purpose of philosophy is to advance from the known to the unknown; and the process is a threefold one, synstatis, analysis, and synthesis. Synstatis is our first acquaintance with the object, a vague idea, we know only that it is something, we do not yet know what it is Next comes analysis; then synthesis; the various parts, properties, qualities, aspects, and relations found in the analysis are mentally added to the first vague idea and are conceived as being one thing; in place of the first vague idea there is a clear and detailed knowledge of the thing; the diversity found in the analysis is known as a unity. All knowledge is based on the five senses. Sensuous knowledge is the first to be developed. Afterwards comes knowledge by interpretation of signs. We develop knowledge by interpreting words, which are signs of ideas. After this comes what may be called psychic knowledge-we have direct knowledge of things without the intermediary of the five senses, but still, in the waking state while the senses are operative, it is not any kind of sleep or trance condition, it is a sort of clairvoyance. Mind knowing is next developed, whereby the person knows the minds of others; and, finally, comes unlimited knowledge, cmniscience. This is latent in every living being. Know-

छापाबाजार-लखन इ बाधु फ्तेइचंद्र मी ओसबाल दि. जैन

(पर्य प्रमी पनिष्टिन श्रीमान प्रहस्थ)

JAIN PRESS SURAT.

यहिया गंज-न्मखन उ

(धर्मानिष्ठ, सद्दाचारी वयात्रद्ध श्रीयान शहरथ)







कुर्सीपर बैठेहुए महाशयों—े बा. ज्योनिप्रमादजी ए. जे. (अदृश्य). २ बा. जुगजिकशोरजी मुखत्यार. २ बाबू सूरजभानृजी वक्तिल, ४ बाबू अर्जुनकाकजी शेठी वी. ए.(जेपुर). ५ वा. प्यांग्जाल एस.ए. वेरीस्टर-एट ले.-मेर्ट, ६ रीमवदास वी.ए. विक्ति. ७वा. सुकतानसिंह बिक्ति, < बाबू कीर्तिपसादजी वी. ए. एक एक. वी. २ काका मन्नूकाल विक्रः, १० वा. प्रमोखाल ढाहूँ।र. ११ पंडिन उमरावसिंहजी (संस्क्रत अध्यापक, रुषभ ब्रह्मचयाश्रम–हम्तीनापुर

ledge has to be developed. Knowledge is the experience of the individual and cannot be imparted from one to another: everyone's is different from, though like, that of others, Knowledge goes hand in hand with life; it is of two kinds true and false. Truth is knowledge purged of intoxicating elements. Fear, for instance, disturbs the mind, we fail to see the truth, and so we make wrong judgments about people, etc. True knowledge does not accompany a vicious life. Knowledge is not merely perception; perception is followed by a :desire to act, and this again is followed by a determination to act. If we see a butterfly, we desire to let it live, and this feeling is followed by a determination not to kill or hurt it. Knowledge, whether ordinary, scientific, philosophical, or religious, ends in a determination to act. If the knowledge is true the action will be good. The Jain philosophy recognises that there are two ways of knowing things. There is a sense in which things have a beginning, and there is a sense in which things do not have a beginning; and this is true of every real thing. As far as its substance is concerned there is no beginning to it, but so far as the particular mode of its manifestation is concerned there is a beginning. A butterfly begins to exist when the chrysalis dies, but the living being in the chrysalis was never out of existence; immortality extends backwards as well as forwards. The universe is the totality

of realities, and, according to how they are thought of, it does and it does not have a beginning; both statements are true from different points of view.

REALITY.

The word has many meanings, but here that which is real is called substance. Substance is not an illusion, it never was and never will be one homogeneous thing, nor one individual being. According to the point of view from which it is regarded, substance is that which performs a special action, that in which there are origination, destruction and permanence, that which is the subject of qualities and modifications, or that in which the differences of space. time, and modification inhere together. Making a division by dichotomy, substance is (1) alive and (2) not alive. Under this latter heading are matter, space, and two more real things, dharmastikaya and adharmastikaya, not recognised in any other philosophy, and for which there are consequently no English names. These serve respectively as the means by which moving things move, and resting things remain stationary in the: sense of not moving. In this philesophy space is regarded as something real; it is that which contains every, thing else and does not need to be contained itself. Time is, as a matter. of convenience, figuratively called a substance, but it is not really so. Really it is the modification of substance; it is that modification which

enables us to know the anteriority or posterity of a thing. Time is really the duration of the states of substances. Matter is composed of atoms, the atom is the ultimate unit, it is smaller than that contemplated by modern chemistry, and is not a compound of other units. It is one of permanently lifeless realities; matter is unconscious whether stationary or moving, in life or out of Life is an abstract idea; having life is the nature of living beings, and these are concrete realities. The characteristic which differentiates them is not movement but consciousness. Movement is not always a sign of life, while consciousness is. It never leaves the living being even in sleep or other so-called states of unconsciousness. It may be more or less obscured. A quality never leaves its substance. Consciousness does leave the body at death, and consequently cannot be a quality of the body. Skin, brain tissue, and all parts of the body are composed of chemical elements, lifeless, unconscious atoms. Vibration is not an event of consciousness but of motion. Consciousness is awareness, a synthesis of percepts and concepts, something quite different in kind from movement of matter. As consciousness is not a property of the body it must be the property of something else; in the absence of a more suitable word, that thing may as well be called the "soul." It is the living being, the individual, the self, the ego. It is only in the sense of being in combination with the ego

that the body of a living being is alive, as it is only in the sense of being in combination with salt that water is salt; the salt is salt, not the water; the living being is alive, not the body. The living being is a soul with a body; he is not a body (with a soul looked upon as not himself). No self can ever be wiped out; always, and for ever, each one of us is part of reality, and never becomes any other part.

CONCLUSION.

There is not any other reality in the whole universe than one of the five above-named realities, viz, living beings, matter, space, and two others. The malefaction, misery, and ignorance of living beings are caused by the essentially divine qualities being obscured by matter-dress; its combination with the self is a subtle one and cannot be mechanically separated; this foreign element does not leave the being at death, but accompanies it in its re-birth elsewhere until it is finally removed. To remove it is to reach an ideal existence. The process of removal is through stages of development in which the latent qualities are gradually brought out; it takes place either naturally or scientifically. The means by which it is effected form a system of ethics; these are based on the philosophy in the Jain faith; and, in conclusion, the remark may be allowed that not all the philosophy is given in this article.

ERTWA (HERBERT WARREN)
T. P.'s Weekly (London) 3-1-13.

LORD MAHAVIRA'S COURT.

(THE BRILLIANT HALL OF LIFE)

(By Jagmandarlal Jaini M. A. Bar-at-law, LONDON).

Twelve months have passed and Lord Mahavira's Candles uncovered by the "Digambara Jaina" have gone on shedding their undying lusture on the portals of the Lord's Palace. The first Candle illuminated the legend. Thou art independent; thou art free; and therefore thou art responsible. The second Candle showed us: All life is sacred; all living beings are brethren.

The light at the portal prepares us for the greater illumination in the Lord's Court. We enter and we are in an ocean of light that defies description. Yet we are not dazzled or dazed so much as calmed and strengthened. In the Court we find purity and two pillers of divine whitest brilliance. The light seems to circle and circulate round the steadiness of these two rose pearl columns of solid splendonr One of these is Firm Knowledge. The other is Conduct. Beyond them is Eternity and Bliss which are palpable, visible, but still not quite comprehensible by us, as they extend onward in an endless vista of Light, Glory and Life. The only way to reach this Great Goal is through the Pillars of Firm Knowledge and Right Conduct !

The wanderer who enters the hall says: Indeed all are free. Every one who chooses can enter here.

There is Peace too. How can life really clash with life? Struggle for Listence? There is no push on or push aside here; there is Co-operation-willing and loving Co-operation for Listence. Not struggle support for Listence. Science is supplemented by sternal Religion. Science makes matter handy and obedient to Man's mind. Religion fills this mind with aim, courage and inspiration. Science gives us Ambition. Religion gives this Ambition eves. Science makes creature comforts ours. Religion slakes the thirst and fills the depths that are beyond science. The wanderer feels the undercurrent of science entwined in loving fraternity with the keen and busy light of Religion. By -the habit of division of mental labour. he distinguishes the two, but really he feels they are one

The Philosophy and the Conduct of Life—the two white pillars, lend lustre and greatness to each other. They are like the two hands working at the rope of life drawing it up from the pit of **Eamsara** (cycle of existences). Alternately the right and left hand support and push on each other's work, till the rope is all drawn up and the drawer gets—the invaluable jewel of Nirvana.

Two objections are frequently taken to Jainism. (1) That it is

narrow, sectarian. (2) That it is no good in practice.

Jainism is narrow, only if it fills a narrow heart. Its narrowness may be borrowed from the vehicle in which it is carried. A religion, which prima facie a hourly insists upon an Universal Brotherhood not of mankind only, but also of all living beings,-how can such a religion be narrow? Jainism is not narrow at all. It is not narrow in its contents, in its aim nor in its theory or in its practice. It is very cosmopolitan. Its contents give room to all kinds of Sciences, philosophy and arts. Its aim is the happiness of all living beings. Its theory is perfect Conduct based on perfect

knowledge. Its practice is scrupu-

lous care of all life.

As to the charge of sectarianism Jainism is sectarian, because followers are not many, and these also are not fully aware of the urgent universality of their faith. sympathies are sectarian, because their knowledge is incomplete and the spring of Love in their hearts is not full and steady. To say the least, it is unfair to transfer the blame from the followers (so-called) of a creed to the creed itself. Some sactarianism is incompatible with the new national aspiration in India. This is a misconception. A good Jains would make a better Indian, than the Jaina-Indian who is not a good Jaina. This is the rule, and an exception, if there he one, cannot disprove it. Why only the national aspirations?—A true Jaina breaths the still rarer and higher air of international and indeed universal peace and prosperity. Jainism is not only tolerant of other religions. It sees and appreciates the truth that is in them. It only refuses their claim to confine perfection and Salvation to some particular individual and his advocacy or intermediation on our behalf with someone at whose sweet will our life is carried on. Jainism may be said to be the ancient Theosophy of the world that has continued and shall continue on for as long as Truth and Humanity go together.

The second objection is: Jainism is no good in practice. It may mean either that Jainism is practicable: cr that people follow its tenets cannot be very good This last construction is refuted as soon as stated. Jainas are a small, but a select community. They are prominent business men and well-to-do public men and philanthropists also in all parts of India. Indians have but only recently begun to go beyond the seas, and the Jainas have been the first to cross waters and establish business and other relations with the countries West of India. flourish in Burma, Aden, Africa. Paris and London.

As to the practice of Jainism, a distinction must be made between the rules of conduct for Jaina months and Jaina laymen. The ancient culture of India may not be revivable and to that extent, the rules of Conduct for Jaina monks are antiquated. But the norm of Jaina lay ethics is fast becoming the standard of conduct of a numerous and important body of men and women in the Western countries.

Thus Jainism is hardly open to criticism of the kind that is levelled against it.

The fact is, that presented properly and shorn of its unessential excrescences. Jainism, despite its antiquity of three thousand years and more, is an up-to-date system of thought and life, and as practicable and useful in Paris, London and Berlin today, as it was in Pataliputra. Ajodhya and Vesali, when the Railway were not and telegraph pole did not contest the living height of the palm in the plains of Behar, nor the whire and creak of factory and mill disturbed the noonday stillness of the Mahavana (the great Forest) at the foot of the Himalayas. Lovers of Jainism then retired in the solitude of the forests to learn and digest the Jaina solution of life. Now they retire into the busiest towns of modern civilisation to see if the forest-born doctrine of Lord Mahavira is sturdy and steady enough for the shock and struggle of the changed conditions of our life. Our conviction is that Jainism is not and cannot be dehors decombat; only the changed point of view must be thoroughly realised and our activity must be organised in the oldest spirit but on modern lines. Thus alone Jainism can be extricated from oblivion and opprobrium and made the living blessing for the world's millions that it surely deserves to be. This is the inspiration and illumination of the Lord's Court & the Faith & Conduct pillars point to the modus operandi. Serious individual & collective effort must be made to give fixity & publicity to the Jaina tradition; & to bring the peace & love of a true Jaina life as near to as many of our fellow-beings as possible. For us Jainas, the true attitude is that of the chant of the Yasna, hymn to Ahura-Mazda.

"Shine on the whole race of man, Believing and unbelieving,"

Great indeed is the marvel of Jainism. To be a Jaina von need not necessarily even call yourself a Jaina. Live the life of a Jaina, and whatever you are, whatever name, creed or country, you are a good Jaina. Thus you enjoy Virtve with Liberty. There are hardly any Dont's or Do's in the inmost heart of Jainism. Be and Live are its short and sweet commandments. "Be in the light of Firm Knowledge," says Pillar number one; "Live in this light", says Pillar number Two. The spirit of Love whispers sweet music. Unseen bells tinkle softly lulling murmurous hum of rose-fragrance and dew delicacy. The ears bring the dawn of Aurora nearer to the eyes and the seas and seas of the light and delight heave huge and endless beyond the Pillars. The whole seems to taper into a mingled sight and feeling of Peace and Bliss. The Wanderer would fain linger and gain the self, by losing himself in the divine Hall for ever. But the Karmic body is still on and he must go out to try and doff it so that he can slip through the pure white Pillars to Eternity, to Nirvana!

We hope the readers of the Digambara Jaina will walk into the Hall of Light themselves and introduce their friends and families also to the brilliant significance of the Candles and the Pillars.

Peace to All!!!

79 Linden Gardens,
Bayswater, London,
August 12, 1913.

J. L. JAINI.

THE PRESENT CONDITION OF THE JAINS AND THE WAYS TO PROCRESS.

(Specially written by-Manilal H. Udani

M.AL.L.B.; F.L.L.C. BOMBAY.)

A glance at the present condition of the Jains in different cities in India, a judicious comparision of the present state with the height of eminence that they enjoyed a few centuries past, and the fact that while the other communities are seen busy with the ways for their advancement in the race of nations, the Jains are lagging behind, as if grossing about in the dark instead of ntilizing all the resources in their hands, which if rightly wielded would bring them in the forefront, is a fact which can not but grieve the heart of each and every follower or sympathiser of Jainism. Feeling the same sentiment of regret, many a time and oft that a mighty community like ours is going day by day to a downward path of degradation, seeing that the intelligent members of our community are defacting and growing indifferent, on account of the distorted state of things and the noble precepts of Jainiam which are quite enough to dominate every other faith, and so eloquently preached and austerely practiced by our Tirthankaras being now thrown into neglect, and feeling in earnest that unless a vigorous effort be made by us to strengthen the chord that binds us all as Jains and Jains, to realize that we are all one whose duty it is to save the noble religion from falling into neglect and to take a pride in elevating the national honour as a community, a day may come when it will be a difficult task to find out even a few hundreds of Jains who may be the true adherents to the noble faith of Jainism. With this object in view I beg to drop the following suggestions, which if earnestly attended to by the influencial members of our Jain community, may bring us nearer to our welfare.

First of all I beg to point that the causes of our downfall all internal and not external and may be ascribed generally to primary cause that since long have ceased to regard ourselves as brothers, who are all enjoined by our mighty Lord to preserve Universal Love towards all Nature is a very powerful agent, and where i fi ds a slightest deviation from its commandment, it never fails to take its revenge. I believe, same is the case partieularly with the Jains and generally with all Indians. So long as one is perfect in his duties, no consequence will harm him the moment the laws of nature are violated or interpolated, and the chord of harmony is broken the devil steps in and the mischief is set a foot.

A mation or community is like a

body which is bound to be healthy, so long as its members perform their allotted functions but the moment the hands refuse to work, the feet refuse to walk and the brain refuses to guide the whole system will totter and as a natural consequence all the members will perish. Similarly a community cannot be sound and cannot do any work, if its members are discordant and do not work in harmony. The chain of harmony being broken, the community can make no progress, all its civilization, reform or elevation is thereby hindered. Such a disease has taken hold of the body of the Jain community and till the harmony and union be restored, and Universal Love preached and practiced by our Lord be recognized by all of us, we must remain as we are and cannot expect any progress.

It is now hightime that we should all of us realize this disease of disunion and should try to eradicate it as early as possible. It is a foolish phrenzy that has taken hold of us at the present moment that we should forget that our national honour and status as Jains is more endearing to us than the status as a faction. Let us remain Swetambers. Digambers or Sthanakawasis as it may be our fortune to have been born in any of these sects but let us not at the same time forget that we are all Jains under the shelter-protection of the same Tirthankaras and in whose name we are nearer to each other than any other member of the other community and in whose name we should elevate the honour and status of all of us as Jains and not defile by internal struggles or disunion.

To go to find out the causes of this disunion and disruption, is inexpedient and undesirable. Impartially speaking, I do not believe any of the three section is at fault or responsible for this result. But it is a misfortune of the community and its members, that in the height of our religious fervour and excitement, we forget ourselves, forget the common bond by which all are united, and go to the extent of even annihilating each other. This is a misfortune mistake, and an ominous accident. due to ignorance of our brothers and the intelligent members of all the three sections have come cognize this mistake, that by this internal civil struggle, we weaken each other; and the community as a whole becomes impaired and goes to ruin day by day.

This being an admitted fact that the three sections of the Jain community are not at harmony with each other and that owing to this state of things, we are hindered from making any communal progress and communal welfare and that whereas we ought to have made great advancement in this era of civilization, we have really fallen backward, it is high time that the intelligent members of our community should take up this question, mend the error continued from time past and cousider the main point at issue as to finding out the ways leading to communal welfare, so that our community may. come in the forefront and take an elevated place in the rank of other nations, which it rightly deserves. By the bye I may point out that it is not lach of effort but the lack of right effort in the right direction, that we have remained backwards and command little status, inspite of all the means at our hands. Each of our three sections is trying its level best through each of our conferences and no effort has been spared by the leaders of each sect, to make popular and effective their conference and its work amongst its members but with deepest regret we have been able to achieve very little practical good, at very high costs. This can be easily done by moving all the general affairs of the community through a common institution which may be duly represented by the intelligent and effecient members of each sections.

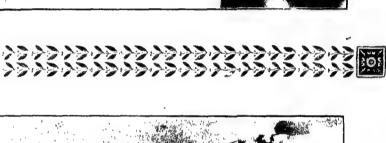
This being realized I may further remark that the Jains are rich, devoted to commerce and industry and are more amenable to reason than any other community. Again being unexceptionally loyal to the Government they are likely to advance within a short space of time, in education and civilization and will take a high place in the rank of other communities and maintain its status and position through the due help of our Benign Government.

To give briefly a picture of our present status. I may point out that we are greatly backwards in education in comparision with other communities. While the other communities are active in their advancement,

our community has not been fortunate enough to produce statesmen, politicions, orators, journalists or philosophere who might lead and elevate the members. Social reform which is the basis of progress of every community and which ought to be adopted by the people as a primary step to their welfare, has hardly been practically moved in our community although a series of resolutions can be seen in the annals of our conferences. is an age of keen compitition almost all the people of our community have come to find out the fact. that it is even a most difficult task to carn one's livelihood, unless one can make an intelligent use of his abilities. Our people coming from distant places to make a living for them in the rich cities of India, are put to immense hardships, for want of any institution whose sympathatic members may guide them or get them engaged somewhere. It is a matter of regret that a mighty community like ours cannot count upon a few orphanages for the helpless, a few working homes, widow's homes, a central Jain College, a few high schools, a central Jain press, a few circularing libraries and such other instutions which might educate public opinion and which might satisfy the requirements of the age. There are so many drawbacks in us which can be counted in a number of pages as the causes that hinder our progress, but it is needless to dilate upon them.

What touches us the quick at the present moment, is to find out



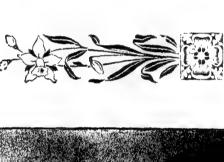




श्रीमान पंडित पुत्तृत्रात्ज्जी-इटावा Etawah

श्रीमान पंडित पनालालजी गाथा-जासाढ (कोटा) JAIN PRESS SURAT.

'दिगवर जैन"



श्रीमान शेठ बालचंद रामचंद हर्गमाइ देवकरणवाळा

मालापुर. અણીના કાર્ની અને વાલચંદ ઉગરચંદની પેટીના મુખ્ય સંચાલક વ્યાપાર શરા જેત અલ્સ્થ કે જેમણે ગત વર્ષમાં મુંબદમાં રૂપ્યા દેહ કરાડનું રૂ એક તડાકે જેપ્પા લીધું હતું.

JAIN PRESS SURAT.

the ways through which our community can attain to the high position in the rank of nations which it so and for which it deserves justly commands all the necessary resources. First of all we must all realize the fact that according to the change of time we must change the ways of utilizing our charities and conseinstead of spending quently monies upon making Temples and decorating idols, we should try to utilize the same amounts apon the propagation of liberal education amongst Jains broadcast without any distinction whatsoever of caste or Above all we must realize this stand point, as the only way to our welfare in the near future and on which subject we must meet unitedly.

- (2) Without in any way interfering with the work of our conferences, let us allow them to mind particularly the work relating to their own sect.
- (3) Let a General institution duly represented by the leaders of all the three sects be put into active operation and let all the general work viz. Jiva Daya work, Educational work, and questions relating to the Political and Literary status of our community as well as questions relating to social reform and prevention of evil customs be all left to the general body, which should form the system regularly helped in its works harmoniously by its three hands representing the three sects.

- (4) The General Institution should establish its branches in every large city of India, to look after particularly the welfare of the Jains of that place and specially for encouraging the general work.
- (5) A few chosen intelligent Jains should be sent to foreign countries to study the elements of a mighty nation and how they can be practically adopted in our community.

Scholarships should be formed for sending our intelligent youngmen to foreign countries for technical and higher education.

All these and several other questions of great importance can be then taken by the General Institution, the moment we all join hand in hand unitedly and harmoniously with a liberal and magnanimous mind, with a sincere will for the welfare of our brothers and with the universal love so eloquently preached and practiced by our Lord Mahavir.

We are being thinned in number and strength day by day and the spirit of union being neglected, the holy religion is being defiled and its adherants, falling into miseries, degradation and weakness through internal struggles. Brothers, let us be wise before it is too late, the condition of our brothers appeal to your high sense and conscience to do that and Implore you, in the name of our welfare, to give up all the differences of our mind, like a high noble Jain of old age who took pride in forgiv

ing and forgetting and who possessed to a very high extent the spirit of Tolerance which we badly need at the present moment. Let us realize that spirit of tolerance in right earnest and that spirit united with Universal Love towards all and a sincere will and a common effort on the part of all of us will dispel, before long, the gloom of ignorance from us and will shower upon us the smiling rays of a rising sun and as a result, knowledge and with all its natural consequences. Decide soon whether you will have knowledge or ignorance, strength or weakness, union or disunion, a bright and blooming community or a dark and decaying one and whether you will mend or mar your own future as well as the future of the whole community, for want of mere tolerance on your part for the views of your brothers, if you decide that you ought to and you are enjoyed to prefer the former be up and do not delay to communicate your views on the subjects as early as possible.

प्रभूदर्शन अने ते केवी रीते करवां?

. 20-0

(લેખક:-શા. પુનશી અરજીન-ધુલીઆ.) આપણું મન એવા તા પ્રપંચાથી ગુંથા-યેલું છે, માનસિક મેહના વિચારાથી ભરમાયલું છે કે આપણું પ્રભુદર્શન, પ્રભૂલક્તિ શું છે, તેનાથી શા લાભા થવાના છે, એ વિષે અન્-પૂર્વાજ રહ્યા હીએ, પણ વિચારથી તપાસ ક રીશું તા સ્પષ્ટ જહારો કે " મનુષ્યને અનંત મૂખ આપનાર પ્રભૂભક્તિ અને પ્રભૂદર્શન એ પહેલજ પગથીઉ છે."

ખધુઓ, વિચાર કરો. પુર્વાપાર થઇ ગન્યલા અનેક મનુષ્યોએ મંદિરા બધાવી મૂર્તિ-આની રથાપનાઓ કરી છે. સિદ્ધાચળજી, આશુ, ગિરતારજી, સમેત-શિખરજી, વગેરે તિથાં વસાવ્યા છેશા માટે કે સા કાઇ એકજ અવાજે કહેશે કે "પ્રભૂદર્શન માટે", "પ્રભૂભ-હત્ત માટે", "પ્રભૂ નામગુહ્યુ સ્મરહ્યુ માટે" અનેક મહાત્માઓ માહ્ય પામ્યા છે, એવાં તિથાં તા દર રહ્યાં, પહ્યુ, આપણી પાસે, આપણે વ-સીએ છીએ, તે ગામનાં મંદિરામાં મારા જેવા જીવાનિયાઓએ ભાગ્યેજ પર્વના દિવસા સિવાય પગથીઉ પણ જોયું હશે.

પ્રાતઃકાળમાં આપણે નજર કરશું તેા અનેક ધર્મ ભગીનિએા પ્રભદર્શન માટે ઉત્સક થઇ સાક સ્વચ્છ કપડાં પહેરી, હાથમાં શ્વેત અક્ષતની કાયળીઓ લઇ, છનમ દિર પ્રત્યે જતી દેખીએ છીએ, તેઓમાંની કેટલીક એ-વી ઉતાવળ**ધી જ**તી જણાય છે કે ધરમાંત કાંઇક ત્વરાથી કરવાનું કાર્ય ભાકી રહ્યું હશે ? બચ્ચાંઓ બિછાનામાંથી ઉઠશે, તેમને સમજા-વવાં પડશે. જીન મંદિરમાં વીતરાગ દેવની પ્રતિમા સમીપ કક્ત દાથ જોડી આપણી સ્વાર્થતાની યાચના કરી, નમન કરી, પાછી કરતી જણાય છે. કાેઈક તાે રસ્તે ચાલતી યા આવતી તરૂણીએ**ા સાથે આત્મકથાએ** કરતી જણાય છે. કાેઈ આગતા સ્વાગતા સંખ સંખ'-ધી પ્રશ્ના પછે છે. કાઈ મ'દવાડની, તા કાઇ દેશ પ્રદેશની હકીગતાે જણાવતા જણાય છે, તેવીજ રીતે ધર્મ ખંધુએ। અરસપરસના વેપાર સંબંધી, તાે કાઈ નફા તુકશાન સંબં-ધી, યા હિશાળ કિતાબની વાતા કરતા સંસા રના માહને આધિન થઇ પ્રભૂમ દિરે હાથમાં ઝુલતા અક્ષતના વાટવાઓ લઇ જતાં જ શાયછે

છન મંદિરમાં જઇ મ્હ્રાેટ સાદે પ્રભ્ ભક્તિ કરે છે. ત્યારે માનસિક વિચારા સંસા-ર સંબંધી કાર્યોમાં ગંથાયલા હાય છે. મે હજુ સુધી કાલનું કાર્ય કર્યું નથી, પ્લાણા ગૃહસ્થને સવારમાં મળવા માટે કહ્યું છે. બચ્ચા-એના નિશાળ ગયા ન હશે. વગેરે અનેક ઉપા-શ્વિઓથી ભરપર રહીયે છીયે. સામે જો કે મહાવીર પ્રભૂતી, પારસનાથ પરમાત્માની, યા શાંતિનાથ ભગવ'તની પ્રતિમા હો. તેઓના ગમે તેવા ગુણા હા પણ સ્મરણ થતાં નથી. સમ-જો કે જેવી રીતે સરકાર સત્તાથી શાક્ષી માટે સમન્સ આવેલ હાય અને તે માટે નાઈલાજે શાક્ષી પુરવા ક્રાર્ટમાં જવું પહે છે. તેવીજ રીતે દુનિસ્માની સત્તારૂપ ખાજાને ઉતારવા. **બીજાઓને ધર્મનું બાલ્ય સ્વરૂપ જણાવવા** તરતજ છન પ્રતિમાને હાથ જોડી જન મંદિ-રની બહાર પડે છે.

જેમ એક ડાેસાં હતી, કે જે હમેશાં પ્રાત:કાળમાં સાથી પહેલાં જીનમ'દિરમાં જઇ પ્રભ્ર પાસે યાચના કરતી કે હે પ્રભ્ર! હે દીના-નાથ! મતે અનંત સખ દેનાર માેક્ષ આપા. તે વખત તે મંદિરના પ્રજારી એક રક્ષક દ્રતા તે રાજ સાંભળતા હતા. ત્યારે મનમાં વિચાર કરતા કે આ ડાસી ખરાખર ખરા અ તઃકર-**શર્થા અત્યાંત તિવ લાગણીથી** માક્ષની માગણી કરે છે-ખાસ માક્ષની અલિલાપીબી છે. એક સમયે ડાેસી પ્રપ'ચી કાર્યમાં ગુ**ંચા**ઈ જવાથી પાંચ યા સાત દિવસ છનમંદિરમાં માક્ષની યાચના કરવા જઇ શકી નહી, ત્યારે પુજારીએ વિચાર કર્યો કે ડાેસી પાંચ સાત દીવસથી માહ્ય માગવા ક્રેમ આવતી નથી? એમ વિચાર કરતા હતા એટલામાં ડાસી આવતા જણાઇ, તેને પુજારીએ પુષ્ધું-ડાસીમા, **પાંચ સાત દિવસથી માેક્ષ માંગવા ન** આવ્યા ? ડાસીમાએ પ્રત્યત્તર આપ્યા, દિકરા, ધરમાંની એકની એક બેંશને પાડા અવતર્યા

त 08-31 પાસતાં મરી અંદ્રો ા તેના શાકને વશ થઈ કો સે દુધ આપવ બુધ કર્લ અને દોહવાની વખતે લાત મારવા માંડી. તેની વ્યવસ્થામાં રાકા_ધ. તેથી આવી શકાય નહી. બે દિવસથી મહિષીએ. પાડાના શાક વિસાર્યો છે અને હવે નિયમિતપણે દધ આપે છે. ત્યારે આજે શ્રી વીતરાગ દેવ પાસે માેક્ષની યાચના કરવા આવી. પુજા**રીએ** વિચાર્ય કૈ ડાસીમા પુરી પ્રપંચી છે. પ્રભૂ પત્યે ખરા જીગરની પ્રીતિ નથી. કક્ત ખાહ્ય આડંભરથી દુનિયાને દેખાડવા માટે માક્ષતે માંગે છે. પંચ અ'તર સાક નથી ત્યાં સુધી શું આ ડાેસાેને માસ મળવાનું છે ? માટે કાંઇક ઉપદેશ આપ એવા વિચારથી ખીજે દિવસે જ્યારે ડાસીમા માક્ષ માંગવા - આવ્યા ત્યારે પુજારીએ કહ્યાં – ગઈ રાતના સ્વપ્તામાં ભગવંતે મને કહ્યું કે આ સવારમાં રાજ માહ્ય માંગવા આવતી ડાેસી-માને હું જલદીથી માક્ષ આપીશ, ડાસીમા તે સાંભળી ઘણાજ હપધીલાં થઇ ગયાં અને કહેવા લાગ્યાં–ઘણા વસ્સે પ્રભુએ દાદ સાંભળી, પણ દિકરા કયારે માલ મળશે ? એ વિષે કાંઈ કહ્યું છે? પુજારી ખાલ્યા, ડાસીમા તે વિષે ભગવંતે જણાવ્યું છે કે, પહેલાં તા બંસ મરી જશે. પછી તમારા દિકરા મરશે. ત્યાર ખાદ તેની વદ અને તેનાં બચ્ચાં મરશે અને છેવટે ધરતે આગ લાગશે તે સાથે ડાસીમાં તમતે મળશે. ત્યારે ડાેસીમા બાલ્યા-ના માક્ષ ખાપ-ના ! મને એવા માક્ષ જોઇતા નથી. ખાલ બચ્ચાંએાતું મરણ <mark>જોઉં, મા</mark>રી વહાલી મહિલીનું મરજા જોઉ. એટલું તે શું મોક્ષ વાસ્તે અડ્યું છે? આ ભવે નહી તા આવતા ભવે. આવતા નહી તા ખીજા ઘણા ભવા **મ્યાવશે ત્યારે માગી લઇશ. પુજારી બાલ્યો**-ડાસીમાં, ત્યારે કાેક્ટની શા માટે પ્રજા પાસે માક્ષની યાચના કરા છા ક લોકાને ખહારથી બંક્તિનું સ્વરૂપ ખતાવા છા, જયાંસુધી આંત-

રિક માહદર્શની મલીનતા દૂર નથી થઇ ત્યાં સુધી, તમને માક્ષ મળવાનું નથી. તો મારા ધર્મ ખંધુઓ કેવી રીતે અનંત સુખ મળે ? આંતરિક ભાવથી કે બાલિક ? જેવું ચિત્ત બાલિક રાખીયે છીયે, જેવું હૈત બચ્ચાં ઉપર કે પ્રિય પત્ની ઉપર રાખીયે છીયે, તેન્વું જેત, શુહ પ્રેમ, જીનરાજ પ્રત્યે રાખી તેનું સાચા અંતઃકરણુથી સ્મરણ કરો. કહે છે કે-

પ્રભૂતાકા સભ કાઇ ચહે, પ્રભૂકા ચહે ન કાય. જો પ્રભૂકા દિલસે ચહે-તો દુ:ખ કહાંસે હાય?

માટે પ્રભૂતાને મેળવવી હોય તો આંત-રિક મલીનતાઓને દૂર કરો ? રનેહયી, સાચા ભાવથી, શ્રી જગ્તનાથ વીતરાગ દેવની ભક્તિ કરા, સાચા ભાવ રાખા. કાઇ કહેશે કે, બાળપહુમાં વિદ્યા શીખવી જોઇએ, તર્ણ્-પહ્યુમાં લક્ષ્મી મેળવવી જોઇએ, અને વૃદ્ધ-પહ્યુ સુખ પામી પ્રભુભજન કરવું જોઇએ. પહ્યુ જેમ ત્રહ્યું અવસ્થાએમાં આપણે સુખની ઇચ્છા કરીએ છીએ તેમ તેવીજ રીતે ત્રણે અવસ્થાએમાં પ્રભૂતું પજન, દર્શન. ભક્તિ દરેક મનુષ્યે કરવીજ જોઇએ.

પ્રભ્રમ દિરમાં જવા માટે ઘેરથી નિક-ળતાં. બાહ્યિક વિચારાને ત્યાંગી એક અરિહંત દેવનું સાત્વીક રીતે સ્મરણ કરી તેનુંજ શહ ધ્યાન ધરતાં *છનમ*ંદિરમાં **પ્ર**વેશ કરાે અને જનપ્રતિમાને આનંદથી દોષા રહિત નિહાળા. વીતરાગ દેવની પ્રતિમા સિદ્ધાસનના માકારે, નાસિકાના અગ્ર ભાગની દર્શીયે, શાંત રસમય મુદ્રાયે, પદ્માસને પલહ્ટીપર ચત્તા હાથે ખેડેલી જ્યાવે છે, આપણને સચવે છે, બાધ આપે છે કે. જો તમારે મારા જેવાં થવાં તમારે પૃષ્ટું આનંદ મેળવવા હાય, तभारे નિર'તરના દુ:ખરૂપી જન્મમર્ણાદિ કેરાયી ટળવું દ્વાય, તમારા આત્માને અનંત સુખતું ભાન કરાવવું હાેય, તા અહીં મારી સમીપ આવા, મારી સ્થિતી તપાસી, મારા ગુણોને જુઓ, અને તેવા થવા પ્રયત્ન કરા, તો જરૂર મારા જેવા આત્મસ્વરૂપ થઈ રહેશા, અને અનંત સુખને પામશા, અહા! હા! ફકત સાચા દેવની પ્રતીમાને નિહાળવાથી બાધ થાય છે, તો તેમના અનંત ગુણોનું સ્મરણ કરશું તો દેહશા બાધ અને અત્યાનંદ થશે તે કાં કથી વર્ણી શકાય તેવું નથી.

અત્ય'ત બાેધ દેનારી પ્રભુની પ્રતિમાને નિહાળી અત્યાન દમાં લીન થઈ શ્વેત અક્ષતથી ચાર વાંકળી પાંખડીવાળા સાથીએના પુરા. ઉપર ત્રણ દગલીએા કરાે અને તેના ઉપરના ભાગ ઉપર સિદ્ધશીલા૩૫ - આકાર કરી યાચના કરા કે, હું દીનાનાથ ! હું જગ્તખધુ ! મને આ પાંખ'ડી ૩૫ ચાર ગતિમાંથી દૂર કરી ચ્યા ત્રણ હગલી ૨૫ તાન, દર્શન, ચારિત્ર મને આપી હેવટે અનંત સુખ દેનાર જન્મ મરણના ંકરાને નિવારનાર જે મા<mark>ક્ષસ્થાન તેમાં નિવાસ</mark> કરાવા. આ મારી અંતરની ભાવનાનું **ભાવ**રપ ચિત્ર ખાલિક ચિત્રથી આપતે જણાવું છું. એવીજ રીતે કરેલાં કર્મોના પસ્તાવા કરા અને એકાગ્ર ચિત્તર્થા પ્રભ્રપ્રતિમા આપના હૃદયમાં રાચી એક ચિત્તે પ્રભ્રતી સાચા દિલથી. એક નિષ્ટાથી ભાવના ભાવા તા અનંતા ખરેખર પ્રાપ્તકર્જા થશા એમાં શક નથી.

જેંદ પૈંદ પૈંદ

સંપૃર્ણું,

स्रीसमाजना खोटा वहेमो.

(લખનાર:-સા. સાન. ધળીયા.)

આજકાલ આપણી ઓસમાજમાં જોઇ-તા સુધારા થતા નથી એ જોઇ મને અત્યંત ખેદ થાય છે. આપણા ઓસમાજમાં એવા તા ખાટા વહેમાએ પ્રવેશ કૃષ્ધા છે કે તે પ્રત્યે તિરસ્કાર લાવવા મારી અન્ય સૃત્ર બહેનાએ અનેક વખત માસિકા તેમજ પુસ્તકરૂપે પ્રયત્ન કરેલ, પણ તેના જોઇતા ઉપયોગ થયા નથી.

આજકાલની કેટલીક તરૂણીએ આપણા સાચા વીતરાગ દેવને ભજવાનું મુકી દઇ, અનેક દેવદેવીએાનું પુજન, તેઓની બાધા, તેઓના ધ્યાતમાં લીન થાય છે. અનેક પ્રસંગે વીતરાગ દેવના નામને પણ વિસારી **દેવદેવી**-ઓના મંદિરે નૈવેદાદિ ભક્ષ કે અલક્ષ ચીજો લઇ જાય છે. અને તેથી આનંદ પામે છે. અને તેઓ પ્રત્યે મસ્તક નમાવી **બાધાઓ** રાખે છે કે મારૂં અને મારા કળના ઉદ્ઘાર કરી અમને તેમજ અમારાં બચ્ચાઓને સખી રાખજો. મારા ધરમાંની અમક વ્યાધિ~પીડા દૂર કરજેતે. તો હૈ માતાછ, યા હૈ દેવ, હૃં તને કુલાણું બાગ આપીશ યા માતાજી તને ચંદડી ચડાવીશ, હે મારી ધર્મ બહેના! આવી અનેક તરેહની ખાટી બાધાઓ આપણે રાખીએ છીએ. આપણા સાચા ધર્મપ્રત્યે, પ્રભુપ્રત્યે તિરસ્કાર ખતાવીએ છીએ તે સાનાન મુક્રી ક્ષાર, ગ્રહણ કરવા જેવું છે. કસ્તુરી મુક્રી સામલ પ્રદેશ કરવા જેવું છે યા હીરાને મુકી પથ્થર ક્ષેવા જેવું છે. ખરેખર એવીજ આ ખાટા દેવા પ્રત્યેની માન્યતા છે. જેમ સાનાને ગ્રહણ કરવા, સામલને તજવા, પથરાને કે'કો દેવા. સર્વ વ્યક્તી ચહાય છે અને કસ્તુ-રી યા હીરાને ગ્રહણ કરવા દરેકતું મન લલચાય છે તેમ ધર્મ ખેડેના. ખાટા વહેમા તરફ દૂર્લક્ષ ખતાવી સમ્યકત્વરૂપી સાચા દેવાનું અને ધર્મનું સાત્વીક અંતઃકરણથી આરાધન કરાે. આપણે નીહાળીયે છીયે કે ક્રાઇના ધરમાં છેાકરૂં માંદું પડ્યું હોય, યા સીતળા ુનીકલી હોય તા તરતજ દેવીનું ધ્યાન! તેની માન્યતા રાખવામાં કશી પણ કાેઇ વાતની **ઢીલ થતી** દેખાતી નથી, પણ પૂર્વ કમ²ના અંત થવાથી વ્યાધિ મટી જાય છે ત્યારે

દેવીઓના મંદિરે જઈ આપણે માનેલી માન્ય-તા પુરી કરવામાં આગળ પાછળ કાંઈ પણે વિચાર ન કરતાં તરતજ અમલમાં લાવીયે છીએ, તાે સમકીતમાં દૃઢ થઈ એવી ખાટી માન્યતાઓ-નાે ત્યાંગ કરવાથી પ્રત્યક્ષ કૃળ દેનારું એક દૃષ્ટાંત મારા સાંભળવામાં આવેલ તે અહીં મારી ખહેતા માટે લખવા યાેગ્ય લાગવાથી તેના આ સ્થાને ઉલ્લેખ કરું છું.

આ આર્ય બિમિમાં પ્રખ્યાત રાજનગર-માં સત્ય સમક્તિધારી 🗬ન માર્ગમાં દઢતા રાખનારા **લક્ષ્મીપુંજ** નામતા શ્રેષ્ટી રહેતાં હતા તેને શીયળવતી નામની ગુણીયલ પ-ત્ની હતી. તે અનેક ગુણાથી ભરપૂર છતાં સ'-તતિહીન હતી. પુત્ર પ્રાપ્તિની ઉદાસિનતામાં ધેરાયલી પત્નીને સ્વામિએ દિલાસા આપતાં કહ્યું.-વલ્લભે ! પૂર્વ કર્મના ખ'ધનથી. અને તેવા કાઇ પ્રમળ કારણથી. આપણને સંતતિ-ની પ્રાપ્તિ નથી, કમ^રની આગળ નળરાજા. હરિશ્રંદ્ર, પાંડવાદિ પુરૂષોએ તેમજ સીતા, દ્રાૈપદી, તારામતી, આદિ સતીએોને નમવું પડ્યું છે, તા આપણે તે કર્મના આગળ શું કરી શકીશ' ² માટે ખેદ ન કરતાં **શાં**ત ચિત્તથી. અરિદ્વંત દેવની સાચા દિલથી ભકિત કર, કે જેથી કમ[ે] દૂર **થ**ઈ તારા મ-નની ઇચ્છાઓ પૂર્ણ **ધવા અને આવતા ભ**ન વને સખી કરવા મદદગાર થશે.

સ્વામિનું કહેવું ન માનતાં તેણી વિશેષ-પણે સંતતિહીનતાવિચારનાં ખેદમાં પ્રવૃત્ત થઇ.

પુત્રપ્રાપ્તિના અર્થે તે **દેવદેવીઓની** પાસે યાચના તેમજ તેઓની માન્યતાઓ માની ભાધા રાખવા લાગી. તે દરેક વર્ષે એક નવીન દેવ યા દેવી **હો** તેનું પુજન કરતી અને માન્યતાઓ રાખતી, પણ તે તરફથી કાંઇ ન લાભ થતાં ખીજ દેવની એમ અગીયાર વર્ષ પર્યંત અગીયાર દેવદેવીઓની માન્યતાઓ રાખી. વિશેષમાં જ્યોતિષ્ઓ પાસે જયોતિષ

क्रेवरावी अबनी शीदाना शमनाथे अनेड દ્રવ્યતા વ્યય કરવા લાગી. અને ઉપવાસાદિ **સાતેક કહેશ બાગવવા છતાં પણ પ્રત્રાદિ સં**-તતિની પ્રાપ્તિ નહી. તે નજ થઇ.

એક દિવસે ધર્મના લાભ દેનાર, ગ્રાનની **વૃદ્ધિ કરાવનાર** એક ત્યાંગી મૃતીરાજના એ **ચૈક્ષાઓ** (શિષ્યા) તેને ધેર આદાર માટે આ-**લી ચ**ડયા. તેઓની આગતાસ્વાગતા કરી નમન કરી. પાતાની સ્વાર્થવૃત્તિથી પ્રજ્ય'-મહાત્માઓ. આપ જણાવશા, કે પત્રની પ્રાપ્તિ ક્રેમ શાય ? અને તે શશે તા કયા ઉપાયથી? મૃતિયાએ ઉત્તર આપ્યા-ભદ્રે. બિક્ષાર્થે આવેલા સુનીઓને તે કાર્ય સિવાય, બીજાં કાંઇ પણ ખાલવું યાગ્ય નથી. ગુરૂ મદારાજની તેવી પ્ર-**લળ આતા છે. માટે તે સંબંધમાં અના કાં**-ઈ પશા ઉત્તર આપી શકીશ નહી. વિશેષમાં **અમારા** ગુરૂથી સ્વપરના જાણ છે. દ્રવ્ય अने स्थि। ક્ષેત્રાદિના છે. **જા**શનારા કાય^રના વિચાર વિચિક્ષણ છે. કરવામાં तेथे।ज સમર્થ ઉત્તર અાપવા Ð. મુનીઓના આશયભાશ શિયળવતીને એવા થયા કે તેઓ પાતે કાંઈ પણ બાલવા ખુશી નથી. પણ આ વાતના ખુલાસા તેમના ગરૂજ આપી શકશે. તેથી બિકાર્યે આવેલા મૃતિયોને કલ્પતી આહારાદિકની નિર્મળ ભિક્ષા આપી. મુનિઓ તે લઇ ચાલતા થયા!

ખીજે દિવસે પરિવાર સહિત ગુરૂ પાસે ગઇ. તેમને નમન કરી પાતાના સ્વાર્થના તેજ પ્રકા સરૂ આગળ સુકયા! સૂરૂએ કહ્યું-આ પ્રકા સાધની મર્યાદાને ઉલંધન કરાવનારા છે. પણ ભાદે ! તારા સર્વ દુ:ખાનું નિવારણ કરાવનાર અને અક્ષય સખના દેનાર એવા સમક્તિરૂપ ત્રાનદર્શન ચારિત્રમય ઉત્તમ ધર્મ ખતાવું છું. કે જેનાથકો તારા મનવાંચ્છિત કાર્ય પૂર્ણ શ્રશે. અને સખની પ્રાપ્તિ થશે. એમ કહી ગામાં આવક આવિકાના ઉત્તમ ગૃહસ્થધર્મ નહીતા તારા ઇષ્ટદેવનું સ્મરણ કર.

ના ઉપદેશ આપ્યા. ઉપદેશથી સંત્રષ્ટ થઇ ગદસ્થધર્મના શિયળવતીએ દ્રાદશાવત 34 અંગિકાર કર્યો અને ગુરૂજની રજન લઇ ઘેરુ આવી સ્વામિ પ્રત્યે સર્વ વર્તાત જણાવ્યા. અને શહ સમકિતમાં દૃદપણે થઇ ત્રિકાળ દેવ પુ-જન અને અરિદ્ધાંત દેવનું આરાધન કરવા લાગી. અને ગૃહસ્થ ધર્મ દીપાવવા ક્રાગી. ધરમાંની કળદેવીનું પુજન બંધ કોંધું. કળદે-વી પાતાન પુજન ખંધ થયું : ભણી ખહજ ક્રાધાયમાન થઇ અને `રાંત્રે પ્રગટ થઈ શિય-. ળવતીને કહેવા લાગી. અરે દૃષ્ટ મારા પુજનને ભૂલી ગઈ [?] મારૂં ધ્યાન વિસાર્ધે. એા પાપીછું. હું તને જીવતી મુકવાની નથી. એમ કહી વેન તાળા અને ડાકિણીઓ પ્રમુખતે આના કરી શિયળવતીને ત્રામ આપવા લાગી.

શિયળવતીએ પાતાને ઉપસર્ગ જાણી એકામ મનથી પ'ચપરમેષ્ટ્રી નમસ્ક્રાર મંત્રનું જાપ જપવા લાગી. અને સ્વસ્થપણ સ્વધર્મ દઢ રહી તે દેખી વિશેષ ઢાંઘાયસાન પણાથી બરાડા મારતાં ડરાવતાં કહ્યું મને 69 પણ નમસ્કાર કરે, તેા હું છાડી દઉં!

શિયળવતીએ જણાવ્યું,-મારે મારા એક સાચા દેવ શ્રી અરિહુંત! તેના સ્મરણ સિવાય તારા જેવા દૂષ્ટ દેવાતું સમરણ કરવાતું નથી. એ મારા મારા ગુરૂથી લીધેક્ષા દઢ નિષમ છે તે આ કાયાના નાશ થતાં પણ મુકાશ નહી. તારાથી થાય તેટલી વિટંખના કરી હો. મર્સાથી અધિક દઃખ તારાથી અપાય તેમ નથી માટે તારાથી ખને તેટલું કરવામાં કચાશ રાખીશ નહી.

દેવીથી આ ઉદ્ગાર સદન ન થયા. અને તરતજ તેના માયિક રૂપધારી પતિને લાવી મારી નાંખ્યા (આયુષ્ય હાય તા દેવાથી પછ મિથ્યા થતું નથી. તે કારણથીજ માયાદી-विकारे। ७४न करी सत्व परीक्षा करे 🕻) અને કહેવા લાગી-હજા પણ નમસ્કાર કર,

શિયળવતીએ કહ્યું-મારા ઇષ્ટ દેવતુંજ સ્મરષ્યુ શરૂ છે. મેં વદેલા શબ્દમાં કાંઇ પણ ફેરફાર કરીશ નહી. અને વધારે વધારે જાપ જપવા તપ્તર થઇ.

સાચા અ'ત:કરણના નમસ્કારથી દેવીનું સત્વ તુટયું અને નિરૂપાય થઇ. આખરે તુષ્ટ-માન થઈ હાથ જોડી કહેવા લાગી-સ્વધમ માં દઢ રહેનાર સાપ્વી, મારા કોધલાં અપરાધને ક્ષમા કર. તારા સત્વના જોરે હું તારીજ હું અને સદાને માટે તારીજ રહીશ. માટે હે સાધ્વી, મારાથી એક વરદાન માંગ. દેવનું દર્શન મિથ્યા નજ થવું જોઇએ.

શિયળવતીએ કેાઇ પણ પ્રકારની ઇચ્છા ન કરતાં જણાવ્યું–મારે કાંઈ પણ માંગવું નથી, પણ તમે આવા સત્ય ધર્મમાં પ્રવત થાઓ અર્થાત્ અરિહંતદેવનું શરણ લ્યો એજ પ્રયળ ઇચ્છા છે.

દેવીએ કહ્યું-તમારું કહેવું પ્રમાણ છે. તે પ્રમાણે સાચા દિલથી અરિદાંત દેવનું આ-રાધન કરીશ અને તેમની આજ્ઞાને અનુસરી ચાલવા હે શુદ્ધ સાધ્યી હું બધાઉં છું. પશ્ચુ કાંઇ માગ.

શિયળવતીએ કહ્યું –તમારે વ્યાપવાની ઇ-- જા છે તાે ફક્ત મને ધર્મકાર્યમાં મદદ કે-રવા આપને મારી નમ્ર અરજ છે.

દેવીએ જણાવ્યું – હે દેવી ! દેવતાથી પણ જીતાયલી છે, તું તારા ધર્મમાં અચળ છે, તો ત્રણ ક્ષાેક પણ તારા મદદગાર છે, તો હું કેમ મદદ ન કરૂં? પણ હે ધર્મશીક્ષા! આ અગીયાર ગુડીકાઓ તને આપું છું તે ત્રહણ કર, જેથી તને અનુક્રમે અગીયાર પુત્રા થશે. ભૂતકાળની ઇશ્છા તૃપ્ત કરવાના ઇરાદાથી દેવીએ ઇશ્છા જણાવી. પણ શિયળવતીએ તે ગુડીકા લેવાની ખીલકુલ ઇશ્છા ન જણાવી, પણ દેવી તેની ઇશ્છા વિરદ્ધ તેના વસ્ત્રને છેઉ ગુડીકાઓ ખાંધી અદશ્ય શાહું કાંઈ. આ દર્શતિથી સાક્ષાત દેખાવ નજર સાંગે રજુ થાય છે તાં એવી કઇ બ્હેન હશે કે અરિદતની આતા સિવાય અન્ય દેવાની આતાં મહણ કરે ?

આપણે એવી અનેક રીતથી આવા દેવ દેવીઓની માન્યતા ધારણ કરીએ છીયે. જેવા કે બાળક માંદુ પડતાં, બાળક ન ચતાં સીત-ળાના નિમિતે શીતળા પુજન, થંડ પેટ સખ-વું, લગ્ન પ્રસંગે દેવદેવીઓની સ્થાપના વગેરે શુભ પસંગે પણ આપણા વિતરાગ દેવને વિસારી મુકીએ છીયે. અને સંકટ સમયેજ " અરિહ્ર'ત " " લીતરાગ " " મા " " ખાપ" સાંભળે છે. તા સંક્ટ સમયે એ દેવા કાં સંક્રેટ નિવારણ કરવા આવતાં નથી ? માટે આપણે છતી આંખે આંધળા બની. અધારામાં ગાયાં ખાઇએ છીયે તા બ્હેના ! વિચાર કરજો! साया अस्टित हैव प्रत्ये पुन्य लाव राष्ट्रकी. ખાટા દેવાને નમતાં ડરજો, એ વિષે જેટલ લખાય તેટલું થાડું છે પણ અન્ય પ્રસંગે થાડાંક બીજા લેખા જે સત્ત હહેનાને હપયોગ રૂપ થશે તે ભૂજ સમય પછી આ અનેક વિષયોથી એાધ દેનાર " દિગ'ખર માસિકમાંજ આપીશ, તાે સત્ત બ્હેના ! મારા અત્રાન લખાણમાંથી ગુણ પ્રદુણ કરી આ-ભારી કરશા.

आपणामां कन्याओनी वधारी

केम नथी?

(લેખક:-શા• **હાયીમ'**ક ¦માંચુક્રેચ'ક-સોનાસંછ્)

દુનિઆમાં પુરૂષ માત્રને આ, અને આએ માત્રને પુરૂષ મેળવવા; એ કુદરતી નિયમ છે. અને તેની સાથે, કુદરતને પણ એવુંજ ગમે છે. કે જેટલા ખાળક, તેટલીજ ખાળકીઓ, ઉત્પન કરેલી આપણુને દ્રષ્ટિગાચર થાય છે.

''ત્યારે અગત્યના સવાલ" એ ઉના થાય છે ાં કે, બધાઓને કન્યા કેમ નથી મળતી વાર ? તેના ખલાસા કર્યા પહેલાં મારે જણાવવું પડે છે કે: સુધરેલા દેશાની માકક. જાણામુજીને 'પરત **ત્રતાની એડીમાં** પડવુ': તેના કરતાં કુવારા રહેવામાં, વધારે સખ અને ડહાપણ સમાએલું છે. તેવું આપણી તરફના, પુરુષા આનતા નથી, તેમજ સુધરેલા દેશાની સ્ત્રીઓ પુરુષાની ગલામગિરી સ્વિકાસ્વાને રાજી હોતી નથી, તેવું આપણા દેશની ઓંઓને પણ મા-ન્ય નથી. કુદરતી નિયમ એવા છે કે; જે વસ્તુ દનિયામાં એાછી હાય, તેનીજ કિંમત વધારે હાય. ને તે ગીના વ્યાજગી છે. તેથીજ આજે. એક એક કન્યાની કીંમત (રૂપ, ૨ંગ, અને ઉમરના પ્રમાણમાં) ખે. ત્રણ અને ચાર હુન્તર રૂપીઆની અંકાય છે, જેથા તેની માંધવારી. આપણને સહેજ જણા **ક આવ્યા વિના રહેતી નથી**. તેમ છતાં એક તરકથી સુધારાના **હીમાયતીએા. એવી** દલીલ કરી રહ્યા છે કે: રાેટી બંદેવાર ત્યાં બેટી વ્યવહાર કરવાથી કન્યાઓના ખાડા પુરાશે. અને બધા-એમને યાગ્ય વર અને કન્યા મળી શકશે. એવાં લાંખાંલચક ભાષણા આપી, પાતાની વિદ્વતા ખતાવી રહ્યા છે. ને એવું જણાવી રહ્યા છે ગાળમાં (જ્ઞાતિમાં) કન્યાઓ કે: એક વધારે હશે તા બીજા ગાળમાં 'વર' વધારે હશે. કદાચ તેમના કહેવા મુજબ કાર્ય કરવા થી; અમારા ધારવા મુજબ, કૃકત શ્રીમાના, અને વિદ્વાના, સિવાયના સાધારણ અને ગરિબ વર્ગને તા કન્યા નહિજ મળે.

જ્યારે શ્રીમાન અને કહેવાતા "કૃળવાન" ના કરજનોને પૂછવામાં આવે કે, ભાઇ શ્રી, આપણા 'ગાળમાં' કન્યાના વધારા હશે કે કેમ ? ત્યારે તેઓ શ્રીએ જણાવ્યું જે, હમારા આળમાં કન્યાઓના એટલા બધા વધારા છે, જે મારા પાતાના દાખલાથી, આપને સ્પષ્ટ જયારી, તે એક જ્યારે મારી અનું કુદરતે મરણ થયું, ત્યારે આસપાસના લગભગ એક ડજન ગ્રહસ્થા, સગપણ કરવાને માટે, ચઢી આવ્યા હતા. તે ઉપરથી મને તા, એવું જણાય છે કે; હમારા ગાળમાં, કન્યાએાના અનહદ વનુ ધારા હશે!

ज्यारे साधारण भनुष्याना इरलनी। (કંવારા) ને પૃછતાં; તેઓ તરફથી કરણાજ-નક ઉત્તર મળે છે કે: અમને તા લાકડાની પણ કન્યા મળતી નથી. આમાં ખર કાેેેશ, અને ખાટ કાણ તેનું નીરાકરણ કરવાને માટે, આપણી પાસે જુદા જુદા ગાળના, વસ્તિપત્ર-કના આંકડા નહિ હાવાથી, કાઇ પણ રીતે, યાગ્ય ખુલાશા મળા શકે નહિ. તાપણ એટ-લું તા; કહેવું જોઇએ છે કે; આપણામાં કન્યાઓના વધારા નથી. કદાચ કન્યાઓના વધારા હાય તા " સાટાં તેખડાં " શા માટે કરવાં જોઇએ ? તેમજ હજારીની સંખ્યા, કુંવારાઓની કેમ જણાય છે? શું! તેઓ તેમ કરવાને ખશી દશે ! ના ! ના ! નાહેંજ. ત્યારે શ' ? ખાળલગ્ન ખંધ કરવાથી, કન્યાઓન ના વધારા થશે ? હા ! હા ! એશક: વધારા થવાના. કારણકે: ખે. ચાર અને પાંચ સાવ. વરસની બાળકોઓનું સગપણ દશ, પંદર અને વીશ વરસના, પુખ્ત ઉમરના પુરૂષા સાથે કરવામાં આવે: અને નાના બાળકાનં સગપણ. ભવિષ્યની ખાળકીઓ સાથે કરવામાં આવે તો: જરૂર કન્યાએ કતા વધારા થાય. અને ખીજા પણ, અનેક જાતના કાયદા થવા સંભવ છે. પણ વધા કવારાઓને, કન્યાએ મળી શકે કે નહિ; તેના જુવાય નકારમાંજ આપવા અમને તા વ્યાજબી જણાય છે. અને તેનું કારણ નીચેના ડુંક ઉદાહરણથી, આપને જણાન ઇ આવ્યા વિના રહેશે નહિ. ધારા કે એક ગે.ળનું બંધારણ આજે આપણે નવીનજ બાં-ધ્યું છે. તેમાં એક હુલ્તર ઓએા, અને એક હેજાર પુરૂષો, મળી કુલ મતુષ્ય સ'ખ્યા બે હળરની છે. જેમાં પાંચસા આ મુરૂપનાં. લગ્ન

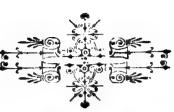
DECEMBER OF DESCRIPTION OF STATE OF STA

दिगंबर जैन

श्रीमान राय साहब बाबू छोटेलालजी बंकर व कन्ट्रेक्टर-लखनड. Rai Saheb Baboo Chhetelalji--Lucknow,







जैन सिद्धांन पाठशाला-मोरेनांक संचालक, अध्यापक और विद्यार्थी.

कुर्सीपर बैठेहुए महाश्यों–१ न्यायाचार्य पंडितं माणिकचंद्रजी, २ स्याद्वात्याशिष वादिगजकशरी न्यायवाचस्पति पंडितबरयं-गोपालदासकी बरेट्या. ३ व. मोतीलालजी. ४ श्री नाथूरामकी प्रेमी, संपादक, '' जैन हितेषी. " શ્રમેશાં છે. અને બાકી, એક ખીજું પાંચસા આ વર્ષ: અને એક ખીજાં પાંચસા પુરૂપ વર્ગ કે વારા છે. ઉપરના પરણેલા પુરૂષ વર્ગ-માંથી. એક્સા ઓએાનું મરણ થયું છે. જેથી તેઓને ખીજ વખતે. લગ્ન કરવા પડયાં. એમ **થવાથી.** પુરુષા પાંચસા કુંવારા રહ્યા. પણ **અભિાની મ**ંખ્યા તા કકત ચારશાનીજ રહી. એ મુજબ ધણા દિવસ ગાળ ચાલના રહેવાથી, એ સાગતા પુરુષા અને એક ભાગતી કુમારીકાએ! રહી. અને તેમ થવાથી, ગ્રાહક **અનેકને** વસ્તુ એક: એવા બનાવ બની રહેલા. આપણને દષ્ટિગાયર થાય છે. અને તેમ થવાથી "ક-ન્યાવિક્રયને: દિવસે દિવસે ઉત્તેજન મળતું રહે છે." આજે કન્યાએકને માટે. ગજાઉપરાંત ખર્ચ કરી. પોતાની મ્હાેટાઇ બતાવવી પડે છે. અને તેજ કારણથી, નાની ઉમરની ખાળ-કોઓનાં સગપણ કરી દેવામાંજ, છાકરાના માતા પીતાના શભ હેત જણાય છે, અને તેજ કારણથી, ગ્રાતિ બ'ધારણના આંધળાં ધારાઓને માન આપવું પડે છે, અને તેજ અનાદિ જૈનધર્મના સ્વીકાર અન્ય ધર્મીઓ પાતાની મરજી છતાં કરી શકતા નથી અને તેજ કારણને ક્ષેઇને "રાજનગર (અમ-દાવાદ) ના સાતસા ધરના દિગંભર જૈનાનેઃ વૈશ્વવ ધર્મીના સ્વીકાર કરવા પડયા હશે ! અને એવાજ કારણાથી, આજે કાહિઆવાડ ''કન્યાના ખાડા" નામે પ્રસિદ્ધ થયેલા આપઅને જસાય છે. જ્યાં જૈના મહાટી સંખ્યામાં કન્યાએાની ખરીદી કરવા માટે: દેશ પરદેશથી ઉતરી આવે છે. અને તેમને. કન્યા-એ પુરી પાડવાને સારૂ; કેટલાક વૈપારીએા, પાતાની પુત્રીએ! ઉપરાંત, શુદ્ર જાતિની કન્યા-ઓને, પાતાને ધેર રાખી; એક કાંકા બને છે, ત્યારે ખીજો ભાઇ ખતે છે; અતે ત્રીજો મામાં ખની, તેવી હલકી જાતિની કન્યાઓને: ઉંચ જાતિના જૈનાના સાથે, લગ્નસખધ જોડી માપે છે. જયારે પરશ્વનારના જાણવામાં એ ्वात आवे छे, त्यारे जातिना अथया, तेने તિલાંજલી આપી. પાતે તેના**થી** મૂક્ત **શ**ઈ હં મેશને માટે. ગરિખીમાં દીવસા કારતા, આ-પણી નજરે પડે છે. અને પરણાવનાશની સામે ત્રાતિના ભયથી, તેએ। કાંઈપણ કરી **શક**તા નથી, અને વળી કેટલાકાને પાતાના ગાળ તરફથી, હાતિ ગ્હારની મુગલાઈ સન્ત, ભાગ-વવી પડે છે, તેજ કારણથી દિવસે દિવસે આપણી વસ્તિ, ઘટતી જોવામાં આવે છે. તે આપણને નીચેના આંકડાઓથી, સ્દ્રેજ જણાઇ આવ્યા વિના રહેશે નહિ. જયારે શ્વિટીશ ગવ-ર્નમેન્ટના સરવીસા તરફથી, હાલ હિં**દરથાનની** ગણત્રી: ગયા દશકા પહેલાં કરવામાં આવી. ત્યારે સાડીપરિચસ કરાેડની હતી. જેનાની કલ વસ્તિ વીશ લાખની હતી, પછીની હિંદુસ્થાનની ગણત્રી જયારે અકાવીસ કરાકની થઇ ત્યારે જૈનાની કલ વસ્તિ પંદર લાખની થઇ. હાલમાં હિંદુસ્થાનની કુલ વસ્તિ જયારે સાડીએકત્રીસ કરાેડની ગણાય છે. ત્યારે જૈનાની (त्रण ६२४)) ५ व वस्ति सवातेर क्षाप થી વધારે નથી. હમારી સમજ મુજબ, શુદ્ર બતિની વસ્તિ, કુદકે ને ભુશકે, વધતી જાય છે, ત્યારે ઉંચ(પુર્ત લમ્ન વગરની) ક્રામની વસ્તિ દીવસે દીવસે દ્રદ ખ્હાર ઘટતી જાય છે. તેના માટે નીચેના પુરાવા બહુજ અમત્યના હોવાથી. આપને સહેલાઇથી જણાઇ આવશે. આજથી આશરે પાંચ વર્ષ ઉપર અમાએ એક ગાળન વસ્તિપત્રક તૈયાર કર્યું હતું. જેમાં કુલ અંચિમ **ળારસાે ને ચાપન; અને કુલ પુરૂષાે ભારસાેને** ત્રેપન થયાં હતાં. તે કદરતી નિયમ મુજબ, **ખરાખર હતાં. તેના** માટે અમા આગળ જણાવી ગયા છીએ. ઉપર જણાવ્યા મૂજબ, **એ**ોએાની સંખ્યામાંથી વીધવા સંખ્યા સાડાપાંચસા બાદ કરતાં, બાંકીના સાડાપાંચસા પુરૂષાને હમેશને માટે, કન્યાંઓ નહિજ મળવાની, કદાચ કાઇ કહેશ કે, ખીછ आणाकी उपन धवानी! त्यारे अभी अखा-

વીએ છીએ કે, બીજા છાકરાએ પણ ઉપ્તળ ચવાના; પણ ઉપરતા ખાડા, કાઇપણ રીતે પૂરી શકાય તેમ નથી. તે પરવાને માટે અન મારી પાસે સાધતા નથી, અમારી **અકલતા** સદ ઉપયોગ થઈ શકે તેમ નથી. અમારાથી ખીલકુલ તે બાબતપર બાલી શડાય તેમ નથી. બીજી રાેટી એકવાર નાતિઓમાં પણ વધારે નથી. કે અમા મેળવી કન્યાઓતા ખાડા પૂરી શકોએ. આમાં અમારા કાર્ક પણ જતા-**નાે ઉપાય ચા**લતાે નહિ હાેવાથી: તે કાર્ય અમા કદરતને સાંપીએ છીએ; જેથી તે કદ-રત, ગ્રપ્તપણ પણ ધીરે ધીરે, પોતાનું કાર્ય **ખજાવે** છે. ખજાવશે. અને ખજાવવાની, અને છેવટ આજથી પચ્ચાશ વર્ષે. તે ખાડા આ-**પથને પૂરી આપશે** માટે તેના ઉપર હાલ **ભરૂંસા રાખી, એસી રહેવામાંજ, આપ**ણું ડ<mark>હાપણ અને</mark> ગારવ છે. તેા પણ મારા જ્ઞાતિ **ખ**ધુ**એ**ોતે, તમ્રતાપૂર્વક જણાવતું જોઇએ છીએ કે, કાળ, ક્ષેત્રના બદલાવાથી, લાકમત, એ ક્ષણે કાળ વદલતું પૃત્યું છે માટે તે મુજબ વર્તા. એક સાચા દીલના, વનહેર **લેખક, અથવા સલાહકાર,** કાંઇ વિષયપર વિચાર જણાવવા ખેસે છે. ત્યારે પાતામાં પ્ર**શ્વરી અંશ આ**વતા તે કલ્પે છે. એ અંશને દ્વીપાવવા. એ પાતાનું કર્તવ્ય માને છે, એ વખતે તે એક ગરીબ, તિર્ધાન, લાગવગ વગ-રતા. શત્રઓથી ધેરાએલા છે: એમ માનતા નથી. પણ પ્રાણી માત્રના બધુ છે, એમ માત છે. અને તેથી જહેમતે, સત્ય વ્યહેર કરવામાં મહેનત ખંતે છે. તેમ સત્ય વિચારમાં પણ હિંમતવાન ખેતે છે. એમ કરવા જતાં દાઈ કહે છે કે "આ મરે કે કેઠ પડે તાે કેવું સાર' !" તા તેવા માટે કાંઈ પણ ખેદ ન કરતાં, તે મહાનતા દૂર કરવા માટે, એાર વધારે દિંમત ધરીને, શાંતપણ પેતાના પ્રયાસ ચાલ રાખ છે. આટલી બધી મુશીબતા છતાં 'જાહેર હિમત. દરેક જમાના, અને દરેક દેશમાં અવતાર લે છે, અને લેાક વિચારને આટકા નાંખી શહ બનાવે છે. એમ જતાં. પાતે અટકાઇ જાય તેની કાંઈ પરવા રાખવામાં આવતી નથી. જમાના બદલાયા છે. 'काहेर दिंभत' के के धर्भना शत्र तरीके, ગણાતી હતી. તે હવે ધર્માધ્યક્ષાવડે સ્વીકાર પામવા લાગી છે. જૈનવર્ગ ઉજ્ઞત દશાએ આવે તે પહેલાં. જાહેર દિ'મતવાળા **હે** ખંકા. તથા સલાહદાતાઓની સારી સંખ્યા ઉપ્તન થવી જોઇશે. અને એવા ઉટલાકાના <u>ભાગ અપાવા જેત્રુએ. રાગોટાથી કે અભણ</u> લે કને ભાવતા ઉપદેશ કરીને, માન **મર**તએા મેળવવાના, જેના ઉદેશ છે. એવા લેખકા અને લાેક સેવાના જરા સરખા પણ ખ્યાલ વગરના સ્ત્રાર્થમાં હંમેશાં હં**ધી** સંદેલા. તથા માન, પુજા અને ખુશામતની ગરજવાળા વકાલા. ડાક્ટરા, સરાફા, માલ માલેકા, અમ-લદારા ક વ્હેપારીએ જે કાંઇ ઉપરઉપરના દેખાવ કરે છે. તે ભક્ષે કરે; તેથી સાધનું કાંઇ લીધું વળવાનું નથી. વખત છેકજ વિ-ચિત્ર આવ્યા છે. છેકજ અધાધધા ચલા રહી છે, ખાસ સુધારા માટે થતી હીલચાલામાં પણ પૃષ્કળ અધાધુધી, ચાલતી જોવામાં આવે છે. કાળાં અને ચકચકીત દૂધણા, કામઠામે કેલાઈ રહ્યાં છે. આવા વખતે જબરા **ઢેખકાની** તેમજ હિંમતવાન આગેવાનાની પૃરેપૃરી જરૂર છે. જયારે ઉપરના બધુઓ, રાેકા વ્હેવાર 'કામાનું વસ્તિષત્રક, દરેક ગાળ**નું જાદું; વર્ત•** માનપંત્રા દ્વારા જાહેર કરી જૈના સન્મૂખ લાવશે; ત્યારેજ પ્રવ્યજનાને ખરા ખુલાશા મળશે, અને ત્યારેજ જણારો કે " આપણામાં કન્યાના વધારા કેમ નથી ?"

રાા. હાથીચ'દ માણેક**ચ'દ મુ**ં. સાનાસણ

यह जिन धर्म परम पवित्र आत्माका निज स्वभाव है। आत्माका निज स्वभाव शुद्धज्ञानदर्शनसुखवीर्य्यमय, अविनाशी, परिणमनशील, निराकुल, परमशांत स्वरुप, इच्छा रहित, कृतकृत्य, और स्वगुण अव-रोही है। वही आत्माका परम शुद्ध निज स्वतंत्र पद है। उसके सिवाय अन्य सर्व पद अपद हैं, पराधीन हैं और आकुलता मय हैं। कहा है:—

श्लोक

भा संसारात्पतिपदममी रागिणो नित्यमत्ताः।
स्रुप्तां यस्मिन्नपदमपदं तद्विबुद्धधध्वमन्नाः।
पतैतेतः पदमिदमिदं यत्र वैतन्य धातुः।
शुद्धः शुद्धः स्वरसभरतः स्थायि भावत्वमेति
॥ १ ॥ स. क.

भावार्थः-अनादि कालसे इस संसार-में प्रत्येक पर्यायको पा पाकर नित्य उन्मत्त होते हुए यह रागी जीव जिस पदमें सोये हुए हैं अर्थात बेखबर हैं वह अपद है. तुम्हारा पद (आहदा) नहीं है। ऐ अन्ध-पुरुषो ! तुम ऐसा समझो और इस ओर माओ. ओर आओ. इस यही तुम्हारा पद है, यही तुमारे आनन्दका निज स्थल है, जहां यह चैतन्य धातमय आत्मा अत्यन्त शुद्ध होकर अपने निज रससे भरपूर रहनेके कारण अपने स्वरुप में निश्वल हो जाता है।

इस स्वाभाविक परिणित के लाभ के लिय जो उपाय किये जाते हैं उनको भी धर्म के नामसे कहा जाता है; क्योंकि साधन और साध्यजातिय एक सहश ही होते हैं। जैसे कहा है:—

श्लोक

ये ज्ञानमात्रनिजभावमयीमकन्यां।
भूमिं श्रयन्ति कथमप्यपनीत मोहाः।
ते साधकत्वमधिगम्य भवन्ति सिद्धाः L
म्हास्त्वम्मनुपरुभ्य परिश्रमन्ति।
॥२०॥ स. ११।

भावार्थ—जो काई भी प्रकारसे मोह को हटा कर सम्यक्तानमयी अपनी निज भावमयी म्मिका आश्रय छेते हैं वे साधक मावको प्राप्त होकर सिद्ध हो जाते हैं मूद पुरुष इस म्मिको न पा कर जगतमें पारिश्रमण ही करते है। वास्तव में यह आत्मा ही साध्य है और यही साधक है: जैसे कहा है-

एव ज्ञानधनो नित्यमात्मा सिद्धिमर्भाष्युभिः। साध्यसाधकभावेन द्विषेकः समुपास्यताम्। १९ कथमपि समुपात्त त्रित्वमप्येकताय ॥ अयतितामिदमात्मज्योतिरुद्गच्छद्च्छम् ॥ सततमनुभवामोऽनन्तचैतन्यचिन्हम् ॥ न खल्ज न खल्ज यस्मादन्यथा साध्यसिद्धिः॥ ॥ २०॥ स. क. अ. १ भावार्थ-मुम्नुक्षु पुरुष साध्य साधक

मानोंकी अपेक्ससे दो प्रकार परन्तु निश्चय से एकही ज्ञानवन स्वरूप आत्माकी ही नित्य उपासना करते हैं ॥१५॥ हम किसी भी उपायसे सम्बन्दर्शनज्ञानचारित्र को लिये हुए तौसी इन तीनोंकी एकता में निश्चल और अनन्त चैतन्यके चिन्हसे चिन्हित ऐसी निर्मल उछलती हुई आत्म-ज्योतिका अनुभव करते हैं । क्योंकि यह बात निश्चय है कि अन्य प्रकारसे कभी भी साध्यकी सिद्धि नहीं हो सकती।

आत्मा और उसके सन्बन्धी अजीव. आश्रय, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष इन सात तत्वीं का यथार्थ श्रद्धान करना सो सम्यक्दर्भन, इनका यथार्थ जानना सो सम्यक्तान और इनमें से निर्जरा के लिये यत्न करना सो सम्यक चारित्र है। जब आत्मा अपने साथमे बंध-हप हुए पाप व पुण्य कर्म वर्गणाओं को और उनके फलरूप कार्यों को अपना म्बरूप न जान उनसे उदासीन हो निज स्वरूपकी भावना में अपने मन को रोकता है, तब उस भारमा में इन्ही रत्नत्रय का निवास हो जाता है तो भी एक ऋपसेही. बंस यही रतत्रय को एकता जो आत्मा को श्रद्ध उपयोगके सन्मुख करती है, साधक रूप हो आत्मा का मनन कराती है. जिससे यह आत्मा आत्मशुद्धि रूपी साध्य की ओर बढ़ता चला जाता है। और अंत में परमकल्याण स्वरूप जो निर्वाण कहिये मोक्ष तिसको प्राप्त करकेता है। यही पवित्र जिन धर्म

है जिन को जानकर जो अपनी स्वा-घीनतासे आप पुरुषार्थ करते हैं वे शिब-नगरीके स्वामी हो जाते हैं। और जो आलस्य और प्रमाद करते हैं वे जगत जं-जालके ही निवासी बने रहते हैं। इस धर्भमें किसीसे कुछ याचना करनेकी जरूरत नहीं है. वास्तवमें जो परमशांत इन्त्रिय अतीत आनंद है और जिसका भंडार इस आत्मामें ही है, उसकी रुचि मात्र ही रुचि-वानको इस दःखदायक जगतको भी इख-दायक करके अनुभव करा देती है। अत-एव नीच, ऊंच, निर्धन, धनादय, मूर्ख, विद्वान, हर एक अवस्थाका संज्ञी विचारवान जीव इस पवित्र जिनधर्मकी रुचिसे अपना आत्मकरुयाण कर सकता है। यही कारण था कि प्राचीन कालमें मुनिगणोंने भीक. चांडाल, धीवर, कोटी, दरिद्री, यहां तक कि पदा पर भी करुणा करके धर्मापटेश दिया-श्रद्धान कराया और वत दिये। जिनको पालकर वे अपनी आयु भरतो सुखी रहे हो; परंतु परभवमें भी परम उत्तम देवगतिके सुखोंको प्राप्त किया। दृष्टान्तमें एक धीमरकी दुर्गन्धा कन्याको एक मानिने उपदेश करके वत दिये। उस दर्गन्थाने राचि सहित पाछे । अयोध्याजीमें एक आर्यकासे भेट हुई। उनकी संगितमें रह महा तप करती हुई व्याघ्र द्वारा मक्षण की गई, जीन से मरकर सोलहवें (१६ वें) स्वर्ग में इन्द्रकी मीतिकारिणी नामा बल्लमा हुई। फिर बहांसे आकर श्रीकृष्णकी रुकमणी पटराणी हुई। यह कथा श्रीसोमकीर्ति आचार्य कथित प्रयुक्त चरित्र में प्रसिद्ध है।

यह पवित्र जिन धर्म सर्वका कल्याण-कारी है। इसका पालनेवाला राजा अन्याय से न कभी राज्य करेगा न किसीका राज्य छीनेगा । न अन्याय से युद्ध करनेको तैयार होगा । तथा पद्म, पक्षी, बृक्ष, मनुष्य, सर्व को अपनी प्रजा जान सर्वकी रक्षाका यत करेगा। यदि कोई विरोधी बृथा अन्याय ठान प्रजाको कष्ट देनेको तैयार होगा तो उसको हर तरह रोकेगा, कोई उपाय होनेपर युद्धद्वारा उसको उसके अन्यायका फल चलायगा। सुखशांति फैलाने में ही यज्ञ करेगा। अपने किसी भी स्वार्थको न पृष्ट करके प्रजाको विद्वान, घनवान, धर्मवान, बनानेका ही प्रयत करेगा । सर्व प्रजाक मनुष्यांको साम्यभावसे देखेगा। सर्वको विना किसी पक्ष पातके यथायोग्य सन्मानित करेगा । धर्मके नामसे होनेवाले अत्याचारोंको पशुओंपर एकदम बन्द कराबेगा। पशुओंके गुद्धा अंग छेदकर उनसे काम लिया जाता है इस निर्दयताको रोक देगा। सञ्चा शासक बनानेके छिये यह जिमधमें बडा भारी सर्वोत्तम कानून है।

इस पिनत्र जिन धर्मकी शरणमें रहे हुए व्यापारी व कृषक तथा मसिकर्मी अन्याय को त्याग सत्यव्यवहार और परिश्रमसे लेनदेन व काम करके सन्तोषपूर्वक विना

अनीति, चोरी और निश्वसमातके अपना ज्यापारादि कर्म कर घनोत्पन करेंगे और जो घन पैदा करेंगे उसको जुआ, मांस, मदिरा, वेश्या, शिकार और परस्तीरमणमें न खोकर तथा और भी अन्याय व सन्नर्थ कार्योमें न लगाकर न्यायपूर्वक विषय भोगने में कुटम्ब परिवार की रक्षामें, पुत्र पुत्रियों को यथार्थ विद्या लाग करानेमें तथा पाल व दीन दुःखी जीवोंको आहार, औषधि, अभय और ज्ञान दान करनेमें ही सर्च करेंगे जिससे समाजका अत्यन्त उपकार होगा।

इसी तरह शिल्पकर्मी, नौकर, चाकर सेवकादि इस धर्मके तत्वों के श्रद्धाढच और यथाशक्ति क्रियावान होकर वृथा अ-न्याय और अभध्यमें न प्रवर्तेगे, स्वामीका कार्य सत्यतासे करेंगे। और जो कुछ कमाएंगे उससे अपने कुटुम्बको पोवनेके सिवाय दानादि सत्कर्ममें खर्च करेंगे। अति लोमसे बचकर सत्य करेंगे तब जो आजकल दरजी, सुधार, कारीगर आदि के झुठे वादे सहने पड़ते है और उनसे अतिक्केश समाजको उठामा पड़ता है सो न उठाना पड़ेगा। अनेक नीच जन आजकल अपनी पूंजी नशा पीने और अमध्य खानेमें व जुआ खेलनेमें लो देते हैं, जैनी होकर इन कुकर्मोंसे बचेगें। जान बूझकर एक चीटीको न मोरंगे, न किसीको सताएंगे। और आजकर जो अनेक अपराध नीन लोगोंके द्वारा होते हैं

सी न होंगे जिससे प्रजा अति सुख्यांति और सन्तोषके साथ अपना जीवन बीता सकेगी।

प्रयोजन यह कि नीचसे नीच भी मनुष्य इस पवित्र जिनधर्मकी संगतिसे आप अपनेको भी सुखदाई और दूसरोंको भी हितदाई बना सक्ता है।

प्यारे पाठकों ! ऐसे पवित्र जैनधर्म को जगत ज्यापी बनाना क्या महान पुरुष का काम नहीं है ? नया यह बडा भारी उपकार नहीं है ? क्या यह महान् धर्मका काम नहीं है ? क्या यह प्रभावना अंग नहीं है ! क्या यह स्थितिकरण अंग नहीं है ! क्या यह मार्ग प्रभावना नहीं है ! न्या यह सन्ना ज्ञानदान नहीं है ? नया यह बड़ा भारी अभयदान नहीं है ! यदि बह कार्य उपादेय और कल्याणकारी है. तब ऐ जैनधर्मके जाननेवालों ! ऐ जैन धर्मकी महिमाको पहचाननेवालों ! ऐ परो-पकारमें मन, बचन, तन, धन अर्पण करने-बाडों ! उठो. प्रमादकी नींद छोहो । सर्व जगतके कल्याणके लिये अपने आपको बलि चढाबी, । इस भवमें इन्द्रियोंके क्षणिक सुर्खोके भीतर न पड़ो इस भव में माता, विता, सी, पुत्रादि से मोह न करो! अपनी शक्तियोंको जगतकी सेवा के लिये दे दालो । सुठे मोह को मिटा डालो। अपने को जगत का चाकर बना डालो।

जैसे योद्धा युद्ध स्थलमें जीते हुए शत्रुओंसे निर्भय हो गमन करते हैं ऐसे तम भी विरोधियों से भय न करके कार्यक्षेत्रमें उत्तर पडो ! और एक दके तो परिश्रम करके इस पवित्र धर्म को-इस श्री ऋषम और महाबीर स्वामी की ध्वजा को जगत में फहरा दो ! जब पवित्र जिनघर्मकी आमा मात्र को प्रगट करनेवाला बौद धर्म जगदृत्यापी हो गया तो नया यह निर्मल निष्कलंक जैनधर्म जगदृज्यापी नहीं हो सकता ! अवस्य हो सकता है ! बस प्रमाद छोडो और अपने घर्मके प्रचार में तन्मय हो जाओ । हमे पूर्ण विश्वास है, यदि आप सथार्थ रूप से जिनवर्मके सिद्धांत को प्रतिपादन करेंगे, यदि आप इसके ज्ञान वैराग्यकी छटाको दिसलावेंगे, यदि आप इसके भेद विज्ञानरूपी मंत्र को सिखलाएंगे; यदि आप बाधमें दुःसी और मुखी अवस्थामें मी सदा आत्मानंद रस चखने की कुंजी पहचनवार्वेगे तो अवस्य २ लोगों के दुःसी मन इस को इसी तरह प्रहण करेंगे जैंसे भूखसे द:र्खा बचा दौड़कर अपनी माता के स्तनों चुसने लग जाता है।

अब प्रश्न केवल इतना ही रह जाता है कि इसके लिये बाह्यमें क्या उपाय किया जाय ? ।

अपने को जगत का चाकर बना ढालो। प्यारे पाठको! जिस जगत में तुम्हें और साहस की कमर बांध खड़े हो जाओ। अपना पवित्र जिनधर्म फैलाना है उस में यह बर्तमानका भारतवर्ष मी है। भारतवर्षमें भी तुम्हें उन जैन कुळोत्प-मोंके भी हृद्य में जैनधर्म फैलाना है जो जैनी नाम रखाकरमी पवित्र जिन-धर्मको न जानते हैं, न मानते हैं और न पारुन करते हैं। इसके सिवाय भारत में अनेक ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शुद्र मिध्यात्वकी कींचमें फंसे हुए देवीदेवों को पश्चलि चढ़ा पुण्य का छाभ मानते तथा मांस से देवताकी और अपनी ति मान करोड़ों उपयोगी पशुओं तक का भात कराते हैं इन सबको उपदेश हे सत्य शद्धान में लाना आवश्यक है। इसके सिवाय को देशी मुसलमान और इसाई हैं जिन्होंने मांसादि खाना धर्म मान रक्खा है व अपने आत्माके अमर-त्वके श्रद्धान से व आत्माके आत्मीक आनन्दसे बाहर २ घूम रहे हैं उन को भी सच धर्मका स्वरूप जता योग्य मार्ग पर लाना है। इतना काम तो भारत ही में करना है। बस इस कामके करनेके लिखे ऐ नौ जवानों ! जैन धर्म के जाताओं! अपने २ भोजनादि के खर्च के लिये दो नार हजार बंकमें जमा करो और स्वाधिनतासे ब्रह्मचारी अवस्थामें ब्रतादि पालते हुए अपना आत्मकल्याण करो और बचे हुए समयको जैनधर्म के प्र-चार में व्यय करो। जब तक तम अपने

भोगे तब तक दूसरेकी भारमाओंको प्रभावशाली नहीं बना सकते। सुनिओं ने, साधुओंने, त्यागियोंने पहले अपने आत्मबलसे ही नगरके नगरोंको जैनी बना लिया था। इस लिये अपनी इं-न्द्रियों को दमन कर शासानुसार वर्त पालकर आत्मबल बढ़ाओं और ब्रह्मचारी भेषमें देश २ अमण कर जैनधर्म का दंका फहरा दो । अपने व्याख्यानों से जगत को मोहित कर हो। मान अप-मान का स्याल छोड़ दो । यदि अभी १०० ही मनुष्य शासत्र उपदेश देने में कुशल ब्रह्मचारी हो निकल पढ़े तो सारे भारत में जैनधर्मकी पताका फहरा देंगे। इसके लिये कि ऐसे ब्रह्मचारी जो स्वतःका धन पास नधीरखते है । स्वा-धीनता से धर्म साधन करते हुए बिहार करें एक ऐसा धर्भ प्रचार फंड होना चाहिये जिसमे कम से कम १०००) मास की आमदनी हो जिससे ऐसे धर्म प्रचारको को सहायता ही जाया करें तथा इसी फंड से ही छोटी ? पुस्तकें अनेक भाषाओं में छप। कर वितरण कराई जावें। भारत में जैनधर्म के प्रचारका यही उपाय है।

पालते हुए अपना आत्मकल्याण करो अन रहा विदेशों में धर्मका प्रवार-और बचे हुए समयको जैनधर्म के प्र-चार में व्यय करो। जब तक तुम अपने होना चाहिये जिस के द्वारा अंग्रेजी में आपकी आत्माको प्रभाववान न नना-

रसने बाडीको दो वर्ष जैनसदान्त का जैनसिद्धान्ती के अच्छे पास कराया जावे जिस से जिनमत के सास तत्वींसे इतने जानकर हो जाने कि तत्त्व दृदसाई से समझा सके और दसरेके तत्त्वांके मानने में दीप आते हैं उनको भी बता सके ऐसे कई विद्वानी को तैयार करके अभी एक २ बिद्धान को एक २ विदेश में भेजा वाने जैसे वापान, चीन, जर्मनी, फान्स, इंग्डन्ड, श्रीस, इटली, अमेरिका, आफ्रि-का. आस्टेकिया आदि । साथमें एक २ रसोइया दिया जावे जो योग्य रसोड बना कर खिलाया करे तथा विदेशी भाषाओं में मनेक पुस्तकों को मुद्रित कराया जावे जिनको यह अपने साथ छे जावे। जगह २ ज्वारुयान दें और पुस्तकों को बाटे। बह भी भर्म प्रचारक, विषयों के लोलुपी म हो, न भन के इच्छक हों केवल अपना स्वारा चाहनेवाले हो। यदि यह लोग गृहस्थीमें न पढ़ कर इस कामको करे तो उस प्रकार इम के खर्चकी स्थिरता की जाने और यदि इन के कुटुम्न हो तो कट्टम्ब के खर्च का और इन के खर्च का अवन्य कर इनको निराकुल करके मेजा वाने लाक नह धर्म मचारक धनकी और विरुक्त निस्ष्ट हों। तथा अपने के बहा सक सभे नित्य कमी को सामते

रहें । परोक्षपूजा, मजन, सामायिक, ध्यानादि कियाओं में व सस्म पदार्थों के सेवन में व नीति से चलने में न विदेशी शौकतमाशोंने परहेज करनेमें, मतलब यह कि पवित्र धार्मिकजीवन विताने में अपने को लीन करके अपने खात्म-बलको बढावें।

बस यह इनका आत्मबल और ज्ञान अव-स्य उन को इस योग्य करेगा कि विदेशों में आश्चर्यजनक सफलता को प्राप्त कर सकेंगें। इस कार्य के । लिये भी लाखो का फंड चाहिये। परन्त इस उदारचित्त जैन बाति के लिये यह कोई भी काम दुर्छभ नहीं है। जिस जाति में मति वर्ष दस पन्द्रह मतिष्टाएं लाखों के खर्च की होतीं हैं वहां कोई क-ठिनता नहीं है। केवल धनशालियों को यह विश्वास होना चाहिये कि इन २ कामों में धन खर्चने से हमारा द्रव्य सफल होगा । बस द्रव्य तैयार है । अतए व ऐ जैनधर्मका जगत में प्रचार चाहने वालो ! तुम्हारा यह कर्तव्य है कि तुम इस बात का खूब आ-न्दोलन मचाओ जैनी के बच्चे से केकर बुढ़े तक के दिल में पवित्र धर्म प्रचारकी आवश्यकता भर दो। जब दिलमें जरू-रत माख्म पड़ती है तो रास्ता शीव्र निकल आता है कहा है "Where there is there is a नहां दिकी मंसा होती है वहां खपाय बना ही लिया जाता है। बस ऐ जात-





भूतपूर्व दिगंबर जैन संपादकसमूह.

१. इपे. प. जे से नियालाल नी-फर्स्तनगर (जीयाल,ल प्रकास). २. देश्ठ हीराचद नेमचंद-मेलिएर (जेन बे:पर). ३. देश्ठ होगालालजी-अनेमर (जेन प्रम.कर). ४. पं. पत्नालालजी बाकलीवाल (जेन हिनेषी). ५ बा. मृथ्यंमानुना विकल-देश्वंद (जेन हिनेषिदेशक, जेन गनट, ज्ञान प्रकाशक, जेन प्रकाशक.). ६. स्या. प. गोपालदामंत्री बरेब्या (जेन मित्र). ७. स्वर्ग, बा. देशकुमारजी-आसा (जेन गनट). बा. जगलीकशारजी एखत्यार (जेन गनट) ९ जपकुमार डी. अवंग विकल-अकोला (जेन माग्योद्य). १०. बा. जगमंदरलाल विभारटर (Jain Gazette) ११. पं. कल्लापा-कोल्हापुर (जेन वोचक). १२. बी. पी. पाटील-होष्टर (जिन विजय), ताल्या नेमीनाथ पांगल (वेंद जिनवरम्) १४. ए. पी. चीगुले विकल (जिन विजय कानडी).

[देव संपादकीका फोटों प्राप्त नहीं होसका]



वर्तमान दिगंबर जैन संपादकसमूह

१. श्री नाथुराम श्रेमी-मुबाई (जैन हितेषा). २. केट पदमगजनी-कलकत्ता (जैन मिजान नाम्कर). ३. त्यर दिग्विजयसिंहर्जा (जैन तत्वप्रकाशक). ४. ब. शानलप्रमादजी (जैन मिज). ५. ब. अफिनप्रमादजी-स्वरूपत (प्रवाद जिन). ७. ए. बी. लेड्-कोल्हापुर (मचालक, प्रगति-जिन विजय). ८. बा. ज्यानिप्रमादची ए जि. न्द्रियद (जैन प्रदीप). ९. प. उद्युलाल मी (मृत्ययादा) १०. आर. आर. केबेड (यद जिनवरम). ११. वेद्य जिनश्रेयताम-मेनपुरी (मार्गन नाग हिनकार). १२. वेद्य शकरलाल हरीहांकर -मुगदाबाद (वेद्य). १३. मी. रणदिव-वर्धा (मचालक, ममित.). १४. भी. बी. रोड-वर्धा (मुमति). [जैन गजरके वर्तमान सपादकका फोर्ट प्राप्त वोह होमका]

गण ! तुम आलस्य को छोड़ो, जैन जाति में जैनधर्मप्रचारकी आवश्यकता का इंका बजा दो। क्या तम्हारी दिन प्रतिदिन की सच्ची भावनाएं, क्या तुम्हारी हार्दिक चिल्हारें, क्या तुम्हारे जोशभर लेख म्बपना असर न दिखलायेंगे ? अवश्य दिख-लाएं। बस! यह न सोचो कि यह तो एक असंभवसी बात माछम होती है। पुरुषार्थ के साम्हने असंभव भी संभव हो जाता है। दःसाध्य भी सुसाध्य हो जाता है, कठिन भी सुगम हो जाता है। हरएक परोपकारी को उचित है।के श्री जिनेन्द्र देवका पूजनकर सच्चे मन से यह मंत्र ''पड़े-जैनेन्द्रं धर्मचकं प्रभवत सततं सर्वसीरूप पदायि " और यह भावना भावो कि जिनेन्द्रका धर्म चक्र-यह पवित्र जिनधर्म जो सर्व जीवों को सख देने वाला है. सदा वृद्धि को प्राप्त हो। हमें विश्वास है यदि आप अपनी सच्ची दढ मानसिक शक्तिसे यह भावना भावींगे तो अवस्य अपने कार्य में सकलता प्राप्त करोगे। जो मुक्तिकी भावना करते हुए और यथाशक्ति उद्यम करते चले जाते हैं वे मुक्ति को पाप्त ही कर छेते हैं। बस, ऐ भाइयो ! तुम अपनी सच्ची भावनाओं भौर अट्ट और निर्भय उद्यमसे अवस्य साध्यको साध लोगे और तब तुम्हें और तुम्हारे बच्चों को यह देखर कर बडा ही अपूर्व आनन्द आता रहेगा कि ''पवित्र जैनवर्म तो जगद्व्यापी हो रहा है।"

श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर झालरापाटण शहर ।

हमको यह भली भान्ति विदित है कि आजसे एक हजार ही वर्ष पहले इस भरतक्षेत्रमें जैनधर्म और जैनियोंकी कैसी उन्नत दशा थी। उन्नत दशा और अवनत दशाका मिलान करनेको हमारे पास हरएक तरहकी सामग्री मौजूद है। इहलौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकारकी वातोंकी उन्नति उस समय थी, इसके सबूत करनेको बहुत सी बातोंका संग्रह और बहुतसी सामग्रीका एकत्र करना बहुत ही आवश्यक है।

इस समयमें जिन २ चीजोंकी खोज की जायेंगी वे मिल सकेंगी। आत्मिक उन्नतिके सवृत करनेको बड़े २ दिग्गज आचार्योंके रचे हुए प्राचीन जन ग्रंथोंको तलाश करके प्रकाशित करना, और जैनियोंके धनाव्य होनेके सबूतमें उनके धर्मायतनोंमें असंख्य रुपयोंकी लागत की प्राचीन इपारतों वा उनके बनवाने वालोंका वर्णन सिवस्तर यथासाध्य खोजकर प्रगट करना, इन दो बातोंकी बड़ी भारी आवश्यक्ता है। सो ये दो कार्य विद्वानोंको योग्य है कि प्रमाद, कषाय और आलस्य त्यागकर जो अलभ्य ग्रंथ प्राप्त हो, उसको शुद्धतापूर्वक प्रगट करनेमें तनमन लगावें और धनादय अपना धन लगावें।

पाचीन इमारतोंको जो धर्मके चिन्ह स्वरूप हैं उनको रक्षा करके उनकी स्थिति हढ करो। आज जिस जिनमन्दिरका पाठक चित्र देख रहे हैं वह एक हजार वर्ष पहले शालरापाटण शहरमें या यों कहिये कि शहर के बाहर किसी उद्यानमें जिस श्रीमन्तने वनवाया है, उसका आज पूर्ण विश्वासयोग्य लेख वा पुस्तकद्वारा परिचय नहीं मिलता है: तथापि यह मन्दिर ही उस धर्मात्मा सदगृहस्थ का धर्मप्रेम और कारीगरों की शिष्टपचातुरीको प्रगट कर रहा है। जिस जगह अभी शहर झालरापाटण वसा हुआ है वह यही था यह वात सत्य नहीं है। **प्राचीन वस्ती और ब**हुतसे मन्दर जो एक **डेढ मील और** २ मील दूरीपर अबतक विद्यमान हैं इस वातको प्रगट कर रहे हैं कि कोई समयमें इस स्थानमें सैंकडों मंदिर हर मजहबबालोंके विद्यमान थे और जिन के बीच बीचमें जैन मंदिर भी बने हुए थे और इतने धर्मावलम्बियांके होते हुए भी सुख शान्तिसे अपने२ धर्ममें निःप्रमाद प्रवर्तते थे। और कोई प्रकारकी विरोधामि नहीं थी। या कोई समयमें द्वेषामि फैली होगी तबही उन सब मन्दिरोंका चुर होगया; जिनके बहु मृल्य पाषाणोंसे झालरापाटण शहरका २ मील की घेरका संपूर्ण शहर पनाह वनाई गई है; जो आज तक नजर आते है। उनके बीचमेंसे एक यही मन्दिर या इसके पहले का भी एक ओर मन्दिर श्री पद्मनाथस्वामी

का जो इससे भी बड़ा है अब तक विश्व-मान है। इस मन्दिरकी वर्तमान समयमें इस प्रकारकी रचना है:—

झालरापाटण शहरके बराबर च्यार चौक या भाग चौपडके बाजारसे होते हैं, जिनमेंके पूर्वउत्तरके चौकमें यह मंदिर श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैनियोंके १६ वें तीर्थंकरके नामसे प्रख्यात है। मन्दिरके पूर्व और पश्चिम दो दर्वाजें हैं। पूर्व द्वारके बाहर ही चौड़ी सडक है। पश्चिमके द्वार एक रास्ता है, जिसमें बैल गाडी बराबर निकल जाती हैं। इस मन्दिरके आसपास खास कर दिगम्बर जैनियोंकी ही वस्ती है।

पूर्वकी तरफ बाहर सडक पर पुखता चब्रतरे बने हुए है। मध्य भागमें तोरण द्वारयुक्त बड़ा दरवाजा है जिसके उत्तर दक्षिण ऊंची२ छ छः दू-कानें आसपास बनी हुई हैं और दक्षिण तरफ एक दरवाजा है जिसमेंसे वसनेवालेको पश्चिमकी तरफ जानसे पश्चिमके रास्तेमें पहुंचा देता है। बाहरसे यह मन्दिर सडक परसे देखनेवालेको उत्तर दक्षिण १७२१ फ़ट चौडा नजर आता है और उस उक्त दरवाजेंसे पश्चिम के दरवाजे तक फुट लंबा है। पुरवके खास दरवाजेसे मन्दि-रके खास दरवाजेंसे मन्दिरके भीतरका दृश्य नजर आता है तो प्रथम ही सामने दो हाथो (गजराज) अपनी सुंड ऊंची उठाये एक दूसरे से १० फ़टके फासलेसे

खडे हैं, दिखाई देते हैं और सूंडकी ऊंचाई के मिलानमें ६ फ़टका फासला है जिन्होंने एक अच्छा तोरण द्वार बना रखा है। पांबसे संडकी नोकतक १६ फ़रकी ऊंचाई है। भीतरका खास निज मन्दिरके बाहरका चौक जिसमें उत्तर दक्षिण १२ द्वारी और पूर्व पश्चिम १५ द्वारी तिवारियें जड़ी हैं क्रमसे ९७ फुट और १२३॥ फुट है। इन चारों तरफकी चौकयन्दीकी तिवारियोंमें ४ वेदी हैं जिनपर ६ शिखर बने हुए हैं जो (३५)पैतीस फुट उंचे हैं। जिनपर स्वर्णकलश व ध्वजा चढी हुइ है। चौकमें जो जिन मन्दिर है उसका शिखर ८४ फुट ऊंचा है जिसपर सुवर्णकढश १२ फुटका और ध्वजा दंड १८ फुटका शोमित है। यह जिन मंदिर बाहरसे उत्तर दक्षिण ४० फट और पूर्व पश्चिम ८८ फुट चौडा-लंबा है। भीतर जानेपर हाथियोंके पास ही तोरण द्वार है और आगे जानेका खास द्वार १३ फ़ुट ऊंचा है। जिसके पीतलके बड़े मजबुत कपाट लगे हुए हैं। भीतर बड़े गुमजके नीचे १६ फुट चौड़ा लंबा चौरस चौक है, जिसके भीतर फिर द्वार है जिसमें चौक है और ४ फुट ऊंची वेदी है जिसपर शान्तिनाथ स्वामीकी खद्गासन पुरुषाकार नम्र दिगम्बर जैनलिंग (चिन्ह) दर्शानेवाली ७ हाथ ऊंची वैराग्य रस मरी विशास प्रतिमा है, यह प्रतिमा बराबर समचतुर्सस्थान अतिश्वय युक्त है।

जिसकी प्रतिष्ठा दिगम्बर (नम्र) मुनि श्री भावदेवस्वाभीके समयमें संवत् विक्रम ११०३में प्रतिष्टा की गई है, जिसमें **भीपासाह हुमड ज्ञातीयने २४ छाख रुपया** प्रात्तष्टामें ! और ४ छाख रुपया इस मन्दिर के बनवानेमें खर्च किये हैं। ऐसा एक प्रा-चीन प्रतिष्टावलीकी पुस्तकमें लिखा हुआ है। यह पुस्तक शान्तिनाथ स्वामीके सरस्वती भवनमें मौजूद है। शान्तिनाथ स्वामी**की** विशाल प्रतिमाके आसपास दोनों तरफ उत्तर दक्षिण दो इन्द्र उसही प्रतिमाके साथ उकेरे हुए आभूषणयुक्त खड़े चमर दोर रहे हैं। निज मंदिरमें मकराणेके पाषाणकी बेळ बूंटे लहरदार चौकबन्दी हो रही है, जो वडी वेश कीमती कारीगरीका काम है। निज मन्दिरके ८ हाथ ऊंची चांदीकी चौ-खट और चांदी जड़े हुए जारुकि कपाट लगे हुए हैं जो बन्द करदेने परभी जालीमें से दर्शन बराबर हुआ करते हैं।

प्रतिदिन प्रभातमें प्रक्षाल होकर कल-शाभिशेष पश्चामृतपूर्वक होकर पूजन बड़े ठाठमाठसे हुआ करता है। पूजनमें सब उपकरण बरतन बगैरह चांदीके बने हुए हैं। निज मन्दिरके भीतर ही चौकमें दक्षणकी तरफ उत्तर मुख किये पार्श्वनाथ स्वामीकी वेदी है जिसके चांदीकी जालीके किवाड है। बाहरके चौकमें ८ बंदी अलगर बनी हुइ हैं, जिनपर ६ बेदियोंपर ६ शिखर हैं और दो वेदियोंपर नहीं है. इनमें एक बम्बई चौपाटी मुआफिक चांदीकी वेदी छणकरणजी साहबने ३) हजार रुपये लगाकर अभी बनबाई है श्रीजी विराजमान हो गये हैं।

उपकरण बरतन पूजनके जो हमशा काममें आते हैं और जो प्रभावनाके वास्ते छत्र आदि हमेशा लगे रहेते हैं वे करीव १५०के है इनके सिवाय २२५ उपकरण जिनमें सोना और चांदीकी अच्छी २ रकमें जलेव और जलुसकी शोभा बढ़ाने बाली भी हैं। जो रथयात्रा और भादवा अष्टान्हिकादि पर्वोत्सवमें काममें टाई जाती हैं। चन्दवा आदिभी बहुत अच्छे २ बनारसकी कारीगरीके हैं। चांदनी छोलदारी दरीफर्स आदि भी ५-६ हजार यात्रियांके मेर्टमं काम आने लायक वनी हुई हैं जो सब गत वर्षमें श्रीमान् स्यागी पन्नाळाळजीक केश-कोंचके मेलेमें निसयाजीमें लगाई गई थी। मन्दिरकी हिफाजतके वास्ते ४ सिपाही बराबर पहरा देते है और दिन रातमें ६ दफे दो२ घडी तक नगारखाना नौबत सहनाई बाजा बजते रहते हैं और रातदिन कची घड़ी पहरकी सूचनार्थ घडावल भी बजा करती है।

मंदिरमें करीब १२००) सालाना के नोकर चाकर सिपादी और नगारम्वानेवालें। की तथा मुनीम गुमास्तोंके पगारका खर्च है और ९००) सालका प्जन पोंचारेका खर्च है, मन्दिरमें मकानातके किराये और ज्याज तथा पृजन पोंचारेकी। बन्दी, और सरकारकी तरफसे जगात (परमट) परधर्मादा भीर कुछ किसी कदर सरकारकी तरफसे

माहवारी पगारभी मन्दिर खर्चकी मिलती है, जिससे खर्च बराबर आमद हो जाती है और कुछ बचत भी रहती है। सरस्वती भड़ारमें शास्त्रग्रंथ पुस्तकंभी करीब १३०० प्राचीन अच्छेर हैं, जो बहुत हिफाजतसे आलमारियोंमें अच्छे वेष्टनमें बांधकर रखे हैं।

ऐसा भव्य मन्दिर और ऐसी अव-गाहनाकी विशाल और पाचीन प्रतिमा आसपास दोदो सो कोसमें नहीं है, हरसाल आसो सद १५ की रथयाता निकला करती है। दर्शन करनेही योग्य है, सैंकडो यात्री हरसाल आते हैं। गत वर्ष कार्तिक गुक्का १२ को श्री अहिलक पन्नालालजी महाराजक केशलों चके महोत्सवमें रथयात्रा इसही मन्दिर से नीकली थी। इसही आधीन पार्श्वनाथ मन्दिरके एक सांवलाजीका मन्दिर, एक निसंयांजी और मंडावरगांवका मन्दिर भी हैं। पाटशाला भी इसही विशाल मंदिरमें है। इन सबकी सं-भालका भार एक पंचायती सभापर है, जो सब काम बराबर चलाती है। पाठकोंको चाहिए कि जिनको यहांके दर्शनोंका सौ-भाग्य प्राप्त नहीं हुआ है, एकवार अवस्य दर्शन कर अपना जन्म सफल करें।

सुंदरलाल बैनाडा-झालरापाटन



आपल्या समाजांतील एक व्यंग व ते दूर करण्यास उपाय। (लेखक:-हीराचंद मलुकचंद(काका)-सोलापुर)

—}}}{

"A sound mind in a sound body"
'' शरीर धड तर मन धड ''
आपल्या समाजांतील एक व्यंग म्हणजे आपल्या शरीराचा न्हास हे होय.

आपल्या समाजाच्या शरीराचा इतका न्हास झाला आहे कीं, इतर समाजाच्या न्हासाशी तुलना करिता तो अधिकच आहे.

शरीराचा ऱ्हास होण्याचें कारण आ-पल्या समाजाचे दुर्रुक्षः आपल्या समाजाचे लक्ष सध्या एक नादी आहे असे तर अतिशयोक्ती होईल असे मला नाहीं. पहा ! प्रत्येक जैन वर्तमान पत्रांतून अथवा मासिकांतून उपदेशपर लेख म्हटले म्हणजे 'शिक्षणाची आवश्यकता'' है होय. तसेच प्रत्येक सभा महासभा यां मध्यें सदा याचीच चर्चा. तेव्हां मी म्हणतो नुसते गोडच जेवण केलें तर ते पचन न कोठ्यांत जंत होऊन मरावे लागेल व मरावे रुागत ही ते कसे म्हणाल तर प्रत्येक आईबापाचा व समाज चालकाचा शिक्षण वाढविण्याकडेच नुसता ओढा असल्या मुळें त्यांची मुलें शिक्षणांतच गढून गेलेली असतात. त्यांना

त्यांच्या शरीराचें भान राहत नाहीं. ते पुरेसा व्यायाम घेत नाहींत, पौष्टिक अन्न स्रात नाहींत, त्या मुळें ते इतकें अशक्त झालें आहेत कीं, त्यांना आपली अभ्यासाची पुस्तकें मुद्धां शाळेंत नेण्याची ताकद उरली नाहीं, पुस्तके नेणें तर बाजूंसच राहूं चा, त्यांचे पुढें पुढें शाळेंत जाणें बंद होऊन क्षय रोगाच्या भक्षस्थानी रहावें लागते. येथें कांहीं दिवस ठाणें देऊन परलोकवासाच्या यात्रेची तयारी करावी लागते. मग यांच्या शिक्षणाचा यांना तर काहीं उपयोग होत नाहींच; परंतु वैद्य लोकांना मात्र पुरेसा फायदा मिळतो. म्हण्नच वैद्यांचा सुळ-मुळाट झाला आहे. वैद्य गृह म्हणजे शा-लोपयोगी पुस्तकालय झारुं आहे असे म्हटले तरी चालेल. अशी जर समाजाची स्थिति होऊं लागली तर शिक्षण प्रगति कशी व्हावी व ते लोकोपयोगी कसें व्हावें ! भी म्हणतो शिक्षणा पित्यर्थ पैसे गोळा करून बोर्डिंगा सारख्या संस्था काहून वि-द्यार्थ्यांच्या शरीराकडे लक्ष न देतां नुसते शिक्षणच करून घेतल तर पैसे व्यर्थ व प्रत्येक व्यर्थ. कारण मेहनत मुलांची संख्या भार अशक्त गांत मुळे परिणांमा अञ्चलपणाच्या बहुतेक दर वर्षी बोर्डिंग मधील विद्या शिकत असलेल्या मुलांत बहुत करून मृत्यु संख्या आढळून येते. तर मग विद्यार्थींगण बोर्डि-गांतच खपूं लागला तर बाहर निषण्याची

आशाच नको. आणि कदाचित्त बाहेर नि-षाला तर तो अशक्तच निवावयाचा आणि निघतोही. असले विद्यार्थी आपल्या उपजी-वीकेची व परोपकाराची कामें कशी कर-तील. अर्थात त्यांना कधिच करता यावयाची नाहीत. ह्या मुळें आपल्या समाजाचें फार नुकसान होत आहे. या करितां माझे समाज चालकांना व कुटुंब पालकांना येवढेंच सवि-नय सांगणें आहे की, समाजाचें नुकशान करणारे जे वरीलव्यंग ते दूर करा.'' ते असे की, संस्थामधृन (बोर्डिगामधृन) मुलें नित्य व्यायाम घेतात की नाहीं व त्यांना पौधिक अन खातात की नाहीं व त्यांना पौष्टिक अन मिळते किंवां नाहीं, व व्यायाम कर-ण्याची सोय आहे कीं नाहीं या कडें प्रथम लक्ष द्यार्वे नंतर त्यांना ''ब्रह्मचर्यवत'' आहे किंवां नाहीं, त्यांची वर्तणूक कशीं आहे, त्यांना सोबती कसल्या प्रकारचे आहेत वगैरे शरीराचा न्हास कोणत्याहि प्रकारे न होईल अशा प्रकरणांत लक्ष चार्वे. तसेच प्रत्येक वर्तमान पत्रांतून व मासिकांतून अशा बाबतींत लेख प्रगट करावेत. तसेच प्रत्येक गावो गांव सुशिक्षित मंडळी करिता व्यायामाची सोय म्हणजे ''तालिमखाना'' आहे किंवां नाहीं नसल्यास कादण्याचा प्रयत्न करणे व काढावाच, सोलापूर येथें ''जैनी तार्किमखाना'' आज सात वर्षे झाली काइस्म आहे. त्यांत जैनांची मुलें नित्य व्यायाम वेत असतात, कांहीं नाथारंगजी बोर्डिगांतील विद्यार्थी व गांवातील सम्य गृहस्थही येथें नित्य व्यायाम घेतात, व्या-याम घेणाऱ्या मंडळीची संख्या शंभर सवासे पर्यंत असते. ''तालिमखाना'' स्वच्छ हवेंत आहे. या तालिमखान्यांत गैरवर्तण्कीच्या मंडळीचा प्रवेश होऊ शकत नाहीं. तालिमखान्यांत कार्यकारी मंडळी नेमलेली आहेत येथें मलिविद्यविपयीं वार्षिक परीक्षा होतें, मुलांना बक्षीस देण्यांत येतात. दर महिन्यास मंडळीची वजन व शरीराचे मोजभाप घेण्यांत येतें. विद्यार्थींकरितां प्रोग्नेस फॉर्म टेविल आहेत त्यांच्या अभ्यासा कडे, वर्तनाकडे, व शरीर संपत्तीकडे संस्थे कडून चांगल्या रातीनें लक्ष ठेवण्यांत येतें.

अशा जर संस्था गांवो गांव निघतील तर शरीराचा व्हास न होता हे दुष्ट व्यंग नाहींसे होईल. व समाज्याचा मोठा फायदा होईल, आणि समाजाचे पैसे व महनत व्यर्थ न जातां लामकारक होईल. व शिक्षण प्रगतिची इच्छा पूर्ण होईल. वेवहें सांगृन शेवटीं थोडीशीं विनंती करतों कीं, हा लेख जोरात वांच्न तेवळ्या पुरतां मनाचा कल वळल्या सारखा होऊन पुनः थंडन ठेवाल आणि अमलातच आणाल व पुढच्या वर्षी यांच मासिकांत अशा प्रकारच्या दुसऱ्या संस्था निघाल्या असे ऐकण्यांत व पाहण्यात तसेंच वाचण्यांत आणाल अशी आशा करतो.



٩

ॐ आधुनिक केळवणी. दें**€€**

(લખનાર: - જીવાભાષ પદમશી ગાંધી - ખેરાળ)

કાટ પાટલુન ટાપી પહેરી માસ્તર થઇને પરવું **રાજ,** સુધરેલામાં ખપવું પાતે અણસુધર્યા શું માણે માજ. ધર્મતત્વ તા વ્હેમ ગણાયા ધન્ય સુધારા એનું નામ, **ઉપરથી કેળ તણી કડી સડશું સુખ અંદરથી આમ.**

કામળતાથા કામ ન ચાએ ધંધામાંહે નહિ કંઇ સાર. છટ છટ ખસ બસ ઈંગ્લીશ ભણીને નાેકરી કરવી એજ વિચાર મહારાજ્ય શ્રી પંચમ જ્યાજિના શીતળ છત્ર તળે સુખધામ. ઉપરથી કેળવણી. ર રાખ ગરીબ હોય તાય પણ ડેસ ફેશનના રૂડા ડાળ, સધરેલ થઈને કરે ખરા પણ દમદાલ ને માંહે પાલ; ધર્મતાલું અભિમાન મળે નહિ છુદ્ધિ બ્રપ્ટ ખને છે આમ. ઉપરથી કેળવણી. ૩ રમવું જમવું વિલાસ કરવા સધળા સમજે એમાં સાર. પરભવના ડર રહે ન મનમાં શું થાશે એ નહિ વિચાર: તન નિર્ભાળ થાએ છે તેથી વત નિયમનું શું છે કામ, ઉપરથી કેળવણી, ૪ વૃદ્ધ જેના ધર્માધ હાય છે વ્હેમી પણ બહુ હાયે તેમ. વડીલપણાના દાવા શાના ઉછરતાના મનમાં એમ; અણસમજુ એ જ્ના વ્હેમી નવા સુધારા અવે કામ. ઉપરથી કેળવણી. પ ગંભીરતાથી મનન કરે જો ખેસી એકાંતે એકવાર. આર્ય સનાતન શુભ મર્યાદા સદા સુખમાં છેજ શ્રીકાર; પશ્ચિમ રીતિના અનુકરણે બગડી નીતિ આર્ય તમામ, ઉપરથી કેળવણી, દ કેટલાક રૂઢીથી બગડ્યા હાલ આપણા પુર્વે રીવાજ, અતા વાત ખરી છે તાપણ જાવાનીઆ ઉદ્ભત છે આજ પર્વા જેતેના અવિચળ કીર્તિ ખંડન કરવા વાલે હામ. ઉપરથી કેળવણી. હ રેક રસાડા સુધી જોડા લઈ જવા નહિ આભડછીટ. સ્ત્રીઓ પણ ખૂટ સ્ટાકીંગ પ્હેરે કેમ નહિ તે કહે છીટ છીટ: નથી જોઇતા આર્ય જેનાને એવા સુધારાનાં કામ. ઉપરથી કેળવણી. ૮ ભગડે નિંદુ બાળક જેને હોત્યે ધર્મ તત્વના મનમાં ભાસ. ઇંગ્રેજી વિદ્યાની સાથે અવશ્ય જોઇએ ધર્માભ્યાસ: ડવેર સમજાને સમજાવા કથન કર્યા રૂડા બે બાલ, સારાસાર વિચાર કરીને સજ્જન કરશે તેના તાલ.

٩

ર

.3

X



फुलनी कळी उपरथी उद्भवेला विचार.

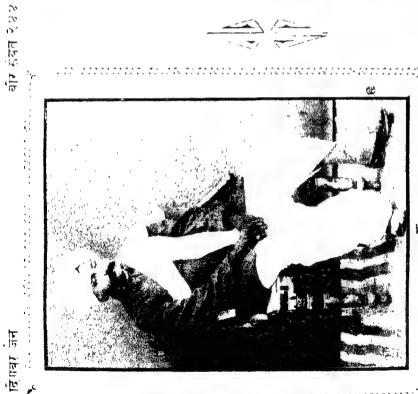
—(લેખક:-પુનશી અરજીન શાહ-ધુળીયા)

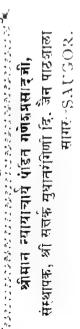


કુંડળીએા છંદ્ર,

જો તું આ કળી ઝુલતી, હસતી રમતી છેક, જાજ વખત પછી ખીલતી, રાખીને વિવેક: ધિરેથી ખલતી વિવેક, રાખીને ં સરસ **રાવાસ, હાથને** શાભા અપાયે. દેખી શુદ્ધ - આનંદ, ગયું ્મન માર્ આધિન થયા સુવાસની, જોઇ આ હલતી પ્રભૂ પદમાં કા અપ શે, કા દેશ ગળે આરાપી મિત્રને, પૃ**ણ**ેજ પૃર્ણ જ કરશે હામ, પ્રિયા કર દેઇ તુજની. પડી આનંદની સાથ, શાભાવીશ મિત્ર આનંદને સુખ, પ્રેમથા પ્રમા અહા ! ધન્ય અવતાર, ઝલતું પ્રભૃતા પદમાં. 0 તુજ આયુ પૂરણ થતાં, કરમાર્પશ નિજ કચાડાઇશ પ્રેમી પંદ, તજ દૂધના સંગ: સંગ. સિધાવીશ તારે દેશના ના સાથી તુજ સાથ, ફેંકો દે તુજને મર તું પ્રભુપદ હાથ. ધર્મ મિત્ર સાથી ભાગવ અક્ષય સખ, પૃર્ણ તૃજ આય થાતાં. રૂપી વિચારથી, યા પ્રભૃ ચરણે લીન; ખાેધ માહ સંસારતા, અરિદ તે des અરિદ્વંતે તલ્લીન, અંતમાં સાથી ચાશે. કાે નહી ધરશે હાથ, જમના મારજ ં ખાશે. માટે ધર જીન ધ્યાન, ધારીને એકજ પૂ**નશી** ચક્ષુ ખાલ, પૂષ્પ કળાના

साचित्र खास अंक. から、沙田の中のとうにはいいのにのかには、 こういっちょ बीर हदन २७४०







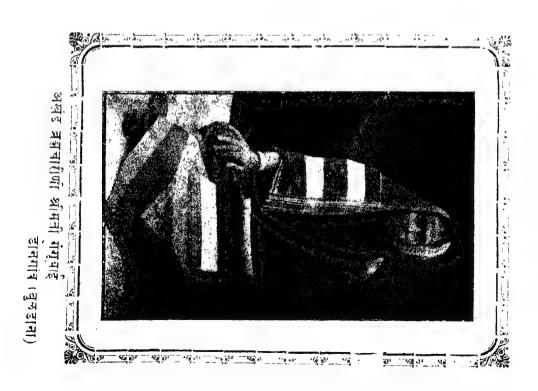
एकक पन्नालाज्जी जैन पाठशाला-सोलापुर. पंडित वंशीयरजी जैन, अध्याम



स्विकास्य प्रमान क्षी क्षपिकशोर की जैन रईस दिवान कुमार श्री रूपिकशोर की जैन रईस विजयगढ (अलीगढ) (विद्रान, श्रीभान असे अथशर अल्सारी युवर)



श्री स्वामी कृष्णद्यालुजी वैद्य फतेहपुर (जयपुर) (व्यक्तिसाधर्भ प्रयत्क प्रसिद्ध मटात्मा)



व्हाली ब्हेनोने हित साधनना के वे वोल. ﴿ (क्षेभाः—श्रीभती अंड्राल्डेन-साक्षापुर.)

કત કર્મના કળને અકળાઇને ભાગવનાર સગી ખહેતા ! જલદી ઉંકા અને વિચાર કરા કે. આપણું દિત શેમાં સમાયલું છે? વહેના! પ્રથમ હિત એટલે શું ? તેજ આપણને હજા સમજાયું નથી. જો સમજ્યા હોત તાે ઉદ્યમ કરત અને બલન નહિ, માટે કહેવાની જરૂર છે. હિત એટલે કલ્યાણ, ભલું, સુખ. એ બધા કાર્યવાચી શબ્દ છે. વસ્તુનું ખરૂં સ્વરૂપ પ્રગટ થવું, તે આત્માનું હિત કે કલ્યાણ છે, અને તે દ્વિત સંત્રી, પંચેન્દ્રિ પર્યાયક જીવાજ કરી શકે છે. તેમાં વળી આવેદેશી ઉત્તમ ઉત્પન્ન થયેલાં જૈનધર્મ પામેલા उत्रष्ट તેઓજ આપણું ભલું કરી શકે છે. તે હિત એ પ્રકારનું છે. એક **લાકિક હિત** અને બીજું પારમા^{શિક} હિત.

લાૈકિક હિતમાં શરીરનું હિત*અ*ને કુટુંબી હિત સાધવું જરૂરનું છે. શરીરનું હિત સાધ-ઉપાયા:--શરીર ધાઇને રાખવ', કપડાં સ્વચ્છ રાખવાં, ઘરમાં કે તેના **ચ્યાગળ પાછળ ગંદુ રહેવા નહિ દેતાં** ઝાડી ઝુડીને સાક રાખવું, હવા ખુલ્લી રાખવી અને ખારાક તાજો, મર્યાદાના અને હલકા ખાવા, સમયને અનુસરીને બાજન પાણી કરવું, સ્વચ્છ કરીને સારૂં ગાળીને પીલું, પાણી બગડ્યું હાય, તા ગરમ કરીને દારીને પીવું અને શરીરથી બનતી મહેનત કરવી, એટલે અનેક જાતના થતા રાગાથી બચી શકીશું. અને શરીરન હિત પણ એજ છે.

સાજું હોય શરીર તેા, સવે^૧ વાતે સુખ, નહિતા ભહુ સંપતિ છતાં, દિન દિન પ્રત્યે દુઃખ.

માટે પ્રિય ખહેતા ! શરીરતું હિત છે; તેજ કુટ બનું હિત સાધવા સાધને છે. કુટ બી-તું હિત તેમના શરીરની રક્ષા કરવી, છેાકરા-એોને ન્દ્રાતપણથી શારિસીક બળ તથા માન-સિક બળ વધારવાના ઉપાયા યાેજને તેના ઉદ્યમ કરવા. છાકરી, વહુંઓ, બ્હેના ક્રે કાઇ સગાંસ બ'ધી હોય, તે સવે ને શાંતિ રહે. કલહ ન થાય, ખધાનાં મન પ્રસન્ન રહે તેવું વર્તાન રાખવું, કુટુંબીને ધર્માના માર્ગે દારવા, કાઈ દુઃખી, રાગી, વતી હાય તેમની સેવા ચાકરી સારી પેઠે કરવી, ત્રતિનું વૈયાવત કરવું, કુટ બમાં રહીને ઇર્ધા કે દ્વેષ કાઇપણ દીવસ થાય, તા તેના પશ્ચાતાપ કરી પ્રાથિત હેવું એટલે કરીથી તેવા ભાવ થવા દેવા ડર લાગશે. વિધવા પર્યાયમાં ચાર વાતા સાચવવી પડે છે. **એક્તાે** ઝાઝા લાભ નહિ કરવાે, કાંઇ માગ<u>વ</u> નહિ, **બી**જાં કામ બધા કરતાં વધારે કરવું, ત્રીજુ ધરમાં કાઇને વધારે કે એાછું, ભલું કે છુરું કહેવું નહિ, ઇર્ધા કે દ્વેષ વિગેરે કરવા *ન*હિ, આટલી વાતા જો સારી પેટે પાળી શકીયે, તા કટ'ળીને ઘણાજ વ્હાલા થઇ પડીએ. આમાંના જો કાંઇક અપરાધ થાય, તા તે ઘણી કડવી લાગે છે, પછી ચાલે તેા ખરૂં. કાઇ તરતજ કાદી મુકતું નથી, પરંતુ સંતાયજનક દહાડા નિકળતા નથી, માટે બ્હેના ! આપણાથી કાઇને દ:ખ ન થાય, તેમ વર્તાન રાખવું તે કુટું અ• હિત કહેવાય. કુટું ખીના શરીર કે મન સારા હોય. તેા આપણને બન્ને પ્રકારના હિત સાધ-વામાં ખિલકુલ વાંધા આવે નહિ.

હવે પરમાર્થિક હિત સાધવાના ઉપાયા:-ક્રોધ, માન, માયા અને લાભ વિગેરેને વશ થઈ આત્માના શુદ્ધ ક્ષમા, નબ્રતા, સત્ય, સંયમાદિ ગુણોનો તથા ત્રાન, દર્શન, ચારિત્રાદિ ગુણોનો ધાત થવા નહિ દેવા, બનતા સુધી પરિણામની ઉજવળતા રાખવી, નિષયોમાં વિરક્તતાથી વર્તન કરવું, પરિણામ બગાડવાવાળી જે જે ચીજ હાય, તેનાથી અળગું રહેવું, તે

પરમાથે હિતનાં સાધન છે. આવી રીતે હિતનું સાધન **સંજ્ઞી પંચેદ્રી પર્યાયક** જીવજ કરી શકે છે, તેમાં વળી આ આર્યદેશી ઉત્તમ મુ**ળમાં ઉત્પન્ન થયે**લાં, ઉત્કૃષ્ટ જૈનધર્મ પામેલા **. ७व विशेष वि**यार्थी हित इरी शहे **ચ્યાત્મહિતાર્થી** ખ**હેના**! હિત કે ભલું કરી ક્ષેવાના વખન આપણા માટે આગળ આવીને **ઉના થયેલા છે**, જમાના ભદલાયા છે, માટે કલ્યાણ કરી લેવાતું કેકાજી જ્ઞાન સંપાદન **છે, અને** ज्ञान સંપાદન કરવાનું ફેકાહ્યું **આવિકાશાળા** અથવા શ્રાવિકાશ્રમ ત્યાં રહીને લાંખા વખત સુધી હિત કરવાનાં સાધના મળા શકે છે. બહેના! આજ સુધા **મ્યાવી સંસ્થાએ**। નહેાતી, ત્યારે ધેર ધેર યુમ **પાડતાં હતાં કે, હમે** શું કરીયે ? ભણવાનું સાધન નથી, જ્ઞાન કેમ થાય ? અરાં શીખવ-નાર મળતાં નથી, પુરૂષ પાસેથી અમે ન્દાની ન્હાની વિધવાઓ કેમ ભણી શકાયે? ધર્મનાં યુસ્તકા પણ ઘણાં માર્ધા મળે છે. ઘરનાં કામામાં કૂરસદ મળતી નથી અને વડીલ વર્ગ પણ ભાગવાના પાંડ છે: તા જ્ઞાન કેમ મેળ-વાય અને હિત સાધન કેમ થાય ? પરંત ખ્હેતા! તે બધી અડચણા હવે દૂર યાઈ છે. દેકદેકાણે **પાઠશાળાએ**ા તથા આશ્રમ સ્થા-પન થયાં છે, ધરના માણસોની હવે રજ્ત છે, **કરસદ પ**ણ ઘણી મળે છે. કારણ ઘેર ઘેર નેળ અને ચાકર-નાકરની સગવડ થઇ શકે છે, માટે હવે નકામી અડચણા નહિ બતાવનાં હિત સાધી લેવું, એ મનુષ્ય માત્રનું કર્તવ્ય છે.

લણી ખરી મહારી ખાટા વ્હેમમાં પહેલી ખહેતા કહે છે કે, અમે મુંબઇના આશ્વમમાં ભણવા આવીયે, પણ ત્યાં અમતે કાવશે કેમ? અને ત્યાં ગમશે કેમ ? પરાધીનપણાથી રહેવાશે કેમ ? તેમને મ્હારં કહેવું એજ છે કે, ખહેતા! ધરના કરતાં આશ્વમમાં મજીરીનું કામ ઘર્લું જે એક્ષું હોય છે, તેમજ આવાપીવા પણ

તાજું એ વખત સ્વચ્છ અને મર્યાદાનું કરતું કરતું ભાજન દ્રાય છે, અને ગામડીઆ ઘરના કરતાં ત્યાં સુંદર ભગીચા, સ્**વચ્છ ખાંગલાે** અને જ્યાં ત્યાં મનગમતું ખેસવા સહું મકાન, જાતજાતના કુખાટ. ખુરશીએા, ટેખલ, ખાંકડાએાથી સજાવેલા હાલ છે. વળી ખહેતા, શં જોઇએ ? આંખને રમાડનાર ચિત્ર વિચિત્ર રંગાના **નકશા** મુકેલા છે અનેક તરેહના **શિવણ. ભરત, ગુંથણ**ના કામ ચાલે છે. કાનને મધર લાગે એવું વાજાં વગડાય છે. વળી કહ્યા મહેતા, શું જોઇએ ? આટલે ખેતીને વાના કરવાને પણ અહીંઆ સાહેલીએા ઘણી છે. મનન રિઝવવા માટે પ્રભનું રાગ સાથે પુજન, ભજન થાય છે. ભાવ સુધારવાને માટે **ધર્માપદેશ** અપાય છે અને ધાર્મિક ખનવાને માટે ધર્મનું સારી પેંડુ **જ્ઞાન** અપાય છે. કરી બહેતો, શું માંગા છે**ા** રેવિદાન થવા માટે **સંસ્કૃત** શીખવાય છે. ચાલતા જમાનાને ધાર ઇ **િલશ** શિક્ષણ પણ અપાય છે. જેને કાવે તે ઝાન અહીં મેળવા શકે છે. ખરેતા તવે શું રહ્યું ?

મુંળાઈમાં માંગા તે ચાજ મળા શક છે. સર્ગાવ્હાલાં ઘણી વખત મળી ગતય છે, **દવાપાણીની** ગાઠવણ કરી રાખી છે. વાંધા શેતા રહ્યા કે એક પરાધિત શકા રહેવ પડે છે તેને માટે ગહેના! વિચાર કરા આપળી સ્ત્રી પર્યાય મળધીજ પરાધીન છે. તેમાં વળી વિધવા પર્યાય એ તેા તદૃત પરાધિન. શું કુટું બીસાસરામાં એક દોઢીઆની પણ સત્તા ચાલે છે ? કાઇને ભલું કે સુરું કહેવામાં છભ ઉપદે છે ? કે રવત ત્રતાથી ધર્મ ધ્યાન કરવામાં સંતાપથી વખત કાઇ આપે છે ? નહીંજ, એ કાંઇ પરાધીનપણું થાયું છે ? જો કે વિધવા પીયરમાં હોય, તા પણ કાંઈ કાઇ ચીજમાં હાથ ધાલી કાઇને આપી શકાય છે ? કે ખર્ચ કરવામાં હાથ ચાલે છે ? ધાર્ગુ શું કહું ? પાત-પાતાને અનુભવ આવેલાજ છે. કાઇકજ વિરલી

પુરુષવાન સ્ત્રી હશે. કે તે વિધવા પર્યાયમાં સ્વતંત્રતાથી જન્મારા આનંદમાં કાઢતી હશે. કે કાઇકજ સત્તાધારી ખર્ચ ચલાવતી હશે. પરંતુ ઘણીખરી બહેના તા આ અનિવાર્ય દઃખ-માં દુઆઇન પુરાધિન અવસ્થામાં મું ઝાઇને **આત**ે-**ધ્યાન**થી ખાટા કર્મ બાંધી આ ભવ પરભવ દ્વ:ખની અનુભવો થાય છે, ત્યારે શું બ્હેનાે! અહીંયાં તેટલું પરાધીનપહાં છે કે બિલકુલ નથી. **ધણી** મરી ગયા એટલે આપણે પુરૂપના ભાવ રાખવા પડે છે, કારણ કે, એટલી હિંમત રાખી ઘર ચલાવવું પંડે છે, ઘરમાં કાંઇ નહિ હાેય તા તેની કેડની કુંચી આપણી કેંડે આવે છે. <u> બહારના ધણાખરા ન્યાત જાતના કામ આપણને</u> જોવા પંડે છે. તેમજ પુરુષના ભાવ રાખવાથી ચ્યાપણા રહામે કાં**ઇ જેવઇ શકે નહિ. ચ્યા**લી પયાંયમાં પુરૂષ *ખ*નીને **(વદાદવીની સાથે પરણીને** તેનાથી મળતો લાભ લઇ સુખન આનંદમાં વખત ગાળવા. વિદ્યાદેવીની સાથે રહીને પંરાપકાર કરવા, કાઈ કાઇ દિવસ ત્હેના ગુણમાં મસ થઇ ગાનાનુભવ રસામૃતનું પ્રાશન કરી આવતા કર્મને રાેકવાં અને છતાં કર્મના ઘટાડા કરી અંતીમ શાસ્ત્રત, નિરાકુળરૂપ સુખના સન્મુખ થવું જાઇએ.

ળહેતા! હવે આવા અમુલ્ય વખત ઘરના ખુણે બેસાંત મુર્બ દરામાં. ખાટા વ્હેમામાં ફસાઇને ગુમાવવા, એ કેટલું ભૂલ ભરેલું છે? પાણી લાગવાના ડર કરશા નહિ. મુંબઈમાં આવેલા બધાએ મરી નથી ગયા અને ગામડામાં રહેતાર કાઈ અમર થઈ નથી રહ્યા, માટે જુજ વાતાના વ્હેમ ધારીને આત્મહિતનાં સાધના ખાઈ નહીં ખેસતાં, ઉઠા! ઉદ્યમ કરા. ઉદ્યમ કરવાથી કાર્યની સિદ્ધિ થાય છે. નસીબ ઉપર હાથ મૂકી ખેસવાથી કાંઇ વળશે નહિ. માટે બ્હેના! આત્માર્થી હો તો અવસર ચુકશો નહિ. એટલુંજ કહીને વિરમું છું.

﴿ विनोदी दुचका. ﴿ ﴿

ચુધ્ત રહેલું ગળપણ.

મીકાશ ભરેલાં વચના બાલવાથા સર્વ પ્રાણીને રાજી કરી શકાય છે. મીકાં વચન મેળવવા પૈસા કે મહેનત પડતી નથી. તો પછી હલકાં અને તોષ્ઠડાઇ ભરેલાં કડવાં એ-ળીયા જેવાં વચના શા માટે બાલવાં જોઇએ કે જેમ પુષ્પમાં સુગંધ, તલમાં તેલ, દુધમાં ઘી, અને શેરડીમાં ગળપણ ગુપ્તપણે મિશ્રીત છે, તેમ અંતઃકરણમાં મિષ્ટ વચના સંપૂર્ણ જથામાં ગુપ્ત ભંડાર તરીક ભરેલાં છે, પરંતુ તેના ઉપયાગ કરવા એજ ગળપણના વપરાશ !!!

20

હ મેશા યુવાન કાેેેે !

મનુષ્ય માત્રને યમરાજના તેડા સમાન વૃદ્ધાવસ્થાનાં ચિન્હ જણાવા લાગે, દાંતરૂપી કામદારા હાલહવાલ થઇ જાય, સ્યામવણુંના સુંદર કેશગુ-જે ધાળા ફગ ખની જાય, નેત્ર-રૂપી પ્રકાશમાન દીવા આયુપ્યરૂપી તેલ ખુટ-વાથી આંખા પડી જાય, કાનરૂપી ખટપટી ખવાશા શુન્ય થઈ જાય, પરંતુ ચિત્તરૂપી અતુર ચાર ભ્રમરની માફક સદાએ ભમ્યાજ કરે છે, કદી વૃદ્ધ થતું નથી કે એક જગ્યાએ ખમા રહેતું નથી. એજ ખરં યુવાન! ખાકા બધાં કાંપ્રાં!!!

Q Q

સ્વાર્થાનીજ સગાઇ!!!

સુગ'ધીદાર પુષ્પોની આસપાસજ બ્રમરા ભમ્યા કરે છે. પાણીથી ભરેલું સરાવર હોય સાંજ હંશ બેસે છે. જ્યાં ચારા હોય, ત્યાંજ દારા પણ જ્ય છે. જ્યાં પૈસા હોય, ત્યાંજ સગાંવહાલાં અને મિત્રા વિગેરે હેત પ્રિત ખતાવે છે. જ્યાં સ્વાર્થ સ'ધાય તેલું હોય, ત્યાંજ મનુષ્ય અને પશુપક્ષી વીગેરે વીંડલાઈ વિભે છે. બાકી મનુષ્યો તો તેના તેજ હોય, પણ જો સ્વાર્થ નહિં સધાય તેવું હોય, તો દેહ માઉ દુરથીજ નમસ્કાર કરે છે. અથવા તેની સામું આંખીને પણ જોતા નથી. અંજ સ્વાર્થ ની બલીહારી!!

20

મફતની મેહેનત!!

અનાજથી ભરેલા ખેતરનું રક્ષણ કરવાના ધરાદાથી ધાસનું કે ચીંચરાનું પુતળું ઉભું કરવામાં આવે છે. તે પુતળું પેતે ખાઈ શકતું નથી. મફતની ઝાકળ અને તડંકા ખાય છે, પરંતુ એક કણશતું પણ તેના ઉપયોગમાં આવતું નથી. તેમ અનેક કવ્યવાન પુર્યા કવ્ય મળ્યાં છતાં તેના ઉપયોગ સદ્દમાંગે દાન, દયા વીગેરમાં કરતા નથી કે કાઇને લેવા દેતા નથી, તેઓ ખેતરના ધાસના પુતળા જેવાજ છે! કેમકે સાચવી સાચવીનેજ મફતની મેહેનત ઉઠાવે છે કહેવત છે. કે "ભાગવે તેજ અ

જી.**હ** સ્વભાવ ટાળ્યા કેમ ટળે ?

જેનો જે સ્વભાવ છે તે દેવતાઓ પણ તળવી શક્યા અસમર્થ છે. છ માસ પર્યત કતરાની પુંછડી બોયમાં દાકી રાખા કે ભુંગ- ળીમાં સીધી દખાવી રાખા પણ તે તો વાંકા ને વાંકોજ! લસણની દુર્ગંધયુક્ત માત્ર એક જ કળીને જથાળધ કસ્તુરી, ચંદન, કપુંર વીંગેરે સુગંધી પદાર્થામાં વીંકીને રાખવામાં આવે તો પણ તે પાતાની દુર્ગંધીને કદી પણ તજતી નથી તેમ દુર્જન મનુષ્યોનો સ્વભાવ પણ અનેક યુક્તિ કર્યા છતાં બદલાતો નથી. કહેવત છે કે "પડી ટેવ તે તા રળે કેમ રાળી ?"

જી.છ અ**લ્**ધડજની હુશીયારી !!

અહુધડજ કાઈ દિવસ મ'દિરે જાય, તો દ**તા કાંઇ નવું નવુંજ તા**ન પ્રાપ્ત કરી લાવે! એક દહાડા મે દિરમાં શાસ્ત્રનું વ્યાખ્યાન ચાલતું હતું, ત્યાં ભાઈ જરા મે પૈસાભાર સાંભળવા મેશ. ગુરૂજ્એ કહ્યું કે ''ભાઇઓ કમેરૂપી દૃષ્ટ શત્રુને કાષ્ટ્રની માર્ફક ખાળીને ભરમ કરી નાં ખીએ. તાજ મુક્તિરૂપી મહારા- ણીને વરી શકાય છે" કક્ત આટલાજ ખાલ સાંભળી બહાદુર અહ્યુઘડજી તો ઉઠયા ને લાગલાજ ઘેર જઇ મુક્તિરૂપી મહારાણીને પરણવાના ફાંકડા વિચારથી ઘરમાંના તમામ કાપ્ટના ઢગઢા અનાવી ભડભડાટ સળગાવી ઘો. કેવા હાંશીયાર!!!

9.6

દિલાવર ખહેન!!!

ચંચળ બ્હેન દોઢ ચતુર! દિલના ખહુ દિલાવર! હતાં. તેઓએ ગુરૂજને મેઢિથી એક દિવસ સાંભળલું કે "અમુલ્ય દ્રવ્યા વડે પ્રભુતું પુજન કરવું જોઇએ. જેથી અમુલ્ય લાભ પ્રાપ્ત થાય છે." હવે ચંચળ બંહેન અર્થ કરવામાં પણ બહુ બાહાશ! તે અર્થ કર્યો કે "અમુલ્ય એટલે અ+મુલ્ય= વગર કિંમતના." બસ! બીજેજ દહાંડેથી ધરમાં જે એની સમજ પ્રમાણે અમુલ્ય જણાય (ફેંકી દેવા જેવું.) તે લઈ મંદિરે પુજન મા-ટે જવા માંડ્યુ!!

"વિનાદી"

दुनियामां रह्ये छतां जंजाळ-मांथी केवी रीते छुटवुं ?

(લેખક:-નાગરદાસ નરાતમદાસ સ'ઘવી-આમાદ•)

ધણા જણ કહે છે કે ઝેરમાં પણ સ્વાદ છે [?] અપ્રીણ માણસનાે જીવ & છે. સાેમલ માણસનાે જીવ & છે. ચડશ, ગાંજો ઇત્યાદ સધળી વસ્તુઓ અતીશય ઝેરી છે. અજ્ય• ખીની વાત એ છે કે તેમના ભક્ત તેમને હેાંશે હેાંશે ગટગટાવી જાય છે.

સ સારથી વિરક્ત પુરૃષા કહે છે કે જગતની જ જળ વિષ સમાન છે–જીવ માન્ત્રને દુ:ખ દેનારી છે, એમાંથી છુડી વૈરાગી થતું એ જીવનું કર્તવ્ય છે. આ બધી વાતો અક્ષરશઃ ખરી છે, પરંતુ કહેવાય છે કે તે સ્થિતિ પ્રાપ્ત કરવી દુર્લભ્ય છે.

જનસ્વભાવ સુલબ્ય વસ્તુને શોધે છે. કુર્લબ્યને માટે પ્રયત્ન કરતાં આડા અવળા અથડાઈ પડે છે. 'असमयों मवेत साघु'। અસમર્થ સાધુ થાય છે.કાળી ટીલી વહારી લે છે.

ખરા સાધુ (વૈરાગી) થવામાં અસમર્થ-તું કામ નથી. પ્રયળ પુરૂપાર્થિ છવાજ સાધુ-જીવન ગાળી શકે છે.

કેટલાક મનુષ્યામાં એવું બળ હાય છે કે તે ધાર્યુ કામ કરી શંક છે. સ્વામા રામતીર્થ અને મી. સેન્ડા જેવા ચાલતા માટરકારાને અટકાવી શંકે છે. કેટલાક સરકસના પ્રાફેસરા વાધ ને હાથીએા સાથે કસ્તિ કરે છે. અને સામાન્ય બળના માહ્યુસા દશ બાર ગાઉ ચાલી શંકે છે કે મહ્યુ બે મહ્યુ બાર ઉપાડી શંકે છે.

જેનામાં જેટલું પુરુષાર્થ તેટલું કામ કરવાને તે અધિકારી થાય છે. પુરુષાર્થ મેળ- વવાના પ્રયત્ન કરવાથી મેળવી શકાય છે. પાવે તે સ્થળમાં તેને માટે પ્રયત્ન કરી શકાય છે. સુરતમાં ભરાએલી નેશનલ કાંગ્રેસના મંડપના દ્વાર આગળ એક ચિત્ર રજી કરવામાં આવ્યું હતું, તે ચિત્ર આપણા જાણીતા રાજનિતિજ્ઞ પુરુષ લાલાલજપતરાયનું હતું. તેની નીચે એમ લખવામાં આવ્યું હતું કે:—'આ મારૂં શરીર કેદમાં છે, પરંતુ મારા આત્મા કેદમાં નથી'.

સંસારિક જ'જાળરૂપી કેદખાનામાં તો આપણે ફક્ત નજરકેદ છીએ. તે નજરકેદ પણ સખત જાપતાવાળી નથી. આપણી નજ-રમાં આવે, તો ઘડી એ ઘડી એમાંથી છુટા થવાની આપણને સદર પરવાનગી છે. બીક્બુ અને અવળે રસ્તે દેારાએલા મનુષ્યો એ છુટનો લાભ લઇ શકતા નથી. અને જ્યારે ગભરાય છે ત્યારે બ્હાનું કાઢે છે બિચારી જ**ંજાળ**નું!

દુનિયામાં ચોવીસે ચોવીસ કલાક કામ કરનારની સંખ્યા બહુજ શોડી છે. એકાદ બે વિત્રાનશાસ્ત્રીઓ કે એકાદ બે યંત્ર શોધકા બાક્યનામાંથી શોડાક માણસોને વળી દશ બાર કલાક કામ કરવું પડતું હશે, પરંતુ ઘણે ભાગે દીવસમાં પાંચ કલાક કામ કરનારની સંખ્યા સાથી મહોટી છે. કામ કરવું એટલે જેંદગી નિભાવવાને ખારાક વગેરે યાગ્ય સાધન મેળવાને માટે કામ કરવું, તે આ બધા મનુષ્યો ધારે તો બાક્યના ૧૯ કલાકમાં એકાદ કલાક એ બંદીખાનામાંથી છુટવા ધારે, તો કંઈ વધારે મુશ્કેલ નથી.

આ એક કલાક બાકીના ૧૮ ક્લાંકને દીપાવશે. સવારમાં સર્યોદય થતાં પહેલાં સર્ય- નાં કિરણ સઘળે ફેલાતાં તમે જોઇ શંકા એવી રીતે; અથવા સાંઝે સર્ય અસ્ત પામતા હોય અને ઝાંખા સર્યનાં કિરણા પૃધ્વિને પ્રકાશ આપી રહ્યાં હોય, તે સમયે ગામની બહાર એકાન્ત સ્થાનમાં જવું. એકાદ બે મિત્ર અથવા પુત્ર પુત્રી અથવા તમારી પત્નિ જોડે હશે તો પણ કાંઇ હરકત નથી. ત્યાં તમે જંજાળને ભુલી જવા ધારશા, તો જરૂર ભુલી જશા.

આ સ્થાન પસંદ ન હોય તેને માટે બીજો એથી પણ ઉત્તમ માર્ગ એક છે. ઉપર બતાવેલા સમયેજ હાથ પગ મ્હેાં વગેરે સ્વચ્છ કરી દેવ માંદરમાં જવું. શાન્તિથી એસી પ્રભુનું સ્મરણ કરતાં કરતાં પ્રતિમાની સન્મુખ એસા તેના સામું એક દૃષ્ટિથી જોયા કરવું. આથી તમને જરૂર સ્થીરતા પ્રાપ્ત થશે. તે વખતને માટે તેા તમે જરૂરથી જંજાળને ભુલી જશા.

ધરના એકાંત સ્થાનમાં માળ ઉપર કે અગાશીમાં જવાથી કુદરતી લીલા કંઇક દેખી **શ્વકાય એવી જ**ગ્યામાં ઉપર બતાવેલા સમયે **સવાર સાંઝ ખે**સી પ્રભુ નામ સ્મરણ કરવું અથવા શાંન્તિથી ચારે તરફ જોયા કરવું.

અમા વિના બીજા ઘણા ઉપાયા છે કે જે વડે આપણે અનંત સુખનું સસબીંદુ આખી શકાયે છીએ, સવ્તત્ર પુરૂપાર્થ હેતુ રૂપ છે. નિર્બળ અને પ્રમાદિ માણસા કાંઇ કરી શકતા નથી.

સંતાષવૃતિ એ પણ એક સુખના ઉપાય છે. 'यं प्राप्त संतोष' જે પ્રમાણે આવી મળે તેમાંજ સ્થિરતા રાખવી. આથી આગળ કામ કરતા અટકાતું નથી. કામ છાડી દઇને આળસ ભનવાના હતુ એમાં સમાયેલા નથી.

ખંત, નિતિ અને ડહાપણથી કામ કર્યા જવું. કામ કરવામાં બીલકુલ પ્રમાદ સેવવા નહિ. ફલ શું પ્રાપ્ત થશે, તેની બીલકુલ ચિંતા કરવી નહિ. લગવદ્દગીતામાં એક વાકય છે કે, 'જાર્થાળામધિकારસ્તે માજઝેયુવ' કાર્ય કરે જવામાં જ તારા અધીકાર છે. ફલ પ્રાપ્તિમાં તારા અધીકાર નથી. તાત્પર્ય એ છે કે કામ કરતાં પહેલાં ફલની ચિંતા કરવા નહિ. ચિંતા કરનાર માલુસા હંમેશ કામ કરવામાં પાછાજ પડે છે અને તે કામ તેમને વિડ બણાર્ય થાય છે.

દુનિયાદારીના દરેક વિષય આવી હતિ **રાખવાયી ભાર**રૂપ થતા નથી.

તમે જે ધરમાં રહેા છા, તે ઘર તમારં નથી એ નિ:શ'સય છે ત્યારે પછી મારે છે, મારે છે એવા વિચારોનો બાજો મન ઉપર નાંખવાની શી જરૂર ? 'જે વસ્તુઓ તમે બોગવા છા તેટલી વસ્તુઓ તમારી માલીક'ાનો છે, માટે તેની માલીક'ા સ'ખ'ધી તમારે હવે વિચાર કરવાની જરૂર નથી.' આટલા નિશ્વય તમે જો એક વખન હઢ રીતે કરી લા, તા તમારં અધું દુ:ખ પલાયન કરી જશે.

હવે તમે જે જે કામ કરવાના હાય, અથવા જે જે કામ કરતા હાય, તે તે કામ જે જે સમયે તમે હાથ ઉપર ક્ષા, તેજ વ-ખત તેને માટે વિચાર કરા. અત્ય સમયે તેની છાયા પણ તમારા પગની ઉપર અવવા ન દો. આમ કરવાથો તે કામ જેવી સારી રીતે કરવું હશે તેવું થશે. એમાં બીલકુલ ખામી આવશે નહિ. હરતાં ફરતાં અન્ય કામ કરતી વખતે એ કામ સંખંધીના વિચાર તમને કાંઇ પણ ફલ આપી શકતા નથી, એટલુંજ નહિ પરંતુ તે તમારી શક્તિને ઘટાડે છે.

હૃદયખળવાળા મનુષ્યા સુખી રહે છે. તેઓ મનાયળને છલકઈ જવા દેતા નથી. તેને જેટલું યોગ્ય હાય, એટલુંજ કામ સોંપે છે. એક ઠેકાણ એકદું કરેલું વીજળીક બળ જેમ અનેક મ્હોટાં કામ કરવામાં સહાયભૂત થાય છે; તેમ યાગ્ય રીતે એકદું કરી રાખેલું વિચારબળ (મનાબળ) મહાન કાર્યા કરવામાં સહાયભૂત થાય

હ**દયભળ વધવાની સાથે મનેાભળ** કા**ઝમાં આવે** છે. સ્થિરતા, ડહાપણ, ગાં-ભિર્યતા આદિગુણા હદયભળના છે. ચ'ચળતા, મૂખેતા, સાહસિકતા આદિગુણા મનેાભળના છે.

જે તમારે સંસારમાં વિશ્વાંતિ મેળવવી હોય તો મનાભળને વશ રાખા-હૃદ્ધ-ભળને વધારા. વિચારાના કહેવા પ્રમાણ એકદમ દોડાદોડ કરી ન મુંકા. સાંન્તિથી હિતા-હિતના નિશ્વય કરી આગળ ડગલું ભરા. આમ કરવાથી કેટલાક નકામા બ્રમ તમારે માથથી ઉતરી જશે અને સંસારીક કામ કરવા છતાં પણ તમને સંસારના ભાર નહિ લાગે.

मारा मित्रनी सालग्रेह.

આધુનિક સમયમાં જ્યાં જોઇએ ત્યાં કાંગ્રેસા, કાન્ફરન્સા, ગ્રાતિ સંમેલના, ધર્મ પરિષદા, મેળાવડાએા, રહેલાણીએા માટે મ્યાન્ ઇસક્રીમ પાર્ટીઓ, દી પાર્ટીઓ આદિક મ્યનંત પ્રકારે એક સમુહમાં ભેગા થવાના વા વાઇ રહ્યા છે, તદ્દ ન્યાયે આજ વળી પરમ પ્રિય મિત્ર "ભારત ભક્તની" સાલગ્રેહની આનંદ-મય આમંત્રણ પત્રિકા આવી છે, ખરેખર જવાની તા જરૂર છે, પણ......

આવા આવા તકે વિતર્ક કર્યા આપણા આ સ'વાદના ઉપનાયક 'પ્ર**ભાકર''** વિરામાસન પર પડયે৷ હતા, તેવામાં "ભારત ભક્તની" સાલગ્રેહની ખુશાલી ઇચ્છવા. "કં**દપંહર**" તેના ઘર પ્રતિ પ્રયાણ રહ્યા હતા. રસ્તે જતાં પ્રભાકરની મેડી નજરે પડી. પ્રભાકરના કનિષ્ટ ખંધ રસ્તામાં રમતા હોવાથી તેને અુમ પાડી, શળ્દાે કર્ણગાચર થતા ત્રત પ્રભાકરે વિચાર વમળને અવકાશ આપી કંદર્પહરને મેડીએ બાેલાવવા બારીપર આવ્યાે. કંદર્પહરને મેડીએ બાલાવવા પ્રયત્ન તા આદર્યા, પણ સમય ઘંગા વ્યતીત થઇ ગયેલા હાવાથી પ્રભાકરજ કપડાં પહેરી નીચે ઉતરી આવ્યો. ભારત ભક્તના ઘર પ્રતિ વ્યંનને મિત્રાએ પ્રયા-ણ કર્યું. બન્ને મિત્રા ભારત ભક્તને ચ્માવી પહેાંવ્યા. ભારત ભક્તે યોગ્ય રીતે સ-ન્માન કર્ય'. એટલામાં ખીજા મિત્રગણા પણ ત્યાં આવી પહોંચ્યા. તેઓને પણ સન્માન આપી સ્થળ આદિક નિર્માણ કરી આસના (ખરસી) ગાયવી આપ્યાં.

વાંચકવૃંદાને અત્રે ઘણીજ ખુશાલી પ્રદ-શિંત કરૂં છું કે કેટલાક યુવાન બધુઓ બેગા થઇ, ચાહ, કાંપ્રી, આઇસક્રીમ, આદિક અન્ય કેપ્રી પીઓમાં પેટમાં આવાહન કરી પોતાની શારીરિક, આર્થિક, તેમજ માનસિક સ્થિતિપર જે ગંભીર આધાત કરે છે, તેમાંની આ મંડળી નહોતી પણ અન્ય અન્ય નિમિત્તે એકત્ર થઇ, જ્ઞાતિસેવા, દેશમેવા, જનસેવા, ધર્મ, નિતિ, ઇશ્વરભક્તિ, પરાપકાર વગેરે વગેરે વિષયો પર મહત્વતા ભરેલા વિચારા પરસ્પર દર્શાવતા અને તદનુસાર વર્ત્તા પણ હતા. બેગા થયેલા મિત્રામાંના કેટલા**કામાં જે સ'વાદ** આર'ભાયો હતા, તે સદ્દગુણી **સંવાદ** વાંચકગણ સમક્ષ વિવેરન કરૂં છું;

ઇપ્યોપસાદે, કંદમ હરતા કાટ તરફ વક કૃષ્ટિ ફેંકી અને હાસ્યથી કહ્યું-"કેમ કંદ મહર, તમે પણ **ફેન્સી કપડાં** પહેરતાં શી-ખ્યા કે?"

ઉદ્ધતલાલે તેને અનુમાદન આ-પતાં સ્મિતવદને કહ્યું–"જ્યાં ઇ**ર્વ્યાપ્રસાદના** રંગ લાગે, ત્યાં પછી ફેશનબાઇમાં શું બાકી **રહે**!"

''ના, ભાઈના, તમારી પેઠે મારામાં પાશ્ચાત્ય પ્રજાની રહીઓ પ્રવેશી નથી. કદાચ તમને અમારા કાટ માટે માહ ઉપ્તન્ન થયો હોય, તો અતિ ખુશાલી પ્રદર્શિત કરી કહી શ કે આ કાટ ખાસ સાલાપુરી દેશી ચેક નોજ બનેલા છે." કંદપ હરે પાતાના રૃતુસ બચાવ માટે કહ્યું!

કંદર્પ હવે જ્યારે સ્વદેશી એક છે એમ કહ્યું કે તરતજ નીતિસેન આશ્વર્ય પામ્યા અને અતિ ઉત્કંદિત હૃદયે પુછયું "ભાઇ, તમારા કાટ જરા જોવા આપશા ?"

બાપુ, ઘણી ખુશીથી, લ્યા, એમ કહી તુરત કંપદ હરે કાેડ ઉતારી આપ્યા. કાેડ ઉતારી આપ્યા. કાેડ ઉતારી આપતાં નીતિસેન તથા હૃદયજીત બન્ને મિત્રા તેની બનાવટ, ર'ગ, કુમાસ અને તરાહ જોવામાં લીન થયા, હૃદયજીતના મનમાં કાપ ડની ઉત્તમ કાલેટી જણાતા ઉત્સક હૃદયે પુષ્યયું ભાઇ, આ કપદું ક્યાંથી લાવ્યા!

કંદપ^{*}હરે નમનતાઇથી કહ્યું, મિત્ર એ તે! મારા વ્યાપુછ, "**ભારતસ્ટાર"માંથી ઘહ્યું** ઉત્તમ કાયડજાણી આખો તાકા ખરીદી લાવ્યા છે.

નીતિસેન, નિશ્ચયપૂર્વક અડગમન રાખી બાલ્યા "હું પણ હવે સ્વદેશી એક લઇ આવીશ," ઇવ્ધાપ્ર સાદ પર દ્રષ્ટિ નાંખતા વળી બાલ્યા; "અઢા ! શું એના કુમાસ! રંગ તા જાણે વિલાયતી જે-વાજ છે. આવા ગરમ સરખા સંદર, સારા અને વળી ૮કાઉ કાપડ મુક્કી પરદેશી ક્ષેવું અને દેશદ્રોહી-ધર્મદ્રોહી બનવું, એવું કાંગુ કહ્યું!

હાયજત—"હુ પણ આજ ચેકના ક્રોડ સીવડાવીશ. ઠંડીમાં મ્હારે વિદેશી ગરમ કપડું લેવાના વિચાર હતા, પણ સ્વદેશની અંતરંગ દાઝને લીધે મન ના કહેતું હતું, પણ હવે તા આજ લઇ લઇશ."

પ્રભાકરં—મહારા લઘુ ખન્ધુ, સ્નેહધન માટે નિશાળે પહેરી જવાને મ્હારા બહુજીએ આવીજ જાતનાં ચેકનાં કાટ પાટલુન શીવડાવ્યા છે. તે એક દિવસ કહેતા હતા કે બાહુજ આ કપડું ઘણુંજ ઉત્તમ લાવ્યા છે. ગયે વરસે પેલા વિદેશી ઉલન કાપડના કાટ પાટ-લુન સીવડાવ્યા હતા, પણ તેનાથી ટાઢ નહાતી સમાઈ તેટલી આનાથી સમાય છે, માટે તમે મારૂં કહ્યું માના, તા તમારા બાહુલચંદ્ર વાસ્તે આવા આપણા દેશીજ કાપડના કાટ પાટલુન સીવડાવજો, કારણ કે બાળક વરસના બે ફાંડ, તાપણ ડીકર નહીં. આ પ્રમાણે ફરમાનની છુ-હિથી, ઉદ્ધતલાલને ઉદેશી કહ્યું.

હપલું વાકય કર્ણા દ્વારપર અથડાતાંજ ચટપટીઓ હદ્દતલાલ ખાલી હૃદયો—'' તમે ખધા સ્વદેશી સ્વદેશી કરી રહ્યા છા, તો સ્વદેશીમાં શું આવી પડ્યું છે, અને પરદેશી વસ્તુઓમાં શું ખરાખી છે? એ તા કહા, નાહકના દેશી દેશી કહીને ખુમ પાડી રહ્યા છા?''

ઉદ્ધતલાલના ઉદ્ધતાઇ બરેલા અને દેશની લાગણી વગરના, મુઝવણ પેદા કરે એવા શબ્દોથી તેના ઉપર દયાની લાગણીથી કંદર્પ-હરે મૃદુ સ્વરે સંભાષણ આરંભ્યું.

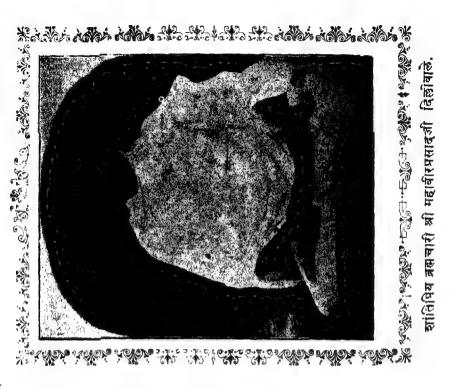
પ્રિય ઉદ્ભત, આપણે સ્વદેશી વસ્તુઓ વાપરીએ તો આપણા દેશનું સર્વ ક્યા આપણાજ દેશમાં રહે. અને તેથી આપણા દેશી બન્ધુઓને અતિ કાયદા થાય, પણ તદ્ ઉપરાંત જો આપણે પત્દેશી ચીજો પ્રહણ કરીએ, તા આપણા દેશની સંપત્તિ પરદેશ લસડાઈ જાય, જેથી આપણા દેશના ભાઇઓને ધંધાવહેપાર વગર રખડવું પડે અને ભુખે રઝળી મરવું પડે, અને તેમ નહિ થવા દેવાને આપણે આપણા દેશની બનેલી વસ્તુઓ વાપરવી જોઈએ.

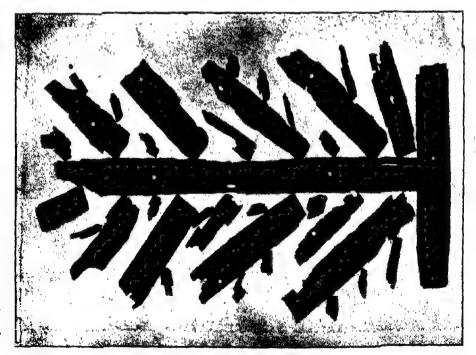
કંદપ હરની વિચાર શ્રેહીને વિશેષ અતુ-માદન આપતા. આપણા આ સંવાદના નાયક ભારતભક્તે વિનયથી સંશાધન કરેલી ખીનાના વાકપ્રદ્વારા કરવા શરૂ કર્યા.

વિચારા કે આપણા જૈન વિભાગની વસ્તી આશરે તેર લક્ષની છે. ધારા કે, દરેક મનુષ્ય એક વર્ષમાં ફક્ત દશ દશ રૂપોઆના વિદેશી વસ્તુઓ વાપરે, તા પણ આપણા દેશના માત્ર જૈન વિભાગમાંથીજ એક કરાડ ત્રીશ લક્ષ કપીઆ વિદેશે ચાલ્યા **જાય અને તેજ પ્રમાણે** વિચારશા તાે સ્પષ્ટ જણાશે કે દરેક વરસે આપણી આવી નાની સંખ્યામાંથી પણ આટલું બધું વિદેશે ચાલ્યું જાય તા આપણે કંગાલ થઈ જઇએ તેમાં શી નવાઈ? હવે વિચાર કરા કે એ એક કરાેડ ત્રીસ લક્ષ રૂપીઆમાંથી કેટલાયધા નવા હુત્રરા થઈ શંક? અને તે હુત્રરાહારા કેટલાબધા લોકોનું પાપણ થઇ શકે ? અને એવાજ કાઇ પ્રકારતી આપણા બધ્યુઓ કેમ સુખા થાય, તેના પુખત વિચાર કરીશું, તા ઉંડા પ્રયાસથી સહજ માલમ પડશે કે આપણે આપણા દેશનીજ ખનેલી વસ્તુઓા વાપરીએ અને ચાલે ત્યાં સુધી પરદેશી વસ્તુ-આત નજ ગૃહણ કરીએ તાજ આપણા દેશ-ળાધ**ો**ની ભવિષ્યમાં શુભ આશા સમાયલી છે.

''ભારત ભક્ત''ના મહા વિલક્ષણ વિ-ચારાચી ક'ધ્યપ્રિસાદ ચક્તિ થક ગયા અને બાહયા ''આહા ! આતે બહુ ખુળીની વાત, આવી બાબતા તા આપણે અવસ્ય કરીને જાણવીજ જોકંએ

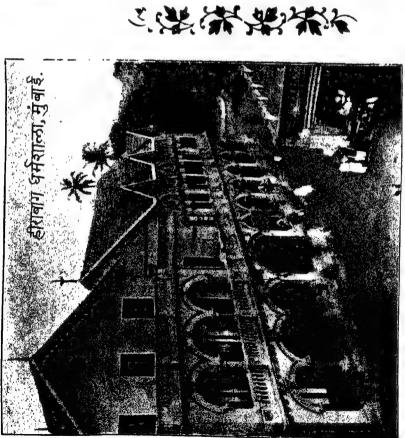
પ્રભાકર—"અરે! તુંતા આટલામાંજ રાજી થઇ ગયા, પણ હજી તા ઘણું જાણવા જેન વું છે. જો સાંભળ, પરદેશી ચીજો વાપરવાથી આપણા ધર્મ ડુબે છે, કારણકે જે ચીજોના આપણે આહાર કરતા નથી. જે ચીજોને





(प्रत्याप ठांक्रमी नर्छ) हिन । त्रम्थह-हिन्नीह देखिए

''दिगंबर जैन"



स्वर्गीय केठ हीराचंद गुमानजाना कुटुंबीओ तरफथी रु. १२५०००।नी जंगी सखायतथी मुंबाईमां बंधायकी सार्वजनिक सुद्योगिन धर्मशाला (हीराबाग)



शाविकाश्रम—मुंबाईना स्थापक अने संचालको-श्रीमती मगनबाई (मुंबाई) श्रीमती केक्रवाई (सोलापुर) अने श्रीमतं} लखिताबाई (अंकलेश्वर)

મ્માપણે સ્પર્શ પણ કરી શકતા નથી અને જે વસ્તુઓને આપણે ઉપયોગમાં કેવા પાપ (દાષ) સમજીએ છીએ તેવી ચીજો પણ વિદેશી ચીજોમાં હોય છે, કારણકે પરદેશી લોકો અને આપણા લોકોના ધર્મ ભિન્ન ભિન્ન વિચારોથી અવલંબી રહ્યા છે, એટલે આપણે જે વસ્તુની સુગ-છીટ છે, તેની એ લોકોને નથી, જેથી ઘણીખરી વિદેશી વસ્તુઓમાં અપવિત્ર ચીજો હોય છે, માટે આપણે આપણા સ્વધર્મના માનને ખાતર પરદેશી વસ્તુઓ વાપરવી ન જોઇએ.'

'ત્યારે એવી એવી વસ્તુએ। કઇ કઇ આવે છે, તે તેા કહેને? ઉદ્ધતલાક્ષે જાણવાની અભિલાયાએ પુછય*.

ભારતભક્ત-"જું એ સાંભળા. એક ते। होते भंजन धसवाना असे। है जैने **રા**થીદાંત-હાડકાંના હાથે. હાય છે[.] બીજી ખાંડ કે જે લાહી અને હાડકાંથી સાફ થાય છે. એ કરા પુરૂષ જાણતા નથી ! છતાં અફીણી બ-નાવનારી ચાહમાં નાંખીને ઉદ્દર સ્થળને અ-પવિત્ર કરે છે. તા પછી એનાથી આપણી ખુદિ ભ્રષ્ટ કેમ નહીં થાય? વિચારા કે આપણા ભારણા આગળ માત્ર એક હાડકું પડ્યું હૈાય, તેા તેને કાઇ અડકશે પણ अने इहाय २५श^९ शायते। तरतक नेदापंकर પડે, તાે આવી વસ્તુઓ જયારે આપણા પેટ-માં હાેમાય, તાે તેનું પરિહામ સુક્ષમ દ્રષ્ટિએ જોઇએ તો કેવું કનિષ્ટ આવે ? ત્રીજું કેશર: કે જે ભુંડ આદિક આસુરી સંપત્તિના—પશુ-योना आंतरडा. तेमक भीळ अपवित्र यीकी-માંથી ખતે છે અથવા સ્પીરીટ (દારૂ) થી રંગ ચઢાવે છે, તે જે આપણા તિર્થ કરા (મૂર્તિઓ) કે જે આપણે ભવાભવના દુ:ખમાંથી છોડવ-નાર છે, તેને ચઢાલીએ છીએ! તે શું પશા જૈન બન્ધુએ જાંગુના નથી ? શું સ્વ-**દેશી પ**વિત્ર કેશર નથી મળતું? પણ

અક્ષ્માેસ કે તેવું છતી આંખે સુઝતું નથી. આવી અનેકા અનેક ભ્રષ્ટ ચીજો આપણે જાણી જોઇને વાપરીએ છીએ,"

ઉદ્ભવલાલ—'શું! આવી અનેકા અનેક અપવિત્ર વસ્તુ વાપરીયે છીએ? સત્ હજાર અક્સોસ! એ તો મેં આજેજ જાણ્યું. ખરૂં છે કે એક તો આપણો ધર્મ ત સંચવાય અને દ્રવ્ય—સંપત્તિ વિદેશે ધસડાઇ જાય, માટે પરદેશી વસ્તુઓ તો નજ વાપરવી જેન્ઇએ!" નિશ્ચયપુર્વક ટેક ધરી ગંભીરતાથી વળી ઉદ્દગાર કાઢયો.

ધર્મ ઘટાયાં ધન ઘટે, ધન ઘટ મન ઘટ જાય; ધન ઘટીયાં મહિમા ઘટે, ઘટત ઘટત ઘટ જાય.

કંદર્પહરે, દેશ વિદેશના ખનાવની સરખામણી કરતા કહ્યું – જુઓ, આપણા દેશનાં અને પરદેશનાં હવાપાણી જુદા જુદા છે. આપણા દેશ ગરમ છે અને પાશ્ચાસ મુલકા ઠંડા છે. આપણા દેશ મહ્યું અને પરંદર્શી પ્રજ્તનું ખાવુ પીવું જુદી જતનું છે, માટે કુદરતી રીતેજ આપણા દેશની ખાવાપીવાની વસ્તુથી આપણને જે કાયદા થાય છે તેવા પરદેશી દવાથી અને પરદેશના ખાવા પીવાની વસ્તુઓથી કાયદા થાય નહીં. કારણ કે હવાપાણી ખદલાયલાજ હાય છે, માટેજ વિદેશથી આવેલી ખાવાપીવાની વસ્તુ તથા દવાઓ ન વાપરવી જોઇએ."

ભારતભક્ત— ' દેશી વસ્તુ ટકાઉ હોય છે, જ્યારે વિદેશીવસ્તુ તકલેદી હોય છે, દેશી વસ્તુ સસ્તી હોય છે, ત્યારે પરદેશી મોંધી હોય છે, દેશી વસ્તુઓ કદી બગડે તોએ સુધારવા આપણી પાસે સાધના હેય છે, પણ પરદેશી વસ્તુ બગડે તો તા-કલિક એ સુધારવાનું મળી શકે નહીં. દેશી વસ્તુઓમાં કાંઈ દેશી હસ્તુો હોય, તો તસ્ત ને તસ્ત ખબર

પડે છે, જ્યારે વિદેશી વસ્તુએાની નાવટ અને પેકીંગ એવા પણ હોય છે કે તેમાં, જે દેશા ફટકા હાય તેની ઘડીકમાં ખબર **પડતી નથી**. દેશી વસ્તુએા આપણા દેશના रीत रीवाल अने शरीरने भार्ड आवे ओवा હાય છે જ્યારે પરદેશી વસ્તુઓ આપણા રીત રીવાજ અને આપણા શરીરને જેવી જોઇએ તેવી માષ્ટ્રક આવી શકતી નથી. દેશી વસ્તુઓ માં કાંઇ કેરફાર હાેય તાે તે વસ્તા શકાય છે, પણ પરદેશી વસ્તુ લીધી હાય, તા ^{*}ન દાદ કે ન કરિયાદ' એમાં કાંઇ થઇ શકતાં **નથી. જેમકે તમે** તમારા ગામના દુધવાળા **પાસે દુધ** લીધું હાેય અને એ દધ[ે] ખરાળ હાેય, તાે તમે તેને ઠેપકા આપી વળી તમારી દળાય, તેથી બીજી વખત નબળું દુધ આપે નહિં, પહ્યુ તમે કાેે કાંગ્લીશ સાપમાંથી વિલાયતી દુધના ડબ્બા લીધા હાય અને તે ડબ્બામાંથી દુધ ખરાબ નીકળે, તો તમે કાને ઠપકા દેશાં? શું આપણા ખાળકા એ દુધ વગર જીવી શકે એમ છેજ નહિ ? તમારી વાત પણ કાહ સાંભળશે ? કદી તમે ફરીથી એ દુકાનેથી માલ ન કરો, પણ એટલા પૈસા નકામાં વિદેશે ગયા **તેતું શું ? એ પૈસા પા**છા હંઈ તમારી પાસે ભાવશે ?

હવે ખીજો દાખલા સાંભળા-તમે તમારા ગામના માત્રી પાસે જોડા શીવડાવ્યા હાય અને એ જોડા જો સારા ન હાય અથવા ઘણા વખત સુધી ન ચાઢા, તા તમા તેને દપંદા આપી શકા, અને તમારી શરમમાં તેને દખાવું જ પડે, પછા તમે માંઘી કીંમતના જર્મની કે રશિયન ક્ષેધરના વિલાયતી છુટ લીધા હાય અને એ છુટ તું ચામહું ખરાવ્ય હાય તેથી તે મહીના પદર દિવસમાં ફાટી જાય, તા તમે કાને દપંદા આપવા જશા ? અને જર્મનીમાં પડેઢા માચા તમારી ફરીયાદ સાંભળવા કયાં આવશે ? એતા દીક,

પણ કોંમતમાં આપણા દેશી છુટા કરતાં ત્રણ ચાર ઘણી કોંમત ખરચવા કરતાં આપણા દેશી ત્રણ ચાર જોડ વાપરીએ એ શું ખાટું ? જયારે જોઇએ, ત્યારે નવા તે નવાજ.

ભૂઓ હવે ત્રીજો દાખલા આ<u>પું છું</u>~ તમે વિલાયતી તેલની પેકખ'ધ શીશી લીધી અને તેમાંથી તેલ ખારૂં નીકળ્યું તા તમે શું કરી શકા ? કહેા કે કંઈજ નહીં. કારણ કે આવી નાની બાબતા સારૂ અતિ દર મુલકા સુધી લડવા કયાં જશા ? એ કાંઇ ખને નહીં, તેથી મનમાં બળી માથુ ખજવાળી મુંગામુંગા એસી રહેા, પણ કાઈ એાલખાણવાળા પા**સેથી** દેશી ખનાવટના તેલની ખાટલી લીધી હાય ને તેમાંથી જો ખારૂં તેલ નીકળે, તેા એ તેલવાળાના કાન પકડી શકાે, અને લાેકાના દેખતાં તેને **ખે**ચ્યાબરૂ કરી શંકા તેથી તમને તે ખરાબ માલ આપી શકે નહીં, પણ એવી ન્હાની બાખતા સાર હજારા ગાઉ દર ખેટલા પરદેશીને શ કરી શકીએ ? માટે આપણે આપણા દેશની વસ્તુઓ લેવી જોઇએ, કારણંક એમાં બે આંખ ની શરમ કામ લાગે છે. અને વળી આપણા દેશના વેપારીએો 'આપણા દેશ પરજ એકેલા હેાવાથી આપણે તે એકાએક નખળા માલ આપી શકશે નહીં, માટે આપણે સાભારતજના એ સ્વદેશી વસ્તુઓજ વાપરવી જોઇએ.

ઈર્ષ્યાપ્રસાદ—પણ જે વસ્તુઓની વ્યા-પણને જરૂર હોય અને તે વસ્તુઓ આપણા દેશમાં ન બનતી હોય, તો આપણે શું કરવુ! તે કાંઇ કહેશા?

ભારતભક્ત—આપણી જીંદગીને ટકાવી રાખવા સારૂ અથવા આપણા દેશના ધંધા રાજગાર ખીલવવા સારૂ જે વસ્તુઓની આ-પણને ખાસ જરૂર હાય તે જો આપણા દેશ-માં ન બનતી હાય તા પરદેશથી આવેલી વસ્તુ-આ વાપરવામાં કાંઈ વાંધા નથી, માટે કરીને જે ચીજો આપણા દેશમાં ન અનતી હાય તેવી ચોજો દેશના ફાયદાને અર્થે પરદેશમાંથી લાવવી પડે, એમાં કાંઇ બાડુ નથી, એટલુંજ નહીં પણ પરદેશી વસ્તુએાથી પાતાના દેશને ફાયદા કરવા એતા બહુજ ખુબીની વાત છે. જુએો પાશ્ચાત્ય પ્રજા ક્રેમ વર્તે છે ?

વિચારા કે એ ક્ષોકા આપણી પાસેથી-અહીંથી રૂપિયાનું ચાર રતલ રૂ લઈ જય છે અને તેમાંથી મલમલ ખનાવીને **એ રતલના** એક તાંકાના ચાર રૂપિયા લે છે. હવે જાઓ કે આ-પણી પાસેથી રૂપિયાનું ચાર રતલ ર લીધું અને એજ રૂમાંથી મલમલ-કાપડ બનાવીને પાધું તે આપણેને રૂપિયાનું અર્ધા રતલ આ-પ્યું એટલે તેમાંથા સાત ઘણા નફા એ લોકા ખાઇ ગયા, આવીજ રીતે એ લોકા રૂપિયાનું છ શેર તેલ લઈ જઈ ને એજ તેલ **બદલીને-સ્વચ્છ કરીને રૂપિયાનું શેર** અથવા એથી પણ માંધું આપે છે, અને તે આપણે રાજી ખુશીથી લઇએ છીએ. આવીજ રીતે આપણા દેશની અનેકાનેક વસ્તુઓ ખહુજ એાછા ભાવે લઇ જાય છે. અને ઘણાજ માંઘા ભા**વે** એજ વસ્તુઓ પાછી આપણે વેચાતી લઇએ તેથી આપણને છાશ મલે છે અને એ ક્ષેકા માખણ ખાઈ જાય છે જેમંક તેઓને ચામડાં દસ ખાર આને રતલ પડે છે અને એમાંથી છુટ બનાવીને દશ બાર રૂપીએ તેજ ચામડાનાં ખુટ પાછા આપણાંજ માથામાં મારે છે. હવે વિચાર કરા કે કયાં દશ ખાર **આને** રતલતું ચામડું અને કર્યા દશ બાર **રૂપીઆની** ખુટની જોડ! આવી રીતે આપણા દેશના માલ લઈ જઈ તેમાંથી માટા નકા મેળવે છે અને આપણા કરમમાં જોડાજ રહી **જાય છે, માટેજ આપણે** સ્વદેશી વસ્તુઓ વા-પરવી જોઇએ."

કષ્યાંપ્રસાદ—"શું એ ક્ષેકા આટકા **મધા તરા** આપટી જાય છે ? અમને તા આ ખધી બાબતાની ખબરજ નથી. અમે ન્હાના છીએ એટલે અમાર ધરમાં ચલણ નથી, પણ જો અમાર કહેલું મનાતું હોય, તા આવી આવી બાબતા જાણ્યા પછી કદી પણ પરદેશી વસ્તુઓ ગ્રહણ કરીયે નહિ." ક્રેમ ઉદ્ધતલાલ ખરં કે ખાટું?

ઉદ્ધતલાલ—''જે ચીજો આપણા દેશ-માં બનતી હોય, તે તે ખાસ કરીને આપણું વાપરવીજ જોઇએ, પણ જે ચીજો આપણું ત્યાં ન બનતી હોય તેનું શું ! જેમક આગ-બાટા, રેલવેના એન્જીના પરદેશથી આવે છે માટે આપણું તેમાં બેસવું કે નહીં ! કપડા સીવવાના, લુગડા વણવાના, અને પુસ્તકા છા-પવાના યંત્રા પરદેશથી આવે છે તે વાપરવા કે નહીં ! જો એ બધું ન વાપરીએ, તા આ-પણા શું હાલ થાય, એ તા જરા વિચારા."

ક દર્પહર—એ વિષે તા મિત્ર "ભારત ભક્તે" કહ્યું કે આપણા ધંધારાજગાંરા ખી-લવવા અથવા આપણી જુંદગી ટકાવી રાખવા સાર જે વસ્તુઓની ખાસ જરૂર દ્વાય તે વસ્તુ-એ પરદેશથી લાવવામાં કાઇ દેશદ્રોહ નથી થતા, પણ એવા વિચારામાં અને એવી હાલ-તમાં સડયા કરવું, તે એક પારકા પગની આશા રાખીજ ઉભા રહેવા જેવું છે. એજ હિન શક્તિ-નાલાયકી છે. એ કંઇ ખુશી થવા જેવું નથી. કહ્યું છે કે પારકી આશ સદા નિરાશ. શું એ ક્ષાેકાને હાથ પગ છે અને આપણને નથી? શું એ લાેકાને બુદ્ધિ છે અને આપણામાં નથી? શું એ ક્ષેષ્ઠિ કાંઇ સ્વર્ગમાંથી ઉતરી આવ્યા છે કે આપણે તેઓના જેવાં કામ ન ક**રી** શકીએ ? જો આપણે મહેનત, ખંત અને દ્રહ નિશ્ચયથી કામ કરીએ, તાે એ ક્ષાેકાના કરતાં એ વિશેષ શાધા કરી શકીયે. જે શક્તિ તેમ નામાં છે તેટલીજ આપણામાં છે. ત્યારે શું ચ્માપણે ન કરી શકીયે? ત્ર**ઠ નિશ્વય શું નથી**

કरी शકता? सा डांઇ डरे छे? भालवाना **દ્રદ્ર નિશ્વયથી** સ્કાટલે ડના એક અનાયાલયના **વિદ્યાર્થી** લાંડ મેયર એક લંડન ખની ગયા હતા તે શું જાણમાં નથી? પણ આપણે એ **લાકાની પે**ઠે **ન**વી શાધા કરતા નથી. અરે, **માપણા કાઇ બન્ધુએ** કંઇ નવા ધંધા ઉપાડ્યા કે બીજા તેમાંજ પડી ધંધા ધુળધાણી કરી નાંખરા એજ આપણી નાલાયકી સાબીત કરે છે. જુઓ કે એકજ બાપના બે દીકરા હોય, **તેમાં ન્હાના બન્ધ મહેનત** કરીને કમાય અને મહાટા ભાઇ આળસ થઇને પોતાના નાન્દાભાઇ ના એઠાં ઢંકડાં ખાયા કરે. એ શું વ્યાજબી કહેવાય? અને એ શંનાલાયકો ન કહેવ ય? **આપણે જો દે**શી વસ્તુઓ વાપરીએ તાે પછી **અનાપ**ણને નવી શાધા કરવાની ખાસ ક્રજ भुड़े अपने जयारे नवी शोधा थाय त्यारे, ओ શાધ કરનારને તથા દેશને ફાયદા થયા વિના રહેજ નહીં, માટે આપણા દેશને સુખી કરવા સાર નવી શાધા કરવી જોઇએ અને નવી શાધા કરવા સારૂજ સ્વદેશી વસ્તુએ। ગ્રહણ કરવી જોઇએ.

ઇપ્યાં પ્રસાદ-" ઓહા! આતા ત્યારે ખહુ શરમની વાત કે પરદેશી વસ્તુઓ વાપર-વામાં આપણી નાલાયકી સમાયેલી છે. હુંતા હવેથી કાર્મ પણ પ્રકારે સ્વદેશી વસ્તુઓજ વાપરીશ!"

પ્રભાકર-(પ્રભા સમા પ્રકાશ પ્રકટાવતો ખેલ્યો), "કાઇ જૈનના ધરમાં હાડકું પડ્યું હાય, તે જાણીને જેવા તેના જીવ કમકમે છે, તે કરતાં પણ પરદેશી વસ્તુઓને મ્હારા ધરમાં જોઇને મ્હારા જીવ વધારે કમકમે છે, કારપાં તે ઘણે લાગે અપવિત્રજ હોય છે અને એ અપવિત્ર વસ્તુઓ વાપરતાનું પરિણામ શું ? "અતે જાષ્ટ અને તતા લાષ્ટ્ર" આપણે પરદેશી વસ્તુઓ વાપરીયે, તે આપણી મૂર્ખ-

તાના એક નમુના છે. આપણે પરદેશી વસ્તુ-એા વાપરીયે, તે આપણી ગરીબાઇને ટકાવી રાખવાની ગેર'ટી છે. આપણે વિ**દેશી વસ્**ત વાપરીયે, તે આપણા ખીજા ભારત બન્ધુએાને ભુખ મારવા જેવું છે. અત્પણ પરદેશી વસ્તુ વાપરીયે તે આપણા બાળકાને ધંધા વિનાનાં રખડાવવા જેવું છે. આપણે પરદેશી વસ્તુ વા-પરીયે તે ચાહીને દરિદ્રતાને સ્મામ'ત્રણ કરવા જેવું છે. આપણે પરદેશી વસ્તુઓ વાપર્યા કરીયે એ એક નાલાયકીનું સર્ટીપ્રીકેટ છે. ધરમાં પરદેશી ચીજો જ્યાંસુધી આપણા વપરાતી હશે, તેમ આપણી જીંદગી એાછી થતી જશે. અને જેમ જેમ આપણા ધરમાં સ્વદેશી વસ્તુઓ આવતી જશે તેમ તેમ આપણી જીદગી, આપહ્યું ધન, અને આપણે ધર્મ વધતા જશે એમ મ્હને તાે લાગે છે. માટે હું કહું છું કે; અાપણે કંઇક દુ:ખ વેઠીને, થાેડા ધણા આપણા સ્વાર્થના બાેગ આપીતે અને શાડું ઘણ તુકશાન ખમીને પણ આપણે પરદેશી વસ્તુઓ ત્યજી દેવી જોઇએ. અતે હાંશથી સ્વદેશીવસ્તુઓ વાપરવી જોઇએ."

ઉદ્ધતલાલ—''આ વાતો તો ખરેખર મનન કરવા યાગ્ય છે. જો આપણે આપણા દેશની બનેલી ચીજો ન વાપરીયે તા આપણા ''ભારત સંતાનો''ને ભુખે મરવું પડે, અને આખરે દુકાળીઆની માફક રખડવું પડે, અને આખરે મેતને સ્વાધીન થવું પડે એમાં શું સંદેહ ?

ભારત ભકત— તમારા જેવા બધા સમ જતા જશે ત્યારેજ આ આર્ય વર્ણના ભાર-તના અને તમારી જન્મદાત્રી માતાના ઉત્કૃ ષ્ઠ થશે! આપણા દેશનાં ભલાને ખાતર આ પણું જ્યારે વિદેશી બારીક, સફાઇદાર કાપડને બદલે ઓછા કુમાસવાળા અરે એથી પણું જા ડું અને થાડી સફાઇલાળું કાપડ ન વાપરીશું તા. આપણું તેમજ આપણી રાંડીરાંડ બ્હેના અને ભાઇઓનું ભલું કેમ થશે ? કે જે લા-ખા રૂપિયા મીઢામાં નાંખી એઠા છે. શું ગાંડા <mark>ધેલા પુત્રને મા</mark>ળાપ, નહી સંઘરે [?] શુ* જાડા ક્રપડા પહેરીશ' તો આપણું શરીર છોલાઈ જ-શ ? વિદેશી વસ્તુઓ કરતાં દેશી વસ્તુઓ જ-રાક માંઘી હાય. તેથી થાડા પૈસાના લાભે જે-એ સ્વદેશી વસ્તુએ નધી વાપરતા તેએ પોન્ તાના જોતિ બન્ધુઓ અને સ્વદેશને ખાતર લક્ષ્મીના માટા ભાગા કેમ આપી શકશે ? પરદેશી વસ્તુઓ જેવી, સ્વદેશી સુંદર હોતી નથી એમ કહીતે. બહારના ૩૫ને માહીને જે-એ વાપર છે તેએ પરમકપાળ પરમાત્માના માં આગળ સુંદર કેમ લાગશે ? પરદેશી વ-સ્તરોના પાતાનાં ધર પાસે મળે છે અને સ્વ દેશી વસ્તુઓ જરા દૂર મળે છે, તેથી જે પરદેશી વાપરે છે તે દેશના ભલાને ખાતર પરદેશમાં કેમ જઇ શકશે ? સ્વદેશી વસ્તુંએ। ક્યાં મળે છે? તે અમને ખબર નથી એમ કહી વાપ રે છે તે દેશનાં ભલાંને ખાતર એટલી ખબર પણ જ્યારે તમે ન મેળવી ન શકા ત્યારે આપણા દેશને કાયદા કરી શકાય એવી કઠ્ણ બાબતા તમે કેમ જાણી શકશો ? તેમજ પાતાના દેશ-ના અને પાતાના કલ્યાઅની બાબતમાં જેઓ **ચ્યાટલા બધા ઢીલા પાયા હાે**ય તે માણસાે શું કામના ? એટલુંજ નહીં પણ દેશના કલ્યા-**શની** બાયતમાં આવી જાતની બેદરકારી રા-ખવી એ મહા પાપ છે, કારણ કે દેશનાં **કલ્યાહામાંજ પાતાના ભાગ ન** રાખે એ કરતાં વધારે સ્વદેશદ્રાહી ખીજો કાેે શ અને પાત નાં કરાેડા ભાઈબ ધાેના ભલાના ખાતર એદરકાર રહે એ કરતાં વધારે પાપી કાેેે હાેઇ શકે ? માટે સહાદર બન્ધુએ તમારાથી જરાક પણ આપણા દેશનું, આપણી ત્રાતિનું અશુભ ન **શ**ઈ જાય એ બહુજ સંભાળનો, અને જેમ

ખતે તેમ દેશનું અને દ્યાતિનું ભલું કરવામાં તમારા ભાગ રહે તેમ કરજે. દેશનાં અને દ્યતિના ભલાને ખાતર ખીજાં માટાં કામાં ન ખતી શકે તા સાથી સહેલાઇમાં ખની શકે તે સ્વદેશી વસ્તુઓ વાપરવાની જરૂર મહેરખાની કરજો. એનું નામ પણ, સ્વદેશ સેવા, સ્વધર્મ અને સ્વપ્રેમ છે અને એમાંજ પરમકૃપાળુ, સચરાચર, નિર્ધનનો નાથ કશ્વર, રાજી થશી! માટે હવે મારા આર્ય મિત્રગણા અને દ્યાતિ-ખન્ધુઓ 'સ્વદેશી વસ્તુઓ વાપરવાની કંઇક પ્રતિના કરા.'

આ સંવાદમાં ભારતભકતે; ધ્રણાંજ ઉત્તમ પ્રકારે ઉદ્ધતલાલ અને ઇપ્યાંપ્રસાદની શંકાઓના પરિહાર કર્યા અને અંતે સા સં- બંધીજનાએ એક વિચાર શ્રેણીપર અવલંખી રહેવા નિશ્ચય કર્યા અને ત્યારપછી, પ્રાન ગુલાય આદિક વિસર્જન સમયે થતા સન્માના- દિ કાર્યની આહતી આપી. પધારેલા સધળા મિત્રાએ " ભારતભકતની" સાલગ્રહની મહાન ખુશાલી ઇચ્છી, તેના દિધાંયુષ તથા નુતન વર્ષમાં ઉચ્ચ આકાંક્ષાએ આફઢ થવા ઇશ્વર પ્રતિ પ્રાર્થના કરી સર્વ જનાએ સુખરૂપ પાત પાતાને સ્થળે પ્રયાણ કર્યું. (શરેયા-સુરત.)

સામેશ્વર હરસ નીવારણ તેલ.

જો તમાને હરસ થયા હોય તા જલદી આ તેલ મ'ગાવા કારણ કે આ તેલ હરસ ઉપર લગાડવાથી હરસને ક્ષારની પેંદે પાડી નાખે છે. કી. રૂ. ર

સામેશ્વર હરસ નીવારણ ગુટીકા.

ગમે તેવા હરસ આ ગાળીઓ ખાધાથી તરત આરામ થાય છે આ ગાળીઓ સામશ્વર હરસનીવારણ તેલ સાથે વાપરવાથી ધણોજ પ્રાયદા કરે છે કી. રા

દરેક શહેરમાં એજ ટા જોઇએ છે.

સોમેશ્વર ઐાષધાલય રામળાગ ગાહી ખાતા. હસનઅલી સ્દ્રીટ કરાંચી.

→>-बाळलग्ननी बळतरानो चितार.-<

(શ્ચનાર-શા હાથીચ'દ માણેકચ'દ-સાનાસણ)

(રાગ. લાવણી)

શા થયા જ્ઞાતિના હાલ, ગયાં ધનમાલ, બાળ લગ્નેથી; અતે ! અતે ! ખરેખર ખ્વાર, ક્રેાડ વિધ્નેથી; બહુ પરણુ નાનાં બાળ, પડે બહુ કાળ, ચડડ ચિત્ત દાકે, ઉઠા ઉઠા હીંદના વીર, સુધારા કાજે; ઝડ કસો કમર મુજ બાન, સુણા મુજ વાત, હીંદની હાનિ, આ ખાળ લગ્ન વિપરીત, વાત નથી છાની:

સહુ કરાેસતત ઉદ્યાંગ! મળિયા આજે શુભ યાેગ!! નાહક શાને દ્યાં ભાેગ !!! બહુવધી જાય છે રાેગ !!! શા થયા, ૧ લુંટિ જાય નુરને શર, હીંમત નહિં ઉર, ટકા ત્રણુ મૂલે, ખપી જાય થાય ઉત્પાત, કરજમાં ડ્લે; ગજ અસ, અજા, ગાે, ભેંસ, પ્રજા શુભ વેશ, બનવા કાજે. પશુ પ્રજા સુધારા માટ, વાત છે આજે; પશુ મનુષ્ય પ્રજાતા વંશ, રહે નહિં અંશ, લાજ નથી એથી, તન સુખી હાેય સુખ સર્વ, સુણા એ કહેતી;

ખાળ લગ્ને ભાગિયા ચર્લું !નિર્દા સુદ્ધે શેઠીઓ કર્લું!!
તો થશે છેવટે મર્લ્યું!! નથી નથી રાજ્યનું શર્લ્યું!! શા થયા.
શું પરણે નાનાં ખાળ, ખગાડે તાલ, માલ વિલ્યુ મરદા.
હા ! નર શર ગુલ્યુ જ્ઞાન, બાળિદ બિરદા;
શું જાય દેશ દુર વાટ, હુન્નર ધન માટ, અંગખળ હીલ્યુા.
ખની જાય બાયલા બાળું, પ્રેમરસ પીલ્યુા;
જયાં વરસ સાળના આપ, થાય સુત બાપ, પડે બધનમાં.
શું કરે દેશ ઉધ્ધાર, ખપે ઇધનમાં;

વધી ગયાં વેરને ઝેર! શું થાય લક્ષ્મીની ક્હેરા! કાંઈ કર્યો કર્જોડે કેર!!! શું હશે પૂર્વનાં વેર!!! શા થયા. ક હા! જાય નિશાળ બાળ, શિખે શું કપાળ, સીક થઈ આવે. નથી ભણાવવા એ ભાઈ, તપે તનુ તાવે; શ્રી હતી ભારતની રીત, ગવાયે ગીત, પુરાણે આજે. થઇ ગયું સહુ વિપરીત ચડડ ચિત દાઝે; જવ અષ્ટ વર્ષના ભાળ, ભણે નિરધાર, ગુરૂ ગૃહ જઇને. શીખી કાવ્ય શાસ્ત્ર ને ન્યાય રહે દીલ દઇને;

શા થયા વામણા વેશ! શું જાય દેશ વિદેશ!! લા થયા. ૪ ભણતર ભૂલે ભણી એશ!! શું કરે બાપડા અહેંશ!!! શા થયા. ૪ મહા! વીશ વર્ષ પ્રદાચર્ય, પાળી નરવર્ય, મુદ્ધિબળ ધરતા, પછી જઇ સ્વયંવર માટ, સુંદરી વરતા; પછી જઇ દેશ પરદેશ, પોંચતા પ્હેશ, હુન્નરા ભણતા; હા! પુત્ર તેમના આજ, મક્ષિકા ગણતા; સતી સોળ વરસની થાય, પતિ ગૃહ જાય, પતિવત લેતી. સેવંતિ સ્વામિનાં ચર્હ્યુ, શીશુ સુખ દેતી;

મળે નહિ આજ કા જોડ! બન્નેમાં બહુ બહુ ખાડ!! ગાયે અબળા ગીત ભાંડ!!! રહે નીત્ત વીનાની રાંડ!!!! શા થયા. પ શું પઠન કરાવે પુત્ર, નીતિનાં સૂત્ર, ધર્મ સિદ્ધાંતા, કંધ જુઓ પુરાણે આજ, રહી છે વાતા; હા! પરણી બાળા આજ, કરે ગૃહ રાજ, વરસ દશ વ્હાહ્યે. કરીને ઘુંઘટ ઘરમાંય, ઠેમકતી ચાઢો; જ્યાં થાય બાર કે તેર, મચાવે લ્હેર, પુત્ર સુખ આપે.

વધી જાય વ્યાધિ ભરપુર! નથી નથી મૃત્યુ કંઇ દૂર!!

હા! ગડ ગ્રુમડ અતિસાર, પિડાયે પાપે,

નથી નથી અરે! શું ઉર!!! કાં ક્રેરા ફેલ ચક્ચુર!!!! શા થયા. ૬ કિંદ બચે બને બળદીણ, તનુ બહુ ક્ષીણ, રધિર તિણ ફિક્કા. હા ! ખીસકાલીને ખ્યાલ, રમતમાં કીકા; હા ! થયા કીકાના બાળ, ઉંઠ ઉર જ્વાળ, કાળ જટ ઝડપે. પછી થાય નષ્ટ કુળ વંશ, પાપ જયાં પડખે; શી રસમ પડી છે આજ, લઘુ વયમાંજ, બાળ નહિં પરણે. કુળવંત અને ધનવંત, ઝડપ ઝડ પરેણે;

તો જાય લાજ નિજ આજે! કરવાને પારણે કાજે!! થયે વાર દિલ બહુ દાઝે!!! નથી કરતા કાઇ લાજ!!!! શા થયા. ૭ જો દીકા પારણે થાય, એહ વખણાય, જરા સુખ લેવા. નહિં જાએ કર્મ વિપરીત, ભૂતના જેવા; હા! હતા ધીર બહાદુર, મહા રહ્યુશ્રર, જગત્ત્ જશ લેતા; હા! બાળ લગ્નના બાળ, બીલિથી ડરતા; હા! ધરિ ધૈર્ય બહુ હામ, કરી બહુ કામ, જગે જશ લેતા. આ બાળલમ તન તેહ, બાઈ થઈ બેઠા;

કાઈ ચક્ષુ ઉધાડા ભાઇ! ત્રાતિ કહેશે ધન્ય ભાઇ!! શું રહેશે પ્રત પાઇ!!! મુજ શ્રીમંત શાણા ભાઇ!!!! છે અગ્નેસરાતું કામ, થશે જગ નામ, શત્રુ પણ રીઝે. તન મન ધનથી ઉપાય, દિલ જો દીજે; વટ મુકીને દા દાટ, જણાવા વાટ, ખાટ કાં ખાઓ. પર અક્કલમાં અંજોઈ, મૂર્ખા મત થાઓ; પડી બાળ લગ્નની રીત, સમય વિપરીત હતા તે વારે. છે શાંતિ! શાંતિ! સર્વત્ર, અરે અત્યારે;

ભહુશે જેથી બહુ ભાળ! થશે દૃર અભહુતું આળ!! છે ખુબ મજાતા કાળ !!! ભાવે ત્યાતે સંભાળ!!!! શા થયા. ૯ મળી કમર કસા મુજ ભાત, સઉ સંધાત, ઘેર ઘેર જખ્યે. '' હાથીચંદ્ર'' સુધારા કરી, નિરાંતે રહીયે.

∜ सद्भक्ति. ४

(રચનાર-જીવાભાઈ પદમશી ગાંધી-ખેરાળ.)

સાચી ભક્તિ છે શ્રેયકાર, માટે આરાધા નરનાર, **ય્યનવી સાથી** દુર્લભ ધાર, સેવે તે નર ઉત્તરે પાર. (57) સાર્યા ભાકત વીરલા શાધે. ખીજાને નહિ જડતી. કદી જહે તા ટકે નહિ પણ, ખરેખરી બહુ નડતી. સાચી. ગણી માળાને કરી તીલક બહુ, બના ન ભકતા સાચા, રામ નામ તા શક પઢે છે, પણ તે મંત્રા કાચા. સાચી. કર ગણે માળા મન કરે ચાળા,કેમ હોય આત્મ ઉજમાળા. કાણ કાણ શાધી શહ્ કરે જળ, સ્કટી કમણી સાંભાત્યા. સાચી. મન કલુષિત ત્યાં મુક્તિ ન દીકી સર્વે શાસ્ત્રા કહે ગાજ, પણ નિર્મળતાથી પંકાએ, પંહિત પુરાણી કાજી. સાચી. શાધી બાંધે તત્વતર્ત સા, પણ હાથ નહિ આવે, સફ્રગુર સેવા સાચી કરતાં, વીરલા જન કાઇ પાવે. સાચી. જબ પાયા તખ ધ્યાન ધ્રવશ, અન્ય વાત નહિ ભાવે. બાલા ઉપાધિ સધળી બળતાં, અંતર શત્રુ નહિ કાવે. સાચી. સુરતા સાંધે નરપેરે જ્યમ, મચ્છી ઈઠાં સેવે. દેહ દેવળમાં નાથ નિરંજન, અક્ષય આનંદ લેવે. સાચી. ભાગવિલાસ સાૈ બ્રષ્ટ ગણે છે, માેહ માયાને મમતા. सायी अिंदित के नर शाधे तेने ते निह गमता. સાચી.

સાચી બક્તિ કલ્યાસુકારી અવિચળ સુખડાં આપે,	
દેદ્વદમનને ઇચ્છારાધન કર્મા નિશદીન કાપે.	સાચી.
પાત્ર બનવા કહેા સુવર્ણ તપે કેટલીવાર,	
ભલે ટીપાઇ અને તણાઇ ઉત્તમ બને અપા ર.	સાચી.
સાચી ભક્તિ શાેધા શુરા છે સાચામાં સાર,	
શુદ્ધ વૃત્તિએ મન વશ કરતાં ઇચ્છ <mark>ેા સર્વે યાર.</mark>	સાચી.
સુખનું મૃળ તાે દુઃખ રહ્યું છે સુખે સુખનાે નાશ,	
અવિચળ મૂકી ક્ષ િ શુક ઈચ્છાે તેમાં બહુ માહ પાસ.	સાચી.
કાહિતુર શાબે છત્રપતિને નથી અવરતું કામ,	
ભાગી ભ્રમર નિશદીન શાધે વાસી છાંડ તમામ.	સાચી.
રત્ન પરીક્ષક ખરે ઝવેરી નહિ અન્યને ભાન,	
મહામણી કે અમુલ્ય હીરા સમજે શું નાદાન.	સાચી.
કહેણી રહેણી એક સરીખી તે જન જગમાં ડાલા,	
બા કીના ફોનાેગ્રાફ જેવા <mark>ભલે માન</mark> બહુ પાયા.	સાચી.
ઝીણી નજરે ઝાંખી દીસે જ્ઞાને તેજ અપાર,	0
ત્રીભુવનમાં તારણહારી ખરી તે જગદાધાર.	સાચી.
ખરેખરા ઉપાસક તેના જડવા બહુ મુશ્કેલ,	સાચી.
દ'બી ભક્તાે દાસે અધિક બહુ વિના ગર્વ ગળેલ. કર્માેદયથી જ્ઞાન સર્યપર વાદળ જાય છવાઇ,	ત્સાવા.
કમાદયવા સાત સૂલપર પાકળ જાય છવાછ, નિરાશ ન થાશા તેથી વીરા નથી અવિચળ કાંઇ.	સાચી.
વાદળ નક્કી વિખરાઇ જાતાં પડે પ્રતિખીંબ સાચા,	ત્તાના.
સંસારમાં રહી બની વિરકત અહૈત ભક્તિ રાચા.	સાચી.
ઉત્તમ ભાવે ભાવના ભાવી ધરા દરીનું ધ્યાન,	
નિજ સ્વરૂપમાં વર્તે નિશદીન દેહ છતાં નિર્વાણ.	સાચી.
દ્વીકર જોડી શીશ નમાવી માગા પ્રભુની પાસ.	
કંચનમણી સમ સદ્યુરૂ મળજો કરા સફળ મુજ આશ.	સાચી.
વીત–રાગ માર્ગ વીરના સાચા શ્રેય અને શ્રીકાર,	
છવણલાલ કહે જે જન સેવે તે ઉતરે ભવપાર.	સાચી.

🗫 सामायिक पाठ (विधि, अर्थ अने आलोचना पाठ सहित) 🚜

દરેક શ્રાવકને દરરોજ સામાયિક કરવા માટે અતિ ઉપયોગી આ પુસ્તકમાં શ્રી અમિત-ગતિ આચાર્યકૃત સંસ્કૃત સામાયિક પાઠ, વિધિ, ગુજરાતી અર્થ, આક્ષાચના પાઠ અને ભાષા સામાયિક પાઠ આ ચારે વ્યાવતોના સંગ્રહ કરેલા છે. ઉત્તમ છપાઇ, સુરાભિત પુઠું અને કિંમત માત્ર દાેઢ આના. સામટી લેનારને ૧૦૦ પ્રતના રૂ. ૬).

મેનેજર, દિગ ખર જૈન પુસ્તકાલય—સુરત.

कर्मवीरान् प्रति निवेदनम्।

अपि द्यितवन्धवः!

एकदा यो मनुष्यो यस्मात् कार्यात् परांजयते यस्य कार्यस्य दुःसाध्यता माक-रूय्य चित्रीयते वा, अन्यदा स एव मनुष्य-स्तदेव कार्य कर्तुमुत्सहतेऽनुरज्यतिच, यथा-ऽऽपादचूडं तस्यैव कारणान्यनुसंद्धानः सुलकरकार्यान्तरेषु विस्मृत्यापि निक्षिपति । यः खळ शिशुर्विविक्तदेशप्रया-णवर्णनमप्याकर्ण्य भयसंपिडिताको भवति कस्यापि रहसि कृतवसतेः पुरुषस्य नामश्रव-णेनापि विस्मयते स एव गच्छति काले छात्रो भूत्वा पाठमनननिदिध्यासनयोः, म्रन्थकृद्भूत्वा मन्थमन्थनवेलायां योगीभूत्वा ध्यानधारणा समाधिषु, परै:समागमं किं तेषां वैसरी (शब्द) मपि श्रोतुं न सहते। एवं यः शैशवे चित्रमार्जाराद बिभेति स एव यौवने सिंहमपि वशीकर्तुमुत्सहते, रणरक्ते सुभटस-हस्रमि भीषयितुं घटते। अनया पृवोक्तिन-दर्शनमुद्रया एतत् किल निर्विवादपायं यद यानि कार्याण्येकदा भीषणानि चित्रकराणिच प्रतिमान्ति तान्येवान्यदा उत्साहवर्धनानि सकराणि च दृश्यन्ते। सत्येवम् येषां महाश-यानां हृदयसरस्यु देशस्य समाजस्योपकर्तुं हालसालहर्य उत्थायमुत्थायं समाजसाध्व-सवातात् दुर्मुखदुर्वचनवाणवृष्ट्या कारणान्तरे-णवा तत्क्षणमेव बिलीयन्ते तथा येषां मनोम-न्दिरामिच्छा प्रतिघातिनीचिन्ता सन्ततिर्द-

न्द्द्यते तेषामिच्छाप्रतिघातको हृदयदाहः प्रियकरो वा वीरवृत्तिमास्थाय भयानि कौलीनानि निःसहायकादीनिच प्रत्यूहकराणि सुद्रमुत्क्षिप्य समन्तभद्राकलक्कदेवराणाप्रतापादिभिः सुगृहीतनामधेयैवीरपुरुषैः अनुसतं पन्थानमाश्रित्य उदारस्य चेतश्चन्द्रमसोमरीचिनिचयैठोंकाल्हादना वा प्रियकरीति त एव जानन्तु अयि प्रियाः परोपकारपरायणाः सुहृदः!

निश्चीयताम् अपयशसो गर्भादेवयश उत्पद्यते अन्धकारोदयादेव भानुमानुदयसा-नुमश्नुते विषधरफणामण्डलादेव विषहरो मणिर्जन्म गृह्णाति अपयशसो मा भेष्ट पापं विहायान्यस्मान्मा विभीतयेऽद्ययुष्मान् द्विपन्ति तेश्वःस्वयमेवयुष्मासु स्नेहिष्यन्ति। ये पन्थानः साम्प्रतं कण्टकाकीर्णास्ते हि परस्तात् निष्कण्टकपुष्पवाटिकात्मनापरिणं-स्यन्ते कीर्तये गृहीत पाथेया मा भवत! केवलं कीर्तिकरकृत्येषु सर्वतो सुखी श्रद्धा धार्यताम् आनुषाक्रिकफलं कीर्तिः स्वयमेव प्रसरिष्य-ति तस्यै तवावदातकृत्यान्येवालं भविष्यंति।

समन्तभद्रादिभिगोंपयितुमिष्टापि कीर्तिः किं तैगोंपयितुमशक्यतः तेषां तानि परोपक-राणि कार्याण्येव कीर्ति नापाह्नवत उदरपु-रणमेव स्वार्थं मा कलयध्वम् ।

स्वकुटुम्बमेव कुटुम्बकं मा जानीथ स्वजातिमेवजातिं मा कथयत स्वदेशमेबदेशं माभिमन्यध्वम् प्रदर्शयत हृद्यवदान्यताम् सुदुरमुत्शिप्यत रुज्जावज्जातिप्रयताम् चेतःस- श्रीर्णताम् " आत्मवत्सर्वभूतानि " इत्येष तात्विकः कर्भवीराणां सिद्धान्तः।

हा हन्त । युष्मदनुद्योगेनैव परःशताः प्राणान् परित्यजनित सहस्राणि परिदीव्यन्ति [आकुली भवन्ति, ज्यथया क्षभ्यान्ति] उत्तिष्ठत! जाग्रत!! अवतीर्थ कार्यक्षेत्रम् एतेषां विहस्तानां दुःखिनां धैर्यमवस्थापयत ! एते युष्माकभेव आतरो ये खळ विहाय धर्भक-र्भणी इमां शोचनीयां दशामुपगताः । इतर-थासमयानुकूलता करगताऽपिदूरं गभिष्येति ध्यानकलया मुनिभिरिव युप्माभिरुपांशुप्रयस्य उपार्जितस्य, जानामतरसस्य न यूयभेवनि-रतिशयानन्दमनुभविष्यथ नवान्यएवजगति जीवास्तस्य महिमानं परिचेप्यन्ति तस्या-भूतपूर्वस्यकस्यापि वस्तुरत्नस्य [येन जगतः कल्याणं शरीरवृत्तिश्च भावेतुमहीते] सार्थ-कता आचार्यादिपदवी लाभेन बी. ए; एम. ए. आदिपदग्रहणाग्रहेण राजकीयः सेवकः पाड्विवाको वा भूत्वा शतं शते शतानि वा प्रतिमासं मुद्राणां लब्धा परिसमाप्स्यति परोपकारलालसा इदयप्वेव जलबुद्धदाविलायं विलास्यते यूयम्पि नंक्ष्यत इमेऽपिश्रंसिप्यन्ते।

नन्दकिशोर अधिष्ठाता—स्याद्वादमहाविद्यालय,—काशी



भिय महाशयो ! हम अपनी बर्तमान अवनितपर ध्यान देते हैं और उसका गहरा कारण सोचते हैं तो हमको माछम होता है की हमारी अवनातिका मुख्य कारण हम लोगोंकी अनेकता है; क्योंकि उन्नतिका जो कोई काम हम करते हैं वह विना एकताके सम्पादन नहीं होसकता। वस यही हमारा कोई काम सुष्टुरीत्या पूर्ण न होना हमारी अवनाति होनेका मुख्य कारण है और जो कार्य एकता के द्वारा किया जाताहै वह शींवही सुष्टुरीत्या पूर्ण होजाता है।

यह बात अच्छीतरह अनुभव कीहुई, सुनी हुई, और देखी हुई है कि बदि हम किसीभी छोटेसे छोटे या बड़ेसे बड़े कार्य-को करते हैं, तो बिना एकताके वह कार्य कदापि नहीं होसकता, यहां तक किहमारी एक सुई की आवश्यकताभी विना एकता के पूरी नहीं होसकती. इससे किद्ध हुवा कि हमारी अवनित अनेकता के कारण है और यदि हम अपनी उन्नति करना चाहें तो एकताको धारण करें।

यह वात निर्विवाद सिद्ध है कि
जितनी ज्यादा एकता होगी उतनेही
ज्यादा सुख की प्राप्ति होगी—बदि एक
घरमें एकता है तो वह घर बहुतही सुख
और शान्तितासे काल व्यतीत कर सकता
है—यदि एक शहरमें एकता है तो वह
साराही शहर सुखी रह सकता है—यदि
एक देश या एक पान्तमें एकता है तो
वह सर्व पान्तही सुखी है—यदि सर्व देशोंमें
एकता है तो सर्व देशोंमें किसीको दुःख
नहीं प्राप्त हो सकता. कहनेका मतलव

बह है कि जितनी ज्यादा एकता उतनाही ज्यादा सुख और इसके विपरीत जितनी ज्यादा अनेकता उतनाही ज्यादा दुःख.

अब बिचारनेका समय है कि एक मनुष्य जिस गांवमें रहता है वहीं एकता कर सकता है. यदि वह सारे संसारमें एकता करना चाहें तो, किस मकार करें और सारे ही संसारके मनुष्य सर्व मनुष्यों से एकता करना चाहें तो किस प्रकार करें? वो उन सबका कर्तव्य होगा कि कोई ऐसा स्थान नियत करें, कि जिस स्थान पर सर्व मनुष्य एकतित हों और वहां एकत्र होकर जो कोई सर्वोपयोगी कार्य करना हो सो करें. वस, यही उन लोगोंकी एकता है और उस एकतासे किसीभी सिद्ध हुए कार्यको पञ्चायत या सभा या सुसाइटी या कमैटी या कौंसिल के द्वारा सिद्ध हुवा कार्य कहते हैं.

महाशयो ! इस मकार बहु सम्मितिरें किया हुवा कोई भी कार्य अनिष्ट नहीं होता; बिक उस कार्यसे देशको व समाजको बहुतही फायदा होता है. लेकिन इस प्रथाको अब भारतसे उठ जानेके कारण हम लोगों को जो दुःल हो रहा है और आगेको होगा, उसका स्मरण करनेसे असहा दुःल उत्पन्न होता है. इस लिये हे प्यारे माइयों! अब सोनेका समय नहीं है! उठो, जागो, निदाको तजो, कमरको बांघो और देलो यह अनेकता हमारे धन व धर्मको छटे लेती है और बोड़े ही कालमें हमको राजासे रंक किये हेती है! इस लिये इस दुःलदायिनी

अनेकताको पञ्चायतोंके द्वारा काला मुंह करके निकाल दो.

सज्जनों! हम अपनी पूर्वकालीन पश्चाय-तोंकी तरफ ध्यान देते हैं तो हमारा हृदय-कमल प्रकुक्षित होजाता है. देखिये ! हमारेमें यदि किसी प्रकारका झगडा होजाता था, तो वह उन पवित्र पञ्चायतों द्वारा विना किसी मानसिक और आर्थिक तकलीफके सहजहीमें दघका दघ और पानीका पानी माफिक निवटेरा (न्याय) हो जाता था; परन्त आज हम देखते हैं कि-यदि हमारेमें जरासाभी कोई झगडा होजाता है तो उसको अदालतके द्वारा तय कराते हैं और अपील दर अपील करते हुवे बीसों कोटोंमें उस मामलेकी छान बीन कराते हुवे धन और धर्मको खो बैठते हैं. जिन लोगोंका स्पर्श होनेसे स्नानके बिना शुद्धि नहीं होती, उन्हीं लोगोंके अदालतोंमें जाकर इम पैर पूजते हैं और उनकी हजार फटकारें खाते हवे भी हमको शर्म नहीं आती है! बल्कि उन फटकारों के बदले हजारों रूपयोंसे उनकी हाथ जोड़कर आरती करते हैं. और यह नहीं विचारते कि हाय ! हमारी कमाईका धन कैसे अनर्थकारी कार्योंमें लगता है.

शोक! शोक!! महा शोक!!!

महाशयो ! लोकमें एक कहावत है कि 'जब अपना रुपया खोटा है तो पर-खनेबाकेको क्या दोष दिया जाय" यह कहावत हमारे ऊपर अक्षरशः चरितार्थ होती है, यानी दुःखके पानेमें हमही अपने आपका कारण हैं. हमहीने अपने पैरोंमें कुल्हाड़ी मारी है. क्योंकि यदि हम उन सर्वसुखदायिनी पश्चायतों को तिलाञ्जुलिन देते, तो यह हमारी दुर्दशा कदापि न होती.

अय देशकी दशापर आंसु बहाने-वालों! अवभी कुछ नहीं विगड़ा है. "विति ताहि विसार दें, आगेकी सुधि छेहु" इस लोकोक्ति के अनुसार यदि आ-पको पूर्वकालकी मांति उन्नति करना है, तो कार्यक्षेत्रमें आइये, और गांव गांव में पंचायत कायम कीजिये! फिर देखिये कि-उन पंचायतों से क्या क्या फायदे होते हैं! जिस प्रकार आपके पूर्वज़ लोग एकतित होकर एक द्सरे के साथ एकता और सहानुभूतिका बर्ताव कर उन्नति के शिखर पर विराजमान थे, उसी प्रकार आपलेगिभी अपने देश और जाति और कुटुम्बकी उ-नति कीजिये!

देखिये! पूर्वकालमें रेल आदि साधनों के न होनेसे अनेक कप्टोंका सामना करके भी आपके पूर्वज अपने कर्तव्यसे नहीं हटते थे. इसी लिये उनका प्रभाव सर्वत्र फैल रहा था. क्या यह थोड़ीसी बात है कि उस समय एक नगरसे दूसरे नगरको जानेमें महीनोंका समय लगता था और वही व्यवस्था पत्रोंके जानेमें भी थी; तथापि वे लोग अपने उद्देश्यको पूराही करते थे, इसका यही कारण था कि—वे लोग अपने वचन पर ऐसे दृढ थे कि—पुरुष्ते कहनेके बाद

उनकी बात पत्थरकी लकीरके समान हो-जाती थी. अब उस पूर्वदशाको हृदयस्थ कर वर्तमान दशाको सुनिये, देखिये।

वर्तमानमें रेल, तार, पोष्ट आफिस आदि सब साधन विद्यमान हैं कि जिनके सुमीतेसे मनुष्य आठ पहरमें कहांसे कहां को पहुंच सकता है इत्यादि, परन्तु बड़े अफसोसकी बात है कि इतना सुमीता होने परभी लोग समा आदिमें एकत्रित होकर एक दूसरेसे सहानुमूतिको प्रगट कर अपने जात्युत्साहका परिचय नहीं दिखा सकते. बस, यही हमारी अवनातिका मुख्य कारण है.

पाठको ! हमारी जातिमें एकतो बहु-तसी सभा-पञ्चायतें ही नहीं है और जो हैं उनमें लोग योग नहीं देते. इसी कारण हम अनेक प्रकारके दुःखोको प्राप्त कर रहे हैं. इस लिये सर्व सज्जन महाशयोंकी सेवामें भेरा सादर निवेदन है कि, ऐसा मौका फिर हाथ नहीं आवैगा. इस समय हमको रेल तार आदिक सबही सामग्री सुरुभ है, ऐसे मौकेपर हम जो चाहें, सो उन्नाति कर सकते है. इस लिये सबसे प्रथम हमारा यही कर्तव्य मुख्य है कि हरएक गांवमें पञ्चायत कायम करदें, और उन पंचायतों को तन-मन-धनसे बढानेकी कोशिश करें! क्यों कि जब तक आप पंचायत कायम न करेंगे तब तक आपका कोई भी कार्य उन्नति पथकी माप्त नहीं होसकता है. सभा या पंचायतसे जो फायदे होते हैं उसका मत्यक्ष , उदाहरण आपके सामने प्रिनीकीन्सिल है, इस लिये हे प्यारे माइयों, इस मोकेको आप कदापि खाछी न जाने दीजिये.

हमारे बहुतसे पाठक यह समझते होंगे कि पंचायत यह एक नवीन प्रथा है; परंतु उन भाइयोंको यह बात अच्छी तरह ध्यानमें रखना चाहिये कि पञ्चायतकी प्रथा नवीन नहीं है बल्कि बहुतही प्राचीन है. हां यह बात सत्य है कि-सभा पञ्चायतोंकी प्रथा बन्द रह चुकी हैं तथा थोड़े समयसे इसका पुनः पचार हुवा है; लेकिन यह प्रभा पाचीन ही है; इन पञ्चायतोंसे पहले समयमें किस प्रकारसे फायदा होता था. उनकी व्यवस्था किस प्रकार होती थी, उसके विषयमें सन् १८१६ में श्रीमान्

Their village communities are almost sufficient to protect their members if all other Governments are withdrawn.

अर्थात् हिन्दुस्थानवासियोंकी गावों की पश्चायतें इतनी दृढ हैं कि किसी प्रकार गवर्नमेन्ट न रहने परभी वे अपने अधीनस्थ कोगोंकी रक्षा करनेमें समर्थ हैं.

सन् १८३० ईसवीमें सर चार्ल्स मेटकाफ महाशयने लिखा था-

The village communities are little republics having nearly everything they want within themselves. They seem to last where nothing else lasts.

Dynasty after dynasty tumbles down, revolution succeeds to revolution Hindu, Pathan, Mogul, Maratha, Sikh, English are masters in turn but the communities The Union of the the same. village communities each one forming a little separate State in itself has I conceive contributed more than any other cause to the preservation of the people of India through revolutions and changes which they have suffered and it is in a high degree conducive to their happiness and to the unjoyment of great portion of freedom and independence.

इसका मावार्थ यह है कि-" हिन्दु-स्थानकी गावोंकी पञ्चायतें बिना राजाके छोटे छोटे राज्य हैं। जिनमें लोगोंकी रक्षाके लिये प्रायः सभी वस्तुएं हैं। जहां अन्य सभी विषय बिगड़ते दिखाई देते हैं, तहां ये पंचायतें चिरस्थाई दिखाई पड़ती है। एक राजवंशके पीछे दूसरे राजवंशका नाश हो रहा है। राज्यमें एक गड़बड़ के पीछे दूसरी गड़बड़ को पीछे दूसरी गड़बड़ का पीछे दूसरी गड़बड़ का माश हिन्दू, कभी सुगल, कभी पठान, कभी मरहहे, कभी सिक्स, कभी अंगरेज, एकके पीछे दूसरेके राज्यके अधिकारी बना रहे हैं। किन्दु प्रामोंकी पञ्चायतें सदैव बनी हुई हैं। ये मामोंकी पञ्चायतें जिनमेंसे हरएक अलग छोटी र रियासतसी मुझे जंच रही हैं। सबसे

बड़ कर हिन्दुस्थानियोंकी रक्षा करनेवाली हैं। इन्हीं गावोंकी पञ्चायतोंके स्थिर रहनेसे प्रजाके मुख स्वच्छन्दतामें बाधा नहीं पड़ रही है तथा वह स्वाधीनताका मुख भोग-नेको समर्थ हो रही हैं।

प्यारे पाठको ! अंग्रेज ऐतिहासिक एलफिनस्टन साहब और सर चार्ल्स मेटकाफ महाशयने जिन गावींकी पश्चायतोंको हिन्द-स्थानियोंकी सब विपदोंसे रक्षाका कारण जाना था, जिनको उन्होंने हिन्दुस्थानकी प्रजाके सुख और स्वच्छन्दताका एक मात्र कारण निश्चय किया था, वे अब कहां है? सन १८३० ई० मेंभी जो गांवोंकी पश्चायतें हिन्दुस्थान वासियोंकी ठौकिक और पार-लौकिक स्थितिमें कुछभी आंच नहीं आने देती थीं, वे अब क्या हो गई ? एक उन्ही पञ्चा-यतोंका नाश हो जानेसे ही आजदिन भारत-वासियोंका सर्व नाश हो रहा है। इसलिये सर्व महाशयोंने मेरी प्रार्थना है कि-प्राचीन कालके माफिक आपको सुख और वैभव प्राप्त करना है तो हरएक गांवमें एक एक पश्चायत कायम कर दीजिये और अपने सब प्रकारके झगडे उन्हीं पञ्चायतोंसे तय कराइये-फिर देखिये कि-आपको कितना फायदा पहुंचता है-आशा है कि-सर्व महाशय मेरी प्रार्थनापर अवश्य ध्यान देंगे.

सोनपाल जैन, बहुवानी.

प्रातीतिकतस्वम् ।

प्रतीतिप्रत्यनीकाविचारितचार्वचारु चर्चितचावीकशून्यवादिप्रभृतिनास्तिकदर्शनं विद्यासिलदारीनिका आहेताद्वैतसांख्यता-थागतकाणभक्षाक्षपाद मीमांसकजैमिनीयम-मृतयस्तत्वज्ञानादेवनिर्वाणमात्मानमिच्छन्ती-लोके प्रतीति सिद्धमेतत । तीह परं सुपरीक्षित एव तत्वत र्नाहि निखिलेषु श्रेयसाधिगतिर्नान्यथा तेप्बद्वेतादिकेप्बेकान्तवादिषु यथा मन्यमानं तत्त्वं सुपरीक्षितमस्ति युक्तिप्रमाणवादमात्। यथातेवेदान्त वाद्यादिभिस्तत्त्वव्यवस्थामि-धीयते न सा प्रतीतिसिद्धा तद्यश-वेदा-न्तवादिनस्तावत् 'सर्वे वै सल्विदं ब्रह्म नेह नानास्ति किंचन आरामं तस्य पश्यंति न ततपश्यति कश्चन' इति सर्वान् घटपट कुड्य-मठाटव्यादिपदार्थान् प्रत्यक्षादिप्रमाणप्रसि-द्धानवलपंतो ब्रह्मैकमेव जगदित्यभिलपन्तो न प्रातीतिक तत्ववादिनस्ते केवलं ब्रह्मवाद-मात्मसात् कुर्वन्तः केन प्रमाणेन कुर्य्युः न तावत्यत्यक्षेण ब्रह्मणो विज्ञानं तस्येन्द्रिया-विषयत्वात् अन्यथा निर्विवादसिद्धिप्रसङ्गात् जलाहरणाद्यश्रीकयासमर्थघटपटादिपदार्थाव-लोकनाच । नानुमानतोऽपि ब्रह्मेति साध्यित्मीशो वेदान्तवादी यतोऽनु-मानाजनिकारे दृष्टान्तपक्षसाध्य साधनभावादि व्यवस्थापि स्वीकृता स्यात्तथाच द्वेतवादाव-

तारः स्यानाद्वैतमात्मानमासादयेत् । पक्ष दृष्टान्ताचस्वीकरणे च नानुमानं सिद्धिमध्यास्ते तथापि न ततः ब्रह्मसिद्धिः । किञ्च-यदि मायातः पदार्थव्यवस्था अमात्मिका स्वीकियते न वास्तवी, तर्हि सैव विचाराहीसती खर-विषाणवन्न किमपि, सा माया प्रमाणसिद्धाऽ-सिद्धा वा ? यद्याद्यः पक्षस्तदा सैव प्रमाणा-दात्मलाभमाभिद्धती कथं न ब्रह्मतोऽतिरिक्ता द्वितीया स्यात्तथाचैकत्वप्रतिज्ञाहानिः। यदि चोत्तरः पक्षस्तदातु न सा पदार्थव्यवस्थिति-जनने कारणभूता भवेत् अप्रमाणासिद्धत्वात् । यद्यप्रमाणात्मिकाया मायाया अप्रमाणात्मक-मेव कार्यमिति अमात्मककार्यकारण भावव्य-वस्थानुमन्यते चेत् अभावादभावोत्पत्तिः सीकृता स्याद्वेदान्तवादिभि रवश्च खरविषा-णादाकाशकुसममपि जायमानमनुमन्यतामिति न कोऽपि विशेषः। किश्च-दुर्जनतोषन्याया-न्मायातो जगनिर्माणं मुयात् कित्विदं विचार पाप्तं यन्मायायाःकुतः कारणात्पादुर्भावोऽजनि उपादानकारणमिति चेत्तर्हि तस्या कारणगुणाःकार्येऽनुसरन्ति मृत्रिष्ठरूपादिका-रणक घटवत् तथाच घटादिकमपि ब्रह्मव-न्निखिलज्ञतां प्राप्नुयात् , अथवा घटादि व ह्यापि जडात्मकं स्यात् , सहकारिकारणा-माबाच न केवलमुपादानकारणतःकुलालादि-व्यतिरिक्त मृदवन जगदुत्पनां भवेत् । यदि त ब्रह्मतो भिन्नमेव कारणं मायायास्तदा तु द्वैतप्रसक्तेर्बसवादो विनष्टः इति न मायातो जगदुत्पतिविचारो विचारचतुरचेतसां चित-युक्तिप्रमाणशून्यत्वाचा स्वसतां

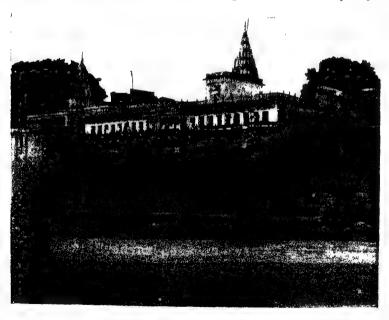
साध्येत् , नैतन्मते स्वपरमेदाभावास स्वरू-पोपादानपररूपापोहनादि वस्तुलक्षणं घटत इति न वेदान्तवादो विदुषामादरणीय स्तत्व प्रतीतेरपलापकत्वात् ।

एवं सांख्या अपि नित्यमेवाखिलमिति सर्वं सर्वथा नित्यत्वमाचक्षाणाः वस्तुनि नहि एव क्रमयौगपद्याभ्यामर्थकिया संभवति कार्य कारणभावाभावात् न नित्यत्वैकान्ता-कार्यकारणभावव्यवस्थावसीयते जीकारे तस्य पूर्वोत्तर्कम भावित्वात् , पूर्वोत्तर्कम-स्यच सर्वथा नित्यत्वविरोधात्कथंचित्रित्यत्व साध्यात्वात् । किञ्च-नित्यत्वेकान्ताभिस-रणे पुण्यपापतत्फलम्बर्गनरकादिव्यवस्थापि निर्वाणे यतस्तस्य सदैक विरुध्यते नापि रूपत्वाद्रथिकिया विरहात् तथाच शून्यवा-दबद्धेयं धीधारिभिः । नव्यपुरातनहींनो-न्नतावस्थादिभेद व्यवहारविलोपप्रसक्तिश्च कृटस्थनित्यत्वादेवं स्वरूपेण सत्वं पररूपेणा सत्वमिति वस्तुलक्षणं चाप्यस्मिन्नत्यत्वैकांते न घटत इति सर्वथाप्येतद्दर्शन विदुषां न सन्तोषकरः प्रमाणयुक्तिशून्यत्वात्।

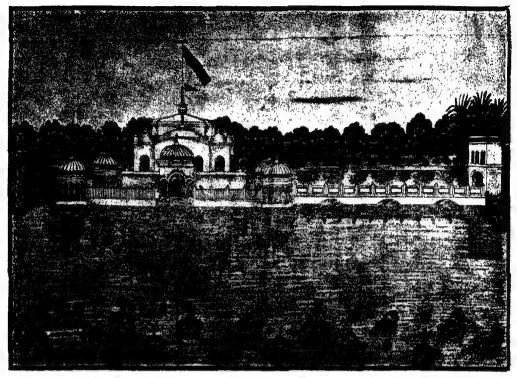
नाप्यनित्यैकान्तमाश्रयन् सौद्धोदिनिः म्बदर्शनं दर्शयन्नादर्शतां भजेद्विपश्चित्समाजे यतोऽनित्यैकान्तेऽपि न कार्यकारणभावव्यथा साधीयसी, क्षणिकस्य कारणस्य जवाद्विन-ष्टस्य कार्यकालमात्मानमनयतो न कारणता, कार्यस्य च विनष्ट कारणकाले समुत्यद्यमा-नस्य न तत्कारणकार्यत्वीमत्यन्वयव्यतिरेक व्यभिचारात्कारणकार्यभाव विरोधः । किञ्च



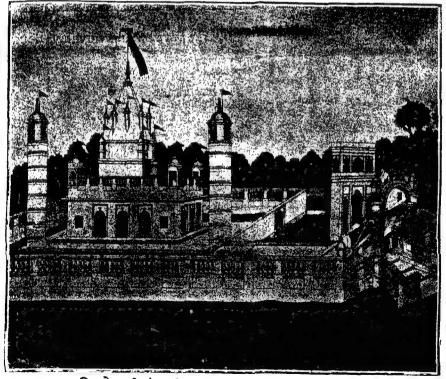
छात्र व कर्म च रीगण श्री स्याद्वाद मह।विद्यालय-काशी. Syadvad Mahavidyalay-Benaras.



स्याद्वाद महाविद्यालय-काशीकी इमारत.



सिद्धक्षत्र श्री पावायुरी. Pavapuri Sidhakshetra.



सिद्धक्षेत्र श्री चंपापुरी. Champapuri Sidhakshetra.

श्रणध्वंसि वस्तुस्वीकारे यो हिंसकः सतु विनष्टो हिंसाजन्य कर्मबन्धनबद्धोऽन्य एव तत्फलमोक्ता चान्यो मुक्तश्चेतर इति महा-नर्थकार्ये तन्मतं; दत्तमहणविलोपापत्तेश्च जन-व्यवहाराभावप्रसंगाच्च नैतदनित्यत्वैकान्त-मणि श्रेयस्करं प्रतीतेरणलापकत्वात्।

एवमादिवैशेषिक नैयायिक मीमांस-कादयोप्येकान्तवादिनस्तेपि मीमांसिताः सन्तः स्वमतप्रतिपादित तत्वव्यवस्थां प्रमाण युक्तितः साधियतुमसमर्था एव तेषामपि यथास्वीकृतं तत्त्वं न प्रातीतिकमिति नेह प्रतन्यते प्राप्तकालं तत्पुनरिप कदा प्रतिवि-धित्सतं स्यादिति।

ननु किं सर्वदर्शनेषु प्रातीतिक तत्त्व विरहः ? यद्यस्ति तदा न किमपि मोक्षसाधनं स्यात्तथाच न कदापि संसारान्निस्सरणमिति चोद्यमानेऽधुना वास्तवी तत्वव्यवस्था सर्व-कोक प्रतीत्यभिधायिनी प्रदर्शते—

द्रव्यपर्यायात्मकोयं पदार्थस्तावदनन्तधर्मा प्रतिक्षणं विरुक्षण शक्त्यात्मकः प्रतीयमानः सुप्रसिद्धस्तन्न पर्यायरूपेण विनाशेऽपि
द्रव्यात्मना नित्य एव । यस्मिश्च काले पूर्वपर्याय विनाशस्त्रस्मिनेवोत्तरपर्यायोत्पाद
इति पूर्वपर्याय विनाश एवोत्तर पर्यायोत्पादः
परन्तु येन पर्यायेण विनाशो न तेनैवोत्पादः।
क्षणभेदोऽप्युत्पादिनाशयोर्न संभवत्येवान्यथानेक दोषापत्तिः स्यात्तथाहि—मृत्युद्गलद्भव्यं
घटपर्यायेण विनष्टं कपालपर्यायेणोत्पनं नच
भटविनाश कपालमादुर्मावयोर्भिनाकालता

यस्मिन्काले घटविनाशस्त्रस्मिनेव कपारुप-यीयोत्पादः समकालावच्छेदेनैव समनुम्यते, भिन्नाकालत्वाजीकारे च घटविनासकपाली-त्पादयोर्मध्येऽन्य स्तृतीयः पर्यायः प्राप्न्यात् नचासौ दश्यते तस्मान कालमेदः। किश्च-भिन्नकारणत्वाभावाच नानयोहत्पाद विना-शयोः क्षणभेदः कल्पयितं शक्यः पुरुषपेरित मदरादि व्यापारेणैकेनैव घटविनाश कपाली-त्पादावलोकनं सर्वजनसाक्षिकं किश्च-धटविनाशे न सर्वशा द्रव्यस्यैव विनाशः प्रतीति सिद्धस्तस्य द्रव्यस्य नित्यत्वात् उभयोः पर्याययोर्विना-शोत्पादयो सुगतत्वात् घटनाश कपालोत्पा-समुपलम्भादिति दयोर्मित्तकायाः तथाच-उत्पादव्ययभीव्यात्मकं त्वसिद्धिः तत्त्वं प्रातीतिकं तदेव युक्तिप्रमाणनिर्वाषिसद मित्यार्हत तत्वव्यवस्थैव श्रेयसी निःश्रेयसा-भिधायिन्यपादेया ।

किंचाईतदर्शनपदर्शितं बस्तु इस मं स्वपरोपादानापोइनव्यवस्थापन स्वरूपं तब युक्ति प्रमाणवलानिर्धाणं सिध्यति तबका— अनन्तधर्मारमकं बस्तु स्वस्वरूपेणैवास्ति न परस्वरूपेणेति पररूपेण सस्याभावो दृष्टान्त-श्चात्र घटः स्वरूपेण घटत्वरूपेणासि न पटत्वादि परधर्मरूपेणेति पटत्वेन घटामावो-स्तीति स्यादस्ति स्याजास्तीत्यनेकान्तसिदिः। यदि च स्वरूपवस्पररूपेणापि तस्वासित्वं व्यवस्थाप्यते चेद्वस्तुव्यवस्थेव दुर्वटा स्यात् परस्परसाद्वर्योजीकस्थापि सिद्धिश्च तच्या— घटत्वधर्मवत् घटः पटत्वधर्मेणापि यदि स्था- पटोयमिति घटपट व्यवहार विलोपाज्जलाह-रणाद्यर्थिकया विरोधाज्ञगतः शून्यतापत्ति र्दुर्निवारा भवेत्।

किञ्च दुग्धारवयोर्दुग्धत्वारवत्वधर्म भेदाभावे दुग्धं पिवेति प्रयुक्तः पुमानश्वं पातुं कथमिव न घावेत् , अथवाऽश्वारोहणं कुर्विति प्रयुक्ते दुग्धारीहण प्रसङ्गल्याच कस्यापि स्वेष्ट कार्यसिद्धिः कदापि न साध्या संभवत्। एवंच परधर्मवद्यदि स्वरूपेणापि वस्तुनांऽ भावः स्यात्तदपि शृत्यतापत्तिर्जगता दुर्निवा-रैवेत्युक्त दोषान्धकार रजन्यामनेकान्तर्दापं विना बस्तुदर्शनं दुर्लभमतः स्वरूपेण सद्भावः पररूपेणाऽसद्धावश्चावश्यमनुमन्तव्या नान्य-थागीतः, स्वीकृते च तसिन् नोक्तदोष प्रसन्नः, दुग्धः खरूपेण दुग्धत्वे नास्ति नाः इवत्वेनेति दुग्धं पिपेति चौदितो नाश्वपाने धावति तत्र दुग्धत्वधमीवरहात् , एवमश्चाः रोहणे प्रयुक्ते न दुग्धमभिवाद्वति अश्वत्व धर्माभावादित्पुक्त वस्तुस्वरूप विशिष्टानेकां-तबाद एव सिद्धिमधिरोहति नतु नित्यानि-त्याचेकान्तवाद इत्युक्तं पुरात आईतदर्शनमेव हितंकरं प्रतीतिसिद्ध तत्व व्यवस्थानात्, पातीतिक तत्व विज्ञानाचमोक्ष इति मोक्षा-कांक्षिणां तत्वं सुपरीक्ष्यैव यर्तिकचिन्मताश्रयणं श्रेयो इन्यथा स्वकरछिन्नस्वचरणवद्विपन्निधानं स्यादिति पहावितेनालम् ।

निवेदनश्चान्ते प्रज्ञाचक्षुषां तत्वान्वेष-णतत्परियां विदुषां पुरोदः यत्युपरीक्षितं प्रातीतिकञ्च तत्वमनुभूय श्रेयास प्रवर्तनीय-

न तर्हि घटपटयोर्भेदः सिध्येत् तथाच घटायं मिति । सार्तव्याच विपश्चिद्भिनीतिरियं ''मुपरीक्षिनं कारणं कार्यं नातिवर्तत'' इति। विद्वत्संगमाभिलाषी-विनीतो मक्खनलाळ जैनः

मुरेनाम्थ जन सिद्धान्त पाठशालीयरछात्रः

श्रुतस्कन्धयन्त्रके चित्रका परिचय ।

प्रिय मुहत्पाठको ! आज हम आपका ध्यान २४३९ वर्ष यानि २५ शताब्दिके पूर्वकी ओर आकर्षित करना चाहते हैं। जब श्री १००८ अन्तिम तीर्थेक्कर श्रीवर्द्ध-मान-म्वामी इस भारतभूमिको अपने उपदेश द्वार। पवित्र कर रहे थे। श्रावण मासकी प्रतिपदाको मृर्व्योदयक समय रोद्र मुहूँ तेमें जब कि चन्द्रमा अभिजित नक्षत्र पर था. भगवान् महावार-स्वामीने चिरदः खित सां-सारिक पाणियोंके संसार-समुद्रसे पार होने में कारणभृत यथार्थ मोक्ष-मार्गका उपदेश दिया। श्रीइन्द्रभृति गौतम गणधरने भग-वान्की इस हितकारिणी वाणीको उसी दिन सायंकालमें अङ्ग और पूर्वकी युगपत् (एक साथ) रचना की । अर्थात् भगवान् के कहे हुए तत्वोंको गणधर देवने ग्यारह अङ्ग और चौदह पूर्व रूपेंग विभक्त कर दिया। अर्थात् अनेक भिन्न भिन्न विषयोंको इन ग्यारह अङ्ग, चौदह पूर्वीके अन्तर्गत सिनवेशित किया और अपने सहधन्सी सुधर्मा स्वामीको पढाया, सुधर्मा स्वामीने जंब् स्वामीको और जंब् स्वामीने और अनेक ऋषि-मुनियोंको इस द्वादशाङ्ग-रचना श्रुतको पढाया। इसी प्रकार उस समयमें इसका प्रचार बहुलतासे होता रहा।

हमारे उपर्युक्त तीनों ऋषिराजोंने अर्थात् इन्द्रभृति, सुधम्मी और जंब् स्वामिने परम केवल विभृति (सर्वज्ञता) को पाया । उस समय तक इस भारतवर्षमें सर्वज्ञताकी अखण्ड ज्योति वारो तरफ देदीप्यमान होरही थी । इस वृत्तान्तके हुए आज २४३९ वर्ष हुए ।

यह यन्त्र उसी द्वादशाङ्ग वाणीका है। इसमें ११ अङ्ग १४ पूर्व ५ प्रकीर्णक और १४ अङ्ग वाह्य वाणीका वर्णन है। यह यन्त्र श्रवण वेलगुलाका बना हुआ अष्टधातुका ''भवन'' की वेदीपर विराजमान है। इसमें स्पष्ट तरहसे श्लोकोंकी संख्या अक्कित है। सबसे नीचे प्रथम कोष्टमें (३३६ भेदमतिज्ञानके हैं) दसरे कोष्टमें (ज्ञानविकला २० धन्थ अङ्ग १२ अङ्गवाद्य १४ हैं) तीसरे कोष्टमें (श्रुतज्ञानकी अक्षर संस्या १८४४६७४४० ७३७०९५५१-६१५ हैं) इसके बाद चौथे कोष्टमें ∫ एक पद वर्ण-संख्या १६३४८३०७८८८ है। पांचवें कोष्टमें[द्वादशाक नाम पद-संख्या ११२८३५८००५ है] छठवें कोष्टमें (एकादशाक्त पदसंख्या ४१५०२००० है) इसके बाद श्लोकोंकी संख्याके साथ साथ ११ अक हैं। दहिनी ओरके कोष्टमें स्रोक संख्याके साथ ५ प्रकीर्णक हैं। बाई तर-फके कोष्टमें श्लोकसंख्या-सहित ६ चूलिकाएं हैं। जहांसे श्रुतस्कृत्धकी शाखायें निकली हैं वहां चौदह पूर्व श्लोक—संख्याके साथ हैं। सबसे ऊपर ध्वज--दण्डके आकारमें अक्रवाह्य १४ हैं और उसकी ध्वजामें अक्षरसंख्या है।

कोटीशनं द्वादशचैव कोट्यो, लक्षाण्यशी-तिस्राधिकानि चैव।

पञ्चागदष्टी च सहस्रसंख्या मेतच्छुतं पञ्चपदं नमामि॥

इस प्रकार ऐहिक तथा आमुम्मिक समस्त शास्त्रीय विषयपूर्ण इस ग्यारह अङ्ग चौदह पृर्व--रूप श्रुतका पठन पाठन हमारे अन्तिम श्रुतकेवली श्री १००८ भद्रबाह स्वामीकी स्थिति तक प्रचलित रहा। **जिनका** समय महावीर स्वामीके १६२ वर्ष बाद निश्चित होता है। इनके समय तक भारतवर्ष उस श्रुतज्ञानको अमृतमय उपदेश धारासे निरन्तर परिष्ठावित रहा । इसके पश्चात् सुवर्णमयधनधान्य-परिपृरित तथा चिरविद्या रिक्तित इस भारतवर्षने अपनी भावी अवनतिकी ओर पदार्पण किया। सहसा इसके विद्या-प्रभाकरकी किरणोंमें मन्दता पड़ गयी और भारतके भाग्य-ललाट-पर मावी दौर्भाग्यकी रेखा चित्रित होगयी। क्रमशः पतनोन्सुख अक्र-ज्ञानकी प्रवृत्ति वीर-निर्वाण सम्बत ६८३ वर्ष तक कुछर रही । इसके बाद कालदोषसे बची बचायी प्रवृत्ति भी लुसपाया हो गयी। कुछ ही

कारक बाद श्रीअईद्रिक गुनि अवतीर्ण हुए । इन्हींके समयमें मुनियोंके सङ्घकी स्थापना हुई । अर्थात् दिगम्बराम्नायधारी मुनियोंके चार विभाग हुए ।

अहंद्वली स्वामीके कुछही दिन वाद धरसेनाचार्य हुए । इन्हें अप्रायणी पूर्वके अन्तर्गत पञ्चम वस्तुके चतुर्थ महाकर्म माभृतका ज्ञान था। अर्थात् उपर्युक्त श्रुत-ज्ञानके एक अंशके आप ज्ञाता थे। वाह्य शक्तों द्वारा आपको जब यह माछम हो गया कि अब मेरी आय थोड़ी रह गयी है और मेरा यह सामान्यशास्त्र-ज्ञान भी संसारका एकमात्र अवलम्य होगा। अर्थात इससे अधिक शास्त-ज्ञान आगे नहीं होगा। वदि इस बची बचायी विद्याकी रक्षाका मयस न किया जायगा तो सम्भव है कि इस ज्ञानका विच्छेद हो जाय । यह विचार उन्होंने इसकी रक्षा करनेके लिये पुष्पदन्त और भूतविल दो मुनियोंको इस विद्या-महणके पाल समझकर पढाया तथा आप स्वर्गधामको सिधारे। श्री १०८ भूतविल स्वामीने देखा कि विद्याकी अवनति पति दिन हो रही है और जो मौखिक ज्ञान है उसका भी रहना असम्भवसा जान पडता है, ऐसा विचारकर तथा मनुष्यकी सारण-शक्तिका न्हास देखकर इन्होंने "पटम्बण्डा-गम" नामका अन्थ रचकर लिपिवद्व किया और ज्येष्ठ शुक्क पश्चमीके दिन बड़े समा-रोहके साथ चतुर्विष संघके साथ वेष्टनादि उपकरणोंके द्वारा उसकी पूजा की। जो

कि आजतक वह तिथि जैन- 'श्रुत पश्चमी' के नामसे प्रसिद्ध है और आजकल भी जैन-धर्मावलम्बी विज्ञ उक्त तिथिके दिन अपने अपने शास्त्रांकी बड़ी विधिके साथ पजा करते हैं। इसके बाद अनेक जैना-चार्घ्य हुए, जिन्होंने आवश्यकतानुसार अनेक विषयोंके असंख्य प्रन्थ रच रचकर संस्कृत-साहित्य-भण्डारकी पूर्ति की । यद्याप अनेक आपत्तियां आचुकी थीं तो भी जैन-धर्म्भका प्रभाव संसारपर कुछ कम नहीं था। इसके थोड़े ही दिनोंके बाद नवाङ्क-रित बौद्ध-धर्म तरुणावस्थाको प्राप्त होगया और अनेक राजा महाराज नवीनताकी व छटासे मुग्ध हो जैन-धर्म्मको छोडकर बौद्ध धर्मा अङ्गीकार करने लगे। परन्त ऐसे समयमें भी अनेक आचाय्योंका अस्तित्व था और उन्होंने बड़े प्रभावके साथ बड़ी बढी राजसभाओंमें जा जा करानिभिकतासे अन्यमतका खण्डन तथा अपने मतका मण्डन किया। इसीका प्रभाव है कि जैनधर्म अभीतक अपने उद्देश्योंकी घोषणा डंकेकी चोटसे सब जगह उद्वेषित कर रहा है। जिस समय बौद्धोंका प्रताप-सूर्य्य मध्या-हावस्थापर था। जिस समय बौद्धाचार्य्य जैन-धर्म्मके शास्त्रोंको जला जलाकर और नदियोंमें इबोकर इसको नष्ट अष्ट कर रह थे। मन्दिर और मूर्तियोंको तोड़ फोड़कर अपनी मूर्त्तियोंकी स्थापना कर रहे थे. ठीक, उसी समय जैनधर्मके पुनरुद्धारक प्रधान-रक्षक तथा न्याय-मार्तण्ड हमारे श्रीमदक-

कहका अवतार हुआ है इसका पूर्ण दृत्तान्त हम इनके जीवन-चरित्र लिखतीवार देंगे। इन्होंने काञ्ची देशके रतसञ्चयपुर नगरके राज्य दरबारमें बोद्ध-धर्म्मके गुरु संघश्री और उनकी आराधिता तारादेवीके साथ छ: महीनों तक अविरत शास्त्रार्थ कर उन्हें पराजित किया और राज्य-सभामें आपने सिंहनादके समान घोषणा की कि यदि जैन धर्म्मके विषयमें किसीको कुछ शक्का हो अथवा कुछ बात करना चाहें तो मैं उपस्थित हं । आप जैनधर्म--मण्डन और अन्यमतके खण्डनके अनेक ग्रन्थ रचकर इस जैनधर्मको एक दुर्भेद्य-दुर्गमें रक्षित कर गये। धीरे धीरे बौद्ध--धर्म्भ-रूपी सूर्य्य भी जब अम्ताचलको जा रहा था कि ठीक, इसी बीचमें हिन्द्धम्मके नेता श्रीशङ्कराचार्य्य हुए । इन्होंने भी जैनधर्म की अनेक मूर्तियां तथा मन्थोंको बडी बडी नावोंमें भरकर समुद्रमें डुबो दिया तथा अनेक बडे बडे शास्त्रभण्डारोंमें आग लगा दी कि जिससे जैनधर्मकी बड़ी भारी हानि हुई। किन्तु ऐसे दुर्दमनीय भयानक सम-यमं भी हमारे आचाय्योंके उद्दीप्त प्रचण्ड तपोबलसे जैनधर्म्भकी जागृति बनी रही। इसके बादही मुसलमानोंके भी भाग्योदय का चिराग टिम टिमा उठा । इनके सम-यमें जैनधर्म्मही पर क्या बल्कि हिन्दू धर्म्मपर भी जिस निष्ठुरताके साथ कुठा-राघात किया गया उसको लिखते हमारी लेखनी कांप उठती है। वर्षों तक मुगलराज | पुरके भण्डारमें है। उसी समयसे भट्टार

वाहिनीके सिपाहियोंकी रसोई हमारे धर्म मन्थोंसे ही बनती रही। इससे असंख्य अलभ्य, और अपरिमित मन्थ भण्डारोंका अस्तित्वही संसारसे उठ गया तथा अग-णित मंदिर और मूर्तियां तोडी गयीं। अनेक जैनमंदिरोंके स्थानमें मसूज़ीदें बनायी गयी। उसी समय फिरोजशाह तोगलकने लगभग सम्बत् १४०३ में दिल्लीके साम्राज्य-सिंहा-सनाधिरूढ हो भारतवर्षकी भाग्यडोरको अपने हाथमें लिया । वह अपने राज्यशा-सन-कालमें भारतवर्षके सभी धन्मोंकी परी-क्षा करने लगा। अन्यान्य धर्म्मोंके साथ साथ जैनियोंको भी अपने धर्म्मकी परीक्षा देनेकी आजा मिली। परन्त उस समय उत्तर भारतमं जैनियाँके गुरु विद्वान न थे जो उनसे शास्त्रार्थ कर सकते इस लिये बादशाहसे छः महीनेका अवकाश माँग कर दः खितहृदय जैनी गुरुकी खोजमें दक्षिण देशको भाइलपुर भूपालके नजदीक जोकि आज-कल भेलसा नामसे प्रसिद्ध है वहीं सब लोग आये। वहींसे 'महासेन ' नामके आचार्य्यको वहां लेगये । महासेन स्वामीने दिलीके बादशाहके दरबारमें आकर 'राधो' और 'चेतन' नामक विख्यात दो राज-मान्य विद्वानोंको शास्त्रार्थ और मन्त्रवादमें पराजित कर वहाँ बड़े प्रभावके साथ जैनधर्मकी ध्वजा फहरायी। उस समयकी सनदें बादशाही अभीतक

कोंकी गद्दी वहां स्थापित हुई और ये कोग राजगुरु माने गये। इन कोगोंको बादशाहने बस्न धारण कराया और अनेक बादशाही खिछत क्षत्र चमरादि और पहस्थकी बत्तीस उपाधियां दे बडे सम्मान के साथ इनका गौरव वदाया । इस समयमें भी हमारे आचाय्योंने अनेक ग्रन्थ रचकर धर्म--रक्षा की। इसके बाद रक्षा करनेमें जब आचार्योंको अत्यन्त कठिनाइ जान पड्ने लगी तब उन्होंने इन धर्मग्रन्थोंकी धर्म--रक्षाका एक मात्र उपाय समझा और उन लोगोंने बडे परिश्रमके साथ जहां जैनियोंका समूह था वहां उनके घरोंकी कोठरियोंमें और जहां भट्टारकोंका मठ था वहां तहस्वानोंमें रखकर सरक्षित किया और लोगोंको यहां तक मना कर दिया कि किसीको इसकी ज़रासी भी सूचना न मिलने पावे. नहीं तो यह बचायी धर्मिक तथा ऐतिहासिक सामग्रियां नष्ट हो जायँगी।

उपर्ग्युक्त समयमें जब जैनधर्मा विद्वेषी अन्यधर्मावलम्बी राजा तथा विद्वानोंके कारण लाखों अन्थका नाश हुआ तब हमारे महर्षियों ने तथा पूर्व-पुरुषोंने धर्माकी हानि होती हुई देख अपनी जानपर खेलकर जैनधर्माको अन्थ रक्षण-द्वारा बचाया, किन्तु अब हमारी यायशीका गवर्नमेन्टके शासनकालमें तथा

सर्बोंकी स्वाधीनधर्म-जागृतिके समयमें भी
मूर्स्वतासे जैन-धर्मावलम्बी उसी परम्परा
को निवाहते हुए यानि शास्त्रों को तहस्वा-नेमें सड़ाते हुए संसार हितैषिणी भावी
धार्मिकउन्नति तथा पवित्र श्रीजिनवाणी
माताके प्रचारका मार्ग रोक रहे हैं!!

विज्ञ पाठक ! हम लोगोंको इस जीर्गप्रनथके पत्रवृक्षका चित्र देखकर अपनी असावधानता तथा धर्मविमुखताका चित्र अपने मस्तिष्कमें सहसा खिंच जाता है। हाय! हमारे पूर्व ऋषि महर्षियोंने जिन-प्रन्थोंको अपने सारे जीवनका लक्ष्य समझ कर तथा अनेक कष्टोंको सहकर रचा था वे आज लाखों हम लोगों के हाथसे नष्ट हो रहे हैं। बड़े शोकके साथ कहना पड़ता है कि जिस जैन-साहित्यकी सर्व-श्रेष्ठताकी प्रसिद्धि सर्वत्र व्याप्त थी और जिन सृक्ष्म-दर्शी आचार्योंके विचारपूर्ण तथा सार गर्भित विषयोंको देखकर सब किसीको आश्चर्ध्यत होना पड़ता था सो आज उसी जैन-साहि-त्यमें अनेक विषयोंकी कमी दिखलायी जा रही है ! टींक है, जब हमलोगोंने अपने पूर्वाचाय्योंकी कीर्तियोंको तथा जीवन-सर्व-स्वधनको कीटों और चृहोंको आहार-दान

देना ही पसन्द किया है तो भला शासकी कमीकी बात कौन कहे ? भाइयो ! यदि ऐसी ही लापरवाही आप लोगोंने कुछ दिनोंतक जारी रक्स्वी तो संभव है कि थोड़े ही दिनोंमें हमलोग जैन-धर्मसे हाथ घो वैठें। विशेषतर तो हमें व्यवहार—व्यस्त धनिक भाइयों ही को चिताना है कि आप सब किसके भरोसे अपने सर्वमान्य—ऋषि मणीत शास्त्रोंकी रक्षासे मुंह मोड़े बैठें हैं। हाय! शास्त्रोंकी जीर्ण-शीर्ण अवस्थाका यह चित्र आप लोगोंके कर्ण-कुहरपर सचेत होनेके लिये जोर शोरसे नकारा पीट रहा है पर आप लोग न जाने किस गहरी नीदमें खरीटा मार रहे हैं कि जरासा भी उसकी आवाज सुनत ही नहीं।

त्रिय पाठक भाइयो । यदि हमलोग अवस शास्त्रोंकी रक्षा करने लगें तथा रक्षा करनेवाली संस्थाओंसे सहानुभूति रक्खें तो अब भी हम लोग इन बची बचायी प्राचीन सामप्रियोंसे बहुत कुछ अपने धर्म्मको बना सकेगें।

हमे लिखते इदय विदीर्ण होता है कि एक जैनशास्त-भण्डार जिसका अभी हम नाम प्रकाशित नहीं करना चाहते, कुछ ही दिन पहले जिसमें भिन्न भिन्न विषयके लाख प्रन्थों की सूची मौजूद थी किन्तु हाय! आज उनकी सूची दस हजार प्रन्थ की है। भाइयो! हमारे जैन प्रन्थ-रक्षकोंने अपनी उदारता तथा बहु-बदान्यतासे चूहों तथा दिमकोंकें आहार-दानके लिये जैन- साहित्य की जगमगाती ज्योति, आचार्यो तथा महर्षियोंका चिर-रक्षित-प्रतिभाविकाश और पण्डित-मण्डलीके कण्ठ-मूषण नब्बे हजार प्रंथोंको भी कुछ नहीं समझा। आप कोग इसीसे जैन धर्म्मकी भावी उन्नति तथा अवनतिका अन्दाज कर सकते हैं। वर्त-मान समयमें भी धनिक जैन-धम्मीवलम्ब-योंकी दृष्टि सङ्गी और स्वाभाविक प्रभाव-नाको छोडकर केवल क्रत्रिम प्रभावना ही की और जा रही है। वे क्षणभरके लिये भी इस बातका विचार नहीं करते कि हमारी अज्ञानता ही अर्थात् जैन शास मण्डारोंकी रक्षा न करनी ही इस परम पवित्र-जैन-धर्मके मूलोच्छेदकीं कारण हो जायगी । यद्यपि हमलोगोंने प्रमाद-पयो-निधिमें असंस्य डुब्बियां लगाकर अपने सर्वाक्रपूर्ण जैनसाहित्यके अनेक रत्नोंको घोंघा समझकर तिरस्कृत कर दिया किन्त अबसे भी यदि हम लोग चेतनावस्थापना होकर और जैन-साहित्यके महत्व समझकर इनकी रक्षा करने लग जांय तो संभव है कि यह अपनी बची खुची सामप्रियोंसे एकवार फिर इस भारतवर्ष को प्रकाशमय कर दे। किन्तु भाइयो ! अब भी हम यदि उसी चिर परिचित धर्म-विद्वावक प्रमादकी दासत्व-शृङ्खलासे परिवद्ध हुवे रहेंगे तो फिर सटाके लिये हम पश्चाताप की अवि-आन्त अश्रुधारा बहानी पड़ेगी।

" जैन सिद्धांत भास्कर "

जिनवाणीकी वर्तमान हीनाव-स्थाके चित्रका परिचय।

--}}&&-

मिय पाठकगण ! आगेके प्रष्टमें जो आपलोग चित्र देख रहे हैं यह श्रीजिन-वाणीकी वर्चमान हीनावस्थाका चित है। इनकी क्या अवस्था है यह बात तो आप-को मत्यक्षही दीख पडती है कि अंधेरे बरकी ट्रटी फूटी कोठरीमें जहां धूप और हवाका गम्य नहीं, बिना किवाड़को आलमारो तथा सद्भुकोमें सारे शास्त्र भरे पड़े चूहों तथा दीमकोंके आहार बन रहे हैं। मण्डारके स्वामी कहीं वर्षीपर भूले भटके आकर कटे फटे ग्रंथोको कुडों में फेंक रहे हैं। हाय ! कहांतक कहा जाय जिनके एक पदके पसँघे पर सारे त्रिभुव-नकी भी सम्पत्तियां नहीं तुल सकती थी तथा दूसरी विद्यासे एक विद्या बदली जानेपर भी जो विद्या दिन दिन बढ़ती थी वेही प्रंथ अब बनियोंके हाथ टके सेर वेचे जारहे हैं और सदाके लिये हल्दी भनियापर बदले जा रहे हैं। देखिये, सब शाओं को बनिया टोकरोमें रख रहा है और उन जीर्ण शीर्ण शास्त्रोंको अंग्रेज सब संग्रह करके मकाशित कर अपनी असीम गुण-माहकता तथा सौभाग्यशा-लिताका परिचय दे रहे हैं। बल्कि सब प्रान्तोंके नेता लोग असावधानीसे उसकी

और पीठं देकर बैठे हुए हैं। अब यह 'मूलं नास्ति कुतः शासा'' वासी अव-स्था देखकर हमारे स्वर्गवासी देवताओं का आसन एकवार डोल उठा है। और घबराये हुए आप सब धर्म्मात्माओं से उनकी रक्षाके लिये प्रेरणा कर रहे हैं। देवताओं के पास ही महाराज गायकवाड़ वडौदानरेश जो आधुनिक राजाओं में विद्वान तथा धार्मिक समझे जाते हैं वह भी आप भाइयों से शास्त्र-रक्षाके लिये कह रहे हैं।

" जैन सिद्धांत भास्कर "

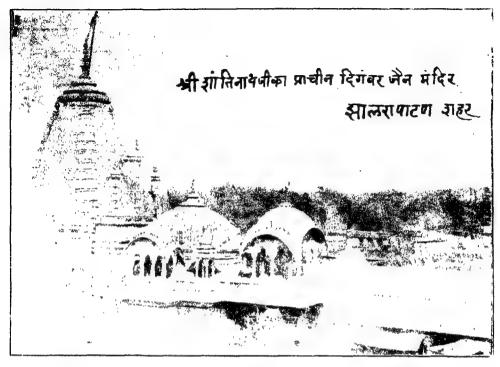
─-}}&

"दिगंबर जैन"का

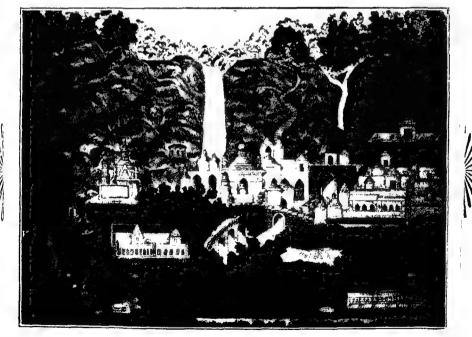
गत वर्षका सचित्र खास अंक

इस पत्रका गत वर्षका "सचित्र स्वास अंक" कि जिसमें कुल ५९ चित्रों और ६ भाषाके ४३ विषयोंकी पृष्ठ संख्या १२५ है और रंगीन टाइटलसे सुन्नोभित है वह अंक अब इने गीनेही सीलकमें है इसलिये जिस्कुं आवश्यक्ता हो, न्नीघ्रही मंगाइए. मुल्यभी कुल कम कर दिया है. पोस्टेज सह सीफी बारह आना.

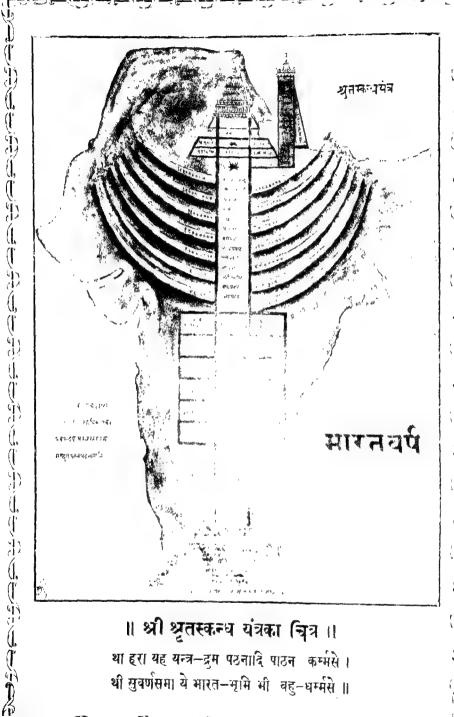
मेनेजर, " दिगंबर जैन "-सुरत.



श्री शांतिनाश्रजीनुं ८५० वर्ष उपरना प्राचीन अने लाखोनी लागटना दिः बरी जैन मंदिरनो उपलो देखावः आलगपाटन सीटीः



सिद्धक्षेत्र श्री मुक्तागिरि- Sidhakshetra Shree Muktagiri.



॥ श्री श्रृतस्कन्ध यंत्रका चित्र ॥

था हरा यह यन्त्र-दुम पठनादि पाठन कम्मंसे । थी सुवर्णसमा ये भारत-मृगि भी बहु-धर्मसे ॥

भि सुरत केंग प्रि. प्रेन्न, सुरत.

JAIN LOGIC.

(By Moti Lal Jain, C. T. Assist. Master Govt. High School, Agra.)

I. INTRODUCTION.

Logic is generally termed Nyaya in Jain books. To our great sorrow Drishtivad, one of the twelve Angas which contain the sacred literature of the Jainas, is extinct. In it logic was treated and thus it was of great consequence to the logicians. Fragments, commentaries and references of it, however, remain; but most of them are inaccessable, being scattered all over India, mostly in manuscripts. However, from the works which are obtainable in print or manuscripts a more or less systematic treatment of the subject may be pieced. Because of the stupendousness of the subject, it is but possible to give an outline in this paper. The curious will look into the following works,

The development of logic and the systematic writing of works on the subject probably began 400 A. D. Shri Siddh Sen Divakar's Nyayavatar was perhaps the first systematic work on the subject. The author is believed to have been contemporary with Vikramaditya and is said to have converted the latter to Jainism. He wrote Nyayavatar Sammati-tark Sutra. Other authoritative works on Jain Logic are Sri Bhadrabahu's Dashvaikalikniryukti, Sri Umaswati's Tattwarthdhigam-sutra, Sri Samantbhadras Gandha-hasti-mahabhasya containing the Apt-mimansa, Sri Aklankdeva's Ashta-sati (a commentary on the above) and Aklank-stotra,

Sri Manikya Nandis Pariksha-muki-shastra, a standard work on Jain Logic, Sri Prabha chandra's Prameya-kamal-martand and Nyayakund-chandrodaya, Sri Deva Suri's Pramannaya-tattva-lokalankar, Sri Malli Sen Suri's Syadvad Manjari, Sri Dharmabhushan's Nyaya-dipika and Sri Yashovijaya Suri's Nyaya-pradipa, Tarkabhas, Nyaya-rahasya, etc. In many of these books the different current philosophies have been logically criticized.

II. CONNOTATION.

Lakshan or the connotation of a thing consists of the attribute or attributes which distinguish or separate it from all other things, as conciousness is the lakshan of soul inasmuch as it is sufficient to mark out soul from all other things included under non-soul. Lakshan is of two kinds: (1) Atmabhut or that which forms part of the nature of the thing, as heat is the atmbhut lukshan of fire: (2) Anatmbhut or that which does not form part of the nature of the thing, as punishment is the anatmabhut lakshan of a punished person.

A fallacy is termed an abhar. The fallacy of lakshan is called lakshanabhas or that from which a true lakshan must be free. It is of three kinds.

(1) Avyapta or the accidental, when the attribute is present only in certain individuals of a class and absent is other individuals of the same class and is therefore not sufficient to mark out that class from all others, e. g. man is a cooking

Vido Mahamahopadhaya Satish Chandra Vidhyabhushan's History of the Mediaeval School of Indian Logic.

Vishesha (Proper).

animal. Here the quality of cooking although belongs to man alone, yet it does not belong to all the individuals comprehended under man, but only to some.

(2) Ativyapta or the overlaping when the attribute while belonging to all the individuals of the class in question, also belongs to others, e. g., animality is the lakshau of cow. Here animality though possessed in common by all the individuals of the class 'cow,' belongs also to other things, as goats, tigers, etc.

(3) Asambhava or the impossible, when the attribute is known to be absent in all the individuals in question, e. g. horn is the lakshan of man. Here the quality of having horns is known to be absent in each and every individual man.

III. DIVISION.

In Jain Logic examples of various kinds of division can be found.

(1) Logical Division, or that in which a class is divided into smaller classes (species) which together make up the denotation of the class divided (genus) without overlaping and having only one fundamentum divisionis, as

(Jun (Quality),

Samanya (Common)

Other examples of this type will be found in the following pages also.

Dichotomy, or a special kind of logical division in which a genus is divided into two contradictory classes, the one positive and the other negative, like the Tree of Porphyry, as

Dravya (Substance)

Jiva (Soul) Ajiva (not soul).

(2) Physical Division or 'the analysis or separation of an individual thing into its component parts', as

Anuman (Inference)

Pratigya Hetu Udaharan Upnaya Nigman.
(Proposition) (Middle) (Example) (Application) (Conclusion).

(3) Metaphysical Division, 'which consists in regarding a thing as an aggrigate of qualities and separating those in thought,' as

Dravya (Substance).

Sparsh Ras Gandh Varna.
(Weight.)
(Temperature.) (Flavour) (Odour) (Colour).
(etc.)

To set forth the lakshan of a term is to define it.

IV. VALID KNOWLEDGE.

Praman is valid knowledge, or in other words its lakshan is samyak-

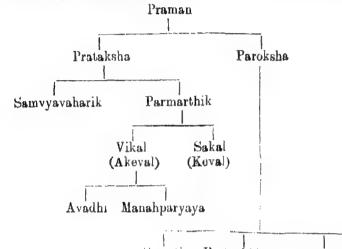
gyan or right knowledge. It has been defined as that which 'ascertains the nature of what was uncertain to one's self. It implies a knowledge of other things as well as of itself. It dispells ignorance and enables one to choose what is desirable and what is undesirable. It is derived from different sources, e.g., Prataksha or that derived from perception, Anuman or that derived from inference, Upman or that derived from comparision, Agam or that derived from reliable authority, etc.

Praman must be free from three kinds of samarop or superimposition; (1) Sanshaya (doubt), as, is this brass or gold? (2) Viparyaya (inversion), as, to mistake a cord for a snake; (3) Anadhyavasaya (uncer-

tainty), sometimes something touches our body in the dark and we cannot tell what the thing is because we have a mere cogitation of it.

Praman is thus divided and sub-

divided.



Pratyabhigyan Smrati Tark Anuman

It is of two kinds: (1) Prataksha or direct and (2) Paroksha or indirect. Prataksha Praman has been again divided into two: (1) Samvyayharik or the practical and (2) Parmarthik or the transcendental. latter may be either Vikal fect) or Sakal (perfect). Vikal or imperfect is of two kinds: (1) Avadhi, which is defective in as much as it is confined to certain area, time, etc.; (2) Manahparyaya or the knowledge of the mind of others. Now Paroksha Praman is of five kinds: (1) Smrati or recollection, (2) Pratyabhigyana or recognition, (3) Tark or argumentation, (4): Anuman or inference, (5) Agam or scripture, i. e. know-

Prataksha-praman includes mati and shrutagyan which together with avdhi, manhparyaya and keval mark the five stages of valid knowledge as follows.—

ledge derived from reliable authority.

obtained directly without the mind or senses. Of these mati-gyan passes through the following four stages.

(1) Avagrah or the mere recognition of a thing as a whole.

(2) Iha or the knowledge of its characterstics.

(3) Avaya or the certainty of the above.

Mati-the knowledge present things acquired by the mind through the senses.

(2) Shruta—the exposition

mati through reasoning, etc.

- (3) Avadh-the knowledge of things 'beyond the range of perception.
- (4) Manahparyaya—the knowledge of reading the thoughts of others.
- (5) **Keval**—perfect knowledge relating to all things and all times

(4) Dharns or the fixing of it in the memory.

Leibnitz, the celebrated mathematician and philosopher holds that perfect knowledge passes through four stages, viz, clear, distinct (adequate and intuitive. These stages are somewhat like those of matigyan, which is only the first stage of valid knowledge to the Jains. To the Jainas perfect knowledge implies exceedingly more than it does to Leibnitz.

V. CATEGORIES.

There are seven categories which can be comprehended by valid knowledge. Their number is the same as that of Aristotle's but they are quite different in character, They are as follows.

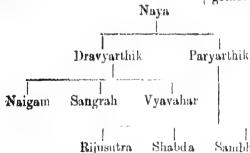
- (1) Jiva or the soul.
- (2) Aiiva or the non-soul.
- (3) Ashrava or the coming of the particles of karam (action).
- (4) Bandha or the sticking of these particles to the soul.
- (5) Sanvara or restraint of new particles.

- (6) Nirjara or the destruction of the already accumulated particles.
- (7) Moksha (salvation) or the complete release from all particles of action.

VI. PARTICULAR STANDPOINTS.

Naya is the method of comprehending things from particular standpoints. What is known as a whole by Praman is known in its different aspects through Naya.

It may be either Dravyarthik (material) or Paryarthik (formal). If we look at the universe according to the former, it is eternal, because matter is indestructable; but if we look at it from the latter standpoint, it is non-eternal, because a certain form or aspect of the universe never lasts, since is is constantly being replaced by new ones which manifest themselves in so many modifications, developments, activities, etc. going on around us. Dravyarthik is : again divided into three classes and Paryarthik into four, so that we get altogether seven kinds of Naya as follows:



(1) Naigam, 'the non-distinguished', is the standpoint by which the future aspect of a thing may be regarded to exist in the present time. From this standpoint a man who is only collecting materials for cooking, may be spoken of as cooking food. Some define Naigam as 'the method

Sambbirurh Evambhut

by which an object is regarded as possessing both general and specific properties, no distinction being made between them.' 1

1. See History of the Medieval School of India Logic and Muni Dharma Vijaya Suri'a Tattwa-digdarshan, If such a distinction is made, we have a fallacy called Naigamabhas.

(2) Sangrah, 'the collective', is the standpoint which regards all things (comprehended under a genus) collectively, nontaking into consideration the particular properties in which they differ. For instance, the term 'animal' implies all the animals taken collectively, whether living in water or on land, etc.

But if we regard a thing as possessing only generic properties, denying the very existence of specific properties, we tall into a fallacy called Sangrahabhas

(3) Vyavhar the practical, is the standpoint which consists in regarding a thing as possessing specific or particular properties, which are so necessary for all practical purposes, as, substance is divided into soul, matter, etc.

When such a distinction is wrongly made, we have a fallacy called Vyavharabhas.

(4) Rijusutra, 'the straight expression', recognises only the present aspect of a thing to the entire exclusion of both the past and future aspects of it. From this point of view a man who is a beggar at the present moment is regarded as a beggar after all, no regard being paid to his being a king in a previous life. India is what it is to-day, her former or future greatness being of no practical use now.

When we deny even the present aspect of a thing, we have a fallacy known as Rijusutrabhas. This fallacy occurs in philosophies which altogether deny the reality of things, as the Tathagat philosophy.

(5) Shabda, 'the verbal', consists in looking at the mere name (of

a thing) without paying any regard to its gender, number, etc. Thus dar, bharya and kalatra, though differing in (Sanskrit) gender, refer to the same thing, viz., a woman.

If such a difference is recognized, there occurs a fallacy called Shabda-bhas.

(6) Sambhirurh, 'the subtle', is the method which recognizes only one meaning out of different meanings of the same word. Thus, the English word 'mole' has four distinct meanings, but with reference to the context only one meaning is recognized.

When altogether different meaning is ascribed to a word, we have a fallacy called Sambhirurhabhas.

(7) Evambhut, the such-like,' interprets a word in its strict literal sense. Thus, it calls Indra by the name of Sakendra only when he is actually seated on his throne and trying cases; but it at that time his mind is really with the fairies of pardise, he should be called Suchpati and not Sakendra.

When the attributes implied by the name of a thing are not found in it at a particular moment and therefore we reject the name altogether, we have a fallacy known as Evambhutabhas.

VII. THE SEVEN FOLD VIEW.

The highest merit of Jain Logic is the Anekant-vad or the many-sided view of a thing. It exposes the various properties inextricably combined in a thing.' For instance, the same man may be a son with reference to his father, a father with reference to his son, an uncle with reference to his nephew, a brother with reference to his sister and so

forth. In a thing there is existence (of self) and non-existence (of every thing else). To expose these attributes is the business of Anekant-vad. It will be easily seen that such an exposition is the sine qua non of full and clear understanding of anything.

Bhav or existence and abhava or non-existence can be related to each other in seven different ways. This is known as the doctrine of Syad-vad, also called Saptbhangi, or the seven-fold view. These seven modes of expression are as followss.

(1) Syadasti-A is.

(2) Syadnasti—A is not (from the point of view of non-A).

- (3) Syad-asti-nosti—A is and is not in turn.
- (4) **Syad-avaktavya**—A is indescribable (i. e. A is and is not simultaneously).
- (4) Syadasti-avaktavya— A 18 and is indescribable.
- (6) Syadnasti-avaktavya-A is not and is indescribable.
- (7) Syadastinasti-avaktavya-A is and is not and it is indescribable.

The philosophies of the Sankh-yas, Naiyayikas, Charvaks, Vaisesikas, Mimansakas, Buddists, etc are Ekant-vad or one-sided. Each of these looks at things from its own one point of view and one only, and thus knows only one side of the truth; but if they all join together, we shall have one grand doctrine—the Syadvad doctrine of the Jainas!

VIII. INFERENCE.

Anuman or inference has been defined as the knowledge of Sadhya (major term) derived through Sadhan (middle term).

- It is of two kinds:
- (1) Swarthanuman or inference for one's own self. It is the knowledge of Sadhya derived through a self established Sadhan in one's own mind. The Sadhan (middle term) is already present in the mind of the person who makes such an inference; in fact he has inductively known it by examining a number of instances. For instance, after having examined, kitchens, fire-places, chimneys, etc., a man concludes that fire is an everpresent accompaniment of smoke. Thereafter he sees a smoky hill. He atonce inters in his mind that that hill has fire. This is Swarthanuman.
- (2) Pararthanuman or inference for the sake of others—It is an inference expressed in words for the sake of others. Here is a typical example of it.

This hift (Paksha or minor term) is full of fire (Sadhya or major term).

Because it is smoky (Sadhan or middle term).

To a logician of the Aristotelian school this is an enthymeme, a syllogism with its major premiss suppressed.

Anga or terms of a Syllogism—There are three terms: (1) Paksha (minor term) is that of which the Sadhya (major term) is to be predicated or with which the connection of the Sadhya is to be shown. It is the object of an inference to prove the Sadhya in a Paksha. In the above example fire (Sadhya) is proved to exist in the bill (Paksha). (2) Sadhya is that which is to be proved or inferred, as fire in the above example. Sadhan or Hetu (middle

term) is that which is inseparably connected with the Sadhya or that which cannot exist without the Sadhya. As in the foregoing example smoke (Sadhan) cannot exist without fire (Sadhya) or is inseparably connected with it. This inseparable connection may also be expressed by saying, 'All smoky things are full of fire'. Taking this as a major premiss (which is suppressed) and combining it with the above enthymeme, we get

All smoky things are full of fire. A
This hill is smoky.

A
This hill is full of fire.

A

Now this is in the perfect mood, **Barbara**, of the Aristotelian Logic. Thus we see that by virtue of the mere definition of Sadhan (middle term), every anuman, when fully expressed, stands in the perfect mood **Barbara** and is therefore always valid.

Avayava or Parts of a Syllogism

—A syllogism consists of two parts¹.

For instance, in our example, (1) the first clause is called **Pratigya** or proposition which is the conclusion and in which the connection between the Sadhya and Paksha is shown and (2) the second clause is called Hetu which contains the Sadhan or that which can but occur in connection with the Sadhya.

Some logicians maintain that a syllogism contains five parts as follows, the last three being added to convince men of small intellect.

- (1) This hill is full of fire— Pratigya or proposition.
- (2) Because it has smoke—**Hetu** or middle term.
- See Sri Dharma Bhushan's Nyayadipika,

- (3) Whatever has smoke has fire, as a kitchen—(Drastanta or example).
- (4) So has this hill smoke—Up-naya or application.
- (5) Therefore this hill is full of fire—Nigman or conclusion.

Dristanta is a simple example which is acceptable to both the disputant and his opponent in a discussion. It is of two kinds: (1) Anvaya or homogeneous, which affirmatively connects the middle term with the major, the presence of the one implying the presence of the other, e.g., whatever has smoke has fire, as a kitchen; (2) Vyatirek or heterogeneous, which negatively connects the middle term with the major, the absence of the other, e.g., whatever has no fire has no smoke, as a lake.

Upnaya or application applies the middle term to the minor with reference to the example.

Nigman or conclusion is that which establishes the connection between the middle and the minor terms.

IX. FALLACIES.

A fallacy or abhas has been defined as the knowledge of that which looks like the real thing but is different from it. The fallacies of Lakshan (Lakshanabhas) and of Naya (Nayabhas) have already been dealt with under the respective heads. There are also fallacies of perception (Pratakshabhas), of argumentation (Tarkabhas), of recognition (Pratyabhigyanabhas), of example (Drashtantabhas, of middle and major terms, etc.

Hetvabhas or the fallacy of the middle term—As already shown, by virtue of its definition the middle term is always distributed in the major premiss. Hence there never occurs the fallacy of 'the undistributed middle'. Hetvabhas is then always a material fallacy. It arises from wrong or defective knowledge of the middle term. It is of four kinds:—

- (1) Asidha, the unproved, which is of two kinds: (a) Swarupasidh, in which the middle term is unreal, e.g., sound is corporeal, because it is visible. Here the middle term 'visibility' is unreal or false, because sound is not visible but audible. (b) Sandigdhasidh, in which there is uncertainty about the middle term, e.g. this is costly, because it is silver, where it is uncertain whether the thing is silver or nickel.
 - (2) Virudha, the contradictory, as, this is fiery, because it is a body of water. Here the middle term (body of water) belongs to the contradictory of the major term (nonfiery). It is therefore fallacious,
 - (3) Auekantik, when the middle term is found is paksha, sapaksh and vipaksha', as, this hill has smoke, because it has fire. Here fire (middle term) is found in the hill in question

(paksha), in a kitchen (sapaksha) and in a piece of blazing coal which gives out no smoke (vipaksha). In fact in this argument the suppressed major premis, viz., 'whatever has fire has smoke' is materially false. So to the western logician this is 'a fallacy of Non causa pro causa, or, as Dr. Whatley calls it, 'the fallacy of undue assumption of a premiss's.

(4) A kinchitkar, the irrelevant, when the middle term is not to the point and therefore serves no purpose. It is of many kinds, e.g., sound is incorporeal, because it is non-factitious, etc.

Pakshabhas or the fallacy of the minor term—This arises when such things are attributed to the minor term as are in capable of being proved or opposed to one's own statement, public opinion, inference, etc., as:—

The sister may be married (opposed to public opinion).

There is no omniscient being (opposed to inference according to the Jainas).

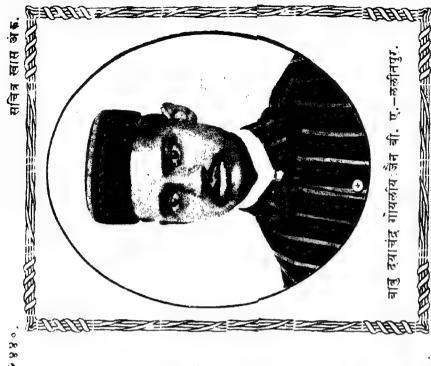
Dushanabhas—This arises when a disputant alleges defects in the oponent's arguments, where there are none

In the fallacies and elsewhere it would be seen that Jain Logic deals not with the form alone but also with the matter of arguments with a view to establish truths and thus wipes out the criticism laid upon logic that it is 'a merely formal and barren kind of intellectual gymnastics'.

^{1.} PAKSILA is that of which the major terms is to be predicated. This hill m fiery, because it is emokey. In this inference fire is to be predicated of hill (Paksha). Sapaksha is that in which both the major and the middle terms exist at at the same time, as, a kitchen (Sapaksha) in which smoke and fire exist together. Vipaksha is that in which the major term is alway absent, as a lake (vipaksha) in which fire (major term) same and same time, as a lake (vipaksha) in which fire (major term).

^{2.} Whatley's Elements, 9th Edition, p. 132.

'दिगंबर जैन''

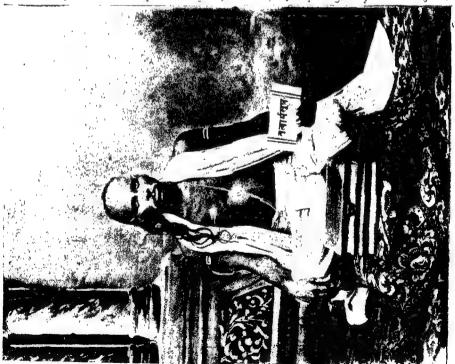


(मार्त जैन महामंडलना जीवद्या विभागना मंत्री अने कटलांक

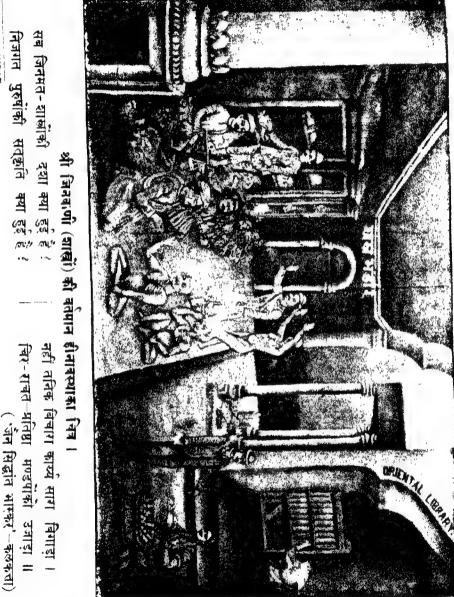
हिंदी पुम्नकाना संपादक अने प्रकाशक, जैन धर्मप्रमी

कळवायला महस्थ.

(व्यलीया स्रायली क्य महित अने अने हिंदी, भेराही अने से न्हेत अंबेना



पं नाना रामचेंद्र नाग-फलरणक्र.



JAIN PRESS SURAT.

नहीं तनिक बिचारा कार्य्य सारा विगाड़ा । चिर-राचत-प्रतिष्ठा मण्डपोंको उजाड़ा ॥ ('जैन सिद्धांत भास्कर'-कळकता)

भू श्री भक्तामर महात्म्यः श्री श्री भक्तामर महात्म्यः

(લેખક-શા. છાટાલાલ ઘલાભાઇ અંકલેધર,) (ગયા વર્ષાયા ચાલુ)

कथा २३ मी.

उचैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयृख माभातिरुपममलं भवतो नितान्तम् । स्पष्टोल्लसत् किरणमस्ततमोवितानं बिबं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति ॥२८॥

अर्थ-हे जिनेंद्र ! जेम प्रकाशमान किरणोवाळा अने अंधकारना समुहने नष्ट करनार सूर्यना बिंब मेघ समीपे शोभे छे, तेम उंचा अशोक वृक्षनी नीचे आपनुं रूप (देह) पण उंचा किरणो फेलावी अत्यंत निर्मल शोभायमान देखाय छे. ॥२८॥

कमठ मान मर्दन कर्ता, शोकविध्न हर्ता, मंत्र प्रभावे नाग नागणीने घरणेंद्र पद्मावितनी पद्मीना दाता, तेवी-समा तीर्थकर श्री पार्श्वनाथस्त्रामीने नमस्कार करी आचार्यश्री अटावीसमा कान्यमां गुप्त गुंफेला (उँहाँ अहँ णमो मा-हातवाणं) मंत्रना फळ विषे २३ मी कथा कहे छे. वळी आ मंत्रनुं यंत्र बनावी वे पासे राखवाथी, विधिपूर्वक कान्य—मंत्र जपवाथी, सर्व कार्य सिद्ध थाय, न्यापारमां लाम बधु थाय, डगुले डगुले जय थाय, स्त्री सौभाग्य आदि अनेक छुल प्राप्त थाय छे; एवं अन्य स्थाने वांचवामां आव्युं छे.

" अरे ।निर्रुज नागा! तारुं रूप कुरुप केम करे छे ? तारुं शरीर गंदु मेळुं निर्धन! जगतमां तारुं जीवन शुं कामनुं ? तुं सामो मळे, तो अमंगळकर्ता! भोग कीडा तो तुं समजतोए नथी ! माथं मुंडाबी बनमां केम फरे छे ते तो बोल ! जाणे मोढ़ं सीवा-यलुं होय, तेम मौन रहेता तने लाज आवती नथी ? मूर्खा, ज्ञान तो छे नहिं अने स्ना-नादि छोडी वागोळनी माफक जाणे वृत करे छे! स्नान वगर तारुं शरीरज केवं गंद् मलीन ! आगल पाछल चार आंगल विथरुंए मळ्यं नहिं! हित अहित तो जाणे कंइ जाणतोज नथी. माणस मुख्यो होय. त्यारे पेट भरवाने ते हां न करे ? क्षुधावंत परजीवने मारे, क्षुघावंत घरने कुटुंबने छोडे, क्षुधावंत पोते चोरी करे, मक्ष अमक्ष खाय. धिकार छे तने ! तारा जेवानं मोढंए नहिं जोवुं !'' इत्यादि बबडती, वनमां नम्न ध्या-नारुढ मुनीश्रीनी निंदा करती करती, बन कीडाअर्थे साहेली सहित आवेली, चंद्रव-दन, रुपकला, नवयुवाते, मृगनयनी अने कंचनवणीं, पोताना रुप आगळ बी-जाने तृण समान गणनारी, रूपगर्वमां झलती, हाथणी समान, एक संदरी पोताना घर तरफ चाली.

दक्षिण देशमां अति विभूति भूषित जिनमंदिर, वन उपवन दुर्गादिकथी रम्य धारापुरी नगरीमां (यथा नाम तथा गुणा)
भूपाल राजा शीलमाल अवलंबित धीमती
प्रियासुंदरी अने सात पुत्र तेमज एक रुपबान रूपकुंडली नामनी कन्या सहित न्याय
पुरस्सर राज्य करी आनंद अने सुखमां
समय गाळतां हतां.

दीवसे दीवसे रुपकुंडलीनुं शरीर गळातं गयं: हाथ पग दोरडी अने पेट गागरही जेवं थतुं गयुं; तेना मुखनी कांति उदी गइ: तेपर घारां पड्यां. माखी तेना पर गणगणवा लागी: शरीरे दुर्गेघ वधवा लागी, बस्न परुवाळां थवां लाग्यां, काळा ठीकरा जेवं मुख थयं: राज तरफथी अनेक उपचार कांबा बस्बत पर्यंत थवा छतां पण श्वरीर सुधर्य नहिः नोकर तेनाथी कायर थमा, समां वहाळां तेनाथी दूर रह्यां अने मातपिता पण तेनाथी विमुख थयाः महेलने खुणे रुपकुंडली सडवा लागी, पोते मानिने कहेल शब्दोनो अनुभव लेवा लागी: पोते उचारेका शब्दनी प्रश्चाताप करवा लागी अने मुनी पासे जइ क्षमा याचवा इच्छा थवा लागी.

हवे एक दिवस ते घेरथी नीकली वनमां रूथडती लथडती सुनीश्रीने ढुंढती विचरवा लागी. श्रमे सुनीश्री तेज वनमां ध्यानारुढ हता त्यां ते आवी पोहोंची.

रूपकुंडली-(मुनीनी पदक्षिणा करी, साष्टांग नमस्कार करी)-- ''करुणा सागर! हुं तमारे श्वरणे छुं. महाराज, में तमारी

निंदा करी, में मतिहीन अंधे तमारा गुण जाण्या नहिं; योगेंद्र ! तमारी स्तुतिने बदके में अभागणीए तमारा अवगुण गाया, मारुं दुःख दूर करों. महाराज मने संसार्थी मुक्त करों."

मुनीश्री ज्ञानी हता. तेमने रूप-कुंडली प्रति राग द्वेष हतो नहि. एटले 'धर्म वृद्धि' कही तेने उपदेश देवाना हेतथी तेमणे कहां-''बाळा ! तुं चिंता न कर. आज देहशी तुं देव पद्वी मेळ-वशे, इंद्र पदने पामशे, तुं कामदेव समान थइ मुक्तिनी प्रेमी थशे. कर्मना उदयथी आ संसारमां प्रकारनां दःख भोगववां पडे छे, तेने लेश मात्र सुख मळतुं नथी. जेम गा-यना सींगडामांथी दुध नथी नीकळतुं, दावानळ अग्निमां कमळ नथी निपजतुं, सर्पना मुखमां अमृत नथी रहेतं अने झेर पीघे जीवित्व नथी रहेतुं. वीतराग भुनिद्र अथवा परम संतोषी शिवाय अन्य कोइने संसारमां सुख होतुं नथी. जे सुख परम उत्कृष्ट कहेवाय छे, ध्यानद्वारा परमानंद स्वरूप आत्माथी उत्पन्न थाय के अने जे चिंतारुपी संतप्त हृदयवाळा इंद्र चक्रवर्ति आदि महा पुण्यवान पुरुषोने करोडो उपाय करवाथी प्राप्त थइ शकतुं नथी ते केवळ आत्मजन्य मुख एवा मुनीनेज सदा प्राप्त थाय छे; तेमज निर्वाणजन्य सुख पण तेने होय छे." रुपकुँदछी (वचमां)-''महाराज, मारे माटे सुखनो मार्ग नहिं के ! मारे स्वात्महितनो रस्तो नहिं के !''

मुनीश्री-''धीरी था, तारे माटे सु-लनो मार्ग श्रावकाचार छे ते संक्षिप्तमां हं कडीश. स्वात्महित करनारे तपश्चरणरुप शास्त्रद्वारा मोहोदयथी उत्पन्न थयेला इंद्रि-यरुपी शत्रुने दमन करी मोक्ष मेळववातुं छे. हुं एकलो छुं; अन्य कोई सहायक नथी; घर कुटुंब आदिमां ममत्व राखवाथी अनेक पाप अने दु:ख भोगववां पडे छे कारण के जीवने प्रति समय निर्ममत्व (मोह रहित) परिणामोथी अनंत कर्मनी निर्जरा थती रहे छे अने ममत्वरूप परिणा-मधी प्रति समय अनंत कर्मोनी आश्रव, बंध थतो रहे छे, तेथी ममत्व परिणामधी मरण समये अञ्चम आर्त, राद्रध्यान थाय छे श्रने अग्रम ध्यानथी अवस्य दुर्गतिमां पडवुं पड़े छे. माटे मात, पिता, भाई, पुत्र, गृह, शरीर, धनादि मारा आत्माथी भिन्न छे, मारा नथी, मारे तेनी साथे संबंध नथी एम मानवानी जरुर छे. ते तें तो तारा मातिपताथी अनुभव्युं छे. वळी जन्म, मरण, जरा, रोग, क्वेशादिना समये अनित्य शरीर आदि प्रत्यक्ष आत्माथी भिन्न अनु-भववामां आवे छे. मलमूत्रादिक जेम सुंदर वस्त्रथी ढांकवामां आव्युं होय तेम हाडकां. मांस, रुधीरथी बनेलुं, मलमूत्रथी गरेलुं, महा अपवित्र अने वीभत्स शरीर चामडीथी

दंकाय हुं छे, तेथी श्रश्चि छे. ए शरीर रूप ध्रुपढीमां क्षुधा, तृषा, काम, कोध, रोग, कषाय द्यादि दु:सह दावानळ सदा प्रज्विल रहे छे, ते धर्मनुं मक्षण करे छे; इंद्रियरुपी चोर धर्मनुं हरण करे छे; तेथी जीवो धरीरनुं पालन पोषण करतां स्वेच्छा-चारी बने छे, अने तेथी आ लोकमां संकडो रोग, क्षेशादि घर करी बेठा छे अने परलोकमां नीच दुर्गतिनां अनेक दु:ख मोगववां पढे छे."

रुपकुंडकी--" महाराज, शरीरना पालन पोषण करनाराने रोग, क्रेशादिकु:स केम सहन करवां पढे ! "

मुनीश्री-'' जेने उपवास करवानी शक्ति होय ते एक उपबास पण नहिं करे अन ज्यारे ते रोगी थाय त्यारे तेने महिना सुधी लांघो करवो पडे अने दुःख सहन करवं पडे. आरोग्यता माटे महिनामां बेचार उपवासनी आवश्यक्ता छे. बळी उपवासधी आरोग्यता वधे छे, नेत्रादि इंदियोतं वधे छे अने परलोकमां स्वर्ग मळे छे. तेथीज मोक्षादिकना सुख जेणे तपश्चरण, व्युत्सर्ग अने ध्यानादिक द्वारा पोतानुं शरीर कृष कर्युं होय, तेनुं कृष शरीर सार्थक छे तथा तेज शरीर पूज्य छे. "

रूपकुंटली—''त्यारे मारा जेवानां शरीर तदन निरर्थक केम?''

मुनीश्री-"बुद्धिमान संसारी मनुष्य,

श्वरीरथी जप्तन थतां सुखमां वांच्छना राखी मूळावो न खातां शरीर अनित्य होवाथी जेम बने तेम जल्दी यम नियमादी पाळे—धर्म पाळे—श्वावकाचारने आदरे तो तेनुं शरीर निरर्थक नथी."

रुपकुंडली--" तो महाराज, मने आवकाचार बताववा कृपा करो. [मनमां] पण अरे पापी आत्मा! आवा शरीरथी केवी रीते आवकाचार पळाशे?"

मुनीश्री—(मनोभाव जाणी लेवाथी)
"चिंता न कर. हुं तने संक्षिसमां श्रावकाचार
समजावी एक मंत्र आपीश, तेनाथी तारुं
शरीर सारुं थशे पण तारे पहेलां सम्यक्त
भारण करवुं पडशे."

रुपकुंडली-"मुनीवर प्रमु, हुं सम्य-कमां समझती नथी, माटे मने पहेलां ते समझावो."

मुनीश्री—''बाळा, मन, वचन, कायाथी सांमळ. देव, शास्त्र, गुरु पर श्रद्धा राखे, तेनो मनमां टेक राखे, सात तत्वपर श्रद्धा राखे तेने सम्यगदर्शन कहेवाय छे. एकांत, विपरीत, वैनियक, सांशयिक अने अज्ञान ए पांच मिध्यात्व मनथी त्याग करवा; देवमूढता, गुरुमूढता अने लोकमूढता ए तण मूढता, जाति कुल आदि आठ प्रकारना मद, छ अना- अतन अने शंका कांक्षादि आठ ग्रंग मळी २९ मल त्यागवा; दया धर्म पाळवो; अहिंसा वत सर्वश श्रेष्ठ छे. असत्य वचन

नहिं बोलवा, अपाया वगरनी वस्तु उठावी लेवी नहि. जे नरनारिब्रह्मचर्य पाळे,शील वत पाळे तेने ऋपार किर्ति मळे, एट-लुंज नहिं पण सुरनर स्वर्गमां ते पूजनीक थाय छे. वस्त परिमहनुं प्रमाण करे, इंमेशां बहेलां उठी दशदिशानं प्रमाण करे, जे मुख्यी अनर्थ वचन काढे नहिं तेनी कीर्ति जगतमां थाय छे. चार शिक्षा वत व्यवहारथी पाळे. सात व्यसननो त्याग करे, पांच इन्द्रियोनुं निरोधन करे, त्रण मकार (मद्य,मास,मदिरा), पांचउदंबर ए अष्ट मूल गुण पाळे, कंद्रमूळ ते पापमूळ समजी त्याग, एक मृह्ते पछीनुं मांखण, सुरण, कादा, कलिंद ए सर्व चीज खाय नहिं, चामडामां रहेकुं धी, तेल, पाणी, ते अंगीकार करे नहिं, शीणा वस्त्रथी गाळेलुं पाणी उत्तम नर पीए नहिं, एवा आचार श्रावकना छे. एनी विस्तार कर-वाथी विवेचन वधी जाय, माटे एटल्लं प्रहण करी भक्तामर स्तोत्रनों आ अद्वाबीसमी काव्य तथा तेनो मंत्र विधिपूर्वक शीखी छे, जेथी तारा दुष्ट रोगो दूर भशे."

मुनीश्रीए मंत्र शिखव्यो, रुपकुंडली नमोस्तु करी घेर गइ अने त्रण दिवस रात्रि पर्यंत तेनो जप कर्यो, एटले चोथे दीवसे प्रभाते उठी ते जुए छ तो पातेनं इसरीर कंचनकांतिने पाम्युं! जेथी मात-पिताने आश्चर्य लाग्युं, पण तेओ सर्व हकी-कत सामळी आनंद पाम्या. रुपकुंडलेनो

धर्मपर आस्था बेटी.

पछी मातिनताए गुणशेखर नामना कुंबर साथे तेनुं लग्न करवा इच्छा बताबी. रुप- कुंडलोए ते बाबतनी ना कही सूचन्युं के तेणे संयम लीघो छे. ते मुनीश्री पासे उमंग्यी गई तेनो उपकार मान्यो अने तेनी पासे माबिवसुकर्मनाशनी दिक्षा लीघी तथा अंतकाळे संन्यास लड़ देह छोडी सीधर्म स्वर्गमां इंद्र थई सुख भोगवती थइ. आवी रीते बीजुं कोइ कर, तेने पणएजफळमळ. कथा २३ संपुर्ण.

--->>8€€•---

हुँ हुएण और दानीका संवाद.

[लेखकः-गोपीलाल गोपा, छः कर.] कृपणदासकी बैठक और दानचंद्रका आना.

कुपणदासः—आइये मित्र दानचंद्र ! अबके तो आपने बहुत दिनोंमें दर्शन दिये। बतलाइये तो सही आजकल आप कहां रहते हैं !

(नोट:-दानचंद्र एक बड़े घरानेके आदमी है, यह पढ़े लिखे भी बहुत हैं, यह गवर्नमेंट कालेजकी बी. ए. परीक्षा पास कर चुके हैं; परंतु फिर भी आप और तथा धर्म अंथावलोकनादि किया करते हैं, यह अपने समयको व्यर्थ नहीं खोते. यह एक पुण्यवान, दयावान, दानी, धर्मात्मा सज्जन हैं. इन्होंने अपने जीवनको जाति , सेवाके लिये अर्पण कर रखा है। यह इतने बड़े आदमी होकर भी बड़े सरल स्वभावी (Simple minded) मनुष्य हैं, आप हर समय अपनी आत्मोन्नातिके उपाय सोचा करते हैं. आप एक रोज अपने मित्र क्रूप-णदासके वहां गये जैसा कि पाठकोंने ऊपर पढा हैं)।

दानचंद्र:-मित्र ! मुझे अवकाश बहुत कम मिलता है और इसी लिये आपके पास उपस्थित न हो सका।

कृपणदास (इंसकर):—जब आपको अवकाश ही नहीं मिलता, तो आज आप कैसे पधारे! कहिये कोई नई खबर है !

दानचंद्र:-मित्र ! एक दुखकी कथा और दूसरी इपेकी बात कहनेके लिये आया हं और आशा है कि आप उस कार्यमें सहायता देंगे और आप भी इस कार्यके करनेमें सदा तत्पर रहेंगे।

कृपणदासः-मित्र ! कहिये ! ऐसी कौनसी दो बार्ते हैं ?

दानचंद्र:-मित्र ! देखिये ! आजकल अपनी जैन जातिकी क्या दशा हो रही है। यह दिन व दिन अधोगतिको प्राप्त होती हुई चली जा रही है, इसमें दिक्षित पुरुष तो कहीं नज़र ही नहीं आते और अगर हों तो मेरे ख्यालसे १०फी सदी होंगे. अब आप नतलाइये कि जिस जातिमें ८०फी सदी

पुरुष अविद्याके पेमी हैं तो वह जात कैसे उन्नति कर सकती है यही एक दुःखकी कथा है।

अब इतका सुधार तबही हो सकता है, जब कि शिक्षित ही शिक्षित पुरुष नजरमें आवें, इसके लिये एक जैन कालेज की आवश्यकता है। सो बहुतसे माइयोंने तो इसका बिचार कर लिया है और अपने आत्मकल्याणके लिये यालाका विचार हो रहा है सो उनके जैसा मेरा भी इरादा है। आप भी कृपा कर इस जैनकालेजके लिये सहायता दीजिये और यात्राको चलनेकां तैयार हुजिये।

(नोट र:-कृपणदास एक बहुत बड़े आदमी हैं; परंदु वे अविद्या और आल-स्यके बड़े प्रेमी हैं। वे जैसे बाल्यविवाह, बुद्ध विवाह, वेदयानृत्य, ज्योनार आदि कुरीतियोंके बड़े प्रेमी हैं वैसेही विद्यान्नति, जात्योन्नति, धर्मोन्नति, कुरीतिनिवारण आदिके बड़े बेरी हैं और इनमें एक पैसा भी खर्च करना गुनाह समझतें हैं और इसी छिये इनका नाम मनुष्योंने कृपण रखा है। यह दानचंद्रकी बार्ते सुनकर धरधर कांपने छगे और इनको एक प्रकारका ज्वर चढ़ आया और दानचंद्रसे इस प्रकार कहने लगे।)

कुपणदास [सुस्त होकर]:-भित्र, क्या तुम बायले हो गये हो? या तुमको किसीकी हवा कग गई है जो तुम मुझसे धनके खर्च होनेकी बार्ते कर रहे हो ? हमारे कुलमें तो

ऐसी रीति अभी तक हुई नहीं है कि धर्ममें पैसा लगावें. इसमें तो पैसा लगाना बेवकूफी है। मैं तुमसे भी कहता हूं कि तुमभी ऐसे कार्यमें मत फंसो।

दानचंद्र:-मित्र ! अरे ! यह धन तुम्हींने पैदा किया है। अब इसको धर्ममें लगाओ, जिससे तुम्हारा यह लोक और परलोक दोनों सुधरे। अपनी जातिकी उन्नति करो, जिससे तुम्हारा नाम संसारमें प्रसिद्ध हो।

कृषणदासः नित्र! तुम तो सचमुच बावले हो गये हो. अरे ! इस धर्ममें क्या रखा है ! क्या तुमने कोई भी धर्मात्मा आदमी धनवान होता देखा है ! अरे ! तुम भी इस कार्यको छोड़ दो. देखो! तुमको अभी अपने लड़केकी शादी करनी है, उसमें ज्योनार इत्यादिके लिये धनकी आ-बश्यकता पड़ेगी. अपने महस्थी है, अपने पीछे सौ झगड़े लगे हुए हैं. अगर अपन अपना धन धर्ममें लगा देंगे, तो महस्थी खर्चके लिये फिर धन कहांसे आवेगा !

दानचंद्र:-मित्र ! तुमतो उल्लक्किसी बांतं करते हों । अर देखां ! यह धर्मकी ही महिमा है, जिससे कि तुम धनवान हुए बैठे हों । देखां ! यह लक्ष्मी चंचल है। यह कभी किसीकी न रही और न रहेगी। इस धनको तो धर्ममें ही लगाना अच्छा है, जिससे कि पुण्यका बंध हो. अरे ! यह तुम्हारी धर्मके लिये कृपणता अच्छी नहीं है यह कृपणता किसी रोज तुमको सत्यानाश

में मिलादेगी। देखो, इसी लिये एक अंग्रेजी
में कहावत है "A wicked life can
not make a happy death"
यानी (एक बुरी जीन्दगीसे कभी सुख की
मौत नहीं होती) इस लिये मित्र! मेरा
कहना यही है कि धर्म करो और परोपकार
में छगो, जिससे तुम्हारा जीवन सुधरे।

कुषणदासः—[नाराज होकर] मित्र! अब मैं समझ गया. तुम धर्म वगैरह कुछ नहीं करते। तुम सिर्फ मैरा धन खर्च कराने के लिये आये हो। अब मैं जान गया। अब मैं कदापि तुम्हारी बातों में न आऊंगा और न इस मामले में एक पैसा भी दूंगा। मैं तुम्हें भी समझता हूं कि तुम भी इस झगड़े में मत पड़ा।

दानचंद्र:—अरे मित्र! सुनो ! तुम यह अपनी कृपणताकी बातें छोड़ दो । मैं जा-नता हूं कि तुम जैसोंसे ही इस बिचारी जैन जातिकी यह अधोगति हुई है । अरे ! देखो ! मैं अब भी तुम्हें समझाता हूं कि तुम धर्म करो, क्योंकि तुम्हारी उम्र अब ढल चली है इस लिये मुझे तुम पर दया आती है. मैं तुम्हारे सुखके लिये ही कहता हूं. अगर तुम मेरा कहना न मानोगे, तो पछताओंगे ।

कृपणदासः - अरे ! मित्र दानचंद्र ! तुम अब इस बारे में मुझसे ज्यादे न कहो।

दानचंद:-मित्र! मैं क्या करूं ? इस जैनजाति में तुम्हारे जैसे ही आज कल मनुष्य भर रहे हैं और तुम जैसों से ही इस जैनज़ाति की यह गिरीं हुई दशा हो रही है; परंतु मित्र ! मैं क्या करूं ! तुम्हारे कोई कर्मका उदय है जिससे कि तुम्हारी बुद्धी उलटी हो रही है और तुम विद्यादान देना बुरा समझते हो और अपने अविद्यारूपी पुराने ढंगके छाइ चांकल ही पकाये जा रहे हो । मुझे तुमपर दया आती है इस लिये में अब भी तुमसे कहता हूं कि जात्योन्नति, धर्मान्नति और परोपकार करो, जिससे नुम्हारा जीवन सुधरे । मैरा काम तुमसे कहनेका है सो कह चुका ।

कृपणदासः-दानचंद्र ! मैं तुम्हार्री सब चिकनी चुपड़ी बातोंको समझता हूं; लो, मैं तुम्हारे पाससे उठा ही जाता हूं।

ऐसा कहकर कृपणदास वहांसे उठ गया और अब सिर्फ अकेला बिचारा दान-चंद्र रह गया, सो वह भी वहांसे अपने घरको चल दिया. थोड़े दिन पीछे कृपणदास के घरमें चोरी होगई। और चोर उसका सब धन माल लेकर चम्पत हुए। कृपणदास पर दानचंद्रकी एक भी बातका असर न हुआ। होता कहां से ! वह तो चिकने घड़े के तुल्य था। जैसे चिकने घड़े पर पानीकी बूंद नहीं ठहरती उसी तरह दानचंद्रकी उपदेश पूर्ण बातें कृपणदासके न भाई और इसके पीछे भी दानचंद्रकी बातोंको चिकनी चुपड़ी बातें बतलाई यह ठीक ही है कि पुराने ढचरेके और अविद्याके प्रेमी मनुष्य उपदेश पूर्ण बातोंको चिकनी चुपड़ी ही बतलाया करते हैं। कृपण-दासको अपनी कृपणताका तुरंतही फल मिल गया. सच ही है, जो कोई धर्म में कृपणता और इसकी निंदा करता है उसकी यही गति होती है; क्योंकि कहा भी है कि Covetousness of religious merit leads a man towards hell" यानी [धर्मकी कृपणता मनुप्यको नर्कमें पहुंचा देती है] इस लिये मनुप्यको चाहिये कि वह धर्म में कदािय कृपणता न करे।

अब लीजिये, दानचंद्रकी बात, - वह एक कंचे दर्जेपर पहुंच गया और अपने दिल में हद श्रद्धान कर लिया कि अगर मनुष्य जनम सफल करना है तो धर्म में नीयत रखते हुए जातिसेवा और परोपकार करूं। इसी धर्मकी वजहसे दानचंद्रका सब जगह सन्मान होगया और वह एक बड़ा आदमी होकर के धर्म ध्यान के साथ अपना जीवन सुखसे व्यतीत करने लगा।।

भिय पाठको ! यह उक्त संवाद आ-पने पढा. अब आप स्वयं विचार सकते हैं कि यह कोई किस्सा कहानी नहीं, यह केवल हमारी जैन जाति की दशा क्रपण और दानिके रुपमें है आजकल हमारी समाज इस कृपणता ही की वजहसे इस अधोगतिको पाप्त हुई है। अब अपन सब को मिल कर दानचंद्र बनना चाहिये और इस कृपणता को तिलांजली देनी चाहिये। जब अपन दानचंद्रके तुल्य दानी, धर्मात्मा, और विद्यावान हो जावेंगे तब इस क्रपणता पानीके पम्पोटों के समान क्षण भर में नष्ट कर देंगे इस लिये अपन सबको अबदान-चंद्र ही बनना योग्य है। आशा है! सज्जन गण ! मरी विनती पर अवश्य ध्यान देंगे और जो कुछ मुझ तुच्छसे कोई अनु-चित शब्द निकल गया हो. उसके लिये क्षमा प्रदान करेंगे।

🧫 यूतक्रीड़ा। 🥌

(छेसक:-जैन किन वाबु ज्योतिप्रसाद जी, संपादक "जैन प्रदीप"-देवबंद)
सप्त व्यसन जिन प्रंथमें, कहे पापके मूल । जो ग्यानी ध्यानी पुरुष,इन्हें न सेवें मूल ॥
इन सातोंमें मुख्य है; धृत महा अब द्वार । जाको जूना खेलना, कहत सकल संसार ॥
दो अक्षरका शब्द यह, है संकटकी खान । धन सम्पत घर द्वारकी, करे क्षणकमें हान ॥
याके युनकर नामको, बैल सारिखे जीन । दुखित होय मनमें अती, आवत दृष्टि सदीन ॥
धन जाने मन दुखित हो, तन सूखै तत्काल । जगतजीन निंदा करें, दण्ड देत भूपाल ॥
जरत विगाने लोग सब, करत कुटुम्बी रार। भरत विषयित जगतमें, मरत कृष्ट सह भार ॥



Dr. Ambropo Balliny Ital; डो. एम्ब्रेजीओ बेळीनी इंटाळी



Dr. A. Guerinot Paris डा. ए. गेरीनोट-पेरीस (फ्रान्स)



Dr. Beloui Philipi Italy. डॉ. बलावी फिलिपी-इटाली



Motilal Jain, Ast. Master Govt. H. School-Agra. बाबू मोतीलाल जैन-आमा.



Dr. Ambrojio Balling Itali. डॉ. एम्ब्रेजीओ बेलीनी इटाली



Dr. A. Guerinot Paris डा. ए. गेरीनोट-पेरीस (फ्रान्स)



Ir. Beloni Philipi Italy. डॉ. बेलोनी फिलिपी-इटाली



Motilal Jain, Ast. Master Govt. H. School-Agra. बाबृ मोतीलाल जैन-आग्रा.

देखो प्रथनमें कहा, पाण्डव भूप प्रवीत । इसी धूतके कारणे, हुवे दीन धन हीन ॥ राज्य गयो सम्पत गई, सुख भागो तज संग। सती द्रोपदी हारकर, हुये सभी विध तंग ॥ वन२ में भृमते फिरे, महा कप्ट तन धार । दुखसे दिन पूरण किये, चिंता लही अपार ॥ इस जूवेका शास्त्रमें, जो जो बरना हाल । कवी न वर्णन कर सकैं, मेरी कौन मजाल ॥ जे नर उद्यमसे रहित, हैं आलसके कीट । ते नर जूवा खेलते, कही न मानैं दीट ॥ होंय एक के सौ गुणे, यही समावें चित्त । इसी आस व्यवहारपर, शीस मुंडावें नित्त ॥ हार गांठके द्रव्यको, होय दरिद्री रंक। चौरी अस जोरी करें, मारें माल निशंक।। धरी धरोहर को हरैं, रच रच लाख प्रपंच। धन जोडें खेलैं जूबा, पास न राखैं रंच॥ फिर मग छटें रैन दिन, कर पथिकोंका घात। लाय लाय सब द्रव्यको, जूवा खेल गंबात ॥ नीच कर्मके करनसे, वह दिन पहुचैं आय । भूप दण्ड परचण्ड दे, नाक कान कटनाय ॥ बन्दी गृहमें डाल कर, देवें संकट घोर । धन हारे यह हो दशा, धन जीते कुछ और ॥ जब धनजीता चित्तमें, धारो हर्प अपार। लोक लाजको खोय कर, किया मोग व्यभिचार ॥ संग किया गणिकानका, अरु मदिराका पान। मांस आदि भक्षण किये, तनिक न कीनी ग्लान ॥ सच तो यों है पाप धन, रहे न कोई काल। पल भरमें बह जात है, नदियों कैसी चाल ॥ कन्या वेचे छल करें, चोरी कर धन पात । जूबा खेले धन मिले, यह क्षणमां हि नसात ॥ तास जुवा चौसर जुवा, जल थल जुवा अपार। अब होता सट्टा जुवा, इन सबका सरदार ॥ इस सट्टेकी ओटमें, बड़ेर धनवान । खेल जुवा निस दिन करें, धन सम्पतिकी हान ॥ दीप मालिका के दिवस, भारतके नरनार । हो करके अज्ञान वस! खेळैं जुना अपार ॥ अरु इम कथनी कथत हैं. आज जो खेलै नाहि । पशुगति पा गर्दभ बनैं, अगले भवके माहि ॥ समझ परी पर यह नहि, जुवा खेल अघ रूप। दीपमालिका पर्व है, सचमुच धर्मस्वरूप ॥ या दिन वीर जिनेंद्रने, अष्ट कर्म रिप्र जीत। जगत भीत तज कर करी, मुक्तिरमासों भीत ॥ रैन समय शिवपुर गये, पावापुरसे ईश । सुर-सुरपति,नर-नरपती-नमें चरण धर शीस ॥ या कारण या दिवसमें, धर्म ध्यान है योग । पर पापोंका मूल यह, जूवा खेलै लोग ॥ है दुख वहु या बातका, समय गया क्या आय। जीव अहित अपना करें, उत्तम कारण पाय ॥ अपना तो यह कहन है, भले समयको पाय । निज हितका साधन करो, मिटै कर्म दुखदाय ॥ जूवा कूवा अंध है, यामैं गिरो न कोय। अब तक हुवा सो होगया, अब नहि ऐसा होय ॥ ज्योति जो जूवा तर्जे,हो तिनका कल्याण। धन अरु सुख सम्पति बड़ै,कीरति होय महान ॥

The High-water Mark of Jain Culture in Ancient India.

(By T. P. Kuppuswami Shastri M. A. Assist. Govt. Musium TANJORE)

It can safely be asserted that Sanskrit (including Prakrit) was the ancient language of the Jains, one section of the Non-Vedic Indo-Aryans. as it was of the Vedic people (i. e. those that recognised the authority of the Vedas). Such words as Jaina, Kshapana, Sramana, Arhata, Syadvadin, etc., used to connote former class are all of Sanskrit origin. Also the two words Digambara and Shvetambara, denoting the subdivisions of this class, are clearly Sanskrit. According to the Philosophy of the Jains there are nine l'adarthas, (categories) as, Jiva (Soul), Ajiva (Non-Soul), Asrava (the inflow of Karmas). Bandha (the uniting of the Karmas with the Soul), Samvara (stopping the inflow of Karmas), Nirjara (the destruction of Karmas that find the Soul). Moksha (entire freedom of the Soul from the influence of Karmas), Punya (Merit or meritorious Karma) and Papa (demerit or demeritorious The first seven of the nine Karma). Padarthas are called the seven Tattvas of Jain Philosophy. It is also seen that the words denoting the nine Padarthas noted above, as well as other words used to denote their multifarious divisions, are all selected from Sanskrit Vocabulary.

2. Apart from this the Tirthankaras who promulgated the wellknown doctrines of the Jains were all

Arya-Kshatriyas. It is admitted on all hands that Sanskrit Language of Speech and Thought of the Arya-Kshatriyas. The Ancient Sanskrit Books of the Jains, enunciating the doctrines of Jainism, corresponding to the Vedas of the Vedic People are even at the present day deposited in the archives of the Jain Mudubidiri, in South at Canara, and in some other places. These records are mainly manuscripts on palm-leaves in the Sanskrit and the Prakrit Languages. The Tattvartha-Sastra, which deals fully with the doctrines relating to the religion of the Jains, is a monumental work written in Sanskrit by the well-known sage Umastati, corresponding to the Uttara Mimansa ot sage Veda Vyasa. In the beginning of the second Century after Christ the famous Samantabhadra-Syamin wrote the celebrated Gandhahasti Maha Bhashya, a commentary on the above work. Many others also have written several commentaries in Sanskrit in later times. on the two works mentioned above. Sage Samantabhadra came to South India from the city of Pataliputra in the North. It was he who was the first in taking an active part in assisting and promoting the settlement of the Digambara Jains in South India. In this connection it is worthy of note that Shvetambara Jains are rarely to be met with in

South India, even at the present day.

3. It seems that from very ancient times Upanayana (Investiture of the Sacred Thread) and Gayatryupadesa (Initiation) have been common to the Jains as well. Even today Sanskrit is the Language adopted in celebrating the rituals in Jain temples and in conducting the many ceremonies performed usually in the houses of the Jains.

4. It is not merely to the field

attention. There are

of Religion that Jain writers have

their

innumerable other writings in Sanskrit on matters of general interestthe work of the indefatigable Jains. Sakatayana Vyakarana, a work on Sanskrit Grammar is ascribed to " लहः Sakatayana, a Jain author. शाकटायनस्यैव, '' 'व्योर्लघ प्रयत्नतरः। शाकटायनस्य," are the Aphorisms of Panini that clearly testify to the fact that Sakatayana preceded Panini. Yakshavarmacharya, a commentator of Sakatayana Vyakarana, has clearly expressed in the introductory verses of his work that Sakatayana was a

स्वस्ति श्रीसकलज्ञानसाम्राज्यपदमाप्तवान् । महाश्रमणसङ्घाधिपतिर्यः शाकटायनः ॥१॥ एकःशब्दाम्बुधिं बुद्धिमन्दरेण प्रमथ्य यः । स यशःश्रि समुद्देशे विश्वं व्याकरणामृतम्॥२॥ स्वरुपग्रन्थं सुखोपायं संपूर्णं यदुपक्रमम् । शब्दानुशासनं सार्वमर्हच्छासनवत्परम् ॥ ३ ॥

refered to:-

The following are the Slokas

तस्यातिमहतीं वृत्तिं संहत्येयं लाधियसी। संपूर्णलक्षणा वृत्तिर्वक्ष्यते यक्षवर्मणा ॥ ९ ॥ which mean, "The All-wise Sakatayana, the head of the Jain Sangh churned the ocean of (Sanskrit) Vocabulary with the Mount Mandara of his knowledge and obtained the nectar of Grammar combined with the Lakshmi of game. This great work, similar to the Siddhanta Sastra of God Arhat has been written in a simple, brief and comprehensive manner in order that it might be of use to all. This easy commentary bearing on the big commentary (Amogha Vritti) of the work and possessing all the qualities which a work of the type should have, is written by Yakshayarman. 2

5. Further the ancient Lexicon styled Amarakosa is the work of a Jain Lexicographer Amarasihma, a deep scholar and one of the eight world-gamed Grammarians of Sanskrit Literature. This immortal work of his is often quoted with approval by all commentators alike notwithstanding its Jain authorship. In course of time the Jains also, like the Brahmans, adopted the language of the people among whom they settled. Yet, inspite of the lapse of several centuries the regard and love they had for their mother-tongue, Sanskrit. does not seem to have abated. from the high proficiency they attained in Sanskrit Literature and Grammar in later times it is clear that their zeal for Sanskrit was quite immeasurable. The following works on Grammar viz., Nyasa (by Prabha.

chandra), Katantra Vyakarana otherwise, known as Kaumara Vyakarana (by Sarvavarman), Sabdanusasana (by Hemachandra). Prakrita Vyakarana (by Trivikrama), Rupasiddhi Dayapalamuni), Sabdarnava (by Pujyapada Svamin), and others; Lexi cons such as Trikandasesha, Namamala (by Dhananjaya), Abhidana chintamani. Anekarthasangraha and other kosas of Hemachandra; Puranas of the type of Mahapurana, Padmapurana, Pandavapurana, Hariyamsa, Trishashtisalaka Mahapurana (in Prakrit) & others: Prose Works such as Gadya Chintamani, Tilakamanjari and others; Poetical Works, such as Parsvabhyudaya, Parsvanathacharitra, Chandraprabhacharitra, Dharmasarmabhyudaya, Neminirvankavya, Ja-Raghava vantacharita. Pandaviya | otherwise known as Dvisandhanakav-Trishashtisalakapurushacharitra, Yasodharacharitra, Kshatrachudamani. Munisuvratakayya, Pala Bharata, Bal Ramayana, Nagakumarakayya and other works; Champus such as Jivandhara Champu, Yasastilaka champu, Purudeva champu and others: Works on Rhetoric of the Vagbhatalankara, Alankara Chintamani, Alankaratilaka, Hemachandra's Kavyanusasana and others; Dramas Such as Vikranta Kauraya Paurayiyam, Anjana Pavananjaya, Juanasurvodaya and others; Works on Medicine such as Ashtangahridaya; Mathematics, Astronomy i and Astrology such as Ganitasara-: sangraha. Triloksara, Bhadrabahu Telugu, Malayalam and Canarese, it

drasuryaprajuvapti and others; works Aptapariksha. Logic such as Patrapariksha, Samayaprabhrita, Nyayavinischayalankara, Nyayakumuda-Aptamimansalankriti, chandrodaya. and others; Hemachandra's other books were the Sastra: and works of Jain authors. It is not possible even to enumerate here the hundreds of works written by these great men. Some of these have already been published by men of light and leading with whom such work has been labour of love, and others have yet to see the light of day.

- 6. Jains of ancient times wrote many rare and excellent works in order to propogate their religion in the tracts in which they settled. They worked not a little to enrich the Vernacular Literature of those place. Most of these works which they have written in the Vernacular Languages are based on Sanskrit originals. As they declined in influence and numbers, owing to some anknown causes their culture began to give away. A consideration of the lacts set forth above leads one to the irresistable conclusion that Sanskrit was the Language of the Jains in ancient times.
- 7. We shall next proceed to consider the part played by the Jains in enriching the Literature of their adopted homes in South India. Of the four important Dravidian Languages of South India, viz., Tamil, samhita, Jambudvipaprajnyapti, Chan- is only with the first and the last

that the Jains seem to have concerned themselves. It is strange to note that there is no work extant either in Telugu or Malayalam that flowed from the pen of a Jain. Several books in Canarese have been written by the Jains since their advent into the country of the Karnata (Kannada) speaking people and it is not proposed, in this short paper, to refer to them in detail. As regards the contributions of Jain authors to the Literature of the Tamils, the following facts may be noted here:—

- Tirukkural, a didactic, which is veritably a Tamil Classic, was the work of the immortal Tiruvalluvanavanar, who, owing to his great repute. is likely to be claimed by the Hindus as belonging to them, may yet be proved to have been a Jain by incontrovertible evidence. The book treats of Virtue, Wealth and Love in 133 chapters containing 10 couplets in cach. This is so Cosmopolitan in its nature that it is approvingly quoted by great writers following diverse faiths and has been translated into more than four European Languages. It belongs to a period not later than the Second Century A. D.,
- ii. Naladiyar, is ascribed to several Jain Saints and is said to have been compiled from their works by Padmanar, another Jain. It is an Anthology containing 400 quartrains and treats of the same subjects as Tirukkural. It belongs to the latter half of the Eighth Century A. D. as will be borne out by the perusal of an article contributed to the

"Sendamil" of Madura (Vol IX—Nos. 4, 5 and 6) by the writer of the present note. In this book there are several verses based on Slokas from Bhartrihari and other Sanskrit authors.

iii. Jivaka Chintamani, the life story of King Jivaka, a Puranic personage, by Tiruttakudevar, a Jain Saint of repute, in 13 books or Lambakas, containing 3,145 stanzas. It may here be noted that some stanzas from this work have their exact counterparts-so exact that it is not quite possible to say which has borrowed from which-in Kshatrachudamani (Sanskrit) of Vadibhasilma. This is considered to occupy the first rank among the Five Great Classic Poems," (the Panch Mahakavyas) of Tamil Literature. Of the other four, two, namely Valayapati and Kundalakesi, are the works of two other Jain authors. Of these two. Kundalakesi does not seem to he extant, while only fragments of the other have been published from time to time.

iv. "The five Minor Poems" (Siru Panchakavyas), as they are called), all by Jain authors:—

1. Chulamani by Tolamolittevar (the unconquerable in speech), containing 2131 quartrains in 12 Cantos, written about the beginning of the 10th Century A. D. Mr. T. A. Gopinatha Ram M. A., Superintendent of Archeclogy, Travancore, in his Introduction to the Sanskrit Yasodharakavya, clearly expresses his opinion that Srivardhadeva in Mallishena's Epitaph in

Sravana Belgola and Tolamolittevar are identical and that the work referred to in the epitaph is also the Tamil Kavya of that name.

- (2) Yasodharakavya, by an unknown Jain author, in 320 verses of 4 cantos is the story of the Puranic King Yasodhara. There are several stanzas in this book which are strikingly similar to several slokas of the Sanskrit work of the same name, so much so, that the Tamil work may practically be looked upon as a Translation in verse of the Sanskrit Work.
- (3) Udayanan Gadhai, the story of Udayana, King of Vatsadesa, by unknown Jain author, in six cantos, a work which has not yet been published. This should not be confounded with another work bearing on the same story, known as Udayanakavya by another Jain author, consisting of six cantos containing 867 stanzas in quite a different metre. It is the former work which is one of the "five minor Poems," in as much as it is from that work that several passages bave quoted by well-known commentators such as Nachchinarkiniyar and others in their works.

(4) Nagakumarakavya, a work which does not seem to have escaped the ravages of time.

(5) Nilakesi, in 10 cantos, a work which seeks to establish the truths of Jainism and whose author is unknown. This work has also got a commentary by Samayadivakara Vamana Muni.

v. Vajįranandimalai by Gunavirapandita, a poem. vi. Merumandarapurana, by Vamanacharya, an author who was equally proficient in Sanskrit and Tamil, containing 1,406 stanzas in 12 Chapters or Sargas. It gives an account of the two brothers Meru and Mandara and contains a full exposition of the Jain beliefs.

vii. Didactic Poems:-

- (1) Palamoli, a work of Proverbial Wisdom by Munrurai Arayanar, a Jain Poet, containing 400 stanzas, each expounding and ending with a well-known proverb.
- (2) Acharakkovai, by Peruvoyimulliar, (100 stanzas) which lays down rules of conduct.
- (3) Tirukkadukam, by Nallatta-nar.
- (4) Sirupanchamulam, by a disciple of Mamulanar.
- (5) Yeladi by a disciple of Makkayanar of Madurai Tamii Sangam Fame, and several other works.

viii. Grammar:-

- (1) Ahapporulilakkanam, an abridgement of the third part of Tolakappiyam, the most ancient work on Tamil Grammar by Narkkavirajanambi, a Jain, in five chapters.
- (2) Yapparunkalam, by Kanakasagaramuni, a book on Prosody and Rhetoric, containing 95 stanzas in three chapters.
- (3) Yappurunkala karikai, by Amritasagaramuni, a commentary of the above book.
- (4) Viracholiam, a grammatical treatise by Buddhamitra, probably a Jain, attributed to king Virachola containing 181 stanzas, with a com-

mentary thereon, dealing with Letters, Words, syntax, Prosody and Rhetoric, written about the 11th Century A. D. (vide "Sendamil" vol x, P. 287).

- (5) Nannul, by the celebrated Pavanandi (Bhavanandin), who wrote the work at the request of Amarabharana Siya Ganga, a fendatory of Kulottunga III, of the Chola Dynasty, about the end of the 12th century, since it is well known that Kulottunga III ascended the throne in 1178 A. D. This book treats of letters and words only and is mostly followed as an authority at the present day.
- (6) Neminadam, a book on Grammar, by Gunavira Pandita, a Jain, dealing with letters and words, in 96 stanzas with a gloss thereon.

ix. Lexicons:-Chudamaninighantu by Mandalapurusha, in 12 chapters, based on Divakaranighantu Pingalantai. two older Lexicons. Mandalapurusha describes himsef as the disciple of the great Gunabhadracharya, author of Uttarapurana. Since it is well known that Uttarapurana was finished in 898 A.D., and since he makes mention of Akalavarsha Krishnaraya, the Rashtrakuta king who reigned between 875 and 911 A.D., this work must have been written in the first quarter of the 10th Century A. D.

x. Astrology:—Jinendramalai, a popular Tamil work on Astrology, probably by the author of Jinendra Vyakaraua, (Pujyavada).

8. The above-mentioned works in Tamil are all that we know at present as having been written by

Jain Authors. Several of them have been prescribed as Text-books by the University of Madras for their Arts-Examinations. Most of these works have been published by a few enlightened Tamil scholars who are not Jains and a good number of them with excellent commentaries. It is a matter for regret that the Jains of South India have so far evinced very litte interest either in the publication of these precious Contributions of their Co-religionists to the Classics of South India, or in bringing to light several other "Gems of purest ray serene" that lie burried in the dark recesses and dingy archives of many an old Jain family, and Mutt, while their compeers of the North have with their characteristic large heartedness come forward to spread Jain culture, by opening schools and hostels specially intended for members of their own class, by publishing Sanskrit Works by Jain authors and establishing Public Libraries exclusively containing Jain [works, in Sanskrit, Bengali, Hindi. Tamil etc., by conducting journals in English. Hindi. Mahratti & Gujerati and doing such other things conducive to the uplift and advancement of their coreligionists scattered through the length and breadth of North India. It is to be hoped that the Jains of South India will soon be awakened to a sense of the responsibility that is theirs in the uplift of their community and try to copy the noble example set by their brethren of North India.



आर्थ देशनी साहित्य संपत्ति.

(અનુવાદક મહતનકાલ દલીચ'દ રશાઇ ઓ.એ.એલ્એલ્.બી.વકીલ ઢાઇકાર્ટ-મુંબઇ). શે. પ્રંથ મંદારો.

કલકતાથી તીકળતા પ્રસિદ્ધ અગ્રેજ માસક નામે "ડાન"ના ૧૯૧૦ના જાન્યુઆરી માંકમાં તેના તંત્રી અને ભેંગાલ નૅશનલ કાલેજના ભારતીય ઇતિહાસના પ્રોફેસર શ્રીયત સ્વીન્દ્રનારાયણ દેશ એમ્. એ. નીચે પ્રમાણે જણાવે છે:—

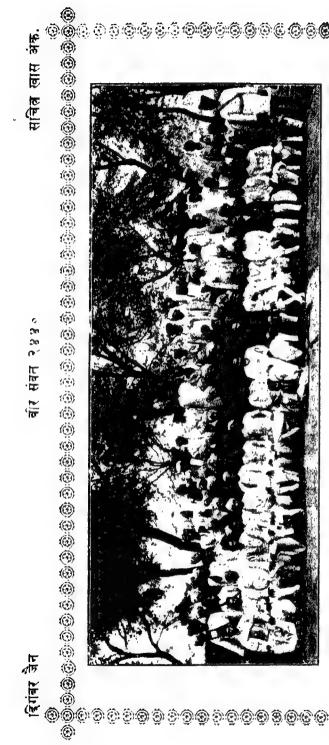
૧, સામાન્યદિગ્દર્શન.

' હિંદની સાહિત્ય સંપત્તિ-પ્રાચીન સ-મયથી તેના પુસ્તક ભંડારની શ્રેષ્ટ્રીબહ આ-પ્યાયિકા '-એ નામના લેખ જે આ મા-સિક (ડાંન) ના એપ્રિસ, મે અને જીન ૧૯૯ ના અંકામાં પ્રયટ થએલ છે તેમાં અમે જે હસ્તલેખિત યુંથાના ભંડારા પ્રા-મીન સમયથી હિંદના સાહિત્યના ખળના ક્ષે સાથવી રખાયેલા છે તેના વિસ્તારપૂર્વક અને શ્રેષ્ટ્રીબહ ઇતિહાસ અમે આપ્યા હતા. ખાસ કરી સંભાળથી સાથવી રાખેલા પુસ્તક ભંડારામાં આપણા પ્રાચીન સાહિત્યના સંરક્ષણ માટે જેમના આપણા પ્રાચીન સાહિત્યના સંરક્ષણ માટે જેમના આપણા પ્રાચીન સાહિત્યના સંરક્ષણ આદે જેમના આપણા પ્રાચીન સાહિત્યના સંરક્ષણ આદે જેમના આપણા પ્રાચીન સાહિત્યના સંરક્ષણ

* આ હેખ મેં એ વર્ષ પહેલાં ભાષાંતર કરી રાખ્યા હતા, અને તે આ 'દિગ'ળર જેને ના વાંચ-કાને વિદેષ ઉપયાના થઈ પડશે એમ ધારી તે માસિકના ખાસ દિવાલી અંક માટે તેના તંત્રીની વિનતિને માન આપી પ્રગઢ થવા માક્કથા છે. આસા છે કે આ લેખ ઉપરથી જેન શ્રીમંતા અને વિદ્વાના કંઇક ધડા લેશે કે અ્યારે જેનેતર વિદ્વાના જેને સાહિત્ય સંખંધી શોધખાળ શખી તે પ્રત્યે માહત્ય સંખંધી શોધખાળ શખી તે પ્રત્યે માહત્ય સાલવા માટે પૂર્ણ પુરુષાર્થ સેવવા લોઈએ.

विद्याना ओं इव भतना भुष्य हैन्द्रस्थान श्रेवा મહાન્ આશ્રમા (ઉપાશ્રય, મદાદિ) માં વસતા હતા તેઓ નજરે પડે છે, અને णालु भे राज्यसलाओं है के राजा, आश्रप દાતા અને રાજ્યપંડિતા, ક**િ**એા थित्र कारे। तेना अतिनिधिओ। तरी हेनी संरक्षारी વિદ્યા સાચવી રાખવાનું સ્થાન હતી **તે નજરે** પડે છે. આ બંને (આશ્રમ અને રાજ્ય-સભાએા) હિંદના ઇતિહાસના સમગ્ર સમયમાં પાતાનું કાર્ય કરતી અાવી છે, પરંતુ જાના राજવંશાના નાશ થવાથી अने नशंह केवा ળાહના મહાન્ મઠાના ક્ષય થવાથી અત્યારસ-ધી જે ફક્ત પુસ્તકભંડારા ટકી શક્યા છે તે એક બાજા કાસ્મીર, નેપાલ, જયપુર, મેં-સુર આદિ માટા ખંડીઆ રાજ્યોએ સાચવી રાખલા છે, તે છે અને બીજી બાજાએ પશ્ચિન મ અને દક્ષિણ હિંદના મહાન જૈન ઉપાશ્રયો સાથે જોડેલા **ભારતીભ**ંડારા બીજી બા-જુએ છે. આ બે કક્ત પ્રાચીન હિંદની ધાર્મિક અને રાજવંશી વિદ્યાના ઉદાહરહ્યુંના પ્રતિનિધિ રૂપે છે.

ઉપલા લેખ લખતાં અમને અમાદાવા-દના એક ખબરપત્રી શ્રીયત સ્વીન્દ્રનાથસેન તરકથી પત્ર મળ્યા હતા. તેમાં તેમણે પ્રાચીન સમયથી પશ્ચિમ હિંદમાં જૈનધર્મનું મુખ્ય કેન્દ્રસ્થાન એવું પ્રાચીન અષ્ણહિલપટ્ન (હા-લતું **પા**ટણ) સાંના જેન ઉપાશ્રયા **સાથે** જોડેલા પુસ્તક ભાંડારા સાંબાંધી ઉપયોગી **અને** રસદાયક વિગતા અપુષ્ટી હતી. અમે તે પત્ર ચ્યાન દેપ**્રવેક ચ્યા મા**સિકના અંકમાં પ્રગટ કર્યો છે. તેમ કર્યા પછી અમે મેસુરના એક ખબરપત્રી નામે શ્રીયુત **ી**. સામનાથીઆ ૧૪ વેસ્ટ ક્રાસરાડ, ભાસવત-શુંડી **બે**'ગલારસીડી, તરફથી ખીજો રસપ્રદ પત્ર મળ્યા છે. તેમાં કર્નાટક દેશ અને સામાન્ય रीते दक्षिण हिंदमां दस्तक्षेणाना अंडारा માં બંધી અને ખાસ કરી દક્ષિણ હિં-



m 1-02-00 श्री भारतवधीय दिगंबर जैन महासभ:-मधुरा (? ८वां वार्षि अधिवेशन ता.

ම් මේ ਸ਼ਾਵੀ भाषानदीसना ਨਾਵਤ, මේ खुद्दे, १० **घोड दामोदरदासजी** मधुरा, ११ वन मधुरोदामजा (कारकड़) මේ १६ याया मिशीयाद्यों अलीगह (स. जैन गजर), १४ केठ मधुरोदामजा (कारकड़), १९ याया सम्बारकार स्थाप की खि මේ १६ वाह् कहेंगाव्यादमी (मधुरा) १० वाव्या कोर्डामदजी (मधुरा) १८ ज्याया नव्यक्षिणोग्ची (वहर), १९ याया सम्बारकार स्थाप මේ මේ १६ वाह् कहेंगाव्यादमी (मधुरा) १० वाव्या कोर्डामदजी (मधुरा) १८ ज्याया नव्यक्षिणोग्ची (वहर), १९ याया सम्बारकार स्थाप स्थाप सम्बर्ग सम्वर्य सम्बर्ग सम्बर्य सम्बर्ग सम्बर्ग सम्बर्ग सम्बर्ग सम्बर्ग सम्बर्ग सम्बर्ग सम्ब चरिजीकाळजी (अलीगड़), ४ बाबू महार्बात्महाय पड़ि (खुरड़े), ५ पं. जबाहीत्लाळर् हार्का (अधापक महा ति.), ६ **कुसींपर बेठे हुए महाद्ययाँ**-१ चीर्या प्रवालाजनी म्योन्टेन्डट नमहा ति.) २ लावा कुणाकुमार्गा, ३ लावा



सुरत जैन शिन्टांग श्रप्तके कर्मचारीगण.

ક્રના જૈન સંસ્થાનાને એડેલા क्षां डारे।-ની પણી અમૃક્ય વિગતા આપી इक्षिक दिइता धतिहास-साहित्य अने ड्या-ના અભ્યાસીઓને કહેવાની જરૂર નથી કે हेटसा महान् अशे हिल्लाना कैन संस्थानी ના પુરુષાર્થને દક્ષિણ હિંદના વિદ્યાવિકાસ-સંસ્કૃત શિક્ષણ (civilization) આલારી છે. તામિલ, કાનડી અને તેલુંગ સાહિત્યના **ઉત્તમમાં ઉત્તમ કે**ટલાક ખજાના श्री करनाना ત્રાંથા, જૈનાની બરિતાઓ (મંદિરા) કે જે **મ**સરમાં **મ**વજાબેલગાલા પાસે **કા**નડામાં આડબિંદી પાસે આવેલા છે તે છે અને દક્ષિણ હિંદની કલાની મહાન કૃતિ ખામાંની કેટલાક તા શ્રાવણ ખેલગાલા, કારકલ અને યેન્ત્રર પાસે આવેલ ૩૫ થી ૭૦ કટ ઉંચી એમ મહાન મૂર્તિઓ છે. આપણે સમરશામાં એ પણ રાખવાન છે કે આધનિક હિંદમાં જૈન વન સ્તીના મુખ્ય ભાગા અવશેષ રહેલા તે કક્ત પશ્ચિમ હિંદ અને દક્ષિણ હિંદમાં જોવામાં આવે છે. આ પ્રસ્તાવ કર્યાપછી મૈસરના શ્રીયત થી. સામનથી યાએ માકલાવેલ નાંચના અમૃશ્ય વિગત વાચક પાસે મુકવા પ્રવૃત્ત થમએ છીએ.

ર **કક્ષિણહિંકના હસ્ત લેખિત પ્ર**ંથ ભંડારા (અ) જૈન ભંડારા

- (૧) મહાસ ઇલાકાના કનારા પ્રાંતમાં પશ્ચિમ કિનારા નજદીક મુકળિંદ્રી નામની અજ્ઞાત જગ્યાએ એક પ્રાચીન જૈન મઠ છે જેમાં એક ઘણા મહાન હસ્તલેખિત પ્રાંથ- ભાંડાર આવેલ છે. આ ભાંડારમાં ખીજ કાઇ પણ સ્પળેધી ન મળે તેવા કીંમતી પ્રાંથોની અવશેષ રહેલી એવી એકક પ્રત મળી આવે છે.
- (ર) મૈસુર રાજ્યમાં શ્રાવણબેલગોલા પાસે એક પ્રસિધ્ધ જૈન સ*સ્થાન છે, તેના

કૃતિહાસ પૂર્વના સાથ વંશના ચંદ્રગુપ્ત કે જે અહીંના શિલા લેખાપરથી જ્યામ છે કે ત્યાં પાતાના ધર્મગુર ભદ્રભાહુના શિષ્મ થયા અને કાળવશપણ પાતે ત્યાં થયા તેના કાલમાં જાય છે. આ સ્થાને પવિત્રતા અને ઉપયોગિતા સચવનારી એવી ગામેટ અરની મૃતિ નકકર એનાકટના પચ્ચરમાં કાપેલી હળ કીટ 6 થી છે. આ કૃતિ કાસ ૯ મા અત-કમાં ચામું ડરાજે કરી છે અને તે મૃતિ ટેકરીના શિખર ઉપર વાદળાંના છત્ર નીએ રહેલી છે. આ ટેકરીની તલાટીએ એક મહાન્ કૃપિયતી અને સસંરક્ષિત હસ્તલેખિત મંથાને તા સંગ્રહ ઘણા ભાગે પાલમાઈ રા–તાડપંત્રામાં પાલી, સંરકૃત, કાનડી અને તામીલ ભાષામાં લખાયેલ છે.

- (૩) આ સિવાય બીજો પણ ઐસુર રાજ્યમાં હુંચા પાસે આવેલ જૈત મઠ છે, તેમાં ઉપલા ખે સ્થાના કરતાં નાના પણ મ-હાન્ હરત્તલેખિત ગ્રથાના બંડાર રક્ષવામાં આવેલ છે.
- (૪) મૈસુર શાધખાળ શિલ્પ ખાતાના પદ્મરાજ પંડિતની માલીકામાં એક મોટા લં-ડાર છે તેમાં તેના પૂર્વ જોએ સંગ્રહીત કરેલા તેમજ હમણા તેએ મદાસ ઇલાકાના દક્ષિણ તરફના પ્રાંતા અને સીલાનમાંથા મેર્યા કરેલાં હસ્તલેખિત પ્રાંથા છે.
- (૫) અા ઉપરાંત ઘણા જૈન પંડિતા તેન્ મજ બીજા છે કે જેની પાસે નાના માટા ભાંડારા છે.

(ખ) શાંવ અથવા લિંગાયત ભાંડારા

(૧) શિતલદુર્ગ પાસેના મુગરી મામાં અને મેંસર શહેરના મેંસર્સ વીર સંગપ્પા, કરીજ સવસંથી અને મલાપ્પા પાસે, અને દેવનગરના મીલ હ્યા વિરપ્પા પાસે હરતન્ હેપ્તિ શ્રુંથાના સંગ્રહ છે.

(ક) સામાન્ય, ઐતિહાસિક આદિ.

દેલાય દેવાનું ર્સ, મી. તંજરાજ બહા દુર અને લિંગરાજ ઉર્સની પાસેના હસ્તલે ખિત મંથ ભંડારા કે જે બધા મસુરના રાજવંશના સંખંધી છે તે પણ મેટા કોંમતી છે અને ભાગ્યેજ મળી આવતા મંથાના છે, મેંસુર રાજ્યમહેન્ લમાં આવેલા પ્રાચીન સરસ્વતિ ભંડાર ભાર વર્ષ પહેલા જ્યારે દુર્ભાગ્યે રાજ્યમહેલ આ-મ લાગવાથી બળી ગયા ત્યારે લસ્માવશૈય થયા ત્યારથી નવેસરથી રાજ્યને યેલ્ય એવી લાય્યુરી બનાવવા માટે મંથ સંત્રહ થાય છે.

કાનડામાં સાહિત્ય પ્રવૃત્તિના આરંભ છે. સ. ના આગળના શ્વતિકામાં થયા છે અતે તેલું શુ અને તાલિમની શરૂઆત પણ ત્યારે થઇ; પરંતું ભંગાલી, હીંદી અને મરાદીની શરૂઆત ઘણી મેહી થઇ. કાનડીમાં જૂનામાં જૂના પ્રથે પ્રથે શે હજુપણ પ્રાપ્ત થાય છે, અને તે અલંકાર ઉપરના ગ્રંથ નામે કિવરાજમાર્ગ છે. તે રાષ્ટ્રકુટવંશના રાજ નૃપનું મે છે. સ. ૮૫૦ને આશરે લખ્યા છે. આ રાજની પહેલા ઘણા રાજકર્તાઓ થઈ ગયા છે પણ તેઓની કૃતિએ હજી સુધી પ્રાપ્ત થઇ નથી અને કદાચ જગત્તે માટે તે સદાને માટે નષ્ટ થાય.

કાનડી સાહિત્યમાં જીવનચરિત્રો, કાવ્યે અતે અલંકાર, વ્યાકરણ, પીંગળ, કાશ, વૈદક, પ્રાણીવૈદકશાસ્ત્ર, ખગાળ, જ્યોતિષ, ગણિ-ત, પાકશાસ્ત્ર, નીતિશાસ્ત્ર, તત્ત્વનાન અને વે-દાંત આદિષરની કૃતિઓનો સમાવેશ થાય છે.

વર્ત માન સમયમાં હસ્તલેખિત શ્રંથોતો સંગ્રહ કરનારી ઉપયોગીમાં ઉપયોગી લાયબ્રેરી આ મદાસમાં આદિએટલ મૅનસ્ક્રિંગ્ટ લાય-બ્રેરી અને ઘીઓસોકોકલ સાસાયટીની લાય-બ્રેરી એ, મૈસુરમાં ગવર્તમેંટ ઓારીએટલ

લાયખ્રેરી છે, અને ખેગલારમાં લાયખ્રેરી આકુ ધી આરકીઓલાજિકલ ડિપાર મેટ છે.

२ प्राकृतं हस्तछेखोनी शोधखोळ

ઉક્ત 'ડાંન' માસિકના એપ્રિલ ૧૯૧૦ના અંકમાં પ્રાકૃત હસ્તલેખાની કાર્યખાળ સંખ્યાં પ્રસ્તાવ કરતાં તેના ઉક્ત તંત્રી શ્રીયુન ત સ્વીન્દ્રનારાયણ દ્યાપ એમ્. એ. એવું જણાવે છે કે:—

''આ માસિકમાં અમે વિઝાગાપટ્ટમની આર્ય લાયખેરીના સેક્રેટરી અને ખેંગાલની રંગનાથસ્વામી નામના વિશાળ વાંચનવાળા વિદ્વાનની કલમથી લખાયેક્ષા લેખ અમે પ્રગટ કુરીએ છીએ. આર્યાવર્તની સાહિત્યસંપત્તિ સંખધી પહેલાં જે લેખા લખ્યા હતા તેમાં અમે હિંદના જાદા જાદા ભાગામાં આવેલ જૈન હસ્તહોખાંના ભંડારા સંબંધી થાડ્ વર્ણન આપ્યું હતું. આ સંખર્ધ ઉપલાહ્યેખ छ अभे तेमां रसिक लाग ता करन प्राक्त द સ્તલેખાની તેમની શાધખાળ સંબધં છે. હ્યાં હુધર્મ અને બીજી પ્રજાપ્રીય ધાર્મિક હિલચાલાની પેટ **આર્ય દેશની કેટલી**ક ૪શીય ભાષાએાના વિકાસ માટે અને ઉ⊦ ચ્ચ વિચાર અને કેળવણી સંખ'ધે ઉદ-ગાર કાઢવા માટે ધાગ્ય સાધના થવામાં ઘણીખરી સાહિત્ય ભાષાએાની સ્થિતિ ઉચ્ચ શ્રેણીપર ગઇ છે તે માટે જૈન-ધર્મના આપણે આભારી છીએ:--મગધની દેશીય ભાષા **પા**લી માટે ભાહ**ધ**મે જે કર્યું અને હિંદની આધુનિક પ્રાંતિક ભા-ષ એ માટે ૧૬મા સેકાની મધ્યકાલીન ભક્તિ-પ્રધાન દિલચાલાએ જે કર્યું, તે જેન ધર્મ હિ'દની ચાર કરતાં એાછી નહિ–એટલે ચાર (અગર તેથી વધારે) ભાષાએ માટે કર્યું. તેનાં નામ તામિલ, તેલુંગુ, કા

નડી અને છેલ્લી પણ કાઈ રીતે ઉતરતા ન-હિ એવી જાની પ્રાક્ત કે જે બીજી પ્રાક્ત ભાષાથી જાડી ભતાવવા માટે જૈન પ્રાક્ત એ નામથી પ્રસિદ્ધ છે. જૈનાના પવિત્ર પુરતકાના માટામાં માટા ભાગ અને ખાસ કરીને મૂળ પ્રાચીન સમયમાં લખાયેલા લાગ સંસ્કૃતમાં બદ થયા નથી પણ પ્રજાપ્રિય પ્રાકૃતમાં છે, કારણ કે જૈનધર્મનાં *સંસ્થાપક **મહા**વીર-**છા**દ્વની પેંટે જિન-(છતનાર) થઇને ઉપ-દેશ આપતી વખતે લાકાની ભાષાના **વ પંચાગ કરતા હતા**, સંસ્કૃત ઘણા પછીના સમયમાં વપતાવા લાગી, અને **ઇસ્વીસનના** હમા અને ૧૦મા શતકની સમારે પશ્ચિમ હિલ્સ્તાનમાં જૈનધર્મના મહાન ઉધ્ધાર **થયા હતા** ત્યારે જેન સાધુઓએ પાતાના ધાર્મિક ઉપદેશાને સાંસ્કૃત પુસ્તકામાં બહ કર્યા એટલુંજ નહિ, પરંતુ સામાજીક વિદ્વતા કે જે અત્યાર સુધી બાહ અને વ્યાહ્મણ પં-ડિતાના ખાસ કળવ્યમાં હતી તેના વિધવિધ શેત્રામાં ખ્યાતિ-તામના મેળવી: અને પ્રખ્યાત જર્મન પંડિત ડાકટર ભ્રહ્યલર કહે છે કે " તેઓએ (જૈતાએ) વ્યાકરણ, ખગાળ વિદ્યા તેમજ સાહિત્યના બીજા ક્ષેત્રામાં એટલું બધુ ઉપયાગી કર્યું છે કે તેઓ-એ તેઓના શત્રએા તરકથી પણ માન પ્રા^{પ્}ત કર્યુ[ે] છે અને તેમના કેટલાક મુંથા તા યુરા પીઅન સાયન્સ-પદાર્થ વિજ્ઞાનને હજુ પણ ઉપયોગના છે. " (આ માટે જાઓ ડાક્ટર જે. છ. ભુદ્ધલર अने के. अर्के स इत The Jains पू. २२.)

હિંદુસ્તાન મુસલમાનાના હાથમાં અન-બ્યું તે પહેલાંના છેલ્લા ચાર શતકા દરમ્યાન

દક્ષિણ મરાદાદેશમાં ચાલુક્ય અને રાષ્ટ્રકૃટ રાજાઓનું <u>ગુજરાતમાં</u> અને રાજાઓનું રાજ્ય હતું. આ સમયમાંજ હિંદ ધર્મની સાથે જૈનધર્મે પશ્ચિમ હિંદના પ્રણળ ધર્મ તરીક ભાષધર્મના નિરાસ કરવા માંડ્યો. જૈનધર્મ પાતાના અનુયાયીઓના મ્હાટામાં મ્હાટા ભાગ શહેરના મ્હાટા વેપારીએ અને શરાકાના કર્યા કે જે હજ સુધી કાયમ છે. તે વેપારીઓએ મેટા સ્થાપ્યા. મંદિરા બંધા-ત્યા, અને સાથી ઉદાર પ્રમાણમાં ધર્મા**દા**ખાતાં**એ**! રથાપ્યાં ઉપરાક્ત વંશના સાથી અગત્યના રાજાઓમાંના કેટલાક પાતે જૈનધર્માનુયાયી હતા. રાષ્ટ્રકટ રાજા અમેાધાર્ય પહેલા કે જે દક્ષિણ મહારાષ્ટ્રમાં દિગંભર જૈનધર્મના મ્હાટા આશ્રયદાતા હતા અને ગુજરાતના **ચાસક**ય राज इमारपास है के विभ्यात कैनायार्थ हिमयदंनी शिष्य हते। तेन्यानां नामे। वधारामां વધારે જાહીતા બે કાખલા છે. આ રાજવંશી આશ્રયદાતાઓના આશ્રયતળ અને મોટા શહે રાેમાં સ્થાપિત **થ**યેલા ઉપાશ્ર**યાેમાં ધર્મ** સિદ્ધાંત, વિધિવાદ, વ્યાકરણ, ન્યાય, અલંકાર-ખગાળવિદ્યા અને સાહિત્યની શાખાપર અસંખ્ય પ્રંથા જૈન સાધની અન-કુમે ચાલી આવતી પરંપરાએ પ્રાક્તમાં અને સંસ્કૃતમાં રચ્યા, અને ઉક્ત ઉપાશ્રયાની સાથે જોડેલા ભંડારામાં ઉપલા ગ્રંથાની **૯**૨ત-લિખિત પ્રતો કરાવી સાચવવામાં આવી છે.

જૈન સાધુઓએ લખેલા આ પ્રાકૃત પ્રાંથાની શાધમાં ઉપર જ**ણાવેલા ક્ષેખના** લખનાર કેટલાંક વર્ષા થયાં ખંત**થી** પ્રયાસ કર્યાં કરે છે. જૈન વિદ્વતાની ઉપયાગી શાખા વ્યાકરણ અને ખાસ કરીને પ્રાકૃત ભાષાનું વ્યાકરણ છે.

શુભચંદ્ર રચિત શખ્દ ચિંતામણિ વૃત્તિ નામના વ્યાકરણના પ્રથમી શાધમાં

^{*} આ બૂલ ભરેલું છે. શ્રીમન મહાવાર ચ-રમ તીયેકર હતા, અને જૈનધર્મ તેમણે સ્થાપ્યા નથી, પરંતુ તે સનાતન પ્રાચીન છે, સા. ક.

ઉક્ત લખનારે જર્મન વિદ્રાનામાં જળરા विद्वान्तामे डाइटर ऑफ्रेइट (Aufrecht) ના બનાવેલા ક્રેટેલાગમ કેટેલાગારમ કે જે **આખી** પૃ^રવીપરના સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત **દ**સ્ત-**લેખાના કેટલાંગાના સંત્રહ** છે, તેને અને ડ કટર **રાજે** દ્રસાક્ષ **મિત્રના સ**ંસ્કૃત હસ્તલે ખાતી ઉડતી तपासने तपारयां. ते अने अपरेक्षत अयते अने **બે'તાલ એશિયાટી**ક સાસાયટીના સ'ંગઢમાં **≈ાવેલ હસ્**તલિખિત પ્રાંથ નામે આંદારેય[ે] चिंतामि के केना क्रतीन नाम अकटर રાજેંદ્રલાલ મિત્રે શુભસાગર આપ્યું છે તેને એક ગણે છે. છતાં આપણા ઉપરના લેખક પાક્કી તપાસ કરી ત્યારે દેખાડી આપ્યું છે કે તે બ"ને ગ્રંથ તર્ટન જુદા છે, અને કર્તાનું નામ ડાકટર મિત્ર કહે છે તેમ શાબસાગર નથી પણ શ્રાવસાગર છે. આ શ્રુવસાગરની એનાળ ખાણા નિર્ણિત કરવાને આ લેખક શકિત-માન થયા છે. તે કહે છે કે શ્રાનસાગર તે પ્રખ્યાત ક્રિગંભર ચાય વિદ્યાન દીના શિષ્ય છે અને તેમણે બહેજા ઘણા પ્રાક્ષક શંથા રચ્યા છે આથી લેખકે ડાક્ટર આંક્રેટના કેટલાંગ જેવા મહાભારત પ્રમાણભૂત ગ્રંથમાં થયેવી ભૂત્ર શુદ્ધ કરી છે અટલું જ નદિ પરતુ તેની સાથે જે વ્યાકરણના પ્ર'ય હાલ મળી આવતા હિમચંદ્ર, ત્રિવિક્રમ અને ળીજાના શ્રંથા કરતાં વધારે પૂર્ણ પુરવાર થાય છે અને અત્યારસુધી **અતાત રહો**! છે તે પ્રકાશમાં લાવી અને અપૂર્વ છુ હિમાન જૈત કર્તાનામે શ્રાવસ:ગર સંબંધીની વિગત પૂર્ણ દરી જેનાના વ્યાકરણ सादित्य संभाधीना अपणा जनमां जल्परे। વધારા કર્યા છે.

અપૂર્ણ,

- with

कथमस्माकमभ्युदयः ?

(प्रयोजक-शतावधामी पं. मुनीश्री रत्नचंदजी-पालनपुर (लीम्बडी समुदाय)

मतकालिकं भव्यताभृषितभारतभृमौ प्रायः प्रधानप्रदेशे विरलापि जागार्तिर्जायमा-नोपलभ्यते-केचिद्देशाभ्यु दयविषयके, केचि-त्समाजाभ्यदयविषयके, केचिद्धमाभ्यदयवि-षयके, प्रयत्ने, सोत्साहा अविच्छिन्नपवृत्ति-त्रवाहा बद्धकटयः वृतीयते। अस्माकमभ्यद-यकाले येपां नामापि नासीत ते किलाध-नाभ्यदयादित्यम्य प्रातःकालिकं मध्यान्ह-कालिकं वा प्रकाशमन्भवन्तोऽहमहमिकया म्पर्द्धमानाः प्रगति कुर्वाणा दृश्यते । तदा वयं (जैनाः) तु नातारुणोदयो रविपादुर्भावो भावी. किन्त्वन्धकारजनन्या एवाधिकारः, नाधुनोत्सिप्पणीकालः,किन्त्व-सर्धिणीकालस्ततोनुद्योऽस्तं वा सम्भवतीति मत्वेव, विनिवर्तितश्रयोश्रयोविकोचना विधि-हस्तसमर्पितसङ्खाग्यनोदना । निद्राघूणित-लोचना इव लक्ष्यामहे ॥

भोजैनाः ? कियचिरं स्थायिनीयमज्ञानप्रमादनिद्रा ? साम्प्रतं रजन्या एवाधिकार
इति मतिर्भुमम् लिकैव देशान्तरे समाजान्तरे
यदि दिनकरस्याधिकारस्तदा युष्माभिः किमपराद्धं यदलान्धकारस्यैव साम्राज्यं भवेत्।
वस्तुतस्तु नायं समयस्य दोषः, किन्तु स्वर्काय एव दोषः सत्यमेवोक्तमः

सुलस्यदुः सस्य न कोऽपि दाता,

परो दवातीति कुबुद्धिरेषा ॥ अहं करोमीति वृथाभिमानः, स्वकर्मसूत्रप्रथितो हि लोकः ॥१॥

सन्ति खलु साम्प्रतमप्यनेकविधान्य-वनतिकारणानि जैनसमाजे। सम्प्रदायानामने कता, सिद्धान्तादौ स्वरूपमेदेऽपि महाविरोध प्रदर्शनं, परस्परं कलहः, स्वरूपमेदेऽपि जाती-यव्यवहारप्रतिबन्धो, बाललप्रप्रवृत्तिः, कन्या-विक्रयपद्धति, रनपेक्षितमार्गेऽमितव्ययो, ऽपे-क्षितावश्यकमार्गेऽनुदारताचेवमाद्गिन्यनेकशः कारणान्युपलभ्यन्ते । येरवश्यमवनितः स्थादेव निरुक्तकारणेषु प्रत्येकं कारणं सुक्ष्मे-क्षया निरीक्षणीयं विचारणीयञ्च बर्तते। विस्तरभयानात्र सर्व वितन्यते। तथाप्येक्य-विषये यत्किञ्चिद्वनुत्त्याग्ने गन्तु न शक्यते।

पश्येम यदि जैनसमाजस्यान्तरक्षं. किं हश्यंत तत्र साम्यसुधारसप्रवाहो ? जैनत्वेनै-क्याभिकाङ्क्षणं ? स्वेतरसाम्प्रदायिकान् प्रति साहाय्यकरणं वा ! निषेधेनैवैतत्प्रत्युत्तरं सम्पत्स्यते। आस्तामैक्याभिकाङ्क्षणं दृरे. क्केशानुदीरणाभिलाषापि क दृश्यते ! हा हा किमिदं वैलक्षण्यं यदेकमेव शास्त्रमेक एव देवः, सदृशान्येतत्त्वानि, समानएव क्षान्त्यादिलक्षणोधर्मो, निर्विशेषएवात्मतत्त्व-स्वीकारः, समानेव ध्यानादिपकिया, सदृश्येव समानोद्देश्यकेव सर्वा प्रणाली। केवलं केवलिभुक्त्यादिविषये मूर्तिपृजादिविषयेवा स्वरूप एव भेदः। समानता मेरु सदृशी तद्याविषमता सर्पपसदृशी तक्षापि तद्वैपरीत्य-

मेवेदानीं प्रतिभाति. विषमता तु मेरुसदशीं समानता च सर्ववसदशी. एतंद्वेपरीत्यकरुनैव मतभेद कदाग्रहादिजनकत्वेनानिष्टकारिणी, साम्यतत्त्वसंहारिणी समाजस्वास्थ्यविनाशिनीं चास्ति।

एतद्वैषम्यभान्त्यैवैकवस्तुनोऽनेकशः खएडानि सम्पन्नानि प्रत्येकखण्डं स्वेतरख-ण्डं संहर्तुं समुद्यतं प्रतिभाति । श्वेताम्बरा दिगम्बरान्मिथ्यादशो महापातिकनो नरक-गामिनो मन्यन्ते । दिगम्बराश्च श्वेताभारां-स्तथा मन्यन्ते । मूर्तिपूजका चैतन्यपूजकां-स्तथा मन्यन्ते तदा चैतन्य पूजका मूर्तिपूज-का स्तथा मन्यन्ते न केवलमेतावतैव सन्तीषः, सर्वेऽपि स्वेतरेषां कथं सद्यो विनाशः स्यात. कथं वा तेषां सर्वथोच्छेदः स्यादित्यपि कि-यते प्रयत्नः किं बडानैकस्मिक्षि सम्प्रदाये परम्परमीर्घ्या क्रेशादीनां नास्ति न्यूनता. किमयं धर्माभिमानप्रकारः ? शासनाभ्युदय-पद्धतिर्वा : नहि नहि नायमम्युदयमार्गः किन्त शासनोच्छेदक एवायमधनसिमकारः न्यूनाधिकतया सर्वेरपि परिगृहितः स विष-ममार्गः शास्त्रविरुद्ध एव शास्त्राणि तु साम्यत त्त्वमेव श्रेयस्करत्वेन प्रतिपादयन्ति. यतः

> आसंबरोय सेयंबरोय बुद्धोव अहब अणो वा समभावभाविषया रुहइ मोरकं न सेदेहो ॥१॥ ''रागोय दोसो विष कम्मवीयं'' ''समबाद समणो होह''

"प्रभुदोसे निराकिचा, न विरुझेझ केणइ। मणसा वयसा चेव, कायसा चेव अंतसो॥१॥

साम्यभावप्रमाणपत्ररूपाण्यतोनि बानि किं निवेदन्त्यस्मभ्यं ? तान्येतदेवोप-दिशन्ति यत्क्केशपरिणतरागद्वेषादि प्रवृत्तिर्न केवलमेहिकशान्तिविनाशिनीः किन्तु गाढक मेबन्धपरिणत्या पारलोकिकशान्तिप्रतिबन्धि-कापि । मार्गप्रपन्नानामपि मार्गतः प्रच्या-निष्टेविक प्रवृत्तिः सर्वधा विनीयं द्रनिरीक्षणेन निरीक्ष्यतामत्रैव ङ्ख्याकानामपि पारसीजातीयानां धार्मिक पर्व सार्वभौमज्ञासने या सम्बन्धिनी साम्प्रतं महत्ता स्वीकियते तावानादरः किमधिकस-**ङ्ख्याकानामपि** जैनानां धार्मिकपर्वणां विद्यते! नास्ति चेत्तत्र किं कारणं ? कारणमेतदेव यद्भिन्नभिन्नवर्गाणां नास्त्यैक्यं नास्तिसंयक्त-बलं स्वेतरवर्गलाभाहुत्या स्वलाभाकाङ्क्षणं प्रत्येकं विद्यते मदीयगृहप्रकाशो मम ला-भायेव भवतु नान्यस्येतिमत्वा द्वारादिक-पाटनियमने भवति स्वस्यापि यथान्यकार-**व्याप्तिस्तथैवाऽस्माकं साम्प्रतका**लिकी प्रवृ-

चिर्विद्यते सैव प्रवृत्तिस्तादश धार्मिक तत्व प्रचारे शासनाभ्युदये चावरोधिकास्ति ।

किम्बहुना प्रतिवर्षं जैनानां लक्षाव-क्रेशनिमित्तं न्यायाधिकरणादौ मदिरामांसभक्षकाणां गृहे गच्छति तद्दव्यं विज्ञानवर्द्धकसंस्थासूपयुज्यते कियान सामाजिक लाभः स्यात् ? सहस्रेषु-पदेशकेषु सत्स्वपि कथ्यमियं हालाहलप्रचारिका परिणतिर्विद्यते ? जैनेप्विति न ज्ञातं ज्ञातं मयाऽधना दी य रक्षकास्त एव यदि भक्षका; ये न्यायासने स्थितास्तएवाऽन्यायप्रचारका यदि स्यस्तदा कस्याप्र निवेदनं भवेत् तथैव ये साम्यसधारसपोपकास्तएवोपदेशकाः क्केशाङ्करसेचका यदि भवेयुस्तदा कस्य दोषः प्रकाश्यः. बस्तृतस्तुपदेशकानामेव सद्बध्यद्यः स्यात्तदैव ममाजस्वास्थ्यं सम्प-बेत। तत्सम्पत्त्यैव शासनाभ्युदयोऽपि सुलभः स्यात् । हेप्रभो ८ न्यायाधीशस्थानापन्नानां जैनधर्मापदेशकानां बद्धौ सद्घावना इरः सम्-त्पद्यतां तरां। येनाम्माकमवनतिनिरोधेनोञ्चा-तिप्रवाहः प्रगतिं कुर्यात्। शं सर्वेषां भवत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

🔊 श्रीजिनसंकट मोचनाष्टक । 餐

मुनिवर मानतुंगको भुपतिने जब कारागारमें डारो, श्रीगुरुध्यान धर्यो तंह शुद्ध सुआदिनाथ स्तोत्र उचारो। तन तंह आय चकेश्वरीने सब संबंधनको भय तुरत निवारो, को नहीं जानत है जगमें जिन संकटमोचन नांव तिहारो। ॥१॥ सेठ धनंजयके सुतको जब सर्प जो आय इंस्यो दु: खकारो, तब तुमरोधर ध्यान हिये बीच सुतको ल्याय जिनालय डारो।

विषापहार स्तोत्र रच्यो तब ताको विष तुम तुरत उतारो, को नहीं जानत है जगमें जिन संकटमोचन नांव तिहारो ॥ २ ॥ वादिराज मुनिराजके तनमें कष्ट भयो तब सह्यो दुःखभारो, आय स्तुति तुमरी जो करी भयो कञ्चनके सम तन सुख वारो। सती सलोचनकी सून टेर जूं सागर तें गनराज उगारो, को नहीं जानत है जगमें जिन संकटमोचन नांव तिहारो ॥ ३॥ राज जू रोग भयो श्रीपालको मैना सती तब नाम चितारो, द:ख सगरोही बिलाय गयो वह अन्त समय शिव धाम सिधारा। एक सेठ तनी सुनके विनित हुं दु:ख दारिद्रता सर्व विहारो, को नहीं जानत है जगमें जिन संकटमोचन नांव तिहारो ॥ ४ ॥ वादविष मनिराजसे हारके दुष्ट तभी मन कोपको धारो. गत्रि विषे तलबारकुं लायके सन्तके पाण हरन हित ठारो। मनित्यान विषे लवलीन भये उपसर्गको आयके देव निवारो, को नहीं जानत है जगमें जिन संकटमोचन नांव यहारो ॥ ५ ॥ भृपतिन निज नारी कहे सेठ युद्रश्नी सुलीमें डारी. मुली ट्रट सिंहासन बन गयो इन्द्र जयजय शब्द उचारो। कवल ज्ञान उपायके सेटम् तीसही भवते मोक्ष सिधारो. को नहीं जानत है जगमें जिन संकटमोचन नांव तिहारो ॥ ६॥ दादर मुखमं पुष्पको लेयके दर्शनके हित वेग पथारो, मारगमें गज पदतल आयके प्राण तहां ये ततक्षण छारो। स्वर्गमें जायके देव भयो मुनि पश्चमगति युख भोगत सारो, को नहीं जानत है जगमें जिन संकटमोचन नांव तिहारो ॥ ७॥ तुमरे गुण बरने न जाय प्रभु सुरइन्द्र भी सहस सुमुखकर हारो, मैं मतिमंद अज्ञानि परं तव पद भक्तिते साहस धारो । "इन्द्र" की पीरहरो सगरी अब दासको कष्ट ते वेग उबारो, को नहीं जानत हैं जगमें जिन संकटमोचन नांव तिहारो ॥ ८॥

" इन्द्र "-फतेहपुर (जयपुर.)

🔊 अज्ञानिपात! 🔫

(दत्तात्रय भिमाजी रणदिवे-वर्धा)

(भगषान नेमिनाथ तपश्चर्ये करीतां वनांत निघून गेले, त्या वेळीं राजीमतीची जी अवस्था झासी, ती पुढील कवितेंत तिच्या मैत्रिणीच्या तोंडून वर्णिली आहे.)

लगाची जाहली तयारी वन्हाउही मधुर मधुर मंगल वाद्यांचे रव कानीं घुमले ! करुनि थाट गजघाट निघाला नवरा परणाया सति राजिपतिच्या मनिं मोदा स्थलं न तदा माया पतिच्या भेटी साठीं होती आधिच उतावीळ बोटानें मोजित होती ती लगाचा काळ! हो निज मनिंचा बहु दिवसाची आज सफल हेत म्हणानि जाई गुंगुनि रंगुनि हर्ष तरंगांत! परि इलुक्यांतचि पुढील वार्ता कानि तिच्या पडली नव्हे कमलिनी वरी विजचिग! कडकड़नी पहली रथवरुनि उडि मारुनि सगळा संसार त्यजुन जाइ गहन वनिं घ्याया दीक्षा नेमी भगवान ! भगवान्यानें केळ पडावी सखे ! तुरुन खाली तशि बडली ती धरणी वरती शुद्धि तिची गेली ! अमितो पार्यी सात्रध करितां चहुंकडे पाही परंतु जिवलग तिच्या जिवाचा तिज दिसला नाहीं! मग लागे आक्रोश कराया तोडुनिघे वदे आइला ''सांग कुठेंग! गेला पाणेश! काय करिल बापुडी माय ती ! समजावी जाण परंतु बाटे तिच्या जिवाला लव न समाधान! लोळे धरणीवरी गडबडा अश्रुजली मासोळी पाण्याचिण तशिग! तळमळ तळमळली! करुणास्पद या तिच्या स्थितींचें दिसतें चित्र पुढें स्मरणें त्याच्या हो तिग ! बाई ! हृदयाचे तुकडे !

दिगंबर जैन पुस्तकालय सुरतमें मिलनेवाले श्रंथोंका सुचीपत्र. हिंदी भाषाके श्रंथों

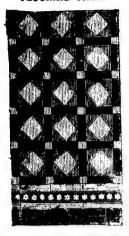
पद्मपुराण (जैन रामायण)	E)	प्रवचनसार परमागम	१।
हरिवंशपूराण (जैन महाभारत)	۹) ا	प्रतिभा उपन्यास [नवीन]	१।
ज्ञानार्णव (भाषा टीका)	8)	पर्पाहड (नयीन)	8
सर्वार्थसिद्धि प्रंथ (टीका नवीन)	8) :	श्री भद्रवाहुस्वामी चरित्र	0111=
श्री रत्नकरंडश्रावकाचार	8)	श्री चारुदत्त चरित्र [नवीन]	3);
भगवती आराधना (पृ. १२७५)	8)	श्री धन्यकुमार चरित्र	0111
स्याद्वाद मंजरी (न्यायका अंथ]	8)	जैन तीर्थयात्रादर्ण	(१)
प्रभयकमल मार्तंड संस्कृत [नवीन]	8)	सनातन जैन अंथमाला	१)
आराधनासार कथाकोष [१२६ कथा		ग्रहस्थधमे ब्र.शीतलप्रसादजीकृत नर्व	ोन१)=
जन संप्रदायशिक्षा (पृ. ८००)	ારા	जैन कथासंग्रह [लाहीरका]	()
आत्मच्याति समयसार	8)	पुरुपार्थ मिध्युपाय	१)
	१ ९)	उपमिति भव प्रपंचा कथा	9111
त्रिवर्णिकाचार (मराठी)	₹)	सप्तव्यसन चरित्र [नवीन]	0111=
श्री पद्मनंदी पंचींबशतिका (नवीन)	8)	जैनधर्मका महत्व	0111
प्रवास्त चरित्र (भाषा पृ. ३५०)	3111	वृंदावन विलास	0111
पांडवपुराण (छंदाबद्ध)	3111	तत्वार्थ टीका [मोक्षशास्त्र]	0111
तरहद्वीप पूजन विधान	સા	संश्य तिमिर प्रदीप	0111
प्रवचनसार ग्रंथ (नवीन)	३)	जीनदत्त चरित्र	0111
धर्म प्रश्नोत्तर (अपूर्व नवीन प्रंथ)	ર)	न्यायदीपीका (नवीन टीका)	0111
बृहत्द्रव्य संग्रह	₹)	धर्मरत्नोद्यात (नवीन)	()
यशोधर स्वामी चरित्र	₹)	जीनशतक (नवीन)	0
धर्मसंप्रह श्रावकाचार (नवीन)	२)	चर्चाशतक (नवीन)	0111
दयानंद छलकपट द्रपण	₹).	विद्वद्रत्नमाळा (नवीन)	011=
स्वाधीनता (नवीन प्रथ)	۲)	चोवीस जीनपूजा (बृंदावनकृत)	0111
मोक्ष मार्ग प्रकाशक ए. ५००)		क्षत्रचूडामणी काव्य	0111
बृहत्समेदशिखर महात्स्य	811	धर्म परीक्षा (हींदी)	१)
पंचास्तीकाय समयसार	811		
श्री पार्श्वपूराण (छंदोबद्ध)	11	सुशीला उपन्यास	?)
गोमट्सारजी कर्मकांड [नवीन टीका]	''/	तीर्थंकर चरित्रें [मराठी]	0111
विश्वलाचन कोष [नवीन जैन कोष]	1=	मनोरमा उपन्यास	शी

भाषापूजा संग्रह	0	अकलंक चरित्र	0)=
ज्ञानसूर्योदय नाटक	oll	विनति संग्रह [नवीन]	o)=
सुखानंद मनोरमा नाटक	olli	निशीमोजन कथा	∘)≡
ऐतिहासिक स्त्रीयां [नवीन]	oll	जंबुम्बामी चरित्र	0 =
उपदेश रतमाला [नवीन]	o []	सुक्तमुक्तावली [नवीन]	0 =
अनुभवानंद [नर्वान]	011	उपमितिभव प्रपंचा कथा [२]	0 -
नित्य पाठ संमह गुटका (भाषा)	oll	जन विवाह विधि [हींदी]	0)=
अंजना सुंदरी नाटक	0		0 =
बालबोध व्याकरण	0=	., , ., [मराठी] दिगंबर जेन प्रंथ कर्ता-उनके प्रंथ	o)=
अनुभव प्रकाश [नवीन]	01=		
जैन नित्यपाठ संप्रह (रेशमी गुटका)	0 =	यमनसेन चरित्र	0
जैन पदसंग्रह प्रथम भाग	0=	हिदीकी प्रथम पुस्तक	0)=11
,, ,, द्वीतीय भाग	0	,, ,, दुसरी पुस्तक	0
,, , तृतीय भाग	01	, तामरी पुस्तक	0=
,, ,, चतुर्थ भाग	01=	ज्ञानदर्पण	01
,, पांचवा भाग	の三	अहिंसा दिग्दर्शन	01
राजुलनीपाठ	0	गोम्मटसार जीवकांड [संस्कृत]	0 =
जैन बालगुटका बडा (प्रथम भाग)	0=	जैन स्त्री शिक्षा प्रथम भाग	0)=
पंचकल्याणपूजा	01=	, . दुसरा भाग	0)=
दौरुतराम भजन संप्रह [नवीन]	0 =	बाळवोध जैन धर्म प्रथम भाग	0)0
श्रीहनुमान चरित्र [नर्वान]	12	,, ., ,, दुसरा भाग	0)-
निरयनियम पूजा	0)	-0	0)=
दशलक्षण पूजा	- 61	, , तासरा भाग , चौथा भाग	01-
द्रस्यसंग्रह सार्थ	0		0)=
रत्नकरंड श्रावकाचार [सार्थ]	'	छःढाला [बडा नबीन]	
भक्तामर [आदीनाथ स्तोत्र सार्थ	01	कियामं ज री	ء(٥
शीस्त्र कथा	,	प्राणिषय काव्य	o)=
दर्शन कथा	0)-		a (a
परमारम प्रकाश		इंद्रियपराज्य शतक	ھ(ه
पुरुषार्थ सिद्धयुपाय	3	बारस अणुबेरूला [बार भावना]	0)-1
श्रावक वनिताबोधिनी	,	जीनेंद्रगुण गायन	ھ(ہ
समेदशिखर पूजन विधान	01	भक्तामरस्तोत्र [मूल]	٠(٥

सामायिक पाट [विधि सह]	0)-11	,, भगीरथजी वर्णा और गेंदनलाल	जी०)-
दर्शन पाठ	۰)-	ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी	0)-
महाबीर चरित्र [पूजन सह]	0)-11	भृतपूर्व भट्टार क विशालकीर्तिजी	0)-
पुत्रीको माताका सीखामन		तीर्थंक रकी माताके पोडश स्वप्नों	0)-
पंच मंगल पाठ [सार्थ]		समेदशिखरजी-चंपापुरी-पावापुरी सु	क्तागीर
अर्हत्पासा केवली	0)-11	का नकशा प्रत्येकका	0)-
इष्ट छत्तीसी	0)0	संसारवृक्ष (मोहरस स्वरुप)	0).
मुनिवंश दीपीका	0)011	षट्ळेश्या स्वरुप	0)-
समाधि मरण और मृत्यु महोत्सव	0)=	ज्ञानवाजी रंगीन (खेलने योग्य)	0):
कलीयुगर्का कुलदेवी वि	नामुल्य		,
दीपामालीका विधान [दीवालीपृजन	-(o [F	ગુજરાતી ભાષાના થ્રંથા	
श्रेणिक चेलना चरित्र	~	ધર્મ <mark>પશ</mark> ીક્ષા (પવનવેય-મનાવેયની ક	કથા)૧)
श्राणक पलना पारत्र हालीनी कथा	-راه	नित्य नियम पूजा (अर्थ साथे)	oll
शिखर महात्म्य	مراء الحالاء	જ્વધરસ્વામી ચરિત્ર	oti
गालेका विनय (नर्वान)		સુકુમાલ ચરિત્ર	ol
कारका विगय (गयान <i>)</i> श्रीतारंगाजी पृजन (नवीन)		કલ્યાણ માંદિર સ્તાત્ર (અર્થ)	0
जैनसिद्धांत प्रवेशिका		સદ્યેખના મૃત્યુ મહાત્સવ	9
जनासङ्गात त्रवाराका ठोकपीटकर वेदराज (नवीन)	0)=-	દિગ 'અર જૈન સ્તવનાવળી અનિત્ય પંચાશત (સાર્થ)	0
,			ه(ه
फुलांका गुच्छा (नाथुराम प्रेमीकृत)	, i	દિ. જેન જ્ઞાન સંગ્રહ અકલંક સ્તેત્ર (સાર્થ)	ور ه د(ه
चौवीस जीनपृजा (चार)	۹)	લધુ અભિષેક (મૃળ સંઘી)	-ر-
त्यागीओंके चित्रों.		ધર્મ પ્રભાધની	0)=
0 0 0 0 00	٠,	આલાચના પાઠ (સાર્થ)	ه):
श्रीमान दि. मुनि श्रीअनंतकीर्तिः	•	જૈન સાર પદ સંબ્રેડ	ه):
., त्यागीजी ऐलक पन्नाला	ठजी 🕛	સામાયિક પાઠ (વિધિ અર્થ ક્રાથે)	.•)~
खड्गास	न ०)	પ'ચ કલ્યાણક પાઠ (સાર્થ)	0)
,, पद्मास	न ०)- ।	શ્રાવક પ્રતિક્રમણ	(پ
Carrier and account	١	કળાયુગના કુળદેવી	0)01
,, मद्वारक श्री चारुकीर्तिजी	0)-1	શું કશ્વર જગત્કર્તા છે ! જૈન સિદ્ધાંત પ્રવેશિકા (જૈનકાષ)	મક્ત
त्यार्गाजी आनंदीळाळली	0)-1	જના સહાત પ્રવાશકા (જનકાય) ''દિગ ખર જૈન" છઠ્ઠા વર્ષની ફાકલ)ه ه
		गाह ा अर कम ा छहा पप गा झाहल गैन पुस्तकाळय−सुरत Surat,	1118

लादीना वेपारी.

FLOORING TILES



ચ્યારસના સંકદ પા-ટીઆ, લાદી, કાળા **ચ્યારસની લાદી કર**તી⊹ે ચરમાં, દીવહમાં. જન્ મીનપરની સંશાબીત बाह्यका पार्वीस इर न्योछावर सीर्फ १) है। <mark>વાતા સા</mark>માન, વ્રાકન માર્જક ટાઇલીસ વથા ખાથફમ અને મેારીમાં_' ખેસાડવા લાયક સંકેદ ચળકતી ૧×૬ લાદી-એા, દ્વાથછાપ શીમીટ, દીવાલપર જડવાના કેન્ ન્સી વાેેલપેપર, રતી-

ઘણા ક્રીકાયત ભાવે મળશે.

ધી બાેમ્બે ટાઈલ માર્ટ. ગુલામ**અલી** ગુલામહુસેન.

૨૧. બે'ક સ્ત્રીટ, મુંબર્ઇ બે'ક પાસે કાટ-મુંબઇ.



🔊 काइमीरी केदार

मंदिरोंमें वर्तने योग्य शुद्ध स्वदेशी "पवित्र काश्मीरी केशर" हमारी पास हर समय थोकबंद तयार रहता है, अशुद्ध और नकरी केशरका व्यवहार न करके इस पवित्र कारमीरी केशरका ही उपयोग करना चाहिए. मुल्य १)तीला. एक साथ एक रतल मंगानेसे रु. २७॥ कम मंगानेसे पोस्टेज ज्यादा लगजाता है इस लिये कमसे कम पांच तोलाही भंगाना मिलनेका पता---चाहिए.

" भारतनारी हितकारी "

जैन अजैन सब स्त्री समाजके लिये अति उपयोगी यह हिंदी माभिक पत्रिकामें अनेक विषयोंका संग्रह रहता है। वार्षिक

पता-वैद्य जिनेश्वरदास जैन मैनपुरी संपादक--'भारतनारी हितकारी' Mainpuri (U.P.)

स्त्रीयोंके लिये ३ रहीं.

ऐतिहासिक स्त्रीयां-इस नइ बनी जडवानी शिलींग में राजीमती, चेलना, भैनासुंदरी, सीता, द्रीपदी, रयनमंजूषा, मनोरमा और अंजना-संदरी इन आठ प्राचीन महिलाओं की शिक्षापद जीवनी लिखी गई है और बडी संदरताके साथ छपाइ गई है. मुल्य आट आना.

> २ उपदेश स्त्रमाला--इसमें बालिका-ओंके कण्डमें धारण करने योग्य धार्मिक, शारीरिक, नैतिक और मानसिक उपदेशों के रत्न पिरोय गये हैं. छपाई बहुत संदर है. मूल्य आठ श्राना.

> रे वार्लाका विनय-इसमें वालिका-ओंके कण्ठ करने योग्य संदर शिक्षापद पदोंका संग्रह है. मूल्य एक आना.

आरानिवासी कुमार देवेंद्रपसादजीद्वारा पकाशित यह तीनों पुस्तकें कन्याशालाओं में-भी प्रवेश करने योग्य है.

मंगानेका पता---मेनेजर, दिगंबर जैन पृस्तकालय-सुरत Surat मेनेजर, दिगंबर जैन पुस्तकालय-सुरत.

ુસચ્ચાઇ અને કત્તેહ€

थे। इस इते ६

જો તમારે શરંદે મજ છુત અને ઉત્તમ સ્મઃ શુર્શાક્તાળા યદ્ધી તલાગ્યાસ તેમજ દરેન્ કાર્યમાં ફ્રેતેહ મેળવવી દેત્ય તો—

प्रज्यात

આતંકનિગ્રહ ગાળાઓ

જે ભાગ છે. મુક્ત વધારે પ્રાપ્ત કર્યા હતા. આ મુક્ત કર્યા હતા. આ મુક્ત સાધા મામાં તેની કૃતેડ જાણીતી છે. મામુદ શક્તિ આ માનારી દ્વાએમાં તે સહિયા પહેલા ને અન્ય મારે અને છે. કિ મત માળા કર તા હતા. ધુના કૃત્યોએ: ૧ એ ક. વધારે વીગત જાન્યું ગામાં કે પ્રદેશ લિલ્ટ મહાતા.



સંસ્કૃત કાદંબરીનું રમરણ કરાવનારી . વર્ણનશૈકીથા સુરાખિત, રસ, સમત્કાર અને : વાર્તાની અપૂર્વ ગાહેવણથી અદાહિક આનંદ આપનાર તથા અતેક ઉપયાગી વિષયોનું જ્ઞાન આપનાર એક સુંદર નાવેલ.

કદ ડેમી અક પેજી પઝ કામે કિંમતારા, ૩ ત્રણ

ગયેલા પુક્ષ્યત્વને પવ્હું લાવી આપનાર **વાજકરણ તેલ**.

અા તેલ લગાવવાથી ગયેલી પુરૂષશક્તિ પાછી મળે છે. અપૂર્વ ચમતકારિક ઇલાજ પહેલેજ દિવસે પેતાના ફાયદા દેખાડે છે કે જે ફાયદા હમેશ માટે ટકા રહે છે. સુખ અને સંતૃતિયા તિગશ **થ**યેલા એ તે માટે તે "ક મોરોટા ખાશી હૈદ સમાત છે. કિ**'મત–તાેલા દાા ની ભાટલી ૧ ના** રૂપિયા **૫ પાંચ.**

> આ બન્ને ઐત્પધાએ અપૃર્વ ક્ર-તેહ સચ્ચાઇથી પ્ર.પ્ત કરી લાખા સર્ટિ-પ્રીકટા મેળવ્યાં છે. તેમાં**થી** એકના નમૃતા.

(ઇ ગ્રેજ ઉપરથી)

પ્રિય વૈદ્ય,

भने आपनी आत' हिनि अह गाणीकेंग तथा वाळ हर्षे तेंद्रनी शिशी १
भणी. ते अने ह्वाकों भें भारा हरही को
हिपर अलभाषी. अरे भर आ ह्वाकों लहु
केवी व्यमत्मिक अने केंग्र हिंगी जातना
असाधारण हीरा केवी गिमती छे. ते आना
विभाण हा अवाने भारे भारी अहम अशक्त
छे. मेहेरणानी हरीने अने तेटही त्वराधी
वाळ हर्षे तेंद्रनी शीशी १ तथा तेनी
काटमां आत' हिन्गह उभी १ वी. भी.
धी भेड़ हशी.

હમામસિંહ,

સળ એસિસ્ટંટ સરજ્યન, ટેપાલ ડી. **અલીગઢ.** ભયંકર ભૂલેથી ખચાવનાર શરીરરક્ષાના માર્ગ ખતાવનાર



જે કાઇ મગાવે તેને સફત પાેષ્ટેજ લીધા વિના માેકલી આપવામાં આ**વે છે.** લખાઃ-**વૈદ્યશાસ્ત્રી મણીશ'કર ગાેવિ'દછ.** જામનગર−(કાઠીયાવાડ)

🚜 सनातनजैनग्रंथमाळा । 🎎

इस ग्रंथगालामें सब ग्रंथ संस्कृत प्राकृत व संस्कृत टीका सहित ही छपते हैं।
यह ग्रंथमाला प्राचीन ग्रंथोंका जीणोंद्धार करके सर्वसाधारणमें जैन धमका प्रभाव प्रगट
करनेकी इच्छासे प्रगट की जाती है। इसमें सब विषयोंके ग्रंथ छपेंगे। प्रथम अंकमें
आप्तपरीक्षासटीक, प्रवपरीक्षा, दूसरे अंकसे समयसारनाटक दो संस्कृत टीका सहित
तथा राजवार्तिकजी छप रहे हैं। तीन अंक छप गये। इनके पश्चात् रिवपेणाचार्यकृत
पद्मपुराणजी वा इलोकवार्तिकजी वगैरह छपेंगे। इसकी वार्षिक न्योछावर ८) रु० है
प्रत्येक अंक १० फारमका होता है। जिसमें दो से अधिक ग्रंथ निहं रहते। डांक
सर्व जुदा है सो प्रत्येक अंक डांक सर्वके वी. पी से भेजा जायगा। यह ग्रंथमाला
जिनधर्मका जीणोंद्धार करनेवाली है-इसका ग्राहक प्रत्येक जैनीभाई व मंदिरजीके
सरस्वती मंडा क बनकर सब ग्रंथ संग्रह करके संरक्षित करना चाहिये और धर्मात्मा
दानविरोंको से सी रुपयोंके दानीग्राहक बनकर पंद्रह २ प्रति इकट्टी मंगाकर अन्यमती
विद्वानोंको व पुस्तकालयोंको वितरण करना चाहिये।

पता-पन्नालाल जैन मंत्री-श्रीजैनधर्मप्रचारिणीसभा, काशी

ठि॰मदागिनी जैनमंदिर पोष्ट—बनारस सीटी । ─शिस्याद्वादमंथमालामें छपेदुये भ्रंथ । अ

जिनशतक-इसमें श्रीसमंतभद्रस्वामीकृत ११५ श्लोकों में चोबीस तीर्थंकर भगवानकी स्तुति है. सब श्लोकचित्रकवितामय है । संस्कृत टीका और भाषाटीका सहित पृष्ट १२८ न्यो॰ ॥)

धर्मरत्नोद्योत चोपईबंध—सरल कवितामें जिनधर्मसंबंधी समस्त विषय प्रष्ट १९२ जिल्दबंधा निर्णयसागर भेस बंबईका छपा न्योछावर १) रु०

भ्रमेप्रक्तोत्तर—[प्रश्नोत्तर श्रावकाचार] वचनिका-यह सकलकीत्यांचार्यकृत संस्कृत ग्रांथका अतिशय सरल भाषानुवाद है। इसके ११२१ प्रश्न और उनके सविस्तर समा-धानकारक उत्तर हैं. इसमें भी सब विषय हैं। यह ग्रंथ प्रत्येक घर और मंदिरजीमें विरा-जमान करने योग्य है।

पता-पनाझाल बाकलीबाल जैन-महागिनी जैन मंदिर. बनारस Benaras City.

कार्यालय अत्तरः

महाशय; कृपया इस विज्ञापन को अवज्य अवलोकन कीजिये: यदि आपको सु-गंधित अत्तर व तेल आदिकी आवश्यकता हो तो एक वेर अवस्य मंगाकर परीक्षा कि-जिये। विशेष हाल बड़ा सूचीपत्र मंगाकर देखिये। पत्र आनेपर भेजा जावेगा। अत्तर गुलाब: केवडा, मोतिया, हिना, पानड़ी, खस, हिना, दवना, चम्पा, सुरंगी, नरगिस, मोरजी. मोगरा आदि दर ॥] ॥] २] ३] ४] ६] ८] रु. तोला तेल.चमेली, वेला, केवड़ा, मसाला, खस, गुलाब आदि १।] १।।] २] ३] ४] ५] ६] ८] सेर ताँछ ८२ रु. भरा. कस्तुरी मिश्रित तम्बाकृ तम्बाकृ २) ३) ४) ६) ८) १०) १२) १६) सेर. किवाम ८) १०) १२) १६) २०) २५) ३०) ह. सेर. गोली ५) ६) ८) १०) १२) १६) २०) रु. से ४०) क. तक. वजन ८२ क. सेरभर.

कत्था:--२॥)३)४) रु. सेर. ताम्बू-रुविहार -) ()॥ ?) ह) की डक्बी.

> गुलाबजल ।≈]।≈]॥।]१]२]रु. सेर. कवड़ाजल ॥] ॥।]१]२] रु. सेर.

नोट:-इनके अतिरिक्त गुलकंद, मु-रुवा, अतरदान,कंटर श्रादि उत्तम२ चीज़ें किफायत के साथ भेजी जावेगी।

नोट:-केवल तम्बाखूपर /) प्रति रु. कमीशन दिया जावेगा. ज्यादा तम्बाखू ख-रीद करनेवाले पत्रद्वारा कमीशन तै करलेवे.

बडा सूचीपत्र मंगाकर देखिये. पत्रव्य-बहार हिंग्दी, मराठी, अंग्रेजी, उर्दुमें करना चाहिये.

अस्सल कस्तूरी मिश्रित जर्दी

हा जर्दा आमच्या कारखान्यांत एक नव्या पद्धतीनें तयार होत आहे। सुगंधी, मोहक व आल्हादकारक असून, खाण्यासही कड़क आहे. कोणताही जर्दा यानी बरोबरी करणार नाहीं. एक वेळा जे झाहक होतात ते वारंवार हाच माल मागिवतात. एक गुंज भर तोडांस टाकल्यानें तलफेची तृसा होत असून असा साफ राह्न तोंडास सुनास कायम राहतो. एक वेळा मागवून पहा म्हणजे उत्तम जर्दा कसा असतो हें आपणास कळून येईल. शेर ८२ रुपये भाराचा जर्दा दर शेरी २, ३, ४, ६, ८, १०, १२, १६ रु.

गोळ्या दर शेरी ५, ६, ८, १०, १२, १६, २० रु. पासून ४०रु. पावतो. किवाम दर शेरी ८, १०,१२,१६, २०, ३०, रु.

या शिवाय आमचे कारखान्यांत सर्वे प्रकारची अत्तरे उत्तम व टिकाउ तैयार हो-तात. अत्तरे, केवड़ा, गुलाव, मोतिया, वा-ळा, पानड़ी हिना, दवना, वकुली, चंपा, पारिजातक, मोगरा, महकपरी इत्यादि दर ४९, ४१२, १,२,३,४,५६,७,८०, ८०, पर्यंत.

सुगंधी तेलें चमेली,वेलिया,केंबड़ा,हीना, वाळा,पानडी,मोगरा दरशेरी ११,१॥,२,३, ४,५,६,८,रु.पावतो. ८२ रु. भाराचा शेर. [नोट] जद्यांचे ग्राहकाना दर रुपयास एक आणा कमिशन मिळेल.

पता-विहारीलाक कालीचरन त्रिपाठी पो.कनोज सीटी Kanaujetiy.

संस्कृत और नवीन हिंदी अनुवाद सहित श्री आदिपुराणजी छप रहे हैं।

न्योछावर १६) रु. डांक खर्च जुदा।

इस ग्रंथके मूल श्लोक अनुमान १३००० के है और इसकी वचिनका जयपुरवाले पं. दोलतरामजी कृत २५००० श्लोकों में बनी हुई है। पहिले इसी वचिनकाके छपानका विचार किया था परंतु मूल ग्रंथसे।मिलानेपर माल्म हुवा कि पं. दोलतरामजीने पूरा अनुवाद नहिं किया. भाषा भी ढूंढाड़ी हैं, सब देशके भाई नहिं समझते। इस कारण अतिशय सरल सुंदर आति उपयोगी नवीन वचिनका बनवा कर छपाना प्रारंभ किया है। वचिनकाके ऊपर संस्कृत श्लोक छपनसे सोनेमें सुगंध हो गई है। आप देखेंगे तो खुफा हो जांयगे। इसके मूल सहित अनुमान २०००० श्लोक और २००० एए होंगे।

इस ग्रंथमें सब विषय हाँनेसे ऐसा उपयोगी है कि सबके घरेंमें म्वाध्यायार्थ विरा-जमान रहै । यदि ऐसान नहि हो तो प्रत्येक मंदिरजी व नैत्यालयमें तो अवस्यही एक २ प्रति मगाकर रखना चाहिये ।

यह ग्रंथ १ वर्षसे बनारसमें छपता रहा परंतु छापनेवालों के प्रमादस कुल २९६ पृष्ठ छपे। अब यह प्रंथ इसके अनुवादक श्रीयुत पं. लालारामजी कोल्हापुरके जैनेंद्र छापलानेमें छपवा रहे हैं। अब साँ साँ पृष्ठके अंक न करके चारसी २ पृष्ठके अंक किये जायगा। अनुमान तीन महीनेके भीतर २ एकदम ४०० पृष्ठका अंक मेजकर पहिले ५) रु. का हिसाब पूरा कर दिया जायगा। इसकी न्योछावर हमने १६) रुपय रक्ली थी परंतु ग्राहक बढ़ानेकी इच्छास सिर्फ २०० ग्राहकोंके लिये २) रु. कम करके १४) रुपय कर दीथी सो अब २०० की जगह ३२९ ग्राहक हो गये। अब हम १४) रु. की न्योछावरमें नहिं दे सकते, इस कारण पूरी न्योछावर अब जो कोई ग्राहक बनेगा १६) रुपये ली जायगी (डांक खर्च जुदा देना होगा।) फिलहाल पार्म २९६ पृष्ट भेजेंगे किर ४०० पृष्ठका अक भेजकर ७००) पृष्ठका हिसाब पूरा कर दिया जायगा और आगके लिये ९) रु. वी. पी. से पेशगी मगालिये जायगे। इसी प्रकार चारसो पृष्ठक अंक भेजकर अगले वर्ष तक यह ग्रंथ पूरा कर दिया जायगा। जिनको इससे कम न्योछावरमें लेना हो वे जबाबी कार्ड द्वारा अपना अभिशाय प्रगट करें।

पत्र भेजनेका पता—पन्नालाल बाकलीवाल जैन भैनेजर, स्यादाद रत्नाकर कार्यालय—वनारस सिटी.

अधिसुप्रसिद्ध दो रतन.

हिमसागर तेल.

हिपसागर तेळ-के निरंतर ब्यवहार-से सब प्रकारकी शिरकी पिड़ा, शिरका भारीपन व खुइकी, आधार्शाशी, शिरकी खाज, मस्तक शून्यता आदि मस्तक स-म्बन्धी प्राय: सब रोग नष्ट होते हैं।

हिमसागर तैळ-दिमागी परिश्रम क-रनेवाले स्कूलके छाल, मास्तर, बकील आदिका सच्चा मिल है अतएव दिमागी परिश्रम और काम काजसे थके एवं चिं-ताशील मनुष्योंको परम शांति दायक है।

हिमसागर तैल-बालोंको चमकीला भौर मुलायम करके बढ़ाता है तथा बालों की जड़ोंको पुष्ठ करता है। इसके अति-रिक्त यह स्त्रियों के सुँगार की प्रधान सामग्री है।

हिमसागर तैस्न को व्यवहार कर कितनेही गण्यमान्य प्रतिष्ठित मनुप्योंने मुक्तकण्ठने प्रशंसा की है। मृल्य फी शी० १) रु० ६ शी० ५॥) रु० १२ शी० १०) रु०।

आधी शीशीके ।।। अभि नम्नेकी शीशी । में

नयनामृताञ्जन (सुरमा)

पुनर्दारः पुनर्वित्तं, न च नेतं पुनः पुनः । धर्मार्थकाममोक्षाणां, नेत्रं परमसाधनम् ॥ अर्थ यह है कि स्नी, धन आदि फिरभी प्राप्त हो सकते हैं किंतु नेत्र ऐसी अमृह्य बरतु है कि एकबार गये पछि फिर प्राप्त होना कटिन है। नेल-हीन के लिये संसार न होनेके समान है। कहावत भी है कि "आंख गई जहान गया"।

परमात्माने कुल शरीर में यह नेत ही ऐसे बनाये हैं कि जिससे मनुष्य सब प्रकार से संसार के छुख भोग सकता है। अतः यदि आपको नेत्रोंकी रक्षा करनी है तो नयनामृतांजनका नित्य व्यवहार करें।

हमारे नयनामृतांजनका मितिदिन सेव न (अनागत मितिसेथोक्त) रीति से नेत्रों में होनेवाली बीमारियों से बचाता है। नजर की कमजोरी (Weak Sight) दूर की बरतु का ठीक न दीखना (Short Sight) मश्राति रोगोंकी भी यह एक अन्यर्थ महौष्षि है।

जिन मनुष्योंको जवानी में चरमा
लगानेकी हानिकारक आदत पड़ गई है
कुछ दिन इसका सेवन करनेसे उनकी
यह आदत छूट सकती है। मू० फी शी०
१) रु० ६ शी० ९॥) रु० ३ का २॥॥)
आधी शीशोंके ०॥८
और नम्नेकी शीशों ०।८ में

मुफ्तमें—१०-२० हिंदी जाननेवालोंके नाम पत्ते लाकर लिख भेजनेवालोंको उपदेशों और कारीगरीके चूरकलों चिलको प्रसन्न करनेवाली कहावतीं सहित बड़ी जंत्री मुफ्त देंगे। पत्ता-पं. सूर्य्यमसाद शर्मा वैद्य, (दि॰ जी०१) मेरठ Meerut.

के पांच अमूल्य रत्नों 餐

शुद्ध नमकसुकेपानी नं १७

शुद्ध नमक सुलैमानी पेट के रोगों को नाशकर पाचनशक्ति बढ़ाता, भूख ल-गती, भोजन पचता, दस्त साफ होता है आरोग्यता में सेवन से मनुष्य बहुत रोगों से बचता है। इस से हैजा अपच, पटदर्द. वायुशूल, संप्रहणी, ऋतीसार, बवासीर, कव्ज, खट्टी डकार, छाती की जलन, वह-मूत्र, गठिया, खाज, खुजली दूर होती है। विच्छ भिड़, बर्रके काटने की जगह मलने से लाभ होता है। स्त्रियों की मासिक ख-राबी को दुरस्त करता है। वश्चोंकी अपच, दस्त होना. दुध डालना, सब रोगों को दूर करता है। उदरी, जलोदर, कोष्ठशृद्धि, यकृत् , प्लीहा, मन्दामि अम्लश्ल पित्त प्रकृति आराम होता है। अतः यह कई रोगों की एक दवा सब गृहस्थों को अपने पास रखना चाहिये कीमत ।)

वीर्यसिन्धु १८

इस दवा के सेवन से २० प्रकार के प्रमेह, धातुका पतलापन, पेशाब के साथ जाना, नपुंसकता, दिल दिभाग की कमजोरी, स्वप्नका होना, गमन शक्तिका नाश, कव्ज मन्दामि, हाथ पैरों लेार कमर में दर्दरहना, किसी कामको दिल न चाहना, हाथ पैरों में थोड़ी मिहनत से थकान होना, रात दिन आलस्यका रहना, स्मरण शक्ति का नाश होजाना इत्यादिक सर्व प्रकार की धातु सम्बन्धी बीमारियां दूर होकर पुष्ट कर सन्तानोत्पत्ति की ताकत पैदा होजाती है॥ कीमत १।) नमूना॥)

जन्मघुटी नं॰ १४

यह सर्वोत्तम घुटी बच्चों के लिये अ-मृत के समान है। प्रायः बजारमें ठीक नहीं मिलती है इसलिये पूर्ण और गुणकारी मंगाकर लोगोंको रखना चाहिये। दाम ११) डा. ०। नमुना।)

(प्रदर नाशक)

स्थियों के प्रदर्शेग और मासिक धर्म के ठाँक न होने के कारण स्थायों को जो कष्ट होता है वो खुद ही बेचारी शरम के कारण सहन करती हैं इसी तरह बेचारी काल की गाल होजाती है। उनके मनुष्य कुछ ख्याल नहीं करते, रातदिन बेचारी रोगी रह कर भी घर का काम मरते गिरते क-रती हैं। ऐसी हालतों में बेचारी मला कहां से सन्तानका सुख देखसकती हैं? कमरमें दर्द, आलस्य, क्षुधाका नाश, किंचित ज्वर का रहना, बादीका बढ़ना, तमाम पेटकी बीमारियों को दूर करके सन्तान सुख की प्राप्ति होती है। कीमत १।)

स्वेतकुष्ट (सफेद दाग) शर्तिया दवा

इस दवा के लगाने से अवश्यमेव स्वेतकुष्ट दूर होजाता है। हजारों को लाभ पहुंच चुका है। ७ दिनके लगानेसे फायदा दिखलाई देता है। दाम ११) डि॰ नुमुना॥) मिलनेका पता वैद्य जिनेश्वरदास जैन कुष्ट चिकित्सक

और संपादक 'भारतनारी हितकारी'

Mainpuri (U.P.) मैनपुरी.
नोट:-शुद्ध आयुर्वेदिक औषधालय मैनपुरी
का बडा सूर्चीपत्र मंगाकर देखो.

श्रीयुत चंद्रसेन जैन वैद्य, इटावा निवासी कृत पवित्र, अससी, २० वर्षानी अकभावेसी अने से क्षेत्र प्रशंसा-पत्र प्राप्त करेसी.

પાચન શકિતની અકસીર દવા नमक सुलेमानी

ફાયદા ન કરે તા પૈસા પાછા.

આ નમક સુલેમાની પેટના સર્વે રાગાના નાશ કરી પાચન શકિતને વધારે છે, જેનાથી ભુખ સારી રીતે લાગે છે. ભાજન પચે છે. અને ઝાડા સાક આવે છે. સુખાકારીમાં પણ આ દવાના સેવનથી અનેક રાગથી અચાય છે. એના સેવનથી કાલેરા, પ્રમેહ, અપચા, પેટનું દર્દ, વાયુ, શુળ, સંગ્રહાણી, અતિસાર, ખવાસીર, કખજી આત, ખાટા ઓડકાર, છાતિમાં ખળવું, ખહુ સુત્ર, ગાંઠા, ખસ, ખુજલી, વગે રે રાગાના તુરતા તુરત આરામ થાય છે. વીંછ, ભીંડ, વરૂના કર-ડવાની જગ્યાએ મસળવાથી લાભ થાય છે. સીઓની માસિક ખરાખી દુર કરે છે. તેમજ અચ્ચાંના અપચા, ઝાડા થવા વગેરે સર્વે રાગાને પણ મટાડે છે. જલ ધર, કાષ્ટ્ર વૃદ્ધિ, યકૃત, પ્લીહા, મંદાગ્ની, અમ્લ-શુળ અને પિત્ત પ્રકૃતિ આરામ થાય છે. તા આવા અનેક રાગાની આ એકજ દવા સર્વ ગૃહસ્થાએ અવશ્ય પાસે રાખવી જોઇએ. વાપરવાની રીત શીશી સાથે છે. શીશી એકની કિં. રૂા. ગા આઢ આના. ત્રણુ શીશીના રૂા. ૧ા૦ છ શીશીના રૂા. રાા અને બાર શીશીના રૂા. પ) ટપાલ ખર્ચ જીદું.

दद्वदमनः—हराक (हाहर) नी अक्षसीर हवा, उण्णी ओक्षनी कि. इा. व यार आना.

दंतकुसुमाकरः—દાંતની રામબાણ દવા. ડખ્બી એકની કિ.રૂ.બ ચાર આના. વિશેષ હકીકત માટે માેડું સુચીપત્ર મકત મ'આવી લાે. નાેડ—દરેક સ્થળે એજ ટાેની જરૂર છે.

> दवा मंगाववानुं स्थळः चंद्रसेन जैन बैद्य, इटावा सीटी Etawah city.

धी जैन बेंक ऑफ इंडीया ठीमीटेड.

हेड ऑफीस-लाहीर Lahore.

ब्रांचें—होशीयारपुर, गुजरांवाला, मुलतान सीटी, रामनगर स्थापित मुल द्रव्य ५००००) जिसके

पश्चीसर रुपया के २०००० हिस्से नियत किये गये हैं और विकारहे हैं.

बोर्ड आफ डायरेक्टरमें मितिष्टित, धनाहय और योग्य जैन गृहस्थ हैं और सब मकार का मबंध जैनों के हाथमें है. चस्त, मियादी और सेविंग डिपाज़िट हिसाब खोले जाते हैं और काल तथा रुपयाकी गृनाधिकताके अनुसार तीन रुपया मित संकड़ासे रु० ६) मित सैंकड़ा तक ज्याज दिया जाता है. संपूर्ण नियमाविक मंगला कर अवस्य पढें.

जैनोंको शेर छेनेकी खास विवास और मेरणा है.

पनालाल जौहरी जैनी मैनोजिंग डायरेक्टर

जसवंतराय जैनी, सक्रेटरी

धी जैन बेंक ऑफ इंडिआ कीमीटंड-लाहौर.

ળસા રૂપૈઆમાં અજાદાન સાથે અમર નામ.

દાનવીર સજ્જના ! અનાથાની પ્રાણ રક્ષા કરવા આપના વરદ હસ્તને આ આશ્રમ તરફ લંખાવવા કૃપા કરશા !! અન્નદાનનું અન્નદાન અને સાથે અમર નામ !! જે દયાળુ દાતા તરફથી એકા વખતે રૂ. ૨૦૦ ખરેા દાનમાં મળશે, તે રકમ અનામત રાખી તેના વ્યાજમાંથી દરવર્ષે દાતાની મરજી પ્રમાણે દરાવેલા એક દીવસે આશ્રમના અનાથાને દાતાના સ્મરણમાં અન્નદાન આપવામાં આવશે. અને તે દાતાના નામની આરસની તખતી કરાવી એાકીસમાં ચાઢી અમર નામ પણ કરવામાં આવશે. શું આવા દાનવીર દાતાઓ માત્ર ૩૬૫ નહિ મળે ? જરૂર મળશે. દયા લાવી લખો:—

મંત્રી-હિંદુ અનાયાશ્રમ, નડીઆદ.

मुफ्त विराट उपहार वितरण

२००० घडियां मुफ्त

वीर सम्वतका उपहार सबको मिळेगा। उपहार पानेकी मीयाद १ दिसम्बर १९१३ तक है।

आप को क्या उपहार दिया जाता है और क्याकर दिया जाता है इसका ठिंक र माद्धम कर लेना प्रत्येक मनुष्य का लाजिमी है। हमारा अमृतवटी और नेत्र रक्षक नामी औषध सारे भारतवर्ष में प्रसिद्ध और अद्वर्ताय है। इनके गुणोंका अनुमान प्रत्येक नर नारीको हो चुका है और यही कारण है कि इन दोनों औषधोंकी कई लाख शीशियां बिक चुकी हैं और लाखों ही आदमी कठिन रोगोंसे आराम पा चुके हैं। बिकीका अन्दाजा आपको हमारी एक दिनकी आमदानींसे मली मांति हो सक्ता है। ता. ११ नोम्बर सन् १९०९ की आमदनी ६९८०) तहसीलदार साहेब मेनपुरीने तसर्दाक की है। और इसी सालकी ता० ६ जनवरी १९१३ की आमदनी ६२६०) है।

१ शीशी अमृतवटी मूल्य ॥) १ शीशी नेत्ररक्षक मूल्य ॥) डाक महसूल ४

शीशी तक।)

२ शीशी अमृतवटी या नेत्ररक्षकके माहकको १ शीशी पुष्पलता तैल मुफ्त १ टाइम पीस घड़ी मुफ्त ४ शीशी 99 53 73 ६ शीशी १ गढ़ियां रेलवे घड़ी सुपत 77 72 १ काले केसकी सुनहरी या १२ शीशी " 22 77 रुपहली मूंठदार बहिया जेबी घडी मुफ्त.

नोट—विदित हो कि जो लोग उपरोक्त घड़ियां अलग खरीद चाहेंगे उनको टाइम पीसका १॥) बढ़िया रेलवेका ३) और काले केसवाली घड़ीका ५) मूल्य देना होगा यह उपहारकी घड़िया वगैर भेजनेसे पार्सल भारी हो जावेगा उसका डाक व्यय झाहकको देना होगा।

अमृतबटी—इस औषधका गुण अपार है। आज इस दवासे भारतवर्षमें और भारतवर्षके बाहर भी लाखों आदमी सेवन कर लाम उठा रहे हैं इस वास्ते इसका मूल्य बिल्कुल काम कर दिया गया है। इससे बीसों प्रमेह, कमजोरी, सुस्ती, दुमा, खांसी, बवसीर, ज्वर, कुपच, स्नियोंके सर्व रोग इत्यादिर सबही आराम होते हैं। मूल्य प्रति शीशी ५० गोली ॥) डाक म० ४ शीशी तक।)

नेत्ररक्षक सूर्या — यह सुर्या हमारे कई सालके भारी परिश्रमका फल है। मूल्यमें कमी कर देनेका कारण केवल यही है कि सब लोग खरीद सकें और हमारे सत्य असत्यकी परीक्षा करें। इसके लगानेसे नेत्रोंके सब रोग जैसे पानी बहना, सुखी, तिमर, धुंध, थोड़े दिनोंका जाला, कम दीखना, इत्यादि सब रोग आराम होते हैं। प्रति दिन लगानेसे आंख शीतल रहती है। अवस्य मंगाकर ब्योहार की जिये। मूल्य ॥) हाक ब्यय ४ शीशी तक।)

मिकनेका पत्ता-जे. एक. सन एन्ड ब्रद्स-मैनपुरी यु. पी.-Mainpuri?

धनी होने और रु. कमानेकी मेशीन-१०००) माहवार कमालो.

इस भारत वर्षमें बेरोज़गारों और न काम करने वालों की संख्या करोड़ों तक है इसी लिये हमने "व्यापार मिल्ल" नामकी पुस्तक बनाकर छापी है। यह पुस्तक क्या है! अमूल्य रत्न है। साधारण और थोड़ी पूंजी से होने वाले प्रायः सब ही भांतिके रोज़गारों का वर्णन इस किताब में किया गया है। इन में से यदि कोईसा एक भी रोज़गार थोड़ी पूंजी से किया जावे तो २-३ रुपया रोज़ाना कमा लेना कोई बड़ी बात नहीं है। यदि वही काम ज्यादा पूंजी और चतुरता से किया जावे तो हज़ारों रुपया माह्वारी की आमदनी हो सक्ती है॥

प्रथम अध्यायमें—मनुष्य मात्र की सब बिमारियों की परीक्षित और तुरन्त गुण पहंचाने वाली औषधें स्वयम तैयार करने की पूर्ण विधि लिखी गई है ॥

द्वतीय अध्यायमें—हर समय हर स्थानमें काम लाने योग्य अत्यन्त लाभदायक सैकड़ों वस्तुयें तैयार करनेकी विधें समझाकर लिखी गई हैं। यह सब विधें ऐसी उपयोगी हैं कि इनमें से एकर की न्योछावर सैकड़ों रुपया है। जैसे गोरे और सुन्दर बननेकी दवा बनाना—सब भांति और सब रंगकी देशी तथा अंग्रेजी लिखने और मुहर और प्रेसमें छापने की स्याहियां बनाना—रंबर बनाना—जादका कलम और कागज बनाना—सीमेन्ट वनाना-जनी और रेशमी कपड़ा रंगना, पारा, काफ़्र, गन्धक, निमकका ग्लास या कटोरा बनाना—बिस्कुट बनाना—मोमके फूल बनाना-बटन बनाना इत्यादि र सैकड़ों बातोंका वर्णन है।

तीसरे अध्यायमें — जर्मन सिलवर बनाना — कांसा बनाना — नक्की सोना, चांदी, मोती, मंगा, बिल्होर, नीलम, कस्तूरी, इत्यादि बनाना — रूपहरी सुनहरी गिल्ट करना तथा पेंसिल और जेवी प्रेस बनाना — दियासलाई, कागज, मोमबत्ती इत्यादि र बहुतसी बातों का बेयान है।

चौथे अध्यायमें—गेस और विजलीकी रोशनी पेदा करनेका वर्णन-विजलीका ताबाज़े बनाना—नक्षशेका कागज बनाना—पिपरमेंट बनाना-वाल सफा पावडर, अर्क और साबुन बनाना-सुगन्धित वालोंका तेल बनाना-सोना, चांदी, इत्यादिकी भस्म बनाना-तथा अन्य भांतिर की मरहमें, वं सुगन्धित पदार्थ तैयार करना इत्यादिर का वर्णन है।

पूरी किताब जिसमें यह चारों अध्याय हैं उसका मृल्य १) है। डाक खर्च ०) नोट-इस किताबकी वस्तुयें या विधें सीखने या काममें लानेके लिये जीन पदार्थ आवश्यक हैं वह हर जगह मिल सक्ते हैं कोई वस्तु असम्भव नहीं लिखी गई है। 'फोटोप्राफी शिक्षा' नामक पुस्तक जिससे हरकोई १ सप्ताहमें चित्र खींचना सीख जाता है प्रत्येक प्राहकको सुफ्त भेजी जाती है।

मता-मेनेजर-वाकर प्रस-मैनपुरी सीटी-Mainpuri. U. P.

अवश्य परीक्षा कीजिये.

॥ आनंदवटी ॥

यादे आप संसारका असली मजा लूटना चाइते हो ?

परम आनंद प्राप्त करनेकी इच्छा हो ? संतान पदा होना चाहते हो ?

तो लीजिय, 'आनंदवरी 'शरीरको बलवान हुए पुष्ठ एकदम बनाती है. वायुगेग, प्रमह, सुनाक, धातु विकार, स्वप्रदोष धातु पानंसी पतली होना, क्षय, दम, पांडरोग, होहा (ताबतिली) आदि भयंकर रोगोंके लिये रामबाण दवा है। तथा रक्तविकार, बात व्याधियोंके लिये हुक्मीदवा है। यह आनंदवरी एक प्राचीन भंडारक जीण प्रन्थसे बहुत्त स्वचं करके हजारोंबार परीक्षाकर प्रसिद्ध की है। वाजीकरण (वीय वहानेमें) से यह दवा अमृल्य जादू है। राजा रंक सब उपयोग कर सके इस लिये कीमत कुल २) एक शीशी। पोष्ट अलग.

॥ काल प्रहारी ॥

सर्व प्रकारके शीत—उप्ण ज्वरों (ताव) के लिये अजमाई हुई दवा, चार गोली खात हो ताव एकदम भागता है तथा खांसी, दम, संग्रहनी (अधिक दस्त होना) आदि रोगोंको भी नाश करती है। कीमत एक शीशीकी शी।) पोष्ट अलग।

॥ अमृतवटी ॥

खांसी उथरस, पित्तविकार, माथा-दुखाना, गर्मी, उदासीनता आदिके लिये सिद्ध परीक्षा कीहुई दवा. कीमत एक शीशीका मात्र ा॰ पोष्ट अलग ।

> ॥ श्वासहर धुरंधर ॥ क्षय, दम, श्वास, खांसी, दम, उध-

रस, ज्वर, अजीर्ण ज्वर, आदि रे।गोंको खातेही भगाती है, यदि आप सबकी द्वा खाकर हैरान हो गये हो, तो हजारोंबार अजमाई हुई यह सेवनकरो यदि फायदा नहीं होगा तो पैसा पीछे पिछेगा. कींमत एक शीशीकी ०॥ पोष्ट अलग।

॥ नमक सुलेमानी ॥

अफरा, गोला, छोहा (वरोल), ताव-तिली, जीर्णज्वर, खटी उक्कार आना, पांडुरोग, कमला, खांसी, अन्न नहीं पचना एवं ८४ पकारके समस्त वायु रोगों नाश करनेके लिये एकही अपूर्व दवा। स्वादमें भी सर्वोत्तम, इस दवातारीफ हम दावेसे करते हैं कि यह दवा सर्वको अवस्य फाय-दा करती है. कीमत माल ०।।। आना.

॥ नयनामृत ॥

दुखती आंखे एकदम साफ खुळ जाती है तिमर, छाया,पानी वहना वंद होता है, कीमत ां शीशी, पोष्ट अलग।

अनुभवित दवायें

•	
जुळाबकी गोली कीमत एक शीशी	0 =
तावकी दवा	0=
नयनामृत	01=
ज्वरांकुश	?)
लोइभस्म तोला ?	સા
प्रभाचंद्रोदय (नेत्रोकें लिये)	0111
कफदम ज्वरवटी	01=
मद्र प्रहारी	0111
भमेह महारी	0111
कुचिलागोला	011
2 \ 2	

पत्ता-मुख्य औषधाळय, ईटर (पहीकांटा) IDAR (MAHIKANTHA.)

सुभार्णव आफिस इटावाका बनाया हुआ गरन्टी दिया हुआ

🔏 खुराबुदार बाल उडानेका साबुन.

यह एक ऐसा विचित्र साबुन तैयार किया है कि इसके छगाने से किछन और मुछायम जगह के बाछ ४-५ मिनटमें वर्गेर किसी तकरूफि के उड़ जाते है. शरीरपर कुछभी दाग वर्गेरह निह पटता. चमडी मुछायम और साफ होती है. आज तक जीतने तेछ, चूर्ण, अर्क वर्गेरह बाछ उड़ानेके छिये निकले है वो थोड़े दिनोंके बाद काम निह देते मगर बा

षात इस साबुन में नाहें हैं. हमारे साबुन को आप वर्षातक काममे छा सर्कोंगे. किं:-

केवडाकी टवि	र्धाया	01		ş	टिकिया	का	बक्स	0
गुलावकी	"	**			77	"	**	**
मातीआकी	,,	**			77	77	**	27
हिनाकी	"	**			17	"	**	"
, ,	"	0			77	79	**	011=
नींचू कपूरकी	"	"			"	"	27	77

पोस्टेज एकसे ६ टीकीया तक ०। दर्जन पर ०।=

हरजगह एजंटोकी जरूरत है. एजंटोको बरसे वम रु. ९) के साबुन मंगाने से २५ रु. सैंकडा वभीशन फिलगा, सब रुचे पाफ और नोटीस वगरह हुएत मिलेंगे. बिगडी हुइ धातुको शुद्ध और पृष्ट करनेवाले दो अमुख्य रान

वीर्य प्रकाश चूर्ण

धातुपुष्ट वटिका



इस चूर्ण और वटिकाकी अधिक तारीफ करना फिज्रुल हैं. इसके सेवनसे बीसो मकारका प्रमेह, धातुक्षीण, स्वप्न दोष, वीर्यका पतलापन, ग्रुस्ती, हाथ पैर कमरमें ददे होना, कमभूख लगना, दस्त साफ न होना इत्यादी कम जोरीसे पैदा हुइ ५७५ कीस्मकी विधारीयों दूर होती है. शर्त-अगर फायदा न करे तो दाम बापिस. कि. ३० दीन ग्रुवह शाम दोनों समय खाने लायक दवाका रु. १॥ हाक खर्च माफ. बाबू मदनलाल जैन वैद्य, लालपुरा नं. ३२ इटावा सीटी. ETAWAH.

११४ रोगों के लिये एकही दन

मूल्य ष्याठ ष्याना



मूल्य आठ काना

जगतमें प्राणरक्षा करनेवाली अपूर्व चीमतकारी दवाहै

इसिक्ये हरएकको खाहिये इस अमुख्य औष्धि की एकर शिशी घर, हुकान, खीए ह, और बेटनेकी जगह में मुसाफिरी के बक्समें, ह च बंगमें, और अपनी जेबमें मंगाकर जकर रक्षें, यह औष्धि प्रायासर्थ रोगों का जो बृदे, बालकों, जवान पुरुषों तथा कियों को होते रहते हैं अचूक इलाज है इसके अलाबा पशु, पक्षी आहि के रोगों को भी दूर करता है इसी वास्ते कहाजाता है।

पीयप विनद

कक, खांसी, जाडे का बुकार, डीले दस्त, के, दैजा, वालकीं की कुकर खांसी, दमा, जुकाम मरोडके दस्त, अभिन्यलाना, इक्तरा, तिजारी खीथिया, इरप्रकार बुखार, खुश्क बांसी, अजीर्या, श्रुल, अतिसार, संप्रह्या, सिरदर्द, पेट दर्द, कान दर्द, कमर दर्द, दर्द गुदी, हाच पैर व गठिया का दर्द, मुंहमें क्राले, मुख सुजना, गला बानी आवाज वैठ जाना, मिगी, मुक्री, पीक्षिया, नेत्र दुखना, मूत्र रकना, स्त्रियोक्त प्रसूत. वच्छों के सर्वरोग, दाद, पिसी, खुजली, तिचली, खुजाक आतिशक, गिल्टी, होग, फोडा, फुन्सी, जखम घाव, दाद के अन्दर दर्द वा दुखना, मसूडों का फूलना, दांतों से खून आना पानी लगना, नाक में फुन्सी नाक में दुर्गन्ध नक्सीर आदि और सर्व प्रकारके विवेले जैसे बर्ग, बिच्लू, कुस्ता, सर्प, मूसा, आदिका इंक किसी विवका खाजाना इसके अलावा चाकू, कील, छुरी, तक्षवार, साहि शक्षों का क्षवम, इत्यादि र रोगों को पीयूच विन्तु की एक दो बुंद खाने या लगनेसे महिनोक्ता रोग दिनोंमें और दिनों का घंठी में और घंटों का मिनटों में आराम होताहै एकबार मंगाकरतों आजमाइश्र कोजिये कीमत फी शिशी हो थी. पी. खन्ने एक से खार तक ।-) आना

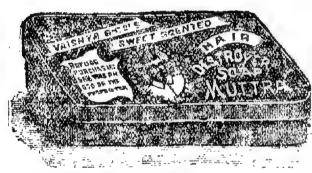
ई शीशि एक साथ मंगाने से सिर्फ दे) द्वपया और १२ शिशी मंगाने से था) रुपया में घर बैठे पहुंचा देंगे॥

मंगाने का पता-सुद्र मृङ्गार महोषधालय मथुरा

धोखे में न स्थाना ।

इमारे साबुनकी अधिक विक्री देखकर खोभियों ने मिट्टी, और घुना मिछ। सस्ता साबुन बनाकर बेचने का तथा ४०)से ५०) ६० सेंक्टा कमीक्षनके छोभका ढंडोरा प्रकाशित कियाहे इस छिये इम स्वित करतेहैं हमारे अनुग्राहक ग्राहक सस्तेके छोभमें न फर्से क्योंकि उस चूने और जिस्मको जछाने वाछी मिट्टी मिछे साबुनके व्योवहार से चमड़ी जछकर थोडंडा रोज में काछी पडकर ऐसी कड़ी होजातीहै कि हजार छपाय करने से भी वैसी साफ चिकनी और कोमछ होना काटन है। इसछियं नक्छी सस्ते साबुनकी इस्तेमाछ न कर वैश्य एण्ड कम्पनी मथुरा का बनाया बढिया इल्लोका बाल उद्याने की शर्तिया गारंटी वाला वही जगत प्रसिद्ध

बाल उड़ाने का सावुन



इस्तेमालकरें-हमारा सायुनविज्ञानिक रीत संउत्तभोत्तम द्वाइयीं केयोगभेचतुरमनुष्यों द्वारा नपेर यन्त्रों से बनाया जाताई जो

व्यवहार में सचा देखने में सोने हेसमान है विकायत के बेन हुए मही जिल्लीन बक्स में रहता है इसिल्येखरी दनसे पहिले बिलायती रंगीन एसा आज बक्स हमारे फोटे। सहित देखलेना चाहिये हमारे साबुनको बालोंपर लगाने से बगैर तकलीफ के ३, ४ मिनट में बाल इड़कर चमड़ी साफ चिकनी और कोम्ल हो जाती है। इसीसे विलायत बालभी मंगाते हैं।

कीमत गुलाब, केवड़ा, खस का फी टिकिया।।) आना

- रै टिकिया का बक्स ११०) अ ना नाव, कपूर, संतरे का फी टिकिया 10) आना
- ३ टिकिया का वक्स ।। >) बी. पी. १ स ३ तक । -)

पस. वी. युना बादर्स-बैश्य एन्ड कम्पनी मथुरा.

नाटक पेषियों के छिय सभा नाटक और
सुशिक्षा का अटर भंड र
राजा महाराजा, और धर्म महोपदेशक,
तथा हिन्दी पत्र सम्पादकों से मान प्राप्त
सरल बुज भाषा में सचित्र सोतें।कान्ड



विय सक्तनों इस पर बर्गन शीक संसारमें सैंकड़ों ग्रंथ बने परन्तु अस्ति। स्था पाण का कमा आदर हुआ है वमान किसीका हुआहे न रिका असे स्मन इस कोक निय ग्रंथ के सातों कान्ड को सब तर ह कि लिख वाले मनुष्यों मन्देजन करने के लिये नाटकी धुन मे हर तर ह के दिल चरप राग रागनी जैसे गज़क, टुमरी, छन्द, वज़ी, कन्याली, दादरा, दोहा, कवित्त, कावनी, प्रभाती, होली, भजन आदि भाव पूर्ण गाने मय का किया बन्दी नाटकी बातचीत केतेयार किया है आह ? प्यार पाटको आत भक्ति, मात्र भात्र स्थापमें, अपर नद्धमें, किया है आह ? प्यार पाटको आत भक्ति, मात्र भात्र स्थापमें, अपर नद्धमें, किया है आह रामायण में केसा सुन्दर विचित्र समा वेशहें कि हाथमें केकर पढ़ने और चित्र दर्शन से पुस्तक छंडने को जी नहीं चाहता। मूल्य की पुस्तक ।।) ह० जिल्ह साहित २।।) वी. थी. स्वच।)

तीन एक साथ मंगाने से खर्च माफ ।

ष्यापारियोंकेल्यि २५ किताब मंगानेपर २५)सैंकड़ा कमीश्वनदियाजायगा

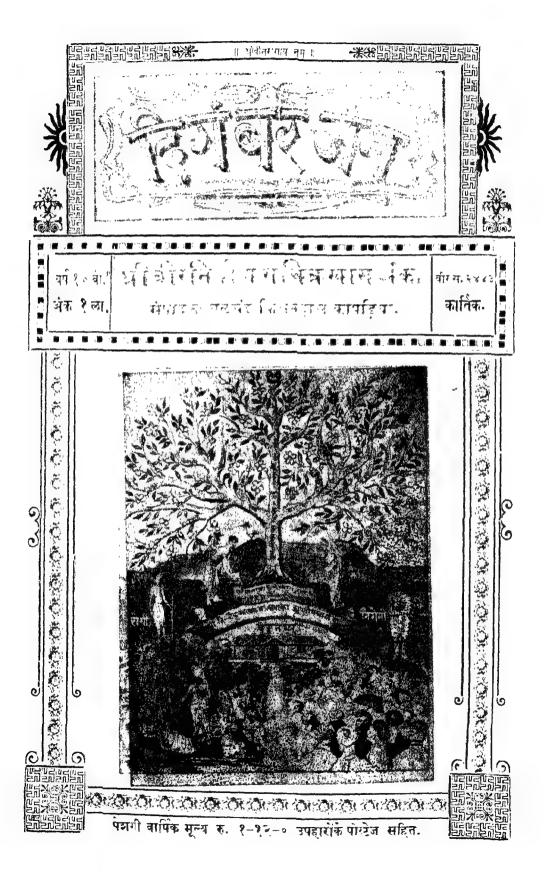
पुस्तक मंगाने का पता लाला जगन्नाथदास वैश्य अध्यक्ष सुदन्र शृंगार मशीन प्रेस मथुरा। इस दवाके उत्तर होने का इससे बढकर और क्या प्रधाण होसक्ताई

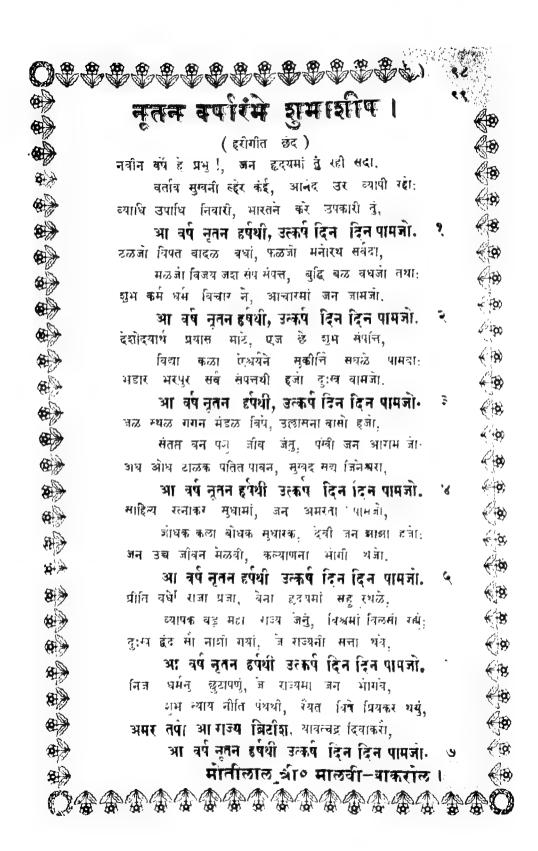
→ १८ वर्षकी परीक्षित ! ﴿
आयुर्वेदशास के ज्ञाता वैद्य छोगों की और
एक एम एस दाक्टरों की परीक्षा में अतीव गुणकारों
सरकार से रजिस्ट्रों की हुई



गर्मी ! जाड़ा !! वसीत !!! सब ऋतुमें सेबन करने योग धातुबद्धक और पौष्टिक अपूर्व महीप घेकिछंच बाक्टर साहब बी. सी. सनयल, एल एम. एम. (ककक्वा) सिविक असिस्टेन्ट सर्मन दिसटिक्ट अस्पताक पशुरा १० फरवरी सन् १९१२ को किखन हैं ' मैंने छुन्दर शृङ्गार कार्याक्य मध्रा की बनाई 'पुष्टराजवटिका" नामक दवा की अच्छी तरह से जांच की । मेरी राय में बाद्ध सम्बन्धी रोगों की "पुष्टराज वटिका" एक बहुत अच्छी दवा है। जबानी की मनमानी तरंगोंमें आकर जिन छोगोंने अपनी घातुका नष्ट कर दिया है और प्रमेह व पातु क्षीण रोगोंसे दुखित हैं, उनके किये यह द्वा अतीव गुणकारीहै। नामदी और मूत्र रोगभी इससे जरद दूर हो सक्तेहैं । बुढापेकी कमजोरा और नामदीं के छिय भी अत्यव गुणकारी है इसमें कोई टापिष पदार्थ महीं है हर एक मनुष्यको व्यवहार करने के छिपे मैं विकासक पुष्टराज बाटिकाके सेवन करने की राय देताहूं" मृत्य ४० खुराक का फी बनस २॥) ६० खु० का फी बनस ३॥) ८० खु॰ का फी ब॰ ४।) बी.पी. खर्च।) दा बक्स भंगानेसे खर्चमाफ माल मंगाने का पताः—सन्दर शृङ्गार महीषधालय मथुरा







to any

विषयानुक्रम

नं०	.विषय है स्वक		पृ०
8	वर्षारमे शुभाशीय और फते हा जार्ज पंचमकी	मुख	âā
२	महावीर-स्तुति (विष्णुदत्त शर्मामुशदाबाद)	े २
ą	संपादकीय वस्तव्य		X
¥	चित्र-परिचय		•,
ч	मनोगति-परीक्षा (तत्त्वबुमुत्सु-आगरा)		१७
Ę	रतलाम-बोर्डिंगका वार्षिक अधिवेशन		२०
હ	जैन समाचार संग्रह		२६
8	Ahimsa in the Light of Truth or Jain Ethics.		*
	(Jagmandar Lal Jaini. M. A. Bar-at-law, Judje, Indore.		29
9	Practical Religion (Manilal H. Udani, M.: A. LL. B.)	•	30
10	Ahimsa or Non-Injury (H. Warrau, London).	***	34
	Leaves of Grass (A. Gordon, Stockport-England).		3 9
12	Date of Jainizm (Vir Balak).		47
13	Where lies the true happiness (Rikhabdas B. A., Meerut))	48p
14	Jainizm (Baboo Ajitprasadji M. A. LL. B., Lucknow).		488
१५	मित्र-संवाद (मास्टर दीपचन्दजी परवार, नरसिंहपुर)		* *
१६	शिक्षाका इतिहास (मास्टर छोटेलाल जैन, खुरई)		48
१७	जैन लॉ की आवश्यकता और अलिय सन्तान (भरमप्या पदमप्या पाटील, बेलगाम)	५७
१८	सिंहराज अने योगीराज (मास्तर नानचन्द पुंजाभाई बी० ए०वडीदरा)		६०
१९	आत्मन् ! कस्याण कर (बाबू पनालाल जैन-अलबर)		६६
२०	सादुं जीवन अने ते गुजारवाना उपायो (जैनमहिलारत्न श्रीमती मगभव्हेन, मुंबाई)		EE
२१	कभी वह दिन आयगा ? (भगवानदास शिक्षक-बीना)		9 0
२२	विद्यावृद्धि करना बंधुकोने बिनंति (भीमती कंकु-हेन,-शालापुर)		9 0
२३	श्रीद्यभचन्द्राचार्य (श्रीयुत्त नाथ्रामजी प्रेमी-मुंबाई)		192
२४	सेवाधर्म (भीमती लानिताब्हेन-मुंबाई)		90
ર્ષ	धर्मकी महिमा (स्वर्गीय वाष् अमृतछालजी जैन)		٤ ٤
२६	जैन द र्शन (पै० उमरावर्सिंहजीकाशी)		८३
२७	जैन मंदिरांकी बनाबट (जैम कवि ज्योतिप्रसादजीदेवबन्द)		46
26	भर्म (पं. हरिवंदा मिश्र, छपरा)		९१
२९	रोटी-व्यवहार कहाँ २ हो १ (पं. पञ्चालाल बाकलीवाल)		53
30	जन्ममर्णोत स्थित वर्णन (पनशी अर्जन शाहधळीया)).	98

३१ सांड सांड तो छड़े होय बारीका भुरचन (एम० डी० गुप्त कवि-)	96
३२ बीरोद्गार (पुनशी अर्धुन शाह-धुळीया)	• •
३३ आर्य और अनायाँके भेद (मास्टर बंशीधर जैन, ललितपुर)	१०२
३४ मोहिनीका अयोग्य विवाह (दुर्लीचन्द सिंघई, बम्बई)	१०८
३५ बुद्धादेका स्वागत (बाबू ख्यचन्द जैन-विधीना)	११४
३६ मनने उपदेश (स्रेह्मागी)	بهير
३७ सनातन जैन धर्म (जैनधर्मभूषण ब्र० शीतलप्रसादजी)	११६
	१२७
१८ एक प्रम (तत्य-बुभूत्सुआगरा)	, ,
चित्रोंकी सूची।	
 मास्त्रमा दि० जैन प्रान्तिक सभाका शुद्ध औषधालय, बष्टनगर 	मुख पृष्ठ
२ वर्षाऋतुः परिषयः जय (रगीन चित्र)	4
३ जैन सरपुरुषमाला (मृति, पेलक, न्यागी, अ ज चारियोंका प्य)	9 €
😮 मुनि भी भनंत् की तिंजी, निस्लीकार	₹(#
५ मोलापुरमें जैन सिद्धांत विचालय मुरेनाके स्वागतका प्रप	इस
६ चतुरवाई आविका विद्यालय, सोलापुरके कार्यकर्ता और आविकाओं	¥4.
७ मुनि श्रीचंद्रसागरणी और जैन कुमार सभा-झालरापाटन केम्प	ધ્ક
८ जैन पंग्ला संस्कृत स्कृल पहाडी धीरज देहलीके वार्षिकात्सवसा ग्रुप ९ जैन पाठशाला मेरठ सदरके कार्यकर्ता, कमचारी और विद्यार्थिआँका ग्रुप	७५ ८८
May company from the company to the company of the	مة بنا
इरएक मंदिरमें संग्रह करने योग्य दो बड़े ग्रन्थ -	
(१) श्री आदिपुराण (महापुराण)
98 १७०० उत्तम कागन, खुले १८, और उत्तम छपाई । मूल्य १६) सोलह	रुपय ।
(२) मारतवर्षीय दि॰ जैन डिरेक्टरी	FI
सारे हिंदुस्तानके दि० जैन तीर्थीं, मंदिरीं, दि० जैनियींकी जातिवार,	प्रामवार
संख्या, मुख्य २ शहरोंका परिचय आदि	
पृष्ठ १४०० वालीका मृत्य पक्की जिल्द ८−०−०	
दै ।कन्यय अलग, परंतु हमारे पुस्तकालयके नियमानुसार	
फी रुपया पीछे एक आना कमीशन दिया नाता है।	
पवित्र काशर्मार्ग केशर सवा रूपया की तोला	. 1
करचना चरत्यात्तारम् । योगा देखेली को (पि©)	1

मैनेजर, दि॰ जैन पुस्तकालय, चंदावाबी-सूरत.

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

शेठ प्रेमचंद मोतीचंद दिगंबर जैन बोर्डिंग तरफ्यी प्रगट धतुं मासिक मर्झ दिगंबर जैन. र्रेंभ

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधेश्च तस्वैः सत्योपदेशेंस्सगवेपणाभिः । संबोधयत्वश्रीमदं प्रवर्तताम्, दैगम्बरं जैन-समाज-मात्रम ॥

वर्ष १० वॉ. वीर संवत् २४४३. कार्तिक. विकम सं. १९७३

ĨŢĸŢĸŢĸŢĸŢĸŢĸŢĸ**ŢĸŢĸŢĸŢĸŢĸŢĸŢĸŢĸŢĸŢĸ**

स्यप्नवस्थासे जगाया वीरने ही आनकर। मोक्षका आनंद बताया तीर्थकरने आनकर ॥ छ। गई थी मुर्दवस्था सारे भारतवर्षमें । फिर उसे जिन्दा बनाया बीरने ही आनकर ॥ हो गया था रक्त ठंडा जो ऋषी सन्तानका। जोश फिर खुँमें दिलाया वीरने ही आनकर ॥ ब्रह्मचर्यकी जो प्रतिष्ठा को गमा बैठे थे हम। ब्रह्मचारी बन दिखाया वीरने ही आनकर ॥ पेटके कारण ऋषी सन्तान होती थी गुलाम। स्बर्गका प्याला पिलाया वीरने ही आनकर ॥ राज्य औ संसार सुखको वीरने सब छोड़कर। घोर निदासे जगाया वीरने ही आनकर ॥ कोवती थी द्वेषकी अम्नी जो भारतवर्षमें । प्रेमकी नदिया वहाई बीरने ही आनकर ॥ लिख सके कहाँ तक बयां अहसान इस महावीरके। दानका दरिया वहाया वीरनेही आनकर ॥ क्या कहें किससे कहें सुनता नहीं विष्णा कोई। नाद शास्त्रोंका बजाया वीरने ही आनकर ॥ विष्णुदस दार्मा-सुरादाबाद।



is ton years since this monthly is being published and what little it has done during the past five years has attracted the attention not only of Jains but of Non-Jains also. This is wholly owing to the enterprize made during the last five years of placing before you our special Varnirvan number, containing English, Gujarati and Hindi reading together with many attractive illustrations.

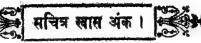
In doing this we have simply followed the West where such things are made to make the papers more popular and the signal proof of success of this is that this monthly has been fortunate enought to have as wider circulation than all other Jain papers.

Our readers will not but be astonished to see us placing before them this-our Virnirvan special number without any increase in subscription even at the time when the prices for paper and other matirials are triple owing to the great European war but we assure our readers that all this is due to their assistance and kind feeling for us.

In this there is a collection of nearly 38 articles in English, Gnjarasi and Hindi. The seven English articles occupy 32 pages and are of very great importance. We are highly indebted to their writers (1) Babu Jagmander Lal Jaini M. A. Bar-at-law; High Court Judge, Indore. (2) H. Warren London. (3) A. Gordon, Stockport, England. (4) Mr. Manilal H. Udani M.A. LL.B; F.LLC. Jetpure. (5) Rikhabdas Jaini B.A. Meerut. (6) Babu Ajitprasadji M.A. LL.B. Lucknow and Vir Balak. We have every hope that these English articles will throw additional light on Jain literature not only in India but also in the far West.

We are aware that our benigu British Government takes a promenant part in the present European war simply for the sake of Justice and we have full faith that our Government is to succeed in the end. It is under the shelter of this British rule that we are at liberty to observe our religion according to our own will without any molestation. In conclusion let us pray the Almighty to keep us ever under the shelter of British Government.

श्री महावीर निर्वाण सं० २८४२ पूर्ण
श्री महावीर निर्वाण सं० २८४२ पूर्ण
श्री महावीर निर्वाण सं० २८४२ पूर्ण
श्री नवा वर्ष श्री वीर संवत
न्तन वर्षारंभ २४४३ नो आरंभ श्रयो
छे ते साथे आ पत्र नव वर्ष
निर्विन्न पूर्ण करी नवीन दशमा वर्षमां
प्रवेश करे छे एटले के आ पत्र एक अंकनां
वर्षों पुरां करी वे अंकना वर्षनो आरंभ
करवा भाग्यशाली श्रयुं छे. पश्चिमना तथा
हिंदनां केटलांक पत्रोनी कार्य प्रणालीनुं
अनुकरण करीने अमोए चार वर्ष श्रयां आ
पत्रनो वीर निर्वाण सचित्र खास अंक



प्रकट करवानी पहेल करी छे अने जेनो आ पांचमो खास अंक सुज्ञ ग्राहको समक्ष रजु थाय छे.

बे अदी वर्ष थयां जे महाभारत रण-संग्राम युरोपमां चाली रहेलुं छे, तेनी असरथी आखी दुनियामां दरेक चीजोना भावमां घणी वधारो थयो जाय छे ते पैकी कागळनी मांघवारीए हद वाळी मुकी छे एटले के कागळनो माव बमणोयी त्रण-गणो थवा गयो छे, एवा कटोकटीना समयमां आवो खास अंक अगाउनाज वार्षिक मूल्यमां आपवो ए काई नाना सुना साहसनुं काम नथी, पण आ बधो प्रयास अमारा सुज्ञ भाहकोनी प्रमाल लागणीपरज निभेर छे अने अमने आशा छे के अमारा सुज्ञ भाहको एनो बदलो थोडांक नवीन ग्राहको मेळवीने वाळी आपशेज.

आ सचित्र खास अंकमां हिंदी गुजराती अने अंग्रेजी वीरनिर्वाण अंक भाषाना ३८ विषयोनी समावेश १४० प्रक्षोमी

जुदां जुदां नव चित्री सहित करवामां आ-वेला छे, जे पैकी ७ अंग्रेनी लेखे। एटला बघा महत्वपूर्ण लखायला छे के जे समग्र जैन समाज तो शुं पण हिंद अने ते उपरांत पश्चिमनी जन समाज समक्ष जैन धर्मनी उत्तमताने प्रकाशी शकशे. तेमज हिन्दी लेखो—कविताओ पैकी जैन लॉकी आवश्यक-ता, श्रीशुभचंद्राचार्य, जैनदर्शन, जैनमंदिरोंकी बनावट, आर्थ और अनार्योंके भेद, सनातन जैन धर्म वंगरे लेखी बांचकोने अति महरंब-ना जगारी, ज्यारे गत वर्षीमां आधी वर्ष भाषाना लेखी प्रकट करवामां आव्या हता ज्यारे आ वर्षे अनेक स्नेहीओनी सूचनाथी हिंदी, अंग्रेत्री अने गुजराती ए त्रण भाषा-ना लेखोनेज स्थान आपवामां अन्य छे. जे सर्वेने रुचिकर थई पडशेज. चित्रोना संबंबमां जोई दां तो आ वर्षे ओछां चित्री रज करी शकायां छे. पण कागळी. ब्लोक बनवाई वगेरेनी असहा मोंघवारीने लीधे ते अनिवार्य छे. एक हाथे कंई मोद्धं कार्य पार पदतुं नयी, ते प्रमाणे आ अंकमां अनेक लेखकोए पोताना विद्वतापूर्ण लेखी मोकली आ अंकने अलंकत कयों छे जे मोटे तेमना अत्यंत आमारी छिए. स्थानामावने सीधे मळेला केटलाक लेखोने स्थान आपी शका-युं नथी, पण हवे पछीना अंकीमां तैमाना योग्य लेखी प्रकट करवामां आवशेज.

*** * ***

पाठकोंको मात्रम होगा कि इस पत्रका जन्म गुजरात पान्तके

हिन्दीके पाठकोंका लोगोंके हितार्थ ही पेम। हुआ था अतः शुरूर में इसमें अधिकतर

गुजराती भाषाके ही लेख रहा करते थे कभीर एकाथ लेख हिन्दी भाषाका भी दे दिया जाता था। उपहार भी प्रायः अधिक-तर गुजराती ही भाषाके रहते थे। लेकिन हमें हर्ष हैं। के उत्तर हिन्दुम्तानके वासियोंने बिनकी कि मानु-भाषा ही हिन्दी है हमा- पत्रको बहुत कुछ अपनाया और उनकी दिनेंदिन ब्राहक-संख्या, लेख-संख्या आदि इसमें मदते स्हेनेके कारण आज अधिकतर हिन्दीके ही छेख हमें दैने पड़ते हैं। यद्यीप इस पारेवर्तनके कारण हमारे कितन ही गुजराती भाई हमसे रुष्ट हो वाते हैं और यद्वा तद्वा छिखते हैं छेकिन उनकी स्मरण रखना चाहिए कि भाषा परिव-तेन हो जानेपर भी उनका इसमें कोई नुकसान नहीं, क्योंकि हिन्दी एक ऐसी भाषा है कि जिसको इर्एक पान्तवासी समझ सकता है। बहिक भारतके भिन्न र पान्तोंकी भाषाओं में हिन्दीको यह सौभाग्य प्राप्त है कि यह सभी प्रान्तोंमें बोली जा सकती है और काम निकल सकता है।

उत्तर प्रान्तवासी पाठकोंसे भी इतना जनुरोध है कि वे हमारी भाषा-दार्लापर अधिक ध्यान न देकर लेखके सारपर ही ध्यान दैं। क्योंकि हमारी मानुमाषा गुजराती है।

पाठकोंको माख्य होगा कि यह पत्र कई वर्षोंसे प्रतिवर्ष ५-७उपयोगी उपहार प्रत्येक प्राहकको विना मृहय देता है जिनका कुलका मृहय ही इतना हो जाता है कि जितना उनसे बीठ पीठ द्वारा बस्ल किया जाता है अतः पत्र उन्हें मुफ्तमें पड़जाता है। लेकिन इस साल कागज स्याही बगैरहका भाव वह जानेपर भी बीठ पीठ सिर्फ प्रतिवर्षकी बराबर ही

की गई है। इसलिए कमसे कम मत्येक प्राहकको एक एक नवीन ब्राहक बनाकर खर्चको बढते इस हुए दैना चाहिए। खुशीकी बात है कि आजकल दान दैनेकी प्रवृत्ति लोगोंमें कुछ २ वह चली है। अन्य २ दानोंके समय शास्त्र-दानको भी स्थान दिया जाना चाहिए। हमारे गुज़राती भाई इस ओर अबच्य कुछ आगे बढ़े हैं और इसीका यह फल है कि 'दिगंबर' जैन इतने २ उपहारोंसे प्रतिवर्ष अपने पाठकोंको अलंकत किया करता है। क्या उत्तर पान्तवासियोंसे भी हम इस प्रकारके दानकी आशा रक्खें ?

> ग्वाम अंकके निकालनेमें वास्तवमें कुछ विलम्ब हो गया है जो

पत्रकी बी॰ पी॰ कि प्रेमपर आपत्ति आ नाने आदिके कारण

अनिवार्य था। तो भी हमने यथाशक्य शिष्टता की है। जिन लोगोंक रुपये मनीआईएसे आ चुके हैं उनको अंक सबसे पहिले खाना कर दिया गया है। जिनके रुपये नहीं आये हैं उनको बीट पीट की जा रही है। जिन प्राहकोंके पास अभी बीट पीट न पहुँची हो वे चार छ रोज और बाट नोहैं क्योंकि बीट पीट कम र से खाना हो रही हैं।



हमें यह दंखकर हर्ष होता है कि सहयोगी 'जैनमित्र'

सहयोगी " जैनियश" ने अपना साप्ताहिक रूप बदला है। वा-

स्तवमें जैन ममाजको इसकी बड़ी आवश्य-कता थी। इसरा कोई पत्र ऐसा न था जो कि सप्ताह भरके समाचारोंसे पाठकोंको सचित करता रहे । अभीतकके प्रकाशित चार अक्टोंके रंगदंगसं ज्ञान होता है कि आगामी इसका रूप और भी भच्छा होगा। ताजे २ ममाचारोंसे प्रत्येक अङ्क भरा रहता है। समयके बारेमें तो इसने मात ही कर दिया है। स्थान-परिवर्तन, प्रेम-परिवर्तन, तिथि-परिवर्तनके होते हुए भी इमका पहिला अंक हमें बहस्पतिवारको ही जो कि इमकी पूर्वनिश्चित तिथि थी. पढनेको मिल गया। एसे ५ परिवर्तनोंके उपस्थित होनेपर भले २ पत्र लेट होते हुए देखे जाते हैं। आगामीके तीन अक भी हमें यथा समय ही देखनेको मिल गये । इसमं इसके कार्य कुशलताका अच्छा पता लग सकता है। ऐसे जोखिमके समयमें इसके साहमको देखकर पाठकोंको इसका उत्साह बढ़ाना चाहिए। और समाचारोंके भेजते रहनेसे तथा ग्राहकोंके बहानेसे इसकी सहायता करते रहना चाहिए। बार्षिक मूह्य ६॥) रु० है। इतनेमें दो अच्छे उपहार भी हैं। नो छोग उपहार चाहें वे ३) में इसे पा सकते हैं। मगानेका पता-मेनेजर 'जैनमित्र '-- सरत ।

हमारी समझमं नहीं आता कि भारत-वर्षीय दि० जैन महा-

महामभा या दृद्ध सभा सभाको किन शब्दोंसे चेताया जाय ! कौनसे

ढँगसे इममें संनीवनी हाली नायी **चारों** ओरसे कटार्क्षांकी रामबाण औषधियौँ दी जाने-पर भी इसमें प्राणींका संचार नहीं। मालम होता है बुद्धावस्थाने इसे अब नर्जरित कर दिया है। अपनी खुवावस्थामें इसने मलेका काम किया । विद्यालय स्थापित किया, पन्नका जन्म दिया, दूर दूर तक अधिवेशन किये। लेकिन अब इसको अपने कर्तव्योका स्मरण नहीं रहा। वह यह बात भूल गई कि सभा-मोमाइटियोंका जन्म काम करनेके लिए ही हुआ करता है, बैठे रहनेको नहीं । खैर, प्रान्तिक सभाएँ अपना काम स्वतंत्र होकर कर रही हैं। नये पत्र जन्म ले रहे हैं, सब अपना २ काम कर रहे हैं । वं सब इसको आए उठाकर भी नहीं देखते । उनपर शासन करने की महासभामें अब योग्यता नहीं रही । अपने मृत्युके दिन अब पूरे कर रही है !!!

અમારા વાંચકા જારે છે કે ખાસ ભ્યાપાર માટે નહિં, પણ આપઓ વધુ કામાને પહેરથી વળવા ખાતર અમામ

અમારી મુશ્કેલી. क्रिक वर्ष थ्यां भन्ने 15 ord (gorn "

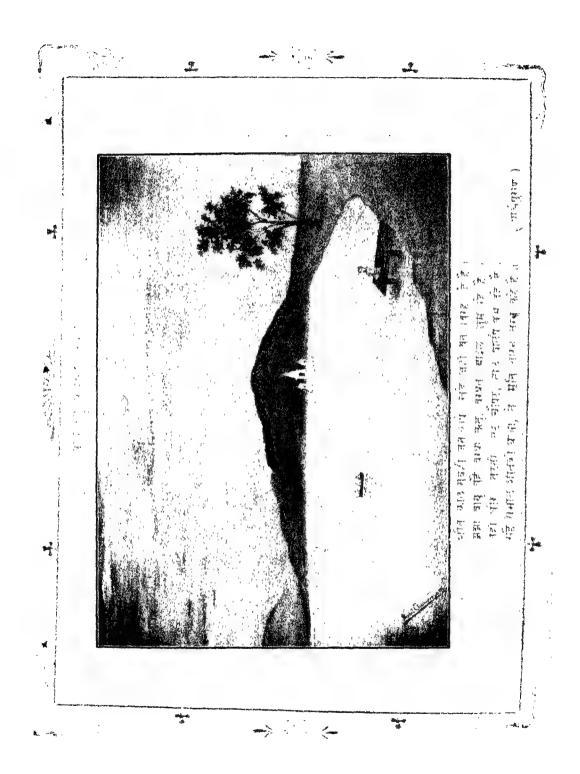
નામે પ્રેસ ખાલેલું છે. જેમાં આ કાસમાં ખાસ માંક, જૈન નિત્ર, જૈન પ્રભાત, તથા પુરતફાનાં ખીજાં અનેક કાર્યો ત્વરાથી થઇ રહ્યાં હતાં. તેવામાં જેના સ્વપ્ને પણ ખ્યાલ નહોતા. भवी कि भार्माती आहत गर ता दर्भाने

અમારા પ્રેસ ઉપર આવી પડી, જેણે અમાત **અત્યાંત અચાંએ! અને** મહાભારત કિકરમાં નાંખા **દીધા. આ આકૃત એજ કે અમારા પ્રેસમાં** શીકેર તાલુકે ભારડાલીના રહાએાડજ ગાધવભાષ્ય પટેલે માશરે ૪ માસ ઉપર "ભારત દૃદેશા દર્શન" નામે ૨૦ પાનાંની છ પૈની કિંમતની એક **ગજરાતી ચાપડી** છપાવી હતી, જેમાં હિંદ **અને પશ્ચિમના મુલ** ફાની વિદ્યા, કળા, વ્યાપાર, રેલ્વે ખર્ચ. <mark>ખેતી. કર. વગેરેની</mark> સરખામણી અનાગળ પ્રકટ થયેલા અનેક લેખા પુરતકાના ઉતારાથી તથા તેને આધારે કરવામાં આવેલી હતી. જેને નામદાર મુખાઈ સરકારે ત્રેસ એક્ટ વિરુદ્ધ છાપેલી ગણી ત્રેસની રૂ. **૫૦૦) ની જામીનગીરી જપ્ત કરવાના** अभने डेड्सेडेशन हश दिवस आह रह डरवाते। માર્ચીતા લુકમ કે જે મુખાઇથી તા. 30ના ધુટેલા હતા. તે અમને છેક તા. **૯મી**એ પાસીસ માર્કતે મહ્યા, જેમાં લખવા મુજળ તા. કજીયાજ દશ દિવસ ખાદ એટલે તા. ૧૭માને સામવારથા પ્રેમનું કામ બંધ કરવાના એાર્ડર હતા. જેણે અમને આર્ચાતી મહાન **આક્તમાં** લાવી સુકયા. હવે અમારે માટે હાલ αरत ते। अल रस्ते। हते। के क्यां ते। प्रेस એકદમ બધ કરવું યાતા જેટલી માંગે તેટલી નવી જામીનગીરી આપી પ્રેસતું કાર્ય ચાલુ રાખર્લ અનેક સંજોગા વચ્ચે પ્રેસ ળંધ તા કરી શકાય એમ હતું જ નહિ. જેથી અત્રેના મેજીસ્ટ્રેટ સાહેળે માંગવા મુજબ નવી ક. **૧૫૦૦) ની જામીનગીરી** તા. ૧૧મીને સનીવારે ભરીને નવું ડેક્ક્ષેરેશન તાધાવ્યું જેથા ત્રેસનું કામ જો કે લેશમાત્ર પણ વધ રહેવા મામ્ય નથા. પણ આ બાબત અમા નામદાર મુંબાઇ સરકારને એક ખાસ મેત્રોરિયલ માક-લનાર હિએ, તેનું હેવટ શું આવે છે તે જોવાનું છે. કેમકે એક વર્ષ થયાં પ્રેમ ખાલ્યાં દર્યાન અમાને કંઈ પણ પ્રકારના ચેતવણી સરકાર તરકથી આપવામાં આવી

નથી. જેથી જેને નામદાર સરકારને આ ચાપડી વાંધાભરેલી લાગી તેા તે માટે અમારા માનવા સુજળ પ્રેસને માત્ર ચેતવણી આપવાની જકર હતી. આ બાબત અમે બનતાં ચાગ્ય પગલાં લેનાર છિએ એટલે વધુ ન લંભાવતાં એટલંજ જણાવીશું કે આ ખાસ કારણની રાકાળુને લીધેજ આ ખાસ અંક માગસર સુદ ૧ પર પ્રકટ થવા પાસ્યા છે અને જે જે ગાલકાનાં તથા મેમ્ખરાનાં ક્ષત્રાજમા પ્રથમથીજ મળા ગયેલા છે તેમને તરતજ માકલાઇ ચુક્યા છે અને બાકીના શુના તથા નવા આહેરાને આ ખાસ અક વાર્ષિક મૂલ્ય ૨૦૧–૧૩-૦ ના वीत पी० थी. अभहाबाह भाग ना भेभ्भशत શું અને રતલામ ખાં ના મેમ્બરાને સુન ના લી બી બી કમવાર માટલાય છે. જેથી આઢ દિવસની અંદર ખધા ગ્રાહકાને આ અંક મળી જશેજ, પ્રેસપર આવી પરેક્ષો એાગ્રીની આકૃતના સમાચાર બીજા પંત્રાથી જાણીને અમાત અનેક સ્તેહીઓએ લાગણી-પૂર્વ મેનેક પત્રા લખ્યા છે તે માટે તે સર્વેના અમે અત્યાન આભારી છિએ

५०) मामिक स्कालिशिय-कानपुरनिवासी बावू वंणीयशाद दि० जैनीको प्रयाग विश्ववि-धालपकी आगसे मुमल्मान कालीन इतिहामकं अध्ययन और अनुसन्धानार्थ दो वर्षके लिये ५०) मासिक स्कालिशिय मिली है। आप प्रयागके सेन्ट्रल म्योर कालेजमें एम० ए०में पढ़ते हैं और जैनसमाजके एक होमहार युवक हैं।

आगरेमें समारोह—आगामी तारीख ९ तं १६ दिसम्बर तक आगरेमें बड़े समारोहके साथ रथोत्सव होनेवाला है, उसी अवसरपर जैन कुमारसभा मोतीकटराका द्वितीय वार्षिक जल्सा होगा।





इस सचित्र खास अंकमें प्रकट किये हुए सभी चित्रोंका संक्षिप्त परिचय हम यहाँ-पर प्रकट करते हैं आशा है हमारे पाठकोंको वह रुचिकर और उपयोगी होगा—

(१) दि॰जैन मालवा प्रान्तिक सभाका ग्लब्ब औषधालय।

इस औषधालयका परिचय देना निरर्थक है क्योंकि दि०जैन समाज इससे अपरिचित नहीं है। तथापि इसकी अपने कार्यमें तत्प-रता देखकर इसका परिचय दिये विना रहा भी नहीं जा सकता।

इसका मुख्य स्थान बड़नगर (मालवा) शहरोंर्ने इसके शाखा है। मुख्य २ औपघालय भी हैं जिनकी संख्या कोई १२५के है। इसमें शुद्ध देशी ही औषधिएँ बटती हैं। और मुफ्त बटती है। जितनेमें जा सके उतनेके डाँकव्ययकी वी॰ पी॰से दवाई बाहिर भी भेजी जाती है। कोई ज़रूरी चिद्री या तार आनेपर अपने पाससे टिकट भी लगाकर औषधि बाहिर मेजी जाती है। इसके कार्यकर्ता काला भगवानदासजी, बड्नगर बडे उत्साही और परोपकारी हैं। औषधियाँ इसकी तत्काल गुणदायक हैं। यह सहायताकी अपेक्षा रखता है। खेद है कि अभी तक जैन समाजने इसे उस तरहसे नहीं अपनाया जैसा कि उसे अपनाना चाहिए । साथमें यह भी जान हैना चाहिए कि जैन जनताकी तो बात क्या, भारतवर्षमात्रमें इस दँगका कोई दूसरा औषघालय नहीं है, कार्यकर्ताओंका उद्योग सराहनीय ही नहीं है बल्कि अनुकरणीय भी है। सबको सुभीतेके लिए औषधालयने चार आने, आठ आने, एक रुपया, दो रुपये, पांच रुपये, पचीस रुपये, पचास रुपये, और सौ रुपये तककी बहुत खूबस्रत टिकटें भी छपवाई हैं जिसको यथा-शक्ति सरीद कर इस परमीपकारी संस्थाकी सहायता पहुँचाना हरएक जैनीका कर्तव्य है। नियमादि जाननेके लिए पत्र व्यवहारका पता-" छाछा भगवानदासजी महामंत्री, मालवा दि॰ जैन प्रान्तिक सभा-शुद्ध औष-घालय बहनगर (मालवा)"

(२) वर्षा-ऋतु-परिषद्द-जग्रः--

यह चित्र बाबू अनमोलचन्द्र जैन बी० एस० सी०, आरा* का बनाया हुआ है। उन्होंने ही हमें इसके भेजनेकी कृपा की है। इसमें वर्षा ऋतुका ख़ासा चित्र खींचा गया है। प्रातःकालका समय है, नदी तरंगित हो रही है, अरुण वरुणकी छालिमां जलकी लहरोंमें लहरा रही है,

#अ प जैन समाजके सुपरिचित व्यक्ति बाबू करोड़ीचनद्रजी, मंत्री—'' जैनसिद्धान्त— भवन, आराके '' सुपुत्र हैं। हस्तचित्रणकला और फोटोग्राफीसे आपको अच्छा प्रेम है। जैन साहित्यसे भी आप गाढ़ कोह रखते हैं।



पद्दाणका मी हरी मखमलीसा अपूर्व हृइय है। नदी पारके जिन मन्दिरके दर्शनके लिए श्रावक लोग नौकामें बैठकर जा रहे हैं। नदी तटपर मुनि महाराज वर्षाऋतुकी परीषहको जीत रहे हैं:—

शीतकाल सबही जन कांपें,
विदे जहाँ वन विरह उहे हैं।
शंशा वायु वहे वरषा ऋतु,
बरषत बादल शूम रहे हैं॥
तहाँ घीर तटनी तट चौपट,
ताल पालप कर्म दहे हैं।
सहैं सँभाल शीतकी बाधा,
ते सुनि तारन तरन कहे हैं॥
(पार्श्वपुराण)

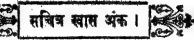
(३) श्रीजैन सत्पुरुषमालाः—

इसमें जितने त्यागी, मुनि, ब्रह्मचारि-योंके आप दर्शन कर रहे हैं उन सबका परिचय आगेके खास अंक्रोंमें दिया जा चुका है। सिर्फ सबसे नीचेकी काइनमें विराजमान् चार व्यक्तियोंमेंसे तीसरे तो आपके परिचित छाला गेंदनलालजी, हस्तिनापुर हैं और शेष तीन निर्मन्य मुनि हैं। इनके परिचयके छिए हमने बहुत कोशिश की लेकिन खेद है कि हमें अभीतक कहींसे सफलता पात नहीं हुई। यदि फिर हमें कहींसे उपलब्ध हो जायगा तो किसी अंकमें प्रकाशित कर दिया जायगा। इसमें निम्न लिखित सत्पुरु-षोंके चित्र हैं—

- (१) निप्रन्थ मुनि श्रीचंद्रसागरजी
- (२) त्यागी ऐलक पनालालजी,

- (३) भ्रष्ठक मनालालनी,
- (४) निर्मन्थ मुनि श्रीअनंतकीर्ति,
- (५) मुनि श्रीचन्द्रकीर्तिजी गुर्मेडचा,
- (६) त्यागी आनंदी हालजी,
- (७) स्व०भट्टारक श्रीविशालकीर्तिजी,
- (८) भट्टारक श्रीचारुकीर्तिजी,
- (९) जैनधर्भभूषण ब्र॰शीतलपसादजी,
- (१०) मुनि चंद्रमागरजी मसिडगी,
- (११) मुनि श्रीसनत्कुमारजी,
- (१२) लाला गेंदनलालजी गृहत्यागी,
- (१३) भी सिद्धसागर मुनि नेरडाल,

(४) निर्प्रन्थ मुनि श्री अनन्तकीर्ति-जी-पाठकोंको याद होगा कि वीर भवत २४३९ वीं सालके खास अंकमें आपका एक चित्र प्रकाशिन हो चुका है। लेकिन इस साल द्वारा उसी चित्रको इसलिए प्रकाशित करना उचित समझा कि इस बार हमको आपका नीवनचरित्र कुछ बिरोपरूपसे प्राप्त हुआ है। नीचे नो आपका सामान्य परिचय दिया ना रहा है उसे निक्तिकारनिवासी एन० श्री वर्मा श्रष्टीकी लिखी हुई एक अँगरेजी प्रस्तक परसे झालरापाटननिवासी बाबू दौलतरामजी बी॰ जे॰ ने हमें हिन्दी अनुवाद करके भेन-नेकी कृपा की है। इसके छिर हम उक्त दोनों महारायोंके आभारी हैं। कानड़ा (दक्षिण) प्रान्तमें 'पारदी' नामका एक प्राम है । यहाँपर सेठ अप्पूबलालजी नामके एक दिगम्बर जैन रहते थे। आपकी स्त्रीका नाम पुप्तती था। इन्हींको कुक्षिसे हमारे अनन्तकीर्तिजीने जन्म यहण किया। आप अपने माता विताके दूसरे पुत्र थे। आपका जन्म तारीख २३ अप्रेल



सन् १८८६ शनिवारको हुआ। कुछ बड़े प्रामीण होनेपर देश भाषाकी एक पाठगालामें आपको पहनेके लिए मेना गया । आपकी १२वीं सालसे १३वीं सालकी आयुके भीतर ही भीतर आपके माता पिता दोनों इस असार संसारसे चल बसे । केवल एक ही वर्षके अंदर माता पिता दोनोंकी मृत्य हो जानेसे आपको अपनी पढ़ाई बंद करदेनी पड़ी। इस समय दक्षिण कानड़ा प्रान्तके जैनी छोग अन्य नातियोंसे शिक्षामें बहुत ही पिछड़े हुए ये और अब भी पिछड़े हुए हैं।

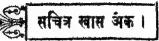
ये अनन्तकीतिंनी और इनके ज्येष्ठ ब्राता अपने बड़े-बढ़ोंकी सब जायदाद लेकर अपनी रक्षा करनेके लिए अपने नानरे निष्ठि-कार प्राममें चले गये। यद्यपि यहाँ भी आगे-की पहाई पहनंकी कोई आशा नहीं थी, तो भी आपने श्रीमती परिश्वमती आर्थिकाजीसे रत्नकरण्डश्रावकाचार, द्रन्यसंग्रह और तत्त्वार्थ-मत्र सीखकर कंठस्थ करनेका सौभाग्य प्राप्त किया । इन्होंने देश भाषाकी भी कई धार्मिक पुस्तकें पद्धीं । इन्होंने रत्नाकरजी कृत भारते-धर, चंद्रशेखरनी और पद्महामनीकृत नैन रामायण, मंत्रलाकृत हरिवंशपुराण सम्यक्तकौमुदी, शांति कीर्तिनीकृत आदि-नाथ चरित्र, बंधुवर्मीकृत जीवसंबोध, चांद्या उपाध्यायकृत नैनाचार, अईदासकृत संस्कृत कविरत्न टीका सहित मुनिसुत्रत कानड़ी लिपिमें लिखा हुआ था इन सबकी नकल की । आपकी लिखाई सुन्दर और मन-

मोहिनी है। इन्होंने श्रवन-बेल-गुल-हम्बछ और ऐसे ही अन्य कई पवित्र स्थानोंकी यात्रा की और बंगलोरके मार्गमें गुडीबंद स्थानपर स्वर्ग-वासी निर्यन्य मुनि श्री चन्द्रकीर्तिजी महाराज-की वैयावृत्य व दर्शन करनेको ठहरे। इसी दिनसे उक्त मुनिश्रीके आशीर्वादसे इन्होंने अष्टमी और चतुर्दशीके वत महण किये। और इस प्रकार यात्रा करते हुए घरको छौटे। ता० २१ मार्च सन् १९०८ ई० को इनका विवाह सम्बंध दक्षिण कानड़ा प्रान्तके कुटबल प्रामनिवासी श्रीयुत नेमिराजनीकी श्रीमती पद्मावतीसे हुआ । पति पत्नीमें ऐसी सची प्रीति थी कि पूर्व मानों ये दोनों पूर्व जन्ममें भी पति पत्नीके ही रूपमें रहे हों। किन्तु इस कथनके अनुसार कि 'संयुक्तानां वियोगश्च भविता हि नियोगतः' इनकी प्रिया स्त्री एक बालक उत्पन्न करके परलोक सिधार गई और वह बालक भी जीता न बचा। इस कथनके अनुमार कि " पंफ्रलीति हि निर्वेगो मन्यानां कलपाकतः " इन कारणों पाकर आपने ता • १८ जुलाई सन् १९०९ ई॰ को ब्रह्मचर्य ब्रत धारण कर लिया। अंतमें आप मूड्बिद्री गये। वहाँ आपने छः मास तक स्वस्ति श्री चंद्रकीर्ति पण्डिताचार्यवर्य और महाशय हरिनी गनपतिसे उच कक्षाका धार्मिक ज्ञान प्राप्त किया । तत्पश्चात् आपने अपना सब द्रव्य अनन्तनाथ स्वामीके मन्दिर, ' जैनदिगम्बरवाणीविलास पाउशाला ' और निश्चिकारके प्रस्तकालयमें दान दे दिया। १९१० में जिस समय श्री गोपठेश्वरस्वामी-



का मस्तकाभिषेक हुआ था उस समय इन्होंने मूड्बिद्रीसं श्रवण-बेल-गुलतक जिस **समय बढा भयानक और** गर्भीका महीना था पैदल ही यात्रा की । रविवार ता० २५ जून सन् १९११ ई० को निक्षिकार ग्रामके श्री अनंत-नाथस्वामीके जैनमंदिरमें इन्होंने उत्कृष्ट श्रावकके वत अर्थात् एछक प्रतिमाको धारण किया जिससे कि आपको एक कोपीनकी ही चिन्ता रह गई। ता० ३ फर्वरी सन् १९१२ ई० तक ये एक दिन छोड़कर प्रत्येक दूसरे दिन आहारको जाया करते थे। उस देशका जल वाय गरम होनेपर भी आप प्रत्येक दिन आहार नहीं छेते थे । इन सबके साथ ही चतर्दशीके दिन प्रतिमासके अंतमें ये केश-लींच भी किया करते । शनिवार ता० २८ मई सन १९१२ ई० को इन्होंने कोपीनको भी त्याग कर वास्तविक कल्याणकारी निर्मन्थ अवस्था घारण की और तब ये प्रत्येक चौथ दिन आहार हेने हमे । अर्थात जिस दिन पीछ आहार लिया उससे तीन दीन आहार लेना। यह नियम माच सन् १९१३ तकके लिये था। यदि किसी समय आहारके दिन भी नियमानुकूल भोजन नहीं मिलता तो भूर्वे ही जिनमन्डिरजीको छीट नाते और इस घटनांक फिर तीसरे दिन भाकर आहार लेते। उस समय इनकी शारी-रिक अवस्था प्रत्येक मनुष्यको रोमांचकारी हो गई। वे कड़ी धूपमें तप किया करते और रातको केवल एक घंटा ही निदा लेते और वह भी एक ही आसन या करवट से ।

ब्रह्मचारी गंगाप्रसाद्जी और विहारीलालजी आपसे धार्मिक ज्ञान सीखनेक लिए दो महीने तक इनकी सेवामें रहे । जलाई मासके लगभग सन् १९१३ ई० में आपको पित्त प्रकोपकी व्यथा उत्पन्न हुई थी । परन्त इन धर्मवीर महात्माने अपने दृढ वर्तोंकी रोगके समय भी वही सावधानीसं रक्षा की । दिसम्बर सन् १९१७ ई० में निह्यिकार ब्रामको छोड़कर आप बंगवाडीको चले गये। वहाँ अतिभयानक श्रवण गुड़ नामी वनमें नहाँ जते हुए लोग मय करते, सूर्यनारायणके छुन्दर प्रकाशमें एक दिनभर ध्यानमग्न रहे । इनके इस वीरत्वके कार्य और पवित्र उपदेशोंने वहाँके लोगोंमें इनके प्रति श्रद्धा और भक्ति उत्पन्न कर दी । जनवरी सन् १९१५ में ये श्रवण-वेल-गुल खाना हुए। इस स्थानके बासी इनका बड़ा आदर सत्कार कर रहे हैं। बड़ी पहा-ड़ीके पास एक छोटे मन्दिरमें इन महात्माके दुर्शन हो सकते हैं। गत वर्षके जनवरी मासमें ये पवित्रात्मा छोटी पहाड़ीपरकी एक बहुत भयानक गुफामें प्रवेश कर गये । इसी स्थान-पर आचार्यवर्य भद्रबाहुस्वामी भी समाधिस्थ हुए थे। इन मुनिराजने एक दिनभर यहीं ध्यानमें बिताया । मास जनवरी सन् १९१६ इस्वीमें उस पवित्र पुरुषने नो कि अगला पद्दाचार्य होनेवाला था इन धर्मात्माके आशी-र्वाट्स दीक्षा ली। आपका चारित्र शास्त्रानुकूल है। समंतभद्रस्वामीके निर्देश किये हुए तप स्त्रीके सब लक्षण आपमें विद्यमान हैं। यथा:-'विपयाशावशातीतो निरासमोऽपरिप्रहः । ज्ञानव्यानतपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते ।



(५) शोलापुरमें जैनसिद्धान्त-विद्यालयका डिपुरेशनः--

मरेनाके 'जैनसिद्धान्तविद्यालय ' जो कि लब्ध प्रतिष्ठ मान्यवर पं० गोपाल-टासजी बरैयाकी अध्यक्षतामें सुचालुरूपसे चल रहा है, पाठक परिचित होंगे। उसने जैसे कुछ जैन विद्वान तैयार किये हैं और उनसे जो यत्र तत्र समय २ पर धर्म जागति हो रही है उससे पाठक अपरिचित न होंगे। ऐसे विद्यालयका अर्थ-कष्टमें रहना अनुचित था। अतः वहाँके संचालक गत वर्षमं शोला-पुर गये थे। उस समय वहाँके प्रतिष्ठित सेठ हरिभाई देवकरणवालोंने विद्यालयको रु० ६८०००) रु० इसलिए दिये कि जिस-की व्याजसे वहाँके उच्च कोटिके अध्यापकोंका वेतन प्रतिमास चुकाया जाया करे। सेटजी-की इस उदारताके छिए जैनसमान ऋणी है। आपने ''भारतीय जैनसिद्धान्तप्रका-शिनी संस्था " के लिए भी १५०००) रु० मदान किये हैं। इसी तरह आप समय २ पर और भी दान किया करते हैं। जिससे कि जैन समाजकी बड़ी २ आवश्यकताओंकी पूर्ति होती रहती है। जैन समाजको आपसे अभी और भी कई महत्त्वपूर्ण कार्योंके लिए आशा रखनी चाहिए। यह उसी समयका फोटो है जब कि यह डेपुटेशन शोलापुरको गया था। जिन २ माहानुभावोंके चित्र इसमें शामिल है उनकी नामावली चित्रके साथमें प्रकाशित की गई हैं। सेठ हरीमाई देवकरण-

बार्लोकी पीढ़ी सारी जैन समाजमें प्रसिद्ध है इन्हींके सुपात्रों सेठ वालचंदजी, रोठ हीराचंद-जी और सेठ फूलचंदजीकी इस विद्यादानकी उदारताका अनुकरण हमारे अन्य श्रीमानगण भी करेंगे ऐसी हमें पूर्ण उम्मेद है।

(६) चतुरबाई-श्राविका-विचालय शोलापुरः-

शेठ रेवजी धनजी गुंजोठीकरनी भायी श्रीमती चत्ररबाईए पोतानी हयतिमां रु० ११०००) आपी आ संस्था स्थापवानं दर्शावतां ते स्वर्गीय दानवीर शेठ माणिक-चंदजीनेहाथे ४ वर्षथी खोलवामां आजी हती जेमां अभ्यास करती श्राविकाओ, अध्यापि-काओ तथा व्यवस्थापिकाओनो आ प्रुप छे. आ संस्थानो हाल ३५स्त्रीओ तथा बालिकाओ लाम छे छे। सरकारी ५मां धोरण सुधी अभ्यास चाले छे, जे साथे धर्म-शिक्षण पण अपाय छे. अध्यापिकाओ त्रण छे तथा श्रीमती कंकब्हेन खास करीने धर्म-शिक्षण आपे छे. एना सेकेटरी शेठ रावजी सखाराम दोशी उत्साही होवाथी आ संस्था उत्तरोत्तर बृद्धि फरी रहेली छे।

(७) जैनकुमारसभा, झालरा-वार्षिकोत्सव:-पाटनका

इस चित्रके बीचमें आप जिन मनि महाराजके दर्शन कर रहे हैं वे निर्प्रनथ मुनि श्रीचन्द्रसागरजी महाराज हैं । आपहीं के उपदेशांकुशसे झालरापाटन केम्पर्मे एक जैनकुमार सभाकी स्थापना हुई है जिसके। द्वारा एक पुस्तकालय और एक औपवालय भली भौति चल रहा है । आत्मोनित और परीपकार सभाका मुख्य उद्देश है। इस उद्दे-शका प्रचार करनेके छिए इस समाने अपने सभासदीके फार्स और सर्टिफिकेट शास्त्रके सिद्धान्तों और नियमोंके अनुसार तैयार करवाये हैं। प्रत्येक जैनीको इस नवीन और धर्मानुकूल कार्यकी कद्र करके अपना और अपने जाति भाइयोंका कल्याण करना चा-हिए । एक पैसेका कार्ड भैनेजर-" श्री जैनकुमार सभा झालरापाटन केम्प " के नाम डालकर सभाकी नियमावली मँगवाकर देखना चाहिए। सभासदीका फार्म मुनिश्रीके उपदेशानुसार ही रचा गया है। इस समाके मंत्री-बाब् दोलतरामजी बी॰ जे॰ उत्साही नवयुवक हैं।

इस चित्रमें मुंनि महाराजके पाँछे जो कपड़े ओड़े खड़े हैं वे ब्रह्मनारी कुँ० दिग्विजयसिंहजी हैं। आपका विशेष परिचय दैना निरर्थक है। आजकल आप " ऋषभ-ब्रह्मचर्याश्रम, हस्तिनापुर " में अपनी शक्तियोंका सद्द्ययोग रहे हैं।

(८)जैन-एंग्हो-संस्कृत स्कृष्ठ, पहाड़ी धीरज-देह्छी:-

इस स्कूळके कर्ता-धर्मा देहलांके रईस काला जग्गीमलजी साहिन हैं। आप इसकी उन्नतिमें निशेष भाग लेते हैं। पहिले यह स्कूल मामूली पाठशालांके देंगपर चलता था लेकिन अब यह रजिस्टर्ड हो गया है। इसमें विषय सरकारी स्कूलों में पड़ाये जाते हैं वे तो पड़ाये ही जाते हैं, इसके अलावा धार्मिक और सस्कृतका विषय और अधिक पढ़ाया जाता है। इस स्कूलसे पास हुए छात्रोंको सरकारी प्रमाण-पत्र मिलता है। " ऋषभ-ब्रह्मचर्याश्रम, हस्तिनापुर" में कुछ दिनों तक जो अध्यापकी कर जुके हैं ऐसे दो अध्यापक भी इसमें शिक्षा दे रहे हैं जिससे इस स्कूलमें जातीय प्रेमका हस्य शिष्य-गुरुओं में अच्छा देखा जाता है जिसकी आवश्यकता आजकलके सरकारी स्कूलों बहुत है। इस स्कूलके वार्षिकोत्सय-के समयका ही यह चित्र है।

(९) जैन-पाठशाला स्कूल भेरठ सदरः-

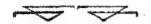
सन् १९०८में यह स्थापित हुआ था।
बहतेर इस समय इसमें मिडिल तककी
पढ़ाई हो रही है। द्रव्याभावके कारण अभी
यह रिजेस्टर्ड नहीं हो सका है। इस
कार्यके लिए इसके बीव्य फंडमें कमने कम
५०००) रु० होने आवश्यकीय हैं। वे अभी
नहीं हो सके हैं। इस समय इसमें कोई
१'५० छात्र शिक्षा पा रहे हैं। १० अध्यापक हैं। जेन अजैन सभी छात्र इससे लाभ उठा
रहे हैं। और पढ़ाई सब यूनिवांस्टीके अनुकूल
होती है, सिर्फ धर्मशिक्षा विशेप है। कर्ता-धर्ता
बाबू रखनाथमसाद गोयल बी० एस० सी०
एस० एल० बी० मेरट हैं। हमारे मेरठके
भाइयोंका कर्तव्य है। के इसके ब्रोव्य फंडकी
कमीको शिव्य पूरी कर हैं।

श्री भारतीय-जैनसिद्धान्त-प्रकाशिनी संस्थाके उत्तम सस्ते प्रथ।

مُرِق

गांधी **६रीमाईदेवकरण-जैनग्रंथमालाका मथम ग्रंथ।** स्वर्गीय पंडित सदासुखजीकृत अतिशय सरल भाषावचनिका टीका।

अर्थप्रकाशिकाजी।



पद जेंग १२ वर्ष पहिले कोल्हापुरमें ५०० प्रति छपा था। वह बहुत अग्रह भी छपा था, परंत उपने ही हाथीं हाथ विक गया । अनेक महाश्रंयोंकी यह प्रंय मिला ही नहीं, ये सब स्वाप्यायके लिये तरसते **रहे, बंबईमें मांगपर मांग आया करती थी**़े। "यदापि बदुवने स्वाप्याय विपास महाशयोने इसके बदलेमें सर्वार्थसिद्धि लेकर इसके स्वाप्यायकी इपस मिटाई होगी, परंतु सर्वीर्थसिद्धि बहुत कठिन प्रथ है, पहिले इस अर्थप्रकाशिकाका स्वाध्याय करके फिर सर्वार्थिसिद्धिका स्वाध्याय किया जाय तो सर्वार्थिसिद्धि ठीक २ समझमें आसकती है। इसी कारण ही हमने इसे बड़े परिश्रमसे प्राचीन हस्तलिखित प्रतिसे मिलाकर वर्ग एक सामे नाम वंबईके निर्णयसागरके बड़े मोटे सुंदर टाइपमें ५० पींडके बहिया बाग अपर गर्छ पत्रोंमें बहिया छपईसे छपाकर तैयार किया है। जिस कागजपर यह ग्रंथ र्धिया। हुआ है यह कागँजै आठ रुपये रिमकी जगह आजकल १८) २०) रुपये रिमका हो गपा है। सिवाय इसके छपाई स्याही मन्त्री सब ही युद्धके कारण तेज हैं। यदि बुकसे कर इस छपाता हो। ५) या ६) रुपयेरी कम की मत्ती कदिप नहीं दे सकता था, परंतु हम शोलापुरनिवासी दानवीर श्रेष्टिवर्य हरिभाई देवकरणजी गांधी एंड सन्सकी सास आजा होनेने इस संस्थाके पक्के प्राहकींकी तो मुलभ मूल्य २॥) रुपयेमें भेजते हैं और सर्वमाधारणको ३॥) रुपयेमें भेजते हैं। पकका माहक वही हो सकता है जो संस्थासे छपनेवाले भाषा व भाषाटीकासहित सभी अंथोंकी एकएक प्रति लेनेकी प्रतिज्ञा परके १) ६० भेजकर रजिष्टरमें नाम लिखवा ले। अतएव जिनको संस्थासे छपे हए कुछ अंथ छागतके मूल्यसे लेना है।, वे १) ६० भेजकर पक्के ग्राहकोंने नाम छिखबाकर २।) ध्वयेंमें यह महान् ग्रंथ मगा लें और जो ऐसा करनेमें असमर्थ हैं। वे रवयेमें मगा लें । और जो महाराय इस संस्थासे छपे हुए व छपनेवाले समस्त संस्कृत व भाषाके प्रयोकी एकएक प्रति जिना मूल्य सेग्रह करना चाहे, वे एंकवीर १००) रुपये भेजकर इस संस्थाके स्थायी सभासद् (सहायक) वन जावे । उनके पास सब गंथोंकी एक एक प्रति इमेशा विना मूल्य भेजी जायगी। डांकखर्च सबकी जुदा देना होगा।

दृसरा ग्रंथ । न्यायतीर्थ श्रीयुत् पंहित गजावरलालजी विरचित बड़े हरिवंदापुराणजीका

अतिशय मनोहर हिंदी भाषातुवाद (वचनिका) छप गया ।

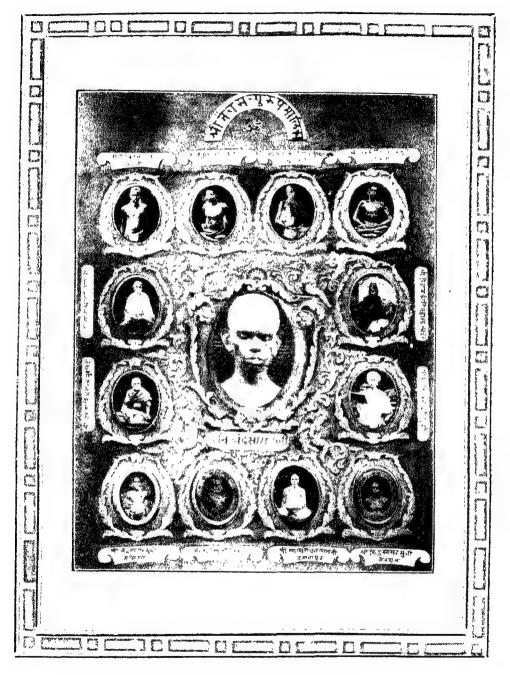
यद्यपि इस इरिवंदापुराणजीकी स्वर्गीय पंडित दौलतरामजीकृत वस्तिका दो बार छप गई है, परंतु यह वस्तिका जयपुर प्रांतकी द्वढाढ़ी भाषामें होनेसे सर्वसाधारण भाइयोंके व गुजराती महाराष्ट्रीय जैनी भाइयोंकी समझमें नहीं आती, इसके सिवाय उस वस्तिकामें मूल संस्कृतके सैकड़ों कोकोंका अर्थ छूट गया है। इसल्ये इमने प्राचीन ४ प्रतियोंसे मिलाकर प्रत्येक कोकका अंक देकर यह अविकल संपूर्ण १२ इजार कोकोंका अनुवाद कराया है। इस अनुवादकी भाषा बहुत संरलं और मनोहर लिखी गई है। अतप्य समस्त जगहके जैनी भाइयोंको चाहिये कि इस ग्रंथकी एक एक प्रति मंगाकर इसका स्वाध्याय करें। जिन्होंने पहिलेका छपा हरिवंदापुराण मंगा लिया है व जिनके यहां हाथका लिखा मौजद है वे भी इसकी एक एक प्रति अवस्य मंगाकर देखे प्रत्येक ग्रामके मंदिरजीमें तो इसकी एक एक प्रति अवस्य मंगा लेना चाहिये।

यह तो सबको मालूम ही है कि यह संस्था और २ दुकानदारोंकी तरह ग्रंथोंमें निपा लेकर धन संग्रह नहीं करना चाहती, किंतु दानकीरोंकी उदारतासे जो धन प्राप्त हुआ है वह ज्योंका त्यां बनाये रहकर प्रंथोंका उदार व कुछ २ अजैनी पंडितोंमें विना मृत्य प्रचार होता रहे इसलिये लागतके ऊपर ऑफिस खर्ने मात्र बदाकर बहुत सुल्म मृत्य रक्खा जाता है। सो आजकल कागज छपाई महंगी होनेपर इसका मृत्य संस्थाके व्कके ग्राहकोंको जिल्द साहत ४॥) ध्पये और सर्वसाधारणको ६) ध्पयमें भेजेंग। यह केवल वचिनका मात्र है। संस्कृत मृत्र १२ हजार स्रोकोंका ग्रंथ जुदा छपता है सो अभी तैयार निर्हे हुआ है उसके तैयार होनेपर मृत्सिहत जिल्द बंधाई जांग्गी। केवल मृत्सिहत मंगानेवाले फरमाह्या न मेंजे, हां जो महासय भाषा और मृत्र दोनों प्रति जुदी २ रखना चाई वे पहिले भाषा मंगा लेवे।

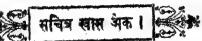
संस्कृतप्रवेशिनी। (बिना गुरुके संस्कृत पढ़नेकी कुंजी।)

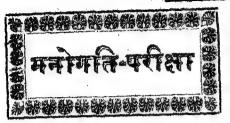
जो लोग संस्कृतकी कटिनतासे धबड़ाते हैं, सूत्र, शब्दों व धातुओंके रूप बोकनेसे डरते हैं पर संस्कृत पढ़ना चाहते हैं तथा संस्कृतकी कोई मी सरकारी परीक्षा देना चाहते हैं वथा है वे यदि इसे मगाकर रोज १ घंटा पढ़ेंगे तो उनको ६ महीनेमें संस्कृत बोलना, छिखना, अनुवाद करना आजायगा। मृह्य मयजिल्दके १) ६०, दूसरा भाग १।)

पुस्तक मिलनेका पता—श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ, मंत्री-भारतीय जैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्था, नं० ९, विश्वकोशलेन, बाधवाजार, कलकसा



निर्यन्थ मुनि, ऐलक, क्षुत्रक, ब्रह्मचारी आदि मन्पुरुपोंका यूर.





(हे॰-तत्त्व-बुभुत्सु, आगरा)

आज में जिस विषयपर यह ठेख िखने बैठा हूँ, वह बास्तवमें, घर-गिरिस्तीके काम-घन्धीमें बेसुध होकर लगे रहनेवालेंकि लिए निहायत कठिन है, पर उनके लिए यह है बहुत उपयोगी। इस है विना वे अपने विषयमें सन्तोषजनक उन्नति नहीं शासक शासन नहीं कर सकता. किसी विपत्तिसे घवड़ाया हुआ व्यक्ति धैर्य नहीं धर सकता, विद्यार्थी अपने पाठका रहस्य नहीं समझ सकता। एवं किसी भी विभागका मन्द्य अपने विषयमें विशेष उत्कर्ष प्राप्त नहीं कर सकता।

इस विषयकी झलक जैन-धर्मके अन्थोंमें कुछ पाई जाती है जैसा कि आगे में लिख्ँगा। पर जैन-धर्मके अन्थोंमें उसकी झडक पाई जानेपर भी जैन समाज, और जैन समाजके अधिकांश पण्डित लोग उससे अपरिचित हैं क्योंकि ग्रन्थोंको रट छेना या उसकी इतनी जानकारी पाप्त कर छैना जिससे किसी प्रश्नका उत्तर दिया जा सके, दूसरी बात है, और उस विषयको अनुभवमें लाकर अपने उपयोगमें लाना-उससे लाम उठाना और बात है। यह विषय अनुभवसे ही सर्वथा संबन्ध रखता है।

में एक डावे-बीसी-में रसोई जीमता था। उसमें वे लोग भी जीमते थे जो रसोइयोंको नियत रुपयोंसे कुछ अधिक भी दिया करते थे और 'हमें स्वाना अच्छा मिके, जल्दी गिलास थाली तैयार हो जाय करें' इस स्वार्थ-भरी इच्छासे उनकी लहो-चप्पो भी किया करते थे। तदनुसार उनकी भावनाएँ डावेके हश परी भी किया करते थे। अर्थात् डावेर्भे जीमनेवालोंका जब जमघट इकट्टा होता था उस समय वे लहो-चप्पोबाज लोग पहिले बुलाये जाते थे, उनकी खातिरी अभिक होती थी। और इनसे अतिरिक्त लोग जो उनसे पहिले आकर अपना आसन जमाते थे. जिनको कि पहिले जीमनेका सर्वधा हक प्राप्त था वे बेचारे बैठेके बैठे ही रह जाते थे और सबसे पीछेसे उनकी खबर ही जाती थी।

हर्ष है कि मैं इन पछिसे खबर छी जानेवा-लोंमेंसे ही एक था क्योंकि मुझे रिश्वत दैना अन्याय लगता था। अतः मैं न उनकी कुछ विशेष मुद्री गरम करता या और न किसी प्रकारकी खुशामद ही । महीना पूरे होनेपर उनका नियत रुपया दे देता था और समयपर भोजन कर आता था।

लेकिन इस दृश्यको देखकर मैं मन ही मन कुद्रता अवश्य रहता था। जब कभी मझसे पीछे आनेवाला व्यक्ति मुशसे पहिले जीमनेको बैठार दिया नाता था उस समब मेरे शरीरमें आग लग जाती और जल मुनकर खाक हो जाता, लेकिन बोलता कुछ न या।

3

पाठक मीच सकते हैं कि इस तरह निरन्तर मन ही मन कुड़नेसे कैसे काम चल सकता था! आखिरको वहाँसे मेरे बीरे २ पैर उखड़ने लगे। और मैं किसी पेसे बासेकी पूँछ-ताँछ करने लगा जहाँके कार्यकर्ता न्यायशीक हो । इस द्वणके अलावा अब मुझे उस बासेमें धीरे २ कई और दूषण नजर आने छगे। मुझे अब वहाँ घुआँ भी सताने लगा और मैं यह विचार-सिद्धान्त बनाने कगा कि इस ध्रप्ते मेरी आँखें खराव हो भायगी. भोजनके समय खरान विचार षानेसे मन्दाभि हो जाती है और उसका रस अच्छा तैयार नहीं होता. ऐसा आयुर्वेद में किसा हुआ है अतः मेरे मनमें जो भोजनके समयमें दु:ख होता है न जाने उससे क्या २ नकसान न होंगे, रसोई भी कुछ कच्चीसी माल्रम होने लगी, भोजन पछिसे ठंडा खानेको मिलता था उसकी भी अनेक हानियाँ दिमागमें याद आने लगीं। इसके अतिरिक्त और भी बहुतेरी खराबियाँ मुझे वहाँ नजर आने लगी । जिनका फल अन्तमें यह हुआ कि बह नासा सुझे छोड़ ही दैना पड़ा।

इसके अनन्तर मैंने क्या किया ! इसके लिखनेकी विशेष आवश्यकता नहीं, पर कपरके दृष्टान्तसे पाठक यह अवश्य पा सकते हैं कि अगर किसी चीज़से हमारा मन खट्टा हो जाय तो मनकी—बुद्धिकी ऐसी आदत है कि वह उसके प्रतिकृत ही प्रतिकृत विचार दिमागमें उत्पन्न किया करती

है-ऐसे ही ऐसे सिद्धान्त निकालती है कि जो उसके मतिकूल ही पड़ें।

इसी प्रकार किसी चीज़के अच्छा रूगनेके विषयमें है अर्थात् यदि हमें कोई चीज़ अच्छी रुगती है तो उसके गुण ही गुण हमारी समझमें आते जाते हैं, बुराइयाँ बहुत कम।

उपर लिखी घटना एक साधारण घटना है। ऐसी घटनाएँ प्रायः सभी आदामियोंपर बीतती हैं। यहाँ तक कि निरन्तर इन्हीं घटनाओंसे काम करना पड़ता है। लेकिन आश्चर्य है तो यह कि ये किसीके प्यानमें नहीं आती। मनुष्योंका मन दिनों-रात इसी तरहकी उठाई-धराई करता रहता है, पर उन्हें खबर नहीं लगने पाती कि इमारा मन इस समय क्या काम कर रहा है।

जैन प्रन्थोंमें कई अगह किसा है कि
' पंचम कालके पण्डित अपनी कथायोंके
अनुसार सिद्धान्त गढ़ेंगे ' इस विषयका में
आज यह विवेचन तो नहीं कर सकता कि
पंचम कालके पहिलेके विद्वान कथायोंके
अलावा और किसके अधारपर सिद्धान्त
गढ़ते थे। पर हाँ यह समझमें अवश्य
आता है कि आज कल ऐसा अवश्य होता
है। जिस बातको मेरी इच्छा नहीं चाहती
इसीके प्रतिकृत युक्तियाँ मेरे दिमागमें आवेगी,
और वही दूसरोंको बतलाऊँगा और जनताके
सामने में उसे इस रूपसे रक्ख्या कि
जिसको देलकर लोग खुश हो जाव और
उसे प्रहण करनेकी और मुक आवें।

दूसरें-कहीं २ यह भी किसा है कि
'मनुष्यके बुरे-भले जैसे कुछ विचार उठते हैं वे
पूर्व संस्कारोंके अनुकूल उठते हैं । आत्मामें —
मनमें बुद्धिमें संस्कार दो तरहके होते हैं ।
एक तो जन्मके पहिलेके और एक जन्मके
बादके । जन्म होनेके पहिलेके संस्कार किस
तरह होते हैं यह बात में स्पष्ट नहीं जानता,
और जन्मके बादके संस्कारोंका प्रकार मैं
अपनी एक आत्म-कथाके द्वारा बतला ही
चका हैं।

यह बात ज़रूर है कि दोनों प्रकारके संस्कारोंका सुधार या परिवर्तन अवश्य हो सकता है, और होता है। और तो क्या संस्कारोंका परिवर्तन ही चरित्र-गठन है, आत्मोन्नति है, स्वभावका अच्छा बनाना है और शिक्षाका भी यही मूळ उद्देश्य है।

यद्यपि विचारोंका उच्च बनाना-संस्कारोंका
गुद्ध करना आदि वाक्योंके द्वारा कहे हुए
उस एक पदार्थकी प्राप्ति मनुष्य अनेक
प्रकारके उपायोंसे करते हैं, पर मेरे ख्यालसे
वे सब बहुत ज्याद: समय लगाते हैं। इस
लिए मेरे ध्यानमें एक दूसरा ही उपाय
अच्छा जँचता है। वह क्या है! इसका
निर्णय इस नीचेके पैरामाफसे हो जायगा।

मनोगति-परीक्षा मनका स्वमाव ऐसा चंचल है कि इससे अधिक गतिमान् पदार्थ शायद ही कोई हो। यह सब पदार्थों से जरूवी चलनेवाला और सब तरहकी चाल चलनेवाला है। कभी २ यह घोड़ेकी तरह सरपट दौड़ लगाता है, कभी यह कुदक २ कर मेडककी चाल चलता है, और कभी २ यह चीटीकी तरह रेंगता है।

मनकी गतिकी इन उपमाओं में बड़ा तन्त्व भरा हुआ हैं। जिस समय किसी वि-परिके आ जानेपर मन वबड़ा उठता है उस समय इसकी गति घोडेकी तरह होती है अर्थात यह इतनी जस्दी चलता है जिसमें इसको निरुकुल भी किसी पदार्थका स्पष्ट बोध नहीं होने पाता. नवीन बात कोई नहीं सुझती। जिस समय यह निकम्मा होता है-किसी कामकी ओर इसकी प्रवृत्ति नहीं होती-उस समय इसकी मेंदककीसी गति होती है अर्थात उस समय एक विषयका यह विचार करता २ दूसरे पदार्थका विचार ऐसे अनु-कमसे करता है कि पहिले पदार्थका और दसरे पदार्थका क्या संबन्ध है ! यह समझर्में आना मुश्किल है। और जिससमय यह निर्देद अवस्थामें निश्चिन्ततासे बैठता है उस समय इसकी गति चीटींकीसी होती है अर्थात् उस समय यह कमसे चलता है और रास्तेमें आते हुए पदार्थीको थोडा-बहुत छता अवस्य जाता ।

इस पिछली दशामें एक बात और हो सकती है। वह यह कि मनुष्य इस बातको जान भी सकता है कि इस समय मेरा मन कहाँ है! किसका विचार करते २ कहाँ पहुँच गया, किस और अधिक जा रहा है! इसका क्या कारण है! इत्यादि। उस समय मनुष्यको अपनी गृलतियोंका यथार्थ भान हो सकता है। उस समय अपनी गृरुतियोंका जो बह पछितावा करता है उसका असर बहुत गहरा होता है। बस यही चरित्र बनानेका-अपनी उन्नति करनेका-अपना निकाश करनेका अवसर है।

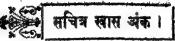
बहतेरे निज-चरित्र-सुधाराभिलाषी इस विषयमें बड़ी २ गलतियाँ करते रहते हैं। वे इस विचारसे कि 'काममें लगे रहनेसे मन विषयोंकी ओर नहीं जाता ' रातदिन इस तरह कामने लगे रहते हैं कि वे अपने आपेकी भी याद भूल जाया करते हैं। छोकिन उन्होंने कभी भी इस बातकी जाँच नहीं की कि जिस समय हम काम करते हैं उस समय हमारा मन कहाँ रहता है ! उन्हें याद रखना चाहिए कि उस समय उनका मन मैाज उड़ाता हुआ , इधर उधर चूमा करता है जिसका कि उनको पता तक नहीं लगता। सिर्फ अपने अभ्यस्त संस्कारोंसे काम होता जाता है। जिस तरह कि अगर हमारे पलकके ऊपर कोई मक्स्बी बैठ जाय तो पलक अपने आप अयक जाता है। यह सिर्फ संस्कार है। इसमें प्रमाण यह है कि जब वे कुछ छिखने बैदने हैं उस समय कभी २ वे उसे भी लिख जाते हैं जो कि पासमें बैठे हुए दूसरे लोगों की बातोंचीतोंसे सन पाते हैं अथवा लिखते समय किसी दूसरी पुस्तकपर नज़र जानेसे जो वेश्वा जाता है।

अस्तु मनुष्यको अपनौ मनोगतिकी हेमशा खबर रखनी चाहिए।

रतलाम बोर्डिंगका बार्गिक अधिकेशन।

'सेठ माणिकचंद पानाचंद दिगम्बर जैन बोर्डिंग हाउस रतलामका ' तृतीय वार्षिक अधिवंशन ता० १२-१०-१६ को सबेरे बहुत धूमधामके साथ श्रीमान् नायब दीवान साहेब पंडित सालिग्रामजीके सभापतित्वमें हुआ था जिसमें प्रथम ही दो विद्यार्थियों हारा मंगलाचरण किये जाने बाद बम्बई निवासी चौकसी लल्लुभाई लग्यमीचंद जोके प्रस्ताव और सेठ रतनचंद जोके समर्थन करनेपर श्रीमान् नायब दीवान साहेबने सभापतिका आसन प्रहण किया, प्रधान् संस्कृत श्रीकों हारा विद्यार्थियोंने सभापतिका म्वागत किया।

अनंतर सुप्रिटेंडेंट कालूरामजीन इस संस्थाकी रिपोर्ट सुनाई जिसमें मंस्थाकी न्यवस्था, विद्यार्थियोंका वर्ताव, मकानकी ह्ङीकत, परीक्षाओंके नतीने, समयक्रम, छाइ-बरी आदिका संक्षिप्त विवरण था । रिपोर्टको सनकर सब लोगोंने संतोप प्रकट किया। फिर पंडित कस्तुरचंदनी महोपदेशक, मास्टर दर-यावर्सिहनी सोधिया, बह्मत्रारी गोकुलचंदनी, गांधी नैचंद नाथनी दोहद और विद्यार्थी रतन-टाल गरोठ आदि महाशयोंने बोर्डिंग हाउसका उदेश, फायदे, कर्तन्य आदिका विवेचन करते हुए शिक्षा संबंधी न्याख्यान दिखे जिनका असर पञ्चिकपर अच्छा पड़ा । इस वक्तपर सभाभवन जो कि बोर्डिंग हाउसके निजी मका-



नमें खास तौरपर ऐसे ही अधिवेशनों सभाओं आदिके लिए बनवाया गया है, खचाखच भर गया था। अंदाज्त ५०० से अधिक जन संख्या थी । जिसमें शहरके तमाम अमलदार वर्ग, दीवान साहेब, टाकुर साहेब, जज साहेब, मजिस्ट्रेट साहेब, तहसीलदार माहेब, सुघीं० पोलिस आदि बड़े २ अफसरान् होगोंने शरीक होकर भवनको मुशोभित कियाथा। स्कूलों के प्रायः सभी कार्यकर्त्ता गण, बोर्डिगोंके तमाम विद्यार्थी गण, शहरकं प्रतिष्ठित सेठियाओं, मुंबई, दाहोद, कुशलगढ़, सामवाड़ी, परतावगढ़ माज्यपद, इंदोर, भोपाल, बड्नगर, गरोठ, कुंडलपुर, रानापुर थांदला झावुआ आदि ग्रामीक करीवन ५० महादायोंने जल्सामें शामिल होकर भवन तथा जल्साकी शोभाको बहाकर कार्यकर्ताओं तथा विद्यार्थियोंक उत्सा-हको बढ़ाया था।

एंस ही समय हमारे श्रीमान् सभापति साहेबका निम्न लिखित प्रभावशाली व्याख्यान हुआ जिसको लोगोंन श्रवण कर शांतिता घारण की और अपनी खुशी करतालोंद्वारा ज़ाहिर की।

श्रीमान् नायब दीवान साहेब पं॰ सलिग्रामजीका व्याख्यान । ह्युनरीन् जलसा !

मुझको आग आपके इस सालाना जल्से-में शरीक होनेकी बहुत खुशी है और मैं पहिले बोर्डिंग स्कूल कमेटीका इस बातका शुक्रिया अदा करता है कि उन्होंने इस साल मुझको जल्सेका प्रेमीडेण्ट या प्रमुख तजबीज़

किया है। यह जल्सा एक ऐसे कामकी सालाना यादगारसे तअल्लुक रखता है जिसका मकसद तरकी तअलीम है और इसलिए में इस अयज़ाज़ी ओहदेको बाइस फ़र्स्व समझता हूँ।

आपकी सन् १९१३ व १४ रिपोर्टसे मुझको मालुम हुआ कि यह बोर्डिंग स्कूल माह अक्टूबर सन् १९११ ई० में कायम हुआ और उसके बाद सन् १९१२ व १९१३ ई० में इसके मुतअिक सालाना जल्से हुए, मगर सन् १९१४ व १९१५ ई० में व बनह उस खोफ़नाक नंगके निसमें तकरीबन सारी महज़ब दुनिया शरीक़ है और जो अर्सा क्रीबन सवा दो साल्सं चल रहा है, ये मामूळी जल्से मुलतबी रहे । आपने इन साल यह जल्सा किया। यह तजबीज़ आपकी मुझको बहुत मुनासिब मालूम होती है, क्योंकि ऐसे जल्होंके मौकोंपर हर एक कारखानोंकी सालभरकी तरक्कीका हाल मालूम हो जाता है और उसमें अगर कोई खराबियाँ वाकुअ हो गई हों तो उनको साफ़ करनेका एक मौका मिल जाता है। आप ख़याल करें कि जिस मकानको योडे दिन तक साफ़ न किया जांव तो उसमें किस कदर कुड़ा करकट इकट्टा हो जाता है। जिस खेतको साफ न किया नावे उसका वास फूँस अस्टी चीज़को जो उसमें लगाई जाय नुकसान पहुँचा देता है। इसी तरहसे जिस कारखानेकी सफ़ाई न की नांव उसमें ऐब पैदा होकर जो उस कारखान-का अस्टी मतलब है उसके ज़ायभ हो नानेका हमेशा अन्देशा रखना चाहिए और यही

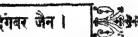
वजह है कि इस क्रिस्मके सालाना जल्से उसके खिए सुफ़ीद समझे नाते हैं। अलावा इसके मैं जहाँ तक ग़ौर करता हूँ हिन्दुस्तानियों में आम तौरपर और मालवाके लोगोंमें खास तौरपर और रतलामके लोगोंमें उससे भी खास तौरपर इस बातकी निहायत ज़रूरत है कि उनको उनके फ़रायज़की निस्पत हर क्क याददहानी की जावे तो शायद उनमें काम करनेका कुछ जोश रहता है, वरना ये छोग अपने काममें ऐसे मसरूफ़ हैं कि ऐसी बार्तोके छिए जिनका तअछक छोगोंकी तरकी व बहब्दसे हो बहुत मुश्किल्से खयाल पैदा होता है। आपकी सन् १९१३ व....१४ ई॰ की रिपोर्टसे भी मेरे इस रिमार्ककी तमदीक होती है। अलावा रतलामकी आम रिआयाके जो आपने बोर्डिंग कमेटीमें मेम्बरोंके नाम दर्ज किये हैं व ३२ हैं। उसमें भी ११ मेम्बर रतलामके हैं। मगर रिपोर्टसे मालूम होता है कि सन् १९१३ ई॰ में २८ और सन् १९१४ ई० में १० वानी दो सालमें कल ३८ साहबोंने इस बोर्डिंग स्कलका मुलाहिजा किया। उनमें रतलामके सिर्फा ७ साहब हैं जितमंसे रिआयामेंसे सिर्फ २ साहब-गुलाबनंद धनरानजी छावडा और वर्द-भानजीक नाम मुझको नज़र आते हैं। इससे आपको मालुम हो सकता है कि रतलाममें छोगोंको तअलीमसं और खाम कर ऐसे कारखानोंसे निसका तअलुक तअलीमसे हो किस कृद्र कम शौक है और इस बनहसे भी भूमिकन है कि शायद वक्तन फ वक्तन ऐसे नल्से बिनलीका काम दें जो उनकी ख़ुद ग्रज़ीको जड़से निकालकर उनके दिलोंमें कौमी हमददी, कौमी तरकी और कौमी मुहब्बतका जोश पैदा कर दें।

साहबो ! यह तमाम दानिशमंदा मुल्क-की राय है कि यह आल्प्रमगीर जंग जो इस वक्त यूरोपमें वरपा हैं और जिसकी तारीक और भयानक घाटीमेंसे गुज़रते हुए सारी दनियाको २ साल्से ज़ियादा असी गुज़र चुका है बाद इख़तामके इसका असर तमाम मुल्कोंकी तहजीवपर निहायत बसीअ पडने-वाला है। गालियन तमाम दुनियाकी तअलीम और तिजारत नये साँचेमें ढाली जावेगी. उस बक्त जो मुल्क तच्यार होंगे वे इस नई तरतीबका पूरा फ़ायदा उठा मकेंगे। अब देखना यह है कि इमको इस नई तरतीवमें क्या हिस्सा मिलेगा ? इसका जवाव बहुत आसान है और मेरे इस कहनकी कुछ ज़रूरत नहीं है कि हमको उतना ही हिस्सा मिलेगा मितनी हमारी काबलियत है और हमारी कानिलियत जिस कदर है वह भी आप सब साहबानको पुरी तौरसं ज़ाहिर है । मैं इसके लिए आपको सिर्फ़ एक मिसाल रंगकी देता हूँ। हमारे मुस्कमें पहले ज़मानेमें हर किस्मके रंग पैदा होते थे और बनाये जातेथे।नीलकी काश्त और उसका व्यापार किस कदर ज़ियादा होता था ! मगर हम अपनी जहाल-तकी बनहसे उसीपर कायम रहे । इतनेमें लोगोंने इल्मी तरीक्रसे दीगर अशियायसे रंग तैयार कर हिन्ये जो हमारे

यहाँके रंगोंके मुकाबलेमें जियादा सस्ते दस्तयान होने लगे। इसका नतीजा यह हुआ कि हमारे मुल्कके रंगोंका व्यापार गार-त हो गया। आज जर्मन छोग छड़ाईमें शामिछ हैं और उनकी तिनारत बंद पड़ गई है। देखिए, हमारे मुल्कमें रंगोंकी कीमत किस कदर तेज़ हो गई है। इसी तरहसे और बहुत-सी अशियाय नो हम गैर मुल्कोंसे लाकर इस्तेमाल करते हैं उनकी कीमत किम कदर तेत् हो गई है। मैं आपको यहाँपर एक मिसाल देना चाहता हूँ, आपमेंसे बहुतसे साहेब ऐसे होंगे जिनके पास मकान होंगे और ऐसे तो मब हैं जो मकानमें रहते हैं। अब खयाल करें कि मकानमें आसायश-के वास्ते कितनं हिस्सोंकी ज़रूरत होती है। रसौडेका हिस्सा, नहानेका हिस्सा, मुत्फ़ार्रिक ज़रूरयातका हिस्सा, सोने, बैउने, मिलनेका हिस्सा, उस मकानमें ज़रूर होना चाहिए। अगर ये सब हक न हों तो वह मकान का-मिल मकान नहीं कहा जावेगा । अगर आपके मकानमें ये मुख्तलिफ़ हक न हों और अलहिदा २ मकानातमें जो मुख्तलिफ छो-गोंकी मालिकीके हों उसमें ये हक रक्खे जार्वे तो उनकी आसायशमें किस कदर फ़र्क आ नावेगा और अगर वे मुख्तछिफ़ मालकान मकान अपने मकान बंद कर हैं तो आपकी क्या हालत होगी ? ऐसे ही एक मुल्ककी हालत होती है, अगर आपकी आ-सायशकी कुल अशिया आपके मुल्कमें तय्यार न हों तो आपकी वही हालत होगी नो आम हो रही है।

अब यह हालत हमारी दुरुस्त करनेके ब्रिए आप ख़ुब याद रक्कें कि सिर्फ़ तअलीम-के सिवाय और कोई ज़रिया नहीं है। आप जिस वकृत जिस कामके छिए जाते हैं उसका सामान साथ लेकर न जावेंगे तो आप एक दूसरे शल्यसके साथ निसके पास सामान मौजूद है कैसे मुकाबटा कर सकते हैं ! ऐसे ही दनियाकी लडाईमें ननतक आप इस्मके हथियारोंसे मुसछह न होंगे, आप किस तरह कामयाबी हासिल कर सर्वेगे । इस मौजूदा नंगने आपकी आखें खोल दी होंगी कि दुनिया हमसे किस कदर आगे है और हम जो अपने तई सबसे उत्तम समझते हैं, किस कदर पीछे रह गये हैं। बड़े २ जंगी जहाज़, हवाई नहाज, आब दोज़ किश्तिया, वायलेंस तारवर्झी, मशीन गन्स और साइन्सकी नई २ और नादर ईनार्दे जिनके समझनेका मी हममेंसे निलानवे सैकड़ामें मादह नहीं मौजूद है उनके ईमाद करनेवाडोंके दिमाग हमसे किस कदर आला दर्जिक होंगे. यह आप खुद खयाल करें। उन होगोंने अपनी लियाकत और अक्र-से दिनयाको हैरान कर दिया है।

महाजन कोगोंको अपने हिसानके वहीं खातोंपर व हिसानदानीपर नड़ा फ़र्स है मगर मुझको नारहा तनस्वा हुआ है कि उनके छोटे २ हिसान इस नुरी तरहसे उल्झा कर रखते हैं कि नहुत कम हैसियतके मुकट हमे ते करनेमें बाज़ वक्त दिक्क पैदा होती है। मैंने कल ही अखनारमें पड़ा है कि हमारी गवनमेन्ट आखियाका इस नंगमें अन



तक करीबन ४७ अर्ब क्या खर्च हो चुका है और रोजाना होता जाता है। मुझको आप चंद आदमी भी इस लियाकतके मुल्कमें नहीं बता सकते हैं जो इस कदर क़छील वक्तमें इतनी क्सीर मिकदारका हिसाब बाकायदा रखनेकी लियाकत रखते हों। कितने अफ़सोसकी नात है कि हम इन बातोंको देखें और फिर भी हमारे दिलोंमें उस तरक्कीके मदारजपर पहुँचनेका जोश पैदा न हो ।

इन सब पस्तिहम्मत करनेवाली बातोंमें सिर्फ उम्मेदकी एक किरन चमकती है और वह ऐसे मुल्क दोस्त, कौम दोस्त और इन्सान दोस्त लोगोंकी हिम्मत जो मरहम सेठ मानक पन्दजी पानाचन्दजीकी तरहसे अप-नी दौलतको आम लोगोंके फायदेकी गुरजसे ऐसे उमदा कामोंमें सफ़ करते हैं। ऐसे लोग बहुत ही काबिक इज्जत हैं और उनकी मुल्कमं जितनी कदर हो वह कम है। हमको उनकी मौत बेवक्तका बहुत ही अफ़सोस है. मगर ये लोग वह मीराम छोड जाते हैं जिसकी बुनियाद . लोगोंके दिलोंमें मौजूद है और वह मेरे खयालमें मरे नहीं बल्कि जिन्दा हैं और क्या भानका जल्मा आप सब माहेबोंको मेरे हमखयाल बनानेके लिए काफ़ी नहीं है ? और क्या दुनियामें ज़िन्दा रहनेकी इससे उम्दा मिसाल और बहतर आप साहेबान अपने लिए तलाश कर सकते हैं ?

मुझको आज जो रिपोर्ट इस बोर्डिंग स्कूलके मुनासिब पड़ी गई वह मुनकर हिरायत खुशी हुई । आपकी आमदनी और खर्चेपर

बहुत होशियारीसे इन्तज़ाम रक्खा गया है और जो तालिब इल्मोंकी तरककी और इम्ति-हानका नतीजा ज़ाहिर किया गया है, उससे आनरेरी सेकेटरी बोर्डिंग स्कूलकी सुप्रिन्टेन्डेन्टकी लियाकत बोर्डिंग स्कूलके और खुश उमल्बी ज़ाहिर होती है और मुझको इस बातकी ग्राम खुशी हासिल है कि ये तालिब इल्पोंमें अपनीं दिलचस्पी लेते हैं और उनकी धार्मिक तअछीमका भी इतना खगाल रखते हैं।

आप लोग इससे खूब वाकिक हैं कि हमारे महाराजा साहेब बहादुर लेफ्टिनेण्ट कर्नल थी मर मज्जनसिंहजी साहेब बहादर के०सी०एस०आईको ऐसे नेक और रिफाह आमके कामोंमें किम कदर दिलचापी है। व इस बक्त असी १९ माहसे फ्रान्सकी रज़मगाह यानी युद्धस्थलमें अपने बादशाहके वासे जंगमें शरीक हैं और जैसा कि बाइसराय साहेब बहादर हिन्दने अपनी कौन्मिलकी स्पीचमें फरमाया:--'' राजपूत कौमकी पुरानी बहादुरी और श्रुनाअतके कारनामोंकी इञ्जत धायम रखे हुए हैं " वे आपकी इस बोर्डिंग स्कूलकी तरवकीका हाल सुनकर निहायत खु होंगे। हमको दुआ करनी चाहिए कि हमारी गवर्नमेण्ट आलियाको इस जंगमें निसमें वह सिर्फ़ इन्साफ़का मुक़द्मा छड़नेके लिए शरीक दुई है, जल्द पूरी कामयाबी हो और हमारे श्रीजी हजूर साहेब बहादुर फ़तह पाकर वाषिस अपने राजमें तशरीफ़ छावें।

मैं सेठ मानक वंदजी पाना वंदजी की बे-



क्क मौतपर दिस्ती अफ़्सोसका इजहार करता हूँ और मेरी तजबीज है कि इस नज़्सेकी नरफ़सं उनके बारिसोंको उनके माथ हम सबकी के इस दिली हमददीकी इत्तिलाभ दी जावे। ऐसे शक़्सोंकी मौत सिर्फ़ उनके खान्दानको ही चुकसान नहीं पहुँचाती है बल्कि यह नुज़मान सब मुल्कका समझना चाहिए।

में आखिरमें आप सब साहेबानका शुक्रिया भदा करता हूँ कि आपने मेरे इन चंद कलमानको तबज्जुहाँक साथ सुना और एम बोर्डिंग स्कूलको तरक्की और सरसञ्जीको स्याहिश ज़ाहिर करके में अपनी तकरीरको उत्तम करता हूँ।

सालिग्राय मधान ।

तद्मतर विद्यार्थियोंने गायनद्वारा सभाप ति साहेब तथा संस्थापक महोदयका आमार भानते हुए उपस्थित मंडलीका आभार मान अपना स्थान प्रहण किया इस बक्त वो लिटियर्स इंतनाम भी सराहनीय रहा। सेठ कस्तूरचंद्जी स्थानिक कमेटोके सभापतिने सभाजनीका आभार मान कर कमेटीकी तरफसे धन्यवाद देते हुए उनके इस अम उठाकर आनेके लिए माफी माँगी पश्चात् पान-सुपारी इस आदि हार पहिननेपर यह जरुसा ठीक १०॥ बजे खतम हुआ।

बाहरी आये हुए महाशयोंका भोनना-दिकका प्रबंध बोर्डिंग हाउसकी तरफसे ही किया गया था। रात्रिको धर्म सभा हुई उसमें भी अनुमान २५० आदमी और खिया उपस्थित थीं। यह सभा नीचेक भागमें सड़-क्रके किनारे हुई थी। इसमें भी ब्रह्मनारी गोकुळचंद्रनिकं मंग्रहाचाम करनेपर एक विद्या-धींद्वारा " विद्यालद्भा संवाद-निर्णय " रूपसे एक लेख पदा गया। बाद पंडित कस्तृ-रचंद्रजी महोपदेशक और मास्टर दरयाव सिंहजीने धर्म विषयपर भच्छी तरह विवेचन किया। श्रोतामण बहुत खुश हुए। चौकसी लल्लुभाई लंक्सीचंद्रनी बम्बईद्वारा सभापति व आगन्तुकोंका आभार माना गया और सभा टीक १० बजे विसर्जन हुई।

हमें यहांपर यह बनलाते हुए न भूलना होगा कि स्थानिक सेकेटरी गांधी रिखबदास-जीन विद्यार्थियोंके परिश्रमको सराह कर निज ज्यपसे १०) रुपयेकी पुस्तकें उसी समय रात्रिकी सभामें सभापति महादायके करकमलों हारा विटरण प्रराई इसके लिए कमेटी उन्हें हार्दिक रूपमें धन्यवाद देती है और श्राद्या करती है कि अन्य महादाय मी उनका अनुकरण कर यथा समय विद्यार्थियोंके उत्सा-हको उत्तनन देते रहेंगे।

समाज संवक-

सेकेटरी, बोर्डिंग हाउस-रतलाम ।

શ્રાવિકા.

(સચિત્ર માસિક.)

ત્રાવિકા ખ્હેતા સ્વધર્મ સમજી કતંવ્યતિષ્ઠ અતે, અને ગૃહસંસાર નંદનવન સમાન સુખ રૂપ થઇ પડે, તેમજ ભાળકાતે સુરક્ષિત, સુદ્દદ તેમ સચેતન બનાવવાને કેળવાય તેવા ખાસ હેતુધી ' શ્રાવિકા ' નામતું મ મિક ચિત્રા સાથે જાન્યુઆરી સને ૧૯૧૭ થી બહાર પડશે, જેમાં અરતકળા, પાકશાસ્ત્ર, ઘરવેદું. અને તેવા આ ઉપયોગી વિષયા પણ સહેલી ભાષામાં ચિત્રયુક્ત કેવાશે. બેઠ પણ અી ઉપયોગી પ્રમુદ્ધ રૂશે. વર્ષનું લવાજમ ટપાલ ખર્ચ સાથે કૃકત રૂશે. ૧–૦–૦ રાખેલ છે. નામ તોંધાવે: પુરતીજ ક્રાપી પ્રમુદ્ધ થશે, માટે જલ્લી નામ તોંધાવા.

લ જેત " પત્રતી એકફિસ - સાયત્રગર





અમદાવાદ ખાહિંગના મેલાવડા:-कराभाव्या सकरण शेर प्रेव मेरव हिल એડિંગના વાર્ષિક મેલાવડા આસો વદ મવારે શેર મંગળદામ ગીરધરદાસ મિલ માલે-કતા પ્રમુખપણા તીચે થયા હતા. જે પ્રસંગ દેશબક્ત શ્રીયત માહનલાલ કરમચંદ ગાંધી भीव नजीनदास संध्यी, राव भाव व्यभीयतराभ શાસ્ત્રી. રાષ્ટ્ર દીવાન જીવસલાલ હરીપ્રમાદ, પ્રાપ્ જેદાલાલ સ્વામીનારાયણ, મીં પંડિત, મીંગ્સંત, પરી • લક્કામાઇ પ્રેમાન દેશસ. શા છોટાલાલ ધેન લાભામ માંધી. વગેરે ૨૫૦-૩૦૦ તી સંખ્યા हाकर हती. प्रथम सप्रीन्टेन्डंट भी. गंजाशंहरे એાર્ડિંગના સને ૧૯૧૫ના રિપાર્ટ વાંચી **સંબ**ન ળાવ્યા પછી વિદ્યાર્થીઓનાં આવકારરૂપ ગાયના થયાં હતાં. ભાદ જાલીયસ સીઝરન ડાયલાગ કરવામાં આવ્યું હતું, જે પછી સસાગ્રહી દેશ-ભક્ત મીરુ ગાંધી, મીરુ સંવવી, ત્રારુ જેઠાલાલ वंगेरे भे डेणवंशीना विषय इपर विवेशन हरी તથા બોર્ડિંગના સ્થાપકાના વખાસ કરી આ માં રથાની કતેલ હવ્છી હતી, બાદ કલદાર બહેન **ઇનામ કંડમાંથી વિદાર્થીઓને ઇનામ વેંચાયાં** હતાં બાદ પ્રમુખ સાહેંબે વિદાર્થીઓને નીતિ સંભંધી તથા આગળ વધવાની રીતિ સંખંધી भाध विषे विवेचन **इ**री भार्डि गना स्थापक्रना આભાર માની સપ્રીન્ટેન્ડંટ મીરુ ગંગાકાંકરની કાર્કોર્દિના વખાય કર્યાં હતાં અને સવે તા આબાર મનાઇ હાર તારા પાન મુલાબ અપાઇ મેળાવડા વિસર્જન થયા હતા.

રાત્રે શૈઠ રતનચંદ નવલચંદના પ્રમુખ પ-હ્યાનીએ વિઝીટર્સ કમીટિની બેઠક થઇ હતી, જેમાં માસ્તર∶ગંગા**શ**ંકરે સને ૧૯૧૫ના રિપાર્ટ વાંચ્યા પછી બાર્ડિંગમાં **કલભ સીસ્ટમ** ચાલુ કરવાના : વિષ્ય રેપર વિચાર ચાલતાં એ સીરડમ હાલ એ વર્ષ**ી સુધી નાહ**્યું **ચલાવવાના** કરાવ **થ**યા ક્રિતો ખાદ કેટલાક સુધારા વધારા વધ વિવેચન થઇ એ મીડીંગ બરખાસ્ત થઇ હતાં.

शिलरजी केसका फैसला—इस केमका के फैसला गत ता० ३१ की इस माफिक हैं। गया है कि २१ पुरानी टोंको पर एजन करनेका दिगंबरी श्वेतांवरी दीनोंको समान इक है, ४ नई टोंकें, २ धनशाला और एक चब्तरा (कि जिनकी दिगंबरी पूजते ही नहीं हैं) श्वेतांवरियोंके प्राइवेट बने हुए हैं उनसे दिगंबरी श्वेतांवरियोंकी प्राइवेट बने हुए हैं उनसे दिगंबरी श्वेतांवरियोंकी प्राइवेट बने हुए हैं उनसे दिगंबरी श्वेतांवरियोंकी इजाजतंत पूजन कर मकते हैं। जलमंदिरमें दिगंबरी मृति होनेकी सुब्त न मिली इससे उसमें दिगंबरीयोंका इक नहीं है आदि। खचीकी आधी दिगंबरियोंका इस लेगोंपर अदालतने दी है। यह फैसला १४८ एउका है जो मिलनेसे और बातें मालम होगी

दरेके वापरबुंज जोईए! आनंदी जुलाबनी गोळीओ.

आ गोळीओ चुंक, अमळाट, बलटी विशेष कोई पण जातनो उपहव न करतां इस्त साप, लाव छे. ४० गोळीनी घीषीनी किंमत र ०-८-० पोस्टेज जुर्व.

भीयाळानी मोसम् माटे खास आनंदी कफ पीरत.

जे दम अने खांसी जेवा भयंकर राती उपा तुरतज विजय मेळवे छे, वापरवानी रीत दवा साथे. किंमत फक्त •---- पोस्टेज जुदुं।

कोई पण जातनी अपवित्र वस्तुओनी

मेळवणी वगरना मलमो. दगजनो मलम किंमत ६ ०-४-० सरजवानो मलम किंमत ६. ०-४-० खसनो मलम किंमत ६. ०-४-० गुमहानो मलम किंमत ६. ०-४-०

🖅 एजन्टो जोइए छे.

लसो—शाह अधर्स, हेगपोळ—वहोदरा-Baroda



૨૦૦૦)નું એાષધદાન સોલાપુરમાં શેઠ સખારામ તેમચંદ દોશીએ સોલાપુરમાં એક સાર્પજનિક એાષધાલય ખાલવા માટે રા ૨૦૦૦નુ તી સખાવત જાહેર કરી છે.

રાંઠીજી માટે નિરાશા—૫'૦ અર્જીન-લાલ શેઠી સંખેધીના આપણા ડેપ્યુટેશન સાથે વાતચીત કરવાને નામદાર વાઇસરાયેના પાડતાં કહ્યું છે કે જયપુર સ્ટેટની વચ્ચે હસ્તક્ષેપ કરવાનું અમતે કંઇ કારણ જણાનું નથી !

વડાદરામાં જાહેર ભાષસ-વડાદ-ગમાં ન્યાય મંદિરમાં આસોવદ કની સાંજે ૪થી ૬ સુધી જૈનધર્મભૂષણ ષ્રદાચારી શીનક્ષપ્રસાન દાજીએ નામદાર દિવાન સાહેબ અનુભાઇ નંદશંકર મહેતા પ્રમુખપણાનીચે " જૈન તત્ત્વન **ગાન** " ઉપર જાહેર ભાષણ આપ્યું" હતું જેમાં શહેરતા સ્માશરે છુદ-૮૦૦ ગૃહરથાેએ ભાગ લીધા હતા અને આ સબાના ખર્ચ સંઘવી ગીરધરલાલ નારણદાસે ઉપાડી લીધા હતા. અતમાં **દિવાનસાહેએ** બ્રહ્મચારીજીના બાપભની સમાક્ષેત્ર્યના કરતાં જણાવ્યું હતું ५ अक्षय रीक्ष्मे घएंक विद्वता पूर्ण व्याप्यान કર્યું છે. એમની વકતૃવ્યશક્તિ ઉંચા પ્રકારતી છે અને કથન પણ ઉદાર દત્તિનું છે. જૈન કિક્ષાસાકી સંબંધી જે મેં થોડું વાંચ્યું છે તે પરંધી કહીશ કે બીજા ધર્મ અતે પ્રજાઓના તત્વજ્ઞાનની પેંડે જૈન તત્વજ્ઞાન પણ ઉંચી શ્રેશી પર છે. હિંદુસ્તાન એ મહાન ધર્માની જન્મભૂમિ છે. તત્વરાતમાં પદાર્થશાન, સ્માત્મ-नान अपेत धिवरमान की त्रख् वस्तुका विचार વાની છે. આ ત્રણેના વિચારા દરેક ધર્મમાં સામાન્ય છે પણ કાઇમાં એકને તા કાઇમાં બીજાને પ્રાધાન્યપદ આપેલું છે તેટનાજ એક છે. જૈનધર્મ અને તત્વશાનમાં પ્રથર કરતાં મ્યાત્મા અને સપ્રિશાન તરફ વિચારવાતું વલસ વિશેષ છે, એથી એમ સમજવાનું નથી કે ધર્મ એ નારિતકગાદ છે. Agnoticizmના सिद्धांत भुजप के कोध मधी शक्षा ते तरह વિશેષ લક્ષ આપવું જોઇએ એ આપણું કર્તવ્ય

છે. મહાન કેંચ દિલોસોફર કેન્ટ કહે છે કે ઇધર અત્રેય છે ત્યારે અક્તિ કાના કરવી ? મતલબ કે જે મહાત્માં આ પોતાના સત્યાસ્ત્રિથી જગતને કેમ વર્તતું તેના દાખક્ષા મેસાડે છે તેમના તરક Hero worship ત્રીર-પૂજા કરવી ઘટે છે. कीन सिद्धांत पशु अवेशक छे. कीन तनव નાતીએ માર્ચ પદાર્થતા અભ્યાસ પણ સારા કર્યો છે અહિંમક જ્ઞાનના ત્રણ મુદ્દા મુખ્ય છે-(૧) હું કાવ્યું (૨) હું શું જાણી શકું અને (૩) माइ' डर्तव्य शुं अटबे भने भाक्ष शाधा भणा શકે ? આ પ્રકારના હાનમાં શબાચરહ કેમ અને કેવા પ્રકારનું રાખલું કે જેથી માક્ષ મજ તે સિદ્ધાંત ધ્યાનમાં રાખવાના છે, શુભા-चरुलुभां न्याय, संयभ, सत्य अने छपह्या (અહિંસા) એ ચાર મુખ્ય છે, જેમાં એહિ'સાતે જૈન ધર્મમાં પ્રાધાન્ય પદ આપેલ છે વગેરે કહી વ્યક્ષચારીજીના ભાષણનાં ધર્ભા

दरेक घरमां होवुंज जोइए! इजारें। दरदें। उपर विजय मेळबनार आनंदी चूर्ण ।

आ चूर्ण पेटनी गमे तेवी कबजीआतने तोडी इमेराने माटे निरोगी बनावे छे. इरेके आनो उपयोग करवोज जोइए. स्वादमां मन गमतं छे. किंमत ६ ०-६-० पोस्टेज जुदुं.

ताबनो कही शत्रु कोण? आनंदी तावनी गोळीओ.

जेना उपयोगथी गमे तेवो झेरी ताय क्ल क्लायमान यह जाय छे. ३२ गोळीनी शीशीनी किंमत फक्त ६ ०-८-० पोस्टेज जुटूं.

मगजना दरेक दरदो दूर करनार आनंदी वाम.

बना उपयोगधी माथाना दरेक रोगो, संधीया, वायु, आधाशीशी विगेरे रोगोनो जडम्ळयी नाश याय है. किंमत ६ ०-६-० पोरहेज बुदं.

्रक एजन्टो जोइए छे.

क्लो—शाह त्रथसे. देरागोळ-वडोदरा Bardoa વખાસ કર્યાં હતાં ખાદ મહાચંદ કસનદાસ કાપડિયાએ સર્વેના આભાર માનવા પછી મભાનો ફાટા લેવાયા હતા અને સાત ભાઇ-યેાની મદદથા સાચા સુખના ઉપાય નામે પુસ્તકની ૮૦૦ પ્રતા પ્રહ્મારાજીના ફાટા સાદેશ સહિત સભામાં ભેટ વે ચવામાં આવ્યા બાદ હારતારા અપાય આ જહેર સભા વિસર્જન કરાઇ હતી.

पशुवध बंद - जीव दया रक्षिणी सभाके प्रयत्न देहलीमें दुर्गादेवीपर नवशिवमें होता हुआ हजारों निरणराधी पशुका वध सरकारकी ओरसे बंद हुआ है और मत नवराविषय वहाँ मिष्टासकी खूब खपत हुई थी। इसके उपलक्षमें सभाकी आरसे उत्सव मी मनाया गया था। वहांके चमारोंने बकरे न चढानेका पंचायती ठहराव कर लिया है।

रश्लाबंधनमें सहायताः—बम्बईके श्राविकाश्रमको रक्षा बंधनके उपलक्षमें करीव ७००) की सहायता मिली थी। श्रीमती मगन-बाईजीके प्रयासका ही यह फल है।

राघोगढमें मेलाः — किचीबाड़ा दि॰ जैन० प्रां० समाका वार्षिकोत्सव ता॰ २५ डिसम्बर्स १० जनवरी तक तेरह द्विप पूजन, मेला और रथोत्सवके समय होगा जिसके समापति राघोगढ नरेश ही होंगे।

कुछकत्तेमं कार्तिक शुक्क ६ पर बड़ा भारी रथयात्रा उत्सव हुआ था।

रयोत्सव और केशलोंचः — फीरोज़ पुरमें मार्गासर सुद २ से ५ तक रयोत्सव और ऐलक पनालालजीका केशलोंच होगा।

શ્રાવિકાશ્રમના ઉત્સવ:—મુંબાઇ શ્રા-વિકાશ્રમના સાતમા વાર્ષિકાત્સવ ઢી. શુ. જૈન બાર્ડિંગના કાેમ્પાઉંડમાં કાર્તક સુદ ૧૫ પર સાે કૃષ્ણાગારી ચીમનલાલ સેતલવડના પ્રમુખ પણા નીચે થયા હતાે. રિપાર્ટ, ગાયના, સંવાદા વગેરે થયા પછી ઇનામા વેંગાયાં હતાં તથા કેટલીક ખ્હેનાના સ્ત્રી કેળતાણી ઉપર વ્યાખ્યાના થયાં હતાં.

जैन विद्वानको सन्मानः—गृहैमुर सरकाने अपनी जन्मगांडकी खुशीमें पंक दौर्वाले जिनदास शास्त्री (अवणबेलगल) को ''भ्यालस''—महाविद्वानका पर दिया है।

मृत्युके स्मरणार्थ दानः—राचीके बाबू पूरनमलजीने अपनी माताका स्वर्गवाम सावन ग्रुळ इको हो गया जिसमें निम्न प्रकारका दान दिया है-५०) दि॰ जैन के प्राहकों को एक पुस्तक उपहारमें देनके लिए, ११) रांची जैन मंदिर, २५) पर्वतरक्षा फंड, ५१) श्री रूपम ब्रक्सचर्याश्रम, २१) ग्रुळ ऑपवाल्य बड़नगर, ११) महाविद्यालय कारी, ११) जैनसिद्धांत विद्यालय मुरैना और ११) वस्वदं श्राविकाश्रम | क्या इमारे अन्य श्रीमानगण भी ऐसे शास्त्रदान और विद्यादानका अनुरण करेंगे ?

लखनउमें मंडलका अधिवेशन—भारत जैन महामंडलका वार्षिकोलान लखनउमें डिसेन् बरकी आखिरमें कोंग्रेसके साथ २ खंडवानिवासी वान् मानिकचंदजी बी० ए० एल० एल० बी० के सभापतित्वमें बड़ी धूमधामसे होनेवाला है जिसके लिए लखनउमें कई महिनोंसे तैयारियाँ हो रही हैं।

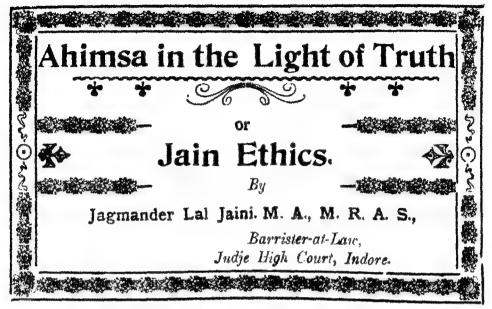
ननीन सहयोगी—हाथरतसे ' जैन-मातंड 'नामके नवीन मातिकका जन्म हुआ है।

"दिगंबर जैनका" संयुक्त अंक कार्तिक मासका यह खास अंक कुछ देरसे प्रकट हुआ है इस लिए मार्यासर और पौषका संयुक्त अंक पौप शक्क पांचम तक प्रकट होगा

स्वीकार्-समालाचना-आगामी अंकमें प्रकट होगी।



^{र्}जन विजय े प्रस-सृरत.



"Ashe Light of Truth teaches us that Nature obeys herself only. knows no other law. It is not a dupe of names. Facts alone matter in the realm of Nature. All systems of thought and action flourish and last accord ing to their conformity with Nature. So all real and true criticism must be an inquiry as to how far this conformity does or does not exist. But this is not always the case. E.G., Jainism has been persistently and grossly misunderstood and misrepresented. People entirely ignorant of its traditions & philosophy have thought fit to sit in judgment on it, and then pour satire and ridicule on it to their heart's content. This did some harm to Jainism, but more to the cause of a compreh nsive and impartial inquiry into Truth remarks are suggested by a little controversy between two important Hindu Leaders, Lala Lajpat Rai and Mr. Moh-

anlal Karamchand Gandhi of the South African fame. Lala Lajpat Rai comes of a Jaina Stock; Mr. Gandhi is very nearly allied to the traditions of Jainas in Gujarat and Kathiawar. Mr. Gandhi, we are told, has started a society, the members of which are cujoined to abstain from taking milk, ghee &c. as involving cruelty to living beings. To this Lala Lajpat Rai takes serious objection. He says this process will debilitate the already weak Indians and unfit them for the race of life with the modern peoples of the world. He holds that Mr. Gandhi goes to unjustihable extremes and that even the Jainus did not go to the extent advocated by Mr Gandhi. As the Jainas have been held very rightly, to be the professors of Ahimsa, it struck me that a brief consideration of Jaina Ethics on this Dewali day may bring us some light from the teachings of Lord Mahavira.

Lala Lajpat Rai's conception of Jaina Ethics is one sided and partial to the extent of being misleading. I do not propose to prove this categorically, but that it is so will be apparent from the whole of this brief article. Mr. Gandhi also ignores the Practical Ethics of Jainism, if, of course, his system is to be compared with Jaina Ethics.

Ethics has been described to be the "Study of the Ultimate Good of Man, " (Henry Sidgwick: Outlines of the History of Ethics.) Now this Good has been differently understood by different Schools of Philosophy. And it is only natural. Good may mean what is absolutely or comparatively true, useful, beautiful or virtuous. These different standpoints yield different Systems of Ethics, Ludwig Noiree in his Historical Introduction tells us that the essence of the Ancient Philosophy was Cosmology; of the medieval philosophy, Theology; and that of the Modern philosophy, Psychology. Greeks then had their conception of Ethics modified by their Cosmological standpoint; the later Greeks and the Romans, the Cynics and the Cyrenaics. the Stoics and the Epicureans were faced by the conflict between Virtue and Vice: the medieval Roman Church emphasised this by the theological preference for Asceticism over pleasure, till the pagan Renaissance broke through this sad-faced melancholy and by the Arts & Poetry once more established the reign of unfettered joy as a desirable and good thing; the Reformation meant a rude shock to the Ascetic Ethics of the charch from within: till

finally we reach the modern, psychelogical and scientific stand-point of viewing Ethics. It is impossible and beyond the scope of this article to go into all this different systems of Ethics. My purpose is solely to consider briefly Jaina Ethics. The Jaina point of view is quite unique but definite. This makes it easy to apply the Jaina moral principles in practice. Indeed the chief merit of Jainism is that it is so scientific in the sense that its first principles are reducible to definite propositions, from which its superstructure is a matter of logical and scientific deduction. The Jaina Ethics are based on the doctrine of Ahimsa.

The Jainas are known for a few practices which are peculiar to them. E. G., they do not take any food after sunset; some do not even drink anything after dark; they take stcamed water, some of them even taking it after boiling and straining; a sect of Jainas goes about with a mouth-bandage on to preveat living beings meeting their death by going into the human mouth and nose; they would not tolerate the killing of animals, even when they are a nuisance, like bugs, crows, cats &c., or even worse, carriers of disease like plague-rats or dangerous by their very constitution like lions, enakes, scorpions, &c., they do not take vegetables on certain days to avoid killing the souls that reside in vegetable bodies; and they totally abstain from taking some kinds of vegetables, as potatoes, figs &c., which are packed full of souls in one body; and similarly many other practices. These practices are known but their reason is not

understood and therefore ignorant obseryers scoff at them. All these practices are an index of the Jaina's faithful and daily fidelity to the principle of Ahimsa. As in practice, Ahîmsa or non-killing governs the Jaina's daily life, so in theory all the Jain rules of conduct for laymen and ascetics are derived from the same principle. A very authoritative Jaina Text Purushartha Siddhhuupaya gives such a beautiful and brief description of the doctrine that I make no apology for quoting its in The translation is from the extense. Jaina Gazette for November and December 1914. (Vol X Nos. 11 & 12). अत्मपरिणामहिसनहेत्त्वात् सर्वमेव हिंसैतत् । अतृत्व बनादि केषलमुदाहुतं शिष्यगोधाय ॥४२॥

All this indulgence is "Himsa," because it injures the real nature of the Atma; and calling it as falsehood etectra is only by way of illustration for the instruction of the disciple.

यस्तलः कषाययोगात्त्राणानां द्रव्यभावरूपाणाम् । व्ययरोपणस्य करणं सुनिश्चिता भवति साहिसा।४३।

Whatever injury to the physical or mental principle of tife, is caused through the action of passions, it is certainly Himsa.

अप्रादुर्भायः खडु रागादीनां भवत्यहिंसेति । तेषामेयोत्पत्तिहिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः ॥४४॥

Assuredly, the absence of passions is Ahimsa (peace) and their presence is Himsa (Injury). This is a summary of the Jain Philosophy.

युक्ताचरणस्य सतो रागाद्यावैशमंतरेणापि । न हि भवति जात हिंसा प्राणव्यपरोपणादेव॥४५॥

A good man who, not moved by passion, conducts himself properly does not commit Himsa even by injuring life. ब्युत्थानावस्थायां रागादीनां वशप्रकृतायाम् । भ्रियतो जीवो मा वा धावत्यमे ध्रवं हिंसा ॥४६॥

And, if one acts carclessly moved by the influence of passions, there advances Himsa in front of him, whether a living being is killed or not.

यस्मात्सकपायः सन इन्त्यात्मा प्रथममात्मनात्मानम् । पश्चाजजायेत न वा हिंसा प्राप्यन्तराणांतु ॥४७॥

Because under the influence of passion, the spirit first injures the self, through the self, whether there is subsequently an injury caused to another being or not.

हिंसायामिक्समणं हिंसापरिणमनमि भवति हिंसा । तस्मात्प्रमन्त्रयोगे प्राणन्यपरे।पणं नित्यम् ॥४८॥

The want of abstinence from Himsa and indulgence in Himsa, both constitute Himsa; and thus in living in a careless manner, there always is injury to life-principle.

स्मापि न खलु हिंसा परवस्तुनिवन्धना भवति पुंतः हिंसायतननिवृत्तिः परिणामविश्चद्धये तदपि कार्या॥४९

By the more influence of external objects, the Atma incurs not the slightest liability for Himsa. Even then, for the parification of thought, one ought to abstain from causes leading to Himsa, such as worldly attachments.

It would be noticed from Sloka 44 that the Acharya defines Ahimsa as the absence of Passions-of course the passions of Auger, Pride. Deceit & greed are primarily meant—, and calls it जिनामस्य संक्ष्यः or the epitome of Jaina scriptures. This at once gives a guiltees to a morely negative and narrow conception of the doctrine. By neglecting to live a righteous life, yeu



encourage the passions in yourself and others, that is also *Himsa* and condemnable. So that the theory of Jaina Ethics is two-fold. It consists of a command and a prohibition. There is a Do and a Dont in it. The Dont is Dont hurt. The Do is: So live as to facilitate the greatest spiritual salvation of the greatest number of souls.

Now from still another point of view Ethics may be considered in two aspects. Self-regarding Ethics: and nonself-regarding Ethics. The Do & Dont of Jaina Ethics as given above relate to self-regarding Ethics, i.e., to the pursuit of the ultimate Good of the soul itself. This Ethics relates to the type or form of conduct. It is an ideal system. Its eye is on the ultimate, absolute Reality. It is internal. For it no external enforcement is possible. This is the निश्चय नय or the Real or Absolute point of view of Jainism. It seems that Mr. Gandhi's precepts are from this standpoint. By abstaining from milk and ghee &c you do not trespass upon the natural sustenance of the young of the cows and buffaloes &c. You preserve their vigour and perhaps utilise it in more and better agriculture &c. But this very logic may lead you further and consistency may make you give up Agriculture &c. also, as some forcing of the feelings of the animals is certainly involved in capturing them and and ering them to do your work

to 8 left. This objection has great the first indeed true and logirally demonstrable that the minimum of himse and the maximum of shimse in this worldly life can only be attain-

ed by following the highest and the hardest rules of life known to Jainism, viz; in the condition of a houseless, possessionless, passionless, naked Ascetic following the strictest rules of conduct for ascetics. It is only a question of degree, a question of where the line is to be drawn between the ideal and its actual pursuit in life. It is a question of the distinction between the scope of the निश्चय and the व्यवहार नय or the Absolute and practical standpoints of Jaina philosophy. To me it seems that Lula Lajpat Rai takes its stand on the practical, actual or nonself-regarding aspect of Ethics, i.e., the Ethics which does not consider the advancement of the self primarily, but which concerns itself mainly with the ultimate good of all that is the non> self. This is also sanctioned by Jainiam. Sloka 54 of Purusartha Siddhyapaya tells us फलति हिंसानुभावेन, the result of Himsa varies with the intention. The followers of the more practical and material kind of ahimea cannot be condemned, because their aim and intention is not to do harm to others or to retard their spiritual advancement, but to promote physical fitness that as a people, the Indian community should hold the high place of honour and influence, of which it should prove itself worthy and deserving. Of this there is patent and strong corroboration in the fact that even killing is allowed in Jaimsm! This seems astounding but it is a fact nevertheless. kings used to wage war. Jaina soldiers used to fight the battles of their king and county. Even the first Tir-

thankara of the Jainas, Lord Risabha taught the Jains the arts of Agriculture &c., which obviously involve the killing of myriads of lives, killing mineral-bodied, earth-bodied and other tiny living beings. Why, even in offering Pujas etc. in temples to-day, in the Rathuatra processions etc. any amount of the unavoidable killing of our minute neighbours of the air, earth &c, is involved; but there is no himsa in it, for there is no means sect, no intention to destroy. The intention is the अभावनांग of faith. It is to glorify the Truth; to enjoy the manifestation of it in the physical world. So there is no sin. It is rather the performance of duty (धम), therefore this killing is meritorious and leads to heaven. Thus the "turn-theother-cheek" doctrine of Mr. Gandhi, as also its sturdier substitute of Lala Laipat Rai both find scope and jutsification in Jainism. They are the two sides of the same shield, according as you aim at spiritual salvation, or material and martial advancement. As I said above it is only a question of degree; and there is only one way of formulating the doctrine of Ahimsa as it can be acted upon intelligently in practice. "Do not destroy life, unless it is absolutely necessary for the maintenance of a higher kind of life. And then begin with the least evolved kind of life." * This does not sanction burling and injury. It limits it to the lowest possible minimum. The universe consists of an infinity of souls.

*Outlines of Jamism by the present author at p. 71.

soul is a part of the Universe. Both have to evolve; both have to be preserved. It depends upon which you put the emphasis, on the part or the whole Your whole Ethics will be coloured by your own primary aim. Jainism recognises both as genuine. To my mind this is the great glory of lord Mahavira's teachings that they recognise gradations in life and make provisions as much for the Arhat-soul, who is awaiting its final deliverance from matter, as for the crudest soul which is still labouring in Itar nigodha lowest form of a living being). May these teachings shine in their effulgent glory always and on all-on the faithful and the unfaithful alike.

Indore. 27th August 1916. J. L. JAINI.

Important Publications. Qutlines of Fainizm

by

J. L. Jaini, M. A. PP. XI+156. Price Rs. 8-0-0.

The Parmatma Prakasha

Translated by

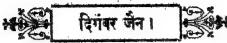
Rikhabdas B. A.

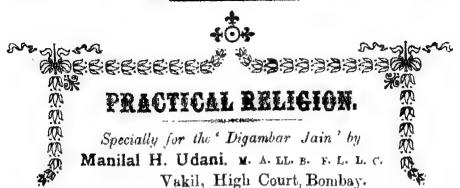
PP. 15+60, Price Rs. 2-0-0

The Key of Knowledge

Champatrai Jain, Bar-at-Law. PP. LXX+1096. Price Rs. 10. All available at-

Digambar Jain Book Depot, SURAT. (India).





In these days of civilization and research we are hearing eries from people all round that we don't Want to be followed under old rules and customs, that we don't want to be led to believe things that we cannot percieve or experience, that we don't want to be led astray in the holy name of religion, and that we want now a practical religion; it is therefore now our duty to search out by the test of truths a religion in which people would find full satisfaction of mind and where they can find all the ideals of happiness. It is not wise to give out any opinion before peeping into the depth of truth.

It is now an admitted fact that "Morality is the handmaid of religion" and the highest principles of morality must be the primary essentials of every faith. So wherever in any religion, the principles of morality are absent, in theory or in practice, we cannot accept it as the best faith. But where we find high moral in a religion and a strict adherence to the same, we can say that the elements which are common in all the religious are present in it. So every religion should

inculcate high principles of morality and in the absence of these in a man, one hardly deserves to be called even a gentleman. Virtues are the real ornaments of a personage and a man without virtues is a curse to society. Society consists of individuals and if people leave aside moral in life and kill living creammes, drive away the quality of mercy from mind, tell lies, commit thefts, become licencious and cheat the public or commit breaches of trust. they not only spoil their own lives, but are a great danger to society. If we were to take just now each vice one after another and describe the damning effects of each of them upon an individual as well as upon society, pages and pages would be filled up with the horrible results from want of virtues in a man. The fact is so generally known that I need not write more than to say that leaving uside the difficult problems of a high religion, each and every men should determine in his mind firmly to be strictly moral and virtuous, seeing that it is not only advantageous to society but chiefly to oneself and that is what nature demands from you according to its laws, violation of which it never telerates,

All difficulties, all dangers, all anxieties remain far from a virtuous Milton's phrase that "Virtue may be assailed but never hurt" is found to be true in every sphere of life. A virtuous man succeeds in his business; passes a happy life and is able to make the best of this human exist-Whereas if you will compare his state with that of a man devoid of virtues you will find that the latter is always worried and unhappy and whatever his state of life may be, you will never feel his mind at rest and in peace. So virtue has its own reward and any man that strictly follows the best morals can have it.

So a religion in order to be universal should invariably enjoin morality upon its followers.

After acquiring this primary principles of high morality, one becomes qualified to enter into the next stage of acquiring knowledge of the Truth. So long as soul does not become purified by piety and high character, it is not able to get the knowledge requisite for uplifting its:lf, Simply knowing a particular idea is not enough but after knowing it, he should feel it and put it into practice; but if a soul has not acquired purity, it is not able to grasp these ideas about truth and it cannot feel and assimilate them; The soul is searching after Truth for ages and ages and it is not able to realize it owing to the curtains of Maya (illusion) which do not allow every soul to be so purified see through the veil of Maya. So after acquiring the highest purity of the

soul, one should search for truth and read through all the books that can impart true knowledge. Keen concentration to the subject is absolutely necessary for gaining the true knowledge for realization and uplift of the self.

When a man reads through all the books of religions, if his soul has been purified by high qualities he is able to grasp the Truth and then feels himself in tune with the Infinite. Then he feels religion to be a practical subject and not an object of show. Then he rises above the little self and realizes the higher self and its latent powers.

On the way for search for truth, after grasping certain knowledge as truth and after feeling the reality of it in every walk of life, in the pious soul, a man should then keep full faith in the religion that he has found to be practical and useful and go on on his way without falling back in any way at any of the phases of life and then he would be able to serve the object of life, realization of Truth.

It is a pity that people are being cheated in the holy name of religion and truth hardly is offered for acceptance whereas untruth goes for truth and people fall in superstition and weaknesses:

In this age, every man has commenced to think independently for himself of his own faith and how far it suits his own conscience. Conscience is the best test of every action and when a certain act does not agree with your conscience, you should think it as undesirable and avoid it.

Every religion has some beautiful truths to give us and if a man has keen perception, he would be able to distinguish between right and wrong and seperate truth from untruth; but all persons are not likely to have an equal degree of ineight and so for the satisfaction of one's mind and for the uplift of one's own soul, and for freeing oneself from the miseries of the world, one should handle the principles of a religion in which there is truth unalloyed. So we want an universal religion which is practical and useful and which we feel in our mind every minute of the hour. This universal religion will first teach you to be free from and (attractions) and and (enmittees) and feel unity and similarity in each and every creature.

This religion should prescribe absolute forshaking of pride, untruth, stealing, adultery and a passion for money, honour &c. and should free the mind from all sorts of vices. This religion should implant the principle of life towards each and avery creatures and a belief that any harm done to any of them will be felt by these creatures as it would be felt by us i.e. to grasp the motto of "Do unto others as you would be done by". The religion is meant for our benefit, it should show us how by the regulation of life, we can keep up the best health. In short this religion which we want to be practical and useful, should give peace of mind and contentment and happiness in every thing. If any religion at present in existence can satisfy these tests, I think we should not fail to take advantage of it for the benefaction of our souls as well as for the

uplift of Society. A man who will have read through the principles of Jainism can easily see that Jainism not only satisfies the above mentioned practical tests but even goes further in philosophy and supplies culture, enlightment and truth to every soul that cares to follow dutifully its principles. The Jain scriptures are now being translated into current languages as well as English and the scholars on the continent have commenced to take interest in the principles of Jainism which are now found to be the best tenets containing highest moral truths and deep philosophy.

In the first four Vrates of the Jains you will find that every Jain is asked strictly not to commit any Himsa (sin), to abstain from any sert of untruth, wrongful acquisition of property, or unchastity. In the 5th and 6th and 7th he is asked to lesson his passion for worldly things and to lesson his necessities as far as possible and further on he is enjoined not to speak ill of anybody and to perform certain rituals for developing concentration upon the knowledge of the self and to regulate health by certain austerities, and so on. The nine Tatvas of the Jains lay before us the philosophy of Matter and spirit and fully explain the theory of Karma so we goes on grasping the different tenets of Jainism, we teels great satisfaction and peace for which the soul has been yearning for ages and he feels the truths to be fully conceiving and elevating Lord Mahavir passed his life for the good of others and the doctrine of passing

四百五

→##

मोलापुरमें जनमिद्धान विद्यालय (मुरेना को स्वायत और मेट हिमाई देवकरणावालोंक ३८००० के दानके ममयका यूप

बेटे हुए......ा मेट गकती मखागम शेशी ७, मेट कुलचड गमचट गोथी, ३, मेट माणिकचड रेवचंद गुजोटी. ४, मेट हीगचंद <mark>गमचंद गोथी, १</mark> **सेट वालचंद रामचंद गोथी**. ६, स्था. वा. स्था. **गोपालदासजी** बैग्या, ७, ब. राकुरबमजी, ८, मेट हीगचंद नेमचंद रोबी, ९, प्रमास्तिकती कामकीबाल, १० व बन्तालासकी बाक्कीबाट ११, मेठ रामचढ़ नाथा रंगती गोथी, १२, षे, देवकीमंत्रन मुरेना । ३, गनग्नी नानोबा उग्रध्ये १ मेर मोनीचंद हरीचंद, ० गाधनाथ गोपाल प्रहम्द्र शाची, t ho) प्रिंछ भरे

मन जनम् ोम गुग्न

>11K

a selfless life is well explained by his own example. To pass an ideal life and to acquire the principles which are uncontroverted and ever true, in any age, into any person, one should make a thorough study of the religious doctrines, from the original scriptures.

The brotherhood of Mahavir is very vast and it includes in its sphere any person who leads a high life and is in search of truth. One who follows strictly the principles of Jainism will always keep best health, will have peace of mind and will acquire happiness in this world and by cuting of his Karmas will realize the truth and may reach the goal of life.

The Jains have not been able to make any perceptible progress, owing to internal struggles between the Swetambars and Digambars, sons of the same father and the moment they will realize that it is now high time to leave aside this way of weakening each other in the name of Lord Mahavir, so as to unite as brothers and look to the propaganda of the noble faith and to improve the condition of the people, they will be able to make a perceptible progress.

In the race of other nations we are lagging behind, and although we have ample resources, we have not been able to make any great progress in education, social reform, civilization, industries and culture. It is a good fortune of the community that our eyes and now lately opened and our rich gentlemen have kindly supplied means to Jain students for taking

high education by opening Jain Boardings and Schools. However efforts on a large scale are needed and a body for arbitration of internal quarrels is necessary to be soon established Commercial interests are neglected owing to personal animosities and it is essentially necessary that educated and wise Jains of India should meet together every year and put into practice the resolutions that they think proper for the uplify of the community as a whole. Jainism is a most practical and universal religion and enjoins upon its followers to love each other and help each other and to leave aside all sorts of राग and देश and live in harmony and peace under the shelter of Truth.

AMEN.

ANNUAL MEETINGS OF THE ALL-INDIA JAIN ASSOCIATION THE BHARAT JAINMAHAMANDAL WILL BE HELD AT LUCKNOW IN DEDEMBER, 1916.

ESTATIONS AT SE

-% KENONTINE BYSK-

(By Mr. Herbert Warren, 84 Shelgate road, London. S. W.)

Ahimsa is the highest religion. In dealing with any religion there are naturally two aspects of subject, namely, the theoretical and the practical. The practice of non-injury by the Jains perhaps does not differ very materially from the ethical teachings of most religions, except in one important particular; and that is, that while for instance the Christian commandments apply only to human beings, the doctrino of non-injury is extended to animals, and in fact to any form of life, trees, flowers, etc.; but the theory on which the practice is based is in Jainism more comprehensive than in some religious.

Taking the practical side first, let us ask: What is injury? Roughly speaking, it is anything which prevents or hinders the development of a living being. The Jains believe in the development theory, which is not quite the same as evolution. The more we develop, the less injury do we do, and when we are fully developed we do no injury.

Non-injury, of course, is not inuring. There are five chief ways in which injury is done, namely, by killing, lying, stealing, immorality, and possession of property, or by the desire to possess property. Except the

last perhaps these things are quite woll known, and no detailed description is necessary; but with reference to killing, this heading includes hurting the body of a living being, as by beasing, starving, tying up, cutting, piercing, etc., and in this connection it may be well to mention that the Jain traching is that we should not kill a thing with the idea of putting it out of its pain. I do not know the reasons upon which this teaching is based, but it is I believe the teaching. And with reference to telling untruth, this includes, not merely making a statement which is actually untrue. but it includes making a unnecessarily when it will injure someone; for instance if we unnecessarily inform a master that his servant is a jailbird, the statement may be true, but will injure the servant.

These five forms of injury can each he done in gross ways or in mild ways. Taking them backwards, the gross form of the possession of property is when our desire for possession is quite unlimited, so that no matter how much we have we still desire more. The gross form of immorality is improper relations with the marriage-partner of another person Straling is gross the thing is considered by its owner to have a value. The easonce of stealing is taking a thing without the consent of the owner; if we take something without the consent of its owner and it is not considered by him to be of any value, then it would be the mild form of stealing. Grees untruth is when we make a statement which we know to be untrue for the purpose of injuring someone. Untrue statements made jokingly or for so-called politeness, then perhaps it is mild. Gross killing is when we deliberately kill a moving living being which is innocent and without any necessary or proper occasion. Hunting would be an example. By 'moving' living beings is meant those who can move from place to place, as distinguished from trees, flowers, etc., which cannot move from where they are.

Further, each of these things can be done in thought, word, or deed. And we can either do them ourselves, couse others to do them, or consent to their being done, making in all ninety ways of injuring. And non-injury is refraining from these ninety ways, or as many of them as we can.

The Jains teach that the practice of non-injury is the highest religion. This is sometimes objected to on the ground of its supposed negativity, and it is said that to teach a positive doctrine of doing good would be a higher form of religion. But there are some important considerations in this connection. First, by not injuring we are obliged to do good. We cannot do nothing, and if we eliminate injurious action then our lives must necessarily be good. While if we preach doing go of

and say nothing about injuring, then in doing good to some we may be unmindful of injury done to others, and we get such things as people being killed for the good of the church. And a third consideration is that the injunction to do no injury does not carry with it any injunction against doing good; we are free to do good. And there is another important consideration in this connection, viz., that the doctrine is universally applicable, that is to say it includes ourself; we must not injure ourself; we must not have a drink in order to oblige a friend, for instance.

Now what is the theory on which the practice is based! There are three reasons why we should practise non-injury, there may of course be more than three. First, we should practise non injury for the simple reason that it is our natural life to do so, from the ideal (nishchaya) point of view. Second a life of injury obscures our natural qualities; if we are cruel we harden our naturally kind hearts. And, third, the practice of non-injury is the way to develop ourselves.

Now is there any proof that a life of non-injury is our natural life? Or if not proof, is there any evidence to support it? There are at least to considerations which support the theory. Although it may not have been noticed, it seems to be the fact that this view is already held, the view that our natural life is a life of non-injury; because when anyone does us an injury we invariably regard it as wrong. If someone tells us an untruth

we think he ought not to have done it, that is to say we take it for granted that his natural life is to tell the truth. And if some preacher came along and told us that we ought to do as much harm as ever we possibly can, or even that we ought to do n little injury now and then, we should certainly think he was not preaching a true doctrine. This again shows that we are already convinced that the natural life of a living being is one of non-injury. Of course, the fact that injury hurts should be a sufficient reason for not inflicting it, and possibly with some the doctrine that we should not injure will be so obviously true that no reason will be asked as to why we should practise it. But conduct is only part of the complete life; conviction or belief is another part, and as well as the conduct being right the beliefs accompanying the should also be right; we should have a correct theory.

Now if it is our nature not to injure, then how is it possible for us to do any injury? How is it possible for a thing to be different from what it naturally is? If we are naturally kind, how is it possible for us to be cruci?

Janism believes in spirit and matter. Spirit is regarded as something real, and not merely as a quality. Matter also is looked upon as real; it is not thought to be merely a manifestation of spirit, as it is in Christian Science, for instance. Spirit and soul both mean the same thing; the two words are synonymous in Jainism.

Taking these two things, soul and matter, in turn, the soul is the living being; it is not that the body is the living being and has a soul in it; the soul is the living being and has a body which is lifeless so far as the substance of which it consists is concerned. The quality which distinguishes the living being from its body is consciousness; the conscious being is the soul, not the body. Of the real things in the universe living beings are the only consciously self-active ones; other things are not conscious of and cannot initiate their own activity; every living being is a solf-active centre, a suu shining by its own light; and in this respect all living beings are alike, no masters, no servants, no males no females; and in their pure state they are equally knowing and equally powerful. At least one Western writer has expressed this teaching; I will quote what he says: " What do you suppose will satisfy the soul except to walk free and own no superior? What do you suppose I would intimate to you in a hundred ways but that man or woman is as good as God? And that there is no God any more divine than yourself ? " This, of course is only from the ideal point of view, the nischaya naya, but it is exactly the Jain belief if I understand is correctly. This quotation is from Walt Whitman's Leaves of Grass, page 299.

With regard to matter not much need be said, for matter is well understood by chemistry and physics. There is an ultimate unite, not itself composed of smaller units; it has no सचित्र स्वासं अंक ।

magnitude, but it has the qualities which can be known by the senses. liquids. and In addition to solids. gases, which are called gross matter, there are three finer conditions, which are called fine matter.

Now with these two realities, soul and matter, it becomes possible explain how the living being, the soul, can be different from what it naturally is. Water is naturally tasteless, but sonwater, by reason of the impurities in it, tastes salt; the soul is naturally kind, houest, and truthful, but by reason of imputities in it, livings are eruel, dishonest, and untruthful. As far as the past is concerned, no mundane living being law ever been free from impurities. There is no fall from a pure state; there may be a fall from a state of comparative purity but not from purity. Two qualities natural to matter are attraction and repulsion. Of the degrees of fine matter the middle degree is attracted assimilated by (asrav and baudha) living beings. When thus assimilated the qualities of attraction and repulsion are felt by the living being respectively as attachment and aversion. Aversion is subdivided into anger and pride; attachment is subdivided into deceiffand greed. These become incentives to all sorts of injury; by reason of these invisible forces living beings kill, lie, steal and cause others all kinds of pains. These invisible forces working in us are no factor of our being from the essential point of view, any more than salt is a factor of seawater; salt is part of the sea but not part of the water as water, Anger

is part of the animal or the man, but is not a quality of the soul; and it is by reason of these passions that men, animals, etc., are different in their behaviour from what the soul naturally. is. These passions are of such a nature that they obscure the soul's qualities, Knowledge is the most important quality, and if we are angry for instance it is because there is something we are ignorant of which, if we knew it, would prevent us from being angry. If the man in the railway carriage will not move his leg out of our way we perhaps get angry; but finding afterwards that he has a stiff knee and cannot bend it our anger disappears and we feel pity; this piece of knowledge removes the anger. In a state of pity we should not injure the man's leg, but in a state of anger we might

Having given a rough description of what non-injury is, and the theory on which it is based, the next point is the extent to which we can practise it.

Perhaps we think that we do already practise it, that we do not do any harm. But, of course, as a matter of fact, although perhabs we do any very great harm people, still we do considerably injure the sub-human world; we cut flowers. we tread on grass, we cat fruit and vegetables. And again we might very well consider whether our present noninjury is not rather a matter of circumstances than choice. The passions are in us, and the question is, to what extent do we refrain from injuring even people when these passions rise?



laymen. Well, of course, we. cannot refrain from the mild forms of injury; but what we can do is to refrain from the gross forms. If we are to be free, if our life is to be our own, we must chose it; and the question s what kind of life will we choose to lead? If we persist in doing wrong, we meet with all kinds of opposition, the law punishes us, etc; but if we undertake to be kind, truthful and honest no one will wish to prevent us. we shall be free to do as we like. To undertake to and to refrain from the gross forms of injury is by no means the line of least resistance: when the passions are aroused the tendency to think, say, or do something that will injure will require a certain strength of the will to remain inoffensive. These are occult matters, no one sees the impelling force in us by reason of which we tell some untruth for instance, nor does anyone see the will force by reason of which we do the right thing. but the will force is quite real and is by no means an inactivity, although non-injury is sometimes regarded as inactivity.

And there is another very important point in connection with the practice, namely, that the inward condition accompanying the honesty, truthfulness, etc., should be one of love and kindness. As well as the ontward visible conduct which everyone sees, there is the inward condition which accompanies it and which no one see, hur nevertheless it is really existent. If the waiter adds up our bill a shilling short then in order that he may not

be injured we must point it out to him, and the accompanying inward condition should be an appreciation of and sympathetic feeling for the pain the man would suffur if he lost the shilling; it should not be a feeling of pride at the consciousness of being such an honest follow. The idea in the practice of non-injury is to develop our natural qualities, and kindness is one of them.

()no more point; not only do we want not to injure, but we want to know that we dont injure. What does this mean? In order to know that we do no injury at all to any living entity anywhere in the universe we should have to be omniscient, otherwise we might be injuring something unawares; according to the Jain doctrines we are all of us potentially omniscient.

To sum up, non-injury consists in refraining from killing, lying, stealing, immorality, and greed (parigraha); the theory is first that kindness, truthfulness, honesty, morality and generosity are the natural life of the soul, and secondly that the reason injury is done by living beings is because of anger, pride, deceitfulness, greed, fear and other passions which are in them but are not a factor of the soul; and we can paretise non-injury to the extent of refraining from the gross forms and thus develop our nature.

H. Warren.











LEAVES OF GRASS

Walt Whitman, the Universal Poet, and Expounder of the teachings of Jainism, the religion and philosophy of the spiritual conquerors, who have earned the Title ' JINA" and whose teachings are given to the world through the instrumentality of the Jains in India.

By-Alexander Gordon, Honorary Secretary, The Mahavira Brotherhood or Universal Fraternity, 86, Kennerley Road, Stockport, ENGLAND.

umarous books, and essays containing favourable or adverse criticisms, have been written and published relative to the great personality of WALT WHITMAN, the bard of America, the poet of the New World. but only those souls who comprehend the order of evolution in spiritual development, will realise that at no time since the appearance of his wonderful book of poems entitled 'LEAVES OF GRASS" has the MESSAGE OF HOPE contained therein been more needed than at the present period of the GREAT WORLD WAR when millions of human beings clash with each other for the sole purpose of destroying superb physical bodies.

WALT WHITMAN is not dead, although his soul severed its connection with a human form-a guest housefor work in another realm of being,

on the 29th day of March, 1891; and no soul was more certain than the 'good grey poet' that so-called death is only a DEPARTURE, as shewn in the following poem:-(Written at the close of the American Civil War.) HOW SOLEMN AS ONE BY ONE.

How selemn as one by one,

As the ranks returning worn and sweaty, as the men file by where I stand.

As the faces the masks appear, as I glance at the faces studying the masks.

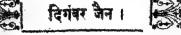
(As I glance upward out of this page studying you, dear friend, whoever you are,)

How solemn the thought of my whispering soul to each in the ranks, and to you.

I see behind each mask that wonder a kindred soul.

O the bullet could never kill what you really are, dear friend,





Nor the bayonet stab what you really are:

The soul! yourself I see, great as any, good as the best,

Waiting secure and content, which the bullet could never kill.

Nor the bayonet stab O friend.

WALT WHITMAN is regarded by many of his followers as being the most representative Bard of Democracy, of its innermost eide of its moving forces, of its hopes and destiny, but how many of his admirers are aware of the fact that his having been born in the New world of the West has in reality naught to do with the NEW SPIRITUAL WORLD to which incessantly called his readers of color, whatever race. nationality. or creed ?

The fundamental doctrines of Jainism are to be found almost in each poem comprising Whitman's sacred book of which he says;—

" Forth from the war emerging, a book I have made,

The words of my book acthing, THE DRIFT OF IT EVERYTHING,

A book separate, not link'd with the rest nor felt, by the intellect,

But you ye untold latencies will thrill to every page, "

Those fortunate souls who have been initiated into the Holy of Holies by possessing the faculty of perceiving the INDWELLING LIGHT, will readily understand that the action of reading is the preliminary step fowards further strengthening the intuitional spiritual powers, and thus untold latencies? are brought forth and

'attributes of the soul' are-perceived by those who earnestly endeavour to understand the facts of being, not only in this present time of sorrow and sadness caused by the European War, but the soul's conditions in past ages and the possible states of being in the infinite future will be revealed. Hence the "DRIFT" of his message, the INNER MEANING of the poet's mystic words.

"O blost the eyes, the happy hearts,

That see, that know the guiding thread so fine.

Along the migthy labyriath."

The "GUIDING THREAD SO FINE, ALONG THE MIHGTY LABYRINTH"

is nothing else than the WISDOM of the JAINA SCRIPTURES to be found in the wonderful philosophy of the SIX DRAVYAS, the doctrines of KARMA, REPIRTH, THE SPIRITUAL DEVELOPMENT THEORY, and THE PERMANENCE OF THE SOUL, and the FINALLIBERATION OF ALL SOULS from the bondage of KARMA.

WHITMAN is undoubtedly the Prophet of the NEW SPIRITUAL WORLD, and as a SEER, he observed the drama of existence from beginningless TIME to endless ETERNITY, and all the above aspects of the Jaina philosophy are to be easily traced in the following quotations affirming as they do that LIFE is ETERNAL, that SOUL is ETERNAL that a particular soul lives many lives in different bodies and thus

generates forces, all sorts of forces, good, bad and indifferent, which are the cause of a soul's continual reappearance in bodily form on the earth-plane.

"Immense have been the preparations for me,

Faithful and friendly the arms that have helped me.

Cycles ferried my oradle, rowing and rowing like cheerful bontmen,

For room to mo stars kept aside in their own rings,

They sent influences to look after WHAT WAS TO HOLD ME,

Before I was born out of my mother generations guided me,

My embryo has never been torpid, nothing could overlay it,

For it the nebula cohered to an orb.

The long slow strata piled to rest it on,

Vast vegetables gave it sustenance,

Monstrais sauroids transported it in their mouths and deposited it with care.

All forces have been steadily employ'd to complete and delight me.

NOW ON THIS SPOT I STAND WITH MY ROBUST SOUL."

Here is another presentation of the Jaina Development Theory:—

"There is no stoppage and never can be stoppage,

If I, you, and the worlds, and all beneath or upon their surfaces were this moment reduced back to a pallid float, it would not avail in the long run,

We should surely bring up again where we now stand,

And surely go as much farther, and then farther and farther,

A few quadrillions of cras, a few ectillions of cubic leagues, do not hazard the span or make it impatient,

They are but parts, anything is but a part.

See ever so far, there is limitless space outside that,

Count ever so much, there is limitless time around that."

"To think of time-of all that retrospection,

To think of to-day, and the ages continued henceforward,"

"Is to-day nothing? is the BEGINNINGLESS PAST nothing?

If the FUTURE IS NOTHING, they are just as surely NOTHING."

That he perceived all souls to be UNCREATE, that is, self-subsistent is very evident from the following stanzas:—

" I do not think seventy years is the time of a man or woman,

Nor that seventy millions of years is the time of a man or woman,

Nor that years will ever stop the existence of me, or any one else. "

Observe how he draws our attention to the REAL SELF hidden within all humans:—

"It is time to explain myself-let us stand up.

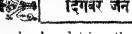
What is known I strip away,

I launch all men and women forward with me into the Unknown.

The clock indicates the momentbut what does eternity indicate?

We have thus far exhausted trillions of winters and summers,





There are trillions shead, and trillions ahead of them.

Births have brought us richness and variety.

And other births will bring us richness and variety.

I do not 'call one greater and one smaller.

That which fills its period and place is equal to any."

It will be noted how prominently he brings forward the Karmic theory, or law of cause and effect, which he effectively combines with the doctrine of rebirth. Again and again he refers to these facts of existence as the following quotations abandantly show:-

"It is not to diffuse you that you were born of your mother and father, IT IS TO IDENTIFY You.

It is not that you should be undecided, but that you should be divided."

Semething long preparing and formless is arrived and formed in YOU.

YOU ARE HENCEFORTH SE-CURE, WHATEVER COMES OR GOES "

"I know I have the best of rime and space, and was never measured and never will be measured. "

"All parts away for the progress of souls,

All religion, all solid things, arts, governments-all that was or is apparent upon this globe or any globe, falls into niches and corners before the procession of souls along the grand roads of the universe,"

WHITEMAN'S IDEAL was an intensely positive and optimistic one, and he emphatically laught that

the soul is the most unfettered architect of its own destiny. And the Jaina tenets are not speculative; they have their practical side, for they directly point to the fact that evolution is not an external entity which works independent of our volition. We are not only factors in the cosmic-process, but the supremely vacessary factors. Hero we have his clarion voice on this vital question of RESPONSIBI-LTY:=

" Have you thought there could be but a single supreme?

THERE CAN BE ANY NUM-RER OF SUPREMES-one does not countervail another any more then one eyesight countervails another, or one life countervails another.

All is eligible to all,

All is for INDIVIDUALS, ALL IS FOR YOU,

NO CONDITION IS PROHIBL-TED, NOT GOD'S OR ANY.

All comes by the body, only health pate you rapport with the Universe.

PRODUCE GREAT PERSONS, the 1:st follows. "

Whitinan points out that there is an infinite number of souls each of which possess the power to attain to the perfection of Gods. He wrote: -

"Each of us inevitable, each of us limitless.

Each of us with his or her right upon the earth.

Esch of us allow'd the eternal passports of the earth,

Each of us here as divinely as any are here."

Each soul being 'inevitable' and limitless clearly corroberates the Jaina teaching "That each soul is a separate entity, immeterial, i.e., not composed of matter, uncreate and sternal."

How faithfully he portrays the potential divinity within each soul;-

"As for me, I give nothing to anyone except I give the like carefully to you,

I sing the songs of the glory of none, NOT GOD, sooner than I sing the song- of the glory of you"

"I only at he who places over you no master, owner, better, GOD, beyond what waits intrincically LN YOURSELF!

In such marner does to place all men on an equal footing and it is a beautiful way of expressing UNIVER-SAL LOVE as meant by the Jaina words 'DAYA' and 'SAMA-BHAVA'. Whitman's love was limitless for he welcomed all beings, even the trees, flowers, and birds, in fact, all living creatures were included in his, what one might say, boundless love which was as wide as universal space, for one of his lines, addressed to an outcast, reveals his intense sympathy with human suffering.—

"Not until the sun excludes you will I exclude you"

None knew better than Whitman that love is a nature of the soul and that it is the true nature of all living beings, and in exquisite language he gives all souls an opportunity of perceiving the TRUTH as he himself did; thus in the following he again draws the reader's attention to the

potential God latent in all evolving

TO A STRANGER.

"Passing stranger, you do not know how longingly I look upon you, you must be he I was scaking, or

she I was seeking,

(it comes to me as a dream)

I have somewhere fixed a life of joy with you,

All is recall'd as we flit by each other, third, affectionate, chaste, matured,

You grew up with me, were a boy with me or a girl with me,

I ate with you and slopt with you, your body has become not yours only nor left my body mine only, You give me the pleasure of your eyer, face, flesh, as we pass, you take of my beard, breast, hands, in return.

I am not to speak to you, I am to think of you when I sit alone or wake at night alone,

I am to wait, I do not doubt I am to meet you again,

I am to see to it that I do not lose you."

"Stringer, if you passing me and desire to speak to me,

Why should you not speak to me?
And way should I not speak
to you?"

It is not so much the beautiful face that he admires but the latent goodness of the soul was over at the back of his mind when speaking to an individual, as those who know him well can testify as it was known that of all the powers

he possessed, the power of bringing out the best side of a man's nature, even if the individual were a criminal, was perhaps one of the greatest characteristics of the 'good gray poet' as Whitman was sometimes called.

QUICKSAND YEARS.

Quicksand years that whirl me I know not whither,

Your schemes, politics, fail, lines give way, substances mock and elude me.

Only the theme I sing, the great and strong-possess'd soul, cludes not,

One's-self must nover give way That is the final substance-THAT OUT OF ALL IS SURE.

Out of politics, triumphs, battles, life, what at last FINALLY REMAINS

When shows break up what but ONE'S-SELF is SURE?"

Pandit Lalan of Bombay, India, has written the following few lines to me, and they very clearly illustrate the meaning of the above poem.

"Whom should you befriend more than yourself? Do you require any more acquaintance in this whole cosmos than your being a BEING? You as a being require a FRIEND, and the fact that you need no other FRIEND than the potential GOD within you is sufficient."

Whitman was the Prophet of the NEW SPIRITUAL WORLD, and its inhabitants will be those souls who have understood the mystic saying of Christ, viz:— Lo? I am with you alway.

The LIGHT of TRUIH which Lighteth up every man that cometh into the world "is identical with the soul and Whitman refers to the PERMANENCE OF THE SOUL in the following striking passage:—

" The soul.

Forever and forever-longer than soil is brown and solid longer than water ebbs and flows.

Thus he corroborates the Jaina doctrine that the soul was never specially created by an Omniscient Leiog; that each soul will never have an end; that perfection is a potent germ within each soul, and the attainment of SELF-KNOWLEDGE constitutes the PATH of LIBERATION.

Jaiuism teaches that when a soul purifies itself sufficiently to manifest its divine at tributes, it becomes a God!

Whitman boldly asserts "THE MIGHTIER GOD AM I" implying that while the state of PERFECTION is one and only one, there is no limit to the number of individuals who might bring it into realisation. This great truth is aptly shown in the poem.

"EXCELSIOR"

"Who has gone farthest? I would go farther,

And who has been just? for I would be the most just person of the earth."

This stanza is also inspiring to the soul that desires to become a true SPIRITUAL CONQUEROR in the sense of arranging that all his activities shall lead to Purity of Heart, Calmness of Mind, and the blissful freedom from selfish desire.

The Jaina Message of Deliverance and Whitman's Message are one and the same viz;-that man is strong to rise, strong to conquer, strong to understand. He can practise virtue in his daily life; he can search for stainlessness of heart, and advance step by step until he finds and realises it; he can abolish self from his mind, and take out from his heart the roots of all evil, until at last, through purity of hears, he attains to that perfect which brings unutterable insight PEACE.

"He masters whose spirit masters" says our poet and in the same breath he exclaims:—

"The whole theory of the universe is directed unerringly to one single individual-namely to YOU."

The teaching of Individual Responsibility as regards the attainment of the state of Godbood which embodies the belief that the soul is its own Cod is easily discernible in Whitman's poems, and that truth is the greatest HOPE he and Jainem offers to every toiler for freedom.

" Something there is,

(With my lips soothing thee, alding I whisper,

I give thee the first suggestion, the problem and indirection)

Something there is more immortal even than the stars,

(Many the burials, many the days and nights passing away),

Something that shall endure longer even than lustrous Jupiter, Longer than sun or any revolving satellite,

Or the radiant sisters, the pleiades."
Whitman asks each soul to become a SPIRITUAL CONQUEROR and his hand will ever becken throughout the ages to come those who will heed the spiritual exhortation expressed in the following:—

"I know I am solid and sound.
To me the converging objects of
the universe perpetually flow,

All are written to me, and I must get what the writing means.

I KNOW I AM DEATHLESS..."

"I see Hermes unsuspected, dying, well-belov'd, saying to the people DO NOT WEEP FOR ME,

THIS IS NOT MY TRUE COUNTRY-I NOW GO BACK THERE.

I RETURN TO THE CELES-TIAL SPHERE WHERE EVERY ONE GOES IN HIS TURN."

How clearly Whitman shows that the Path for each soul means neither more nor less than the attainment of Godhood at which stage of growth PERFECTION will be found, and then we shall dwell no more in human form.

The Tabernacle is dissolved and all delusion will have disappeared.

The soul will have struggled upward through sin and selfishness and the march into Nirvana will have been accomplished. Peace everlasting will be known and the realisation of that which alone is imperishable will have been achieved. It is to this end that Whitman leads all souls, and this state of Godhood is very beautifully ex×

pressed in the following quotation from the PARMATMA-PRAKASH (by Sri Yogindra Acharya)

343. " He in whose heart shines the divine Light of the Living Essence of Consciousness, which object of constant contemplation on the part of Munis, which is distinct from the body, which dwells in the hourts of all living blings, which is pure effulgence by nature which is respleadent with the dazzling lustre of Juana (perfect knowledge) which the object of knowledge in the three worlds, and which is companion of the bighest soints. verdy the being in whose home shines each a Tattes (principle or escence, obtains the Mukla Pada, that is, he atmics to LIBERATION. "

Whitman definitely asserts that there is a haven of rest at the end of the ROAD upon which all souls travel and he speaks of the RENDUZYOUS the Godhood state to which all beings are surely evolving. Wout a glorious message of HOPF he gives up?

My RENDEZVOUS is appointed IT IS CERTAIN.

The Lord will be there and wastill I come on perfect terms, The great Camerado, the lover terms for whom I pine will be THERE.

I tramp a perpetual journey, come listen all !)

My signs are a rain-proof coat, good shees, and a staff out from the wood;

No friend of mine takes his ease, in my chair,

I have no chair, no church, no philosophy,

I lead no man to a dinner-table, library, exchange,

But each man and each woman of you I lead upon a knoll,

My left hand hooking you round the waist,

My right hand pointing to landscapes of continents and the public R()A1),

Not 1, not any one else can travel that ROAD for you, YOU MUST TRAVEL IT FOR YOURSELF.

Thus it is obvious that Whitman has perceived the truth as taught by the Light of Jamism and the paramount factor he places before the student of the Higher Wisdom is the Jama doctrine that the soul is the DOER and is absolutely responsible for the realization of LUBERATION by its own unaded efforts.

He knew of the cosmic-process that has been going on from beginning less Time to endless Eternity and he never desprired of reaching PER-FECTION.

"Liberty, let others despair of you I never despair of you."

"For the great IDEA, the idea of perfect and free individuals,

For THAT, the bard walks in advance, leader of leaders,

The attitude of him CHEERS UP slaves and horrities foreign despots.

Without extinction is LIBERTY, without retrograde is EQUALITY,"

THE GREAT IDEA-LIBERTY—
is not so much liberty and freedom in
connection with the 'things of this
world but the great IDEA of the
SOUL becoming PREE from the bonds
of KARMA; this is the EMANCUPATION he refers to

"And I have dream'd that the purpose and essence of the known life, the transient.

Is to form and decide IDEN STTY for the UNKNOWN life, THE PER-MANENT.

MAHAVIRA has given the self-same MESSAGE OF DELIVERANCE

PAWAKEN YOURSELF TO YOUR EIRTHRIGHTS,

PEACE, POWER, BLISS, IM-MORTALITY,"

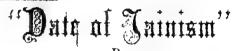
Have we got the DRIFF of Whitman's SACRED BOOK 'Leaves of Grass' which contains the EVER-LIVING RADIANT LIGHT OF TRUTH, if not, HE wishes us to COME AGAIN INTO HIS PRESENCE. ALTHOUGH he left this mundame world THUS the last words at the end of his Book reveal his great love for ALL LIVING BEINGS

"Dear friend whoever you are take this kiss,

I give it especially to you, do not forgen me,

Remember my words, I may again return,

I love you, I depart from materials, I am as one disembodied, triumphant, dead.



" Vir-Balak" (Lord Mahavira's child)

Readers : you are aware of the wonderful ever changing nature of this world. The very Sun which you are accustoned to see rising in the East, is seen setting, before the same sight in the opposite direction. In the same manner many souls are coming in this world every moment while many others are disappearing from this world temporarily. In this same inconstant over-revolving-world where once this religion, the sacred religion of Jains had its wide influence and was besmearing its every corner by its bright powerful rays, Alas ! It is for the origin and development of the same riligion, there are coming out various kinds of guesses, right or wrong with or without proof, with lealousy pride, and based on unsound principles to justify the arguments which are only happy idle surmises,

It is for effacing the dark blot of the wrong unpression made by these surmises upon the minds of the people in general, for the date of this religion whose learned preceptors were travelling from one country to another during their whole life, not for their food, or any selfish motive, not even for the preaching of the religious philosophy only but for debating their religion with that of other religionist and also were preaching a peaceful mission not only for human-being but also for every creature big or small,

that I take up my subject. This is the subject which is least studied and least cared for by modern Western as well as eastern scholars. They have uptill now thought it safe to give out their opinions on this subject indefinitely, not because they are jealous of it, not because that it has its origin mysterious or not because it has been robbed off by many other religious of its worthy and gem-like principles but because that the Jain literature has remained uptill now comporatively little explored and read as * A. Barth openly confesses "a system which as yet is known to us only in a sort of abstract way and in regard to the historic development of which we are absolutely in the dark and us far as yet published it is-poor literature", But since he declared these ideas " a large and ancient literature has been made accessible and furnishes ample materials for the early history of the sect to all who are willing to collect them ". t

Sacred books of the Juins are old avowedly older than the Sanskrit literature which we are accustomed to call classical." There is no reason that why the Western scholars should distrust them as the authentic source of their history." The obvious reason "as II. Jacohi says "is the similarity real or apparent which European scholars have discovered between Jainism & Buddism."

But as he and others have proved, Jainism is the mother of Buddism which had its ascendency so much, while the poor mother lags behind only because she has been wronged and tortured by Brahiminism and such other rivals.

Now I will like to proceed with this small introduction of the subject, supporting my argument with various proofs from most ancient literature as well as relics found at different places in Inflia.

* Rigveda which is regarded us the most ancient manuscript in black and white existing on the surface of this Globe, authanticates by saying:— अईन्दिमिष सायकानि पन्वाईशिक यजतिविश्वरूपम्। अईनिद् दयसे विश्वं मनभुत्रं नवा ओजीयो रहे स्वदस्ति॥

(अईन्) O Lord Arhata ? (विमर्षि) you are armed with (474) a bow (in the form of teaching) (सायकानि) with arrows (of religious precepts for destroying ignorance) and with (निष्टं) ornament (of omniscionce, omnipotency, infinite happiness ele,,) and of Lord Arhata (43) you have acquired (d) that perfect knowledge of Soul in which (विश्व रूपं) the whole universe is reflected. Oh Lord Arhata you (दयसं) protect every (भवभुवं) creature (विश्वं) on this earth and you are (ओजियो नवा अस्ति) recond to none in (रुद्र) conquerthe violent enemies-passion, ing anger etc.

^{*}The religion of India,

i Jacobi.

स्वेद अष्टक २, अ. ७ वर्ग १७.

· ***



·***

आं चनुमाई आतिका तियात्रय मोत्रापुरके वार्षकता जेरे आदिवाजीका पुष. कासका विकास

۸-114 bt #** 88

of

ò H m HI c.

is d n y

y g

r D T

This clearly proves that the prowess of Lord Arhata or Jina was acknowledged by all exclusively.

Also in (यजुर्वेद)* Yajurveda:— बाजस्यनु प्रसव आवभूवेमा च विश्वभुवनानि सर्वेत: ।

सनेमि राजा परियासि विद्वान प्रजां पुष्टिवर्ध-यमानो ॥ अस्पे स्वाहा ।

that Lord Nemnatha (22nd. Tirthan-kara) (নানা) master of perfect knowledge etc. (ন) and (নিয়ান) omniscient (ন) who has explained (সাৰ্থন) in its proper manner (মন্ত্র:) and in its every possible way to knowledge (বাস্থ্য) of one's-self (নিয়ম্বনানি) to every creature on this universe and (by whose merciful precept) (বৃষ্টি) the power of self-knowledge (ব) readily (ব্যাধ্যানা) increases to (মুলা) creatures.

By this verse we can well understand that even Vedantists were careful not to leave out Nemnath off their sight at the time of AM's. Nemnath was as all know the cousin of Kriena.

Going one step further Rigueda

 नेलोक्यप्रतिष्ठितान् चतुर्विशति तीर्थकरान् ऋषभाद्यावर्षमानान्तान् सिद्धान्शरणं प्रपत्ते ।

I take resort to 24 Tirthankars beginning with Risabha and ending with Mahavira honoured in 3 worlds.

From the above-mentioned proofs taken from the world-renouned Vedas as well as from many verses seen at random in different books of different authors as for examples Manu-Smriti,

Nagarpuran, Bhagvat, Ganeshpuran, Prabhaspuran etc., belonging to Vedantism or Brahminism, it can be well deduced that Jainas were respected even by different religionists by offering a prayer in their works. Does this go to prove that Jainas are of recent origin?

This is the opinion of a very learned scholar of Sanskrit and Vedio literature. We should not forget side by side that he is a follower of Braminism and not Jainism.

Even Sankracharya, the greatest rival, the deadliest deathblow to Jainism and the very instrument in persecuting Jainas in the middle ages, boldly confesses that Jainism is prevailing from a very very old time.

Saynacharya writes (of 523 page of तत्वनिर्णयप्रासाद for the meaning of the words).

^{*}His lecture on 30th November 1910 at Swetamber Conference and an article in Kesari of 13th December same year.



"कथाकीपीनोत्तरा संगादीनां वागिनो, यथा-जात रूपथरा निश्रेन्थानिष्यारेग्रहाः ॥ इति संवर्तश्रुतिः ॥

The words underlined have the same significations. Digamber Jaines as often said and proved by different authors such as H. Jacobi, Buhler, Stevenson etc. This is one of the proofs of the autiquity of Jainiam which existed before Saynacharya wrote.

Rev. J. Stevenson says that about the reformation of the old religion, the work of Rishabha Natha the 1st of 24 Tirthankaras is described in the same way by Brahminism and Jainism. He was the first Kshatriya whose eldest son Eherat whose name has been made eternal by baptizing the land of his birth with the name of Bharatvarsa after his name. Thus Jainism and Brahminism depict in Adinath Puran and Bhagvat respectively.

†J. A. Dubots gives an impartial judgement by declairing "Yea! His (Jain's) religion is only true one upon earth, the primitive faith of all mankind.

Now it is worthwhile drawing your attention to the Jaina Stupe at Mathura excavated by the Archalogical department. The Stupe contains Votive tablets and inscriptions dated at the very latest 150 B. C. There is certain amount of evidence to show that it was built about 600 B. C. It

†Rev. J. A. Dubois was a missionary in Mysore and has written a book named "Description of the character, manner and custom of the people of India and of their institutions, religious and civil," printed in 1817.

is therefore the oldest known building in India. There are number of Jaina images found there. The greater number of these images represent Mahavira, the last of the 24 Tirthankaras. There are many other images and relics found in Kankeli Tila near Mathura and in many other places in India. discoveries cast much light at present and more so in future as the further work of the said department will come to light, on the date and antiquity of Jainism. Further if Jainism dates from an early period and is older than Buddha and Mahavira, (whose dates are determined as 500 and 569 B. C. respectively) we may expect to find marks of its antiquity in the character of Jain philosophy. Such a mark is animistic belief that nearly everything is possessed of a soul; not only have plants their own souls but particles of earth, cold water, fire and wind also. Now the ethnology teaches us that the animistic theory forms the basis of many beliefs that have been called the philosophy of savages, If, therefore Jaina ethics are for the greater pare based on primitive animism it must have extensively existed in large classes of Indian society when Jainism was first originated. This must have happened at a very early time when higher forms of religious beliefs and cults had not yet more generally taken hold of the Indian mind."

"Another mark of the antiquity of Jainism has in common with the oldest Brahminical philosophies Vedanta and Bankhya. For at this early epoch in the development of Metaphysics the Category of Quality is not yet clearly and distinctly conceived but it is just evolving as it were out of the Category of substance: things which we recognize as qualities are constantly mixed

up with substances." If Jainism had been of recent date it would almost certainly not have adopted such confused ideas as those just recently expounded.

One more mark of its antiquity is that a soul is absolved (obtaining Nirvana) in the same state of body as at its time of coming into this world or in more plain terms in the State of Nature. This is the stamp—the mark or emblem of Jainism. No other religion of the world than this one has such a mark of originality.

In spite of so many notable things about this religion, I am all in amazeme, not at the absurd theories of some of the Western Scholars and historians. These I am going to summerize briefly here.

William Franklin in his book bearing the title "Researches on tenets and doctrines of Jains and Buddhists etc.," has given vent to his ignorance by drawing the descent of Jainism from Egyptians. Nothing can be more ridioulous than this. 'Scripture miracles' has well found out the origin of the word "Jain" which the author of it says comes from Roman word "Jennus" a diety of Romans. As Vaishnavas are the followers of Vishnu, so from this hypothesis his conclusion is Jains are the followers of Jennus.

Q. E. D.

Such a logical theoram was not even conceived of by the great Pythagoras. But why should we talk of Western Scholars who are thousands of miles away from us, even our neighbours that is Eastern Scholars have such a vast knowledge of Jainism that some of them depict Jainas as Atheist while others go to Buddism for its origin. This is the out-come

of their knowledge about Jainas with whom they and their ancestors lived side by side. If they had even cared to cast a cursory glance at their own scriptures before they hazarded their opinion recklessly, they would have, I dare say, never come to these rediculous conclusions. But I see one reason of their bliss of ignorance, and that is the prejudice, from their child-hood or roused by their precepters. But the latter seems to me the probable one as seen from the sentence-one of the precepts:—

इस्तिना ताडचमानोऽपि न गच्छेक्जैनमस्दिरम्।

These proofs, I think, are quite sufficient to convince any reader whoso-ever he may be that Jainism is a religion for which we shall have to go back thousands of years to determine a definite date of its origin. It will be an unduly long article if I were to give you proofs in detail for those who are inclined to believe that Buddhism is the fountain of Jainism, which is not the case. Above proofs as well as the scriptures of Buddhism itself, and students of Buddhism will bear witness to my statement above mentioned. I will be glad enough to remove any misunderstanding or doubt if there arises any, after the perusal of this pithy article according to my limited scanty knowledge. I am indebted to the authors from whose books I have quoted to embellish my article.

Lastly I wish a time to come when all literary students have their doubts removed and will come forth with their definite opinions to confirm the antiquity of Jainism.

Vande Jinvaram.





WHERE LIES THE TRUE HAPPINESS?

(Rickhab Dass. B. A. Pleader, High Court-Meerut).

In this world every living being longs for Happiness, but Happiness he finds not. Every soul in this mundanc life fears pain and tries his best to award it, but the success is never sure and if it ever comes off, it is partial and temporary. Removal of pain and unhappiness is at the heart of all, but success is just like what one feels when he scratches the itch with his nails. From the tiny insect upto the huge elephant, every one cearches after Sukha (Happiness): from the begger in the streets upto the royal personage in the palaces, all desire Shanti (piece of mind):-but none succeeds in gaining it. Man in poverty might think that the rich are happy, but that is his mere fancy. On deep investigation the rich are found more baset with disquietude and anxiety. If a hermit regards a king bappy, he is surely in error. A crowned head lies ever uneasy' is a pure truism. In short, none in body is truely happy and all are in wait for it. Then what is the True Happiness and how it is to be gained are the most vital questions.

Happiness is the attitude of mind in which one is devoid of all Akulta (uneasiness or anxiety). It is that Self-conditioned and Self-dependent State of Soul where no help from outside is ever needed. It is that self-sufficient condition of Soul where the feeling or idea of dependence is totally non-existent. It is that Perfect Status of Soul where Systemtrata (independence)

holds supreme and where soul is free from all wants and sufferings, feels independent of all extraneous help and has no lack or deficiency to depend upon others. Self-control on spiritual plane is a true clue to the unbounded Happiness of soul. Laws with regard to happiness in nature are the same on both the physical as well as the spiritual planes. Even in this physical world individuals, castes and communities, are happy in proportion as they are blessed with freedom of action. An individual who is hampered in his movements on every step, feels gloomy and sullen at heart, A caste or community which is not given sufficient treedom in action, is But all ever discontented. worldly freedoms are pseudo-freedoms. These freedoms are not real and unalloyed, there is always something within which mare their excellence. Why so? Because there is a foreign element-matter or material Karmaacting within the domain of Spirit. True and perfect Happiness reigns supreme only when Atma (Spirit or Soul) forces away all foreign matter from within itself and governs self by pure self. When Atma drives away all passions and affections and consequently the Matter-Karma from self. there remains nothing but Pure and Perfect Conscious Self holding sway over the soul, that is, Self governs the Self and Supreme Bliss is the result.

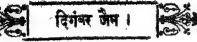
This All happy Self-control is obtainable only when soul on the physical plane begins to think that all its destinies are determined by none other than Self. So long as the embodied soul relies on every external force for

its movement so long as it regards its comforts and pains as the result of the pleasure and wrath of external gods and godesses, it is doomed to remain under missry. If it takes the trouble to unravel the mystery, it will surely find that all the external forces, all the Gods and Godesses in causing it pains and pleasures, act impelled by it own Karmic forces at its own instigation.

Self-control in religion is Spiritual Bliss. So long as the teachings of religion insist that the pleasures and pains of the individual souls are determined and governed by the Gods and Godesses or by an External Will or by an Extracosmic Fersonal God, it can hardly be called solf-control-in-religion. Self-control-inreligion comes in when religion ascends high to preach that destiny of Atma (the self) is not in the hands of any other power or powers, but lies within its own grasp, This sublime doctrine frees the self from the traminels of extraneity and infuses the spirit of self-awakening and self-consciousness therein. By the help of this self-elevating religious principle, Atms (the soul) gets rid of the habit of dependence and begins to realize its innate independent nature. The Soul while impressed with this religious truth, is disillusioned of the so-called absolute differentiation between its Own Self and God, becomes confirmed in the belief that the Real and Essential nature of all the souls is nothing but the Omniscient Godhead and that the True Happiness lies in the attainment of that Pure, Perfect and Omniscient Status of Soul.

The above observations relate to that Pure and Uoslloyed Happiness which is an Ideal for all the souls to try to reach to, but whether any happiness which though not Perfect and Pure, but having a tinge of the Ideal is obtainable in the practical domestic life of man. The answer is surely in the affirmative. A man who understands the arue nature of soul, has faith in and knowledge of the Self and not-self, and proceeds to act according to that Faith and Knowledge, is sure to possess peace of mind and calmness. A man who respects and worships that Pure, Perfect Omniscient Status of Soul which is identical in each and every soul, or Those High Ones in Whom that Divine Status had become manifest; who shows compassion to and helps, as far as he can. all living beinge; and who gives Dana (charity) to the deserved and needy, such a man will unmistakeably be cheerful and happy in his life. A man who utters true and harmless words, does not snatch others' belongings, views all the females other than his own wedded wife as his mothers, sisters and daughters according to their respective ages, and who does not long for worldly possessions, will certainly find joy and delight in his worldly career. Again an individual who is for earnestly working Per-Upkar (good of others), working for the physical, moral, itellectual, and spiritual development of his relations, his castemen, such an individual can not fail to find ease and falicity in his heart. In short, good thoughts, words and deeds exercised when coupled with a true discrimination between Self and not-self is sure to lead practical workers to Happiness and Bliss.





Jainism.

A practical religion. for all times, all people, and all climes.

Baboo Ajitprasadji, M. A. LL. B. LUCKNOW.

All religions profess toleration but ourious and regretable though it may be, it is nevertheless a historical fact that in the name of religion, nations have fought against nations, and in the name of religion the most abominable atrocities have been cominitted by those in power against independent thinkers, who had the courage of their convictions. The death of Socrates and the murder of Galileo, may be incidents of past ages, but the wars of the crusade and the terrors of the inquisition are not matters of ancient history. The pillage of Somnath, and the murder of Daya Shikoh, the slaughter of Hakikatrai, and the assasination of Pandit Lekh Ram are facts of Modern History. The cow-killing Nots, and the breaking of heads over the sounding of the conch, are the most lamentable sights of every day occurrence. The Hindu-Mahomedan question is vexing the minds of the hest well-wishers of the country, is being discussed in the Councils of Government, has now found place on the Statute Book, and is a constant source of serious irritation.

But for such serious disturbances in the internal economy of our civic affairs, which are based on the ground of religion, we would have faced the miseries of famine caused by drought in one Province, and by floods in another, the ravages of cholera and plague, and the other ills which besiege us, with composure and fortitude. As in is, we are helpless and bewildered.

The mission and the purpose of true religion should be to root out all religious differences, and to form a neelus of Universal Brotherhood. Differences of opinion are inevitable, when there is liberty of thought, and the logical and thinking capacities of human minds are ever varying with each individual. Jainism teaches us to discuss all differences of opinion in a spirit of broad toleration. While expecting tolerance from others in respect of our views let us be telerant of what others think and believe in. Let there he a constructive discussion, and not a destructive quarrel. Religion should be a unifying force, and not a dividing factor.

Jainism is an all embracing religion. It reconciles the seeming paradoxus, adjurring theories of all other systems of thought, and welds them togother into a consistent and harmonious whole. It is thus truely as its other name Syadvad, implies, a science of religion which enfolds every other system within itself, and says to each and every theory and doctrine, " It may be so. " The seeming inconsistencies are all explained by the adoption of varying points of view.

Jainism is the religion professed by Jainas. Jaina means a follower of Jina, which word again otymologically signifies, a conquerer, a victor, a Lord triumphant.

The Jainas believe in the existance of soul and matter, in the transmigration of soul caused on account of its combination with matter, and in the final and absolute emancipation of the soul, when its real attributes of absolute knowledge, absolute bliss, and absolute power fully shine forth. The term Jing therefore conveys the idea of a soul which has freed itself from all

contact with matter, and has conquered over Birth, and death, and other limitations of its supreme attributes. Such pure and perfected souls, and each and every one of them, are instances of the highest possible evolution at-They are perfoot Ishwaras, and therefore worthy of adoration and worship. Each of them forms the Ideal, which the devout Jaina desires and The number of strives to attain to. such Emancipated and Perfected Souls is infinite; and in this view a Jaina may be called a Polytheist or a worshipper of gods without number. Their astributes however are identical, and the Jaina may, again, in the light of this consideration be called a Monobliefst, or a believer in one God. The one includes the many, and the many are one and the same.

The Emancipated, Pure, Perfected soul, is not, however, disturbed by a management of the affairs of the Cosmos, has to listen to no appeals and prayers by persons one calling forth Divine vengeance against the other, and visits none by Divine wrath, is neither the tool of one to harass another, or the instrument of destruction working at the invocation of another to the prejudice of his enemy, is neither pleased with its votaries nor displeased with those who ignore or deny His Existence. He is above all want and care, beyond all frolic and fun. He is neither the punisher of the wicked, nor the rewarder of the good, neither the recorder of human actions, nor the dispenser of justice between man and man.

The Jaina does not believe in the theory of creation. According to him the universe as a whole has had no beginning and will have no end...All that happens is only a change. Catachysm, Pralaya, or Kayamat is not destruction or annihilation, but a vast and comparatively speaking a sudden change. The Jainas do not believe in a Redeemer, or a Mediator, nor do

they recognise the necessity of a Dispenser of Justice for reminding or punishing the mental or physical movements of living beings in the Universe. The law of Karma is according to the Jaiuas, complete, unerring, and selfacting, Every living being, is self-responsible for what he does and what he thinks, is the complete master of his own destiny; which no agency outeide his ownself can alter. In this sense a Jaina is called by some an athiest, and by others Estalist. But his so-called athiesm is not Secularism. Agnosticism, Postivism, or Free-thought. His fatalism has nothing in common with Stoicism. He does not subscribe to a fixed unatterable course of things independent of any controlling cause. His fate is of his own making, and he believes that it is always in his power to alter or modify the decrees of fate.

Just as the number of Emencipated Perfect Souls is infinite, so is the number of embodied souls coursing in various stages of evolution in the universe. With an infinity on both sides, it is clear that the universe will never be exhausted, and the above of Peace where the emancipated Souls enjoy perfeet Bliss will never be too full. The course of Evolution has gone on unchecked and will continue unimpeded. There never was a beginning and there never shall be end to it. The embodied souls again were never born or created. They have existed in the embodied condition from Eternity, but each can work out its own redemption or Emancipation.

The second constituent of the universe is matter. The two, soul and matter constitute the Universe. Matter is also, according to the Jainas, Eternal and Uncreate. It is continually and constantly changing form, but as matter it is indestructible. All the elements of Chemistry are different forms of the one physical element-Matter.

Again, according to the Jaina belief, there never was a time when soul and matter combined for the first time, to form the embedied soul.

The Embodied soul also, infinite in number have existed from eternity. Their combination has had no beginning, but is capable of being terminated.

This termsnation is called Mokshafinal Emancipation, Moksha or Nirvana according to the Jainas, is not, what commonly supposed to be extinction, or annihilation of the soul. It is really the positive attainment of God-head, the full enjoyment of Infinite Power. The mukta-jiva the Emancipited soul has accomplished all what could possibly be accomplished and has nothing further to schieve. He has reached the the highest goal. He sees all, and knows all. His is an activity in repose, which is not visible to one situated on the physical plane, just as the swift of the whirling top is not perceptible when it is revolving as its highest speed. The intermediate stages of Evolution between the least evolved ego the Nigoda Jiva, and the Siddha, or the emancipated spirit, are caused by conditions denoted by the terms Asrava Samvara, and Nirjara.

The low conditions of the embodied soul are due to the preponderating effect of Karmic matter existing in combination with it. The karmas are very rarefied particles of matter which have an affinity with the soul when it is under the excitant influence of passions and desires. When the soul affected by passions and is thus desires a reverberation sets in the particles of karmic matter are drawn in to it. This is termed Asrava, काथ वाङ्गनः कर्म योगः स आभवः and its combination with the soul is called Bandha. स कवायत्वात् जीवः कर्मणो योग्यान् पुरकानाइके स वन्धः

The prevention of the influx of Karmic matter is known as Samvara. The unloosening or disintegrating of this combination is called Nirjara, and the complete purification of the soul is termed Moksha or Nirvana. These, are the 7 principles which explain all the states and conditions of the soul from its lowest form 80 emancipation. The ways and means by which the Evolution of the soul may be helped and hastened are given at great length in the Jain Shravakachars scriptures which lay down the daily duties of the Jaimas.

Jainism is thus pre-eminently a practical religion, a religion which can be conveniently and consistently with due regard to temporal advancement be lived by every householder, no matter how he happens to be situated and it is pre-eminently a religion of the widest possible toleration. The principle of universal brotherhood is limited by some religions to humanity alone. Jainism preaches the universal Brotherhood of all living beings-Saint Amagati in his first verse of " Meditation collections " called सामायक पाट prays as follows.

सत्वेषु भैत्री गुणिषु प्रमोदं हिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्यं माध्यस्यभावं धिपरीतकृतौ, सदा ममात्मा विद्यातः देव ॥

Oh, Lord, make myself such that I may have love for all beings, pleasure in the company of learned men, unstinted sympathy for those in pain, and tolerance towards those in pain, and tolerance towards those perversely inclined.

Jainism is therefore the most tolerant, the most practical, and the only universal religion adapted to all states and conditions of Beings, of all climes and of all ages, and in all stages of evolution.

Ajitashram, Lucknow. Vir-Nirvana day 2443. } Ajitprasada



(ले०-मा० दीपचन्हजी परवार, नरसिंहपुर)

रक्षार तालके तटपर बेठे हुए जय-चंद्रजी सामनेकी पहाड़ीका टश्य देख रहे थे। पानी रिमझिम रिमझिम बरस रहा था। कभी कभी हवाके बेगसे जोरका झला आ जाता था तो नीव वंगंस पहनी हुई मेवकी बुँदोंसे सारा पहाड़ धुआँधार हो जाता था, एकाएक झाड़ व पापाण विद्यमसे हो जाते थ और झला कम होते ही वे पनः दृष्टि-गोचर होने लगते । अहा ! यह प्राकृतिक विचित्र शोभा देखते ही बनती थी। अपनी स्वाभाविक मृद्रलताको लिये हुए ये बृक्ष पबनके झकोरेसे हिलते हुए अत्यन्त सुहावने लगते थे, और उनसे स्पर्श करके निकली हुई सुगन्धित बायु चित्तको चंचल बना देती थी । इस पहाडीके मध्य नैपालवाले राजाका मकान ऐसा माछम होता था, जैसे नील गगनके मध्य चन्द्रमा शोभा देता है। तालाव भी पूर्ण जलरूपी ऐश्वर्यको प्राप्त कर मदोन्मत्त हो रहा था। यदि स्थानीय म्युनि-सिपालटी इस तालावमेंसे मोरियाँ (नहरें) न निकलवाती तो यह तालाव भी दृष्ट राजाओंकी नाई अपनी प्रजा (नगरानिवासियाँ) को अत्यन्त कष्ट पहुँचाता, जैसे कि गंगा, यमुना, चम्बल आदि नदियोंने अपनी बाइसे तटवर्ती प्रामेंको प्रस िलया है। सत्य है यदि समुद्रमें वड़वानल न होती तो न जाने वह अपनी बाइसे इस प्रथ्नीको कवका मक्षण कर गया होता। इसीलिए संसारके प्राणियोंको अपनी २ मर्यादा नियत कर लेना आवश्यक है, नहीं तो यह मन-रूपी सागर अपनी विस्तीर्णतासे एक लोकको क्या कई लोकोंको भी प्रसनेको मुँह फैलाये रहता है। इत्यादि।

शोभा देखते २ जयचंद्रके चित्तका भाव बदल गया। वे सोचने लगे,-''बार दिनकी चाँदनी फेर अँधेरी रात" अर्थात् मैं जिस शोभापर मुग्ध हो रहा हूँ, वह सब शोभा अब बहुत ही शीघ बिलुत हो जायगी क्योंकि यह दशहराका अवसर है। इस अवसरपर जैसे बेचारे निर्दोष पद्य भैंसे और वकरे आदि दीन जीव निर्देशी पुरुषों-द्वारा ' देववर्टि ' के नामसे इन्हींकी जिहा लंपटताके हेतु क्षणमात्रमं वध किये जाते हैं, कौन जानता था कि यह खेलता कृदता मैमना व पाड़ा अपने मा, भाई आदिसे विधकद्वारा शीघ्र ही हनन किया जाकर सदाके लिए विलग किया जायगा ? इसी प्रकार अब शीतकालरूपी विधिकद्वारा इस वर्षाकी भी विल दी जावेगी। संसारका कैसा विचित्र नियम है कि जब जब किमीकी ओर अन्याय वह जाता है, तब तब उनको मान मर्दन करनेवाला कोई न कोई व्यक्ति विशेष अवतार केता है। और अन्यायको



दूर करता है । " अति सर्वत्र गर्हिता " के अनुसार जैसे इस वर्षाका पराजय शीत ऋतुद्वारा होगा वैसे ही शीत ऋतुको मर्दन
करनेवाली मीष्म ऋतु भी आवेगी। अतः
थोड़े समयके लिए पुण्यादयेभे शाप्त यह
ऐश्चर्य व्यर्थ अभिमानमें आकर अन्यायपूर्वक
स्रोदना उचित नहीं कहा है:--

''दिन दश आदर पायके, करले आप बसान। जब लगकाक श्राद्ध पखा तब लगतुझ सन्मान॥

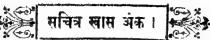
जयचन्द्र इसी प्रकारके विचारों में निमम बैठे थे कि इनके परम मित्र टेकचं- द्रजी कटरा बाजारसे कुछ फलफलादि लेकर आ ही तो पहुँचे और चटसे बोल उठे-वाह क्या कहना है! घन्य है योगिराज! मला यह भीकोई ध्यानका स्थान है, यहां तो बक-ध्यान ही हो सकता है। साँझ हो गई, ५ बने हैं, व्याल्का समय हो गया। घरमें खियों को भी भोजन करना है। अब तो ध्यान छोड़ो। टेकचंद्रके अगणित शब्द कर्णगोचर होते हुए भी जयचंद्रने केवल व्यालकी ही बात समझी और उटकर बोले-अहहा सिंबई जी बातार हो आये! बहुन जन्दी की, अभी तो बड़ा दिन हैं।

टेकचन्द्र-हैं ! दिन है /अजी, ५ बज गये ।

जयचंद्र — १ वज गये? अच्छा भाई चलो, झट व्याख कर हैं ताकि बेचारी स्वियोंको भी छुटकारा मिले ताकि वे भी शास्त्रसभोंन सम्मिलित हो सकें।

दोनों डेरेपर आये और व्याल करके निश्चित हो संध्या करने लगे। पश्चात मध्याकी शास्त्रसभामें पहुँचे। वहाँ 'महाबीर-पुराण'की वचनिका हो रही थी। उसमें जब निवाणका प्रकरण आया तब टेकचंद्रजी पूछने लगे:- क्यों भैया, दिवाली जब कि पवित्र पर्व है, तब इस दिन जुआ आदि अनर्थ क्यों होते हैं, और इस पर्वको जैन व अनैन सभी मानते हैं तथा लक्ष्मी पूजन व वही पूजन करते हैं, अनेक प्रकारके फल फूल एकत्र करते. दिया जलाते, घर पुतवाते और बड़ी धूमधाम करते हैं। इसका कारण क्या ? क्या यह पर्व अजैन वैष्णवींका है ! क्योंकि इस समय जैनी व जैनेतरीकी कियाओं में कुछ भी अन्तर नहीं दीखना है। इत्यादि।

जयचंद्र—भैया, निस्सन्देह यह पवित्र पर्व जेनियोंका है, क्योंकि कार्तिक कृष्ण (गुजरानी आधिन कृष्ण) अमावस्याको सूर्योद्यके पहिले ही अर्थात् रात्रिके पिछले समयमें अंतिम भट्टारक परम देवाधिदेव महावीर जिनको वर्द्धमान, बीर, अतिवीर व सन्मति भी कहने हैं, तीर्थंकर पावापुरी (विहार पांत)के उद्यानसे समस्त कमोंको नाश करके स्वाधीन सुख (मोक्ष) को प्राप्त हुए हैं, और उसी समय श्रीगौतमस्वामी जो कि महावीर स्वामिक प्रथम गण-धर थे और जिन्हें गणपति, गणेश, गजानन आदिके नामसे पुकारते हैं, को घाति कमोंके क्षीण हो जानेसे केवलज्ञान प्राप्त हुआ है।



ये दो महान् उत्सव इन्द्रादि देवों व उस समयके समस्त बड़े बड़े राजाओंद्रारा मनाये गये हैं। यद्यपि और भी तीर्थंकरोंके निर्वाण उत्सव भी देवां व नरेन्द्रांद्वारा मनाय गये हैं, तथापि इस अवसरको अभी केवल २४४२ वर्ष ही हुए हैं, और इसके पश्चात फिर कोई ऐसा महान् अवसर व उत्सव नहीं हुआ है, इसीसे अब तक लोकमें इसका पूर्णतया प्रचार है। जिस अवसर व उत्सवमें राजा सम्मिछित होवें, उसमें पजा नियमसे सम्मिलित होता ही है. और जिसमें भारतवर्षकी प्रजा तो राजाओंको देवता मानती है। इसलिए जिस उत्सवको इन्द्रीने, नरेन्द्रीने किया-मनाया, उसे जन साधारण मनावें इसमें आश्चर्य ही क्या है ?

फिर दूसरी बात यह है कि महावीर-स्वामीका उपदेश. किसी व्यक्ति विशेषके लिए तो था ही नहीं; किन्तु जीवमात्रके लिए था, उन्होंने जीवमात्रको अहिंसाका उपदेश दिया था, सबके समान अधिकार बताये थे, न उनको किसीसे राग भाव था. न द्वेष भाव था। जो कुछ उपदेश किया था, वह उनकी आज्ञा व आशीर्वाद न था, किन्तु वस्तु (संसार)का स्वरूप जैसा था व जैसा उनके अनुभवमें आया था, वैसा ही वर्णन किया था। वस्तुके स्वरूपको अर्थात् स्वभावको प्राप्त होना ही धर्भ है। और जब जीव निज स्वस्हपको पाप्त होता है तभी सुखी हो सकता है।

इसलिए जिस महात्माने जीवमात्रको कल्याणका मार्ग बताया, और बताया ही नहीं, किन्तु उसपर स्वयम् चलकर आदर्श दिखाया, उस परोपकारी महापुरुषका कौन ऐसा कृतम होया जो आदर न करेगा ? महावीर भगवानका कोई निजी मत तो था ही नहीं, किन्तु उनका वही मत, वहीं उपदेश, वही धर्म और वही मार्ग था जो कि उनसे पहिले २२ तीर्थंकर तथा अनेक महात्माओंका था। इसलिए यह पर्व लोकमान्य हुआ है। वास्तवमें जैनधर्म किसी विशेष जाति व व्यक्तिका धर्म नहीं है, किन्तु सार्व- जीवमात्रका धर्म है क्योंकि उसमें जीवमात्रकी अहिंसाका उपदेश है।

दिवालीको घर आदि प्तवाते व स्वच्छता कराते हैं। इसका कारण यह है कि महावीर भगवानकी आत्मासे सम्पूर्ण कर्ममल दृर हुए, उनका आत्मा **पवित्र** हुआ । गौतमस्वामीके केवलज्ञानका प्रकाश हुआ । इससे यह भावना करके कि जैसे उनका आत्मा निर्मल हुआ है, हमारा भी हो तथा जो समवसरण रचनेके लिए कुबेरने एरवीको स्वच्छव सम करके विविध प्रकारकी रचना की. उसी प्रकार घरोंको स्वच्छ करके सजाते हैं। समवसरणमें दिन रातका भेद नहीं रहता है और उसके आसपास १०० योजन प्रमाग मू।मेमें दुर्भिक्ष व मरी आदि रोग नहीं होते हैं तथा छहों ऋतुके फल फूल फल और फुड जाते हैं, नती सरोवरादि भर जाते हैं, इसीलिए लोग

उस दिन इतने अधिक दीपक जलाते हैं ताकि कहीं भी अन्धकार न रह जाय और पुजनके समय जितने प्रकारके फल फल मिल सकते हैं ले आते हैं। धान नया अनाज होता है इसलिए उसकी लाही (लावा) भी बना लाते हैं । देवोंने निर्वाण और केवलज्ञान कल्याणकका उत्सव किया था सो निर्वाण लक्ष्मीके बद्छे रूपया आदि हिरण्य सुवर्ण, और ज्ञान सरस्वती जिनवाणीके बदले बही खाता रोकड आदिकी पूजा कर छेते हैं। महान् पर्व होनेस जागरण भजन आदि करना चाहिए सी अज्ञानी व व्यसनासक्त लोगोंने भजन स्वाध्यायादि जो जागरणमं कर्तव्य था, न करके मनोरंजनार्थ यह नीचातिनीच कृत्य जुआ खेलना पारंभ कर दिया है। इस पकार इसका रूपान्तर हो गया है और लोगोंने अनेक प्रकारकी मनगढ़न्त कल्पनाएं कर ली हैं।

यदि थोड़ी देरने लिए यह मान लिया जाय कि यह पर्व कुछ चीज नहीं है तो भी उक्त प्रथा लाभकारी है, क्योंकि चार मास पावस कालमें जो शीतसे घर गिर जाता है, मेला हो जाता है जिससे अनेक प्रकारकी व्याधियाँ, रोगादि होनेकी संभावना है, सो इस प्रकारकी स्वच्छता करनेसे वायु पित्र होती है, मनकी भी ग्लान हूर होती है. रोगोंकी शंका कम हो जाती है। और आधिन व कार्तिकके प्रारंभमें पित्रका फेरफार होता है, इसलिए इन दिनोंमें पश्य रखना आवश्यक है, सो ये सब नये फल दिवा-लीके बाद पूजन करके खाते हैं, जब कि पित्त यथास्थान स्थित हो जाता है और ये फल भी पक जाते हैं। किसी प्रकारके रोगोंकी संभावना नहीं रहती है।

इन्हीं दिनों में प्रायः समस्त भारतके हिन्दू धर्मावलम्बी व्यापारीगण अपनी २ दुकानोंकी झड़ती मिलाकर आंकड़ा बनाते और हानि लाभका हिसाब निकालते हैं तथा दिवालीके बाद नया साल, नया खाता चाल करते हैं। इत्यादि।

पोडशकारण भावनाए तर्थिकर प्रकृतिके आश्रवका कारण हैं, इसीलिए चौक प्रकर सोलह दिया पजारते हैं। बीचके पाँच दिया पंच परमेष्टीके चोतक हैं। चौकका प्रना समवसरणके धृलिसाल कोट आदिको बताता है।

टेकचन्द्र - यह तो समझे. परंतु शंका एक नई उत्पन्न हो। गई कि पावापुरीके उद्यानमें प्रभु मोक्ष गये हैं ऐसा आपने बता-या, लेकिन सब लोग पावापुरीके तालावसे हुआ बताते हैं और वर्तमानमें स्थान ताला-व ही भाना जाता है।

जयचंद्र—भाई, ऐसी बातों में बुद्धिसे थोड़ा काम लेना पड़ता है। सुनो, कहीं कोई भी जेन साधु पानीमें घुसकर ध्यान करता सुना गया है १ या जैनधर्ममें पानीमें ध्यान करना सराहा है १ यह बात तो वैसी ही है जैसी कि पंचामि तपना, नख बढ़ाना, जूड़ा रखना, भस्मी लगाना,

इत्यादि । और जैनमतानुसार ये सब काय क्रेशरूप होनेपर भी कुतप कहे हैं। यह बात दसरी है कि ध्यानमें निमन्न साधुको कोई दृष्ट नर सर खगादि उठाकर पानीम डाल देवे और उसे अंत समय केवलज्ञान होकर मोक्ष हो जावे. या नदी सरोवरादिके तटपर ध्यान करते समय अचानक बाढ़ आजारेमें कोई वह जावे । क्योंकि जलमें बैठनेसे प्रथम तो। जनकायी जीवांकी विरा-धना हाली है. फिर उसमें रहनवाली जसी-को त्राम पहुंचना है और अस्थिर स्थान व बाघाओंके कारण ध्यानकी स्थिरना सी नहीं हो सकती है, इसलिए पानीने बैठकर जब साप है। ध्यान नहीं कर सकते हैं तब मला तीर्थकर देव कैसे कर सकते हैं है परंतु बात यथार्थमें यों है कि जब प्रभुके। वहां मोक्षपद प्राप्त हुआ, तब बचे हुए नख और केशोंको मिलाकर इन्द्रने प्रमुका मायामयी बारीर बनाया और अग्निकमारके इन्द्रने नमस्कार किया, जिसके मुकटसे अग्नि प्रकट हुई और शरीर मस्म हुआ ।

इस भम्मीको इन्द्रादि देवी, नर नरेन्द्री और खग खगेन्द्रीने अपने २ मस्तकपर नदाया। वहांपर भीड़ बहुत अधिक थी, थोड़ी थोड़ी भस्म लगान लगाते वहाँकी भस्म तो कौन कहे परंतु एक बड़ा गहरा गड़ा हो गया और बरसातमें वहाँ पानी भर गया। बस तालाव बन गया। अभी केवल दो ढाई हजार वर्ष ही हुए हैं इसीसे अभी तक वह तालाव बना हुआ है। यदि अधिक समय हुआ होता तो कदाचित् पुर भी गया होता, जैसा कि प्रायः और २ नीर्थंकरोंका हुआ है व यह तालाव भी दिनों दिन पुरता जाता है। और भाई, शास्त्रोंमें तो कहीं तालावका वर्णन जाननेमें आया नहीं।

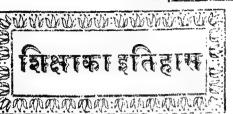
टेकचंद्र- मैया, यही ठीक जँचता है। अच्छा में समझ गया। यथार्थमें दिवाली पर्व जैनियांका है। इसपर अच्छी तरहसे यहाँ वीरम्बामीका निर्वाण कल्याणक और गातमस्त्रामीका ज्ञानकल्याणकका पूजन करना चाहिए। इसमें जो अज्ञानवश कुछ निश्यात्व व मृलें उत्पन्न हो गई हैं उन्हें दूर कर ब्रुटियोंको पूर्ण करना चाहिए। अच्छा भाई, अब तो १० बज गये, भजन कहिए—

पट, कार्तिककी चालमें।

अति उन्कृष्ट महान् जगतमे पर्व दिवाली जान ॥देक॥
मगध देश पाशापुर वतमे, महावीर भगवान् ।
कार्तिक कृष्ण अमावसके दिन, पर पायो निर्वाण॥
जगतमे पर्व दिवाली जान, अति उत्कृष्ट महान् ॥१॥
ताही दिन श्रीगीतमस्यामी, पायो केवलकान ।
तिन उपदेश सुनो जिन जीवन, कीनो निज कल्याण॥
जगतमें पर्व दिवाली जान, अति उत्कृष्ट महान् ॥२॥
थे हो उत्तम अवसर लख् सुर, नर खग उच्छ्य हान ।
दीप दिवाली प्रगटी जगमें, सब जीवन सुख दान ॥
जगतमें पर्व दिवाली जान, अति उत्कृष्ट महान् ॥३॥

इस प्रकार पद कहकर सब लोग यथास्थान विश्राम करनेको गये और मैं भी अब विश्राम लेता हूँ । जुहारु ।





(लेखक सास्तर छोटेलाल जैन-खुर्ह) विश्वभरकी जातियाँ थी, जिन नमय अज्ञानमें । उस समय भारत मुशिक्षित, पूर्ण था विज्ञानमें ॥ १ न्याय शासन भी सुरक्षित, न्यायशाला भूपमें । शिष्टता औं सम्यतामें, था नमुत्रातिरूपमें ॥ १ आयं उत्तम कार्य करते, चीर औं सम्भीप थे । भीरूस, पीरुष, विपुल धनसे, वे बहुत वर्ग्वार थे ॥ ३ आज उनकी कृति समुज्ञाल वर्ग्यहीं भारत मही । "इतिहास शिक्षाका" हमें, यह सुचना देता सही ॥ ४

शिक्षा शब्दका शब्दार्थ ओर इतिहासकी परिभाषाः—

"शिक्षां यह सन्द्र संस्कृत सामाका है और शिक्ष धानुसे जिसके अर्थ सीखना, सिख्ताना, सीखा जाना, वा सिखाया जाना होते हैं, पना है। अतः जानकी वृद्धि तथा विकासको "शिक्षां" कहने हैं।

किसी वस्तु, विषय वा बागके समय, सामयिक घटना, कारण, कार्य और पश्चिमनके यितेचनाएण यथार्थ प्रमाणीद्वारा निर्णायक रहेग्यन केलोकी 'कितिहास '' कहते हैं।

शिक्षाक दो भदः-

एक नैसर्गिक और इसरी निर्मात्तक दिन्द्रा । प्रकृतिहारा आप ही आप जानकी बुद्धि और विकासका होगा निर्मागक । शक्षा है और विकास पढ़ना नैमित्तिक शिक्षा है ।

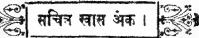
संसारकी शिक्षाका समयः—

संसारकी शत्यावस्था पहनेरे यही जात होता है कि मनुष्य और पश्चादि प्राणी पहिले समानार्यास्थत थे, अर्थात् सब ही एक दशामें स्थित थे। परंत मनुष्य नैसर्गिक शिक्षाके द्वारा अपने हो ३ । प्राणियोक्ता दशासे भिन्न करने उसा और यह बहुत समय पश्चान इतर प्राणियोंने विलकुल भिन्न हो गया । अब यही देखना है कि एक या अनेक मनुष्योंने, एक साथ या क्रमश्च, किस देशमे, पहिले पहिल नैसर्गिक शिक्षाका उदय हुआ और फिर नैमिक्तिक शिक्षाका आविभिन्न क्य हुआ !

यह बात साधारण नहीं किन्तु बडी गंत्रपणासाध्य चौर गर्सार है क्योंकि इसके कोई प्रमाण आजतक यशायं और स्पष्ट नहीं मिलते । पहत अनुभव, भोग और परीक्षाय आर्जनक इतिहासजीको मनुष्य-स्टिके समयका मन इंस्वीरी ५ हजार वर्ष पूर्वका ही पता त्या था, परत इसकी भित्ति बंद मशालेसे बन ही रही की कि गणित निद्या और भगभे विद्याके विशासीने बीचमें ही इसकी नीवमें दीमक उपन दी और अब पर मणाना मी तेकाम होने लगा है। पना सराय-साधिका प्रमा करोही ना अहेका प्रमाणित होता जाता है। अस्त । शिक्षांके इतिहासीर विषयम हो यहा करा जा समना हा का जनमें मन्यनम् 🖔 ताम हा मराध्योभे माजारण शिक्षा तो अवध्य है। रही रच्च शिक्षा सी बह क्रमांक्काण सिवानके अवसार रुम्य २ पर होती गई भीर घरता मी गई है। इसलिए यह फदापि नहीं क. (जा सकता है कि असूक डेश सदासे सुखे ही था) या जम्क विषय उत्पन्न वेशवामी जानने भी स व उरहाने दूसर अस्क देशींस सीम्या ते। यशीप विसी गमय या दल समय कोड यह जिल्ली विश्लो कुल सील भी ले ता उस यह साम्यन नहा समाया ा सकता कि वह सर्वि इस विषयम असमित ट और इसी सी बोई विद्वान ावपर्यक अलक्षण वनी उत्पन्न दुण है। समयका निर्णय अनाः और सर्व भनुष्योत्सा ज्ञान व प्रकृतिका एकमः होना नहीं वन सफता ।

र्धाटले पहिले कान देश शिक्षित हुआ ?

मसुष्योको नीमिनिक शिक्षाके विषयमे विद्वर सम्बद्धांका अलग २ मतसेद हैं। कोई कहते है कि मित्र देश सबसे प्राचीन और पहिले शिक्षित और सस्य हुआ। इसकी इस बातको प्रमाणित करनेवाली बड़ी े केची, हट और सब्य इमारते, मृतिया और चित्रका॰



रियाँ जैसी वहाँ है वैसी संसारमें अब तक और किसी देशमें नहीं पाई गई। एक कहते है कि श्रीस देश ही शिक्षा और सभ्यतामें मबसे प्रथम प्रधान हुआ और सन इंस्वीसे प्राय: तीन हजार तर्षीके प्रमाण आजतक भी प्रस्तृत है। इसर फारन असीरिया आदि देशोंको ही इसमें अप्रेमर बतलाते हैं। स्वय भारतीय प्राणीय तथा अन्यान्य प्रमाणीये चीनकी शिक्षा और सस्यती प्राचीन निश्चित होती है ।

इन सब बातोका मिलान करनेपर भी यह निश्चित नहीं होता कि कोनमा मत स्थिर किया जाने । क्योंकि तब प्रमाणीका संकलन किया जाता है, तब बहुं चलेमि अपूर्णताएं पाई जाती है। जैसे कि सन इंस्कीरी ५५०० वर्ष पहिले सिम देशके संस्थाननारिक्ष गताने जब सारतपर चटाई की थी तब उसरे भारतीयों के असीतर ' पर देंगे । यह विचारणीय बात है कि पश्चियो तकके मिरोपर पर नहीं होते तो मनप्रांवे विशेष रेशमें ही सकते हैं। वा ! मिनवामी जिल्लित होते तो उन प्रशेष्टा शहर र अनुमान और प्रमाण नयो न करते ?

गा देश बहुत पुराने काळमें भागांशक्षित और सभ्य दवा हो यां: जमात्रकाश सिकालंक अवार फिर्मा समार उसकी दिखा और अस्यवाकी घटती भी ही जाय ती भी वह इतटा असम्ब और आंशिक्त नहीं हो सकता जितने कि मिलवासा हत्या सराम प्रांसद्ध है। इसका पता मनवसान-इतिहासो है देखनेंगे त्याता है।

भारतीय शिक्षाकी मार्थामकता और प्रधानता-

इत्यादि अनेक बातांसे और भी अपर्णतां पाइ जाती है। जो कुछ भी हो, विद्वानीके मतको भ खण्डन नहीं यस्ता, ।कन्त् इतना अवस्य कहंगा कि अब यह निर्विवाद प्रमाणित और सिद्ध हो रहा है कि मनुष्य ससारम किसीने पहिले ही पहिले शिक्षामें यो: सिर उँचा किया तो रेवट भार-तत्रधेने ही।

यद्यपि विद्वानोका मत हैं कि लिपि विवीठोन अर्थात् वाव्यसे भारतमे आई। ज्योतिर्विद्या युनानसे, चित्रकारी और अध्यात्म ज्ञान मिश्रस यहाँ आया । तथापि यहाँकी शिक्षाके थोंड ही नमूनोंका मुक्स पर्यवेक्षण करनेसे यह तरन्त ही जात हो जाता है कि ये बाते अमन्यमं रिक्त नहीं हैं। भारतकी प्राचीन ज्योतिर्विद्या और वेदोके विषयमें बुद्धिको थे।डा परिश्रम देकर यदि अच्छी तरह मनन किया जाता तो ये अमत्वपूर्ण उद्धार किमीके भी पवित्र हरयोमे उद्याचित न होते ।

भारतका शिक्षाकाय निर्णय ।

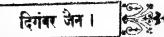
अब में भारतवर्षकी शिक्षा और सन्यताके चिषयमें वे उड़ेख करता है कि जिन्हें **यूरोपीय** विद्वानोंने स्वयं सादर स्वीकार करके इसे अति-प्राचीननाका महत्त्व प्रदान किया है।

लावेस साहियका **बचन है**—कि अल हजार वर्ष पूर्व काएक भारतवर्षके विद्वान गणित विद्याम वंड कशरू पाये जाते हैं। उस समर्थ तक यनानियोंने ज्योतिष विद्याका प्रचार था, यह अब तक मिख ही नहीं हुआ है और न उनका भारतवामियोंमें परिचय ही पाया जाता है।

टिया साहियका कथन है — कि यद्यप हिन्दुओं के ज्योतिपके विषयेम विचार करने और उन-की जीय यमनेसे बिलकुल सन्देह नहीं गहता कि: पार्चान जालमें वे लोग बेंट चमत्कारी पुरुष थे और उनकी धीमना, क्षमता और विद्या क्रीशहता हासके ज्योनिषदीसं करी दरी चर्चा भी।

वनराड साहिवन यही जांचके बाद यही गय लिखी है-कि जब हम पूर्व पक्षकी विवेचना निष्यक्षहप्रमे करते हैं कि युनानी ज्योतिष विद्या ही सबकी मृत्र हैं और हिन्दुओंने उसकी नकट की है तो हमारी दिविधा यह देखकर दूर हो जाती है कि हिन्दुओंके नियम स्थभावतः स्वतंत्र भीर यनानियोंसे भिन्न है।

अतएव यह कत्यना करना कि भारतवर्षमे लेननीकी प्रथा म थी क उन्होंने युनानियोंसे ज्योतिष और कहा गणित विद्या ली, सर्वथा आसिद्ध होता है। क्योंकि भारतक्षेमें विद्या और सभ्यताका प्रचार कई सहस्र वर्ष प्रयंसे विदिक कालमें ही उन्नांत-पर था। वह २ अनुसन्धान करनेपर अब यह सिद्ध होता जाता है कि भारतवर्षमें विद्याका प्रचार और



उन्नति भलीमौति थी । बयोकि यूनान देशके इतिहासोमें यहाँकी विद्याकी ख्याति और प्रतिष्ठाका बहुत वर्णन है।

यहाँके विद्वानोंको आदरपूर्वक सिकन्दरका अपने देशमें ले जाना और उनके द्वारा यहाँकी विद्याकी अपने देशमें फैलाना इस बातको परी तरह पृष्ट करता है।

सन् इंस्वीके ४२२८ वर्ष प्रव महाभारतके युक्के परचात भारतवर्षमे अविद्याका अन्धकार प्रारम्भ हुआ जो बींड कालमें अर्थात मन् ईर्म्वकि ५५६ वर्ष पहिले फिरसे उन्नति अवस्थापर पहुँचा और मानवी शताब्दी तक हर विषयमें भारत उन्नति करता एहा। परन्तु सातवी शताब्दीसे पन्द्रहवा शताब्दी ः भारत क्रमञः शिक्षा और सभ्यतामं नितान्त २ हीन होता गया क्योंकि वह समय पटानोंका काल था। पठान वादशाहोंने यदि हिन्दओकी शिक्षा और सभ्यता-पर ध्यान न दिया था तो न देते । इसकी अपेक्षा उन्होंने पटने और टिखनेपर पण आजा प्रचारित कर दी थी कि ये काम एकटम रोक डिये जावे। तिसपर भी उन्हें सन्तोष मही हुआ भी खोज २ वर अखो प्रन्थोका यहा कर हाला अर्थात अग्निमं जला डाले। फिर कहिए शिक्षा कहाँसे मिले ?

हा ! मुगल मुसलमानोका काल अवस्य ही कह लाभदायक हुआ है। मो भी केवल जहाँगीर वाइशाह तक। जिसमें अक्रबर बाउशाहरे तो एक शिक्षा विभाग अलग ही स्थापित कर दिया था। परन्तु फिर औरं-गजेबने और अठारहवी महीमे मुख्तान टीपने उसी पठानी क्रमको प्रवर्षा उत्तेजनरूपसे प्रवित्तित क्रिया। परंतु भारतकी इससे उतनी क्षीत नहीं हुई जितनी कि पठानी कालमें हुई थी। कारण कि अक्रवरकी राजनीतिन और शिक्षानीतिने हमें ऐसा उत्तेतित और प्रतिभाशाली बना दिया था कि उनकी हजार चेष्टा करनेपर भी हम वसे न हो मके कि जन बातकी बातमे हमें पठानीने कर दिया था। और तब भी हम उनसे सताये न जाते जब कि हमने अपनी सभ्यता और शिक्षाकी इमारतको अपने ही हाधसे न बहाई होती । यद्यपि इसके डहाने के बहतसे कारण है ओ कि विस्तारभयमें यहाँ नहीं कह सकते । पाटक स्वयं विचार करें।

फिर जिस समय बंगालके प्लासीके युद्धके पश्चात सन् १७५७ ईस्टीमें ईस्ट इंडिया कम्पनीद्वारा अंप्रेजींका राज्य स्थापित हुआ तो उन्होंने भी शिक्षा प्रचारको प्राचीन नियमीपर ही स्थित रक्खा और तबसे अब तक क्रमशः शिक्षामे पहल कुछ परिवर्तन होता जा रहा है। प्रत् तिमप्र भी नहींके बराबर है। हमे कड बातोमे जिक्षा-प्रणान्धिका संजोधन करना अति-आवश्यकीय है ।

भारतीय जिल्ला शिक्षाके दो चार लमनः

भारतकी जन्यान्य शिक्षाओंके वहत प्राचीन नमने तो किसी २मए फिर माउस्तर दिखटाउँगा यहाँ केवल शिल्प शिक्षांक दो नार नमनोका जो कि मन् इंस्क्रीके प्रायः ५०० वर्ष पूर्वके है देखकान मात्र वसना है।

1-यलोगके गुफामन्दिर-- इन मन्दि-रेमें केलास आस्थित खरी एडं लिक्कार्याकी देखकर और उन मार्रिगेटी बना श्रम कान देनेहे चाकत होना पहला है । इसी प्रशाप-

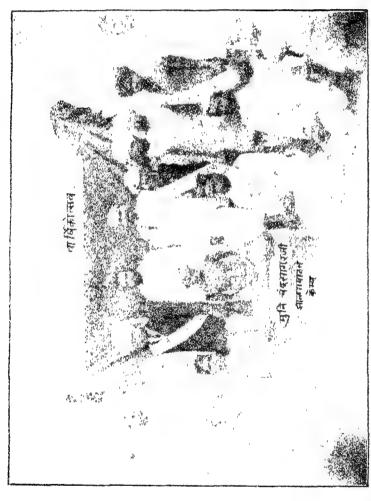
१ - एजेन्टाका अध्यतम्बिद्यः - एव कर्णाः टराभानकं विष्युशंची और शिवकां नाके मिदर है।

३-निःसहारं **मांगोपांग** --७२ गत उंची एक ही पर्यक्ती, अची पहाधीपर निरी महारमे वर्ष हुई औ। गामहर्जेचकी जनस्ति प्रस्यात है।

जैनमन्दिर---ार्व ४-कलोटीक से जिनमें चार २ फुट मीट फाले लग्ने लगाय गये हैं और उनमें यह विदेशिता है कि उनकी और हुए हालनेसं पहिले तो अपना उत्तरा प्रतिविस्त दिखाई देता है ओर फिर वहीं घालकर पास आदिकी कई मृतिया दिखाई देने उसती है। विचारने ही बात है कि विन्दी भन्य देशोंमें प्राचीन ऐसे अर्भुत नमूने है क्या 1

५-मद्रास हानेमें पत्थरकी सांकल-जिसका वर्णन हस्तामस्कमें सविस्तर वर्णित है । सेख बर जानेक भयमे तथा विषयकी विस्तीणेता और स्थानकी स्किणिताके कारण मे अपने लेखको यहाँपर समाम करता है।

SHE STATES



श्रीयात निर्मान मनि आनिज्ञामाच्या और भित्रत्रामम् प्राथमा प्राथमाम् क्रायक क्रायक्तामाण

を計

4

1. 4. 4. 4.

जैन लॉ JAIN LAW की आवश्यकता और अलिय-सन्तान

(के -- भरमप्पा पदमप्पा पाटील, बेलगींव)

हमारा सनातन जैनधर्म अनादिसिद्ध और हिंद्धमेंसे बिलकुल स्वतंत्र या भिन्न धर्म है, यह बात अब सर्व प्रसिद्ध हो चुकी है। हमारी न्यायप्रिय अंग्रेज सरकारके द्वारा की गई मर्दमञ्जमारीमें हिन्द ओंसे जैनोंकी अब अलग गणना होने लगी है. यह संतोषकी बात है। परंत्र अदालतोंमें अभी तक हम लोगोंके बारिसदारी (उत्तराधिकारी) आदिके मामलोंका निर्णय हिंद्धर्मशास्त्र (Hindu Law) के अनुसार ही किया जाता है, यह कैसे आधर्यकी बात है, सो पाठक स्वयं विचार करें। हमारे निष्पक्षपात और दयालु शासनकालमें जैन लोगोंकी जायदाद आदिके मामलोंका निर्णय जैनशास्त्रानुकुल न होना हम लोगोंकी अज्ञानता और प्रयत्नशून्यताका खासा नमूना है, क्योंकि यदि हमारी ओरसे इस विषयमें यथेष्ट प्रयत्न होता तो अवस्य सफलता माप्त हो गई होती। और अब भी यदि हम प्रत्यत्न करें तो हमें पूर्ण आशा है कि हम उसमें अवज्य २ सफलप्रमन्त होंगे।

हमें याद है कि कोई १०-१२ साछ हुए होंगे, जब कि 'भारतवर्णीय दिगंबर

जैन महासभा' के अधिवेनशमें जो कि मंबाळा छावनीमें हुआ था, श्वेतांबर और दिगंबर लोगोंने मिलकर जैन लोगोंके वाबभागके संबन्धमें मद्रबाहुस्वामीकृत ' भद्रवाह--संहिता,' श्रीहेमचंद्राचार्यकृत ' अर्हजीति ' आदि मंश्रोंके आधारपर एक पुस्तक तैय्यार करके उसे सरकारसे स्वीकृत करा लेनेका प्रस्ताव पास किया था। परंतु उस प्रस्ताव-का निबटेरा महासभाके नेताओं ने क्या किया ! यह अवतक सुननेमें नहीं आया। उसके पीछे सन् १९१० में अवणबेल्युकमें गोम-हस्वामीके महामस्तकाभिषेकके समयपर दा-नवीर जैनकुलभूषण सेठ माणिक बंद्र हीराचंद्र जे० पी० के सभापतित्वमें महासभाका जो नैमिचिक अधिवेशन हुआ था, तब भी हिंदूधर्मशास्त्रके हिन्दू छाँकी तरह जैनधर्मके शास्त्रोंके आधारपर जैन कॉकी एक पुस्तक तैय्यार करनेका पास हुआ था। जिसके लिए श्रीयत बाबू जुगमंदरलालजी एम्० ए० बार ऍट-लॉ-के मंत्रित्वमें एक कमेटी मी नियत हुई थी। परंत वह कमेटी भी अब तक निद्रावस्थामें ही अपना अस्तित्व कायम किये हए है. यह जानकर किसको दुःख न होगा ! इसी समय, दक्षिण देशमें दक्षिण कन्नड़ा और मलबार प्रांतमें अलिय-संतान (भानजा-संतान) का जो एक बिलक्षण कानून बहुत वर्षीसे विद्यमान है इसपर खेद प्रगट करते हुए यह कानून जैन स्रोगों पर न लगाया जाय इसके लिए प्रयत्न

करनेका भी उहराव किया गया था । परंतु उस उहरावमात्रसे क्यों हो सकता है! जब तक कि उचित प्रयत्न न किया जावे । इस-लिए अब भी हमारी उक्त कमेटीके मेंबरोंको और भी हमारी समाजके धुरीण आंख्ल विक्षाविशारद वकील—बॅरिस्टर आदि लोगोंको इस महत्त्वपूर्णविषयपर फिरसे लक्ष्य देना चाहिए।

पित्रार्जित स्थावर और जंगम संपतिपर किसका और कैसा कैसा हक प्राप्त है? दत्तक कैसा और किसे लेना चाहिए? इत्यादि महत्त्वके विषयों में हिंद्धर्म और जैनधर्मके नियमोंमें बहुत कुछ अन्तर है। जैनधर्मके अनुसार, किसी स्त्रीको दत्तक पुत्र लेना हो तो यह उस स्त्रीकी उमरसे छोटा और अविवादित होना चाटिए। और दत्तक पुत्र सगोत्रज हो तो ठीक; नहीं तो उस स्वीके साथ उसका किसी भी संबन्धरे पुत्रवत् नाता रहना चाहिए तथा पित्रार्जित द्रव्यका थोड़ा बहुत हिस्सा पुत्रीको भी मिलना चाहिए। इसलिए ऐसे ऐसे विषयोंपर अर्थात दायभागके संबंधमें जैनशास्त्रकी क्या आज्ञा है ? अच्छी जाँच (संशोधन) होकर एक विश्वसनीय भ्रंथ प्रगट होना चाहिए और उसे दोनों फिरकोंको मिलकर सरकारसे स्वीकृत करा लेना चाहिए। हमारी समझसे श्वेतांबरोंके श्रीहेमचंद्राचार्यकृत 'अईन्नीति' और दिगंबरोंके "श्रीमदवाहुसहितांतर्गत 'दायभाग '' 'श्रीजिनसेनसिहता स्पृति संग्रह (कनड़ी)' आदि ग्रंथोंमें इस विषयका

अच्छा विवेचन किया गया है। इनके अलावा भी और कई प्रंथोंमें इसका विवेचन मिलना संभव है।

अब भोड़ेसे शब्दोंमें उक्त दक्षिण प्रांतके अलिय-संतान--मागिनेय-संतानके वि-लक्षण क्यूनुनका भोड़ासा इतिहास पाठ-कोंको बताकर इस लेखको हम समाप्त करेंगे।

पाचीन कालमें अर्थात् झालिवाहन शकके आरंभमें और ई० स० ७७ के लगभग दक्षिण पांतके 'कुंडोदर ' नाभ्यके एक राक्षसराजको एक दिन एक नरवाकिकी आवश्यकता हुई। उसने इसके लिए उसी मांतके अपने आधीनस्थ एक राजाको आजा भेजी कि असक समयके भीतर २ किसी एक मनुष्यको वालिके लिए हमारे पास अवस्य मेजो, नहीं तो खास तुन्हारी ही विल हमें चढ़ानी होगी। इस घोर आजाको सुनकर उस राजाने भी अपने राज्यमें यह स्चना करवा दी कि ' जो कोई आदमी अपनी विल देनेके लिए अपनेको हमें समर्पित करेगा उसके कुटुम्बको हम अपना आधा राज्य और संपत्ति बाँट परंतु इस दुनियामें पाणसे वदकर क्या वस्तु इसलिए राज्य-संपत्तिके कोई भी आदमी अपने प्राणोंकी विल देनेको तैय्यार न हुआ । तब राजाने अपने राज-भवनमें अपने वास्ते कोई प्राण अर्पण कर-नेको तैथ्यार है ? यह जानना चाहा, परंतु पुत्र, पुत्री, माता और उनकी खुद अधी-



गिनी तक अपने सामीके क्दले अपने प्राण दैनेको तैय्यार न हुई। तब उनकी एक भगि-नीने अपने भाईके प्राण क्वानेके लिए अपने इकलौते पुत्रको वलि अपण करनेका निश्चय किया। और वह भगिनी-पुत्र भी अपने मामाके वास्ते अपने प्राण अपण कर नेको संतोषसे तैय्यार हुआ।

नियत समयपर भानजा राक्षस राजाके समक्ष उपस्थित किया गया। मामापर भानजेका इतना सच्चा प्रेम देखकर राक्षसराजकां हृदय दयासे भीग गया और उसकी नरवलि इच्छा शांत हो गई। उसने उसको अभयदान दिया। और उसके मामाको उसका सब राज्य भानजेको अर्पण करनेको कह दिया। तब उस राजाने राक्षस राजाकी आज्ञानसार अपने पुत्र आदि किसीको भी अपना राज्य वैभव न देकर अपने प्राण रक्षणके लिए स्वपाण अर्थण करनेवाले उस भानजेको ही दिया। और उस भानजेका 'भताळपांड्य' नाम पडा। पीछे उस ' मृताळपांड्य ' राजाने भी अपने मातुलसे पास हुई वह राज्य संपत्ति अपने खास पुत्रको न देकर अपने भगिनी पुत्रको ही दी। इतना ही नहीं, बरन् उसकी सब प्रजा भीइसी प्रकार करे इसके लिए वह इस विषयकी एक दसकी कानून बनाकर रख गया। बस तभीसे उस प्रांतमें पुत्र- संतानको तिलांजि दी जाकर भानजे-संतानको अपनी सब तरहकी-स्थावर और जंगम संपत्ति दी गानेकी विलक्षण रहती प्रचलित हैं।

इस काननका अमल उस पांतके बाह्मण जातिको छोडकर जैन. लिंगायत, मुसलमान, हिंद आदि लोगोंपर होता है। क्योंकि वीचमेंसे-हमारी ब्रिटिश सरकारके शासनकालके प्रारंभमें-सरकारी तौरपर वहाँकी प्रजासे यह पूछा भी गया था कि वह 'अलिय-संतान' का ही कायदा अपने यहाँ रखना चाहती है अथवा अन्य मांतोंकी तरह 'पुत्र-संतान'का कायदा प्रचलित कर-वाना चाहती है ! ' इसका उत्तर जैन, र्लिगायत आदि सब लोगोंने अपने अज्ञान-वश पूर्वका ही कायदा रखनके लिए दिया. परन्तु बाह्मण लोगोंने अपनी बुद्धिमानीसे वह कायदा पसन्द न किया और अपनी सम्मति 'पुत्र-संतान' के पक्षमें दी । तबसे बाक्षणेतर जातियोंपर इस कानूनका विलक्षण परिणाम यह होता है कि यदि किसीको कोई भानजा नहीं है तो उसकी तमाम ज्ञायदाद सरकारमें जमा हो जाती है। और अपने खूनसे बनी हुई, अपनी शिक्षासे रंगी हुई, अपनी औरस पुत्र-संतति मुँह ताकती रह जाती है यह कितनी गईफीय बात है? इसका सज्ज पाठक स्वयं विचार करें !!

हमारी सरकारको तो इस कानूनके निकाल डालनेमें कुछ भी उत्तर नहीं है, पर उस प्रान्तके भाइयोंको ही इस 'राक्षसीय'

१-यह कथन 'मेन्स हिंदु लॉ ' (Mayne's Hindu Law) नामकी सरकारी कानूनी पुस्तम विस्तीर्णनाके साथ वर्णित है।

कानुनको देश निकाला दैनेके लिए काटिबद्ध होना चाहिए। थोडे दिन पहिले इस ओर हमारी मदास सरकारका चित्त आकर्षित हुआ भी था, पर उसका फल क्या हुआ सो समझमें नहीं आया।

इसलिए दक्षिण कन्नहा पान्तस्थ जैन भाइयोंपरसे भानजा-संतानके विलक्षण कान-मधी बनियाद मिटानेके लिए और एक जैनलां का प्रचार ओर हानेके सब लिए हमारे स्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों भाइयोंको जोरसे पयत्न करना समुचित और आवश्यक है। देखें, इस लेखकी हमारे भाई कितनी कद्र करते हैं!

आदिपुराण मंथा 🔫 पूरा छप गया।

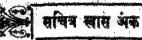
जो भगवज्ञिनसेनाचार्यकृत बड़ा भारी ग्रंथ मूल सहित सरल हिंदी भाषामें बहुत दिनसे छप रहा था बह पुरा हो गया। मोटे और मजबूत कागजपर बडे टाइप-में खुले पत्रोंपर छपा है। न्योछावर अभी १६) सोलह रुपये ही रक्खी है। डाकर्ल्च अलग लगेगा। जिन्हें चाहिये वे शीवतासे मँगा लेवें।

> लालाराम जैन मल्हारगंज-इंदोर.

લેખક-શાં નાનચંદ પંજાભાઈ ખી. એ. સાયન્સ ટીચર, ખરાડા હાઇસ્કુલ.)

પ વિત્ર ભારતભભિના કાઇ એક વનમાં શરદકતના આશા શુદી ૧૦ની રાત્રે ચંદ્રનું ઝગઝગાટ રૂપેરી તેમ પથરાઇ રહ્યું હતું, વનના અધાં ઝાડને નવાં પાન કળકુલાદિ આવી સર્ગ'ધીથી આખું વન મગમગાટ થઇ રહ્યું હતું, સરાવરાના નિર્મળ જળમાં કમળનાં કુલ ખીલી રહ્યાં હતાં, વનના મધ્ય ભાગે એક માટું વિશાળ મેદાન આવેલું હતું, લીલુંછમ ધાસ ચારચાર આંગળ ઉગી તં કહ્યું હતું. આ મેદાનની ચાર્ર પર્વતના ઉંચી ઉંચી ગગનબેદી ટેકરીએ આવી રહેલી હતી. આંધો, આમલી, **જાં**ણ, તાડ વગેરે ઝાડ પવનની મેંદમંદ લહેરાથી ડાહી રહ્યાં હતાં, તેવા સમયે આ મેદાનમાં એક અલાહિક દુખાવ થઇ રહ્યા હતા. પૂર્ણિમાની પહેાર રાત્રિ ગયા બાદ સિ:-હરાજના પ્રમુખપણા નીચે મતુષ્ય સિવાય સર્વ પ્રાણીમાત્રની સભા બરાઇ હતી. આવા અપૂર્વ દેખાવ કાઇ વિરક્ષા ભાગ્યશાળી પુરૂષનાજ જેતવામાં આવે.

સિંહ, હાર્યી, વાધ, હરણ, રાંછ, શિયાળ, વરૂ, બે'સ, ગાય, ધાડા, ખકરાં, ઘેટાં કુતરાં, સસલાં, માર, પાપટ, માંકડાં, સર્પ, ચકલી, માખી, કોડી વગેરે અસંખ્યાત છવા પાતાના નક્કી કરેલા કા-દામાં આવી ખરાખર ગેંદિવઇ ગયા હતા. જાનવરા છતાં પણ એટલી તા શાંતિ કેલાઈ રહી હતી ક દૂરથી કાંઇ માનવ જાત આવે તા તેના પગરવ સંભળાયા વગર રહે નહિં. મંદાન્મત્ત હાથીએ પોતાના પગ વાળા સુંઢ એ પગપર ચુંચળું વાળી **હાલ્યા**ચાલ્યા વગર **બેસી રા** હતા. એજ પ્રનાણે સર્વે પ્રાણી વિનયસર બેસી એક ચિત્ત થઇ રહ્યાં હતાં, એટલામાં પ્રમુખ



सिंदशके पेताना डांचा सिंदासन डपश्थी ઉભા થઇ ખગામાં ખાઇ એવી એક મર્જના કરી કે પ્રાચીમાત્રનાં શરીર ચરચર કંપવા જરાવાર પછી સિંહરાજે લાગ્યાં. નિસ્ક્ષરી વાણીમાં પાતાનું ભાષણ શરૂ કર્યું જેતા અર્થ માતુષિક ભાષામાં તીચે પ્રમાણે थाय छ-

" એા વનવાસીએ! ! આજના પ્રસંગ ધરોા આનંદદાયક છે. આપણા એક વૃદ્ધ અને શાળા શિયાળ ભાઇએ મતે વતના પ્રાપ્તીએની રહેલી કરણી કહી ખતાવી તે ઉપરથી આજે તમાને ઉપદેશ આપવા એક્ટ્રા કરવામાં અમારા જેવા રાજવંશીએ પ્રયોજન વિના વનમાં આમતેમ ભાગ્રતા નહિં વનવાસીઓની સ્થીતિથી ખરાખર વાકેક ન રહીએ એ સ્વાબાવિક છે. અમે અમારી બવ્ય એકાંત ગિરિક દરામાં આત્મ કલ્યાએ સાધવામાં લીન રહીએ છીએ. રાત્રે આદાર, વિદારના અર્થ માતની શિક્ષાને પાત્ર થયેલાજ જીવા જે ચ્યુમારા બાગ અને છે તેમનાથી સંતાવ માની. નિર્મળ ઝરા, નદોનું જળ પી. વનચર્ચા જોઇ અમારા સ્થાને પાછા કરીએ છીએ. કદાચ વનના પ્રાથમિં ઉપર કાઇ આકત આવી હાય તા તે દર કરી પરાપકારનું પુરુષ સાધીએ છીએ. સર્વ પ્રાણી ઉપર સમાન દર્ષ્ટિ રાખવી એ અમારા અને પ્રાણી માત્રના પરમ ધર્મ છે એમ અમે સમજીએ છીએ, વનમાં જયારે અતિશ્વય ૧૯૨૫ાઇ અને અનીતિ વધી જાય છે ત્યારે આવી સભાગા બરી ઉપદેશ આપીએ છીએ. અમારા ઉપદેશની અસર કેટલાક બબ્ય પ્રાણીઓને તરત લાગે છે અને ક્રેટલાક અધમ જીવાને જ્યારે ઉપદેશ કરતાં પણ સમજણ આવતી નથી ત્યારે અને અમારી વનરાજ તરીકેની સત્તાના ઉપયોગ કરીએ છીએ એટલે કે તેવા અપરાધી છવાને તેઓના તડમાંથી દર કરીએ છીએ પછી તે રખડીરવડી માતને ગ્યાધીન **થા**ય છે. તેમ કરતાં પણ જેઓ પાતા- ની અનીતિ જારી રાખે છે તેમને અમારા જેવા અધિકારી જીવા અતેજ બાગ લઇ અમારા નિર્વાં કરીએ છીએ. આટલ છતાં પણ તમે અત્રાનતાને વશ થા અતેક ક્રક્રમી કરવા લાગ્યા છા તે જોઇ મને લણીજ દીલગીરી થાય છે. આજની તમારી સ્થીતિ જોઈ મને ધણીજ દીલગીરી થાય છે. તમે પહેલાં સર્વે ઘણા પ્રેમથી એક ખીજા સાથે હળાયળા રહેતા હતા. કાંઇના મનમાં દેવ અને અનીતિના જરા પણ અંશ હતા નહિં. સર્વે જવા પાતપાતાના અધિકાર પ્રમાણે વર્તી જંગલની માજ માસતા હતા. કાઇ કાઇના જીવ પ્રયોજન વિના હેવાને વ્યાજળી સમજતા નહિં. અમારીજ નાતિના આ **વાધછભા**ઇનું કામ તાે છેક બગડી ગયલ લાગે છે. પોતાની ઝાતિના રિવાજને છેમેરી કર્મ સ્વર્ષ્ટદેષણે વર્ત્તી માજ વિલાસ કરવા ક્ષામ્યા છે; ખકરાં, ઘેટાં, ગ≀ય જેવાં નિરપરાધી પ્રાસ્કી-એાના ભાગ લેતાં શીખ્યા છે. વાત તા એટલે સુધી ભગડી ગયલી છે કે મતુષ્ય જેવા ઉત્તમ જીવને પણ મારતા ડરતા નથી. તમારા પાપે માનવ નતિ અમારા રાજવંશીઓને (સિંદ્ધને) ધહા દુ:ખ આપવા લાગી છે. તેમના ક્ષિકારના સાગ થઇ પડીએ છીએ, પાંજરામાં પ્રાપ્તએ છીએ. અમારી પાસેથી સરકસના ખેસામાં સખત મજુરી કરાવે છે. બૂખે મારે છે. અમારી બ્હાલી પ્રજા અને પ્રિય માદાધી વિષ્યુટા પાડી એકાંત જગ્યામાં ગાંધી મકે છે. અસલના સુખી દિવસામાં અમે સ્વતંત્ર રીતે વિના અર્થે આપ્યા જંગલમાં રાત્રે તૈમજ દક્ષાડે વિદાર કરી શકતા દતા. સૃષ્ટિતી અપાર લીકા નિદ્માળતા હતા. મનુષ્ય જેવાં ઉત્તમ પ્રાણીનાં કવચિતજ દર્શન થતાં હતાં. વળા કાઇ કાઇ વખતે અમારા વહવાએને ચારહા મૃતિ જેવા મહાત્માનાં દર્શન થતાં અને તેમાત્રી જ્ઞાનના **બળ તેમના પૂર્વ ભવની હ**કીકત કહી **તેમને** ધર્મને રસ્તે દોરતા હતા. અહા ! આજ અમે એવા ભાગ્યહીસ શક ગયા છીએ કે એવા



મહાત્માનાં કરાત તા શતાં નથી એટલું જ નહિં પણ મનુષ્યો એટલા નિર્દેયા થઇ ગયા છે કે અમારી તિર્યંચ ગતિ ઉપર દયા કરવાને બદલે અમારા પ્રાણ્ ક્ષેવા તૈયાર થયા છે. દુનીઆ ખધી ઉલડી થઇ માઇ છે. આમાં આપણે એકલા વાયજીબાઇના દોષ કાઢવાના નથી. તેઓ પહેલાં ઘણા બવ્ય ચહેરાવાળા, ઉપરથી દેખીતા વિકાળ દેખાવવાળા પણ અંદરથી શાંત અને કામળ પરિણામ લાળા હતા, પણ જ્યારે વનની અંદરના સદ પ્રાણ્મિના મનમાં અદેખાઇ, લુ-ચાઇ, અને અનીતિએ પ્રવેશ કર્યો ત્યારે દરેક જવ પરમાર્થ અલી જઇ સ્વાર્થ સાધવા તત્પર થયા એટલે વાયજીઆઇને પણ અનીતિના રસ્તા પકડવાની કરજ પડી.

તમારી વર્તમાન સ્થિતિ

તમે જ્ઞાતિના અને ધર્મના વ્યવના તાડી **શિશ્વિલાચારી ખ**ન્યા છે! પાતાની જાતવાળાત **લાવેલુંજ** ખાવું, ખીજાતું આણેલું ખાવું નહિંતે નિયમ સર્વેએ તાડ્યા છે. કેટલાક સેવકતું કામ **કરનાર સેલ્ય** ગમે તેવા હલકા સ્વભાવતા અને **પરનાતીક્ષા હૈાય.** તાપણ ગમે તે વ્યાનં કાઢી ખાવા એકઠા શક જાઓ છા તે બહુ શરમ-**ભરૈક્ષ છે. તમે** આત્મગારવ ભવી ગયા છે။ **એાજન વેળાએ જ્યાં** ઊંચનીચતી લામણી એક ખીજાના મનમાં પાદભીવ થાય. તેવી જગ્યાએ **આત્મ ગાૈરવ સમજનારાએ જમ**ું નહિં. આજ તા સિંહ, શિયાળ, કુતરા એને કાગડા એક્ઝ ખાંઘ વસ્ત ઉપર મારામારી કરી એક બીજાઇ! દ્વર ખેસીને પણ ખાવાનું જાણે મળતું ન હૈાય તેમ લુંટાલુંટ કરે છે. એક ખીજાતું *ઉચ્છિટ જમ છે. તમે સવેએ જવા ઇદિયતે ખદુકટવી મૂકી છે. જરા પણ ક્ષુધા તૃપાની વેદના સહન કરી શકાલી નથા. "

યાસેના શહેરમાંથી છટકી આવેલા એક અવ્ધ વચમાં બેલિ ઉદયો—"મહારાજધિરાજ, અવિનય થાય તા ક્ષમા કરશા, અમારે સખત મળ્યુરી કરવી પઉંછે, અમારા મુકામથી દર રાજ દશ્વ પંદર માઉ ધણીના કામે જવું પડે છે. રસ્તામાં જે ખાવાનું ધરે છે તે ખાવું પડે છે, કદાચ લાગ મળે તા ક્ષુધાની પીડાને લીધે રસ્તામાં જે કંઇ મળી આવે તે આરાગીએ છીએ. "

સિંહરાજ ગર્જ ઉઠયા-"મલ્યા મુખી. ન તારી ઉમદા અતિ બલી જઇ અધમ સ્થીતિએ પહેાંચ્યા છે. પ્રાણીમાં ધાડા ઉમદા જાનવર છે. ધર્સા ખરાં જાનવર કરતાં તમારામાં વિશેષ છાહિ હાય છે. પહાતમે તેના દરપયાગ કરવા માંડયા છે. શું તમતે તમારા માલિક સખ્યા કામે માકલે છે? શાં તમતે એક્ષાં ખાવાનું આપે છે? માનવ જાત એવી અધમ ખતી ગઇ નથી કે અવાચક પ્રાણિની દયા ખીલકલ નજ જાણે તમે એક વખત રસ્તામાં પડેલાં લીલાં ધાસ ચાખ્યાં કે તમારી દાઢ મળાતી. બીજી વખતે ઉકરડામાં ઉગેલું ધામ પણ ખાવા દાડશા. છેક છી લંપટી બની જશા તાે સખના આભાસ સરખા પણ દેખશા નહિં. તમારી અધ જેવી ઉમદા જતિ એક્લીના વાંક નથા. ગાય, **મે**ંસ, કતરાં, શિયાળ, માખી સર્વે જીવ આ દેવને પાત્ર બન્યાં છે. ગાય જેને કેટલાક મનુષ્ય પુજ્ય ગણે छे. ते ते। विधा भातां ते। शरभातीक नधी. शे। अन्यथा!!! ग्रेने ४५० वनस्पतिपरून તિર્વાહ ચક્ષાવવાંના અધિકાર છે, જે પવિત્ર, નિર્દોષ અને પરાપકારી છે તે આ દશાને પાત્ર થઇ છે! બહુ શરમની વાત છે. કુતરાં બિલા-દાંતી તા વાતજ જવા દા કારણકે તેમના અવતાર ઘણા કનિષ્ટ છે. તિવચ ગતિમાંથી તેમના ઉદ્દાર થવાને બણી વાર છે, પહ્યુ એમના દાખલા લઇ જે એમતું અનુકરણ કરે, તે ખરંખર મહમતિ જાણવા."

એટલામાં પેલા થાડાને કંઇ કહેવાનું ભાકો રહી ગયું હશે તેખાલી ઉદેયો-"કૃપાવંત, હજીરસમ• ક્ષહું જાઠું નહિ છોલું. અમે રસ્તે ચાલતાં ચાલતાં ખાઇએ છીએ અ વાત ખરી, પણ અમારા માલિક જો વિચારવાન દ્વાય છે તો એકનું જમેલું પાત્ર પાણીમાં ઝખકાળી સાદ કરી તેમાં દ્વી અંદી અરી બીજાને મોંઢે ચઢાવે છે એજ પાત્ર દ્વીથી પાણીમાં ઝખકાળી ત્રીજાને ધરે છે.'

એટલામાંજ સિંહરાજ ધરકીને બાલી હાયા-"તમારી ખુહિ કેમ જેવી રહી છે? જે પાણીમાં એક પાત્ર બાલ્યું, તે પાણીમાં બીજીં ખાળાય, તેમાંજ ત્રીજાં ખાળાય એમ સેંકડા વખત એાળાય તો તે પાણી પવિત્ર રહે કે અપવિત્ર અને જો પવિત્ર રહે. તો તમે તે પીશા ખરા કે? જો અપવિત્ર થાય તા પવિત્ર અપવિત્ર બીજન वस्त રીતે કરી શંક? અન સાંભળી ધોડા તેન શું પણ હાથી, ગાય, ઊંટ વીગેરે તા સન્જડન થઇ ગયા-શરમાઇ તીચું જોઈ રહ્યા. સિંહરાજ તરક દક્ષિ સરખી પણ કરવાની કાઇની હિમત ચાલી નહિં. સવેને ખાત્રી થઇક મહારાજ જે કહે છે તે તદન વ્યાજબી છે. સવે એ દઢ પ્રતિજ્ઞા લીધી કે ચાલતાં ચાલતાં રસ્તે ખાવું કે પીવું નહિ અને સેવાના બદલામાં સેવ્ય પરનાતના હાય તા તેના આણેલા પદાર્થ ખાવા નહિં ".

સિંહરાજે પાતાનું ભાષણ આગળ ચક્ષાવ્યું-"આવી વધારે તિરસ્કારને પાત્ર જે રસ્તો તમે પાણી આત્રે પકડયા છે તે કહેતાં તા મારી જીબ ઉપહતી નથી. બ્રહ્મચર્ય અને શીલત્રત તા જાણે દુનીયા પારજ જતાં રહ્યાં છે. વીર્યની તા જાણે કી'મતજ નથી!

આ વાત તરફ જરા નજર તો કરા! કેવી વર્ણસંકર જાત ખની ગઇ છે!!! કેવા કદરમાં કહેંગા અને એક ખીજાથી જુદા પડી ગયા છે. તેઓએ પોતાનું અસહ સાનનું સંદર સ્વરૂપ ગુમાવી દીધું છે. કેરઇ તા વાધજીનાઇમાં ખપે તેવા છે તો કેરઇ શિયાળજી નેમાં ખેસી જાય તેવા છે. કેરઇ માર્જાર મંડળમાં મળી જાય તેવા છે, તો કેરઇ રીંજામાં રમવા દેડી જાય તેવા છે, વળી કેટલાક તો

એવા બેડાળ ખતી ગયા છે કે એમને ક્રમ્પ નાતમાં નાંખવા તે પણ મારા જેવાને મુશ્કેલ લાગે છે!

આ સાંબળી ચકલા અને કાયુતર ચીં-ચીં કરી હસી પડ્યાં તે ઉપર સિંહ મહારાજે તેઓને કહ્યું-તમે શું હસા છા! જે હું કહ્યું હું તે એકલા ધાનવર્ગને લાગુ પડે છે એમ નિધિ, પણ પ્રાણીમાત્રને લાગુ પડે છે. તમે કંઇ તેમનાથી કોઇ રીતે સારાં નથી.

ધાન કુખતર વગેરેની જાતમાં આઢકા પ્રધા ળા**લા બેદ, તા આંતરિક બેદત**ં તા પ્રહવાં જ શું ! તમારા કરતાં તા કીડી, મઉનહા જેવાં ક્ષદ્ર પાણી સારાં કે કંઇક નિયુષમાં રહી પાતાની જાતમાં ફરક પડવા દીધા નથી. વર્ણસંકર પ્રજામાં આંતરિક વિચારા ધણા ભિત્ર બિત્ર હાૈય છે. તેઓ એકમતથી કંઇ પણ સારે કાર્ય કરી શકતાં નથી. સંપથી રહી શકતા નથી. ઇર્યાના ભાગ અની એક ખીજાતું નિકંદન કાઢવા <mark>તત્પર **થાય છે**.</mark> લાલ ઝીણી કીડીએાના કાઠા તરક જરા નજર તા કરા, કાંઇ જાદા પડે છે ? કા**ળી** કીડીના સમહ તરફ નજર કરા કે કાળામાં કાઇ ધાળા લાલ થઇ ગઇ છે? તમે પ્રાચીમાં શાહા. મહિમાન અને નિમકહેલાલ ગણાવ છે! તેમ છતાં પણ આટલાં ખધાં અધમ થઇ ગયાં છા. તે મહાં ખેદકારક છે.

ગાદ રાખા કે દેહના ભળના આધાર લીર્ધ ઉપર છે. જેમ જેમ વર્ષિની ક્ષતિ સાય છે તેમ તેમ ખળ ઘટે છે, મનની વ્યાકુળતા વધે છે. સ્વભાવ ચીઢીઓ થઇ જાય છે. કોષી અને સ્વાર્થપરાયણ થઇ જાય છે. અમારા જાતુલ ગણાય છે, તે વીર્ધની સ્ક્ષાનાજ પ્રતાપ છે. અમે અમારા બળનું અભિમાન ધરાવીએ છીએ. અમારા જેવું બ્રહ્મચર્ય (સ્વદાશસાંતાપત્રત) બાગ્યેજ કાર્ધ પાળી શકતું હશે! કેટલાક મહેમતિ જીવાં પાળી શકતું હશે! કેટલાક મહેમતિ જીવાં

સૃષ્ટિકેમ વિરુદ્ધ કામ માદર છે. કેટલાક પરિપક્ત ઉમર થવા વિના વીર્યનં પતન થવા દે છે. इंद्रबाद कामे। तेल्यक विचारा करी 'निश्रमां वीर्य रणबीत श्वा हे के. डेटबाइ यसते। ६३५थे।श કરી વૃક્ષા હામવાસના મનમાં ઉત્પન્ન કરે છે. આવા અધમ જવા વીયેની અગત્મતા બીલફેલ સમજતા નથી. યાદ રાખા કે ચાળીસ કોહીના ટીપામાં**થી** વીર્યંત 465 Ωપુ′ અને છે. भेदी हिंभती वस्ताने નક્ષમી ગુમાવી देवी. अ अनि अमानतानं परिशाभ छे ले પ્રાથમી વર્ગમાં નરના વીર્યની અતિશય ક્ષતિ શાય છે તે વર્ગમાં નર અને માદા લગભગ સરખાજ ગુણા ધરાવે છે ખલ્કે નર માદા જેવાજ થઈ જય છે. કેટલાક વર્ગમાં નર **મહજ દરિદ્રી, આળસ અને સરત દશા બાગવે છે.** એટલામાં સિંહ મહારાજે એવી તા ગર્જના કરી કે જાણે આકાશ તૂટી પકશે ! નાનાં નાનાં ખર્ચા તા માદાની સાડમાં લપાઇ ગયાં! કેટલાંક જે ઉભાં હતાં તે ધળાક દઇને નીચે ગમદી ગયાં. માદી વાર પછી જયારે ખધાં સ્વસ્થ થયાં-ભય રહિત થયાં એટલે સિંહરાજ **એાલ્યા-"કેમ સમજ્યા. આ** શાના પ્રતાપ છે?" भक्ष ज्यारे उत्तर वाणवानी हाधनी दिंभत આલી નહિં ત્યારે તેમાશ્રી બાલ્યા-

" આ બધા વીર્યના પ્રતાપ છે. વીર્ય રક્ષાથી આયુષ્ય સંપૂર્ણ ભાગવાય છે, આનંદમાં દિવસ ગુજરી શ્વકાય છે, તમારામાંનાં ઘણાં એવાં તા લજ્જ રહિત ખતી ગયા છે કે સ્થાન જોતાં નથી, સમય જોતા નથી, જાત વિચારતા નથી, અને હેતુ સમજતા નથી.

નરમાં એક પત્નીત્રત રહ્યું નથી, માદાં-માથી પતિત્રતાપર્ધ્ધ પક્ષાયન કરી ગયું છે. તમારામાંનાં કેટલાંક અધમ જીવા પોતાની માદા સિવાય અન્ય માદા સાથે ગેરકાયદે સંખંધ જોડે છે, તેમ કેટલાંક માદાઓ પણ તેવું પાપ કરતાં ડરતી નથી, ટ્રંકામાં એટલાંજ કેહેવાત કે વિના પ્રયાજન વીર્યક્ર પતન થવા દેવું નહિં. પાતાના **દેહ** કરતાં પણ વીર્યંત્રે વધારે વ્હાલું ગણતાં શીખા.

તમારા દરેક સમહના આગેવાના આ અને ળીજા **બધા દાવતે યાત્ર છે. તેઓજ શિક્ષા**ને પાત્ર છે. દરેક સમુદ્રમાં આવેલી દરેક વ્યક્તિનું કરેક પ્રકારે બલું થાય તેવા હેતુથી દિગુપાળ જેવા સમુદ્રના રક્ષક તરીકે આગેવાના નીમવામાં આવ્યા **હ**તા. આવા આગેવાના સ્વાર્થી, સાંકડા મનના. મ્યાંચર્મી. અને દગાખાજ શ્રુધ જવાયી પાતાની પવિત્ર કરજો બજાવવાનું ભૂલી ગયા છે. તેઓને જે વખતે રક્ષક તરીકે નીમ્યા તે વખતે તેમનામાં જે ઉમદા ગણા હતા તે ગુ**ણા**ને લોધે પ્રધાન અહાવામાં સ્માન્યા **દ**તા. આજ તા વખત એવા આવ્યા છે કે **અગ્રેસરતા** વારસ ગમે તેવા અકલાહી છા હોય. તા પણ તે આગેવાનના છે. તેની પાસેથી સત્તા ક્રેમ છીનવી ક્ષેત્રાય ? એવી માન્યતા દૃઢ ચોંટી ગઇ છે. પણ કાઇ ખહાદુર નર ગુણાની કદર કરનારા નીકળતા નથી, એ બહુ અજાયબ જેવું છે. આગેવાના પણ એરાબર સમજી ગયા છે કે જ્યાં સુધી આવી માન્યતા છે ત્યાં સુધીજ આવું અંધેર ચાલશે. માટે જે માત મજા એામજ્યાં તે ખરાં! આ આગેવાનાતે રક્ષક પણ ભક્ષકપદવી આપવી ઘટે સમુહના સુખના આધાર અાગેવાનની અક્ષ્લ દ્રોશિયારી ઉપર છે. મક્ટ યુથના આગે-વાન જો ચાલાક નહિં હાય તા રાની જાન-વરાના સપાટામાં ઝટ આવી જશે, અનેક પ્રાથ્હીઓના માર ખમલા યડશે, બૂખે તરસે મરલું પડશે. માંહામાંહે લડી મરશે. માનવ नित तरक्ष्मी पश्च अनेक द्वः भ सद्धन करवां પડશે હાથી, હરણ, માંખ, મંકાડા દરેકતું આજ પ્રમાણે સમજવું. જ્યાં જ્યાં જ્યાં જ્યાં એકથી વિશેષ વ્યક્તિઓ મક્કી મળે ત્યાં ડાલા અને શાધા આંગેવાનની ખાસ જરૂર છે. નહીં તા શિયાળ તાલાશ સીમ બાલી



અને કૂતરૂં તાણુશે ગામ ભણી એટલે ક્રિપ્ટનું બહું થવાના વારા આવશેજ નહિં, માટે તમારા દરેક સમહમાં જે હાલા, પુદ્ધિમાન અને ઉદાર મનના ગણાતા હાય તેવાઓને આગેવાન વગર કાંઇને માથે જોખમદારી રહેતી નથી અને વગર સત્તાએ જો કાંઈ આગેવાની કરવા જાય તા મુખ પ્રાણીએ તરફથી તેઓ અપમાન પામે છે અને દાહ-દાલામાં ગણાય છે.

આવી રીતે સિં**હરાજનું ભાષણ** ચાલતું હત તેવામાં એક અજબ બનાવ બન્યા, સર્વ પ્રાણી એકદમ એકજ દિશા તરફ જોવા હાગ્યા. સર્વેના મોંઢા ઉપર શાંતિ અને આનંદ છવાઇ રહ્યા- એક પાસેની સુકાર્મા કાઇ**મહાન** બેદા તેમની ચાગી સમાધિમાં હશે. મમાધિ પૂરી થયે પ્રાણી**એ**ાની સભા તેથી બરાવાની ખબર પડી. ગુકામાંથી નીકળી સબા તરફ આવવા લાગ્યા. સિંહરાજ આવતા જોઇ માન યાગીરાજ તે દરથી ધારહ્ય કરી શાંત રીતે ઉભા **ચ**ઇ રહ્યા. ચાગીરાજ સિંહરાજ પાસે આવી ઉભા, એટલે સિહરાજ પાતાનું મસ્તક તેમના ચરણાવિ દને ૨૫શી શાંત ઉભા. ચાેગીરાજ રાગ દેવ રહિત, પરમ શાંત સુદ્રા ધારી હતા. તેમના ચ્હેરા બવ્ય અને ગંભીર હતા. જેવા સિંહરાજ વૃદ્ધ હતા તૈવાજ યાગીરાજ વહ હતા. સર્વે પ્રાણીમા તેમની શાંત મુદ્રા નિહાળી વૈરમાવ ભૂલી ગયા શ્મને ભય રહિત હવંધી તેમના તરક જેવા ક્ષાગ્યા, **એ**ટલે ચાેગીરાજ ગંભીર નાદથી દિવ્ય વાચીમાં ખાલ્યા કે જેના અર્થ આપણી ભાષામાં નીચે પ્રમાણે થાય છે:—પરમ આન'દના સમય 🔰 કે મ્યાજે જંગલવાસી તમામ પ્રાપ્કીમાત્રને મીકી વખતે જોવાતા સમય મને પ્રાપ્ત થયા છે. સિંહરાજે તમાત જે ઉપદેશ આપ્યા 🐌 તે સર્વે પ્રાથીએ શ્રેલમાં **લેવા ચાગ્ય** છે. (યાગીરાજ દ્યાનના ખળે સિંહરાજના ઉપદેશ જાણી શક્યા હતા). આ વસું **પ**્રદા ઉપર દરેક પ્રાણીતે સુખ બાગવાને અધિકાર છે, પણ કે.ધ, માન, મામા અને ક્ષાબને વશ થઇ પ્રાણી જ્યારે સ્વાર્થ સાધવા તરફ નજર દોડાવે છે ત્યારે બીન્તને નુકશાન કરતાં પણ ડરતાં નથી, તેથી નિર્બળને દુઃખ બાગવાના પ્રસંગ આવે છે. તમારામાંનાં ઘણાં પંચિ દિય પ્રાણીઓ છે. મનુષ્ય પણ સંગ્રી (મનવાળા) પંચે દિય પ્રાણીએ છે. મનુષ્ય પણ સંગ્રી (મનવાળા) પંચે દિય પ્રાણી છે અને બે કે તે પ્રાણીમાત્રમાં શ્રેષ્ઠ હોવાના દાવા કરે છે, પણ પણાં માનવી જનનવરથી પણ હલકાં કામ કરતાં ડરતાં નથી.

આજ કાલ મતુષ્ય જાતિમાંથી આકાર શુદ્ધિના વિચાર નાશ પામવા લાગ્યા છે, જેને પરિણામે તેઓ અનેક દુ:સાધ્ય રાગને આધીન થાય છે.

લણા જડવાદ તરફ વળવાથી માનવીને ન છાજે તેવાં કામ કરી રહ્યા છે. દુનીઆ ઉપર સ્વાર્થ અને કુસ'પ લણા મતુ-ધોમાં પ્રવેશ કરી અનેક નિરપરાષી જીવાને દઃખ આપી રહ્યા છે.

સ્વાથ દેશ પરદેશમાં અતેક લડાઇઓ જગાડે છે. માખાપ અતે છોકરાં વચ્ચે વેર ઉત્પન્ન કરે છે. સ્વાર્થ ગ્રાતિ અતે દેશની ઉત્રતિ અટકાવે છે.

<u>ઘણા દેશા સાથે જોડાવાથી જે આનંદ</u> ચ્યતે શિક્ષણના લાભ મળવા જોઇએ તેને ળદલે ઉદર પોષણ માટે **આજે મનુષ્યાને અ**શ્વન 6દ મહેનત અને બળના ક્ષય કરવા પડે છે તેથી નિષ્ટત્તિ જે મનની શ્રાંતિનું કારણ છે તે જતી રહેવા લાગી છે. અબિમાન અને દ્રષ જેવા યોહાને ધુમવાને એક વિશાળ ક્ષેત્ર (ધાલી માતિએક શ્રવાથી) મન્યું છે. વ્યક્ષચર્યની શીમત બહુજ એકાહી થઇ ગઇ છે. ડુંકામાં માનવી જાતમાં અનેક નાના નાના દુર્ગુણો પ્રવે**શ** કરવા લાગ્યા છે. મતુષ્યજાતિ વિષે વિશેષ વિવેચન *અ*ત્રે અયેામ મહાય માટે આટલું જ કહેવું ઉચિત સમજાં**છું. રાત્રિ વિશેષ ગઈ હતી તે**થી સિંહરાજે સભા વિસર્જન કરી દીધી અને સર્વે પ્રાણી પાતપાતાને સ્થાને જવા લાગ્યાં. ચાગી-રાજની પછવાડે સિંહરાજ કેટલેક દૂર સુધી ગયા.

લેખકની દીય:—આ નાનકડી વાત લખવામાં કેખકના એવા હેતુ નધા કે પ્રાહ્યીઓ અસલ ઉજાત દશામાં હતાં અને હાલજ અધમ દશામાં આવી ગયાં છે તેમની સ્પાતિ ગમે તેમ હાય, પહ્યુ મૂળ આશય એજ છે કે વાત રૂપે બાલ રસમય લાગ, તાન અને ગમત ખંન્ને મળ, સિંહરાજ પાણીની વર્ત માનસ્થીતિ વર્શવતાં શરૂઆતમાં કહે છે કે જ્યાં આવે ખસીન જમલું પડે, અમે શ્રેષ્ઠ અને તમે નીચા છા **તેવી લાગણી** જ્યાં ખતાવાય ત્યાં જંમવું સાર્ નથી. ધાડા વાંચનારતે આજની હાઢલનું **હશ[્]ન** કરાવે છે. બીજી બાબના સરળ હાવાથી વિશેષ પુલાસાની જરૂર નથી. સ**માસરણમા** પ્રાણીમાત્રની સભા ભરાય છે. વળી થાડા વખત ઉપર મેં વાચ્યું હતું કે ઇટાલીમાં એક જગ્યાએ કાગડાની નિયમિત સભા બરાય છે એટલે **અ**ાવી સ**બા** અયોગ્ય કે છેક અમ**ંબ**વિત પણ **બહાશે.આમાં ટાઇ વ્યક્તિ ઉપર આક્ષેપછેજ નહિ**ં.

आस्मन् ! कल्याण कर ।

इस कदर विषयोंमें नादाँ !, उक्झता जायगा । गर भौसिंधुमें, आखरश मँझ धार गोता रवायगा ॥१॥ पाँच दुइमन मिलिके तुमको, रहे हरदम दगा । इनसे: दामन त् छुड़ा, बरना भटकता जायगा ॥२॥ मानिंद खु जला,-नेमें ये उम्दा लगै लाइ लाजे जरूम जायगा ।।३॥ बदता माता पिता दारा कबीला. काम कुछ आता नहीं। जिस घड़ी, त सिर पटकता जायगा ॥४॥ चौरासीमें लाख सबसे. योनिनर उत्तम धर्म करले. पायकर क्छ जायमा ॥५॥ यह पकड़ता अब भी कहना मान सद्गुरु कहें तुझसे पुकार। निकले बाद 'पन्ना', हाथ मलता जायगा ॥६॥



nereereereer (લેખક-જેનમહિલારત શ્રીમતી મગનઅહેન વ્યવસ્થાપિકા, શ્રાવિકાશ્રમ, તારદેવ–મુ'ભાઇ.

વિચારશીલ ખંધું આ અને ખહેતા! મેં આ <mark>લેખ સંસારના વિષય**નો**ગોમાં લિપ થયેલા</mark> રાજરાતી વર્ગને આગળ આવવાની જરુર દેખી તેમાંથી કેટલાક વિદ્વાન ખધાઓ અને બ્હેના જો પાતાના ઐદિક સખને વિરામ કરી જરા રસાતળ પાંચેલી ગુજરાતી જૈન સમાજ તરક दृष्टि **करे अ**ने तेमने **ढाध प**कडीने दुला करे એમ વિચાર કરીનેજ લખ્યા છે. વળા જેણે આવું છવત ગુજારવા ધ**થમ પ**ગલાં ભરેલાં છે, તે લોકાતી ચઢતો **દેખાય છે. માટે** આપણે પણ તેજ રસ્તા **લેવા કે જેથી કેટ લા**ક ભંધુઓ અને બ્હેના બહાર પડે. આ ઉપાયા જણાવના પહેલાં ભારે '**સાદ' છવન**' શ' છે ? અને અને તેનાં હક્ષણ શા છે તે કહેવું જોઇએ. આપણે જુંદુર્મી અ**થવા અ**વસ્થા સુખમય, કલ્યાણકારી, આપત્તિએ રહિત, સ્વતંત્રતા પૂર્વક **તેમજ સમસ્ત દેશ, તથા** કાળના શ્રેયને અર્થે માળાએ તેનું નામ સાદું જીવન છે. આવું જીવન ગાળનારા મતુષ્યા જગતમાં ઘણા ઘોડા હોય છે. હાલમાં પણ તેવા આદર્શ રૂપ જીવ-ન ગાળતા મનુષ્ય આપથી નજર આગળ ખડા થાય છે, તેમાંના **ચે**ડડાક તેા આ શતકમાં-જ થઇ ગયેલા છે. જેમાંના ચાહાંક નામા આપના પ્રતીતી માટે દુષ્ટાંતરૂપે આપું **છુ**ં સ્વામઃ રામભાર્થ, સ્વા<u>ર્</u>ધી ફુંબ્યુ, ભના રસાદાસ, દુકારામ, વિવેકાન દે,

રામચંદ્ર, આત્મારામછ વિગેરે. આવા આદર્શક્ય થઇ મળેલા પુક્ષેતા જીવનમરિત્રને સામે રાખીને કેટલાકાએ પોતાનું જીવત સાદું અને જગત ઉદ્ઘારક અનાવ્યું છે. અને લાલમાં પણ શ્રી. ગાંધી, સ્વ. ગાખતે, મી. કેવે, મી. લાલમ, મીસીસ રમાળાઇ રાના-ડે, મીસીસ બીસેંટ વગેરે પોતાના સાદા જીવનથી-ઉપયોગીપણાથી લોકોને જગત કરી રહ્યાં છે અને લોકોના જીવન સખમય બનાવવા શિક્ષણ પ્રચાર કરી રહ્યાં છે. વધારે સ્પષ્ટી-કાણ કરતાં કહેવાનું કે સાદું જીવન ગાળતાં સાધ્યા માટે પ્રથમ વિરુદ્ધ બાબતાથી બચલું જોઇએ.

વિરૂદ્ધ**તાદરાંક ભાગતા** ખાસ **લક્ષ**માં ક્ષેત્રા જેવી છે તે **દવે જ**ણાવીશ.

- ૧. આવક કરતાં વધારે ખર્ચ કરવા તે.
- ર. ખહારતા ડાળ.
- ૩. તત્ત્વ અદ્યામાં ભ્રમ-સંશય.
- ૪. સમય વ્યર્થ શુમાવવા તે.
- પ. વધા ખકવાદ કરવા તે.
- ૬. વિષયાના અતિ લાલસા રાખવી તે. આવાં આવાં કારણાતે શતૈઃ શતૈઃ (ધામે ધામે) આછાં કરવામાં આવે, તા તમે સાદું છવત ઘણી સહેલા⊌ર્ધા ગાળા શકશા.

૧. આવક કરતાં વધારે ખર્ચ કરવા ભાખત:-- આપણા હિંદુ સંસારમાં ઘણીખરી અથવા કાઇ પણ સ્ત્રી નાકરી કે ધંધા કરતી નથી-કરી શકતી નથી. તેને લઇને એક પ્રરૂપની સામાન્ય આવક ઉપર આખા કુદું ખના ભરછ-પાષણના આધાર રહેસા હાય છે. એક પુરૂપ મહિતે ૫૦ કે ૧૦૦ રૂપીઆ કમાતા હાય અને ધરમાં પાતાનાં એ ભાળક, સકલમાં ભાગતા નાતા ભાઇ, એક ઇદ્રમાતા, માટાભાઇના મૃત્યુધી થયેલી વિધવા ક્રાજાઇ, વળી તેનાં પણ એક બાળક હોય તે વગેરેનું-આવી રીતના વસ્તાતી કંદ્ર ભદ્ય :-- જેમતેમ **`**48 કરતા હાય, તેમ છતાં ધરનાં શૈકાશી

સાહેબને નાહક જોવાની પ્રચ્છા અથવા અમુક **જો**યલી અીના જેવાં સાહી **પાલકાંથી બબ**કા કરવા વિચાર થતા હાય. અથવા તા પગમાં પાંચ રૂપીઆના છાટ અને હાથમાં ખેત્રણ કપીઆતી છત્રી તા જોઇએજ. એવા વિચારવાળી અતિ પતિ ખર્ચાળ જાદ'-ગીતું ખર્ચ પુરું કરવા માટે પણ પુરા વખત મેળવી શકતા ન હાય તા તેમાંથી નિવૃત્ત થઇ સત્સ'ગમાં કે સભાચામાં જવાને માટે બિચારાને નવરાશ ક્યાંથીજ મળે? નજ મળે. પણ બધુઓ અને બહેના ! હું આપને એટલુંજ પૂછીશ કે શાં સાદાં સ્લીપર અને સાદા વસ્ત્રાથી આપહાં જીવન નહીં ટકરી? થોડા ખર્ચમાં સાદ' જીવન ગાળવાથી આપણને ન્દાનમ આવશે? શ' તેથી આપણી આળક એમછી થશે? માં આપણે તેવા જીવનથી માણસ મડી દેવરૂપ નહિ બનીએ? की तथी आप डीखपह भानता है। ते। ते क्रेड ગંબીર બૂલ છે. **ખરચાળ** જીવન ગા**ળના**રા મતુષ્યા સાદ' જીવન ગુજારી શકતાં **નથી.** બહેતર છે કે વધારાના પૈસા કાઇ લોકા-પયાગી કાર્યમાં વપરાય! પણ સાદ' છવન ગાળવું હાય. તા ખર્ચાળ જુંદગી તા નજ શાસો અને સાદું જીવન ગાળતાં સ્ત્રી પુરુષોની આપણા દેશને હાલમાં ખાસ જરૂર છે, તે જરૂર પુરી પાડવી તે આપણી સાૈની કરજ છે.

ર ખહારના ગાળ:—જે બહેના અને બંહુઓ બહાર મોડી મોડી વાતા કરે છે, મોડા હોવાના ડાળ કરે છે, બબકામાં કરે છે પણ ધરમાં કલેશ હોવાથી શાન્તિ મળતી નથી, તેમ ગરીઆઇ હોવાથી ખાવાને પુરૂં અત્ર પણ મળતું નથી. તેવા માણસા ખરૂં શું છે અને શું હોલું જોઇએ તેના વિચાર કરતા નથી. એવા માણસા કદી પણ સાદું છવન ગુજારી શકે નહિ. સાદું છવન ગાળવા માટે બહારના ડાળ દુર કરવા એ ખાસ જરૂરતું છે.

3 તત્વશાનના અભાવઃ-જેઓઆત્મા

અને પરવસ્તુઓના બેદ જાણતા નથી તથ આત્મશ્રદા વગરના અને ધર્મદાન રહિત હૈાય છે, તેવા સમાજસવા કરવા આગળ પડેલા-ઓની ઉજતિ તે માત્ર અવનતિ કપે પરિશુમે છે. અને અંતર દર્ષિથી જે નિરાકુળતામ્ય મુખ છે તેનાથી ઘણા દૂર રહેલા હૈાય છે. વળા ચાંકુ ઘણું ઉપરમાદીયું વાંચન થયું કે સેવા કરવા નીકળા પડે છે પશુ પાછળથી સેવાને ખહાને વિષયાની સેવા થવા માંડે છે, માટે શુદ્ધ અને સાદું જીવન ગાળવા માટે તત્ત્વફ્રા-નની ખાસ જ કર છે.

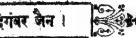
૪. સમય વ્યર્થ ગુમાવવા તે:-મ્હારી વડીક્ષ બહેના ! મહતે કહેતાં ઘર્લા દુ:ખ થાય 😝 કે આપણે આપણા શરીરની કે રાગ વગે-**રૈની જે**ટલી દરકાર કરીએ છીએ તેના પા માગ પણ વખતની દરકાર કરતા નથી મ્મને વખત એ શું ચીજ છે તેની કદર કરી શકતા નથી. દરેક કાર્ય વખતસર કરવાયો આ-પછી કેટલી વધી ઉત્રતિ શાક શકે તે આપ સાથી જરાપણ અજણ્યું નથી. આ જકાલ તા આહાર, નિહાર, તથા વિહાર, વિગેરના જે નિયમાં આરાગ્યશાસ્ત્રામાં બાંધેલા છે તે દરેક માણસ એમજ સમજે છે કે તે તા બીજાને માટે છે પણ પાતાને માટે નધી. તેમના આચાર જારો તેઓ આમ ન માનતા હોય એમ સચવે 🕏. એક ડાક્ટર કે વૈદ્ય પાતાના ગિત્રમંડળ સાથે ભાજન કરવા ખેસે, તા અનિયમિત (અપરિ-મિત) રીતે એક ખીજાની મશ્કરીમાં ભાજન કરી લે છે. વળા બાજનના સમય પણ એક નિશ્ચિત કરેલા હાતા નથી. એક દિવસ દશ વાંગે જમે તા ખીજે દિવસે ખાર વાંગે જમે અને ત્રીજે દિવસે વળી આઠ વાગે પણ જમે. मानी रीते उपहेशक पातेल अनियमित है।य તા પછી ખીજાઓ હાય એમાં શું નવાઇ? આવી રીતે આપણે ઘણી ક્રિયાએ અનિયમિતપ-**એ ક**રીએ છીએ. વળા આપણી કેટલીક બ્હેના અધાર તથા સવારતા મમુલ્ય વખત નકામા ગામ છે.

સવારે દશ વાગે પુરુષવર્ગ જમ્યા પછી તેઓ માળા મામાં ગમે તા લાકાનાં ઘર ગણે છે અશવા ખપાર થતાં સહ જાય છે ઉધવામાં વખત ગુમાવીદે છે. વળા કા⊌ કાર્મ તા માથે લઢાર્સ વહારીલે છે અથવા પારકાની નિંદા કરવામાં વખત ગાઉ છે અથવા તા કેટલીક બહેતા તા પતિને ખર્ચ કરાવવા માટે કાેઇ દાગીના જોઇ સુકે છે. ધન્ય છે એમની દત્તિઓને!!! આતાં સિવાય તેઓને ખીજાં કંઈ સઝત નથી અથવા તેઓ બીજાં કં ઇ કરી શકતી પણ નથી. બહાવાનું કહીશું તા કહેશે કે આળસ થાય છે અથવા તા કહેશ કે માંઢે ચઢતું નથી. આવા પ્રકારનાં બ્હાનાં કાઢે છે અને નિયમિત ભાષાવા માટે આવતાં પણ નથી. સ્ત્રી ન્નતિની સ્થીતિ આવી હાય ત્યાં તે માની ઉભતિની આશા તા ક્યાંથીજ શકાય? તથા સાદું જીવન ગાળવાનું તે! ખંતેજ ક્રેમ ! માટે તેઓને સમયના સદ્વપયાગ કરતાં પ્રથમ શીખવવાની જરૂર છે. વળી જો સલ્લામાં જવું હોય તા એ વાચ્યાથી તૈયારી થવા માં ડે-કઇ સાડી પહેરીશં ! ખૂટતે પાલીસ થયું કે નહિં? આજે વધારે કીમતી દાગીના જો⊌શં કે સાધારણ? ગાડી યા માટર તૈયાર છે કે નહિ? કે બાડાની ગાડી કરવી પડશે! આવા વિચારામાં ત્રણોક વાગે. પછી ચાહ થાય તે પીએ. વળી તે પછી વાળની કેન્સી કરવામાં અડધા કહાક સહજ વહી જાય એટલે ત્યાં પહેાંચતાં સુધીમાં સભા શેની છે કે તેના શું હેતુ છે તેના વિચાર કરવાના અલકલ વખત ગેળવી શકતાં નથી.ત્યાં કાઇ બાલવા કહે તા કહેશે કે છાતિમાં દખાવા થાય છે. ડાક્ટરે ના કહી છે. છેવટે કંઇ નહીં તા કહેશ કે મને શરમ ચાલે છે!

પ વૃથા ખકવાદ:-કેટલીક બ્હેના અને અક્ષક્ષિત પુર્ષો કંઇ પણ પ્રયોજન સિવાય ધરમાં અને બહાર ઘણાજ બક્લાદ કરે છે-અનુ-ઉપયોગી વસ્તુઓ વિષે ખાલ્યા કરે છે. નજીવી વાતને તાણી તાણીને લાંબી કરે છે, અને આવે અકવાદ કરી બીજાએપાને પણ કંટાના આપે છે, તે લોકોને પણ સાદું જીવન અસા-ધ્ય છે.

દ વિષયાની લાલસા:~ ગમે તે ઓ કે પુરુષ જેણે ઇન્દ્રિયદમન કર્યું નથી, ક્રોધા-દિક શત્રું માત્ર વેશ હાય છે. તથા જેમા માનને વ્યાધીન હોય છે. તેએ દેશ પરદેશમાં જદ પાતાના નિભાવ કરી શકતા નથી અને આદાપ્રતા લાભ ક્ષપ્ર શકતા નથી. સાદામ મા-નસિક અને રથુલ ખન્ને પ્રકારની જરૂરની છે. **ખાતસિક સાદાર્ક હોવા માટે** વિષયોની **હા**ન ક્ષસાને દર કરવી જોઇએ. જે મનુષ્યાને ઇન્દ્રિય સખ માટે સારાં સારાં ખાવાનાં ભાજનાની. પહેરવા માટે સંદર અને આકર્પણ કરતાં આ. ભવાલા અને વસાની ખાસ જરૂર પહે છે તથા જોવાના, સાંભળવાના, તથા સંઘવાના પદાર્થો પર માહિત હાય છે. તેવા માળસા પાનાના જીવનને સાદું ન ખનાવતાં ક્રષ્ટમય ખનાવે છે. તેઓને જરા વારમાં ગરમી લાગે. વળી પખા आहस वर्गर ता जास जीएंग्रेज, तेमा टाढ, તડકા પણ આવી રીતે જરા પણ વેઠી શકતાં નથી, તા સાદું જીવન તા ક્યાંથીજ ગાળ ? વળી પુરૂષી પણ ઝીલાં ધાતીયાં. તથા પાતાની મર્યાદા ન સચવાય તેવાં કપડાં પહેરે છે. સ્ત્રીએન પણ લજ્જા એ પાતાનું ભૂવણ છે એ ભૂલી જઈ ઉપર પ્રમાણે કરે છે. પણ આવાં કપડાં લાં મા વખત ટકતાં નથી તથા લાજ સચવાતી નથી. એ વાત બસી જાય છે. વિપયાને આધીન ચ્યાવા માણસા કદી સખમય થઇ શકેજ નહિ. તેએક આકળતામાંજ પાતાના અમુલ્ય સમય ગમાવી દે છે માટે ઉપર જણાવેલી વિરુદ્ધ વાતાને તિલાંજલી આપી દેશા અને શરીરને. મતને અને વચનને પોતાના કાળમાં રાખશા त्यारेक साहं छवन इहेवाशे. जहेता! के સાધ્વીએ પ્રાચીન કાળમાં થઇ ગઇ છે તેમણે પથ્યું જે કાળે જે હતું તેમાંજ સંતાવ માન્યા હતા. આપણું જીવન એવું હોવું જોઇએ કે

ते आपखने तेमल शीलने सूष्णम्य थाय. જેમ જેમ શારીરતા માહ ચાહા અને આત્મા તરક દર્ણિ જશે તેમ તેમ આનંદ क्षाममे. वणा आपत्तिकी आवे त्यारे तेथाने ધિ**યાં**થી દર કરતાં શીખવું એ આપણી કરજ છે. આપણે એ સાદાં રહીશં તા આપણાધી નીચેના કાંદીના મનુષ્યા વધારે સાદાં રહેશ अने तेओने पथ सभ धरी हारखंड तमे जे દશની સાડી પહેરા. તા તેમને પાંચની પહેર-વીજ પડે. પણ તમે સાદાં હૈા તા એ પછા સાદાધમાં રહી શકે. આપણા ક્ષેકા મંદિરે (દેહરે) જાય છે ત્યાં શ' વિચાર કરવા જોઇએ? શું ચિંતવન કરવું જોઇએ ! તે બધું બાજાએ મુક્ષી ચારે તરફ ખાલા દુષ્યામાં મન ધાલે છે. આવા મનુષ્યાનું જીવન કલ્યાહામય અમે સ્વતંત્રતાથી અમાર પોષણ થાય ? કરવાને ચેાગ્ય 841 છીએ 3 અમારામાં લખવા વાંચવાતી કે ઉદ્યોગ કરીને પેટ બરવાની શક્તિ છે કે નહિ ! આતા જે વિચાર કરે છે અને પોતાનાં શરીર પોષણના અર્થે બીજાને આપત્તિમાં નથી નાંખતા તેંચા સહેલાઇથી સાદું જીવન ગુજારી શકે છે. એટલંજ નિંદ પણ તેમનું જીવન જોઇને ખીજાંચાને બાધ મળે છે. **દેશભક્ત શ્રીયત** દાદાભાઇન જીવન લોકોને કેટલું ઉપયોગી થઇ પડે & તે નીચેના ઉદ્દગારપરથીજ જણાશે. '' તેઓ બીડી, તમાકુ, મરમાં વિગેર કાઇ પણ વ્યસનની વસ્ત્રને પાતાની આગળ નથી " પણ આવવા देता **341** વાત સાંભળીને કૈટલાક તે વસ્તુઓના ત્યાગ છે. તેજ પ્રમાણે આપણે પણ આપણે જીવન દુઢતામય તથા ક્ષેક્રાપથાંગી કરવું જોઇએ. એક નવલકથામાં ગુજરાદરીની ગૃહક્શળતા વાંચી અથવા નાટકમાં જોઇ ધ્રણા માણસોના સુધારા થયા છે. તા આપણે સાક્ષાત ઉચ્ચ જીવતા આપણી નજર આગળ જોયા પછી आपला अवनेना इम देखवी ते देश पर રીતે કઠ્ય નથી.



ખહેતા ! આપણે જગતની માતાઓ છીએ. આપણે માથે ભધી પ્રજાની જવનકળાના ભાર છે. એમ ન સમજો કે હું એકની માતા છે. પરંત જેટલાં તમારા સમાગમમાં આવે અને વળી તેના સમાગમમાં જેટલાં આવે તે <u> ખર્ધા તમારાંજ ખુસ્સાં છે. તે બધાં તમારીજ</u> પ્રજા છે. આપણું જીવન સુખમય કેમ થાય, સરળ ને સાદું કેમ થાય, તેને માટે વારંવાર ઉપાયા શાધવાથી જેમ કોડા એક દિવસ ભ્રમર થઇ જાય છે. તેમ આપણું જીવન પણ ઉચ્ચ શ્રશેલ એને આપણે મનુષ્ય મટી દેવરૂપ થઇ પુજાને પાત્ર થઇશં.

ખસ. અહેના! હવે હું વધારે લખવા નથી માગતી, પણ મારા સામાન્ય વિચારમાંથી જે કંઇ વિચારવા જેવું લાગે તેને એકાંતમાં ખેસીને આજે જરૂર વિચાર કરશા. મારા શાળ્યાને ચાપડીમાંને ચાપડીમાં નજ રાખશા. **મ્યાટલ' ક**હી હું વિરામું છું શોન્તિ:-શાંન્તિ:-शांन्तः-

कभी वह दिन आयगा ?

(हे ॰-भगवानदास शिक्षक, बीना-इटावा) "में हूँ धनवान और, तृ है घनहीन सुन, वहाँमें चला जा नहीं, पीछे पछतायगा। में हूं कुल-जाति-शुद्ध, तृ है इक दोधी जन. पानी भी न पिऊँ तेरा, किस काम आयगा। सभामें न आने दूँगा, मन्दिरमे जा न सके, शास्त्र जो पहेगा तो, कियंकी सजा पायगा। " मिट जांबें ये विचार, हिलें मिलें जैनी सब. जैन जाति बढे कभी, वह दिन आयगा?

विद्यावृध्यि करवा 🛬

(લેખક શ્રીમતી કંકુબહેન સુપુત્રી શેઠ હિરાચંદ તેમથદંદ દાશી, સાલાપુર)

હે સત્રખધા દેશના ઉત્સાહને ધારા ધવે: નિજ ભગિનીના દુખ જાણીને,ના દહન થાવા દા ભવે માતા પિતાના કત્યથા, બાળક ઘણું દુ:ખ બાગવે, દાખી હદયના દાખને, કહો દવા કાઇ જોગવે: નથી પૂર્વ કેરા ચામ જે, સન્યાસ લઇને ચાલિયે, નથી સૂખ ગૃહમાં બાસતું, ત્યાં કેઇ પેરે મ્હાલિયે; નીંદ્ર શુદ્ધ શાના સાંપડે, નવ ગુણાને કાઉ આપતાં, નવ કા દમાળુ આળિયા, આ અતુલ દુઃખને કાપતાં; વિદ્યા દિયે તા દુ:ખ ખસે, બીજા થકી ના નાસત. વિદ્યા વિના ના સુખ મળે,

એલું મને તા ભાસતું: विधा भर्य दैवत अने, विधा भई भड़ा धन छै, વિધા મહાયલમાં ખલી, વિધાથી સર્વ પ્રસન્ન છે: તે સુદ્ધ વિધા આપવા, આ નારીના **આશ્રમ** છે. યાગ્ય શિક્ષળ સ્પાપવાનું જ એનું કામ છે: વિદ્યા થકી માનવ દીપે, વિદ્યા વિનાના છે પશ. ધન ધામ દૌલત પામિયે(પણ)લાધે ન સુખ એથી કશ: સત્સંગમાં રહી દિવસ ગાળે. પ્રેમથી પ્રભુતે બજે. ≈ા લોક ને પરલાકતા, વિષ વાસના મળથી ત**ે**≎: પ્રેમ પ્રયત્નાન કરી. પરમાર્થમાં પગલાં ભરે. એ પંચમાં જે દારવ તે, ઉભય જન નિશ્વે તરે: ળધુઓ : તમે સ્વાર્થ છોડી, સમદ**છી** રાખશા. પુત્ર પુત્રીતે સાથ રાખી, ત્રાેગ્ય શિક્ષણ આપશા; ખ્હેન બાબી હાય તેને, પ્રેમ બાવે માનશા. ઉલતિના સાધના, તેને મેળવી કામતે જાળવી, ધર્મતે ભારત ભૂમીને ખીલવી, ધન્ય સર્વે માનશા;

સત્ત બધુઓ! આપ કેલતા હશા કે हवं ते। अन्दारी पांत अने अन्दारी जात સુધરવા લાગી છે, પણ હળ્ય એ સ્ત્રમમાં છે-અન્મલમાં નથી. જ્યાં સુધી મ્હારી વિધવા ખ્રદ્ધેના ચાગ્ય શિક્ષણ પામે નહીં, સધવા ઓમાને કેળવે નહી, તેમજ પાતપાતાના ધર્મ-કર્મને જાણે નહી સાં સુધી ગ્યાપણી કામ સધરવી સુશ્કેલ છે.

બાઇએ ! સુધારા કરવાની હોંશ તા ઘણી છે, પણ સાધનાની ખાજ કરવાનું આળસ છે, પછી માજ મારવાનું ક્યાંથી મળે ! ભાઇ મહારા ખી. એ. શત્ય, ભાભી બાળપા-શીમાં જય, તાય સાસુ તેના જીવ ખાય, કેમ સમાજ સુધારા થાય ! હાય ભાઇ! જરા તા વિચાર કરા.

વિધ્રવાઓના માથે પડી ખાન, રક્ષકાતું ગયું ભાન, અહેરશી પહેરશ કહેલે પાન્હ, ક્રોકરા કર્યાં કરે અપમાન, ક્રાક્રના રાખે તહેતું માન. પૈસા માટે કરે તૈરાન ભાક્યો! તેમને કરાવો તા ખરા ધર્મામૃતનું પાન, તૈયા બન્ને પામા પદ નિર્વોહ્યુ.

પુર્વ ચાર પ્રકારના હોય છે. એક પુર્વ, સાધારણ પુર્વ, સંત પુર્વ, અને મહત પુર્વ પોતેજ રૃષ્ટપુષ્ટ શઇને મહાલનારા સ્વાર્થી તે એક પુર્વ, જે પોતાના કુડું બીને પણ રૃષ્ટપુષ્ટ કરી કલ્યાણ ઇચ્છનારા તે સાધારણ પુર્વ, પોતાના સ્વાર્થ સાધી સમાજનું કલ્યાણ ઇચ્છનારા તે સંત પુર્વ અને જે નિક્સ્વાર્થી થઇને જગતને માટે જવન અર્પણ કરનારા તે મહતા પુર્વ કહેવાય. તેમાં ભાઇયા! આપણી કયા પુર્વમાં ગણના કરવાની ઇચ્છા છે?

ગુજરાતી નહીં આવે આગળ, રહે બધાની પાછળ, ગલ્લાને દઇદે સાંકળ, દાનમાં અતાવે આંગળ, કહેા ભાઇ! કેમ થાય આપણામાં મંગળ ?

ગુજરાતી **મ**હ્યું ભીકવડું, વ્યામળ ન કરે માહું, મનમાં રાખે તેઢું, બાહી! કેમ થાય ફડું?

મ્હને લાગે છે એમ કે લોકા દૂર કરે વ્હેમ, તે દઢ રાખે તેમ, તો દુ:ખ ભાગે આમ તેમ, અને સહેજ વધે પ્રેમ, પછી જગત રહે ક્ષેમ, સાથે મુક્તીના ટેમ.

વાતા કરતાં દિવસ ગયા, ન્હાઈ ધાઇ

ચાપ્પ્પા થયા, વિષય વાસનામાં ભુષા હવા, ને કાન કરતા ખેસી રહ્યા, તાપ ધનવ'તર તા નહીજ થયા; ધમ ચર્ચાથી અળગા રહ્યા. કાય ક્લેશના ભાર વહ્યાં. આત્મજ્ઞાનથી શૃન્ય રહ્યા, મનુષ્ય જન્મને **લા**લી ગયા. યમના તેડા આવી ઉભા થયા. આવ્યા તેવા કંઇક ચાલી ગયા. તા શાહ્યત લખથી રીતારહ્યા. તેમાં પાકેશ! ણગડલું કેટનું ? આપ**ણ**ંજ: માટે ભાઇચા, મ્હારી अकर अरक छ है प्रत्येक व्यक्तिओ पातान કલ્યારા એજ એક ધ્યેય આગળ રાખીને આયુષ્ય પૂર્વ કરવું, બીજાને કરાવવું, તેમજ કરનારાને અનુ-માદન આષ્**ું. મુંઅઇના આવિકાશમમાં** સ્ત્રાજ <u>સ</u>ધી ઉત્તર પ્રાંતની, માળવાની, વરાડની અને દક્ષિણ તરફની ધથીયે ખ્હેના ભણવા આવી. પણ અમ્હારા ગુજરાતની એ કે ત્રહા આવી. તે પસ ટંકા આયખાવાળી, તેથી આખા ગુજરાતપર તેની અસર થઇ કે મુંબાઇનું પાણી લાગે છે અને માણસ મરે છે. પણ બાઇઓ! વિચાર કરા કે મુંબાઇમાં બહાર ગામનું માણસ કેટલા લાખ રહે છે? તે કાંઇ બધા મરીજ જાય છે ? પણ મનમાં જે વ્હેમ પેઠા તે નિકળ ક્યાંથી ? વ્હેમ તા એટલું બગાડે છે કે ઉત્તમ મતુષ્ય જન્મ, ઉત્તમાત્તમ પામેલા જૈન ધર્મી. **અનુકૂળ સામગ્રી ખધું ખાવાઇ જાય તા ખહેતર.** પછા ગ્લેમ નહીં છોડવા: આ કેટલી આશ્ચર્યની વાત છે ? કેવી સમજુણ છે ? ભૈગાંઓના બંહેમ તા પુરૂષા કાઢ, પણ પુરૂષાના વ્હેમ કાય કાઢે ? તેમના વ્હેમ એશીજ નિક્રળ કે સ્વાધ્યાયના નિયમ કરી ઉત્તમાત્તમ શ્રં**થ**ના સ્વાધ્યાય સમજીને કરવા, માસિકપત્રાના સારા સારા ક્ષેખા વાંચવા. સત્સંગમાં રહેવું, સાંજ સવાર એકાંતમાં ખેસી **મ્યાત્મિક તત્વાના વિચાર કરવા, પરમે**ષ્ટીના ગુણતું સ્મરણ કરીને દર્શન, પૂજન, ભજન વગેરે કરવું, દેખાદેખી કરવાથી કેઇ પણ લાભ નથી, એમ સમજીતે સુત્ર ક્ષેાકાની નીતિ પ્રમાણે ચાલવું, ત પણ પરિક્ષા કરીતે જ કે જેથી બધા જ્લેમ તરત નીકળી જશે અને ખરૂ ધ્યાન પ્રાપ્ત થશે. એજ.



श्री भारता का विश्वासी के कि का सम्मान के कि का सम्मान के कि कि का सम्मान के कि कि का कि

क्ष्मित्वेंन 'श्रामाणिव का नाम सुना होगा। योगाणिव या योगप्रदीपके नामसे भी इसकी प्रसिद्धि है। इसमें योगियोंके जानने और आचरण करने योग्य तत्त्वोंका स्वरूप बतलाया गया है। यह काल्य भी है और तत्त्वशास्त्र भी है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि बहुत ही सरल, सरस और सुकर भाषामें इसकी रचना हुई है। इसके स्वाप्यायसे आत्माको गंभीर शान्ति मिलती है। जैन-साहित्यमें अपने दँगका यह एक निराला ही प्रन्थ है। इससे केवल जैन-धर्मानुयायी ही नहीं, सभी लोग जो योग-विद्यासे प्रेम रखते हैं।

इसके कर्ताका नाम आचार्य शुभवन्द्र है। यद्यपि प्रन्थभरमें एक भी श्लोक ऐसा नहीं है जिसमें शुभवन्द्र या उनकी गुरु-परम्परा आदिका उल्लेख हो, तो भी प्रत्येक भध्यायके अन्तमें लिखे हुए 'इति शुभवन्द्रा-चार्यविरचिते' पदसे माल्म होता है कि कोई शुभवन्द्र नामके आचार्य इसके निर्माता थे।

गुभचन्द्र नामके अनेक आचार्य और महारक हो गये हैं। उनमेंसे एकका उहेख उदयगिरि-सण्डगिरिके शिलालेखमें है जो कि कुलचन्द्रके शिज्य थे। दूसरे शुभचन्द्रका उहेन्त अवणबेलगुलके ४२ वें शिलालेखमें

है नो मलघारिदेवके या गण्डविमुक्त मलघा-रिदेवके, जिनको शिलालेख नं ० ९ ० में 'कुककु-टाप्तन मळघारिं भी लिखा है, शिष्य थे और विष्णुवर्धन राजाके सेनापति गंगरान और उनकी स्त्री छक्ष्मीके गुरु थे। इनकी समाचि इनकी मृत्युके पश्चात् उक्त गंगराजने बनवाई थी । शिलालेख नं० ४३ में 'मिद्धान्तचूडा-मणि' आदि विशेषण देकर इनकी प्रशंसा की गई है। इनका देहान्त विक्रम संवत् ११८० में हुआ है। तीसरे शुभचन्द्र देवकीर्तिके शिष्य और कनकनन्दिकं सहपाठी थे, ऐमा शिलालेख नं० ४० से मालूम होता है। ३९ वें शिला-लेप्तमें देवकीर्तिकी मृत्यु विक्रम संवत् १२२० में बतलाई है, अतः लगभग यही समय इनके शिष्य शुभनन्द्रका ममझना चाहिए। चौथे शुभचन्द्रका देहान्त वि० संवत् १२७० में हुआ है। ये मलवारि रामचन्द्र यतिके प्रदिाण्यके शिष्य थे और इनका पहिला नाम 'बोगरा राजा' था । इनके मुख्य शिष्य पदानन्दि और माध-वचन्द्र थे जिन्होंने गुरुकी समाधि बनवाई। यह कथन जिल्लालेख नं० ४१ में है। इसीमें यह भी लिखा है कि कुलभूषणके जिएय मायनन्दि और मायनन्दिके शुभनन्द्र त्रेविद्य पाँचवें शुभचन्द्र अनेकानेक प्रन्थोंके कर्ता हुए हैं। वे सागबाड़ेके पट्टपर भट्टारक हुए हैं। विक्रम संवत् १६००के आसपास उन्होंने पाण्डवपुराण, कार्तिकेयानुप्रेक्षा टीका, संशायिव-दनविदारण आदि ३०-४० ग्रन्थोंकी रचना की है। परन्तु हम इस लेखमें ज्ञानार्णवके कर्ता शुभचन्द्रके विषयमें कुछ विचार करना चाहते



नेन एँग्ला संस्कृतस्कृत प्राद्धियान दृहत्रीक वार्षिकात्मवका ग्रुप।

AND AND A

Alternative Contraction



हैं जो कि उक्त पाँचोंसे जुदा मालूम होते हैं और जिनकी गुरु-परम्परा आदिसे हम सर्वेधा अनिमज्ञ हैं।

आचार्य विश्वभूषणका बनाया हुआ 'भक्तामर चरित ' नामका एक संस्कृत प्रत्य है। किव विनोदीलालजीन उसका एक हिन्दी पद्यानुवाद किया है जिसका साधारण कथा-प्रेमियों में बहुत प्रचार है। इस प्रन्थकी पीठिकामें आचार्य शुभनन्द्रके विषयमें एक कथा लिखी है जिसका सारांश यह है:—

'' पर्व कालमें उज्जिथिनी में भिंह या सिंहमट नामका एक राजा राज्य करता था। उसके यहाँ मत्र ही ऐश्वर्य अतुःश्नीय थाः परंतु पुत्रके अनावमे राजसंसारमें सर्वदा ही विवादकी मिलन छाया दृष्टिगोचर हीती थी। एक दिन राजा अपनी रानीके सहित वनकीडा करने गया था। उसे महसा एक सरोवरके निकट, मुंन वनमें, एक सद्योजात मुन्दर शिश पड़ा हुआ दिखलाई दिया। रानाने बालकको उठाकर रानीकी गोडमें दे दिया और राजभवनमें आकर मंत्रीके परामर्शमे यह प्रचार कर दिया कि रानी गर्भवती है। थोंडे ही दिनोंके बाद सिंहरानके यहाँ पुत्रका नन्मोत्सव किया गया। मुख़के बनमें मिछनेके कारण इस बाउकका नाम 'मुख्न' रक्रका गया । मुख्न जब जवान हुआ, तब उसका ' स्ताबती ' नामकी एक राजकन्याके साथ विवाह कर दिया गया।

इसके कुछ ही दिन बाद गमगुच ही सिंहरानकी महिषी गर्भवती हुई। यथासमय उसने एक पुत्रको जन्म दिया और उसका नाम सिंहल या हिन्धुल रक्ता गया। प्रास्वयहक सिन्धुल मृगावती नामक राजकुमारीके साथ परिणीत हुआ। इस मृगावतीके गर्भसे सिन्धुलके एक साथ युगल पुत्र हुए। ज्येष्टका नाम शुभचन्द्र और कनिष्ठका नाम भनेहरि स्वस्था गया।

एक दिन सहसा बादलोंको रँग बद-लते हुए देखकर सिंहाराजको वैराग्य हो गया, वे मुझ और सिन्धुलको राज्यभार सोंपकर जिनदीक्षा ले गये और तपस्या करने लगे।

भर्तृहरि और शुभचन्द्र दोनों ही बड़े वीर थे। उनकी शारीरिक शक्ति बहुत बढ़ी हुई थी। राजा मुंजको एक दिन एक तेली अपने बरका परिचय दे रहा था कि उस समय राजा सिन्युल और उनके इन दोनों ल्ड इकोंने अपना अमित बल दिललाकर मुजको चिकत और भयभीत कर दिया। इसपर मुजने राजकुमारोंको मारनेके लिए एक पड्यंत्र रचा। राजकुमार लुटपनहीसे न जाने क्यों संसारसे उदासीन रहा करते थे। इस पद्यंत्रका पता पाकर उन्हें और भी उदासीनता हुई और तब अन्यायका प्रतीकार किये बिना ही वे गृह छोड़कर बनमें चले गये। शुभचन्द्रने तो जिनदीक्षा लेली और भर्तृहरि किसी तांत्रिक तापसके शिष्य हो गये।

बहुत समयके बाद एक वार शुमचन्द्र और मर्तृहरिका साक्षात्कार हुआ। यर्तृहरिने बहुत समय तपस्या और कष्ट सहकर जो मिद्धि प्राप्त की थी, वह योगी शुभचन्द्रके सामने तुच्छ सिद्ध हुई। मर्तृहरिको स्वीकार



करना पड़ा कि वास्तवमें मैं कुछ भी नहीं हुआ। उन्होंने पश्चात्तापपूर्वक अपने बड़े भाईके पास दिगम्बरी दीक्षा ले ली। इसके पश्चात् शुभवन्द्रने उन्हें मुनिमार्गमें हह होनेके लिए तथा योगका स्वरूप समझानेके लिए ज्ञानार्णवकी रचना की, जिसे पड़कर भर्तृहरि परम योगी हो गये।

मुझ राज्य-तृष्णा और असूयावश सिन्धुलको भी मारनेका प्रयत्न करने लगा। अनेक प्रयत्नोंमें निष्फल होकर अन्तमें एक दासीके द्वारा उसने सिन्धुलके नेत्र फुड़वा दिये। उसी समय उनके प्रसिद्ध विद्याविलासी और यशस्वी भोजका जन्म हुआ। सिन्धुलके अन्धे होनेपर मुझको अपनी कृतिपर पश्चम्ताप हुआ। योग्य होनेपर उसने भोजको राज्य दे दिया और आप एकान्तवास करने लगा।"

इस कथाके अनुसार मुझ, भाज, भिहरि और शुभचन्द्र समकालीन पाल्म होते हैं। इस कथाके उत्तरार्धमें—जिसे हमने अपने भक्तामर (पद्यानुवाद और टीकासिहा)में प्रकाशित किया है—काल्ट्रिशम, वररुचि, धनंजय और मानतुंगमृरिको भी इसी ममयका विद्वान् बतलाया है; परन्तु इतिहासका अध्ययन बतलाता है कि मुझ और भोज तो अवस्य ही समकालीन हैं, शेप सब जुदा जुदा समयके विद्वान् हैं—उनके बीचमें सैकड़ों वर्षोका अन्तर है। आनसे लगभग ९ वर्ष पहले जब हमने ज्ञानाणवकी भूमिकायें शुभन्दन्द्राचार्यका समय निर्णय करनेका प्रयत्न किया था, तब हमारा विद्वास था कि जैनसम्प्रदायकी प्रत्येक कथा बिरवास था कि

छक्छ सत्य केवछी-वाक्य है, इसिछए उस समय उसमें शंका करने या उसे असस्य समझनेकी ओर तो प्रवृत्ति ही कैसे हो सकती थी? अतः उस समय हमने शिक्तभर परिश्रम करके यही सिद्धः करनेका प्रयत्न किया था कि उक्त सन विद्वान समकाछीन थे, भर्तृहरि दिगम्बर मुनि हो गये थे और वास्तवमें उन्हींके छिए ज्ञानाणी-वकी रचना की गई थी। परन्तु जब इस प्रकारकी और और कई कथाओंके पढ़ने और उनके ऐतिहासिक तत्त्वोंक खोजनेका काम पड़ा, तब उक्त श्रद्धाका रूप बदछ गया। अब इस तरहकी कथाओंको इतिहासकी दृष्टिसे मत्य माननेक छिए सहसा प्रवृत्ति नहीं होती।

न हम लगभग दो वर्षसे विचार कर रहे थे कि शुभचन्द्राचार्यके सम्बन्धमें एक लेख लिख दिया नाय और ज्ञानार्णवकी भूमिकामें जो बार्ने लिखी हैं, उनका प्रतिवाद कर दिया नाय। इनके लिए साधन-सामग्री मी कभी की एकड़ी कर ली गई थी; परन्तु लेख अब तक न लिखा गया और अभी वर्ष छह महीने शायद और भी नहीं लिला नाता, यदि बँगलाके सुप्रसिद्ध मामिकपत्र ' भारतवर्ष ? में श्रीयुत हरि-हर भट्टाचार्य हमारे ज्ञानार्णववाले लेखकी ऐतिहासिकताको 'उनमत्तप्रलापवत' कहकर हमें सचैत न करते।

अस्तु । अब देखना यह चाहिए कि शुभचन्द्र आदि किम किस समयमें हुए हैं । सबसे पहिले मर्तृहरिको छीनिए;—

मा॰ पाटक आदि विद्वानोंने भर्तृहरिका समय विक्रम संवत् ७०० के छगभग निश्चित किया है। पाठक महाशयने अपने 'मर्लृहरि और कुमारिल' नामक निषम्बमें इसका अच्छी तरह विचार किया है। चीन देशका प्रवासी हुएनसंग वि॰ संवत् ६८६ में भारत-अमण करनेके लिए आया था और वि॰ सं० ७०२ तक इस देशमें रहा था। उसने अपने प्रवास-वर्णनमें लिखा है कि इस समय व्याकरण-शास्त्रके पाण्डिल्यमें मर्तृहरि बहुत प्रस्पात हैं। इससे मालूम होता है कि भर्तृहरि वि॰ संवत् ७०० के लगभग हो गये हैं।

प्रसिद्ध जैन दार्शनिक विद्यानंद्रस्वामी या आवार्य पात्रकेमरीने भर्तृहरिक प्रसिद्ध ग्रन्थ 'वाक्यादीय' की एक कारिका × अभी अष्टमहर्म्यामें उद्धृत की है और विद्यानन्दका समय विक्रम संवत् ८५०के लगभग निश्चित हो चुका है। क्योंकि आदिप्रगणके कर्ता जिनसेमने-जिन्होंने कि अपना प्रन्थ विक्रम संवत् ९०० के लगभग अधूरा श्रोड़ा है-विद्यानन्द्रस्वामीका स्मरण है किया है। इससे भी मालूम होता है कि भर्तृहरि विद्यानन्द्रके पहले वि० संवत् ७००के लगभग हुए होंगे।

भर्तृहरिके विषयमें एक मत और है।

भाग ।

वह यह कि भर्तृहरि विक्रमादित्यके भाई थे.
और वे विक्रम संवत्के प्रारंभमें हुए हैं।
वाक्यपदीयके सिवाय प्रसिद्ध शतकत्रयके
कर्ता भी वे ही हैं। यह मत कहाँ
तक ठीक है, इसका विचार करनेकी
हमें आवश्यकता नहीं, क्योंकि हम भर्तृहरिका
समय निर्णय करनेके लिए नहीं बैठे हैं।
हमारे लिए इतना ही जानना काफी है कि
विक्रम संवत् ७००के पहले हा राजर्षि भर्तृहरि
हो गये हैं और इसलिए वे भोज आदिके
समकालीन नहीं हो सकते।

मुझ और भोजका समय निर्णय करनाः कुछ कठिन नहीं । प्रसिद्ध जेनाचार्य अमित-गतिने अपने सुभाषिनरत्नसन्दोहकी प्रशस्तिमें *लिखा है कि विक्रम संवत् १०५० में मुझ राजाके राज्यकालमें यह प्रन्य समाप्त हुआ । मुझकी मृत्यु कल्याणके राजा तैलिप-देवके द्वारा हुई थी और उसके बाद भोजका राज्याभिषेक हुआ था । मेरुतुइस्रिकी प्रकथिनतामणिमें ‡लिखा है कि विक्रम संवत् १०७८में भोजको राज्यपासि हुई । अन्य वर्द् शिलालेखों से भी भोजका यही समय निश्चित होता है । अतः सिद्ध हुआ कि भर्तृहरि इनसे वर्द् सौ वर्ष पहले हो चुके हैं ।

भ सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः गब्दानुगमाहते।
 अनुविद्धमिवाभाति सर्व शब्दे प्रतिष्ठितम् ॥
 भ स्वाकलक्क-श्रीपाल-पात्रकेसिरणां गुणाः।
 विदुषां हृदयारुता हारायन्तेऽतिनिर्मलाः॥
 जिनसेनस्वामीके समय-निर्णयके विषयमें
 ऐखो, इमारी िखी हुई विद्वद्यन्मालका प्रथम

समारुढ पृतिष्ठदशवसति विक्रमन्पे,
 सहस्रे वर्णाणां प्रभवति द्विपञ्चाशदिषेके ।
 समातं पञ्चम्यामवित वर्णाणं मुख्यन्यतो,
 सिते पक्षे पीषे बुधितिमिदं शास्त्रमन्थं ॥

विकसाद्वत्सरादष्टमुनिष्योमेन्दुसंमिते ।
 वर्षे सुखपदे भोजभूपःपट्टे निगशितः ॥

इमी तरह कालिदाम आदिका समय भी इनसे मेल नहीं खाता । कालिशम और वर-रुचि दोनों विकामकी सभाके रत्न थे। कमसे कम छट्टी शताब्दिके बादका तो उन्हें कोई भी नहीं बतलाता । धनंजय महाकविकी प्रशंसा बिक्रम संबत ९४१ तक राज्य करनेवाले अबन्तिवर्माके काइमीरनरेश समसामायिक आनन्दवर्धन और रस्त्राकर कवियोंने की है । इसी तरह वि० संवत १०१६ में महाकवि सोमदेवसूरिने राजशेखरकी प्रशंसा की है और उक्त राजगेष्वरंन धनंजयकी प्रशंसा की है। अतएब धनंजयका समय विकमकी नौवीं शताब्दिके पहिले मानना चाहिए ।

अब यह देखना चाहिए कि ज्ञानाणवक कर्ता द्यामचन्द्र कन द्वुए हैं ? ज्ञानार्णवेक प्रारंभमें उन्होंने समन्तभद्र, पृज्यपाद, जिनसेन और महाकलङ्कका स्मरण किया है। इनमें सबसे पिछले आचार्य जिनसेन हैं और इन्होंने विक्रम संवत ९००के लगभग अपना आदि-पुराण अधूरा छोड़ा है। अतः शुभचन्द्राचार्य इनसे पीछे हुए हैं। कितने पीछे हुए यह जाननेकं लिए हमने ज्ञानार्णवंक श्लोकोंको देखा, जिन्हें प्रन्थकर्तीने अन्य प्रन्थोंसे 'उक्तं च' कहकर उद्धृत किया है। ७५में निम्नलिखित क्षोक हैं:— ज्ञानहीने किया पुंसि परं नारभते फलम्। तरोष्ट्रायेव कि लम्या फलश्रीनेष्टिष्टिमिः॥ शानं पङ्गी फिया चान्धे निः अदे नार्थकृदद्वयम् । ततो ज्ञानं किया श्रद्धा त्रयं तत्पदकारणम् ॥ इतं ज्ञानं कियाशुन्यं इतं चाजानिनः किया । बाबकाय-वको नष्ट: परश्मिष च पङ्क्षकः ॥

ये ही तीनों स्रोक यशस्तिलकके छहे आधासमें (पृष्ठ २७१)में ज्योंके त्यों इसी क्रमसं छिखे हैं। इनमेंसे पहले दो तो स्वयं यशस्तिलककारके हैं और तीसरा यश-मितलकमें ' उक्तं च ' वहकर किसी अन्य प्रन्थसे उद्धत किया गया है। ज्ञानार्णवके कर्तीके लिए ये तीनों ही अन्यकृत थे, इसलिए उन्होंने तीनोंको 'उक्तं च' कहकर उद्भत कर दिया । परन्तु यह निश्चयपूर्वक कहा ना सकता है कि उक्त श्लोक यशस्तिलकसे ही उठाये गये हैं। यशक्तिलककी रचना विक्रम संवत् १०१६मं हुई है। यदि यश-म्तिकक्ता प्रचार ५०-६० वर्षीमें ही इतना हो गया हो कि वह दूसंग प्रान्तनिवासी ज्ञुभवन्द्र आचार्य तक पहुँच गया हो, तो मानना पड़ेगा कि ज्ञानाणविकी रचना ग्यारहवीं शताब्दिके अन्तिम चरणसे पहिले न हुई होगी।

ज्ञानाणीवके एष्ठ १७७में एक स्रोक पुरुषार्थसिद्धथुपायका उद्धत किया गया है; परन्त अमृतचन्द्रस्वामीके समयका निश्चय न होनंक कारण वह निरुपयोगी है। और भी कई यन्थोंके श्लोक उद्भृत हुए हैं; परन्तु हम परिश्रम करके भी पतान लगा सके कि वे कौन कौनसं ग्रन्थेंकि हैं । जिनका पता लगा प्रन्थोंकी रचनाका समय मालूम न हो सका। उपर जो प्रमाण दिये गये हैं, उनसे यह निर्णय होता है कि विक्रमकी ग्यारहर्वी शता-व्दिकं उत्तराईके बाद किसी समय ज्ञानार्णवकी ग्नना हुई होगी।

आचार्य विञ्वभूषणकी कथामें

गया है कि भर्तृहरिको सुमार्गपर लानके लिए तथा उन्हें तत्त्वोपदेश देनके लिए शुभचन्द्रने यह ज्ञानाणिव नामक प्रन्थ बनाया था; परन्तु ज्ञानाणिवके पढ़नेसे यह बात मालूम नहीं होती। ज्ञानाणिवके कक्षी कहते हैं:— न कविन्वाभिमानन न क्षीतिप्रसरच्छ्या। कृति: किन्तु मदीयय स्वबोधायैय केवलम् ॥ १९॥

अर्थात्-मेरी यह रचना कवित्वके अभि-मानमे तथा संमारमें कीर्नि फेलानेके अभिप्राय से नहीं हुई है, केवल अपने बोधको नहानेके लिए ही मैंने यह प्रयत्न किया है। यदि भर्नुहरिके लिए इसकी रचना होती तो अवस्य ही इस बातका उद्देश्व किया जाता। जैन-मम्प्रदासके ऐसे अनेक प्रत्य हैं जिनमें स्पष्ट राज्योंमें लिला है कि अमुक शिष्य, पुत्र अथवा मित्रके लिए इसकी रचना हुई है। तब ज्ञानार्णवक कर्ता भी इस प्रचार कह सकते थे। अतः यह कहना केवल कल्पना है कि ज्ञाना-र्णव भर्नुहरिके लिए बनाया गया था।

यह बात भी असत्य है कि भर्तृहरि नेनमुनि हो गर्य थे, अथवा उनके शतकत्रयपर
नैनधर्मकी लाया पड़ी हुई है। शतकत्रयके
पट्नेसे स्पष्ट मालुम होता है कि वे शव थे—
शिव या महादेव ही उनके उपास्य देव थे।
हमारे यहाँके कई ग्रन्थोंमें वैराम्यशतकका
निम्न लिखित श्लोक उद्भृत किया गया है
और इससे उनका नैनत्व अथवा नैनधर्मके
प्रति भक्तिभाव प्रसिद्ध किया गया है; परंतु
इसमें 'कदा शंभो भविष्यामि यह पाठ बदल
कर 'कदाहं संभविष्यामि पाठ कर दिया
गया है:—

एकाकी निस्पृहः शान्तः पाणिपात्रो दिगम्बरः। कदाशंभो ! भविष्यामि कर्मनिर्मूलनक्षमः॥

रातकत्रयकी तमाम छपी हुई पुस्तकों में यही पाठ है। रातकत्रयके टीकाकार रामचन्द्रने भी इसी पाठके अनुसार टीका की है। इसके सिवाय रातकों में बीसों कोक उनके कर्ताका रैवत्व प्रकट करनेवाले हैं। गंगा और काशीकी प्रशंमाके भी अनेक कोक हैं।

द्वानार्णवके पृष्ठ ८२में नीचे स्मित्रा १ठोक 'उक्तं च प्रन्थान्तर' कहकर दिया है— ''मुक्ताः श्रियः मकलकामदुधास्ततः किम् । सन्तर्पिताः प्रणियनः स्वधनेस्ततः किम् ॥ न्यस्तं पर्द शिरिक्ष विद्विषतो तनः किम् ॥ कर्षं स्थितं तनुभृतां तनुभिस्ततः किम् ॥

निर्णयसागरके छप हुए सटीक भर्तृहरि शतकत्रयके एष्ठ १९६में ६० नं० (वैराग्य शतक) पर यही रुठोक दिया हुआ है। अन्तर केवल इतना है कि इसका दूसरा और तीसरा चरण उसका नीसरा और दूसरा चरण है। इसके सिवाय 'स्वधनैः 'के स्थानमें 'विभवैः ''तन्तुभिः 'की जगह 'तनवः ' और 'कल्पं स्थितं' की जगह 'कल्पास्थिताः' अन्तर हैं, जो पाठान्तर मात्र हैं। इसके आगेका एक रुठोक और भी 'उक्तं न 'है जिसके दो चरण—

' तस्मादनन्तमजरं पग्मं विकासि,

तक्रम चिन्तय किमेभिरसिक्किलैं:॥ '' भर्तृहरिके वैराग्य शतकके ६ ७वें स्ठोकके पूर्वार्थकी बिलकुल काषी है।

स्ममे मालुम होता है कि ज्ञानार्णवके कर्ताके समय भर्नृहरिका वैराग्यशतक प्रविद्ध दिगंबर जैन ।

था और उन्होंने वैराग्यशतकपरस ही उक्त श्लोक ' उक्तं च ' कहकर उद्धृत किये हैं।

ज्ञानार्णवमें ऐसे भी अनेक श्लोक मिलते हैं नो भर्तृहरिकी छाया हेकर रचे गये हैं। उन्हें पढ़नेसे भी मालुम होता है कि ज्ञानार्णवके कत्तीसे शतकत्रय छुपा हुआ न होगाः-शस्या रैलिशिला गृहं गिरिगुहा वस्नं तरूणां त्वचः सारङ्गाः सुहृदो ननु क्षितिरुहां दृत्तिः फलैः कोमलैः। येषां निर्झरमम्बुपानमुचितं स्तयेव विद्याङ्गना मन्यं ते परमेश्वराः शिरिस यैर्बद्धो न सेशल्लिलः॥

—वैराग्यशतक, श्ला० ९२ ।

विन्थ्याद्विनेगरं गुहा वसतिकाः शय्या शिला पार्वती दीपाश्चन्द्रकरा स्गाः सहचरा मेत्री कुलीनाङ्गना । विज्ञानं सलिछं तपः सदशनं येषां प्रशान्तात्मनां धन्यास्ते भवपञ्जनिर्गगपथप्रोद्देशकाः सन्तु नः ॥

-- ज्ञानाणेव, पृ० ८७।

इन बातोंसे मालूम होता है कि विश्य-भूषण भट्टारककी कथामें सत्यका अंदा बहुत ही कम है। इतिहाससं उमका कोई सम्बन्ध नहीं है। मुंज और भोजकी जो कथा प्रबन्धचिन्तामणि आदि पुस्तकांमें लिखी है, उसीको अपनी इच्छानुकूट घटा बहाकर यह कथा तैयार की गई है और इसके बीचमें शुभ-चन्द्रको प्रधानता देनका प्रयत्न किया गया है। भक्तामरचरित्रको छोडकर इसके पहिलेके अन्य किसी प्रन्थमें हमने इस कथाको या इसके मूल कथानकको नहीं देखा। बहानारी रायमल्लजीकृत भक्तामरचरित्रमें भी जिसका कि हिन्दी अनुवाद ज़प चुका है, यह कथा नहीं है। अतएव कमसे कम हमें तो इसके

कल्पित होनेमें कोई सन्देह नहीं है। यदि कोई सज्जन हमारे इस विस्वासको हटा देंगे, तो हम उनके बहुत ही कृतज्ञ होंगे।

अब केवल एक बात और कहवर हम इम लेखको समाप्त करेंगे।

श्वेताम्बरसम्प्रदायके आचार्य हेम-चन्द्रका बनाया हुआ योगशास्त्र नामका एक प्रन्थ है । आचार्य हेमचन्द्रकी विकम संवत् १२२९ में हुई है। हम नहीं कह सकते कि ज्ञानार्णव योगशास्त्रक पहिले बन चुका था या नहीं; परन्तु उसके श्लोकोंका प्रतिबिम्ब योगशास्त्रमं स्पष्ट लाई देता है:--

विज्ञपाकफलमम्भोगमन्त्रिभं तद्धि मैथुनम् । आपातभात्ररम्यं स्याद्विपाकेऽत्यन्तभीतिदम् 11 90 11

> ज्ञानाणीय प्र॰ 856

रम्यमानातमात्रे यत्परिणामितिदारुणम् । किम्पाकफलसंकाशं तत्कः सेवेत मैथुनम्॥७८॥ योग्यशास्त्र, दि० प्रकाश ।

विरज्य कामभौगेषु विमुच्य यपुषि सृहाम् । यत्य चित्तं स्थिरीभृतं सहि ध्याता प्रशस्यते॥३॥ स्वर्णाचल इवाकम्पा ज्योतिःपथ इवामलाः । समीर इव नि:मङ्गाः निर्भमत्वं समाश्रिताः॥१५॥ ज्ञानाणेव, ए० ८४-८६।

विरतः कामभौगेन्यः स्वरारीरऽपि निःस्पृहः । संवगहद्निर्मग्नः भर्वत समता अयन् ॥५॥ संमरुरिव निष्कम्पः शशीवानन्ददायकः। समीर इव निःसङ्गः सुधीर्ध्याता प्रशस्यते ॥७॥

योग्यशास्त्र सप्तम प्रवा

चन्दाबाड़ी, बम्बई आवणशुक्का २ नाधूराम भेमी। १९७३ वि-





बेण्डः-श्रीमती बिबताल्डेन, श्राविडाश्रम-मुंणार्ध श्रीजिन शासन गुरु नमृं,नाना विश्वगुण्वकार। सेवाधर्म चित्त धारके, कहा संगळाचार ॥

હે મારી પ્રિય બ્હેના તથા બધુએ!? આ નૃતન વર્ષના ભેઢમાં આપણે સેવા-ધમ ફાન કહેવા અને કેવી રીતે બજાવવા તે વિષે મારી અલ્પ શક્તિ પ્રમાણે એ એ!લ આપની સવામાં સમર્પણ કરું છું તે આપ સ્વીકારશા એવી આશા રાખું છું. આ વિષય મણા ગહન છે, તે મારા જેવી અલ્પ ખુહિને હાથવંડ સસુદ્ર તરવા સમાન છે. તાપણ સંવાધમંત હદયમાં સ્થાન આપી,આપ બ્હેના તથા બધુએ!ને મારા યનિકંચિત અનુભવ દર્શાવં છે.

સેવા એટલે કાેઇને પણ અમુક કાર્યોમાં કાેઇ પ્રકારે ઉપયોગી થઇ પડવું.

શારિરીક ખળ સંત્રા કરવામાં હોલું જેને ઇએ. को शाविरीक थण न होय ते। ते हही मेवाधर्भ जन्नवी शहाय नदी. भाटे प्रथम तेना ઉપાયા ચાજવા જોઇએ. તેને માટે વાળક જ્યારે મલેમાં હૈાય ત્યારથી માતાએ કાળજી રાખવી જોઇએ. ગર્ભસ્થ ભાળકતે કાંઇ તુકશાન **થા**ય તથા તેનાં શારિરીક ખળતે ધક્કા લાગે એવા પદાર્થીતે આવાતા ત્યાગ કરવા જોઇએ. ગબિસી આંગ ઉપવાસ ન કરવા તેમજ અતિરાય ભારી-પા**ચનકિ**યા ભરાભરત થાય. એવા બારાકતા ત્યાગ કરવા તથા વ્યહિને મેંદ કરનાર માટી વિગેરે ન ખાવી જોઇએ, પરંતુ સા**દા અને** મગજને યુષ્ટિકારક હલકા ખારાક ખાવા જેથી માતાને તાવ વગેરે આવે નહીં. તેણે હમેશા આનંદમાં રહેવું અને કાઇ પણ જાતની ચિંતા રાખવી નહિ. પણ જ્યારે માતા ગમે તેમ વાયડા અને ભારી ખારાક ખાય તા પછી તાવની શરૂયાત થાય અને પછી ગર્ભસ્થિત ખાળક માતાનાં તાવની ગરમીથી તવાઇ જાય અને કાઇ કાઇ વખત તા ગર્ભપાન પણ થઇ જાય. આ માટે માતાએ ખાસ ધ્યાન આપવું. કૂકત ગર્ભ ધારેણ કરવાથીજ માતાની સેવા ખજવાતી નથી, પણ તેના નિય-માને પાળવાથીજ માતાની સેવા ખજવાય.

आवी रीते भाताती ६२०८ भन्नववाने પ્રથમ માતા સશિક્ષિત હોવી જોઇએ. માતા स्रशिक्षित हो। तोल भ=यांने ઉદાર, निर्भूष, ધીર, વીર, ઉદ્યાંગી અને સેવાધર્મને આદરનાર અર્થાત કરનાર નિયજાવી શકે છે. દાખલા તરીકે જાઓ કે શં માતા કંજાસ હશે તા તેના બાળકા ઉદાર બને એવી આશા બંધાય ખરી કે? કહી નહિં. તે તેા એક પાઇ પહા કાઇને આપશે નહિ. વળા માતાજ જો અહીકાશ હોય તા તેનાં ખાળકા ક્યાંથી નિભય થાય ? આવી અત્રાન માતાઓ બાળકતે ન્હાનપણમાં **અનેક** જાતના ભય આપે છે જેવી રીતે કે"-મહાર જરો તા બાવા પકડી જરો, આ બાલુ છે, બૂત છે." વગેરેથી નહાનપણથીજ ડરપાક ખની જાય છે. આથી બહાર જઇને કામ કરવાતી તા વાત દર રહી પણ ધરમાં ને ધરમાં પણ પાણી લેવા જવું હોય અગર નીચેથી માળ જવું હાય. તા બાળકનું હદય કંપે છે. પણ જો આળકાતે અય દેખાડવામાં આવેજ નહિ તો એ ડરતા સ'સ્કાર ખીલકલ અતા હદયમાં હોતા नथी, तथी ते लयां भेरहते त्यां कधने निर्लं યપણે કામ કરી શકે છે અને સેવા, દેશ સેવા यो ज <u>ખુજાવી</u> પણ શકે છે. તેમજ માતા ज्यारे धैर्यवती હ્યાય છે ત્યારેજ તેનાં બાળકામાં શાંતિ ર્વેયના ગુણ હાય છે નહિતા ધાડું કાંઇ કષ્ટ આવતાં ગભરાઇ જાય છે. આ ગભરાવાનું કા રણ તેનાંમાં શારીરિક તથા માનસિક ખળતી



ન્યૂનતા દ્વાય છે, તે માટે માતાએ શારિરીક બ**ળતે વધારવા આળક પાસે ન્હાનપણથી** કસરત કરાવ**લી**, ગજી રાખી તેની પાસે કામ કરાવવું તથા આળસુ ન બને તેની ખાસ સં**ભા**ળ રાખવી.

હંમેશ બાળકાને આનંદિત રાખવાં, તેનું આળમ દૂર થાય એવી ખૂબ રમતા ્રમાડવી, તેની પ્રાનસિક શક્તિ વધારવાને શુદ્ધ હવાપાણીની દેખરેખ રાખવી તથા તેનાં કપડાં તથા સુવાનાં બિછાના સ્વચ્છ રાખવાં. કેટલીક અગ્રાન માતા- આ પોતાના બાળક શરીરે જલદી સારાં બતે એવી આશાર્થી વાંરંવાર ધવરાવ્યા કરે છે. અતે આતું પરિ- આપ્યા કરે છે અને આતું પરિ- આપ્યા કરે છે અને આતું પરિ- આપ્યા કરે છે, સુકતાન જેવા રાગા પણ લાઇ જવું પડે છે, સુકતાન જેવા રાગા પણ શક નામ 'છે અને તેઓ બાગ્યેજ ઉછરી આવે છે અને ઉછેરે છે તાપણ નિર્ભળ હાવાને લીધે સેવાધર્ભને બજાવી શકતાં નથી.

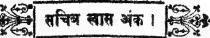
તેમજ મિતાહારની પણ જરૂર છે. વારંવાર ઉપરાઉપરી જરા રડયું કે ખાવાનું આપી મા કંઇ કામ કરવાને મંડી પડે છે, તેથી બા-ળકની પાચનક્રિયા બમડી જાય છે અને હમે-શ્રાને માટે રાગી રહે છે, પણ જો નિયમિત ધવરાવવાનું તથા નિયમિત ખારાક આપવામાં આવે, તા બાળક હમેશ નિરાગી રહે અને આવા નિરાગી બાળક કેળવણીને યોગ્ય થાય છે.

ન્હાનપણમાં ભાળકતી માનસિક શક્તિ મહ્યુજિ તેજ હૈાય છે તે નવાનવા વસ્તુઓ જોઇને માતાને પૂછે છે કે આ શું! આ શું? ત્યારે અહાની માતા પોતાનેજ ખખર ન હોવા- શ્રી ભાળક ઉપર ચીડિયાં કરે છે અને કહે છે કે આ શું? નકામી કૃપલીઓ કર્યા કરે છે કે કોઈ કાઇ વખતે માર પણ મારે છે, આથી ખાળક પૂછતાનું ભે કરે છે, જેનું પરિણામ એ આવે છે કે બાળકથી પ્રગટ શ્રતી માત- સિક શક્તિઓ ત્યાંને ત્યાંજ વિસ્મી જાય છે,

બુદિ નહી થાનનય કે અને મગજશક્તિ વગડી જાય છે. પણ માતા જ્ઞાની હાય અને ન્હાનપણથી भागक केके वस्त खुओ तेतुं स्पष्ट रीते वर्जुन કરી ભાળકના મનમાં હસાવે. તા બાળકની માન-સિક શક્તિ અલાકિક અને પ્રશંસનીય ખતે. એમાં કાંઇ પણ શક નથી. માતાએ ન્હાનપણથીજ ળાળકના ઉપર ધાર્મિક સંસ્કારા આરાપણ કરવા. તૈને પ્રથમ પાપ શં! અને પ્રજ્ય શં! પાપથી થતી હાનિ અને પુખ્યથી થતા લાભ દર્શાવવા, પ્રથમાન્યોગની નાની વાર્તાઓ કહી દર્શત **धाराओ तेना भन ६५२ ५७४थी थता क्षा**भ તથા પાપથી થતી હાનિની છાપ પાડવી. વળી વિશેષમાં માતાએ તેતી આગળ કહી અમત્ય વચન બાલવું નહિ, ખાળક ચારીતે કાંઇ વસ્ત લાવે, તે માતાએ ચહુણ કરવી નહિ, પરવસ્તુ-હરણના વિચારા મનમાં હાવવા નહિ, ખાન-માનમાં અભક્ષ ખાવ નહિ તેથી બાળક પછ તૈવાજ સ્માચરણ કરવા માંડે.

ભાળક પાંચ વરસનું થાય તે પછી નિશાળ ભાગવાને માકલવું ત્યાં વ્યવહારિક, ઉદાગિક શાનમાં પૂર્ણ ળનાવવું, માનભાષાનું સાર શાન થાય ત્યાર ભાદ ૧૨ કે ૧૩ વરસ થયા પછી તે ભાળકને એવા સ્થાનમાં મુકવું કે જ્યાં રાજભાષાની સાથે ધાર્મિક શાન પણ મળે તેમજ તત્વરાનમાં નિષ્ઠણ નિવડે અને આવી રીતે શાનની પૂર્ણના પ્રાપ્ત કરે.

ળાદ વિચારમાં, જ્ઞાનમાં, ગુલ્લુમાં, વયમાં મળતી કત્યા સાથે લગ્ન કરવું. આવાં એક સત્રમાં ભંધાયેલાં દંપતી કુટુંળની તથા સમાજની સેવા બરાળર બલ્ળવે છે, ઘરમાં કુસંપને કદી સ્થાન મળતું નથી, તેઓની પાસે કર્ષા સદેખાઇ અને અહંકારના લેશ રહેતા નથી, તેઓમાં એમ નથી રહેતું કે અમુક માલ્યુસે માટે કામ નથી કહ્યું માટે મારે તેનું કામ ન કરવું. તેઓ તો સેવા ધર્મને સમજીને સર્વ કુડુંળને દરેક કામમાં મદદ કરે છે. તેઓમાં એવા બાવ કદી આવતો નથી કે અમુક માલ્યુસ



મારું શું કામ કરી નાંખવાના હતા કે મારે એવું કામ કરવું. તેઓ તા સેવાધર્મને ખાસ સમજનારજ હોય છે. એટલે સ્વાર્થની આશા વગર પારકં પાતીકં કર્યા વિના સેવા બજાવ્યા oriu B.

પાતાના ઘરમાં. સગામાં કે ન્યાતમાં કાઇ ભિમાર પડ્યું હોય તો તેની **ખબર અં**તર લેવા જવું અને દરદીને શાંતિ આપવી. આપણે કાંઇ ઉપચાર જાણતા હાઇએ તા તે ખતાવવા તથા જાતે કરીને રાગીના રાગ મટાડવાને બનતી કે!શીષ કરવી. રાગીની આગળ **એ**મ કદી ખાલવું નહીં કે હાય ! હાય ! આ રાય જબરાે છે. ભયંકર છે. આમ કરવાથી રાગીની હિંમત છટી હત્ય છે. અને તેમના મન પર એમવી અમર થાય છે કે હવે મને નહીં મટે. આમ ધાસ્તીતે લીધે નજીવા રામ એક બયંકર રુપ ધારણ કરે છે. અને લાડા વખતમાં મરણને શરણ થાય છે: આવે સમયે જો રાગીને આધાસન આપવામાં આવે—તેને કહેવામાં આવે કે ઓહા ! એમાં શું માટી વાત છે; એથી ભયંકર રાગા ઘણાને થાય છે. તાપણ સારા થઇ જાય છે. એ તા દમણા મટી જશે. ર્પૈર્વ રાખા. બહાદર બના: આથી દરદીને જે એવા वियारे। ચાલતા edt J. થાય તે નીકળી જઇને નહી સારું તેમના મનમાં હું સાજો થાઉં છું એવી શુભ ભાવના ચાલવા માંડે છે, તેથી એ ભાવના-ખળે કરી અસાતાવેદનીના પરમાસ હટી જાય છે. અગર શુભ સાતાવેદનીરૂપે પરિણમે છે પણ જો રાગીતે માંદગી ભયંકર જણાય તા તેને **આ**તિમક **બાલ** આપવા. તેને કહેવું -"હે જીવ! તારૂં દુઃખ શું વિસાતમાં છે ? તેં અનેક ભવ નારકીના ધારણ કર્યા હશે. તે છેદન, બેંદન, મારણ, તાડન, ભૂખ, તરસ, પરાધીનપણે વેઠી છે, તા હવે સ્વાધીનપણે યાંડું દુઃખ શાંતભાવથી સહન કરી ક્ષે. જેથા તારી શભગતિ થશે. આ શરીરકપી વસ્ત્ર જતાં

થયું તેના સાનંદ ત્યાગ કરતા નવું અને हिञ्य शरीर धारख कर. जानीने नवा शरीरने ધારણ કરવામાં શાક હોતા નથી. પણ આનંદ હાય છે. કારણકે આપણા કાટેલાં કપડાંતે ખદ-લવાથી કાંઇ આપણે ખેદ થતા નથી, તેમ એક વસ્ત્ર છે તેને ભદલવાન' છે. આત્મા અજર છે. અમર છે. એ કાઇ **દિવસ મરતા નથી**. તેના સ્વભાવ સાતા દ્રષ્ટા નિરાકળ સખ અને વીર્યમયી છે. તે જેવા છે તેવાજ છે. આ વિષયક્ષ્યાયકપ પરિહામેલા ભાવ તે તારા સ્વભાવ નથી. પહ વિભાવ છે. પર પદાર્થ તે મારા છે એવું માનનાર અપરાધી છે. બ'ધને પાત્ર છે તેથી તે દઃખી થાય છે. માટે **મમત્વ3પ ભાવાના ત્યામ** કર અને તું પાતાના આત્મિક ચ્યાન દ્રમાં સ્થિર થા. આવી રીતે આશ્વાસન આપવું તે એક ઉત્કૃષ્ટ સેવાધર્મજ છે.

સવાવડ સમયે ઘણી કાળજ રાખવી જોઇએ. એ પણ એક સેવાધર્મજ છે. પ્ર<u>સ</u>તિ-સ્થાન એવું હોવું જોઇએ કે તે સ્થાનમાં હેજ ન હોય તથા મંદ મંદ સ્વચ્છ હવા આવતી એકદમ અપંધારં ન હોય તેમનાં કપડાં સ્વચ્છ હેત્ય. જમીન ઉપર હેજ હેાવાથી તથા ઉક્ત કારણોને *લઇને* સ-વાવડી ખાઇતે તરત સરદી લાગી જાય છે. અને તેથી પછી હાંક થઇ આવે છે. આ ઉપર દર્લક્ષ રાખવાથી કેટલીક સવાવડીના પ્રાથધાત થાય છે તેા કેટલીકને સવા રાેગનાં વ્યાધિયા પીડાવું પડે છે, તેથી અશક્તની પ્રજ્ત પણ અશક્ત નિવ**ડે** છે. કેટલીક આધુનિક **ધર્મ**ના મર્મને ન જાણનારી એમ સમજે છે કે સુવા-વડીને અડકવું તથા તેના ધરમાં જવું એ પાપ B ते धर्छेक विपरित छे. आपणे तेना पर દલક્ષ રાખીયે એજ પાપ છે. જો યથાયાંગ્ય *લક્ષ* રાખી તેમના આત્માને શાંતિ આપીયે **તે**ા તે એક મહાન દ્યામયી ધર્મ છે. અને એ એક ઉત્કાર સેવા બજાવી કહેવાય છે. હા,

આપણું તેમને અડકવું પડે તેર સ્તાન વિગેરેથી સ્વચ્છ થવું. આપણી બાહ્ય પવિત્રતાને છોડવી નહિ કારણુંકે બાહ્ય પવિત્રતા એક અંત-રંગ પવિત્રતાનું કારણ છે.

भारी धनवान् अंधु मा अने क्खेनाने भारी भास सक्षामख् छे ३ आप पोतानी विनश्वर सक्ष्मीने इक्त धं दियोगे पोषवामां, वेश्याना नायमां तथा ७११३ भर्यमां न वापरतां तेना सहपयांग कराः गरीकाने आहार-इतन, आषविद्यान, शास्त्रहान तथा अला यहान आपी सुभी कराः छद्ध विवाह्य छं उन्हें स्थाने आपित हुः भी विधन्याओं है। य तेना निव्ययोगी छवनने सान आपी छिपयांशी अनायां, तेकाने परोपकारार्थमिदंशरीरम् ना पाठ लख्वा.

વળા ગરી ખ ખંધું એ તથા હિનાને પણ એજ વિનતિ છે કે તમે તમારા મનથી તથા તનથી દુ:ખી જવાની સેવા બન્નવા, કન્યાવિક્રયને જલાં જલી આપા, પાતાના જાતિ એંગ આપીને પાઠશાળા તથા શ્રાવિકાશ્રમ વિગેર ધાર્મિક ખાતામાં બનતી સેવા બન્નવા.

મારી વિધવા અહેતાએ વિચાર કરવા જોઇએ કે આપણા પૃત્રે પાય કર્મના ઉદ્ધે વૈધવ્ય પ્રાપ્ત થયું છે, તે પાયતે દૃર કરવાને ભગીરથ પ્રયત્ન કરી બહાન પુલ્ય ઉપાર્જન કરવું જોઇએ.

તેતે માટે આપણા ગામમાં ખતે તો ત્યાં ધાર્મિક લથા વ્યવહારિક કેળવણી લઇતે અને ગામમાં જોગવાઇ ન હોય, તો મું ખઇના શ્રાવિકાશ્રમ-માં આવી જ્ઞાની ખની બીજી બહેનાતે જ્ઞાની ખનાવી સમાજસેવા, દેશસેવા, દેવસેવા, ગુફરેવા ખનાવી, પુષ્યાપાજન કરવું તથા ધનવાન વિધવાએ એ પોતાનું સ્ત્રી–ધન સ્ત્રીઓની સેવામાં ખર્ચ કરવું, જેથી કરીયી આ દુ:ખ માંગવવું પડે નહિ. આ પણ એક સેવા છે.

ખેહેના! તથા ખંધુર્આ! હવે વ્યવહા-રિક સેવાને સંકાચી આપણે વ્યવહારધર્મ ઉપર લક્ષ આપીશું. વ્યવહાર ધર્મસેવામાં પ્રથમ આપણે અરિહાત દેવ, ચાર ધાલિયા કર્મ રહિત છે તેમના ગુણાની પ્રાપ્તિ અર્થે દરરાજ તેમની અષ્ટ દ્રવ્યથી પૂજા કરવી તથા તેમના ગુણાનું ચિંતવન કરવું.

તેમની વાણી જે શાસ્ત્ર તેતું અધ્યયન કરલું તથા કરાવવું, મનન કરવું તથા કરાવવું. તેમાંથી ગુલ્યુ દોષા જાલ્યું! ગુલ્યું. મહત્યું કરલું તથા દોષાને છાડવા, બીજાની અંદર દાષ દેખાય ત્યાંરે તેના એક ક્ષણ વિચાર કરવા કે એ દોષા મારામાં છે કે નહિ. જો હાય તા પછી તેને છાડવાને પ્રયત્ન કરવા અને ધીરે ધીરે તે દેશથી મુક્ત થઇ બીજાને તે દેશ્યાથી મુક્ત કરવાને કાશીય કરવી.

અરહંત ભગવાને કહેલા ધર્મને પૂર્ણ પણે ધારણ કરતાર હિતા કરવી તથા એકદેશધર્મને ધારણ કરતાર એલક, ક્ષુલ્લક તથા ધલાચારીજની સેવા કરવી તેમજ શ્રાવક શ્રાવિકાને ચતુર્વિધ દાન આપવું, ઇંદિયાના વિષયાને અન્યાય માર્ગથા રેટકવા અને ખુરી વાસતાઓના નિરાધ કરવા, તે બ્યવહાર ધર્મસેવા છે. આવી રીતે વ્યવહાર સેવા તથા વ્યવહાર ધર્મસેવાથી મહાન પુષ્યાપાર્જન કરીને નિશ્નય ધર્મસેવા કરવાતું આપણું લક્ષ્ણ અવસ્ય હોવું જોઇએ.

નિશ્વય ધર્મસેવા એટલે પાતાના આત્માની સેવા અર્થાત આત્માના ખાસ સ્વભાવ શાતા- દળ્ટા, નિરાકુલ, સુખમયી. અનંત વર્ષિવાન, અવિનાશા છે, તેને પાતાના સ્વભાવમાંથી ચલાયમાન ન થવા દેવા અર્થાત્ રાગ, દેષ, ક્રોધ, માન, માયા લો મમાં ન પ્રવર્તવા દેવા તે આત્મ-સેવા-નિશ્વય ધર્મસેવા છે. એજ આત્મસેવાત બજાવીને મહાન મુનિઓ- તીર્થકરા મોક્ષને પ્રાપ્ત થયા છે. એજ મહાન સેવાથી મુનિઓ અનેક રીદિ સિદિ મેળવીને અવિનાશા થયા છે.

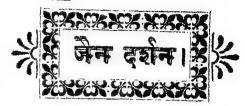
ેં ઉપસ**ે**હાર

ण्डेना तथा णंडुओ। ढवे आंतमां भारा इहेवानुं तात्पर्य में छे हे आपणे सेवाधर्म ण्लावाने थे। ज्य प्रलानी क्षपत्ति सानी भाता द्वारे थवी कोछओ, तेनुं बज्न विचार अने वसमां लरालर थाय पछी तेओ व्यवदारिक सेवा, व्यवदार धर्मसेवा अने निश्रय आत्म सेवा लकावे अने आंते अकर अमर सुणती प्राप्ति हरे. धनवान गरीलने सुणी हरे. एद्व-विवाद अने वेस्थाना नायनी हुप्रथाने छोडे तेमक गरील तन मनथा समाकनी सेवा हरे अने कन्याविक्ष्यता त्याग हरे.

अश्वांति ! शांति ! शांति:

धर्मकी महिमा।

है ॰ - स्वर्गाय बाबू अमृतलाल जी जैन ।
हो के त द्वम धरमको, चाई जान तनसे निकले ।
हो बात सत्य लेकिन, मीटे बचनमे निकले ।
अभिका धर्म जब तक, रहता है उनमें कायम;
हाथीकी क्यों है शिक्त, जो पास होके निकले ।
फिर अपना धर्म तजकर, जब राख वह हो जावे;
चीटी भी निधडक होकर, ऊपरसे उसके निकले ।
है धर्मकी यह महिमा, यदि इसको धार लो द्वम;
होरे बबरके मानिन्द, शिक्त बदनसे निकले ।
हर कर चलेगा वोही, हुवा गुनाहोंमें जो;
मे ईशके जो ध्यारे, वे सूर्य बनके निकले ।
हों न द्वम धरमको, चाहे जान तनते निकले ।



(ले॰ --पं॰ उमरावसिंहजी-काशी)

यह बात निर्विवाद है कि संसारभर-की समन्त विद्याओंकी अपेक्षा दार्शनिक विद्याका आमन ऊँचा है। भारतवर्षके ही बडे २ ग्हर्षि नहीं, संसारभगके तत्त्ववेता इस विद्याको सर्वापेक्षया पूज्य दृष्टिसे देखते बले आये हैं और इन महर्षियों व तत्त्ववत्ताओंके भी कथनके उत्पर निभर न रहकर जब हम अपनी स्वतन्त्र बुद्धिसे इस विषयपर विचार करते हैं तो हमको इस संकटमय समयमें इस विद्याके प्रचारकी और भी अधिक आवश्यकता प्रतीय-मान होती है। व्यापकतापूर्वक जब हम वर्त्तमान संमारके उपर दृष्टि फैटाते हैं तन प्रगति-उन्नति, सुख, शांति आदिकी बात तो अलग रही, चारों तरफसे सिवाय हाहाकारके और कोई शब्द कानोंमें नहीं पहुँचता-इधर हत्या हुई, उधर रेल भिड़ गई, जहाज़ फट गया, पर्वतने आग वर्षा दी, नदी उमड़ आई, गाँव वह गये, प्लेग फैल गई, लड़ाई शुरू हो गई, वह नारा गया, वह घायल हो गया, उसने स्त्रीको तलाक दिया, उसने पतिको मार दिया इत्यादि भयङ्कर शब्दोंकी निरन्तर चिछाहट सुनते २ कार्नोकी ब्रिक्टियाँ फटी नाती हैं। इनमेंसे आकस्मिक घटनाओं के द्वारा तो वर्त्तमान ननसमूह अतिब्याकुछ है ही. कृत्रिम दुर्घट घटनाओंसे मी कुछ कम्

व्यथित नहीं है। निरन्तर इन हृदय द्रावक आकृत्दनोंको सुन २ कर, इनसे निर्मुक्त होनेका उपाय विचारत समय हमको उसी दार्शनिक या अध्यात्म विद्याका स्मरण हो आता है, जिसके अवलम्बनसं हनारों राजे महाराजे;

"ऐकाकी निस्रह शांतः पाणिपात्रो दिगम्बरः। कदाहं संमविष्यामि कर्मनिर्मूळनक्षमः॥" इस पवित्र इच्छाको अपने शुद्धान्तः-करणमें रखते हुए सांसारिक सुखोतपादक सार्वभौमिक सम्पत्तिको लात मारकर निर्जन वनमें पर्वतकी कन्द्रराओंका आश्रय लिया करते थे और संसार महीरुहको निर्मूलकर स्वशुद्धारमस्बरूप मोक्ष नगरका मार्ग सरल किया करते थे।

इस दर्शन विद्याको इतना उपयोगी समझकर मेरा विचार, प्राचीन जैन दर्शन-कथित पदार्थीके सम्बन्धमें संक्षेपसे कुछ कहनेका है।

नैताचार्यीन मूल पदार्थीका विवेचन करते ममय यही प्रतिपादन किया है कि नो अपने गुणोंकी प्रति क्षण अवस्थाओं के बदलते रहनेपर भी अनादि कालसे अनन्त काल तक सदा कायम बना रहे वही मूल द्रव्य है, क्योंकि यदि मूल वन्तुको अनादि कालीन न मानकर उसका किसी विवक्षित कालसे विना उपादान कारणके ही प्रारम्भ माना जायगा तो यह अनिर्वाय प्रश्न उपस्थित हुए किमा नहीं रहेगा कि जब वन्तु विना उपादान कारणके ही जाती है तब फिर कपड़के लिए मून कातनेकी क्या

आवइयकता है ? रुपयोंकी टकसालके लिए चाँ-दीकी क्यों ज़रूरत पड़ती है ? तथा चपातियोंके लिए आटा क्यों काममें लाया जाता है ?

इस प्रकार असत् पदार्थकी उत्पत्तिमें पञ्चाध्यायीमें भी यह शंका उपस्थित की है कि असतः पादुर्भावे द्रव्याणाभिह भवेदनन्तत्वं। को वारियतुं शक्तः कुम्मोत्पत्तिं

मृदाद्यभावेऽपि ?॥ १०॥

अर्थात असत पदार्थकी उत्पत्ति माननसे द्रव्य अनन्त हो जायँगे तथा बिना मिट्टीके ही घड़ेके बननेको कोई भी न रोक सकेगा।

अब यदि मूल पदार्थको अनन्त-कालीन न माना नायगातो यह प्रश्न उपस्थित होगा कि नव अनादिकालीन मूल पदार्थका भी किसी विवक्षित समयमें निरन्वय नाश हो जाता है तो ये वर्त्तमान पदार्थ अनादि कालमे अब तक बेलाग कैसे बच गये, किसी न किसी रूपमें ये पदार्थ बराबर क्यों दिखाई देने ही रहते हैं।

ईमके बिरुद्ध क्षणिक पक्षवालोंकी मेघा-दिक्के निरन्वय नाराकी अशंका भी सायन्सवालोंने निर्मूल कर दी है, क्योंकि मेघादिकका जल वायु आदिसे उत्पन्न होना तथा नष्ट होनेपर फिर उसी रूप हो जाना सायन्समे भली प्रकार सिद्ध है।

इस प्रकार अकारणक उत्पाद और समुचित निरन्वय नाशके बाधक प्रश्नोंका उत्तर न हो सकनेके कारण मूल वस्तुको मामान्यक्रपमें निरय मानना ही युक्तिसे मिद्ध

होता है। हाँ! सर्वथा नित्य माननेमें यह प्रश्न अवश्य उपस्थित होता है कि नव वस्तु नित्य है फिर उसमें अवस्थाओंका बदलना कैसे बन सकता है ! क्योंकि अवस्थाओंके बदलनेसे वस्तुमें अनित्यता सिद्ध होती है और नित्यता व अनित्यतामें परस्पर विरोध है पक्ष मानकर अनित्यताका सुचक परिणाम (अवस्थाओंका चदलना) नहीं बन मकता अथवा परिणाम मानकर वस्त नित्य सिद्ध नहीं हो। सकती / इस पश्चके उत्तरमें इतना ही कहना काफी होगा कि नित्यता सामान्यकी अपेक्षामे मानी जाती है और अनित्यता विशेष धर्मकी अपेक्षासे, जैसे कि मनुष्य स्थूल दृष्टिसे बालक, युवा, बृद्धावस्थाकी अपेक्षामे अथवा म्ह्म दृष्टिसे-प्रतिक्षण होनेवाली अवस्थाओंसे बदलता रहकर भी मनुष्यस्वरूप सामान्य धर्मकी अपेक्षासे मन्ण पर्यन्त नहीं बर्लता । इसी तरह मिट्टीकी बटादिक अनेक अवस्था हो जानेपर भी मृत्तिका अन्वयह्वयसे निरन्तर प्रत्येक अवस्थामें बनी ही रहती है। यदि इसमें निस्यता न मानी जाय तो मृत्तिका-का सम्बन्ध प्रत्येक अवस्थामें न होना चाहिए, और यदि अनित्यतासूचक परिणाम न माना नाय तो मिट्टीका कभी भी घट न बनना चाहिए । और होती हैं दोनों ही बार्ते, इस लिए दोनों ही नित्यत्व व अनित्यत्व धर्म वस्तुमें मानने चाहिए। वस्तुका छक्षण भी इस कारण यही भाना गया है कि " सामान्य-विशेषात्मकं वस्तु " इस नित्यत्वका ही जैन शास्त्रोंमें ध्रीव्य शब्दसे वर्णन किया गया

है, और अनित्यत्वका उत्पाद व्यय करके कथन किया गया है। यहाँ इतना और भी कह देना आवश्यक है कि धौव्य शब्दका मतलब गुणसे है और उत्पाद व्यय शब्द पर्यायका बोध कराते हैं, "गुणपर्ययवद द्रव्यम्" तथा "उत्पादव्ययधौव्ययुक्तं सत्" ये दोनों तर्त्वाथस्त्रके सूत्र उपर्युक्त कथनकी प्रष्टिमें प्रमाण भी हैं।

अब रही विरोधकी बात कि नित्य व अनित्यमें परम्पर विरोध है। उसके विष-यमें इतना ही कहना उचित मालूम होता है, विरोधका लक्षण पूर्व महर्षियोंने यही किया है कि " अनुपलम्भसाच्यो हि विरोधः" अर्थात् जिसके द्वारा किसी पदार्थकी अनुपपिट्ध सिद्ध की जाय उसको विरोध कहते हैं और बध्यवातक. सहानवस्थान, तथा प्रतिबद्धयप्रतिबन्धकभाव ये तीन भेद होते हैं। अब यदि नित्यत्व और त्यत्वमें बध्यघातक विरोध माना जाय तो वह भी सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि वध्यघातक विरोध एक कालमें एकत्र उपस्थित रहनेवाले ही पदार्थोंका उत्तर कालमें बलवानके द्वारा निर्वलका वात होनेसे हुआ करता है जैसे कि सर्प व नकुलके एक कालमें एक नगह उपस्थित रहनेपर पश्चात नकुलके द्वारा सर्पका वात होनेसे हुआ करता है। निस्य-स्वका विरोध बतलानेवाले महाशय तो एक पदा-र्थमें और एक कालमें नित्यत्व और अनित्यत्वकी सता ही नहीं मानते हैं, फिर परस्पर विरोध कैसा? और यदि एक साथ एक पदार्थमें दोनों-

का अस्तित्व मानका फिर विरोध माना जाय-गा तो दोनोंमें परस्पर तुल्यवड़ होनेसे कोई भी दूसरेका धान न कर सकेगा। इस तरह दोनोंकी सत्ता एक पदार्थमें भिन्न २ बालमें अथवा एक कालमें माननेसे नित्यत्व और अतित्यत्वमें परस्पर विष्यधातक विरोध नहीं सिद्ध होता।

विरोध भी नित्यत्व सहानवस्थान और अनित्यत्वमें तभी सिद्ध हो सकता है, जब कि एक ही पदार्थमें दोनोंकी सत्ता एक कालीन न मानी जाकर क्रमण्डक ही मानी जाय, जैसे कि एक आमके फलमें पूर्व काल-भाविनी हरितताके नष्ट होनेस पीतता उत्पन्न होती है अतएव हरिनता और पीतनामें सहान-बस्थान विरोध माना जाता है । इस ही तरह नित्यत्वको नष्ट कर अनित्यत्व, अथवा अनि-त्यत्वको नष्ट कर निस्यत्वकी उत्पत्ति एक पटार्थमें यदि मानी जाय तब नित्यत्व व अनित्यत्वका परम्परमें महानवस्थान विरोध बन सकता है। किन्त नित्यत्वको नष्ट कर अनित्यत्वकी उत्पत्ति माननमें अथवा नित्यत्वकी अनित्यत्वको नप्ट कर उत्पत्ति माननेमं नित्यत्व, नित्यत्व नहीं उहरता है। दोनों ही पक्षोंमें नित्यत्वका पर्यवसान अनित्यत्वमें हो नाता है । इसलिए इन दोनों नित्यत्व और अनित्यत्वमें सहानवस्थान विरोध भी मिद्ध नहीं होता।

रही प्रतिबच्यप्रतिबन्धक विरोधकी बात, वह भी तब मिद्ध हो मकती है जब कि मणि और वाह्की तरह नित्यत्वके द्वारा अनित्यत्वका प्रतिकच्च माना जाय अथवा अनित्यत्वके द्वारा नित्यत्वका प्रतिकच्च माना जाय। किन्तु ये दोनों ही पक्ष यहाँ पर नहीं बनते हैं, क्योंकि दोनोंका ही समान कट होनेसे एक भी दुसरेका प्रतिरोध नहीं कर सकता, इसलिए नित्यत्व और अनित्यत्वमें यह तीसरा प्रतिबध्यप्रतिकन्यक विरोध भी न बन सकनेके कारण इन दोनों नित्यत्व और अनित्यत्व वर्मोंका वस्तुके अन्दर होनंमें युक्तिद्वारा कोई भी विरोध सिद्ध नहीं होता।

इस मूल पदार्थके जैन शास्त्रोंमें जीव और अजीव ये दो मूल भेद माने हैं। जिनमें जीवका लक्षण नेतना और अजीवका लक्षण अचे-नतत्व माना है। जब सामान्य वस्तु परिणामी नित्य सिद्ध होती है तब उसके इन जीव व अजीव दोनों भेदोंको भी परिणामी नित्य मानना अवश्यम्भावी है।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि जब जीव-मात्रका छक्षण चेतना है तब यह चेतना (ज्ञान) सम्पूर्ण जीवों में समान अंशों से क्यों नहीं रहती? किसी जीवमें ज्ञान कम और किसीमें अधिक क्यों होता है, अर्थात सर्व जीवों में समानतया चेतना छक्षणके विद्य-मान होते हुए भी गुरु-शिप्य उपदेश्य-उपदेश-कका सम्बन्ध कचसे होगया? इन प्रश्नका यही समुचित उत्तर है कि नाना जीवों में व्यक्ति-भेद तथा काछ-भेदसे उत्तक हुई यह सर्वमत-प्रसिद्ध ज्ञानकी हीनाधिकता उक्त जीवोंके साथ किसी विनातीय पहार्थके संयोगको सिद्ध करती



है क्योंकि बिना विजातीय कारणान्तरके किसी भी पदार्थके स्वभावमें कभी भी मेद नहीं पड सकता। बिना किट्टकादि-सम्बन्धके किसीने कभी भी शुद्ध सुवर्णमें भेद नहीं देखा। अतः यहाँपर भी विभावोत्पादक विजातीय कारणान्तर अवश्य ही मानना चाहिए।

यह विजातीय पदार्थ अजीव पदार्थका एक भेदस्वरूप प्रद्रल द्रन्य माना जाता है और छक्षण इसका " रूप रच गन्य स्पर्श " माना गया है। अब विवेचनीय यह है कि इस विजातीय पदार्थका संयोग भी कार्य होनंसं कारणान्तरकी अपेक्षा रखता है, और दह कारणान्तर नीवोंके विक्रत भावोंके अतिरिक्त और कोई मिद्ध नहीं होता, क्योंकि अग्निसे तप्तायमान ही लोहेका गोला जलके अन्दर हाल देनेसे जलको अपनेमें प्रविष्ट सकता है, ठंडा छोहेका गोटा नहीं । वर्तमान अज्ञानादिक विकृत इस प्रकार भावोंके लिए पूर्वत्रद्ध कर्म तथा पूर्वत्रद्ध कर्मीके लिए उससे पूर्व क्यायको कारणता सिद्ध होनेसे बीजवक्षवत यह सम्बन्ध अनादि ही सिद्ध होता है।

इस ही तरह जब तक यह जीव रहता है, तब तक कषायाग्निसे तस निरन्तर पुद्रल द्रव्यके भेदस्वरूप अपनेसे सम्बन्ध करता रहता है, और ज्योंर साध प्रत्योंके उपदेशादिद्वारा सम्यग्झाटादिक उत्तम धर्मीकी प्राप्तिपूर्वक इस जीवकी कषाया-गिन शान्त होती नाती है, त्यों र इन कमेंकि

नवीन बन्ध न होना धीरे२ बन्द होता जाता है, तथा पूर्वबद्ध कर्म नष्ट होते जाने हैं। और एक दिन समस्त क्मेंसि निर्मुक्त होकर यह जीवात्मा परमात्मपद प्राप्त कर अनन्त कालके लिए अपने शुद्ध ज्ञानामृतका पान करता हुआ स्वाभाविक मुखसमुद्रमें निनम्न रहता है।

जैनधर्ममें इन कर्मेकि कारणोंको आस्त्रव तथा सम्बन्धको कहतं हैं। नवीन कर्मबन्धके रुक जानेको सम्बर और एक देश कर्मिक नष्ट होनेको निर्नरा तथा समस्त कर्मीका सम्बन्ध छूटकर शुद्ध ख-रूपकी प्राप्ति होनेको मोक्ष कहते हैं।

यह अति संक्षेपसे जैन दर्शनके विषयमें कुछ वक्तन्य पाठक महानुभावोंके समक्ष उपस्थित किया है । आशा है कि इससे सर्व सज्जन कुछ न कुछ लाभ अवश्य उठावेंगे ।

अभक्तामर और तत्त्वार्थसूत्र। 🛠

(सामायिक पाठ सहित)

इसमें भक्तामरस्तीत्र बहुत ही बड़ेर हरफोंमें अभी नवीन ही छपाया है और साथमें तन्वार्थसत्र मूल और सामायिक भाषापाठ भी शामिल किया है। पाठशाला-ओंके लिए बहुत उपयोगी है। मूल्य सिर्फ दो आने।

> मैनेजर, दि० जैन पुस्तकालय-सुरत।



अं केन मंदिरोंकी स्नावट-सजावट। हैंअ

(छे - ज्योतिप्रसादजी, सम्पादक-'जैनप्रदीप', देवबंद)

इस बातको सब कोई जानते हैं कि विद्यार्थियोंके विद्यालय आदिकमें जानेका यदि कोई विदेश प्रयोजन है तो वह विद्योगर्जन ही है। इसकिए जिन विद्यार्थियोंको संस्कृत विद्या पढ़नी है वे संस्कृत विद्यालयमें जाते हैं, जिनको फारतीका इस्म पढ़ना है वे किसी मीस्वीके मकतवमें जाते हैं और जिन विद्यार्थियोंको इंग्लिशमें बी० ए० या एम० ए० की हिगरियों पानी हैं वे स्कृल या कॉलिजोंमें जाते हैं। अतः मिल २ विद्या प्राप्तिके लिए मिल २ पाठालयोंकी आवश्यकता पहती है। चूँकि पढ़ना काम विद्यार्थीका है यदि विद्यार्थी पारिश्रमी है, तीन बुद्धिवाला है तो सब कुल प्राप्त कर सकता है और यदि आलसी, संद-बुद्धि है तो खाक भी पहकर नहीं दे सकता।

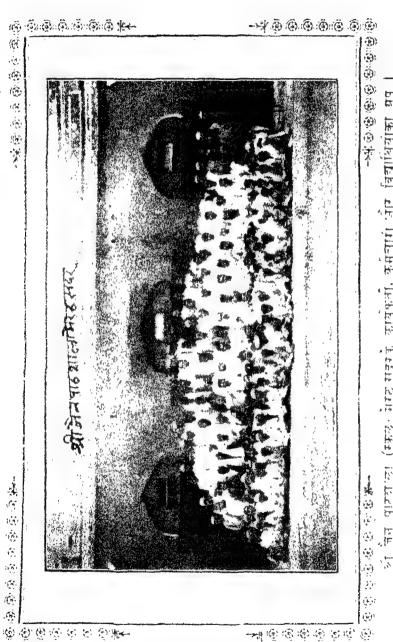
परन्तु सच पूछा जाय तो विद्योपार्जनका बहुत कुछ बोझ गुरुजनोंकी योग्यतापर
भी है इसलिए जिस विद्यालयमें गुरुजन
योग्य अनुभवी और विद्वान् होंगे तो उस
विद्यालयके विद्यार्थी योग्य और विद्वान् बनकर
निकलेंगं और जिस विद्यालयके । पाठक
मोग्य न होंगे तो वहांपर विद्यार्थियोंको
सिवाय अपने समयको नष्ट करनेके और कुछ
भी लाभ नहीं होगा।

यदि किसी स्कूछ या कॉलिजकी बिर्टिंग बहुत बड़ी बना दी जाय, उसकी दीवारोंपर रंगविरंगके बेलबूटे या चित्र बना दिये जाय और नाना प्रकारके चित्रपटोंसे उसकी सुशो-

भित कर दिया जाय और गुरुजन योग्य, अनु-मनी न रक्लें जायें तो उसमें रहकर विद्या-थियोंका प्रयोजन कदापि सिद्ध नहीं हो सकता । इसके विपरीत यदि किसी विद्यालयकी साधारण बिर्दिंडग हो या बृक्षोंके ग्रंडमें छान डालकर ही बनाई गई हो और गुरुजन योग्य अनुभवी रक्ते गये ही तो बिद्यार्थियोंका प्रयोजन वहाँ रहकर बहुत श्रीव पूरा हो सकता है। इसलिए कहना है कि बड़ी लम्बी चौड़ी और रंगबिरंगी बिलिंडगसे वे छान छप्परके साधारण विद्यालयोंके लिए बहुत लाभदायक हो सकते हैं कि जिनमें योग्य और अनुभवी पाटक रक्ले गये हों क्योंकि विद्यार्थियोंकी प्रयोजन-सिद्धिका कारण विविद्धग नहीं है किन्तु गुरु और पाठक हैं।

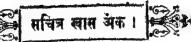
ठीक इसी माँतिसे, य मनुष्य कि जिनको वैराय-शिक्षा प्राप्ति, करनेकी उमझ है, जो वैराय-शिक्षाको अपनी आत्माके कल्याणका मार्ग समझते हैं, किसी ऐसे विद्या-ल्यका आश्रय इंदते हैं कि जहाँपर उनका प्रयोजन सिद्ध हो जाय और वैराय-शिक्षा पूर्णक्रासे मिछ जाय। यही कारण है कि जैनी लोग अपनी आत्माका कल्याण करनेके लिए एक वैरायमधी शांतिस्वरूपी आनन्द दायक और ध्यानारूट मूर्तिका आश्रय लेते हैं। यह बीतराग-मूर्ति इनके हृदयोंमें वैराय-शिक्षा जमा देनेका एक सुगम और सुन्दर कारण है।

परन्तु अब प्रश्न यह उठता है कि वैराग्य-शिक्षाके लिए जैनियोंके वर्तमान मंदिर कहाँतक सहायता दे सकते हैं ? और इनसे प्रयोजनकी शिक्कि हो सकती है या नहीं ?



 i^{2}

जैस पारता छ। (म्झल, भारत मन्ने क्रायेक्सी, क्रीनार्ग जीर विद्यायियोका



कहने और लिखनेके लिए तो बहुत गुछ है परन्तु हम देखते हैं कि आजकल घनवान् लोग अपनी उमझ निकालनेके छिए जैन मंदिरोंमें सोने-चाँदीकी लिपाई कराते हैं-उनकी दीवारोंपर संगविरंगी लिखाई कराते हैं, रेदाम और जरीके चँदोये लटकाते हैं, सोने-चाँदीकी छड़े खड़ी करते हैं और भाँति २ के चेंबर छत्र बाँधते हैं अर्थात् उस वैराग्य विद्यालयको राजों महाराजोंके रागम्य मंदिरोंसे भी किसी भेगी तक अधिक ही बना देते हैं। अब वह वैगाय-शिक्षाका इच्छुक जब जैन मंदिरोंके अंदर प्रवेश करता है तो यहाँकी राज्य रचनाको देखकर चौंकत हो जाता है-समभरे कारणोमें उलक्षकर वैशम्यके पाठको मूल जाता है. रोने चौदी के सामानमें फँसकर बावला हो जाता है, रेशम और ज़रीके मामानमें आँखें गदा हेता है, रंगविरंगी चित्रकारी देखनेमें समय नष्ट कर देता है और जिस प्रयोजनकी लेकर वह वहाँ गया था उसको सर्वथा अला देता है। इसने स्वयं अपनी आँखों देखा है कि जिन जैन मंदिरोंमें लाखों राजिया राज्य-रचनाओंमें लगाया गया है उन मंदिरोंके अन्दर जाते ही हरएक मनुष्य उस रचनाका स्वाद हेने लगता है और उस मार्थको जिससे कि वैराग्य-शिक्षा प्राप्त होती है सर्वेथा अला देता है और यदि कुछ याद भी रखता है तो चलती वार भागते दौड़ते नाममात्रकी याद करके चल देता है।

अब विचार करनेकी आवश्यकता यह है कि जैसे कोई विद्यार्थी विद्यालयकी उम्बी चौड़ी बिल्डिंगसं अपनी शिक्षाको पूर्ण नहीं कर सकता जब तक कि पाठक थोग्य और अनमबी न हों। ऐसे ही कोई बैराग्य-शिक्षाका इच्छक भी अपने प्रयोजनकी सिद्धि उस समय

तक नहीं कर सकता कि जबतक सीधे सादे और साफ सथरे मंदिरोंमें बीतराग मूर्तियोंका दर्शन प्राप्त न हो।

मंदिरीकी दीवारीकी सुनहरी बनानेवाले भाई शायद हमपर कोप की, परम्तु हमारेपर कोप करनेसे पहिले उनको विचार कर लेना चाहिए कि जो कुछ हमने कहा है वह कहाँतक ठीक है और मंदिरोमें जाकर दर्शन या पूजा करनेका क्या प्रयोजन है ? यदि यह प्रयोजन है कि वैराग्य-शिक्षाकी प्राप्ति हो, परिणामोंभें द्यांति उत्पन्न हो और पापैकी प्रकृतिका नाज हो तो कहना पहेगा कि ऐसी दशामें जैन मंदिरोके अन्दर सीने चौंदीकी लिपाई, पुताईका कुछ भी काम नहीं है-भाँतिरकी चित्रकारियोंकी कोई आवश्यकता नहीं है। किन्तु एक साफ सुथरे और उम्बा मकानमें एक बहुत बड़ी विशालाकार मूर्ति होनी चाहिए जिसके दर्शनमात्रसे वैराग्य-शिक्षाकी प्राप्ति हो और परिणामोंमें शांति उत्पन्न हो।

भाईयों ! बुरा मत मानो, छोड़ो इन दकोसलोंको ! बहुत दिनोतक अज्ञान निद्रामें सोते रहे, बहुत समय तक दूसरोंका अनुकरण करते रहे, अब रोशनीका जमाना है। इस समय हरएक बातका हरएक पहलू साफ नज़र आ रहा है, केवल विचारशक्तिसे काम छेनेकी आवस्यकता है, जहाँ जरा विचारसे काम लिया कि प्रयोजन सिद्ध हुआ । मित्रो ! यह जो राजा रचना मंदिरीके अन्दर की जा रही है, सिवाय विषय लंपटी लोगीको खुश करनेके और किसी भी कार्थके सिद्ध करने-बाळी नहीं है। न तो इससे परिणामीमें शांति आती है और न वैराग्य-शिक्षा ही प्राप्त होती है. किन्त उस्टा परिणामीमें राग भाव पैदा होता है जो संसारके बढ़ाने और दु:सके होनेका विद्याप कारण है।

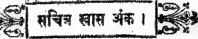
परिणामोंमें शांति और आनन्दके उत्पन्न करनेवाला यदि कोई कारण है तो वह ज्ञान है और वैराग्यकी झलक दिखलानेवाला यदि कोई कारण है तो वह वैराग्य-मूर्तिका दर्शन है अर्थात् इमारे प्रयोजन सिद्ध होनेका यदि बोई मार्ग है तो वह ज्ञान और वैराग्य है न कि सोने चाँदीके चंवर छत्र आदि।

माइयो जितना दृष्य आप मंदिराकी दीवारीके रॅंगनेमें ब्यय कर रहे हैं या सौने चाँदीके रथ हाथी घोडे बनवानेमें लगा रहे है. यदि इतना द्रव्य ज्ञानके प्रचारमें लगाओं तो निश्चय ही संसार भरका कल्याण हो जाय और श्रीपरम महावीरस्वामीका उपरंश हराभरा हो जाय। वीर भगवानकी पवित्र वाणी प्रकार २ कर कह रही है कि संसारमें प्राणी-मात्र तक मेरा उपदेश पहुँचाया जाय, अनादि कालेस ससारकपी बनमें भटकते हुए जीवांकी जानकी रोशनीदारा मार्ग सुक्षाया जाय, राग हेपकी कड़ी जंजीरीं-से जकहं हुए जीव ज्ञान और वैराग्यके हाथोंख छटकारा पा जायँ। और यह बात सर्वथा सत्य है-धीर भगवानका कस्याण कारी उपदेश पश पश्चिमी तकने सन। और अपना कल्याण किया. घोड़े हाथियों तकने सम्यक्त धारण करके संयम पाला और मनन्य टेखतेके देखते रह गये। फिर भला गेमे उप देशका प्रचारन करना यदि आज्ञाका उल्लंघन करना नहीं है तो और स्या है !

भाइमों! आवश्यकताके अनुसार हरएक काम होता है। ज्ञायद किसी समयमे सौने चाँदीके रथ हाथी घोड़ोंकी आवश्यकता हो, मंदिरोंकी दीवारोंपर सोनेके चित्रोंकी ज़रूरत हो और रेशम नरीके चंदोंथे, परदे या छत्र, चंवर आदिक सामान चाहा हो। लेकिन ख्याल रहे कि इनकी अब आवस्यकता नहीं है। यह सौने चाँदीका सामान केवल चक्षु इन्द्रियका विषय पूर्ण करनेवाला है, न कि आत्मिक कल्याण करनेवाला। इन चीज़ींसे मान कपाय उत्पन्न होता है, लोभ बहुता है, रागोजित होती है अर्थात हर प्रकारसे परिणामोंमें क्रेश उत्पन्न होता है।

इसिलए अब आवश्यकता इस बातकी है कि जीवोंके कल्याणार्थ ज्ञानका प्रचार किया जाय, बीर भगवानकी पिष्ठित्र वाणी घर धरमें फैलाई जाय, वैराग्य शिक्षाके लिए गाँवरमें विद्यालय खोले जायँ अर्थात् अय जैन मंदिर ऐसे बनाये जायँ, जिनकी रचना और बनावट सीधी सादी हों, और उनमें वीतराग-मृति दर्शनोंके लिए स्थापित की जाय जिससे संसारी जीवेंका कल्याण हों, बीर भगवानकी याणीका प्रयोजन सिन्ह हों।

नाट-इमने आपड़ीका लिखा हुआ "मृति पुजन '' शार्षक . लेख एक अंक '११वेंमें भी प्रगर था। इमपर हमारे किमी महाश्यने ! जैन मित्र ' के किसी अंकमें इमार एक कटाक्ष-ने ह लिखा था। जिसपर हमारा कहना यह है कि इस बातको इस मानते हैं कि अभी अपनी समाजमें ऐसे भी अनेक मनुष्य हैं कि जो बाह्म आइंबरसे खश रहते हैं-उनकी तांबयत धर्मके असली तत्त्वपर आती ही नही। ऐसे मनुष्यांके छिए यह सजाबट बहुत कामकी है—3नको जिनालयमें बुलानका यही उपाय है। पर क्या यह उचित है कि फिसीकी प्रकु-तिक अनुकूछ होनेसे कोई सत्य छुपाया जाय ? **उनको** सत्यका स्वरूप दिस्वाकर सत्यकी ओर आकर्षित किया जाय ! संपादक !





(ले --पं व हरिवंश मिश्र, छपरा)

(खप्पै)

जिसका है शांच शांल मुल शुभ मति लितकाकी-श्रीभारे युत, शर्मन्त विशद छाया है जाकी ॥ गत्य कांघ निर्वाध सत्यगुण पक्षम मुन्दर ! कुदाल पुष्प औं संपंति फलसे नम्र भने।हर ॥ दया मुवाके धारसे जिसे सीचते बुध मुदा। धमे-इक्ष वह नित करे मञ्जलमय जीवन सदा ॥

(२)

सुख देता है घम जीवको उभय लोकमें। धर्म एक अवसम्ब परम अज्ञान शोकमें ॥ धर्म-सूर्धको देख दुर इट जात अधेरा। धर्मीके सानिकट नहीं है विपद-बसेरा ॥ धमें बचाता है उसे जिसके सँग केंाई नहीं। भव भर्यलमें जीवका आश्रय है शुभ धर्म ही ॥

मुनते जिनके कान सदा है। कथा धर्मकी। मुखमें रहती धर्मगिरा नाशक कुकर्मकी ॥ मनमें है अभिलाप नित्य नव धर्मी स्रितिकी। नीति एक अवसम्ब बनी जिनके मति गतिकी।। करते नित सब अकुसे धर्म काय्ये जो सन्त हैं। प्रस्य समयमें भी नहीं उनका होता अन्त है ॥

(8)

बद्धि वहा है जिसने जगमें शील कमाया। धैर्य्य वही है जो इन्द्रियको शान्त चनाया॥ बही चातुरी जिससे विश्वत होती माया | वही सत्य विद्या जिसने भव बन्ध हटाया ॥

धीरज, धन, गुन, चातुरी, विद्या घी कीरति कथा। स्वर्गसहज्ञ सुखल मदा, एक धर्म विन है वृथा ॥

अन्धा है विद्याविद्दीन रहते ऑखोंके। दानरहित जन हैं दरिद रहते लाखींके॥ नीति-कशासे निमुख नधिर रहते कानोंके। कीर्तिहीन है मरा हुआ रहते प्राणिके॥ विन सोचे परिणामको भव कीचडमें जी फैसा। घर्म-मार्गको छोड, है शोचनीय उसकी दशा ।।

मन्ज-योनिमें जन्म देवसम है बुधसम्मत । बुद्धिहीन है मनुज-देह पद्धवामें परिणत ॥ ज्ञानहीन है बुद्धि न होती किसी कामकी। धर्महीन है ज्ञान कथा केवल इदामकी ॥ पह करके भी प्रन्थ जो धर्मममे नहिं मानते । नोतासम वे शब्दका रटना ही हैं जानते ॥

दोहा।

पढनेस होता नहीं, दुष्टांका मद मङ्गा धीत अङ्ग व्यो धृतिसे, धृतर करत मतङ्ग ॥

औरीका उपकार नहीं वन पक्ष खला भी। नहीं दानको दिया द्रव्य सहप्रेम अल्प भी ॥ सत्य वचन कहके न किसीका प्राण बचाया। देख दीन निज देश तनिक औंसू न बहावा ॥ वों व्यर्थ समय जो खो दिये हो, प्यारे! अज्ञानसे। रांबागे उसके छिए सोचारो जब ध्यानसे ॥

दानसहरा भवभें न विभव कोई है भाई!। सबसे बद्धकर है पवित्र त्रत मित्र ! सचाई॥ श्रम पाल शीलसमान आन है नहीं मनोहर। क्षमा-रमाकी सखी मनुजको है अतिहितकर। इनका पालन प्रेमसे धर्मा क्ला मूल है ॥ थार्भिक बगगा, छोड़ कर इनकी, भारी भूछ है। (80)

बाणीम है सत्य दृष्टिम है परिश्व है। हाथों में है दान-बाक्ति धार्मिक है बुद्धि॥ दया कामिनी लगी हुई है सदा दृदयने। करते हैं उपकार नहीं डरते जो भयसे॥ जिसके जीवनमें सभी ये बातें बहुमूल्य हैं। जीवित केवल है बही, और सभी शव-तुल्य हैं॥

(११)

पाते हैं पर-प्राण-त्राण-रत धर्म दयासे । जोते हैं सब लोग सुधासम सुखद दयासे ॥ अपना मञ्जल कर सकता है मनुज दयासे ॥ औरोंका दुख हर सकता है मनुज दयासे ॥ शान-नेत्रसे देखकर मुनियोंने निश्चित किया । "नहीं अहिंसाके सहश कोई है पुण्य-किया ॥"

(१२)

खाना पीना सुखसे सोना वज्र पहरना।
फुलवाड़ीमें प्रतिदिन दोनों मांझ टहरना॥
इन कामोंका सुफल एक जीवनरक्षा है।
जीवनसे भी उच्च न कोई प्रिय कक्षा है॥
जान बचाई अन्यकी जिसने वही सुधन्य है।
सत्य सुकृतशाली वही, वही सबीमें गण्य है॥

(१३)

तीन लोकका एक वही उत्तम भूषा है।

समता-तमका शत्रु वही उत्तम भूषा है।

उसकी कीरति-सुधायान हित सुर भूखे हैं।

पा उसका आलोक पाप कर्दम सूखे हैं॥

यश:स्तम्भ उसका न है प्रलय समय भी डोलता।
सदा ध्यानसे जो मनुज सत्य वचन है बोलता॥

(88)

दिया किसीका नहीं न जिसको अपने खाया। जिसके रक्षा-हेंद्र करोड़ों झेल उठाया॥ जिससे बढ़ते हैं अनर्थ वह अर्थ ब्यर्थ है। देह यही है दीन शाफमें जो समर्थ है॥ भरा नहीं जिसका हृदय करणा और सनेहते। जड़ पत्थर भी है भल्ले उस पामरकी देहसे॥

(१५)

उस देल सुर सभी प्रेमसे शीश नवाते।
किनर उसकी कीर्ति-कथाकों सादर गाते॥
दया शील बल पुण्य शौर्यका वह सागर है।
सब ग्रुभ फलका सदन वही गुणका आगर है॥
वही विचाराधार, जो ले उपकार-उपायको।
इस असार संसारमें सार बनाया कायको॥

(95)

परधनमें अभिलाध नहीं है जो नर रखता। सपनेमें भी नहीं कभी परगारि निरखता॥ जिमने अमसे भी न कभी परकी निन्दा की। पर-गुण-वर्णन-दश्च विमल वाणी है जाकी॥ सबसे रखता प्रेम जो सब प्राणीका मित्र है। परम पुण्यशाली यही उसका चित्त पवित्र है॥

('पाटलपुत्र')

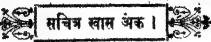
बहा भारी नवीन ग्रंथ श्रीमहापुराण ।

(आदिपुराण।)

अवस्य मंगाइए! अवस्य मंगाइए!!

पृष्ठ १८००, कागज और छपाई बहुतही
उत्तम और मूल्य क० १६-०-० पोस्टेन
अलग ।

नोट-फी. रु. एक आना कमीशन काट दिया जाना है। भैनेजर, दि० जैन पुस्तकाळय-सुरत।



(ले -- पं पनालालजी बाकलीबाल)

बिदित हो कि हिंदुस्तानमें समस्त प्रजा २५ करोड़ थी, वह बढ़ते २ इस समय ३१ करोड होगई है। मन्ष्य गणनाकी रिपोर्ट देखनेसे ज्ञान होता है कि समस्त जातियाँ तो बढ़ीं, परंतु जैन जाति गत बीस वर्षमें ही १६ छाखसे १२ लाख रह गई। प्रधान कारण कन्या विकय वा बेजीड विवाह अर्थात् रहके साथ कन्याका और बालकके साथ युवति कन्याका विवाह होना आदि अनेक महाराय बतला रहे हैं। इस कारण निनर वैश्य जातियोंका खान-पान एक है उनका परस्पर विवाह हानेकी अति-प्राचिनर्गति चल जाय तो अनेक जातियोंका अस्तित्व कायम रहकर संनान-वृद्धि हो सकती है। ऐसी चर्चा हमारी जैन समाजमें बहुन दिनोंसे चल रही है । ज्याख्यानों और अखवारोंमें जोर शोरसे इसका आन्दोलन होरहा है। कुछ दिन हुए 'सत्यवादी' के दुसरे वर्षके चौथे अंकमें संपादक महाशयने अपनी दूसरी टिप्पणीमें अकबराबाद (मुरादाबाद) निश्रासी भाई सिपाहीलाल जैन-के पत्रको उद्धत करके सब जैन जातियोंमें परस्पर बेटी-व्यवहार करनेकी व पुरानी रूढी तोड देनेकी प्रार्थना की है। साँ ठीक ही है, अनेक विद्वान् इस प्रथाके चलानेमें सहमत है, परंतु भेरी तच्छ बुद्धिमें इस प्रकार परं-

स्पर बेटी-व्यवहारका द्वार खुल मानेसे। सब जगहके मुरादाबाद जिल्लेकी तरह निर्धन वा ज्ञाति निर्धनोंके छडके अतिसुंदर हृष्टपुष्ट वा गुणी होनेपर भी सबके सब अविवाहि रह जाँयगे। और बाल विभवावींकी संख्या भी बहुत बढ़ जायगी । जिससे फिर छाचा-रीसे ब्रह्मचर्य व्रतका चातक व अनेक अन्थीका मूल विधवा-विवाहका प्रचार करना पहेगा। तथा ननान लडकांको ईसाइयोंमें २ लडिकयाँ मिल जोनेसे वे सब अपने धर्म कमसे वे जातिसे हाथ थो बैठेंगे । यदि यहाँतक नीवन न पहुँचेगी तो बक्त हुई विध-अविवाहित साथ षुरुषोद्वारा व्यभिनारका बाजार गर्भ होजायगा। उदाहरण-कं लिए में मुरादाबाद जिलेका ही थोडासा हाल छिखकर खंडेछवालोंके अकबराबादमें ही नहीं बल्कि मुरादाबाद रामपुर विजनोरके मिले भरमें लंडके **अ**विवाहित रहनेका असली कारण बतलाता हैं।

में मुरादाबादमें सं० १९४४ से कई वर्ष तक विद्याध्ययनार्थ रहा है। उस समय मुरादाबाद निलेके खंडेलवाल भाइयांमें दो या तीन गोर्ने ही टाल कर विवाह हो जाना था। इस कारण देहली अलीगढ शेरकोट वगेरहके चार गोत्र टालनेवाले खंडेलवाल भाइयोंसे इनके साथ बेटी-व्यवहार बंद था। परंतु कुछ दिन बाद धनाव्य रईसोंके नये बाबुओंके मगजर्मे आधा कि थोडेस घरोंमें बराबर जोडीका संबंधी व लडेके लडकी नहीं मिलते इसालिए सभा व पंचायत-

द्वारा आंदोलन करके समस्त प्रान्तींके खंडे-छवाछोंकी तरह यदि हम भी चार गोतें टालकर विवाह करने लग जाँय तो हमें भी देहली अलीगढ़ वगेरह दूर २ तक संबंध करनेके लिए अच्छे अच्छे लड़के लड़कियाँ व धनाड्य छोगोंसे संबंध करनेका मोका मिल जाय । फिर क्या था पंचायत होकर प्रस्ताव पास हो गया । देहली अलीगढ़ वंगरहकी खंडेलक्ल पंचायतींने भी इस प्रस्तावको स्वीकार कर लिया और उमसे बेटी-व्यव-हार सबंधे जारी कर दिया । जिसका फल यह हुआ कि मुरादानाद जिलेकी रईसींकी जितनी लड़िक्यां थीं वे तो देहली अलीगर तथा पूर्वमें मिरजापुर तक रईसोंके परीमें पहुँच गई क्योंकि ऐसा कोई भी माता पिता नहीं है जो अपनी छड़कीको छखमतिका वर-वर मिल्से हुए गरीबके वर-वरका चाहे. इसलिए मुरादाबाद निलेकी सब लडिकयाँ प्रायः अन्य प्रान्तेमि चर्छा गई और इक्तक निर्धनोंके सब छडके ठंठगापाल रह गये। जो भाई धनवान हैं वे तो धनके जोरसे अप ने लक्कोंको बाहरसं व्याह छाते हैं, वा व्याह लबिंगे परंतु जो बेचारे गरीबके लडके हैं वे विना पैसेके अछीगढ़ देहली। वगेरहमें कैसे कन्या छा सकते हैं। बस यही एकमात्र कारण है कि मुरादाबाद जिलेमें लड़के के और रह जाते हैं। नागरिक रईसोंके छडके प्रथम तो शरीर-संपत्तिरहित ही पैदा होते हैं। यदि कोई हष्ट-पुष्ट भी हुए तो अपनी स्त्रीको छोड् रात-दिन परस्त्री वा इंडीबाजी

वगेरह एक्यासीमें पड़े रहते हैं जिससे छनसे संतान होना दुःसाध्य होता है। वे ही छड़-कियां यदि अपने ही प्रान्तमें मिहनत मजूरी करनेवाछे गरीन भाइयोंके घरमें जातीं तो अनेक बाछ-बच्चोंकी मानाएँ हो सकती थीं, परंतु वे उनसे बंचित रहीं। इधर मुरादाबादमें घर-संख्या और भी घट गई।

अब विचार करना चाहिए कि जब मुरादाबादक भाइयोंकी इस विवाह सबंबसे दस वर्षमें ही यह बुरी हालत होगई तो सब जानियोंका संपर्क होनेसे तो बेटी लेने-देनेका क्षेत्र अतिविशाल होनेके कारण के।ई गरीबसे गरीब मान। पिता मी अपनी अपनी बेटियोंको, चाहे जितना खर्च ज्याद: पद नाय, हनार पाँचसी कीश भी दूर क्यों न हो बड़े और धनाट्य वरमें ही देनेका प्रयत करेंगे तम गरीम घरींक लडके अवस्य ही कुँआर रहेगें । दूसरे कन्या-विक्रयका वानार भी उन्नीहेपर हो नायगा । अभी तो लक्षका प्रान्तका प्रान्तमें बेचमेसे अनेक नन की ! थु ! करने हैं ! फिर तो चाहे जहाँ लुश्के २ दे। चार हनारकी येखी हेकर अस्सी वर्षके बुहुके हाथ बँच आर्विम । ऐसी अवस्थामें धनवानोंके वरकी लड़िकयाँ या तो बंध्या रहेंगी या एयाची लड़कोंके शीघ ही मरजा-नेसे विधवाओंकी नदवारीमें सहायता पहुँचा-वेंगी । और उस समय यदि उन अविवा-हिसोंके माथ विधवा-विधाहका प्रचार करेंग तो जैन जाति एकदम वट जानगी। तब हमारे मनज्छ बाब लोगोंको विवया विवाहके

प्रचारका बहुत ही उत्तम अवसर मिल नायगा। अतएव हमारी समझमें प्रत्येक नातिमें परस्पर विवाह संबंध होनेसे थोई।मी धनवानोंको लड़कियोंको वा विद्वानोंकी पड़ी हुई वा सुंदर लड़िक्योंको योग्य वर मिलने-के सिवाय असमर्थ लड़कोंको अवस्य ही अविवाहित रहना होगा और उनके द्वारा अवमे वा कदाचारका प्रचार अवस्यमेव बहेगा। इस कारण सच जातियोंका विवाह संबंध चाहनेवाले महाझयोंको मुरादाबादके हानिकारक प्रत्यक्ष दृष्टांतको देखकर मोच समझकर इस आन्दोलनमें तत्पर होना चाहिए।

मोट-पण्डितनीका लिखना यथार्थ है, पर वह इतने हैं। अंशोंमें, कि यदि कोई जाति गरीबहो तो उसे अपने बेटी छेने-देनेका क्षेत्र विस्तृत नहीं करना चाहिए और जो धनशाली हो उसे तो न केवल 'कर छेना चाहिए 'बलिक 'करना ही चाहिए '।

हमें एक पद्मावतीपुरवार जाति जो कि वर्तमान जैन नातिका ही एक अंग है के एक विचारशील सुधारक पण्डितजीके साथ इसी बाबत बात-बीत करनेका सौमाग्य प्राप्त हुआ था। उनका भी यही मन था कि बेशक विवाहका क्षेत्र विस्तृत हो जानेसे वर-कल्या-की जोड़ी ठीक मिल मकती है। जिससे गृहमें शान्ति, नीवन-यात्राका सुखसे विनाना-सन्तानकी दृद्धि अनेक आदि ŧ, हो सकते पद्मावतीपुरवार परम्तु नाति इस सुधारके योग्य नहीं, उसका यदि बटी छैने दैनेका क्षेत्र बढ़ा दिया जाय

तो इसमें उसका अहित है। क्योंकि एक तो वह ग्रामवासी है अर्थात् इस जातिका अधिकांश भाग, और यह अधिकांश मी मामूली नहीं, किन्तु इतना बडा है कि जिसे पूरा भाग भी कहनेमें अल्युक्ति नहीं जँचती, आगरे जिलेके आमपास-ऐत्मादपुर फीरो-जाबाद ऐटा मत्थरा आदि ग्रामोमें ही है और ग्रामीण होनेके कारण अन्य जातियोंकी अपेक्षा यह निर्धन भी है! अतः इससे बाहिरके-शहरवाले लोग लक्की ले तो जायँगे, पर देनेको तैयार न होगे । क्योंकि कीन शहरवासी धनिक अपनी कन्याकी एक अभीण निर्धन वरको देना पसंद करेगा ! जिसका फल यह होगा कि इस जातिके छड़के कुँआरे रहने लगेंगे। जिसका फल सिर्फ इतना न होगा कि इसी जातिका एक अस्तित्व ही मिट जाय, किन्तु संपूर्ण जैन जनताकी संख्या-कमीकां, व्यभिचार बृद्धिका विशाल हानिकारक फल सधारको ! समझकर चलो !

सम्पादक।

पुत्रीको माताका उपदेश

(ससुराल जाते समय)

विवाहादि प्रसंगोपर बाँटने योग्य, पृ. ४० मृल्य सिर्फ)-॥ और ६) सैंकडा ।

> मैनेनर, दि॰ जेन पुस्तकारुय-सुरत.

महें शिवर जन। दिंश जन्म-मर्णीत स्थिति वर्णन.

है। इंश	• ં (નેબુદલ વીગ અધીરા જરા ધીરધીર 🌂 ઢમ.)	
	એમાં ભું હા "પુનસી" ભૂલ્યા શું પ્રભૂ નાબરે. ભૂલીને પ્રભૂ નાખ રે–તાેહી છે શર્તાસર્વરે.	એ
શેર.	પડયા તા પીંજરે ખતીને શુક તું જ્યારે, રહ્યા તા ગર્બમાં લટકી શિરે ઊધા જ્યારે. દે લે દઃ ખ ખબી ખબી કંટાળિયા ભારે જ્યારે, કહે રડી વાર વાર નાથ મતે જો ઊગારે.	એ ! ભુંડા.
13	હરનીશ બજન કરીશ નાથ હવે તેા ન ભુલું, સદા મનમાં રે રડીશ નામ તારૂં તેા ન ભુલું. સહેવાણું નથી વ્યા કષ્ટ છોડાવા ન ભુલું. ગર્ભથા છુટવા વિનતી કરૂં કદી ન ભુલું.	એ સું!
,,	મેવા અનેક કેલ કરગરી જંતેરે દોધાં, કાલાકાલા વચતા વદા તૈહ્યા અંજાવી દોધા, દુનિયા દેખવા ઘણા તેા કાલકરાર કપમાં, જન્મતાં કેલાંતે કવાર એ વિક્ષારી દોધાં.	એ લુંડા.
**	પિતાર્થ જોષીને તેડાવીયા બહુ માન કરી, રાશી જોઇ નામ કહેા ધ્યાનથી ખૂબ મણીત કરી, હર્પ સમાય ના આ બાપને બહુ હૈતે કરી, સ્વાર્થ ને માટ પાળી મ્હોટા ફૂંકીમાં સ્નેલ્ડ કરી,	આ સુંદા.
••	ભાળપણ તારૂ ગતું યોવતે મદમસ્ત બત્યા, જર જોરૂએ ભગાવ્યા નીંદે નાદાન બન્યા. ન ધારી શીખતે આરામમાં ગુલતાન બન્યા, જીલ્યા દાનરાત સદા જ જાળી પૂરા નું બન્યા.	એવા લ્લું કા.
##	જીવાની જેતેરમાંરે દાનમાં કોઇ ના દીધું, અરે સ્વયને ન કડો નામ પ્રભુતુંકે લીધું. તાભ તખ્યા માયાથી, કે શું જમાતી લીધું, મહેત કેશ જેતેઇ જેતેળન ગમાવી દીધું.	
19	જીવાની વહી ગઇ નજરિજ તારી એલ કરતાં. વહામાથ આવી ગયું જોર જીવાનીનું જતાં. જેપ્ટિકા કરમાં લીધી અંગ ચાલે ક્ષર થરતાં, નેત્રેથી નીર વહે ગુખના સહ્ દેન જનાં	એવ ભુંદા,
	क देना नहीं हुं भेगी-	એ બહા.

એ ભુંડા.

એ ભૂડા.

એ સું ડા.

એ ભૂંદા.

જાય પેટે અત્ર પુત્રા સ્વાર્થી સેવા કરે. **ધ**ડી ઘડી પાસ આવી મતલળની વાત કરે. ભધા મુખથી કહે હજા ! એ ખુડી ન મ**રે**. જાએ એ ખેલ છતાં પ્રભુતે નાં ફિલે ધ₹. છાંરૂ ધનમાલ મિત્ર સગાં રે રહ્યાં છે ygi. પક્ષી જમદાર ગયા પિંજર મુકીને VKi. અગ્નિયે રાખ કીધી દેહની લડે છે ydi. જતેલી ભાજી ગઇ મર્યા છે। દ્વારીનેજ Wi. સંસાર તરવાની ળાજી જે પ્રભુ ખતાવી ગયા, કુટ શબ્દ બાહ્ય ત્રાન શાને સમજાવી ગયા. તાેચે ન આંખ ખુલી જ્ઞાની બાણ દ્રક્ષ્ટ ગયા. ાદલમાં લા પડયા સડયા રડીતે ખાલી ગયા. સમજો સજ્જના પ્રસુને બજી કંઇ જ્ઞાન ધરા. જગ્તના ખેલ ખાટા ધ્રમમાં તણાઇ ન મરા. રહું જે જિન ધરા ભવ્ય ભવને તા તરા. ખરી યમદંડ છે તેનાથી જરા દિલમાં ડરા. ખામી સદા પાલી લાકીનેજ માપ ટેબન મળે. લવે ખણ નામ સ્ટે શાતે પુષ્પ નવું સીવાડે. અગર જીવાન મધુપ લીન આતરીજ પડે. માટે ચુંધી પુષ્પમાળ જોલે કાચ ગળ ધરે છે?

ધુળીઆ, તા. ૨૫-૭-૧૯૧૬. ળ ધરે છે ? અા લુંડા. અભિલાધી, શા પુનશા અરજીન.





(ले॰-एम० डी० गुप्त किं।

था इह भारत मध्य अही इक मुन्दर कानने, रहते थे जहँ यूथ अहो साग मृगपचानन। शहाक लोमड़ी करी कवी अब स्थुलीत, ये निवास करते करते अत्यानँद कोत्।

(?)

था वस्रादका बृक्ष सबन सुन्दर उस वनमें, वसते थे बहु कपी होय आहादिन मनमें। अतिसमीप ही तत्र पुक्ष कोटर में मारी, जीव जन्तु अन्यान्य रहत ये फिलकारी।

(3)

रहती थीं दो ओतु तत्र कोटरमें भारी, कर्राह केलि अन्योन्य किरत थी जी दुखमारी। पाठक ? उक्ति अहो समूची यद घटती है, " मुखमें सबको रंग क केंकि उपजती ही है।"

(8)

था उस वनके निकट माम अञ्जूत इक मुन्दर, पूरित या धन धान्य ज्ञान गुण विद्या मंदिर | अगह२पर मणिमालाएँ लटक रही थीं, तीरण वंदरवान पनाका पहर रहा था।

(4)

याउक ! करती केलि गई विल्ली वे दोना. बसं पसारी-शाप³ बस्तु पाई उन दोमी । भेला^{*} श्रीपुल. लेय पाय कर चली जु वनमें, उछल'कृद कर हो आनंदित निज निज मनमें ।

५ धन। २ बिल्ली (मार्जार) । ३ किरालेकी द्यान । ४ नाग्यिलका मला।

()

तत्र कोटरासीन होयकर लगी झगढ़ने. 'मम पूरण अधिकार' लगीं इस बाक्य उचरने। कहे दूसरी-अहे। वस्तु मैंने पाई थी, पहिली कहती-अही बस्तु मैं बतलाई थी।

(0)

षाचक ! उक्ति यहाँ पूर्ण मिलती जुलती है, 'पुण्य बिना कोई सदस्तु नहिं मिलती है।' यापि सबने हेतु द्राक्ष फलती हैं सुन्दर, तो भी होता अहो रोग कौए मुख अन्दर।

(c)

अम्तु क्रिगइती गई यगल वे कपी देवपर, उहराबा उन जउज, केश^र शीना दायर कर। शीध मुनाया हुक्म **आव** तुम पलाँ डेट³क्र, वस्ता होगा दि**स**मिस^म यो कह गये जल्ल घर ।

(,)

अस्तु उपस्थित योग्य टांमपर हुई कोर्टमें, किया आगमन शीघ अही मिस्टर किये जलने। पुनः पुकास वेग उभय सुहई मुहाले, किया केश उन जल्द न्याय विन देखे भाले।

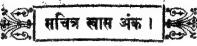
(90)

हेकर कॉटा दांश यांन श्रीफुछ दो दुकदा, भारी भई जिस तरफ झटिति मुखसे धर दुतरा। दहना पर्वश्व शुका शटिति तब उसको खाया. वावा मारी भया शीव ही उसकी पाया।

(98)

इसी तग्रहें काट काट कर सब खालीना, मलनी रइ गई हाथ स्दन करती घर चीना। पाटक ! शिक्षा गहो होय श्रीगिरिका मिरचन, साँह २ तो लई होय वारीका मुरचन ।

१ न्यायाधीश । २ मुकदमा । ३ तारीख-मिती । ४ खारिज। ५ टाइम. समग्र । ६ स्यामालम





(ક્ષેપ્પક, પુનશી અરજ્વન-ધળીયા.)

અહાહા! સંધ્યા સમયે. ત્વરાથી નિશાન ચ્યાવાહન કરતા સર્ય. **અ**ર્ધસમ દ્રષ્ટિએ, અનંત તારાગણાના મારથી ડરતેર, વિઘત ગતિયે પક્ષાયન કરવાની તૈયારીમાં હાવાથી સ્વક્રિસ્ફ્રાને લપેટવા લાગ્યા હતા. એ કિરણા તળે સ્વેચ્છાથી કરતી વાદળાઓન પૃથક પૃથક ગગત નીચે ભની ઉપર વિખરાઇ વાયના ખળ એકમેકન આનંદ કરતી, મેધનાથતું આગમન કયારે થશે ? એમ પાઝતી કરતી હતી. ત્યારે ભૂપર એક અકાંત આપ્ર વનમાં આનવુડો દશદરા વીશ વીશ અંતરે એવા તા સશાબિત કુદરતી રચનાય ગાડવાયલાં હતાં કે જાણે સ્વર્ગભવનનાં આનંદ સ્થાન ? પ્રદેશની શાખાંગા વાયના बहेरथी दाबी याबी पेताना अभगांथी केवा તા ગંભીર મનને આનંદ દેનાર સર નીકળતા કે જેથી કાયલડી પણ ક્ષણભર સ્વસર છુલતી હતી; સ્થળે સ્થળે મયુર, શુક, હ'સ, મેના, વગેરે આનંદથી તેમાં સાદ પરતા ખેસી આનંદ સુખ મેળવતા હતા. તે વખતના આનંદ સર સ્વર્ગની દેવાંગનાના સુરતે લબ્બવે તેવા હતા.

એ આનંદસ્થાનમાં કરતા કરતા મારા આતમા શીવ સુખતાજ આનંદ માની પાસે વહેતા નિર્મળ સ્કૃટિકસમ જળના કિનારે ઊંંબો રહ્યા. તે નિર્મળ નીર નેત્રે લગાડતાં તા વળી નવાજ આનંદ મળવા લાગ્યા અને પવિત્ર મહાત્માં આવા પાદસ્પર્શથી પવિત્ર થયેલું નીર વારંવાર મસ્તકે ઊરાડી હું તેા હવૈયેલા થઇ. મતે પાતાને ધન્યવાદ આપવા લાગ્યા. અહાહા ! એવું મહાત્માંઓની પ્રસાદીકપ પાણી! તેમના પાદથી પવિત્ર શયેલી ભાગિ! કાના અહેા

તા કાઇક જન્મનું મહા-ભાગ્ય કે મળે ? હં છું કે મને પવિત્ર રમણીય પ્રન્યલ્ટ સમજા ભૂમિના દર્શન **થ**યાં અને સાથે હર્ષોસ ઉદ-ભવ્યાં. એવા પવિત્ર સ્થાનમાં પ્રેમીએ પ્રેમને પરાજિત થયેલા લહિમને અલે. લહિમથી ભલેજ. મર્ણાંગત અવસ્થાવાળા ક્ષણવાર કાળને પણ ભૂલેજ. જેમ મુરલીના અવાજે નાગ ડાેેે તેમ તે સ્થાને મદાન્મત્ત હાથીની માક્કહં ડુલવા લાગ્યા. આનંદમાં એટલા ગરકાવ થઇ ગયા કે તન્મ્ય થવા લાગ્યા, માથું ભમવા લાગ્યું અને તનમન ભૂલી ભૂમિષર સાષ્ટાંગ નમરકાર કરતા પડ્યા. એટલામાં એક મહાત્માન એ આવીને ઝીવ્યા, નહીંતા ચુરા ઉડવા પણ વાર ન લાગતી. પહા ઘણા સભળ પૃત્રી-મારા સંબળ આયુષ્યે, મહાત્માંએ અહૂર ધીરેથી નીચે સુવાડી નેચા પર જળ અંડા મતે સાવધ કાધા. આંખા ચાળતા ચાળતા महातेजरस्वी हासीन्तर केया ચળકતા. મહા મતાળળ ધારી. "મહાવીર" ત્રસની મહાન भव्य भर्ति, हिच्य हेडधारी क्योती निडाणा જું તે! દંગજ થયે. ક્ષણભર પુન: ભાન ભૂલ્યા. પણ તરતજ સાવધ થતાં પ્રભૂચરણે પડી હર્માસર્થ તેમના ચર્જા ધાર્યા.

ઉઠ! કોઠ! મારા પવિત્રાત્મ**ં**શ ચ્યા પવિત્રભ**મિના**ં પ્રતાપ એવાજ છે. કંઇ આશ્રર્ધ કરવા જેવં નથીજ! આ ભ્રમિમાં પ્રવેશ થયા કેડે હવે. શાક, વગેરે સ્ટૂલાઇ જઈ. ભિન્નભાવ ડેકાએ અનેદતા થાય છે. અ**હીં**યા સર્વત્ર આનંદી આનંદજ પ્રવર્ત છે. તારા તરફના સર્વ જગતાત્માં આ, જિનદર્શન જિન-બક્તિ. સામાયિક કે અન્ય ધાર્મિક કાર્યો કરી સખરૂપ પ્રવતાં હશે ? વ્યવહારિક કાર્યે પણ धर्भने अबता नक हरे।?

મહારાજ: અંજળિ જોડી હે બાલવા बाज्या-इं तेओा, अने तमान्भेश्वरूप छीये, अ આપની વાસી સર્વૈત્ર સર્વના કિરણો જેમ પ્રસરી રહી છે. આપની મર્તિએ સ્થાપન

थयेकां जिल्लासया प्रत्ये हरेड जजत आत्माओ। કે જે અહે પરવરપે હા, ઓ રપે હા, અતી @લ્હાસિત જ તિયે મળશકે ઊંદી, જિનાલયમાં જાઈ; અત્યંત કરણ પણ ભવ્ય સ્વર્શી: આપની સ્તૃતિના આરંબ કરે છે. भाजकार अनी अनित्याणा साम सी रहावर એ રણવાધ **छे**ं प्रधा कथारे આપની સ્ત્રતિના આરંબ કરે છે. ત્યારે અ'ત:કરણા દકાનમાં. ધરકાર્યમાં. तेभना સફરામાદા સમાચાર **જાણવામાં**, લડાઇની ખળરા. પરદેશ વસતાં સમાં, મિત્રાની ખળર-**અ'તર જણવાની જિ**જ્ઞાસામાં, લક્ષ્મીના લેખે દેણ-માં, બાલા બચ્ચામાં, કાર્ટ દરતારમાં કે અન્ય સ્થળ ! યા આપનાજ ધ્યાનમાં હશે. એ મારાયા કડી શકાતં નથી. તે વખતના માનસિક ક્રિયાએ તે આપ સર્વત્ર न्त्रशिष છે. આપ સર્વત્ર છે તે જણી ક્ષેશા. સામાચિકમાં પણ દસાદસ ને મસ્કરી શિશ્વાય અજિં કર્યું મારા દેખવામાં આવ્યું નથી. સામાયિક માટે તા આપની વાણી અચળજ છે. અતે આ કલ્પન્ટસ સમ કળદાયક, સામાયિક એકજ વખત. એકજ સત્યભાવથી. એકજ અંતઃકરણથી આદર તા અને એકજ તન્મ્ય થઇ પુરં કરે તા અનેક ભવાના પાપા ધાઇ તિર્શકર પદ ભાંધ. એશું આપતું વદેલું સાર્ચ નથી? આપેજ કહ્યું છે કે સામાયિક સાક્ષાત છે, સામાયિકમાંજ ખરા પશ્ચાતાપ થાયછે. ખરૂં જૈનનું તત્વ સમજાયછે. દરેકના મન શાંત કરી અનેક ક્ષ્મને હરતાર છે. હે જગતતારક ! આ જગતના **આત્મામ્યાને સામા**યિકનું માહાત્મ્ય ખતાવી. તમારા જેવા ઊજવળ ખનાવા, પહા મહારાજ! અપ્રેમ ક્યાં આવિક છીથે? અપ્રેમ તા દાંબિક જગ્તતે છેતરનારા ખાલી કાક્ટની ધાર્મિક કેશર બગા-ડનારા છીયે-કેશરના ટપકાં કરી જગતને જૈન હાવાના કાવા કરી દબનારા છીયે. એકના છે. ખ<mark>ેના ચાર કરનાર. ગારી કરીયા 'વ્</mark>યક્રિસાં' ના ધર્મ જાણતાં છતાં ફીડી, મંકાડા કે કસાઇ

ખાતેથી છવા ખચાવી "વિશ્વાસઘાતથી" મહાન મનુષ્ય દેહધારીના ગળાં પર અદ્રસ્ય છૂરી ફેર- વાનારા અમા કસાઇથી પણ નીચ "અહિં સાતુ" ડાળ ખતાવનારા છીયે. સાચું ખાં કંકરી પરની લક્ષ્મી લુંડા લેવામાં જ અમારી વૃત્તિ સમાયલી એવા જે અમા નીચ વિષ્ટાના કીડાઓને "જિન-પૂજા" "જિનદર્શન" "સામાયિક" કેવી રીતે સમજ્યય? અમા તો "જ્યાંથી દરે ત્યાંથી માર-તોનું દુ:ખ પાપ ન ધાર" એ કહેવતને અનુ-સરી ચાલનારા છીયે. એકમેકની નિંદા કરવામાં એકદ! પરની અંબેં નિહાળવામાં તત્પર! એકમેકની ઇચ્છાએક તાડી પાડવામાં "શ્વાન" જેમ સરા! આપના કહેલા માર્ગથી ઊંધા ચાલનાર અધ્યમ્માં પણ અધ્ય છીયે. દેહ વેદ-

નાએ પણ કહાય કાઇ કાળે આપને યાદ ક્રીધા

હાય તા આપ જાણા. એશ્રી વધારે શે કહે?

ધાર્મિક કાર્યે તથા વ્યવહારિક કાર્ય પણ ધર્મને

કાણ યાદ કરતાં હશે એ પણ આપના જાણ

બહાર નજ હૈાય એ અમંભવિત નથી.

મારા પ્રિય આત્માં શ, 'મહાવીર પ્રભ્ર' રવ કામળ વાસીએ ઉચર્યા-સાંભળ વિરની વાણી કરી આ સાક્ષાત સાંભળ ! તારા હૃદયમાં ંધરી રાખ, તને મસીજ લાપ્યામ**ી થ**ઇ **મડશે.** સાંભળ ! પુરૂપ કે સ્ત્રી દેવધારી આત્માંમા જિત્નાલય પ્રત્યે જઇ રણવાલ સ્વરથી અક્તિ-ગાન કરેછે, તેથી વીરના ભ'વૂચાને કંટાળા આવતા નથી. તેઓ પ્રમ ત્યાં ચિત્ત રાખી ગમ તેની બહ્તિ કરે તેમાં અમારે શું? કરાં લેવ દેવું નથી. તા હવે કે સાક કાને માટે કરીએ? એ ટેહ-ત્રારી અમતમાં મા ક્રિયારપી કર્મ **ધર્મ ભાગવતા** આવ્યા છે અને **હવ્યુ** એાગવશે. અ**એ**ા તેા શિક્ષાકપી શખ્દ વિધીશું, તેમાં સમજે તેા બલા નહી તા બલે અક્રિયાએ။ કરી ખ્લાડી બલા બ્હારે! જગત આ ખાનું સખ દુ:ખ ક્યાં સાંભળતાં ખેસીયે. અમે ભાષા કં કર્વવ્ય બજાવ્યું, તમે તમારું ભજાવા,

કૃતિયા આખી ''જ'' <mark>અક્ષરમાં દિવાની</mark> વની રહીછે. તેમની પ્રતી **લામણી પૂર્વના કર્મે**- ધર્માનુસાર ચાલતીજ રહી છે. અમાએ દીવા આગળ ધરી બતાવ્યું કે જુએા, નિહાળા, નજર કરા, દ્વનિયાનું ક્ષણીક સુખ કેલું છે? જગતની માયા કેવી છે? દીવાને આળખી દીવાને ધરી ખેકાળજીથી અમારા રસ્તે ચાલ્યા આવા. માયામાં ક્સાયલા માને?

''જ' અક્ષરના ત્રણ શબ્દો-"જર" ''જોક" ''જમીન' પ્રત્યેના અર્થી ખુબ સમજાવ્યા છતાં એકમેકના વેરભાવ તજતા નથી. "જર" યાને લક્ષ્મી ક્ષણમાં એકના હાથમાંધી ના હાથમાં જતી રહેછે. "જોરૂ" જે વિષય સુખની મહારાણી ધર્મ માર્ગ પાસે પણ જવા દેતી નથી, "જમીન" એ શબ્દે તે**ા** આખા જગતનું સત્યાનારા કરાવ્યાં છે. એવાં દનિયાન દુ:ખ કહેતાં અતે એ પ્રમાણતું જોતાં અમને રહવું આવે છે. તે માટે ઘણા કરણી થઇથ છીયે. અમારા આતમાં મુણા રીભાય છે. પણ અમા શાંત રહી ખેસી રહીયે છીયે. અને એમવાથીજ અમને ક્ષમાવાન પાત પાશ **ક્ષેમાગ**ણ આદરશે. श्रेषीत ગ્યમારા શખ્દની કીંમત થશે નહીં. થયે "જ" અક્ષરતા ચાર્યા શબ્દ 'જીવ" કહેતાં ''આત્માં" તે આળખવા અમાએ કાંઈ આછા પ્રયાસા કીધા છે! પણ કાયલા કરી હળાર સાખએ ધારો થાડાજ પાળા થવાના ? એતા આપાસ્માપ અમારા વચનરૂપ **अिक्युगता** rHttll . પામશે. વિશ્વાસધા-તીયાને રરતા નથી. ઉોમરવા क्यारे એ વિશ્વાસધાતના મહા પાપને સમજ અન્યાયથી અચશે-લાબની ભાર્યા કુલટાને તજરો ત્યારેજ તેમને ભક્તિના માર્ગ અન્યાયથી મેળવેલ લક્ષ્મીથી દાનની સાકલ્યતા નથી. વળા આજકાલ કેટલાક નિર્દેષી માળાપા સ્વક્રન્યાએ વેચે છે અને દ્રવ્ય એક કરે છે. તેઓનું એક પણ પૈસા ખાનાર યાતાનું બધું પ્રત્ય ખાઇ એસે છે. એ તા ત

કહેતાં ભૂલ્યા હતા, પણ વીરતી જાણુ બહાર ન હતું. ઊપદેશ કામ આવે? નજ આવે. અમારી વાણીથી પથ્થરા પીગલ્યા, પણ નિર્દયી હત્યા ન પીગલ્યાં. એઓએ સાંભલ્યું ન સાંભલ્યું કરી કાર્ય ચાલુજ રાખ્યું છે બાટે વીરની તરફથી તું કરી કરી કહેજે.

'તમા આદરાછા તે કાર્ય સારાં નથી, તમારા તમાં ચાલા છા તે માર્ગ સારા નથી, તમારા માર્ગ કાંડાઓથી બરપૂર છે. અમારા ખરા માર્ગ ચાલા તમા! પોતાને ઓળખા તું કાલા છે! ક્યાંથા શા માટે આવ્યા! તારું કર્તવ્ય શું છે! કર્યાથા શા માટે આવ્યા! તારું કર્તવ્ય શું છે! તે કર્તવ્ય આદરી પૂર્ણ કર્યું છે! વગેરે અમારા મુખ્ય વિચારાને સથાન આપા. "જ" ના સાથા શખ્દ"જીવ" તેને આળખા. અમારા પુસ્તકાતાં મુજ્ય કરશા તા પસ્તાશા. વખારે શું કહી એ! અમારી વાલીથી હેવાના માલમદ મામ્યા છે. તમા તા લાલીથી હેવાના માલમદ મામ્યા છે. તમા તા સારા નરસાના વિચાર વ્યલનારા—અમારે વરેલું સારીરીતે સમજી શકનારા છે, તો સમજો વ્યલો, સિદ્ધે રસ્તે ચાલી અમારા જેવા થાંમા અને અમારી પાસે આવા.!"

એટલું કહી મહાત્મા મહાવીર અંતધ્યોન થયા અને હું રખડેયોજ રહ્યાં

રહે રહે રહે રહે

સામાયિક ભાષાપાઠ.

અર્થ, આલાચના પાઠ અન મિચ્છામ્મિ દુક્કદં સહિત છીજી આવૃત્તિ તૈયાર છે. પાઠશાળા માટે તથા લગ્નાદિ પ્રસંગાપર વેંચવા માટે અવશ્ય મંત્રાવા. કિં. માત્ર એક આના.

મેનેજર, દિ. જૈન પુસ્તકાલય સુવત,

आर्थ और अनायकि

(लेश—मास्टर वंडाधिर जैन, लल्तिपुर)
मनुष्य दी प्रकारके हैं:—१ आर्थ,
२ म्लेस्क ।

आर्य दो प्रकारके हैं:- १ ऋदि-प्राप्त आर्य, २ अतृद्धि-प्राप्त आर्य ।

१ अनृद्धि-प्राप्त आर्य ५ प्रकारके हैं:-१ क्षेत्र आर्य, २ जानि आर्य, ३ कर्म आर्य, ४ चारित्र आर्य, ५ दर्शन आर्य ।

१ क्षेत्र आर्य-जो काशी, कोशल आदि उत्तम क्षेत्रमें उत्पन्न हुए हीं।

२ जाति आर्थ-नो इक्ष्याकु नंदा, भोन वंदा आदि उत्तम वंदामें उत्पन्न हुए हों।

३ कर्म आर्य-ये ३ प्रकारके हैः— सावद्य-कर्म आर्य, २ अल्पसावद्य-कर्म आर्य, ३ असावद्य-कर्म आर्य।

१ सावद्य-कर्भ आर्यः-पाप महित जीविका करनेवाले अवती ।

२ अल्पसावद्य-कर्म आर्य-अन्यायका त्याग कर न्यायरूप यत्नाचारपूर्वक बहुत पाप सहित जीविका करनेवाळ अणुव्रती श्रावक।

३ असाबद्य-कमे आर्य-समस्त पापरूप कार्यका मन बचन कार्यसे लाग कर कमेकि क्षय करनेमें उद्यमी होनेबाल निग्रंथ मुनि ।

सावदा-कर्म आर्य ६ प्रकारके हैं:---१ असि-सावदा-कर्म आर्य, २ मसि-मावदा-

कर्म आर्य, ३ कृषि सावद्य-कर्म आर्य, ४ विद्या-सावद्य कर्म आर्य, ५ शिल्प-सावद्य-कर्म आर्य, ६ वाणिज्य-सावद्य-कर्म आर्य।

१ असि०-खड्गादिक आयुष गाँधकर जीविका करनेवाले ।

२ मिस ० — धन सम्पत्ति आदिक आमद व खर्चके हिसाब व लेखा आदिक लिखकर जीविका करनेवाले ।

३ रुपि०-खेतीसे जीविका करनेवाछ।

४ विद्या ०- आलेख्य, गणित, शास्त्रा-दिक ७२ कला इत्यादिक विद्याओंको पदानेसे जीविका करनेवाले ।

५ शिल्प० नाई, घोबी, सुनार, कु-म्हार आदिका शिल्प कर्म करके नीविका करनेवाल ।

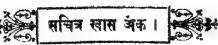
६ वाणिज्य० नाना प्रकारके द्रव्यको खरीद बेचकर जीविका करनेवाले ।

४ चारित्र आर्थ २ प्रकारके हैं:-- १ अभिगत-चारित्र-आर्थ, २ अनामिगन-चारित्र आर्थ ।

१ अभिगत-चारित्र आर्यः-बाह्ये।पदेशकी अपेशा नहीं करके चारित्र-मोहके उपशम तथा क्षयम आत्माकी उज्वलतारूप चारित्र परिणामकी प्राप्त करनेवाले उपशांतकषाय व शीणकपाय गुणस्थानंक धारक मुनि।

२ अनभिगत-चारित्र आर्थ:-चारित्र मेहिके क्षयोपदानसे और उपदेशके निमित्तसे मंयम परिणामको अहण करनेवाले ।

५ दर्शन आर्थ १० प्रकारके हैं:--थे दस



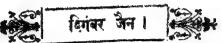
भेद दर्शन-आत्म-श्रद्धान-के दस भेदोंकी अपेक्षासे हो जाते हैं।

२ ऋदि-प्राप्त आर्यः-ये भी नीचे छिखी आठ ऋदियोंके कारण ८ प्रकारके हैं:—

- १ बुद्धि, २ क्रिया, ३ विक्रिया, ४ तप, ५ बल, ६ औषधि, ७ रस, ८ क्षेत्र १ बुद्धि ऋद्धि:-यह १२ प्रकार की हैं।
- (१) केवल ज्ञान: -लोकालोकवर्ती समस्त पदार्थों के और उनके गुण पर्यायों को कमरहित प्रत्यक्ष जाने सो केवलज्ञानं ऋदि है।
- (२) सनःपर्यय ज्ञान-जो अन्य अनेक नीवोंके मनमें चितवन किये हुए मुर्त पदार्थोंको प्रत्यक्ष जानें।
- (३) अवधिज्ञान-द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्यादासहित मृतींक पदार्थीको प्रत्यक्ष जाने।
- (४) बीज-बुद्धि नैसे अच्छी रीतिसे बोया गया एक बीन कालादिककी सहायतासे अनेक बीनोंका देनेवाला होता है। ऐसे ही मन-इन्द्रियावरण और वीर्यांतरायके क्षयो-पश्मकी अधिकतासे एक बीज पदको ग्रहण करनेमें अनेक पदके अर्थोंका ज्ञान होना।
- (१) को छ खा के -परके उपदेशमें ग्रहण किये हुए शुद्ध अनेक अथोंकों निस अवसरमें देखी तभी बुद्धिमें जैसेके तैसे रहें, बेटें बढ़े नहीं, अक्षर आगे पीछे नहीं हो। तैसे मकानमें कई कोटरी है।

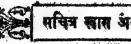
उनमें भिन्न २ प्रकारके धान्य रक्षे हों तो वे एकमेक नहीं होते जुदा ही बने रहते हैं।

- (६) पादानुसारी जो ग्रन्थमेंसे आदि, मध्य, अंतका एक पदका अर्थ श्रवण करने मात्रसे अवशेष समस्त ग्रंथका व अर्थका जानना ।
- (७) संभिन्नश्रोतृत्व-किसी संयमी मुनिके तथ विशेषके बळसे नगट होना कि जिससे १२ योजन लम्बा ९ योजन चौड़ा चक्रवर्तीके कटकके हाथी, चोड़े, ऊँट आदिके नाना प्रकारके शब्दोंका एक कालमें शब्द श्रवण कर हैं।
- (८) दृरादास्वादन—तपके प्रभा-नसे रसनेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यांतरायके क्षयोपशमसे ९ घोजनसे भी दूरके रसके आस्वादनकी सामर्थ्य प्रगटहो।
- (९) दूरादाघाणसमर्थता— ऐसे ही दोनें आवरण और घाणेन्द्रिय-आवरणका क्षयोपशमसे ऐसी शक्ति उत्पन्न हो। ९ योजनसे भी दूरकी वस्तुकी गंध ग्रहण है।
- (१०) द्रद्शिकसमर्थता-तीनों आवरणोंके क्षयोपशमसे ऐसी शाक्ति प्रगट हो जिससे नेत्र इन्द्रिय विषय ४७२६२: योजनसे नी दूरकी वस्तु देख है।
- (११) दूरस्पर्शकसमर्थता तीनों आवरणोंके क्षयोपशमसे स्वर्शन इन्द्रियमें ऐसी शक्ति प्रगट हो जो ९ योजनसे दूरके विषयको जान है।



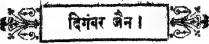
- (१२) द्रअवणसमर्थता नीनीं आवरणोंसे क्षयोपशमकान १२ योजन भी आधिक दुरकी बात अवण कर हैं।
- (१२) द्शापूर्वत्य-तपके प्रमावसे १० वें पूर्वके जाननेका सामर्थ्य जब प्रगट होजाने तन रोहिणी आदि अनेक विधा देवता, मुनि, चळायमान करनेको प्रगट होती हैं। प्रग्तु उनके चळायमान न हो ध्यानमें टढ रहना।
- (१५) चतुर्दशपूर्वत्य-समस्त श्रुतज्ञानका धारक होना ।
- (१६) निमित्त ज्ञान-इसके ८ भंग है:—
- (१) अंतरीक्ष-भाकाशमें सूर्य चन्द्रमा मह नक्षत्र तारादिकों उदय अस्ता-दिक देखकर भृत भविष्यत वर्तमानकी पान भानना ।
- (२) भौम—१थ्वीकी कीमहता कठोरता साचिकणना छक्षण देखकर उस क्षेत्रमें दृद्धि हानि, राजादिककी हार जीत और भूमिके भीतरक सुवर्ण आदि जानना ।
- (३) अंश—आंगोपांग देखकर तथा स्फोटनादि देखकर भावी सुख दु:स जानना ।
- (४) स्वर-अक्षर अनक्षर रूप शुम अशुम शब्दको अवण कर इप्ट अनिप्ट फरका नामना !
- (९) व्यंजन-मस्तक मुख श्रीमादिकमें तिल मसा कहसन मादिक देखकर त्रिकालसंबंधी सुख दुःल जानना ।

- (१) स्टक्षण-श्रीवृष्मका स्थण स्वस्तिक जो साथिया ताका स्थणादि श्रंगार झारी कस्रशादि स्थण शरीरमें देखते हैं त्रिकास समाधी स्थान मरण एउनपादिकका जानना।
- (७) छिझ-वस्त्र शास्त्रा छत्र उपानद जो पगरसी अर आसन शयना-दिकको शस्त्र-कंटक-मृषादिक कर दिधा देखकर त्रिकाल सम्बंधी छान अलाभ सुसदुःसको जानना।
- (८) स्वाम-वान पित्त कफके प्रकाप रहित पुरुषको पाँछडी रात्रिका मागमें स्वप्त-में चन्द्रमा मूर्य एथ्वी पर्वन समुद्रके मुखमें प्रवेश करना तथा समस्त एथ्वी मंडलको आच्छादन करना आदिक तो शुभ हैं और घृत तैडकर डिप्त अपनी देहको, खर ऊँट उपर चट् दक्षिण दिशामें गमन करना आदि अशुभ स्वप्त हैं। उनको जानकर आगामी काड नीयंता मरणा सुखदु:खादिका ज्ञान है।
- (१६) प्रज्ञा अमणत्व-किसी मुनिके अत्यन्त श्रुत ज्ञानावरण व विर्यांतरायके क्षयोपदामने ऐसी असाधारण बुद्धिकी शिक्त भगट होय कि द्वादशांग चतुर्दश पूर्वका अध्यय ज्ञान बिना ही अति सृक्ष्म तत्वको संशय रहित सत्यार्थ निरूपण करे मिसको कि १४ पर्वके भारी श्रुतकेवकी ही जाने। अन्य ज्ञानी जाननेमें समर्थ न हों।
- (१७) प्रत्येक बुकता-परके उपदेश विना ही अपनी शांक विनोषतेही ज्ञानके तथा संयमके विधानमें नियुणपण। होय।



- (१८) वादित्य-इन्दादिकोंके प्रति-पक्षी होनेपर भी बिबाद कर उत्तररहित कर दे और भन्य मतके समस्त हिद्धोंको नान है। आप किसीसे न जीता जाकर परको तिरस्कृत कर दे सो वादिल नामकी ऋदि है।
- (२) किया ऋकि-दो प्रकारकी हैं:--१ बारणत्व, २ आकाश-गामित्व।
- (१) चारणत्व-यह अनेक प्रकार है, परन्तु मुख्यतया इसके सात भेद हैं :-
- (१) जल-चारण वदी तालाबादिकके ऊपर भूमिवत पैर उठाकर गमन करै और जलकायके जोबोंकी विराधना न हो।
- (२) जंघा चारण-भूमिसे ४ अंग्रह उँचा आकारामें नेपाओंको शीवनासे उठाते रखते हुए सैकड़ों हजारों योजन गमन करना ।
- (३) तंत-चारण-तंतुके ऊपर गमन करै परंत्र तंत्र नहीं टूटें और न जीवोंकी विराधना होने पाने।
- (४) **पुष्प-चारण-पु**ष्पोंके उत्तर गमन करे और प्रजीके जीबोंकी विराधना न हो और न पुष्प ही इटने पावें ।
- (५) पन्न-चारण-पत्तोंके उपर गमन करे परन्तु पत्ते न ट्रॉं और न जीवोंकी निराधना होने पाने ।
- (६) श्रेणी-चरण-आकाशकी श्रेणीमें गमन करै और अभिकी विराधना न होने पावे।
- (७) अग्निशिखा-बारण अग्निकी शिखाके उत्पर गमन करे परन्तु अभिनकायके

- जीबोंकी बिराधना नहीं हो सके और न शरीर नल सके ।
- (२) आकाश-गामित्व-पर्यकासनसे अ-थवा खङ्कानसे चरणोंको बिना हलाये चलाये ही आकाशमें गमन करनेकी सामध्ये।
 - (३) विकिया ऋदि अनेक प्रकार है:-
- (१) आणिमा-अणुमात्र सुक्ष्म शरीर कर हैनेकी सामध्ये।
- (२) महिमा-नेरः पर्वतकं समान बड़ा शरीर कर छैनेकी सामर्थ्य ।
- (३) लिघमा-हवासे भी अधिक हलका शरीर कर लैनेकी सामर्थ्य।
- गरिमा-भारी-वजनी-शरीर कर हैनेकी मामध्य ।
- (४) **प्राप्ति**-भूमिपर वैठं २ अँगुलीके अप्र भागसे मेरुके शिखरको, सर्य-चंद्रमाके विमानको एर्श कर छैनेकी सामर्थ्य ।
- (६) प्राकाम्य-नलमें भूमिकी नाई और भूमिमें जलकी नाई गमन करनेकी मामध्ये 🗄
- (७) ई शस्त्र-त्रेलोक्यका प्रमुखना प्रगट करनेकी सामर्थ्य ।
- (८) **विशास्त-**सर्व नीबोंको वश कर हैनेकी सामर्थ ।
- (९) अप्रतीघात-आकाशमें गमना-गमन करनेकी तरह पर्वतमें भी गमन करनेकी सामर्थ्य ।
- (१०) अन्तर्धान-अहत्य होमेकी
- (११) का मरुपित्व-धन-चाहे-असा प्रम्बर इस बना छैनेकी शक्ति । इस्यादि ।



- (४) तप ऋदि-एात प्रकारकी है:-
- (१) उग्रतप-उपवास बेला तेला पंचीपवास पक्षोपवास मासोपवास आदि अनदान तपके मेदोंनेंसे किसी एक तपका आरम्भ करके कठिनसे कठिन विधा आनेपर भी उस तपको नहीं छोष्ट्रनेकी सामर्थ्य।
- (२) दीव्रतप-बेटा तेटा पंचोपवा-सादि निरंतर महान उपवासादि करते हुए भी मन वचन कायका बट दिनोंदिन बढ़ता जाय और मुखमें दुर्गध न होकर कमटादिककीसी सुगंत्र प्रगट हो और दारीएकी महान् दीसि प्रगट होना।
- (१) तम्रतप-मोनन किया हुआ आहार मछ-मूत्रादि व रुधिरादिकरून न होकर तप्तापमान लोहेकी कड़ाहीमें नल शुष्य हो मानेकी तरह शिष्ठ शुष्क हो जावे।
- (४) महातप-सिंह-कीड़न आदिक महान् तपोंक करनेमें उद्यभी हो नाना।
- (५) घोरतप-ज्ञगदिक नाना प्रकारके रोगोंसे पीड़िन हो जानेपर भी अनकानादिक कायक्षेत्रको न त्यागना, किसीना शरण न छैना, इजान न करना, पर्वतादि विषम भूमि इसशान भूमिमें भयानक वनमें ही विचारना।
- (६) घोरपराक्रम-अनेक रोगों त-हित पूर्वोक्त निर्नत स्थानमें त्रीतियुक्त गृहीत तपके बढानेमें तत्पर होना।
- (७) **ब्रह्मचर्य**-चिरकालवर्षत अचल ब्रह्मचर्य पालकर प्रकृष्ट चारित्रमोहके क्षयो-पक्तममे कोटे स्वयोंका न होना।
 - (५) घल ऋ दि तीन तरहकी है:-

- (१) मनोबल-अन्तर्भुहूर्तमें ही समस्त द्वादशांग श्रुनज्ञानके अर्थ विचारनेकी शक्ति।
- (२) वाचनवार अन्तर्मुहूर्तमें ही समस्त श्राज्ञानके उचारण करनेकी शक्ति, अविरत उच्च स्वरसे उचारण करते रहनेपर भी न किसी प्रकारका खेद हो और न कंडही सके।
- (३) काय यस्त्र-मासोपवास चातु-र्मासोपवास संवत्सर भीत प्रतिमायोग धारण करनेसे भी शरीरमें कोई क्रेश न हो।
- (६) **औषधि मान्रि** आठ प्रकारकी है:--
- (१) आमर्षीषधि—हाथ-पैरोंमें ऐसी सामर्थ्यका हो जाना कि निसके स्पर्शमात्रसे रोग दूर हो नायँ।
- (२) **क्षेत्रैषधि-**निस शक्तिसेक्षेट--कफ्से ही रोग नष्ट हो नायँ।
- (३) ज**स्त्रीपधि**-निप्त शक्तिसे नह-पसेवते ही रोग नए हो नायँ।
- (४) मलौषाधि—जिम शक्तिसे कर्ण-मल, दन्त-मल, नामिका-मलमें ही रोगके नाश करनेकी शक्ति हो जाय।
- (५) विडोषधि-निमसे विष्टादिमें रोगके नाहा करनेकी हाक्ति हो जाय।
- (६) सर्वाधिधि-निम शक्तिसे अंग, उपंग, नस, दंन, केशादिकके स्पर्शनमात्रसे रोग नाश हो जाउँ या इनके स्पर्शन की हुई हवा ही दशारूप हो नाय।
- (७) आस्याविष-जिस राक्तिसे मुनके मुखमें प्राप्त हुआ उत्कृष्ट विष भी निर्विष हो जाय अथवा जिनके मुखसे निकले हुए

वचनोंको सुनकरमहान् विषेत्रे जन्तु भी विष-रहित हो जाँय ।

- (८) **दछ्याचिष**—निस राक्तिसे मुनकी दृष्टिके पतनमात्रसे उत्कृष्ट विषसे दृषित हुआ जीव विषरहित हो जाय।
 - (७) रस ऋबि छः प्रकारकी है:-
- (१) आस्याविषा-किसी मुनिके उत्कृष्ट तपके प्रभावसे ऐसी शक्ति उत्पन्न हो जाय कि यदिवह किसीसे कहै कि 'तू पर जा' तो तत्सण वह महाविषसे व्याप्त होकर मर जाय।
- (२) **दृष्टिविषा**—जिस उत्कृष्ट तपके प्रभावसं मुनि कोष कर जिस और देवें बह उसी समय महाविषसं ज्यास होकर मर जाय।
- (३) श्रीराश्राची-निम शक्तिके प्रभावसे हस्तमें प्राप्त हुआ नीरस भी आहार क्षीर रमस्त्र हो नाय।
- (४) मध्वाश्राची-जिस शक्तिके प्रभावसे हस्तपुटमें आया हुआ नीरम भी आहार मधुर रसहरूप परिणत हो नाय अथवा निससे वचनमें ऐसी सामर्थ्य प्रगट हो दु: खकर पीड़ित श्रोताननोंको मिष्ट भावें।
- (५) सर्टिंपराश्चायी-निसके प्रभा-वसे हस्तपुटमें प्राप्त हुआ रूक्ष अन्न भी चृत रसरूप हो जाय।
- (६) असुताआयी-निसके प्रभावसं इस्तपुरमें प्राप्त हुआ चाहे नैसा भी आहार अस्तरूप हो नाय।
 - (८) क्षेत्र माडि दो प्रकारकी है:-
 - (१) अक्षीण महानरस-लाभांतरा-

यके क्षयोपशमकी आधितयसे तपस्विओं के ऐसी शक्ति प्रगट हो जिसके प्रभावसे सुनिको आहार दैनेवालेके यहाँ इतनी मोजन सामग्री हो जाय कि चन्नवर्तीका बटक भी जीम जाय तो भी वह निकटे न।

(२) अक्षीण संवास-उस विचित्र शक्तिका नाम है जिसके प्रभावसे मुनीश्वर जिस क्षेत्रमें बसें उसमें देव मनुष्य तिर्यंच परस्पर निरावाध सुख़से रहें।

नोट-यह आविष्कारोंका जमाना है। आजकल आविष्कारों से ही विद्वत्ताकी उद्यत्य मानी जाती है। यतमानमें पाश्चात्य देश आविष्कारोंकी खानि हैं। उन्होंने दुनियों भरको अपने अपर मुग्ध कर रक्ला है। पर हम पूछते हैं कि उक्त कार्दिय क्या किसीक अभी तक ध्यानमें आई हैं? ये अभी आविष्कार और उस्तिके गर्भमें ही खुरी हुई है। मारत वर्षमें इनका आविष्कार, बहुत पहिले हो जुका है, इनको पुनः प्राप्त करना भोगयिलासी पश्चिमियोंके हाथमें नहीं, इन्हें अगर कोई शात कर सकेगा तो परिग्रह-त्यागी एक भारत-वर्ष ही। ये उसकी पैत्रिक-संपत्ति भी हैं। संपादक।

पं॰ आशाघर विरचित-साग।रधर्मामृत ।

मूल स्होक और भाषा टीका सहित पूर्ण मन्य तैयार है।

पृष्ठ ५७५ और मूल्य सिर्फ रु० २-८-०

मैनेजर-दि० जैनपुरतकालय-सुरत्।



मोहिनीका अयोग्य विवाह।

(लेखक-दुलीचंद सिंघई)

मंदित श्रीतम्हाल एक छोटी पाठशालाके अञ्चापक हैं। उनको १२) रुपया मासिक वेतन मिलता है। पहिली खीसे तीन प्रत्र तथा तीन प्रत्रिया हुई थीं, परन्तु एकके पीछे एक स्वर्गवासी हो गई। प्रीतमलालकी पतनी अंतिम प्रत्रके शोकको सहन नकर सकी। वह रात्रि-दिन रुद्दन किया करती थी, साना-पीना भी अस्य रह गया था। यद्यपि पं० जी उसको नाना प्रकारसे समझाते थे परन्तु वह प्रत्र-शोकको नहीं स्थाग सकी । पश्चात् उसे भी वही गति प्रांस हुई ! प्रिनमलाल एक कुलीन बाह्मग थे। इस कारण कई एक महाशय विवाहके छिए चक्कर लगाने लंगे, तथा एक दमरेसे अधिक रुपर्योकी नात-चीत करने लगे। अंतमें गोपा-छछाछ ब्रिवेदीने अपनी भगिनीका विवाह ५००) रुपया देकर निश्चय किया।

गोपाछछाछ द्विवेदी कलेक्टरके आफिस-में नौकर थे तथा २००) रुपया मासिक मिलता था। उनके एक बहिन तथा एक वृद्धा माता थी। कुछमें कोई कर्छक छग मानेसे उनका आनतक विवाह नहीं हुआ था। उनकी बहिन भी इस समय १६ वर्षकी युवती थी। कुछ-कर्छकके कारण अभीतक उसका विवाह महीं हो सका था।

जपर कहे अनुमार रमाबाईका विवाह

प्रीतमछाछके साथ नक्की हो गया। प्रीतमछाछ भी ६००) रुपया तथा १६ दर्षकी सुन्दर युक्ती पाकर अस्यंत सन्तुष्ट हुए। रपाबाईने एक कन्याशास्त्रामें अम्यास किया था। सीना-पिरोना रसोई बनाना आदि गृह-स्थीके कार्मोमें यह अस्यंत बहुर थी, कारण उसकी मातान उसे ८ वर्षकी ययसे ही अपने साथ रसोईका काम सिखाया था, इस कारण वह नाना प्रकारके स्वादिष्ट प्रकवान बनाना सीख गई थी।

इस तरहकी रूपवती और गुणवती स्रोका प्राप्त होना प्रीतमछाछका सौभाग्य ही कहा जा सकता है। रमामें सर्व ग्राणोंके उपरांत एक यह भी गुण था कि वह शांत-स्वभावी तथा सुरुगेल थी, इस कारण ऐसी पत्नी पाकर श्री उमलाल अपने माग्यकी सराहना किया करते थे। दोनों पति-परनी सानंद जीवन व्यतीत करने लगे। एक वर्ष बाद एक कन्या उत्पन्न हुई, उसका नाम 'मोहिनी' रक्का गया। दोनों उस प्रतीका लालन-पालन अत्यंत प्रेम-से करने लगे। प्रीतमहाल स्कूलसे आकर पंटों तक उसको हँमाया करते तथा स्वयं आनंदित होते थे। मोहिनीकी उमर जब पाँच वर्षकी हुई तत्र उसे शिक्षण देना आरंभ किया गया। सात वर्षकी उमार्भे छिखना पदना अंच्छी तरह सीख गई। सात वर्ष पूर्ण होते ही रमाके मनमें उसके विदाह-की चिन्ता उत्पन्न हुई। प्रश्नीके विवाहके छिए अपने पतिसे पैसा एकत्रित वाक्त् वार सूचना करती थी कि तमस्वाह- मेंसे कुछ मना अवश्य करते जाइए, कारण विवाहके समय इतनी मड़ी रकम कहाँसे आयमी!

प्रीतमखालने पत्नीके फडनेकी ओर एक दो वर्षतक कुछ भी ध्वान नहीं दिया, घरन्तु जब मोहिनी ८ वर्ष ही हुई तन उन्हें भी चिन्ता हुई। उन्होंने सोचा कि २) रुपया मासिक अगर अचन भी की जाय तो उनसे क्या हो सकता है ? पति-पत्नी दोनों बिगाह बाबन नाना प्रहारके विवार करने छगे। रमाने अपनी प्रश्नी अपने ही समान गुणवती बनाई थी । पटने-छिलनेमें वह मातासे भी होशपार थी। तीन वर्षमें मातृभाषाके प्रसिद्ध २ साहित्यके अंव पढ ह है । गणि में भी अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली । रूप-सौन्दर्यनें मातासे भी वर्ड गुणी चढी नढी थी। परन्तु अफसोस कि धीतमछालको तलाश करनेशर भी उत्तम बर नहीं मिला। मोहिनी १२ वर्षकी हो गई, अतएव चनडाकर कानपुरमें ५००) रूपया वेकर संबंध निश्चित किया । २५०) रूपया पहिले दिये तथा २५०) रूपया विवाह बाद देंगे ऐसा उहराव किया । परन्तु शोक है कि प्रीतमलाल माश्र २००) रुपया एकत्रित कर वरके पिताको दे सके। ९०) रूपया कम मिलने-के कारण बरके पितन साफ कह दिशा कि " बाकीका पचास रुपया जबनक नहीं मिळेगा तब तक मार्वेर नहीं पहेगींग आखिर प्रीतमलालने हाथ-पैर जोड़कर किसी तरह भावरें बाह दीं. परन्तु शर्त यह ठहरी कि ममतक ५०) रुपया आप हमें न दे देंगे तबनक तुम्हारी प्रश्नीको हमं मेनेंगे नहीं। वरणक्षके सगे-सम्बन्धियोंको उनकी इच्छानुसार पहरामनी न मिछनेसे वे मी कुपित हो गये।

तथा वरके पिताने भी कहा कि हमको भी आपने क्या दिया है ? हम भी अपनी पूरी छिये वगैर कदापि भोजन न करेंगे। आखिर ५०) रूपया एक पहासीने सहायहर श्रीतमलालको दिये, जिनको उसने उन छोगोंको देकर भोजन कराया। जिस-तिस प्रकारसे विवाह समाप्त हो अत्र मोहिनीके बिदाका समय आ गया । इस समय मोहिनी माता-पिताके वियोगके कारण अत्यंत रुटन करती थी। रमा भी अपनी प्राणीं ते प्यारी प्रत्रीके वियोगमे तथा कठोर हृदय सास सुसर मिलनेके कारण अस्यंत चिन्तातूर थी। अंतमें बज हृदय करके माता पिताने पत्रीको बिटा कर दिया । बिटा करते समय प्रीतमञ्जल अपने धन-सोहपी समधीके सामने दोनों हाथ जोड़कर निवेदन करने छो कि-" मान्यवर ! अभी तक मोहिनी हमारी पृत्री थी, परन्तु अन आपकी हो गई। मेरे एक ही संगान होनेके कारण उसका अन्यंत छाड-प्यारसे प्रतिपालन हुआ है, यह अत्यंत गुणवर्ता तथा सुराछि है। गृहस्यीके कार्यों में कुश्ल है। मैं धनाभावके कारण आप नैसे कुळीन महाशयको संतष्ट नहीं कर सका. इस कारण आप हमारे ऊपर क्षमा करके द्या माव रखना । "

ये करुणाजनक वाक्य निष्ठुर हृदय-वरपक्षवार्कोंको जरा भी द्वित न कर सके । भीतमहालकी बात सुनी अनसुनी करके वरके विताने उलटा ऐसा कहा '' जैसे बने कृपया ५०) रूपया शीच ही मेन देना उसके बाद हम तुम्हारी प्रश्नीको भेज देंगे "

समधीकी इस निन्दुरतासे प्रीतमकाल हरयों अस्पंत दुःखित हुए तथा मूर्चिइत हो हर गिर पड़े, कारण अपनी को उल हृदय-वाली कन्याको ऐसे निष्पुर महुम्बोंके हाथमें देना क्या मनुष्यत्ववा काम है : एक दीर्य निःश्वास लेकर मनमें कहा है प्रभो ! क्या इस भारत-वर्षमें क्रियोंको मुख बदा ही नहीं है, क्या कारण है कि इस भार में कन्या ओंको विवाहक बाद ऐते दाहम दुः स भोगना पड़ते हैं!

मोहिनी सालेर में पहुँच गई, परन्तु साप्तने उसके गुण तथा स्व इपकी और रंच-मात्र भी ध्यान न देकर सबसे पहिले यही प्रश्न किया कि ''मेरे लिए कितने रुपयाकी पह-रामनी आई हैं।'"

पतिके कहनेसे उसे मालुन हुआ कि
अभी तो ठहरावमें भी ५० ठाया बाही हैं।
तब तो उपने मोहिनीके माता-पिताको खोटी
गालियाँ देना प्रारंम कर दीं; इतना ही नहीं
उसने अपने पितको भी दो चार खोटे शब्द सुना दिये। पितने अपनी को घी पत्नीको समझाया कि "मोहिनी अपने मा-बापकी इक-लौतो प्रत्रो है इपलिए उसका पिता उसे लिखानेको जल्दी आवेगा, तथा उस समय अगर अपनी शर्तमूजन ५०) रूपया नहीं लावेगा तो अपन मोहिनीको कदापिन भेनेंगे?

इस वानयसे मोहिनीकी सासको जरा

संतोष हुआ। वह अत्यंत कर्कश स्वभाववाली थीं, दो चार दिन क्रोधान्व होकर बहुसे बोली भी नहीं। उसके बाद वह मोहिनीको ५०) रुपया बाबत ताने मारने रुगी। उसको भोजन भी नियमसर नहीं देती, सोनके लिए योग्य बन्दोबस्त नहीं था। अतएब वह धरतीपर ही सो जाया करती। कभी २ तो सासके पैर दावते २ उसको निद्रा आनं लगती तब तक भी वह सोनं नहीं देती।

एक दिन पैर दाक्ते र मोहिनीको इतने जारसे निद्रा आ गई कि उसका सिर कालके परोंपर गिर पड़ा। वह शीघ ही हांशमें आई तथा सिर उउाना ही चाहती थी कि कापकी नींद खुल गई और उसने कोधमें आकर एक ऐसी हात मारी कि वह बेनारी चार हाथ दूर जा गिरी, उपके सिरमें ओरसे हम जानेके कारण रक्त वह निकला। इतना होते हुए भी मोहिनी धीर र रुदन करती हुई अपने सोनेके स्थानमें यही गई। रक्त अधिक निकलनेके कारण वहाँ पहुँचते ही वह अचेत हो गई। सबेर इड होश आया।

उसकी साम जब सबेरे उठी तथा अपने पर्डंगके पाम खूनालून देखा तो खड़ी होकर रह गई, वर्ड और जगह भी रक्तकी बूदे पड़ी थीं। इतना ही नहीं खूनकी धारा पर्छंगके पायों गर भी पड़ी थी। उसने विचार किया कि शायद रात्रिकां जो मैंने छात मारी थी उसीसे मोहि-नीका सिर फूट गया होगा।

अपनी इस क्रातापर भी उसको जरा भी

पछतावा नहीं हुआ । उसने शीव ही गरम पानीसे सर्व नगह साफ कर डाछी, तथा अपने कमरेसे बाहर निकलकर मोहिनी! पोहिनी !! करके प्रकारने लगी।

मोहिनीको यथोजित सचेतनता प्राप्त नहीं हुई थी, पग्नु अपनी सासको प्रकारती हुई जानकर घीरेसे उत्तर दिया, क्या है मा ! क्या कहतीं हो ?

मोहिनी पूर्ण उत्तर भी नहीं दें पाई थी कि वह उसके पाम पहुँची और कोश्म मानो वह रात्रिकी घटनाका हाल कुछ भी न नानती हो इस तरह बोल टटी:-" आज तम यह क्या होंग बनाये पड़ी हो ? क्या ऐसा ढोंग बनाकर त्रव बदनामी परना चाहती है ! आब तेरे समुरको आने दो, तब देखना क्या मना मिटता है! गरीन मा-वानकी लड़की हो कर इननी सुख-यारी ! जब तमको ढोंग बनाने थे तो दिवाह किसलिए किया था ! पैना खानेको तो घरमें नहीं और बड़े घरमें पुत्री सी ब्याहेगे! परन्तु ध्यान रखना कि जो तेरा पिता अगर दिनमें हमारे बाकीके ५०) राया न भेन बेगा तो मैं अपने पुत्रका दूसरा विवाह किये बगैर कदावि न रहूँगी!

सासके इम कहनेपर वह कुछ भी बोछ सके ऐमी शक्ति अभी उसमें नहीं थी। वह घीरे २ सचेतनाव यामें आती जाती थी इत्तेमें सामके इन शब्दरूपी वज्रवाणींसे उसका इद्य फट गया। शिर धूनने छगा तथा आँबोंके सामने अँबेरा छा गया, इसक्रिये वह बिउकुठ अचेत हो गई।

प्रतानपूकी अचेत देखकर साम प्रवहा गई और शीघ्र ही अपने पतिके पास आदमी मेना कि आप शीघडी घर आहे, जरूरी काम है। ससरने आकर बहको अचेत पड़ी हुई देखी परचात ग्रॅंहरर पानी जा खींटा लगाकर नाडी देखने लगा। नाडी अत्यंत धीरे ५ चल रही थी । उसने अपनी पत्नीसे एका-एक अचे । पड़नेका कारण पूछा । उसने कहा कि रात्रिको निय समयसे सोई है तबसे यह उठी भी नहीं । सबेरे जब मैं यहाँ ऑई तो वह इसी तरह ५ड़ी थी, इस्टिए इसने तुनको शीघ ही बुळाया है। उसको कैसे बोट लग गई ! क्या हो गया ! वह हमको नहीं मालून ।

उ ने पहें।पर उठाकर रक्की तथा अनेक उनचार भी किये परन्त उसे जरा भी चैत न हुआ। अंतमें उसके मनमें ऐना निचार आया कि " जो देश अथवा डाक्टरको नहीं बुटावेंगे तथा मोहिनीका जीवन सनाप्त हो गया तो संसारमें मुँह दिलाना भारी हो जायगा, इस विचारके कारण गोविन्द शुक्त एक डाक्टरको १) रूपया भीता उहराकर छाये । डावटरने देख माल कर कहा-' इसके मस्तकमें गहरी चोट छगी है जो कि जल्दी अच्छी नहीं हो सकती। वरीन १५ दिन तक बराबर इसकी दवा करना पहेगी। शरीरमें कम ताकती अधिक है, इसलिए शक्ति दर्भक दवा तथा पौक्कि भोजन देना पहेगा।"



दसाकी छिल्ल भी ढाक्टर साहितने छिल दी जिसमें करीब ३ रुपयाका स्वर्ष था । इस कारण शुक्लभी बैसे ही रह गये। अंतमें डाक्टर साहितने तो घावके उपर मलूम-पट्टी लगा कर अपना रस्ता लिया। इधर पति-पत्नी विकार करने लगे कि अब क्या करना चाहिए!!

अनेक बाद-विवादके पश्चात् दोनोंका वह निश्चय हुआ कि "इसके पिताको बुलानेकं लिए तार करना चाहिए और उसमें यह लिखना चाहिए कि "तुम्हारी प्रत्री सख्त बीमार है इसलिए आप ५०) रुपया साथ लेकर आहए और उसे लेनाइए।

तार पाते ही प्रीतमछाछ और रमाबाईके शोकका ठिकाना न रहा। एक ओर अपनी प्रजीका मुख देखनेकी उत्कंडा और दूपरी ओर ५०) रूपया इकड़े करनेकी कठिनता! बिवाह समय जिसरसे उधार छिया था अभी उनका भीरूपया पूरा नहीं चुका था। अंतमें प्रीतम्महाल एक अपने मित्रके पास गये तथा तारको दिखापर रूदन करने लगे। मित्रने इनको शीम्र ही ५०) रूपया वे दिये। इतना ही नहीं उसने ५०) रूपया और भी द्वा आदि खर्किक लिए दिये और उन्हें कानपुर शीम्र रवाना कर दिया।

प्रीतमछाल कानपुरका टिकट लेकर रवाना हुए। गाड़ी १२ घटेमें कानपुर प्लेटफार्मपर ना खड़ी हुई, वहाँपर पहुँचते ही प्रीतमहालके मनमें यह प्रश्न उठने लगा कि प्रभीका मुँह देख सकूँगा था नहीं। इस इं- कासे उसका मन अत्यंत शोकातुर हो रहा था। प्लेटफार्मसे बाहर निकल कर एक ताँमा भाड़ा करके शीघ्र ही अपने समधीकी दुकान पर पहुँचे। जातेके साथ ही उसने ५०) रूपया पहले देकर प्रतीकी स्थितिका समाचार पूँछा कि किस कारणसे यह एकाएक इस तरह बीमार हो गई है ?

बुद्धनीने उत्तर दिया कि "संबरेके वस्त वह ऊपर चड़ रही थी कि एकाएक उसका पैर फिसल गया तथा सिरमें अधिक चोट आ गई और अभी भी उसे आराम नहीं हुआ है। हम डाक्टरने दबा करा रहे हैं, तथा जैसा वह कहता है उसी प्रकार सेवा बुश्रम वर्श हैं।

प्रीतभटाटने कहा—मुझे आप शीघ ही पर ले चिट्टर । शुक्रमी शीघ ही उन्हें अपने घर मोहिनीकी सैयाके समीप छे गये। प्रीतमटाल मोहिनीको पहिचान भी न सके। ध्यानपूर्वक देखनेसे माद्धम हुआ कि मोहिनीका जन हाड़पिनर ही शेप रह गया है। प्रश्निको देखकर अश्ववारा वह निकली। पन्धात हृदयको कड़ा कर प्रश्नीकी निर्वल देहके उपर प्रेपपूर्वक हाथ रखके धीर कहा:— "मोहिनी! बेटा मोहिनी!

मंज्ञारहित मोहिनी उस समयमें अपने न नेत्रोंको खांछकर पिताको देख अश्वधारा बहाने छगी तथा बोछी-पितानी, आब आये! हम री माता कहाँ है ? हमें हमारी माताके पास शीघ ही छे चलो!

पीतपलासने अपनी पुत्रीसे अनेक प्रश

पूछनेका विधार किया था, परन्तु उसं अत्यंत निर्वल देख कुछ भी न पूँछ सके अंतमें विचार किया कि इतनी कमजोर हालतमें घर ले जाना यह अत्यंत कठिन है परन्तु उसको अपनी माताका अंतिम मिलाप अवस्य करा देना चाहिए। मोहिनीके सपुरनं भी उनसे लिया जानेको कहा, इम कारण घर ले जानेका धीतमलालनं निश्चय कर लिया।

मोहिनीको पालम्बीद्वारा म्टेशनपर छाये स्टेशनपर तथा रेलद्वारा अपनी क्रिया के गये। स्टेशनंस ओकीजारा गाँवमें के गये। जब गाँववालोंने डोली आती हुई देखी तो मन छोग उत्मुकतासे उसे देखने छो। तथा उसके पास आये । पास आते ही शंकाका सुरायात हो। गया। जिल्लाने मोहिनीकी दुःखित अवस्थाका बुत्तान्त श्रवण किया व सर्व अत्यंत इ:स्वी हुए । मोहिनीकी माताने जब डोली-का परटा ऊँचा करके देखा तो अचेत होकर उसी समय प्रथ्वीवर गिर पडी । प्रश्रीकी अवस्था देखकर उसके कोमल हरवपर गहरी चोट लगी तथा उसे निश्चय हो गया कि मोहिनी अब इस संभारमें थोडे मनयकी मिहमान है।

श्रीतमलाछने अपनी पत्नीको समझाकर कहा कि अभ चिन्ता किसलिए करती हो : पूर्व भवके पापोंका फल अपनको ही सहन करना पड़ेगा । जिस विवाहके लिए सैकड़ों रुपयाका खर्च किया था, उसका नतीना जंतमें यह निकला ! अस्तु मोहिनीको सावधा-नतासे डोडीमेंसे उतार कर फलंगपर पुछा दो।

मोहिनी परुँगपर पड़ी है, माताकी ओर देखती हुई चौधारा अश्रु वर्षा रही है । वह स्पष्ट बोल भी नहीं सकती। मोहिनीके पास अनेक संग सम्बन्धी बैठे हैं। उसकी करुणाजनक कहानीसं सर्वेक हृदयमं सहानुमृति उत्पन्त दुई है। अनेकों खियाँ मोहिनीके पास कुछ भी मम्बन्ध न होते हुए भी उसकी स्थिति देखने आती हैं, कारण रमा नथा मोहिनी अपने गुणींक कारण मारे गाँउको प्रिय थीं: मोहिनीको आये हुए सिर्फ २ घंटे हुए हैं कि एकाएक उमको स्वप्न आया और बह जोरसे बोल उठी-माता ! हमारी रक्षा करो, अब में सामकी मारसे बच नहीं सकती। देखों ! देखों ! वह लकड़ी छैकर हमारे पास आ रही है और कहती है कि जो हमारे ५०) रुपया नहीं दिछाती है तो मैं तेरे प्राण के लूँगी। मैंने अपने पुत्रका विवाह दुसरी नगह करना निश्चय कर लिया है, मुझे ५००) रुपया नगदी मिलनेवाले हैं। और तमसे भी अच्छी बहु हमारे यहाँ आनेवाली है " ऐसा कह कर दो नार बार जोरसे चिलाई। आखिर थोड़ी देर बाद उमकी ज्वान हमेशाके लिए बंद हो गई। *

श्रीपाल-चरित्र।

(नंदीश्वरवतमाहात्म्य)

दूसरीबार छप रहा है। एक माहमें प्रगट होगा।

मैनेजर, दि० जैनपुस्तकालय-सूरत।

गुजरातीसे अनुसादीत ।



(ले॰-चान् खूब**चन्द्र जैन, वर्बाना-झाँसी ।**)

विषय वासना हटी खुद्दीसे, मनकी मोज उहाता हूँ। इसी सक्त्रसे अरे बुहापे!, नेग खानत करना हूं ॥ टक ॥ तेरी आमदसं चिहरेपर, उस अनोखी छाई है। रही नहीं स्याही बालोंपर, माफ संफेदी आई है॥ नहीं रण रह गया माटमं, उटनेमें कठिनाई है। हुई इन्द्रियाँ शिथिल इसीसे, माला मनको भाई है।। काम कोच हट गया जगतके, जंजालींथे डरता हूँ। इसी०॥ १॥ नीर्ण देह हो गई नहीं में, पीरंग कुछ तर मकता हूँ। हाथ हिलानेपर भी अकसर, बुरी तरहमें शकता हूँ॥ मिल नहीं फुरमत खाँमीने, असे बुरी न बकता है। आसमानके, बद्ले अब में, केवल नीचे तकता हूँ॥ लंकलची लाटीको लेकर, पूंक २ पर धरता हूँ। इसी॰ ॥ २ ॥ नाती पोर्न आकर मेरी, डाई। मूंछ पकड़ने हैं। मिलकर नंबरबार पीटकर, कूद २ कर चहने है। नहीं मानते कहना निल्कुल, मिलकर और अकडते हैं। हेंसते हुए निशंक अंकमें, ऊपरसे गिर पहते हैं॥ पाकर मोद विनोद सर्वदा, मन मन्द्रिस्को भरता हूँ । इसी • ॥ ३ ॥ निकल गया सब जोदा रोपमें, व्याकुल कभी न होता हूँ। क्तिये हुए कर्मीका बोहा, मुस्तैदीसे दोता हूँ॥ स्वाद गया सम जान पानका, नहीं रातको सोता है। मन मर्तम थक गया इसीसं, दुखमं कमी न रोता हूँ॥ परमेष्ठीका जपना दिलसे, पलभर नहीं विमरता हूँ । इसी०॥ ४॥

खेल इदमें समय भिताना, बिलकुल मुझे न भाता है। मतबाहे मनकी बातोंसे, अब तो जी घबड़ाता है।। नश्चर ह्म प्रपंच जानकर, छट गया मुच नाता है। सर्व शक्ति सम्पन्न आत्मका, केवल नाम खहाता है।। अनायास ही मस्तरताके, दुख सागरसे तरता हैं। इसी० ॥ ५ ॥ छट गये दुनियाँके इगाई, पड़कर शुद्ध विचारोंमें। हमता नहीं किसीके दुखमें, फैंसता नहीं विकारोंमें ।। आती नहीं विषयकी कीचड, जाता नहीं गवाँरोंमें। सहता रहूँ कड़े विद्योंको, सावित कदम हजारोंमें॥ गम गया वैराग समाया, अपने आप सुबरता हूँ। इसी०॥ ६॥ धन योजन व्यय मतबालींक, उपहासींस इस्ता हैं। कड़े शब्द सनकर भी उनको, बिल्कुड बुरा न कहता हूँ ॥ महकर वार अनेको तनपर, सदा एकरम रहता हैं। नहीं मोह ममताके मुँहमें, पागल होकर बहता हूँ।। निर्भवतासं प्रेम सिंदुमें, मनकी मीज उतरता हूँ। इसी०॥ ७॥ पाम बुलाकर नव युवकोंको, धर्म-नीति बनलाता हैं। नर-जीवनके कर्तव्योंको, भलीभाँति समझाता हूँ॥ भव-सागरके गृह विषयका, चित्र खींच दिखलाता हूँ। म्बार्य छोडकर विमल ज्ञानका, अमृत पान कराता हैं। मावित करके अनुभव अपना, दुग्तियोंका दुख हस्ता हूँ॥ इसी मनबसे अरे बुढ़ारों , तेरा स्वागत करता हूँ । ॥ ८ ॥

मनने उपदश

(વિષય વાત મમ માત તજીને કૃષ્ણ બહન તું કરવા કે! એ રાગ) પીંપળ માન ખરે જે રીતે! આધુ ખરેખર ખરવાતું! રાય-રંક ને નાના-માં'ડા! આખર સાને મરવાતું! આ સંસાર મુસાકર-ખાંતું! ભાર ઉઠી ડગ ભરવાતું! ધર્મ-માર્ગને પ્રાપ્ત કરી લે! તેથા તા'રે તરવાતું. સમજી લે હેવાન દિલે કંઇ! ચારાશીમાં કરવાતું, ગંદી કાયાના ગર્વ નકામા ! તજે માક્ષ-પદ ખળવાતું! સ્નેહ યાર્યા.

(लेसक-जैनधर्ममूषण बद्याचारी शीवखनधादनी, संपादक, "जैनमित्र")

यह जो कुछ हमारे सामने दिखाई देता है व जो में कोई देखनेवाला हूं यह सब कोई मात्र अम वा स्वम या इन्द्रजाल नहीं है किन्तु कुछ हैं—इस सर्वकी सत्ता है—सत्ता विना कोई भी अवस्था नहीं हो सकती। जो असत् अर्थात् नहीं है वह कभी सत् अर्थात् है नहीं हो सकता और जो सत् अर्थात् है वह कभी असत् अर्थात् नहीं नहीं हो सकता। यद्यपि सत्यमें नाना अवस्थाएं होती हैं तथापि वे अपने सत्यमें मिलकुल जुदी नहीं है। सत्ताके गुण उसमें भी पाए जाते हैं। मेहंकी रोटी बननेपर भी मेहंके गुण रोटीमें रहते हैं। हैं।

अब यदि इस सत्रह्म नगनमें केवल एक चैतन्य स्वह्म ज्ञातादृष्टा एक जीव या अनेक जीवकी ही सता माने और उसके सिवाय किसी अजीवकी सत्ता न माने तो धर्मसेवनकी आवश्यकता नहीं हो सकती, क्योंकि निर्मेष शुद्ध जीव विना अपनेसे दूसरेके सम्बन्धके परमास्म स्वमावमई सर्वको देखनेवाला जाननेवाला जानन्दह्म कोधादि विकार रहित ही रहेगा व सर्व जीव एकमे ही शुद्ध बुद्ध जानंदरूप पाए जावेंगे तम शुद्ध होने व सुदी होनेका जा उपाय धर्म

है उसके करनेकी कोई जरूरत नहीं हो सकती। और यदि केवल अनीवकी ही सत्ता माने, जीवकी न माने तो संबे पदार्थ जड चेतना रहित पाएं नाँयगे तव उनके लिये भी किसी मोक्ष मार्गकी आवश्यकता नहीं हो सकती । परंतु विचार बलसे देखने पर यही अनुभवमें आयगा कि यह जगत जीव और अजीव दोनोंका समुदायरूप है। न केवल जीव ही हैं और न मात्र अनीवही हैं। वास्तवमें यह जगत छः द्रव्योका अर्थात् असल सत् ब्रव्यों (real existing substances) का समुदाय है निनमें जीव चनना लक्षणधारी है। पुद्रल (matter) स्पर्श रम गंध वर्णमई अवेतन है, ये दो मुख्य द्रव्य हैं, कियावान हैं, हलन चलन करते हैं उन्होंके मिछने विछन्तनेसे नाना रूप जगत है-जीव अनन्त (infinite) है। सवको सत्ता भिन्न २ रहे-सवका अनुभव भिन्न २ रहे जैसा कि प्रत्यक्ष सबको हो रहा है इसी तरह पुद्रलके परमाण् अनन्त हैं-उन्हें के बने हुए स्कन्य सुक्रम (पांची इन्द्रियों मे होने माल्यम और स्पृत्त अनेक मत्यक्ष और चार द्रव्य इनकी चार बातोंके किय

निमित्त सहकारी उदासीन द्रव्य है क्योंक जगतमें हरएक कार्यके छिये उपादानके सिवाय निमित्त कारण भी चाहिये। चटना रुकता, अवकाश या अगह पाना, परिणमन या अवस्थाते अवस्थांतर होना ये चार नातें हैं-चलनेमें उदासीन सहकारी होकव्यापक अलंड एक अमृतिक धर्म द्रव्य है, रुक्तेने उदासीन सहकारी छोक ध्यापक अलंड एक अमृतिक अधर्म द्रव्य है. अवकाश पानेने उदासीन सहकारी अमूर्निक अलंड एक आकाश द्रव्य है जो सबंधे महान विस्तारकी जोशा है और सर्वकी अवकाश देता है उसका ओर छोर नहीं है उनीके मन्य निस भागमें ९ द्रव्य पाए जाते हैं वह छोकाकाश या यह जगत है उसके बाहर अशेकाकाश है वह केवल बचा हुआ आकाश द्रवय है: सर्वे द्रव्योंके सहश याने स्वभावमई अथवा विसदश याने विभावमई परिणमन करानेकी जो निमित्त कारण है यह काछ द्रव्य है इसका परिमाण अतंख्यात है-एक र आका-शके प्रदेशमें एक २ काल इच्या जुदा २ रत्नोंके देर समान है। ये चार ब्रव्य कहीं जाते आते नहीं । जीव और पुरस्कता संबंध अनावि है इसीसे जीवों में अज्ञान और कोषादि और कषाय अपवा कोष मान माया कोमकी कमती ज्यादती देखनेमें आती है। यह अज्ञान कोबादि द्वप विकार होना हमारा अर्थात् जीवोंका अपना स्वभाव नहीं है क्योंकि इनके होनेपर आत्मार्भे क्रेश और अशांति होती है जिसका असर हमारे बाहरी शरीरपर भी झडकता है. की बी व छोभीका मुख कुद्धप, मधावना व वातांत हो नामा है। और जब यह घटते हैं-कम होते हैं-बद्दलते हैं तब आत्माको सख और शांति होती है वह बाहरी शरीर भी सहा-पना शांत और बनीहर माछम होता है। इतसे इतना तो सिद्ध है कि आत्माका असक स्वभाव जो झाता दृष्टा आनन्दरूप है । बह हमारा इस समय नहीं हो रहा है इसिक्ये हमारे आत्माओं के साथ किसी अनात्माका गहरा सम्बन्व है जिसके असरसे हमारे गुणोंका पूर्ण विकाशपना नहीं है और वह अनात्मा यह स्थूल शरीर ही नहीं किन्तु सुक्त कार्माण शरीर है जो कि जगतमें भरे हुए सुदम कर्मवर्गणाओं से मनता रहता है। यदि केवळ स्यूल दीलनेवाला शरीरका ही सम्बन्ध माने तो यह तो यहीं बनता या छटता माख्य होती है। किर स्या यह मानना होगा कि किसी द्वास जीवने आदमीका ब किसीने बेडे या क्रतेका शरीर खा कर वोहि। धारण कर छिया । सो यह बात अर्ल-मय है कि एक तो शुद्ध जीव शरीरमें विकारी होनेको आवेहीगा क्योंकि दूसरे भिन्न २ रूपके प्रत्यक्ष दुःख या संसारिक सुखदूव शरीरों क्यों आता हैं । इस प्रश्न पर विचार करते हुए यही निर्णयपर आना होगा कि शुद्ध शीव न किसी शरीरमें आता न अन्मता मरता न विकारी होता है किन्त यह भिन्न २ शरीर धारण व उसमें कभी नाना प्रकार दुःख व कभी नाना प्रकार सुख

कामको आदि पाना व कभी किसी पूर्ण कर पाना. कथी उसमें यकायक अंतरा-यका हो माना. पुरुषार्थ कस्ते २ अचानक चेतन या अचेतन बस्तका हमारे सामसे वियोग है। जाना आदि भिन्नताओंका कारण एक सक्स शरीर अवदय है मिसके असरसे यह मीन ऊंच स्थानमें जन्म हेता है, दुःसी या सुखी होता है. भिन्न २ प्रकारके रूप व स्बभावको जगद करता है। इस स्थल दारी-रमें आनेके पढ़िले ली जीवके साथ यह सहस श्वरीर था और इस दारीरसे छटने पर भी यदि यह शब्द न हो ते। यह रहता है। सदि कोई जीव मरने वक्त पूर्ण जाती, निधि-कारी, बिलक्ड कराय रहित भातरागी हो तो यह समझं जाय कि इसको सुक्ष्म, शरीर इट गया है। अब यह इस शरीरेन छुटेन ही झद ताता हुए। जैसा अब है बैसा रहेगा. परंत जब अधिकांशमें भरनेवालीके अज्ञान व कोषादि कथाय अलबने हैं तो सब्भ वरीरका साथ जाना सिद्ध है **जैसे सक्ष्म शरीरके अ**सरसे पहले शरीय बारण किया था बैसे मरनेके देखे में(धारल करेगा क्योंकि भव किभी वस्तका अभाव मही nothing is destructible तन जीवका भी अभाव नहीं हो सकता सीर जब अभाव नहीं तब इसकी सत्ता रहेई।गी ।

शुद्ध होना तो शुद्ध रहपमें रहता, जब अशुद्ध है तब जैसे पहेले किसी देहको लोडकर आया है वैसे अब भी किसी देहकी भारण भरेगा। इस कमेंके सूक्ष्म देहकी यह जीव निरंतर अपने ही अशुद्ध भावों बनाता रहता है-जीव या आत्मांके तीन तरहके भाव होते हैं-

१ अज्ञान बाने हिंसा झुठ, चोरी, कु-जील त्रणारूप व वंचेन्द्रियोंमें लोलपतारूप; २ श्रम यांन नीवद्या. सत्य. न्याय, शील, मंतीष, परीपकार व इन्द्रियोंके दमनक्ष व मंद करायरूप; ३ शुद्ध याने केवल शुद्ध आत्माके सन्भाव अके हुए वीतराग स्वसंवेदन रूप माव । इनमें अजुभ और जुभ साव ज्ञान आत्मार्थे होते हैं उसी ही समय यह आत्मा अपने योग नामकी आकर्षण शक्तिम सक्स कम्मेवर्गणाओंको आकर्षण कर लेना है अधीत वे स्वयं आकृष्ट ही आती हैं। जैने गर्भ लोहा पानीको स्वभावसे अवर्षण करता है और वे कम्भवर्गणाएं आत्मों क्याय याने रागद्वेषकी कभी या अधिकताडी प्रमाणमें आत्मांक साथ एक मर्यादा नकके लिये बंध माती हैं। इसीके मध्यमें यह अपनी असर करती हुई गिरती भी आती हैं-अपनी पर्याय पुरी होने पर उत लास समयपर बाबा हुआ कर्म्मस्कंध एक भी नहीं रहेगा। इस तरह अभ या अज्ञम इन दोनों ही प्रकारके अशुद्धनावासे इस जीवके अगुद्धनाका कारण सूक्ष्म शरीर स्वभावसे हैं। बनना रहता और फल देके छटता रहता है। पूर्ण शब मार्थिक होनेपर नया कर्म नहीं बंबता किन्तु पहलेका बांधा हुआ कर्म भी अपना फल देनेका समय आनेके पहले हैं। गिरने छगता है और गिर जाता है ।



इन्ही अगुद्ध रागद्वेषमई भावोंसे यह जीव जनादि काटसे कर्म बंध करता हुआ उसीके कारण नाना देहोंको धारण करता हुआ फिरता रहता है।

क्ष कर्मका संबंध किली खास समय पर नहीं हुआ है क्योंकि जगत अमादि अङ्त्रिम है, किसीने इसे बनाया नहीं। यदि बनानेबाला होता तो परमानन्दरूप रचना बनाता। दः इत्य जगत बनाकर फिर उसीसे झटनेका उपदेश नहीं करता । यदि बनोनवाला व कमाँका फल देनेवाला कोई तीसरा होता तो बह अपने बलसे जीबोंको पेसे मार्ग पर है। चलाना जिससे कभी अन्यायी, अपराधी, अञ्जू , विकारी, हिंसक और दोई। न होते। सो ऐसा नहीं है कर्म और आत्माका प्रवाहसे अनादि सम्बन्ध है पर नबीन कर्म बंधनेकी अवेक्षा साहि सम्बन्ध है। जो जीव पुरुषार्थी होकर शुद्ध होनेका यत्न करते वे उस गरनको निर्वाहते जाते हैं उन्हें कर्मबंध हटते २ मर्व छूट जाते है औरोंके बंधने रहते हैं व सदा बंधते ही रहेंगे।

इसी कर्मबंधके चन्नमें पड़ा हुआ यह जीव संसारी हो रहा हैं-

जैसा कि श्री कुंदकुंदाचार्यजी महाराजने श्रीपंचास्तिकाय प्रन्थमें जाजसे २००० वर्ष पूर्वके अनुमान कहा हैं—

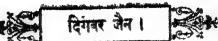
जी खड उंगारत्थो जीवी तत्ता दु होदि परिणामी। परिणामादी करमं करमादी होदि गदियु गदी। ॥ १२८॥ गदिमधिगदस्स देही देहादो इंदियाणि जायंते । तेर्हि दु विस्थयमहर्ण उत्तो रागी व दोसी बा

जायदि जीवरेत्रं भावी संशारनकवाकामि । इदि निणवरेही भणिदो अणादिणिधणो सणिधणो ना ॥ १३०॥

भावार्थ — जो कोई वास्तबमें संसारी आत्मा है उसके ही रागद्वेषस्व परिणाम होते हैं, परिणामों ने कर्म बंधते हैं, कर्म बंधते एक गतिसे दूसरा गतिमें (जैसे मनुष्यसे पशुमें व पशुस मनुष्यमें दूतादि) जाता है। गतिमें नानसे देह होती है—देहसे हिन्द्रयां उत्पन्न होती है उनही स्पर्शन आदि पांच इन्द्रियों के द्वारा उनके भोगने योग्य विषयोंको महण करता हैं—विषयोंके निमि तसे किर राग और द्वेष होता है।

इस तरह संसारचक्रमें जीवोंके भाव होते हैं ऐसा जिनेन्द्र भगवानने कहा है -यह अवस्था अनादि अनन्त उसकी अपेक्षा-से हैं जो पुरुषार्थ कर नहीं सकता या करता नहीं तथा अनादि सांत अपेक्षासे जो पुरुषार्थ करता है और निर्विध्न मोक्षमार्गपर कर-कर शुद्ध हो जाता है।

बह उपाय जिससे यह आरमा अगुद्ध-ताको मेटतेर कमसे गुद्ध होता है या यों कहिये रांग द्वेष कोषादि अशांतिमय प्रपंच-जालोंसे छूटकर सर्वज्ञ बीतरांग आनन्दमय परमात्मा हो जाता है सो धर्म है इसी पर्मको मोक्षका उपाय कहते हैं जिसको श्री कुंका-



चार्यके शिष्य श्री **उमास्यामी** महाराज तत्त्वार्थसूत्रमें कहते हैं-

" सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः"

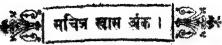
तथा इसीका खुलासा श्री नेगीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती अपने द्रव्यसंग्रह परमोपयोगी प्रन्थमें इस तरह करते हैं-सम्महंसक काणं चरणं मोक्लस्य कारणं जाको । बबहारा णिच्छवदी तत्तिय महओ णिओ अप्पा॥ अर्थात्-ज्यवहार नयसे सम्यादर्शन-समा श्रद्धान (Right Belief), सम्यग्ज्ञान-भिचा ज्ञान (Right Knowledge) और सम्यर-चारित्र-सञ्चा आचरण Right Conduct मोक्षका कारण जानना चाहिए परंतु निध्यय नयसे सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित्ररूप अपना आस्मा ही अपनी मुक्तिका उपाय है।

निश्चय याने असलमें नेसा साध्य हो **ये**शा साधक चाहिये । उपादान सावक साध्यकी ही पहली अवस्था है । शुद्ध सर्वज्ञ होनेकी ष्टली अवस्था आगेके लिये साधक है-दूसरे कारण निमित्त मात्र होते हैं। इससे अपने ही आत्माका यह विश्वास कि इसकी शक्ति शह **दीतराग ज्ञातादृष्टाम**ई है सम्यग्द्दीन है तथा इसीका विशेष स्वका संशय आदि रहित **भानना सो** सम्यग्दान है तथा अपने श्रदान व ज्ञानधारी आत्मामें सर्व पर पदार्यका रागद्वेष छोड़ तन्मय होना सम्परवारिक है-निश्चयसे यह सम्यग्दरीन ज्ञान चारित्र आत्माके ही स्वभाव हैं। इस निश्चय तीन स्थप स्थभावका पाना व्यवहारमें फंसे हुए आत्माके छिये बहुत वृक्षम है। इसीके छिये

व्यवहार रामत्रयका साधन है। जैसे भूरत मोजनसे मिटती है यह बात अनुरुमें हैं पर वह मोजन अनेक तरहकी सामग्रीका आरंम करनेसे ही बनता है।

जीव (चेतनास्वरूप), अजीव (५ चेतन रहित द्रव्य), आश्रव (कर्मआवर्षणका कारण). कंब (कम्मेंबंधका कारण), संवर (कम्में आऋषेण रोकनेका उपाय). (बंधे कर्मीको दूर करनेका उपाय), मोक्ष, (मर्व कम्पौसे इटकर आत्मावा शुद्ध होना) इन सार तत्त्वींका षड्नके बतानेवाले शास्त्रीका व उनके मूळ कर्जा सर्वज्ञ बीतरागी १८ दोष रहित हिनोपदेशी साकार अईत परमा-रमाका व उनके उपदेश अनुसार चलनेवाने परिम्ह रहित गुरुओंका सच्चा श्रद्धान व्य-वहार सम्यक्त है- प्रथमानुयोग (जिनमें २४ तीर्धेकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण, ९ बडमइ ऐसे ६३ महा पुरुषोंका हनेशासे हरएक दुखमा सुखमा काउमें होते रहते हैं मस्यतासे चरित्र करनेवाला), करणानुयोग (निसमें वणेन छोकका आकार, माप, गणित, तीन ज्योतिष आदि कथन है), चरणानुयोग (नि-समें मुनि और श्रावकके आचरणकी किया-ओंका वर्णत है) और द्रव्यानुयोग (जिसमें ६ दृत्य, प्रांत तत्त्व व मुख्यताम आत्माका वर्णन है)।

इन नार परमप विश्व बदौंका जानना ज्य-वहार सम्याजान है। वर्तमानमें इन चार वेद सम्बन्दी शसिद्ध मेंथ ये हैं-श्री महापुराण, पदारुराण, हरिवंशपुराण, त्रेलोनयसार, त्रेलो-जंब्द्वीपमज्ञिस, महाबीराचार्य गणित, खोकविभागी, मूलाचार,



आराषना, अनागारधर्मामृत, बारित्रसार, रत्नकरबन्नावकात्रार, पुरुषार्वसिद्धः गुपाय, द्रव्यसंत्रह, तत्त्वार्थस्त्रत्र, सर्वार्वसिद्धः, राज-वार्षिक, अध्यस्त्रक्षी, प्रमेयकमकमातेब, पंचारितकाय, प्रवचनसार, गोम्सटसार, समयसार, नियमसार, परमात्मपकावा,। समाभिकातक।

व्यवहार सन्यक्वारित्र सर्वदेश साधु-का महामतस्य है, तथा एकदेश मानकका अण्वतस्य है। क्योंकि जगतमें यह प्राणी नानरणमें हीन ही रहा है, इससे सुधरकर ठीक होना यकायक कठिन है, इसलिय उसके लिये शाबककी ११ प्रतिमार्के ना नेजियां हैं इनके द्वारा आचरणमें चढ़ता बाता है। ज्यों २ व्यवहार चारित्रमें हद होता है अंतरंग निश्चय चारित्रकी भाव-नामें भी इक होता जाता है। इनमें प्रवेश होनेके लिये पाक्षिक आवकका आचरण है। पाक्षिक आवक अपने आचरणमें इद होकर प्रतिमाओं में जाता है। पाक्षिक श्रावक गांस. मदिरा, मधु, असजीव सहित फल तथा वृत रमण शिकार लेखना, चोरी करना, बेड्या सेवन, परश्री सेवन इन त्यागता है. शात्रिभोजन स्वागका अभ्यास करता है, वानी शुद्ध कानकर पीता है, तथा भी पंचपरमेष्टीकी मक्ति उनकी च्यानाकार श्रंगाररहित प्रति-माओंके द्वारा करता है, गुरुओंकी उपासना करता है, शास्त्रका स्वाध्याय करता है, मन इन्द्रियोंके बदा रखनेके सिये मोग न उपमोगका नियम काता रहता है, सभा प्रध्वी, जल, अभि, वायु, वनस्पति तथा त्रस जीबोंकी यथा संभव दया पालता है। इच्छाओंको रोकनेके छिये सप. भ्यान, सामायिकका अभ्यास करता है: गुणवान धर्मास्वाओंको भक्ति व अन्य सर्वको दयासे आहार, औषि, अभय व ज्ञान दान करता है। नीतिसे आजीवि-काका साधन असि, मसि, ऋषि, बाणिज्य, शिस्प व विद्यासे अपनी पदवीके योग्य करता है। फिर दर्शन प्रतिमार्थे जाकर पाक्षिक श्राबकमें घारण किये हुए नियमोंके दोष व सम्यग्दर्शनके दोष बचाता है। दूसरी वत प्रतिमार्ने अहिंसा अणुवत (संकल्पी त्रसिंहसा त्याग आरंभीका यथाशक्ति यल). सत्य, अचौर्या, साम्रीसन्तोष, परिमह-प्रमाण, इन पांच अणुवर्तीमें दोष नहीं लगाता है. इन्हींकी रक्षार्थ दिग्नत, देशनत, अनुर्ध दंड त्याग वत ये तीन गुणवत पालता है तथा शिक्षारूप त्रीक्घोपबास, भोगोपभोग परिमाण और अतिथिसंविभाग ऐस चार शिक्षावतींका १२ वर्तोको अभ्यास करता है-इस तरह पालता है। पहली थार्मिक कियायोंको छोड़ता नहीं है। तीसरी सामायिक प्रतीमार्मे तीन काळ-त्रातः मध्यान्ह और शांमको २ वडी या अंतर्मुहुर्त (४८ मिनिटके अनुमान) अवस्य सामायिक करता है। चौथी भोष-भोपवास प्रतिमामें हर अष्टमी चौदसको आरंभ स्थाग १६, १२ या ८ पहरका

उपवास करता है। पांचवीं सिचतत्याग प्रतिमामें मचित अपक फलादि व कचा पानी नहीं खाता पीता, किंतु प्राञ्चक नंतु रहित खानपान करता है। इती-रात्रिभोजन स्वाग प्रतिपामें रात्रिको कोई बस्त न आप लेना व दमांको देता है, और रात्रिमोजनके अतीचारोंको बचाता है। अवीं ब्रह्मचर्य प्रतिमामें स्वस्त्रीका भी त्याग कर देता है। ८वीं आरंभ त्याग प्रतिमामें व्यापार व गृहका आरंभ-रसोई करना आदि स्याग देता है। ९ बीं परिम्रहत्याग प्रतिमामें सर्व परिग्रहको दानादि करके पुत्र पौत्रौंको दे देता है, केवल अपने पास दो तीन वस्तु व वर्तन रखता है पैमा आदि नहीं रखता। १० बीं अनुमतित्याग प्रतिमामें संसारिक कामों में सम्मति देना त्यागता है। ११वीं उदिग्टल्याग प्रतिमाके दो मेर हैं एक क्षुल्लक नो एक लंगोटी व एक खंडवख रखते, भिक्षासे श्रावकके यहां अपने निमित्त न बना हुआ भी-नन करते, मोरपरकी पीछी जीवरक्षांक निमित्त व कमंडल शौचार्य और एक पात्र मोजनार्थ रावने हैं। दूसरे ऐलक हैं, जो केवल एक लंगोटी रखते हैं, निरंतर ध्यान स्वाध्यायमं छीन रहते हैं और केवल एक दफे अपने हाथपर रक्ता हुआ शुद्ध श्रावक प्रदत्त भोजन करते हैं।

इस तरह जन ११ दर्ज तय कर लियं जाते हैं और अंतरंग आत्म विशुद्धि बढ़ जाती है, शरीरमें नग्न रहने व डांम मच्छा आदि परीग्रह सहतेकी शक्ति हो जाती है तब परम-हंस स्बरूप नग्न दिगम्बर दिशाही बहां बहा है—साधु बालक्के समान निर्मय और सरक परिणामी हो जाते हैं तब उनसे सर्व देश महावन अर्थात १३ प्रकार चारित्र पलता है। अहिंसा महावत सत्य, अचीर्य, ब्रह्मचर्य्य और सर्व परिग्रहस्याग ऐसे पांच महावत । ईयी (४ हाथ जमीन आगे देखकर दिनमें जीव रहित जमीनपर चलना), भाषा (मिष्ट शुद्ध वयन बोलना), ऐषणा (शुद्ध भोजन हेना), आदान निक्षेपण (शास्त्रादि देखकर रखना उठाना) व प्रतिष्ठापना (मलमूत्र देखके करना) ऐसी ५ समिति, और मन वचन कायको वश करना ऐमी तीन गुप्ति इस तरह १२ प्रकार चरित्र पालते हैं । बन उपवन एकांत स्थानमें निवास कर निरन्तर आत्मध्यानमें छीन रहते हैं। पासमें १ पीछी व १ काष्ट्रका कमंडल रखते और भूख होनंपर दिनमें एकबार श्रावकसे भक्तिपूर्वक दिया हुआ आहार महण करते हैं। २२ परीपहोंका जीवना इन माधुओंका कर्तव्य है। इन २२में नम्न रहना, और तृण स्पर्श ब डांस मच्छर, व टंड गर्मीकी भी परीषह ज्ञा-मिल हैं, जिनका होना व जीतना वस रहित साधहीके संभव है। जनतक वस्त्र स्यागनेकी शक्ति न हो तक्तक श्रावकका मार्ग है।

श्री उमाम्बामी महाराजने तत्त्वार्थ सूत्रमें २२ परीषहोंमें नरनपना आदि परीषद्द कही हैं।

सूत्र-श्रुतिपासाशीते। व्यादशमशकना व्यादिक स्रीचर्यानिषदाशस्याको शवश्या चनाका मरोगत्व-स्पर्शमळसत्कारपुरस्कारमशाशानादर्शनानि ॥९॥

श्वेनांबर प्रन्थोंमें भी २२ परीषहमें अचेलक या नग्न तथा शीत, उच्ण उंसमसक परीषह कही हैं जो साधुके वकारहित नम होनेपर ही संमव हो सक्ती हैं—

प्रवचनसारोद्धार (प्रकरण रस्ना-कर माग २ रा) पत्रे २ १ ५ २२ परीषह—खुटा पिवासा सी उद्याहं हंसा

चेलारइ छिऊं।

चरिया निसीहिआ अञ्ज अक्रोस वह जायणा॥६९२॥

भर्ष- परि ऐटले समस्त प्रकारे जिन मार्ग नहीं मुकवा, साख अने निर्जरा सार्के ले सहन करवं पड़े ते परिषद्द कहिये तेमां एक दर्शन परिषद्द अने बीजी प्रज्ञा परिषद्द ए वे मार्ग न मुकवाने अर्थे छे अने निर्जरार्थे बीस परीषद्द छे, तेना नाम-सुधा, पिपासा, श्रीत, उप्ण, दंसा, अनेला, रित, स्त्रीचर्या, नैषेधकी, शप्या, आकोश, वध, याचना, अलाम, रोग, तृणस्पर्श, मल, सस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान अने सम्यक्त।

६ डांसे पराभव पाम्यो थकी पण वक्ष बांधे नहीं (डांस काटे तौ भी वस्त्र न चाहे।) आचारांग सुत्र तृतीय उदेश्य पत्रा ९७ (छपा संः १९६२, प्रो० गवजीभाई वेवराज।

अहुवा तथ्य परक्रमंतं भुको अप्वेलं तक्षणकासा कुसंति तेउ कासा ॥ इसंति, दंसमसग कासा कुसंति, एगपरे अजयरे विक्ष क्वे कासे आह्या । सेती अप्वेके लायबं आगममाणे तवेसे, आम सन राणा गए भवति ॥३६ १॥ भावार्थ-वस्त्र रहित रहते हुए मुनिर्यो-के कदाचिन वार्याण शारीरमें सुण या कांटा लगा करे अथवा ठंडी हवा व ताप लगे अथवा डांस मच्छर काटे इत्यादि अनगमता परी-पहोंको सहते रहते हैं; ऐसा ही करनेसे तप किया गया ऐसा गणनेमें आता है।

मोफेसर हर्मन जैकोबीकृत हंमेंनी उच्या उत्तराध्ययन

लेक्नर दूसरा सका १३-" When a naked, rough restrained ascetic lies on the grass, his body will be hurt. अर्थात जबएक नग्न साधु जमीन पर पड़ेगा उसके शरीरको कष्ट होगा।" छठी परीपह अचेलक कही है-Nakedness (नग्नपना)-

लेक्बर ७ सका २९६ (२१) " He who washes and adorns his clothes is far from being a naked monk. वह जो कपड़े घोता है और संहारता है नग्न मुनि होनेसे बहुत दूर हैं। '' वास्तवमें यदि विचार किया जाय तो जबतक लज्जा कघायको जीता न जायगा तबतक उच्च प्रकारका चरित्र प्राप्त नहीं हो सकता।

इम सम्बन्धमें इंग्रेजी जैनगजट नं । १ से ९ पुस्तक १ जूनसे सेप्टेम्बर १९१३ में वर्णन है कि-"Mr. E. Westlake F. R. A. I. मि० ई० वेस्टलेक एफ० आर० ए० आई० फोर्डिंग जनने एक पत्र ता. १८ अप्रैल १९१३ के 'हेली न्यूज' लंडन में प्रगट किया है जिसके वाक्य हैं--

"Sir, having given some study to this subject, I may say

that the Rev. J. F. Wilkinson's remarks upon the superior morality of the races that do not wear clothes is fully borne out by the testimony of travellers. It is true that wearing of clothes goes with a higher state of arts, and to that extent with civilization; but it is, on the other hand attended by a lower state of health and morality, so that no clothed civilization can expect to attain to a higher rank.

भावार्थ-इस विषयपर अम्यास करनेसे में कह सकता हूँ कि जे ० एफ ० विस्किनसन साहिक्का यह कथन कि जो जातियाँ वस्त्र नहीं पिहनतीं उनका सचरित्र सबसे उना होता है, यात्रियों के द्वारा पूर्ण प्रकार प्रमाणित है। यह सच है कि वस्त्र पिहनना कला कोश-न्य और उच्च दरलेकी सम्यतामें माना जाता है, परंतु इससे स्वास्थ्य और सचरित्र इतनी नीची दशाके रहते हैं कि कोई भी वस्त्रधारी सम्यजन उच्चतर दशा पर पहुँचनेकी आशा नहीं कर सकता।

इंग्रेजी "जैनगजट" अप्रैल १९ - ६ में मि. inigh state of mor जो. एल. जैनी एम. ए. लंडनका ता. १२ and it is declare मार्च १९०९का पत्र छपा है, जिसमें वे कहते gours of a Prus हैं, यहां एक प्रस्तक बन रही है जिसमें एक have grown have as affect to wind an who load a ve oxistence.
और चरित्रकी उत्तमताके छिये करते हैं। (London मिंडन नगम्मे २० मील जंगल्यें उन्होंने एक March 12, 1909.)

वस्ती बसाई है। इसके आसपास बुमनेवालों को ऐसे प्रस्व स्त्री तथा बच्चे मिछते हैं जिनके पास एक चिथड़ा भी वस्त्र नहीं है। इस क्षेत्रमें पुलिस हस्तक्षेप नहीं करती। इससे बहुत ऊंचे दरनेका चारित्र वे रखते हैं—ऐसा कहा जाता है; और यह प्रगट ह कि प्रसियाके कठोर जाड़े भी इन छोगोंपर अपना असर नहीं करते। ये छाग आवोहवामें खुले रहनेसे सखन देहके हो गये हैं और मेदानका ही जीवन ब्यतीत करते हैं। इसके इंग्रेनी वाक्य हैं—

"A very curious pamphlet is being circulated describing a new German Sect, whose whole creed is to go without clother. They do this from sanitary & moral purposes. They have established thomselves as a colony at a clearing in a forest about twenty miles from Burlin, and in the immidiate vicinity of this lonely spot the stranger will casually come across men, women, and children divisted of every rage of clothing. The police are disinclined to interfere so long as they keep to a very limited area. A very high state of morality is claimed, and it is declared that the regours of a Prussian winter in no way affect these folk, who have grown hardly from exposure to wind and weather and who lead a very out-of-door existence.

(London J. L. JAIN).
March 12, 1909.

बम्बहर्म ता. २० से २७ जून तक हिंदू साञ्च के, नारायण स्त्रामी ऐयर मी. ए. एछ. एल. बी.-ज्वाइन्टं सेकेटरी यियोसोफिकल मोसायरी अहयार महरासने न्यारन्यान दिये थे। उन्होंने एक व्याख्यानमें कहा था कि Digambara is the highest stage of Saint. B) as naked as Akash to Teach hgiher condition.

अर्थात-दिगम्बरपना पाधुकी सर्वी-च्छ अवस्था है। उचर दशा पर पहुंचनेक लिये आकाशके ममान नम्न हो।

यह प्रत्यक्ष वेचा गया है कि एलक पत्रालालनी महाराज, नो ११ प्रतिमाधारी आवत हैं और सर्फ १ लंगोटी रखते हैं तथा इस वर्ष चातुर्मीयमें फिरोज़पुर छावनी पंजाबमें विराज रहे हैं, शरी के बहुत ही हड़ हो गये हैं । उनके नम्न देह पर मर्दी गर्मी असर नहीं करती। ऐसे जाडेमें जब होग भारी २ रहें व उनके कपड़े पहनकर संवेरे बाहर निकलते हैं परन्त आप केवल एक छंगोट पहने नंगलकी तरम जाने देखे गये हैं।

इस तरह साधुके बाहरी चारित्रका यस्त्रसे पालता हुआ अंतरंग निश्चय आन्त-ममाधि रूप चारित्रके वलमें माधु अपने शुद्ध बीतराग भावोंके द्वारा नये कर्मोंका संवर करता हुआ पुराने कर्मीकी निर्जरा तब मोहनी, झानावरणी, दर्श गवरणी और क्योंकी वर्गणाओंको अंतराय आत्या पीछे केइल जानी-में हटा पाता है, अर्हत-जीवन्युक्त परमात्मा हो नाता है।

जब उस दशामें शरीर होता है तब ही वाणीसे सस्यार्थ उपदेश प्रकट होता है। ऐसे अनेक महात्मा हो गये हैं जिनकी ध्या-नाकार मूर्तियां उन्हींका स्मरण करती हुई मक्ति रसकी वृद्धि करती हैं। इस पंचम कालके पहले श्रीऋषमदेव, अमितनाथ, चंदाप्रम, नेमि-नाय, पार्श्वनाय, महाबीरजी आदि तीर्थकर तथा भरत, सागर, सनत्क्रमार, राम, समीव, हनुमान आदि अनेक क्षत्री बीर अर्हत होकर फिर शरीरको तनकर सिद्ध हुए । ऐसे सिद्ध निराकार परमात्म। अनादि कालसे बराबर होते आये हैं और इन्हींको ईश्वर कहते हैं।

नव यह आत्मा रत्नत्रय स्वरूप होता है तन यह धर्मको पाता हुआ कर्म नाराकर परमात्मा हो जाता है। धर्मका जो स्वरूप उपर बताया गया है वही अनादि कालसे यथार्थ मार्ग है, इसीको जिन धर्म या जैन-धर्म कहते हैं। जिन्होंने रागद्वेषादि शत्रुओंको जीतकर परमात्म पद पाया है उनका ब उनका कहा हुआ धर्म सो जिनधर्म है। इसीसे यह जैनधर्म मनातन है।

जिनको अपना कल्याण करना हो-अपने आत्माकी गुप्त विभृतिको प्रगट हो-सचे मुखको माक्षात् अनुभव करना हो उनको पक्षपात छोड़कर ऊपर कहे हुए भनातन जैनधर्मको पहचानकर इसी तरह रब-त्रबका सावनकर आत्माको उन्नत अवस्थापर ले जाना वाहिये।

हम अपने कर्तव्यके आप क्रिम्बेदार हैं। यहि आलम्य करेंगे. अपने धर्मको न जानेंगे

3

और न पाछेंगे तो हम नीचे गिरते भाँदगे, और जो हम अपने आत्मधर्मको ठीक २ जानेंगे, उसपर चेळेंने तो अवस्य उसत होते नांयगे। जगतका मूछ स्वस्त्य जानना चाहिए, फिर अपने स्वस्त्रको प्रहणकर परका स्थाग करना चाहिये । जो हंसकी तरह कर्मसे मिले हुए भी आत्माको थिल अपने शारीर प्रमाण स्फटिकमणिमई श-कि अपेक्षा ज्ञाता इष्टा अविनाशी अनुभव करते हैं उनको जगतके पदार्थीमें मोह नहीं होता है. वे अपने आस्माके आनन्दका स्वाद **डेते रहते हैं** | जबतक मृहमें रहते हैं श्रावक-का आचरण पालते हैं, और जब त्यागी होते हैं तब विशेष रत्नत्रयके सेवी हो जाते हैं। ऐ भिन्नो ! अम बुद्धि छोड़ कर व राग द्वेष आसीक धर्मको-सनातन हराकर ₹∏ जैनधर्मको जानो और अमल करो। यह नर तन थोड़े कालके लिये है, यदि इसमें तुमन अपनी विभृतिको न जाना तो फिर आत्माकी उन्नतिका एक बहुत अमूरुय अवसन अपने हाथसे स्वो दिया गया ।

श्रीगुणभद्राचार्य आत्मानुश्रासनमें कहते हैं—
रागद्देषो अवृत्तिः स्याधिवृत्ति नीजिबेद्यनम् ।
तो व बाद्यार्थं सम्बन्धे तम्मानाश्च परिवर्जन

11 239 11

मानार्थ-राग द्वेषसे प्रवृत्ति है उन्हीं का रोकना निवृत्ति है । इन्हीं दोंनोंसे बाह्य बदार्थका सम्बन्ध है इसलिये इन दोनोंको स्थाने ।

सीअस्तचंद्र नाटकसमयसार कर्शोंमें कहते हैं—

एकमेव हि तस्साद्धा विषदामपदं पदं । अपदान्येव मासन्ते पदान्यन्यानि यसपुरः ॥७॥ (निर्वरा)

भावार्थ-जो पद विपत्तियोंका स्थान नहीं है अर्थात अपना शुद्ध आत्मीक पद है उस एकका ही स्वाद छेना चाहिये, जिसके लामने अन्य जितने पद हैं वे सब अपद या खोटे पद के समान ही भासते हैं।

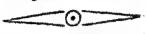
श्रीपृज्यपादस्यामी समाधिशतकमें कहते हैं-आवती शतमादाम वती शानपरायणः । परात्मज्ञानसंपद्मः स्वयमेव परो भवेत् ॥६॥ देशान्तरगतेचीं देहे ऽस्मिन्नत्मभावना । वीत्रं विदेह निष्यते रात्मन्यवात्मभावना ॥७॥

अवती वर्तोको धारण कर । वर्ती ज्ञानमें छीन हो । जो उत्कृष्ट आत्मज्ञानसे पूर्ण होता हैं वह स्वयं ही परमात्मा हो जाता है ।

इस दहमें आत्माकी भावना करना ही दूसरी देह प्राप्तिका बीन है, और आत्मामें ही आत्माकी भावना करना देह गहित पान भोक्ष प्राप्तिका बीन है। अय जगतके जीवो ! बाहरमें चाहे जैसी स्थितिमें हो--चाहे क्षत्री, बेश्य और शुद्ध हो भपने मनमें इस आत्मज्ञान स्पी रत्नकी पहचान करो। तुम्हें पद पदपर सच्चे आनन्दका लाम होगा और छुल शान्ति (Peace and Happiness) तुम्हारी नित्यकी एक मोग्य वस्तु हो जायगी।



एक मक्स



(हे०—तत्त्व-ब्रुमुत्सु, आगरा)

नियोंकी धार्मिक क्रियाओं में भात-क्रिया के । सातवीं प्रतिमा तकका गृहस्य इस क्रियाको पाछ नहीं सकता, इस कारण उसके लिए इसका उपदेश नहीं । इसके उपरकी प्रतिमाओं के गृहस्य और मुनि इसको पाछनेके किए बाध्य हैं।

यह किया यह है कि आवण, मार्दों, कार और कार्तिक, इन चार महीनोंमें वे छोग इधर उधर अमण न वर्रे, एकही स्थानपर रहें।

इसमें अपनीर मामर्थ्यके अनुसार पालनेके किए भी विधान है। जो सूब अच्छे कल्यान और नितेन्द्री हैं वे इन नारों मासों भर एकासनसे रहते हैं, जो इनसे कम शक्तिके धारक हैं वं महीन दो महीने तक एकासनसे रहते हैं, जो इनसे भी कम शक्तिके घारक हैं वं एक एक पख्यारे अठवारे तह एकासन मांडकर बैउते हैं, और जो निहायन ही हीन प्रकार्थ हैं वे अपनी दिनवर्णाको हमेशा ही की मांति पालने हुए एक शहरमें ही रह मकते हैं।

इस कियाका उद्देश्य है कि इन वार महीनोंमें वर्षा विशेष होनेके कारण पृथ्वीपर छोटे २ और बड़े २ भी सम्मूर्च्छन नीव बहुत बड़ी संख्यामें उत्पन्न होते हैं। वहने फिरनेसे उनका विवात होगा। वह विवात पापका कारण है। यह इष्ट नहीं।

प्रथा-पोषणको कुछ बीज न सम-सते हुए और इसके उद्देश्यपर ही ध्यान रखते हुए मुनियोंने इसका पाछन किया है, ऐसा पाछ्म होता है। क्योंकि इस घटनासे प्रायः सभी भाई परिचित हैं कि इन्हीं चातु प्रसिंके दिनोंमें चारण ऋदिके धारक तस ऋषीस्त्रर मधुरामें मोजनार्ध आये थे। चारण ऋदिहा आदाय आकाश मार्गसे गमन करमेका है।

इतने कथनके दूसरे शब्द ये हैं कि आकाशमें गमन करनेसे चातुर्मासमें मृतलपर उत्पन्न होने-बाली अमेरूप जीवसशिका विघात नहीं होता। बस, प्राणिवध ही न होना चाहिए, चतुर्मासमें केवल कहीं न जानेसे ही मतलब नहीं है।

यदि उपर्युक्त बात मत्य है तो यह दांका उत्पन्न हुए बिना नहीं रह सकती कि आज कल चतुर्मासके दिनोंमें मुनि लोग रेलंब रेनसे अथवा हवाई जहानोंके द्वारा गमन क्यों न कर सकें ! क्योंकि यह बात सभी जानते हैं कि रेलंबे—लोहेकी पटरियों—पर चतुर्मासोद्धव जीवराशि उत्पन्न नहीं होती, अतः उमका विघात भी किर किस तरह संमव है!

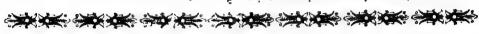
हैं। एक यह दूमरी नात अलगत्तह कहीं जा सकती है कि मुनियोंके छिए किमी बाह्यपर सवार होनेकी आहा नहीं है।

इस आज्ञाक भी यदि हम इसी दृष्टिसे विचार करें कि इसका क्या उद्देश्य है ? तो समझमें आता है कि किसी वाहनको कष्ट न हो अथवा उनके निमित्त किसीको कोई नवीन आरम्भ न करना पढ़े, एतदर्भ ग्रानियोंको बाहनीपर सवार होनेका निषेष है।

दानवीर माणिकचन्द्र।

स्वर्गीय दानवीर जैनकुलभूषण सेठ माणिकचंद्रजीका बृहत् जीवनचरित्र जो जैनधर्मभूषण ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी बढ़ीदामें लिख रहे थे तैयार हुआ है। अब शीघ ही छपना शुरू होगा। पुरतकका नाम " दानवीर साणिकचन्द्र " ख्वा जायगा।

निवदक-मूळचंद किसनदाम कापड़िया-स्र्रत ।



बृहत्स्वयंभूस्तोत्र भाषाटीका

(स्वामी समन्तभद्राचार्यकृत मूल सहित)

छपकर तैयार हो गया।

र्गाघ्र मंगाइयेगा।

कीमत आठ आना।

नोट—नेनिमत्र और मत्यवादीके गत अंकोंमें विज्ञापनद्वारा बृहत्स्वयभूंस्तीत्र भाषाठीकाकी कीमत अनुवानसे एक रुपया रक्ष्मी गई थी किन्तु उम समय वह पूर्ण प्रकाशित नहीं हुआ था। अतः अब छपकर तैयार है। आज तक जिन महाशयोंके आर्डर इस पुस्तकको मंगानेके लिये आ चुके हैं उन्हें यह आठ आने कीमत लगाकर मेजी जावेगी। अन्य महाशयोंको भी इस अवसरपर शीधता करनी चाहिये नहीं तो पछताना पड़ेगा। निनके आर्डर आ चुके हैं और आ रहे हैं उन्हें पहिन्ने मेनी जावेगी।

२ पं प्र टोडरमहाजीकी रहस्यपूर्ण चिट्ठी—-यह महत्त्वपूर्ण सारगर्मित और मार्मिक विषयकी चिट्ठी बड़े खोजके साथ उपलब्ध हुई है। अतः इसे पाठकोंको एक बार अवस्य पढ़ना चाहिये। कीमत ⊯)॥

३ हिन्दी प्राणिपय काव्य —कीमत =)।

४ पंच कल्याणक मंगल महोत्मच—मंगानवाले महाशयोंको भेर्य रावना चाहिये। छप नानेपर मुचना दी नावेगी। और जिनके आर्डर आ चुके हैं उन्हें भेन दी नावेगी।

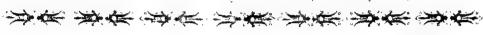
मैनेजर--

कर्तव्य प्रबोध कार्यालय, पो० खुरई (सागर)

दानवीर माणिकचन्द्र।

स्वर्गाय दानवीर जैनकुलस्पण सेट साणिकच्छजीका बृह्त् जीवनचित्रि जो जैनधर्मस्पण ब्रह्मचार्ग शीतलप्रसादजी चरीदामें लिख रह न तैयार हुआ है। अब बीध ही छपना सुरू लेगा। प्रतक्षा साम '' दानवीर साणिकचन्द्र '' स्वा जावगा।

निवदक मृत्यचंद्र किमनदाम कार्पाङ्या-स्रत ।



वृहत्स्वयं भूस्तोत्र भाषाटीका

्स्वामी समन्तभद्राचार्यकृत मृत सहित । छपकर नैयार हो गया ।

भाव मंगारयंगा।

कीमत आह आना।

नाट — कैनांभव और सत्यवादोंके यात अंकोंमें विज्ञापनद्वारा बृहत्मवयभूंमतीत्र भागारीकाकी कीमत अनुवानमें एक रुपया स्वर्था गई थी किन्त उस समय यह पूर्ण पकारित नहीं हुआ था। अतः अब उपकर तैयार है। आज अक सम महाश्योंके आदर इस पुस्तकको मंगानक लिये आ चुके हैं उन्हें यह आठ आने कोमत लगाकर मेजी जावेगी। अन्य महाश्योंको भी उस अवस्पय की हा। किनो वाहिये नहीं तो पहताना पहिंगा। जिनके अर्थर था चुके हैं और आ रहे हैं उन्हें पहिंद मेजी जावेगी।

र पं श्र दोष्ट्रमहर्जिकी रहस्यपूर्ण चिट्टी— यह महत्त्वपूर्ण मारगर्भित ग्रीर मार्मिक विषयकी चिट्टी बहे खोलके माथ उपलब्ध हुई है। अत. इसे पारकीको एक बार अवद्य पहला चाहिये। कीमत का।।

दे **हिन्दी प्राणांत्रय काच्य** कीनत न

४ पंच कल्याणक मंगल महोतमच—मंगानेवांट महाजयोंको विये सकता नाहिये। ज्ञा नानेपर मनना दो नावेगी। और निनके सार्टर आ चुके हैं उन्हें भेन दी नावेगी।

मनजग —

कर्तव्य प्रवाध कार्यालय. वां० खरई (सागर)



तेन सभातको जीवन अरोण करनेवाले, पर्मश्रकालु, शिक्षांप्रमी, विना न्याय जयपुर स्टेटवी जेलने हैं करीब शांद तीन वर्ष तक और अभी ठाट साह हुए वेलीर, सक्षम (क्रिटिश राज्य)मे रक्से गये और वहां १६ विन तक प्रतिसाके दर्शन-प्रजनका अर्थप न होनेसे ! विना अजाहार रहे हुए -

षेर्यशाली नसल-पं० अर्जुनसाल सेटी बी. ए.।



'फ्तें हो जार्ज पंचमकी '

गज़ल।

मनाओं सब दुआ मिलकर, फूर्त हो जार्ज पंचमकी । फ़ुना जर्मनको जल्दी कर, फुन हो जार्ज पंचमकी ॥१॥ हुए हैं बादशा लागों, हजारों इस जहां अंदर । हुए इनमें नहीं बहकर, फर्त हो जार्ज पंचमकी ॥२॥ वयाँ अमनो अमाँका क्या, जुवाँसे हो अयाँ यारो !। नहीं पाया कभी रहकर, फर्त हो जार्ज पंचमकी ॥ ३॥ बनाये जावजा कॉलिज, तरकी इत्म अफ़ज़ल हो। बनें आलिम सभी परकर, फतें हो जार्ज पंचमकी ॥ ४॥ मजहबी कुछ नहीं झगडा, करो डिम्ल्यार नी चाहें। बनाओं ममजिदे, मंदिर, फ्रने हो जार्ज पंचमकी ॥ ५॥ अदल इसको ही कहते हैं, फ़कीरो बाद्धा यकसौ । मभी कानूनके अंदर, फर्ने हो जार्ज पंचमकी ॥ ह ॥ करूँ तारीफ़ मैं कहाँ तक, नहीं कुछ ताब तहरीरी। अनुस्ते है मेरी बाहर, फुनै हो जार्ज पंचमकी ॥०॥ खतम कर महाआ 'पन्ना , रहे ये सन्तनत कायम । फलक पै जनतलक अम्तर, फते हो जार्ज पंचमकी ॥ ८॥

पन्नालाल जैन, अलवर ।



Printed by Moolchand Kisandas Kapadia at his "JAIN VIJAYA" Printing Press near Khapatia Chakla Laxminarayan's Wadi—Surat & Published by him from "Digambar Jain' office, Chandawadi—Surat.



दिगम्बरजैन पुस्तकालय-प्रुरत।

सुभाषित रन्तसंदोइ सटीक	२॥)	चंद्रप्रभ चरित्र	?)		
रत्नकरंड आवकाचार	(4)	श्रेणिक चरित्र	? III)		
हरीवंदापुराण	\$)	सागारधर्मामृत टीका	२॥)		
आदिपुराण (भाषाटीका)	१ ६)	लिबसार (क्षपणासार टीका)	(11)		
अर्थप्रकाशिका (तत्त्वार्थकी		तत्वज्ञानतरंगिणी	? II)		
सरल टीका)	311)	आत्मावबोध (कुमार कवि कृत)	11-)		
तीस चौवीसी पूजा ?!	111=)	गिरनार माहात्म्य	11-)		
प्रतिष्ठापाठ (प्रतिष्ठामारोद्धार)	२)	वुधजन सतसई	1=)		
पुण्यास्रवकथाकोष	₹)	चौवीसं ठाणा चर्चा	II)		
मोक्षमार्गकी सची कहानियां	₹)	सवार्थसिडि (संस्कृत)	?)		
भक्तामर कथा (यंत्रमंत्र सहित)	?1)	जैनसंप्रदायशिक्षा	311)		
गोमदृसार टीका	ક્રાા)	जैननित्यपाठसंग्रह	11)		
भारत० दि० जैन डिरेक्टरी	()	श्रीपालचरित्र (दूमरी वार)	Hi)		
धर्मप्रशासर	₹)	पुत्रीको मानाका उपदेश			
चौवीस जिनपूजा (वृंदावनकृत)	(H)	(मसुराल नांत ममय) 🗐 और ६) से.		
प्राचीन जैन इतिहास (प्र. भाग)	111)	सुद्र्शनचरित्र	11-)		
नियमसार	₹)	मनमोदन पंचशति	?=)		
आत्मानुशासन (टीका)	₹)	जैनार्णव (१०० प्रस्तर्रे)	٠,)		
नेमिनाथ पुराण		देहती शास्त्रार्थ	1)		
इसके सिवाय सब प्रकारके जैन प्रन्थ हमारे यहां भिल सकते हैं। पांच रुपयसे अधिककी					
and and as of our or come and come					

पुस्तके मगाने पर की रुपया एक आना कमी शन दिया जाता है।

पता-मैनेजर दिगंबर जैने पुस्तकालय, चंदावाडी-सूरत ।

पत्रित्र, काइमीरी और नई पवित्र केसर

१॥) फी तोला। पृजनमें इस पवित्र के तरका ही व्यवहार की निया मेनंतर-दिगंबरजैन पुस्तकालय-पूरत| मन्दिरोंके लिये 🛞 √8 लास तैयार किये हुए-पवित्र घृष और अगरवत्ती। एकतार मंगाकर अवस्य परीक्षा कीजिए। मृत्र २) फी रतता। मिलनेका पतः---3) सरैया ब्रद्सं जैनी-सूरत

विषयानुक्रम

नं	The second of	19.
1-5	नवीन वर्षः, नृतन त्रवरिमे अभिवंदन 💮 🔆 💮	to P
3	महावीराष्ट्रक स्तोत्र (सतीशक्त्र गुप, सुरत)	A
*	सम्पादकीय वक्तव्य, स्वीकार-समालोचना हुन ।	4-4
E-19	मेठ नवलचन्द हीराचन्द्र स्मारक पंकः, जैन संभाषार	1 15
6	एक लुतप्रायः तीर्थके उद्धारकी आवद्यकताः	ુર૧
e,	द्वारशानुप्रक्षा-कविता (पं॰ उमरावर्तिह न्यावतीये, काशी)	3.1
ý a	Analysis of Tattwartha Sutra (Justice J. L,	3. X.
	Jaini M. A., Bar-at-Law, Indore.)	25
9.8	Optimism of life, (Herbert Warren, London.)	85
93	To Friends of the Jain Community	The state of
	(Babu Chaitan Das B. A. Laphhimpur.)	ا الانتي
93	मनुष्य व्यवहार (श्रीमती चन्दाबाई, भारा)	¥ ?
18	जैन पारिभाषिक शन्द कोष (पं॰ पनाताल बाकलीबाल, कलकत्ता	**
.94	दिवाली और दो मित्रोका वार्सालाप (वाब दीपचन्द परवार, बरसिंहपुर)ः	*4
૧૬	वीर्थ गक्षा (हीगचन्द्र मलुक्चन्द्र दोशी काका, शोलापुर)	44
'ବ୍ଜ	व्याल्यान, (जैनधर्मभृषण व्रव् शीतलप्रसार्जी)	45
.16	भव उदार वैसे हो-कविता ('प्रेमी' हजारीलाल जैन, आगरा)	(a) (a) (a) (b) (b) (b) (b) (c) (c) (c) (c) (c) (c) (c) (c) (c) (c
98	अद्धा उन्नतिकी जड़ है (जैनधर्मभूषण व । शीतलप्रसादती)	2 4
३ ०	उपयोगी हितवचन (रामणाल मोदी, देवरी)	44
ર ૧	मम बीर प्रभो !!! (लोकमणि जैन गोटेगांव C. P)	41
₹₹.	ध्यान देने योग्य मृजनाएँ (हीराचना मन्द्रकचन्द्र दोशी काका, शोलापुर)	24
२३ 🛴	" संहारा दीजिये स्वामिन्" (मुलामचन्त्र परमानन्द जैन, गोटेगांक) 👯	
28	आरोग्यताका प्रदन पत्र, (हीराचन्द मलुकचन्द दोशी काका, शोलापुर) 🦠	20
1-75	जीवनके डेहेच्य, (मंगीलाल जैन, आगम), द्वास और व्यक्तिकार	K8-84
20	दयालु बीखराझकोने विनंती (C. G. Gandhi)	5.3 7 %
26	महावीरवरिक्रम्, (सतीकक्दो गुतः सूर्यपुरम्) •••	53
24	खन्या धर्माचे स्वका, (बाजवन्द मोतीचन्द पेठका, मलकापुर)	46
-3.4	सकत्यबलः, मदावज्ञान (कालताबाइ, शाव काश्रम, बन्ह) १	0 3-1 0 06
***	अवनयाष्टक-गज़ल (धा॰ प्रवासीलाल वर्मा, स्रत)	100
-17	महाचर्य (D. B.); माश्कने एक प्रश्न (स्नेहगोगी) १	06-991
1	जनोहनाला जैनोने दिन्य संदेत्रों, (संबी, काणीसा निजर्मकती, काणीसा)	939
•	सामाजिक बंबारण अने हेनी मुख्य करती (दिमत)	933
He.	पुस्तकालयः सीजित्रानी दिगम्बर जैन पंचन स्थला (श्री काणीता मित्रभंडली, १	14-421



आजकल करते २ अरसा २० सालसे में एक ऐसी दवाकी खोजमें या जो जगत्को आशीर्वाद रूप हो जाय, एक ही छोटी शीशी अपने जेवमें एक नेसे सारा दवाखाना निवरामा हो जाय वानी अपनी जाकिटकी जेवमें एक छोटीसी शीशींक अंदर सारा दवाखाना ना आजाय। परदेशमें, रेलमें, जहाजमें, अंगलमें, छोटे मोटे गांवमें जहां जिस वक्त कोई विमारी उमड़ आई उसी दम उसका इलाज अपने जेवमेंसे निकल पड़े। कई आशा निराशांक क्षोंक खाते आज २० वर्षके बड़े परिभ्रमके बाद मैने यह "चन्द्रामृत" पाया है।

इससे बादी, बदहनमी, दस्त, कै, खांसी, दमा, शिरदर्द, जुलाम, आंखका दर्द, दांत व डाड़का दर्द, वर्ण रोग, दाद, खुनली, खान, हैना, मुक्षम गठिया, वात, लक्ष्वा, कममोरी, अशक्ति, नामदी, नहरी हंक, प्लीहा, अण्डबृद्धी, प्रदर,

रोग, सरदी, बवासी', मुंहके छाले, प्रमह, रक्त शुद्धि, बलना, ताप (बुलार) वहारुआ, हिचकी, दुर्गाधी खटनल आदि प्राय: सर्व रोगोंका पूरा २ इलाज है। महस्थोंको एक शीशी अवश्य पाप रखना चाहिये। कीमत अमीर गरीब सनके लिये थोड़ी रखी है खाने लगानेकी तस्कीब दवाके साथ मिलती है। की० फी शीशी ॥।) तीन शीशी २) रू० डा० खर्च अलग।

द्शा मंगानेका स्थल:---

चन्द्रसेत जैन वैद्य, चन्द्राश्रम-इटावइ. U. P.

श्री दिगंबर जैन, १३

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधेश्व तत्त्वेः सत्योपदेशैत्सुगवेषणाभिः । संबोधयत्मत्रमिदं प्रवर्तताम्, दैनम्बरं जैन समाज-मात्रम् ॥

वर्ष ११ वाँ.

वीर संवत् २४४४. कार्तिक-मार्गशीर्ष विक्रम सं > १९७४

अंक १-२.

हुन्नेनेनेनेनेनेने इ. नवीन वर्ष । इ. हुन्नेनेनेनेनेने

(1)

नवीन वर्ष, नवीन हर्ष ! नवीन दर्श, लोकमे !

(२) बीती रात, प्रभुं प्रताप: दिन्य प्रभात, देशमें !

(३) कनक सूर्य, नवीन जुर; भवतु अपूर्व, देशमें :

(४) नवीन भाव, अह प्रभाव: नवीन चाव, देशमें :

(५) नवीन तेज, अरु तरङ्ग, नवीन रंग, देशमें !

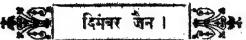
(६) 'ब्रिटिश ताज,' धराय आज: दे 'स्वराज्य' देशमें !

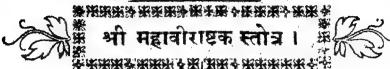
(७) फलित चाच, पुनित भाव; "नवीन" आर्थ देशमें !

> गुजरातीसं अनुवादक- . सनीशाचन्त्र यतः स्ट्त ।

नृतन वर्षारंभे अभिवंदन,

चीटक छं:। द्याम वर्षे नवं महावीर तणं. नीयहो जशवंत गढाय मह आश फलो नवलां वरसे, संदव रहीं दश्य, १. म्बुब केळवणी सर्हन हर्भे पर हलरं हाथ धरे चहीन; धन धान्य अने सुख संपत्तिथी, नवलां वरसे हस्ता मनधी. २. हिंद्र व्योम विषे सुख रस्मीवधी, परिताप वधा दरिये दुवजो; वळी आयु सीमा वध तक्ष वणी, कीर्ति प्रसरो सह विश्व विषे. ३. भरप्र करों जन मंडलने, मोतीलाल' रटे प्रभू महावीरने; वर संप अने सु सलाहकरी, जन मंडल रही सुख शांति धरी. ४. कंद्द वर्ष खरे सुख रूप बन्यां, नत् वर्षज तेम जजो सुखमाः; टळी क्लेश बली दृ:ख दूर हजी, करं अर्जन ए प्रभ् लक्ष धरो. १ जय ब्रिटिश राज्य तणोजधजो, युद्ध क्षेत्र विषे जय तो करजो; सुम्य शांति करो अस्नि हरीने, कर्ब अर्जन ए जम् हक्ष भरो. २. मोतीलाल त्रिकमद्व मालवी बाक्तेल।





()

नित जीव भाव अजीव जिनके, मुकुर् सहरा ज्ञानमें। उत्पाद ध्रीव्य अनन्त व्यय सम, दीखते शुभ भानमें॥ आकाशमणि ज्यों लोक साक्षी, मार्ग प्रकटित करनमें।

श्री चीरस्वामी मर्गगामी, हों हमार नयनमें ॥

हैं पद्मयुगसे नेत्र जिनके-स्पंद कोधादिक नहीं। करने जनोंको प्रकट है, कोधादि चितमे हैं नहीं॥

अत्यन्त निर्मल मूर्ति जिनकी, शान्तमय हो स्पुरणमें।

भी वीरस्वामी मार्गगामी, हो हमारे नयनमे ॥

ममती हुई स्वंगेन्द्र पक्ति मुकुटमणि छवि व्यान है।

शोभित युगल चरणावन जिनके मानवाके आप्त हैं॥

भरवर्षि नाशनके लिये हैं, जन्म पाय समाणमे ।

श्री विरस्वामी भागंगामी, हो हमारे नयनमें ॥ (५)

कंचन प्रभा भी तप्त जिनके ज्ञान निधि हैं गत तह ।

सिद्धार्थ मुपबरके तनय हैं, चित्र आत्मा भी नतु॥ श्रीयुक्त और अजन्म गति भी, चित्र हैं भव नशनमें।

श्री **वीरस्वामी,** मार्गगामी, हो हमारे नयनमे ॥

विमला विविध नय उर्मियोंस, भारती गंगा यही।

ज्ञानास्थासे इह मानकोको, स्विति करती हैं सही॥ बुधजनमरालोंसे अभी, संज्ञप्त है इह भ्वनमे।

> श्री वीरस्यामी मार्गगामी, हो हमार नयनमें ॥ (७)

त्रिभुवन विजेता काम योद्धा, वेग जिसका प्रवल है।

सुकुमार कोमल उन्नमं, जीता स्ववलमं सबल है ॥ वह प्रशम परके राज्यको, आनन्द नित्य स्मरणमें।

> श्री व्याग्नी मार्गगामी, हो हमारे नयनमें ॥ · (८)

हं वैद्य मोहातङ्कको, कश्चित् महाप्रशमनपरः।

1000

अनपेक्षरम्यु विदितमहिमा, और श्री संगलपारः॥ भव भीत राखु प्राणियोको, श्रेष्ठ गुण है शरणसं।

श्री **धीरस्थाशी** मार्गगामी, हो हमारे नयनमें ॥

सत्तीशचन्द्र शुस-सूरत।



जिम तरह अपना महावीर निर्याण संवत् २४४३ पूर्ण होकर नवीन वर्ष। २४४४ का प्रारंभ हो चका है उस तरह यह

मासिकहापी गालक अपने दस वर्ष पूर्ण करके स्यारहवें वर्षमें प्रवेश करता है। यत दम यगैमें इस बालकने क्या क्या लाम पहुँ वाये हैं यह लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि इससे तो सब परित्वत ही हैं परंतु इतना तो अवश्य कहना पड़िया कि इस पत्रने जैनियोंमें एक नर्शन जागृति उत्पन्न कर दी है और किसी भी मासिक पत्रने आज तक न किया हो ऐसा लाभ अपने आहकोंको पहुँ वाया है और भविष्यों भी यही उम्मेद रखता है।

दिगम्बर जैनियों में बीर निर्वाण सचित्र स्वाम अंक निकालनेका विशेषांक। प्रथम प्रयास भी इनी पत्रने किया है। आज

तक एमे पांच खाम अंक निकल चुके हैं और यह जुडा खाम अंक पाडकोंके मामने उपस्थित है। हमें अवश्य कहना पड़ेगा कि गत खाम अंकोंसे इस अंकमें चित्र, एछ संख्या आदिमें कुछ न्यूनता हमारे पाठकोंको मालूम होगी परंतु विशेष ख्याल करनेंसे संतोष ही

होगा कि महायुद्धमें कागमकी महंगीने गनव कर डाला है यानी कागनका मूल्य चौगुना पंचगुना बढ़ गया है तौ भी ऐसा १२० प्रष्ठका खास अंक निकालना 'दिगम्बर जैन' का ही साहत है। इस अंकमें हिन्दी, गुनराती, अंग्रेनी, संस्कृत और मराठी ऐसे पांच भाषाओंक २८ लेखों और कविताओंका संप्रह है जो सभी पाठकों को कई न कई प्रकारमे रुचिकर ही होगा। विशेष करके तत्वार्थमूत्र संबंधी जस्टीश जे॰ एछ०-नैनी एम० ए० बार एट-ला.का अंग्रेनी लेख अंग्रेनी जाननेवालेको बहुत ही उपयोगी मालुम होगा। चित्रोंके बारेमें कहना पड़गा कि इस बार सिर्फ २ चित्र ही प्रकटकर सके हैं परन्तु यह दोनों चित्र ऐसे हैं कि जो गत वर्षोंके बहुतसे चित्रोंका मामना कर सकते हैं। हमार पाठक अपन महान ग्रंथ श्री द्रञ्य संग्रह, श्री गोम्मदृसारनी, लक्षिमार, क्षपणासार, त्रिलोकमार आदिके कर्ता और श्रीमान् चामुंडरायने समकालीन श्रीमद् नेमचन्द सिडान्त चक्रवार्तिके नामसे तो परिचित होंगे, इसी महादाचार्यके दो हम्तलिखित प्राचीन चित्र नो कुमार बहुत परिश्रमसे प्राप्त देवनद्रप्रसाद्जीको हुए हैं और जिनको उन्होंने श्री दव्यसंग्रह (अंग्रजी अनुवाद)में प्रकर किए हैं, उसीको महोदयकी कृपासे हम अंकमें प्रकट कर सके हैं। आशा है कि हमोरे पाउक इस बार तो इतनेसे ही संतुष्ट होर्बेगे।



30

दिगम्बर नैनका जन्म दश वर्व हुए गुजरात प्रान्तके भाइयोंकी हि-हिन्दी भाषाका तार्थ गुजराती भाषामें आदर । ही हुआ था परंतु शनेः २ इसका क्षेत्र बढ़ता

गया इस लिये हमें भी हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपिको स्थान देना पडा, वह यहां तक कि अब विशेष करके हिन्दी भाषाके हेल ही प्रकट करने पडते हैं। कई वर्षीस हिन्दमें एक ही राष्ट्रभाषा होनेके लिये चर्ची चल रही है जिसको अब तो विशेष अनुमोदन मिल रहा है और उसमें सार हिन्दमें हिन्दी भाषाको ही राष्ट्रभाषाका मान देना सभीको स्वीकृत है क्योंकि हिन्दी भाषा एक ऐसी भाषा है कि निसको हिन्दके सभी प्रान्तोंके लोग तो क्या परन्त विदेशी भी समझ सकते हैं। हमारे लोकनायक छो० ति-लकन भी इसीको स्वीकार किया है आप भी हिन्दीमें बोलने और लिखने लगे हैं, जब आप मराठी भाषा भाषी हैं। दुसरी ओर महात्मा गांधीनी गुनराती भाषाभाषी होनेपर भी हिन्दीका ही आदर कर रहे हैं तो क्या हम सबका कर्तव्य नहीं है कि हम भी नहांतक होसके हिन्दी भाषाको ही राष्ट्रभाषा बनानेका उद्योग न करें ? आझा है कि हमारे सभी पाठकगण भी इसी कार्य प्रणालीसे संतुष्ट हों और हिन्दीको राष्ट्र-भाषा बनानेका पूर्ण उद्योग करते रहेंगे।

गत वर्षमें उपहारके कई अन्ध देने रह गये
है परन्तु इस वर्षमें
इस वर्षके तो श्री महावीरचरित्र,
उपहार। धर्मचर्चासंब्रह, आदि
५-६ प्रन्थ अवस्य

उपहारमें दिये जावेंगे। अनेक कार्यवशात टम बार यह विशेषांक प्रकट करनेमें विलम्ब हुआ और फिर वार्षिक मूल्य वसूल करनेके लियं वी० पी० से विशेषांक भेजे जायं तो फिर और भी विजम्ब हो जाय इमुलिये इमबार तो मभी पुराने और नये बाहकोंको विशेषांक मामान्यरूपसे ही भेजा जाता है उपलिये मभी पुराने और नवीन बाहकोंको आब्रह पूर्वक निवेदन करते हैं कि वे वार्षिक मूल्य १-१२-० शीघ ही मनिओईर द्वारा भेन देवें। यदि किशीको इस वर्षमें ग्राहक रहना अस्वी-कार हो तो वे इस विशेषांकको पढ़कर वापिम भेने या रम करके ही संतुष्ट हो जावें और एक कार्ड द्वारा हमें सृचित कर दें ताकि उनको आगामी अंकमे भेजना बंद किया जाय परंतु मभीको हम चिताये देते हैं कि कागजकी अतीव महँगीके समयमें भी भगवान महावीरस्वामीका बृहत् जीवन-चरित्र (अगले भवों महित) आदि करीन ढाई या तीन रुपयेके ग्रन्थ उपहारमें मिलेंगे जिससे आपको मासिक नैसे सुपतमें ही पड नायगा।



जैसे दान और परोषकारके छिये स्वर्गीय दानवीर जैनकुलमूषण पं अर्जुनलाल सेउ माणिकवन्द्रनी -से हिन्दुस्थानक जै-सेर्राजी। परिचित हो गये

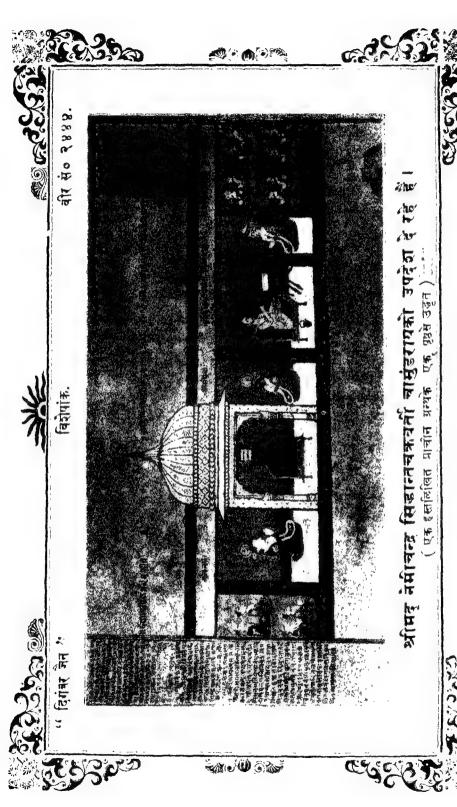
थे उसी तरह जैन सभामकी सेवाके छिये जीवन अर्धण करनेवाले अर्जुनलाल सेठी बी० ए० जैसे बहुमूल्य व्यक्तिको जयपुर राज्य और फिर ब्रिटिश राज्यने विना न्याय नजरबंद कर रक्ता है जिस्से हिन्दके सारे जैनोंमें तो क्या परन्तु समस्त हिंदुस्तान भरमें सेठीजीका नाम परिचित हो गया है। करीब साटे तीन वर्ष तक तो जयपुर राज्यने सेठीजीको जय-पुरमें नजरबंद रवस्वा तब उनको छोडनेके लिये या तो उनका न्याय करनेके लिये हजारी तार किये गये जिसकी कुछ भी सुनाई नहीं हुई तम हमांग वाईमराय महोदयको कई तार और चिहियं भेज गई तो बहुत बरके उत्तरही नहीं मिला और कहीं मिला तो सिर्फ इतना ही कि हम जयपुर राज्यके कार्यमें हस्तक्षेप नहीं करते आदि। ठीक, यह भी सही, अब आगेका हाल सुनिये । नयपुरमें नजरबन्द करनेसे यह तो माफ २ मालम होता था कि सेठी जी जयपुर स्टेटके केदी हैं परंतु गत २० नवम्बरको एक आधर्यकारक घटना यह हुई कि सेठी नीको जयपुर जेल्से मोटरमें बैठाकर जयपुरके रेव्वे · स्टेशनपर लायं गये और वहांसे कहीं भेजे गये जिसका पता कुछ दिनों बाद मालुम हुआ कि सेठी जी तो ब्रिटिश राज्यमें और दक्षिणमें वेद्घोर (मदाय) जेलमें मेने यये हैं। अब जेपुर जेलमें सेठीनीके दर्शन-प्रननके लिये जिनेन्द्र प्रतिमानीका प्रबंध था परंत वेछोरमें ऐमा प्रबंध न होनेसे नैपुर छोडनेके बाद ही सेठीजीने आहारपान लेना त्याग कर दिया और ८ दिन तक बराबर उन्हास किये परंत फिर झरीरस्थिति पर विचार करके सिर्फ दूब छेना स्वीकार किया परंतु विना अन्नाहार किये दिन व्यतीत करने छगे। इस समाचारसे जैन समाजमें बड़ी भारी खल-बळ और अशांति उत्पन्न होगई और सेठीजीकी पतनी और बच्चे जैपुरमें ही चिल्लार्ते रहे!!! ऐसे विकट समयमें सरकारसे पत्रध्यवहार करना और वेलोर जाकर सेठीजीके आहारका प्रबंध कराना कुछ महज बात नहीं थी। उधर समय बीतनं लगा और सेठी नी मूखे ही अपने दिन काटने लगे और शरीर भी कृष होता चला । ऐसी घोर बिगत्तिमें अविश्रांत परिश्रम करनेवाले दो बीर नर बाबू अजितप्रसादनी (लखनऊ) और बाबू भगवानदिन नी निकल आये और आपने खूब आन्दोलन किया यहां तक कि मरकार द्वारा कुछ संतोषजनक उत्तर न मिला तत्र इस मामलेको कोंग्रेसमें आ उपस्थित किया तो इन बारकी क्रोन्ग्रेसकी प्रमुखा श्रीमती एनी विसेन्टने इस मामलेको स्वीकार किया और इस मामलेका प्रस्ताव खुद अपनी तरफसे कोंग्रेसमें उपस्थित किया और सर्वानुमतिमे पाम कराया । इनके बाद श्रीमतीजी वाईसरॉयसे मिछी और वेह्नोर जेलमें प्रतिमाजी रखने और सेटी जीकी पतनी

और बच्चेको मिलने देनेकी स्वीकारता ली तब बाबू भगवानदीनजी जयपुर गये और वहाँसे प्रतिमानी, पत्नी गुलासवाई, पुत्र प्रकाशकन्द्र और तीन पुत्रियोंको हेकर वेहोर रवाना हुए और सोलापुर होतं हुए वेलोर पहुंचे और वहां दोएक दिन: कोशिश करनी पड़ी तन सेठी जीका मिलाप समीको हुआः प्रतीमाजीकी स्थापना जेलमें की गई, सेठी नीने ५५ दिन ५६ वें दिनको (ता० १५ जनवरीको) प्रतिमाजीका दर्शन-पूजन करके अलाहार प्रहण किया और अपने बचोंको जेल-में पहानेकी आज्ञा मिली। अमी श्रीमती गुलाबबाई आदि वहां ही हैं। अत्र सेठीनी-को आहार मिलनेका प्रबंध हो गया इससे अपनेको संतोष कर चुप बैठ रहना ठीक नहीं है। हमें तो अब विशेष आन्दोलन करना चाहिये तब ही सेठीजीका इटकारा करा सर्वेगे। इसलिये दो बातोंकी आवश्यकता है। एक तो यह कि इसके लिये धर्मश्रेमी बाबू अनितप्रसादनीने अजिताश्रमः मक्तमें खाम ऑफिन खोल रनखी है और रात दिन तार चिट्ठि आदिका कार्य होता है निसमें तथा श्रमण और गुलानवाईके निभाव-के लिये खर्चकी आवश्यकता है इसलिये हर-एक स्थानसे कुछ न कुछ चन्दा करके वह मनिओर्डर द्वारा लखनऊ भेजते रहना चाहि-ये । तथा बार २ समा करके उसमें संठीनी-के छोड़ देनेका प्रस्ताव करके वाइमरायको मेजते रहना चाहिये । विना घोर आन्दोलन

किये हमारी सुनाई कभी भी नहीं होगी।
और हमारे न्यायी ब्रिटिश सरकारको हम
एकतर और आप्रहफ़्र्वक निवेदन करते हैं कि
आप चाहे सेठीजीका न्याय करके यदि वे
दोषी टहर्ने तो उचिन दंड दीजिए या तो
छोड़ दीजिए। जन एक शांन प्रमा है और
उममें राजदोहकी गंघ तक नहीं है इमलिये
सेठीजीको छोड़कर जैन-भाजमें फेली हुई अशांतिको मिटाइए। सेठीजीका चित्र हमने इस
अंकमें मुख्यप्रपर इमीलिये प्रकट किया है
कि हमार पाटक सेठीजीको मूल न जायं
और इनको छुड़ानके लिये हरणक प्रयतन
जारी रक्षें।

हमारे एवं दानवीर सेट माणिकचन्द्नीके तीन बाताओं में सिर्फ सेठ नवलचंद्जी। श्रीमान सेठ नवलचंद्नी

मौजूद ये जिनमे भी
हमारे पाटक अन्छी तरहसं पश्चित है वयों कि
गत दाहोदवाल अधिवंशनमें आप ही सम पति
हुए थे और आपका चित्र गत वर्षमें प्रकट
किया गया था परंतु अतीव दुःखके साथ प्रकट
करना पहता है कि अपका स्वर्मशास मगसर
सुद १० ता० २४ दिसम्बरको बम्बईमें ६२
वर्षकी आयुमें हो गया जिससे सेट हीराचंद
गुमानजीके चारों पुत्रोंमें अब एक भी मौजूद
नहीं रहा है। सेट नबस्चं जीकी मृत्युसे
हमको एक धर्मात्मा महा पुरुषको कमी हुई
है क्योंकि आपकी श्री सम्मेदशिखरजी,
मक्सीजी, अंतरीक्षजी, मांगीतुंगीजी आदि



अन्तिम् मन्तिम् प्रस-स्थनः

तीर्थों की क्यांकी अस्ति समस्ति है और स्वर्गीय सेंड माणिक चन्द्र ने समा नसेवाके अनेकों कार्य कर असे हैं के सन आपके ंसंयुक्तमन और सहानुभृतिसे ही हुए हैं। ्यापके दो युत्र मेठ ताराचंद और रतनचंद ुतथा एक पुत्री विद्यमान हैं। हमारी यही भावना है कि आपकी आत्माको सानित, और क्रट्रानको वर्ष प्राप्त हो तथा दोनों प्रत अपने काकानी और पितानीके दानका और . समाजसेवाका अनुकरण करें तथा आपकी विश्ववा श्रीमती परश्तनबाई, भी, अंशना श्रेष समय दान-वर्ममें निरोमन कर मनुष्यपर्यायको सफल वरें। सेठ नवलचन्दमीके शोक प्रकाश-नार्थ वस्वईमें सेठ मुखानन्दनीके सभापतित्वमें दो सभा हुई थीं किसमें एक स्मारक फंड भी स्थापित होकर ८००) भरे गये हैं जिसमें खाम करके हमारे गुनरातक भाइयोंको कुछ न कुछ सहायता भेजना चाहिए जिससे इन सेटजीका भी कुछ स्मारकचिन्ह कायम हो सके। हर्ष है कि आप मृत्यु ममय २५०००) तीर्थोंके जीर्णोद्धारके लिये निकाल गये हैं जिसकी व्यवस्थाका हाउ मिलनेपर प्रकट किया जायगा ।

🛆 हमारी ममात्रमेंसे तैयार हुए अनेक युव-कींका वियोग हो रहा यावू माणिकचद्जी है जिसमें खंडवा नि-वकील-एवंडवा। नासी बावू माणिकवं-ं दुनी वकील बी०ए०

प्रष्ट्र वी का कलकत्तामें गत ता. १७को

अनानम् सर्कावासः अतीवः खटकता है। अस्प 'कंग्रेनी प्रहेलिये, प्यमंत्रेकी, उत्साही नेता और हेलक भी से। आपने अंग्रेजीमें महावीर-चरित्र, स्त्री शिक्षा आदि प्रस्तर्के श्रकट की हैं, भारत नेत महामंडलके मंत्रीका काम भी आपने कई वर्षों तक किया था, और भारत नेन महामेंडरके रखनऊ वाले अधिवेशनके सभाषति आप ही बनाये गये थे। आप जैसे विद्वान और उत्पाही प्रसंबंधी क्षति पुरी होता मेरिकट है। आपकी आत्माको हम शानित चाहत हैं।

गुजरात प्रान्तमं जागृति फेलानेवाली जाम कोई संस्था है तो वह प्रान्तिक सभा। क्यई दिगम्बर जै **प्रान्तिक** सभा ही सभाने आन तक है। बस्बई प्रान्तिक दिखाया 🧷 है कर

प्रतिवर्ष भिन्न २ होनेका है। वर्षमें एकवार आधिवेशन आधिवंशन होनेस ही सभाके रहती है। गत वर्ष तो द हो-चेतनता दके भाइओंने बम्बई और मालवा दोनों प्रान्तिक सभाओं को अपनाई थीं परंतु इस वप अभी तक दोनोंमेंस किसीको कहीं भी आगंत्रण तहीं मिला है। मुना है कि आमोद (अड्डॉन, गुनरात) में प्रतिष्ठा होनेवाली है जिसपर प्रधन्तक सभाको आम-श्रण मिडनेके प्रयत्न चल रहे हैं। आशा है कि आमोदमें सेंड जंडाभाई गोर्यनदास, सेंड

म्हरनीयन रायचंद शाह, सेठ शंकर लाल तापी-दास जैसे प्रान्तिक समामें उत्साहसे योग देनेवाले भीजूद हैं तो आज्ञा है कि आप कोष इस समाको अवस्य अपनार्वेगे और खुनगत प्रान्तको धर्मकार्योमें वि । जागृत करनेका इन्एक प्रयत्न करेंगे।

भा पत्रनी शरूआत अभहायादनी शें प्रेमयंद शेःतीयंद दिगं भर ंदिगं अरु कैन'ने कैन भारिंग उत्तरबी अर्थ स्वतंत्रता. હती अने दश वर्ष थयां आ भारिंग उत्तरश्रीक प्रेडट अर्थ

હતું, એટલે એના નકા ટાટાના નુખંધ બાર્ડિંગ પર હતા. પણ હવે આ બાર્ડિંગના વહીવટ કરનાર હી. શુ. જેને બાર્ડિંગની મેનેજંમ કર્માં પિટ્રેએ આ પત્રના વહીવટ અમન સાંધા દેવાના કરાવ પસાર કર્યો છે, જેથી આ વસ્સથી આ અંકથી આ પત્ર રતવંત્ર માલિકીથી પ્રકટ થય છે અને કરો, જેથી હવે અમદાવાદ બાર્ડિંગ અને રતલામ બાર્ડિંગની નિકિટર્સ કર્મેટિના મેમ્બરોને સ્થના કરવામાં આવે છે કે હરેક પાતાના મેમ્બર પી બાર્ડિંગમાં માકલરી અને આ વર્ષથી તેમણે આ પત્રનું લવાજમ કાર્ય ૧-૧૨-૧ જીદું ભરલું પડશે, જે મતી-આ કરવામાં અને માકલી અમત્રને 'દિમંબર જેને' મંમાવવા વિચાર ન હાય તા તેની ખબર અમાને પત્ર દારા આપવી.

अवस्यकता—रा० व० सेठ हुक्तमचन्द्र दि० जैन महाविद्यालाके लिय विशासन खंडके १० विद्यार्थिओंकी और कंबनबाई श्रामिकाश्रम-के लिये एक प्रपरिन्टेन्डैट बाईकी आवस्यकता है। बाई अनुमधी और ६० वर्षसे अधिक उमरकी होनी चाहिये। पत्रज्यबहार—मंत्री हमारीलाल नैन, जँवरी याग — इन्द्रीर।

न्तन समाचार।

कुशलगढ़नें सभा और कन्या विका यद-वान् धूलचन्द धनराम लिखते हैं कि यहां गन ता । ३ जनवरी हो एक आम समा दरवार सेकेटरी मि शाकं रीप्रसादजीके सभाषतित्वमें हुई थी जिसमें ५०० स्त्री पुरुष एकत्र हुए ये। कुंत रीका श्रादेती बेंगला।)-ने जैनियोंके सामानिक सुघर पर मनोहर व्यारु मन् दिया । तत्पंद्यात् सभापति साहवने न्यारूपान देते हुए कहा कि " अति शोककी भात है कि जं जैन धर्म 'अहिंमा परमोधर्म: की तालीम दे रहा है, उसके माननेवालोंमें ऐसा कृर रिवान क्यों जारी हो रहा है कि वे अपनी प्यारी पुत्रियोंको धनके हाहचसे घर्भके विश्रीत चलकर वृद्ध धनाढ्य आदमियोंसे व्याह देने हैं। वे विचारी अभाग्यनी थोड़े ही समाप्तें विशा हो हर बरबाद हो जाती हैं और नौनवान कौम इस कुरीतिसे धनहीन होकर व्यभिचारमें फंभी जाती है आदि।" इस व्याख्यानका इतना अपं पहा कि सब मज्ज-नोंने प्रतिज्ञा की कि जब तक हम इस कुरी-तिको न मिश लेंगे तब तक यहांसे न हरेंगे। तत्पश्चात् निश्चय हुआ कि आयन्वेसे कोई सल्स अरनी लडकी के विवाहमें लड-के शलंसे दापा (रुपये) न लेगा। फिर ता० १३ को उसी मैदानमें दमरी सभा वहीं सेकेटरी साहबके नमायतित्वमें हुई जिपमें १००० जन संख्या उपस्थित थीं जिसमें

भवने समापति तथा द्ववारीबाईका आभार माना।

रायमा अमें माच सुद ५ को नड़ी चूनवामसे रायमा होगी।

अरिशंबादमें कनैयालाल कालाके सुपुत्रका विवाह धनगनजीकी प्रत्रिसे हुआ निसमें आतिशालाजी वेदयानृत्य कुदेवादिका पूनन आदि न होकर राक्षणमुनकके मंदिरमें १२१) और कचनर पाउशालाको १५) दान दिये तथा ६००) चन्दाके वसुल हुए तथा पाठशाल के लिये १५०) का चन्दा लिखा गया। यहां वैशालमें वेदी भतिष्ठा होने गली है तथा कन्नेरवाली पाटशाला यहां आकर ठीक चल है। ५० छात्र पढ़ते हैं।

इन्दौरकी हुकमत्तन्द बोर्डिंगमें पीप शुक्त ८ मीको सभा होकर बाबू माणिकचन्द्रजी खंडवा तथा एक छात्र हीरालालक मृष्यु पर शोक प्रकट किया गया।

प्राचीन प्रतिमा-चिरगांव (मांसी) में वेतवा नदीके किनारे पर एक मूर्ति नीकली है। प्रतिवित्र पद्मारण्न मनोज्ञ और पाषागके है। आसनमें दो सिंह है, दोनों तरफ इन्द्र चवर खिये खड़े हैं चिन्हसे महावीर स्वामी मालम होते हैं। इसके लेआनेका प्रबंध हो रहा है।

दक्षिण म॰ जैन कोन्फरंसका २० वां अधिवेशन श्री स्तवनिधि क्षेत्रमें सोलापुर निवासी सेठ हीराचंड नेमचंद दोशीके सभा-पश्चित्वमें ता०१०-११-१२ फर्वरीको होगा निसमें केन महिला यरिवद तथा राजकीय विषयक स्वतंत्र परिवद भी ता० ११ को होगी।

अम्बालामें पहा गमाका अधिवेशन ता॰ २३ से २८ फर्वरी तक होगा नित्में भागत दि॰ के। महिला परिपक्त वार्षिक अधिवेशन श्रीमती सुशीलादेवी धर्मपत्नी रा॰ ब॰ लाला सुलतानसिंहनाके सभापतित्वमें होगा।

મહુવા (કાડીયાવડ) ગારકાંક સભાતી રાક મેં વાવિકાત્યન મકરસંક્રાતિને દિતે ભારે કાઠ્યા થયા હતા જે પ્રસંગે સર્વે ૨૦૦૦ માયાને શ્રણ્યારી આખાં શહેરમાં તેનું તહેલ દેરવા તમને ભાવનગર મહારાજા, દીતાન વગેરે તરફ્યા મળેલી રકનનાંયા લાડવા ખવાડવામાં આવ્યા હતા તથા બીજી ૧૦૦) તી મદદ્ધી સર્વે ગાયાન ખડ અને કપાસ ખવાડાયું હતું, મળા એક ખાસ મભા મહેતા ગણેશ વનમા-ળાના પ્રમુખપણાં નં મે યત્ર હતા, જેમાં ત્યે દે વગેરે હંયાઇ આ સંસ્થાના સ્થાપક આધ્વજી રામજી સર્વેયાના આંત્રસામનું વિવેચન થયું

નૃસિંહપુરા ઝાઉના આશરે રું થી કું તે ઉપરંતા એક મહેનતું, પ્રમાણિક અને ચાલાક આદ્રવીની જરૂર છે. રહેવા હથા બોજન્ તની સન્વડ મળશે. પગાર વાર્ષિક પંં) થી ૧૦૦) સુધી તરતજ લખા—સરૈયા બ્રધર્સ જેની-સ્ટાન

शिखरजी केस-पूनावाले मुकद्मा नं २८८ की जो अपील हाईकोर्टमें दायर है उसमें अपनी तरकमं दरस्वास्त दी गई थी कि श्वे छोग जल मंदिगके आसपास परकोटा स्वीनकर हमारी रास्ता रोक रहे हैं तथा



मर्भशालामें उहरने और सेंकोंमें पूजा प्रकाल करने में बाधा करते हैं अतः उन्हें रोक दिया जाय, तदनुसार हाई कोर्टसे धेतांबरीको इंजकसन जारी हो गया है। और पहाइके पट्टे संबंधी मुकुद्दमा नं २७६ की अपील पटना हाईकोर्टमें दायर हो चुकी है उसमें अपनी तरफसे दरस्वास्त दी गई थी कि सरकार धेतान्वरियोंको पहाइ वेच देना चाइती है लेकिन जब तक पट्टेबाले मामलेका अंतिम निपटारा न होवे तब तक पहाइका बंदोबस्त किसीके माथ न किया जाय। अपनी यह दरस्वास्त भी मंजूर होकर इसका हुतम राजा पालगंज पर जारी हो गया है।

मुफ्त केवल >) वर्च मात्र भेजनेवालेको
" बलबर्द्धक वटी " जो कि वैद्यक शास्त्रातुसार उमदा वनन नड़ी वृटियोंसे बनाई है
सीस दिवसकी खुराक मुफ्तमें भिलती है।
पता—सत्येन्दु गुप्त, चंदावाडी—सुरत्।

मोरेनामें मुनिजी-मुनिश्री अनंतकी-तिजी महारान बन्बई, आगरा, शिलरजी आदि होकर आजकल मोरेना (ग्वालियर)में विराज रहे हैं और कई दिनों तक यहां ही उहर कर विद्याध्ययन करेंगे।

ઉપદેશના પ્રભાવ-કાળીસા નિત્રમંડળી અલ્લા છે કે નવા વર્ષને હતે અંત્રેના ઓઇએલ સાયમાં દર્શન માટે અયા હતા લાં સભા કરી ઉપદેશ આપવાથી ગામના માટીદાર તથા ખારેમાં બાઇઓએ કહ્યું કે તમે જૈના જે ભાદરના સુદ ૧૪ તે દિને આપાર ધંધા બધ કરીને એક દિવસની પેંદાશ ધર્મીક કરા તો

અમો આપાં સાત્ર પતિના લાગ્યે કે તે દિવસે કામએ બળદની ખાંધે હું સરી સુકવી નહિ, તે દિવસે કામ ધંધો કરતો નહિ, દાર માંસાદિ પદાર્થીના સેતન કરતો નહિ, દાર માંસાદિ પદાર્થીના સેતન કરતો નહિ. એ ઉપર ચર્ચા થતાં આપ્યેરે જેતોએ ઉચક રકમ દરેક દુકાન દીક ધૂર્માદા કાર્યાનું સ્વીકાર્યું જેવી બધા લાકો એ દિવસે ખાંતીવા પશુ પીઠાનાં કામા છાડી દેવા બંધામા હતા.

સાગ્નમાં દાને-ક્લટજુમાં મુંબાઇવાળા સ્વન્ માણેકચંદ ક્ષાલજંદ ચાકશીન: પુત્ર હીરાચંદના ક્ષગ્ન માગશર શુદ હતે દિતે શ્રમાં હતાં, જેતી પુશાલીમાં શ્રીમતી માણેકળાઇએ ૨૫) હહા-ચર્પાયમ ૨૫) ઇડર પાંદશાળા, ૨૦) મુંબાઇ શ્રાવિકાયમ, ૧૫) કુંચલગિરી આઝમ, ૧૭) મુંબાઇ પાંદશાળા, ૧૦) ભારતદ ક્ષાયળેરી, ૧૧) ઇડેરાં મુંગા સ્કુલ, ૧૦) સત્યાચહાશ્રમ અમદા-વાદ તથા પરચુરણ મળી ૧૫૮)નું દાન માક-લવામાં આવ્યું હતું.

स्व॰ बाब्धन्नृलाल अटर्नीके भतीजे स्व॰ बाब्यपारेलाल स्मरणार्थ

मात्र ॥-)॥ का मनीओईर अथवा टिक्ट भेननेमे २) रुपया मूल्यके अंथ भेंट स्वरूप भेन दिये नार्वेगे। ९०० कापी वितरण करनेका निक्चय किया है, जल्दी मंगवाइये।

ग्रंथोंके नामः—

- १. तीस चौबीसी पूना मूल्य १॥१०)
- २. केलाश यात्रा
- (7)
- ३. ब्रह्मगुञाल कथा

् जिस्वाची प्रचारक कार्यालयः ८ ८, महतमोहन चटर्जी लेव-कलकसी



'सनि'का विशेषां क श्री महावीर मु-निमंडलके मुख मासिकपत्रका साचित्र लास अंक। वर्ष २. अंक १. प्रकाशक कालूराम शिका भी शर्भा, बोदबढ़ (पूर्व खानदेश)। उत्तम बागम और छपाईबाले इस १७५ पृष्ठके लाम अंकमें सेठ राजमलजी जावनर, म्व. दा. माणि-क्ष्यन्दजी, पं. लालन, महात्ना गांधी, सेटी भी, संसारबुक्त, करूपतरुमिनन, व डीलाल मो. शाह अरनक श्रावक और मिथ्यात्वी देव, बाल्लग्न-बुद्ध विशक्तके द्रव्यरिमार्मीके हृद्यद्वान हृद्य, सहेशनकी दुर्दशा आदि १८ वित्र हैं और कुछ ३७ स्टेस्ब और कविताएं हैं श्चितमें भेदभाव कहाँ। है, हमारी वर्त्तभान स्थिति, पायका प्रकाश, हमारे समानकी उन्नति कैसे हो उन्ही पदार्थीका उपयोग, मुनि- सुवारकी भावस्यकता, भाजकलको उपरेशपद्धति, साधु और मुनियोंका कर्चन्य, स्थानकवासी मुनियोंको खुरका पत्र, साधुरा, साधु-वृनियोंका महत्व, क्या कुछ और कप्तर है आदि लेख पहन बोम्य हैं। कागनकी अतीव महँगीके समयमें मी इनना संदर और बहा अंक निकल्ना पहाबीर मुनिमंडलका ही साहप है। इसके संबाहक स्थानकवासी बंध होनेपर भी इपमें सभी हेख तीनों संप्रदायके पढने ये ग्य रहते हैं। यह तो विशेषांक है परन्तु सामान्य भंक भी ३२ प्रश्नीका नियमि। प्रकट होता

है। वार्षि मुख्य २) औ १प अहता हुस्य ॥=) मिउनेका पता-मैनेनर, सुनि, बोदबढ़ (पूर्व खानदेश)

जैन संसार—संगदक प्रेम और उप संपादक नेमिचन्द्र कोठारी। वर्ष २. भंड १-२. वार्षिक मूल्य २=) यह संयुक्त जैन श्वेतांबर वराह शानितक कान्करनसका मुखान्न है। इस १६० पृष्ठींके अंकमें साधुओं, श्रीवर्ती मगनवाई, सेंडोजी आदिके १२ चित्र भी हैं। मुख्युष्टरा चित्र आकर्षणीय है जिसमें नैनवपानक्षी नौकामें दि. थे. और स्थानक-वासी वीनों संप्रदायके साध और श्रावकको नेअये हैं और यह दिखाया है कि तीनों संयुक्त होकर उस नौकाको चलाते रहेंगे तो नौका सं शररूपी समुद्रसे पार हो जायगी और यदि एक भी भिन्न होगा तो नौता हुन न:यगी। लेखों मानव धर्म, रंगे गीरडोंसे बचो, पेनसे जाति उद्धार (बविता), विचार और उकी फिलासफी, भमाशाह आदि पठने योग्य हैं। वर्षिक मूह्य ६=) और इव अंकका ॥)

विश्वविद्या प्रचारक-इस्तऊसे प्रतः शित मिन्त्र मासिक पत्र। वर्ष १० अ. २ और वार्षिक मूरु। १।) लेख अच्छे रहते हैं। इस अक्ष्में मालकीयंजीका सन्त्रित्र जीवनचरित्र पटने योग्य है। मुख्य एष हिन्द् देवीका आकर्षणीय नित्र रहता है।

चंद्रप्रभा-सनावद (नीमार) से प्रकाशित नवीन सचित्र मासिक पत्र. वर्ष १. अंक १. पू. ३२. वार्षिक मूल्य २॥) इस अंकमें म्रतपुरके



प्रतापी राजा सूरजमल जाटका सचित्र परिचय पदने योग्य है। साईज़के प्रमाणमें मूल्य ज्यादह दीसता है।

ज्ञाजियताय-श्रीमान म्वालियर नरे-शके जन्म दिनका यह विशेषांक बहे ५० एष्टोंका और प्राचीन कारीगिरीके २० चित्रों सहित है जिनमें चदेरीके जन मन्दिरका चित्र भी है। कुछ ४४ छेखोंमें ६ इंग्लिश हैं। हिन्दी छेखोंमें कई छेखां महत्वके और पढ़ने बोग्य है। यह साम्ताहिक पत्र राज्यकी ओरसे ही प्रकाशित होता है और इमने अपनी और खालियर राज्यकी प्रनाकी बहुत उन्नति की है और कर रहा है। वार्षिक मूल्य ३) है। पता मैनेजर, ज्ञाजी प्रनाप, लक्ष्कर (ग्वा.)

सुमापित रत्नसंदोह-श्रीमः अमि-तगति आचार्य कृत इस महान् ग्रन्थका हिन्दी अनुबाद पं. श्रीलाल नैन कान्यतीर्थने किया है और नैन साहित्योद्ध रक पं. पन्नाटाटनी वा-कड़ीशड़ने भारतीय जैन सिद्धांत प्रकाशिनी संस्था (विश्वकोश लेन, बाग बांनार, कलकत्ता) द्वारा अभी ही ग्रन्थाकारमें पकाशित किया है। छपाई सफाई और कागन बहुत बहिया है। प्रथम पृष्ठपर संस्थाके लाग सहायक सेठ हरि-माई देवकरण (सोछापुर) के तीन पुत्रों सेठ बाडकंदमाई आदिके चित्र भी हैं। इप प्रत्थ के २८२ प्रद्योंमें ९२२ क्यों क अर्थ सहिद हैं शिसकी बिषय सुची पहनेसे ही ग्रन्थ कितने महत्वका है यह मञ्जूष होता है। कुल ३३ विषयों मुख्य २ निम्न शिखित हैं-संसारिक विषय निराकरण, कोप दूर करनेका उपाय, छोप

दर करनेका उराय, स्त्रीके गुगरोमीका क्रियार सम्यग्दरीन-ज्ञान-चारित्रका निक्रका, सन्ध-नरा-पृत्यु निरूरण, अनिस्यताका प्रणेतः नीव संबोधन, दुर्ज्जन-सडनन निरूपण, दान निरूपण, मद्य-माम-मधु वेश्यासग-द्या निषेत्र, गुरु विवेचन, धर्म निरूपण, शोक निराकरण निरूपण, शौन और श्रावक धर्म निष्रूण, तप निरूपण आदि । इसकी भाषा भी इतनी सरल है कि सामान्य पढ़ा लिखा मनु-ष्य भी इस ग्रन्थका स्वाध्याय करके छाम उठा सकता है। अनेक विषयोंपर व्याख्यान देनेके प्रमाणों में इसके बहुतसे श्लोक कंठाप्र योग्य है। मूल संस्कृतमें तो इस प्रत्यको निर्भयसागर् प्रेप (बम्बई)ने कई दर्षीते प्रकट कि गा है और इमका संन्क्षत भ। वियों में बहुत आदर है परंत्र इसका हिन्दी अनुशद प्रकट करके पं. पञ्चाल.लजीने जैन समाजका बहुत ही उपकार किया है। इतने बड़े प्रन्थका २॥) मूल्य अल्प ही है। हरएक जैनीका कर्तव्य है कि इम ब्रन्थको मंगाकर अवस्य २ स्वाध्याय वर्रे ।

मोहिनी-डेलक, भैथाडाड नैन।
प्रकाशक-प्रेमपुनारी (कुनार देन-द्रप्रपाद), प्रेम मंदिर, मारा। ए. ८३. छपाई सफाई उत्तम और मू. ॥) हमने चार वर्ष हुए 'रूपसुंदरी' नामक प्रस्तक गुनराती भाषामें प्रकट करके पाठकोंको उपहार स्वरूप दी थी उसका यह हिन्दी अनुशद है। इसका मुख्य सिंद्धान्त सियों में शील रक्षाका उपदेश है। शिलके प्रमावसे सी अपनी आत्मिक शक्तिमें कितनी

िन्त्र इसमें पढीमांति दर्शावा है। मावा भी हिन्दी साहित्व मंडार-छलनऊ। सरल है। इस उपन्यासको मंगाकर अवस्य मोक्समार्गकी सबी कहानियाँ-हाम उठाना नाहिये।

The Householder's Dharma (श्री रत्नकरंड श्रावकाचार)श्री समन्त-भद्राचार्य कृत सुप्रसिद्ध रत्नकरंड श्रावकाचार-का यह अंग्रेनी (English) अनुशद बाबू चम्पतराय नै। वेरिस्टर (हरदोई)ने किया है और क्रमार देवेन्द्रप्रसाद नैनने ही सेन्ट्रल जैन पवित्रशिंग हाउस-आरा द्वारा अभी ही प्रकाशिन किया है। छपाई सफाई उत्तम, ए. १२५ और मूहय ॥) इसमें ४७ [एष्ठोंमें तो अनुवादक महोदयने इस मन्थार स-मालोचना लिखी है नो अतीव महत्वकी है। इन शास्त्रीय प्रन्थका अंग्रेनी अनुवाद करनेके छिये जैन समान, बेरिस्टर साहबकी अभारी है। अंग्रेनी पढ़े छिखे भाइकोंका फर्न है कि इस प्रस्तकको मंगाकर अवस्य पर्दे ।

सद्विचार पुस्तकमाला—गवू दयाचंद्र गोयलीय जैन बी. ए. एक हिन्दी साहित्य भंडार स्थापन करके उसके द्वारा इस पुस्तकमालाको प्रकट कर रहे हैं निसके तीन मन्थ (१) जैसे चाही वैसे बन जाओ (पृ. ६०), (२) सुख और सफलताके उराव (ए. ३०), (३) छलकी प्राप्तिका मार्ग (१. ७५) हमारे सामने हैं। यह तीनों प्रस्तक प्रसिद्ध अंधेनी हेसक जेम्स एलनकी पुस्तकोंका हिन्दी अनु-्बाद है। मूल्य कमशः =।।), न्या), और ।=

उन्नति कर सकती है, संसारमें वह कितनी है। इसके पढ़नेसे बहुत 53 जिला मिछ उज्जबक पारित्रा हो सकती है आदि बार्तीकाः सकती है। अवश्य मंगाना पाहिये। पता-

> प्रकाशक, बुद्धुराल श्राप्तक, पाठक, बैन शाला दमोह (ए. ८० और मूल्य 🖘) इसमें सम्यग्दरीनके आठ अंगोंकी आठ कथा, पांच अणुवत और पांच पापीकी १० कथाएं, चार दानकी चार कथा और पुनाके फलकी कथा आदि २३ कहानिया (कथाओं)का संमह सरङ भाषामें संक्षेत्र रूपसे हैं। स्तुष्ट्याय करने और मनन करनेयोग्य है।

> Love-Buds (प्रेम-कली:-नकाशक-प्रेन पुनारी, प्रेन मंदिर-आरा। इसमें कवार देवेंद्रपसादनीन अनेक कविरत्नोंकी प्रेप विषय-दर्शक कविताओं को और कई अंग्रेजी लेखकीं-की प्रेयदर्शक अप्रेजी कविताओं को हिन्दी अनुवाद सहित प्रकट की हैं। पुस्तककी सजावट अवश्य देखने योग्य है। कई विज भी हैं। सारी पुराक बढ़िया छाछ स्वाहीसे छपी हुई है। ए. १५० और मुख्य १) हर-एक हिन्दी साहित्यन्नेमीको ऐसी प्रस्तकका अवस्य संग्रह करना चाहिए।

> हिले**षी गायन-**प्रकाशक, पंजमनीराम नन्तूपल जैन, घरमपुरा, देहली । बालक भनन संप्रहका यह चौया भाग नैनमित्रमंडल देहली ने देक्ट नं० ६ में प्रकट किया है। मूल्य -)

बारहमासा तथा स्तवन संग्रह-प्रकाशक आत्यानंद जैन सभा, अंबाला शहर । प्र. ६३ और मूल्य =) सिर्फ ।

-

देहली शास्त्रार्थ-रेड्ड में गत जुलाई मासमें ६ दिन तक जैनी और आर्यसमाजक बीचमें रुधर कर्तव्या और तार्थंकर सर्वज्ञत्व खंडनमंडन विषयक शास्त्र थे हुआ था जिसमें जैनमित्र मेंडलीकी तरफसे न्यायालंकार बादीमकेशरी पै । मक्खनहारजी शास्त्री (प. अध्यापक थी करवम हहान शिश्व) और आर्यसमामकी तरफसे ब वि तार्किक पं. नरसिं हदेवजी शास्त्री थे। इस ग्रन्थमें इस शास्त्रार्थका निवरण है जिसको प्रकट करके जैनमित्र मंडली, धरम-पुरा, देहलीने जैन समानका बहुत कुछ उपकार कि ग है। इसकी पढ़नेसे साफ २ मालूप हो । है कि जैन समाजकी युक्तियां कि त्नी प्रवह थीं और आर्थणमानके पंडितकी बंकियां कितनी पोत्र थीं। इस शास्त्रार्थसे बेहली मरमें क्या सारे पंजाब प्रान्तमें जैन धर्मका अच्छा महत्व प्रकट हुआ है। ए. ११२ और मूल्य लागत मात्र चार भाना ही है। सबको मंगा छेना चाहिए।

अधिमे सार — प्रकाश ह नाबू पुरन-कृत गों कीय नेन सिंगोडी (छिड़वाड़ा) 2. ८२ और मू. ॥) यह लार वर्ष्या समानकी प्रस्तक है और इसमें पं. शिरोमणिशास कृत कविताओं में धर्मका उपदेश है। माप प्रशानी है।

जैनशिक्षण पाठमाला—काशक-कुनरः मोतीकाल संका-ज्यावर (गनपूनान) है। इं और मूं. क) और पाठशालाओंको ८) सिकड़ा । इसमें २५ पाठोंने विद्यापियोंको पहाने योग्य धर्म, नाति, और व्यवहारिक विव- योंका उपदेश है। टाइप भी बड़े हैं। स्था॰ जैन प ठशालाओं में प्रवेश करने योग्य है।

वर्तमान जैन तीर्यंकर द्र्पण चारे नं. १.-पकाशक मनीराय नन्त्रस्त्रजी, धर्मधुरा, देहली, मूल्य /) इसमें वर्त्तमान २४ तीर्थक-करोंके माता, पिता, वर्ण, चिन्ह, कायकी ऊंचाई, आयु, गणधर, एक दू रे हीर्थकरका अंतर समय, दिक्षा दृश, पूर्व मन, करूयाण-कोंकी तिथि, और निर्वाण स्थानका कोष्टक है। मंगाकर संग्रह करने योग्य है।

आत्मावबोध-प्रकाशन-भारतीय नैन सिद्धांत प्रचाशिनी संस्था,विश्वकोश लेन, बाग बाजार-कलकता। प्रन्थाकार, छपाई सफाई सु-न्दर पृ. १६० और मूल्य ॥-) तेरहवीं दाताञ्दीमें श्रीकुमार नामक कवि होगये हैं जिन्होंने इस प्रन्थको १४९ श्लोकोंका बन-बाया था नियका अनुवाद पं. गमाधरहाल न्यायतीर्थमे कराकर पं. प्रवालाल सकलीवालने प्रकाशित किया है। साथमें अध्यास्य-प्रेमी स्वर्गीय स्वस्ति श्री वीरसेन स्वामी महा-रकता सन्दर चित्र भी है। इसमें संक्षेपमें आत्मा-का स्वरूप बताकर अनेक प्रकारका उपवेदा सरछ भाषामें दिया गया है। इसका स्वाध्याय करनेसे चित्त शांत होकर हृत्य निर्मेख होता है और प्रमार्गेषर चलनेका उपदेश मिल सकता है।

जैन समाज सेवक मंडलकी देक्ट-इन्दौरमें इस नामका एक मंडल स्थापित हुआ है जिसका उद्देश विशेष करके इन्दौरमें कई वर्षीसे पड़ी हुई फूटको मिटानेका प्रयोग जर्मना



है। इपने तीन ट्रेक्ट प्रकट करके उनका सुपत प्रवार किया है जिनके नाम हैं-(१) नैनोंका

धर्म, (२) इन्दौरके नैनियों ! अबके पर्युषण पर्वमें तथा करना होगा ?, (३) इन्दौरका जैन सबाज और फुटका राज्य । इसमें खुब ही तेत्र मावामें फूटको मिट नेका उपदेश दिया है।

षटसंघ-सम्मेळन-प्रकाशक नीर्णीदा-रक जैन तार-मंडल-सिंगोडी (किन्दबाडा) मुल्य -) यह भी तारनपंथी समाजका एक ट्रेक्ट है और इसमें तारनसमाजके ५ संबक्ता बर्णन और कुछ उपदेश भी है।

स्माभंगी नय-यह आत्मानंद जैन देक्ट सोसायटी अंबाला शहरकी २२ वीं ट्रेक्ट है। ए. ३२ और मू. -) इसके छेखक हैं छाठा कन्नी-मल एम, ए. । इसमें सप्तभंगी नयका स्वरूप संक्षेपमें सरछ ऋषसे दिया गया है।

पंच परमेष्ठीके १४३ सलग्रण-(बार्ट नं० ५) यह भी एक बंशरूपी नकशा है जिसमें पांची परमेष्ठीके १४३ मूळ गुण बंशाब्छीके रूपमें दर्शाया है। संग्रह करने योग्य है। मुख्य -) मिळनेका पता-क्रमार देवेन्द्रप्रसाद जैन-आरा ।

कपण-प्रभाशक-भी० एक० सी० डी बैन, शिकोहाबाद यु० पी०। यह एक महसन है। ए. संख्या सिर्फ १३ होनेपर मी सल्य =) के बिक है।

स्वच्या विश्वास-प्रकाशक, कुमार देवे-न्द्रप्रसाद जेन, प्रेन मन्दिर-भारा। इसमें फुटकड उपदेश अच्छा है। मुलपृष्ठ पर बहात्मा गांधीका विव है। छगाई सकाई सुन्दर, ए.

४३ और मुख्य को

बालिका विनय-सम्मादिका एक जैन महिला और प्रकाशक उपरोक्त महासम् ही। ए. ४४, उत्तम छराई और मूल्य =) इसमें बाक्रिकाओं के क्रिये अच्छा उपदेश है। कन्या पाठशालाओं में प्रदेश करने और बांटने योग्य है।

जैनसिसांत विद्यालयकी रिपोर्ट-स्या. पं. गोपाइदासनी बरेया द्वारा स्थापित मोरेनाकी संस्थाकी यह सातवीं वार्षिक रिपोर्ट है । इसमें संस्कृत विभागमें २७ और हिन्दी विपागमें ४ व विद्यार्थी हैं। इसमें से आज तक कई पंडित तैयार हुए हैं। अंग्रेजी भी पहाई जाती है। बोर्डिंगका भी प्रवंध है। आनकर पं. घनाङाङजी अधिष्ठाता और मंत्री पं. खब-चंद्रजी शास्त्री हैं। इसके छिये एक छाख रुपये-के फंडकी आवश्यकता है जिसमें करीय ६०-७० हनार भरे गये हैं : श्रीमानोंका फर्न है कि रोप रुपयेकी शीध पूर्ति कर देवें और विदाः छपके साथ स्वर्गीय पं. गोपाछदासजी बरैयाका नाम मोडफंर पंडितनीकी कीर्ति अमर करें । इस रिपोर्टबाले वर्षमें कल ७ ०६ छ।)। सर्व हुआ है। बड़ा स्थायी फंडन होनंसे श्रीमानोंको मासिक सहायता पहुंचाते रहना चाहिये और छोटे बढ़े प्रसंगीय फुटकल सहायता भी भेतेनी चाहिर।

समन हिन्दी साहित्य सम्मेलन कार्य विवरण दूसरा भाग-इसमें सम्मेलनमें आबे हुए केलोंका संग्रह है। अनेक केल यहने बोरव है। साइज बड़ी ए. २११ और मुख्य सिर्फ ॥=) मिन्नेका पता—हिंद्स्ताः स्वामत कारिणी समाःकार्धावयस्यकेटपुर । ः

सीनागिर—सिबसेत्रकी प्र. संभाका प्रथम वार्षिक विवरण । प्रकाशक—बाबू गीपी आल गोवा—स्टक्स

दि. जैन प्रान्तिकसभा बम्बह्की
१६वीं वार्षिक रिपोर्ट । प्रकाशक—बाबू माणिकवन्द बेनाडा महामेजी, हीराबीग—बम्बई ।
भारत । दि ० जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी
का १२वां वार्षिक विवरण—वीर सं.२४४०का,
प्रकाशक लाला भागमल प्रमुख्याल महामंत्री,
हीराबाग, बम्बई । बहुन शिकायत होनेपर यह
रिपोर्ट बहुत देरसे प्रकट हुई है । इसमें मन
तीर्थोंका हिसाब और शिखरंजी आदिक मुकदमका हिसाब मी है । ८८ एष्टकी यह रिपोर्ट
बिना मूल्य मिलती है ।

दुधगांव शिक्षण प्रचारक संस्थाका छठा बा० रिपोर्ट-प्रकाशक नाना रावनी येड-कर-दुधगांव (मतारा)

जैन अंग्लो वर्नाक्युलर कुल बांदाकी ४थी रिपोर्ट-प्रकाशक नायक रामाराम मंत्री-

ज़ैन पाठकाला सेरठका—बतुर्य रिपोर्ट-प्रकाशक रचुनाथनसाद सोयङ, मेरठ।

दिगम्बर जैन आविकाश्रम मुरा-दाबदकी १९१६-१७की स्पिट-नकाशिका संचालिका गंगादेवी मुरादाबाद। बह आश्रम भी ठीक कार्य कर रहा है। सबको सहापता देते रहना चाहिए। લેખક અને પ્રકાશક મેઠ હીરાચંદ નેમચંદ દાશી-સોલાપુર. પૃત્ર અને કિ. માત્ર એક ઓનો કિ. માત્ર એક ઓનો કે માત્ર એક ઓનો આ અરાઠી પુસ્તકમાં વ્યંતરાની આશા-ધના કરવાથી થતાં તુકશાનાનું વર્ણન દામલા દલીલો સાથે છે. મરાઠી આપા જાણનારે અવસ્ય મંગાવી લેવું જોઇએ.

ભારા રક ચર્ચા – લેખક અને પ્રકાશક – શેઢ હોરાચંદ તેમચંદ દાશી – સાલાપુર, પૃ. કરે અને કિ. એ આના. ખરાદી બાષાના આ પુસ્તકમાં બદારક શબ્દની વ્યાપના અને લહારક કેમ્બુ હોઇ શકે અને લહારકમાં કેટલી યોગ્યતા હોવી જોઇએ, વગેરે દાખલા દલીકો સાથે બતાવી હાલના નામના બદારકાના શિથિલાચારનું વર્ણન કરી હવે પછી બદારક નામ બદલી શ્રહસ્થાચાર્ય નામ સ્થાપન કરવા માટે સંમત્તિ દર્શાવેલી છે જે સમયાનુસાર યોગ્યજ છે.

મસ્તવચનામૃત અને સ્વાનુક્ષવ પ્રકાશ—પ્રકાશક—હરીદાસફ્રે જગજીવનદાસ, લીમડાપાળ, વડાદરા, આ બંતે ટ્રેક્ટા તદ્દન મદ્દત મળ છે.

નીતિની સિખામ — પ્રકાશક સુનીલા લ બાપુજ મેહી, ખપાડિયા ચકલા, સુરત. આ પુસ્તક સુજરાતી સ્કુલામાં ચલાવવા લાયક છે તથા એના હિન્દા અનુવાદ પણ થવા લાયક છે. વિષય તા નામધાજ પ્રકટ થાય છે. કિ. એક આના.

અનાથ વિદ્યાર્થી ગૃદ્ધ-પુતાના આઠમા સ્પિર્ટ-આ અનાથાશ્રમ ઉત્તમ કાર્ય કરી રહેલું છે. એની કાર્યપ્રણાલી અનુકરણ કરવા યોગ્ય છે.

ધી ઇલેક્ટ્રાં-મેટલ રીફાઇનીંગ કે પની લીમીટડ-ના ઉદેશ અને નિયમા- આ કંપનીના સ્થાપના અમદાવાદમાં થઇ છે, એમું પાંચ લાખની થાપણ કરવા ૨૫) અને ૧૦)ના એમ એ જાતના શેરા કોઠ્યા છે. એના ઉદેશ અમદાવાદ કે મુંખાઇમાં તોંબા, પીતસ, માખક, એમન સીક્વર, એલ્યુમિનમ પગેરે ધાલુની વરકામની,



दिगंबर जैन ।

મહાન કામની ચીજો તથા અનેક જાતતા ખારા વગેરે અનાવવા તથા વેચવાના છે. આ ઉદ્દેશ અહતમ છે. અને એ જો માટા પાયાપર સ્થપાય તા ધર્માજ માટા લાભ મેળવવા ઉપરાંત સ્વક્શા વસ્તુને ઉત્તેજન મળી દેશના પૈસા વિદેશમાં નહીં ધંસડાઇ જતાં દેશમાંજ રહે. ગંમે તે રીતે બાંગીકોરને સેંક્ડે સાત ટકોનું વ્યાજ અપ્રમા કંપની બંધાય છે. શેરા ક્ષેત્રાની ઇચ્છા રાખનારે વધુ મહિતી માટે નીચેને સ્થળ પત્ર લખી નિયમા વગેરે અવશ્ય મંગાવવાં-ધી ઇલેકટ્રા મેટલ રીકાઇનીંગ કંપની-રીચીરાડ-અમકાવાદ.

શૈક હીરાચંદ ગુમાનજની સંસ્થા-ચ્યાના રીપાર્ટ-શ્રીમાન લ્વર્ગીય દાતવીર જૈન-કુક્ષભૂષણ શેઢ માબેકચંદજી અંતક સંસ્થાએા સ્થાપા ગયા છે તે પૈષ્ટા જે જે સંસ્થાએન ખાસ પાતાની મદદથી ચાલી રહેલી છે અને જેના વહીવટ કરવા માટે શેઠ હીરાચંદ ગમાનછં બાર્ટિંગના ટસ્ટ ક્યાર્ટિન નીમેક્ષી છે જે બધા વહી ષ્ટ કરે છે અને બધી સાંસ્થાઓના ભેગા રિપોર્ટ બહાર પાટે છે તેનાજ આ ૧૯૧૫-૧૬ તા રિપાર્ટ છે, જે જોવાં જણાય છે કે એમાં (૧) હી. ગુ જૈન બાર્ડિંગ મું યાઇ, (૨) હી. ગુ. ધર્મશાળા (હીરાયાગ) મુંયાર્ગ, (૩) શેઠ માગુકુચંદ્ર પાનાચંદ્ર દિગંબર જૈન બાર્ડિંગ રતસામ, (૪) શૈદ માગેકચંદ હીરાચંદ જુખેલી-બાગ ટરટ કુંડ, અને (પ) શેઠ પ્રેમચંદ માતીયંદ દિમંભર જૈટન એાર્ડિંગ, અમદાવાદના રિપોર્ટી છે. આ પાંચ સંસ્થાએ ઉપરાંત ખીછ સંસ્થાએ પણ જો વહીવટ કરવાનું સોંપે તા તે પણ ઉપલી ૮૨૮ કમીટિ કરે છે. એટલે લગભગ ત્રણ લાંખ ³પ્યાની સખાવતાના વહીવટ અ: કમીટિ કરે છે. સ્થાનાબાવથી અમા દરેક સંસ્થાની સમાક્ષાચના કરી શકતા નથી. જેથી એકંદ્રરે જુણાવીશું કે મુંબાઇ, અમદાવાદ અને રતલામ भार्डिंगथी अलरात भने भागवा प्रांतने भतीव લાબ પહેંચ્યા છે તેમજ મુંબાઇમાં હીરાયાંગ धर्मशाणाना सार्वकानिक खाल ते। जनव्यदेशका

છે. વળી જાણીલીયામ ડ્રસ્ટ કે જે લગભગ અહી લાખની મિલકતનું છે તેની ઉપજમાંથી શેઠ માણેકચંદછ જુદાં જીદાં ખાલાંઓના નિભાવ કરવાની સ્થાયો ગાઢવણ હશે અચેલા છે જે સવેને ધ્યાનમાં લેવા યોગ્ય અને ખીંજન શ્રીમાનોએ અતકરણ કરવા યેડ્ય છે કે જે કામ કરો! મૃતિઓને અતકરણ કરવા યેડ્ય છે કે જે કામ કરો! મૃતિઓને અતકરણ કરવા યેડ્ય છે કે જે કામ કરો! મૃતિઓને અતકરણ કરવા યેડ્ય છે કે જે કામ કરો! મૃતિઓને અતે શાડા મમ્યામાં સ્થાય! તરીક કરી માંય છે. લગભગ ૨૨૫ પાનોના આ રિપોર્ટ દરકે વાંચવા અને વિચારવા લાયક છે. પોસ્ટેજ માટે માત્ર એક આનાની દીકાટ ખીડ પાયા સુપોર્ટન્ડ છે. શે. શેન બારિંગ, તારદેવ, મુંબાઇને લખવાથી મફત મળી શકરો.

સંભાઈ શહેરમાં સામાન્ય અને મધ્યમ વર્ગના જેના માટે સસ્તા ભાડાના અને સુખાકારી મકાતાની આવશ્યકતા સંબંધી પત્રવ્યવહાર:--પ્રકાશક-નરાત્તમદાસં ળીં૦ શાહ, (મેમનવાડા રાેડ-મુંબાઇ). મકતાિના ભાડો મુંબાઇમાં **એટલાં** ળધાં ચઢી ગયાં છે કે જેથી ગરીય જૈતાને ત્યાં રહેતાની અતીવ અગવડતા છે, જેના ભાગ તેઓને ઘણાં સંકટા સંહેવા પડે છે, કેટલાક તા માંદા થઇ દેશ સીધાવે છે, કેંટલાકનાં મૃત્યુ થાય છે તેમજ વ્યાપાર માટેમંત્રાઇ નવા જનારા પાછી પાની કરે છે. આ અગવડા દૂર કરવા ત્યાં સરતા ભાડાંની હવા ઉજાસવાલી ચાલીએ! થવાની જરૂર છે, જે માંબંધી મીંગ શાહ ત્રણ વર્ષ શ્ર્યાં લહોજ પરિશ્રમ અને અર્થવ્યય કરી રહ્યા છે અને એ સંબંધી કરેલી હિક્ષચાલોનો શ્પિર્ટ આ પુસ્તકમાં છે. મુંબાઇ શહેરની વસ્તી અને અરંભ પ્રમાણના અનેકડાએ પણ રજી કરેલા છે. આ ૫૦ પાનાંના રિપોર્ટ પાસ્ટેજ માટે એક આનાની હિકીટ ખીડવાથી મકત મળ છે. શ્રીમાર્નાએ આ બાબત ખાસ લક્ષમાં ક્ષેવા યાગ્ય છે.

શ્રી કુળોઆ પાંજરાયાળના હિસાબ-આ ખાવાંના સંગ્વહાયરના આ રિપોર્ટ જોવાં જેલાંમ છે કે શહેરના અમુક લાગાભાષી એમાં ખાદા દારા પળાય છે. સામ જીવડાઇની ગાઠવણ અતિ ઉત્તમ જસાય છે.

મી ભાજરામર હૈંત વિશાસાળા-(લિખડી) તે ૧૯૬૮ થી ૭૨ તે રિપોર્ટ-સ્થાનકવાસી ખધું આતી આ પાઠશાળા ચાલુ મહાથી ઠીક થાતે છે પણ સ્થાયી ક્ષેડની જરૂર છે.

હશાથી શ્વે. જૈન કેન્ફરસના રિવાર્ટ-મુંભાઇમાં શ્વેતાંખર જૈન કેન્ફરસ ૧૯૧૬ માં ભરાઇ હતી તેના ખધી ખેઠકોના આ સવિસ્તર કેન્કલ છે, જે આપણા દિશભરી બાઇઓએ વાંચીને અનુકરણ કરવા યાગ્ય છે. આવા રિપાર્ટ આપણી મહાસભા અને મુંખાઇ પ્રોતિક સભા ક્યારે બહાર પડશે?

જૈન શ્વે. કેાન્ફરંસના વિધાર્ટ-સં• ૧૯૭૧.

શાંક હોરાયાં ગુષાના તેન બાહી ગ સ્કુલમાં બાલવામાં આવેલું – શાંક નવલચંદ હીરાચંદ સ્મારક ફંડ, દિમાં ભર તેને ના મુદ્ર વાચક વર્ગ,

વિં વિં સાથે લખવાનું કે ઉપરાક્ત સંસ્થા તરક્**યા અરહુમ શેંક નવલચંદ હીરા ચંદની** યાદગીરી કાયમ રાખવાને શેંઠ **નવલચંદ** હીરાચંદ સ્મારક કુંઠ આ સંસ્થાને અંત્રે ખાલવામાં આવ્યું છે.

આપ શ્રી અમારી સંરથા પ્રત્યે સહાતુબૂતિ ધ્રસવતા હૈાવાથી, તેમજ આપ હંમેછ શુબપ્રવૃત્તિ માટે સારી ભાવના રાખતા હૈાવાથી આપને વિનંતિ કરવાની કે આપ મજકર કંડમાં એક સારી રકબ બરી આ સંસ્થાના સુપરીન્ટેન્ડેન્ટના સરનામે માકલી આપવા કૃષા કરશા.

ભરાયની રકમની પહેંચ માકલવામાં આવશે, ત્રેપુજ તેઓ શ્રીના મુખારક નામા 'દિગુખર જૈન' પત્રમાં ખહાર પાડવામાં આવશે.

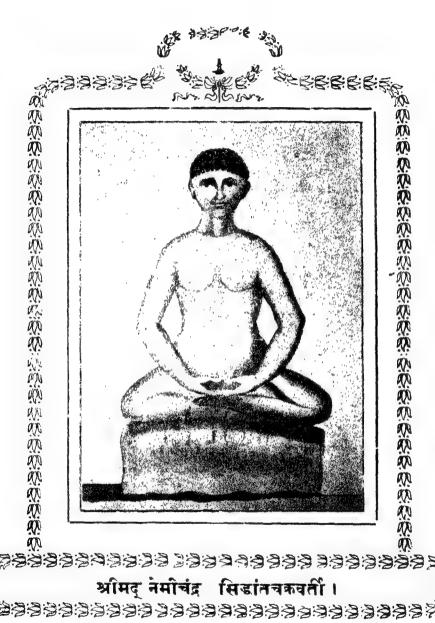
લી• રીવકો. **આસ્તર મગનલાલ દામાદરદાસ.** સુપરીન્ટેન્ડેન્ટ. **રાાલ કાલીદાસ <u>પ</u>્લચ**દ.

સેક્રેટરી, લીટરરી સાસાધ્કા. શેક હી. શુ. **તી**ન બાર્ડિંગ રક્**લ**, તારદેવ-**સખર્ધ**.



सी० गुलाबबाईका आगमन
पं० अर्जुनलाल सेठीनीकी धर्मस्नी सी०
गुलाबबाई अपने तीन बच्चोंको और प्रतियानीको लेकर बाबू भगवानदीननीको साथमें
सेकर नपपुरसे बेलोर ना रहीधी तब मोलापुर
पद्मारी थीं। वहां आपका अच्छा स्वामत हुआ।
था। यहांकी स्त्री समान गुलाबबाईको मिलनेके लिए एकत्रित हुई थी और स्त्रियोंने
सेठीनीके संकट निवारणार्थ रु० ६५०) का
चंदा कर दिया था।

मैनाबाई आविकाश्रम-प्राते पांच माईछपर हिंगणे गांवमें श्री० कर्ने स अनाथ बालि हाश्रम और कन्या महाविद्यालय कई वर्षीसे है और २५० कन्याएँ पहती हैं तथा कालेनके परनक्रय तक पदाई होती है, बहांपर जैन वन्याओंको भी शिक्षा मिळे इम-छिये मोलापर निवासी सेट हरीभाई देवकर-णवाले सेठ हीराचंद रामचंदने अपने माताजी मैनाबाईके नापके वहां जैन वन्याओंके छिये बोर्डिम और आश्रव खोलनेका सहते गत ता. ६ मनवरीको श्रीमती कंक्रबाईके समा पतिस्वमें किया था। सेठमीने वहां बोर्डिंग हाउस खोछ दिया और मासिक दम २ रुखेंकी छ स्कालरिश केन करवाओंके लिये अपनी तरफसे रक्ली है। इनमें सांगड़ीकी मंडलीने १०००), सो० पुलोचनाबाई तेरदा-



7486666666666666666666666666666

(श्री गोमइसार, लब्बिसार, क्षपणासार, त्रिलोकसार, द्रव्यसंग्रह आदिके कर्ता महदाचार्यः)

(एक इस्तिहिखित प्राचीन चित्रमे उज़त)

जैनविजय प्रेस-सूरत.





लकर ५००) और अमृत तबनाया गामहेने पंचवीसे और बीस बीसे माइजोमें बोडी स्वबहार उपार्थ और उनके पाति ऑन्स्सी काम निसके छिये पनिने मिलकर साप अस्तान प्रवेश हो चुकी हैं।

अजैनोंको विनाः मृत्य 🕂 नैनधर्मके विष्यमें अजैन विद्वानोंकी सम्मतिया नामक ट्रेन्ट निम्नलिखित पतेसे कार्ड लिखनेषर मुपन मिलता है। बांटनेके छिये ३) सैकडा है-उपमंत्री, जैनधर्व संरक्षणी सभा-अवरोहा (मुरादाबाद)।

अध्यापकके स्मरणार्थ १००००) का दान-कुवामन (मारवाड)की जैन पाठशा-लामें वृद्ध पं० जिनेश्वरदास्त्रजी कई वर्षीसे उत्त-मतासे पढ़ा रहे थे उनका करीन एक मास हुए स्वर्गवास हो गया है। आपकी योग्यताकी कदर यहां तक हुई है कि कलकत्तेमें आपके लिये शोकसभा होकर उनमें सेठ चेनसुल गंभीरमञ्ज १००००) पंडितजीके समरणार्थ देना स्वीकार किया है । यह रक्ष्म इप पाठशालामें लगाकर इसका नाम 'जिनेश्वादास नैन पाठशास्त्रा स्वसा नायगा। उक्त पंडितनी एक कवि भी थे।

नैनागिरिजीका मेला-गगसर सुद १५को इस क्षेत्रपर मेला हो गया ब० पं० गणेशप्रपादनी न्यायाचार्य, अ० मगीरथनी वर्णी, पं • मुन्न लाहजी, मा, दीपचंदनी आदिके पवारनेसे छोक्समूह भी अच्छा जना था और पर्मोपदेश भी रवून हुआ था। विशेष उल्लेख-नीय बात यह हुई कि गोछापूरव ज्ञातिमें दिये हैं। घन्य है ऐसे दानवीरोंको !

५००) स्वीकार किया । सीठ गोंद्बाई था परंतु कई प्रवीसे बेंटी व्यवहार केंद्र भा करना स्वीकार किया है। अभी तीन कन्याएँ कर छिया कि पंचवीसे मार्थोंके साथ बीस कीसे माई सहर्ष रोटी व्यवहारके साथ बेटी व्यवहार करं-इस मौके पर पत्र सो प्रापंक वंत्र उपस्थित ये और समके इस्तालर हो गये. यानी यह सामान्य प्रस्ताव नहीं परंत अमली प्रस्तात्र हो गया है। और इस सेकेने साग्र जैन पाठशालाके २० और अन्य २० केनोंने विचिप्रवेक यज्ञीपकीत चारण किया। बहां। धर्मशाला बनानंके लिये भी १६५०) का चंदा-हुआ था।

> २५०००) का द्वन-अम्बई निवासी. सेठ नवलचंद्र हीराचंदजीने अपते मृत्यु समय तीर्थोंके जीर्णोद्धारके छिये २२०००) का दान किया है।

श्वेताम्बर कॉन्फरंस और एक लाख रुपयेका फंड-गा मानमें कान्येक के समय कल स्तिनें स्थारहवीं श्रे हो स् जैन कोन्फरन्स बम्बई निवासी सेट खेनशी खीयशीके समापतित्वमें हुई थी जिनमें महात्मा गांधी, छो । तिलक, मालबीयनी आदिन भी पबार कर ज्याख्यान दिया था और बनास्स हिंदू युनीवर्सिटीमें जैन तत्वकी शिलामा प्रबंधके लिये और जैन विद्यायियोंके ठहरने, खानेपीने, दर्शन पूनन आदि है पंचेशके लिये अपील होते ही उसी वस्त करीब १०००००) भरे गये हैं जियमें १२५००) तो समापतिजीने ही

दक्षिण महाराष्ट्र जैन कार्करंस-इस कान्फरंसका वार्षिक अधिवेशन इसवार ता० १०-११-१२ फर्करी (माध वदी १४ से माघ सुदी १ तक) श्री स्वचानिधि क्षेत्र पर होना निश्चित हुआ है। सभापतिका आसन बहुत करके सोलापुर निवासी सेठ हीराचंद नेमचंद दोशी प्रहण करेंगे। अधिवेशनके लिये सब प्रकारकी तैयारियां चल रही हैं।

सेठीजी-कलकतेमें गत कान्ग्रेसर्थे कान्ग्रेसमें पं० अर्जनखादजी सेठीके कष्ट निवारणार्थ खास प्रस्ताव प्रमुखा श्रीमती एनी-विसेन्टने तीसरी बैठकमें अंग्रेजी भाषामें खुद पेश किया था जो सर्वानुवितसे स्वीकार हुआ था । इस प्रस्तावका मावार्थ इस प्रकार है-'यह कांग्रेस वेह्डीर (मदास) जेलमें अन पडे हुए नैन पंडित अर्जनलाल सेठीका मामला सभा-बहुत जरूरी समझकर पति द्वारा अपने धार्मिक सिद्धांतींके कारण उनका जीवन आहार न लेनेसे बहुत संकटमें है, मारत सर्कारसे प्रार्थना करती है कि वे बीचमें परहक्त उपकी नान बनावें। '

'श्रीगंधहस्ति महाभाष्य 'का पता—श्री समंतमदाषार्थ कृत इस महान् प्रन्थानका कहीं पता नहीं था और इसका दर्शन यदि कोई महाशय करा दे तो स्त० दा० सेठ माणिक बंदजीन १०००) इनाम देना प्रकट किया था। हमारे सेठनी तो इस अभिछाषामें स्वर्गपुरीमें प्रयाण कर गये और अतीव हर्ष है कि पं० बंशीय जी न्यायतीर्थ (सोलापुर) को पुनाकी इकान कोलेन लायकेरीमेंसे अन- गार अर्थामृत का पता छगाते ते इस महीन् प्रन्थरानका पता कार्तिक बदी ८ को छग गथा है कि आस्ट्या (युरोप) के खियेना राहरकी लाध्वेरीमें रक्ते हुए दिगम्बर नेन प्रन्थोंकी सुचीमें इसी महान् प्रन्थराजका नाम है। इसकी प्रतिलिपि करनेको पं बंशीधरकी आस्ट्रिंग नानेके लिये तैयार हुए हैं जो महा युद्धके अनन्तर जा सकते हैं परंतु वहां नाने आने, ठहरने आदिके लिये एक फंडकी आक्यकता है जिसमें १०००) तो सोलापुर निवासी सेठ हीराचंद अमीचंद शाहने देना स्वीकार किया है। करीब दो वर्ष तक ठहरने पर ही नकल तैयार हो सकेगी जिसमें बरीब १९०००) लगना संभव है। श्रीमानोंका फर्न है कि इसका शीध ही प्रबंध कर देवें।

भारत जैन महामंडल और जैन पोलीटिकल कान्फरन्स —हमारे भारत जैन महामंडलका वार्षिक अधिवंदान कान्येपके समय कलकत्तेमें श्रीमान् नैनधर्मभूषण ब० शीतलप्रसादन के सभापतिस्वमें समारोहके साथ हुआ था। इसमें लो० मा० तिलक और दादासाहर खापडेंने भी पधार कर बक्तता दी थी। सभापतिका विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान अन्यत्र प्रश्ट किया है जिसको हमारे पाठक अवस्य २ पर्डे। कुछ ११ प्रस्ताव हुए थे जिनमें सबसे महत्वका प्रस्ताव रोठमीके बारेमें था जिसको यहां हम अक्षरशः प्रकट करते हैं-'यह मंडल अपनी गाड श्रद्धा और दह विश्वा-ससे प्रकट करता है कि पंडित अर्जनलाल सेठी सर्वतया निर्दोष, धर्मपरायण, शिक्ष प्रेमी,

दिगंबर केन ।

भैन जातिके नेता पंडिन हैं और भाशा करता है कि इस असीम राजनक और शांतिकत चुक्चपाती जैन मातिक हदयको शांत करनेके अर्थ मारत सर्कार पं० अर्जुनलाल सेटीको नन-रबन्दीसे शीध ही मुक्त करके अपना कर्तव्य पालन करेगी और भवतक कि वह मुक्त न किये जार्बे उनको किसी ऐसे स्थानपर नहां दिगम्बर जैनियोंकी संख्या पर्वाप्त हो, रक्खेगी जिसमें वह अपना धर्मपालन करते हुए शरी-रक्षा कर सके। भारतवर्षीय समस्त जैन जातिको यह मानकर घोर सन्ताप हो रहा है कि २० नवम्बरसे पंडित अर्जनहाल सेठीने भोजन नहीं किया है क्योंकि उनके मूर्तिपू-जाका कोई प्रबन्ध बेलोरमें नहीं किया गया जहां कि वह आजकल नजरबन्द हैं। समस्त जैन जाति और यह कान्फरंस देशनेताओंसे निवेदन करती है कि वह शीघ ही उचित प्रबन्ध करके इस जैन जातिके नेता और पंडि-तको ननरबन्दीसे मुक्त करा कर उनके कुट्-म्बियों और जैन माइयोंको शान्तहृदय और चिर अनुब्रहीत करें।"

जैन राजकीय कान्फरंसका प्रथम अधिवेशन भी इसके साथदा । सा० खावडेंके समापतित्वमें हुआ था जिसमें सभापतिने जैनोंको खास उपवेश दिया कि व राज्यकीय कार्योमें अवश्य हस्तक्षेप करें, इसीसे ही वे उन्नति कर मुकेंगे। इसमें सेटीमीका उपरोक्त प्रस्ताब और कान्प्रेस तथा मुक्लिप लीगकी स्वराज्य स्कीमको स्वीकार करनेका ऐसे दो प्रस्ताव खास पास हुए थे।

बम्बईमें सुनिजी-पुनिधी अनन्त-कीर्तिनी महाराज यात्रार्थ शिखरजी जा रहे थे तब तार १४--१२--१७को तीन दिन बम्बई ठहरे थे। मुनिजीके दर्शनके छिये खब मीड रहती थी। आपने एक दिन हीरामगर्मे श्राविकाश्रमकी बाइयोंसे आहार प्रहण किया या और एक दिन सेठ मुखानंदनीके यहां आहार ग्रहण किया था । इनके निरंतराय आहार होनेपर हमारे धर्मप्रेमी और दाती सेठजी इतने आनन्दि हो गये कि आपने उसी वक्त ३१००) धर्मकार्यके छिये अलग निकाले। ता ॰ १४को हीरावागमें मुनिजी-का धर्मी देश हुआ था। नग्नाबस्या होनेपर पुलिस कमिश्नरने राजकीय कानूनसे महा-राजको बाहर आनेकी आज्ञा नहीं दी। इसके लिये पूरा २ आन्दोलन होना चाहिए और जैनी साधुओंको आवागमनमें बाधा न हो इस प्रकारकी आजा सरकीरसे ली नावे।

स्वास उपदेशक-स्व॰ दानवीर सेठ माणिकचन्दनीके ट्रस्टके अनुपार् भाणिकचन्द हीराचन्द उपदेश ह संस्था मधापित होकर कःर्य प्रारंभ हुआ है। अभी पं वर्षे बेलि शास्त्री महाराष्ट्र प्रान्तमें दौरा कर रहे हैं। इसके मंत्री सेठ रावजी सखाराम दोशी सोलापुर हैं।

सवालाख रु० का दान-वस्तर्क श्वे० जैन सेठ खेनशी खीदशीने १०१००१) निराश्चितोंको अन्न तथा वस्त्रशनमें, ५००१) कच्छी भैन वे हिंग, ५००१) कच्छी जैन बालाश्रम और १००१) फरम्युरान कालेनको मिलकर करीन सनालाख रुपयेका दान अभी ही किया है।

कान्यस्य अमेर केन्द्रि-आमामी वान्ये- स्वाभा-श्री कवनरजीके गत मेहोबर महारा-्म बेह लीमें करने का आमंत्रण देहलीके भाइ- श्रीय खंडेलवाल दि॰ नैन पंच महासमाका ७--श्रीकी ओस्से हमारे आ० रायबहादर बाब मजिस्ट्रेटने सुलतानसिंहजी रईम व आ० किया है और अभी ही दहलीमें देह ली और अजमर प्रान्तके छिये प्रांतिक कान्ब्रेस कमिटी स्थापित हुई है जिसके सभा-पति हमारे रायमाहब बाब प्यारहालनी वकील और एक उपस्थापति रा० बा० मुल्ना-सिंहजी ही नियुक्त हुए हैं। यह मार्ककी खबर है। र्**ा रायबहादुरका अपमान**-कलकतेसे देहें की स्टेशनपर आते ही रा० व० लाला संज्ञतानसिंहजीका एक गोरे सैनिक अपसरने अपमान किया था जिसके उपर रा० नं० ने मुरह्मा चलाया तो देहलीके गनिस्ट्रेटन ्द्रप्त गोरे अपतरको २५) जुर्माना किया है। इम मामलेमें रा० बहादुरकी ओरसे चार बकील उपस्थित थे, लोगोंकी बहुत भीड़ थी और सबको आशा थी कि मजिस्ट्रेट साहब ् बहुत कड़ा दंड देवेगा नयों कि उस अफ्सरने , बिना कारण रायबहादुरके मुहपर धूमा मार धर . बक्से तकको खुर २ कर डाला था और मुंह-पर इना भी की थी।

महासभाका अधिवंशन आगामी ता॰ -२७--२८ को अंबाला लावनीमें उत्सवक सभय होगा, जिस बख्त मारत० दि० जैन महिला . पश्चिद्र आधिवेशन होना भी निश्चित हुना े हैं जिसके छिये श्रीयनी पगनवाईनी प्रयास ं कर रही हैं।

कचनरेजी मेला और खंडेलवाल

ं ८ थें। बार् अधिरेशन खंडेल्याळळळमचण पं बन्नाडाङजीके सभापतित्वमें हुआ था निसमें नाति सुधार संबंधी अनेक अपकेगी प्रस्ताव हुए और कन्ननेर पाठशालाके छिये ५०००) हा चंदा हुआ था और कवनेर पाठ शालाका स्थान बदलनेका निश्चित हुना मो अमलमें आ चुका है यानी अब यह पाठशाला औरंगाबादमें लाई गई है नहां अच्छा सुमीता है।

श्री हस्तिनापुर जीने कार्तिक श्रुक १५ वर मेलेके समय श्री ऋवभ ब्रह्मचर्याश्र-मका वार्षिक अधिवेशन हुआ था निसमें आश्रमकं लिये १६००) का चंदा हुआ और आध्रमका स्थान सवानेसं लेनानेका निश्चय किया और वहीं मकान बनवानेके छिये १००००) की सहायता सेठ हुक्तमक्यनीसे हैनके लिये इन्दौर डिप्युटेशन लेन नेका उराव हुआ था। आश्रमके अधिष्ठाता ब्रह्मनारी शीत-लप्रसादनी और उपभिष्ठाता वर्गेदनलालनी हए हैं।

यस्वई आविकाश्रमको अनम्रिन-वासी रा० व० संठ नेमिचन्द्रजीकी ओरसे १००१)की सहायता प्राप्त हुई है।

सेठी अर्जुनलालजीके संग्र निशर णार्थ पालीताणाके धर्मप्रेमी वृद्ध मुनीय घर-मर्बद्जीने १००) दिये हैं। हमारे श्रीमार्गीसे तो हमारे मुनीमनी नद गर्मे। जाति प्रेम इसीका नाम है !

दियंग जैन ।

उत्रांक्क वृषी इस वृष्मेस सब प्रका-रका उत्रर आया होता है। सिर्फ आय आनेका टिविट मेजनेस सुफत मिलनेका पता—प्राजशाह कनैयालाल पाटणी—कांबी (अहमदनगर)

રાક-ઇકરની પાઠશાળાના અધ્યાપક ભાઇ ના ક્ષાલાલ સો બાયચંદ ગત કાર્તક વદ ૮ તે દિને પ્લેમથા આચિંતા મૃત્યુ પામવાથી એ માકશાળાને તથા ઇકરના બાઇઓને એક જૈનધર્મ પ્રેમી ઉત્સાહી વધુની ખાટ પડી છે. આ બાઇ ધર્મના જાયુકાર તથા ગુજરાતી જેન સાહિસના હહાર માટે ઘણા પ્રયાસ કરતા હતા. અદિ પુરાષ્ટ્રનું રાજરાતી ભાષાંતર એએ લખી ગયા છે, જે પ્રકટ થતાની જરૂર છે. શું કોઇ ઇકર નાજ પાંધુ આ પ્રનથના ઉદ્ધાર ભાઇ નાથાલાલના સ્મરભાર્થ કરી એના મકત ફેલાયા નહીં કરે શ

मेरठ पाठशालाके लिय शिका-यत-स्यामहुन सलाल जैन बेंकर मेरठ शहरसे 'अच्छी सुझी' शीर्षक चिट्ठीमें लिखते हैं कि-यहांकी दि॰ जैन पाटशालाके कार्य-वर्त्ताओं में मुख्य भाग अजैनोंका है, वार्मिक शिक्षा बरावर नहीं होती है, शुद्रोंके छडके क्यों लिये जाते हैं! अब कार्यकर्ता जैन समानसे ५०००) मांग रहे हैं और स्कूलको . सर्कारमें रिकामाइज्ड करानेवाले हैं। क्या समान इसके बारमें कुछ विचार न करेगी और अपनी एक वार्मिक संस्थाको इस तरहसे स्वोक्तर सद्धके लिये पश्चाताप करना पर्सद करेगी? मैं तो समझता हूं कि कभी नहीं। समान विहा विचारे चन्दा देनेके लिये तैयार नहीं होगी किन्तु सुपंषरध करनेके छिये विवार बरेगी ।

एक लुसप्रायः तीर्थके भू ← → भी उद्घारकी आवश्यकता। करोड़ों रुपयों की संपत्ति सरकारके पास जाती है।

तारीख १० नवम्बरको तीर्बक्षेत्र कमेटीकी एक चिट्ठीसं मालूब हुआ कि 'देवगह तहसील लिलवपुर जिला झांसीके जैन मंदिर संयुक्त प्रान्तकी गर्वनमेंट अपने अधिकारमें लेती है। इस आज्ञाका विरोध झांसीकी जैन पंचायतसे होना चाहिये " तदनुपार में उसीदिन देवगहको अपनी आंखोंसे प्रत्यक्ष देवकर परवात उचित कार्रवाई करनेके लिये देवगढ़ रवाना हो गया। देवगढ़के लिये जावलीज जी. आई. पी. आर. क स्टेशन पर उत्तरना पड़वा है। जाललीन गांव स्टेशनसे १॥ माईल है बहांसे द्वमह गाड़ीके मार्गसे ८ माईल और पैदलका मार्ग ६ माईल है।

देवगढ़ गांबसे रावत लोग पहाड़पर मंदिर बतलानेके लिये मिन्न जाते हैं। पहाड़ बहुत ऊंचा नहीं है, श्री सोनागिरजीके समान ऊंचा समझना चाहिये।

देवगढ़का वर्णन।

देवगह की ऊंबाई तय करने पर एक दर वाजा मिलता है। यह कोटका द्वार है। कोट और द्वार दोनों ही खंडित हो रहे हैं। द्वार से बलकर आध माईलके फासले पर एक और पोट मिलता है। यह कोट मंदिरोंको घेरे हुए या पर अब थह भी घराशायी हो रहा है। इस कोटके अंदर सैकड़ों जैन दिगम्बर मंदिर हैं। लाकों जैन मूर्तियां है। मूर्तियां ऐसी मनोहर हैं कि मैंने तो आज तक इस अवयव-की नहीं देखीं। आधीसे अधिक मूर्तियां अखंडित हैं। एक पाषाणका सहस्वकुट बेल्या-ह्य है। बड़ा मंदिर शान्तिनाथ भारतावका है। दिगंदर जैन।

शान्तिनाथ स्वामीकी १२ फीटकी ऊंची खड़-गासन मृति है। ६-७ फीटकी कई हैं। एक १० फीटकी भी है। वरीन आधी मूर्तिये खड्गांसन हैं। शान्तिनाथकी मूर्ति अतिशवनात भी है। माखलीनक बढ़ बढ़ नैनियोंका कहना है कि इम मूर्तिको शिरके उपरका क्षत्रका पत्थर एक अंग्रुखके फासलेपर था पर अब वह २ हाथके फानले पर है. अर्थात् मृतिं छोटी होती नाती है। यह उन छोगोंका कहना है कि जिन्होंने एक अगुलका फासछा अपनी आंखसे देखा है, किन्तु भगतछ भागमें कुछ अन्तर नहीं पड़ा है। मूर्ति एक मोंहरेके अन्दर है इससे इस मंदिरका नाम मुसभंदिर भी है।

बढ़े मंदिर सब समूचे माल्य होते हैं कुछ मरम्मतकी ज़ब्सत है। किवाड नोही किसीमें नहीं है। दो मंदिर दुमंनले मी हैं। मंदिरॉपर पुरानी चित्रकारीके बड़े अपूर्व नमूने हैं। दो पाषणके मानस्थंभ मी हैं। इनपर उत्तरकी ओर चारों ओर चार मृतिएं हैं। एक मंदिर पर संबत् १२०५ निर्माणकाल लिखा मिला है। दो और मंदिरोंपर भी सम्बत देखा है, पर वे इससे प्रराने नहीं हैं। आउसी वर्षके पुराने मंदिर अभी तक समूचे रहनेका कारण यह है कि यह सब मंदिर पापणके बने हुए हैं। कुछ शिशलेखोंकी नकल पं. नवारलाल शास्त्रीनी नकल करनेके लिये अपने साथ है गये हैं, अभी वाषिस आया नहीं। शास्त्री नी नैनगज्दमें अपना छेल प्रकाशित करावेंगे उसमें कुछ बिलालेखोंका विवरण पढ़नेकी मिल जायगा। छोटे मंदिरोंको अधिकांदा गिर पहनेसे अच्छी र मनोज्ञ और असंदित मूर्तियों की बहुत

दुर्दशा हो रही है।वे मैदानमें इबर उधर बिलरी पड़ी हैं। वरसातमें काई जबनेसे, आच्छादित हो जानेसे, मूर्ति-योंसे रूप रंगमें भी अन्तर पहता जाता है। शायद इसीसे सरकार इनको अपने अधिकारमें लेना चाहती है। यह इरादा सरकारने एक दफा पहले भी किया था और ३५ मूर्तियें लखनऊके अनायब घरमें लेनाना चाहती थी पर यह जालछीनके पंचीके उज करनेसे बन रहीं, किन्तु इन्होंने अपनी आर्थिक अवस्था अच्छो न होनेके कारण उन्न वक्तसे अवनक मंदिर और मूर्तियों की रक्षाका कोई प्रबंध नहीं किया इससे सरकारको पुनः अपना हुक्म निका-ल्ना पड़ा है। यदि अब भी इनकी रक्षाका प्रबंध न हुआ और उल्लक्तरीके वर्षडमें केंद्र रहे तो कोई परिणाम नहीं निक्लेगा। अंग्रेज सर-कारक यहां मरहठी विस-विस नहीं चलती । वह आपकी दोलमपोल देखकर अधिकार नमा लेगी नैसा कि उसने अभी माफ तौरपर छिल दिया है " सरकार अनन अधिकारमें लेती है, कोई बिना सरकारी आज्ञाके उनके रूप रंगको न बद्छे और न उनके आसपास कोई नया मंदिर बनावें ' ऐसा हो जानेसे आपको पूना बंदना करनेमें भी अनेक प्रकारकी बाबांएं उपस्थित होंगी। मूर्तियोंको छलनऊके अनायभवरमें ले नानेसे भी आप नहीं रीक सर्केंगे । जितना रुग्या अब उनकी मरम्मतमें लग सकता है उनना रुगया पीछे उन्नदारीमें खर्च कर देनेसे भी उनका मिलना कठिन हो नायगा। अतः शीघ चेतिये, अपनी करोडो रुपयेकी सम्पत्ति-की रक्षा कीनिए। प्राचीन मंदिरका जीणींद्वार



3

करा हैनमें नये मंदिरके बनका देने जैसा कुछ होता है इसको ध्यानमें रखकर सिगई, सैठ और श्रीमंत सेठोंको इस अतिदाय क्षेत्रकी रक्षा करनी चाहिए।

केवल २५-३० हजारमें सब मरम्मत हो भाषगी, किवाइ जोडिए भी लग जांग्गीं। किन्तु खंडित मूर्तियोंके लिये एक व्हींपर अजायकार और कोटकी मरम्मतके लिये तथा एक नीचे धर्मशालाके लिए अलग रकम-की नहारत होगी।

यह स्थान बड़ा रमणीक वेतवा नदीके किन:-रेपर है। इस किनारेको घाटी कहते हैं। सुना है घाटीमें एक पत्थरमें ७ दि० जैन मूर्तियें खुदी हुई हैं। यहांपर पांडवींकी मी मूर्तिएं हैं तथा एक शिवालय है। किन्तु पहाड़वर सिशाय निनके दूसरे मतकी कोई मूर्ति नहीं है। इससे यह स्थान बास्तवमें देवगह तो है ही पर नैन गढ़ भी कहा जासकता है । मर-म्मत हो जानसे आशा है सरकार वहानक पक्की सहक बनवा देगी और पहाड़के नंगलार कुछ असेंसे कायम किया हुआ अनना अधि-कार भी एठा लेगी। इनसे पुनः कहता हं कि एक अतिशय क्षेत्रका उद्धार की जिए, करोड़ों रुपयोंकी प्राचीन कीर्तिकी रक्षा की निए और जैनसमानवर अपने देव स्वानोंकी रक्षा नहीं करनेका घटना मत लगने दीजिए।

जिनको अपने धर्मका और द्रायके सदुर-धोगका अनुराग है उन्हें देवगढ़के मंदिरोंकी स्थाके लिये शीध एक बड़ी रकम निकालनेकी तीथक्षेत्र कमेटीको सूचना करनी चाहिये।

विश्वंभरदास गार्गीय, शांसी छावनी।

हादशानुष्रक्षा

(वसन्ततिलका) तू देख खोडध्य अन्तर दृष्टि ज्येरि रे थे नो कभी पुत्र गये नहिं आत हैं के दे छोड मान मनका जम है अनिस्यः व्यर्थ कदर्थयसि कि सर-जन्म मित्र ॥१॥ है मीतका तुजन आ वनता नकारा, कोई नहीं तन नना सकता किसीको । कर गणकारि जगमें कर कार्य नित्य. व्यर्थ कदर्थयमि कि नर-जन्म मित्र ॥२॥ ये देव नारक पशु नर योनि भाडे. तूने घरी बहुन हैं अरु हैं गैंबाई 1-त मान है, सफड़ हैकर एकको तौ. व्यर्थ कर्र्थयसि कि नर-मन्य मित्र ॥विश्व मा, बान, बन्धु, सुन, दार, व दास, स्वामी, सम्बन्ध कोई इनसे तेरा नहीं है। आप मुलाय फॅस नित्य मनस्वमें तु व्यर्थे कटर्थयसि कि नर-जन्म मिश्र ॥४॥ त् है निय्नर जिने प्रतिशास्त्रारे ? होता शरीर वह भी तुझसे निराला। तुएक मान जिनको अरु देह को है ? व्यर्थ कदर्थयसि कि नर-जन्य मित्र ॥५॥ दुर्गन्ध युक्त नित्र है यह देह तेश. या यों कहो कि मल-मूत्र भरा घड़ा है 🌬 हो बाबला रम मला इनमें सदा तु. व्यर्थ कट्रबंदिस कि नर-नन्य मित्र ॥६॥ मिध्यात्व, अन्नत, प्रमाद कवाय योग, ये हैं महा दुखद आस्त्र रूप माई। ले शीव रोक इनको करके प्रयस्न,

उपर्ध कदर्थविस कि नर-मन्म मित्र ॥७॥०

है कर्म संबरण ही हालका निवान, हो बादमें न जिससे परतन्त्र आत्म ! है कर्म रोक सहते भव खो गये तू-स्वर्ध क्टबेंग्रिम कि नर-जन्म मित्र ॥८॥ ज्यों योगसे अनलके नल नष्ट होता. त्यी कर्मके प्रचयको शुभ ध्यान खोता । सद्भानसे बिमुख हो, कर पाप कुरण, व्यर्थ कटर्थयसि कि नर-जन्म मित्र ॥९॥ दोनों पसार पद और विटि घार हस्त. ज्यों हो खड़ा मनुन त्यों यह लोक चित्र । त भेष धार "इसमें कर नित्य नृत्य, व्यर्थ कद्र्थयसि कि नर-जन्म मित्र ॥१०॥ सारे प्रयोग यदि जीवनमें मिलें भी. पाया विवेक नहिं तो फिर व्यर्थ हैं ने । तु आत्म बोध नहि पाकर मूर्वतासे, व्यर्थ कदर्थवसि किं नर-जन्म मित्र ॥११॥ जैनेन्द्रसे कथित, सत्य-धक्त धर्म, शान्ति, क्षमा, विनयमूल, प्रशस्त-कर्म । है चीघ धार मनमें करके प्रवतन. व्यर्थ कदर्थयसि किं नर-जन्म मित्र ॥१२॥

मोह-नामको नकुल-सम, बारह भावन सार। भाकर नर पा अमरपद, हो जाते भवपहर ॥ नीट नं० १—प्रत्येक छंदके चतुर्थ चरणमें यह यह मी बोला जा सकता है—'' खोबी निर्श्वक नहीं नर-जन्म मिश्र ''

तोट तं० २-- "व्यर्थ कदर्थयति किं नर- जन्म मित्र ? " इस समस्याको प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद प्. गोषास्टदासजी प्रायः कभी २

बोला करते के, जीत इसको बनांकर देखीने अपने एक मित्रकी निकट समस्याको हरू किसा या, उसी समस्याको लेकर मेंन नारह भावन्नाके रूपमें यह तुकवन्दी की है, पटले गुक्काके लगानेमें '' जैनमित्र '' में ''समस्यापूर्ति'' की भी कुछ चर्चा रहा करती थी, जिससे पाठ-कोंके मनोरंजनके अतिरिक्त निवारी प्रेयोंका भी लिखने पढ़नेका उत्साह बढ़ता था, शिक्षित महाशयोंसे निवेदन है कि इस प्रथाको किर चलानेका यत्न करें। इस उपर्युक्त समस्याकी पूर्ति चीन, श्रंगान, करणा आदि कई रसोंकी रचना हारा हो सकती है, इसल्पि यदि कोई महाशय इसपर लिखनेकी कृषा करेंगे तो बहुत उत्तम होगा।

निवेदक-उपरावसिंह न्यायतीर्थ ।

बारगांचमंज (अकाला)के एक भौरामें प्राचीन मन्दिर है जिसकी द्या पड़ी शोचनीय है। इसमें ११ म्वड्मापन और १९
९द्यासन प्रतिमा अति प्राचीन हैं: उठारसे मन्दिर
गिरमर मैदान होगया है। इसमें इसके जीणींद्वारकी आवश्यकता है। यहाँ परले परतवाड़ाबाले खंडलवाल महाश्यमं आका १८९०)
चंदा किया था जो मेर पास है जिसमें २००)
मैंने भी दिया था। और विदोष महायताकी
आवश्यकता है तब ही कार्य शुरू हो सकता
है। परतवाड़ाके और उपके सम्मासके खंडेह्वाल भाइयोंको इसकी पृत्ति करना नाहिये।

गंगाधर अजमेरा,

बोरगांव मंजु (अकोला)

ANALYSIS OF TATTVARTHA SUTRA.

ВY

Justice J. L. Jaini M.A., M.R.A.S., Bar-at-Law, Judge High Court, Indore.

The book is an exposition of the 7 Principle of Jainism, i.e., the 7 Tuttvas. The opening sutra serves the purposes of an Introduction, Justification and Recapitulation of the whole book. It was necessary to indicate the position of the Principles (Tatter) in the whole range of Jaina Knowledge. They are the subject-matter of right belief, and the relation of the two cannot be appreciated fully, unless we consider the position of right belief in the scheme of Jaina philosophy. This position is indicated by the first Sutra. This brings us to the Justification also. The first purpose of everything Living is Happiness. Happiness to be worth anything must be eternal, faultless and independent. Such happiness is identical with the Juna conception of Liberation. Right belief in and right knowledge of the 7 Principles, along with a life led in the light of the knowledge, and firmly established on the basis of the belief is the sole threefold one path of final and everlasting deliverance. Thus the first Sutra is a justification of the book which deals with these basic principles of belief and action. It is also a Recapitulation, because the whole book can easily be seen to be merely an expansion of the various aspects, details and developments of this mighty and all comprehensive Sutra of Jainism.

The ground-plan of the book itself admits of analysis as follows.

The whole book consists of 357 Sutras, divided into 10 chap ers with 35, 53, 39, 42, 42, 27, 30, 26, 47, and 9 Sutras respectively.

Chapter I.

Sutra 1 introduces the Subject.

- , 2 defines Right Belief.
- , 3 gives the two means of acquiring Right Belief.
- 4 developes the definition of Right Belief, and gives the names of the 7 Principles.
- " 5 gives the 4 different senses in which there names may be employed.
- ., 6-8 develop the modes of acquiring Adhigama (Right knowledge).

 Sutra 6 gives the two means of acquiring it.
 - " 7-8 give the modes of employing these two means.
- n 9-32 deal with Pramana, the first means of acquiring knowledge (Adhigama.)
 Sutra 9-12 classify and name the pramanas or 5 kinds of knowledge.
 - " 13-19 deal with Sensitive Knowledge, (Mati jnana), the first kind of knowledge.

[वर्ष ११

Sutra 13 gives the Nirdesa, definition or description of Sensitive Knowledge.

- ,, 14 gives the Sadhaua, or means of acquiring it
 - 15 gives the Vidhana, or divisions of it.
- ,, 16 gives its sub-divisions and thus the Saukhya, or number of it.
- 17 limits the Scope of these sub-divisions.
- , 18-19 give the exceptions.
- , 20 refers to Scriptural Knowledge (Sruta jnana).
- , 21-22 refer to Direct Visual knowledge (Avadhi jnana.)
 - 23-25 refer to Direct Mental knowledge Manah paryaya jnana.
- 26-29 deal with the subjectmatter of the 5 kinds of knowledge.

Sutra 26 of Sensitive & Scriptural.

- 27 of Direct Visual.
- , 28 of Direct Mental.
- " 29 of Perfect (Kevala.)
- , 30 gives the extent (Alpa Bahutva, Less or more), combined with number (Sankhya), and habitat (Svamitva) of the 5 kinds of knowledge.
- , 31-32 deal with wrong knowledge.

Sutra 31 gives its three kinds.

- 32 defines wrong knowledge.
- , 33 deals with Naya, the second means of acquiring Adhigama, or knowledge.

Chapters II-IV.

- Chapters II, III & IV deal with the first Principle only, namely with Jiva (the Living Substance) or Soul.
- Chapter II treats of Soul generally; of its nature, differentia, classifications, processes of meannation, bodies, and sex. It treats of Life here and hereafter in the world.
- Chapter III treats of the hellish, human, and sub human beings, and of the regions coupied by them.
- Chapter IV treats of the various orders of celestial beings, and of the regions in which they live.

Chapter II.

Sutras 1 to 7 deal with the thought-nature of Jiva.

Sutra 1. gives the classes of thought-natures.

Sutra 2 gives the number of sub-divisions.



Sutra 4 2nd 5 3rd6 4th 5th

Sutras 8-9 give the differentia of Jiva.

Sutra 8 names it. 9 classifies it.

Sutra 10 classifies the Jivas into Mundane & Liberated.

Sutras 11-24 deal with the Mundane Souls.

Sutra II and 12 give their classes,

Sutra 11 According to whether they have mind or not. Sutra 12 According to the number of their senses :-Sthavara with 1 sense. Trasa with more.

Sutra 13-20 deal with this

Sutra 13 gives kinds of Sthavara

Sutra 14 gives kinds of Trasa

Sutra 15-20 deal with the senses.

Sutra 15 gives their number.

16 gives their 2 classes.

17 subdivides the lab class.

18 subdivides the 2nd class.

19 names the senses.

20 subdivides their functions.

Sutra 21 gives the function of mind.

Sutras 22 & 23 give the Svamitva of the senses.

Sutra 22 of 1 sense.

23 , others

Sutra 24 gives the Svamitva of mind,

Sutras 25-30 deal with the transition of the soul from one condition of existence to another.

Sutra 25 gives the concomitant of transmigration.

Sutra 26 gives the character of transmigration.

Sutra 27 gives the character of Liberated souls.

Sutra 28 gives the character of Mundane souls.

Sutras 29-30 give the time of transmigration.

Sutras 31-35 deal with the different kinds of birth.

Sutra 31 gives the kinds.

32 , different embryos

Svamitva of 2nd kind of birth. 33

,,

3rd 34

35 Lab

िवर्ष ११

Sutras 36-49 deal with the various bodies.

Sutra 36 gives names of bodies.

- . 37 , their distinctions.
- , 38-39 , constitution.
- , 40-41 , the capacity of the last 2 bodies.
- "s 42 " Svamitva " " "
- ,, 43 , number of bodies with a Soul.
 - , 44 ,, a special quality of the "last body."
- "s 45-48, the Svamitva of the bodies.
- , 49 deals with the 3rd body.

Sutra 50-52 deal with the sexes of the different Jivas.

Sutra 53 names the Jivas whose mundane life cannot be cut short.

Chapter III

Sutras 1-6 describe the hells.

Sutra 1, names the 7 earths i.e., the 7 parallel planes of earth below ours.

- " 2, gives the number of hells in each earth.
- .,, 3-5, describe the hellish beings
- ,, 6, gives their ages.

Sutras 7-39 describe the Madhya Loka or middle regions, the abode of human & subhuman beings,

Sutra 7 names the Octans & continents.

- , 8 gives their form & dimensions.
- "s 9-32 deal with Jambudvipa, the central continent, which contains us.

Sutra 9 gives its dimensions.

- " 10 " , 7 divisions.
- ., 11 ,, ,, 6 mountains, which make the 7 divisions.
- ,s 12-13 describe the mountains.
- ,, 14 names the 6 Lakes on them.
- "s 15-16 give the dimensions of the 1st Lake.
- , 17 describes the island in it.
- ,, 18 gives dimensions of other lakes & islands.
- , 19 describes the goddesses of the 6 islands.
- ,, 20 names the 14 rivers which rise from the 6 lakes & traverse the 7 divisions, 2 in each division.
- ,,s 21-2 name the direction in which the rivers flow & fail into the Ocean.

- , 23 gives the number of their tributaries.
- ,, 24 gives the dimensions of the 1st division.

 Bharat keetra.
 - 25 gives the dimensions of the other divisions & mountains of the southern half of Jambudvipa.
- . 26 describes the Northern half.
- ,, 27 describes the conditions of life &c. in the 1st. & last i.e., the extreme North & South divisions of Jumbu-dvipa.
- . 28 describes the condition of life &c. in other divisions
- ,,s 29-30 describe the age of beings in 6 bhoga bhumis of Jambu dvipa.
- , 31 describes the age of beings in Videha.
- ,, 32 gives the proportion of Bharata keetra to Jambudvipa.

Sutra 33 deals with the next continent Dhataki khande.

- ,, 34 deals with the nearest half of the next continent Pusk-aravaradvipa.
- . 35 limits the habitat of man.
- .. 36 classifies him.
- ,, 37 names the divisions, where man has to work for his living, i.e., the Karma bhumis.
- 38 gives the maximum & minimum age of human beings.
- ,, 39 gives the maximum & minimum age of Sub-human beings

Chapter 1V,

Sutra 1 gives the 4 orders of Celestial beings. ,, thought-colours of the 1st 3 Orders. , number of the classes of the 4 Orders. 4-6 describe the grades in these Classes. their sexual life. ... 7-9 names the classes of Residentials (1st Order) 10 Stellars (3d. .,) 13-15 deal with the Stellars. . 16-26 ... Heavenly Order (4th.) Sutras 16-17 give 2 main divisions of them. their names & positions. 18-19 , characteristics, age, power, faculties &c. 20-21

िवये १९१

- , 22 gives their thought-colours
- 23 gives the limits of the 2 divisions.
- ,, 24-25 deal with the Laukantikas.
 - 26 deals with the 4 Anuttaras.
- . 27 defines the sub-human species.
- . 28-42 deal with the ages of celestial beings.
 - , 28 gives maximum age of Residentials.
 - "s 29-32 give maximum age of Heavenly beings.
 - .. 33-84 gives minimum age of Heaventy beings.
 - .. 35-36 gives minimum ,, hellish beings.
 - , 37 gives minimum , , Residentials.
 - .. 38 gives minimum , Peripatetics.
 - " 38 gives minimum ", " reripatetics.
 - " 39 gives maximum " " Peripatetics.
 - , 40 gives maximum , , Slollars.
 - 41 gives minimum , , Slellars.
 - , 42 gives age of Lankantikas.

Chapter V.

It treats of the Ajiva (Non-Soul) Tattva.

- Sutres 1-3 give the 5 Astikayas, which are Dravyas also
 - " 4-7 describe them, Nirdesa.
 - 8-11 give the Sankhya, number of their pradesas.
 - 12-16 give their ksetra & sparsana.
 - 17-22 give their functious.
- Sutra 23 gives the definition (Nirdesa) of matter.
 - 24 gives the kinds of conditions of matter.
 - , 25 gives the 2 kinds (vidhana) of matter.
 - "s 26-28 give the Cause (sadhana) of the 2 kinds.
 - " 29-30 give the definition of Substance.
 - . 81 gives the meaning of Permanence.
 - 32 gives the mode of dealing with contradictory attributes in the same substance
 - , 33-37 give the rules of atomic combination to form molecules
 - , 38 gives another definition of Substance.
 - , 39-40 deals with Time as a Substance,
 - 41 defines Attributes.
 - " 42 " Modifications.

Chapters VI & VII deal with Asrava or Inflow,

..

Chapter VI.

It deals with Asrava generally.

Sutras 1-2 define Inflow, in its 2 aspects of Subjective (Bhata) & objective (Dravya) Inflow

- 3 classifies Inflow into (Punya & Papa asrava) merit and Demerit Inflow.
- , 4 gives svamitva of Inflow & its Vidhana.
 - 5 gives vidhana of Samprayika (mundane) Inflow.
- , 6 gives Sadhana of Sumprayika.
- , 7 gives Vidhana of a Sadhana or cruse named Adhikarana (Jiva & Ajivadhikarana)
- 8 gives nirdesa & vidhana of Jivadhikarana.
- 9 gives nirdesa & vidhana of Ajivadhikarana.
- 10-27 give cause of Asravas of the 8 Karmas.

Sutra 10 gives the Sadhana of knowledge & conation-obscuring karmas.

- ., 11 gives Sadhana of Pain-feeling Karmas.
- " 12 gives Sadhana of Pleasure-feeling Karmas.
- , 13 gives Sadhana of right-belief-deluding Kerma.
- ,, 14 gives Sadhana of right-conduct-deluding Karma.
- , 15-21 gives Sadhana of age Karmas,

Sutra 15 of hollish beings.

" 16 "sub-human "

. 17-19 , human

,, 20-21 ,. celestial

22-24 gives Sadhana of Body-making Karmas.

Suma 22 for (bad) asabha Karmas.

23 ., (good) subha

, 24 , Tirthankara

25-26 gives Sudh ma of family-determining (Status)

25 for low-family-determining (Status)

26 for high-family-determining (Status)

27 gives Sadhana of Obstructive Karmas.

Chapter VII.

Sutra 1 gives Nirdent and 5 vidhams of Vrata, vow.

- , 2 , 2 Vidhanas ,
- ,, 3 , 5 Sadhanas for each vow.
- ,, 4-8 , the kinds of 5 Sadhanas.

Sutra 4 ,, ,, ,, for 1st vow

"5 " " " " 2nd "

		1				दिंग	बर ज	न्।	
,	6	P+	3)	,,	3.9	,	3rd	13	·
,	7	13	91	27	9 7	,,	465	13	

, 9-12 , more sadhanas.

, 13 , Nirdesa of subject-matter of 1st vow.

., 14 2nd ... 3rd ... 3rd ... 4th ... 5th ...

. 18 Nirdesa of a man with yows, Vrati.

" 19 Vidhana

,, 20-22 Nirdesa of a man with partial vows.

" 23 Sadhana, of a Vrati.

, 24.37 gives 5 Sadhanas for each of the 5 Vidhana of vows and 7 of a Vrati. And 5 for Peaceful death.

, 38-39 Nirdesa of Charity.

Chapter VIII.

It deals with Bondage.

Sutra I Sadhana of Bondage

2 Nirdesa of

" 3 Vidhana of " 4 kinds

, 4 Nirdeen and 8 Vidhanas of 1st kind

5 gives number of these 8 Vidhanas

, 6-13 ,, names of classes of these 8 Vidbanas

, 14-20 , the Vidhana of the 2d kind

, 21-28 Nirdess of the 3rd kind

25 Nirdesa and vidhama of Punya

26 , of Papa

Chapter IX.

It deals with Stoppage and Shedding. Sutra 1 Nirdesa, of Stoppage.

2 6 Sadhanas of

8 1 ,, and of Shedding.

4 Nirdesa and Vidhana of 1st Sadhana

5 2d

6 3d

7 4th

8-17 deal with the 5th Sadhana

Sutras 8 gives Nirdesa

9 , Vidhana.

10-12 , Svamitva.

13-16 , Sadhana.

17 " Sthiti and Adhikaran .

18 Nirdesa and Vidhanas of 6th Sadhana.

19-44 deal with the 7th ,, (Tapa),

Sutra 19 Nirdesa and 6 Vidhanas of External austerity (Tapa).

20 , Internal

, 21-25 Vidhanas of 5

" 22-26 Nirdesa and vidhanas of these 5 Vidhanas.

, 27 Nirdess and Svamitva; and Sthiti of the 6th Internal tapa, i.e. Concentration.

28-4Vidhanas of Concentration.

29 Nirdesa of the 4

30-33 ,, and Vidhana of the 1st or Arts concentration.

34 Svamitya.

35 Nirdesa, Svamitva and Vidbana of 2ad.

36 , and Vidhana of 3rd.

37-8 Nadesa, Syamitva and Vidhana of 4th.

39 Names of 4 Vidhanas of 4th.

40 Sadhana and Adhikarana of these 4 Vidhanas.

41-44 Niidesa of the first two of these 4 Vidhanas.)

45 give Svamitva and Sthiti of Shedding.

46 Nirdesa and Vidhana of Nirgrautha.

47 Sadhana of Nirgrantha

Chapter X.

Sutra 1 Sadhana of Perfect Knowledge.

2-4 , and Nirdess of Liberation.

5 Adhikarana of Liberation.

6-8 Sydhana of this Adhikarana.

9-12 Sadhana and Vidhanas of Liberated Souls.

The Scope of the Book.

As to the Scope of the contents of the different chapters, the following analysis may be useful.

िवर्षे ११

I.

Rutras.

4,5,6,7,8, Categories and Predicables & Logic.

9-33 Pramana. Psychology, Induction, Deduction, Logic.

H.

1-10 Metaphysics.

11-12 Psychology. 13-22 Mineralogy, Physics, Zoology.

15-20 Physiology and Anatomy

21-24 Psychology.

Zoology. Psychology. 23

25-30 Transmigration. (Theology).

31-35 Embryology. (Theology-Hellish and Celestial beings.)

36-49 Physiology. Anatomy. Theology (Augels.) Physics (Electric body.)

50-53 Physiology

III.

Mineralogy and Geology.

2-6 Theology (Hells)

7-35 Geography. 36-89, Anthropology.

IV.

1-12 Heavens. Theology; and Astronomy (12, 13, 14, 15)

Metaphysics. Physics. Chemistry (25-28) Space 1,4,6,7,9,12,18 Matter 1,4,5,10, 11,14,19,20,23,28,33,37

Heat 23 Time 22,39,40.

Motion 1 1,4,5,7,8,13,17 Light 23,24. Sound 24.19.

Rest Soul 3.8.15,16,21.

Substance 29,30,31,38,41,42.

VI.

Psychology-Connection between mind and matter. (The mighty influence of mind on matter).

VII.

Ethics in the light of Psychology.

VIII.

Physics and Psychology. Kinds and Character of Connection between mind and matter.

IX.

Asceticism in the light of Psychology and Physics-Psychology.

х.

The GOAL

Peace to All Beings!

OPTIMISM OF LIFE.

(By. Herbert Warren, 84 Shelgate road, Batter sea; London S. W.)

Some of our suffering is caused by ourselves. If I have a sore knee through carelessly getting off a moving omnibus, the suffering is due to my own action. Is all our suffering caused by ourselves? If not, we must assume the possibility of suffering without causing it: is such an assumption rational? It is very common, and is the cause of much possimism; but upon refloction it will be seen that it is not reasonably tenable; for it would be against the law of justice, and there would be no guarantee against suffering, we should always be liable to be the victims of circumstances. If by being careful we can avoid suffering, then it is impossible to suffer if we are careful to avoid it; this means that it is not possible to suffer without having a hand in bringing it about. So we must conclude that all our suffering is caused by ourselves.

It is necessary to remember, however, that events have two causes, namely, the substantial

(upadana) and the instrumental (nimitta); and when we say that all our suffering is caused by ourselves it means that it has ourselves as its substantial cause: we cannot be the instrumental cause of our own suffering; in order that we may suffer there must be some not-self thing or being acting upon us. And when we suffer something which we cannot connect up with any action of our own as its substantial cause, we are apt to blame the instrumental cause, especially if it be a person or other living being. It would be absured to blame the earth for hurting our knee, and it would not be proper to blame a cat if we tease it and it scratches us in return; the earth will not hurt us if we are careful, nor will the cat scratch us.

If we are to believe that all our suffering is caused by ourselves, we must believe in the extension of our life backwards into the past before our birth here; because there are many things we suffer in this life which cannot be accounted for by anything we have done in this life. This is especially the case in young life, such as where kittens die from starvation through being born to a cat without milk; it is

by enything tione by the kittens in this life. But this belief in previous existence is certainly preferable to the belief that we suffer without causing it. It is sometimes objected to on the ground that we do not remember it. But this fact is not proof; during sleep we do not remember the previous day's existence.

The search for an explanation of suffering is one of the main thenres of philosophy; and if we believe our suffering to be caused by ourselves, then we have an explanation of it. When we know the cause we have the explanation, that our sore knee. for instance, is due to falling down, and we do not go on asking questions as to why were we born to suffer, why is God so unkind as 'to let us have a sore knee, and so forth. On the other hand, if we do not believe that our suffering is caused by ourselves, thon we shall find it difficult to get a satisfactory explanation of the suffering. If we are the oauses of our own suffering, then we need not repeat the causes, and consequently need not suffer. This is surely an optimistic view.

Is optimism possible while the world suffers! This is perhaps

a side issue, but it may very well be brought in at this point. Is it possible for one man to be happy while he knows that another is miserable ! Is it possible for one soul to be enjoying the blissfulness of heaven while he knows others are suffering the torments of hell? While we are the cause of our own suffering, we are to a large extent the instrumental cause in the suffering of others; and anybody who sees to it that he does not inflict cause, or consent to the suffering of any other being will be able to be optimistic; he will know that he is not and will not be instrumental in the world's suffering. And he will relieve such suffering as he can. Also, pity, sympathy, etc., are not contradictory of optimism, state of pity is not a miserable state.

If, then, we stop renewing the causes of our suffering, we shall not suffer, and life will be entirely enjoyable. In order to stop the causes, we must know what they are; and one of the chief ones is himse or being instrumental in the suffering of others. Generally speaking, if we know that some particular kind of action causes us pain, we stop it. Others have found out what

activities: do cause pain, and have stopped them; and have given us the benefit of their discoveries. These are embodied in the ordinary moral codes, that is to say, we stop the causes of much suffering by practising kindness, truthfulness, honesty, morality, and contentment with limited possessions.

Much of the suffering we endure is the result of something we have enjoyed doing; so to stop the causes means in some cases to stop doing something we enjoy doing. And here comes in difficulty.

After we have left off repeating those activities which cause suffering, we have to wait until the old effects have worn off: and here comes in the question of the possibility of getting rid of the effects more quickly than they would naturally take. This possibility is illustrated by the tale already elsewhere mentioned of a man who had just committed a murder and was walking through a wood carrying the head of the person whom he had just decapitated. came across a meditating monk. and said to this monk, " Now tell me what my proper duty is. I have just committed this murder, and if you do not tell me I will cut your head off too."

The monk did not wish to be killed; he uttered three words of duty, namely, concentration, self-control, and stopping the inflow of karma, and then: having the power of levitation, rose up and disappeared, murderer had heard of these things in his youth; he stood still and began to think: his body was more or less sincared with blood, ants crawled up and est into his body; he went on meditating, and in about half an hour all his karmas worked out and he was in the final condition of blissfulness Moksha. This undoutedly would be an exceptional case, but it would show the possibility. The theory upon which these things are based is that the soul is already in existence in each living being, complete; it does not have to be constructed; it is choked up with dross and as soon as this is removed, be it done a minute or a million years, the soul is clean and pure, with all his qualities liberated, no more ignorance, no more mistakes.

If all our suffering is due to something we do or have done, if we never suffer anything which we have not started,

then if we cease renewing the causes, our life will be entirely enjoyable as soon as the effects of past wrong actions have exhausted themselves. We none of us have any knowledge of a life which is entirely enjoyable; such a thing is necessarily for us a matter of inference, hepc, belief, faith; but there are one or two facts which support the belief. First, life at present is not altogether painful, part of it is enjoyable; and so we can conclude to the possibility of a life tirely so. Secondly, pain always resented, and looked upon as an intruder; we always try to avoid it, and there is in the mind the permanent though perhaps unrecognized convinction that life ought to be entirely free from pain and misery: we instinctly take it for granted that pain is wrong an something to be got rid of. And we do not, according to Jainism. have to cease to exist in order to avoid it.

It may perhaps be as well to mention here that our present actions are not the effects of past actions. It is our present sufferings which are the offects. the reaction upon us of the notself universe; our present actions are free at every moment. If

our present life is the effect of our previous life or lives, and is therefore necessarily what it is: and in its turn becomes the cause of our future life, then there would be no hope; but the relation of cause and effect does not subsist between actions and subsequent actions: it subsists between actions and subsequent experience or reaction upon us. Action is free.

So it would seem that by beleving that there is the relation of cause and effect between our doings and our exporiences, and that by coasing to renew the causes of suffering and so come into an entirely enjoyable life,-by so believing and acting accordingly it will be possible to be optimistic in spite of all the pain and misery that there are in life.

H. WARREN.

London.

NEW PUBLICATIONS.

Dravya Sangraba (Illstd.) 5-0 Key of Knowledge 10-0 Outlines of Jainizm 3-0 Jain Law 0 - 12Can be had from,

Managor,

Digambar Jain Poostakalaya, Chandawadi-8URAT.

Lakhimpur 30-11-17.

To.

FRIENDS OF THE JAIN COMMUNITY.

My dear friends,

The day of activity has dawned in the world. People of other nations have not only shaken off their slumber and got up from their leeds, but are actually busy with their ploughs in making the soil of thoughts They have joined hands for the common weal and are helping their neighbours if they are short of oner or the plough. This co-operation is not a new thing in India. It has been in existence in all its villages from time immemorial. The dawn has, however, given a new life to it. They are all very busy for common good and are gradually banishing the idea of private property of dark ages. Some are engaged in weeding and some in irrigating the soil; some are making new plantations and some are working as partners of a common firm-

You also awake and arise and have your share of work in the common struggle against the evil spirits which take pleasure in ruining the fruits of all labour towards making the field refreshing green-pleasant and useful. Your sleep too has not been undisturbed by them-

Now rub your eyes and what is going in all around you. The anmehi (opium-eater) China is also on her legs and has shaken off narcotic influence. Democratic spirit has infused a new life into it. The battles of freedom and justice are being fought all over the world against tyranny and oppression of the Control Powers. Evil spirits are being quickly banished. Even in India the Moslems and Hindus have started a Limited Company for certain common objects. No religious animosities stand in their way. Its branches and off-shoots are spreading all around making the growth of the mishrooms and fungi impossible. Fortunately some of the shares are yet to be sold and unless hasten to purchase them with a premium, you lose your opportunity for ever. Your Capital (the potential energy) will remain buried under ground. It will bring no interest and likely to be lost for all generations to come; as often this upheaval they will not be in position to dig it out and spend it on useful purposes.

The Swetamber Jain Conference, the Digamber Jain Mahasabha, the Sthanakvasi Jain Conference, the Swetamber Graduates' Association, the Swetamber Jain Association of India, the Maharashtra Digamber Jain Sabha, the Madras Jain ciation, the Arrah Central Jain Publishing House, and periodicals and newspapers are different parts of your body and their movements show that your corporal body is still active. This indicates that you have got life and are not yet dead. There is still hope that you will recover from torpor sooner This enboldens one to or later. predict that re-birth will not be necessary for fresh activities. There is hope of renewed energies in this very life.

However, your spiritual and ethereal self are not working. You cannot be said to be awake when they are asleep. Drums in the form of public meeting and agitations are beating near you. It is wonder that you are even then unaware of the fact that the sun has risen up; and you still on your bed like the Delhi Mogul Emperors of the nineteen th century.

During your sleep the community has lost many jewels

which are now shining in other places and forming an ornament to them. It has lost its respect in the eyes of the Government, in the eyes of other communities, nay, in the eyes of even its own people. It has been censured, maligned, & severely criticised. It is considered to be a thing of no consequence in the comity of nations and in the arrangement of nature. It is regarded as a useless freak of nature on the surface of the earth. you are responsible for this state of things. God helps those who help themselves. Seeing that you do not care for them, they have deserted you. Indra has reserved its shawess of blessings for others. Varuna does not fertelize your soil. Sarasvati is playing on the harp of your opponents. Eloquent speeches are not threfore your spare- Important office of state are too high for you. The cabinet and the Council do not find you worthy of their society. The Hindus are obliged to believe that your name on the list of members is only a vecenary vil in the court of the Hindu University. You cannot enlist yourself even among the followers, nothing to say of being a leader or a commander. The total annhilation is there-



at the rate of about one percent a year. 200 much sleep naturally shortens life.

Arise and be awake, therefore, if you want to have your place in the world. Remember, you are Jains, the followers of Jinas-those who conquered those evil spirits that were a plague to the whole world, a curse to trouble to Allah gods, and a Think for a while of the potent strength in you which is lying The world wide war dormant. which is making a havor in the world might have been over long since by the melodious heating of your peaceful heart. Young hearts and old heads might have cooperated in putting an end of it. But, alas I you are asleep. The Jain papers are slow in publishing what is useful to peace & welcome news of hair splitting which add, fuel to fire. What a great fall! mutual admiration, co-operation & support in times of need are things of the past for the Jain Comminity. However, there is yet time. Other people have made the iron pot. It is your duty now to strike while it is hot. If it grows cold, no human labours will be able to mould it into the desired and useful shape.

Arise and be awake. Life may not become entint. Work for the salvation of the world if you want to have your salvation.

Yours Cordially, Chaitendas

(one devoted to the spirit of the world and the heavens.)

कुमार देवेन्द्रमसादजी द्वारा मकाशित-अंग्रेजी और हिन्दी भाषाके सर्वागद्यदर

नये २ प्रन्थ ।

Rs. a. The Key of Knowledge (by Champet Ray Jain) 10-0 Out Lines of Jainizm (J. L. Jaini) 3-0 Dravya Sangraha (S. C. Ghosal) 5-0 Parmatma-Prakash (B. Rikhabdas) 2-0 The Practical Path ... Warren's Jainizm ... Dictionary of Jain Biography ... 1-0 Naya-Karnika (Mohanlal D. Deshai)0-8 The Jaina Law (J. L. Jaini) ... 1-4 Science of Thought (Champat Ray) 0-8 Nyayavatara (Satish Chandra V.) 0-8 Jaina Jem Dictionary ... Pure Thoughts (Samayik Path) शान्ति धर्म 🖃 उपदेश-रत्नमाळा ॥) वात्री-क्ष-प्रकाश १) प्रेम-पुच्यांजलि ॥) वासिकाविनय =) मेय-कली ?) त्रिवेणी भावना लहरी =) =) (महात्मा गांधीकृत) =) सरवा विश्वास पेतिहासिक खियां।।) सना-धम्मे I) मिलनेका पता-मेनेजर, दि० जैन पुस्तकालय-सूरता।





मनुष्यके लिये प्रत्येक समाजमें अपना व्यव-हार शुद्ध और हितानुकूल रखना बड़ा कठिन कार्य है. परन्त विचार करके देखा जाय तो मनुष्य जीवनका सारा दारगदार इसीपर निर्भर है। जो छोग प्रति समय अपने आपको स्थिर नहीं रख सकते वे व्यवहारमें बड़ी २ गछतियां कर डालते हैं। जो कि जन्मभर उनके लिये क्रम्टक स्वरूप खटकती रहती हैं। हमको हर समय इस वातका पूरा ध्यान रखना चाहिये कि कोई गलती कभी हमसे न होने पावे। यद्यपि ऐसा होना अत्यन्त कठिन एवम् असो-ध्य है कि मनुष्य सदैव एकता योग्य आचरण करता रहे। व.भी भीजनके समय एक प्रकारके भाव रहते हैं कभी अन्य प्रकारके भाव रहते हैं, कभी शयन करते समय बैराग्य रहता है, कभी रागांश रहता है, पान्तु तौ भी जो मन्द्य अपने अन्तरंगमं अधावधानीसे बचनेका उपाय सोचता रहता है वह अनुचित गलती कमी नहीं कर सकता। यद्यवि कषायोंके उदय-से परिणामों में किञ्चित हेरफेर होता रहता है तथापि कषाय उसके इतनी प्रवल नहीं हो सकती जिससे कि वह कोई बड़ी गलती कर बैठे। अतएव हम लोगोंका प्रथम कर्तन्य है कि इस अपने अभ्यासोंको छुवारें। कभी अपने मन वचन कायसे कोई व्यर्थ वितण्डावाद न होने देवें।

बहुतसे मनुष्य यह सोचते हैं कि हम सम्य हैं। हम कभी गाछी गुफ्तार नहीं करते तौ भी नौकरको कभी २ जांय वे नांय डांट-नेमें या जोरू (स्त्री) को कभी २ दो चार घौछ तमाचे मारनेमें क्या हर्न है, हमारा छटे छमासेका कोध कुछ हानिकारक नहीं होगा इस्यादि २ परन्तु विचार करके देखा जाय तो प्रति समयका वक्तींव मनुष्य जीवनमें हेरफेर करता है।

किसी मनुष्यको यदि हम एकदिन कोध या इषीदिके वश कुछ ममेमेदी वचन कह डालें तो हम तो क्षणभरके पश्चात शान्ति मुखमें आकर सब भूल जायंगे। परन्तु जिस मनुष्यसे ममेमेदी वचन कहे गये हैं वह बहुत दिन तक नहीं भूलेगा। सम्भव है कि जन्मभर न भूले। इससे यह होगा कि वह अपने हृद्यमें सदैव हपारी ओर घृणाकी दृष्टिसे देखेगा तथा समयर पर अन्यान्य लोगोंसे भी हमारी मन-मानी निन्दा करेगा। इन एक ही समयके कोधसे सैकड़ों मनुष्योंमें हमारा अपयश फेल जायगा। इसी प्रकार अनेक ऐसे व्यवहार हैं जिन्हे असावधानीसे मनुष्य क्षणिक समय तक करता है और बहुत समय तक फल मोगता है।

हैमारी बहुतसीं मोटी बहिनें प्रथमावस्थामें अपने पति प्रश्नादि मनुष्योंसे कोई श्रस्की वस्तु छिया लेतीं हैं या झुठ बोल बैठती हैं बस फिर चाहे वे अपने इस अम्यासको बार २ काममें न लावें या लोड़ ही देवें परन्तु उनका जो गौरव चला जाता है वह फिर धापिस नहीं आता।

प्रथ्वी पर जितना मान या जितनी इज्जत आबरू है, वह सब व्यवहारके बळ पर ही लड़ी है। अहा; वह मनुष्य कितना धन्य है जिसने अपना व्यवहार हर समय और हर मनुष्य हे साथ समुचित रीतिसे सदा पालन किया हो।

मनुष्य उचित रीतिसे संसार यात्रा पूरी करे तो कर्मबन्ध भी बहुत कम होता है। सदैव क्रोध, मान, माया, लोभ, इन चार क्यायों की तेजीसे कठित और मन्दतासे मन्द्र बन्ध होता रहता है। यदि मनुष्य एक वार १ क्षण-के लिये भी तीवतर कषायों में मग्न हो जाव तो करोडों वर्षेकि छिये अञ्चय कमेंका परदा आत्मा पर आ जमता है, नर्क निगोदके द:ख भी यही कर्मबंध सहन कराता है।

अपनी समाजमें मनुष्यके कर्त्तव्यका ज्ञान अत्यन्त कम है, यही कारण है कि घर २ में कलइ फूट दीलती है, तथा अनेक घृणित कार्य नित्य प्रति सुने जाते हैं। जो लोग विद्याहीन हैं उनकी तो बात ही क्या परन्त नाममात्रके स्वाध्याय करनेवाले और अपने अधिको योग्य समझनेवाले नरनारी मी योग्यायोग्य मिश्रित व्यवहार करते हैं। इधर शास्त्र भी सुन आए, मन्दिर मी हो आए, उधर घरमें आकर भंग, तमाखू, तादा, जुआ आदि सभी करने छगते हैं।

इस व्यवहारका यह फल होता है कि पढ़े छिखे मनुष्योंकी साख **मी** उठी जाती है।

अतएव समस्त धुज्ञबन्धु ! एवं बहिनोंको चाहिये कि अपने प्रत्येक कार्यको शहरतासे

करें। यदि घर्षात्माओं में गणना कराई है तो अपने बचर्नोको सदैव निष्ठ हितकर बोल्नेका प्रयस्त करना उचि । है ।

और हृद्यको शुभ चिन्तरनकी तरफ खींचना उचित है। तथा शरीरसे यदि बहुत परोपकार न हो सके तो न सही परन्तु दूसरों के सताने में व कुराीलादि चृणित कार्यों में कमी नष्ट न करना चाहिये।

यदि किसीको शिक्षा भी देनी हो तो सरलतासे गंभीरतासे दो । अपने व्यवहारमें कालिमा मत लगन दो।

व्यापारादि गृहस्थीके कार्य करवेमें भी इह-छोक परछोकका विचार कर न्याय मार्गका अवलम्बन करके साफ २ व्यवहार करो। मनुष्य समस्त जीवनभर धनाननके छिये परिश्रम करते २ मृत्यु शय्थापर पड़ जाते हैं परन्तु अन्तर्मे मुखी वही होते हैं। जिसका व्यवहार ठीक रहा होगा, यश भी उसीका रहता है। जो मूर्ल लोग हैं वे धनको इस तरह अटका देते हैं कि न आप ही सुख पाते हैं न पीछेसे देश या नाति या सन्तानको ही कुछ छाभ होता है। यह पाप हमारी बहिनोंके शिरपर बद्धत है। नो बहिनें लाखों करोडों की स्वामिनी होती हैं जो कि अपने धनसे धर्मका, जातिका, देशका सैकडों अनाथ नचींका भछा कर सकतीं हैं। वे बहिनें सब कामोंसे मुख मोड़ झंडा सचा एक लड़का गोद लेकर झुठी गृहस्थी वसा जाती हैं। अड़े प्रण्य कंमेंसे प्राप्त हुई छक्ष्मीको ननरदस्ती सुनार, दर्जी, आतशनाजी बालोंको दे डालती हैं। और न्यथेही देशके धनको बरवाद करती हैं। अपने धनका व्यवहार

करना नहीं जानतीं। इसी कारण न स्वयं सल पाती हैं न धन ही सार्थक होता है।

अतर्व समस्त बहिनोंको चाहिये कि चाहे किसी अबस्थामें हों परन्त प्रत्येक काम साच समझ कर करें । एक समय भी असावधानीसे व्यवहार न होने देवें । इस व्यवहारको बनानेके छिबे प्राणींका स्वाध्याय करना बढे २ छोगोंकी जीवनी पढना यह अत्यन्त हितकारी है।

धनुष्यको सदैव भावना करनी चाहिये कि जो कुछ मेरे पास है मेरा तन मेरा धन मेरा षरिश्रम समस्त ही स्वपर कल्वाणकारी कार्योंमें **व्यय होना चाहिये। यह आत्मा संसार-**हरी सरायमें सचेत होकर पापोंसे बचकर अपने सर्वस्वको उचित स्थानमें लगाता रहे और गलती करनेका अभ्यास छोडदे तो निरपराधी हो जावे। संसार बन्धनसे मी कति-पय भवों में अवस्य छूट जावे ।

सेविका-चन्दाबाई-आरा ।

क्रैजैन पारिभाषिक शब्दकोष।

अत्यन्त हर्षका विषय है कि हमारी जैन समाजमें कुछ दिनोंसे जागृति हुई है। हमार अनेक गण्य मान्य धनाड्य महाशय भी जैन माति व जैनधर्मकी उन्नतिके छिये अनेक उ-क्षय सीयनं छगे हैं। तथा कार्य करने छगे हैं । सबसे पहिन्ने जैन जातिमें अत्यावश्यकीय षु समस्त दुराइयोंकी नड़ कारनेवाली विवा-

की उन्नति करनेपर छक्ष्य गया है। जिसके छिये आज प्राय: २० वर्ष हो गये, प्राचीन संस्कृत विद्या और धार्मिक ज्ञान करानेके छिये नगह २ छोटी मोटी पाठशालाएं स्थापन कर-के पठनपाठन करनेका कार्य जारी किया है। अनेक जगह जैन पुस्तकालय भी स्थापन किये-गये हैं तथा स्वाध्यायके प्रचारका भी उपाय महासभाके द्वारा हो रहा है। स्वाध्यायके प्र-चारमें प्रन्थोंकी प्राप्ति न होना एक बडा मारी विघ्न था सो भी छ।पेके प्रभावसे दूर हो गया है। अब सिवाय अछीगढ़ और खुर्जीके कोई भी ऐया प्रांत व जिला व ग्राम नहीं है जहां कि छ।पेके प्रन्थोंका पठनपाठन न होता हो । वे सब कार्य जैन शास्त्रोंके कथनको सस्य श्रद्धान करनेवाले प्राचीन पद्धतिके पक्ष-पाती विद्वानोंके उपदेशका ही फल है। इधर हमारे आधुनिक अंगरेजी विद्याके विद्वानींन भी सभा सोसाइटियां करके तथा इंगरेजी गज्र वा इंगरेजीमें जैन अन्योंको करके व प्रधानतासे छौकिकोन्नतिका कार्य क-रने लगे हैं। परन्तु जैन शास्त्रोंकी आज्ञांके विरुद्ध प्राचीन समीचीन रीतियोंको उठाकर विधवाविदाह प्रचार व वर्णन्यवस्याको उठा-कर एकाकार करके भोले भाइयोंको बहका-कर समीचीन मार्गसे अष्ट कर देनेका द:सा-हस करते हैं व इसीमें उसति समझकर स्व-तंत्रतासे उच्छंकल मार्ग प्रहण किया है सो ठीक नहीं है।

यद्यपि विद्योभतिके छिये प्रायः सम उनाय हो रहे हैं परन्त छदीर्घ शक्तें भी





जिसी चाहिये बैसी विधाकी उन्नति नहीं हुई। पांच सात मोरेना जैनिसद्धांत विद्यालयके ही पंडित ननर आते हैं। इसका कारण क्या है! इसके कारण न होना हमारी समझमें तीन हैं।

- १. पढ़ाईका कम ठीक न होना ।
- २. समस्त पाठशालाओंकी पढ़ाई एक न होना ।
 - ३. योग्य अध्यापकोंका न मिलना ।

कम ठीक न होनेका कारण पाठशालाओं में पहान योग्य समस्त प्रकारके अंथ बने हुए ब छपे हुए तैयार नहीं हैं । और समस्त पाटशा-छाओंका एकसा कम न होना, पाठशालाओंके संवालकोंकी मान कषाय व अज्ञानताके प्रमा-वसे है और योग्य अध्यापक थोडा वेतन होनेसे आदर सत्कार न होनेसे जनी तो तैयार ही नहीं होते। नो होना चाहते हैं उनके छिये अध्यापक तैवार करनेवाछी पाठशालाओं में स्कॅालरशिप व खर्चका अभाव है। लाचार थोडे साधारण वेतनके अजैन (ब्राह्मण) पंडित रख कर ही विद्यार्थियोंके पढ़ानेका प्रक्र्य करते हैं सो ब्राह्मण पंडित जैनियोंकी परिमापा व जैन प्रंथोंसे अनिमज्ञ होनेसे कुछका कुछ पढ़ाते व नैन मंथोंकी जगह छत्र सिद्धान्त कौमदी, तर्क संग्रह आदि अनेन ग्रंथोंको पढ़ानेकी प्रक्रिया ही चलाते रहते हैं।

इन कारणोमेंसे पढाईका क्रम ठीक करनेके छिये तो नो प्राचीन पाठ्य ग्रंथ हैं वे टीका टिप्पणी सहित छपने चाहिये और नो पाठ्य ग्रंथ प्राचीन ग्रंथोंमें दुष्प्राप्य हों वे बिद्धानोंको द्रम्य सहायता देकर नये बनवाना चाहिये।

और प्रकाशकोंको द्रव्य सहायता देकर छपदाना चाहिये । और समस्त पाठशालाओंकी पढ़ाई एकसी करनेके लिये महासभाके विद्यालय और परीक्षालयके संबालकोंको बम्बई जैन प्रांतिक समाके परीक्षालयनार्जीसे मिलकर महासमामें प्रस्ताव करके दोनों परीक्षालयोंको मिलाकर एक ही परीक्षालय द्वारा समस्त नगहकी पाटशालाओं का कप ठीक करना चाहिये। इसके छिये कमसे कम ४ योग्य इन्स्पेक्टर तनखा देकर नियत करने चाहिये। नैन व अजैन विद्वानोंको योग्य अव्यापक तैयार करनेके छिये जैन परिमाधा शब्द कोष व पढानेकी तरकी व सिखानेवाली पुस्तकें तैयार कराकर उनको पढ़ाकर मौरेनाके जैन सिद्धांत विद्यालयमें एक अध्यापक क्रांस खोलना चाहिये व परी-क्षालयमें अध्यापकोंकी परीक्षा मी होना चाहिये। इन सब उपायोंका प्रवंध करनेके छिये महासमा व माछवा जैन प्रांतिक सभा व बस्वई जैन प्रांतिक सभा आदिको मिलकर काम बांटकर केवल कागदी प्रस्ताव न करके काम करनेका शीघ्र ही प्रयत्न करना चाहिये।

पाटक महाशव ! उपर्युक्त व्यवस्थामें एक जैन पारि भाषिक शब्दकोष बननेकी केवल अध्यापकोंके लिये बनाने व अपवानेकी लख्ये बनाने व अपवानेकी लख्ये ही नहीं किंतु जैन विद्या संबंधी समस्त कार्यों के जिन विद्या संबंधी समस्त कार्यों के जिन विद्या संबंधी समस्त कार्यों के अजैनी विद्वानों के जैन धर्मक प्रचार करने वा प्रभावना करने, स्वाध्याय प्रचार करने व इंगरेनी बाबू छोगोंको जैन सिद्धांत सगमा कर जैन सिद्धांतों के भक्क

बनाने वगैरह समस्त कार्योमें इसकी बड़ी भारी आवश्यकता है इसकी कितनी आवश्य-कता है सो पीछे बताई जायगी। पहिले आप यह समझ छीजिये कि यह पारिभाषिक शब्दकोष कैसा बनैगा।

वर्त्तमान समयमें जितने कोष हैं और जितने बहै २ कोष छपे हैं उनमें जैनियोंके अंथों में मो जो राज्य आते हैं उनका अर्थ नहीं मि-हना और जिनका साबारण अर्थ मिछता भी है तौ पारिभाषिक जो खास जैनाचार्योने जो अर्थ माने हैं वे अर्थ नहीं आते। जैसे उन कोवमें सम्यादरीन, स्पर्द्धक, अवग्रह, आस्त्रव, ईहा इत्यादिशन्दोंका अर्थ देखेंगे तौ सामान्य अर्थ मले प्रकार सम्यादर्शन शब्दको देखना, स्पर्छक शब्दका स्टब्सिकरनेवाला. अवग्रह शब्दका प्रहण करना, भास्त्र शब्द ही नहीं मिलेगा। आश्रव शब्द मिलैगा तो उसका अर्थ सुनना आदि मिलेगा। ईहा शब्दका अर्थ इच्छा मिलेगा । तव बताइये कि अजैनी विद्वान जैन ग्रंथ देखें और जिन शब्दोंका अर्थ न आबै ती कोषकी सहायता छें परंतु कोषमें उक्त अर्थ ही मिलेंगे। सम्यादर्शनका निर्देशि श्रद्धान करना. स्पद्धेक शब्दका अर्थ कर्मीकी वर्गणा विशेष इस्यादि अर्थ योड़ा ही मिलेगा? इसी छिये जैन पारिमापिक शब्दकापमें पहिले बडे २ अक्षरोमें वह शब्द स्क्ला नायगा। वह शब्द संस्कृत है व प्राकृत वा अपभ्रंश (हिन्दी मावा वगैरह) इसका चिन्ह छिला नायगा। उसके बाद उस शब्दका क्या अर्थ हैं सो क्रिया नायगा। यह अर्थको कौनसे मंगीमें किस

नगहपर माना गया है, उन सबके श्लोक ब वाक्योंका प्रमाग लिखा नायगा। प्रपाण वाक्योंका हिंदीमें अर्थ लिखा जायगा तत्पश्चात इस शब्द-की परिभाषा व इक्षण जैनियोंने क्या माना है वह अर्थ हिंदीमें लिला नायगा और कौन र से यंग्में उसके छक्षण किस २ प्रकारसे माने हैं, सम प्रंथोंके मूल वाक्यके श्लोक लिखे नायंगे । उन लक्षण वाक्योंका राब्दार्थ लिखा जायगा। तत्र शब्दका एक मुख्य अर्थ व इक्षणोंका उक्त प्रकारसे उद्धेख हो नापगा तब उस शब्दके दसरे क्या क्या अर्थ होते हैं और व अर्थ कौन २ से कोप वा ग्रंथमें माने गये हैं उनके प्रमाण महित छिखे नांवगे। माबार्थ-जिस किसी भी पदार्थका स्वस्ता नान-ना होगा उसे यह कोष कल्पवक्षकी तरह बता देगा।

इस प्रकार जैन मतके तत्वार्थसूत्र व इमकी समस्त टीकार्ये तथा चारों अनुयोगोंके प्रसिद्ध २ प्रंथोंके समस्त शब्दोंको स्वतंत्रतासे संग्रह करके अकारादि कमसे खिलकर यह कोष तैयार करना पड़ेगा। और इस शब्दकी उत्पत्ति कौनसे धातुसे कौनसे प्रत्ययसे जैन व्याकरणा-नुमार हुई सो खिखी जायगी।

इस कोषके छप जानेपर फायदे क्या क्या होंगे सो सुनिये।

१. स्वाध्याय करनेवाले माई तब स्वाध्याय करेंगे और उस समय कोई मी शब्द ऐना आ जायगा कि उसका लक्षण व स्वरूप समझे विना आगे समझमें हो नहीं आता है, उस समय यह कोष पास रखनेसे झट खोलकर

80

उस शब्दका अर्थ स्वस्त्र समझ छेंगे तौ स्वाध्याय तबका पूरा फल मिलेगा।

२. जन कोई महाराय समाका शास्त्र बांचेगा ती उनके शब्दोंके अर्थ नहीं आनेसे संक्षेत्र करके या गोलवाल करके श्रोता-ओं को समझा देते हैं. किसी शब्द व पदार्थ का स्वरूप श्रोता पूछते हैं तो वक्ताको याद न रहनेसे कह देते हैं कि इप्तका स्वरूप कठिन है, विस्तारसे है, सो फिर कभी समझना। इससे श्रोताबोंकी ज्ञानोजितमें विघ्न पडता है। यदि कोष पासमें रक्ला होगा तौ चट निका-छकर बता देंगे वा समझा देंगे।

६. छोटी २ जैन पाठशालाओं में अल्पन जैनी अध्यापक तथा जैन घर्मसे निरं अजान अंत्रेनी बाह्मण अध्यापक ही जेन धर्म ५दाते हैं विद्यार्थीगण उसमें अनेक शब्दोंके अर्थ भावार्थ पूछते हैं तो वे भी टाल देते हैं यदि कोप पाठशालामें रहैगा तौ प्रत्येक शब्द व पदार्थका स्वरूप अध्यापक समझा सकता है तथा चत्र विद्यार्थी स्वयं कोष देखकर मालम करके अपना पाठ मार्थ याद कर लावेगा ।

४. अखवारोंके द्वारा उपदेश मिलनेसे हमारे दक्षिणी, कर्णाटकी व गुनराती भाई भी स्वाध्याय करने लगे हैं। प्रंथ उनकी भाषामें है नहीं, शास्त्र प्रायः ढूंढाड़ी व हिंदी भाषामें छपे हुए वा हस्त लिखित मिलते हैं उनमें दुंदाड़ी वगैरह हिंदी शब्दोंका अर्थ मालुव न होनेसे स्वाध्याय नहीं करते सो इस कोषके पास रहनेसे हरएक देशका भाई प्रत्येक पदा-र्थका स्वरूप हिंदीमें सिविस्तर समझकर अपना ज्ञान बढ़ा सर्देगे।

५. अंग्रेजी संस्कृत पढ़े हुए अनेक जैनी अनैनी विद्वान आनकल प्राचीन प्रन्योंका अवलोकन करनेमें उत्प्रक हए हैं उनको अंग्रेजीमें ग्रंथ मिल जांय तो कहना ही नया? सो बौद्ध ग्रंथोंका प्रायः सब ही प्रंथोंका अंग्रेनीमें अनुवाद मिल्र नानेसे ये लोग सबसे श्रेष्ठ बौद्ध मतको ही शिरोमणि मानने छगे। बौद्ध धर्म जैन धर्मकी नकल है सो असल मतको देखनेके लिये अंग्रेनीमें ग्रंथ नहीं। यदि संस्कृत प्रंथ भी हों तौ वे देख सकते हैं परन्तु जैनियोंके पारिभाषिक कान्योंका अर्थ व रैाली- मालुम न होनेसे मंथ नहि देख सकते। यही कारण है कि आज कल जैन धर्मकी आलोचनान करके सर्वत्र बौद्ध धर्म व पाछी माषाका ही पठनपाठन वं प्रचार हो रहा है, यहां तक कि प्राचीन प्राकृत भाषामें हनारों जैन ग्रंथ होनेपर भी कें। हेर्जोमें पाली भाषाका कोर्स रक्खा जाता है। और बौद्ध प्रंथोंके देखनेका (जो कि सिवाय ग्रन्थ पाली भाषामें हैं) सुमीता कर दिया नाता है। इस प्रकारके जो विद्वान दर्शनोंकी आछोचना पठनपाठन करनेवाले हैं उनके लिये यह कोष बहुत ही लाम दायक होगा । सन विद्वान जैन धर्मके कठिन २ प्रंथ हिंदीमें देखनेमें समर्थ हो नांयगे और जब यह कोष इसणात्मक अर्थ बतानेवाला तैयार हो जादगा तो इंग्रेजी बंगाली वगैरहमें भी इसका अनुवाद होकर तुरत छप जायगा। तो जैन धर्म देखनेका प्रचार विद्वानोंमें बहुत जल्दी हो जावगा



इत्यादि अनेक छाम हैं।

इस कोषके शब्द संग्रह करनेमें कमसे कम आठ दश हमार रुपये और कमसे कम दो पंडित निरंतर बैठकर काम करें ती चार पांच वर्षमें तैयार कर सकते हैं। फिर उसकी धेम कापी क्रिलने वा छ्यानेमें पांच सात हजार स्मये व दो तीन वर्ष काछ चाहिये। ऐसा एक प्राकृत कोष क्वेडांबरी जैन साधु राजेंद्र-लालनीने बनवाया है जिसमें १ लाल रुपये तौ बनानेमें ही खर्च हो गये और अन्य १० वर्षसे ज्य रहा है। सो हाल आधा ही हो पाया है। इसी प्रकार काशीकी नागरी प्र-चारणी सभाने एकदम २५-३० पंडित रख कर हिन्दी शब्दोंके संग्रह करनेका काम क-राया था जिसमें २५-३० हजार रुपये खर्च हो गये। अब वह भी छप रहा है सो दो तीन वर्षमें छप जायगा ।

छवानेके लिये रुपया लगानेवाले तो अनेक नैन अनेन बुक्तेलर मिल नायंगे क्योंकि इस-को लपाकर बेचनेमें हनारों प्रतियोंकी खपत होगी सो लपानेवाला हनारों रुपये पेदा कर सकेगा परन्तु बनानेमें पांच सात वर्ष तक रु-पद्मा लगा सके ऐसा कोई भी प्रन्य प्रकाशक बुक्तेलर वा धार्मिक संस्था नहीं है। धन-पात्रोंमें कोई महाशय ऐसा समझदार नहीं है जो इस कोपकी जरूरत समझे व इसके बना-नेमें रुपया लगाकर धनको सार्थक कर सके। ऐसे कोपके बनानेके लिये एक बार बाबू अ-र्जुक्लालजी सेठी व द्याचन्द्जी गोयलीयने प्रस्ताव करके एक लेख किसी कैन पत्रमें दिया था परन्तु उपका कोई कल नहीं हुआ। कि-सीने किसी प्रकारकी सहाजुभृति तक न दिखाई। उसके बाद भारतीय जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी संस्थाने भी एक बार साहस करके बनानके छिये बिचार किया था और शब्द मंग्रह करनेके लिये १६००० कार्ड (कापनके उक्के) व प्रंथोंकी नामावली छपाकर कई स्वाध्याय करनेवाले बिद्धानोंके पास मेन मेनकर शब्द संग्रह करते जानेकी प्रार्थना की थी परंतु किसीने भी कुछ जबाब नहीं दिया। कई घन पात्रोंसे प्रार्थना की थी कि एक पंडित रखकर यह काम चलाया जावे परंतु उन्होंने कुछ भी इस कामको जरूरी न समझा। लाचार वे कार्ड और इस्तहार ज्योंके त्यों पड़े हैं।

अब हम समानके विद्वानों और जैन वर्मकी
उनित चाहनेवाले समझदार धर्मात्मा धनपान करते हैं कि इस
दानी महाशयोंसे प्रार्थना करते हैं कि इस
कोवके बनाये विना हमार सब कामों में पूरी र
हानि है, उसे दूर करनेके लिये स्वाध्याय
करनेवाले विद्वान तो कुछ र समय खर्च करके
शब्द संग्रह करना स्वीकार करें और दानवीर
धनाड्य महाशय अपने यहां घर पर वा किसी
संस्थामें कमसे कम दो बिद्वानोंको वेतनसे
रखकर व ग्रंथोंकी प्राप्त करके इस कोवके
बनानेके लिये शब्द संग्रह करानेका पांच वर्षके
लिये भार लें। यदि वे महाशय इननी उदारता
दानशिलता दिखानेके लिये धर्मार्थ रकम लगाने।
नेमें असमर्थ हों तौ बतौर कर्नके ही रकम लगाने।
निस दिन यह कोव तैयार हो मायगा उस



दिगंबर जैन ।

दिन जितनी रकम उसमें छंगेगी उतनी रकम व्याज सहित देकर अनेक बुक्सेट्स छेनेके छिये तैयार हो नांयरो । परन्तु यह कार्य सिवाय धनपात्रोंके कोई दुमरा करा ही नहीं सकता। इस्टिये बिद्वानोंको चाहिये कि-अपनी सस्तंग-तिमें रहनेवाले चनपात्रोंको उपदेश देकर इस कार्यमें द्रव्य छगाने को तैयार करें। और जिस प्रकार हो इस कोषको शीघ्र ही बनानेका प्रारम्भ करावे ।

> समानका हितैषी, दास-पन्नालाल बाकलीवाल।

दिवाली और दो मित्रोंका वार्त्तालाप ।

(बीर) (२४) (अमाबस) तीर्थकर मुक्तहिंगये, कार्तिक भी अधियार। ४ गति वाती वाती नमों, गौतम प्रभु सुखकार ॥

कार्तिक कृष्ण १२की रात्रिको टेकचन्द्रजी नल्दी सोगये इसलिये नींद भी जल्दी ही खुडगई और फिर न आई। कर्वर्टे बदल रहे थे कि दीवालीकी याद आगई चटसे अपनी पत्नीको प्रकारा, वह चौंक उठी, परंत टेक-चंदजीने उसे सान्त्वना देकर दिवाली पर कहीं सिद्धक्षेत्रपर जानेकी बात छेडी, तब स्त्री बोछी अच्छा हो यदि यह सम्मति हम-छोग छाछा अध्यद्विक पाम चल कर करें। वस प्रातःकालका समय था सोचा चलो वाय सेवन भी होगा और सामायिक जयचंदके भागमें ही करेंगे। पश्चात् सलाह करके नहा-

घोकर वहीं कैत्यालयमें पूनन करके क्ले आवेंगे। बस माड़ी कमाई और चल दिये, वहां पहुंचकर सामायिक स्तान पूजन स्वाध्यायादि करके टेकचंदजी बोले-क्यों मैया नवचंद ! दिवाछी देखने कहां चलोगे ? और दिवालीका क्या अभिप्राय है, क्यों और कक्से चली. सो कृषा करके कहिये आपकी मौनी इसके लिये बहुत लालायित हो रही हैं।

नय:- धना है कि दिशालीकी अमावस्याको गणेशप्रशादनी वर्णी रेसंदीगिरि (नैनागिरि) जावेंगे, इससे माळ्य, होता है कि कटाचित आमपासके ग्रामीण जन भी १००-१२५के लगभग पहुंचेंगे। यह वर्षका दिन है, श्रीमत् परम देवाधिदेव १००८ महावीर प्रमुके निर्वाणका दिन है, इस दिन कितने भारयवान भव्य जीव श्री पावापुरीजी (मो कि उक्त महावीर प्रमुकी निर्भाण भूमि है) को जाते हैं और बहां पर इम परमोत्सवका आनन्द भोगते हैं। परंतु यदि अपनी शक्ति न होवे. तो यथाशक्ति अवकाशानुसार ऐसे ही अपने निरटवर्ती निर्वाण क्षेत्रपर नाकर पूजन बंदनादि कार्य किया करें तो भी बहत कुछ छाम हो सकता है।

२. यदि मनुष्य अपनी जासिको न छि-पाकर और शास्तिको उहुंपन किये बिना अमली पटार्थके अमावमें उसकी करूरना भी कर लेवे तो भी उसे वही उत्कृष्ट फल मिल सकता है। देखो न आन महावीर प्रभक्तो मोक्ष गये हुए २४४२वर्ष हो चुके हैं, और वे समस्त कमौंसे रहित हुए आन छोकके

अंतमें निश्चल हुए स्वारमानंदमें नियम हुए सदाके छिये अवस्थित हो रहे हैं। यद्यपि वे आज साक्षात् इस मृत्यु छोकमें किसी भी स्थानपर नहीं हैं. और तब थे तब भी किसी एक सेत्र व्यापी ही तो रहते थे, जिनसे एक ही क्षेत्रवाले जीवोंको उनके दर्शन स्तवन और उपदेश श्रवणका छाभ मिछता था। न कि सव क्षेत्र और सब कालों में सब ही प्राणियों को ऐसी अवस्थामें बहु संख्यक जनोंको जिन्हें प्रत्यक्ष छाम नहीं मिल सकता है, परोक्ष कल्पना करना ही कर्तन्य होता है। और इस परोक्ष कल्यनामें भी कभी कभी प्रत्यक्ष जैसा आनन्द आ जाता है। यह कल्पना वाली मात कोई नई नहीं है, प्रायः बहुत कालसे चड़ी आती है और आगे भी चलेगी ही. क्योंकि यदि बिल्कुल यह कल्पना मी न की जाय तो संसारका व्यवहार चल सर्कता है। व्यवहार नहीं तो सब करिगत ही है। हां ! यदि अपली पदा-धेक सद्भावमें भी हम करूपना करें नैसे कि पुर्पोको रंगीन चांवलों में , दीवको रंगी हुई गरीकी चिटकों में नैते चकी गरी व चिरों जी आदिमें जैसी कि हमलोग कर लिया करते हैं, नि:सन्देह निष्फल है। त्रया अधितमें खेतंक बदले भूपकी द्रव्य चड़ानेके थालमें ही चडा देनेसे मुगंबी आनावेगी ? और धून्न दशों दिशामें **ब्यास हो नावेगा ? क्या कभी असल पदार्थ** ती भी उत्पत्ति होसकती है ? क्या घूपके छिये अस्ति, दीपके छिये शुद्ध प्रमुक्त वी और करासकी कत्ती या कर्पूर, नैतेबके छित्रे पूरी

पकौड़ी खाना आदि जैशा कि प्रमाके पाठमें पहते हैं, और पुष्पोंके छिये साक्षात् गुड़ान, चंपा कमल, आदिके फूल नहीं मिल सकते हैं ! नव कि हमारे योगोपमोगोंके लिये प्रत्येक प्रकारके उत्तमोत्तम फल, फूछ, दीय, धूप, नैवेच, आदि मिल सकते हैं तो क्या पूनाको नहीं मिल सकते हैं? यदि कहो कि शुद्ध प्राप्तक नहीं मिछते हैं तो फिर खानेको कहांसे आते हैं ? और प्नामें कल्पनाहीसे फल होनाता है तो फिर मोजनमें केवल पानी आदिमें सब भोज्य पढार्थी-की कल्पना करलेवे और रात्रिको घरोंमें दीपक्रके बदले रंगी हुई गरी रखंदेने, पुण्पमालके बढ़ले चांबलों को रंग कर माला ही बनाकर पहिर लिया करें परन्तु क्या ऐसा करनेवाले लोग संसार में हंमीके पात्र न होंगे ? क्या उनके घरका अंधेरा मिट जावेगा ? नहीं नहीं कभी नहीं, ऐसी कल्पना कुछ भी फलदायक नहीं है किन्त उल्टी हास्यजनक है। कलाना भदैव साक्षात् पदार्थके न होनेपर ही की जाती है, जैसे कि आन न तो इस क्षेत्रकाउमें महाबीर प्रभु हैं और न गौतप गणपर। न उनकी दिव्य ध्वनि ही सुगई दे रही है और न निवार्णका महो-स्मत ही परंत तोभी कल्पनामें हमें उसी काल और भावका अनुभवानंद आता है मो कि प्रत्यक्षमें अत्या होगा।

यह दूमरी वात है कि छोगोंका सच्चा उप-देश न मिलनेसे और अविद्यांके कारणसे सची भातका छोप हो नाय और पदार्थका सार निकल जाकर उत्परका ढां वा और फोकही रह जाय और कालान्तरमें उप ढांचे हा भी रूपान्तर हो जाय.

3**

परंतु किसी कालमें वही ढांचा खोखट मात्र ही न था किन्तु सभी। थाः ठोस था। आनकल भारत-वर्षके प्रायः समी नगरोंमें, मामोंमें, शहरोंमें, और रानवाडों में ऐसा कोई भी व्यक्ति और क्षेत्र न मिल्लेगा, जो इस परम पवित्र दिवाली (दीपाविछ) के त्योहारसे अपरिचित हो। यह वर्व भारतके सभी वर्ण और सभी क्षेत्रों में सभी धर्मवाले मानते हैं. यदि वास्तवमें देखा जाय तो इसके समान सर्व मान्य और उत्तम पर्व कदाचित् ही दूसरा होता हो क्योंकि दिवालीके आनंक पहिलेही से लोगोंके वरोंमं सफाई होने लगती है। घर छापे (मरम्मत) किये जाते हैं, पोते जाते हैं, छीपे जाते हैं, धोये जाते हैं, घरके वासन वर्तन मांजकर साफ किये जाते हैं, कपड़े घोये व युराये माते हैं, वर्षीका कचरा साफ किया नाता है, हिसान कितान आदि ठीक किया जाता है, द्कानका आंकड़ा बांधकर हानि लामका लेखा निकाला जाता है, नवीन व्यापार आदिका बिचार भी किया जाता है, इस दिन लोग अपने घरके किसी भ्यानमें चौक पर कर वहां दीपक जलाते हैं। प्रत्येक प्रकारके फल्फूल मिठाई आदि पदार्थ जो उन्हें मिल सकते हैं शकर रखते हैं कहीं कहीं एक मिडीकी पुतली निसके मस्तकपर और मुनावींपर आठ दीपक रहते हैं रक्खी जाती है। चौकके मीतर सोल्ह दीपक और पांच दीपक घीके ऐसे २१ दीपक रखे जाते हैं, सभीमें चार वत्तीं जलाई जातीं हैं, उस समय पासमें जिसके मी नकद रुपया महर्रे आदि होते हैं उसी चौकके पास रखते हैं और नबीन वही बनाकर नबीन कलम और स्वाहीसे प्रथम ही ॐ छिलकर साथिया काढ़ते फिर पांच महात्माओंक नाम लिख हर मिती संवत आदि और **छि**खते 훍 तन उस ने रोकड़ नाकी लिखकर नवीन (आगामी) वर्षका हिसान प्रारंभ करते हैं। रुपया और वही दोनोंपर चन्दन, अक्षत, पुष्पादि क्षेपते हैं और रकावीमें घानकी फूली (खींछें, या लाई) और मेश, फल, मिठाई आदि रखकर दीपक लेकर आरती करते हैं, अर्ची करते हैं, ध्र खेते हैं, अगरक्ती जलाते हैं, **ये**र प**हते हैं.** उस समय वहां उपस्थित मान्य व आश्रित जनोंको प्रसाद (लाई लड्डू आदि) और कुछ नकद्रभैसा रूपया आदि भी देकर संतोषित करते हैं। रात्रिमें जागरण करते हैं, करके चहं-ओर दीपक जलाते हैं (नगाजीत छगाते हैं) फटाका फोड़ते वन्द्^क छोड़ते **हैं इत्या**दि अनेकों प्रकारके उत्सव मनाते हैं। यह वर्ष दिवाली या दीपावलि इस नामसे म-सिद्ध है। और इस दिन उक्त पूनन, अर्चन, आदि नो होती है सो रुक्ष्मी पूनन या वही-पूननके नामसे प्रसिद्ध है। लोग इस रात्रिको जुआ भी खेलते हैं परन्तु यह जुआ (छन) कुछ श्रुद होगोंके सिश्य उत्तम प्रकृति कहे सम्यमन नहीं खेळते हैं। अब इसमें यह विवास्ता है कि यह सब क्या है? और कहांसे कबसे क्यों चला १ यद्यपि स्थानान्त्रों में अवस्य उक्त रूढियोंसे कुछ अंतर होगा तो भी बहुत ही वार्ते मत भेद रहित भी होंगी, जो कुछ भी हो, हमें

इसका मूछ मेद जानना चाहिये। हमारी बुद्धिके अनुसार तो हमें यही प्रतीत होता है कि वह पर्व जैनियों के द्वारा ही चलाया गया है, क्योंकि इनके पुराणों और आचारोंसे बहुत कुछ ये वार्ते मिलती जुलती हैं, यद्यपि कहीं २ रूपान्तर मी होगया तो भी अभी तक कई वार्ते सार रहित खोखेके समान अवस्य ही प्रचलित हैं। जैन पुराणों और श्रामकाचारोंके अनुसार महावीर (चौवी-सर्वे) तीर्थकरको मोक्ष हुए अभी २४४३ वर्ष हुए हैं जिसदिन उनका मोक्ष हुआ था। वह कार्तिक कृष्ण(गुजराती अश्विन कृष्ण)चतर्दशीकी रात्रिको अंत और अमावस्याका प्रातःकालका समय था । इन दिन महावीर प्रभुको मोक्ष प्राप्ति और उनके मुख्य शिष्य (गणधर) गीतम स्वामीको केवलज्ञान (आत्मिक सम्पूर्ण इतन) प्राप्त हुआ था । इसिलिये महाबीर प्रमुको निर्वाण प्राप्त होनेसे उनको जो स्वाधीन स्वसम्यक्तव स्वात्मानन्दका लाम हुआ और उन्होंने संसार गर्तमें डू बते हए मोही मार्ग मोशका वताया इस-छिमे उस परम स्वाधीन स्वसम्पत्ति (मोक्ष) के प्राप्तिके हेतु मोस छक्ष्मीकी पुत्रा की जाती है। जिसका रूपान्तर होकर अन रुपया पैमादि बाह्य लक्ष्मी (जड़पदार्थ) की पूना होने छगी 🕽 । और गौतम गणधर (गणदा) को केवल-ज्ञान हुआ, इसीसे सरस्वती (जिनवाणी) की पुत्रा की जाती है, जिसका रूपान्तर होकर बही (कारुवों) की पूजा हो गई है। पूरा-णों में किखा है कि जब किसी पहास्माको

केवलज्ञान प्राप्त होता है, तब इन्द्रादिक देव-गण समवदारणकी रचना करते हैं वहां वह महात्मा यद्यपि एक मुख्यारी ही है तो भी चतुर्मुख दीखता है और वहां दिनसिका कुछ भी मेद नहीं दिखाई देता है, तालर्थ वहां अंधकार नहीं होता है । सो जब गौ म-प्रमुको केवरुज्ञान हुआ तो देवीने समय-शरण (गंधकुटी) बनाई और बड़ा मारी उत्सब मनाया । सो छोगोंने भी उसीकी नक्छ की और रात्रिको दीपक जलाकर अंधकार दूर किया। एक स्त्रीके मुनाओंपर आठ दीपक और मस्तक्तरका कल्हा यह चीनन करता है कि अष्टकर्मको जलाकर प्रभु ज्योंही मुक्त हुए त्योंही वह (मोक्ष छक्ष्मी) सिरपर आके स्वागतके रखकर आई है। सोलह मिट्टीके दीपोंका अभिप्राय प्रतीत होता है कि इन महावीर प्रमुने अपने पूर्वजन्मोंमें तीर्थकर प्रकृति को कारणभूत दर्शनविशुद्धि आदि षोड्स-कारण माबनाएं माई थीं निससे उनका आत्मा इतना विशाल हुआ कि उन्होंने संसारके करवाणार्थ जन्म लिया सो उस महात्माके उत्पन्न होने (गर्भमें आने) के समयसे इन्द्रादि देवोंने पंत्र कल्याणक (गर्म जन्म तप ज्ञान और निवाण महोत्सव) किया जो कि पांच छतके दीपकोंसे संकेत प्रकट होता है। दूसरा माब वांच दीवोंसे यह भी है कि प्रमुने स्व पर हि-तार्थ विषययोगोंको त्यागकर सर्व प्रथम स्वाध पद प्रहण किया और उन्हें नो जन्मान्तरके सम्बन्धसे अतज्ञान था उतसे वे (ग्यारह जंग



और चौदह पूर्वके घारी) उपाध्याय मी कहाये, फिर उस समयमें उनसे विशेष ज्ञानी कोई न होनेसे वेही दीक्षा शिक्षा देनेवाले हुए इससे आचार्य भी कहाये। और चार चाति-कर्मीको नाश करके सर्वज्ञपदको प्रश्न हुए इससे आप्त व अर्ह्हन्त कहाये और आयुके अंतर्मे कार्तिक (गुजराती आश्विन) कृष्ण ३० को प्रात: काल शेष अधाती कर्म नाशकर सिद्ध हुए । इस प्रकार प्रमु पांच परम इष्ट (उत्कृष्ट) पदोंको प्राप्त हुए इसीको क्तानेव छे वे पांच घीके दीपक हैं। बौमुखे दीवक चार गतियोंको जलती हुई, जिनसं प्रभुने मुक्ति पाई है बतारहे हैं। पूनाकी द्रव्योमें जल, गंध, अक्षत, पुष्प, नैवेदा, दी", घून, बफल ये अष्टद्रव्ये भी जैन प्रन्थान वार देखे जाते हैं। रात्रि जागरण कर-नमें भगना िके बढले मनोरंजन करनेके हेत छोगोंने जुआ आदि खेल तमारोपारंम कर दिये हैं यह रूपान्तर होगया है। इससे प्रतीत होता है यह वर्ष जैनियों ही के द्वारा प्रचिलत हुआ है इसे सबको श्रद्धा सह मानना चाहिये और भी देखो-वर्ष और मास भी अमावस्या ही को पूर्ण होता है, दुक्तानदार व्यापारियों भादिकी दुकानोंके खाते नये बदले जाते हैं और मासका अन अमावस्याको समझना चाहिये कि अमावस्याको २०का अंक लिखते हैं और पुतमको १५का इस्लिये पुतम मासके मध्यमें आती है, और गुजराती व दक्षिणी छोग अपना मास शुक्क एकमसे पारंभ करते हैं। कुष्णाक्षकी प्रतिपदाको प्रतिपदा और शुक्र प्रति । दाको एकम कहते हैं गुजरात व दक्षिण

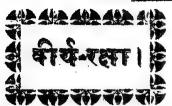
वालों हा कार्तिक मास हमारे कार्तिक श्रुक्त एक-मसे प्रारंग होता है और हमारे कर्तिक कृष्णा अमावसकी उनदा अधित पूर्ण होता है। तब कि हमारा आबा मास बीत चुकता है। तात्पर्ध उनका मास हमसे १५ दिन बाद शुक्क पक्षसे प्रारंभ गिनानाता है और हमारा १ ९ दिन ५ हिले कृष्ण पक्षसे यथार्थमें यदि उक्त पाठों परसे बिनारा जाय तो उनका हिसान ठीक प्रतीत होता है। पहिले तेईस तीर्थकरोंका निर्वाण उत्तव छोकमें इदना प्रसिद्ध न होनेका कारण यही है कि महाबीर प्रमु अंतिम हुए। यह वर्तमान शासन इन्हींका है और इंस समय भी अधिक नहीं हुना है। निर्वाण क्षेत्रका स्थान भी शास्त्रातसार इक्षणोंसे इक्षित पाया जाता है। इन्होंने संसारके सभी प्राणियोंक हितार्थ उपदेश किया सबको समान माबसे देखा । इसी छिये सब ही ने इनके उत्सवको पनाया और पनाते हैं तथा पनावेंगे । धन्य है जिन्होंने 'वसुधैव कुदुम्बकम्'की नीतिको चरितार्थकर दिखाया । इस प्रकार आज नवचंदनीका व्याख्यान समाप्त हुआ, और टेकचंदनी भी चलने लगे इतनेमें टेकचंदनीकी स्त्री बोली लालानी नैनागिरि न चलोगे ?

नव - भाबीजी अवस्य चलंगा । क्यों भै रा टेकचंद १

टेक०-हां अवस्य । अच्छा समय बहुत हुआ जुहारु । जुहारु मैया-अन तो नैनागिरिमें खुन आनन्द आवेगा, उपदेशका मी बहा छाम होगा, जुहार ।

> दिपचंद परवार नरसिंहपुर (C.P.)





(लेखक:-हिराचन्द मलुकचन्द दोशी (काका) ऑनरेरी अध्यापक, मारवाड़ी और म्युनिसिपल कसरतशाला शोलापुर)

बीर्यरक्षा कमसे कम बीम वर्षकी उस्र तक करनी चाहियं क्योंकि इसते मनुष्यका शरीर हर, दीर्घाय, निरोगी, वन सकता है और मन्द्य सर्वेदाके लिये निरोगी रह एकता है. तथा धर्म कार्य भी कर सकता है। क्योंकि किसी महात्माका ६चन है " शरीरमार्थ-खळ धर्मसाधनम् " अर्थात् शरीर ही धर्भ-साधनका आद्य कारण है, इसकी रक्षाके ियं बीस वर्ष तक चटकीला अन्न (मोननादि) न खाना, खियोंको कहिंसे कदाचित भी नहीं देखना, खराब काव्य, उपन्यासादि नहीं पहना, नाटक, सिनेमा, शुङ्गारिक खेल तमाशे नहीं देखना, इन्द्रियको विना कारण दुप्ट विचारसे इस्तस्पर्श नहीं करना, चाय नहीं पीना, वीड़ी, चुरट, भक्तादि मादक चीज़ें नहीं पीना, पान सुपारी नहीं खाना, वीस वर्षतक विवाह नहीं करना, पौष्टिक पदार्थ खाना, और नित्य नियमित रूपसे सर्वोद्धावयवी न्यायाम करना, व्यायाम करनेसे वीर्ध रक्तमें मिछ कर बल बढ़ाता है। कशरन न होनेसे बीर्य पतन होता है। गरम और चीनें नहीं खाना, मिरच कम खाना, और



रात्रिको ९ बजे सोजाना, और मुबह ५ बजे चाहिये । उल्टे सोना नहीं, क्योंकि उल्टे सो जानेसे मुत्राशयका दाव बीर्थपर पडता है और स्वप्नावस्था प्राप्त होती है। रात्रिको सोनानेके पहिले कमसे कम १ घन्टे पूर्व पेय पदार्थ लेना चाहिये। सोनक खाना पीना नहीं । समय हमेशा दाहिने व बाहे करवट साते रहता उचित है। नींद खुलते ही विछीनेको त्याग देना, बीन वर्षके उपसन्त उम्रवाशोंको नियमित रूपसे स्त्री प्रसङ्ग करना । यदि वीर्थ विगड़ा हो तो बीर्घ शुद्ध होने समय तक स्त्री प्रशङ्क नहीं करना ।

शरीर यदि रोगी हो तो उनको औषधि आदिमें निरोग करना, फिर असरत करके पौष्टिक पदार्थ खाकर पौष्टिक पदार्थ पचाना । वर्ष दो वर्ष तक संबन करनेसे व भळीमांति पचने लगेंगे और बीर्य अवस्य अच्छा हो नाया। । अतएव ऐना न हो तबतक तो उत्पर छिखे नियम उनको अवस्य पालने होंगे। वीर्य स्तंपक बटी आदि औषधि हैनेसे कुछ भी नहीं होता. खाली पैसे खर्च करनेका पंचा है। उसके नालमें पडना वही श्रीमन्तों के लिये पिस्ता, बदाम, दूध, घो हैं। छेकिन गरीबों के लिये यह बात मुश्किल है। अन्तर्व उनके लिये पदार्थ-द्विदल घान्य और मृंगफली आदि हैं । चने, मृंग, परम, उड़द, आदिकी दाल थोडेसे पानीमें भीगोकर संवेर कसरत करके खाना । दाछ जैसे हमम होती जाय, बैसं दालका परिवाण बढाना । इसके अनुसार



चलनेसे वीर्यकी रक्षा जरूर होगी। वीर्य शरीरका राजा है यह खुब ध्यानमें रखना है। प्रजोत्पत्तिके सिवाय इसका व्यर्थ कामान्य होकर व्यप नहीं करना व्यर्थ व्यय करोगे तो अल्यायुषी बनोगे। इत्यलम्।

इस विषयमें नितना लिखा जाय उतना ही थोड़ा है।

कसरतकी तरकीयं।

कसरत नाम शरीरको यथायोग्य रीतिसे सर्वाक्रावयवोंको इलन चलन मिलना है। श-रीरको इलनचलन मिलनेसे सर्व अवयव सतेन रहते हैं। और पचनेन्द्रिय सर्वोत्कृष्ट रहती है पचनेन्द्रिय अच्छी होनेसे अन्न भी भलीमांति इ-ज़म होता है। अन्न हज़म होनेसे शरीरमें रक्त बढ़ता है, रक्त बढ़नेसे बीर्य बढ़ता है और बीर्य बढ़नेसे शरीर सशक होता है।

शरीर नीरोगी होनेसे मनुष्य दीर्घायु होता है और आनन्दित रहता है। आनन्दित रहनेसे सर्व प्रकारके कार्य सुन्दरता पूर्व ह होते हैं।

कत्रस्त करनेकी तरकीवें वर्तभान समयमें दो प्रकारकीं हैं एक इंग्रेनानस्कीर और दूसरी देशी तस्कीय ।

इंग्रेनी तरकीवसे शारिरिक फ़ायदा थोड़ा और खर्च बहुत होता है। और समय भी बहुत छगता है।

देशी तरकीवसं शारीरिक और इतस्ततः फायदे बहुत होतं हैं और खर्च (पैसा) कम छंगता है। देशी तरकीवमें दण्ड, बैठक, पानीमें तैरना, महस्बंभपर चढ़ना, हाठी

क्रिंगना, कुस्ती छड़ना, दौड़ना, नमस्कार करना, कन्द्वी खेळना, खा खो, आटिया पाटिया, शुरू करेल, मुद्रल आदिके खेळ होते हैं।

इंग्रेजी तरकीवमें, कीकेट, हौकी, टेनिस, फुटबील, पैरिल वौर, सिंगल वौर, डबल वौर, बार बॅट, डम्बिल्म, बोटिंग आदि खेल होते हैं।

कुछ इंग्रेनी खेलसे एकांकावयवी कसरत होती है और यह कसरत परतन्त्र, परावलम्बी मूल्यवान, अनियमित होती है । देखिये क्रीकेट खिलनेवार्लोको प्रामसे दूर जाना पड़ता है। कमसे कम ११-१२ आदमी इक्ट्रे हए विना यह खेल नहीं होता, कीकेटके सामानके लिये पैसा बहुत खर्च करना पड़ता है और हमेशा ट्राफ्ट भी होती रहती है, धूपमें खेलना पहता है, ाारा समय दोपहरकी धूपमें खेलना हानिका-रक है। देशी कसरतमें पैना कुछ नहीं पड़ेगा। कमरत स्वतंत्रवाये चाहे जिस स्थानपर नियमित रूपसे होगी । कभी बंद नहीं रहेगी, मगवानके क्षामनं नमस्कार करनेसे माव शाद रहेंगे। माव शह रहनेसे शरीरको विगाडने बाले गुण अंगमें पैस नहीं होंगे। नमस्कारसे एक ही समयमें वामरत भी होगी और ईश्वर मक्ति भी हो नायगी। नमाकारमें दंड बैठककी मिलान होती है, इससे शरीर खुबसूरत होता है। देशी कसरतसे शारीरिक लाम होकर और जो कुछ अन्य लाम होते हैं वे नीचे लिखे अनुसार हैं।

कुस्तीसे-शरीरमें चपलता आती है, बुद्धि सतेज होती है, और दुर्जनोंका पड़ाव करनेके गुण प्राप्त होते हैं। दौड़-दृष्ट लोगोंके हाथमें बक्त पर पड़ते नहीं। तैरना-स्वयं पानीमें गिर जायें तो तैरनेसे बच जायंगे। और दूसरा कोई बतुष्य बारड़ी आदिमें गिर जाय तो उसको बचावेंगे।

दिल्लस्भ चड़ना—प्रको अङ्गार लगेगी तो लम्मेपरसे नीचे झट उतर आवेंगे, जंगलमें हिंसक मन्तुओंसे बचाव करनेके लिये शीव बुक्सर बढ़ जानेसे शीव रक्षा होजायगी।

लाठी फिराना—लाठी फिरानेसे समीको बादाकांत करेंगे, शरीरमें चपलता रहेगी।

शरीरको प्राःतकालीन घूप अच्छी होती है। वर्षी ऋत आती है तब यह खेल बंध करना पडता है। हिसापमें आदमी नहीं आवे तो खेल बंध करना पहता है । इससे आनिथमितपन आजाना यह भी अच्छ। नहीं है, कारण कि शरीरको कसरत नियमित रूपसे होना चाहिये. नहींतो हानिकी संमावना है। यह खेळ आनन्द-दायी होनेसे कमी कमी ज्यादा कसरत करनी बहती है। यह भी शरीरको वहा भारी अका पहुँचाती है। इससे दारीरका रक्त भीगनाता है, और क्षय रोग बढता है और खानपान मी देखा जाय तो चेवड़ा, चाय, सोडा लिमनेड, बिस्कुट, आदि, गरीव होतो कमेटीके नलका पानी, ऐसे निमत्व पदार्थ पेटमें जानेसे शरीरमें अञ्चक्तता क्यों नहीं बढ़ेगी! और शार्ट साईट क्यों न होगी ? और सब तरुण चरमे वाले क्यों न दीखेंगे ? और रोती सरत वाले क्यों न देखे

जायमें। जरा विचार करनेकी बात है कि-एसा होनेका कारण ऐसे खेल खेलने वालोंका सेसरी दुनरा कुछ नहीं। इस प्रकार इंग्रेजी खेलमें बहुतसे जुनसान होते हैं। हुनमें ब्रह्मचर्यका महत्व प्रधानतासे नहीं माना जाता।

अब देशी कसरतमें की 'नमस्कार' नामक तरकीब लीजिये—मगवान्के सामने प्रातःकाल शौच, मुख मार्जनादि करके पश्चात् सर्वदा नियमित नमस्कार शुद्ध हवामें करेंगे तो सर्व अवयवोंको कसरत हो कर शरीर अच्छा रहेगा।

इससे राजनिष्ठता रहती है और ब्रह्मचर्यव्रत पाला जाता है। और उसके अनुमार अपना वर्गाव रखना तथा तदनुसार चलनेका अम्यास करना चाहिये। अनीतिका कुछ भी प्रचार नहीं होने देना जबतक ऐमा अखाड़ा नहीं वने तक्तक अपने गृहमें ही शुद्ध जगहपर नित्य निथमित रूपसे प्रातःकाल (शीत ऋतु) में दंड, बेठक, नमस्कार करना। १० से १५ वर्ष प्रमाण वालोंको २० बैठक और पन्द्रह दंड प्रथम ७—८ आठ दिनतक निकालना अथवा नमस्कार २० करना, फिर आठ दिनके बाद प्रत्येक हफ्तामें ५ दंड और १० बैठक बहाना चाहिये अथवा ५ नमस्कार बढ़ाना चाहिये।

इस प्रकार बढ़ानेका कार्य १०० दंड और सौ बैठक तक बढ़ाना अथवा १०० नमस्कार बढ़ाना इससे ज्यादा नहीं करना । १५ से २० की अवस्था बार्लोको इससे दुगणी कसरत करनी चाहिये। प्रारम्भमें १०-१५

3

वर्षवालोंको तथा ३०से ५०तक उम्रवालों-को १-१९ उम्रवालेकी तरह करना चाहिये और ५०से उपर वर्ष वालोंको प्रकृति अनुसार करनी चाहिये। नहीं तो प्रातःकाल शुद्ध हवामें टहलने जाना संध्याको कभी भी टहलने नहीं जाना क्योंकि इस समय वायु खराब रहती है। तरुणोंको केवल टहलनेसे ही कसरतकी इति-श्री नहीं करना चाहिये। यह रीति वृद्धोंके लिये है। कसरत करके पश्चात् आधा चन्टे विश्वान्ति लेना, किर स्नान करके पीष्टिक पदार्थ अच्छा रुचिके साथ खाना। स्नान हुए बाद शीघ्र कसरत करना अच्छा और लाभदायक है। किन्तु कसरतके पश्चात् शीघ्र स्नान नहीं करना चाहिये।

सार्वाङ्गावयवी सात मिनटमें कसरत होती है। आटिया, पाटिया, कवड़ी, खो जो इस खेलसे शत्रुका बेड़ा तोड़ देना आदि गुण प्राप्त होते हैं सर्वाङ्गावयवी और थोड़े समयमें सशास्त्र शरीरको कसरत देनेवाली तस्कीव कुछ हैं तो कुस्ती, नमस्कार, मल्ल्यवम्भ चढ़ना, पानीमें तेरना, लाठी फिराना, दंड बैठक यह है। दंड बैठक और नमस्कार इन तस्कीकों को कोई भी साधारण कसरत करनेवाला बता सकता है।

अब रही लाठी फिराना, मल्ल्यनम्ब चढ़ना, तैरना, कुस्ती खेलना, आदि तरकीं नो म-गुष्य कसरतखानेमें उस्ताद होता है वह जरूर पढ़ाता है। एसे अस्ताद बहुतसे शहर-में थोड़े बहुत मिलते हैं, उनके पास आप सज्जन मण्डलीका अखाडा बनवाकर उसमें सीख लेना।

अज्ञानी (दुरवर्त्ताशक) लोगोंके अखाड़ेमें जाना नहीं कारण कि उसमें जानेसे दुर्गुण लगते हैं। देशी कसरतकी तरकीवें बहुत करके वर्तमानमें मूर्व छोगोंके हाथ मौजूद हैं। वह जो सुद्ध मनुष्य अपने सद्गुण संभालकर बहे कप्टके साथ देशी कसरतकी तरकीवें प्राप्त कर लेंगे । और दूसरेको बतावेंगे तो उनको बहत उपकार होगा। यह नहीं होगा तो प्रथम चार पांचसौ रुपया मर्च करके एक अच्छा अखाडा बनवाया जाय और उसमें अच्छे नियम रख़कर और राजनिष्ठतासे सुक्यवस्थित चलायेंगे और देशी कमरत जाननेवार्से उस्ताद -को तनस्वा देके सौ-पचास मनुष्य तैयार हो जायंगे तो संबीत्तम बात होगी। प्रनः उसका सज्जन मनुष्योंमें प्रसिद्ध होनेकी देर न होगी। कसरतशालामें राजा लोगों और ब्रह्मचारि-र्थोंके चित्र लगाना चाहिये। धूपमें कसरत नहीं करना, एक। ङ्वावयवी कसरत नहीं करना, वर्षमें कमसे कम एक दिन उपवास करना " जनतक जीमते (भोजन छेते) हैं तन तक कसरत हर हालतमें करना पड़ेगी।"

कतरत करते समय मन आनिन्दत रखना, और वज्राक्कदेही बन्नंगा ऐसी भावना रखना, व्यर्थ फिक्र न करना, "फिक्र करनेसे नुनसानके सिवाय कुछ नहीं " यह विश्वास रखना। शरीर दुनला भी हो तो कुछ हर्न नहीं कतरतसे शरीर सशक्त होगा लेकिन कुछ देरी लगेगी, हां ऊपर लिखे अनुसार वक्ताव होगा तब, "गुरु विना विद्या नहीं " यह युक्ति कुछ झंट नहीं है। इत्यलम् विस्तरेण।

व्याख्यान

जैनधर्मभूषण ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी, सभापति, भारत जैन महामंडल, अधिवंशन, कलकत्ता ।

मंगलाचरण।

गाया---इदं सद वंदियाणं तिहुअण हिर मधुर विसद वक्काणं ।

अंतातीह गुणाणं णमो जिलाणं जिद भवाणं॥ श्लोकः—भुवनांभोजमार्तेषं धर्मापृतपयोधरम्। योगिकल्पतकं नौमि देवदेवं वृष्ण्वजम्॥

माबार्थ सौधर्म आदि १०० इन्द्रोंसे बंदनीक, तीन मुबनके जीवोंको हितकारी, मिष्ट और निर्मल वाणीको प्रकट करनेवाले, अनंत गुणोंके घारी, और संसारको जीतनेवाले जिनोंको नमस्कार होहु। तीन मुबनके प्राणी रूप कमलोंको विकसित करनेके लिये सूर्य, धर्मरूपी अमृतको बर्गानेके लिये मेघ, योगियोंके लिये कल्पवृक्ष और देवोंके देव ऐसे धर्मकी ध्वजा रूप व वृषभके चिन्हको रस्तनेवाले श्री ऋषमदेव इस अवसर्पणी कालके प्रयम तीर्थकरको नमस्कार करता हूं।

प्रिय सज्जन महोदयगण और सन्नारी वर्ग ! कलकते ऐसे भारतके बृहत नगरमें इस "मारत जैन महामंडल"का वार्षिकोत्सव होनेपर यह बहुत उचित होता यदि इस सम्मेलनको सफ-लता पूर्वक निर्वाह ले जानेका उत्तरदायित्व अर्थात् समापतिका पद जैन समाजमें उपस्थित अनेक बिद्वान् और प्रतिष्ठित प्ररुषोंमेंसे कि-सीको दिया गया होता। मुझ अल्पश्चत,

तुच्छबुद्धि और साधारण प्रस्य पर ऐसे महान् कार्यका भार सौंपना एक अल्पवयस्क बालकके मस्तक पर कई मन भार छाद देना है। पर अब जब आप महानुभावोंने मुझ अल्पज्ञसे ही इस महान् कार्यके सम्पादनको लेना एक मत हो प्रकट किया है तब यह अनुचित जान पड़ता है कि मैं आपकी इच्छाका अप-मान करूं। अतएव मैं इसे स्वीकार करता हुआ आप सज्ज्वनोंसे इस बातकी दृद आज्ञा रक्खूंगा कि मेरे द्वारा यह कार्य निर्विच्च पूर्ण हो, इसमें मुझे हर प्रकारकी सहायता दे और ऐसा प्रयत्न करें जिससे हम आप मर्व परम मंगल सहित कुल वास्तविक कार्यका उपाय करके सहर्ष अपने २ स्थानको विदा हों।

प्रथम इसके कि मैं आसन प्रहण करूं यह उचित जान पड़ता है कि मैं अपने विचार आपके सामने उपस्थित करूं और आप उन्हें एक- चित्त हो श्रवण करें। आप यह अवश्य ध्यानमें रक्षें कि जो कुछ मेरा वक्तव्य होगा वह मेरा अपना ही विचार होगा। उसका उत्तरदायित्व मेरे पर होगा। वह विचार इस मंडलका है व जैनसमानका है ऐसा उस समय तक नहीं माना नासकता जब तक वह प्रस्ता-वरूपमें स्वीकार न कर लिया जावे।

जिनधर्म।

जिस धर्मकी शक्तिने आज हम आप सबको इस स्थान पर आकर्षित कर लिया है, वह धर्म कैसा जगतके जीवोंका कल्याणकारी है, पहले मुझे इस पर थोड़ासा विचार करना है।



किसी भी वस्तुके स्वरूपको विचारते हुए ब उसका वर्णन करते हुए समयमें उसका सर्व स्बरूप विचारना व कहना खास कर व्यक्तिके लिये जो सर्वज न हो निल्कुल असंभव है। एक समयमें सर्व पदार्थीके सर्व स्वरूपको जाननकी शक्ति केवलज्ञानमें होती है। यह ज्ञान आत्माका स्वभाव है। योगि-योंके ईश्वर-इस अवसर्पिणी कालमें होचुके श्री ऋषभ आदि श्री महावीर पर्यंत २४ तीर्थंकर व श्री भरत, सगर, विजय, अचल, बाहुबली, हत्मान, प्रद्युन्न, गौतम, सुधर्म, जंबस्वामी आदि, अनगिनती केवली-इन्होंने केवलज्ञान प्राप्त कर वस्तुके सर्व स्वरूपको एक कालमं जान लिया था। हम इस समय अल्प-ज्ञानी हैं इससे एक वस्त्रके स्वरूपको धीरे २ ही विचार सकते और कह सकते हैं।

यद्यिष एक पदार्थमें अनंत गुण होते हैं पर किसी पदार्थको पहचाननेके लिये कि यह अमुक पदार्थ है व अमुक नहीं है कुछ थोड़ेसे गुण छांट लेने पड़ते हैं—इन्ही गुणोंके द्वारा हम बस्तुओंकी भिन्न २ पहचान कर सकते हैं। ऐसा होने पर भी हम उस वस्तुके छांट हुए गुण या स्वभावोंको भी अपने वचनोंके द्वारा एक साथ दूसरोंको नहीं समझा सकते। हमको अपने शब्दोंसे काम लेना पड़ेगा। व शब्द अक्षरोंसे बने होते हैं इसलिये अक्षर या शब्द कहनेमें समय तो बहुत चला जायगा पर सुनने व समझने वालेको उसके एक स्वभावका ही ज्ञान होगा जब कि दूसरे स्वभावोंको मतलानेके लिये दूसरा शब्द व्यवहार करना

पहेगा।

एक शब्द द्वारा वस्तुका स्वरूप बताते हुए समझनेवालेको यह ज्ञात रहे कि इसमें और भी स्वभाव हैं। जैनाचार्योंन "स्पात्" शब्दका प्रयोग बताया है। जिसके अर्थ हैं "कथंचित्" या किसी अपेक्षासे " from some point of view"

वस्तके स्वरूपको किसी अपेक्षा कहनेको ही "स्याद्वाद" कहते हैं, स्याद्वाद द्वारा पदार्थका स्वरूप अनेकांत या अनेक स्वमात-वाला है ऐसा प्रतीत होता है। जिससे सम-अनेवालेको एक अंशरूप मिथ्याज्ञान नहीं होने पाता है। "अमि दाहक है " ऐसा कहना ईंधनको जलानेकी अपेक्षा ठीक है पर सर्वथा उसमें इतना ही गुण नहीं है किन्तु वह भोजन प्रकानकी अपेक्षा "पाचक" और प्रकाश करनेकी अपेक्षा " प्रकाशक भी है। इस स्थात्के लिये स्यात् दाहक, स्यात् पाषक, स्यात प्रकाशक है । जिस समय हम स्यात् या कथंचित् या किसी अपेक्षासे दाहक है ऐसा कहेंगे तो सुननेवाले की यह अवस्य ध्यानमें आयगा कि इसमें और भी स्वभाव हैं। वह मात्र दाहक ही है, पाचक या प्रकाशक आदि ह्रप नहीं है ऐसा ऐकान्तिक भिश्य।ज्ञान न होगा। अक्षिमें दाहक, पाचक या प्रकाशक तीनों स्वभाव एक ही समयमें रहते हुए शब्दोंसे एक कालमें तीनोंका कहना असंभव है। पर जो अभिको समझना चाहता है उसे अभिका यथार्थ ज्ञान होना चाहिये अन्यथा वह अक्षिसे अपना काम न निकाल सकेगा ।

इस दृष्टान्तसे यह सिद्ध है कि किसी पदा-र्थका ज्ञान करनेके लिये "स्याद्वाद" की अतीव आवश्यकता है, यह बात सत्य है— यथार्थ है—इसीलिये विकमकी २ री ज्ञाता-ब्दीमें होनेवाले दिग्विनयी न्यायवेता स्वामी समन्तभद्रान्यायने आप्तमी मांसामें कहा है—

तत्वज्ञानं प्रमाणं ते युगपत्सर्वभासनम् । क्रमभावि च यण्ज्ञानं स्याद्वादनयसंस्कृतम्॥१०९॥ स्याद्वादकेवलज्ञाने सर्वतस्त्रप्रकाशने ।

मेदः साझादसाक्षाच हाबस्तवन्यतमं भवत् ॥१०२॥ भावार्थ-जैसे एक कालमें मर्व पदार्थोको प्रकाशनंबाला केबलज्ञान प्रमाण अर्थात सम्य-ग्ज्ञान है ऐसे ही कम २ से होनंबाला जो स्याद्वाद नयके द्वारा संस्कारित व प्रकाशित ज्ञान है सो भी प्रमाण ज्ञान है।

सर्व तस्त्रोंके प्रकट करनेमें केवलज्ञान और स्वाद्वाद दोनों ही समर्थ हैं भेद केवल प्रत्यक्ष और परोक्षका है। इन दोनोंके सिवाय नो कस्तुका स्वरूप है वह अवस्तु सहश ही होता है। अर्थात् स्याद्वाद नयके विना पदार्थीका स्वरूप हम ङ्यस्यों द्वारा टीक २ नहीं जाना जासकता।

वस्तुके भीतर एक ही कालमें नित्य, अनित्य, एक, अनेक, अस्ति, नास्ति आदि विरोधी स्वभाव हैं इनका कथन स्याद्वाद नयके द्वारा अविरोध हो सकता है। नैसे वस्तु अपने गुणोंके घीट्यपनेकी अपेक्षा नित्य है पर उन गुणोंके घीट्यपनेकी अपेक्षा नित्य है पर उन गुणोंके जे समय२ पर परिणमन या पर्यायें होती हैं उनकी अपेक्षा अनित्य है—न्योंकि हरएक वस्तु या दम्यना यह स्टाण है — 'सत् द्रव्यलसणम् ' 'उत्पाद्व्यवज्ञी-व्ययुक्तं सत् 'गुणपर्ययवत् द्रव्यम् (२९. ३०. १३८ अ० ५ तत्त्वार्थं सूत्र श्री उमास्वामिकत (वि० सं० ८१)

भावार्थ-जो सत् हो सो द्रव्य है, जिसमें एक ही काल उत्पत्ति, विनाश, और ध्रौव्य या अविनाशी या नित्यपना पाया जाय सो सत् है अथवा जिसमें गुण और पर्यायें या अब-स्थाएं एक कालमें रहें उसे द्रव्य कहते हैं। मतलब यह हुआ कि गुण सदा बने रहते हैं और उनमें जो समयर स्वाभाविक या वैभाविक, महश या विसहश अति सक्ष्म समद्रकी कलोलें व रत्नकी क्रांतिवत परिणयन होता है वह अनित्य है अर्थात् समय २ नया २ परिणमन होनेसे पुराने परिणमनका व्यय अर्वात नाश और नएका उत्पाद अर्थात उपजना होता है। वृक्षमें आमके भीतर वर्ण गुण रहते हुए उस वर्णकी हरी अवस्थाका पीला होतं जाना परिणमनहै अर्थान् हरेपनका व्यय होकर पीलेपनका उत्पाद है।

नित्य और अनित्य दोनों स्वभावोंको समझनेके छिये हमें कहना पड़ेगा कि 'स्यात् नित्यं', तथा दोनोंको एक साथ छगाकर कहनेकी अपेक्षा 'स्यात् नित्या-नित्यम्,' क्योंकि बचनोंमें एक समयमें इनके कहनेकी शिक्त नहीं है। जब कि दोनों स्वभाव एक समयमें ही हैं इस अपेक्षा 'स्यात अवक्तव्यं' अथीत् इस अपेक्षासे स्वरूप कथन बचनगों कर नहीं हैं। परंतु ऐसा अवक्तव्यं होने पर भी नित्य है, या अनित्य है या



ंनित्यानित्य है। इस तरह नित्य, अनित्य और अवक्तज्य तीन स्वभावोंके सात मंग बन जाते हैं। इसीसे स्याद्वादनयको सप्तभंगी भी कहते हैं। विक्रम सम्वत् ४९ में होनेवाले श्री कुंदकुंदाचार्य महाराजने श्री पंचास्तिकाँ यमें इस सप्तभंगकी आवश्यकता बताई है-

गाथा -सिय अत्थि णरिथ उहुयं अव्यक्तव्यं पृणीय तत्तिदयं ।

देखें ख सत्तभंग आदेसवसेण संभवदि ॥१४॥ इमस्याद्वादके स्वरूपको शंकरानार्यने कुछका कुछ समझकर अपने भाष्यमें खंडन किया है। प्रयागके विदान गहामहोपाध्याय डा॰ गंगा-साध्य आ ने साफ तौरसे कहा है कि यदि द्राकराचार्य जेनजास्त्रोंका मनन करते तो उनको ऐसा कहना न पडता। इस स्याद्वादकी यथार्थताको पूनाके डा॰ भणडारकर और नर्मनीके प्रोफेसर जैकोबीन यथार्थ माना है।

वर्तमान जैन विद्वान् बाबू चम्यतराय बैरिष्टर हरदोईने अपने की ऑफ नॉलेज Key of Knowbreeमें सका ७२६में इस मिद्धां-तके महत्त्वको बतात हुए कहा है It gives us a many-sided, and therefore, necessarily true view of the truth which we are all secking to सत्यका अनेक discover " यह हमें आपेक्षिक और इमलिये विल्कृत सत्य स्वरूप बता देता है जिस सत्यकी हम सब खोज कर रहे हैं । सप्तभङ्गीतरंगिणी स्यामादमंजरीसं इस स्याद्वादका स्वरूप विस्तारसे प्रकट हो सकता है।

इस अनादि जगतमें आत्माका हित करने-वाला जो वस्तुके स्वरूपका यथार्थ ज्ञान है वह ''स्याद्वाद'' के द्वारा होता है और यही जिन आगमका मूल बीन है। इसिल्ये इस तरफ आपका छक्ष्य दिलाना इसीलिये उचित समझा गया कि आप घार्मिक तत्वोंको यथार्थ जानकर अपना हित कर सकें । यही स्याद्वाद या अनेकांत नय परस्परके वादियोंके विरोधोंको दर कर एकता और समताका लान वाला है इसीलिये स्वामी अमृतचंद्र आचार्यने विक्रमकी १०वीं शताब्दीमें अपन पुरुषार्थसिङ्यपाय प्रथमें कहा है "विरोधमथनं नमाम्यनेकांतं" यह अनेकांत विरोवको मेटनेवाला है इसीलिय मैं नमस्कार करता हूं। यह निनधर्म किसीका ऐसा सिद्धांत नहीं है कि निसको हमें बलात्कार मनाया नाय-यह वास्तवमें आत्माकी उन्नतिका एक सत्य विज्ञान है इस कारण इसको 'Self Science'ৰা 'Key to Self realisation' यानी आत्म विज्ञान या आत्मानुभवकी कंनी कर्हे तो कोई अस्युक्ति नहीं है।

हम और आप या सर्व प्राणी सख और शांति peace and happiness चाहते हैं पर उसके लिय बाहरी चीज़ोंके भोगनमें जात हैं। उसका फल यह होता है कि तृष्णा और आकुलता बढ़ती जाती है। सुख शांतिके बद्लेमें अशांति और दु:ख हमें प्राप्त होता है। जहांतक विचारा गया है व आप विचार

करेंगे तो प्रकट होगा कि सुख और शांति हमारे ही आत्माका स्वभाव है। हम जब

3

अपने और इस कागज़के मध्यमें जो हमारे हाथमें है नया अंतर है इसपर छक्ष्य देंगे तो विदित होगा कि समझनं, देखने, नाननेकी शक्ति हमारेमें है पर इस कागज़में नहीं है। इस शकिको चेतना जाकि कहते हैं। शकि गुण है। गुणका इक्षण है ''द्रव्याश्रया निर्मुणागुणाः" (४० अ०५ त० सूत्र) जो द्रव्यके आश्रय रहें व उनमें और गुण न हों सो गुण हैं। अतएव जिस द्रव्यमें चेतनागुण है उसीको जीव या आत्मा तथा जिसमें नहीं है उसीको अजीव या अनात्मा या जड़ कहते हैं। बस इस लक्षणसे यह प्रकट है कि जो बस्त हमारे शरीरमें रहती है वह जीव या आत्मा है। उसके रहत हुए शरीरके अगोपांग काम करते व इन्द्रियोंके द्वारा ज्ञान होता पर उसके न रहते हुए कुछ नहीं होता है।

आत्मामें जैसे चेतना गुण है ऐसे ही शांति या वीतरागता भी गुण है क्योंकि जब हम को ध, मान, माया, लोभकरते हमारा आत्मा होशित होता—दुःखी होता । पर जब व नहीं होते या मन्द होते हैं तो हमारा आत्मा शांत और सुखी रहता है तथा इसीसे यह भी सिद्ध है कि सुख भी आत्माका स्वभाव है । इसलिये आत्माके विशेष गुण चेतना, शांतता और आतम्द हैं—जो परमाणु या स्कंशस्व पदार्थ हैं उनको पुद्धल कहते हैं जिनमें इस आस्माके तो विशेष गुण नहीं हैं पर स्पर्श, रस, गंब और वर्ण हैं जो प्रत्यक्ष प्रकट हैं।

ये दो मुख्य द्रव्य हैं। इन्हीं दोनोंक सम्बन्धसे नगत्की नाना क्रियाएं हो रहीं हैं। प्रकृतिमें मेबोंका पानी होना, पानीसे मंत्र होना, नदी वहना, पृथ्वी तटकी मिट्टी-का वहना, नदीके मध्यमें उसका जमा हो पृथ्वी वन जाना, बर्फ गिरना, आतप व चंद्र प्रकाश होना आदि कृत्य पुद्रलके परस्पर सम्बन्ध और वियोगके कार्य प्रत्यक्ष प्रकट हैं। घर, घट, पट, वर्तन आदि वस्तुओंका बनाना इस शरीरी प्राणधारीका प्रकट है। ऐसी ही किया अनादि कालसे चली आ रही है और चली जायगी। इसीसे यह जगत् सन् है अर्थात् जो २ पदार्थोंका यह समुदाय है वं मर्व सदासे हैं सदा रहेंगे। वेवल उनमें अवस्था बदलती दीखती है इसीसे यह जगन् अमत् है।

प्रत्येक आत्मा अपने शरीरप्रमाण आका-रको छिये हुए झलकता है मो सत्य है क्योंकि प्रदेशवत्व, अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, अगुरुलघुत्व, प्रमेयत्व साधारण गुण हैं जो सर्व आत्माओंमें, सर्व परमाण व अन्य स्कंबोंमें तथा अन्य चार द्रव्योंमें पाए जाते हैं जिनकी भी सत्ता इस जगतमें है। स्थान घेरनेके स्वभावको प्रदेशवत्त्र गुण हैं। इसल्यि हरएक वस्तु आकारको रखने-वाली है, आत्मा और पुद्रल जगतमं ४ कार्ब करते हैं-चलना, ठहरना, स्थान पाना और नित्य परिणमन करते रहता । हरएक कार्यके लिये उपादान और निमित्त आवश्यकता होती है। इन चारों कार्योंक उपादान कारण वे स्वयं हैं पर निमित्त कारण ये चार मूल द्रव्य हैं। धर्मा स्तिका य

और अधर्मास्तिकाय नो दोनों अलंड, अमृतिक होकञ्यापी अजीव द्रव्य हैं चलने और ठहरनेमें क्रमसे उदासीनपनेमें कारण हैं तथा आकाश द्रव्य सर्वको स्थान देता और काल द्रव्य पर्याय पलटनमें सहाई है। आकाश अखंड और अनंत है। कालके कालाणु लोकाकाशके असंख्यान प्रदेशोंके समान असंख्यात है।

सुख शांति जो हमारे ही आत्याके स्वभावमें है उसीको प्राप्त करना हमारे आत्माका परम हित है। इसिलये हमें अपने ही आत्माके असली स्वरूपको जान कर उसपर दृह श्रद्धान लाकर उसका ध्यान, मनन, पृजन, भजन करना चाहिये। यही जिनधर्म है। आ-स्माम नो मिथ्याभाव, अज्ञान और असंयम या रागद्वेषादि विकार हैं उनको मेर कर आत्माको मचा श्रद्धावान, ज्ञानी, और संयमी या वीतराग बनाना मुख शांतिका पूर्ण लाभ करना है। और इम उपायको जितने अंश किया जायगा सुख शांति प्राप्त होगी। आत्मा आप ही अपना निगाड या सुषार करने वाला है। यह आप ही कर्ता और भोक्ता है । मुख़शांति और चेतना आत्माका स्वभाव होने पर भी हमार और आपके आत्माओंको इसका ठीक और पूर्ण साम नहीं है। यह इस बातको प्रमाणित करता है कि हमारे आत्मामें कुछ अशुद्धता है। अशुद्धता दूसरी वस्तुके मेलसे होती है। जिस वस्तुका मेल है उसे कर्म या पाप प्रण्य कहते हैं । जैन सिद्धांत कर्मोंको

पुद्रलकी वर्गणाएं बतलाता है। जन २ हमारेमें शुभ या अशुभ कोई अशुद्ध मान होता है इनका आकर्षण या आश्रव होता है-साथ ही रागद्वेषके निमित्तसे इनका अत्माके माथ कुछ कालके लिये होनाता है-उन्हींका असर होते रहना दु:स या संसारिक सुखका भोगना है। आत्मा-को इनसे बचानेके लिये वे शुद्ध भाव करने होंगे निनसे इनका आना रुके या संबर हो तथा जो पूर्व बद्ध हैं उनकी निर्जरा हो जावे निममें आत्मा सर्व बंधनोंसे छूटकर मोक्ष हो जावे। और अपने परम सुख शांत, मय चैतन्य स्वरूपको प्राप्त कर सदाके लिये पवित्रातमा हो जावे।

अत्माका आत्माके सिवाय पर पदार्थीमें मोह करना जब बंधका कारण है तब अपने ही शुद्ध स्वरूपका ध्यान करना मोक्षका कारण है। इसी उद्देश्यके लिये जो इन्द्रिय' विजयी होते हैं वे सर्व परिप्रह त्याग निर्प्रेथ हो निरंतर स्वाध्याय करते हुए इसी तरह साधुमार्ग धारण करते हैं जैशा श्री महाचीरस्वामीने किया था। प्रमुने वस्त्रादि रहित परम हंसकी अवस्थामें केवलज्ञान प्राप्त किया था ।

जो इस मार्गको बार नहीं सकते वे गृहस्थमें रहते हुए धर्म, अर्थ काम, पुरुषार्थीको पालते हैं । न्यायपूर्वक द्रन्य कमाना, जीवदयाके तत्त्वको ध्यानमें रखकर भोजनपान वस्त्राच्छादन आदि करना निससे शरीर स्वास्थयुक्त रहे और पशुपक्षी आदिकोंको



कष्ट न पहुंचे । तथा आत्मोन्नतिके उद्देश्यको ध्यानमें रखते हुए जिन तीर्थंकरोंने व अन्य आत्माओंने अपनेको शुद्ध कर लिया उनकी मक्ति उनके नाम लेकर, उनकी ध्यानाकार मर्तिओंके द्वारा उनके ध्यान व मोक्ष स्थानों व उनके परमपदके कालका निमित्त मिलाकर व उनके गुणोंको स्मरण करके करते हैं. निर्प्रेथ साधुओंकी सेवा करते हैं, पवित्र शास्त्रोंको पढ़ते हैं, मन और इन्द्रियोंको वडामें करनेके लिये संयम पौलते हैं, प्रात: और संज्याको ध्यानका अभ्याम करते हैं और यथायोग्य पात्रोंको धर्मसे व करुणाबुद्धिसे आहार, औषधि, अभय और विद्यादान करते हैं। अहिंसाणुत्रत, सत्या-णुवत, अचौर्याणुवत, स्वस्त्रीसन्तोष और परिप्रह प्रमाण इन पांच व्रतींका अभ्यास करते हैं । यही जिनभ्रम है जिसको अनादिकालसे तीर्थकरादिकोंने पाला था और इसीका उपदेश किया था।

स्याद्वाद नयके द्वारा पदार्थोंको जानकर तथा समदृष्टी होकर रागद्वेष त्यागनेका अस्यास करते हुए स्व और परकी उन्नति करना ही जिनवर्म है।

ऐसा ही श्री कुंद्कुंद्ाचार्य और उनके शिष्य उमास्वामी ने कहा है:— रतनं णाणचरित्ताणि सेवि द्व्याणि,साहुणा णिखं। तांकि पुण जाण तिष्किवि अप्पाणं नेव णिच्छयदे।

सम्यग्दर्शनञ्चानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ २ अ • १ त० सूत्र ॥

अत्तागमतसाणं । सद्दणादी हेवेइ सम्मतः ।

ववगय असेस दोसो सयळगुणप्पा हवे असी ॥५॥ नि॰ सा•

छुट तराह भीरु रोसो रागो मोहो चिंता जरंग रुजा मिच्चू।

स्वेदं खेदं मदो रई विष्ट्यि णिहा ज णुव्वेगो ॥६॥ नि० सा०

तस्त मुह्म्मद वयणं पुष्वावरदोस विरहिय सुद्धं । आगममिदि परिकहियं तेणदु कहिया हवंति तक्षत्या

जीवा पुरगलकाया धम्माधम्माय काल अयासं। तच्या ददि भगिदा णाणा गुण वज्ज• एहिं संज्ञुत्ता ॥९॥ नि• सा•

जीवाजीवाश्रववंधसंवर्गिर्जगमोक्षास्तस्वम् ॥ ४ अ॰ १त० सत्र

भावार्थ- सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक चारित्र आत्माकी शुद्धिका उपाय है निश्चयसे तीनों ही आत्माका गुण है-इसीसे उमीकी रुचि, ज्ञान व उसीमें तन्मय होना मोक्षका मार्ग या अपनी स्वतंत्रताका छाभ करना है। व्यवहारसे आप्त, आगम, तत्त्वार्थीका श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन, उनका ज्ञात सम्य-ग्ज्ञान, उनका सेवन सम्यक्चारित्र है। क्षधा, त्रेषा, भय, द्वेप, राग, मोह, चिंता, जरा, रोग, मरण, स्वेद, खेद, मद, रति, विस्मय, निद्रा, जन्म, उद्वेग एसे १८ दोष रहित सर्व आत्मिक गुणोंसे पूर्ण आप्त या पुज्य देव हैं उसके द्वारा प्रकट पूर्वापर दोष रहित और शुद्ध आगम ह । जीव, अजीव, आश्रव, बंध, संवर, निर्जरा, और मोक्ष ये सात तत्त्व हैं। जीव अजीवमें जीव, पुदुल, धर्म, अधर्म, काल और आकाश छः द्रव्य गर्भित हैं । जीव और अनीवके सम्बन्धसे ही आश्रव आदि पांच तत्त्व हैं। यही जिनधर्म है। जगत्के अन्य



सिद्धांतोंसे मुकाबला किये जाने पर एक नि ज्यक्ष तत्त्वज्ञानीको इसीके द्वारा सन्तोष होता है। उक्त चम्पतराय बैरिप्टर १००० सफेकी प्रस्तक "की ऑफ नोलेज" Key of Kno wledgeमें बादानुवाद और विचारके पीछे सका ८४६में कहते हैं—

"When we approached gion as humble seekers after Truth, and not in the spirit of bigotry or conceit, it will be seen that lainism stands unri-valled among the systems which claim to impart the Truth."

भाव—नव हम धर्मकी हठ या छलकी दृष्टिसे नहीं किंतु सत्यकी खोजसे देखेंगे तो हमें माछूम होगा कि सत्य बतानेका दावा करनेवाले मिद्धांतों में नैन सिद्धांत सर्वोच्च स्थान पाता है।

हम आप जब जैनी या जिनधर्मधारी या यों कहिंच वीतराग विज्ञानी, भाव, कर्म, रागद्वेषादि, द्रव्यक्षमं ज्ञानावरणादि तथा नोकर्म शारीरादि इन तीनों प्रकारके कर्मोंको जीतने वाले जिनके भक्त प्रासिद्ध हैं तब यह तो सबसे पहले हमारा कर्तव्यहै कि हम इस जिन धर्मका पक्का श्रद्धान करके इसको अपने अभ्यासमें लावें।

हम जानते हैं कि आपमें बहुतोंका यह उत्साह है कि यह पवित्र धर्म जिसकी उत्पत्ति-का पता इतिहासकी खोजके बाहर है जो आज २४४४ वर्ष हुए श्री सहावीरस्वामीके समय भी विद्यमान था। श्री महावीरस्वामीने

इसे चलाया नहीं था क्योंकि बौद्धोंके स्त्रिप-तक आदि प्राचीन प्रथोंमें भी महावीरस्वा-मीको जिन धर्मका चलानेवाला न लिख कर उपदेश दाता लिखा है। उस धर्मका प्रचार करें अर्थात् और अनेक नर्नोको इसकी सची रोशनीमें छाकर उनकी आत्माका कल्याण करें। पर यह आपकी भावना तब ही सफल होसकेगी जब आप इसको धारण करोगे-म्बर्ध अपने चारित्रमे अपनेको श्री महाबीर-स्वामीका अनुवायी प्रकट करोगे। जैसा पहले क्षत्रियवीर चंद्रगुप्त चामुंडरायादि जैनी राजाओंने जब ब्रहस्थ में रहे तब न्यायपूर्वक राज्य किया, शत्रुओंसे देशको बचाया और जब निर्वृत्ति मार्गी हुए तब कर्मेको परास्त करनेका यत्न किया ऐसा ही वीरत्व जब आप धारण करोगे, आपकी छायामें अनेक आ-स्माएं आकर अपना कल्याण करेंगीं।

इस समय जो इस पिवत्र धर्ममें दिगम्बर और धेतांबर मेद है मो न श्री ऋषमदेवके समयमें, नश्री पार्श्वनाथके वक्तमें और न महावीरस्वामीके समयमें थे। इस मेदका प्रारंभ यद्यपि राजा चंद्रगृप्त मौर्यके सम-यमें हुआ था पर इमकी पृथक् २ स्थिति वि-क्रमकी द्वितीय शताब्दीमें हुई हो ऐसा प्रकट होता है।

जो कुछ भी हो, इस समय हम सब जैन नामधारियोंका यह कर्नच्य है कि मूछ सिद्धांतोंको जानकर उन पर चर्छे और अपना हित करें। तथा जब हम सब जैनी कहलाते हैं तब हम अपनी एक श-





किसे जो कुछ काम परस्पर मिलके कर सकते हैं उनको करें। परस्पर एक दूसरेके श्रद्धान, ज्ञान, चारित्रमें बाधा न पहुंचाकर परस्पर एकता रखकर हम जो कछ काम करसकते हैं उसे अच्छी तरह मफाईसे करें।

भारत जैन महामंडल ।

वर्तमानमें इस मंडलका यही उद्देश्य मालम होता है। यद्यपि यह मंडल सन् १८९९ में जैन यंग येन्स एसोसियेशनके नामसे भारत-वर्षीय दिगम्बर जैन महासभाके कुछ सदस्यों द्वारा इसलिये खुला था कि इंग्रेनी पहे जैनी भाई अपने धर्मका ज्ञान प्राप्त करें व महासभाके कार्योंकी उन्नति करके जैन ममाजको तरक्रीपर छावें। उस समय इसका क्षेत्र अप्रकट रूपसे दिगम्बर जैन समाज ही था पर पीछे इसका क्षेत्र कुछ जैन समानके अंदर एकता रखते हुए जैन समाजकी उन्नति और जन धर्मकी प्रभावना करना होगया है। इस मंडलने १८ वर्षमें यद्यपि कोई बहुत बडा अमली काम करके नहीं बताया है पर अपने इंग्रेनी किन-गज्ञट मासिकपत्रको चलाकर अंग्रेजी पहोंमें धर्मकी जागतिको बनाए एवनके सिवाय इसन पश्चिममें जैन धर्मका बीज बुवाया है व जैन ग्रंथको इंग्रेनीमें प्रकाशित करा इंग्रेनी पढी दनियांको जैन धर्मका रस पिलानेका उपाय किया है । परमात्मा प्रकाशका उल्था पढके बहतसे भारतके विद्वानोंने जैन धर्मकी प्रशंसामें पत्र मेने हैं। Kev of Knowledge, Practical Path, Draya Sangrah, Outlines of Jainism आदि ग्रंथोंका

इंग्रेनीमें प्रकट होना मंडलके उत्साही सदस्यों-का ही काम है। यह मंडलकी ही प्रेरणाका फल है जिससे बाबू सरचंद्र घोषाल एम. ए. नैसे कई बंगाल देशके विद्वानींको नैन ग्रंथोंके अवलोकन व उल्याका शौक पडा है।

मंडलके मुखिया मि. जुगमन्दिरलाल जैनी जन हाईकोर्ट इन्दौर कई वर्षोसे कई जैन प्रंथींके उल्था करनेमें लीन हैं। मंडलकी सोची हुई प्रणालीके अनुसार आपने जैन धर्मके मुख्य २ शब्दोंकाएक छोटा कोप भी बना दिया है नो Central Jain Publishing House Arrah के व्यवस्थापक बाबू देवेन्द्रकुमार द्वारा ऋप रहा है । परम विद्वान श्री नेमिचंद्र सिद्धांत चकवर्ती द्वारा रचित सुक्ष्म विद्याके भंडार श्री गोमझ्सार जीवकांडका सामान्य उल्था संशात करके अब उसके कर्मकांडका उल्था कर रहे हैं।

वर्तमान दशा।

यद्यपि मंडलने कुछ किया है ऐसा कहा गया है पर वर्त्तमानमें जो दशा जैनजातिकी हो रही है वह भी अतिशय शोचनीय है।

(१) पहली बात तो यह है कि हमारे धर्मग्रंथ बहुतसे अभी तक तालों में बन्द हैं, दीमकोंके मध्य हो रहे हैं। उनमें अनेक रत्न हैं पर वे प्रकाशित नहीं होते। कर्णाटक देशमें धक्ल, जयधवल, महाधवल व अन्य बहुतसे ऐसे यंथ हैं निनका प्रकाश अतिशय जरूरी है। पर्मकी उन्नतिके कोई योग्य साधन नहीं हैं। न हमारे अनेक दिगंबर जैन।

उपदेशदाता अमण करते हैं और न हम अपने सिद्धांतोंको अनक भाषाओंमें उल्था कराकर प्रकाशमें लाते, न उनका भाव बतानेवाली लाखों पुस्तके प्रकट कर मुफ्त वितरण करते हैं। धर्मप्रचारके ये दो जो बड़े साधन हैं जिनके बलसे बौद्धधर्म फैला व ईसाई धर्म फैल रहा है, हमने अपने हाथमें नहीं धारण किये हैं।

- (२) दूसरी बात यह है कि हमारेमें एकता नहीं है। हम परस्पर ईघी रखते हुए एक दूसरेको हानि पहुंचानका उपाय करते हैं।
- (३) तीसरी बात यह है कि हमारेमें शिक्षाका बहुत कम प्रचार है। जिस शिक्षाको श्री ऋषभदेवने स्वयं अपने प्रत्र व प्रत्रियोंको बताया था वह शिक्षा हमारे सर्व बालक व बालिकाओंमें नहीं है-१००० में ५०५ बालक और ९६० बालिकाओंका अशिक्षित-रहना क्या हमारी जातिको पशु समान नहीं बनाए हुए है ? जिस जातिकी माताएं मूर्का हों वहां शिक्षाका प्रचार कैसे हो ?
- (४) चौथी बात यह है कि हमारे यहां बालविवाह, बृद्धविवाह, कन्याविकय, व्यर्थ व्यय आदि कुरीतियां अभी तक फेली हुई हैं।
- (५) पांचवीं बात यह है कि हममें चारित्रकी हीनता होतीं जा रही है; शुद्ध खानपान, व्यायाम और ब्रह्मचर्य जो खास शरीर रक्षाके साधन हैं उनसे हम विमुख हो रहे हैं। हमने अपने सत्य न्यायगुक्त

न्यवहारको कलंकित कर दिया है। हमने न्याय व शांतिसे न्यवहार करना छोड़ें दिया है। हम दुनियांके फेशन पर चलकर चमड़ेकी अधिक वस्तुएं न्यवहार कर दिन पर दिन हीन चारित्र होते जाते हैं।

(६) छठी बात यह है कि कुछ उच्च विद्यांके अभाव व कुछ प्रमाद वश हम देशकी संवामें भाग नहीं हे रहे हैं। हमारे जैनियोंका कोई मेम्बर वाइसरायकी हेजि-स्लेटिव कींसिलमें मेम्बर नहीं, कोई हाईकोर्ट जन नहीं; कोई देशका नेता नहीं।

हमारी सामाजिक बुराइयोंके कारण व परस्पर धर्म स्थिरताका उपाय न होनेसे स्वास्थ्यकी रक्षा अपनी व अपने बालिकाओंकी खासकर न करनेसे हमारी संख्या दिनपर दिन हीन होती जारही है। इत्यादि जैसी कुछ हीन दशा इस हमारी जैन जातिकी है उसको देखकर सिवाय रानंके और क्या कहा जा सकता है?

हमारा कर्तव्य।

(१) एकता-दशा जैसी कुछ है वह प्रस्मान है। अब आवश्यकता है कि रोगको दूर करनेका उपाय किया जावे। पहछी ज़रूरी बात यह है कि हम सब जैन नामधारी माइयोंको परस्पर एकताका भाव स्थापित करना चाहिय-अब समय एकताका है। जब शिया सुन्नी मुसल्लान एक हैं-अपनी र अद्धानुमार धर्म पालते हुए मुसल्ल्यानपनेके

30*

नातेसं एक आवाज़से बोल रहे हैं, जब शैव, बाह्म, शाक्त आदि भेद होनेपर भी सर्व हिन्दू एक स्वरसे हिन्दूपनका शब्द निकाल रहे हैं, जब प्रोटेस्टेन्ट कैथलिक आदि भेदोंको रखते हुए भी सर्व ईसाई एक स्वरसे हो रखते हुए सर्व बौद्ध एकतामें गूंज रहे हैं तब क्या यह असंभव है कि हम अपनी श्रद्धांके अनुकूल भेद रखते हुए भी परस्पर एकता न रख सकें?

एकताका सावन न्याययुक्त नम्र व्यवहार और सिह्ण्णुता है। जिनके साथ हम एकता रखना चाहते हैं उनसे हम नीति और धर्म पूर्वक मान मत्सर छोड़कर नम्रतासे व्यवहार करें तथा कभी कोई तुच्छ दोपको भी सह कर उसको समतासे निवारण करनेका यत्न करें—तो एकता रह सकती है।

२५ वर्ष पहले दिगम्त्रर और शेताम्बरमें बहुत अंशोंमें एकता थी। अब इस एकताके हटनेका कारण यदि देखा जाय तो इन्हीं दोनों गणोंका अभाव है।

उन तीर्थ स्थानों र जहां दोनों आस्नायवाले पूजन करते हैं जबसे एक दूसरे स्वामी होना चाहने छगे तथा एक दूसरेके धर्मसाध-नमें विद्य उपस्थित करने छगे तब ही से ऐसे सगड़े बढ़े कि जिनके कारण लाखों रुपये अदाछतों में व्यय हुए व हो रहे हैं। हमें यहां यह विवचनकी जरूरत नहीं है कि किसका दोप है व किसका नहीं निष्पक्ष महाशय स्वयं इस बातको जान सकते हैं।

वास्तवमें तीर्थ उन तीर्थकरोंके हैं जो वहांसे मुक्त पहुंचे हैं। उनके स्थानोंकी पूजा कोई भी जैनी करें उसको जैनत्वके नातेसे पूरा हक है। तथा एक जैनीको तो यही समझना चाहिये और यही भाव रखने चाहिये कि इन तीर्थोंकी भक्तिसे जितने अधिक जीव लाभ उटार्वे उतना ही श्रेष्ठ है।

श्री शिम्बर जी-हमारे मर्न तीयौमें परम माननीय श्री शिखरजी या सम्मेदाचल है जो इसी बंगालमें है व जहांसे अनंत तीर्थकर मोक्ष गए व जावेंगे । इस तीर्थके सम्बन्धमें जो अदालतें परस्पर हो रही हैं. क्या जैन धर्मके सिद्धांतपर लक्ष्य देनसे एक दिनमें नहीं दूर हो सकती हैं ? दिगम्बरी भाइयोंका फर्न है कि श्वेताम्बर भाइयोंके धर्मसाधनमं कोई विद्या न करें। देवेताम्बरी भाइयोंका फर्ज़ है कि दिगम्बरी भाइयोंके धर्मसाधनमें कोई विन्न न करें । जो पुज्यनीय स्मारकंक स्यान सदास चले आ रहे हैं उनको उसी प्राचीन रूपमें चिरम्थाई रक्षे । यदि कोई धर्मस्थान इतने बड़े पर्वतपर बनाना चाहे तो उसमें कोई एक दूसरेको विभ्रकारक न हो। तथा सब ही पर्वतकी जैसी पवित्रता कायम है उसीको स्थिर रखनेका यत्न कर्रे । कोई वस्ती न वसने देवें । उचित तो यह है कि पर्वत पर कोई कार्य नैनियोंकी श्रद्धांक प्रतिकृत च को रोगी विकास पत्नी प्रकार व राहातारा



लेना चाहिये। यदि दोनोंकी एक सम्मतिसे उद्योग हो तो यह बात सिद्ध होम हती है। तब इनकी कोई आवश्यकता नहीं कि पर्वतको पट्टेकी लिया जाय या खरोदा जाय आवश्यकता इस बातप ही है कि पर्वतकी पवित्रतामें भविष्यमें कोई सन्देह न हो। पर परस्पर अने स्य होने से जैन जातिकी सर्वथा हानि होगी व अन्योंको लाग पहुंचेगा। यह सर्व काम परस्पर विश्वास और दिल खोल कर बात करने ही से हो सकता है। आप सर्व भाड़-योंक. करिय है कि इस तीर्थ वंबंबी चिंताका मगाधान प्रतांक अने स्यके बीनको मिटा दें। यदि मंडठके महस्योंने इप किसें सफलता पाई नो कहना होता कि उन्होंने एक बडी भारी फुट राक्षसीका विजय करके अपने निर्मेल यशको स्थापित किया है।

(२) जैन का लेज-नैन जाति एकताके सूत्रमें बंध कर जन समाजको उन्नतिका जो सर्वसे मुख्य उपाय जैन का लेजका स्थापन है उमको धुरामवासं कर सकती है।

जैन कालेजकी आवश्यकता जैन जातिमें मुद्दतोंसे होरही है। पर यह काम अभी तक नहीं हुआ है। यद्यपि स्वर्गवासी दानवीर सेठ माणिकचंदके उद्योगसे कालेजके स्थानी पर नैन बोर्डिङ खुल गए हैं और उनसे कुछ लाम भी हुआ है पर जातीय कालिजक लाभसे कोट गुणा कम है।

यदि विचार कर देखा जाय तो कोई भी जाति ऐमें विद्वानोंके विना उन्नति नहीं पासकती मो उच शिक्षाके भंडार हों व जातीयताका अभिमान रखने वाले परोपकारी हों। मस-ल्मानोंको अलीगड़ कालेजन, हिन्दुंओंको हिन्दु कालेज व हिन्दु विद्यालयने जीता जागता हुआ रक्खा पर जैनियोंमें जातीयताके पैटा करनेका साधन अबतक न हुआ। १२॥ लाख जैनी एक कालेजके लिये थोड़े नहीं हैं। यदि औसन दरने एक २ रुपया भी देवें तो कालिन स्थापित कर सकते हैं। यह काम नैन जातिके विद्वानींका है। यदि दो चार भी विद्वान् परोपकारी गेजुएट अपना जीवन कालेज स्थापनके लिये अपेण करदें और आजकलकी आवस्यकतानुसार विज्ञान शिल्पादिकी शिक्षाको देनेवाला कालेजका मसौदा व नियम बनाकर जगह २ जाकर विना किसी भेदभावके उद्योग करें तो कालेजके लायक रुपया क्या नहीं होसकता हैं ? अवस्य होसकता है। एक आस्त्राय कम देया ज्यादा दे इस प्रश्नको बीचमें न लाकर सर्व जैनी मात्रसे उसकी शक्ति व भक्तिके अनुसार हेना चाहिये। जैन जातिमें रुपयोंकी कमी नहीं है पर सच्चे कार्य कर्ताओंकी कमी है। यदि सर्व आम्नायोंमेंसे तीन चार विद्वान् इस बातका बीड़ा उठावें तो यथाशक्ति मैं भी सहाय कर सकता हूं। सर्व जैनी छोकिक विषय साथ २ पढ़ सकते हैं। धार्मिक विषयोंमें अपनी २ आस्त्रायके भिन्न २ अध्यापकों द्वारा भिन्न २ पुस्तकें पढ सकते हैं अथवा तात्विक पुस्तकें ऐसी भी हैं जिनको सर्व सम्प्रदायके छात्र एक साथ पर सकते हैं। यह एक कार्य है जिसे हम सर्व जैनियोंको मिलके करना चाहिये। कोई २ इस कामको



भी असंभव खयाल करते हैं? यह उनकी मुल है क्योंकि जब आर्यसमानी मूर्ति अपूनक व मूर्तिपूजक हिन्दू जो प्रायः लड़ा करते हैं हिन्दू विस्वविद्यालयंक काममें परस्पर मिल गए तो क्या हम इस विद्योलतिक काममें नहीं मिल सकते? प्रश्न यह होगा कि इस कालेजको कहां स्थापित किया जाय। मेरी सम्मतिमें काशीसे बढ़ कर दूसरा स्थान नहीं है जहांपर हर प्रकारके विद्वानोंका सुभीता व हिन्दू विस्वविद्यालयका सम्पर्क है।

- (३) जीवद्या प्रचार—यह एक ऐसा कार्य हैं जिसको हम परस्पर मिलकं बहुत कुछ कर सकतं हैं। हमें जगह २ मोसायटी खोलनी चाहिये, जीवद्याकी प्रस्तकं व नोटिस बांटने चाहिये, उपदेश देना चाहिये व मांसा-हार निषेषार्थ शाकाहारी भोजनालय खुलवाना चाहिये जिससे मांसाहारी स्वच्छता, स्वादिष्ट व स्वास्थ्ययुक्त भोजन पानेका अभ्यास करके मांसाहारसे बचें तथा स्थान २ पर जो बिल देवियोंके मठोंपर होती हैं उसे एक साथ उद्योग करके बंद करावें।
- (४) एक जैन सहायक बैंक (A Jain Co-operative Bank) खोलें निहसे नवयुक्त छात्रोंको कलाकोशल्यमें शिक्षित होनेको
 व उन्हें व अन्य जैनियोंको व्यापागिदिमें
 लगानको उनार रुपया दिया जाय। इससे
 समग्र जैनजातिकी आर्थिक दशका सुधार हो
 सकता है। इसी बैंकमें हम अपनी जातिके
 उस रुपयेको भी एव सकते हैं जिन्हें हप
 अन्य बैंकोमें ज्याज पर रखते फिरते हैं।
- (५) अमली कारवाई—समजमेंसे जिन २ कुरीतियोंको निकालना है व धर्मसे अविरुद्ध सुरीतियोंका प्रचार करना है उसके लिये मंडलके सभासदों को स्वयं अमली कार्रवाई दिखलानी चाहिये व उसकी रिपोर्ट मंडलके वार्षिक जल्सेमें पेशकर अमली कार्रवाई करने-वाले सभासदोंको धन्यवाद देना चाहिये। बालविवाह, बृद्धविशह, कन्याविकय कोई न करे, संतान जन्म व मरण होनेपर खर्चक सिवाय बिरादरीके जीवन आदिमें द्रव्य न लगावें। विवाह शादी थोडं खर्चमें निब-टावें। अपने २ मन्तानोंको धार्मिक शिक्षा देवें व उन्हें धर्मरीतिसं चलावें । तथा हरएक मभासद गृहस्थकं नित्य कर्म देवपूजा, द्रीन, स्वाञ्चाय, मापायि हादिको करे। पानी छान-कर वर्त । अभक्ष्यसे वर्षे । न्याययुक्त व्यवहार करें, यही उपाय अन जनतामें धर्मज्ञान व धर्माच्या फैलाने व परस्पर धार्मिक विस्वास जमानका है। मंडलको चाहिये कि एक २ फार्म प्रत्येक समासदसे मासिक अमली कार्र-वाईका भरा हर मंगावें उसमें यह भी नोट हो कि अमुक बन्धका स्वाध्याय इतना किया व इसमें यह विषय उपयोगी निकला आदि।
- (६) जैन धर्मके ग्रंथ-जिनमें जीवके
 गुणस्थान मार्गणा व कर्मवंध आदिका वर्णन
 हो व जो अव्यातम रसमें गर्नित हों-जिनमें
 तत्त्वज्ञान विशेष हो उसको अनेक भाषाओंमें
 प्रकाशित करना। इम कानको इसीतरह
 एकतासे किया जासकता है जिस तरह
 वस्त्रईका परमश्रुतप्रभावक मंडल रायचंद

द्वास्त्रमाला द्वारा तात्तिक ग्रंथोंको प्रकट करता है-परस्पर आम्नाय सम्बन्धी पूजा पाठ व साधुओं श्रावकोंके ब हरी आचरण सम्बन्धी व कथा ग्रन्थों प्रकट करनंकी बहुत आवस्यकता है-मंडलके पाम इस ग्रंथ प्रकाशनके लिये कुछ व मंडार रहनेकी जरूरत है।

- (७) स्त्री शिक्षाका प्रचार मंडलका यह भी फर्न है कि वह एक बृहत् कत्या- महाविद्यालय उसी ढंगका स्थापित करे जिस ढंग पर एक जैन कालेज स्थापित करना है। जब तक योग्य माताएं न बनेंगीं योग्य संज्ञानका होना द:साध्य है।
- (८) प्राथमिक शिक्षा का प्रवार-प्रत्येक जैन बाइक व बालिका शिक्षा लेती हैं
 या नहीं इसकी देखभाल करके इमका प्रक्रिय
 प्रत्येक स्थानकी विराद्रीसे कराना मंडलका
 मर्वसे बड़ा कर्तल्य है। नहां नुदी पाठशाला
 व कन्याशाला स्थापित हो मकती है वहां
 स्थापित कराना व नहां नहीं हो एकती हैं
 वहांके लड़के लड़कियोंको सकीरी शालाओंमें
 भिजवाना तथा इसकी रिपोर्ट वार्षिक जल्सेमें
 प्रकट करना चाहिये।
- (९) विधवाओं की उपयोगिता— मंडलका यह कर्तव्यभी है कि विधवाओं की कमीके लिये उनके कारणोंके मेटनेके सिवाय हमें उनका जीवन पवित्र और उपयोगी बनानेकी प्रेरणा करनी चाहिये। आर्थ समानकी विदुषी कुमारी लानवंती देवीने ताव २५ नवस्वरको लक्ष्करमें व्याख्यान देते हुए विधवाओं के लिये

कहा कि उनके लिये श्रेष्ठ मार्ग यही है कि
उन्हें शिक्षा देकर परिचारिका, शिक्षिका,
प्रवारिका, पाचिका आदि बनाया जाय—उन्हें
स्वार्थ त्यामकी मूर्तियां बनाया जाय । देशका
अधिकांश सुधार इन विधवाओं से हो सकता
है। उन्हें बताइये कि सारा देश ही तुम्हारा
घर है व सारे देशके बच्चे ही तुम्हारा
घर है व सारे देशके बच्चे ही तुम्हारा
चर है व सारे देशके बच्चे ही तुम्हारा
है। इनसे जनतामें शिक्षाकी वृद्धि हो सकती
है। घर्मका प्रचार भी इनसे खासा हो सकता
है। बौद्ध कालमें सम्राट अशोककी कन्याने
मीले न जाकर धर्मप्रचार किया था। मंडलका
कर्तव्य है कि विधवाओंकी शिक्षाका पूर्ण
प्रयत्न करावै।

- (१) जैन सेवा सामिति—जैन उत्साही
 नगयुवकोंका कर्तव्य है कि अपनं यहां जो जैन
 मेले होते हैं उनमें जाकर स्त्रीवचोंकी रक्षा
 कर व दुः खियोंकी सहायता करें, सर्वसाधारणके
 लाभाथ उपदेश देवें, दुःखोंका निवारण करें
 तथा जैन संस्थाओंमें काम करें, धर्मीपदेश देवें
 व बोर्डिगोंके सुप०का काम करके छात्रोंको
 सप्थगामी बनावे।
- (११) श्रीमान् पंडित अर्जुनलाल-जी सेटी-अंतमें में आपका ध्यान नैन नातिके सेवक सेटीजी पर आकर्षण करता हूं। वह किस विपत्तिमें हैं यह बात आपसे छिपी नहीं है। अब वह बिलौर जिले मदरासमें भेज दिये गए हैं। भा० दि० जैन महासभाके सहायक मंत्री मूलचंदजी वकीलने ता० १० दिसम्बरको रिजिडेन्ट जैपुरको तार किया था— वह तार तथा उसका उत्तर नैन गज़ट ता०





१७ दिसम्बरमें मुद्रित है। वह यह है-

Kindly inform if provisions made by Government for Arjunlal Sethi's religious scruples in Villore. Jain Sabha shall be grateful to know his offence and period ' of internment—भावार्थ—अर्जुनलाल सेठी-के घार्मिक विचारोंकी रक्षामें क्या प्रवन्य हुआ है तथा उनपर क्या जुर्म है व कनतक महलत नजरबंद रहनेकी है। इसका उत्तर आया-Your telegram 10th, Arrangement being made but at present none of his family willing proceed Villore. Stop for latter portion telegram refer Villore. भावार्थ-तार पाया। प्रबन्ध हो रहा है पर अभी तक उनके कुटुम्बका कोई आदमी बिलौर जानेको राजी नहीं है। दूसरी बातके लिये बिलौर पुछो-इन तारोंको सुनकर आपका यह कर्तव्य है कि सेटीजीका शरीर व धर्मकी रक्षक लिये शीघ दो भाइयोंके भेजनेका प्रवन्ध करें। कटम्बकी अकेली स्त्री व बच्चे वहां कैसे जाकर क्या कर सकते हैं ?

यह इस समय बड़ी भारी सेवा आपके लिये उपस्थित है। यदि सेठीजीका शरीर न ग्हा तो जैन कौमको भी एक भारी कलंक लगेगा। सेठीजीको तीन वर्षसे अधिक नज़रबन्दीमें होचुका। शासनकर्ता कोई धुनाई नहीं कंरते, परंतु इसमें मैं कहूंगा कि समग्र जैन जातिका पूर्ण उद्योग नहीं है। आज सेठीजी पर संकट है कल दूसरे पर आसकता है इससे आप साहबोंका कर्तव्य है कि जिस तरह बने वाइसराय और भारत मंत्रीकी सेवामें जाकर अ.पना दु:ल सुनाओ। यदि सुनाई न हो तो इंग्लैंडमें पार्लियामेंटमें जाकर प्रकार करो— एक जाति बंचुके संकटको दूर करना आपकी जाति व धर्मकी रक्ष का उपाय है। स्वेताम्बरी भाइयोंको भी दिगम्बरियोंके माथ पूर्ण योग देकर इस परम कर्तव्यको निर्वाह करना चाहिये। अंतमें में बृटिश राज्यकी इस महा भारी युद्धमें विजय कामनाकी भावना करता हुआ

युद्धमं विजय कामनाकी भावना करता हुआ इस हिंसामय युद्धकी शीघ्र शांति चाहता हूं। और अपने उपस्थित अनुपस्थित जैनी भाइ-योंको प्रेरणा करना हूं कि वे अपनी सर्कारकी युद्धमें विजय होने तक हर तरह तन मन धनसे मदद करने रहें।

में अपने जिनी भाइयोंसे यह भी कहुंगा कि वं अपने देशके सुधारके कार्योंमें भी पूरा २ योग देवें। वं भी भारतके एक अंग है। भारतमें शिक्षा प्रचार हो, स्वास्थ्य स्थिर रहे, दुभिक्षोंका अंत हो; व अहिंदा प्रमंका प्रचार हो, इन विषयमें पूर्ण योग देवें। यहांके गरीब मज़दूरोंके लाभार्थ यहांका बना कपड़ा आदि सामान यथासंभव व्यवहार कर देशको लाभ पहुंचांवें।

प्रिय भाइयो । नो कुछ मैंने कहा है उसका सारांश यह है कि आप छोन अपने नीवनको जिनधर्ममय बनाओ और उस आतन्दका स्वाद छो नो अपने आत्माका स्वताव है। तथा इस निवधर्म व नैनपमानकी उन्नतिके छिये जोर उपाय मैंने विचारे सो

3

आपके सामने उपस्थित किये हैं। आशा है आप लोग हंसवत् इसमेंसे सार ग्रहण कर मुझे कृतार्थ करेंगे। और जैन जातिकी आवश्यकता- ओंको विचार कर इस कलकत्तेके अधिवेशनको स्मरणीय बना देगें। आपलोग पारसी कौमसे १२ गुणे हैं—यदि आप प्रमादको हटाकर अपनी उन्नतिके लिये कमर कसके खड़ हो जावेंगे तो मुझे कुछ भी निराशा नहीं है कि आप उन्नतिपथ पर आकृत होजांयगे। आप कभी अपने चित्तमें निराशाकों न आने दें। मदा सच्चे मनसे श्रद्धापूर्वक पुरुपार्थ करते चले जावें। वास्तवमें पुरुषार्थका फल अवश्य होता है।

मंगलं भगवान वीरो । मंगलं गौतमो गणि । मंगलं कुंदकुंदाद्यो जैनधर्मोस्तु मगलम ॥

अब उद्धार कैसे हो ?

लगी दिन रैन है चिन्ता कि अब उद्घार कैसे हो। पड़ी मंझधारमें भगवन् ये नैया पार कैसे हो ॥१॥

चैक आँधी निराशाकी न सृक्षे अपना वेगाना। खिवैया चोकड़ी भूले प्रभो निस्तार कंसे हो ॥२॥

नदी जीवन समरकी है विजय उद्देश जिसका तट। पहुँच उसतक अविधाकी यह हल्का भार कैसे हो ॥३॥

भयानक भृम भँवरमें एड गई सब मान मर्यादा । हुए मदमत्त स्वारथमें सुमित संन्वार कैसे हो ॥४॥

सभी कर्तव्य विसराये न निश्चय आत्म शक्तीपर। भला फिर सत् विचारीका अमय उद्गार कैसे हो ॥५॥

"प्रेमी" हजारीलाल जैन-आगरा।



(ले॰ जैन धर्मभूषण ब॰ शीतलप्रमादजी)

यह उत्परका शीर्षक एक ऐसा मूल मंत्र है. जिमके आवार पर सारे जगतुकी सर्व प्रकारकी उन्नित निर्भर है। जिसकी जिस बातमें पहले श्रद्धा होती है तत्र उसका प्रयस्त हार्दिक प्रवसं होता है। जिनका उद्योग हृदयसे किया जाता है उनमें यदि बाधक कारण कोई उप-म्यित न होकर साधक कारण मिल नांय तो वह कार्य अवस्य सफल हो जाता है। पहले हम लौकिक कार्यों ही में देखते हैं-जिस किसीको यह श्रद्धानहो कि वह युद्धमें शत्रका सामना कर सकेगा और वह युद्धमें जाए भी तो उसके भीतर अश्रद्धाभाव साहसके गुणको मस्म कर देगा। वह या तो कायर हो भाग जायमा या शत्रुसे पराजित होगा । मैं वीर हं-साहसी हं यही श्रद्धा उसे साहसी बनाएगी और वह बहुत अंशमें सफलता पालेगा। एक व्यापारी मन्द्रप किसी मालको उसी समय खरीद करता है जब उनके चित्तमें यह श्रद्धा गाढ हो जाती है कि इनका व्यापार करनेसे मैं अवस्य लाम उठाऊंगा। यदि अश्रद्धाः भावसे करेगा तो घोखा खा जायगा।

श्रद्धाके बलते ही पाश्चिमात्य देशोंने आश्चर्य-वारक जड़ पदार्थोंकी उन्नति वर डाली है। एक विद्यार्थी इस श्रद्धांसे कि में इस विषयपर ध्यान दूंगा तो अवस्य सीख जाऊंगा, उस



विषयका पारगामी हो जाता है। यदि सशं-कित व अश्रद्धाल हो तो उसका प्रयत्न उसी थके हुए बैठके समान होता है जो जाना तो न चाहे पर कोडोंकी मारसे चलाया जाय। श्रद्धांके बलसे एक विज्ञान वेत्ता किसी पदार्थके गणोंकी परीक्षामें एकचित्तता न वेर्यके साथ काम कर सकता है और अपने चिर प्रयत्नसे इच्छित खोजमें सफल हो जात। है। यह श्रदा है जो उसको आगे उत्तेजित उसी तरह करती रहती है जैसे एख़िन गाडीके डब्बोंको दकेइता व खींचता रहता है। श्रद्धांके बलसं ही बेतारका तार, टेलीफोन, हवाई जहाज, विज्ञाकी शक्तिकी खोज आदि संसारोप-योगी आविष्कार निकल पडे हैं। एक जानेवाला तन ही किसी स्थानपर पहुंच सकता है जन उसके चित्तमें यह श्रद्धा हो कि मैं चल सकता इं और वह हार्दिक भावसे उत्साहसे भरा हुआ चलने लग जावे-देखा जाता है कि श्रद्धांके बलसे एक ८ या ९ वर्षका बालक ६ मीलकी चढाई थ्री सम्मेदिशिखर पर्वतकी कर छेता है। उसके दिछमें यह विश्वास होता है कि मैं पहुंच नाऊंगा बस यह विधास उसके चित्तको उत्साहित करता है। वह उत्साह उसे बेघडक इच्छित स्थानपर पष्टंचा देता है।

श्रद्धांके प्रतापसे ही एक शिल्यकार या एक चित्रकार अपना उपयोग किसी शिल्य या चित्रके यथोचित बनानेमें टीक २ लगाकर उसमें सफलता पालेता है। वास्तवमें श्रद्धा कार्यकी जननी है। श्रद्धा चारित्रको सफली- भूत करती है। श्रद्धा ही ज्ञानको सार्थक बनाती है। श्रद्धा विना ज्ञान अज्ञान है—न होनेके समान है।

जापान देशने जो छौकिक उन्नति इतनी आश्चर्यननक करडाली है उसका मूल कारण उसके शासनकत्ती व प्रनामें इस वातका हह श्रद्धान होता है कि हम अन्य देशोंके समान अवस्य हो सकते हैं। यदि अपनी शक्तिकी अश्रद्धा होती तो उन्नति पथपर रुचिसे न चलते हुए कभी भी सफलता न होती। मारतवर्षमं जो लौकिक उन्नतिकी गति अति मंद हो गई है इमका कारण हम उन्नति कर सकते हैं और करें इस गाड श्रद्धाका अभाव है। विना श्रद्धाके एक चींटी दीवार व टेंढे स्थान पर नहीं चढ सकती है। चाहे उसे थाहमें व्यक्त न हो पर उसकी आत्मामें यह श्रद्धा है कि वह चढ सकती है इसीस प्रनः प्रनः गिरने पर भी चढती है और एक द्फे अपने कार्थमें सफल हो जाती है। महा आल्सी मनुष्यको भी श्रद्धा महापरिश्रमी बना देती है। एक आलमी आदमी बैकार बैठा हो पर हो वह लोमी। यदि उसे कोई कहे कि अमक स्थानपर जानेसे तुझे १०००) की प्राप्ति होगी पर तू आयगा तो होगी अन्यया नहीं होगी । जिस समय वह छोमसे प्रेरित हो इस बातपर दृढ़ विश्वास कर लेगा उसका मन पका इरादा बांघ लेगा कि चाहे निम तरह वहां पहुंचना बम उस श्रद्धावश अवदय जायमा और अपना लाम पायमा । लौकिक उन्नतिके जो २ साधन हैं उनको



इसप्रकार करने से सफलता होगी ऐसा उपदेश भारतवासियों के दिलों तक पहुंचना चाहिये। उनके भीतर यह उपदेश जमना चाहिये। वास्तवमें बचनमात्रका उपदेश चित्तमें अंकित नहीं होता जब तक कि उसके साथ उदाहरण भी न हो। दृष्टान्त सहित उपदेश सचा काम करता है और अवस्य उस उपदेशपर श्रद्धान जमा देता है।

यदि भारतवासी शिक्षकवर्ग छोकिक उन्नतिके साधनोंका श्रद्धान करके उस श्रद्धाके अनुकूल स्वयं परिश्रम करने लग जावें और तब उपदेश कोर्र अवस्य उनका वचन अनपड़े किसानोंको, अनपड़े शिल्फारोंको असर कर जायगा और वं इस बातमें श्रद्धा करलेंगे। बस श्रद्धाके होते ही उनको जो कुछ ज्ञान हुआ है उसको अमली काममें परिणमन करने लग जायंगे।

कहते हैं सब कोई कि भारतवासी अपने देशकी बनी चीनें ही काममें लावें। पर ऐसी चीनें जों सस्ती और सुंदरहों, विदेशी चीनोंके मुकाबलेमें ठहर सर्के हम तैयार करके बनावें ऐसा उद्योग नहीं होनेसे कोई सफलता नहीं होती। इसका कारण यही है कि जो कहते हैं वे स्वयं श्रद्धालु नहीं। यदि सची श्रद्धा होवे तो स्वयं उद्यम करें बस तब फिर उनका उपदेश व्यापक होके अपना असर कर डालें।

और जो एक दो भारतवासी कुछ उद्यमी हैं और कुछ चमत्कारिक छौकिक उन्नति बता रहे हैं जैसे डा० बोस, डा० पी० सी० राय उनकी इस उन्नतिका क्या कारण है। पता लगेगा कि उनका दृढ़ श्रद्धान ही इसमें कारण है।

दूर क्यों नाइये। निप्त स्वराज्यके लिये आज सारा भारत छाछायित हो रहा है-हिन्द मुसल्मान एकचित्त हो स्वराज्य स्थापनकी भावना भारहे हैं-इस स्वराज्य भावके इतने व्यापक होनेका कारण क्या है ? यदि आप देखेंगे तो पता चलेगा कि यह लोकमान्य तिलक, व मिस एनी बेसेन्टकी हड श्रद्धा सहित होकर उसके अनुकुछ वर्तन करना है । यदि छोकमान्य तिलक स्वयं हद श्रद्धानी न होते व अनेक आपत्ति आने पर भी अपने श्रद्धानके अत्यागी न होते-श्रद्धान बद्छनेके बद्लेमें प्राणस्थाग ऐसे फलकी भी परवाह न करते होते तो आज उनका श्रद्धान इतना व्यापक न होता और उनकी जैसी गाढ मान्यता भारतवासियोंके दिलोंमें है वह हरगिज़ न होती। यदि मिस एनी बेसेन्ट जेलमें पड़नेके भयसे अपनी स्वराज्यकी श्रद्धा छोड़ बैदतीं तो कभी भी सफल न होतीं। अद्धा हद रखकर जो उन्होंने कष्ट भोगा उसहीका परिणाम उनकी श्रद्धाका भारतव्यापी होना और उनकी सम्मति भारतियोंके चित्तमें सहस्र-गुणा बढ जाना है।

इसीसे यह कहना सर्वथा सत्य है कि "श्रद्धा उन्नतिकी नड़ है"।

अब विचारना यह है कि मानवको क्यार उन्नति करना है निमके लिये उसे श्रद्धाकी आवश्यकता है।

एक मानव केवल जड़ परमाणुओंसे बना

3

हुआ मौतिक शरीर नहीं है किन्तु एक आत्मा पदार्थके साथ जड वस्तुओंसे बना हुआ ढांचा है। वास्तवमें देखा जाय तो मानव तो बह आत्मा है-और यह शरीर उसके रहनेका झॉनड़ा है। जगत्रें जो दो प्रकारकी उन्नति प्रसिद्ध है उसमें पारमार्थिक उन्नतिका सम्बन्ध आत्मासे और छौकिक उन्नतिका सम्बन्ध इस जडके बने ऑपडेसे है। इस ऑपड़ेकी ही रता, इसीको ही खिलाने पिलाने, नहाने, मुलाने, पहनाने, चलाने, फिराने आदिके कामोंके लिये अनेक लोकिक वस्तओंकी आवश्यकता पडती है-उनको विना किसी क्छके रहना-उसमें कोई बावक न होना यही छौकिक उन्नतिकी हट है। एक व्यक्ति छीकिक उन्नतिका फल अपने उस दारीरमें रहने तक ही मोग सकता है आन वह फल उसके छिये नहीं हो सकता-हां इसमें कोई इनकार नहीं हो सक्ता कि उसका फल उसकी सन्तान व अन्य जन भोगें। पर पारमार्थिक उन्नतिका फल इतना सुन्दर है कि जितनी २ उन्नति मानव करता नायगा उतना २ फल पाता जायगा। ज्या वह भविष्य फल भीवनको भी उत्तम बनानेका मूल कारण पढ जायगा । इतना ही नहीं उसका संस्कार उसे और अधिक उन्नतह्व होनंके लिये बाध्य करेगा । यहां तक कि उन्नतिकी चरमसीमा जो परमात्मपद है उसको पहुंच नायगा ।

पर इम पारमार्थिक उन्नतिके छिये मी अद्भाकी आवस्थकता है। अद्धा विश आत्माकी कोई भी उन्नति नहीं होसकती।

आत्मा, धर्म, उपका फल यद्यपि ज्ञानीकी दृष्टिमें प्रत्यक्ष है पर अज्ञानीको परोक्ष मालुम होते हैं-इसीलिये उसे इनका या तो विश्वास ही नहीं होता और यदि होता है तो यथार्थका नहीं होता चाहे जैसेका होता है पर इससे काम सिद्ध नहीं होता । नैसे कोई दिहलीसे कलक-त्तेको जानेकी इच्छा करनेवाला यदि वह उल्टा श्रद्धान करले कि दिहलीसे पश्चिमकी ओर कलकता है और इस श्रद्धावश उधर गमन भी करें तो भी वह कभी कलकत्ते नहीं पहुंच सकता। वह तो छाहौर व पेशावर आदिकी तरफ जाता हुआ कलकत्तेसे और अधिक परे हटता हुआ खेदखित और द:खी ही होगा परंत यदि उसे यह श्रद्धान होगा कि दिहलीसे पूर्वकी ओर कलकत्ता है और वह उसी तरफ गमन करेगा तो वह अवस्य पहुंचेगा । इपुलिये पदार्थ या कारण-मई मार्गका श्रद्धान यथार्थ होना चाहिये। तन ही हमार कार्थमें सफलता होगी। आत्मोन्नि नव बांच्छनीय है तब उसके अर्थ यही होसकते हैं कि आत्मा जहां तक शुद्ध होसकता है वहां तक यह शुद्ध और पूर्ण होनाय । इसमें कोई विकार या दोष न रहे-अतएव इस वातके हड विश्वासकी ज़रूरत है कि आत्माका स्वरूप तो अमुक है। तथा यह अपनी अञ्चल्लाको मेट सकता है। इन दो बातोंका इद श्रद्धान होना ही आत्मो-न्नतिकी महकी प्राप्त वर लेना है।

आस्मार्के स्वरूपके विषयमें नगत्के





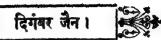
急 उनमें बद्धिमानोंके भिन्न २ मत किसीको ठीक मानना यह बढ़ा दुष्कर कार्य है। अतएव यदि न्यायशास्त्रका ज्ञान हो तो उसके द्वारा परीक्षा करके निर्णय करे परंत् यदि ज्ञान न हो तो इस ख़टपटको छोडकर अपने ही अनुमवसे विचार करे।

न्यायशास्त्रके नोरसे निप्तने आत्माको सिद्ध कर लिया हो तौभी उसको अनुभव द्वारा समझनेकी जरूरत है।

वास्तवमें जब तक अपन अनुभवमें कोई बात न खुलेगी तबतक उमपर श्रद्धा नहीं बैठ सकेगी । इपछित्रे स्वानुभवसं जाना हुआ पदार्थ ही प्रथम ज्ञेय हो कर हैय उपाइयमेंसे किसीमें छांट लिया जाता है।

एक स्थूड ज्ञानवाला भी थोंड विचारसे समझ लेगा कि मेर्में और मेर कलम या कागनमें क्या भेद है । मेरेकी कोई थप थपावे में तुरत जानकर उसकी तरक राग या द्वयका कोई न कोई भाव करूंगा परंतु कलमको चाहे जैसा करने पर भी इसमें इसके साथ की हुई कियाका इसे ज्ञान नहीं होता इसीसे इसमें राग द्वेप कोई पैदा नहीं होता। यही हाल किसी जंतुके मुदें शरीरका है। एक मक्खी अभी २ खूब दौड़ती कूदती फिरती थी, मेरी थाछीके चारोंओर आती थी-खूतकी मुगंब उस मोजनकी तरफ खींनती थी-उसे हटाते थे वह फिर आती थी। पर जब कहीं वह घीमें गिर पड़ी और मर गई तब वह फिर क्रिया करनंसे रहित हो गई। इनकी जिन्दा और मुदी दशामें क्या अंतर रहा। इन्हीं

मोटी २ गर्तोको विचारनेसे पता छग जायगा कि कोई शक्ति हमारेमें व निन्दा मक्लीमें ऐसी है जिमसे ज्ञान पूर्वक किया होती है पर वह शक्ति कलममें या मुदी मक्खीमं नहीं है। इसीको चेतना शक्ति कहते हैं। यह शक्ति जिसमें होती है। वहीं आत्मा या जीव है जिसमें नहीं होती वही अनात्मा या अ**जीव** है। क्योंकि कोई भी शक्ति या गुण किसी शक्तिधारी या गुणी पदार्थमें ही रह सकती है। गुणीसे बाहर उसका कहीं भी दरीन नहीं होता । सफेदी सफेद बस्तुमें, गुलाबी गुलाबमें, कालम कोयलेमें सुनहरायन सुवर्णमें ही नज़र आते हैं। इनके सिवाय कहीं अलग षाए नहीं जाते । आत्मामें चेतना है असके सिनाय और भी क्या २ गुण हैं सो भी कुछ हमारे ध्यानमें अपने अनुभवसे ही आ जांको। जब हमारे ही अंदर कोध, मान, माया...होम चारकी तीव किया होती है तब एक प्रकारका भारीपन संक्षेत्रापन व आकुळतापन हो जाता है और जब कम होते हैं तब हलकापन, सातापन व निराकुलतापन हो जाता है। बात यह है कि कोष, मान, माया, छोम आदि विकारी माव हमारे असली स्वमाव नहीं हैं इसीसे इनके होनेमें हेश होता है-अत्माका असल स्वभाव इनसे रहित शुद्ध वीतराग है। यह विकारी भाव शरीरादि निमि-त्तोंके संयोगसे ही होते हैं । और अधिक विचारे।मे तो यह भी पता छमेगा कि भानन्द भी आत्माका गुण है। जब कमी हमारे भार्वीमें शांति आती है व



मोह कम होता है-स्वयं छुख झलकता है यह सुख सन्चा सुख है और यह आत्माकी एक गुण है।

आगे विचार करते हैं तो माल्य होता है कि यह आत्मा हमारे शारीरके आकार है क्योंकि स्पर्श की हुई बस्तुका ज्ञान पगसे मस्तक तकका होता है-उससे बाहरका नहीं होता है। जब प्रत्यक्ष रूप रम गंध स्पर्श गुणोंको रखनेवाले जड़ पुद्रलमें कि निससं यह कलम या कागन बना है चेतना नहीं है और हमारी आत्मामें है तब यह स्वयं सिद्ध है कि जन वह मूर्तिक है तन यह आत्मा मूर्तिक नहीं किंतु अमूर्ति है। विद्यातिक हो तो यह भी जड पदार्थकी तरह अपनी इन्द्रियोंसे प्रहणमें आने छगे। अमृतिक होने पर भी यह अपना आकार रसती है वयों कि विना आकारके तो कोई वस्त जगतमें हो ही नहीं सकती। जिसमें गुण होंगे वह बस्त होगी। अने वस्तु होगी वह आकाशमें रहेगी। अतएव कुछ न कुछ जगह घेरेगी।

इस्यादि वार्तोसे विचार करनेपर मालुम हो जायगा कि यह आत्मा जो मेरे ही जरीरमें है शरीरसे मित्र है-शरीरके आकार है। चेतनामई अर्थात् ज्ञान द्र्शन-मई है, कोधादिसे रहित वीतराग है। तथा आनन्दमय है । और यह अविनाशी अर्थात नित्य भी है क्योंकि कोई भी वस्तु जगत्में प्रस्था नहीं होती, केवल अवस्था अवस्थ बदलती है। लकड़ीसे कोयला होता है पर

जिन परमाणुओंसे लकडी बनी है वे सबके सब स्थिर रहते हैं। केवल उनकी दशा बदछती है-इसीनरह आत्मा कमी नाश नहीं होता पर अवस्थाको बदलता है। बालक से युवा, युवासे वृद्ध, पश्चसं मनुष्य, मनुष्यसे पशु इत्यादि स्थान अवस्थाको तथा भावोंकी अपेक्षा समय २ अवनी परिणतियोंको बदलता है इसीसं यह जिस समय नित्य है उसी समय अनित्य है। इनतरह द्रव्यकी अपेक्षा नित्य पर पर्योज बदलनेकी अपेक्षा अनित्य है ।

तथा अभ्यासके बलसं यह सिद्ध हो नायगा कि यह अपनी अज्ञाद्धाको थोडा २ मेट सकता है। जो कोड एक क्षण मात्र भी अपने मानको सर्व पर दृष्यों में हटाकर अपने ही आत्माके अवल स्वरूपकी तरफ ले जावे और उहरे उसी समय विदित होगा कि एक विछ-क्षण शांतिका छाम होना है। इसतरह नित्य अपने आत्माका परद्रव्यसे मिन्न अनुभव करते २ व उसका गुण विचारते २ आत्माकी दशा उन्नतरूप होती है।

एमा ही श्री अमृतचंद्र आचार्यने कहा हैं-निजमहिमस्तानां भेदविज्ञानशत्त्वा । भवति नियतमेषां शृद्धतन्वोपलम्भः । अचिन्द्रितमस्त्रिलान्य इन्य दुरं स्थितानां । भवति सति च तस्मिन्नक्षयः कर्म मोक्षः ॥४॥ भावार्थ-मो कोई मानव भेद विज्ञानकी शक्तिसे अपने आत्माकी महिमामें रत होते हैं उनको शुद्ध भात्मतत्त्वका लाभ अवश्य होता है। उसके छाम होनेपर जो निश्चलपन अन्य द्रम्योंसे दूर रहते हैं उनको अवस्य उन



कर्मोंसे मोक्ष या छुटकारा हो जाता है जिनके कारण यह अशुद्ध हो रहा है।

बस स्वानुभवसे मैं आत्माकी अशुद्ध-ताको क्रमशः मेट सकता हूं इसका पूरा २ श्रद्धान हो जायगा। यही श्रद्धामाव आत्मो-क्रतिकी जड़ है।

जो कोई मानव अपने जीवनके अमूल्य समयको जो कि मध्यकी अवस्थाका है केवछ-मात्र शंकाशील रहनमें व आत्माक व धर्मके जाननेकी वे परवाही रखनेसे व जानकर भी श्रद्धा-भाव लानमें विता देते हैं उनका आत्मा रागद्वेपादि विकारोंसे निरंतर मैला रहना है। तर्क करतेर व झगड़ा करते २ उपका अमूल्य समय नष्ट हो जाता है। बृद्धावस्था आनेपर वे कुछ न कर सकते हुए एकापक मरण आने पर पछताके रह जाने हैं।

इमिलिये उचित है कि एक देफे श्रद्धा पक्की जमाकर अभ्याम पर लग जाना चाहिये।

प्रिय पाठकां! धार्मिक और लौकिक हर प्रकारकी उन्नतिकी जड़ श्रद्धा है ऐसा जानकर श्रद्धा, रुचि, धतीति, शौकके साथ हर-एक काम करो अवस्य एकल्डा प्राप्त करोगे। नैन धर्मका तो यह मूल मंत्र है कि सम्यक्तव बिना ज्ञान अज्ञान और चारित्र कुचारित्र है। सम्यक् श्रद्धावान थोड़ा भी चारित्र पाले तौमी वह अच्छा है — सुमार्गी है क्योंकि वह श्रद्धा व रुचि विशेष चारित्र पालनेकी रखता है पर अधिक करनेकी अयोग्यता व लाचारी पर ही नहीं कर सकता है।

इत्यादी कथनको समझ कर श्रद्धांको जमा

कर हर एक मानवको विचार पूर्वक पारमार्थिक और छौकिक उन्नतिमें दत्तचित्त रह कर आवरण करना चाहिये। प्रमाद, आछम्यमें समय न खोना चाहिये।

सुन्व शांति चाइनेवाले बन्धु बहिनोके लिये उपयोगी हित वचन । ॥

- (१) क्षमा ही वीरका मूपण है। अपराधी जीव तकके छिये महा विचारना कि जिससे वह किसी समय सद्माग्योदयसे प्राप्त शुम अवसरका लाम लेकर अपना भावी जीवन सुधार सके और स्वयं सुखी बनकर अन्यको सुखी कर सके।
- (२) स्व-परहितके छिये प्राप्त शक्तियोंका सदुपयोग करना ही मानव जीवन पानेका उत्तम फल है।
- (३) जिनके विचार, बचन और आचार शुद्ध-निर्दोप होंगे वे ही अचूक स्व-परहित कर सकते हैं।
- (४) निनके विचार, बचन और आचार पछवित नहीं वे स्व-परहित करनेको समर्थ नहीं।
- (५) किसी भी शुभ या अशुभ कार्यका आदि कारण विचार ही कहा जा सकता है, इसीलिये विचार शुद्धिकी अधिक जरूरत है।
- (६) कितने ही शुभ विचार करके ठंडे पड़ जाते हैं। उत्पन्न हुए शुभ विचारोंको कार्य-रूपमें परिणत करनेमें ही वास्तविक छाम है।

^{* &#}x27;सत्संगसे ' अनुवादित ।

- (७) कायर पुरुष कोई मी उपयोगी हित-कार्य नहीं कर सकते। मध्यम अणी बाले शुभ कार्यको शुरू तो कर देते हैं, परन्तु तिनक भी विध्न आने पर उस कामको अधूरा छोड़ देते हैं। सिर्फ उत्तम कोटिके मानव ही चाहे जिस तरह हो अपने हाथमें लिये हुए कार्यको पूरा करके स्वपुरुषार्यकी सिद्धि प्राप्त करते हैं।
- (८) अविश्रान्त प्रयानसे, वैर्थ और श्रद्धा रखकर जगत्का हित करने वाले विरले होने हैं ऐसे ही नररत्नोंकी बहुत जरूरत है!
- (९) "जननी! जनिये मक्त जन, के दाता के शूर। नहीं तो रहिये बांझ ही, मती गवांवे नूर।" सच्चे मक्तों, सचे दाताओं और सच्चे शूरवीरों की ही कमी है। ऐसे ही नरस्नों की माताएं स्त-कूँल वाली कहाती हैं।
- (१०) जिनका लक्षबिंदु सदा काल एकसा रहता है वे ही समानका हित कर सकते हैं। कहने मात्रसे कुछ नहीं होता यह निर्विवाद सत्य है।
- (११) चो निःस्वार्थ मावसे समान सेवा कर सकते हैं वे ही सांचे समान सेवकके गुणों की यथार्थ कदर कर सकते हैं।
- (१२) बहुत कुछ कहा धुना और तत्त्वसार बात की शोघ की, अब तो उसका अमल करना ही रहा है।
- (१२) जिनमें हिताहित समझ सकनेकी बुद्धि जागृत करनेवाला विवेक-दीपक प्रकट हुआ है उनके लिये इशारा काफी है।
 - (१४) परंतु जिनमें घोर जद्दता, अज्ञानता

न्याप रही है उनके छिये नाहे जितना कहा जायतब मी "भैंसके आगे भागवत पसारना है।

- (१५) मुख-ताचा मुख, मुख-दु:ख रहित स्थायी मुख किसे प्रिय नहीं? और दु:ख अशांति अन्याय अनीति किसे प्रिय होगी? परंन्तु सच्ची मक्ति—खार्थत्याग रहित मुक्ति । आत्यंतिक मुख, कि जिससे अनंत दुखमेंसे छुटकारा हो सक, कैसा?
- (१६) बाह्य शत्रुओं की अपेक्षा काम, कोघ, मोह, मद मत्वरादिक अंतरंग शत्रु अधिक बहुवान और दुःख देनेवाले हैं। इनका नाश करना सबसे पहले अत्यावश्यकीय है। अंतरंग शत्रुओं को जे अपनी शक्ति बलसे जीत लेगा उनके सामने सभी बाह्य शत्रु पानी भेरेंगे।
- (१७) दृष्पेकी गलती देखता महन है, पर अपनी अनंत भूनें जान लेना, लक्षमें आना बहुत कठिन है। नव अपनी खुदकी भूकें भो क्षम्य न हों बराबर बातका उन्हें जीती नागती दुःख देनेयाली हायन जान ले तभी अनंत शक्तिवाडा अपनेको गितना ठीक है।

रामधाल, मोदी-देवरी (मागर)

पुत्रीको माताका उपदेश

ANDY

(ससुराल जाते समय)

लग्नादि प्रसंगोंपर बांटनेके लिये अवश्य मगाइये। पृ. ४० मृत्य सिर्फ ना) और ६) सैंकडा। मैनेजर दि. जैन पुस्तकालय-सूरत।





मम कीर प्रमो!!!

(लेखक-लोकमणि जैन-सहाबीर औषधालय। गोटेमांव C. P.)

द्यासमुद्र, गुणिनिधि, दीनानाथ, अनन्त ज्ञानी, सर्वदर्शी, सर्वहितैषी, क्षमाभूषण, सत्य-सिन्धु, जितेन्द्रिय, ज्ञान्तिमूर्ति, सर्वबन्धु, और कर्मभेत्ता महाबीर, मम बीर प्रभो! आइये! आइये! मम हर्यमें बिराजिये, ज्ञानज्योतिसे हर्यान्य-कार नष्ट कीजिये। आइये! ज्ञान्तिसमुद्र सन्तप्त हृद्यको ज्ञीतल कीजिये। हमें अपना रास्ता बतलाइये—स्वतन्त्र बनाइये, सरल परोपकारी एवं परम वीरताका पाठ सिखाइये।-तव आइये! ज्ञीघ ही आइये, अब विलम्ब न कीजिये।

प्रभों ! हम पतित हैं, कर्तव्यश्रष्ट हैं, लक्ष अष्ट हैं, हृदयशन्य हैं, प्रेमरहित हैं, ऐन्य बंबसे कर्मबंधकी तरह आपसे बिलग हैं, तब हमारा पुण्य दूर है, शुनक्रम दूर हैं, अमीट फलानु-भवन दूर है, भक्का हृद्य दूर है, बात्सल्य दूर है और हमारा आत्मिक स्वमाव भी दूर है। प्रमो ! आइये हमें पावन की निये, प्रेमी बनाइये, कुछ कार्य सिखाइये! अब चैन नहीं, सुख नहीं, विश्राप नहीं और तनिक भी शान्ति नहीं है । कषार्थ बढ़ रहीं हैं, अपपान कर रहे और हो रहे हैं। माया विन काम नहीं चलता, लोम विन पद नहीं चलते, दरवाजेसे निकलते समय चोखट लग गईतो विना लाठी प्रहार किये कोष शान्त नहीं होता। प्रमो ! हमारी स्थिति विगड़ती जा रही है, समाज सच्चे सेक्कोंसे खाली है। पुरानी लकीरें

मिटती नहीं। समान गहरी नींद है रही है. व्यसन छाया जैसे साथ छोडते महीं। ज्ञान दीपंक बुझ गया-तुम्हारे बाक्य शास्त्रीसे बाहर हो गये, उनके बंदले हमें तुमसे बिडग रखनेके लिये बहुतसे असम्बद्ध बाक्य उनमें योनित कर दिये, पर प्रमी, छाया तुम्हारी ही है। आश्रय तुम्हारा ही और साक्षी तुम्हारी ही है। जैन नाटकशालामें यह तुम्हारा ही परदा आगे लग रहा है 'अहिंसा परमो धर्मः।' प्रमो ! परदा सुन्दर है, तुम्हारा नाटक बनाया मी श्रेयस्कर है, सामान सब मुन्दर है, पर प्रभो ! परदेके अन्दर खेल जो आज हम खेल रहे हैं, वे सुन्दर नहीं हैं, इस नाटकशालामें हम कृषे २ तडवार चलाते हैं, लाठी मारते हैं। परस्त्री सेवन करते हैं। चोरीसे चुकते नहीं। डांके डालते हैं। शराय पीते हैं। मांसका भी कभी कभी स्वाद हे छिया करने हैं । झुड बोलते हैं । मुक्दमें लड़ते हैं । माई माईको शूली चढ़वा देते हैं। मान करते हैं। छलकपट बिन दिन नहीं खोते। दो बारको मृतक चर्मावात किये सोते नहीं । गरीबोंका ख्न विना चूमे पानी नहीं पीते । किसी बड़े आदमीको विना कोसे कवछ गृहण नहीं करते। अब हमारे यही बन हैं और येही मोशके अनन्त मार्ग हो रहे हैं। नाटकके पात्र 'पात्र माने बर्तन हो रहे हैं, चाहे तो आग रखलो। चाहे पानी भरलो । माहे घान्य मरलो । माहे मुनासे मरे रही । चाहे उड्टे रखदी । चाहे सीधे रखे रहने दो। हो सके तो मुंहपर दक्कन भी रखदो उन्हें इतरान नहीं । प्रभो ! उसीके

अन्दर उसी परदेकी आइमें बड़े २ रतन, मोती, हीरा, पना, चन्द्रं अग्रे करवा तकिया क्रमाये तींद नदाए शरद मेचके तमान मुन्दर बैंडे रहते हैं। नगरनारीं निजनारीं हो रहीं है। उनकी उर्वशी उनकी प्यारी, उनकी दछारीं अर वे ही 'स्याही सोख' **जैसी हो रहीं हैं-**शुभ अवसरों पर इन्हींको रंग रंगीले और चमकीले वन्नः मुनर्णोसे समजित कर सभागंडपमें प्रातिहार्याकी उनमें स्थापना कर स्थापित कर देते हैं। ये सब खेड अब तुम्हारी परम पुनीत नाटचभूमिमें हो रहे हैं-पात्रोंने विद्यक भी बढ़ा योग्य चुन किया है-देखों वह खडा है-टाल पीली आर्खे किये । क्योंजी तुम्हारा नाम क्या है! हमारा नाम-बिद्रपकराट्का नाम, खास राशिका नाम है। पंत्रमकाल...। वयों मुना। जी हा कहना नहीं होगा। आनकछ कई पण्डितोंकी राशि मी पंचमकालसे मिलती जुलती है, न मानो तो किसी ज्योतिषीसे पूछ है। ।

प्रमो ! आइये ! आनेका समय है । हम नहीं: पर समय तुम्हारा अवतरण चाहता है। प्रे**मक्क हमारा टू**ट गया । इसमें गांठ बांच जाइये । पैर शिथिल पड़ गये. बिना सहर मंहकी मनिखयां नहीं उड़ती । स्वतन्त्रताका सनक पढ़ा जाउये । परतन्त्रताकी वेही काट नाइये। एक घड़ीके छिये नित मंदिर ही में आकर जैनियोंको उपदेश द नाइये । पापाण-मृतिसे ही कहला दीत्रिय कि तम सच्चे जैती बनो । बाहर सफेदी और मीतर कालिया मत रक्सो । वगुष्ठावृत्ति छोड़ हंसवृत्ति घारण

करो । तुप सब मिछजुङकर ऐक्यसुत्रसे सम्बद्ध हो जाबो । आपसी फूट, कलह, तीर्थविषयक झगडे और घुणादृष्टि इनको चकनाच्य कर स्वातन्त्रगिरिकी प्रचण्ड पद्मसे उड़ा दो। प्रेमकी निर्मेल घारामें बहादो । और अब समयानुकूल कार्य करो।

प्रमो ! लाखो जिन मंदिर बन गये । बनते ना रहे हैं। कई उस मूर्तियोंमें आफ्तौ स्थापना कर चुके। जन्मसे ही आज तक तम्हारी निर्मल वाणी मंदिरों में तुम्हारे साम्हने सुनी । तुम्हारी पूजा, भक्ति जन्मसे ही की। अहर्निश तम्हारे नामकी बड़ी २ एकसी आट गरियाबाली मालाएं फेरीं । आपकी पूनाके साथ साथ छाखों भाइयोंकी पेटपूजा मी करा चके । अनेकवार आपके द्रीन शिखरजी, गिरनारजी, सोनागिरिजी जाकर कर आए। कई इस रुपया तुम्हारे निर्वाणस्थानींकी रक्षा हो एतद्रथं विद्वेषामिनं भस्म कर दिये। उनकी रक्षासे अनेकोंकी रक्षा होने पर प्रभी ! हमारी अवनित ही रही । हमारे अधःपतनने अपनी गतिको मंद न की । हमें स्थिर पुख और शान्ति न मिली। दश वीस कोडाकोडीके उपवासोंका फल. नमर नहीं आया । शास्त्र मुनते २ कान नहरे हो गये पर हमारी कवाएं तनिक भी कृशा न हुई । अज्ञान हमारा नरा भी न पित्रला, मिथ्यात्व हमारा बना ही रहा। चंडी, मुंडी, मेरों, कालीकी उपासना तब मी करते ही रहे । जैनी शब्दका अर्थ समझ भी न सके। पर भैनी हम बने ही रहे। प्रमो !



हमारी रक्ष करो । जैनियोंको सद्बुद्धि दो कि वे समयका, द्रव्यका सङ्क्योग करना सीखें। वीर प्रमो ! आइये. अन हपारी दशाको प्रचारिये । हमारी संबराक्ति तेरह तीन हो गई। हम, सबकी दृष्टिमें बुरे नजर आने छमे हैं। हमें प्रेम विहीन देख सन ही विकार देते हैं। हमारी जातिमें ये दीनमुख तो अनेक क्टबों सहित भूखों मर रहे हैं। भूखके मारे उदर पीठसे मिटा जा रहा है । छातीकी हिंडियां धनुष नेमी तन रहीं हैं। बच्चे मह फाड फाड कर रो रहे हैं, क्ख़ विन सच्चे दिगम्बर बन रहे हैं । उनकी बेटी व्याह योग्य हो गई है। पैता उधार नहीं मिलता। पापी पेटको भरनेके छिये तस्य रहे हैं। पर प्रभो ! हमें उसकी दीन दशापर जरा भी दुःख नहीं होता। कुनेश्वन्दनी बड़ी २ सुवर्णमाला गलेमें पहिने गदीपर बेंटे हैं। पीकदान छिए नौकर आगे खड़ा है। नये मकान बन रहे हैं। नई शादियां दो दो तीन तीन हो रही हैं। कुरसी टेबुलोंसे घर भर रहा है। बड़े २ प्रतिष्ठित अंग्रेजों. रहमों. वकीलों और बैरिष्टरोंके मोन करा रहे हैं। सड़कें गुलाबनलसे सिंच रही हैं। पर विचारे दीनमुखकी ओर दृष्टि भी नहीं जाती। क्योंकि वह जातिका है। गरीब है। जोंप-इमिं रहता है। कुरूप है। मैला रहता है। मला फिर क्वेरचन्दकी निर्मल दृष्टि उसे स्पर्श क्योंकर कर सकती है ! उनकी पवित्र हश्मी क्यों उसकी सङ्घी झोंपडीमें रहना पसंद करेगी? उनका पवित्र अध्यन मोत्रन क्योंकर उगके

पापी पेटमें नाना स्वीकार करेगा। उनकी निर्मल कीर्ति क्यों उसकी झोंपड़ीके चकर लगाना स्वीकार करेगी। उनके रिसक कान उसकी दुःखमरी कर्ण कड़क आवान केसे सुन सकते हैं। अनेक मंद्र सुगन्ध पवनके अकारोंसे बेष्टित उनका शरीर, कैसे दीनमुखका मिलन शरीर स्पर्श कर अपनी इजनतमें बड़ा लगावेगा? कुवेरचन्द्जी चार घोड़ोंकी उमरम पर चल रहे हैं और उन्हींके नातिमाई भूग्वे, वस्न रहित, उनके आगे र दौड़ते जा रहे हैं। प्रमो! कैसा मयानक दृश्य है। कैसी विषम समस्या है, एक ओर तो स्वर्गीय सुख दूमरी ओर नरकयातनाका मीषण दृश्य, प्रमो! रहा करो, अवलम्ब दो—।

प्रमो ! आइये नातिको बचाइये उन्हें वताइये । जैसी चल्ले बयार पीठ पुन तैसी दीने । नैनियोंके इदयमें बिरानकर उन्हें सभझाइये। उन्हें कमसे कम यह ज्ञात करा दीजिये कि जाड़ेके दिनोंमें गरमियोंके उपचार न करें। सब समय एक ही गीत न गाया करे। आज जो कार्य हिनकर इष्ट पड़ते हैं जिनसं हमारा कल्याण होता है, कालान्तरमें वं हमें दुःखोत्पादक मी हो सकते हैं....इसका दष्टान्त यह हो सकता है कि गर्मियोंके दिन थे, सूर्यके प्रखर प्रतापसे पृथ्वी कोचित हो रही थी । समस्त ठंडक मगरमच्छोंकी तरह नलाशयोंकी ओर भागी ना रही थी । कोई पर्वतोंकी तलहटीमें भी जा लिपी थी। ऐसे महागर्मियोंके दिनोंने पं. भोहानाथ ति-वारीके यहां उनके परमपूज्य सुरु



शान्तिलालनी यममान होकर पचारे । वे द्व-हरको आये थे इसछिये उनके आते ही तिवा-रीमी आतिथ्य करने छो। ठंडा नल लाकर पैर घोए। बरफके जलसे स्नान कराये, ठंडे २ मोजन कराए । जयरसे ठंडाई पिलाई। रात्रिका समय हुआ तो बाहर चौकमें पढ़ंग बिछवाया, मस्म स्वच्छ गहेपर गुरु महारामको छिटाया, एक महीन बस्त गुलाबनलमें भिगोकर गुरु महारानको उदाया और फिर सन कुटम्नी नन छमे पंखा करने । गुरु महाराज कुछ दिनकं बाद घर चले गये । जब और कुछ दिन बीते तब तिवारीजी भी चल बसे से। भी सदाके लिये रहे धरमें उनके छड़के । गुरु महाराज तिवारी नीकी खबरको फिर आए। अक्की वार नाइंका मौसम था ठंड बहुत जोरकी पड़ रही थी। घर २ अग्नि देशकी पूजा हो रही थी। अनका पहिलेसे भिल्कुळ उछटा समय था, वह था। ज्येष्ठका महीना और यह है पौपका महीना। गुरू महाराजके आते ही तिवारीजीके प्रजीने आति-ध्यमें कुछ उठा न रक्ली, उनके स्वर्गीय वितान जैसा आतियव कियाया वह था नारह आने तो प्रजीन चार आने और बड़ा कर आतिथ्य किया था। वहीं मन संध्याकाल आया तो गुरु महारानका बाहर चौकमें परंग बिछवाया। उस पर गुरुमहारानको छिटा कर वही गुला-**बी मलसे** भींगा बक्ष उठाकर सब ही लगे पंखा करने । (कारण कि) उन्होंने सोचा कि जिएमें गुरुमहाराज यह न कहने पार्व कि पिताके मर्स्त पर ये अड़के दुमारा कुछ आदर नहीं करते । गुरुपहारानको पड़ी पाणोंकी,

क्या करें बेचारे आतिध्यकी अबहेछाना कैसे करदें। थोड़ी देरमें लड़के हाथ जोड़ कर गृह महाराजसे बोछे। पुज्यपाद गुरू महाराज, हम बालक हैं, कुया कर कहिये हमारे सत्कार करनेमें तो कुछ कमी नहीं है? यदि हो तो हम पूर्ति करें। गुरु महारान बोले। प्रश्नी!!! तुम्होरं आतिथ्यमें, सस्कारमें, खाने पिटानेमें कुछ भी कमी नहीं है। तुम खूब ही मिक्तमें छंगे हो-पर ये मेरे पापी प्राण नहीं निकछते। तो इसके लिये तुम क्या करोगे !!!...... यही हाल हमारी जैन जातिका हो रहा है। ८मो ! आइये, हम स्वागत करते हैं। ना-तिको रसातछ जानेसे बचाइये। कूपमें गिरते बालकोंकी रक्षा कीजिये । दिन पर दिन बद्धतसे अनर्थ बढ़ते ना रहे हैं। जैनियोंको भाउतवेवने मोहित कर छिपा है। अज्ञानने घेर लिया है। गरीबी तंग कर रही है। फूट बढ़ रही है। पढ़े छिस्तोंकी संख्या कुछ बढ़तीपर है पर जातिकी संख्या बहुत ही घट रही है। धर्मकी सत्ता समूख जाना चाहती है। जैनी द्यासे डरनेलगे। हिंसामें रमने लगे बात्सल्य से मुख मोड़ रहे हैं। तुम्हारे परम पवित्र धर्मको अब ये बलंक लगाने लगे। कायरों में इनकी गिनती होने लगी। संसारमें उपहास करवान लं । बारित्रहीन, श्रद्धा हीन, और ज्ञान हीन हो गये। अधःपतनके नितन कारण हैं वं सब नैनियोंके घरमें चुनते ना रहे हैं। ऐसे समयमें तुम्हारा आना प्रमो, पथपदर्शक होगा, वर्मस्तक होगा। कल्याणकारी और नैनियोंका पुनर्जनम करानेवाला होगा। इस

- Sim

समय आपके परमोपदेशसे, ज्ञान बृद्धि, धर्म-वृद्धि, चारित्र शुद्धि नातिमें हो नावगी। आपसी कलह और द्वेष मिट जांथगे। धनवान मानगिरिसे उतर परोपकारमें छग जार्वेगे। पंडित चारित्रशुद्धि कर जैन धर्मका वास्तविक स्वरूप जननाको धुनावेंगे। जातिमें कपटी नेता-ओंके बदले, सच्चे नेता और सच्चे सेवक तैयार हो जावेंगे। पण्डितोंमें जो इवानवृत्ति, और बैसे ही नो नीच माब पढ़ गये हैं वे समूछ नष्ट हो जावेंगे इत्यादि । प्रभौ ! सुम्हारे अवतरणसे इम समय बहुतसे सुचार होंगे, अने-कोंकी जान बचेगी । अनेकों अप दूर होवेंगे । तब हे प्रमी! अब आनंमें विलम्ब न की जिये। क्योंकि जब भूखसे ब्याकुछ हो हा हा सासे ले रहे हैं। दु:खसे अश्रुवारा वहा रहे हैं। ऐसे समयमें तुमारा आना न होगा। तो फिर कब नैनियोंके हृद्यमं, मलिन हृद्यमें ही सही। एकवार, बिना आदरसत्कारके ही, बिना बुलाए ही आनेकी कृपा की जिये। यम वीर प्रमो । यही हमारी विनय है।

ध्यान देने योग्य सूचनाएं।

१-शरीरका मुख सभी चाहते हैं। वह मुख तभी मिछ सकता है जब कि शरीर नीरोग व प्रष्ट हो। इसके छिये दो उपाय हैं; (१) वीर्यकी रक्षा, व (२) कसरत।

२-जिन्हें चाहिये हमारे पाससे बीर्यरक्षा व कसरतकी तरकां वें लिखकर मगाले । १-इर हालतमें और चाहें जिस उन्नमें कसरत व बीर्यकी रक्षा हो सकती है। जो लोग वीर्थ किंगडनेपर व कमजोर होनेपर तथा उम्र ज्यादह हो जानेपर हताश हो जाते हैं, सुधा-रनेकी इच्छा छोड देते हैं उन्हें चाहिये कि हमसे एकवार सछाह तो पूछकें। धोडा बहुत उपाय हरएकका हो सकता है।

४-घर्मके प्रेमियो, हमारा जो मोक्षमार्ग पंत्रम कालमें रुक रहा है वह वज्रवृषमनाराच नामके सर्वोस्कृष्ट संहननके खो जानेसे रुक रहा है। आनसे उस शक्तिको संमालोगे तो तुम्हें फिर भी बहुतसे छुल मिलेंगे और पुण्यकी प्राप्ति मी होगी। स्वगादिमें जन्मने छायक पुण्य को अभी मी मिल सकते हैं उनका लाम मी बिना शरीर शक्ति बढ़ाये नहीं मिलसकता। तुह्मारी कोई न कोई संतान मोक्ष प्राप्त करने-वाली भी आगे होने लगेगी, अगर तुम अपनी शक्तिको अभीसे बढाना शुरु करदोगे।

५—अगर बताए हुए उपाय करोगे तो मुली व बलवान रहोगे; नहीं तो दुध बी पीते हुए भी मुली नहीं बनसकोगे।

६-दूध बीकी खुराक न मिछनेपर मी कप्तरत व वीर्यरक्षके बताये हुए उपायोंपर चछनेसे शरीर बछवान् व आनंदी बन सकता है, यह खुब विश्वास रक्खो।

७—देशी कसरतको पैसा कम लगता है, समय कम लगता है, स्वतंत्रतासे होती है, सर्व अव-यवोंको होती है, फायदा सशास्त्र होता है, चपलता धैर्य और स्वसंरक्षणकी तकींचें प्राप्त होती हैं, आयुप्य बढता है, इंप्रेजी कसरतको पैसा बहुत लगता है, परतंत्र होती है, स्वसं-रक्षणकी तकींचें प्राप्त होती नहीं; कथी कभी वह एकांगी कसरत होती है और अन्यिमिश होती है, इससे यथायोग्य आरोग्य प्राप्त नृ



होकर उलटा मनुष्य कुछ रोगी बनता है

८-सन कसरतों में कुस्ती, पानी में तेरना,
मलंब चढना, बनेटी, लाठी आदि खेलना,
दंढ बैठक निकालना, नमस्कार करना—इमसे
थोडे वक्त में अल्प खर्च में सर्वाग स्वतंत्र असे
चाहे उस ठिकानेपर नियमित कसरत हो कर
चैर्य, चपलता, स्वसंस्थणके गुण प्राप्त होते हैं
और दारीरस्वास्थ्य एकदम अच्छा ग्हकर
बह्मचर्यका महत्व समझनेसे (आवस्यक्त से)
वीर्यकी रक्षा होती हैं। इससे आयु बढता
है; बुद्धि सतेन हो कर उद्योगी सर्गवचारी
परोपकारी नररतन तैयार होते है। ऐसे नरस्त होनेसे राष्ट्रकी उन्नति हो कर धर्मकी गक्षा

९—जगह जगह औष घालयों में सुन्यवस्यासं कसरतकी शाला स्थापित होगी और उनमें शरीरका महत्व, ब्रह्मचर्यका महत्व, दुर्गुणों हा त्याग, निःसत्व मादक पदार्थों का त्याग और सर्वोपयोगी सर्वगुणी सशास्त्र कसरतकी शिक्षा दी जायगी तो सारे जगभर आरोग्यका फैलाव होकर रोग नष्ट हो जायगा। रोग पैदा करके नष्ट होनेका उपाय करनेसे रोग नहीं होने देना ही ठीक है।

१० - प्रत्येकको आरोग्य रहनके लिये निय-मित आहार, नियमित कारत करना चाहिये और सात्विक अन्न ग्रहण करना चाहिये। बीर्यकी रक्षा पचीस वर्षतक अच्छी रखना चाहिये। और नाटक,कादम्बरी पढनेका, चुक्ट पीनेका, खराब चीर्नोके देखनेका त्याग करना चाहिये और सद्वर्तनसे रहना चाहिये। इसीसे आरोग्य रहेगा। ११-इस विषयपर मालवा व संबईकी प्रांतिक जैन सभाओंके दोहदवाले संयुक्त अधिवेदानमें पास हुआ प्रस्ताव-नैन समानमें शारी-रिक रक्षाके उपार्थोमें दुर्लक्ष होता देखकर यह संयुक्त मना प्रमाय करती है कि व्यायाम, ब्रह्मवर्थ रक्षा और शुद्ध खानपानके नियमोंका अभ्याय अच्छी तरह किया नाय। प्रस्तावक-हिराहरद मलुक्षपट्य (काका)। समर्थक-कुंबर दिरिवन मिल्नां। निवेदक-

हिराचंद मळुकचंद दोशी (काका) अपस्थातः, गी. ने. जै. आ. शा. सोलापुर.

'सहारा दीजिये स्वामिन्'।

प्रभो त्ममें बिनय मेरी नहारा दीजिये स्वासिन टमास हाल विगड़ा है सहारा दीजिये स्वामिन् ॥ कहां मैत्री धरम तुमरा औं ये आपसकी तकारे। मिले थे सो विद्युहते हैं सहास दीजिय स्वासिन् ॥ कहां परनारी माता सम भिनो उपदेश था तुम्हरा । हुए व्यक्तिचारी म्बासे अब सहारा दीजिय स्थामिन् ॥ नकोर्म दृर तुम भागो पाग उनको न आने दो। शराबी अब बने जाते सहारा दीजिये स्वामित्॥ पतिवत भर्मको पाछो भीलपर प्राण भी वारो ॥ पतिवत इद् जाता है सहाग दीजिय स्वामिन्। दया धारो बनो प्रेसी लगाओ तुम ^गले सबको। कषायी बनगये पकं सहाग दीजियं स्वासिन् ॥ दराका लक्ष्य विधवाओंको द्रक्स त्राण देना है। उन्हें सधवा बनाते हैं सहारा दीनिय स्थामिन ॥ हमारी सांझरी नैया थेयटिया सब झगड़ करके। जुबाते शुश्रसागरमें सहारा दीजिये स्वामिन ॥ उनारो जैन जातिको हुई चरवाद सब दंगसे । बिनय हर वक्त है तुमने सहारा दीजिये स्वामिन् ॥ मुलाधनन्द परमानन्द जैन गोटेगांव.

श्री गौतम नेमचंद जैन व्यायामशाला-सोलापूर।

व्यवस्थापक:-श्रीयुत हिराचंद मलुकचंद दोशी, (काका) सोलापूर, समेम जुहारु,

हमारा शरीर प्रकृतिका विवरण इस प्रकार है:-इम कसरत नित्य देशी पद्धतिसे करते हैं। इमारा बजन हालमें स्तल कभी कभी इंग्रेजी है। दंड निकालनेकी गिनती। चाह पीते हैं। कुस्ती करते हैं। विवाहित हैं। करीर पित्त वाला है। रातको मोनेका समय निरालस नीरोग की अवस्था है। छानीकी लंबाई इंच। दंडोंकी गोलाई इंच। शरीरकी ऊंचाई फुटव इंच। जाति है। कसरत करनेका समय" है। अग्वाडे में कसरत करते हैं। पढने लिखनेकी तादाद "" कसरत खुठी हुवा में करते हैं। पानीमें तिरना आता । तंबाख चिरुट पीते कसरत शुरू करते समयका वजन कसरत शुरू करनेकी तारीख"" जिल्ला उम्रकी ताकाद है। परस्त्रीका त्याग ही है। (पीछ देखों)

नोटः—१. पीछेकी खानापुरी करके व्यवस्थापकके पास जरूर मेजना बाहिये और जो माई कसरत नहीं करते हों उन्हें जरूर करना बाहिये।

- २. जहां जहां बीचमें छकीर छगाकर उपर नीचे दो दो बार्त छिखी हैं वहां जो कबूळ हो उसे कायम रखना चाहिये और दूसरी बातको काट देना चाहिये।
- ३. कसरत करनेवालोंके वीस वीस फार्मोंमेंसे हम अब्बलकी छांट करेंगे और अब्बलको इनाम व सर्टीफिकेट भी दिया करेंगे। यह कार्रवाई छह छह महीनेमें एक वार होती रहेगी।

' पूरा नाम	
मुकाप `	
पोष्ट	हस्ताक्षर
बिरहा	तारीख
	•



क्रिक्नके उद्देश्य।

लेखक:-मंगीलाल जैन-आ • मंत्री-जैन कुमार-पुरतकालय आगरा ।

उद्देश्य वह होता है, नो. किसी मनुष्यका सक्ष्य हो। न्यूनाधिक सामके कई उद्देश्य दृष्टिमें हो सकते हैं। उन पर ही मनुष्यका जीवन सफल या निष्कल होना निर्भर है।

१-निर्वाद योग्य जीविका-किसी न किसी सीमा तक यह उद्देश्य अच्छा है। मनुष्यको स्वयं और अपनी गृहस्थीका पालन अपने पदानुसार करना चाहिए। स्त्रमं काम करने योग्य होते हुए भी दूकरों के अभीत रहना निर्वज्ञता है। गृहस्थीका सुख या दुःख उसकी आय-न कि उक्की पुंजीको अच्छे तरह न्यय करने पर निर्मर है।

अवनं चारित्रकों उज्ज्वल करने और लामदायक कार्यों में सहायता देनेके लिए दान करना चाहिए।

यह उद्देश्य मुरुष उद्देश्य न होना चाहिए, जिमके लिए और श्रेष्ठ कार्योकी आहुति दी जाने।

२-आत्मोनिति-किसी मनुष्यको धन संचय करनेमें ऐया लीन न होना चाहिए कि उक्तारक अध्ययनको कुछ समय ही न दिया नाने।

यह खेदकी बात है कि बहुतसे मुनक विद्यालय (College) छोड़ने पर अपनी पुस्त- कोंको एक ओर फेंक देते हैं और सब प्रकारके पढ़नेको तिलाञ्जली देदेते हैं। यह बहुत बुरा कार्य है।

एक प्रसिद्ध अंग्रेजी क्कीलका कहना है ''मैं नहीं समझता कि मैंने कोई काम निसमें मैं सर्वथा अनिपज्ञ था—विश्वविद्यालय (University) और पाउशाल (School) लोइनेसे पहिले सीखना प्रारंग किया, तिस पर भी उसमें मैं पूर्ण विज्ञ हो गया।

इम—अध्ययनके लिए समयकी इच्छा करना, उस ओर झुकाव मात्रकी आवश्यकता है। जीवन भर एक समय ज्ञाम र क्यांती। प्रातःकाल एक घंटा अध्ययनके लिए अवश्य स्वना चाहिए। यह समय विज्ञान, इतिहास, जीवन चरितया जिस निषयसे चःरित्र उज्ज्वल और जीवन उच्च हो—में लगाना चाहिए। दिन प्रतिदिन अधिक ज्ञानवान और उत्तम होनेकी इच्छा हममें सदैव रहनी चाहिए। मनुष्य स्वयं जितना इस ओर बढ़ेगा उदना ही वह दूनरों का उपकार कर सकता है। समाचारपत्रावलोकन आदि मोजनके पश्चात् तथा संध्या समय करना चाहिए।

३-परोपकार-सग्से अच्छी शिक्षा उदाहरणसे दी नासकती है। परन्तु और प्रकारसे भी भटाई की नासती हैं।

निस नगरमें आप रहते हों उसका स्वास्थ्य बढ़ानेका प्रयत्न करें। इसके लिए स्वच्छता बड़ी आवश्यक है। औषवालय, वैद्य, उपवासादि चिकित्सा और व्यायामको उस्तेजना दो। अच्छी सड़कें, रात्रिमें

3

भकाश, सार्वमनिक उद्यान आदि मी हष्टि-मत चाहते हैं।

मारतमें नो समान—प्रधार करनेवाला दल है उसको हर तरहसे उत्तेनना देना आवश्यक है। इसके कर्जन्य—स्त्री-शिक्षा प्रचार, विवा-होंमें प्रधार तथा अन्य कुरीति निवारण हैं। धार्मिक और नैतिक सुधार और भी आव-स्थकीय है। सचाई, सफाई, परमात्माके विष-यमें सत्ये श्रद्धान और धर्म नैसे बने उन्नत करने चाहिए।

स्वयं करके दिलानेके सिशय हम बहुत छुशार अपने मित्रों और पड़ोसियोंसे कह कर कर सक्ते हैं। ज्याख्यान (iecture) देना भी बढ़ना चाहिए। (बहुतसे प्राम ऐसे हैं जिन्हें धार्मिक आदि किसी बातका ज्ञान है ही नहीं। उनको उपदेश देनेको उपदेशक भेजने चाहिए। विद्या प्रचार होनेसे साहित्यकी उन्नति बहुत अधिक हो ग्ही है। वाचनाळय स्थापि। करने चाहिए। उनमें उपयोगी मासिक व अन्य शिक्षापद समाचार पत्र मंगाना चाहिए।

अंग्रेजी आदि अन्य माषाओंको अच्छी तरह जानने वाले मनुष्य मानुभाषा हिन्दीमें पुस्तकोंका अनुबवाद कर सके हैं। या इससे भी श्रेयस्कर मौकिक पुस्तकोंकी रचना कर सके हैं।

मारत-जिनमं संभारक पंचमांश जीववारी रहते हैं। उपकार करने के छिए सर्वोत्तम स्थान है। बीमवीं शताब्दी में इस और खूब उन्नि करनेका प्रयत्न करों। जोत बस्टीके नियम जो नीचे दिए आते हैं सबको पाछने बाहिए।
जितना भी उपकार तुम कर सको,
जितनी तरह भी तुम कर सको,
जितनी तरह भी तुम कर सको,
जिस स्थान पर भी तुम कर सको,
जिस समय भी तुम कर सको,
जितने भी लोगोंका तुम कर सको,
जितने समय तक तुम कर सको,

हास और व्यभिचार-बाल विवाद।

(१)

हो रहा जैन-नातिका हास,
वृद्धि गत होता है व्यभिवार।
नहीं है हमको कुछ अवकाश,
धरे जो इमपर स्वीय विवार॥
धनी हो धन-मदसे उत्पत्त,
करें छोटे बच्चोंका व्याह।
न रहता फि। उनमें पुरुषत्व,
िनरी सधवा भी मरती आह॥
वीर्य जो जीवनका है मूछ,
कराते नष्ट उसे बेहार।
स्व-सुत-जीवन मगमें कु त्रिशुछ,
बो रहे पिता तुम्हे धिकार॥

द कई करते यों बाट—विवाह, शीघ्र पौत्रादिक सुख हो प्राप्त । पिताजीकी तो थी यह चाह, हुई सुतकी भी आयु समाप्त ॥ अगर वे जीवे बृद्ध—कुपार, उन्होंका मीवनं सृत्यु समात ।

^{*} एक अभेजी टेकका भाषात्वाद।





सदा रहते हैं वे बीमार, प्रमेहादिक रोगोंके स्थान ॥ अग्नि हो जाती है अतिमन्द, न पचता थौड़ा भी जो खाय। न रहती उद्यमकी तो गन्न, सर्वतः होय शुष्क—भी काय॥

दिन व दिन बढ़ते जाते रोग,
कई आते हैं वैद्य हकीम।
न मिटले कुत कम्मोंक मोग,
उगे क्या आम्र बुओ यदि नीम?
अपत्योत्पादक शक्ति न रहे,
वीर्यमें क्यों कर हो सन्तान।
इसीसे ''वांझ'' दोषको छहे—
नारि, नरके न दोषका ज्ञान॥
दैव वश होवे यदि संतान,
क्षीण—निर्बंछ, अरु रोगी देह।
वैचें मुश्किछसे उसके प्राण,
रहे वह भय—अछसकी गेह॥
(४)

शीम नव हो जाता है ज्याह,
न रहता शिक्षा पर तव ध्यान।
प्रहण करते कुपंथोंकी राह,
न होता धर्म कर्मका ज्ञान॥
वधूपँ प्रसव—नननके बक्त,
मरें पाकरके कष्ट अधाह।
हेतु हसका यह ही है फक्त,
करे गुड़े गुडियोंसे ज्याह॥
अतः व्यभिचार—हासका मूल,
छोड दो प्यारो! बाल विवाह।

रस्तो स्वातन्त्र कमी मत भूछ, बाछकोंको हो वे परवाह ॥ वृद्ध विवाह ।

(9)

हाय धनके वहा हो मा बाप,
आत्मना करे वृद्धके साथ।
पौजिका सम कन्या हा १ पाप,
बने स्त्री पक्तड वृद्धका हाथ॥
अरे ! पापियो ! न आप समान,
कपाईका भी हृदय कठोर।
जरा दुखसे करना निष्प्राण,
न अवलाके दुःखोंका छोर॥
भीनती यी गीलेमें आप,
बालिकाकी न आई हो देह।
मात ! देती अब यों संताप,
गया कहां अब तेरा वह स्नेह !॥

(६)
पूर्ण हो गई बृद्धको नाह,
किन्तु कन्या न नाथके योग्य।
युवितको जब हो मन्मय-दाह,
न जर्जर रहता उसके योग्य॥
बृद्ध स्ताते पारद अरु बंग,
न तो भी मिछता है पुरुवत्व।
रहे कव तक मुछमेका रंग,
ताम्र क्या पा सक्ता कनकत्व ।॥
बढ़े ज्यों चन्द्र शुरु पक्षीय,
मामिनीके त्यों चढ़ता रक्ष।
सभीको मध्यम वयमें स्वीय,
शक्तिसे करता ज्ययित अनंग॥

(0) स्वामी करते पत्नीको प्यार, वित्त-व्यवका समें साफल्य । प्रन्दरीके हों कई विचार, मिटानेको भन्मथ प्राक्त्य ॥ अंतमें पतिसे होव निराश, न सहकर मनसिम-बाण कड़ीर। देख पुत-यौवनका पु-विकाश, भकाती पश्चल नेत्र चकोर॥ मान सुत भी अनुरोध अमन्द, मानिनीका न घटाता मान । अगिन कापा करके संबंध. छोड देता वृत अपना स्थान॥

 (\langle)

वृद्धके सन्मुख ही यह हाल, हुआ करते सुत-मांके संग। उठा ले नव बुद्धको काल, खुव हों तब उस घरमें रंग॥ कई युवकोंके संग आनंद. उड़ाती पतिका संचित वित्त । गर्भ भव रह जाता दुखकंद, माति भयसे हो कछुषित चित्त ॥ गर्भ-पतनका यस्न, मोचती , कट्क औषधियां करती, पान । होंस जर निष्फल निम्बल प्रयत्न, करे फिर अन्य देश प्रध्यान ॥ (2)

\$(前(8 फैलाती व्यक्षिचार, अण इस्वाएँ करती योर। (भरे ! पंचो ! कुछ करो विचार,

क्नाते क्यों नहीं नियम कठोर ॥ हाय ! उन बुड्डोंको धिकार, न डरते करते को यों पाप। इबोते जो खुद गहरी धार, सुताको धिक् ! ने भी माबाप ॥ होकर यों अयोग्य संबंध, युवति युवकोंका हो यदि व्याह । नहिं रहे यों फिर विश्वा-वृन्द, न करना होगा पुनर्विवाह ॥ Pt. G. C. G. Jaipur.

દયાળુ દીલ દાઝકાને વિનંતિ,

गअंब.

અત્રાને થઇ અધા, અમારા ભાઇએ કરતા, हयाणु हीक्ष हाअंडा, तमे ते क्यां निह्न कोता? યુરા હા ખાળલગ્નાએ, પુકાડી તેમના મુદ્દિ, દયાળ દોલ દાઝકા, હજુ કર્યાન આવે સહિ / કાતરા ભાલુડી જુ**એ**ક, વધુ વૈધવ્ય મામે છે, દયાળ દીલ દાકદા, હવે તે કર્યા અન્તરવું છે? રળવળતી અશુક્રાતી, ધર એક કાંણમાં જુએા, દયાળુ દીલ દાઝકા, ખરે ન ખેદ ક્રયાં આણે! ? હવ્ય એ કર્યા સુધી ઉંઘા, અધારી **ધા**ર નિદ્રા**એ,** દયાળુ દોક્ષ દાઝકો, વખત જલ્દી વહી ચાલે ? હવારાં વધુ ટળવળતાં, દુઃખા દરિએ ડુળી જતાં, ત્યાળુ દીલ દાઝરા, વિના કેમ ટેક તરવાનાં / કુપાળ્યું દેવને અર્પી, અતિ સિંહિ અને સિહિ, વ્યાળા દાલ દાર્તકા, પરાર્થ વ્યય કર્યા કોંધી ? ધનિકા સાંભળ વિનતી, હમારી જો નહિ બાઇ, દીનાના દુ:ખની વાતા, હુમારે કર્યા જઇ કરવી ! (C.G. Gandhi)







सन्ति प्रसिद्धाः श्री मम्बृद्धीपे लक्षणोदार्ण-बबोह्योलकह्योल्ललशायसरसीरहिस्समणिमुक्तानी-लचन्द्रकान्तादिहारमालाबिहुमशोभिततटप्रदेशा-लंक्ट्रते सित । अखिल विष्टपानां द्वीपान्तरे वर्त्तमा-नंऽपिपरमशोभातिशयेन प्रस्थाते कलिकालचक-परिवर्त्तने विखिलमुक्तानां पञ्चननानां परमधीरः श्री महावीरः, वह्यवर्चसः, स्वपराद्धारकः, परम क्षत्रियः, मारतवर्षस्यार्केव श्री महावीर-तिर्थकरः ।

अद्ञि श्रीमद्भिः यस्मिन् मार्गं असेघीत्, तस्य हि हितोपदेशः स्वजीवनमुक्तावस्थायां-अखिळान् जीवान् सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राण्ये-तान्यपवर्गमार्गं संबोधियत्वा च कृतं किळाळ्डः-मिति ककुभाम्यरमतस्योपिर । अनादिनिधन-विष्टपं, कल्पकाळस्य हितियावसपिणः चतुर्थपादे, जैनधर्मस्य प्रचारकः, छालक्षाळकश्चेति, अ-स्माकं भारतवर्षीयजनानां चरित्राणां चरित्र-नायकः, सुधारकश्च, श्री महावीर तीर्थकरः।

श्री स्वामिना तस्मिन् धर्मक्षेत्रे कुंडलपुर-नाम्नि नगरं जन्म अकार्षीत् । यत्र हि अखिल-नगरिनकवायमाणं, नारतागण्यपण्यप्रसारितरता-लंकारिबद्धनगुणमणिनिचयदि द्वयसमूहास्यात-पारावारमहात्म्यं, विदेहदेशशेखरीमृतं, कुंडलपु-रामिधानं, नगरमिति ।

यत्र स्थानात् धनधर्मादिशानितमहावतं कुर्वन्तः

जीवात्मानः सततं शरीररहितमनेकमुखसंपत्ति-शान्ति मोसघामं प्राप्तवन्ति। यत्र पदे पदे केव-निर्वा, तीर्थकराणां च निर्वाणमूमयः प्रत्यक्षी-भूय विभान्ति येवां वन्दितुं मक्तिमरानतसग-गद्भदृष्ट्यहर्षितदर्शितरागभावाः पुरुषदेवदेवाङ्गनाः विद्यावराश्चागमने प्रकुर्वन्ति।

यत्र च घमसेविनां, देवविमानानां, चानेकघना-ख्यानां, मारेण मरितमिन, महत्सुन्दरपुमंनसमा-नसानां पौराङ्गनानां समानगुणधारिणां देवानामिव गगनतलचुम्बनेषु राजसदनेषुप्रवासाः प्रकृवन्ति राजवनिताः।

यत्र किल रामसद्नेषु दंदह्मभानागुरुष्मवर्तिः मेचपटलमिव विभाति, धूमाच्छलपुवर्णकल्यानि वर्षाऋतुमेघपटले विद्युलता इव, विभानित, तेण्ड-परि संल्यनपताकाः विदेशाद्दामताः ये मानवाः तान्आतिश्यसस्कारं प्रकुर्वनित ।

यत्र जिनमन्दिराणि स्वर्गशृङ्कास्पर्श कुर्वन्ति। तेषां अनिर्वचनीया शोभा, शोभते। पौरजनाः धागत्यानेकपुण्यविशेषफछैः शालिनाः भवन्ति। अर्हत्पुनां कुर्वन्ति यस्मात् स्वर्गसम्पत्तिफलस्य प्राप्तिर्भायते।

नानारसोपेतगानवाधादिशृक्वारिकजनाः दीपोत्सवं, जिनमहिमां च चमरक्षज्ञभामण्डलोपे-तपूर्णाकिविम्यमिव श्री जिनमितिविम्यमण्डलं, अर्चयन्ति धर्मोत्सुकाः साधुयन्तः। यत्र देवसमूहाल्ल्ह्नताः स्वर्गाः इव मार्गाः विदेह-क्षेत्रमुद्धासयन्तो हारा इव विहाराः, यरिभन् खल्लु विविधचिन्हाः दृश्यन्तेऽन्तः प्रचुर-प्रसादाः, बहिश्च मत्तर्गन्तनः, सुशोमिततरक्षाः शोयन्तेऽन्तः संगीतावशाला, बहिश्च कीड्राप्नु-

3

फुल्लकमल्दीर्षिकाः, प्रचुरघान्यनिरुद्धाः कथम-प्यमिनानन्ति, अन्तः पण्यस्तियो बहिश्च क्षेत्र-भूममः, नानाशुक्विभूषणाः विरागन्तेऽन्तः समा, बहिश्च आम्रबनराजयः, ससौगन्धिकप-सारा शोभन्तेऽन्तर्विपणयो, बहिश्च सलिलाशयः। अक्षरसावधानाः कविसमयेषु कवयो दश्यन्ते, राजद्वारेषु।

यस्पिक्कासित सिखार्थं न कस्यापि, कदाचिद्दपि दुःखममृत, यदि चेत्ति केवलं, अभ्ययमावो न्याकरणोपसर्गेषु, न घनिनां घनेषु, वृत्तिकलहो वैयाकरणञ्ज्ञेषु, न स्वामिधनेषु, स्थानभेदश्चित्रकेषु न सस्पुरुषेषु, दानविच्छित्तिरुत्माद्यस्करिकपोलगण्डमण्डस्थलेषु, न स्थागिप्रहेषु, मोगमङ्गो मुजङ्गेषु न वि-लासिप्रियलोकेषु, स्नेहस्थो रजनिविरामविरम-स्प्रदीपपात्रेषु, न न्यवहारेषु, एवं महत्सुखेन वरी वर्त्तन्ते सर्वे कुंडलपुरस्य नागरिकाः ।

तस्य कुंडलपुरस्य रक्षकः निख्लिल पृथ्वीपति-शिरः, स्वर्णादिसिंह इव समम्पर्धितराज्येन्द्र इव परः चतुः रत्नाकरमालाकमेलायामुवो स्वामी कान्तिमयप्रतापानुरागी नम्त्रीभृत सम्पूर्णराज्यकः चक्रवर्तिलक्षणोपेतः, चक्रवर इव करमृणालदण्ड-कमलोपलक्ष्य लक्ष्यमाणः, शक्के चक्रलाच्छनिक-णाक्कितः हरिह्बनितशरस्मरः गुहइत प्रस्मुतश-क्तिनीलोरपल्योनिरिव तिरस्कृतराजमंडल-सुधाकर, स्वाकर इव लक्ष्मीजितः मेकलकन्यकः-प्रवाह इव मागीरथवाटप्रवृत्तोऽक्राञ्चमणि इव दिवसोपजायमानोत्तुद्धः स्वर्णादि इव सम्पूर्णाप-जीन्यमानपादपोच्लायः। दिग्दिग्मत्र इव मातस्य इतदानाद्वितिलकः कर्सा महास्मयनामाहर्त्ता, ऋतूनां मुकुर इव सर्वशास्त्राणां त्रैलोनयवानस्पतिः
कलानामुस्यत्तिकुलविष्यगुणानायागमः, उदयारतानलदिनकरमणेः महीतराहुरहितमनस्य प्रवत्तिमानाः गोष्ठीवन्धानां रितकानामाश्रयः,
प्रत्यदेशोकोदण्डकारिधनुर्भृतां साहसिकानां
धौरयोगुणी विद्यधानांनायकोटिसमुत्सारितारातिकुल्यनलो हरिवंश इव मेत्रमालायाः सूर्य काञ्यापानवनाययारि मितिश्रस्यवध्येतित्रतयज्ञानानामधियतिः नीतिमागयत्रमन्।
श्रीजिनेन्द्रायमतनानां भक्तो, परमोरकृष्टमनोहरल्क्षणास्याक्तः, कुरुवंशयावनः विस्तार्थः
इति नामराना कुंड रपुरस्यासीत्।

अस्य राजः कान्ताऽधिकान्ता, महिषी, महिता विश्वता मनमोहनजिलोचनजितह्वसंनातमंजुल-मालतीमज्ञरीलतानुकारिणी प्रियकारिणीजिशला नामाधियाकान्ता परमप्रिया, जिनधर्मभक्तागुण-वती, आभीत् विश्वता मोहषी तस्य श्री सिद्धार्थस्येति । एवं जम्पत्यौ गृहस्थधर्मयोग्या हितासत्ययमीचौर्यादिवता न्याचरन्तौ राजनीत्या-कररहितसुखादिभिः सुखानुभवन्तौ परमशौर्य-प्रतापात् प्रनायाः पालनं चकः।

अनक्रतं दुःखमेक्षितमानमानां शुद्धहृद्यात्-परिपालनं च धर्मनीत्या स्वजीवनं इन्द्र **इव** यापयामासतुः।

यस्माचितादशपुत्रस्य जनम लंभे यहि किल पुण्यः विशेषधर्मातमानः मोशगामिनः आयानित मातुगर्भे तहि पुण्यादयोत शुभक्तमीद्यम् च-कानि संवेशान्यायानितः।

एकस्मित्रहनि मीनमकरकुलीरविराजितताराः नक्षत्रचन्द्रच्छटाशोमानिशयेनयन्द्मन्द्ममीरान्द्रो



किताक्रं तिमधायां रजनीयुले प्रियकारिणी मोहससंवेशानि ददर्श।

प्रातरुत्थाय प्रमोरमरणं सामायिकं च श्री मगवन्तं नमस्कृत्य नित्यिक्तयां कृत्वा सुख-बाहुल्येनजुमशावरणानि कंत्रणनुपुराळरक्तकेयुरा-दिक्रणभूषणानानि परिचाय फळपुष्पमहिता सा-राज्ञः समायां चन्नाळ ।

श्रीमहीपतिः आगच्छन्तीं, छावण्यवर्तीं हृद्यकमछप्रकृत्वितनयनद्वयोः कछा इव सुद्दशीं परमित्रां बीक्ष्य मृदुळवचनैः सभाष्य तस्मै मृदाद्वीसनं द्दौ।

अबादिशं च प्रियकारिणा गुदितमनमा इमानि शोडससंवेशानि । प्रष्टं च ?

महरान १ एवां संबेशानां कि फलं भविष्य-ति १ राज्ञः किंचित् कालं स्थित्वाविभिज्ञानद्वावेण सम्यक्षकारेण ज्ञात्वाववीत्।

त्रिये ! दृष्टः गनः तत्फ्रः तत्म तीर्थकर-प्रतस्य जन्म मविष्यति । इत्याकल्य्य च जृतमो सृगेन्द्रादिनां समस्तानां संवेशानां भित्र भिन्न प्रकारेण फलान्यवादीन् ।

आगतं शुनिशुद्धषष्ठोत्तरापादनक्षत्रे श्री-वीरत्रमो आत्मा गोड्साच्युतनामत्रिदशाल-यादमरपर्यायं सम्पूर्ण कृत्या त्रियकारिणः गर्भे । यथाशुक्तिकायामाम्यन्तरे सिल्लिनिन्दुः युलेन प्रतिवसति तथैन युतोऽप्युदरम्थितेऽपि मना-ग्रन्थयामपि नामवत् ।

माता ससंहित प्रदेशानां स्वज्ञानवहेत सस्वर-मुत्तरं देवाक्कनाम्य अदात, यथा कलिकालि चक परिवर्तिबद्धाण्डे कि ध्येयं १ पंचपरमेष्टि-नां ध्यानं, जिनागमं, स्वतस्वमित्यादिकप्रदेशोत्त- राखाँपैः आनन्द्निमग्नवछरीछताचन्चरीमिः,सर-छागत एव नवमासपर्धातिमापूर्णयत्। परमशोमित प्रमृतिगृहे मञ्जुक्कात्रयोदशबस्त्र श्री तीर्यकर-स्य नन्म अमृत् खकु मुबनतिछकः श्रष्टज्ञाता मतिश्रुताविज्ञानसहितहेममयपरम्माज्वस्यमानः बज्रद्वास्थिवेष्टनकीछकवज्रवृषभनाराचसंहन-नसंयुक्तशरीराक्रोपाक्रः तीर्थकरः क्रान्तिराजित-युक्तशरीरं च सछीछपरिरिक्षण मञ्जुशिक्तित-सरसं मंनीरचास्वहन्ती च सेगयताछछशयचं-चुरप्रमुरचारचारीसंचारिणीकरणबन्धशोडषेमागे-छसजाउनाछसरसीस्हछितिकस्त्य इव को-मछबाहुवछी तछीवविद्धबाहु, याम्यदिश्यकोद्य इव गर्भस्थानात् प्रकटी वभूव।

अस्मिन्नेव काले परमपवित्रमिन्द्रासनविमूति-सज्जितस्वानुरूपणाप्तनेन पाकशाप्तनः देवसेना-न्नितः भक्तपर्धमागमत्। श्री महावीरस्वामिनं इन्द्रवारणस्योपरि निधाय कतकाचल्रस्योपर्यन्नयन्।

अर्धचन्द्रकारपांडुकशिलामध्ये स्वालंकारशो-भितपञ्चनने महावीरं स्थापयामास ।

सीराणवसीरादशेत्तरदातानि कलशानि प्रहीत्वा इन्द्रेण प्रभो: जन्माभिषेकोत्सवमकारीत्। तदन-न्तरम् दिन्याभूषणरत्नालंकारेण अलंचकार। तदैव दर्शनपाठस्तुतिपूजां च विचाय पुनः ऐरावत-स्योपिर विधानमानं कृत्वा पटहनिनादिकेनेसह कुंढलपुरे आगतवान्। मातुःममीपेप्रभुं समर्पितवाध तदा हर्षितमनमा जन्मोत्सवं न्यधात्। एवं विधाय सर्वे विवुधा अमरालयमगच्छन्। श्रीमहावीरः भतिश्रुत्यवधिज्ञानानिदिन्येन वपृषा, उत्कर्षतां प्राप। अतः विक्वपरिज्ञानकहाद्यः, धार्मिक-



हा प्रहरत्नप्रदीत ! हा हृद्य ! एवं विलयन्ती द:खरत्नाकरे निमज्जयन्ती एवं कथयन्ती अयि प्रिय पुत्र ! तर सुकुमारशरीरं शिरीयकोमछ-मद्यापि चत्वरस्यातपं सोदमशक्यम् । अधुना किल दिगम्बर्षि कथं बहिस्यमातपं सहस्यते इत्येवं स्ट्रन्तीं तां विछोत्य सौधर्मेन्द्रः मातरं तोषयामास्। तदन्तरं चतुर्विशत्वकारकमन्तरक्र-बहिरक्रपरिग्रहं परित्यज्य सिद्धनमस्कृतिं च-कार ततःपंचमुष्टिना शिरचिवुकादीनां नां छेननं विधाय महाजनमूलमुणै न भारया-मास । एवं किचिन् काळ्यत्वये मार्गशीर्षकृष्ण-पक्षदश्चम्यां हम्तनकात्रं विशन्संबरसरे महता ग-गवता श्री नैनीदीक्षा ग्रहीता । पाकशासेवन क बानादाय रात्नजितावित किलचित्रविचित्रविचित्र पेटके धत्वाखिछदेवाः निनादटक्कारभांकारभी-करवाद्यतालमृदङ्गवेणवीणःदिकेन सह क्षीरपाराः बारे नम्मु: किलक्षेत्रणं व तुम। पन्तु मानुपोत्तर शैलांग्रे पुरुषपुरुषीयांशोर्गत्वभावात् सत्रैव वेषां झर्णेन तस्मिक्षेद्रमणिबिचित्रे पार्वे मन्द्रमुगन्वप-वनमनोहरे श्री मानुषोत्तरहाले मगवन्तं श्री दिःय-वन्तं महाबीरस्वामिनं पूनास्तृत्यारानिकां विवाय स्वरसदनगमनमुग्रीचकुः । महीत्रस्कः श्री महा-बीरः योगवारणं विवाय सानुस्व स्मितं बन्नव । यस्मात द्रव्यप्रमित मासे नाते सति तपप्रभावेन अरनेव मनःपर्ययज्ञानं जातम् तत्पश्चात दशनपुर नाम्नि नगरे आजगाम। यरिनन् जित-मन्दिराणि राजसदनानि चन्तरीक्षं चुम्बनेव विभान्ति तस्मिन् कुछनामको रामा आसीत् तेन महन्तं श्री मगवन्तं दृष्ट्वा नमस्कृति मी-समार्गप्रमितां प्रदक्षिणां विज्ञाय स्वस्टने पर

रसाधशनाशनं कर्त्तुमादिदेश।

तदा किछ स्वामिनं स्वसदनं समानव पादप्रशा-लनं च विधाय पायसादिमोज्यद्वव्यं समर्तितवान् येनदेवै:तस्मृहोपरि पंचाधर्यनृष्टिविहिता ततः किलाशरणनीर्णारण्ये श्री महावीरो नगाम तत्र तपप्रमावेनाणिपाद्यष्टविषर्थयः मिद्रयश्च मंत्रातः पश्चात् श्री चीरप्रमुः भ्राम्यन् सन् एकस्पिकहिन उज्जयनी नाम नगर्यावस्याज्ञेस्य-दानि पद्मासनेन ध्यानं पृत्वातिष्ठत् तदानीं भगवहर्शनसंगातपूर्वभाविकशात्रवस्टतिर्सनातः स्थाणनामनएकादशरुद्रस्थेति रभ्य तेनानेकविधान्युपसर्गाणि वर्त्त समार-ब्यानि परं च स्वक्रहाकल्पितविक्रराङकाङ इव विशालचमूरशुक्तर्व्याघडाकिनपिशाचपञ्चानना-दिभीषणवेषै: बहुविधं मयं नीकोऽपि श्री नगवान् म्बल्पमपि योगाल विचलि बान् सेष्टनाचनामकः समाप्तममस्त्रसमुपद्भवः चरिमोरुद्धः मगवन्तं महन्तं परिज्ञाय प्रणम्य गतवान ।

एवं विधमनेकतपश्चरणादिकादीन् कुर्वन् सन्,
तदा द्विचरवारिक्षतमे सम्बन्धरे जृम्भिकाश्रामस्य
मिककत्वरण्ये शालवृक्षमूलभागे स्थितिक्षात्रायां
ध्यानं अकार्षात् । तत्र मगवतः तपः नमावेनारण्यस्थानि निख्छित्रस्तुसम्बन्धानि तस्मिन्नेव समय
प्रपुद्धशान्यमवन् । सर्वे स्वापश्चश्च स्वकीयवद्धवैरं
परित्यच्य एकस्मिन्नेव स्थाने कृतसीहार्दः
परस्परमिति वर्धयन्तः सनाः अभवन् स्वामिनः
ध्याननमावेन वातिकर्मणां त्रिषष्टिनकृतीनां नाशं
विधाय वैक्षालक्ष्मक्ष स्थानम् ।
स्त्रमध्ये केवल्कानं प्राप्तवान् ।



हा महरत्नप्रदीत । हा हृद्य । एवं विरुपन्ती दु:स्वरत्वावरे नियञ्जयन्ती एवं क्ययन्ती अधि पिय पुत्र । तन सुकुमारशरीरं शिरीवकोमङ-मधापि चत्यरम्बातपं सोदुनशनमम्। अधुना किल दिगम्बरिप कर्ष बहिस्यमातपं सहस्यते इत्येवं हदन्तीं तां विक्रोक्य सीधर्मेन्द्रः मातरं तोषयामास। तदन्तरं चतुर्विशत्वकारकमन्तरक्र-, बहिरक्रपरिमहं परिस्वज्य सिद्धनमस्कृति कार ततः पंचमुष्टिना शिर्चियुकादीनां नां छुवनं विधाय महामतमूलगुणे च धारया-मात। एवं किचित काळवस्यये मार्गशीर्वकृष्ण-पक्षदश्चम्यां हस्तनक्षत्रे त्रिशसंवत्सरे महता म-गवता श्री जैनीदीक्षा प्रहीता । पाकशासेनन क्षानादाय रत्नमहितल्वित्रक्रिल्चित्रविचित्रे पेटके भत्वाखिछदेशः निनादटक्कारभाकारभी-करबाद्यतालमृदङ्गनेणुबीगादिकेन सह शीरपाराः · बारे नग्मुः किल्क्षेपणं व तुम्। परन्तु मानुषोत्तर शैलाये प्रस्पप्रस्पीयांशोर्गत्यभावातः तत्रैव तेवां भरणेन तस्मिषेवमणिविचित्रे पार्वे मरद्युगन्वप-बनमनोहरे श्री मानुषोत्तरदीले मगवन्तं श्री दिव्य-बन्तं महाबीरस्वामिनं पुनास्तुत्यारानिकां विवाय स्वरसद्वयमनमुररिचकः । महीतरकः श्री महा-बीरः योगधारणं विधाय सान्तरिव स्थितं बस्य । यस्मात् दुरुवप्रमिते पासे नाते सति तपप्रमावन मनःपर्वयद्वानं नातम् तत्पन्थात् अटलेव दशनपुर नाम्नि नगरे आजगाम। बर्गिन् जिन-मन्दिराणि रानसदनानि चन्तरील चुरुवनेव विमानित तरिमन् कुछनामको रामा आसीत् तेन महन्तं श्री भगवन्तं रहा नगल्कृति मो-क्षमाग्रमितां पदिल्लां विशाय स्वसदने पर

रसाध्यानाशनं कर्लमादिवेश।

तदा किए स्वामिनं स्वसदतं समानय पादप्रहा-रुनं व विवास वासमादि मोजबहरू समर्शितवान येनदेवै तत्पृहोपरि पंचाध्ययवृष्टिविहिता ततः किलाशरणबीर्णारण्ये श्री महावीरी नगाम तत्र तक्त्रमानेनाणियाध्यक्षिकर्षयः सिद्धयस्य संगातः प्रधातः श्री चीरशमः आस्यन् सन् एकस्थिकहिन उज्जयनी नाम नगर्यावस्थाशील-शाने पद्मासनेन व्यानं पृत्वातिष्ठत् तद्मनी मगवद्दीनसं मातपूर्व गाविकशात्रवस्मृतिसीवातः किल स्थाणुनामनएकावरासदान्येति रम्य तेनानेकविशान्युपसर्गाणि वर्त्त समार-अवानि परं च स्वक्छाकल्पितविक्तालकाछ इव विशास्त्रमृ। शुक्ररस्य । प्रदाकिन पिशासपञ्चानवा-दिमीयणवेषैः बहुविषं मयं नीक्षोऽपि श्री बगवान् स्वरूपमपि योगात्र विचल्लियान् स्वेष्टनावनासकः समाससमस्त्रसमुपद्वः चरिमोस्द्रः भगवन्तं महन्तं परिज्ञाय प्रणस्य मतवान् ।

एवं विषयनेकतपश्चरणादिकादीन् कुर्वन् सन्,
तदा द्विष्यवारिशतमे सम्बन्धरे जृत्मिलाप्रामस्य
सिमेकदारण्ये शालवृक्षमूलमागे स्थितशिलायां
ज्यानं अकार्थात् । तत्र मगवतः तपः नमावेनारण्यस्यानि निखिल्ज्यतुसम्यकानि तस्यित्रेव समये
प्रमुख्यान्यमवन् । सर्वे स्वापराश्च स्वकीयवद्धवैरं
वरित्यस्य एकस्मिनेत स्थाने कृतसीहादः
वरात्यस्यीति वर्षयन्तः सनाः अभवन् स्वामिनः
स्थानप्रभावेन यातिकर्मणां ज्ञिषष्टिपकृतीः । नाशं
विधाय वैक्षासञ्ज्ञास्यस्यामुक्ताः हस्तनसत्रमस्य केवल्झानं प्राप्तसन् ।

तिसम् काले भगवती महावीरस्य केवल-ज्ञानं नवळ्ळ्यनन्त्रचत्रष्ट्यादीनां प्राप्तिरभृत् । इति इन्द्रेण विज्ञाय तन्नैव स्थानादृश्याय परोक्षं नमध्यकार तदनन्तरं धर्मीपहेशश्रवणार्थं संसार-भीबोपकारार्थ समबद्यारणाख्यं समामण्डप बिरवयागास तथा भगवत्महस्रनामां न्याख्या-य व्याख्यानं पापनै।दानकरणशीलवर्मप्रभृताः बम्बः । सज्जलहरमेयव्यनिरिव धर्मतस्वव्या-ख्यान् बटीयान् दिव्यध्वनि प्रचवार । प्राणिनां हृदयपथेष चामिततत्वन्यम्बयान भगवतो नाणीं मुणगणवरं गणवरं विनावधारयितं शतन्त बात् । ततः श्री वायुम्तिरेवधर्मस्तिः गण-धरत्वेन मण्डयामास । तद्तु कर्मशत्रुमारणमहा-बीरस्य श्रीमतो वीरम्य दिश्यन्तनी सप्ततत्वा दिपञ्चानां व्याख्यानमभूदिति एवमुप्युक्त प्रकारेण धर्मीवदेशं कुर्वन् सन् द्विसप्ततितमे संव-त्सरे बिहारंप्रान्ते पात्रापुरनामके नगरे विहारं-कतबान् । तत्र पावापुरस्यारण्ये वरीवर्त्तते किलैकं सरोवरं तस्मिन्नप्यन्तराके मृत्यिण्डे स्थित्वा श्री महाबीर: शुक्कध्यानं प्रारब्धवान् । येन शक्त व्यानेनावशेषपंचाशीतिप्रकृतिनां सर्वती मानेन नाशं विचाय कार्तिकक्वरणपक्षचतुर्देश्यां गणराजस्यये अमावश्यायाः प्रमाते किन्द्र स्थान तिनक्षत्रे श्री महावीरमधो गोक्षं भगाम । केलेडिस्मन् या काचिदशुद्धिश्चेत्ति क्षन्तव्या ।

ॐ शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः,

सतीशबन्द्रो गुप्तः

ं सन्य

Adalahahahahatahatahahahatahahatah बाचक हो. धर्म म्हणजे काय ब स्याचे स्वरूप कर्से काय आहे व तो कोणी उत्पन केला वगैरे प्रश्न मन्त्र्यापुर्टे सहन उमे सहतात. ह्या विषयों वर्तमान पत्रांतून वेळोंबेळों प्रसिद्ध होता असलेले लेख आपण बाचलेच असतील अभी माझी खात्री आहे व पुनः पुनः स्याच विषयाचे भर चर्वित वंग होऊं लागले तर त्याविषयीं वाचणाराच्या मनांत एका प्रकारचा तिरकाराहि उत्पन्न होतो. Too familiarity broads contempt. अशी इंग्रेजीत म्हण हि आहे. खाचा अर्थ अमा की अति परिचया पासून तिरस्कार उलक होतो. आयन्या येथे नर का एकादा पाडुणा आहा तर आपण त्याचा पहिस्या प्रथम मोठा आदरसत्कार करितीं. परंतु तीन नर दोन तीन दिवसा आह देऊं लागळा तर त्या विषयींची आपली पून्य बृद्धि नष्ट हो उन जाते. ही आली मनुष्याची गोष्ट. परंतु लेखा विषयीं तमें नहीं. विषय नरी तोच असला नरी प्रत्येकाची विचारपद्धन व लेखनशैली भिन्न पिन्न अवच्या मुक्के तो आवण महत बाचल्या पाहिसे, बिगय सुना म्हणून सोडुन न देता स्पांत नवीन काय मांगितहें आहे व ों बरोबर आहे किंवा नहीं हे बाचणाराने 9म लक्षांत चेनले पाहिने.

या प्रवाणे प्रस्तावना केरुयानंतर आपण आ-परिया प्रस्तुत विषयाकडे बक्टे. पहिल्यां प्रथम



धर्म या शब्दाची वयाख्या देऊन नंतर स्वा खाली येणाव्या तस्वाचेव र्णन करूँ 'सदृष्टिज्ञान-वृत्तानि धर्मे धर्मेश्वरा विदुः । यदीय प्रत्यनी-कानि भवन्ति भवपद्धतिः ॥ अशी रत्नकरंड श्रावकाचारांत अमित्रगति आचार्योर्नी धर्म या शब्दाची व्याख्या सांगितळी आहे. सम्बग्दर्शन, सम्यग्जान, आणि सम्यक् चारित्र ह्यांस पंडित लोक धर्म म्हणतात. ह्या विरुद्ध के असेल स्यास अधर्म असे म्हणवात, पिंडर साहेर म्हणतात Religion is man's belief in a being or beings mightier than himself and in accessible to his senses but not indifferent to his sentiments and actions, with the feelings and practices that follow from such belief,' अशी फिलट साहे-नानी धर्माची त्यारुपा आहे. धर्म म्हणने इधरार्व अस्तित्व कव्छ करणे व त्या प्रमाणे त्याची मक्ति करून त्याने सांगितलेल्या नि-थमांचे आचरण करणे. या अमार्णे पिंडट साहेबानें सांगितलेल्या धर्माच्या व्यवस्थेची व अमितगति आचार्यानीं दिलेख्या धर्चाच्या व्याख्येची त्लना केली त₹ आपणांत भादकून येईछ कीं दोन्हिहि ज्यास्यान जबळ जबळ साररूपाच आहेत. व्याख्या जरी सारहवान असल्या तरी आवण असे समजं नये की फिन्ट साहेबाबा धर्म व आपला धर्म एकत आहे. जगांत निर्मिस्ट धर्म उत्पन्न होण्याचे कारण दूसरें कोई। नसून त्या त्या संस्थापकांची ईश्वरा विषयीं निर्मिराठी करवना हेंच होय. याप्रमाणें ज्या ज्या क्षेकांना भी

नी कहनना पसंत पडली त्या त्या प्रमान ते त्या संस्थापकांना मिळून त्या धर्माचे अनुयायी बनले. येणे प्रमाणे निर्दानराळे धर्म अस्तिवांत कसे आले हें आपण थोडन्यात पाहिलें आतां धर्माचा उद्देश काय ह्याक्रडे आपण गुंआपकी दृष्टि फेकूं.

ज्या स्वाची इच्छा नाहीं असा एकहि शाणी ह्या जगांत सांपडणे कठीण. मनुष्यच नव्हे तर जगांतीड यच्चयावत् प्राणी सुख मिळ-विण्या करितां बाटेल स्था प्रकारचे प्रयत्न करीत असतात. तात्वर्य हेंच की दु:लत्वा परिहार करून पुल मिळवार्वे हेंच सर्वीचें ध्येय आहे. Mill says, Happiness is desir, able and the only thing desirable in the world; all other things are desirable as means to an end,' भातां साहजिकच असा प्रश्न टब्हरतों की धुल नर पत्येकानें ध्येय आहे तर तें सल कर्मे काय आहे व तें मिळविण्याचीं साधनें कोणतीं-वर वर विचार करणारास हे प्रश्न सीपे वाट-तील, परंतु सुध्य विचार केला असता असे आढळून येण्या सारखें आहे कीं दिसतात तितके सोपे हे प्रश्न नाहींत. मोठमोठया विद्वान छोकांनी ह्या प्रश्न का खोछ विचार केंद्रन असे प्रतिपादन केलें आहे कीं नेहर्मी सुख देणारी अशी ह्या नगांत एक हि वस्त नाहीं. ज्यास आपण सुख रहणतों तें बरे धुल नस्य केवळ प्रावामाय आहे. लेहिक वस्तु पासून मिळणारं सुख क्षणिक आहे. ह्याचा अनुभव रोम घडून येणाऱ्यां गोर्ष्टीत आफा पाइतच आहोत. हे फिरून मांगावें अशी

दिगंबर जैन।

कांहीं मध्मी इच्छा नाहीं: परंत विषयानुरोधनें त्यांचा येथें उछेल करणे भाग पडतें. प्रुख म्हणून जी अहर्य बस्तु आहे ती आपणांम पंचेत्रियांचे द्वारे मिळवितां येते हीं पंचेत्रियें शिथिल झालीं म्हणजे अर्थातच सुखोपमोगाचीं साधनें हि नष्ट होतात हैं बरून अगर्दी स्पष्ट दिसून येते. जी इंद्रियांची वार तीच खीप्रवादिकांची व इष्टमित्रादिकांची. जोपर्यंत आपल्या जनळ चम-काजी आहेत तो पर्यंतच सर्व कारभार ठीक बाहतात. परन्त पैसा एकदाचा हांतुन मेहा म्हणजे तूं कोण भाणी मी कोण भशी स्थि-ति होऊन नाते. म्हणून हंत तुकाराम म्हण-तात की ' प्रस्त पाहतां नवा एवटें । दुःस पर्वता एवरें ॥ सुखदु:खाची तुलना केली अ-सतां द्वाल जवा एवटें तर दुःख पर्वता एवटें असे आपणांस आहळून येईल.

ं बरें, सुल सुल म्हणतां तर ते सुल आहे तरी कोठें याचा आपण पूर्ण विचार कंडा भाहे काय ? आतां मुख कशांत आहे हें आपण पाई, अशी कल्पना करा की आपणा पुढें नाना प्रकारच्या पकालांनीं भरछेले एक ताट आणून टेबिलेडें आहे, व स्यांतला स्यांत -कांहीं कारणामुळं आपळी सुवाहि फारन खबळलेली आहे. अशा प्रसंगीं ते अन आप-णांस किती में गोह बाटेल? ज्यांच्यावर असे प्रमंग भोडग्छे भाईत न्यांताच त्या आनंदाची कल्यमा हो गार, इतरांस होणे अशस्यक यरंख बला असे बाटतें की अधा प्रकारचे प्रसंग प्र-त्येकावर केव्हांना केव्हां तरी आहेब असतील तर मग आपणच सांगा की अशा प्रसंगी आ-

वणांस ने मुख होते ते कशापासन होते ? सल स्या पकानांत आहे किंवा आपल्या जि-व्हेंत आहे ! सुख हा शब्द वापरण्यापेशां ह्या स्थर्ळी स्वादिष्टपणा हा शब्द वापरणे हेंच सोयीचे होईछ. परंतु स्वादिष्टपणा असला म्हणजे त्या ठिकाणीं सुख है अहतेंच, महणून स्वादिष्टपणाच्या एवजीं मी सुख हाच शब्द येथं राह्नं देतीं. मुख कशांत आहे ? मुख पकानांत आहे असे आपल्या पैकी कोहीं मह-गतील. पण थांबा, थोडा विचार करा आणि मग उत्तर चा. आतां मी आपणांत असा प्रश्न विचारतों की पुख नर अञ्चात आहे तर तें अञ बेब्हांहि घेउँछै असतां स्यापासून सुख मिळालेन पाहिने परंत सरी स्थिति अशी नाही. सख अन्नांत नाहीं किया मुख निव्हेंत नाहीं तसे जर अंसते तर मृग मार्झे पोट भरल्यावर किंवा अनीर्ण होई वर्षत खालल्यावर मला त्या अ-लाना को बर्ग तिस्कारा बास्ती ! ह्यावरून सिद्ध होते की छुल प्रकाशांत नाहीं किया मुख जिन्हेंत हि नाहीं. मुखाची जागा ह्या बाह्य वम्तूंत नाहीं. बाह्य वस्तूंत ना सुरा असर्ते तर जी बस्तु मला प्रिय वाटते तीच दूरन्यास अ-पिय को वाटावी ! आपणां हिंदु छोकीना पान सुगरी कार आवडते. परंतु ती इंग्रन छोकांना मुलीन आवडन नाहीं. असे को ह आयणा वैकी बहुनेनांग रहा प्रशान दान नदानिस् पाहित हि असेड रखू महा रूपं लान्त्री आहे की फारच योख्यांना हैं माहित आहे परंतु सर्वाच्या एवर्गी मीन ह्या प्रश्नाने उत्तर देती. सुख बाह्य वस्तृंन नाहीं किया मुख इंद्रियांतिह नाहीं.



प्रख सर्वस्वी अध्येकाच्या मनावर अवलंबन आहे. मनाचे परिगाम नसे असतील स्या त्या मानाने प्रत्येकाची सखद:खाची करूपनाहि बद-लत असते. 'मन एव मनुष्याणां कारणे बंघमी-क्षयोः अशी संस्कृतपर्ध्ये म्हण आहे. यन हेंच कर्मीच्या बंबताचे किंवा मोक्षाचे कारण आहे. Mind is the only cause either of the bondage of the soul with karmas or of its freedom from them. आवरुषां हातून ज्या क्या काहीं बन्धा बाइट गोर्ष्टी पडतात ह्या सर्वीचे उत्पत्तिस्थान मन हेंच होय. इतकेंघ नाहीं तर जें जें मी पाहतों भाणि ऐकतों ते ते सब मनावर अवलंबन असते. शोपंत अमताना दोळे असून देखील पाहतों येत नाहीं. कान अमून देखील ऐकं येत नाहीं, कारण अशाबेळीं मनाची किया इसरी कडे कोर्टे तरी चाल्लेली असते, या वस्त आपस्या उसांत आर्केच असेट कीं मन हेंच प्रख दुःखार्च किंवा बंध मोक्षाचें कारण आहे.

आतां मुल आणि अनंद या दोहीत कोणता भेद आहे ते पाहूं मुल यात इंग्लिशक्यें Pleasure म्हणतात, आणि आनंदास joy म्हणतात. मुख म्हणजे इंदियनन्य मुख हें साणक व शंवटी दु:लदायक आहे. व बादस्वस्ती लय लागलामुळें उत्पन लोणार मुख हें असंद म्हणजे सदा सर्वकाल टिकणारे आहे. या मुखांत म्हणजे बाद्धानंदीत दु:लाना लब्छेश देखील राहत नाही. मुख आणि आनंद याना मधला मेद उदाहरणें बेजन सांगितला असतां क्यकर सम्मण्यासारसा आहे. भी पर्यंत पहति चांगली आहे तो पर्यतच आपणांत इंद्रियाकदन पुन्व मिळण्याची थोडी बहुत आशा असर्ते. एकदा पंचेंद्रियें आपापलीं कामें करण्यास असमर्थ हार्डी म्हणने मग सुखाची आशा बहुतेक संबळीच असे म्हणावयास कांहीं हर-कत नाहीं, परंत इंद्रिये असन देखील काम मागत नाहीं. त्यांच्या कडन मुख ध्यावयाचे असेल तर आपणांस आणखी एका मोष्टीची अत्यावस्ययता आहे. ती गोष्ट: म्हणजे पैसा. आपली इंद्रिये अगदीं सुरक्षित आहेत पांत पैसा नसेल तर ह्यांचा कांहीं उपयोग नाहीं. " दांत है पन चन नहीं, चने है पर दांत नहीं " अशी आपर्छा स्थिति होउन नार्वे. यदा कदाचित् कर्मधर्म संयोगाने दोन्हीहि साधने अनुकुछ असलीं तरी तीं सदैव सल देण:रीं नमतात. उदाहरणार्थ एकदां पोट भरल्यावर आपणांप्रदे पकान्नांचे ताटचे ताट जरी महत्त देविलेलें असलें तरी स्वाचेकडे आयण फिरून देखील पाहत नाहीं. कारण आपली क्षचा शांत मालेली असते. उल्ट तेंच पकाश्र ज्वास्त खालस्यास विषासारखे होतातः सारांश इंद्रियजन्य मुख हें दःखिमिश्रित असून क्षणिक आहे.

आतां आनंदाचे स्वरूप करें। काय आहे तें पाहूं, अशी करूपना करा कीं एकादा कठीन प्रश्न सोडविण्यांत आपछे मन अगर्दी गढ़न गेळेलें आहे. अशा कंटी जर तो प्रश्न आपल्या कडून सुरठा नहीं तर दूमनाप बाईट वाटतें. पांतु तो जर को आपणा कडून सुटछा तर तथापासून आपणांम जो आनंद होतो तो कांहीं निराळाच असतो. शाळेतीव एकाचा मुजाची गोष्ट च्या. परीक्षा पास झांख्या बहु स्यास नितका आनंद बाटती तितका एकादा गोड पदार्थ खालल्यावर त्यात खास बाटत नाहीं. आपण ही परिकार पास झाडों. ह्या परिकेस प्रनः सरण्याची आस्त्यास आतां मुळींच महर उरही नाहीं असे तो म्हणतीं. सांगण्याचें तास्पर्य एवढेंच कीं त्या परिक्षेच्या कटकटींतून नन्धमर मोक्ळें झाल्या बहुछ त्यास एका प्रकारची खात्री होऊन स्थापासन स्थास आनंद होतो. तशाच प्रकारचा आनंद आपल्या हांतून एकार्दे सत्कृत्य झाल्यास आगणांसहि होतो. तो आनंद शब्दांनी व्यक्त करतां येत नाहीं. ज्याचा त्याने स्वतः अनुभव घेऊन पाहात्रा. स्या आनंदापासून आपणांस एका प्रकारची शांति उत्पन्न होते व ती शांति केव्हांहि नष्ट होते नाहीं. ह्या मनाच्या शांतिच परमानं : म्हणतात. ती प्रम्बकारी व चिरकाछ टिकणारी असते.

येण प्रमाण मुख व आनंद किया आत्मानंद अथवा परमानंद बांच्या मधील मेद सममल्या वर आतां बंद व मोक्ष यांचें बोडे वर्णन करून मी हा लेख संपवितो। जगाकडे दृष्टि फेकिली असतां एकेंद्रियादि जीवा पासून तों पंचेद्रियादि जीवा पासून तों पासून वित्र वाद्यांति कारण काय वर्षे अमार्वे १ इधारोने तर ह्यांच्यांत करवाल केखा नसेल! पासून तो अभी करपनाल मुळीं कराबयास नको.

कारण इंधर न्यायी आहे. एकास दःखांत लो ट्रेंग न दमन्यास सुखांत घाडणे हे न्याची-पणाचे कर्तव्य नव्हे. म्हणून इश्वर हा आपला कर्ता नाहीं. जो तो आपल्या स्वतःचा कर्ता आहे. Man is the architect of his own self. मी महणजे आत्मा व पुद्रल ह्यांचा संबंध हो। व्याचे कारण काय ! यन्ध्य हा हत्रभावतःच इच्छामय आहे. इंच्छे शिषाय आपण कोणतेंहि कार्य करीन तन्हीं. नाहीं म्हटल्याम प्रत्येक प्राण्यांन अन्यकाच कीणत्याता कोणत्या तरी प्रहारची उपनत नृद्धि भन्तेन. विषया योगाने केव्हां केव्हां ताना इन फार मह-रबाची काल घडन येलन, परान ही उपभत बुद्धि होणां । चांगलन सहस्या असे अ कोणां। बाह्ड प्रतान्ती अला. पुरावलकी हि आहे. परंतु होशांपे. १ 🕫 १ कि । लिया न बद्धवत्तर आहे. भी पर्वत अवव्यः पाठीवार्गे तच्या लागली शाह तो ९५२ आपले चंपा पासन कथींच मुक्तना व्हाय मनी वाहीं. शियाय नो पर्यंत तथ्या आहे तो पर्या अपन सहातन कर्म हैं यहलेच पाहिले: जारेग नोपर्वत आपटी कर्णामान मुक्त ए होगार नाहीं तों पर्यंत आपगांन घोलांह विळगार नाहीं. कारण 'कुस्स्नकर्म विश्वमोक्षी मोहाः' अभी तस्वार्थीत मोक्ष शब्दाची व्याख्या मां फेतली आहे, करितां मुंमुध्रनी आशापाश नोहन हाइ, (सुधा हो। याची खटनट करानी. हा आहातात मध्यनद्रीन, सम्यानान, व सम्बन्धः च। रत्र ह्या रतत्रवर्गनीं व तोडना येण्या सारखा आहे. हा पाश तोडण्यास रत्नत्रगांस्त्रेरीन नगांत कीणतेच शल समर्थ नाहीं. •



सम्बद्दीन, सम्बन्धानन, सम्बक् चारित्र हें तर धर्माचे मुख्य माग आहे । च, परंतु स्यांत्रस्या त्यां चारित्राचें कारच महत्व आहे. मनुष्य किती ही शहाण अवला परंत त्यांचे आचरण जर चांगर्छे नसेल तर त्याच्या त्या विद्वत्तेची मगांत कॉहीच किंमन राहत नाहीं. नो ज्ञानानें परिपृशे आहे व वास्त्रित ही निष्णात आहे तीन गरा गरा महत्तमा उपरेश करण फार सोप अन्हे परंत् हा प्रवाणे आवर्ठ आचरण डेसी है तमाहि पेला शतपरीने क्छीण आहे. इंग्रनी । नशी महाणीत जाहे की ए कि is lation said than done पर्व शिक्षणाचा होंग जीन पर्वावण्य करें अपूर्य पाहिने हें हो। यह पर मनण जापला मार्ग असे लागरों जरत आपण सुरक्षित विसामी नाउन पोरोंचे नहींक मध्ये कोर्डे त्री आह रमयानै जाडान आपर्यान संपासकीयांत भटकर किरावें छामे ३. हा धर्म रूपी मार्ग आहारण कर-ण्याकरितं सम्ययदर्शन, ज्ञान, र ऋरिय हे तीन त्या मार्गीतले पनश्रीक होत स्वंच्या महवाने आपण नर व में लागली तम आपण चीम्य ठिकाणीं माउन पेध्रोंचूं, हें लक्षांत देवून प्रत्येकाने अवप्रतं य गापल्यास दुसन्याचीही आतमीकात काण्याचा मन्त्र पास्त चालु देवाबा. अर्थ शानिकता

वालचंद् मोनीसाय पेठकर-महक्षापूर.

प्रतिष्टासारोजार ।

(प्रतिष्ठायान हिन्दी तीका महिता) पक्को जिल्ला मूल्य २) मैनेनर, दि० जैन प्रस्तकालय-स्रातनः



લખનારઃ—સ'ધવી વાડી**લાલ ગુળછેભા**ઇ લીંબડી.

" જીંદગી મિધ્યા છે " " આયુષ્ય અલ્પ છે. " " માં**મારમાં શા માલ છે.** " -" ઝાઝું જીવવામાં શા સાર છે, " " વહેલું માડું પશ મરવું છે. " આવા માલ વગરના અને નિરા-શાના વિચારા અને સંકલ્પાએ જીવગીના મહ-ત્વને ઉતારી પાડવામાં તથા તેની અલ્પતામાં ઉમેરા કરેલા છે. છંદમી ડુંકી ચવાનાં કારણામાં અયાગ્ય ખાનપાન, આહારવિહારાદિ નિયમાતું ઉલ્હાંધન, સાંસારિક હાનિકારક વ્યવહારા અને ઉત્પન્ન થવા રાગા કત્યાદિ અનેક કારસાના અત્યાર સુધી વિદાન ડાક્ટરા અને વૈદ્યા ગાયના કરતા આવ્યા છે, પણ એ છંદગી ટુંકી ધવાનું એક બીજાું કારણ સુપ્તપણે પાતાના જખરા મારા ચલાવે જાય છે તે આપણા લક્ષમાં નશ્રી. એ કારણ મનતા સંકલ્પ છે. સમજણા થઇએ છીએ ત્યાંથીજ મૃત્યુના ભયની અને જીંદગી <mark>વ્યર્ધતાની વાતાના સ</mark>ંકલ્પાે આપણા મન સાધ ળ'ધાવા માંડે છે. ક્ષણે ક્ષણે મૃત્યુના ભણ્રકારા આપણા બીકણ અને બાયલા બનેલા મનને બડકાને છે. " કાલની કોને ખખર છે, કાળનું ચકુ સાથે પર્યા કરે છે. જીંદમી દું કી અને અસાર છે. " આવી આવી ખાયલી પીલસકી (નીતિ) અને ટ્રાંઢ ડહાપઅથી ક્ષેષ્ઠા નિર્માસ્ય, ભાયલા અને પુરુષાર્થકીન થયા અને સમજશ આવ્યાની સાયેજ આપણામાં આવા હાનિકારક અને વિનાશકારક સંક્રકપા બધાતા ગયા. એ સંક્રકપા બધાતા ગયા અને ઉત્તરાત્તર વારસામાં મળતા ગયા અને ક્રમેક્રમે એ સંકલ્પનું અળ વધતું ગાલ્યું, તે એટલે સુધી કે હાલના ઉંગી નીકળતા સ્ત્રી કે પુરૂવના અંતઃકરુશમાં પણ સામાન્યત: નિરાશાના બાયલા વિચારા રક્ષ્સી નીકળે છે, અને તે એ કે મારે



લાંભુ છવવાનું નથી; બહુ તે પર્ં કે રેશ્-આજના વખતમાં પચાસ કે સાદ વર્ષ છવે તે તા આગ્યસાળી! આવી રીતે તેઓ સંકલ્પ કરી એઠા ઢાય છે અને મૃત્યુના જાસુસોને તે આ દુષ્ટ મર્યાદામાં ઉબેલા દેખતાં હાય તેમ તેઓ મૃત્યુની વાઢજ જોઇ રહેલાં હાય છે.

માશ્રમના મન ઉપર સંકલ્પળળ મેહી ં અસર કરે છે અને કાચી વયના માંણસોના મન ઉપર તેની જખરી અસર થાય છે. એક બાળ-કના મન ઉપર ળચપઅઘી જેવા સંસ્કારા અને સંકલ્પા તેમનામાં પ્રત્યક્ષ દેખાશે તે સંરકારા અને સંકલ્પાનાજ તેએ! બળીદાન અથવા સાકતા થશે. એક બાળકને બચપસર્થીજ निर'तर भगं भीक्षप्रभानी वाता करे। ते। तेतुं પરિસામ શું આવશે ? તે નક્કી બીકસ્યુ અને **ખાયલું મ**વાનું. ત્રાેટપણે પણ બીવાના અથવા **ાય પામવાના** પહેલા સંસ્કારા જતા નથી, क्रेवील रीते केंद्र आगह पासे अयनी है भीड़नी बातक नहि इस्तां. जो तेनी पासे निरंतर અક્ષાદરીની. શરવીરપણાની અને પરાક્રમનીજ વાત કરા તે! તેનું પરિશામ અવશ્ય એવં આવશે કે તે બાળક માટે થતાં બહાદર અને પરાક્રમાં થશે. હથિયાર લઇ લડાઇના મેદાનમાં ઉતરી પડવાને માટે વશિકને ગમે એવી લાલચ. **ઇતામ કે પગાર આપશા તાપણ** તે જવાતી **હिंभत क्रशे निक्ष**, अने दिवियार हेर्भानेक ભાડકરી: પણ એક રજવાત કાળી કે બીલના નાતા છોકરા પણ હથિયાર પકડવાને તૈયાર થઈ જશે, તેતું શું કારણ ! વિશક્તે તે જાવના સંશકાર નથી. અને રજપૂત વગેરેને તેવા સંસ્કારા અને સંકરપા વારસામાંજ મળેલા છે. કેટલાક માઅસો અસક કાર્યને માટે પાતે લાયક હતાં પાતે પાતાનાજ મનથી પાતાને નાસાયક માની ખેસે છે. અને પાતામાં નાલાયકના દૃદ સંકલ્પ કરે છે કે જેથી તે હમેશાં એ કાર્યને માટે ના**લાયક**જ રહે છે. મારામાં કાંઇ માલ તથી એવું માનનારાએ હમેશાં માલ વગરનાજ રહે

છે. અને જે એવા સંકલ્પ કરે છે કે અમક કામ હાથ ધરીનેજ તે પાર પાડવં છે અને તે કામ કરવાને હું સંપૂર્ણ લાયક હું **તથા તેમ** હું કરીશજ તે માણુસ તે કાર્ય અવશ્ય સિદ્ધ કરે છે. આ માંકલ્પળળને સારાં કાર્યોમાં જોડા તા આરાં કાર્યો થશે. નહારાં કાર્યોમાં એડા તા નદારો કાર્યો પણ થશેજ. હું રાગી છું, મારામાં કંઇ શક્તિ નથી, અને મારે ત્રાર્જ જીવવું નથી. એવા મ'કલ્પા કરનારા બાહાસ સદા રાગીજ રહે છે. સદા અશક્તજ હોય છે અને યોડું છવે છે. એથી ઉલટું, જે દૃઢ સંકર્ષી માણસ પાતાના મનમાં એવા રહ સંકલ્પ કરે છે કે, મને કંઇ રાગ હેજ નહિ. હું સંપૂર્વ સરકલ અને સખી ધું અને મારે મરવુંજ નથી, તે માણસ સદા નિરાગીજ છે. બળવાન રહે છે અને લાખા કાળ જીવે છે. સંકલ્પળળના મહિના ઘણા માટા છે અને ધાગવિદાએ બળની સિદ્ધિ શાય 🕽 . અમદ નિયમ કે નિશ્વય ઉપર મનના નિશ્વહ તેન' નામ યોગ છે. અને એવું માનસિક પળ અથવા નિચદભળ ગંમે તે પ્રકારે પ્રાપ્ત કરે તે વાંગી છે. આ બળ પ્રાપ્ત કરવા માટે ખાસ કરીને ભગવાં પહેરવાની જરૂર પડતી નથી. ઉંડા બાંયરામાં જઇતે સમાધિ ચડાવનાની જરૂર નથી અથવા ગાણાયમ કરીને ધાસ શંટવાની પણ ખાસ કરીને જરૂર નથી. અસપત તે પધા મનના નિમહ કરવાનાં સાધનાં છે ખરાં. સાધતો વિના પત્ન ધત્નાક વ્યવહારી માણસા . પાતાના સંકલ્પ બળ અને મતાબળ**થ**ી **યાગીના** જેવું કાર્ય કરવાને સમર્થ થયા છે. એટલંજ નહિ પણ માં કરપ બળથી અને એ સંક્રસ્પના પ્રતાપથી -**ધ**ર્ચા દીધોય બે**!** અથવાતે બાગ્યશાળી થયા છે.

पं॰ अर्जुनलाल सेश कृत-महेन्द्रकुमार नाटक

अवस्य २ मंगाकर पदिये। मू. १०) मेनेचर, दि० जैन पुस्तकालय-सूरत-







(લેખક-લલિતાષ્યાઇ, આવિકાશ્રમ, સુંબઇ)

भेड विज्ञान=भेड गेटसे परस्पर अह ખીજામાં મળેલી ચીજોનું પૃથકકરના એટલે भिन्न भिन्न इरवं अने विज्ञान=ओठके विशेष જ્ઞાન, અર્થાત્ કાંઇ પણ વસ્તુમાં અનેક વસ્ત મળા હાય તેને નયની યક્તિથી સ્પષ્ટ જાહાવં તેને એક કહે છે ! જેવી રીતે તલમાં તેલ મળેલ છે તેને ધાંચી જાદ કરી કે છે. વળી આપણે પણ એતા અનુભવ કરવાથી માલમ પડે છે_? તેમજ લાકડામાં અમિ ગ્રમ રહેલી છે તેવાં સંધર્ષેલ કરવાથી સાક્ષાત અને અનુભવથી પરાક્ષ અમિ અને લાકડાનું પૃથકપાછું આપણને માલમ પડે છે તથા દૂધમાં પાણી મળેલું છે તાપણ આપણે જાદ જાણી શકોયે છિયે તેમાર ઉંના પાણીમાં ગરમપાલું અમિના સંભંધથી છે **અર્થાત મરમ પાણીમાં મરમ યુણ પાણીના નથી** પણ અમિતા છે એ આપએ બેદ વિજ્ઞાનથી ભા**લી શકીયે** છિયે.

આપણી વર્ત માન અવસ્થા એટલે મતુષ્યગતિ શરીરધારી જીવની અવસ્થા જીવ અજવતું નિશ્રણકૃષ મતુષ્યપણું છે. જીવનું સ્વરૂપ નિશ્રણકૃષ મતુષ્યપણું છે. જીવનું સ્વરૂપ નિશ્રયનયથી શુદ્ધ શાત દર્શનમયી, આતંદિક સ્વસંવેદનકૃષ છે. અજીવ દ્રવ્ય પાંચ પકારનાં પુર્ગુલ, ધર્મ, અધર્મ, આક્ષ્ય, અને કાળ, આઠ સ્પર્શ, પાંચ રસ, એ ગંધ, અને પાંચ વર્લુ એ પુદ્ગલના ગુણ છે. એ પુદ્દગલને છોડીને ખીજન કાઇ દ્રવ્યમાં કદી પશ્ચ રહેતા નથી. પુદ્દગલ સાથે એ ચુણોના અવિનાન બાવી સંબંધ છે. જીવ અને પુદ્દગલને ચાલવામાં ઉદાસીપણે સહાયતા કરનાર તે ધર્મદ્રભ્ય અને જીવ પુદ્દગલને ઉભા રહેવામાં સહાયતા કરે તે સ્થાપમાં દ્રવ્યને ઉભા રહેવામાં સહાયતા એટલે સ્થાપમાં કરી તે સ્થાપમાં દ્રવ્યને હતા સ્થાપમાં સહાયતા કરે તે સ્થાપમાં દ્રવ્યને હતા સ્થાપમાં સહાયતા એટલે

જગ્યાં આપનાર તે આકાશ ક્રવ્ય અને વસ્તુની નવજી અવસ્થા કરનાર કાળ ક્રવ્ય છે. આ પાંચે ક્રવ્ય જડ હોવાથી એમાં શ'ન, દર્શન, અવિશ્લ સુખ કે આનંદ કોઇ પર્જ નથી.

વ્હાલી પહેંના! તથા બધુઓ, અનાદિ કાળથી તમારા આત્મા કર્મોથી ખુંધાયકા છે. શ્રેમ ક્રમોં ઘરીમાં હસાવે છે અને ઘરીમાં રહવે છે: જ્યારે પ્રવસ્તા ઉદય થાય છે હ્યારે આપણે ઇપ્ટ વસ્ત પ્રાપ્ત થાય છે અતે તે**થી** આપણે સુખ માતીયે છિયે પરંત એ સખ નિસ નથી કારણ પૂલ્ય હંમેશા એક સરખ રહેતું નથી. માં સારમાં સર્વે પરપદાર્થ કાર્ણકાણમાં પથીય અપેક્ષા નાશ થાય છે એમ જાણીતેજ તીર્થક-રાએ મહાન ઋહિ છાડી અને એક વિજ્ઞાન દારાએ અધિચલ આત્મિક સખની પ્રાપ્તિ કરી. જ્યારે પાપાદયનું જોર સ્માપણા પ્રતિત્ર સ્માત્મા પર ચઢાઇ કરે છે ત્યારે આપણે માં. ભાપ. ભાઇ, વિગેરેની તથા અન્ય જતાની શરણની આશા રાખીએ હિયે પણ એ આશા**ધી કાં**ઇ પણ લાભ થતા નથી પરંત ઉલડે દર્શનમાહની કર્મ મજબત થાય છે તેથી સખધર શરસ નિશ્વયથી આપણા આત્માનું પ્રહણ કરવું જોઇએ. આ પંચ પરાવર્તનટપ સંસારમાં ભ્રમણ કરતાં કરતાં જીવને કાઇ પણ શાંતિ મળી નહીં તેા સત્ય સખરાંતિના ઇચ્છક બદેતાએ તથા બધ-આએ આત્માન ભવશી શાંતિ મેળવવી જોઇએ?

આ જીવ એકલા આવ્યા છે અને એકલા જવાના છે. એકલાને કર્મફળ ભાગવવાં પડે છે. માટે આપણા માંખંધીઓને માટે આપણે અન્યાય કરવા નહિ કારણુંક એનું જળ આપણે એકલાને તેજ મામવવું પડે છે. હંસ જેમ પાતાની માંચ્યડે દ્વધ અને પાણી પૃથક કરી નાંખે છે તેમજ આપણે પણ આત્મરપી હંસની ભેદ વિજ્ઞાનરપી માંચ અંતરંગના કર્મરપી પડદામાં નાંખીને જીવ અને પુદ્દમલ પૃથક કરી દેવા જોઇએ. નિધ્યાત્વ, અવિરત, ક્ષાય, અને ધામ દારા કર્મનું આવવું થાય છે તે દુ:ખદાયી છે

108]



માટે એ આસવને રાકવાના ઉપાય શાધવા જોઇએ. એના સાંચા ઉપાય માતમ સ્થિરતા સિવાય બીજો કાંઇ નથી. જ્યાં સુધી કર્મોના હૃદય વિદ્યમાન છે ત્યાં સુધી પૂર્ણ સુખ મળતું નથી માટે ધીરે ધીરે કર્મના નાશ કરવા જોઇએ. કર્મ ત્રણ પ્રકારના છે. ભાવકર્મ, દ્રવ્યકર્મ અને નાકમાં. બાવકર્મ, સ્વાર્ક, કોધ, માયા. અને સોક્ષર વિકારી બાવને કહે છે એ આત્માનું સ્વર્ય નથી, પણ માહની કર્મના કારણથી થાય છે. ક્રમ્મકર્મ શાનાવરસ, દર્શનાવરસ, વંદની, માહતી, આયા, નામ, ગાત્ર, અને અંતરાય આ આદ છે.

ગ્રાનાવરથ ચાત્માના ત્રાનગુહાને પ્રમટ થવા દેવું નથી. દર્શનાવરેણ આત્માના દર્શનગુણને પ્રભટ થવા દેતાં નથી. વેદની ક્ષગીક સખ દ: ખતે : અનુભવ કરાવનાર છે. આ હની **३र्भ सत्यार्थ व्यात्मस्व**३५मे। व्यनुलय **५२**चा हेतं નથી અને પરપદાર્થમાં રાગદેય કરાવે છે. અમાય જીવને શરીરકથી એલમાં રાપ્રી સખે છે. નામ हर्भ नाता प्रभारता अरीरता स्थासर जतावे हो. **ગાગ નીચ કુલમાં જન્મ ધારણ કરાવે** છે. અમંતરાય કર્મ આત્મમહામાં વિકા નાખે છે. ત્રાકર્મ એદારિક, વૈક્રિયક, અને આહારક શરીરતી રચના કરે છે. આ ત્રણે પ્રકારના કર્માથી આત્મા લ્યવ**હારતથથી** ખંધાયટો છે એમ કહેવાય છે. भन्य भई कीतां शह निश्चयनवधी आत्मा ण'धा-यक्षे। नथी. केशी रीते क्षेष्ठ भागरमां बादवा ભરેલા છે અને તેમાંથી આપણે આપણા દાથમાં खाडवा क्षाने हाडवा कार्यके ते। ते आपका હાયમાં લાડ હાેવાથી હાથ ગાગરમાંથી નીકળતા નથી તેને જો એમ માનવામાં આવે કે એ ગાગરે અમને બાંધી લીધેલાં છે તે !તે ખાઢ छ तेमल डमें शे शुद्ध निश्ययनयथी आपसे **મધાયલા** નથી, પણ આપણી માન્યતા એવી થઇ રહી છે કે વધાયલા હિયે. તેથીન એ **માન્યતા આપણને દુ:ખ** દે છે. આપણા આ-भाक आपने। सेह अर्थात जोनार हे. जीको કાઇ પર પકાર્ય લોક નથી કારણ કે તેમાં

કર્યનના રાષ્ટ્ર નથી. ખહેતા ! આ જવે અનેક પર્યાય પ્રાપ્ત કરી, કાઇ વખત રાન્નતા ઓહો મળ્યા, સંસારમાં કશાવવાવાળું કુતાન પણ અનેક વાર પાંત્ર થયું, તેમાં આપણે હાશિયાર કહેવાયા તેમાં કાંઇ પણ દુર્લભતા નથી, પણ સમ્યંદ તાન નની પ્રાપ્તિ અર્થાત્ આત્માનું યથાર્થ તાન થવું દુર્લભ છે, તે મેળવવાની કાશીય કરવી જોઇએ.

ગ્હાલી ખ્હેતા! તથા બધુઓ ! અમે ગત હવે પૂર્વ કથા પ્રમાણે ત્રલુ પ્રકારનાં કર્મી- શી બેજાર થઇ રહ્યા પ્રમાણે ત્રલુ પ્રકારનાં કર્મી- શી બેજાર થઇ રહ્યા છીએ; એ કર્મ જ્યાં સુધી રહે ત્યાં સુધી પૂર્ણ સુખની પ્રાપ્તિ થતી નથી. એ ત્રલુ કર્મનું મૂલ કારણ કલ્ય કર્મ છે માટે દ્રવ્ય કર્મને નાશ કરતાંના સાચા ઉપાય સ્વરૂપ લાભ છે તેને પ્રાપ્ત કરવા જોઇએ કારણ કે રવસ્વરૂપની પ્રાપ્તિથીજ સુખ શાંતિ મળે છે અને સ્વસ્વરૂપની સામિ માત્મારમાં કહ્યું છે—

श्रोक--

भेदलानोच्छलनकसनाच्छुकतत्वीपसम्भा-द्रागप्रामप्रसम्बद्धशानकर्मणां संवरेण । विश्वतीवेपरममम्हा स्त्रोकसम्स्रानमेकम् ज्ञातं साने नियतमुद्दितं शाश्वतो स्रोतमेतत्॥

અર્થાત્ ભેદ માનના ઉજ્ળવાના અભ્યા-મથી શુદ્ધાત્મતત્ત્વની પ્રાપ્તિ થાય છે અને શુદ્ધાત્મ ભાવની પ્રાપ્તિથી રાગાદિ, ગ્રામના પ્રક્ષય થાય છે અને રાગાદિ મામના પ્રક્ષયથી કર્મના માંવર થાય છે અને માંવરથી ઉત્કૃષ્ટ માંતાપને ધારણ કરનાર, નિર્મક્ષ, પ્રકાશવાન, કલુપતા રહિત શાધ્યત ઉદ્યાતમાન આ એક શાન તે નિશ્વલપણે શાનમાં પ્રગટ થાય છે.

આવું સર્વોત્કૃષ્ટ અને પૂર્ણ સુખનું મૂલ જો એક વિશાન તેને સર્વ શ્રાવક શ્રાવિકાએ એકાંતમાં સામાયક દારાએ વિચાર કરવાથી અથવા ધ્યાનથી પ્રાપ્ત કરી સેવું બેક્ઝેએ, તેને માટે પહેલાં સર્વ પહેંનાએ અક્ષરમાન કરીને અધ્યાત્મિક શ્રંથ વાંચીને સમજી શકાય તેથી

3

ખુદિના વિકાશ કરવા એઇએ. કેટલીક બ્હેનાતું એમ માનવું છે કે ઓમોને ક્યાં કમાવા જવું છે એમ કહીને અબહ્યુ રહે છે, પહ્યુ બ્હેના! શાનની પ્રાપ્તિ કાંઇ પક્ત પૈસા કમાવાને માટેજ નથી, પહ્યુ આપણે સાસું સખ મળે તેને માટે છે માટે કાંઇ પછ્યુ બ્હેનોએ અબહ્યુ રહેવું નહીં, પહ્યુ બહ્યી ગહ્યી અખ્યાત્મિક અંધોના સ્વા-ધ્યાય કરવા અને તે દારા એ સર્વે સખતું મૃલ એદ વિજ્ઞાન તેને પ્રાપ્ત કરીલેવું એઇએ અથવા અખ્યાત્મિક પૂજન કરીને જન્મ સફળ કરવા એઇએ.

કારણુર્ક લેદ વિજ્ઞાનથી વર્ત માનમાં સુખ-શાંતિ, અનુભવાય છે, આત્મવીર્ધની વૃદ્ધિ થાય છે, મનુષ્યમાં ઉચ અવસ્થા પ્રાપ્ત થાય છે તેમજ દુ:ખનું મૂળ કારણું કંબ તેના ધીરે ધીરે નાશ થતા જાય છે. બાટે આ અને પુરૂષ ભન્નેએ મનુષ્ય જન્મ સફળ કરવાને એદ વિજ્ઞાન કરવું જાયએ. એનેજ બાટે બાલમાં શ્રાવિકાના બાર ત્રતા પાળવાં જોઇએ વથા બાર પ્રકારે તપ તપવા જોઇએ વથા શ્રુતજ્ઞાનના અભ્યાસ કરવા જોઇએ, જેવી રીતે તેમીચંદ્ર સુનિએ દ્રવ્ય-સંપ્રદ્યાં કહ્યું છે—

भाषाः, तत्रमुद्दद्वं चेदा उझाणरह धुरंघरो हवे जम्हा । तम्बा तत्तियणिरहा तक्षवीए सदा होह ॥

અમાવાર્થ — તેમ શુન અને લવતા ધારી આત્મા ધ્યાનકપી ફરાતે ધારણ કરી શકે છે તેથી તમે પણ ધ્યાનની પ્રાપ્તિને માટે તપ, શુત અને લતમાં રત રક્ષે. ખારી કેટલીક વિધવા વહેતા હતા સમય ખરખાદ કરે છે, તેઓએ જોખુવું જેનુંએ કે અમને એદવિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવાના સઅવસર પ્રાપ્તા થયા છે, માટે એ સઅવસરમાં જેમ બને તેમ તપદારા, ગ્રાન દારા, ધ્યાનદારા, અથવા તા કાઇ પણ પ્રકારથી એદવિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ કરી લેવી, એદવિજ્ઞાનમાં કાઇ આપણે આપ્તા દહાડા નિર્મમન થઇ સકતા નથી તા શેપ સમય પરાપકારમાં વિતા હવા જોઇએ.

અ તમાં મારું કહેવાતાં તાત્પર્ય એજ છે કે આપણે સર્વ બહેતાએ તથા બધુઓએ એદ. વિત્રાનનું સ્વરૂપ સમજવું જોઇએ અને તે દારા આપણા આત્મામાં કેટલે અરી રાગ દેષ બળેલા છે તેનું નિસકરણ કરવું જોનું અને રાગ દેવને હૈય જાશીને તેથી રહિત થવાની કાશીય કરવી જોઇએ અને એને માટે વ્રત પાળવાં જોઇએ. સ્વાધ્યાય કરવા જોઇએ. તપ તપવા જોઇએ. તથા બીજા જોપાએ. પાળવા शेष સમય વિધવાએઓ પરાપકારમાં નિર્ગમન કરીતે કરવા જોઇએ, જેથી આલાકમાં સુખ શાંતિ યશ મળે અને પરક્ષાકમાં રાબગતિ મળે તથા પરંપરાય માેલ સખની પ્રાપ્તિ થાય. અંતમાં મારી બહેનાનું તુવન વર્ષ સુખદાયી અને પરાપકાર કાર્ય કરવામાં ઉત્સાહી નિવદા એવી ભાવના ભાવીને ક્ષેપનું ભધ કરું છું.

अनुनयाष्टक ।

(गज्रुल)

हमरी दक्षा है क्या अब, जिनवर ! जरा निहारी. हमरे कलेश अब ये, कृपया जरा हटा दो ॥१॥ आपसमें भाई बन्ध, बहु डाह कर रहे है, शुभ ज्ञान मन्त्रसे अब, शुभ ऐक्यको बढा दो ॥२॥ बिन ऐक्यके न होगा, उद्धार अब इस ही से यह विनय है, प्रभु ! एकता बढ़ा हो ॥३॥ अज्ञानकी अन्धेरी, मन खुब हा रही है. श्य-ज्ञानका दिवाकर, हृदयमे अन लगारी ॥४॥ अह काम-कोधनं भी, हमको सता ग्ला है, करके कृषा हमोपर, "घड़-दोष" को भगादी ॥५॥ अधमेकी अन्धेरी, चहुँ और छा रही है, अधर्म-सम्म जन्दी, धर्मेन्द्र नग-मगारो ॥६॥ 'आपसमें भाई हम सब, झुम-प्रेम करना सीखें,'' प्रम कीर! सब हरयमे, इस मन्त्रको जगादी ॥७॥ आखिर विनय "प्रवासी" करता प्रभी ! यही है. क्षम नाम 'क्षार जिलाकर' सबके हृदय लगादी ॥८॥ ववासीलाल वर्गा-सूरत ।



આરોગ્યમાં પ્રથમમાં પ્રથમ જરૂર બ્રહ્મચર્યની છે. આજકાલ આપણા સમાજમાં બાલ લગ્ન વધી પડવાશ્વી નાની ઉમરમાં બાલક અને બાલકોઓ અપકવ વીર્યને નિરર્થક ફેંકી દે છે, તેથી ૪૦ વર્ષની ઉમ્મરે પહોંચતાં પહેલાં તેમના શરીર ખાખા થઇ જાય છે અને મનની યાદ-શક્તિ અને તર્કશક્તિ કમી થઇ જાય છે.

વાલ લગ્નથી જો કે આપણા સમાજ સામાન્ય રીતે મારૂં બ્રહ્મચર્ય પાલી શક્યા નથી પરન્તુ તેથી. પણ વધારે માદી અમર દુષ્ડ સંસ્કારતે લીધે ઉત્પન્ન થાય છે અને તેનું મુખ્ય કારણ આપણી અજ્ઞાનતા છે.

ભાળા જ્યારથી જન્મે છે સારથી પાતાના भगक ७५२ हरें पहुंगणनी असर सेत् लाय છે અને માળાપાનું જે અસભ્ય વર્તન, વાણીમાં અથવા ચારિત્રમાં જાએ છે અને સાંબળ છે તે તાળ મનથી સહેલાઇથી લાંગા કાળ સુધી યાદ રાખા મૂંકે છે અને તેલ પ્રમાણે ઘણી વખત वर्ते छे. आपलने को तपासीने कोवानी देव હશે તો જવાશે કે, આપણે જેવા મહા અથવા સાગ બાલ દરરાજ બાલતા હાઇશાં તેવાજ સારા અથવા માટા ખાલ ખાલવાની ખળકત ટેવ પડશે. ઢુંકમાં બાળક જો કે પહેલાં આદ વર્ષમાં બાલી શકતું નથી. ભણી શકતું નથી तेमक डांध पथ अभ डरी शहत नथी ते छता પણ ધર્ણ જ્ઞાન મેળવે છે માટે આ સ્થિતિમાં ઉચ્ચ ત્રાન આપવા માળાંપાએ ખાસ કાળજ રાખવી જેમેઇએ. એટલે ભાલકની સન્યુખ વિષ-યતી વાત અથવા ઇસારા ઇસાદિ પણ કવા મામવા દેવાં જોઇએ નહીં જો સ્થામ ન અને

તો આપણે માટી ઉમ્મર તેના ક્ષમ કરીશું તોપણ તેથી વિરોધ કાંઇ કાયદા થવાના નથી કારણ કે જેવું તે પંદર અથવા સાળ વર્ષની વર્ષે સમજણ શક્તિ અને સામાન્ય કામ કરવાની અથવા વિચારવાની શ્વતંત્ર શક્તિ પામશે કે વરતજ તેના વિપયના સંસ્કાર જગ્યત થશે અને સમય આવે દુષ્ટ વાસનાના બાગ કરશે અને સમય આવે દુષ્ટ વાસનાના બાગ કરશે અને સમય આવે દુષ્ટ વાસનાના બાગ કરશે અને સમયે ચાર્ય કરશે.

વીર્ય ખાલી થવાના અનેક માર્ગ છે. સ્ત્રીના શારીરિક સંભાગ; સ્ત્રીના ખાનસિક સંભાગ, જાગૃત અથવા સ્ત્રય્નાવસ્થામાં હ્રાથરસ, પુરૂષ સંભાગ ઇસાદિ અનેક રીતે વીર્ય નષ્ટ પામે છે.

જ્યારે જ્યારે આપણા મનમાં આ વાસના ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે આપણી આપણ-ળાળાએ શું થાય છે તે ભૂલી જઇએ છીએ, માન મર્યાદા ળાળા ઉપર મુકીએ છીએ, શરીર ધુજે છે, રામાંચ અનુભવીએ છીએ, ડુંકમાં દાર્દીઆ અને ગાંડા માણસ એ બે જાતના મનુષ્યા એક વ્યક્તિમાં ૨૦૦ થાય તાપણ કામાંધ માણસ જે રિથતિ અનુભવે છે તેના ખ્યાલ આવી શકે એમ નથી. ડુંકમાં પુરૂષ, મનુષ્યત્વ સુમાવી દેછે, ઓ કરતાં પણ શારીરિક અને માનસિક ખળમાં તે સમયે નળતા બને છે અને પશુની માદ્દક જોરજીલમથી વાસના નષ્ટ કરવા મધે છે.

વાસના નષ્ટ થયા પછી આગા સિથિલ થઇ જાય છે, સક્તિ મેંદ પડી જાય છે, પસ્તાવો થાય છે, સુદ્ધિ અને બોજી બધી ઇન્દ્રીયા હ**હેર** મારી જાય છે અને ધબીવાર સુધી બેચેન **રહે છે.**

વિષયસેવનથી માણુસને માના કે એક અનહદ સુખ એક ક્ષણ માટે થાય છે પરન્તુ અનહદ દુ:ખ ત્રણ અથવા છ કલાક સુધી અનુભવનું પડે છે; જે મનુષ્ય વિચારશીલ દશે, જેને શારિરીક અને માનસિક ખલના કિંમન જણાઈ દશે, જેનાં બીલ્ન અલાકિક સુખના રવાદ ચાખ્યા દશે, જેને ગાંદા ધ્યા



કરતાં (rational) રહેલું વધારે પસાંદ પડતું હશે તેને આ રતિ ભર સુખના બાગ માટે આઢલા બધા મ્હેત્ટા વ્યય કરવા ઉચિત નહીં હાયે અને તેના સેવનથી દૂર રહેશે.

સ્તી પુરુષના પ્રેમમાં પણ ઘણા મેહ છે કારણકે પ્રેમનું સ્યૂગ સ્વરૂપ સેવા છે. અને જમાં જ્યાં આદર્શ પ્રેમ છે ત્યાં ત્યાં માહ એછો હોવો જોઇએ અને સેવાના રૂપમાં બદલાઇ જેવાની ટેવ પડી હશે તેને જહારી કે બાલા શરીર પણ આપણને ઘણા જોરથી આકર્ષે છે અને તે પણ સ્વમાયિક છે. બાલા શરીરથી આકર્યાઇ જવાય તેને તેને કાંઇ બાલા સરીરથી આકર્યાઇ જવાય તેને તેને કાંઇ બાલા સરીરથી આકર્યાઇ જવાય તેને તેને કાંઇ બાલા તેને વિષયવાસના અથવા સારીરિક હોંગો નથી.

કાઈ પૃછે કે તે৷ સ્ટિટમાં અને પુરૂપની જોડ કેમ હશે ! સગ્નની ગાંઠ કેમ સાંસારમાં ખધાય છે, જો વિષયસેવન ન હેાય તે৷ પ્રજોત્પત્તિ કેમ થાય અને સ્ટિટ કેમ વધે ! આ બધા પ્રક્ષતું નિરાકરણ થ⊎ શકે એમ છે.

મતુષ્વતું અહિવાતિમંદ બધારણુ મે ભાગતું ખંતલું છે-એક તા સ્થૂલ અને બીળ્યું સુક્ષ્મ. સ્યૂલ ભાગ મતુષ્યમાં દેખાય છે અને કામળ ભાગ ગાણ રહે છે; જ્યારે ઓમાં ઉધું ઘડાણુ છે પરન્તુ એના સંલગ્નથી એક આપ્યું કાર્ય પેદા થાય છે એટલે કે ડુંકમાં સબ્દિતી સંપૂર્ણતા બે જાતની સિક્ષ્યા એક આ સામાન્ય સ્પષ્ટિકરણુ છે, પરન્તુ ઉત્પત્તિના પ્રશ્ન આપણાથી સંપૂર્ણ રીતે ચર્ચી શકાય નહીં.

લગ્તની ગાંઠથી ખંધાવાના કારણ અનેક છે. માલુસ એકલા દરેક જાતના પ્રવૃત્તિ આદરી શકે નહીં અને આદરે તા લલાજ થાડા પ્રમા-લુમાં અને દેટલીક જાતની પ્રવૃત્તિ તો જીવનના આધાર માટે દરેકને ખાસ અગત્વની હાય, તા ત્યાં પણ કામની વહેં ચણી થાય તા દીક અને તેવીજ સ્ત્રી પુરવ સ્યૂલ ૨૫માં વૈદેશ છે. લગ્નનું ઉંડું સ્વરૂપ ઓને મિત્ર તરીકે સ્તીકાર-વાનું છે. મનુષ્ય એક્કો હોય તો, તે ઘણા વખત સુખ અને દુ:ખના બાજો ઉઠાવી શકતો નથી, જેમકે માંદગી કિત્યાદિ, અથવા સુખના વખતમાં અર્થલાભ વિગેરે અને તે વખતે અને ખાસ કરીને દુ:ખના વખતમાં, મિત્ર તરીકેનું દામ આ સારે છે. ડુંકમાં ઓમાં મિત્ર કરતાં વધારે હું કાંઇ પણ જોવા જેવું દાય તેમ માનતો નથી. મિત્રને જેટલા પ્રેમથી, જેટલી સેવાથી અને જેટલા માનથી બાલાવીએ છીએ તેટલું જ પત્નીને આપવું ઘટે છે.

એ વાત સત્ય છે કે કુદરતજ સ્થાપણને વિષયતા બાગ શિખવે છે. પરન્તુ વિષયતા બાગ કામ કેક્કા સખ બાગવા માટે નહી પરન્તુ જેમ કાઇ કીર્તિ અથવા સ્થમર નામ મેળવવા માટે તરવારથી હુદમાં લડતા હાય સ્થતે પરમાર્થિક જેનેસ્સાથી સ્વાર્થ બાગ સ્થાપતા હાય તેમ વિષય સેવનમાં, પ્રજોતપત્તિ કરી સમર નામ કરવાની ઉચ્ચ લાલસા હોવી જોઇએ અને તેમાટે વીર્ય રૂપી બન્ને વ્યક્તિએ ઉચ્ચ સ્વાર્થ બાગ આપવા ઘટે છે. વિષય સેવન, સ્તિસખ સ્વાદ માટે નથી પરન્તુ Landable ambition તેમ કરવા માટે નથી પરન્તુ છે અને તે માટેજ વીર્યના બાગ આપવા ઘટે છે.

હવે જો ખહ વીર્યવાન્ ત્રીરા વર્ષના પુત્રક હાયતા તેને ખદ વીર્યવતા વીશ વર્ષના પત્ની સાધે, ત્રણ વખત ત્રાંગ કરવાથી મંતાન પ્રાપ્તિ થાય છે. કારણકે આ ઉમ્મરે બન્નેના વીર્ય ધણાં તાકાતવાન અને ઉમદા વાતાવરણવાળાં લાહીમાંથી નિકળેલાં હાય છે અને તેથી મંતાન પણ એક દિત્ર વીર બચ્યું જન્મ ધારણ કરે છે. એનું દધ્યાન્ત સિંહ છે. સિંહ કક્ત સિંહણ સાથે વર્ષમાં એકજ વખત ભાગ ભાગવે છે અને મંતાનને જન્મ આપે છે.

વારવાર સ્ત્રી સેવનથી અને તે પણ અપ-રિષક્રવ દશામાં સેવવાથી, લંધો સોગ આપવે! પડે ઢંઢ કારણ કે એક વખત લોગ સોગવવાથી



એક પણ ખારાક ખાવાથી જેટલી તાકાત મળી હાય તે હામામ જય છે. અતેક વ્યાધિઓ જેવીકે, સાંદા, પરમીઓ ઇત્યાદિ ઉત્પન્ન થાય છે; યાદશક્તિ અને ખગજ શક્તિ લેટ છે અને આયુષ્ય ટુંકું શાય છે.

ધ્યલ્લ મર્પના સેવન માટે સાત્તિક અને શુદ્ધ ખારાકની જરૂર છે. ઉચ્ચ સંરકાર તથા કેળવબી, સ્ત્રીનો અસંગ, એકાન્તનો અબાવ, એ ખાસ સાધ્યુ માટે પ્રયત્ન કરવા એકાએ. ઉપસંત વિષય ત્યાસના ઉશ્કેરે એવા વાંચન, તથા શ્રાબ્ય અથવા દશ્ય નાટક અથવા સીનેમાનું સેવન પશુ અયાગ્ય છે. માનસિક સંયમની ટેવ એ બ્રહ્મચર્યનું હત્ય છે. યાંડી ઉચ્ચ અને શારીરિક વ્યાયામ અને બારાક એ સાધક ઉપાયા છે.

વ્રહ્મચર્ચ સ્વરૂપ વર્ણન.

હું કર્મા હવે આપણા સહેત્રામાં બ્રહ્મચર્યનું સ્વરૂપ શું આપ્લું છે તે જણાવીશ.

स्मरणं कीर्तनं केटिः प्रक्षणं गृहाभाषणम् । संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियाभिवस्तिग्वन ॥ एतन्सपुनमञ्जाहं प्रवदन्ति सनीविणः। विपरीतं ब्रह्मचयंमेतरेवाष्ट्लक्षणम् ॥ WYZE. પૂર્વ વિષય સ્મરાય, વિષય સ્તૃતિ, (શ્રાવ્ય, અને વાચ્ય) વિષયવિદ્ધાર વિષય પ્રેક્ષણ (ત્રિત્રમાં, તાટકમાં શીનેમામાં, અને સંસારમાં), વિષયભાદ, નિષય વિચારા, વિષય ભાગતા નિશ્વયા, વિષયમાં પ્રવૃત્તિઓ, એ અંદ પ્રકારતું પૈયુન છે भेनाथी के आडमांथी विरत अनवं भेनुं नाम 🗸 પ્રદાસમાં છે. એટકે વ્યવસાર્ય કાઇ બાલા વસ્ત્ર નથી કે જે આપણી પાસે નથી અને મેળવવા જવાની છે પરન્તુ આપણી પાસે એ રહેલી છે અને તથી હાદાઅર્યની વ્યાખ્યા નકારમાં રાખેલી છે. એમાં ઉપાયના પણ સમાવેશ **થા**ય છે અથવા આપણા મેહા શાસનાં બ્રહ્મસર્થ પાળનારને પાંચ અતિસાર તકે છે એમ મતાવ્યું છે.

सीरागकथाअवायतन्यनोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वर-तानुस्मरणकृत्येष्टरसम्बद्धरीरसंस्कारत्यामाः पञ्च ।

અને એ પાંચ અતિચાર ઓમાં માહ ઉત્પન્ન કરે એવી કથાઓતું ક્ષત્રખુ, તેના સુંદરાંમાં પાંતું નિરીક્ષણ, પૂર્વે ભાગવેલા રતિ સુખતું સ્મરણ, વિષયપાયક રમતું સેવન, અને શરીરને માહથી રાખુગારતું એ પાંચ જાતની ક્રિયામાંથી વિરક્ત થવાથી હાહ્યચર્ધની ભાવના સ્થિર થાય છે (तत्त्र्यंग्रार्थ भाषना: एक पत्र)

ઉપરાક્તિથી જણાશ કે આપણા શાસ્ત્રોમાં પણ બ્રહ્મચર્ચને ઘણુંજ અમત્યતું પદ આપેલું છે. એ શારીરિક, માર્નાતક અને અધ્યાત્મિક વર્ણ બાળતોની મોટી સિદ્ધિ માટે ખાસ અમત્યતું છે. વિદ્યાર્થીઓમાં ખાસ એના આવસ્યકતા હોવી જોઈએ કારણુંકે બ્રહ્મચર્ચના પ્રભાવથીજ, સ્મરણ શક્તિ સતેમ અને ચિરકાલી રહે છે, બ્રદ્ધિ ચપળ બને છે અને લાંબા કાળ સુધા વાંચન અને ખનન કરવાં હતાં મગજને થાક લાગતા નથી તમજ સંદરા ઉપર તેન અને શરીરમાં કાન્તિ વધે છે.

D. B.

माशुकने एक प्रश्न !

પીધી શરાખાં પ્રેમથી ગાફિલ ઘેલા હું બન્યા ! માશક! ત્યારી યારીમાં બદનામ ભાષ્ટી શું રહ્યા ? જાહેલ્જલાલી છે.ડીને—મુકલિશ! મ્હાપ્ત ભાકી શું રહ્યા ? ગુજ વરલ શન્તે ગારીમાં - મુકિલ્યત ભાકી શું રહ્યા ? પ્રહ્યુય પાંચે પાવરી પરિપાર્ય પાસલ તો બન્યા ! માશક! મહાયત ખાજરે—મિશ્મીલ ભાષ્ટી શું રહ્યા ! આશમ સલેલા આવરી! દીલ દર્દ તો બ્હાર્યું મહી! માશક! મશિ હા માનતાં વિવંક ભૂત્યા શું કહી? તેરું હોં!! લેર્ડામાં હોં હતા માનતાં વિવંક ભૂત્યા શું કહી? તેરું હોં!! સાશક! મળવા તુજને મહી સહાદતે બાકી રહી! કમીપહ્યું કે કામવી બે સાલ હત્ય શહેતું નથી: પ્રેમાલ તર પરખાવે છે પશું અલક થયે કે દ્રાનહિ!!

રનેહગાગી.



जनोईवाळा जैनोने दिव्य संदेशा।

પ્રિય ભાતુગણ,

આપણા પ્રાચીન શાસોમાં યત્રોપવિત (જનાઇ) રાખવાતું કહેલું છે દાખલા તરીકે વિશ્વાઓ ચુપવિતસ્ય યવ્યત્નોતિ ન તત્કૃતમાા ભાવાર્થ≃ચાટલી તથા જને ઇ વચરના પુરુષ જે કઇ ધર્મ કાર્ય કરે છે તે કર્યું ના કર્યું ખરાખર છે. જે લપરથી જનાઇ અવસ્ય જોઇએ, એમ માલમ પડે છે, તે છતાં આપણા વ્યયુંએક માલમ પડે છે, તે છતાં આપણા વ્યયું માલ રહી રાખતા નથી. જેથી ધર્મબ્રાપ્ટ રહી અનેક પાપકાર્યો કરી અધાકારને પામ થાય છે. માટે તેવાઓને ઉપદેશ આપી સુધારી તે પ્રથા થાલ કરવાના ઉદેશા અને મુખ્યપ્તે તીએની બાળતાના વિચાર કરવા આપણી જનાઇ સંસ્કારિત પુરુષોની એક મીટીંગ બરવી જોઇએ.

- આપણ ખેલું આવે વર્તમાત કાળમાં
 કારમથી જનેલ પહેરતી છેલી લીધી છે?
- વર્તમાન કાળમાં જૈન પુરુષો તેમજ
 તેમનાં સંતાનોનું સન જેન ધર્મનાં સુત્રા પર
 શા કારણથી ચોટતું નથી /
- આપથી ક્રેમાજ શા કારણથી મિથ્યાનની દેવાને પૂજવા- લાગી છે?
- ૪. વ્યવહારિક કિયાઓ જેવી કે સાળ સંસ્કાર, લગ્ન કિયા, મૃહારંબથી વાસ્તુ સુધીની કિયાઓ વિગેરે શા કારથી જૈન વિધિયો મતાં નથી?

ઉપરાક્ત પ્રકરણના વિચાર કરી તેનું ખરે કારણ શાધી કાઠી તેને સુધારવા માટેજ એકઠા વવાનું છે. કારણ કે-આપણે આજ સુધી વાટ એક મેસી રહ્યા કે-આપણી ગાંતિ, જેન પસા એન કાન્કરસા, સબાએા, મંડળા, પાઠશાળાઓ અને આપણી પાછળ નાણાંના કાબથી લચ્ચા ને

: પચ્યા . રહેનારા **ભકારકા**, કંઇક કરશે, પણ દિલખ્યા સિવાય રહેવાતું નથી, કે તેમાંથી કાઇએ પાણ આ બાબત માટે કંઇ કર્યું હોય એમ જુણાતું નથી, માટે હવે આપ મુવા વિના રવર્ગે જવાતું નથી, એ કહેવત અનુસાર સંસ્કા-રિત યુવાન વર્ગેજ મહાર આવી શાતિના સ્વયં- ! સેવકા ખની એવું કાર્ય કરી ખલાવવું કે જે દેખી દરેકના મુખમાંથી ધન્ય ધન્ય શબ્દ સાંભળ-વામાં આવે. આ કામમાં નાણાંની જરૂર નથી, પ્રહ મીં વાડીલાલ (એક સ્થાનકવાસી ધર્મળધુ) જેવા દંદ લાગાયીવાળા સ્વયં સેવકોનીજ જરૂર છે. અને તેમાં મુખ્યત્વે જેણે જતોઇ ધારછ કરી છે, તેમણે પાતાનાં વતાના !અમલ કરવા करवंदी पाक्षार पडवं की ध्या-हे के बता करेगा પહેરતી વખતે લેવાય છે કે જૈન ધર્મના કેલાવા કરવા, પાત શહ ખની ખીજાને પ્રાયક્ષિત આપી શુદ્ધ કરવા, ઉત્કૃષ્ટ આચાર પાળવા, જૈન ધર્મનાં सुत्रीपर अद्धान करवुं, विजेरे त्रता क्षेवाय छे, તો તે વતના અમલ કરવાના પ્રમાંગ આવી લાગ્યા છે, તા જૈન જતાઇવાળા પર્વતે જવા દેશે **ન**હિ અને પાતાનાં વત દ્વિત કરશે નહિ. એમ માં પૂર્ણ આશા છે. આવા કામમાં જાતિ-ભાગનીજ જરૂર હાય છે ને તે પણ જેનાથી ન અપાય તેને ખરા જૈન સમજવા નહિ, પણ કાંઇ ડાળ ઘાલુજ જાણવા. છેવટે દરેક ખધુ મિટિંગમાં ભાગ લેશે એમ આશા છે. તા હવે મિટિંગ ક્યાં ને ક્યા મીતિએ બરવા તે વિષે દરેક સંસ્કારિત ળધુ પોતાના વિચારા નીચેતે ડેકાણે જુણાવશે તા ઉપકાર **થ**શે. બધાના ઉત્તર મ્માવી ગયા પછી ચાક્કસ સ્થળે અને મીતિ નમી કરી આ પત્ર દારા દરેકને જણાવવામાં **આવશે તો દરેક જૈન** બધુ આવા પારમાર્થિક કાર્ય માટે એક પૈસાનું પોસ્ટ કાર્ડ વાપરશ એમ આ મંડળી આશા રાખે છે. ઇત્યલમ.

> લી • મંત્રી, કાણીસા મિત્રમ'ડળી, મુ• કાણીસા (ખંભાત)

, A.;

दिगंबर जैन ।

अने तेनी मुख्य फरजो.'

Society is indeed a contract. It is a partnership in all science, a partnership in all arts, a partnership in every virtue and in all perfection. Burke-

'Caste is the great power and secret of Hinduism.'

M. K. Gradhi.

રાજકીય બાબતામાં રાજ્ય જેમ પ્રજા સરક્ષામાં પૃરંતુ ધ્યાન આપે છે તે પ્રમાણે હરેક પ્રકારની સામાજિક-ન્રાતિમંડળને લગતી બાબતો (સમાજની હરેક વ્યક્તિની ખાનસિક અને આત્મિક ઉત્તરિ) પર લક્ષ આપવું એ હરેક સમાજની કરજ છે.

श्रद्धीय तंत्र (Political Government) अने सामाजिक तंत्र (Social construction) त अधारश अने भविष्म सग-भग कि सरभांक छे, इस्त अन्तेना वस्रध् याता प्रवृत्तिन्माभाष्य तहावत हो. स्वयतंत्र प्रवानं હરેક પ્રકારના જાનમાલને લગતા બાહ્ય ઉપ-દ્રવાશી સાંરક્ષણ કરે છે. જ્યારે સામાજિક તંત્ર **માનસિક અને આત્મિક ઉત્રતિ કરવા હર્**ધ વધુ હક્ષ આપે છે. સદર્તનના ઘણા ખરા આ-ધાર સમાજનાજ ઉપર રહે છે. જેવં સમાજનું **ખંધારણ** અને તેના કાર્યકર્તાએ, તેવા વિચાર-શીલ અને વર્તનવાલા તે સમાજના સંખંધીઓ ખતે છે. સમાજધી વિરક્ત પ્રણાજ ચેડા પુરૂષ રહે છે. હરેક બ્યક્તિ ચાટેબ્રણે અગ્રે પણ કારીને કાઇ સમાજ (Society)ને અનુસરે છે. આયી સામાજિક ભૈવારણ જેમ જેમ ઉચ્ચતર હોય तेम तेम तेना संभाषीयेश पश डिस्य वियार-વાન અને સદ્યુણશ્રીલ હાય એ સ્વાભાવિક છે. સામાજિક અને રાજ્યકીય ળ'વારણામાં સામા-লিঙ দাঁধায়ে (Social constitution) રાજ્યકીય ખેધારણ કરતાં પ્રથમ બંધાયલ છે એમ કેટલાક પાશ્ચિમાત્ય વિદ્વાનાનું માનવું अपने ते व्यालाणी सात्रे छे. तेथानुं છે કે મનુષ્યા સાથા પહેલાં તદન જંગલી અવ-

સ્થામાં હતાં અને વિચાર અને વર્તનમાં સરહ્ય સ્ત્રભાવી હતાં. પાતાના જીવન નિર્વાહ સ્થામતેમ ગ્યારી કલ કલાદિ વનસ્પતિ ખાઇ કરતાં હતાં. પહેરવાને માટે ઝાડની છાલા શરીરે વિંદતા યાના સરીર પર જીકા જીદા પ્રકારના રંગા ચાપડતા હતા. તેઓને રહેવાનાં સ્થળ સ્થાયિ न ६वां. हाल स्थापणे करेम भरता जनिते પાતાનાં ઘેટાં *ખકરાં માર્ધે આમતે*મ જોઇએ છીએ તેના જેવી સ્થિતિમાં કાંદ્રક તેએક હતાં. પછી કાળે કરી અક પછી એક એમ ધુસા મતુઓ એક બીજાના ઘાડા સંબંધ ધર્મા દેશ દેશ આવતા ગયા તેમ તેમ તેઓએ પાતાની સાથેનાં ઢાર વિગેરે સાથે એક્જ સ્થળે રથાયિ રહેવાનું પસંદ કર્યું તેમાં જેમ જે કાવે ते स्थाने ते रह्या अभी ते जराना तेनी पातानी માલકીની થઇ પડી. આ પછી ગ્રેક્ષ્મીજાતા સહત્રાસમાં રહેવાથી માંહામાંહૈત: ઝવહાર માટે Mutual transaction and a low લાગ્યા તેવા નિયમા ઘડ્યા. આ भाषा भाषा भणा के ओड़त समूख स्राया तेने સમાજ Society નામથી ઝાળખવા લાગ્યા. क्रेम क्रेम और जीवाना सहवासमां तेजा ગયાં તેમ તેમ સ્પર્ધા-ચડસા ચડસી ^શિદેખાઇનાં મૂળ કુટવા **ક્ષાઝ્યાં અ**ને આપી કરી 'બલોયાના બે ભાગ' (Might is Rigot) 'वा भारे तेनी तरवाः' नेवी સ્થિતિ જ્યારે અવળી પડી અને જોગવર ક્રમ-ताक्षात्रवानने नाहक देशन करवा क्षाम्या सार તેયાંના કેટલાકે એક્કા થઇ કાઇને આવી રીત लबवान प्रश्वी हैरानगति न पहेंग्ने भने

सरराजना आक्रिकाता वेपार अवातः, धार्निक क्रिया भारत कालभावार्य संरक्षण साम ते માટે તેમાંના એક યોગ્ય માણમાને પર્સાદ કરી तेमना पर राज्य करवा 'राजा' नीभ्ये। राज्यते भद्द परवा राज्य संभा विजेरे भंडला स्थपासी માને આમ ધીએ ધીમે સામાજીક તેમજ રાજ્યન ક્રીય તંત્રા દિવસે દિવસે પાતાની હાજતા અને સંચામાં અનુસાર સુધારા વધારા કરતાં મળાં व्यने बडातां घडातां दाक्षनी स्थितिक पढेंक्यां છે. આની સાથે એક બીકતના વિચારાની પછ મ્યામ લે **શ**ઇ અને આ વિશ્વારામાં દિત પ્રતિ-દિન ખીજા નવીન વિચારોના ઉમેરા થતા જવાથી તે સમળા વિચાર અને સિદ્ધાંતમય-क्यांथी सार्धित्य (Lieberature) अने त त्यझान (Philosophy) शास्त्रा कन्भ પામ્યાં, પશ્ચિમના લોકો તત્ત્વજ્ઞાન અને ધર્મ એમ બે જાદા વિષયા માને છે જ્યારે આપણે कारतवासीका प्रथमधीक ते अनेने अह विषय તરીકે ગણીએ છીએ.

પહેલાંના વખતમાં હિંદુસ્તાનમાં સામાજીક મ'ધારણે હિંદુમાતું' લહ્યું ધ્યાન ખેંગ્યું' હતું મ્મને તેને માટે મનુરઝૃતિ, યાદાવલ્કયસ્પૃતિ, માનવ-ધર્મ સુત્રો વિગેરે માટા મોટા ચંધા રચાયા છે.

હિંદુ ધર્મની કર્મેં કાંડ (કિયા ભાગ) ની બાળતા સ્મૃતિમાંથી મળા. આવે છે અને તે બાંખતામાં વધ્યું પ્રત હાતિ મેદ સુખ્ય ભાગ બજવે છે. હિંદુ સંસારના નાનથી હાલ આપણું જેને આંત્રખીએ છીએ તે હિંદુ સંસારના નાનથી હાલ આપણું જેને આંત્રખીએ છીએ તે હિંદુ સંસારના નાર વર્ણમાં સામ પડવા. (૧) લાકાન્યું (૨) ક્ષત્રિય (૩) વૈશ્ય (૪) શુદ્ધ. આમાંના પહેલા ત્ર સૃદ્ધિ (એ) વૈશ્ય (૪) શુદ્ધ. આમાંના પહેલા ત્ર સૃદ્ધિ (એ) વશ્યો સામાં સારા સ્વાન સ્તિને અતિ જિલ્લા પદ આપવામાં આવ્યું અને તેની સાથે કેટલીક બામ્પતામાં તેમને ખાસ હક્યા (ઇ) માં સ્ટેલા ક્ર બામ્પતામાં તેમને ખાસ હક્યા (ઇ) માં સ્વાન સ્વાન

સદીમાં મહાત્મા ગાતમ ખુદ આગળ પડયા અને તેમના ઉપદેશ વચનામાં કહેશત: મળામ આવા ભિન્ન પ્રિન વાડાભાના નાશ બાલ કર્યો. છતાંએ તે વર્જાશ્રમ **બે**દા આજ-સાથી જળવાઇ રહ્યા છે. આ જોદા વર્ષોની એક એક સમાજ યા હાતિ (Society) એમ મુખ્ય ચાર સમાન વિભાગ પડ્યા અતે વર્ણ શકરતે લીધે અનુક્ષેશ અહેં પ્રતિક્રાેશ (intermarriges between higher and lower casts) પદ્ધતિ અનુસાર બીજા અનેક હલકા પ્રકારના આતિએક પડ્યા, પસ આ દરેક ત્રાતિને લગતા અમુક વિયમાં હતા જે નિયમાં કહે કરી કરજ્યાલ અને રીવાજ રૂપે થ⊎ પડ્યા તેની ઉંડો જડેા હજ્ય પછા હિંદસ્તાનમાં સર્વ સ્થળ જોવામાં આવે છે. લ્યા નિયમામાં મહાભારત જેવાં શાસ્ત્ર પ**હા** દેશ, કાલ, ભાગાનુસાર સુધારા વધારા કરવા ઉપદેશ છે, પણ સ્વાર્થમાં અજ્ઞાન તેમ કરતાં-અટકાવે છે.

આ વર્સામમના નિયત્રા આપણે જેતા પશ પાળી ખેછીએ. અને 'વટલામું' 'અબદાયું' કહી અત્યંત કાંધી ખની બાર ગાઉ દર ચાલ્યા જઇએ છીએ. બાહ્મ અને (પછી તે ગમે તેટલા ગંદા. ક્ષારકીયા કે માંડા કારી હૈક પછા તેને) આપણે પણ ઉચ્ચ મણોએ છીએ અને ખુલ્લી રીતે તેનું રાંધેલું જમીએ છીએ, અને તેના વાસહામાં તેનાજ માઢલાતું પાણી પીવામાં નિશ્વકલ બાધ મહાતા નધી. આના પ્રકારની બાલકિયાએ માં હાલ આપણું એટલું બધું ધ્યાન ખે'ર્યું છે કે ક્રિયાકાંડ (શાલ્બાક્ત) અધ શ્રદ્ધાથી પણ પામવા તેજ મેહ્સદાર છે એમ મનાયું છે. આ ભધું અજ્ઞાનજ જ્રણાય છે, જેનાથી આબાડ્ઝેટ વિષે બ્હીસાનું છે તે જન્મ માત્રધી ઉત્ર નીચ હોય તેનાથી નથી. પસ તે भांसाबारी, इष्टायारी या भवीन देश है केने જોતાં 🕻 જે સંખધી વિચાર કરતાંપ શુ આપ-**જા**તે દેવ દુર્ગ≃છા અને મલીન નિચાર **થ⊎** માવે તે છે. અતે પછી તે સ્વર્ગતાસી દેવ

કા કે ઉચ્ચમાં ઉચ્ચ ભાઇમયું હો. ખાસી અધ્યમદાને ન માનતાં કાર્યનું કારણ જ્યાં શક્ય છે ત્યાં તે અવશ્ય જાલ્યુનુંજ જોઇએ.

મ્યાજકાલ હિંદમાં મ્યા સપ્ય ચાર વર્ષીમાં પણ ભીજા અનેક વિશેષ ભેટા પડયા **छे भने पड़ता जाम छे तेनं मुख्य क्रार**ख क्वार्क अपने इसंप छे अपने समाज या जाति **શ્રેટલે કાં** તેના અર્થ સ્પષ્ટ સમજાપા નથી. **धामका तरी है जैन ज**ितने बार्य ते। तेना મુખ્ય ત્રમ એદ-દિમંબર, શ્વેતાંત્રર અકે સ્થાનકવાસી. તેમાં દિગંબરમાં હમડ, મેવાડા, ત્રસિંદપરા, પંચમ, ચલર્થ ઇત્યાદિ અનેક બેદો **છે.** બીજા એ એ ફોરોમાં પણ આવીજ શાય-નીય સ્થિતિ છે. આ વિભાગા કેટલેક સ્થળે તા એટલા નાના બન્યા છે કે તે વિભાગની ગૃહ સંખ્યા ગામીએ તેા ભાગ્યેજ વીસ યચીસ પાસ થાય અને જો તેટલી થાય તે તે કકત **ભે ત્રણ કુર** બનીજ એટલે કે શાસ્ત્રોક્ત વચ-તોતું શક્સ ધન કરી નજીકની સમાઇમાં લગ કરવા વખત આવે તેવી છે. ધર્મ એકજ દ્વાવા જતાં. તાતિ મધ્યોની સંખ્યા નાની દ્વારા છતાં, ખાવા પીત્રાના પણ વ્હેવાર દ્વાવા છતાં. માક સાથે રહેવા છતાં. આવા મિલબાવ જોવામાં આવે એ અતિ શાચનિય છે. આખી દિતિયામાં 16'દજ એવા દેશ છે કે જ્યાં ધર્મના અતેક કાંટાઓ અને બિબ બિબ હાર્તિઓ મસલથી ચાલી આવે છે.

અનાવાં શાંતિ મધારણા (Caste System) એક દરિએ જોતાં હિંદુસ્તાનને ધાર્યાજ આશ્રીવાંદ રૂપ છે. જ્યાં તેત્રીશ કરેડ જેટલી બહેલી વરતી છે, તેવા વિશાસ પ્રદેશમાં તેના નાના નાના ચેડ્ય વિભાગ પાડી તે દરેક વિભામ પર દેખરેખ રાખવા એક ઉપરી નીખ્યા દેશ તો કામ ઘાયું સહેલું થઇ પડે, એ હાલની બ્રીટીશ સન્મળ ધારણની પદ્ધ-

ં આજ પ્રમાણે ધર્મના પામા પર પડેલા ચાલિ विभागा पन बिंहरतान लेवा महीला प्रहेशभां નાનાં નાનાં સ'સ્થાતા સમાન **હો**ઇ તે સાથે સંબંધ ધરાવતા વર્ગતે તે આસીર્વાદ ૩૫ ક્રાય 🌳 સ્વાભાવિક છે. પહાસી વિભાગા ત્યારેજ આશીર્વાદ કપ કહેવાય કે જ્યારે તે પક્ષાપક્ષી-તું. એક બીજા ભાગ વચ્ચે રામ દ્વેષ કરવાતું જરાએ કારબ શકું ન પડે. પછ પોર્લ પોલાના જશ્લાન મધ્યરથપણે સત્યની ઉત્રતિ કરવા ખાતરજ બિનસ્વાર્થથી કાર્ય કરે. કુતરાં ઉસ્કેરી માં**હામાંહેની લડા⊎માં ભને પક્ષ**માં કાલ વિજય મેળવે છે તે ડમર ડમર જોયા કરી આનંદ માનવા તે અધામતિને પમાડનાર હવાન પ્રમારતી આનંદ છે. આવા પ્રકારનો પકાપક્ષી ઝાતિયર્મના ઉપદેશકા ન કરે અને પાતાના આત્મવીર્ધને અને શાતને સન્માર્ગે દોરી પાતાના હાતિ મધ્યસ્થપણે આત્માન भति हरवा प्रयत्न हरी आनंह भाने ते। ते સહર્વ આદરણીય છે અતે આમ થાય તાજ રાજ્યદારી અને સામાજીક બાબતા એક બીજાને અડચલ કર્યા શ્રિવાય પાતપાતાના રાહદારી માર્ગ ચાલ્યા હત્ય. દરેક આગલાએક સત્પ્રેમ સાંક્લથી એક બીજા સાથે જોડાય, સર્વાત્મળધુ-ભાવ સર્વત્ર વર્તે અને માંય વધી આર્યાવર્તની પ્રનઃ જાહાજહાલી અસ્તિત્વમાં આવવાને ક્રાઇ શકા ગઢે નહિ.

આ દિવ્સ્થિ—આ તટરથ— મધ્યસ્થ દિવ્સ્થિ—શાંતિ ત્રિભાગો હિંદને આશીર્યોદ રૂપ છે, પણ ધર્મના ઝમડા અને રાગદેષ કરવાનાં એ સાધના શાય તા તે તિરસ્કારને પાત્ર છે. આવી મધ્યસ્થ દિષ્ટિએ વર્નવા છતાં કાંઇ વાંધા ઉઠાવે કે 'શાંતિ ભંધના રાજ્યદારી બાબતામાં અઢચલ્યુ રૂપ છે' તા તે વાંધા ઉઠાવનારને આપણે સ્પ-ષ્ટપણે સમજ્વવી શકીશું કે આની પ્રકારના શાંતિ સમજ્વી શકીશું કે આની પ્રકારના શાંતિ સમજ્વી શકીશું જ નહિ પણ ઉલ્લં



રીતે તે તેના કેતું મા અત્વરે પાર પાડવા સા-કાચ્ય કરે છે. :રાજ્યદારી ખામતા સામાછક બામતાના પ્રતિપક્ષી :નથી.—તે બન્ને મામતા મિક બીજાંથી તદન મિમ તથી. બન્ને પક્ષે મિક બીજા સાચે હળા મળી હાથમાં હાય મે-ળવી કામ કરવાનું છે. બન્ને પક્ષે મેક બીજા સાચેના સંબંધ સમજવા જોઇમ કે જેશી નવા સુધારક સમાજો અને ધર્મ સમાજો કૃડતા અટકે.

તાતિ સમાજે પો**લાના મધુએ** પ્રતિ જે વિષે ફરજો અદા કરવાની છે તે બાબતો નીચે પ્રમાણે છે.-

- (૧) લગ્ન (૨) ધર્મ (૩) ક્રેળવર્સ્ટ્રી (૪) આર્થિક સ્થિતિ.
- (૧) **લગ્ન-લમ** વિષે જે કરત્રાનું છે તે આ પ્રમાણે છે.
 - (અ) ભાલવિવાદ થતા અટકાવવા.
 - (બ) વર કન્યાની ચાત્ર્ય ઉભર પર ધ્યાન આપી કબ્લેડાં લતાં દુર કરવા. (ક) કન્યાવિક્રયના પ્રતિભધ કરવા.
- આમાંતી પહેલી એ બાળતા પર જો આપવામાં આવે તા બાલ-Y CO HSH વિષ્વા થવાના સંભવ ધણોજ થાડા રહ્કે એમેટલુંજ નહિ પથ્યુ વર અને કન્યા ળને પુખ્ત ઉંત્રરે **પઢાંચતા સુધી**માં કાઇપ**સ** પ્રકારની અડચ્ચા સિવાય વર દનિયાદારીન વ્યવદારિક ઝાન અને કત્યા ગ્લકાર્યનં જ્ઞાન સંપાદન કરવા હાયક ખતે અને અને અને લમ પછી સુખી જાતે. લમ માર્ડું કરવું ચાંગ્ય ' ઉમરે) એટલુંજ નહિ પણ વિવાહ थल भाडाक थवा लोडकी अरखडे विवाह श्राय त्यारधीक जन्तेती દક્ષિમાં વિકાર થવા પામે છે. મન વિધા રહે છે અને પાતાનું ધારેલું કાર્ય એકએ તેવું કૃત્તેકમંદ નીવડતું નથી. શરીરને હાનિ ટકરવાને અને કાર્યમાં ખામેલ પહેંચાડવાને વિવાદન ખરા છે. વિરાદ श्वानी आअण्डीक तेज्ञानी छवन इतिमां

ફેરફાર થવા માંડે છે અને લગ્ન થયે (ભાલ વયે) તેની માઠી સ્થિતિની દીચીમાં વધારા શાય છે. બાલવિવાહનું એક માહું પરિશ્રામ એ છે કે પછા અભ્યાસ કરતાં હોશીયાર વિ-ઘાર્થીઓને પણ તેમના અભ્યાસ છોડી દેવા પડે છે.

કન્યાવિકય સંબંધીની વાત હાલ લાયાનું શાન ખેંચી રહી છે પશુ તે વાત કન્યાવિકય કરનારાના કાને વહેલી પહેંચે અને તેમના હદયની છૂપી શ્રીભદત્તિની-સ્વાર્થની-કૃંચીના વહેશે નાશ કરવામાં આવે તાજ તે બાટે કરેલા સર્વ પ્રયત્ના સફલ છે.

કન્યા વિક્રયથી થતી હાનિઃ —

- (૧) કનોડાં -જેવાં કે; **૧૬ અને બાલકુ**મા-રિકા, આપી બાલ વિ**ધવા**માની દર્હિ **શય છે.**
- (ર) યેાગ્ય ઉંમરવાળા સાથે લગ્ન થાય તાપ**ણ** ભત્ને વચ્ચે સત્પ્રેમની **લામણી રહે**વા થાડા સંભવ છે.
- (૩) કન્યાવિકયતે લીધે કન્યાતે અમે તેવા કૂલમાં, અપંગ સાથે કાંઇ હ્વાતિમાં અને દૂર દેશમાં અયાગ્ય વર સાથે પરહ્યુાવવામાં આવે છે. આવી કન્યાતે દુઃખ પડે છે અને સત્પ્રેમની લામણી રહેવા શોડો સંભવ છે.
- (ક) ગમેતેવા સાયક વર હાય છતાં તે કન્યાવિક્રયના લાંભાંના વૃત્તિને નહિ સંતાષી શકવાથી પરણી શકતા નથી, એટલે કે ગ્રાંતિના મધ્યમ તેમજ ગરીળ સ્થિતિના સાયક વર પણ કુંગારા રહે છે. કન્યાવિક્રયની તેમજ વરની પહેરામણીની (Dowery) હદ બહારની રીત પણ તેટલીં જ નિંદનીય છે. પહેરામણીને લીધે ખેદકારક બનાવા હમણાં બે વર્ષપરજ બંગાળ-માં બન્યા હતા.
- (ર) ધર્મ-તાતિ સમાજની પીછ અમત્યની ભાષ્યત ધર્મની દેખરેખ રાખવાની છે. ધર્મ એટલે વ્યક્તિએ કરવું જોઇએ તે સત્કાર્ય-ક્રશ્જ (Duty) જે સંત્કાર્યથી મનુષ્ય જ દેવતનો સ્પષ્ટપંચે તકાવન સમજ સ્ક્રિયા સમસ્ત પદાર્થીન

ં તું યથાર્થ સ્વરૂપ સમુજ જન્મ મરજાના દુ:ખર્થો સદાને માટે મકત થાય. સદ્ધર્મના કેલાવા કરવા અને તેના ગણ તત્ત્વોને યથાર્થ સમજા-વવા સદયક એાની ખાસ જ કર છે. અને આથી કરી સાતિ સમાજે સદપદેશકાની સંખ્યા વધા-રવા અને સહર્મનાં બીજ ઉંડા રાપવા વ્યવતા प्रकास उरवे। क्रीप्रका

પણ સદયક ક્રાને કહેવા એ એક માટા પ્ર⁴ન છે. છતાં તેનાં કેટલાંક ખાલા ચિન્હાેથી તેએ કેનાળખી શહીયે. જેવાંકે:---નીતિવાન. રવાર્થત્યાગી, આધ્યાત્મિક તત્ત્વાન ઉંચ શાન ધરાવનાર, વિચારવાન, નખરવભાવી કે જેનાં મીઠાં વચના સાંભળવાથી હૃદયને શાંતિ મળે. જ્યાં સધી સદ્યારૂએ મળતા નથી ત્યાં સધી સન્માર્ગતું ભાવ થતું તથી. સન્માર્ગ સ્પષ્ટપણે सभकाता नहीं अने सत्य सच् जाय है. जयां સંધી રનાર્થ ત્યાંમી પુરુષો સત્યને તારવાનેજ ખાતર (નહિ કે પોતાનું નામ જહેર કરવા યાંના પક્ષાપક્ષી વધારવા) બહાર પડશે નહિ ત્યાં સધી સહર્થના કેલાવા થશે નહિ: અને સર્વત્ર જડવાદ (Materialism) પ્રસરશે. સ્વાર્થ ત્યાગી પ્રક્રવોજ ક્ષાભવૃત્તિ કે માન મર્યાદા છાડી સત્ય' ખતાવી શકે છે. ગાદીના માન માહ અને લાભના અંકરા જેના હૃદય પટમાં **હૈં**ડા ખેંપ્યા છે તેવા નામધારી-વેશધાસી સા ધમાં ગાતિને અને ધર્મને અવળ માર્ગે દેશી સર્વનું સત્યાનાશ વાળે છે.

ધર્મ કુમાત્ર ક્રિયાકોડમાંજ રહ્યા નધા. आहा हियाका ते। अतिम हेत के आत्मतान तेना भात्र साधनभूत छे. आ आत्महान પુસ્તકાદિ સાધનાથી સ્પષ્ટપણે સમજાતું નથી. श्वद्यात्रना शर्शे कतां अध्य प्रयासे ते समज्जय છે. મંત્ર તંત્રની કપટજાળથી ધર્મને અદાને कंतरता धुनाराचेश सदर्भना हेवीचे। हे अने પોતાની સાંભ અને માન કાંપરે લઇ અર્થના भानर्थ करे छेर आशा हर्जने। हर करवा माति સમાજે વનતા પ્રવાસ કરવા જોઇએ. અને न्यार्थत्याणी **अत्य**ुषे। अहार आवे तेमने क्ते-

लन आयवा प्रयत्न अरवा को छन्ने. सदर्भनी લાગણીએ વંશપરંપરા ચાલી આવતી નથી માટે ધર્મ ગુરૂએન પણ લંશપરંપગ ઝાલ્યા આવવા ન જોઇએ, અને જો વંશપર પરાતે रिवाक क्षायम राभवा हो। ता ते पहचीन થાગ્ય શશા તે પદ્યાંએ આવતાર વ્યક્તિએ म्भवस्य अहस्य स्था है।बा लेशक. ઉચ્ચ પદથીએ આવનાર સ્થક્તિ તે પદવીને લાયક શાસામાં મકત છે કે કેમ આવા વિચાર કરવામાં પહ્ય જે દેવ મણે છે તેવા ગ્હીક્છ अध्यस्त्रपुर केने तेने सहभावतरीहै पूळ धर्मनाल નાશ કરવા કમ્મર કર્સ છે. બહેતર કે દુશચર્સા ગુરૂઓ કરતાં પાતેજ પાતાના ગુરૂ થઇ બેસવે. के तथे। तथी ते वास्तावेः सं छ ? केवी વર્તામું ક વિશે શંકા નવય, જે અનીતિમાન હોય अने ते साक्षान साजीत थया है। व, विभेजान માં અધારા હાય તેવા સર્વથી વક્તા તરીક ન पृष्णभ ते भारे जाति सभाके जनती हाशास કરવી. હાલમાં દિમાં અર જૈન કામમાં ધ્રમીપદેશ. કાની સંખ્યા વસીજ આછી છે અને તેન પરીશામ એ આવ્યું છે કે દક્ષિણ હ્રિંદસ્તાનમાં થયા જૈન ધર્મીમા પરધર્મીએ! ખની ગયા છે અને અન્ય મતાવલ બીએ તરકથી પાળી હેરાનગતિને પહેાંચ્યા છે. તે શિવાય ગુજરાત તરફ એકએ તા ત્યાં પણ એકએ તેવા ધર્મતા શાસ્ત્રા નથી એટલુંજ નહિ પછા ધર્મનાં ત્રળ તત્ત્વાનું પણ પણાતે આન પણ નથી: કકત સમજે અહાસમજે યાંડી ઘણી ખાર્લાકવાઓ કરવામાં આવે છે.

વળી જીતા વિચારવાળા ધરડીયાએક અને લાલના કેળવાયલા જીવાન વર્ગ વચ્ચે 🥱 ધર્મ કંબધી મતબેદ **બેવામાં આવે છે, તેનું કારણ** वर्तभाव संयोगीतं वधार्व समक्ष शक्या है।य तंत्रा सद्द्रभहेदाकाता भाषा छे. द्वाराना ग्रामा तर्डवाहरी। छे. के वास्य सावारण पुदि 🛶 દૈનિક અનુભવ વિરુદ્ધ ન થાય તેજ સત્ય भानवामां आने छे. पाश्चिमात्य तत्त्ववैता सामा મેં ચામાં આવી તર્કસિંતનાજ અહ્યા ઉપયોગ



કર્યો હૈાય છે. આથી શાંતિ સમાજે પૂર્વ અને પશ્ચિમના ખન્ને દેશાના તત્ત્વગ્રાનનું સારું ગ્રાન ધરાવતા હૈાય તેવા ઉપદેશકા મેળવવા અને તેમને ઉત્તેજન આપવા પ્રયત્ન કરવા. આને માટે રક્ષાનિક પાદશાળાઓજ સંતાપકારક કામ કરી શકતી નથી.

ધર્મના પ્રચાર કરવા જ્યાં જ્યાં જુના વખતના પુસ્તકના બંડાર હોય તે ખાલી તેમાંના પુસ્તકાને ધર્ણો સંભાળથી અળગી રાખી છપા-ત્યાં જાઇએ. કેટલાક આવા બંડારને ઉધાડવા કતા નથી અને તેમાંનાં પુસ્તકાને ઉધાઇને ખવંશવી ધર્મના કોંમતી ચંચાના નાસ કરે છે. આ પુસ્તકાના પ્રસિદ્ધકતાં માએ પ્રસ્તાવ-નાસ મંથતી કંપતિહાન્કિ ઓળખાણ આપવા વધુ લક્ષ આપવું. આ પ્રમાણે ધર્મ પુસ્તકા સંબંધની કોંધના કરવાની પણ સમાજ-

(૩) કું**ળ વર્ષ્યા** તાતિના હબ્રતિના આધાર કેળવણી ઉપર છે. અમે તે ઘકારની (સત્) કેળવહો અપાય પણ હવેક સમયે. તેનું દક્ષિ બિક તા એકજ દાય છે. તે દ્રષ્ટિ બિંદ માત-સિક શહિતની ખીલવણી છે. માનસિક ખીલ-ળણી **સ**ત્સામનાથા સંતાવ**કારક રી**ને ચાય તાે આપ્યાહ્મિક ઉત્રતિ પણ આપોઆપજ થાય, એ દેખીતું છે. કેળવણી આપવાના મુખ્ય હેતુંમા સ્વ અને પર કલ્યાણ છે. ખને પર કલ્યામાંમાં મુખ્ય સ્વધર્મ સેવા અને દેશ **સંત્રા છે. આ** સેવાંના જીરસો રગેરગમાં પ્રસસવવા સાતિ સમાજે બૅતનાં પ્રયક્ષો ક્ષેતાં **બોઇએ.** પૈસા ક્રેમ મેળવવા એટલુંજ નહી **મથ્ય પાતાની આજીબાજી થ**તી હરેક પકારની યળવળથા પ્લુ વાંકદ થવું જોઇએ. કેમવણી જ્ઞપર સદ્દવર્તનના પણ આધાર રહે છે. હિંદુ-સ્તાનમાં કેળવાયલા વર્ગનું પ્રમાણ ખીજા દેશા સાથે સરખાતાં ઘાઇજ થાડું ગથુવામાં આવે છે.

કેટલાકનું માનતું છે કે આધુનિક કેળવણી મેવાથી વિદ્યાર્થીએ સ્વચ્છંદી ખેતે છે, ઉદ્ધત ખેતે છે અને તાના માટાની માન મર્યાદ્ય રાખ્યતા નથી. બક્ષે આ વાત ભ્યાપ્રભી છે એમ કેપુલ કરીએ તો આમાં દેવ કોનો કહાડી શકાય? અલગત કેઇક અંશે બીન કેળવાયન લાએનોજ. જો બધા કેળવાયલા હાય તો એક બીજાને પોતાના વિધે આભમાન રાખવાનો કે ઉદ્યત્ થવાના પ્રસંગ પણ આવે તાલે. આન્યો પ્રસંક ફરી ઉમા ન થવા પામે માટે સદ્ભીન

નવાલા, સાદા અને ઉચ્ચ વિચારવાલા નિશ્વાળ અતે કાેલેજોમાં શિક્ષકા રાકવા જોઇએ.

વળી કેટલાકનું માનવું છે કે બધી ભતના માચાસો કેળવણી ક્ષેશ તા હલકા પ્રકારના ધંધા પછી કાળુ કરશે, તેએના પાતાના ધંધા હેાડી દે**શે** અને તેઓ પાતે બીજાની તામેદારી નક્રિ ઉઠાવે. આ પ્રત્રતા ખુલાશા જો બધા કેળવાઇ જાયતા તરતજ થાય તેમ છે. કારછા કે જ્યારે બધાએ કેળવાયલા હશે ત્યારે કેળ-વણી સંબંધી પ્રશ્ન ન ઉઠતાં આર્થિક-પૈસા કમાવવા ભાઅતના પ્રશ્ન ઉભા થશે અને જ્યારે પૈસા કમાવાના સવા**લ આગળ આવશે ત્યારે** જે વસ્તુઓ પેકા કરવાને થાડા માણસા કામે લાગ્યા હશે અને જે વસ્તુંમાની થછી માટી માગસ્કી **હશે તે વસ્તુ**એા પેદા કરવાને ફેળવાયલા માણસા પણ કામે ક્ષાગશે એ સ્વાબાવિક છે કારણકે તે ધંધા કરવાથી વધારે કમાવાશે.– બાસે પછી ગમે તે પ્રકારના તે ઘંધા દ્વાય. મ્યાટ્લુંજ ન**હિ પણ મામ થતાં હરિ**ફાઇનેક **ળ્**લસ્સા વધશે અને તેથી કરી અમુક **ધ'ધા**-ામાં ખાસ પ્રવીસ (Specialist) **ય**વાના પ્રયત્ત કરવામાં આવશે. આવી રીતેષીમે પીમે દેશની આખાદી થશે.

કેટલાક જે પશ્ચિમતી વિધાના દાષ કહાડે છે કે તે વિદ્યા ઉદ્ધત અને ધર્મજ્રષ્ટ કરે છે તેઓએ તેના દાપ કહાડીનેજ અટકવાનું નથી કારણકે તેની અંદર કેટલાક ગુણા પણ છે કે જે ગુણાને લીધ તેઓ હાલ આપણા પર સાઝાજ્ય બામવે છે; તે વિધામાંથી જે જે સારબૂત હાય તે તે એહળ કરી તેના સાથે સાથે આપણી પૂર્વની વિધાના પણ સંતાપકારક અન્યાસ કરવા જોઇએ.

પણ આ વિદ્યા સંપાદન કરવા પૂરતાં સાધતા હોવા જોઇએ. જો કે આ સાધતામાં ભણતાર વિદ્યાર્થાની પાતાની જીહિજ સુખ્ય સાધન છે છતાં એ તે સાધન બહારનાં બીજાં સાધતા વિદ્યાર્થીની પાતાનું કામ પાર પાડી શકતું નથી, માટે આ બાલ સાધતા પૂરા પાડી આપવા શાતિ મંડળાએ બનતી મદદ કરવી. કારહાુંકે વર વહુને પરહાુવવા અને જમ્બાનવારાની બાબતામાંજ બાંજગડ કર્યેથા તેમની કરેઓ પૂરી શતી નથી.

ઉપર અહ્યુવ્યું તેમ હિંદુસ્તાન *ખી*જ દેશા કરતાં કેળવણીમાં ખઢુ પછાત છે **ખતે** તેનાં કારણા ટુંકમાં નીચે સુજબ છે.

૧. જન સમાજની કેળવસ્ત્રીની જરૂરીયાતના સંગંધમાં પરતી ખામી.

ર. જુનો વિચારવાલા તો કાની માન્યતા કે:—પ્રાચીન સમયની પૂર્વની વિચાજ સર્વાત્તમ છે અને હાલની કેળવધ્યીથી વિચાર્થીઓ સ્વવ્ચ છે મણે બસે વિચા સંપાદન કરવાથી ફાયદા થાય છે તેવી સમજની ખામી.

કાલની કેળવણી લઇ લોકો ધર્ણે ભાગે સારા તાએકાર સરકારી તાકરા ખતે એ ખરા પણ તૈયાં જોઇએ તેવા આર્થિક લાભ થતા નથા.

૪. છેલ્લાં મસા ત્રહ્યુસા વર્ષ દરસ્યાન **પરદેશીય હુમલાએોથી હિ**ંદમાં રહેલી અશાન્તિ

હવે આવી મુશ્કેલીએને દર કરી કંળવણીને ઉત્તેજન અપાય તા વધારે સારું અમુક પૈકા રની પહાર્તિ ખાટી હોય તેથી તે વસ્તુ (કળવણી) જ ખાટી છે એમ કહેવું એ ઘર્ણ ભૂલભર્ય **છે. પદ્ધતિમાં** ખામી જણાતી ઢાેય તેા. ન4ા ચાે**ગ્ય પદ્ધ**તિ ચ્યનસાર કામ કરાે. કંગવણીને **ઉત્તેજન આપવા અને** વિદાર્થીએક્તા માંહેક માં**કે હરીકા**ઇના વ્હરસા ઉત્પન્ન કરવઃ ઝાતિ સમાજે એકત્ર પૈસાના બંડાળ કરી તેમાંથી **ચાગ્ય જણાય તેવા ક્ષાયક અને ગરીજ વિદા**્ **ર્થાં અ**ાને સ્કા**લ**રશીપ (છાત્રફતિ) **જો⊎એ. હાલના વખતને લગતા કે**ઃકપિસ જન સમાજે ઉપયોગી વિષય પર હરીકા-**ઇના** ઇનામી નિર્ભાધ ક્ષખવા જોઇએ. કેળવહીંને ઉત્તેજન આપવા થાડીંગ ઢાઉસોની પણ લસ્ક્રી જરૂર છે. તેવી એડિંગા સ્થળે સ્થળે સ્થાપી **સ્વ.** દ્રાતવીર શેંઠે- માણેકચંદ **હો**રાચંદ જે. પી. **એ જૈન** કામને અત્યંત આબારી કરી છે. **જન** કામ, તેમાં વિશેષ કરી દિગંબર જૈન ક્રામ, કળવણીના સંભંધમાં ધણીજ પછાત છે. અને આથીજ હાલની ચળવળમાં જોઇએ તેટલા બાગ એ કાેગ લઇ શકતી નથી. જેમ છાકરાઓને કેળવવાની જરૂર છે તેમ છે:કરી-મોને પણ તેમને ચાગ્ય કેળત્રધ્યી આપી કેળ-વવાની જેટર છે અને તેને માટે બાવિકાશ્રમ જેવી સંસ્થાઓને સ્થાપવાની તેમજ તેને ઉત્તેજન આપવાની ખાસ જરૂર છે.

(૪) અમાર્ચિક સ્થિતિ.-જ્યાં સુધી અઃ-ર્થિક સ્થિતિ સારી ન હોય ત્યાં સુધી ઉપરાક્ત કંઇ પહ્યુ થઇ શકે નહિ. બાટ દ્યાતિની વર્ત-માન આર્થિક સ્થિતિ કૈવી છે અને જો તે ભરાખર ન હાય તા તેમ હાવાતું શું કારણ છે તે ગ્રાંતિ મંડળ તપાસલું જોઇએ. પોતાના ત્રાંતિ મંડળ તપાસલું જોઇએ. પોતાના ત્રાંતિ મંડુઓ કંગાલ અવસ્થામાં હાયં અને આપણે તાંગર હાઇ માજમાં એમ અને તેમની મિલ્કુલ દરકાર ન ક્ર-રીએ તા આપણે તેમના તરફ કઠણ હદય રાખા નિર્દયતાથી વર્તીએ છીએ એમ કહેવાને કાંઇ વાંધા નથા. તેમને કાંઇ પણ રીતે સારા ધાંધામાં કેકાણે પાડવા એ ગ્રાંતિના પેસાદાર વર્ગની કરજ છે. તેમને કલાહુત્રર અને વ્હેપારી ગ્રાંત આપી અર્થિક સ્થિતિ સારી કરવા ધ્યાન આપવું.

ગાતિ મંડળ-કૈયર કહેલી બધી બાખતા શાંતિ સમાજે વિશેવ કરી ધ્યાનમાં લેવાની છે. આ ળાખ**તા** ધ્યાનમાં સેવ!ય અતે કામ સુક્ષ**બ** થાય તે માટે સઘળા તહીં બંધુ**એ**!માંથી અમુક <u>અતુભત્રી અને વિદાન માણસા અસુક વર્ષ</u> સુધા કામ કરવા ચૂંકો કહાડવા. આ ચૂંટી કહાત્વલાએક સવળા તાતિ બધુએકના એકત્ર પ્રતિનિધિમાં છે. તે પ્રતિનિધિઓએ જેમ બંતે તેમ સ્વાર્થ ત્યજી નિ પક્ષપાને ગાતિહિલાથ કાર્ય કરતા પ્રતિજ્ઞા લેવી જોઇએ. આ પ્રતિનિધિ મંડળ-વા શાલિ મહ્લે યા શાલિ પંચે દર વર્ષ યા તા અનુકલ ન દીમ તા દર ત્રીએ વર્ષે પછા ર્સ્મકત્ર થઇ તેમના આગળ રુજ કરાયશી બાળતોપર વિચાર કરવો**. અતે તે અ**મલમાં મુકાલા હરેક પ્રકારનો ડહાવચુમર્યા પગલો લેવાં કે જેવા સાંપ કરતાં કુ**માંપ અને એ**ક્ય**તા** કરતાં અનેકથતા ન•થાય અને તક ન પઉં.

અા પ્રકારે હરેક દ્યાતિ પાતપાતાની કરજ વિશ્વત (બહેાલા) અર્થમાં સબજે અને પૂર વ્હરસાધા પાતાનું કાર્ય ઉનાહી કે તેન ભારતવર્ધના ઉદયનાં કિરણો કૃડી ડુંક સમયમાં હિંદ ઉપર મધ્યાન્હ કાલના ઝળહળતા પ્રતાપી સર્ય પુના પાતાનું સામ્રાપ્ય પ્રતાપી રહે

અવિનાસી અરિકંલ તું, એક અખંડ અમાન, અજર અમર અગ્રુજન્મતું, ભય ભંજન ભગવાન આદિ ઉપાધિને, હરા તંત તાકાન. કરણાળ કરણા કરા, ભય ભજન બગવાન. નીતિ પ્રતિ, નસતા, ભસી ભક્તિનું ભાન, આપે પ્રજાન આપરા, ભય ભંજન ભગવાન. હર આપાસ એડીયણું હર અહ ને અન્નાન, હર અપાસ એડીયણું, લગ બંજન ભગવાન. શ્રીમદ રાજ્યાં ! કેમ્પક-હિંમત.





पुस्तकालय

यह बात शनै:२ छोग मानते जाते हैं कि प्रस्तकालय उन्नतिके एक प्रवान कारण है। पुस्तकालयाँके न होनेसे भागाती बहुत कुछ हो चक्की है। आवक्छ भी बहुतमे उन पुस्तकालयोंक कर रहनेसे-जि नके मालिक महारक आदि अन बैठे हैं--उन्नतिमें बहुत बाबा पड़ को हैं। जैन भमा-नमें एक ऐसे पुस्तकालय की आयंत शायक्यका है, नहां निनियोंके संपूर्ण बन्योंकी मुद्दिन या विकित प्रतिमां प्रप्त हो एके। यह प्रस्तकालय किसी ऐसे कारवें होना चाहिए जो कि भारतंक मध्यमें हो और जहां जैनि-योंको अच्छी बस्ती हो । ऐसे पुस्तकलयकी 50 अंशमें पृत्ति करनेका उद्योग आगरका नैनक्कवार पुस्तकालय कर रहा है। अर्धन वनहीनताके होनेसे जैसी उन्नति होनी चा-हिए थी बैसी यह नहीं कर सका है। किंतु इसके बाल कार्यकर्ता और अन्य असुविधा-भोंको देखते हुए यही कहना होगा कि इमने आशातीत उन्नति कर की है। हमकी प्रसंकें कोरी आलमारीकी शोभा ही नहीं बढ़ाती किंतु वे प्रतिनाम ६०, ६५ पड़ी भी माती हैं। अबतक निन २ विद्वानीने इसका निरीक्षण किया है, वे सप ही इसे देखकर प्रमन्न हुए हैं। पुरुकालयके साथ बाचनालय मी है। इस वर्ष इसमें बहुत सुधार हो गया है। आनकल उसमें २०, २२

समानारवत्र आते हैं, परनेवाडोंकी भी ओसत संख्या प्रति दिवसकी १५, २० है। सबसे बढ़ी कभी मो माननीय निरीक्षकोंने इस प्रस्तकालय व वाननालयमें बराई है वह है स्थानकी। जिन कमरेमें वर्त्तशानमं यह हैं उसमें बहतसी अमुनिवाएँ हैं। अतः पुस्तकालयके योग्य मर्कथा नहीं हैं । वडी लागतकी धर्मशाला आदि बनानेवाले धर्भात्मा सज्जन क्या इस अत्यंत उपयोगी कार्यकी ओर नहीं करेंगे ? नहीं, हमें यह आशा नहीं है । किंतु हमें यह विस्वाम हैं कि शीघ ही कोई माईका लाल धनी धर्मारमा माई इन शिका-यतको दूर कर देगा । और हनार पांचसी रुवए लगाकर एक सुड़ौल बड़ाला कमरा बनवा देगा या कोई आगरेका ही भाई मौकेका बना बनाया क्यस पुस्तकके कामको दे देगा। उक्त प्रार्थनाके सिवाय हम उन विद्याप्रेमी सज्जनोंका मी नित्ताकर्पण करते हैं जो अपनी चंचल रुक्मीसे जैन यन्थ मोछ हैकर बांटा करते हैं। हम री उनसे मिवनय प्रार्थना है कि वे ऐसे समयमें इसे न भूळें। प्रस्तक प्रकाशकों से भी हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपनी २ अगाई प्रस्तकें भेजते रहा करें जिससे सहजमें ही पुस्तकोंकी संख्या बहुत बड़ी हो जाय। क्या हमारी यह प्रार्थना धर्मात्माओंके कानों में पहेगी । तथास्तु ।

मोती कटरा, सगीलाल जैन आगरा। ऑ॰ मॅत्री,नैनकुमार् पुस्तकालय



The state of the s

💥 दिगंबर जैन. 🎇

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिवितिषश्च तत्त्वेः सत्योपदेशस्तुगवेषणाभिः । संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्शताम्, दैगम्बरं जैन-समाज-मात्रम् ॥

१६ वाँ. वीर संवत् २४४९. कार्तिक-मार्गिये वि० सं० १९७९.

अंक १-२.

THE LORD'S HESTINAL!

(DIPAVALI)

The night was dark, the morn was near, The light was dim, none stirred there. But look! the wonder! the night got ablaze, Its light was bright, that surpassed the rays. The Lord of Jainas, Maha Vira, the Warrior, Attained the Nirvana, and news pervailed sphere. Devas came and sang the songs of joy! They made illuminations that gleamed in sky! Son was still away but it seemed Such auspicious time that all wore gay. ion, land and all, lost their diverse tempers, Bery man and beast made joyous hampers. The Bard Tirthunkra preached the Gospel, "The peace and joy nankers every mortal" Observing compassion man gets Freedom, The Charitra adopting reaches heaven's Kingdom." Each and all heard great Apostle's saying, Love embraced at heart began praying: " Follow, we may, sucred path of Dharma, Enjoying Lord's Festival destroy the Karma."

Jaswantungar 23-10-22.

—K. P. Jain.

→ श्रीषयानुक्रमणिका। ३४

1 The Lord's Festival (Kamtaprasad Jain). 1
९-६ मुखद नव वर्ष है आई; नूनन वर्ष प्रोत्साहन ९
 इ नव वर्ष सम्बोधन (पं० रामधर, पपीरा)
५-६ वीर सम्बोधनः नृतन वर्ष (पं० भुवनेंद्र, दाहोद) ६-४
७-८ सम्यादकीय वक्तव्यः; चित्र परित्य ४-९
९ मीनीकी मीन १६ ग
१० जेनसमाचार संग्रह १६ च
११ वर्णव्यवस्था (प० नन्द्रनज्ञान्तनी, ईडर) १७
१२ जैन काव्योंका महत्व (पं० सतीशवन्द्रजी, काशी) २९
१३ जातीय सभा व पत्रींपर दृष्टि(वर्णी दीपनंदजी, दाहोद) ४ ७
१४ जैन तामिल साहित्य (बात्र कामतायसादनी, अठीयंत्र) ५९
१५-१६ उनड़ा उद्यान (कविता): मंसार टर्प (कविता) ५६अ-न.
१७ जैन समाजनी वर्तमान परिस्थिति(मूळचंद ''निरंजन'' दाडोद्) ५७
१८ खंमातना प्राचीन तीर्थनी यात्रा(मोहनदाल मथुग्दाम काणीसा) ६०
१९ सत्याग्रही के श्रावक (,, ,, ,, ,,) ६२
२० मित्र-संवाद वर्णी दीपचंदनी, दाहोद) ६५
२१ विश्वस्यादेवी (बा॰ कामताप्रमाद जैन, अलीगं ब) ७४
११-२३ दु खमय संतार 'कविता); सर्वगदहरण चूर्ण-त्रिफड़ा (कविता) ७६-७ ।
२४-२९ धर्मोपदेशः धन्य कीन १ (कविता) ५९-८०
२६ फ झहारकी महिमा (वैद्येते इह्त) (१
२७ युवाबस्थाके दुःस्व (कविता)(चंदनमल जैन, इन्दीर) (२
२८ साम्यवादनी समीक्षा (रीथ लानरस, मामेत्री)
२९ जैन शब्दार्णव कोष (पं॰ बिहारीलालजी, बाराबंकी) ८२
६० मेरी भावना (पं ० मनोहरलाल, टिकायतनगर) ९२ -
३१ सम्बाद व प्रतिज्ञा (दामोदग्दास जैन, बुढवारनिवासी मूरत) ९३
६६ नुक्रतेके लड्डू (कविता) (मोतीलाउ पहाद्या) ६६
And the same of th

शुद्धि-इस अंकमें केश्रका भाव एक जगह २।) व एक जगह १।।=) छता है परन्तु राष्ट्र २) तोला है। पूर्व द क से ८ अ तकके पूर्व क से १६ अ तक ममझ। のようないかのようなようなないできょうないできょうないできょうないできょうできょうない

ることできることのことの सुखद नव वर्ष है आई।

मञ्जुल है मृदुताई, पावन सुमेष सुहाई। हरय-पञ्डत हर्वाई, सरस रसकिता सरसाई ॥ सुखद नव वर्ष है आई। पवित्रता दरभाई, प्रेमलता हलसाई। द्वेष निर्द पड़े दिखाई, मचेगी ऐक्य बधाई ॥ मुखद नव वर्ष है आई। शानित सुधा सुखदाई, धर्म सुरुभी मन भाई। ज्ञान मगकी सुधराई, मोह-तम नाशन आई ॥ सुखद नत्र वर्ष है आई। मुद्दता जाति लहाई, दूर अड्ता है भगाई।

'बीर' विभुकी विभुताई, "जैन दिगंबर" विकसाई ॥

मुखद नव वर्ष है आई।

कामतापसाद जैन।

である。までするようできるようできるようできるようできるようできる。

वर्ष-प्रोत्साहन ।

प्रगटा मोदम । दिव्य भारत भाग्यका, शुभ धर्प उन्नति प्रद हो मुचारक, सागती मेया तुझे ॥१॥ ऐक्य प्रसमे हिंदमें। दिलहवाकी दिव्यता सम, काटकर, नफरत रही वे, बैर दिशक प्यालीसे ॥२॥ "हे अहिसा सूत्रधारक," शुद्ध खादीके प्रचारक। कर्मवीर सिद्धार्थ तारक, रम्य-हृदयका क्षेत्र भारत ॥३॥ दुर्गभे चेटा हुआ, भारत सितास सबक रहा है। पातत्रता अंजीर गुलामीका, मिटाना पढ़ा रहा है ॥४॥ भो । आत्मवत् संतान हिंदी ! क्यों पढ़ भर नींत्में । या होम करके भेट दो, प्याम जिगर बलिशनमें ॥५॥ उठ देखी? हिंद-भेषा, अश्रु उगसे वहा रही है। अशु तो हां क्या, परन्तु, दीन लजा हो गड़ी है ॥६॥ सोन नहिं, भारत लिये, विर-संत सहते जेल्से। होन कर, घा, बार, दोलत, अस्वताके यज्ञमें ॥७॥ भारत ! वीर-वर्षे, द्रव्य-कीर्तिमय रही। है "निरंचन" की हृदय इच्छा मुनारक हिंद हो ॥८॥

मूलचनद्र " निरंजन " (दाहोद)। ×परतंत्रतः

* नव-वर्ष-सम्बोधन । * किस लिये आये हो तुम आज? किस॰-भारत कारागार बनाते. या स्वतन्त्रता उसे दिकाते । उसके संकट दूर इटाते, आये हो तम भाग ॥ ।।। किस --पथिकोंको सन्मार्ग बनाते. या क्रवंधर्मे उन्हें गिराते । अथवा उनको पंगु बनाते. भाये हो तुम भान ॥२॥ किसलिए०-बन्धु बन्धुमें फूट कराते. अथवा प्रेमभाव प्रगटाते । एक सूत्रमें उन्हें वंबाते. आये हो तुम आन ॥६॥ किसलिए०-उन्नतिके पथ हमें लगाते. अथवा अवनतिमें कर नाते । निदित करते तथा जगाते, आये हो तुम आज ॥४॥ किसलिए --क़रीतियोंको दर हटाते, अभवा उनको खुब कराते । उनसे इमको बहुत रुगते, आये हो तुम आन ॥ १॥ किसलिए --आलसमें द्वम हमें गिराते. या उद्योगी हमें बनाते । सत्कर्मीका बाठ पहाते. भाये हो तुम आज ॥६॥ किसलिए०-कदाचारता दूर हटाते, अथवा उसको खुब कराते । उससे इमको नष्ट कराते, आये हो तम आग ॥ आ किसलिए --

तुमसे पूर्व वर्ष जो आये,

ऊपरसे सुन्दर दिसलाए |

पर घोला देने थे आये,

तुम क्यों आये आज? ॥८॥ किसलिए० –
धोलेवान नहीं तुम होना,
देलो इसे याद कर लेना ।

सारतको 'भा'रत कर देना,

विनय यही है आज ॥ ९ ॥

किस लिये आये हो तुम आज !

राजधर, जैन अ० जैन पाठशाला (पपीरा))

ॐ वीर-सम्बोधन- ३३≪

कर अवलम्बन वीर! देव-उज्जाला मले हुये हम, भज्ञान-महामत दके हुये हम। रुद्धि-दास भी बने हुये हम, दो सुबुद्धि हों घीर॥ कर०॥

जाति-नाव-पत्वार नहीं है, धार नहीं कोई पार नहीं है। सहसा ही वह गई नहीं है,

छोडा समझे तीर ॥ फर० ॥

कूट २ कर प्रेम भरो जब,
झूउ २ सब रू.ढ़ि हरो जब।
ज्ञान—मुधासे सींच करो जब,
तब 'विद्व'' बने बर बीर।।
(करहु विलम्ब न बीर!)
कर अवलम्बन वीर!

भुवनेन्द्र "बिस्व" (दोर्द)

*** नृतन-वर्ष** *

घर २ का यह हाल हवाल, बूढे हों या होनें नाल । फूट नीन है बुझा हुआ, हाय ! महल भी कुझा हुआ।। (२)

रेतीका है मानस-क्षेत्र मुँदे हुये हैं ज्ञान-सुनेत्र। रूढ़ि नागिनीका आवास। घर है यह या कारावास?।

सन्मतिके अनुयायी हैं या। कुमति-किइसीके पगदास !

माया तृष्णासी पिशाचिनी-से घिरकर जग हुवा उदास ।

(8)

फिर कैसे यह नृतन वर्ष, दे देवेगा हमको हर्ष ? जब तक दिन दूना अपकर्ष। तब तक कैसे हो उत्कर्ष?

(4)

जगमें ऐसा जीव नहीं है— जिसको सुखकी चाह न हो। बरन सफक हो, करना ऐसा, ''विश्व'' सकण्यक राह न हो।

"विज्व"





हुंके साथ प्रकट किया जाता है कि 'दिगंबर जैन' मासिक पत्रने अपना नृतन वर्ष पंद्रहवां वर्ष निर्विधतासे प्रवेश। पूर्ण किया है और इस अंकसे यह नवीन १६वें

वर्षमें प्रवेश करता है । गत वर्षमें षट्दव्यकी आवश्यक्ता व सिद्धि तथा जैन काव्योंका महत्व नामक धार्मिक व ऐतिहासिक उपयोगी लेख जैन साहित्य सभा लखनऊकी कृपासे हमने प्रकट किये थे जिनमें ' जैन कार्ट्योंका महत्व ? नामक दूसरा छेख इसी अंकर्मे प्रकट है तथा तीसरा अंतिम लेख आगामी अंकमें प्रकट होगा । इम समझते हैं इन लेखोंसे जैन अंजेन विद्यार्थियों व ऐतिहासज्ञोंका उपकार होगा। तथा इन लेखोंका एक अलग ग्रन्थ भी शीध ही प्रइट करेंगे। हमें विशेष हर्ष तो इस बातसे है कि 'दिगम्बर कैन ' को हमारे सब भाई समान आद्रकी दृष्टिसे देखते हैं अर्थात खंडन मंडनके लंबे २ लेख दिखनेकी दिगम्बर जैनको आवश्यक्ता नहीं पड़ी । सिवाय बम्बईमें सिंघई मोतीलालजीका असमयमें व अनु-चित नुक्ता हुआ था इस पर इमने योग्य टीका की थी जिससे कुछ खंडेलवाल आई दिगम्बर केन पर नाराज हुए थे परंतु बहुतोंने तो इमने इस टीकाको उठाई इससे हमारी सराहना की है और अब भी नुक्तेकी चर्चा बन्द नहीं है। अर्थात समान ऐसे नुक्तेके विरुद्ध ही है।

* * *

हमारे पाठक अच्छी तरहसे जानते हैं कि हम १० वर्षसे वर्षारंभमें सच्चित्र ग्वास तीन चार भाषाओंके अंक। लेख व अनेक चित्रांसे

मुशोभित सचित्र साम

अंक प्रकट करने हैं उसी माफिक इस वर्षमें भी यह खाम अंक प्रकट किया है । इस अंकमें हिन्दी, गुनराती, मगठी य अंग्रजी भाषांके लेख व किवली इश्वा संख्या में ल्या में हैं जिनमें कई लेख इतने उपयोगी है कि यह साम संग्रहणीय होगा। एसे लेखा य किवलाएं भेजनेवाले लेखकोंका हम आभार गानने हैं तथा उसके साथ र जिन लेखकोंक लेख व किवलाएं स्थान।भाषसे हम नहीं प्रकट करसके हैं उनकी क्षमा चाहते हैं और उनको सृचित करते हैं कि उनके लेखोंकी आगामी अंकोंमें कमशः स्थान दिया नायगा।

इस अंकमें कुल ७ चित्र हें निनमें मुनि शांतिसागरजीका दर्शनीय चित्र व आदर्श चरित्र में ननेके लिये सेठ रावनीसखाराम दोशीका, न्या० पं० गणेशप्रसादनी वणीका.... में ननेके लिये पं० सत्यंचरनीका, सेठ पदमराजनीका.... मेननेके लिये बाबू कम्लुरचंद बेनाडाका व सेठ अमीचन्दनी गोहानाका.... मेननेके लिये बा० स्टब्लालाल बर्माका हम आभार मानते हैं। टाइटल एष्टका संसार-वृक्षका चित्र अगले वर्षोंमें भी प्रकट किया गया था परन्तु इसवार इसकी एक खास कविता होनेसे फिरसे इसको प्रकट किया है। आशा है पाठकोंको वह अवश्य पसंद होगा और इस चित्रसे हमारे भाई संसारकी अनित्य दशाका विचार करके अपना जीवन आदर्श बनानेकी चेष्टा करेंगे। कई अनिवार्य कारणोंसे यह खास अंक कुछ देरीसे प्रकट हो सका है परन्तु तीसरा चौथा अंक शीध ही प्रकट किया जायगा और फिर जहांतक हो मासके प्रारम्भें ही हरण्क अंक प्रकट हुआ करेगा। इम यही भावना काते हैं यह १९ वां वर्ष निर्विध्नतासे पूर्ण हो और हमें समान सेवा—करनेका विशेष वह प्राप्त हो।

* * * गत दो वर्षीमें ऐसे कई कारण उपस्थित हो

गये कि न वो वीर उपहार च मूल्य। संवत २४४७ (१४ वां

वर्ष) व वीर सं०
१४४८ (१६) वां वर्ष इन दो वर्षोका
वार्षिक मृल्य हम सब ग्राहकों से वसूल ही कर
सके हैं और न उपहार भी मेज सके हैं जिसका
हमें कुछ रंग है परन्तु मृल्य न आते हुए भी
ग्राहकों के भरोसे पर हम उनको यह पत्र बरावर
मेन रहे हैं। हर्ष है कि वीर सं० २४४७
विकम सं० १९७७ के दो उपहार ग्रन्थ—(१)
श्रावक प्रतिक्रमण विधि व हिन्दी अर्थ
सहित तथा (२) बाल्डबोध जैन धर्म चतुर्थ
माग तैयार हैं तथा वीर सं० २४४८ का
अतीव उपयोगी ऐतिहासिक प्रंथ " प्राचीन
जैन इतिहास" प्रथम भाग ए० सं० करीन

१५० भी तैयार है इसिलये गत दो वर्षोका मूल्य एक साथ वसूल करनेके डिये ये तीन अन्य शीब ही शा=) की बी॰ पी॰से मेजे देहलीमें महोत्सव बड़े भारी ठाटवाठके जांबरो । आशा है कि हरएक प्राहक उसकी स्वीकार करनेमें आनाकानी नहीं करेंगे क्योंकि इन दो वर्षीके वाचनका पूरा लाभ वे लेही चुके हैं। इतना प्रकट करते हुए भी किसी ग्राहकका विचार वी॰ पी० छेनेका न हो तो हमें पत्रसे स्चित करें और हमारे मेजे हुए दो वर्षके २४ अंक हमें वापिस भेन दें। हम समझते हैं कि हमारे सज्ज ब्राहकगण इतने कृतम तो नहीं होंगे कि अंक तो बैठे र छेते रहें और जब रुपये देनेका समय आवे तब बी॰ पी॰ वापिस करदें । बी० वी ० बापिस करनेकी इच्छावालोंको इसी लिये निवेदन करते हैं कि वे भले सुफ्तमें वाचनका काम उठा हेवें परन्त अंक तो शीघ ही वापिस भेजकर वी०पी० स्वीकार न करनेकी सचना भी टेटेबें। विशेष वया ?

इस १६ वें वर्षमें भी एक नवीन धार्भिक ग्रन्थ उपहारमें देनेकी हम योनना कररहे हैं निसका नाम शीघ ही पकट होगा। केवल १॥) वार्षिकमें ' दिगम्बर जैन ' ग्राहकोंको बर्धीसे कितना लाग दे चका है और देनेको तैयार रहता है इसकी कदर ग्राहकगण अवश्य करेंगे ऐसी हमें पूर्ण उम्मेद है। जिनको अपना नाम नदीन आहक श्रेणीमें लिखाना हो वे भी शीव ही लिलें।

हवं है कि देहलीमें आगामी माघ मासमें पंच कल्याणक महोत्सव व महासभा। साथ होनेवाका है औ(उसी सीकेपर घर्मज जैन समाजने हमारी एक नहीं अनेक सभाओंको आमंत्रण दिया है। मुख्य करके वहां अपनी भारत दि० जैन महा-सभाका वार्षिक अधिवेशन होगा तथा साथ र खंडेलवाल महासभा, शास्त्रिय परिषद्, पद्मावती पुरवाल परिषद् आदिके भी वार्षिक अधिवेशन इनही विनोंमें होंगे। देहलीमें बड २ सन-हरी जैन मंदिर लाखोंकी लागतके हैं तथा रथयात्राका बहांका सामान देखते योग्य है। और फिर भी देहली भारतका पाटनगर व ऐतिहासिक प्रधान राजनगर होनेसे वहांकी शोभा बंटिश्य-की क्या प्रशंसा की जाय ! बहांके ऐतिहासिक दृश्य भी देखनेका सीभाग्य साथमें ही मिलेगा इसिलये सब भाई देहली जानेकी अभीसे तैयारी करें।

कई लोग महासभा पर आक्षेप किया काते हैं कि महासभा तो सर्वव्यापी नहीं है और उसमें कई प्रकारकी बृटि हैं, परंत्र उन बृटियोंकी निकालनेके लिये बात करनेसे काम न होगा परन्त स्वयं महासभामें जाना चाहिये और उसको सर्वव्यापी बनानेका उद्यम करना चाहिये। सभापतिका चुनाव अभी नहीं हुआ है इस लिये लिखते हैं कि इसवार यदि दक्षिण प्रान्तके कोई योग्य विद्वान व धनदान् जैसे कि सेठ वर्द्धमानेश्याभी, सेठ रावनी सखाराम दोशी, श्रीयुत चवरे वकीक आदिका चुनाव हो तो दक्षिण प्रान्तमें महासभाकाके कार्योका प्रचार हो सके । यदि बंगाकसे सभापित चुना जाय तो सेठ पदमराजनी रानीवालोंका नाम सबसे उत्तम है । अबसे महासभामें ऐसा नियम हुआ है कि अधिवेशनके सभापित हो दूसरे अधिवेशन तक सभाके सभापित कायम रहेंगे । इसलिये अब केवल श्रीमान सभापितकी आव-दयक्ता नहीं है किन्त श्रीमान व विद्वानकी ।

* * * *
इस वर्ष प्रतिष्ठाओं की धूमधाम विशेष ज्ञात
होती है। इसी माध
प्रतिष्ठाओं की मासमें सुजानगढ़ लिलधूमधाम। पुर, खातेगांब, मुडबिद्रि,
मगरपुर आदिमें भी पंच-

कल्याणक प्रतिष्ठाएँ हैं जिनमें खातेगांवमें मालवा दि॰ जैन प्रांतिक सभाका अधिवेशन और रुवितपुरमें परवार महासभाका अधि-वेशन होगा। ललितपुरमें एक नहीं परन्त तीन गजाय प्रतिष्ठाएँ होनेवाली हैं अधीत वहां ती तीन महाशयों शे तिघई, सबई सिंघई वा श्रीमः नकी पदवी मिल जायगी । हम तो सम-झने हैं कि इमारे जैन मंदिरोंमें पतिमाओंकी संख्या इमारी संख्यासे दसवीस गुनी ज्यादे तो अवस्य होगी तौमी हमारी संख्या घटती जाती है और प्रतिमाएं बदती जाती हैं और अनेक स्थान जीर्ण जीर्ण-अवस्थामें हैं ती भी नये र मंदिर बनते जाते हैं व प्रतिमाकी संख्या बढती ही जाती है। क्या ललितपुरमें मंदिर व प्रति-माकी कमी थी कि फिर तीन नवीन मंदिर बन रहे हैं व नवीन र प्रतिमाएं बिराजमान करनेकी तैयारियां होरडी हैं। हमें यही माखन होता है

कि मन भी बुंदेकसंडसे नामवरी व सिंघई आदि पदवियोंके माप्त करनेका मोह नहीं गया है।

जीणोंद्वार करने, वेदी मितिष्ठा करने, रथयात्रा करने, जहां चित्यालय न हो वहां नवीन चैत्यालय या मंदिर बनवानेके हम विरोधी नहीं हैं परंतु हमारा विरोध सिर्फ नवीन मितमाओं बढानेका ब जहां एक भी मंदिर है वहां विरोध न बढानेका है। जहां भी मितमाकी आवश्यका हो वहां कहींसे पुरानी मितमा लाकर विधि पूर्वक वेदी मितिष्टा करनी चाहिये न कि पंच कल्याणक मितिष्टा करनी चाहिये न कि पंच

सारी जैन समानकी रातदिन अट्ट परिश्रमसे ने नोड सेवा करनेवाले असत्य आक्षेप श्रीमान् जैनधर्मभूषणपूज्य व देषाग्नि । ब्र॰शीतलप्रसादजी 'जैनमित्र' साप्ताहिक पत्र

तथा उपदेशहारा जो २ सेवा जेन व अजेन समाजमें कर रहे हैं उसकी पशंसाके शब्द ही हमें नहीं मिलते हैं और हमारे पाठक तो इनको अतीव उच दृष्टिसे देखते हैं परन्तु थोड़े दिनोसे कुछ इनेगिने पंडितोंसे व उन पंडितोंके इनेगिने अनुयायियोंसे बहाचा-रीभीका प्रभाव सहा नहीं जाता है इसलिये वे बहाचारीकी पर असत्य आक्षेप करने लगे हैं और 'खंडेलवाल जेन हितेच्छु' व 'जेन सिद्धांत' पत्रोंमें उनके तरफ हेवािन फेलानेकी जी जानसे को शश कर रहे हैं यहां तक कि 'जेनमिन'की संपादकी इनसे छिन लेनेके लेख भी लिखने

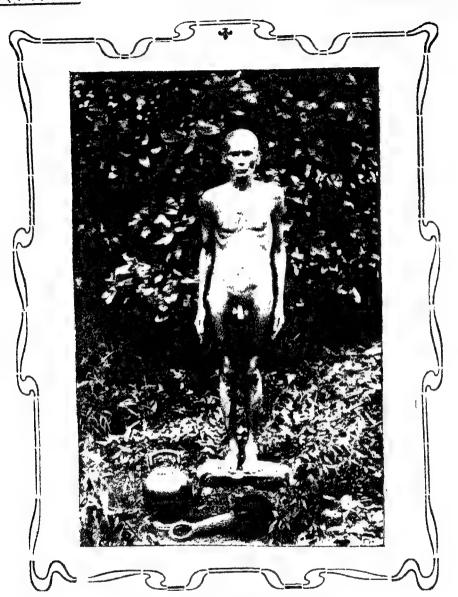
क्रो हैं व फलटण, नांदगांव और छिंदवाड़ासे ऐसा मस्ताव पास कराया है और बम्बई प्रां॰ सभाके सभावति, महामंत्रीको वे उपदेश दिया करते हैं कि ब्रह्मचारी शीसे संपादकी छेलो परनत हम निष्पक्ष दृष्टिसे कहते हैं कि ब्रह्मचारी जीपर जो आक्षेप वे लगाने हैं वे निर्मुल हैं और द्वेषाग्रिके सिवाय इसमें कुछ भी तथ्य ्नहीं है । ब्रह्मचारीभी विधवा विवाह खंडनपर . नहीं लिखते इसीसे वे विधवा विवाहमें सम्मत हैं !!! ये तो विजातीय विवाहकी सलाह देते हैं इसीसे जाति पांति नष्ट करना चाहते हैं !!! ये तो अहमदाबादमें अछतोंकी सभामें गये ये !!! ये तीन आक्षेप वे लगाने हैं परन्त जिन समाज इतनी भोली नहीं है कि इन इने-ंगिने व्यक्तियोंके कहनेमें आ जायगी और बद्धाचारीजीकी सेवा खो बेटेगी। सभापति सेट हीराचंद नेमचंदजीका हमारापर पत्र आया था कि गुनरातकी सम्मति इस विषयमें भेजिये परंत इमने शेठ नैको लिख दिया है कि गुनरातका एक भी भाई ब्रह्म बारी नीय विरुद्ध नहीं है और ब्रह्मवारीजीको गुनरात सतीब आदरकी दृष्टिसे देखता है इस लिये सम्मति पृछनेकी नरूरत नहीं है। विधवा विवाह समर्थनके छेख छिखने व पदट करने-वाले पत्र-सत्यवादी, जातिप्रबोधक व उन हितेषी तो घराशायी हो गये हैं और किसी भी पत्रमें विधवाविवाह होना ही चाहिये ऐसे लेख भी देखनेमें नहीं आते ती भी आश्चर्य है कि नाहक इनेगिने व्यक्तियोंको विधवाविवाहकी गंध आरही है और उसका आक्षेप पूज्य बहा-

चारीनी पर कर रहे हैं वह अत्यंत अनुचित और द्वेषाग्निके सिवाय और कुछ नहीं है।

જયારે આખા હિંદુસ્તાનમાં અનેક સભ એા, મેળાએા, પ્રતિષ્કાએાના સમાચાર ગુજરાતમાં આવી રહ્યા છે ત્યારે દિલગીર સિથિલતા. થવા જેવું છે કે ગુજરાતમાં અત્યાંત સિથિલતા છે. આપણી

મંખાઇ દિમંખર જૈન પાંગ સભાની ખેઠક આ વર્ષે કેઇને સ્થળ શ્રાનાં હતા. સુધી નક્ષી નથી તેમ ધાર સ્થળ સ્થળાતા મહાત્મા કે વેદી પ્રતિષ્ટાના પગ સમાચાર નથી. માત્ર તમજાં વધિક રચયાત્રા થઇ ગામ પણ ત્યાં મંખાઇ દિલ્ જૈન પાલ્સમાની ખેડક થવાના વારા હતા. હતાંત્યા તે થયું તેવા તથા માત્ર ભાદીસભાનાં સામાન્ય ભાષચા સિંહય ત્યાહિના હાનિકારક ચૈલ સ્વિલ્લ સમારત સંવતો કંક દરાંગ થયેલા પણ જાણાના નથી. આતે ઝિચિકના નડી તાંકો કહી શાળા ? અવલવારનાં ટોક મહિરના છોવા હાર હોલોલપરા ભારતા પ્રસંધાનું સુકપા છે તેમ धन्तमी कर जाना राज्यक तेन प्रत्यीम संस्तर રું તો ખરી કે વસ્તાં તરફારક પ્રતી તથા हरेगा चार्रास अन् राक्ष के के ने कार अन् ગવાની વેર્ડો છે જેવાં ભાગવવાદ દસ્તાના આપળી પ્રાંતિક સભાના બેડક બહુ શકવાના પ્રસંગ દે, એ મહે સાવમાં દેવ શેઠ તારાગંદછ અંત અમદાગદમાં શેંદ જેસં તમા એ પાયત ધ્યાનમાં ક્ષેતા થઇ શક તેમ છે.

વળી એ તો થવાનું થશે ત્યારે થશે પણ હાલ નજદાકમાં જે કેટલીમાં આપણું મહાસમા થવાતી છે તેમાં તે! અઝરાવના ભાઇઓએ માં ! સંખ્યામાં જઇ લાભ હેવા જોઇએ અને ઉત્તર ધાંતના જેના ધમેપ્રભાવનામાં કટલા આગળ વધે-લા છે દેવું દસ્ય નિહાળવું જોઇએ અને ખતા શકે તો મહાસમાની આવતી છેઠક સંજરાતમાં છે! લાવવાનું આમંત્રણ કરવું જોઇએ,



शांतस्त्रभावी निर्मन्थ मुनि-श्री १००८ श्री शांतिसागर जी महाराज (एनापुर) (दक्षिण प्रान्तर्मे आप विवर रहे हैं, विशेष हाल वित्रपरिवयमें अवस्य पढिये।)

चित्र-परिचय। अव्यक्तिक क्रिकेट वित्रीका परिवय वित्रक्षित है-

(१) श्री १००८ श्री शांतिसागरजी मुनि महाराज एनापुर-अका जन संव १९२८ शाक १७९४ में भोज (चिकोडी, बेडगाम) ग्राममें हुआ था। पिताका नाम भीमगोंड। पारील व माताका नाम मौ ॰ शांतिबाई था जिनके क्रमसे चार पुत्र-देवगोंडा, खादगींटा, सालगींडा व क्रुवगींटा था ये बार पुत्र व कृष्णाबाई नामक पुत्री होनेके बाव पति पानीने साह्य वर्धे छत्। है हिवा था। सबके कान हुए ये जिनमें इसारे बरिजनायक स्रात-मों जाका हरन सिर्फ ९ वर्षकी आयुमें ९ वर्षकी बन्यासे हुना था! और ७ माहमें ही उस कन्याता देहांत हो गया । जब आप १८ वर्षके हुए तब आपके पिठाने फिर लग्न करनेको कहा ता आपने उत्तर दिया कि द्रान करना फिरसे संशार बरिखनण मोळ छेना जैसा है समने तो संसार परिञ्रनणसे मुक्त होना कामदायक है। किर आप एक मुनिके पास गये और ब्रह्मा-चर्च जल पहण किया। इक समय बाद माताका देशंत हो गया पशन्त पिताने वहा कि मैं एहां तक बीता हूं आप दीशा न छें। विताका आबह देख आपने दीक्षा न छी और गृहस्य श्रम में रङ्ग सत्यता और प्रमाणिकतासे कर-देका व्यापार करने करो, साथमें वार्मिक कार्योमें

नियमित रहते थे। ३२ वर्षकी आञ्जूने आप सम्मेदिशासरजी यात्रार्थ गये वहां अनेक त्रन नियम ग्रहण किये। फिर सं० १९६९ उयेष्ठ सुदी ५ को ४१ वर्षकी आयुने उत्तर आपमें श्री० देवेंद्रकी तिके पास स्तुस्त्रक्तकी दीक्षा जी और वहांसे आप कागज प्राम गये महांके जोगोंने आपको कमंडल विया (तबतक आपके पास एक लोटा ही था) व कापका नाम शांतिसागरजी रक्ता गया।

इस वर्षका चातुर्गास आपने कोगनोकीमें
किया। वहां एक समय मंदिरमें रात्रिको दश
बजे मन आय सामायिकमें बेठे ये एक सर्प
आकर उनके शरीरवर चढ़ गया परन्तु महारामने
उस तरफ छेश्च मात्र भी ज्यान न दिया और
व्यावमें निश्चन रहे। आक्रक छोग वहां आये खौर
उनके शरीरसे सर्प निकालनेका विचार किया
परन्तु शायद उनके शरीरको हानि पहुंचे ऐसा
सोचकर मंदिरके बहार ही बैठे रहे। महाराम
सुबह १।। बने ज्यानसे मुक्त होकर बहार आये
तब सब लोगोंके आनंदका पार न रहा। सबने
कहा हम सबको यह बात प्रगट करेंगे तब
महारामने कहा—नहीं, जो सम्पुरुष मोक्षमार्गमें
पत्रत्त होते हैं वे कभी अपनी कीर्तिकी इच्छा
नहीं करते।

फिर आप मांगुर, बोरगाम, तेरदाक, तसकापुर आदिमें विहार करते २ कुं भोज आये। वहां बाहुक्की पहाड्यर अकल्कीका सुनिमहारामके पास सं० १९७६में ऐलक पद ग्रहण किया। इसके बाद समडोक्कीके श्रावकोंके साथ श्री गिर-नारकी यात्रार्थ गये नहां सीन हाथ हांना कपड़ा रसते थे उत्तका त्याग किया और आपके पास नेमीशागरने वीक्षा की । फिर आप कंडक क्षेत्र आये और वहां अ.कर वाहनपर न चढनेकी प्रतिज्ञा छी । वहांसे आप कोग-नोळी, समहोळी, नस्छापुर, बाबारगर आदिमें विहार करते १ ऐनापुर आये जहां मोसगीके निमेन्य मुनि भी आ पहुंचे । अप आठ दिन बहां रहे और फिर र गेशबाडी गये जहां जैन मंदिर नहीं था परन्त महादेवका प्रशना मंदिर था उसमें कुरुंदशडकी हरवारसे श्रादकों द्वारा भाज्ञा लिवाकर जैन विस्व स्थापन किया और बहांसे आप सं० १९७६ में चेरनालकी विव प्रतिष्ठामें गये, जहां दीक्षा करवाणकके समय भोत्तगीके निर्माय सनिमहाराजसे आपने निर्माध (नग्न) जिन दीक्षा प्रहण की । फिर विहार करते २ एक चातुर्मात कोगनी लीमें व एक नह-छाप्टरों किया । और फिर गत बातुकीस ऐनापुरमें किया था तब सोहापुरसे पं बंदी. घरजी, सेठ रावजी सखाराम, घरण.व्या कार्रा, बीरचंद कोदरभी गांधी आदि उपदेश थे गये थे। पं अशिवस्त्रीने गोम्बटनार, पंच ६ यी आदि शास्त्र बांचे थे व वर्मवर्ची अच्छी हुई थी।

मुनि श्री शांतिसागर जीको-बहरा-वत्थासे ही स्वध्याय व धर्मवर्ग ही आहत है। धुनिवर्म और आबार आग अच्छी तरहसे सम अते हैं व पाइन वरते हैं। २८ मूहगुणों में कोई दोष आप धाने नहीं देते—माम बहार निवास करते हैं और एक दो दि। ब द दुध और भातका आहार हेते हैं। दन्दिपवितय आपका अच्छा है। उपवासके दिन यदि कोई पंडित शास्त्री वर्मवर्नीय आगाने तो ही बोकते हैं। अन्यथा मीन घारण वरते हैं। जिन दिन आहार हेते हैं उसी दिन केवल धर्मी रदेशार्थ ही बोकते हैं। ऐना पुरमं चातुर्भात पूर्ण करके अभी आप बेश्गांव, कोल्हापुर आदि प्रान्तमें विहार कर रहे हैं। अंतमें मुनि शांतिशागरजीके चिरायुकी मावना करते हुए आपका अनुकरणीय संक्षिप्त परिचय पूर्ण करने हैं।

(२) श्री० न्यायाचार्य पं० गणेशः प्रसादजी वर्णी (संस्थापक, स्याद्वाद महा विद्यालय काशी, व सतर्वे सुवातरंगिणी कैन पाठशाला, सागर)

भाषका करत झांसी जिलेके मङावराग्राममें असःटी जातिमें बुरकेबाकजीके गृहमें कुं भार रदी ४ सं० १९२२ को हुआ। आ । अ.पके पूर्वन दहित जैन धर्मानुयायी नहीं थे, तथापि ृर्व स्कार तथा स्ट्संगतिके सहशासने आपके उक्त पितार्नीको श्री १००८ सहासंत्र णमोकारके प्रभावसे सिंहसे रक्षा हो त्रानंके कारण कैन धर्मेवर हड़ श्रदान हो गुरा था। पश्चत उन्होंके सङ्गुपदेश से आप मी जैन वर्षके ही अनुवायी हुए, और आपने ११ वर्षकी अवस्थाने हिन्दी मिडिलकी परीक्षा पास की । १श्च त पिताजीके स्वर्धभासके बाद आपने अपने कुटुंबियोंको परित्यागकर कुछ काछ तक मताराके स्कूटमें हैडम स्टरीका कार्य किया, पश्चत् पूर्वकर्ष संयोगवश सिमरा निवासिनी गोळाळारीय मिठीश नातिय " श्रीमती पुरुषा चिरोजाबाई जीते ? परिचय हुआ । आपने उक्त व ईनीसे समस्त मन्त्रन्य कह सुनाया,

भीर उसी दिनसे भानका भीर उक्त गाईनीका पुत्र-मातृत्त संबंध होगया, भीर उसी सम्बसे भाषके पठनादि कार्बमें भिनना भी द्रव्य स्था हुआ, वह समस्त उक्त बाईनीकी तरफसे ही हुआ और क्तमानमें भी हो रहा है।

पश्चात आप संस्कृत विद्यांके पढनेके उद्देश्यसे देश देशांतरमें भ्रमण करते हुए छगमग शंच वर्ष तक पूर्व असाता बेदनीय कर्मीद्यसे जारादि व्याधियोंसे पीडित-तथा अनेक कष्ट आने गर भी आप आपने उत्ताहसे हताइ। न होकर अपने कार्यक्षेत्रमें बढ़ते ही चले गणे, पश्चात सामान्य संस्कृतका परिज्ञान होनानेसे आप उच्च दनेकी संस्कृत विद्या प्रस करनेके निभित्त प्रथम "मध्य-राजीको" गये, उस समय वहांपर मेलेका समय था और इछ दिन पहिले हवर्गनासी, न्यायबाबराति पं । गोपालदासजी बरैया की प्रेरणासे भी १००८ भग्यूम्शमी नीके निर्धाण क्षेत्र चौरासीमें महाविद्यालय ही स्थापना मात्र हुई थी, परंतु निश सपय आप वहां पहुंचे और उक्त पंडितनीने आपका वृत्तान्त संभामें जनताके समक्ष कहा । तब जन-(ताकी ओरसे आपके लिये \$३००)का चंदा प्राप्त हुआ. और बही पारितीपिक उक्त महा विद्यालयके चिरस्थायी होनेमें प्रवान कारण हुआ।

कुछ काछ बहाँ रहकर श्रीमान सेठ पंकित मेवारामजी खुरनाके पात श्रीर हरिप्ररमें न्यायशास्त्र पं० ठाकुरमसाद्जीके पात भौर टीकमगढ़में नन्य न्यायके धुरंवर विद्वान् पं० दुस्तारजसाजीके पात सम्बयन करके काशी पहुंचें। बहांपर ध्यापि संग्रहां विद्याकी अच्छी तग्ह उन्नति थी और वर्तपानमें भी है, तथापि तन्नस्य अलाग पंकि। वेनी आन्नको नास्तिकादि दीषोंक हारा तिरस्कार करके नैनि-धोंको संस्कृत पदानंके अतिरिक्त पासमें भी नहीं बैठने देते थे। तथापि ऐसे समयमें भी आप अपने उत्साहसे हताश न होकर वहींपर रहने छो।

कुछ कालबाद पूर्व कर्मके संयोगसे आपका सतीब उच कोटिके न्यायशास्त्रके नाननेवाडे श्रीपन अम्बादास की शास्त्री नीसे परि-चय हुआ और उन्होंने आपको न्यायकारखा पढ़ाना आरम्भ किया एवं शास्त्रीजीका **विल्नेपर आपने आरा निवासी स्वर्गवासी खाख** देवकमारजी रहस्तिनीते श्री "स्याबाद-महाविद्यालय की स्थारनाके लिये महैनी घटाका "विशालभवन" देनेको कहा जिसमें कि उक्त विद्यालय क्रीमानमें मीजूद है। एवं मकान मिल्लानेपर तथा श्रीमान त्याची बाबा भागी-मध्य⁷⁷जी वर्णी तथा बारब्रह्मनारी पंठ पनालालजी बाकलीवालनीकी सहाय-तासे म्बेन्ड मुदी १० वीर नि० स० २४३१ ता । १२-६-०५को श्री स्याद्वाद महाविधाल-यकी स्थापना की । और जब विद्यालयका कार्य प्रचारू रीतिसे चलने छगा तब अपको देशके माम्यने प्रेरमा करके स्वागर तक पहुंचाया, उसी समयके कुछ दिन पहिले श्रीमान् इंसरा-जजी कंडया बुंदेलबंड पान्तके बालकोंको शिक्षित बनानेके छिये १००००)का द्रव्य कोइकर स्वर्गपुरीको पवारे थे। अतएव सागर

कैन समामने विशेषतर स्वर्गवासी श्रीमान् सिनई-बालचंदभी सर्वा श्रीमान् नःह्वस्त्रजी कण्डवा श्रीमान पक्षाकारूकी बहकर श्रीमान प्रानचंदनी बनाज तथा श्रीकान दण्डवा करोडीयक्जी सराक इरवाहि समस्त महाशयोंने स्वर्गवासी श्रीमान सराफ इंसराजजी वंडवा सागरकी १००००) मुख सहायतासे" वैसासह्यदी १ वीर सं० १४१९ ता० ११-४-० (को भापने 'अरी सत्तर्भसुषांतरंगिणी दिगम्बर जैन याळ्याला-सागर"की स्थापना की इस मकार आप ही के हगाए हुए ये दोनों पींध बर्तदानमें जैन समानमें देशी कुछ विधाकी उलति कर रहे हैं वह समानको बतानेकी आव-इयकता नहीं है क्योंकि उन्ही पौर्शेके ही फल हैं जो बन्न तन विद्वान छोग समानोन्नतिमें दश हैं. और जापने सागर आकरके ही वि० सं० १९७६ से सप्तम प्रतिमा (ब्रह्मवर्य दीक्षा) धारण की है। पाठको ! यह आपका भीवन चरित्र नहीं है किन्त स्थानामायसे मात्र सामान्य परिचय ही दिया है। होसरा तो आगामी कभी आप-का छ० जीवनवरित्र प्रकट किया जायगा। (१) हाला अमीचंद्रजी जैन गोहाना-आपका जन्म संवत १९३८में गोहाना (जिला रोहतक, पंचान) में हुआ था। पिताका नाम था लाला मामरा नर्सिहनी निनका सं. १९६६ में साठ वर्षकी आयुर्ने देहान्त हो गया परंतु माता मिश्रीबाई करीन ७० सत्तर बरसकी मौजूद हैं।

गोहानेमें इनका खानदान प्रराना और ऊँचा

🕽 । इनके यहाँ हमेशासे साहकारीका घंदा होता

है। मर्मीदारी भी आपके खानदानमें प्राने

जमानेसे हैं। आपके वांच माई और कार बहिनें थीं परंत प्लेगके कारण आपके तीन कड़े मण्ड्-योंका और दो बहिनोंका देहा त हो गया। इस समय ज्याने अपने आप ही सबसे कड़े हैं। जापने अपने छोटे माई छाछा क्लाक्सिंहको स० १९१९ में-अब कि चारों तरफ प्रवक्ती आग छगी हुई थी और छोग अपने माह्यों या इज़ समय तक वे छंदनमें एक डाक्टरके साथ भेरटीस करते रहे हैं। उन्होंने एम. डी. एट. आर. सो. पी. एण्ड एस. की डिमी हासिछ की है। अब वे यहां अन्युके हैं व रोहतकमें हैं।

आपका स्वमाव बढ़ा ही सरक परोपकारपरायण ने से छुटुंब-बरसक है। दौछत एक ऐसी जीन है कि, जब वह किसीके पास जाती है तो आदमी स्वार्थी बन ही जाता है। मगर आप इससे सबैधा निलेंप रहे। आपके जीवनका सबसे पहिला सिद्धान्त है,-नि:स्वार्थ सेवा। इसको आप अपने जीवन-ज्यबहारमें कभी नहीं मुलते। आपने अपने जातीय शिक्षालयों को यो अच्छी सहायता दी है।

आपकी निःश्वार्थ-परताकी एक कात खास उ-लेखनीय है। जब 'दिल्लीपड्यंत्र' के मामलेमें जब बा० क्रुट्णलाल वर्षा संदेहवदा पकड़े गये थे प और फिर निरमराध होनेके कारण लोड़ दिये तब वे घर मये मगर घरके लोग मामीत रहने लगे। उसी अवसर पर इनका पत्र छा॰ अधी-चंदजीके यहाँ आकर एड़कोंको पड़ानेके लिये आया और वे बुलाये गये। वहाँ होंगोंने लाला अमे बहुत कहा कि, इसके पीछे आसुन रहते हैं इसकिए अपने घामें इसे न टिकाओ। तब इन्होंने भी उत्तर दिया बहु हरेकके घ्वानमें रसने और आवस्यमें ठाने योग्य है। आपने उत्तर दिया:—

"यदि मेस माई होता। वह संदेह बन्न पकड़ा जाता और फिर निरपराध ममाणित होकर बापिस छूट आता तो क्या उसकी में घरसे निकाल देता? ये भी छः भाइयोंके समान मेरे सातवें भाई हैं।"

पाठक इतना ऊँचा हर्य क्या हरेकका हो सकता है ? अन्य हैं ने पुरुष जो दुनरोंको इस भाति अवना सकते हैं। अमीचंदजी भी अन्य हैं और अन्य हैं ने माता-पिता जिन्होंने ऐसा छाछ उरश्च किया है।

राजनैतिक मुलामिलों में भी आप बड़ा रस हेते हैं। सन् १९१९ ईस्वीमें जब रोलंट एक्ट पात हुआ तब आपने भी इसका घोर विरोध किया। गांधीजीक 'अधिसारमक असह-घोगके' आप पक्ष अनुवाधी हैं। अदिसाका पाठ तो आपने जन्मसे ही सीखा है; क्योंकि आप नैन हैं। और एक नैन हिंसाका कभी पस-पाती नहीं हो सकता है। शारीरिक तो क्या मगर मानसिक और वचनिक हिंसासे भी आप हमेशा दूर रहते हैं। इतना ही क्यों ऐसा कर-नेवालोंका आप हमेशा विरोध करते हैं।

रोलंड एक्टका विरोध करनेबाली समाओं में माग लेनेसे गवर्नमेंटने वहाँके कई रईसोंको वि-तावनी दी। खाप भी उनमेंसे एक हैं। गवर्न-मेंटकी सुनना पाकर कई खुपकी छगा गये, मगर भाव पूर्ववत् ही भवना काम करते रहे। भाव इम सिद्धान्त पर कायम रहे कि,— जो दृढ राखे घर्मको, तेहि राखे कर्तार।

आप 'असहयोग' वादी हैं। असहयोग-कार्य-कममेंसे 'स्वदेशी प्रचार, 'मदिरा निवेच' और 'राष्ट्रीय-शिक्षा' को आप सबसे ज्यादा मानते हैं और इनको सफल बनानेमें तनतोड़ परिश्रम करते हैं जब एक भी व्यक्ति गोहानेमें इस आ-न्दोकनमें हिस्सा छेनेको तैयार नहीं था, तब आप आगे आये; कांग्रेन कमेटीकी स्थापना कराई और जब कोई उनका संभापति बननेको तैयार नहीं हुआ तब आपने इस जोखनमरे पदको स्वीकार किया।

गत वर्षमें अहमदाबाद कांग्रेनके बाद पंनाब सरकारने स्वयंसेवक मंडलोंको बेरानून ठहराया और स्वयंसेवकोंको समा देना प्रारंग किया; तथा खहर प्रवार, विदेशी शकरका बहिन्कार और हिन्दू मुसल्पान एकताके जल्से नामायज करार दिशे तब लाला अमीचंद गोहानेके दूसरे लः स्वयंसेवकोंके साथ धर्मके खातिर खलिदान होनेके लिए मैदानमें अथे। सरकारने परहकर उन्हें उनके साथियों सहित छःमाहके लिए लेल्लाने मेन दिया।

भव आप कोर्टमें हानिश होनेके लिए रवाना हुए तब उन्हें उनकी वृद्धा माताने आशीर्वाद दिया; उनकी पत्नीने अपने बीर पतिकी पूना की और उनके बड़े माई भोनाइयोंने उनको प्रेमसे बिरा दी। गोहानेके सैकड़ों आदमी आप को पहुँचानेके लिए आपके सःथ बहुत दूरतक आये व आपके गड़ेमें फूलोंकी माला ड:ककर व्यापका अवशेष किया। निस बक्त रोहतंकके संबसे बहे र नेताने कांग्रेसके कामसे इस्तेफा देकर अपनी प्रे नटस शुरू कर दी थी; जिस बक्त अनेक छोग जेल खानेके हरसे क्षमा माँग माँगकर बैठ गये थे उस बक्त इस बीरने, जेल महल्लमें प्रवेश किया। जब इनके रिश्तेदारोंने इन्हें समझाया और कहा कि तम क्षमा माँगलो तब इन्होंने कहा था,—'' मैंने कौनसा अपराव किया है निशके लिए मैं क्षमा माँगूं? मैं अपने देशकी शुद्ध बस्तुओं को प्रवार करना और एक ही मांक प्रश्नी—हिन्दू और मुन्लमानों एकता कराना धर्म समझता हूँ। इसकी अमर कोई अपराध बतलाता है तो मैंने यह अपराध किया है और जबतक जिल्हा, यह अपराध करना ने उत्तार सह

गत अगस्तमें आप छूट गये हैं। उन्होंने जेडसे छूटने पर बाव कृष्णडाड़ वर्मा पर एक पत्र डिखा है उसमें उन्होंने आपने जेडकी को बार्त डिखी हैं, उन्हें हम उन्होंके शब्दोंमें पाउकोंकी भेट करते हैं। खत टर्दमें हैं। वे डिखते हैं:-

"माई साहब कृष्णखाटजी साहब, वंदे-मातरम्! आन में अपनी जेरुमात्रके हारात आपको लिखना चाहता हूँ। मेरी तबियत बहुत बाहती थी कि, जेरुसे आपको चिट्ठी टिख्ँ सगर जेरुमें सिर्फ एक महीनेमें एक चिट्ठी मिछती थी निसको घर लिख दिया करताथा इस बजेसे प्रेमपत्र न लिख सका।

मुझे गोहानेमें १६ करवरी सन् २२ को, नव पं शमपताद शर्माकी गिरफ्तारीके बक्त एक मारी भस्ता हो रहा था समन मिले थे कि हुम्हरी तारीखपेशी बभदालत डिप्टी साहब रोहतक जिला १८ फरवरी सन २२ की है। इमिक्टिए में १८ फरवरीकों स्य दीगर अपने पाँच गोहाना निवासी माहयोंके हाजिर अदालंत हो गया । उसी रोम सबको छः छः माह कैदकी सना सना दी गई और हम खुशी र यात्राको चक्रे गयें। जेश्में सुपरिण्टेण्डेंड × × × का और दारोगा साहबका बहुत अच्छा बतीब रहा। हम जिला रोहतक के कुछ पाछीन आदमी उन्हीं दिनों में गिरफार किये गये थे निनर्षे आधे हिन्द और अधि मुन्डमान थे। सब आदमी बहुत अच्छी तरह रहते थे । ××××× हम गोहानेके छः अ दमी गिरपः । र किये गये थे। मुझे अदालतने स्पेशल क्लावमें रक्ला था। उसमें हत्व जेड (निम्न कि.सित) खुराक मिलती थी। घी, S= गेहूँका भाग, SII दृष Still हफ्तेमें तीन बार, हरुदा इफ्तेमें दो बार और दाल शाक वगैरह। मगर इस खुराकको सब आदमी स्पेश्यल वटास वाक्रे और ॲःर्डिनेरी वटःसवाहे मिछकर साते थे। हम सत्रह आदमी स्पेशल क्लासमें भौर तेस्य आदमी अंहिनेरी क्यासमें थे। तीन पहींनेके बाद मुपरिण्टेण्डेण्टने कहा, गवनैमेंटका इनम है कि, तुम ए. और बी. क्लास्त्रा है बिल्कुर अरहदा अरहदा रक्ले माओ। निसकी हम तक्ने नफातमे छुना और मुरिण्टेण्डेण्डेक साथ झगड़ा हो गया। आखिर बी. कडासबाके वहास पंतामकी और जेलोंमें भन दिये गये और, और नेखोंसे स्पेश्नल क्टासवाले बुछा लिये गये । हम चालीम आइमी वहाँ स्पेशन क्लासमें हो गये। हैं।, एक बात छिलना भूछ गया । बह यह कि, डेड पहा तक सिर्फ़ सत्रह स्पेशककाशके

भौर समझ बी. क्लास्के हमारे साथ रहे। सकता साना विटकुल शामिल रहा। हम सबने अव्हदा साना मुना सिय नहीं सामा । इत हिए उस कक्त हमारे हिस्सेसे सिर्फा दो रोटी बनेकी, आधी रोटी गेहूँकी और मामूली धी आता था; जिससे सल्त परेशानी होती धी मगर-हिम्मते सदी सदे खुदा, जेलमें मुझे हल दिन बुखार भी खाया खीर में। वनन दस पेंडके वरीन कम हो गा। था। परदह दिनके बाद मेरा असली वनन हो गया।

गरमीके दिनों में न नोरमें लुएँ चलती थीं अपनी नारकों में दोनों तरफ कम्बल टांगकर छिड़काव करते थे और बाहर रातको भेदानमें सोनेकी इनामत थी। दरम्यानमें, नव कि मुविश्वेण्डेण्डसे सगड़ा हो गया था अंदर नारकों में सोना पड़ा था। कामके मुतिल्या सा अंदर नारकों में सोना पड़ा था। कामके मुतिल्या सुनिए। काम हम लोगों के लिये लिकाफ बनाना, विके बनाना, चस्ता कातना, दरी बुनना और फीता बुनना था। इनमें से भो काम हमें पनंद होता वही हम कर-सकते थे। में तो लिकाफ बनाता था, ज्यादातर चर्ला कातता था। मगर बहु भी बहुत कम। अकतर किताने पहता या गए हांकना था। इसारे आदमी काम बहुत इस करते थे। में कि हमारी जेललाइफ बड़े मनेने गुनरी। ×××

में १२ अगस्तको रिहा हो गया आ । और १८ अगस्तको गोहाना मय आने साथियोंके आया था। गोहाना बासियोंने इवारा स्वापत बड़ी घूनपामसे किया। एक माइकके फासलेनर लोग हमको लेने आये थे उनमें ज्यादा तादाद सहस्रे इस्लामकी भी। इस सगहरर अहमेहरला समें ज्यादा जोश पाया श्राता है और महान-नानमें कर्तई नदारद (बिल्कुट नहीं) खहर भी ज्यादा अहते इस्डामकी ही इस्त्माल करते हैं। सिशाय खान्दान चौबरियानके।"

पाउक! आम छाडा अमीनंद्रनी फिर कमें क्षेत्रमें हैं और अपना पुराना काम खहर प्रचार आदि नही दिख्यरपीसे कर रहे हैं। आपके जेल जानेने, सुना आता है गोहानेके हल्दाइ-योंके दिलोंपर हतना असर पड़ा कि, उन्होंने हमेश्राके लिए विदेशी र का गाइना ओह दिया है। पाठक! भैनियोंना सिर ऊंचा रखनेके लिए, अपनी जनमभूमिकी सेनाके लिए और धर्मकी रक्षाके लिए अभीनंद्रनीने अपनेको अपण किया। नया और जैननंधु इनका अनुकरण न करेंगे?

आपसे एक निवेदनकर हम अपना कथन समाप्त करते हैं। अभी आपके यहाँ दो तीन एक कियोंका ज्याह होनेवाला है। हम आशा करते हैं कि, आप निम खहरकी हिमायत करके जेलमें गये और सरकारके कोपनामन बने उनी खहरको, रिश्तेदारों और कुटुंग्वालोंके दवावसे, लड़कियोंके ज्याहमें देशनिकाला न दे दें। क्योंकि, सरकारके विरोधसे रिश्तेदारों और कुटुंबियोंका विरोध सहना और उसके सामने दिके रहना बड़ा मयंकर होता है। शासनांव क पक्षो आने सिद्धान्तों पर अटल रहनेकी शक्ति दे औ। आप विरास हों।

(४) श्री देशभूषण कुलभूषण ब्रह्म-चर्य आश्रम-कुंथलगिरिः— तोलापुर निकेने वार्ती टाउनसे २० मील पर श्री देश-भूगण कुलभूषण मुनिका श्री निर्वाणस्थान

क्रियकिंगिरि नामक सिद्धं क्षेत्र है जहां अतीव परिश्रम करके १० वर्षे हर जिनसेवी ब्रह्मचारी श्री पाश्वीसागरजी महारामने एत ब्रह्म वर्ष भाश्रम स्थापित किया है जो आनकड़ बहत दशत अवस्थामें है और मुगर्स्ड प्रांतर्गत गरीन कैन अजैन विद्यार्थियोंका इनसे वडा मारी उप-कार हो रहा है। यहां आनकत बतुर्थ, सेत-क्षक, पंत्रम आदि जातिके ८४ विद्यार्थी अच्छी तरहसे शहकर विद्याध्ययन करते हैं निनमें करीन १० अभैन पराठे हैं। आश्रवमें अध्यापक, बनीम, वैद्य, गायन शिक्षक, रसोईये, चारासी कादि २५ कार्येकर्ता है व मासिक सर्व १२००) है। संस्थामें सिर्फ करीब २००००) का धीज्य फंड होनेवर भी हनारोंका खर्व चाल महद व मु ह फंडसे होता है। आश्रममें विद्यात्रवके अविरिक्त ने हिंग, मंदिर, औष ग्रास्टर, व्यायाम-शास्त्रा, बाबनालय, प्रस्तकालय, व गायन शास्त्रा, भी है। यहां ही न्यायामशाकामें इतनी उत्तन प्रकारकी व्यायाम शिक्ष दी जाती है कि इनकी नोहकी एक भी व्यायामशाला अवनेमें नहीं है। इप चित्रमें विद्यालयके पाप आये हुए काचना-ब व्यामानज्ञालाके पास बिद्यार्थीनम इकडी हे र कर खडे हुए हैं पाममें संस्थापक महोदय मी बैठे हुए हैं। आनतक करीब ६५० छात्र भाश्रवसा लाग उत्तवनासे ले सुके हैं। छौकिक व पार्मित शिक्षा आश्रममें ही दी जाती है। अंग्रेडी भी तींन क्लास तक पदानेका प्रबंद है व विशेषके लिये सोलाप्तर मेनते हैं। विद्य थीं को वी द्व बहुत करके नहीं मिलता है ती भी सब विद्यार्थी इतने तंदुगस्त व हद शरीर

1 547.75

हैं कि को कोई इस आश्रमका निरीक्षण करते हैं विद्यापीं को देखकर अतीब आनंदित होते हैं और कुछ न कुछ सहायता दे ही जाते हैं। मोजन बख, प्रस्तक औषधादि सभीका सर्व आश्रमकी ओरसे होता है व सब प्रकारकी व्यवस्था दूसरे विद्याल्यों को अनुकरणीय है। इस आश्रमके लिये लक्ष विद्या है और इसकी लक्ष जीवन अर्थण कर दिया है और इसकी लक्ष जीवन अर्थण कर दिया है और इसकी लक्ष तिके लिये रातदिन जाव जीतोड परिश्रम करते हैं। ऐसे उपयोगी आश्रमकी येनकेन प्रकारण सहायता वार १ करनेका जैन समाजका करन कर्त दे हैं। आश्रमकी येनकेन प्रकारण सहायता वार १ करनेका जैन समाजका करन कर्त दे हैं। आश्रमकी श्रम अर्थण प्रसंगीयर पासिक इस आश्रमकी श्रम अर्थन प्रसंगीयर पासिक अयवा वार्षिक सहायता लेके लिये नहीं भूतेंगे।

(५) कुंधलगिरि इत आश्रमकी व्यायामशाला—उशीक व्यायामशालाके विद्यः थीं अनेक प्रकारकी कठिन १ कपरतके खेड सर्केपवाओं से भी बहुकर कर सकते हैं निसका यह कित्र है।

नई फसलकी नई केशर।

भाव घटा है।

इन ताल कारामीरने केशरकी कत्तर गत वर्षकी अपेक्षा अच्छी हुई है व नई केशर हमारे पात आ चुकी है जो माद, गुण और शुद्धतामें उत्तम है। विलायती मंहगी व अपवित्र केशर कमी मी न वर्तिये और यह काशमीरो केशरका ही पुनन मोननादिमें उपयोग की निये।

मृत्व १॥ =) भी तोछ। मेनेनर-दि॰ जैन पुस्तकाल्य सुरत । (६) श्रीमान् सेठ पद्मराजजी रानीवाले कलकत्ता-मापका जन्म चैत्र रूप्ण ९ सं० १९४को कलकत्तामें जैन समानके मसिद्ध खुर्मानिवासी रानीवाले वंशमें सेठ फूलचंदनीके यहां हुआ था।

वास्तकपन-आपका बहुत ही आनन्दसे

व्यतीत हुआ। फिर भी सं० १९९६ में

एकाएक आपके पिताके लकुबा मार जानेके
कारण सारा कामकाजका भार आपके उत्पर
छोटी ही अवस्थामें याने १६ वर्षकी ही अव-

शिक्षा-पहले आपने घरपर ही थोड़ो हिन्दी पड़ी, फिर स्थानीय सिटी कालेजमें एन्ट्रेप तक शिक्षा प्राप्त की । आप युनीवर्सिटीमें परीक्षा देनेकी तैयारी कर ही रहे थे कि एकाएक पितानीको लक्ष्या मार जानेके कारण परीक्षा न दे सके ऐसी विपत्तिके समय भी व्यवसायिक कार्य संभारते हुये सबेरे शाम घरपर ही संस्कृत तथा धार्मिक शिक्षा छेते रहे। आपने कुछ दिन संस्कृत पढ़कर धार्मिक संशोका मन्न करना शुक्र किया । दरीव १ वर्ष तक आपने पं॰ गणेश्रमसादनी वर्णीसे कुछ न्याय पढ़ा पश्चात् पं. गुरुनारीलालनी लमेचूके साथ आपने गोमहसारादि महान ग्रन्थोंकी स्वाध्याय प्रारम्भ की । इस बीचमें पं० लालारामबीके साथ भी आपने कुछ दिन तक स्वाच्यायादि की तथा न्यायके कितने ही ग्रंथोंको पड़ा।

नैन समाजकी पहिलो सेवा करनेका मौका आपको यह मिला कि आप श्री भारतवर्षीय दि० कैन महासभाके शाखासमा विभागके मंत्री बनाये गये, इस बाबत आपके पत्र व्यव-हारसे आरा निवासी बा॰ देवकुमार बोसे आपका परिचय हुआ। फिर सन् १९०६में कलकत्तेमें महासभाका अधिवेशन होनेके समय बा॰ देवकुमार नी वंगेर कलकत्ते पधारे ये उस समय आपसे पाचीन शास्त्रोंके बाबत वार्तालाप होनेसे आपका घ्यान उस ओर आकर्षित हुआ। बा॰ देवकुमार नीकी मृत्यु हो जानेके बाद बा॰ किरोड़ी मल बीके साथ पाचीन शास्त्रों द्धारका कार्य प्रारम्म कर दिया, और आपके करकमलोंसे आरा-जैन सिद्धान्त स्वनकी स्थापना हुई, और आप उसके सभापति पदको अभी तक विभूषित कर रहे हैं।

आप बम्बई दि॰ जैन प्रान्तिक सभाके खामगांववाले अधिवेद्यनके सभापति बनाये गये थे, तथा आप कलकत्तकी रोयल एशियाटिक सोसायटी आफ बंगालके सदम्य हैं। इस सोसायटीके कई अधिवेद्यानों पर आपने Jainism के ऊरर कई निबन्ध पहें। इस मकार आपका ऐतहासिक ज्ञान बहुता ही गया और सन् १९११ में आपने एक नैमासिक "जैन सिद्धान्त भारकर" नामक ऐतहासिक पत्र निकालना पारम्म किया परन्तु इस पत्रको १ वर्षके बाद ही बंद हो जाना पढ़ा।

इसी बीचमें आप "अशांक " के शिला-लेखोंको देखते देखते श्री खंडगिरि उद्य-गिरि पर्वतोंका हाल देखने लगे। और आपने इस पहाड़की ओर कलकत्तेके भाइयोंका ध्यान आकर्षित किया। उस क्षेत्रके आप कितने ही वर्षोतक मंत्री रहे और पूजनका यथोचित पनन्ध किया तथा धर्मशःलाका भी कार्य चाल् करवाया ।

आपने ऐतिहासिक लोजके छित्रे बड़ा उद्योग किया। बहुत दौरा भी किया है। आपकी अब इष्टि राजनीतिके कार्योंकी ओर विशेष रूपसे अकी। यों तो आप सुरत, बनारस मादि कांग्रे-सोंमें दरीक रूपसे सम्मिलित हये थे परन्त विशेष भाग आपने सन् १९१७ कलकत्ता कांग्रेसके समयसे लेना शुरू किया। कलकत्ता कांग्रेसके समय बड़े बाजारमें आपने बीसेंट स्वागत-समिति बनाई और उसके आप मंत्री हुये तथा कांग्रेसके निरामिय भोनी प्रतिनिधि-योंका भोजन वगैरहका भार आपके उत्तर ही था। इसके बाद आप बराधर कांग्रसमें सम्मि-लित होते हैं। जाप सन् १९२०की पोलिटि-करु नेन कान्येतके नागपुर अधिवेदानके सभापति भी हुये थे। आप बड़े बजार (कळक-ता) के रामनीतिक आंदोलनकी एक जान हैं। आपने बड़ेबानारमें इस समय अच्छी चहल पहल चला स्वी है। आप बड़ा बानार कांग्रेस करेटीके न्त्री बंगाल शंतीय कांग्रेस कमेटीके सदस्य तथा आल इन्डिया कांग्रेस करेटीके सदस्य हैं। गत वर्षे असहयोगके आंदो कनमें आप दफा १०८ के अनुमार ता० १० दिसम्बर १९२१ को गिरफ़ार किये गये और ता ० २३ दिसम्बरको आपको १ वर्ष सपरिश्रम कारावासका दंइ मिला था। अब आप ता० १४ नवम्बर १९२२ को जेलसे छूटकर सानंद आ गये हैं।

जेलसे घर आने पर आपका खुब स्वागत

हुआ व ता॰ १६ को दि॰ जैन नये मंदिरमें आपके अभिनंदनाथे एक विराह सभा बा॰ मजाजाळजी फतेपुरवालोंके सभाषितत्वमें हुई थी निसमें आपको खदर पर छपा हुआ मान के पत्र अर्पण किया गया था। आजकळ भी आप देशसेवामें ही निमन्न हैं तथा हम बाहते हैं कि इसी प्रकार जातिसेवामें भी मन्न रहें ऐसा मौका जैन समानको इंटना बाहिये और वह समीप ही है कि आप देह ही में होनेवाली मह।सभाके समापति चुने जार्ने व हम आपके विरास्त्र की भावना करते हैं।

(७) संसार-वृक्ष-टाईटल एउके इस चित्रका परिचय कविता रूपमें ए० ४२ पर है।

ब्रह्मचारीजी द्वारा २२०००) का दान-पूज्य वर् शीतलप्रसादत्रीने गत चातु-र्मास कलकत्तेमें किया था तब अपने उपदेशसे वहांके भाइयां द्वारा ६५००) प्राचीन श्रावको-द्धारिणी सभा, ४०००) सोलइ संस्थाएं, १०००) नीवद्या, १२००) कन्याञ्चाला, ५२००) उत्तरी बंगालके पीडितोंके लिये, ३,१६८) म्याः महाविद्यालय काशी, व १०००) सलुंबर पाठशाला इस तरह २१८४८) का द न कराया था। तथा दशहरा पर बहुतसा विजदान कम कराया, पाचीन श्रावकोद्धारिणी समा स्थापित कराई, बंगालके पाचीन स्मारक -नोट किये, बंगालका पाचीन जैन इतिहास खिला, नित्य नियम, सामायिक व यज्ञापवीत्का पचार बढ़ाया। सारांश कि इस वारके चातु-र्मातमें बहाचारीमीने बहुत कार्य किया है जो निरस्मरणीय रहेगा ।

श्री मोजीकी मोज। सि सि श्री मोजीकी मोज। सि श्री सि

वाह भाई क्या कहना है ? अबके माघ नास लिलतपुरमें तीन गनरथ हैं, वास्तवमें वहां के उपकारी सज्जनोंने ठीक विचारा। क्योंकि लिलतपुरमें अभी जैन मंदिरों और मृतियोंकी बहुत कमी थी सो पूरो हो जाएगी! और कोई विचारा गरीब पूजाके कामपर छगा दिया जायगा, उसको ती मीन है!

कितने ही लोग वेचारे वर्षोसे मिटाई खानेको तरसते थे और यही टक्टकी श्रीमानोंकी ओर लगाये थे कि कोई बड़ा समारोह हो तो, ४-६ दिन तक अपनेको भी बृंदी लड्डू और खारे सेव खानेको मिलेंगे, वाह उनकी तो मीन है!

जन महिनों पहिलेसे मिठाईयां बनेंगी, तो इसमें सन्देह नहीं कि उनमें त्रस जीव न उत्पन्न हों, वयोंकि जैन शास्त्रोंमें कहा है "अर जो अन्नतणों पक्षवान । जनको लेश जु माहें जान । साठ पहर मर्यादा जास । मानें श्रीगुरु धर्म प्रकाश । " इसी प्रकार साटा भी महिनों पहिले पिसेगा, सो उसकी मर्यादा शीत काल दिन सात, ९ उच्ण पावस त्रय । इस प्रकार है । हजारों मन वेशन मेदा बनना है सो कितने यस्तसे शोध बीनकर उत्तम जातिके मनुष्य पीसेंगे । और पानी जितना लगेगा वह कितनो सावधानीसे मर्यादाके भीतर छानकर कीवानी विधिसे जलाशयों में पहुंचाई जायगी ? महिवोंमें सब इंबन सखा हवा शोधकर लगाया जायगा और दिन दो घडी चढनेपर कार्य प्रारंभ होगा और महिवां दो घडी दिन रहते ही बंदकर दीजांयगी क्या ? परंत इससे क्या ? लिखनेवाले लिखते हैं, वाचने सननेवाले बाचते सुनते हैं, सो न बांचना न सुनना तक पाप केंसे लग सका है ? मरेंगे तो विकलत्रय ही ना. सो वे उस प्यायसे छटेंगे. पर अपनेकी पदवी मिलेगी सवाई. सेठ. सवाई भिघई. इत्यादि । सो अपनी तो मौन है, वह पदवी सन्तान दर संतान चलेगी इस लिये उनकी भी मीन है. कितने मज़र काम करेंगे, उनको मज़री और माल मिलेंगे उनकी भी मीन है! परिवारके सम्बन्धी रथमें बैठेंगे उनकी भी भीत है ! पोलिस आदिके लोग भी आशा रखते हैं. उनको भी प्रबन्ध करनेका अवसर मिलेगा. उनकी भी मौन है। व्यापारी, दकानदार, ठठेरे, कुं नड़े, भटियारे, हलवाई, फठरया, मोदी, बनान, कुम्हार, सुनार सबकी चटकेगी सो सबको भीन है।

जो मिठाई खांयगे, पनी पीयेंगे, कक खांसी शीतज्वर आदि होवेगा सो वैद्योंके भी पीबारह पड़ेंगे, कोई मरे व जीवे, उनकी तो मौन ही है।

लोग कहते हैं बुंदेलखंडमें लोग भूखे मरते हैं, दीन हो गये हैं, न्यागर घंघा नहीं है, परंतु यह उनका अम है। देखो, यदि यहां दीन होते तो हम कैसे रथ चलाते, लाखों रुगया कहांने लाते ? यदि खोग दीन होते तो ने नर-

नारी शृंगार कर करके कैसे रथोंमें छाखों खर्च करके आते ? क्या दीनोंको मिठाइयां कहीं प्राप्त होती हैं ? यदि वे दीन होते तो मारवाड़ी भाइयोंके समान या अंग्रेजोंके समय देश विदे-शोंमें माकर व्यापार धंधा करते, परंतु वया वे कहीं जाते हैं ? क्या किसीने बम्बई, कलकत्ता, करांची, दिइली, बह्मा, सीलोन, आसाम, जर्मनी, इंग्लेड कहीं भी बुंदेलखंडी श्रीमानों-की कोठियाँ देखी सुनी हैं ! भला वे जब मीनमें हैं तो उनकी समझमें संसार मीनमें है। व्यर्थ परदेश जाना और वहांपर पीढ़ी खोलना । फिर देशके छोग आवें जावें सो इनकी लत्तड कौन लगावे। सेठ माणिकचंदजी, सुखानं-दनी आदि इसीमें बरवाद हुवे ! देखी ना रोज रोज उनके यहां उनके देशके आते जाते हैं फिर मनसे हो शरमसे सहायता तो करना ही पड़ती 🖥 🛚 इससे समझो कि "घर मिले मौनसे खानेकी, तो फिर वयों जांय कमानेकी, क्या बुंदेलखंडियोंकी शानी कोई कर सक्ता है ? जो यहां दर वर्ष दो चार गमरथ दुर्भिक्ष दुर्भिक्ष सभा घोरतर बीम।रियोंके होते हुवे भी हवा करते हैं! जो इस पांतको निर्धन कहे वही निर्धन है और विद्या हीन कहे वह मूख है। सोच-नेकी बात है कि यदि यह प्रांत विद्याहीन होता तो जगह जगह विद्यालय, पाठकालायें, बोर्डिंग हाउस, स्कूल, कालेज आदि विद्यादाता संस्थायें अवस्य होतीं, परंत्र इसके विद्वान हो-नेका यही चिन्ह है, कि यहां विद्यासंस्थाएं नहीं हैं और जो हैं भी सो नहीं के बराबर-बिना द्रव्यके झायुके दिन बिता रही हैं। नहां

सब बिद्धान् होते हैं वहां विद्यादानसे क्या प्रयोजन है ? समुद्रमें जल बरसाना मेघोंकी मुल है। यहां न कोई अनाथ हैं न अपद स्त्रियां हैं, और कोई कदाचित हो, बड़नगर दिहली बम्बई भेज देते हैं ! और एक बात बतायें-सुनों, बुंदेलखंडके कई लड़के न माने मां बारोंके रोकनेपर भी वे काशी, मोरेना, मथुरा, सागर, हस्तिनापुर आदिको गये वहां नाकर वे सिरफोड़ी करना सीख आये! बड़ोंकी मूर्ले निकालनेको तैयार हवे, जो अन्य बड़े वृद्देंने कभी न देखें न सुने और देव शास्त्र गुरु तीन कहकर दूरसे अर्घ चढ़ाते थे सो, इन लड़कोंने निकाले और पंडित बनके पढ़ने लगे। इस लोग यह बात पसन्द नहीं कर सक्ते, सो हमने इनकी सीधा टिकट कराया-जावो देहली, रोहतक. काशी, मोरेना, मालवा, गुजरात, मेवाइ, बंगाल पंत्राव । वहांके लोग तुम्हारे चंगुलमें फंसेगे हम लोग तो स्याने हैं। अच्छा और सुनो, जो अंग्रेजी पड्ते हैं, वे सक्तीरकी गुलामीके लिये चक्कर काटते हैं, क्योंकि हम उनकी पुरा पहने देवें तब न पहें। और मेडिक पहेंकी बाहर ती कोई सईसीपर भी न रखेगा, और धर्मकी बात नहीं जानते, "सो इनको तो वारी बेर अढ़ाई सेर" यही करना है। बहुत पढ़नेसे बुद्धि बिगड़ जाती है। इसीलिये जो इनकी इधर उपस्की हवा कगी, गजट फनट पढ़े कि बस वाय लगी, भला इनसे धंधा कैसे होवे ? पर अपनी तो मीन है। बचका बांच पीठपर घरी, वनशीको हम उद्यन करी, गांब गये गकरियां लाय, लाये दो दश टका कमाय ।

सा पीनारी पुत्र स्वाय, निरमय सोय रहें हरसाय। किस जाने साते वहीं। मंगक दोय पड़े हम सही पूना दर्शन हम नित करें, शास्त्रोंकी झंझटमें परे। हमसे कीन घनी विद्वात, देखो हो जो चतुर सुजान। कहो केसी मौज है!

और एक बात सुनी-जी लड़का परदेशमें विना ब्याहो जाके नौकरी करे. चाहे धंधा करे. चाहे वह कैसा ही विद्वान होवे. खाता पीता सुखी होवे. इजत अबस्द्रदार होवे, संदर होवे उसको हम अपनी लड्की नहीं देते, इतनी दृर क्यों देवें ! भले भूखे मरे पर आंखोंके साम्हने तो रहे! पर जो चालाक व्याह कर चला जाय उसपर वश नहीं. पर डांकडीं उसकी स्त्री सर गई तो फिर हम लोग उगानेबाले नहीं। हम आपने गाममें बुढेको व्याईं,वारेको व्याहे,रोगी काना मुरख कैसा ही हो व्याहें, कन्या हमारी है उस पर हमारा जोर है। विधवा भी होगी कुछ भी....करेगी पर रहेगी तो आंखोंके साम्हने. अब यह अडचन पडेगी तो बेटा न पढ़ेंगे न परदेश आवेंगे। बस फिर रहेंगे घर तो बनेंगे वर। तभी मीन है। न रहेगा वांस न बजेगी बंसी !!

" मौजी।"

मालवा प्रा० सभा-लातेगांव (मालवा)
में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव माध छुदी
१ से ९ तक होगा निस मौकेपर वहां मालवा
वि० जैन मांतिक समाका १९वां वार्षिक अधि-वेशन होना निश्चित हुआ है। सब माई
अवस्व प्रधोरें।

भगवानदास जैन, महामंत्री ।

देह छी में महासभा व प्रतिष्ठा-हिंदके पाटनगर व विपुत्र जैन जनसंख्यायुक्त देह ली शहरमें माध सुदी असे १२ पंचक ख्याण क प्रतिष्ठा महोत्सव बड़े ही समारोह के साथ होगा जिस मौकेपर देह लीके माइयोंने भारत विव जैन महासभा व खंडे खवाल महासभा को अपना २ वार्षिक अधिवेशन करने का आमंत्रण भेजा है जो स्वीकृत होगया है। सब भाइयों को देह ली नाने के लिये तैयार हो जाना चाहिये।

काद्गी-स्या॰ महाविद्यालयमें अभी ४७ विद्यार्थी रहकर अध्ययन करते हैं। प्रबंध उत्तम है। पं॰ गणेशप्रसादनी वर्णी द्वारा उच्च कोटिकी उत्तम शिक्षा हो रही है। १०००) मासिकका लवे है। सहायताकी आवश्यका है। बीनाजी-में पीष सुदी ५से९ तक मेला होगा।

उपदेशकी पिपासा-कलकत्ते के जैनी भाई समाजके विद्वान त्यागी-ब्रह्मचारियों छे प्रार्थना करते हैं कि उनमें से कोई यहां २-४ मास पधारकर अनुमहीत करें क्यों कि ब्र॰ शीतल-प्रसादनी, ब्र॰ गेबीलालनी व ब्र॰ चांदमलनीके पधारने से यहां की समाजको बहुत लाम हु भा है।

व्यावर-में महाविधालयका कार्य अच्छा नकरहा है। अधिष्ठाता वर्ग ज्ञानानंदनी हैं।

कोस्बापुर-के निनसेन स्वामी भट्टार्क विद्याके बड़े प्रेमी हैं। आपने अपने अधिकारके ग्रामोंसे ॥ >) मत्येक घर बस्क करके जो रकम एकत्र हो उसका उपयोग बोर्डिगोंमें घर्मेशिक्षा व गरीव जैन विद्यार्थियोंके शिक्षणार्थ खरचनेका अधिकार दक्षिण महाराष्ट्र जैन सभाको दिया है।

हिन्दी विश्वकोष-कलक्तेमें कई वर्षोसे नगेंद्रनाथ वसु (८ विश्वकोशकेन बागबनार) द्वारा छप रहा है निसमें वे जन शब्द भी सामिल करनेवाले हैं इसलिये जैन विद्वान उनको जैन शब्द सार्थ शीध ही मेंनं।

कलकत्ता-में कार्तिक मासमें बंगाल विहास उड़ीसा प्रांतिक दि॰ जैन समका संगठन हो गया है। इसमें ब॰ शीतलपसादनीका ही गुम प्रयस्त है। सभापति शेठ वृद्धिचंदनी व मंत्री पं॰ नयदेवनी हुए हैं। मगसिर वदी ६ ४-५ दे को इसके अधिवेशन होकर २० प्रस्ताव पास हुए थे।

छूटे-प्रसिद्ध देशसेवक व समानसेवक सेठ पदमराजजी रानीवाले गत ता० १४ नवम्बरको छूटे हैं।

इनामी नियंध-महावीर जैन एमोशि-येश्वन काहोर १९) का इनाम पंजाब व देहकी मांतकी कोलेजके उन विद्यार्थिओंको देगी को आगामी ता० ९ जनवरी तक आत्मा और शरीरका संबंध ' अथवा 'जेन कमेवाद ' पर उत्हृष्ट निबंध लिखकर भेजेगा।

सुजानगढ़-में भी माध सुदी 4 की पंच-कल्याणक प्रतिष्ठा धूमधामसे होगी | पं॰ पन्ना-कालनी बाकलीबाल वहां ही उपस्थित हैं।

मूडिबिद्रि-कि नहां नयथवल महाधवलादि सिद्धान्त ग्रन्थ व रत्नविष्योसे सुशोभित श्री पार्श्वनाथका सिद्धान्त मंदिर है उसका जीणों द्वार होनेपर वहां पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव माघ सुदी १८ से फः० वदी ८ तक होगा। दक्षिणके यात्रार्थी अभीसे रवाना होकर वहां समय पर पहुंच जावें। शिमोगा अथवा मैंगलोर स्टेशनसे जाया जाता है। मोटरका भी प्रवंध है। सुरह्मानपुर-के श्वे जैन मंदिरमें कुछ दि जैन प्रतिमाएं हैं वे श्वे भाई ओंने मुनि जयसुरीश्वरजीके उपदेशसे हमें दे देना स्वीकार किया है।

गजरथांका समूह-आगामी माय सुदी ५को सिघई, स॰ सिंघई, श्रीमान, सेठ, श्रीमंत सेठ आदि पदवी देनेवाले बुंदेललंड प्रान्तके लेलतपुरमें एक साथ तीन गनरथ अर्थात पंचकल्याण पतिष्ठा महोत्सव होंगे। इस समय परवार महासभाका अधिवेशन भी होगा। ललितपुरमें मंदिर और प्रतिमाकी कुछ कमी तो नहीं है तब नामवरी व उत्तरोत्तर पदवी पाम करनेके लिये ही ये गनरथ चलनेके होंगे। खेद है कि वर्षोंसे आन्दोलन होनेपर भी बुंदेलखंडसे यह मोह नहीं गया है।

वियोग-गत ता. ९-११-२२ को सी॰ चमेळीबाई धमेंपत्नी ला॰ अनितप्रसादनी देहरादृनका देहान्त हो गया। आप स्त्री समानकी बड़ी हितेंपी व दानी थीं।

जैन केशरी-नामक अर्द्ध साप्ताहिक पत्र हाथरससे सुदर्शनलाल जैन द्वारा सुदर्शन पेसमें छपकर ता० २० नवम्बरसे प्रकट होने लगा है। दो चित्र भी हैं। वार्षिक मृत्य ६) जैन समाजमें अर्द्ध साप्ताहिक पत्र यह प्रथम ही है। साकरोदा-(मेबाड) में जो विद्यालय चल रहा है उसमें ९० विद्यार्थी अध्ययन करते हैं। सहायताकी आवश्यकता है।

देह्छी-में लाला जगनाथजी जीहरीका ता॰ १७ नवम्बरको स्वर्गवास होगया। मिथ्यातिमिरनाशिनी समाके स्थापक आप ही थे। आप हारा देहलीमें कई सुधार हुए हैं व जीवद्यापचारमें अग्रेसर थे।

कानपुर-में हमरी महासभाकी प्रबंध ० व मेटी निर्विन्नतासे बा० चंपतरायमी वेरिस्टरके सभापतित्वमें ता० ११-१२ नवस्वरको हुई थी जिसमें बा० नवलिक शोरनी व महासभाके बीचका हिसाबका झगड़ा निबट गया और बा० नवलिक शोरनीने रू० ५१५९०)के नोट, बोंड आदि वर्तमान कोषाध्यक्ष बा० निमलकुमारजीको दे दिये हैं। इस कमेटीमें २४५००) का बनट २४४९ के लिये पास हुआ तथा 'देन गमट ' के लिये प्रेस निकालनेकी कोशिश करनेका प्रस्ताव हुआ है।

स्ति उदय दक्ट- में गत अष्ट निकामें पूजन स्थयात्रा व मेला हुआ था और अवसे प्रतिवर्ष वहां मेला भरना निश्चित हुआ है।

आचिकाश्रम-वन्बईका वार्षिकोत्सव ता० ६ नवम्बरको धूमधानसे हो गया था। अगले दिन हो० गु० जैन बोर्डिंगके निद्यार्थियोंको भी सभा होकर इनाम दिया गया था।

नागपुर-में का॰ सु॰ (२ की एक धर्मार्थ औषधालय खोला गया था निप्तके स्थायी फंडमें २०४) व मासिक चंदा ७६॥।) हुआ था। सातकुली-में बहाड मध्य प्रां॰ दि॰ केन समाकी पांचवी बेठक ता॰ ९-१० नव-म्बरको हुई थी निसमें समाका कार्य विस्तृत रूपसे चलानेके लिये वार्षिक १) १) १) ॥) देनेबाले व मुफ्त भी समाके समासद बनानेका प्रस्ताव हुआ है।

जैन गायन मंडली-हमने वडगांवमें ६ माहसे एक गानविद्याकी कास खोली है जिसमें कई रुडके तैयार हुए हैं। नृत्य झामा भी करते हैं। जोमेला प्रतिष्ठा शादिमें बुलावेंगे तो उनको विदाई कुछ भी न देनी होगी। सिर्फ आनेजाने-का खर्न ही देना पड़ेगा। एक साथ कमसेकम पांच माई आवेंगे। मुलचंद जैन, जखौरा (झांसी)

सगरपुर-पो॰ सरकार (झांसी) में फाल्गुन वदी ४ को गनस्य प्रतिष्ठा होगी। साथमें गोलालारीय सभाका अधिवेशन भी होगा।

रक्षाबंधन-की भेटमें बग्बई श्राविका-श्रमको गत रक्षाबंधन पर्वपर १४२१।-) की सहायता मिली थी।

देहली-में महासभाके साथ २ दि जैन शास्त्रिय परिषद् और प्रमावती/पुरवाल परिषद् को भी अपना २ अधिवेशन करनेके लिये आमंत्रण मिला है।

दक्षिण प्रान्तमं-भारत दि॰ नेन महा-सभाका परिचय बहुतसे भाइयोंको नहीं है इस लिये इसवार देह श्री महासभामें दक्षिण प्रान्तके हो कोई श्रीमान् व विद्यानको सभापति नियुक्त करना चाहिये व ऐसा नाम सेठ रावनी सखा-राम दोशीका उपयुक्त है ऐसा पं० बंशीधर भास्ती प्रयट करते हैं। पद्मावती परिषद्-देहलीमें पितिष्ठा व महासमाके साथ २ दि॰ जैन पद्मावती पुरवाल परिषद्का भी वार्षिक अधिवेदान होगा।

फिरोजपुर-में जीबदया प्रचार सभा फिर खुल गई है। बाहरके भी मेम्बर हो सकते हैं। नियमावली मंत्री जीवदया प्रचारक जैन सभाको लिखकर मगावें।

महामंत्रीका निवेदन-भारत० दि० जैन महातभाके महामंत्री सेठ चैनसुखनी छावडाने दो निवेदन पत्र भेजे हैं जिसका सारांश यह है कि देहलीमें माघ मासमें महा-सभाका अधिवेशन होना निश्चित हुआ है निसमें सभापति कीन हो इस विषयमें इरएक प्रांतके भाई व पंचायतियां अपनी २ सम्मति भेजें जिस पर प्रबंधकारिणी समितिमें विचार किया जायगा तथा सभाकी नियमावलीमें जो र सुधार आवश्यक माछ्म हो वह भी लिखें तथा सभामें अपने १ विचारानुसार पेश करने योग्य प्रस्ताव भी हमें छिख भेने और हरणक शहर व ग्राम अपने २ प्रतिनिधि देहली भेन नैका सुनाव काके हमें सचित करें। पत्र व्यवहार वैनसुख छ वड़ा, महामंत्री, महासभा, सिवनी सी० पी० से करें।

पते चाहिये-महासभा कार्यालयमें अपनी हरएक संस्थाका पता (मय कार्यकर्ताओं के नाम) होनेकी आवश्यकता है इस लिये सभी दिः जैन चार्मिक—साभानिक—जातीय सभायें, विद्यालय कोरी आदिको चाहिये कि अपने २ पते हमें सीध ही भेजें (साथमें यह भी निवेदन है कि आगामी महासभामें पेश

करनेके लिये अपनी संस्थाकी गत वर्षकी रिपोर्ट व हिसाव हमें तुर्व ही भेनें।

चैनसुल छाबड़ा, महामंत्री, महासभा, सिबनी ।
मृत्यु व दान-वड़वानीके सेठ बांद्लाल नीका पोष वदी १ को स्वर्गवास हो गया। आप
नयपुर आश्रम, व्यावर महाविद्यालय, काशी
विद्यालय व कुंथलिगिर आश्रमको प्रत्येकको
४००), वम्बई श्राविकाश्रम २००), मुरेना
विद्यालय, बावनगनानी, बडवानी मंदिर, इंतर
उदासीनाश्रम आदि प्रत्येकको १००) इस
तरह २२००) व २०००) कुटंबमें वेटियोंको
दान करगये हैं। साथ २ एक अच्छे झालादानकी भी आवश्यक्ता है।

अलिंग जके -का॰ प्रागनीदासनीने मैनपुरीमें अपने सुपुत्र बा॰ कामतामसादत्रीके बिबाइमें फिज्ल खर्ची नहीं की और मंदिरों, तीथों व संस्थाओं को २७४)का दान किया था।

विधवा विवाह खंडन-के विषयमें जो भाई उत्तम छेख ता. १ फर्वरी तक में नेंगं उनको संयुक्त प्रा० दि॰ नेन समाकी ओरसे एक सुवर्णपदक दिया नायगा इस छिये विद्व दगण शास्त्रोक्त प्रमाणों सहित इस विषयके छेल शीध ही हमें भेतें।

> क्रवचंद नेन, मंत्री सं पा वि । नेनसमा, कानपुर।

वर्ण-व्यवस्था।

(**ठेखड:**-पं॰ नंइनलाक जैन-दंदर)

वर्ण-व्यवस्था-विवाह-संतानोस्य त्त वारसा हक इत्य वि संशारमें जितनी ज्यवस्थामें 🖁 उन तबमें चार्मिक संबंध 🕏 । ये व्यवस्थायें घर्षकी सिद्धिके किये अनादिकाक्से चढी आती है। आबार्योका प्रवान उद्देश्य वार्मिक प्रवाह अविच्छित अनंतकाङ तक चला रहे इस कारणसे समस्त व्यवस्थाओं को चार्मिक कियाओं के स्ट-रूपमें प्रतिपादन की हैं। व्यवहार धर्म भी उक्त व्यवस्था स्वस्थ्य ही है। विवाहसे क्या धर्म सिद्ध होता है ! विवाह करनेमें कैसा धर्म ! सन्तानोत्य-त्ति वानंद मोजपनाका फड़ है । तमें भी क्या वर्म है ? वर्णवावस्थासे धर्मकी नया सिद्धि होती है ? प्रायु वर्ण व्यवस्था मोगविज्ञासों में विश्व करने-य छी और स्वजंदताको नाश करनेवाली है ? इस्यादि मनोहर विवार आपके सन्मुख आते ही होंगे। इस छेखमें वही विवार करना है कि इन सब व्यवस्थाओं वे धार्मिक संबंद है अथवा नहीं ? विशहादि कार्य धर्मके अंग हैं अववा नहीं ? वर्णव्यवस्था, विवाइ, संतानोत्वास और वारसा पक्ष ये बार व्यवस्थाये परस्पर क इसरी व्यवस्थासे चनिष्ठ संबंध रखती हैं। क्सरोत्तर व्यवस्थाये फल्का है। अर्थात वर्ण क्ष्यम्या फड़ विशह सिद्धि है, विशहका फड़ क्षेत्रानीस्पत्ति है, संतानका फक्र बारसा हक क्रियदा अन्त्यदत्ती है। इस प्रकार इन स्वर-

स्थाओंका एक दूसरी व्यवस्थासे प्रसार अन्वय-

वर्ण-ब सम, क्षत्रिय, बैश्य और शुद्र इस धकार बार विमार्गों में विमक्त हैं। एक एक वर्ण-के मेर अथवा अवांतर नातियां अनेक हैं। वैक्यों के खंडे ब्वाइ-अपवास प्रभृति अनेक में: हैं इसी प्रकार चारो वर्णीमें अशंतर मातियां अनेक हैं। परन्त व्यवहारकी बोल बालमें कमी र सामान्य ऐना भी कहते हैं कि "तुमारी कौनसी माति है ? वैदय । " यहां पर वैदय वर्ण और अशंतर जातिमें अभेद विवसा है. इस्छिये अशंतर माति कमी २ उचारण नहीं की माती है। यह प्रकरम इस छिये लिखा है कि शाखों में प्रायः अशंतर मातियों हा विशेष वर्णन नहीं है और उनका समावेश रोडवाड (वर्ण और जाति में अभेर विबक्षासे) में वर्णसे लिया है परन्त पूर्व हा अमें अवां स् मातियां अवश्य थीं । और कहीं १ पर उन भातिओं का व्यक्ती करण वंश शब्दते हुआ है।

संतानसे वंश रक्षा और वर्गक्षा होती है।
संतानके बिना वंश ही सियर रह सका है, यह
नियन समिहित्स सर्वत्र है। दूसी संतान विता
वारवा हक हा नियम नष्ट होना है। अन्ययदित्त
विनाश होती है। यह प्रत्यक्ष है। हरएक मतुष्य
यह जानता है कि संतान विना वंश नहीं रह
सक्ता और अपने कमाये हुए चन हा (इकदार
प्रश्न नहीं होनेसे) उत्थोग नहीं होसका है।
इन छिये गुद्दस्यों हा सबसे महा प्रतन और
सुह्य कार्थ संतानोश्यक्ति है।

संतानको बात्यन शास्त्रकारोंने कहा है।
इसका कारण यह है कि संतानमें अपनी आत्माके
समस्त गुणोंका अवतरण होना चाहिये। जो पिताके गुण हैं वे गुत्रमें अवस्य खाने चाहिये। जतना
हो नहीं किंतु पिताका जो स्वमान है, कुलाचार
है, कर है, आस्त्रति है, धर्म है इत्यादि समस्त
बातोंका प्रवमें अवतरण होता है। और यह
प्रस्थक्ष मी है कि बहुतसी संतान पिताके कामें
होती है। पिताकी जैसी आस्त्रति है पुत्रकी
प्राय: उससे मिलती जुलती आकृति है। पुत्रकी
प्राय: उससे मिलती जुलती आकृति हो। कदास्वमाव होते हैं—और होने ही चाहिये। कदावित् प्रवमें पिताके धर्मोंका अवतरण न हो तो
प्रवकी उत्यतिमें शंका होती है। और ऐसी
शंकाका होना प्राकृतिका (नेचर) है।

प्रकृति, जैसा वीज होगा वैना ही फल होगा यह काने अनंत उदाहरणोंसे स्वष्ट करती है। अपिक बीजसे आम ही होगा नीव नहीं, यह इकृतिका कार्य है। जैसा उत्तम और गुण स्वमाददाल आमका बीज होगा फल भी वैसा ही गुग और स्वमाददाल होगा।

विशुद्ध रज और विर्धित विशुद्ध संतान होती है, यह वैद्यक प्रंथीं है हांष्ट्र रती। है और प्रत्यक्षनें भी प्रत्यः सर्व ननताको अनुभिन्त है। विशुद्ध रन और वीर्थेसे इन देखमें उन दर दंपतिका प्रहण है नो शीद्यान हैं, सधुनित्र हैं, ब्रह्म वर्षे विशिष्ट हैं। अर्थान को अपनी परणीत की सिवाय अन्य क्षियों-का निनके स्थाग है। स्नी-प्रहण उपय दंपति विशुद्धचरित्र हैं। ऐसे दंपतिओंका ही रन और वीर्य शुद्ध है। रन और वीयकी विशुद्धता ऐसे

ही ग्रुगरुमें रहसकी है। पापाचारी-और कामी ब्रोपुरुमों का रज खौर बीर्म विश्वाद नहीं रह सक्ता है। विश्वदिक चिये पापावरणोंका स्थाग वस्ता नितान्त आवस्यक है।

विशुद्ध संतानमें माता पिताक गुणोंका अवतरण है। मातापिताका रज और बीचे विशुद्ध होगा तो संतान मी विशुद्ध होगी और ऐमी संतानमें ही मातापिताके स्वमाव—कुकाबार—आ-कृति—रूप आदि गुणोंका अवतरण होता है।

भारतवर्षमें शील (पातिना)का महारम्य संसार से सर्वोत्तम और मजीकिक है इसका कारण संतानों में कुलाबारका अवतरण है। अन्य देशों में इस अतकी गंघतक नहीं पाई जाती है इसका कारण संतानोंमें कुटावारादि गुणोंके अवतरणका अमाव है। यह अवसाण अन्य देशोंमें इत वीर्थ और रनकी शुद्धि विना हो नहीं सक्ता है। भारतकी अगणित पांबन एकनामें शीछ (पाति-तर-ब्रह्मनर्थ) माहासम्बस देवों द्वारा पूनी गई हैं। ऐसी अनेक पवित्र मारतकी रण्णी थीं और अब मी हैं जो गाउब और अतुल वैभाके स्यार्थको कताँसे रूदका अपनी पति संयाने संतोषित हुई हैं। यह दशा अन्य देशीमें न विकेशी। महारानी द्यानी अपना सर्वस्वका नाशकर और अपने प्यारे प्राणींकी चितामें आहृति देशर स्वर्गेशिमनी हुई यो परंतु महान पराक्रमशाकी अगुल सम्बन्धकी नीच बासनाकी न स्वीकार की। ऐसी महान कठिन परीक्षाके समय विशुद्ध संतान ही आने कुशाचारकी रक्षाकर सक्ती हैं मारतवर्षका सर्वोदि अभिमान ऐसी संवानोंसे ही स्थिर है। आम भी हमारों

ऐसी ही संतान मास्तवर्षमें है। नहीं तो पाश्चिपात्व देशोंमें अनु इ संपत्ति होनेपर पी कुछाचारका नामोनिकानं तक नहीं हैं। मारत गरीव देश होनेपर (छह पैसेकी एक विनकी भावक-और विकायतमें छह रुपयेकी दैनिक आवक) और सब प्रकारसे पराधीन होने पर भी भारतकी संतान अपने कुकाचारका पाइन कर रही है। विज्ञायती रमणी जरा २ कारणोंसे अपने पतियोंको धकः देकर निकात देती हैं और दूसरा तीसरा अनेक पति करनेपर मी संतोषित नहीं होती हैं। बहांपर कुन्नाचार किस पकार पालन हो सक्ता है। बीर्य और रनकी शुद्धि किस प्रकार रहती है। शुद्ध संतान इहांसे उत्पन्न है शुद्ध संतानकी जह वर्ण व्यवस्था है। वर्ण व्यवस्थाके विना विवाहादि उत्तर व्यवस्था अनियमित दोष पूर्ण होती है उनसे प्रल शांति नहीं निल सक्ती है।

वैद्यकामति बह स्वष्ट और निर्विश्व है कि मिल २ निर्विश्व के मनुष्यों में भिल प्रकारका वीर्थ होता है। नो एक निर्विक मनुष्यों भिल प्रकारका वीर्थ होता है। नो एक निर्विक मनुष्यमें वीर्थ के परमाणु में गुल है वह दूसरी निर्विक मनुष्यमें नहीं है इस कारण ही मिल १ निर्विच निर्विक मिल १ विवास मिल १ विवास

वैद्यकाचार्योका वर्णन्यवस्थाके निषयमें अभिप्राय किलनेके पथम यह विचार केना आवश्यक है कि उनका इस विवयमें ऐसा विचार क्यों ! इसका कारण यह है कि-पदार्थोंने परिणयन शक्ति बाह्य और अध्यंतर संस्कारोंके निमित्तने होती है। उपय संस्कारोंके बिना पदाशों में परिणमन नहीं होता है। नीरके बीनमें नीम उत्पन्न होनेकी आम्बंतर शक्ति है इस छिये नीबसे ने ब होता है आम नहीं, हां खड़े खीर खराब आमको सुस्वादु बनाना यह बाह्य संस्कारोंकी खपेशा है। मोतीमें पानी (तेन) आम्बंतर संस्कारोंका फड़ है, परन्तु उसका विकास पर्भण आदि बाह्य कारणोंसे होता है।

वैद्याहानायीने इस प्रशार पदार्थीमें उमय संहक्तर माने हैं। और इन उमय संस्कारों से ही पदार्थों में विशेष शक्ति उत्पन होती है। प्रत्येक वनस्मति नक-वाय-आदिमें गुणोंकी तारतम्य अदस्या उक्त संस्कारीके निमित्तसे हुआ करती है। इसी छिये पित्र २ प्रकारोंके इवने पित्र २ शक्ति है। आषाद महिनाके मैंचके पानीमें दूसरा गुण है, और स्वाति नक्षत्रके पानीमें दूसरा गुण है वही पानी जिसरपदार्थी का सहवास करेगा सहका-रसे उसके गुण विभिन्नक्त बद्द न्यंगे। पानीके गुजीमें संस्कारीते क्या अवस्था बदळती है यह होसियोपेथक विज्ञानवाले स्पष्ट रूपसे बदलाते हैं। प्राथिक संबंबमें भी विभिन्नता प्राप्त होती है। दाल-बावज जुदे १ खाने पर भिन्न रस बनता है परन्त खीचडीका मिन्न रस होता है। सौंक-गुलामके फलोंके साथ दस्त (विरेचन) उत्पन करती है और साकरके साथ दहत हो रोकती है। ये दोनों विरुद्ध अवस्थाये भिन्न १ पदार्थोंके संयोगसे भिन्न २ रूप होती हैं। संतानमें भी वैद्यकाचार्य इस प्रकार मिन्न २,

संतानमें भी वैद्यकाचार्य इस प्रकार मिन्न २ विवासीय रजवीर्थके संबन्धोंसे मिन्न गुगराजी हैं। संतानों में बाह्य आस्पंतर

संस्कारींके प्रभावसे गुणागुणोकी व्यक्तता है।

एक जातीय पदाशों में मिल्ल गुणवाछ तजा-तीय पदार्थ वैधक भानता है। बनस्पतिमें एक ही नामकी अनेक टरहकी बनस्पति (एक जाति) की हैं उनका गुण मिल्ल २ है। पारद-तांबा-छोहा इनमें अनेक मेद हैं। मेदानुसार गुण मी मिल्ल २ हैं।

मानवजाति दद्यपि एकसी—एक आकारवा-की, और सब प्रकारसे एक रूप है तो भी बाह्याम्यंतर संस्कारोंसे उनके गुण—स्वमाव है। खुर—वीर्य—ज्ञानतंतु और कुटाचारमें विशेष विभिन्नता है। यह विभिन्नता क्रमानुगत संतान प्रति संतान वंशासुरूप अवतरित होती है।

उत्तम नातिमें न हा संस्कार-कुछानार उत्तम होनेसे और मोनन पानादि उत्तम पदार्थोका संबंध होनेसे वीर्य-खून-और ज्ञान तंतुःश्रोमें मी उत्तमता-निर्मेदता-(उत्तम कुद्यानारकी प्रवृत्ति रूप) स्वयंमेव प्राकृतिक रूपमें हो नाती है।

उत्तम जातिके कुछानारों का असर आस्मापर विद्यक्षण पड़ता है। सुक्ष्म विषका असर अथवा गाछी आदि मर्भभेदक वचनों का असर उतना कार्यकारी नहीं है जितना कि उत्तम जातिके कुछानारों का असर आस्मा पर है। क्यों कि इनका संबंध मरण पर्यन्त देहके साथ रहता है। इसिछिये बाह्य निमित्त संतानकी उत्तमतामें वैद्यक ग्रन्थों का उक्त रूप विवरण है।

भाम्यंतर संस्कारोंकी उत्तमता बस्तुके गुणोंमें महत्वता प्रदर्शित करती है। अ.म्यंतर संस्का-रोंके विना बस्तुमें प्रकर्षता उत्पन्न नहीं होती है। प्रकर्ण मिलका और सुकर्णमें आम्यंतर सं-

स्कारींका ही भेद है। जी गुण मुवर्णमें हैं प्रायः वे ही गुण छवणे मिलतामें हैं परंत छन-र्णका आम्यंतर संस्कार श्रेष्ठ होनेसे प्रवर्णका महत्व अत्यंत श्रेष्ठ है । यह आम्यंतर संस्कारींका गुण स्वामाविक पदार्थीमें होता है। समुद्रका पानी खारा है यह उहके आम्यंतर गुणीका प्राकृतिक दश्य है। नदीका अछ विष्ट है यह भी आभ्यंतरसे प्राकृतिक गुण है । वैसे तो समुद्र और नदी दोनों में जल समान है। अल जाति एकस्व है, वरन्तु भारवं-तर संस्कारीके फब्से पानीके स्थमाव- रूप-और गुणों में महान मेद है। मृत काक्री हरी अनेक प्रकार हैं। गुणोंमें भी भेद है। यह भेद आ-म्यंतर हैं बाह्य नहीं। एक बस्तु एक जातिकी समान आकारवाली होनेपर मी प्राक्तन संस्कारसे विशेष गुणवान होती है। कोई ९ मूग गछती नहीं है, यह भी आभ्यंतर संस्कारका फर है।

मनुष्यों में भाम्यंतर संस्कारों से कुछाबाग-दि विशेष गुण प्राप्त होते हैं, उनका विकास ब हा संस्कारों से मधुर महत्वशाछी होता है। तीर्थं रोके जन्म छेनेसे ही रत्नवृष्टि आदि होती है ये चिन्ह आम्यंतर संस्कारों को व्यक्त करते हैं। पुण्यवान पुरुष उत्तम गोत्रमें जन्म छेनेसे कितनी ही शिक्षा वे बिना सिखाये अपनी कुछमर्था हासे सीख छेते हैं, जो शिक्षा रक्क और वाहे कों में महान परिश्रप करनेपर भी नहीं विछती है। यह आम्यंतर संस्कारों का फल है। इसीलिये उत्तम वर्ण-जातिका पाना पृष्ट कर्मका फल है।

समयमें भी कभी १ मानव समानमें होता है।

दश वर्षीय बाहक गणितकी कठिनसे कठिन समस्या हरू करता है अपना ईग्लेंडमें तीन वर्ष वा बाहक अझुन गान करता है यह मी उत्तके आम्धेतर संस्कारीका व्यक्तीकरण है।

उत्तम कातिमें कन्य छेनेसे कुछ परंपरागत
सदावार—विवेक—मर्यादा आदि गुणोंकी प्राप्ति
स्वयमेन प्रकृति रूपमें उपटब्ध होती है। इस
छिये नातिकी उत्तमता प्र'स करना शःखकारोंने
पूर्व संचित महान प्रण्यका फल बतलाया है।
जिस मनुव्यके बाह्याम्यंतर संस्कार विशुद्ध होते
हैं उसका असर इतना सुदृद और सुचार होता
है कि अनेक विकट प्रसंग आने पर भी वह
उससे आता नहीं है। उत्तम मातिकी आमा
बालक्की आत्मामें गर्मावस्थामें नामित होती है।
तज्ज तीय गुण बालक्के खुन ज्ञानतंतुमें ऐसा
संवेधित होता है कि वे बालक्को साधुचरित्र
बना देते हैं।

वैद्यक मतसे देश-जाति-वीर्य-और काकका असर मी बालकमें गर्मात्रस्थासे ही व्यक्त होता है। देश-ईंग्लेंडमें जन्म केनेवाले बालकका रूप खेत होता है और आफ्रिकामें जन्म केनेवाला बालकका रूप कृष्ण होता है इसी प्रकार जाति का असर मी बालककी आत्मामें गर्मात्रस्थासे ही व्यक्त होता है। गणकुमार भीने अल्पवयमें ही दूर्दर तप बारण किये यह उत्तम जातिका असर है को कि सदाचारका प्रतिनिंव बाल्यवमें ही प्रचार रहा। वर्तमानमें भी किसी २ मातिमें स्वामाविक श्रुरता होती है यह जातीय वीर्वका एक है।

प्रकृतिमें जो भिजता दील रही है वह भिज्ञ र

बीर्यका कर है। प्राचीन कालमें मनुष्यों के सदा-चार निर्मेण होते थे उसका कारण वीर्यकी वि-शुद्धि है। प्रकृति अपने गुणोंका स्थाग नहीं करती है। वैदक मःसे समातीय वीर्य रम सदाचारका कारण है। क्योंकि अविच्छन्न घारा प्रवाहसे (वर्णन्यवस्थाके कारण) शुद्ध वीर्य रम सदाचार और कुलाचार बमोंका कारण होता है।

रमस्वका स्त्रीके रमकी शुद्धि उसके बाह्य और आभ्यंतर संस्कारींसे होती है। गर्भ समय सुयो-गोंका विचार रखना संस्कारोंके निमित्तते होता है। कसाईके घर पर जनम क्षेत्रेनाई बालकके गुणोंमें कूरतादि दृष्ट गुणोंका वास स्वयमेत प्राकृतिक रूप होता है। श्रेष्ठ कुरुमें जनम हेनसे उत्तम कुराव रोंकी प्राप्ति होती है।

नीच कुछमें बाह्य कारण अच्छे हों तो बाहक के गुणोंमें कुछ उज्बन्धता प्राप्त होती है परन्तु नीच मनुष्यके बीर्य और रनकी बासना नष्ट नहीं होती है, प्रसंग मिछने पर वह बासना सतेन होकर मनुष्योंके मार्गोमें मिछनता प्रदर्शित करती है। विकायतमें बाह्याम्यंतर संस्कारोंकी मान्यसा न होनेसे मंजिनता (असदाचार-विकासना-पाश-चरण) की प्रवृत्ति नष्ट नहीं होती है।

श्री वारमहादि प्रत्यमें शारीरिक प्रकरणमें यह बात स्पष्टक्रपसे बतलाई है कि मिल २ वर्ण और भातीयमें खून-वीर्य-स्वमाव-का और गुण मिल २ होते हैं। जो गुण स्वमाव क्षत्रिय प्रस्त्रके वीर्यमें हैं वे स्वभाव गुण वैश्यवर्णके मनुष्यमें नहीं हैं। ज्ञान तंतुओं में उक्त प्रकारकी विभिन्नता होनेसे संतानमें भी विभिन्नता आती है। जो संवान समातीय शुद्ध वीर्थ और

स्वासीसे यञ्चव्य गुणोंका तिरस्कार करने इगता है। बीरेर उन गुणोंका मामास भी नष्ट हो नाता है। पांडालको विष्यकी गंव कम प्रवीत होती है। काच्छीको छहसुनकी उपगंध भी व्यक्त नहीं होती । पदःशीसे ग्झानि नव्ट होने-पर मनुष्यका विवेक नव्ट होनाना है। स्वार्थहिन, अहित, सेव्य, असेव्य, मोरय अमीरपका ज्ञान नच्ट कादेता है।

वर्तमान समयमे पास्मिगात्य देशका अनुकरण होत्हा है, दद्यवि युद्ध के समय पाश्चिमस्य वि हार्नोने अपने देशकी श्वति, विकासिप्रता, आदि वारणोंको असमीचीन बतलाया था तो भी नव्य शिक्षक मारतीय युश प्रत्येह कार्यों में उनका ही अनुकरण करनेमें अपनी उन्नति सपझ रहे हैं ऐसे जरूर शिक्षित प्रायः स्वार्थ और विद्यानिप्रवतासे म रतकी समीचीन वर्णे व्यवस्थाका छोप करना चाहते हैं। और अपनी आम्बंतर पागबासना सिद्ध करनेके छिये अनेक कतकी द्वारा जाल स्वते हैं।

इन सार्थमयी नालोंसे बास्तविक मारतका मौरव नहीं होगा किन्तु वावाचरण-प्राधानार-(बक्ष्युत्ति) और विभन्त दुर्गुणों की वृद्धि होनेसे भारतीय संतान विशेष शुःय-धर्म कर्म रहित भौर हरच्छेद हे गी। रोगों ही वृद्धि-भाउहनकी सेवा प्रकट होगी।

हानि प्रमझ रहे हैं वे बड़ी मूक्ष्में हैं। इस मैनेनर, दि० जैन पुस्तकालय-सुरत।

विषयमें मारतीय इतिहास ज्यकंत प्रकाश बाक रहे हैं।

अनेक रानाओंने अपने सर्वत्य नाशकी परवाह न कर अपनी प्रत्रियोंको सुगळ सन्नाटके ह्याबीन नहीं की इसका कारण वर्ण ठयव स्थाका अभिमान है और वही अभिमान भारतका गौरव पद है। अने क रमपुत कन्या भीने असहा विपत्ति सहन काळी परंतु विनातीय पुल-पद मुगळवादशाहोंके साथ संवेत्र हवीकार नहीं किया और मारतके गौरवकी रक्षा की । विना-तीय और विवर्ण संबद अहितकर और नेष्ठ है यह विचारका अपने स्वार्थकी परवा न की। शुद्ध रन और वीयैसे उत्पन हुई संतान सदैव विकट सप्यमें भी वर्मस्था कर सक्ती है। पा-णोंकी बाहुति समर्थण करनेपर मी अपने छुजा-चारकी रक्षा और पवित्र धर्मका मान स्थिर (अपूर्ण) रखती है।

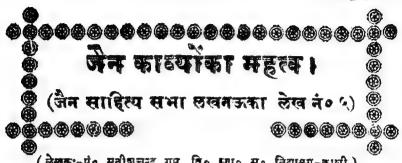
नवीन ग्रन्थ तैयार !!

स्वसमरानन्द ।

पूज्य अरु शीतलप्रसादजी द्वारा 'नैन-मिन में बीर सं ० १४६८ से ४९ तक ६८ अंकों में कि लिन "स्वसमरानन्द" नामक उत्तव विषयको अनेक महाशयों की सुचनासे प्रस्तकाकार बिद्धानों हो मारतकी मंद्राईहा विचार करते ज्ञयाकर हंगने महट किश है। इसमें श्रीमती समय अपने कायर मनको शांत रखना चाहिये पंडिता चंदाबाईजी आराने खास सहायता और अपने स्वार्थसे संसारका प्रतारण नहीं करना दी है इससे करीब ९० प्रष्ठकी प्रस्तक हो मानेपर वाहिये। जो मनुष्य वर्णव्यवस्थासे मारतकी राष्ट्र मी इसका मुल्य छागत मात्र सिर्फ लीन आनि है।



प्रसिद्ध देशभक्त व जिनवाणी सेवक-श्रीमान् मेठ पदमराजजी रानीवाले-कलकत्ता (जेल महेलसे अभी ही माप छूटे हैं)



(लेखक:-पं सतीशचन्द्र गुध, वि स्था० म० विद्यालय-काशी)

मीयुक्तचन्द्रप्रमुखन्द्रकान्तिः निन्यायं स्वक्षेः सुवि व्याप्तकीर्त्तिः॥ कस्य स्वकान्त्या जितसूर्यविम्बः चन्द्रोत्तरो "माणिक"माँ तनोतु ॥१॥ अयि काव्यरिक सज्जनवृद्ध !

जैन काव्योंका महत्व छिलना ऐसा ही जैसे कि एक शिशुका शिशुचन्द्रका प्रहण करना, या कोई साधारण चित्रकार विचित्रानार प्राकृतिक रचना सौंदर्यकी, सुन्दरना चित्रमें विचित्रकारे, तदनुसार में भी अपने उत्साहको आपके समक्ष पत्यक्ष समर्थित कहंगा।

यह दिगान मौड़ न्याय शास्त्रकारका कथन है कि कोई विषय सम्बन्ध, अभिधेय, शक्यानुष्ठान इष्ट प्रयोजनसे समयुक्त होता है, अथवा जो कुछ मी लेखन, या वक्तव्य होता है वह वैदिक व प्राचीन, अर्थाचीन मतानुसार आउ अंगोंसे होता है। कहने का तास्तर्य है कि. उसके नामकी व्याकरणानुसार व्यापति १. स्वरूप उक्षण २. भेर प्रभेद ६. तदन्वय व्यतिरेक क्षाम, ४ अर्थात् उससे फायदा, टद्व्यतिरेक हानि ४, उसके तिया सुक्रान ६, हदुव्योग किस काममें वह काम आहका है। पूर्व अपूर्व स्थित ७ और सन नार समृद्धिसाधन ८, इस प्रकार प्रायः समी शास्त्रकार मानते हैं, अन्वया मनुष्यों हा उसमें अनादर होनाया करता है, इसिक्ये एवं प्रकारसे तथा व्याकाणातुमार व्यूपित पूर्व के जैन-काव्यमय कानककटोरीका रसास्वादन जैन काव्यों में ही है, क्योंकि तब हम संवारके सपहत सरस काव्यों हो स्वममक्ष समुपस्थित करते हैं, तब जैन काव कुं रे कुर्देश हो किसब्द किरणींसे-काव्यक्रमुद कुसुमित होनाते हैं। तथा उसी चन्द्र हो चित्तवीरिणी चां नी. चकोरिणीके वित्तको चमत्कृति उत्पन्न करती है। वप, उस सन्य कव्य हमु की मुदी मेमियोंके किये प्रेमी. और प्रेमी उसके प्रेम पुनःरी हो जाते हैं।

अथवा उन नी है पी है का है का है हरिया है या रंगिवरंगे मेत्रपण्डलकी छायानल में बाष्टचंद्र, और सघनसुगन्वितसे भाच्छत्र भाम्र आम्रकतिकाओंपर कुहू कुहू करनेवाली र ली काकी कोकिटा, तथा कर कठ कटको करनेवाले कोक पक्षी, और गुराव, वे वहा. जुही.

मोद-१ छक्ष्मी, २ न्यायताल, ३ किरण, ४ आत्मनः, ५ श्रियम्।

चमेली, आदि विचित्र पुर्वीपर विहार करनेशके काले काले अपर, व प्राकृतिक नानाप्रकारके हर्य, कनकविनितामय कनक पूटा प्रमुख्यके संकृचित हृदयक्रमलको लेसे सगद्भर और हर्षित विकसित करते हैं, वैसे ही काल्ड कुंतमें, शृंगार, वीर, कहणा, शांतादि रस, उपमा उपमेय चित्रादि विचित्र अरुद्धारोंसे प्रमुख्यका हंह चित्त, शृंगार, वीर, कहणा, या शांतरहमें मीग जाता है। तथा वार २ उन आनन्द रहियोंमें छहराया करता है। तदनुसार जैन काल्योंसे आनन्द और आनन्दके साथ २ अनुस्म अनिवंचनीय आनंदकी प्राप्ति होती है।

भा यहां पर यह ६श हो सनता है कि काव्य नया वस्तु है और इसकी क्या व्याति है ?

श्री जैन व्याकरण मत जुनार इसकी खुरपत्ति इस प्रकार हो सकती है कि " जिनो-देवता यस्य स जैनः जैनानं काळ्यानि, तेषां महस्वमिति जैन काळ्यास्टर्स्स " अर्थात् जैन काळ्योंका महस्व, अथवा जैन काळ्योंमें नहीं है । अथवा वेवळ काळ्य राज्यकी ज्युस्पत्ति की महस्व (खूबी) है, जैनेतर काळ्योंमें नहीं है । अथवा वेवळ काळ्य राज्यकी ज्युस्पत्ति की जाय तो कि " वश्च अश्च इति वौ तौ ज्येति प्राप्ती त तत काळ्यं अर्थात् आरमधुल या स्वर्गादि सुल, मोक्षको प्राप्त करता है या कराता है उसे काळ्य कहते हैं, वयोंकि "वतु-वंगक्षकाित काळ्यादेव प्रदर्मने " अर्थात् धर्म, अर्थ, काम मोक्षकी प्राप्ति काळ्यसे ही होती है । अथवा कस्य ब्रह्मणः विः पक्षी इति कि कि कि कि विरित्त अपिति कि तिः तस्य कर्म काळ्यं अर्थात् वित्त प्रकार हंस पक्षी दुव पानीका मेदकर सार भाग दुधको प्रहण करता है, उसी प्रकार कि विद्व न दुर्गनतािदि हेय पदार्थोंको छोड़कर सार अगा दुधको प्रहण करता है, उसी प्रकार कि विद्व न दुर्गनतािदि हेय पदार्थोंको छोड़कर सार अगा दुधको प्रहण करता है, उसी प्रकार कि विद्व न दुर्गनतािदि हेय पदार्थोंको छोड़कर सार अगा दुधको प्रहण करता है, उसी प्रकार कि विद्व न दुर्गनतािदि हेय पदार्थोंको छोड़कर सार अगा दुधको प्रहण करता है अर्था कर्मा काळ्यका प्रथम कक्षण क्रकार ही हेते हैं, तब भी इसका स्थान सर्वोच्च सिद्ध होता है वर्योंकि जैनेत्व महत्व सर्वाच विद्यों ये वष्ट स्थानीय है ते हैं, तथा यह छाजनों में प्रथम ही गणित होनेसे इनका सबसे वर्णोंसे विद्येष अर्थ प्रतिपादवस्त है, यही वहा है कि—

"ककारः सर्वविश्वानां मुळं पक्तिरेव च, काकाराज्ञायते स्वि कामं कैयल्यः मेव च " अर्थात-हकार सर्व वर्णी मुळ प्रकृति है और कहारसे सब क प तथा कैवल्य केवळ्यान प्रस होता है। अथवा " कवते दीव्यते मस्तकोपि शोपते " इति मावः। अर्थात सर्वोत्त है से पस्तकपर मणि शोपता है, वैसे ककारवर्ण शोपा सहित बांछित फड़को देता है। इव्छिये यह विद्ध हुआ कि (रानापत्यंत्रमुणोक्तिरानादिम्यः कृत्ये च ट्यम) अर्थात इस नैतिन्द्र महाभाष्य सुत्रसे "ट्यम्" प्रत्यय करके काव्य शब्द विद्व होता है।

भव यहां प्रश्न हो सकता है कान्य क्या वस्तु और क्या इक्षण है ? तो एक हिन्दी परिभाषासे विवित होता है कि—''परस्पर एक दूसरेको सहायता चाहनेवाले तुरुपक्षण पदा-थोंका एक साथ किसी एक सावनमें लगा देश' कान्य कहलाता है । इससे संस्कृत म पाके कान्य सहित सरलता, माधुर्य, रहाधिक्यता, मनोहरता, पदयोजना, अर्थगृद, अक्षर अहर, माव प्राचुर्य, कांति, प्रसन्नतादि गुण समझना चाहिये।

इसिलिये कविद्धअरोंने काव्यका विव्रक्षण व्याण विवेचना और गम्भीरतापूर्वक यही किया है कि:-

" चमत्कृतिजनकतावच्छेदकं धर्मवत्वं काव्यत्वम् । ''
बर्धात-मनुष्यके हृदयको चमत्वार उत्यत्र करनेबाटा धर्म ही काव्य कहहाता है ।
अथवा-''रमणीयतामितिपादकार्धशब्दः काव्यम् । ''

अर्थात—उत्कृष्ट तथा मनोहरताका प्रकट करनेवाला शब्द काव्य है, क्योंकि शब्द रमणीयता काव्यकी वाह्य ल्यावल्लरी है। प्रथम तो शब्द सीन्दर्य ही सहस्य हायी मानवींको काव्य पड़नेके लिये शीध उत्सुक बना देता है। प्रधात रस, माव, तथा अल्क्कारादि मानस सरोवरमें स्वकीय काव्य कविता कलिकाका विकास करते हैं तथा काव्यका लक्षण इस प्रकार भी करते हैं कि:—

" चतुरचेतश्चमत्कारि कवेः कर्मकाव्यम् "

अर्थात-बुद्धिमान प्रश्नोंको चमरकार उत्पन्न करनेवाज्ञा कविका वर्मकाव्य शब्दसे व्यवहा किया जाता है। अथवा-साहित्यदर्भणकारने इस प्रकार उक्षण किया है कि-''वाक्यं रसारमकं काव्यम् '' अर्थात इस शृंगार, वीर, आदि नवों ही रसोंसे ग्रक्त काव्य कहा जाता है। यद्यपि यह उक्षण सर्व जगह व्यस नहीं होता है, तथापि यत्र कुत्र स्थानमें सुगंठित होता है, वर्षोंकि विना अर्छकारसे, और निर्शेष विना काव्य अञ्य नहीं होता है इसक्षिये बारमट कविने इस प्रकार उक्षण किया है कि-

" शब्दार्थी निर्दोषी सुसगुणी प्रायः सालङ्कारी काव्यम् " यहीं " काव्यप्रकाश " कारने उक्षण किया है कि—

" तददोषी भान्दार्थी सगुणी अनलङ्कृति पुनः कापि "

अर्थात वाक्यार्थ पदादि दोषोंसे रहित, अलंकारोंसे युक्त, औदार्थ, वांति, माधु-र्यादि गुणोंसे युक्त शब्दार्थ काव्य कहा जाता है, वर्योक्ति रसात्मक वाक्योंके होनेपर भी सीन्दर्यादि गुणोंसे रहित और सदोब होनेसे काव्य प्रशंसाको प्राप्त नहीं होता, अतः उक्त कक्षणोंसे युक्त ही सरकाव्य होते हैं। तथा पदलकित्य, अर्थगौरवता विषयगृहता, रस पूर्णना, सुन्दरता, ह्रस्रोचकता, और शान्तता आदि गुणोंसे गुक्त काव्य है तो जैन काव्य है। काव्यके मुख्यतया तीन भेद हैं परन्तु इनके आंशातर बहुत भेद हो जाते हैं। वे ६ भेद इस प्रकार हैं कि 'गद्यपद्यमिश्रश्च विविदा' अर्थात् गद्यकाव्य, पद्यकाव्य, और गद्यपद्यभिश्रित, जैसे यश्चित्रद्यक, जीवन्द्यर चम्यू आदि छेकिन यह सब काव्य, निर्दोष होनेपर ही श्रव्य होते हैं, वर्यों कि एक कविका बचन है कि—

" अव्यं भवेत्काव्यमतृषणं यन निर्गुणं कापि कदापि मन्ये । उत्कोरकः स्यात्तिलकाचलाक्ष्याः कटाक्षभावैरपरे न वृक्षाः ॥ १ ॥ (" वर्षशर्मम्युद्व ")

अर्थात्-निर्दोषकाव्य श्रव्य होता है, निर्मुण कभी नहीं, ऐसा में मानता हूं, जैसे कामनीके कटाशोंसे तिलक नामका वृक्ष किल्योंसे युक्त होता है, और दूसरे वृक्ष नहीं कोरिकत होते । इसल्ये निर्दोष काव्य सुकाव्य खौर श्रव्य होते हैं, और ऐसे ही काव्यों द्वारा वास्तवमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्षकी प्राप्ति होती है। नयोंकि काव्य काव्यक्तं भर्मे धर्म, अर्थ, काम मोक्षके लिये, अन्गेल अनावृत कपाट द्वार हैं। जो मनुष्य जिस वस्तुकी एक्ला करता है, उसके काव्य कंत्रमें सरलरीत्या प्रवेश हो जानेसे इन्लित पदार्थ की सिद्धि हो जाती है क्योंकि किसी किसी किनके ये बनन हैं कि वे महारमा धन्य हैं तथा उन्होंका यश सदाके लिये स्वर है कि जिन मानवींने काव्य करक कटोरियोंका बनाया है, व उनमें जिन महानुमार्थोंकी कथा गाथा गाई गाई है, वे प्रण्यवान, यशस्वी, कीर्त्ति कौमुदीश कहलाते हैं गा

काव्य, कविता, जनताकी विद्वत्ताकी इयत्ता, सहद्यता, चतुरता, घार्मिकता, रचना-छुन्दरता, तथा उपम उपमेय इत्यादि भाव उसकी प्रतिमा पर प्रतिमासित कर देती है। काव्यके दक्षणानुनार पदकारित्य, सुंदरता, रोचकता, भावग्रमीरता, मधुरता, अनिर्वयनी-यताके साथ १ हुआ करती है। इसलिये मनुष्य अपने २ अमीष्ट पदार्थीमें संदरन हो अमीष्ट सिद्धि प्राप्त करते हैं। फरू भी इनका यही है कि—

⁶ काव्यं यशमेऽर्थकृते व्यवहारविधेशिवेतरक्षतये।

सन्यः परिनर्शतये कान्तासंमिततयोपदेश युजे ॥ १ ॥ (काञ्यमकाश) अर्थात्—काञ्य यश-कीर्तिके हिये, व्यवहार विधि, अकल्याणके नाशार्थ, श्वाञ्चनिवाणिर्य, कांतासंभित उपदेशके हेतु—निमित्त किया जाता है, इससे यह ताल्पर्य है कि श्री रामचंद्र दिकी तरह प्रवर्तना चाहिये रावण आदिकी तरह नहीं, कीर्ति आदि पूर्वोक्त गुणोंकी प्राप्ति, और व्यवहारादि दक्षता इसीसे होता है, इसीव्यि हमारे प्राचीन कवीरवर और किव आकार्योन कार्योक्त प्रणयन तथा उपयोग किया। अतः प्ररातन काल्में हिसा, हीनता, हास्य, हिनक, हास, हेना, (अपमान) हुंबाद और हठता आदि हेय दुर्गुणोंको कल्मुहसे इसाहकर अर्हिता, हर्ष, हित, हित, हित, हिस्मत, होम इत्यादि हित करनेवाला काव्य कम्मण-

धीशको नामत किया था, तभीसे दीर्घर्शिताके मेमी बनते हुये, सुखाय नीवन वितान हो थे, यह सब कान्यकी महिमा थी, क्योंकि साहित्य—कान्यका चमकीला चंद्रमा नहां चमका रहता है, वहां उस देशका, नातिका भाग्य, धन, ऋदि सिद्धिकी समृद्धि घन घमें घाम आदि सबके लिये घाम बना लेत हैं, और नहां तद्व्यतिक अर्थान नहां जिस देशमें, कान्यकुंनमें कमछाधीशकी किरणें नहीं पहुंचती हैं, वह देश, नाति, धमें, धन, घाम आदि अधोमार्गकी नसेनी बनाकर सीचा पातालवास कर लेते हैं। तथा दुर्मिलादि रोग, अरी, मरी आकर कालके मास बना देते हैं, क्योंकि किसीका कहना है कि—''मुदी है वह देश नहीं साहित्य नहीं है' अर्थात् वह देश मुदी कहलाता है कहां साहित्य वित्य दित नहीं है' अर्थात् वह देश मुदी कहलाता है कहां साहित्य दित्य दित नहीं होता, अत्यव चाहिये कि काव्य रचयिताको व तदिवयके ज्ञाताओंको साथ प्ररस्कारके यदिसाधनमें तत्यर हों, जिससे देश नाति, धन, धमें घाम आदिकी वृद्धि हो, और यही हमारा १७ प्रयोजन होना चाहिये, साथमें यह भी च'हिये कि साहित्य—काव्योंकी बढ़ी कहीं आलोचनारें हों।

इसकी पूर्व स्थित बहुत ही उन्नत दशामें थी, यहांतक कि राना भीनके समयमें कर्नी इनरों को एक एक अक्षरका लक्ष रुपया प्रस्कार मिलता था। लेकिन आधुनिक स्थिति-पर विचार करते हैं, तो बहुत शोक होता है, आप प्रस्थक देख लें, और निस नातिमें साहित्यकी उन्नति है वह नाति उन्नति पथपर है, और बुद्धिमान कहलाती है, हष्टांतके लिये बद्धला जाति है, बद्धां में सबसे ज्यादा प्रचार है, और उनीका साहित्य सबसे ऊंचा है। बस इसी तरह हमको इस समय उन्नति करना चाहिये। निससे इस अिलल मारतवर्षमें यह प्रसिद्ध हो जाय कि जैन साहित्य (काव्य) भी एक चीन है, और जैन साहित्य पर मी लोगोंकी अंगुली गिरने लगे। साथमें काव्यक्षं नमें अलंकार, रस, पदल्खित्य, उपमा, उपमय, विक्ष वचनों में साम्यता उच्च मानी जाती है, वह जैन काव्यों विशेषतया पाई नाती है, यह निर्विवाद सिद्ध होनाय।

मारतवर्षके सम्पूर्ण कर्वा इवर्गने काज्यरचना चातुर्थमें अपने मानस सरोवरमें प्रतिकृति हंसिनी स्थापित कर दी है अतः जो उस प्रतिकृतिके जाननेवाले मानवोंको भी कवि — अर्थात विद्वान कहना आवश्यकीय है। हम जैन काज्यों की तरफ दृष्टिपात करते हैं तो ऐहिक पारलोकिक सम्बन्धी श्रेयस्कार्योका कल्पवृक्ष बनाकर कवितामय एक इम्रुमित काज्यकुंत्रमें अन्य अन्य कवियोंने काज्यक्लाओंसे कल्पक्लित, कौर कल्जि काटनेवाले उस वृक्षके (मुननस्तवक क्रणा दिये हैं। तथा उस काज्य कल्पवृक्षको साल्हादित विकसित शोभित करनेवाले स्वक्त (गुल्हे) के द्र्यन कर द्र्यक्रण स्वर्गसुलको भी ओल्डा समझने क्रणते हैं। विशेष तो क्या उनके हृद्यक्षण उत्त साहित्य सागरमें निमन्त हो सदा

मुखपूर्वक विकोडन किया करते हैं। निससे आस्माकी काकिया, अपवित्रता, अरोपकता, अपमान, कुक्धान, व्यवसान, अज्ञान प्रधायमान होजाते हैं, और इसके अनन्तर दर्पणकी तरह जाजवरुपमान, ज्ञानमानु प्रकाशित होनाता है, पश्च त अनन्तपुल, वीर्ध दर्शति गुण प्रस्ट होते हैं। तथा आत्मा कर्ष समुहोंको नष्टकर मोश पदवीको प्रस कर हेता है, लाज यही बात जैन कार्गोमें बडे महस्वकी वतकाई है।

अब इसके बाद अर्छकारोंके नियममें कुछ बना देना उचित समझता हूं। वर्षोंकि दोषोंसे रहित होनेपर भी तथा गुनोंसे संयुक्त होने पर भी विना अर्छकारोंसे बाणी शोभाको प्राप्त नहीं होती है जिस तरह स्त्री विना आभूषणोंसे नहीं शोभित होती है। अतए कर्छकारोंका होना वैसे ही अवस्थक है, वे अर्छकार उपया, उत्येसा, रूपक, दीपक, आदि मेद प्रमेदोंसे नाना तरहके होते हैं। टेकिन मुख्य भेर दो ही हैं, शब्दालंकार, अर्थालंकार उपर्मुक्त तो अर्थालंकार परिगणन किये हैं और शब्दालंकारके छः भेद हैं-यय'-चित्र, इदेव, अनुप्रास, यमक, वक्तोक्ति, तथा प्रनहक्तथरामास, ये छः होते हैं। यमकादि प्रायः सर्वन तोभदादिवन्धों प्रायः श्लोकवद्ध होते हैं।

कार्क्योंकी रचना भी र्शतिके अनुभार श्रीतिर यह होती है, इस्लिये गाँडीय, वैदर्बाय आदि देशरालके अनुभार करना चाहिये ।

रसोंके बारेमें इतना ही वहना होगा कि जैनेतर काव्य प्रकाशादि प्रन्थोंमें के बङ आठ रसोंका विवेचन किया है, वह इस प्रकार है कि—" जुंगारवीरव हगाद्धितहास्यमयानकाः " इत्यादि पश्चात् जिलते हैं कि " शान्तोऽपि नवमो रसः " अर्थात् हान्त नामका भी एक रस है, इसमें अनैन कवियोंकी निर्भेश बुद्धि है, खतः निर्पेश बुद्धिते ही यह वाक्य है। छेकिन हैन वर्वाश्चांने इसको खूब अपनाया है। यहां तक कि इनके प्रत्येक काव्योंके अदिमें, मध्यमें, अन्तमें, खूब ही वर्णन किया है, और बास्तवमें चाहिये भी यही वर्षोंकि इसीसे आत्माका कल्याण होता है।

श्री वारमटकिव अपने वारमहाइंकारमें डिखते हैं कि—

" साधुपाकेष्यनास्वाद्यं मोज्यं निर्रुवणं यथा। तथैव नीरसं काव्यमिति ब्रमो रसान्निहः॥

अर्थान-नित तरह भोतनका अच्छी तरह पाक होनेवर भी विना सैन्यन (नमक) के अच्छा नहीं हगता है, उसी हरह नीरस काव्य भी अच्छा खीर अन्य नहीं होता है। अतः यहां भी रस कहते हैं-

शुंगारवीरकरुणाङ्गतहास्यभयानकाः। पौद्रवीभस्सवास्त्रास्य नवैने निश्चिता बुर्षः॥ खर्यात्-बिद्वान् पुरुषोंने कृंगार, बीर, करणा, अद्भुत, हास्य मयानक, रीद, बीमत्स, और शान्त ये नव ९ रस कहे हैं। और इनके भी स्थायी भाव, अस्थायिभाव अर्थात रित, हास्य, शोकादि भावोंका बिरत र निया है। इप प्रकार सम्बन्धादि फल, लामादि पूर्वक यह 'स्वश्चम उपोद्धाल'' बाद हम जैन काज्य और इतर काज्योंको देखते हैं तो पदलालित्य, अर्थगौरव, शान्दगौरण, विषयगहरूता, रसपूर्णता, सौन्दर्शिद गुण जैन कार्योंमें पाये नाते हैं, उतने अत्यमें नहीं पाये नाते हैं। यह बात नो विद्वान् व जिनके पास संज्ञान पेटी हमी कसीटी है वे स्वयं इस संदर्शन जान सकते हैं:—

दशांतके लिये "क'दम्बरी" न'म उच्च ग्रंथके कुछ अंश आपके समक्ष उपस्थित करता हूं। कादम्बर'के रचयिता वारस्थायन वंशमें उरपल कुवेर नामक विद्वान उनके चित्रमान और चित्रमान के सुप्रत्र श्री वाणकि हैं। इन विकासिय काछ अभी ठीक र निश्चित नहीं हुआ है, ित इतिहामने साओं को तथा मुझे भी जहांतक पता चळा है तो यही मालूम होता है कि राजा हंतवर्धनके समयमें से किये हुये थे। और हंसवर्धनकी समामें प्रतिष्ठा प्राप्त की थी, उक्त राजावा समय (६१०) (६९०) है। इनसे सिद्ध होता है कि इसी समयके अरीव वरीव हुये होंगे। इन विकी प्रशंसा एणमान्य मनुष्य बहुत करते हैं और चाहिये भी, हे किन यह प्रशंसा तबतक ही ठीक होती है, जबतक इनसे अच्छा काव्यक्त करते हैं विक्रमाल विकास की तो स्थित न हो, नहीं तो "निय्त्वपाद देशे एरण्डो प्रित्न अर्थ " काद्मवरी" नामक गर्म वाल्यमें प्रथम ही राजा श्रुदक्ता वर्णन करते हैं कि—

आसीद्शेषनरपतिशिरः समभ्यार्चितशासनः पाकशासन इवा-परः, चतुरुद्धिमेखनाया सुवो भर्ता, प्रतापानुरागावनतसमस्त सामन्तचकः, चक्रवर्त्तिलक्षणोपेतः, चक्रवर इव करकमलोपलक्ष्यमाः णशङ्खलाच्छनः, हर इव जिनमन्मधः, गुह इवापतिहत्रशक्तिः, कमलः योनिरिव विमानीकृतराजहंसमण्डलः, जलविरिव लक्ष्मी प्रसृति, इस्याचेताहृशः श्रद्धको नाम राजा।

अर्थात्—समस्तरा नार्भोपर शासन करनेवाटा दुःरा इन्द्र ही हो, चार समुद्र मर्था सामि पृथ्वीका स्वामी, प्रताप तुरागसे राजमण्डको अवनत कर दिया है, चक्रवर्तीक्क्षणोंसे युक्त, श्रीकृष्णकी तरह हस्तकमरूमें शंख, चक्रको धारण करनेवाटा, अर्थात हस्तमें शंख चक्र दि प्रशस्त चिन्होंसे युक्त था, श्रीकृष्ण भी साक्षात २ शंख दक्रते युक्त ही है, और महादेव-की तरह कामदेवको भीतनेवाटा, अर्थात् कामदेवने महम कर दिया तदसुसार हमने भी उसे महम कर दिया, हिकित यह वात अतुम्मव माळुम होती है, वर्षोकि आगड़ी चक्रके इस राजाको साक्षात् कामदेव ही बना दिया है, ब्लीर इस गद्यमें केवळ वीररस, तथा उपमाका

अब देखिये जैन कर्बाधार श्री हरिश्चन्द्र और श्री कवितिह श्री वादीमितिह जिनका सांस्कारिक नाम अजितसेन भा, हेकिन पंडितोंने इनका प्रचुर पाण्डित्य देखकर "वादीमितिह" यह नाम रक्खा । इनकी रचनाचातुर्यसे विद्वत्ता, वर्मज्ञनादि गुर्गोसे प्रसन्त हो जब पण्डितोंने वादीभितिह ये नाम रक्खा तो न जाने इनकी कितनी विद्वता होगी । हम यहां पर श्री हरिश्चन्द्र किक गद्यसे मिलान करते हैं, जिससे पाउक समझ जावेंगे कि किसकी गद्य रचनामें सौन्दर्य तथा पदलालित्य, अर्थगौरव है ।

यश्च किल संकद्न इव आनिद्तसुमनोगणः, अन्तक इव महिषी-समाविष्ठतः, वरूण इवाशान्तरक्षणः, पवन इव पद्मामोद्रुचिरः, इर इव महासेनानुयातः, नारायण इव वराइवपुष्कलोद्योकृत घरणीवलयः, सरोज सम्भव इव सकलसारस्वतामरसानुभूतिः, भद्रगुणोऽप्यनागः, विद्युधपतिरपि कुलीनः सुवर्णधरोप्यनादित्यागः, सरसार्थपोषक वच-नोऽपिः नरसार्थपोषकवचनः, आगमाल्याभितोऽपि नागमाल्या-भितः, एताइशः सत्यन्धरनाम राजा।

वर्षात-महाक्वि हिश्चिन्द्र रानाका क्रणेन इस शैकी से करते हैं कि राना सरवन्तर हन्द्रकी तरह देवता समुहको और (शन्दरनेवसे बतलाते हैं) विद्वाननोंको प्रसन्न करता है, तथा देवताओंको ही प्रसन्न करता है, अतः इस रानामें इन्द्राधिक्ष्य द्योतन किया, इतने ही वाक्यमें अतिशयोक्ति, इलेव, उपमा, उपमय, शन्द संदर्भ, अर्थ गौरव कितना है! यह आप स्वयं विचारें। अन आगे चिल्लये। क लकी तरह महिवीसे युक्त है, यहांपर भी वही कात है, अर्थात् राना महिवी-रानी, और काल महिवी-मेंत्युक्त है। वरणकी तरह दिवाओंको रक्षण वरनेवाला है, अर्थात् वरण देवताकी तग्ह है तो वरण दिशाओंकी रक्षा करता है और आशाओं यानी इन्लाओंको अंत पर्यंत रक्षा करता है। वायुकी तरह कपलकी पुर्गं पे से युक्त है, अर्थात्—वायु पदाकी आगोद पुर्गं पिसे रुक्ति है। वायुकी तरह कपलकी पुर्गं पे से युक्त है, अर्थात्—वायु पदाकी आगोद पुर्गं पिसे रुक्ति है। श्री कुल्लकी तरह पद्मीको प्रारा करनेवाला है, अर्थात् आगे कुल्लने वगहावतार पारण करके प्रध्नीका उद्धार किया है, और यह राना, वगहपुष्कलोदण-अर्थात् केल युक्तमें पुष्कल-विशेष उद्यसे घरणीवस्थ्यको वारण करनेवाला है, क्यांत श्री कुल्लने वगहावतार पारण करके प्रध्नीका उद्धार किया है, और यह राना, वगहपुष्कलोदण-अर्थात् क्रेल युक्तमें पुष्कल-विशेष उद्यसे घरणीवस्थ्यको वारण किया है। इत्यादि, देखिये कित चतुरता बुद्धिमतासे दोनों पक्ष वटाते हुये, रचना सीदेये, पदलावित्य, अपना, उपमय, उपमय, विरोध, अतिशयो कि, व्यतिरेकादि अर्थकारोंसे कैसी

सिजित गद्याचना की है। तथा, इन्द्र, क्रुतान्त, वरुग, पत्रन, महोदय, श्रीकृष्ण, ब्रह्मा नादि देवताओं का भारोप किया है। यह बात इस ब्रगहकी रचना वाणकविकी नहीं है। तथा भीर भी राष्ट्राका वर्णन किया है कि—

" वकं चन्द्रमभं यहुजयुगमजितं यस्य गातं सुपाइर्वन् ।" कृत्स्नं स्वाधीनधम्य हृदि पुरुवरितं क्रीतलं सुवतास्यम् ॥ राज्यं श्रीवर्दमानं कुलमतिविमलं क्रीत्तिवृन्दं त्वनन्तम् । सोऽयं प्रत्यक्षतीर्थेका इव विजयते विक्वविद्याविनोदः ॥ (बीधवानम्

अर्थात्—वन्यूणे विद्य औं का विनोदी, रामका चन्द्रके समान मख, किसीम भी नहीं जीते गये भुनयुगळ, अच्छे पारवीम युक्त हारी, स्वाधीन धर्म कार्य स्तनेवाला, अष्ठवरित्र युक्त, शीतळ सुवृतोंसे युक्त, मदा वर्द्धमान राज्य, कुछ अत्यन्त विमळ, कीर्तिवृत्दमे युक्त है, इस प्रकार प्रत्यक्ष तीर्येशकी तरह विनयको प्राप्त होता है। यहां हो हो स्वती है कि पत्यक्ष तीर्थकर किप तरह तो यह न्याय है कि 'नामकेशो नामे मा अम्' वर्णात् नामके एकदेश ग्राण करनेसे सम्पूर्ण नाम ग्रहण होता है। आप मन्द्र प्रमुलन या मुलन या मुलन या प्रवृत्त नामके एकदेश ग्राण करनेस सम्पूर्ण नाम ग्रहण होता है। आप मन्द्र प्रमुलन या मुलन या मुलन या मुलन या महावीर अन्तिम तीर्थकर समान ही प्रतास ता येक्ष है हैं।

साहित्य पाठको ! 'नव्यक्षप त दृष्टिसे देखो कि श्री जैन कवियोंन किम अनुसम कवित्वदाक्तिसे सीन्दर्थ, अङ्क्षार, पद्छ छित्य और अर्थगी व किया है। इपने बीर सानः रस किम खूर्व से बतछाये हैं।

भर आपके सामने गर्धानितायिक कुछ अंश यहां उत्तरित करते हैं। इस स्व अपने कर्ता कि विक्षित्र होते हैं। इसका और श्रां वाणकविका समय एक ही र, बद मिन हत्ते पिहले हुये हैं। क्योंकि वशस्तिछकचम्पूके व्याख्याका श्रीश्च नार मुनि है, उन्होंने, द्वितीय आच्छासके १२६ में इलोक में लिखा है कि अदामिद मेर शाय हैं तथा वादिरान भी। ऐना सोमदेव सुरि रचित यश स्वक्रक में लिखा है। और सोमदेव पुरि त्वित यश स्वक्रक में लिखा है। और सोमदेव पुरि त्वित यश स्वक्रक में लिखा है। और सोमदेवपुरि तो इनसे बहुत पहिले हुये हैं। इससे और भी इनका काल पहिले निष्धत होता है।

ये भी अपने कान्यमें राना सस्यन्यरका वर्णन करते है कि-

प्रतापविनिमद्वनीपितमुकुटमणिवलभीविटक्कमेन रितवरणम्खका-नितवन्द्रातपः, करतलकवलितकरालकरव ल व्युव्वतिमिराभिमरः। इ-वविजयलक्ष्मीलक्षितसीभाग्यः, क्षत्रधर्म निकृदुद्य....लवुचम् भागवि-नमतेन महीनिवेदो फणाचकं फणाभृतां चक्रपर्सिनो अर्करपन् दिशि दिशिनि हितविजयस्तम्भः इति, इत्यादि एताहशी नाम सत्यन्थरो

इस गद्यमें वाणकविकी अपेक्षा बीर रस, समासभूयस्त्व, जो कि गद्यका खास गुण है, और इसीका नाम ओजगुण कहनाता है, नयों कि "ओनः समासभूयस्त्वं तत् गद्येष्वति सुन्दरम्" अर्थात—समासभृषस्त्व ओन गुण कहनाता है, वह गद्यमें अस्यन्त सुन्दर होता है, इस किये इस गद्यमें विशेषतया समास भूयस्त्व, पद्छान्दिय दिया है।

श्रीवाणकवि अपनी कादम्श्रीमें एक श्रगह महादवेता नामकी नायिकाके मावी पतिके माणमें विलाप दिखलाते हैं। तथा महादवेता पतिमरणसे दुःखित हो विलाप करती है।

" हा अन्य ! हा तात ! हा सख्य ! इति व्याहरन्ती तथा हा नाथ जीवितनिबन्धन ! आचश्य का मामेकािकनी पदारणमकरणं विमुच्य यासि, ईषदिप विकोक्य, आर्त्तीस्मि, भक्ता स्मि, अनुरक्तमस्मि, बाळास्मि, अगतिकास्मि, दुःखितास्मि, अनन्यदारणास्मि मदनपरिमुनास्मि"

पाउनो ! देखो कविने किस चतुरतासे वर्णन किया है, खान विनार सक्ते हैं कि इस गद्यमें अर्थ गौरव है ? और कोई कारुणिक रस भी नहीं विरोष प्रतीत होता । यहां पर हम पृछते हैं कि 'जन दुःखावस्था होती है तथा प्रतिमरणसे स्त्रीकी अत्यन्त ही दुःखावस्था हो जाती है, छेकिन वाणकि वर्णन करते हैं कि माता पिता और सिखरों को समने धन कर कि में दुःखित हुं, भक्त हुं, अनुरक्त हुं, अनाय हूं, इत्यादि कहकर कवि अन्तमें कहते हैं कि 'मदनपरिभृतास्मि' अर्थान्—कामदेश्वे परिपीड़ित हुं, देखो, विचित्र बात है कि जो स्त्री प्रतिमरणसे दुःखित है वह ऐसा वाक्य किसे कह सकती है ! मेरी समझसे तो कोई न कहेगा, यह केश्र श्रीनाणकविकी न्युनता है।

भच्छा, अन इसीका वर्णन कविसिंह श्रीवादीमिनिहने किया है। हा, मनोनाकार रूप ! हा, महागुण मिण्डिप ! हा, मानसविहारराज्ञ इंस्ट्रेस्स ! हा मदनकेल्चितु (भूर ! मम पुण्ये । कासि कासीति विरुपन्ती, शोकिविषमीहिताङ्गी लताङ्गी तां प्रात्यादन्ती काचित् देवता गिरमुत्थापयामास ।

इम रचना दीलीको आप जान सकते हैं किस सौन्दर्यसे, पदलालिख तथा कारुणि ह रससे कविने वर्णन किया है। और भी देखिये कि कहीं ९ इनका गद्य विस्कुल मिनता है, सम्भव भी है कि इन्होंने इससे सहायता ली हो। जैसे—

"वत्स ! वलनिष्दनपुरोशसमपि स्वभावतीक्षणया धिषणया धिक्कुर्वति सर्वपर्धानपाडित्ये भवति पद्यामि नावकाद्यासुयदेशानाम् तदपि कल्दाभवसङ्खेणापि कवलियतुमदाक्यः प्रलपतर्णिपरिष दाष्पद्योष्णो यौवन प्रत्मा मोहमहोद्धिः, अद्योषभेष प्रप्रयोगवैफल्य निष्पादनदक्षी लक्ष्मीकटाक्षविक्षेपविसर्वी दर्पज्यरः । मन्दीकृतमणि-मन्त्रीषधिप्रभावः प्रभावनाटकनटनसूत्रधारः स्मयापस्मार इति किं-चिदिह शिक्ष्यसे।" (गद्यचितामणि)

नत, ऐसा ही बिश्कुल वर्णन शब्द परिश्तन कर बाणकविने किया है। जैसे-"तात चन्द्रापाड् ! विदितवेदितव्यास्याधीतसर्वशास्त्रस्यते नावल्यसुप-देष्टव्यमन्ति, केवलं च निसर्गत एव भानुभेद्यमतिगहनं तमो पाँचन-प्रभवम्, दारुणो लक्ष्मीमदोऽत्यन्ततीयोदपदाहुज्यरोपमा, अमन्त्रगम्यो विषमो विषय विषस्वादयोह इत्यनो विस्तरेणाभित्रीयसे।"

(कादम्बरी)

और भी बहुतसी जगह मिछान पाया जाता है। गद्यचिन्तामिणने शान्त रस बतछा-नेके लिये, विषय बासनादि खुड़ानेके छिये शिक्षा दी है कि-

"अभिनवविहंगलीलावनं धौवनं, अनङ्गसुजङ्गर्भातलं स्वैरविहारशैलुष इक्तस्थानमैठवर्ध, पूज्य पूजाविलङ्कान-लिधमजननी महासत्वता च प्रत्येकमपि भवति जननामनधीय, चतुणी पुनरेतेषांमेकत्रसन्निपातः सद्म सर्वानर्थनाभित्यर्थं स्मिन् कः संद्याति"। (गद्यविःतामणि)

इसी मावको क्रेकर वाणकविने किखा है कि-

" गर्भेइवरत्वमाभिनवयौनवत्वमप्रतिमरूपत्वममानुषशक्तित्वं चेति महतीयमनर्थपरम्परा, सर्वतः नामेकैकमप्येषायतनम्, किस्त समवायैः " (कादम्बरी)

काव्यमियो ियदि किर भी निष्पक्षपात दृष्टि इन गद्यौंपर डालेंगे तो अवस्य स्फ्रुट रीतिसे मालूम हो नायगा कि काद्म्बरीकी रचना गद्यचिन्तामणिसे मिछती है, और संभव है कि इन्होंने कुछ संश लेकर वर्णन किया हो, और यह भी बात है कि इनका ऐमा करने पर भी वादीमसिंहकी रचना और पदकालित्य, सौन्दर्यसे कहीं अधिक न्यून है।

अन हम कादम्बरीकी विशेष आक्रोचना, मिलान करके एक बातका संदर्श और करा देना उचित समझते हैं, वह यह है कि-इसमें अर्थकाठिन्य, शब्दकाठिन्य कहीं २ इतना है कि प्रकृत कथामाग भी स्परण रखना मुविक्र पड़ भाता है, और सरलता भी इतनी है कि हितोपदेशादिकी तरह गद्य कह डाइते हैं-अर्थकाठिन्यका एक उदाहरण देते हैं कि-

" क्रुमुदिन्यपि दिनकरकरानुरागिणी भवति " इत्यादि-अर्थात्-क्रमुदिनी चःत्रपाकी किरणोंसे अनुरागिणी होती है, ये यशंदर प्रक्रत अर्थ है, परन्तु दिन कर कठदमें सूर्यका अर्थ छोनक होता है, चन्द्रया नहीं, सो यहांपर चन्द्रया यह अर्थ छहाया है, और इस अर्थके छिये बड़ी खींचतान की है, अच्छा मान मी छि। जाय किसी तरह एह अर्थ तो यहां खापिसद्ध नामका दोष आता है, जो कान्यके सारे महत्वको घटा देता है। खिर, इसे विद्वान् मंकेतमात्र ही सपझकर श्री बाणकि विक्ती विद्वताकी इयत्ताका परिचय मान छेंगे। नयोंकि विद्वानोंको संकेतमात्र काफी होता है। यह मेरा ही मत नहीं है बिक इस विषयमें अच्छे २ मनुष्योंने हस्तकोर किया है। जैसे प्रोफेयर वैदार बाणकि विक्री एछपर अपने विचार प्रकट करते हैं कि—

"Bana's prose is an Indian wood when all progress is rendered impossible by the under-growth, until the traveller cuts out a path for himself and where even then he has to ieckon with mancious wild beasts in the shape of unknown words affright him."

अधीत जैसे हिन्दुस्तान अंगल्में उन स्वनवृक्षींक बानमें परा हुई छ टी र झाइ यों के मारे शास्तागीर गमन करनेमें असाध्य हो जाना है, और किसी तरह मार्ग लगाछ मी लेता है तो दुष्ट मयंकर जन्तुओंसे पिंड छुड़ाना पड़ता है, उसी तरह जाणकिक गध्में अपिसद शब्दोंके मारे कथोपयोगा माग समझना मुक्तिक पड़नाता है, और यदि वह मेहनतसे अर्थ निकाल म लेता है तो अपिसद और कठिन शब्दोंके समझनेक लिये प्रथक कट उठाना पड़ता है। शास्तवमें यह बात अक्षरशाः सत्य है।

अब श्री कालिदास कविके विषयमें इतना कहा। ठीक होगा कि इनका समय सर्वे सम्मन (६३४) है। इनके मीवनचित्रियसे आनाइयुद्ध परिवित ही हैं। यहांतक कि का उदासकों किवकुंतर कहते ही हैं, कोई र तो एपा कहते हैं कि यदि कालिदास केवक 'मियदुत' नामक काव्य बनाते तो भी इनका यश संमारमें चिग्म्थायी रहता, लेकिन इन्होंने, ''अस्नि कचित वाग्विशंषः' इस वाक्यपर २ काव्य बनाडाले, मो आनकत बहुत ही प्रसिद्ध हैं। जिनके नाम, रचुवंश, मेयदूत, कुमारसम्भव हैं। लेकिन नहीं कह सकते कि इन्होंने भी वैसाही काट लाट किया हो, किन्तु इस वातसे अवस्य प्रतीत होता है कि सम्मवत्या मही तहीं किया हो, क्योंकि राजा मोनरामके स्वर्गारोहणकी वात छनकर दुःखित कालिदासभीने ये कहा था कि—

"अञ्चष्यारा निराधारा निरालम्बा सरस्वती । पण्डिता खण्डिता सर्वे भोजराज दिवे गते ॥

अर्थात-रामः भोनके स्वर्गे जानेपर, पृथ्वी निराधार, सरस्वती आंटम्बनरहित,

श्रीवादीमसिंहने अपनी गद्यमें छिल। ही है कि-"अय निराधारा धरा निरा-स्त्रमा सरस्वती" इत्यादि, कविवर एक भगत और दण्डकारण्यका धर्ण व करते हैं कि-

"वासरावसानसंक्षिप्तनीवाराङ्गणनिषादिम्गगणनिर्वर्तितं। रोम-न्थम्, आलबालम्भः पानलम्पटाविह्गपेटकविद्वासकृते सेकान्तविम्-ष्टकृश्चम्लमुनिकन्यकाविवृतकारुण्यम् दण्डकारण्यम्, इति,(प्रविन्तामणि)

यही नकल कर कालिदामने अपने प्रसिद्ध रचुवंशमें दलोकपय निषद्ध किया है कि-

"सेकान्ते मुनिकन्याभिः कारुण्योज्झतातृक्षकम् । विद्वासाय विद्यङ्गानामालपालाम्युपायिनाम् ॥ आतपात्ययसंक्षित्र नीवारासु निषादिभिः। मृगैर्वर्तितरोमन्थमुदजाङ्गणसूमिषु ॥

अर्थात्—मुनि तन्यकाओंने संचन करनेके अन्तमें न्यारियों में जलर्थनिवाले पक्षियोंके विधासके लिये करणासे वृक्षोंको छोड़ दिया है। और धूरके नष्ट हो जानसे इकड़ी की हुई धान्य विशेष सहित जोपड़ियोंकी सृमिश्र वैडनेवाले सुगरोपन्थ अर्थात् वर्षणका चर्षण कर रहे हैं।

यही अर्थ वादीमसिंहकी गद्यका है।

अब हम आपका ध्यान श्री १०८ श्रीमिजिसेनाचार्यकी तरफ दिशते हैं। ये हमारे पृत्य आचार्य राना अभीवर्यके समयमें हुवे थे। और उसी समय कवि कालिदासने मेच-दुतको बनाया, और समय बानकलकी अपेक्षा बहुत प्रतिष्ठित माना गया था, लेकिन भग-जिनसेनाचार्यनीने चोरित बतलाया, इसीपर ''पार्श्वाम्युद्य'' नामक काव्यका प्रणयन किया। जो काव्य, श्रीगारससे पूर्ण था, वही वैराग्य रसमय बना दिया, तथा वेराग्यरसका संचार किया, तथा इसी प्रकार जैनसाहित्य, साहित्य विषयिक वर्णन करने पर भी अंतमें शांतरस, था मध्यमें उसका वर्णन करते हैं। इन पार्श्वाम्युद्यके अवसरणसे जैनकाव्योंकी महत्ता और मी प्रकट होती है।

आचार्यनी आदिपुराणादि बहुत कान्य प्रत्योंको बना गये हैं निनके समक्ष कोई कान्य इस ढंगका नहीं पाया जाता, अथवा जिन्होंने बनाया मी है वह इससे सहायता लिये विना न रहे हों। जैसे कालिशस कवि रहांशों लिखते हैं कि—

" अथवा कृतवाग्दारे वंशेऽस्मिन् पूर्वसूरिभिः। मणौ वजसमुस्कीणें सूत्रस्वेवास्ति मे गतिः॥

अर्थात-सूर्यवंशके पूर्व कवियोंने बाङ्गमसूख किशड़ खोळ दिये हैं, अतः छिद की

रगवज्जि-सेनाचार्यं कहते हैं--

" पुराणकविभिः श्चण्णे कथामार्गेऽस्ति मे गतिः॥" अर्थात-पूर्व विवासे शुद्ध किये कथा मार्गेने मेरी गति हो नायगी। अधितासेनाचर्य—

"क गंभितः पुराणाव्धि क महोध दुर्विधः। सोऽहं मेहोदधिं दोभ्यों तितीर्षे यामि हास्यताम्। वर्णात-गंभीर प्राण समुद्र करां, और मृत्र सरीखे दुर्गीय जन करां, वह मैं बाहु-क्रोंसे बड़े भरी समुदको तैरनेकी इच्छा करने वाला हास्यताको प्राप्त होऊंगा।

श्री काविदाप-

क सूर्यप्रभवोवंदा क चाल्यविषया मितः। तितीर्षे दुस्तरे मोहादुऽपेनास्मि सागरम्॥ भर्थात्-सूर्यवंश कहां, और अल्पविषयी बुद्धि कहां, हेकिन सूर्यवंशका वर्णन करना मानो मोहसे दुस्तर समुद्रको इटी नौकासे पार करना है।

काछिदास क्रमारतम्भन नामक काल्यमें रचना करते हैं कि—
असंभृत मण्डनमङ्गयछेरनासवाक्यं करणं महस्य ।
कामस्य पुष्पव्यरिक्तमस्त्रं वाल्यात्परंसाथवयंप्रपैद् ॥
महावविहरिश्चन्द्र अपने धर्मशर्माम्युद्यमें कल्पना करते हैं कि—
असंभृतं मण्डनमङ्गयछे नष्टं क मे यौवनरत्नमेतत् ।
इतीव वृद्धो नतपूर्वकायः पद्यक्तधोऽधो भुवि वम्भ्रमीति ॥
अर्धात्—अष्टयष्टिका विना प्रयत्न सिद्ध यौवनरूपी रतन कहां नष्ट हो गया इसी छिये
ही क्या नम्न काय होकर वृद्ध मनुष्य देखना हुआ पृथ्वीपर चूनता है ।

अब यहां पर विचारनेकी वात है कि "अहम्मनं मण्डनमङ्ग्यक्ते "इतना पूरा पद काकिदासने कुमारसम्भवमें जोड़कर दलोक तैयार किया है, तथापि, हरिश्चन्द्रकविकी रचना, सौन्दर्य, अलंहार, उन्निसामें कम ही हैं।

श्री मात्रकविको भी सारा संसार जानता है, क्योंकि यह बात प्रसिद्ध ही है कि "कान्येषु मात्रः कविकालिदासः" अर्थात क.न्यों में मात्र कान्य, और कवियों में कालिदास प्रसिद्ध हैं। आपको कालिदासके बारेमें पूर्ण परिचय मित्र ही गया है, मात्रकविकी इस प्रसिद्धिके साथ र यह भी बात है कि माध्यकविके दल्लोक अग्निसाक्षातकार बनाकर छिते गये हैं, तथा को दूषित हों दलोक हों वे इस अग्निमें जल आवें, ऐसी कविकी प्रतिज्ञा थी, अब हम नहीं कह सकतं यह बात कहां तक राज है, वयों कि इतने दलोक दूषित हैं कि

साधारण व्याकरण जानने वाळा जान सकता है। जैसे-

" संसूच्छेदुच्छृङ्खस्त्रशंखनिस्वनः स्वनुप्रयातेषटहस्य दाार्द्विणि । सत्पानि निन्ये नितरां महान्त्यपि व्यथां हयेषांमपिमेदिनीभृताम्॥ (शिशुशहनः)

इस इलोकमें ''द्वयेषां'' यह शान्य निर्श्वसण देषसे दृषित है, द्वयेषाम् की द्वयानाम् होना चाहिये नयोंकि व्याकरण (दक्षण) शास्त्र द्वयेषां न ननकर द्वारानाम् रूप ननता है। अतः द्वयानां सुदक्षण है, और द्वयेषां निर्श्वसण है, और भी समझना चाहिये। जैसे-

तनी ममुस्तलकैटयदिष, तयो चनाम्यागमसंमदः मुदाः' अर्थात्-श्रीकृष्णपरमात्मके हृदयमें नारद ऋषिके भानेकी खुशी (हर्ष) समाई नहीं। किनसेनावार्य-

वसुन्धरा महादेवी पुत्रकल्याणसम्बदा । तथा प्रमोद पूर्णोङ्की न स्वांगे नन्दमात्तदा ॥

भर्यात-वसुन्धरादेवी अपने प्रत्न करवाणकी सम्पत्तिते उत्पन्न हुए भानन्दसे फूडी नहीं समाई । यह करपना भावार्यभीकी है, इतसे सिद्ध है जन कार्योमें ही महत्व है ।

इसके अनन्तर अछंकार ब्लीर वंधोंकी विशेषता बतलाते हैं-

यह चित्राइंकार है, इसका इक्षण, बहुत कियायें, द्वितियवादमें यमक, भटाक व्यञ्जन अवर्ण अदर्णतीहरूर हों तथा सर्वतः पाठ समान हों । जैसे—

क्लोक-पारावाररवारापारा श्रमाक्षश्रमाक्षरा। वामानाममनामावारक्ष मर्द्धमक्षर॥

अर्थात हे जिननाथ, समुद्रव्यनिसदश वागीश हे सर्वज्ञ हे पापनाशक हे आद ! तुम्हारी क्षमा अरार है, अतः मुझको प्रसन्न करो, शोधित करो, रक्षा करो।

यह रहोक वैराग्य और शांत रहसे मरा हुआ है। श्री मात्रकविका सर्वतोगद्र इस प्रकार है कि-

> " सकारनानासारकास, कायसाद्दमायका। रसहवावाहसार, नादबाददबादना!!

इसका भी चित्र बनाया जा सकता है। इनका अर्थ है—िक सोस्साह नाना प्रकारसे कह्य समृहों के नाशक! शरीर तथा गति खीर वाणों के शब्दसे और वाह श्रेष्टों के नादसे बार्थों की धुनि हो रही है। इसमें किवने शब्दकी विशेषना बनलाई है। परंच इपमें इतनी हुट है कि इसमें कियाओं की बिशेषता है। रस भी सावारण है।

पुज्यवर जिनसेना वार्यने अळं हार विन्तामिन बहुत ही अच्छी तरह बतलाये जैसे, देखिये-

छत्र यंघ।

श्रीतलं विदितार्थींचं शीतीभृतं स्तुमोऽनघम्। सुविदां परभानन्दं सुदितानङ्ग दुर्भदम्॥

अर्थात् सर्वे पदार्थेज्ञ, शीतीभूत, पाप रहित, विद्वानीको आनन्ददायि कामरेवको नष्ट करनेवाछे शीतलनाथ मगवानको नमस्कार करते हैं।

हारवन्ध ।

चन्द्रातपं च सनतप्रभग्नलाभम् । भद्रं द्या सुखद् मंगल धाम जालम् ॥ वन्दामद्दे वरमनन्तज्ञयान् याजम् । त्वां वीरदेव सुरसंचय शास शास्त्रम् ।

अर्थ, स्पष्ट है यहां पर बीर देवकी स्तुति सरस्वती कण्टावरण आदिमें नहीं पाया नाता है। सर्पवन्ध-

" पहारकमहिता "

अर्थात् पहाव पता किसको प्राप्त हुआ, अथवा जार प्रहर्पोसे पुजित की गई।

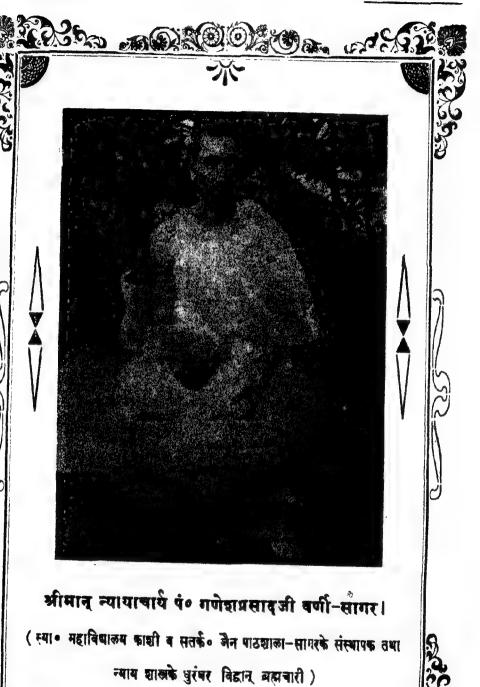
इत्यादि नाना प्रकारके बन्ध होते हैं मुरन, गोमुलिका, अष्टदल, बोड़ड़दल्य आदि समझना चाहिये, हमारे कहनेका ताल्य यह है कि ये बन्ध नैनेतर प्रसिद्ध सरस्वती कण्डामरणादिमें नहीं पाये जाते हैं। यह संक्षेपसे बतला दिया गया है, अगर अन्य काल्यों में हों भी तो इसके जैसे पदलालित्य आदिमें कम हैं। पठक ! छेल बढ़ जानेके मयसे यह विषय छोड़ कर इसी काल्यका अद्ध समस्यापृत्ति है, इस समस्याकी समस्थापृत्ति किन कविष्योंने अच्छी की है तो हम कहेंगे, कि श्री सगज्जिनसेनावार्यकी हुई समस्यापृत्तिका उवहन्त प्रमाण एक पादर्वा गुदयका अवतरण है। इनके मुकाबिलेका कोइ भी कि इनके सन्प्रदाय में नहीं हुना है। यह विदित्व शक्तिकी महिषा है कि जुंगारमय काल्यनो शान्तरसमय करदेना।

श्री कविवरकालियास और कविसिंह श्रीवादीमितिह-

" क्षत्र चृड़ (मणि" नामक काव्यको प्रायः सभी जानते हैं । अतः ध्यान दें कि यह नया है ? काळिदास—

" प्रजानां विनयाधानाद्रक्षणाद्वरणाद्दि । स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः ॥ रात्रिदिव विभागेषु यदादिष्टं महीक्षिताम् । तिस्पवे नियोगेन सविकल्प पराङ्मुखः ॥ सवेला वप्रवल्यां परिखीकृत सागराम् । अन्नयशासनामुखीं शशासेकमहीनिव ॥

(tTiv)



"जैन विजय" प्रेस-सूरत ।

बादीमसिंह-

?-सुखदुःखे प्रजाधीने तदाभूतां प्रजापते । प्रजानां जन्मवर्ण्ये हि सर्वत्र पितरो तृपाः॥

२-रात्रिंदिवविभागेषु नियतो नियति व्यषात् । कालातिपातमात्रेण कर्त्तव्यं हि विनइयति ॥

३-प्रबुद्धेऽस्मिन् सुवं कृत्स्नां रक्षत्थेकपुरीमिव । राजन्वती भूरासीदन्वर्थ रत्नसूरिप ॥ (सत्रचृदामणि)

महातुमाव ! इन इकोकॉका अर्थ ऋपशः नीचे लिखे प्रमाण समझें ।

१-प्रमाधीशकी प्रमा आधीन होने छुल दुःल प्रनापतिको होते हैं। क्योंकि रामा जन्मको छोड़कर माता पिता होते हैं।

२-रामाने रात दिनका टाइमटेबिङ (समय विमाग) बना छिया, क्योंकि काछ न्यर्थे कछे जानेसे कर्तन्य नष्ट होमाता है।

६—रामाके प्रवोधित होने पर रामा समग्र पृथ्वीको एक नगरीकी तरह रक्षा करता है। और रत्नम् प्रथ्वी रामसहित यथार्थ नामबाली होगई।

आप उक्त दर्शेकोंसे मिलान कर सकते हैं कि बादीमसिंह कृत क्षत्रचुडामणिके दर्शेकोंमें कितनी सरलता है, और प्रत्येक दलोकों नीति वान्यास्त पर दिया है। " कि काळातिपातमात्रेण कर्त्तः ये हि विनदणति " ठीक उर्दू शायरका कथन है कि " गया बक्त हाथ आता नहीं, सदा दौर दौरे लगाता नहीं " इत्यादि नीतिके उपदेशके साथ तत् तत स्थलों रहे शांत रसका—वैशायका खूब ही वर्णन किया है, धर्मशास्त्रका उपदेश दिया है। तथा पदलालिस्य, समुचित पद, हृद्यमाही हृष्टांत, हृदय—रोचकता, अनेक लोकोक्ति, मितोक्ति आदि गुणोंसे मिश्रित यह अद्वितीय कान्य है इसका प्रचार खूब करना चाहिये।

इसके अतिरिक्त हमें इसका गौरव होना चाहिये कि हमारे यहां ऐसे २ महाकाव्य-रतन हैं, जिनके सदश अभी कहीं नहीं पाये जाते, और जिनके दर्जोंकों को ही देखकर अच्छे २ पण्डित दांतों तके अंगुळी दशते हैं। जैसे—

> " क खगो घङ्च च्छी जो झाञटठड दाण तु। थाद घान्य प फ बाभामा या राख व इांब स "॥

इसका अर्थ खच्छे २ विद्वानोंने नहीं करपाया, इसका साहरय हमें कहीं विछता ही नहीं, और नहीं मी होगा। बत्तीत व्यंत्रनोंका कवशः क्लोक बनाना किसीकी शक्ति होगी। इसमें विद्वान् अनुमान ही इगार्छ। चित्रालंका के दछीक दे देना ठीक है। जैसे-

" ककाकुककुकेकाङ्ककेकिकोकैककुः ककः। अकुकोकः काककाकुककाकुकुककां ककुः॥

तार में माल-यहां पर कवि समुद्रका स्वामाविक वर्णन करते हैं कि-नडचर, मयूर, चलवाक, तथा मछके कार्कोका रक्षक, और विष्णुका निवास स्थानभूत ममुद्र है।

" ततोसितानु तेऽनीतः तेतृतोती तितोतृतः। ततोऽनाति नतौ तौते तत ताते तनो ततः"॥

भाव मात्र—विशिष्ट पृत्ताके योग्य ! स्वकीय ज्ञानवृद्धिके हेतु, ज्ञानावरण।दिकोंके नाज्ञक ! अपरिमहसे महान् ! ज्ञानवृद्धि प्राप्त ! हे त्रेलोक्येक्वर तुम्हारा ज्ञान विस्त्रीण है । इस प्रकार चित्रके एकाक्षरी, दो अक्षरी भेद होते हैं ।

अब मैं आप छोगोंका समय ज्यादा न लेकर नैपधीय चरित्र, और धर्मशामियुः,मः से मिकान करके लेख समाप्त करूंगा।

चर्मशर्मभ्युद्य महाकाञ्यके कत्ती श्री हिरिश्चन्द कवि है। बाणकविन हरिश्चन हर्ष चरितमें इनको प्रारम्भमें हमरण किया किया है।

" पदवन्धोज्ज्वलोहारी कृतवर्धकृमस्थिति । भट्टारहरिचन्द्रस्य गद्यवन्या नृपायते ॥

इस प्रकार निष्यक्षपाती अजैन किन्योंने भी इनकी मुक्तकण्ठसे प्रशंश की है इनकी अनोस्ती सुझ, कराना चातुर्य बहुत गंभीर है, पर्छालित्य और अर्थगौरव कूट र कर मर दिया है। यथा—राजा महासेनकी विद्या बर्शनाको ऋषि वर्णन करते हैं।

" ततः श्रुताम्मोनिधिपारदृद्यनः विदाङ्कभानेवपराभवं तदा। विदोष पाठाय विधृत्य पुस्तकं करान्न सुश्चत्यधुनापि भारती॥

अर्थात-शास्त्र समुद्रके परणामी रामासे परापत्रकी शंहा करती हुई भारती-(वाणी) विशेषपाठ, याद करनेके लिये अब भी पुन्तकको नहीं छोड्डी है।

मान-मारतीके हस्तमें पुस्तक है, इसीपर कविने उत्प्रेक्षा की है कि राना विद्या पारंगत है, अतः मुझे शास्त्रार्थमें न हरादे इसिक्षिये पुस्तक वारण की है। अधना, राना चौदह विशाओं में अत्यन्त निपूण है, इससे कविने यह भी खोतन किया है।

थ्री हर्ष कवि-

ये कवि शीहरि पण्डितके छु३ल है, और इनकी माताका नाम मामछ रेवी है।

और अभी (इस समय) इनका कोई समय निश्चित नहीं हुआ है। परन्तु लाह मं०११७४ से कुछ पहिछे इस काव्यका निर्माण हुआ है, नयों कि इससे जाना जाता है कि बनारसमें ५७० खाट सं० में राना गोविंदनन्द्र राज्य करते थे पश्चात विजयचंद्र तत्थ्यात जयन्तचंद्र राज्य करते थे पश्चात विजयचंद्र तत्थ्यात जयन्तचंद्र राजा हुये, और इनकी समामें इन्होंने प्रतिष्ठा पाई है। तथा इनकी प्रेरणासे हमें किने यह नैयथीय चरित्र बनाया है। अब जयन्तचंद्र कालसे इनका मी वही काल कुछ आगे पीछे हों।

हर्षकवि रामा नलकी विद्या नुद्धि वर्णन करते हैं-

" अधीति बोधाचरणप्रचारणैः दशस्त्रतस्यः प्रणयन्तुपधिभिः। चतुर्दशस्यं कृतवान्कृतः स्वयं न वेद्मि विद्यासु चतुर्दशस्यम्॥

अधीत-राजा नड़नं १४ विद्याओं में अध्ययन, अर्थज्ञान, अनुष्ठान, अध्यापन, इस प्रकार चार अग्रस्था करते हुये चतुर्देशस्य प्राप्त किस तरह किया वह मैं नहीं जानता, यह दश्रीक सामान्यार्थ है। हम यहां पूछते हैं १४ विद्याओं में चतुर्थशस्य क्या प्राप्त किया विद्या तो १४ होती ही हैं, उससे क्या अथवा, यह कविका पिष्टपेवण है। और यदि चतस्त्राज्ञस्यास्त्रेन सिद्ध करोगे तो भी ठीक नहीं क्योंकि चतुर्दशस्वका वह स्वयं ज्ञाता है। दुसरी बात ये है कि सित्रियोंको अध्यायनका अधिकार नहीं है यह मन्नस्त्रित वचन है, लेकिन सित्रय राजा नल अध्यायन करता यह बात शास्त्र विरुद्ध है। अच्छा और पदलालिय, उत्पेक्षा आदि सज्जन जान सकते हैं कि किसमें विशेषता है।

कवि हरिश्चःद्व-

" कृतौ न चेसेन विरश्विना सुधानिधानकुम्भा सुदृशः पयौधरौ । तदङ्गलग्नोऽपि तदा निगद्यतां स्मरः परासुः कथमाशु जीवितः॥

अर्थात्—ब्रह्मानं सुनयनीके स्तर्नोको अस्त रखनेके दो घड़े बनाये हैं, यदि न बनाये होते तो उसके अङ्गमें लगा हुआ स्तकामदेव किस तरह जीवित होता, यह बतला-इये। तात्पर्य यह है कि महादेवने कामदेवको भस्य कर दिया था, अतः मर गया और मरा हुआ अस्ततसे जीवित हो जाता है, वही उत्प्रेक्षा की है कि रानीके स्वन अस्त कड़श हैं, और उससे कामदेव जीवित हो गया है।

श्री हर्ष—

अपि तद्यपुषि प्रसर्पतोऽर्गमिते कान्तिझरैरगाधताम् । स्मरयौवनयोः खलु द्रयो प्लवकुम्भी भवतः कुचावुभी ॥

अर्थात्—रानी दमयंतीके कुच (स्तन) कांतिझरसे अगायको प्राप्त दययंतीके शरीरमें हमर और यौगनके दैरनेके किये दो बड़े हैं। महातुमाव! विचार कि कैसी मही करना है कि तैरनेके घड़े, और कविने अमृतकछश्चकी उपमादी है। तथा मृतको अमृत रस देकर सदा जीवित ही कर दिया है। कवि हरिक्षाद्ध---

" कपोलहेतोः चत्रु लोलचक्षषो विधिः व्यथात् पूर्णसुधाकरं द्विथा। विलोकतामस्य तथा हि लांच्छनच्छलेन पश्चात् कृतसीवनवणम्॥ (धर्मशर्मा०)

अर्थात्-ब्रह्माने राज्ञीके कपोल्पंडल वनानेके लिये पूर्ण चंद्रमाके दो टुकड़े कर दिये, यदि नहीं तो देखिये, कि कल्क्कके न्यानसे टुकड़े कर पीले सीवनका अण ही मालुप होता है, चंद्रकल्क्कपर उत्पेक्षा की है।

इषं कवि-

हतसारमिवेन्दुमण्डलं दमयन्ती वदनामवेशसा । कृतमध्यविलं विलोक्यते धृत गम्भीर खती खनीलिय ॥ (नैषष)

अर्थात्-ब्रह्माने दमयन्तीका मुख बनानेके छिये हतसारकी तरह चंद्रमा, गहरे गड्ढे व आकाशकी नीलिमासे गुक्त, अथवा मध्यमें किये विककी तरह दिख्काई देता है। अर्थात्-दमयंतीका मुख स्वच्छ है।

कवि हरिश्चन्द्र-ॐ शब्दकी कल्पना-

" इमामनालोचनगोचरां विधिर्विधाय सृष्टेः कलशार्पणोतसुकः। लिलेख वके तिलाङ्कमध्ययोर्श्ववोर्मिषादोभिति मंगलाक्षरम् ॥ (वर्षशर्म)

अर्थात्—सृष्टिकी रचनाके बाद कछशा अर्पण करनेमें उत्पुक ब्रह्माने अदृष्टिगोषर राज्ञीको बनाकर रानीके मुख गत तिलक चिह्नके मध्यमें भृजुटीके बहानेसे ॐ यह मङ्गलाक्षर लिख दिया ! अर्थात् भृजुटीका आकार प्रायः ॐ तरीखा होता है। प्रकान्तरसे—

उदीरिते श्रीरितकीर्त्तिकान्तिभिः श्रयाम एतानिति मौनवान्विधिः। लिलेख तस्यां तिलकाङ्कमध्ययोः भुवोर्मिषादिति संगतोत्तरम् ॥

अर्थात्-इक्ष्मी, रति, कीर्त्ति, कांति, आदि गुणोंने ब्रह्मांके पास जाकर अर्जी (Application)की, इसको मुनकर मौनी ब्रह्मांने तिककाक मध्यमें मकुटीके वहानेसे ॐ बह संगतीन्तर किस दिया। अर्थात ॐ स्वीकारार्थक है। पाठक ! इत्यादि उपर्युक्त ह्यांतोंसे जान सकते हैं कि, पदछाछित्य, ओज, सीन्दर्थ जैन कार्ध्योमें विशेष है। इस दक्षोबकी कहपना विचित्र है। ऐसी कहपना अच्छे २ कवियोंमें नहीं की है से

अनुषम ही श्लोक हैं। ऐसे ही द्विसंघान, चतुर्विश्वति संघान भकानर, इत्यादि बहुतसे काव्य हैं जो अनुषम संझामें ही गणित हैं। अर इस कथनसे मालुप होता है, और आप, इतनेसे जान सकते हैं कि जैन काट्योंमें ही महत्व है। क्योंकि संदेत विद्वानोंको काफी होता है, या एक चावक्रसे तमाम हाड़ीका पता चक्र जाता है, उसी प्रकार यहांपर भी जान हैं। और यह भी जान हैं कि जैन काट्योंमें, पदछाछित्य, मुन्दरता, रोचकता, अर्थगौरव कितना है।

अब मैं आपका ज्यादा समय न केतर उपसंहार कर, छेल बहुत बढ़ जानेके भयसे दो एक मार्ककी बात बनका कर समाप्त करंगा। श्रिय साहित्य रिक्तिनन।

यथार्थमें काव्यसे (साहित्य) से देशका उद्धार होता है। साहित्य सौरमसे स्वदेश विशेष उन्नतिके शिखर स्थायी होता है। मानव शक्तिका संचार होता है। और इससे धर्म, अर्थ, काम, मोक्षकी पाति होती है, इसलिये इसका प्रचार करना परमाश्वयक है. क्योंकि इससे उमयहोक्षमें प्रख शान्ति विके-इसकोक्षमें निश्चित प्रखकी प्राप्ति होती ही है कि '' काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम '' अर्थात काव्यशास्त्रके विनोदसे धीमान् पुरुषोंका काल व्यतीत होता है। साथमें जैन काव्योंमें इतनी गम्भीरता एवं महत्व है कि साहित्यमें सम्पूर्ण अङ्गमृत, अञ्चार, रस, सौन्दर्य, कीड़ा, नायक, नायका, रति, हास्य, राग आदिका खुब अच्छी तरह वर्णन करके अन्तमें शांतरसका वर्णन किया है। ऐसा अन्य कालिदासादि कृत कान्यों में नहीं पाया नाता । दृष्टांतके लिये आप " मेबदूत " को लीकिये। इसका वर्णन आद्योपान्त श्रंगार रसमय है। विद्यार्थी, या अन्य साधारण जन इसे पदकर मार्गच्युत होसकते हैं। तथा उपादेय छोड़ हेय कार्योंमें फंस जाते हैं। जिससे उनको नाना मर्वोमें नाना दुःख उठाना पढ़ते हैं, इसी प्रकार और भी जैसे गीतगोविन्द आदिकोंमें श्रंगार हास्यादिकोंका ही वर्णन किया है। तथा शांत रतका नाम मात्र भी नहीं किया है। इससे पढ़नेबाके कात्रोंको हानि उठानी पड़ती है। छोटी अवस्थामें इन काव्योंकी शिक्षा छाभदायक नहीं होसकती । परन्तु जैन काव्योंमें ऐसा वर्णन नहीं है । हमारे कवीइवर और कवि आचार्योंने मिन्न २ अवस्थामें वर्णन किया है, तथा शांतरसका तो जैन कार्क्योमें आदि, मध्य, अंतमें खुब ही विवेचन किया है, जिससे शुंकारादिकी तरफ आरमा नहीं झकती, और न व्यर्थकी बातोंमें चित्त प्रवेश करता है। अंतमें शांत रसमें ही आत्मा संख्यन होजाती है। इस आत्माको हितकारी वार्मिक शिक्षासे आत्मशुद्धि, नियम, जय, तप, परीवह सहनेकी शक्ति समुत्यक होजाती है, और यह विचार उत्पान होने क्याते * FB-

अही वा हारे वा कुसुमशयने वा दयदि वा । मणौ बा लोष्टे वा वलबतिरियों वा सुहृदि वा ॥ तृणै वा स्त्रेणे वा सम समदृशः या।न्त दिवसाः। कदा पुण्येऽरण्ये जिन जिनेति प्रलषतः॥ १॥

भर्यात्—सर्पेमें, हारमें, कुछुम श्रुष्यांने, पत्थरमें, मणिमें, छोष्ठमें अपना, अत्यन्त मछ-बान शत्रुमें या मित्रमें, तृणांने, स्त्रीतमृहमें तमदृष्टिसे युक्त मेरे दिवस उस प्रण्य (वन) में है जिनेन्द्र ! हे जिनेन्द्र ! या णमोकार मंत्र जयते हुये कव व्यतीत होंगे ।

इसी प्रकार विचार करते हुने काव्य कना कटोरीसे शांतरतका आस्वादन करते हुये, अभिन्नित पदार्थ-ध्येय की प्राप्ति होजाती है। वस, यही अन्तिम अवस्थाको प्राप्त हो गर आत्मा अनन्तदर्शन और शक्ति प्राप्त कर अनंत साम अनन्तदर्शन और शक्ति प्राप्त कर अनंत सुखमें सदाके छिये छीन होजाती है। बस यही मोक्ष हैं, और इन्हीं अन्वयात कारणोंसे उसकी प्राप्ति होती है। इसछिये कान्ययस्तको प्राप्त कर उसकी प्रम्यर कान्तिमय किरणसे कान्यक्तिको प्राप्त कर उसकी प्रम्यर कान्तिमय किरणसे कान्यक्तिको अभि कर उसकी प्रम्यर कान्तिमय किरणसे कान्यक्तिको अभिन्न कर उसकी प्रमाद कर कान्यक्ति आमीद ग्रीदमें प्रमुद्ति अन्तिम् अभिन्न करें।

इति, शुभं भूयात, शुभं भृयात, शुभं भृयात् । विनीत--

सर्तादाचन्द्र गुप्त, वि॰ स्याद्वाद महाविद्यालय, काद्गी

क्षत्रचृडामणि (जीवंधरचरित्र) भाषा ।

यह पुस्तक पहड़े संस्कृतमें ही थी व एकदार बाडबोधार्थ पं० नायूरामजीने इलोकोंका मावार्थ भी निकाडा था उनकी वह पुस्तक खतम हो जानपर पं० निद्धामङजीने बड़े परिश्रमके साथ अन्वयार्थ कर प्रगट किया है। छोटी प्रदेशिका कक्षाके विद्यार्थियोंके लिये इसकी अत्यंतावश्यकता थी क्योंकि यह प्रंथ संस्कृतकी छोटी कक्षाके लिये अत्यंत कठिन है। इसमें प्रत्येक संस्कृत शब्दके साथ २ विभक्ति सहित हिंदी अर्थ है। और प्रत्येक अन्वयार्थमें 'अवनीति' इस शब्दके साथ २ विभक्ति सहित हिंदी अर्थ है। और प्रत्येक अन्वयार्थमें 'अवनीति' इस शब्दके नीति अलग कर दी है को कंट करने घोग्य है। उपर मूछ क्षोक भी दिया है। व आदिमें प्रत्येक लंबका सुंदर पर मनोहारिणी मावामें कथा सारांश भी लगा विया है। प्रत्येकके पटने योग्य है। अश्व्य तुते मंगाइये। पूठ करीन ३०० सादी नि० १॥) पक्की २) रु० है। मगानेका पता—

मैनेजर, दि॰ जैन पुस्तकालय-सूरत।

जातीय सभावों तथा समाचार पत्रों पर एक दृष्टि।

आम हम अवनी जैन नातियोंको भी अन्यान्य नातियोंके समान कार्यमें दत्तिचित्त देखकर हमसे मरकर (फूछेहुने) अगर्गे नहीं समाने हैं वर्योंकि महासभा तथा श्रांतिक सभावोंके प्रशाविक महासभा तथा श्रांतिक सभावोंके प्रशाविक अनुभार हमारी परवार, खंडेन्द्रवाल, अग्रवाल, जैमवाल, बुटेले, गोलाएक, गोलाल रेवापि कर ली हैं और इन्हेंसे कितनी ही सभावोंके हारा नातीय पत्रोंका भी भन्म हुवा है। मैसे परवार करा, नेसवाल जैन, खंडेच्वाल हितंचल, गोलाएक, प्रशाविक करती है। हमारी इन सभावों तथा पत्रोंसे पूर्ण सहालुम्हति है। और हम हद्यसे इनकी अन्नित तथा सफलभा चालते हैं।

बास्तवमे जातीय संभानोंकी आवश्यकता अवश्य है कारण कि प्रांतिक संभानों या भारत-वर्णीय दिगम्बर कैन महासंभ के द्वारा प्रमान किये हुने प्रस्तावोंको कार्य रूपमें परिणाह करना इन्हीं जातीय सम बोंके हाथमें हैं। कारण कि इनको हा हव जातिके व्यक्तियों पर पूर्ण सता प्राप्त है। दे सीचे या दे हुं, केसे भी कार्य क्या सक्ती हैं। इनको किसी व किरहीं व्यक्तियोंको उनके धर्म माति विरुद्ध जरने पर जाति-च्युत कर देने तकका अधिकार होता है। कोई व्यक्ति केमा भी हठी मानी क्यों न हो, परंतु जातिय संगठन (पंतायती) के आगे मस्तक झुकाना ही पड़ना है। इर कार्तिये कोई बाइन

बचेवाला गृहस्य तो किसी प्रकार मी प्रथक नहीं रह सका है, क्योंकि कदाचित वह जीमनमें विना गये भी संशोध कर छेवे. घर पर मिठाई कर आप ला छे व घरवार्जीको खिला देवे. परंत पेटा बेटीका लग्य को वर्तमान समयमें जाति मातिमें ही होगा, (क्योंकि अभी श्री निनसेन-स्वामी=भाविष्ठराणके कर्ता, निन्होंने सब वर्णीमें परसर अनुजीम ब्याह करनेकी विधि बताई है-सी आधकत तो एक ही वर्णमें अनेकों जातियां और जातियोंमें अनेकों जये बन रहे हैं सो यहां मन्ना कहां गुनर होमकी है ? और बढि उपर्युक्त मतवज्ञितसंत स्वामीका भी समय यदि आ माने तो क्या वर्ण विरोध, माति विरोध, तथा वर्ष विरोधका अन्याय चक्र सक्ता है है उस मनय उसी प्रकारका संगठन होता इत्यादि) इप हिथे जाति समाएँ किसी प्रकार (भवेशा) उपयोगी भी हैं।

यदि वे अन्यान्य सावभी नैन नाति सभावोंसे भेत्री माव रवर्षे तो।

यदि वे बनवान और गरीबोंनर सम दृष्टि राखें तो ।

यदि वे नियमानुकुछ सुनेगटित होकर सुवाह रीते से कार्य करें तो।

यदि वे सर्व सावारणकी प्रकारीपर दृष्टि रख-कर अपने प्रस्तावींकी प्रसार करें।

यदि वे धार्मिक और जैकिक दोनों प्रकारकी उन्निर्धों को खपना एक्ष्म मनाथ रहें। यदि उनके संचाइक, इंसंस्थापक, कार्यकर्ता-गण अपना व्यवहार वैसा ही रक्ष जैसा कि समाका नियम होने (अर्थात ने छोग ऐसी कोई मी कार्रवाई न करें कि जो समाके नियमोंके विरुद्ध पड़ती हो, अथवा जिसके छिये छोगोंके विर्तों पर बुरा प्रभाव पढ़े, कि जिसकी सफाई देनेकी आवश्यकता पड़े। तार्पर्य, उनको तो अवश्य ही प्रसारित प्रस्तावोंपर चछना चाहिये। और आदर्श बनकर खौरोंको भी चछाना चाहिये) तो-

जैसे जाति समार्थे महासमा आदि हारा प्रसारित प्रस्तावोंको कार्यक्रपमें परिणत करनेकी मुख्य साधन हैं, उसी प्रकार प्रस्वेक जातीय सभाका परम सहायक और अनुपम प्रचारक उनका जातीय पत्र है, जो सर्व समाजको एक साथ ही समार्थोंछे निकली हुई ज्वनिको सुना देता है और मिल २ व्यक्तियोंके मिल २ मर्तो को समाजके सन्मुख निर्भय होकर रख देता है। इसल्ये जातीब पत्रमी परमोपकारी हो सक्ते हैं? यदि व जाने उद्दर्थ विन्दु पर डेटे रहें तो। यदि व निर्भय हो कर सच्ची समालोचना, जाति और व्यक्तियोंकी करते रहें।

व्यदि वे, धनी व निर्धनका पक्षपात छोड़ देवे तो।

यदि वे सबसे पहिले स्वनातीय छुवारों पर ही दक्ष्य रक्षें तो ।

बदि वे समय पर नियमानुकूत्र निकलते रहें तो।

यदि उनका कड़ेबर भच्छे विद्वज्ञानोंकी हेख-नीसे परा नावे तो । यदि वे धर्मको प्रमुख करके, उतसे अविरुद्ध अर्थ और काम प्ररुपार्थ (छैकिक उन्नति) का सःधन बतार्वे तो ।

यदि वे १३२५ मूल्य पर अपनी जातिके समस्त ग्रामों और घरोंमें पहुंचाये जांच धीर असमधोंको विना ही मूल्य दिये जार्ये तो निःसन्देह छाम दायक हैं अन्यथा इनसे जैसा छाम होना समझा जाता है व आशा की जाती है उसका शतांश भी होना कठिन है।

हमको स्व जातीय तथा अन्य कई साधर्मी जातीय समावोंमें जानेका अवसर मिछा है और कितने ही जातीय पत्रोंको भी देख रहे हैं परन्तु उनमें उक्त बातोंपर बहुत कम इस्य दिया जाता है।

इन समाबोंक अधिवेशनों में जिसको अधिक बोलना आता हो अर्थात जो बोलने में जतुर हो और जिसका पक्षयल बढ़ नावे, वही बाजी मार जाता है। इस प्रकार जब विंचतान करके प्रस्ताब पास हो जाते हैं तो वे वेवल सभाके कार्यालयके रिजास्टरों में ही सुरक्षित रहते हैं, उनका समाज में ज्यवहार नहीं होता है और न प्रस्ताबक समर्थक तथा समाके संचालक महाश्रम ही उनपर अमल करते हैं तब ऐसे प्रस्तावोंसे क्या मला होगा ! और इन अधिवेशनोंसे क्या मार निकलेगा ! सिवाय इसके कि समाजका सहस्त्रों करवाका मार्गमें, योजनमें, डांकखाने आदिमें व्यय हो और घरका धंबा छटे इस्वादि।

वास्तवमें यदि देखा नाय, तो वर्तमान समावों तथा पत्रोंमें प्रायः उपर्युक्त वार्तोकी बहुतांशोंमें जुटियां पाई नाती हैं, उनमें कतितय श्रीमानों,

चौबरियों व मुखियांचीका ही भादर होता है. भीर उन्होंकी तृती बोकती है। यदि किसी मातिका मुखिया कुछ मूछ कर देवे. तो बह उ-पेक्षणीय समझी जाती है। उसके विरुद्ध सत्य बोडनेका साहस किसोको मी नहीं होता है और यदि कोई साहस करके कहनेको आगे बढता है. तो वह वहीं दबा दिया जाता है, कोई भी उसका साथ देनेको तैयार नहीं होते । इस प्रकार बढ़ भूछ केवछ उपेक्षा रूप ही नहीं रहती है किन्त अनेकों यक्तियों द्वारा उल्टी प्रष्ट की नाती है। यह देखकर अन्यान्य सावारण जन मी उसका अनुकरण करते हैं और फिर उनसे भी कोई कुछ नहीं कह सक्ता है। और यदि कदाचित उनसे कुछ कहा भी जाता है तो वे भी मानते नहीं. तथा कितने ही छोग उनका साथ देकर अपना प्रथक् पक्ष स्थापित कर हेते हैं। कुछ समय हवा जब कि एक प्रांतके एक मुख्या सेठने अपनी दलती अबस्यामें समामकी ओरसे घोर विरोद होते हुवे भी छान तिथिसे एक दिन पहिले ही अवने समान अन्य सेठमाइनकी सहायतासे लग्न कर ही किया और है मास पीछे अल्प वयहका बालिकाको जन्मभरके लिये वैषःयकी कालिया लगाकर अपनी बांची हुई आयुक्ते बानुसार उसी गतिको बले गये । इनके इस अनुवित व्याहरा मंडन यह कहकर किया गया था कि क्या करें! सेठ साहबके कोई सन्तान नहीं है इसकिये आबदयक है कि उनकी पीडी चड़े, बड़े घरों ही से धर्मकी परम्परा चछती है ? परन्त उक्त सेठबी नया सन्तान (सिवाय एक दूधमुही विववाके) छोड़ गये और कौरती धर्मकी परम्परा चला गये ! क्या

वे नातिके किसी सयोग्य बालकको गोद नहीं रख सके थे ? जैसा अब करना पढा या पहेगा। अथवा कि चिरस्परणीय दानवीर भैनक्क भूवग सेठ माणिकचंद हीराचंद ने॰ पी॰ बम्बईके अनुसार कोई एक पहा विद्यालय (नि-समें वार्निक शिक्षाके साथ २ व्यवहारिक शिक्षा भी दीनाती) छात्राश्रप सहित स्यापित करके चिरस्पायी कीर्ति व धर्मकी परम्परा क्या नहीं पछ। सक्ते थे ? परन्त हा ! जैन समाज तेरा दर्भाग्य जो तेरे प्रत्र ऐसी प्रवृति करते हैं और कराते हैं। इसी प्रकार अन्य किसी प्रांतके एक खागेबान सेठने अपना तीसरा क्रान किया, इनका मी बोर विरोध समानने किया था। परन्तु वह यह कहकर प्रव्य किया गया, कि क्या करें है सेठ साहबको शीछ वतका नियम है। सो यदि ने ऐसा न करें तो नीमार पड जांय, गर्मी चढ़ नाय क्योंकि कर्तवान सहवर्षिणी सदा अस्वस्य रहती हैं, इत्यादि । हम समाजसे पूछते हैं कि ए माता ! क्या तूने कभी अपनी अन्य तहण-वयहरू किन्त धनहीन क्रमारोंकी ओर भी ऐसी दया प्रदर्शित की है ? क्या तुझे नहीं मालुव है कि तेरे कितने सुन्दर र तहण योग्य वयवाचे गुणी निर्वत पुत्र एकदार मी अपने जीव नमें सहवर्षिणीका मुख तक देखनेको तरस र कर क्या क्या विवत्तियां भीग रहे हैं ? उनशी क्या दुर्व्यवस्था हो रही है ? ब्बीर तेरी कितनी पुत्रियां इन बुड्डोंकी शिकार बनकर वैकायके घोर नकीमें पड़ी हुई दूख मीग रहीं हैं ? कितनी बेबारी सपतियोंके कारण पतिके मीते हते भी वैधःषताको अनुभन कर रही हैं। हा देव ! रक्षा कर और इन सहोद्रियोंकी सुमति

और सहनशीकता दे। एक और सेट साहबने अमेसर होकर फटाने (स्रोटे) गीत गाना बंद कराया था परन्त अब उनके वर प्रश्लीका एम हुवा और सामर्थ गण बीमने बैठे तो अवा हुई गाली गायी जांग, बस फिर बैसी सम्वियोंके पूर्वमीने भी नहीं सुनी हों ऐसी गालियां सेंडजीकी आजासे उनकी बहन वेडी बहुवीं मादिने सुना दीं । उत्परसे पृष्टि यह कह का की गई कि ये तो राग रंग हैं सो विना इसमकार गाये भानन्द नहीं भासका है। एक सेठ साहबने अपने प्रपीत्रके न्याहमें देखा कि बहात है जानेमें तो सर्च बहुत होगा, अतएव कन्याको ही अपने गाममें बुढ़ाकर व्याह करिट्या । इसका समर्थन यों हुबा, कि कन्या पक्षवाला इतना खर्च नहीं उठा हका था इत्यादि । कैसी सफाई ! अपना सर्वे बनावर भी मुंछ ऊंची और साम्हने बाकेका सर्व होकर उसकी असमर्थता ! घन्य है ! कई समाबोंके समापति एक सेठ साहेक्ने अपनी प्रजीके टरनमें महिनों देश्या नच है, परंत घन्य है वर पक्षवाळे धर्मानुरागी सेठ साहेवको कि उन्होंने कहवा दिया, जबतक वेदशका आपके यहाँ इस कार्यमें आदर रहेगा मैं उसकी विक्तिमें अपना आदर नहीं चाहता । तात्पर्य वेदया वरा-तके आगमन होते ही विदा मांग गई। धन्य है उक्त सेठ साहबका बार्मिक और नैतिक प्रेम । हमारी समानमें ऐसे ही उदारचरित नरस्त्रींकी भावश्यवता है। ए समान! तेरा अस्तिना केवल ऐसे ही कतिपय नराखोंके आधार पर कादम है। नहीं तो कमीकी किताबैंक पृष्टों पर ही रह नाती " और भी एक समाके मंत्रीने एक अपने म-म्बन्धीका त्याह इसी प्रकार अयोग्य क्यमें करा

दिया और यह एफाई दी गई कि अबो उनकी ४० वर्षकी अवस्थामें कुछ महिने और दिन घटते हैं ! वाह कैसी तनकीन निकाकी गई कि काननन वह व्याह जाएज उहराया गया ? निःसन्देह बुद्धिका उपयोग तो ऐसी ही अगह होना चाहिये । इसी प्रकारके अनेको दशांत हैं जो कि सबके दृष्टिगोचर हैं बाहे कोई अपनी चतराईसे मछे ही छोगोंके मुख बंद करने व सफाई भक्तान करनेका यहन करें परंत जनताके हृदयों पर तो असली बातकी ही लाप पह काती है और उसे निकालना कठिन है। हो, केवल एक उपाय यही है कि धर्मनीति और नियमोंके विरुद्ध ऐसा कोई भी कार्य न किया जाय ताकि जनता पर बुरा प्रमान पहे तो समार्थे सफड म-नोरय हो सक्ती हैं। परंत इसमें बहत नितिक बल और स्वार्थत्यागका कार्य है।

जैसी सभावोंकी नीति हो रही है प्रायः इस्मी पूजन करते हैं। और यदि कुछ भी सिर हिटाया तो नीवनसे हाय घो नैडते हैं। जैसी कि स्वनेकों मालिक व समानः रपत्रोंकी अवस्था हुई कि उनको अकार में ही आ युकी उदीणी करना पड़ी या वे फरहोपर चले गये और जो असली बातको छोड़कर (जिसमें सची समालोचना करना पड़ती हो स्थवा कृदिके विरुद्ध या श्रीमानीकी इच्छाके विरुद्ध कुछ टिखना पड़ता हो) विषयान्तर विषयोंको लिखकर अपना कलेवर मरते हैं तथा स्वाति मी प्राप्तकर छेते हैं बात यह होती है कि माल सार्ये चनीका, गीत गांवें वीरनके! क्या खुब, बिलहारी है इस मीतिकी! परन्तु दुस तो इस बातका है कि मन हां में हां परन्तु दुस तो इस बातका है कि मन हां में हां

ही करना है, तो समान सुवारके नामसे वर्षों मनताको सकाया नाता है ! क्या किसी समा-जके अवदा व्यक्तिके दीव विना बताये दर हो सक्ते हैं ? यदि हो सक्ते हैं तो फिर समावों और पत्रोंकी खावश्यकता ही नहीं है। अपने आप ही दूर हो जांयगे और यदि नहीं तो फिर ''शत्रोरिव गुणो बाच्वा दोषो बाच्या गुरोरिव'' की नीतिको सन्मख रखकर निभय होकर महात्मा गांधीके समान स्पष्ट वका बनो ।महाराज मस्त चक्रवर्ति सरीखे न्यायी बनो कि मुछोबनाने स्वयंत्ररमें जब नयकुवारको वर-माला पहिराई तो चकर्रातके प्रत्र अर्क्कीर्तिको यह बात अपमानमनक मालुव हुई धौर उसने अपने पितासे जयक्रमारके विरुद्ध प्रकार की, इस पर महाराज भरतने उच्छा उसे ही बुरा मका कहा और भयकुमार तथा सकोचनाके न्याय पक्षका समर्थन किया । इसपर हमारे संचालकगण यह प्रश्न उठाते हैं कि क्या करें ? किना द्रव्यके कोई कार्य नहीं चलता, और द्रव्य द्रव्याधीशोंसे मिछता है। दृब्याधीश बिना उनकी हांमें हां किये खश नहीं होते हैं इस किये ऐसा करना आव-इयकीय है। तो उत्तर वही है कि जिस द्रव्य. समय और परिश्रमके छगाने पर भी सस्य नात न कही जाय, वास्तविक सुवार न हो सके तो इस अपव्ययसे छाम ही क्या होगा !

इसिकिये जाति समावोंका काम है कि ने पहिले अपनी जातिक चालू समस्त रीति रिवाज़ोंकी (चाहे ने छोटे हों या मोटे) प्री २ सम्हाक करें पश्चात उनपर सर्वेसाबारण (छोटे बढ़े घनी निर्धन पढ़े व अनवहों आदि) की विरुद्ध चौर चिविद्य सम्मतियां संग्रह करें। प्रत्येक प्राप वंशावतियोंसे सम्मतियां पत्रों व उपदेशकों द्वारं। मंगार्वे । जिस बातको नवीन चलाना व चलती हुई अयोग्य प्रवृत्तिको रोकना हो उसके किये वर्षी पहिलेसे पत्रों विज्ञापनों तथा उपदेशकों द्वारा खुन भान्दोलन करे, सर्व साधारणके कानों तक उन वार्तीको पहुंचा देवें, तन किसी केन्द्रस्थानमें बहत जातीय सम्मेजन करें और उन सम्मितियों का सार सुनाकर बहुमत व सर्वमतसे प्रस्ताव पास करें । उसपर जातिके नेतावों पंचायतीके मुखि-यार्वोकी मही करावें और विरुद्ध चलनेवार्क्कोंके किये यथोचित प्रायश्चित नियत करें । फिर चाहे श्रीमान हो व श्री हीन सबको उसी नियम पर चलनेके लिये बाधित किया जाय । इसमें रहमी पूना न रहे । और समाचार तथा मासिक पर्त्रोको अविरुद्ध तो ठीक ही हैं, परन्त विरुद्ध छेखोंको मी प्रगट करना चाहिये। हां सम्पादक उसका उत्तर दाता न बने, अथवा उस केख पर अपनी टीका टिप्पणी नोट आदि लगा देवे, क्योंकि वादे वादे जायते तत्त्वबोधः। विरुद्ध मत ही से अविरुद्ध पक्षकी अधिकाधिक प्रष्टि होती है, सत्यका निर्णय होता है। सिवाय इसके जातीय पत्रोंका काम है कि वे पहिले अपनी नातिके सुधारका ही कार्य करें यही उस का अरुव उद्देश्य है। अन्यान्य साधारण विषयों को मित्र भावसे सापेक्ष हो गौण रीतिसे अवलोकन करें। सपस्त नातीय सभायें और सर्व नातीय पत्र परस्पर मैत्री भाव अथवा सहोदर सहोदरीकी नीतिका ही अनुसरण करें और एक दूसरेके हित चितक हो सावधान करते रहें । इत्यलम् ।

दीपचंद परवार नासिंहप्र निवासि ।

जैन तामिल-साहित्य।

प्रिय पाठको ! अत्यंत व:व और खेदका विषय है कि जैसा अगाद अपरिमित एवं अतुल जैन साहित्य है वैसी ही उसकी दशा खति शोचनीय हो रही है। इहां आचार्योका अविशान्त परिश्रम और कहां हमारी यह निरो-द्यमता ! कैसा मीपण हास है ! इन विषमतासे संतप्त हृद्य अवसर अवसरपर समानके अगाडी कुछ उधमं करके दिला भी देते हैं पर खेद-क्षोम-चौर संताप कि सपान उनके एक्टवोंकी बाद भी नहीं रखती ! उनके श्रम प्रयत्नोंको बाल रखना दरकिनार !! विख्यात इतिहासझ स्व । मि । विन्सेन्टिम्पने कृपाका डक्योग इस ओर पहिन्ने ही आकर्षित किया था पर हमारा विश्वक साहित्य अमीतक मण्डारों में पड़ा हुआ दीवारोंको शिक्षा दे रहा है अधवा दीमक वा मुक्जीका खाद्य पदार्थ वन रहा है। पान्त इस निरोत्साहसे कार्य नहीं चक सका यह अंधरस्य अवदय ही प्रकाशमें छाने पहेंगे तब ही उनसे उपयक्त काम माप्त हो सकेगा। वित सबसे अधिक शोक और संतापका विषय सी यह है कि हमारे पास अपने साहित्य रत्नों-की सूची तक नहीं है जिससे कि यह जाना शा सके कि भारतवर्षीय विश्वल साहित्यमें जैनि-योंका कितना हाथ है। इसलिए आवश्यका है कि संपूर्ण मा • माषाओं - संस्कृत, शकृत, हिंदी.

कनड़ी, तामिछ भादिमें जिलने जैनाचार्यों द्वारा राचित उपलब्ध ग्रम्थ हैं उनकी सूची बनाई जाय! शायद वर्मप्रेमी सज्जन इस विषयमें प्रयत्नशील हैं। इस क्षेत्रमें आज भाप-को अपने जैन गजट अंग्रेजी मासिकसे अञ्जबद कर तामिल साहित्यका दिग्दर्शन कराएँगे।

"पश्चिमीय विद्वानोंके मतानुसार ईसाकी ९वीं ज्ञताब्दिके पूर्व तामिक मानाके साहित्यका नामोनिशान न या परन्त प्रियपाउक ! आपको विस्तव होगा कि इसके विवरीत बास्तवमें तामिक साहित्यके चमकते हुए यथार्थ प्रधारन ९वीं शताब्दिक पूर्वके हैं। और इनके उपरान्त जो प्रन्य सृष्टिमें आए वे संस्कृत आदि मःपाओंके अनुवाद आदि हैं। प्राचीन तामिक कविताओं के विचारपूर्ण अध्ययनसे विदित होता है कि कित-नेक प्रंथ २००० वर्ष पूर्व संकालित किए गए थे। इसी समयमें दामिल देशीय जनताको अरब, यूनान आदि दूरस्य देशोंके न्यापारसे विशेष काम प्राप्त हुआ था। ऐहिक सामग्रीकी वृद्धिके साथ ही साथ उनमें साहित्य वृद्धिकी बाड उमड पड़ी ! तामिल साहित्यके विकाशका प्रधान समय ईसाकी प्रथम शताब्दि मानी गई है और अंतिम कवि शास्त्रार्थ-प्रममे लन तामिल देशीय रामा उम्र शण्डचकी रामः समामें हुई थी। इस काइके अनुमानतः ५० आचार्योंके प्रन्थ उपलब्ध हैं। ये कवि भिल सम्प्रदाय-देश और पर्मके थे। बुद्ध, ब्राह्मण और निर्धय कियोंकी कृतियोंमेंसे आन अंतिम धर्मके कवियोंके ग्रन्थोंका सबसोकन करेंगे।

यशिष अधिकांश प्रत्यस्य किय आदि और विदेशी आक्रमकोंकी कृषासे उपरुक्ष नहीं— नष्ट किए मा चुके हैं और कितने ही अमृस्य प्रंय अब भी ताड़पत्रों पर किस्ते हुए मंडारोंमें पढ़े हुए हैं जिनका कि हमें पता तक नहीं है। तामिल जैन साहित्यके प्रन्थ अलगर विमा-गोंमें विभक्त किए मा हक्ते हैं जैसे साहित्यक, काल्य, ज्याकरण आदि।

काठ्य ।

(१) जीवक चिन्तामणि, वीरुग्यक देशर कृत । यह प्रन्थ अनुमानतः १०२० वर्ष पहिछेका जिला हुआ पतीत होता है। और हैं० ९०० के पश्चात्का तो हो ही नहीं सक्ता। इस अंथमें हेमनायम्के राजा जीवकका जीवन वृतान्त है। राजा भीवक महावीर स्वा-मीके समकाकीन थे। १६ इकम्बकम् (खेडीं ?) में यह बतांत गर्मित है। और ११४५ श्लोकोंमें पूर्ण हुआ है। चिंतामणि अति प्रसिद्ध प्रंथ है। और इसकी रसीछी मुन्दरताके कारण तामिक साहित्यमें यह अप्रमान्य काव्य है। यह तामि-कके वांव मसिद्ध काव्योंमें प्रथम है। इसमें जीवकके वर्णनके साथ उस समयके रीतिरिवा-नौंका भी उछिल है। नैसे संस्कृतमें बाल्मीकके कान्य प्रतिष्ठामय हैं वैसे ही चिंतामणि भी भन्य तापिल कवियोंके निकट एक माननीय एवं कामप्रद अंध रहा है। इस काव्यके अव्ययनसे मतुष्यके हृद्यपट पर निम्न बातें अक्कित हो माती हैं। " रामाको उचित्र है कि किसी कार्यके प्रारम्म करनेके पहिछे अपने मंत्रियोंकी सम्मति हेले । जो व्यक्ति सीकी इच्छाका कट-

प्तका है उसे विषय कर्शोंका सामना करना होगा। प्रत्येक व्यक्तिको अपने गुरुननोंकी भाज्ञानुसार कार्य करना योख है। शत्रुओंको परास्त करने हेत संतोष धारणकर उचित अव-सरकी बाट मोहना चाहिए, पत्येक दुःखित जीवके पाणींकी रक्षा करना परम धर्म है। माता पिताकी आज्ञा मानना उचित है। बुद्धिमान बौर दयाल सहचरके साथ कोई मी काम फिया ना सक्ता है। शांतिका उपभोग करना परमो-त्कृष्ट है, चःहे सुल हो अथवा दःल । जीवनके प्रस्येक सुखदुखरूपी कार्य स्त्रीपार्नित कर्म्मफड नानना चाहिए। दान केवल शुद्ध दयावान पुरुषोंको देना योग्य है। विचारे दक्ष मार्गार चरते हुए व्यक्तियोंको प्रवार्ग पर चराना मानो उत्कृष्ट पुन्य संबय करना है। अंतिमतः मनु-व्यको कभी भी कुठही न होना चाहिए।

(२) सील प्पत्थी हर म्-नामक काव्य पंचकाव्यों में दूसरे नम्बर पर है। यह भी प्राचीन और उरकृष्ट प्रन्थ है। अन्य प्रंथकार भी कहीं र इसके शहीक उद्धृत करते हैं। लंकावासियों (Ceylon) के किए यह प्रंथ विशेष मनोरंजन कारक है। क्यों कि केवल यही एक प्रन्थ ऐसा उपलब्ध को लंका विषयक रावणके पश्चातकी बातोंका उल्लेख करता है। और केवल इस ही प्रंथमें देवी पट्टनी कलकीका इतिहास वर्णित है। इस देवीकी पूजा लंकावासी करते हैं। यद्यपि यह वर्णन पूर्णतया जैन धर्मका नहीं है परन्तु इसके प्रन्यकर्ता जैन धर्मात्यायी हैं। कारण कि वी॰ कें पिश्रय नारक तामिल विद्यानका मत

कुमादिगल नामक छोटा माई था और अंतमें वह मेन साधु हो गया और उसीने इस काव्यकी रचना की । यह प्रत्य मी इसाकी प्रथम शताब्दिका संकृष्टित है।

अवशेष तीन कार्वों मेसे बाल्यपती और कुण्डलकेसी नामक ग्रंथ जैनाचार्य कर बहे जाते है। परन्त यह सम्पूर्ण उपलब्ब नहीं हैं। हन पांच मुख्य कार्व्योके सहश पांच छोटे काव्य और है। (१) चुकामणि (२) यशोधर (३) उदाय-मकुमार (४) नागकुमार (६) और नीलकेसी । इनकी प्राचीनता आदिका विषय निर्धारित नहीं हो सक्ता है। परन्त इनमेंसे चुडामणि सबसे बहा है। इसमें कविता सौन्दर्य और माब मी अच्छा है। कविताका दंग मनोहर और शब्द अस्विक्ति हैं। पाचीन तामिल विद्रानोंने इसका अध्ययन करते हुए इसके कत्तिको न जानते हुए भी उन्हें "बाव्दोंमें अजय"की उपाधिसे षाद किया है तबसे इसके कर्त्ताका नाम "योला मोछीथेवर" (शब्दोंमें अजेब) प्रसिद्ध हो गया है। इस प्रन्थके १२ अध्यायों में २१३१ श्लोक हैं। और इसमें त्रिपृष्ट वासदेव और उनके शत्र अयकत प्रथी वास्त्वेतका वर्णन है। इसका भाव गुणगदाचार्य कृत उत्तरपुराणसे छिया गया है। इसका रचना काल ज्ञात नहीं है। यद्यपि मि० पिलायकी मुमिकामें इतना उल्लेख है कि चुलामणि अतुमानतः १५०० वर्षका प्राचीन प्रन्य है। द्वितीय यशोबर कान्य किसी जैनाचार्थ द्वारा कृत ४ अध्यायों में विभक्त १९० दछोकीका प्रत्य है। इसमें राना बशो-घरका वर्णन है। इस चरित्रसे कर्मीके श्रम

कशुय कर योगनेका तीक की कोई मनुष्य किसी कीको दृ:ल पहुंचाता है, तो उसके करू स्वरूप नरक पशुगतिका बंब बांध दु:ल योगता है—का चित्र प्रदर्शित होता है। तृतीय उदाय-नकुमार कान्यके ६ अध्यायों में एक नेवाचार्य द्वारा बत्सदेशके राजा उद्यायकी कथा छिलि र है। यह प्रत्य प्रगट हो रहा है। यनुर्थ नाग-कुपार कान्य एक छोटासा मनोरंकक कान्य है। यदाप समीतक प्रकाशित नहीं हुआ है। वंचम नीलकेसी एक जैनाचार्य द्वारा लिखित है। इस प्रत्येक १० अध्यायों में जैन तस्य प्रतिपादित किए गए हैं। श्री साम्यदिवाकर वामन सुनिने इसपर एक सुंदर वृत्ति हिस्ती है।

नीति ग्रन्थः।

(१) थी रुक्कुरुक् -यद्यपि एक जैनाजार्थ कुछ प्रस्य है उद्यपि हिन्दू इसकी मुन्दरताके
कारण अपनाने छगे हैं। तो मो अखण्ड प्रमाणों
द्वारा जैन प्रस्य सिद्ध किया जा सक्ता है। इस
प्रस्यमें पुत्य-सम्यक्ति और प्रेमका निरूपण १३३
अध्यायों में है। और प्रत्येक अध्यायमें १०
श्लोक हैं। इसके मान और माना ऐसे प्रमानजनक हैं कि अन्य २ वर्भावायोंने मी इसमेंसे
श्लोक उद्धत किये हैं। और युरोपकी जार
पाषाओं में इसका अनुवाद हो जुका है। यह
ईमाकी दूसरी शताब्दीके पहिले ही पहिलेका
रिवत है।

(२) नलादियर-एक उपदेशात्मक प्रत्य ४० अव्वायोंके ४० श्लोकोंमें पूर्ण है। इसमें सांसारिक सम्पत्ति, ऐश्वर्ये, यान-कीर्ति, जीवन आदिकी शंगमंगुरता तथेव आत्मकीनंता आदिकी

महिवाका दिग्दर्शन करावा है। इस ग्रन्थकी रचनामें कारणभूत जो कथा है वह इस प्रकार है कि अनुमानतः २००० वर्ष पृष्ठिले पूर्वमें एक मीषण अहाल पहा जिलके कारण अनुमा-नतः ८००० जैन मुनि दक्षिमकी और आकर प्राण्डय राज्यमें पहुंचे । यहांके राजा उपपेहर-छीने उनका भच्छा स्वागत किया। और उनका विशेष अतिथितस्कार किया वर्गोकि राजाको विद्वान प्रस्थींसे अधिक प्रेम था। कुछ मास व्य-तीत होने पथात उन साधुओंको ज्ञात हुआ कि पूर्वमें किर धुकाछ है। इस कारण उन्होंने लौट जानेकी इच्छा प्रगट की और उप्रपेहरलीकी अनुमति मांगी। परन्त राजा इन महात्माओंकी संगतिसे वंचित नहीं रहना चाहता था इस छिए वहीं ठर्रनेकी पार्थना की। मनिसंव इससे सहयत न हुआ। और शजासे पुनः अनुमति लेनेके स्थानमें वे एक दिवस प्रातःकाल राज्यमहलको त्यागकर पूर्वकी और प्रस्थानित हुए, यद्यपि जानेके पहिले पत्येक मुनि अपने २ भासन पर एक एक श्लोक जिल्लकर छोड गए। जब राजाने उनके जानेके समाचार सुने तो वह वहां आया और उन श्लोकोंके पत्र देखें । उनके देखते ही उसे कोप था गया और उन श्लोकों को कितवा दिया वैगार नदीमें । परन्तु वे पत्र नदीके प्रशहसे उल्टे वह निकले और मतुष्यों की भीर किनारेसे सह रहे निसे देख मनुष्य उन्हें उठा छाए ! और राजासे सब बृदांत कहा। रामा भी विस्मयपूर्ण हुआ। और अप-नेको विक्तारने छगा । हाधुओंके प्रति श्रद्धा-माव पगट करनेके हेत शताने उन इलोकों को

एक पुस्तक स्थमें संग्रह कर छिया। और उनमें चार पद होनेके कारण उनका नाम ' नलदिमर ' रक्ता। कुछ काल पश्चात एक तामिल बिद्वान्ने इनपर वृत्ते लिखी और इन दलोकोंको ४० अध्यायों में विभक्त कर दिया।

(३) पलमोलीननक-(४०० उक्तियां) इस ग्रंथमें ४०० इलोक हैं। इसको एक जैन राजाने संक्रकित किया था। वह राजा पाण्ड्य देशके मनहराय नामक प्रदेश पर शासन करता था। और एक भैन द्वाराकृत उसकी वृत्ति मी प्रप्त है । प्रन्थका महत्व मि ० "मुडक्टियर द्वारा विखित मुमिकाके निम्नांशसे प्रगट हो नाता है। " इस अंथका पड़मोली नाम इस कारण है कि प्रत्येक इंडोकके अंतिम पदमें एक उक्ति (कहाबत) का समावेश है। बद्धपि कविताके कारण कहा बर्तों में कुछ परिवर्तन यत्र तत्र हो गया है। परन्त अधिकांश कहावर्ते प्रचलित हैं और बहुत सी सुद्धा दी गई हैं। अन्य ग्रंथकारोंने भी इन उक्तियोंकी उद्धृत किया है प्रत लाज पर्यत न कोई प्राचीन अथवा अर्वचीन ग्रन्थ ही उपटट्य है जिसमें २ इस छगमतासे उक्तियों (बहावतों) का संग्रह किया गया हो । इस अंथकी यही विशेषता है कि मद्राके अंतिम कवि सम्मेछनमें बह कहावतें चाल थीं। इनके व त्ती इन वहाबतोंकी शाचीन छिलते हैं। अतः यह मंच तालिम मामाकी पाची-नताका पोषक है। प्रत्येक इडोककी ६ री वंक्तिमें प्रत्यकर्ता किती रामा अथवा स्त्रीको सम्बो-धन करते हैं। और पहली दो पंक्तियों में मन्धकर्ता कापना मान प्रगट करते हैं और अंतिम पंक्तिन

कहानत है। किसी ? इलोकका संकलन मास्यन्त ही मनोहर है। और कहीं कहानतकी पृष्टियें अन्योक्ति मी है। अंपकर्तामें कृतितल शक्तिके स्थानगर विद्वत्ताकी प्रधानता है। इसी कारण इलोकों में पुन्दरता इन कहानतीं के कारण ही विशेष है। यद्यपि अंप कर्ता जैनवर्माब्हम्बी है पर पक्ष-पातसे दूर है। इसमें मुख्यता प्रस्थार्थको लेकर वर्णन किया गया है।

- (४) थिनैमलयमें १९० श्लोक हैं। इसके कत्तीका नाम कनिमेववियर है। इसमें पंच अंतरंग विषयोंका वर्णन है (?)
- (१) सिरु-पंच मूलम्के कर्ता करियसनने इसे ९८ श्लोकोंमें पूर्ण किया है। प्रत्येक श्लोक में पांच विषयोंका उल्लेस है।
- (१) येलदी—के कर्ता किनमेविवयर हैं। इसके ८० रहीकोंमें है है उपदेशात्मक शिक्षाएं हैं। यह ही ६ अंग महुराके अन्तिम किव सम्मेदन द्वारा विख्यात १८ किलकनकमें समा-वेशित किये गए थे।
- (७) अरनेक्षारम्के कर्ता मुनैयादियरने २९२ श्लोकोंमें जैनधर्मका वर्णन किया है।

व्याकरण।

- (१) अह पोक्ल-श्वकनम् शंकविशामन-म्बियर द्वारा रचित है। यह भत्यन्त पाचीन तामिछ व्याकरणकी प्रस्तक तोछहीयमके तीतरे. मागका सुक्ष्म आकार है।
- (२) यप्पारनगरूमके कर्ता मिन कनक-सागर हैं। इसमें पिंगड सुर्वोको २ अध्यायोंके ९५ रहोकोंमें वर्णन किया है।

- (१) यप्पास्त्रगसः सारिक्यः-उपयुक्तं भंग पर ग्रुनि अस्तातागर द्वारा वृत्ति है।
- (१) वीर चोलियम्-के कर्ता बुद्धिमित्र अनुमानतः एक जैन थे ! इसका नाम शमा वीर चोलके नाम पर है । इस पर १८१ दलोकोंकी एक वृत्ति भी है जिसमें असर शब्द आदि विषयोंका वर्णन है । यह अनुमानतः इसाकी ११ वीं शताब्दिका है ।
- (५) नान्नुस्नके कर्ता विख्वात पावनंदी
 मुनि हैं। इन्होंने यह ग्रंथ अमरमरनसीय गंग
 रामाकी इच्छा पूर्ति हेतु छिला था। यह
 रामा बोछवंशके तृतीय कुछोश्चनाके सहकारी थे, अनुमानतः यह ग्रन्थ १२ वीं
 शताब्दिके अन्तका रचित है। कारण कि सम्राष्ट कुछोश्चना तृतीयको सन् ११७८ ई० में
 राज्याधिकार प्राप्त हुआ था। इसमें केवछ असर
 व शब्दोंका वर्णन है। प्रति वर्ष मदास विदय
 विद्यालय द्वारा यह ग्रन्थ मेट्रीक, एक. ए. और
 वी.ए. की कक्षाओं तामिल त्याकरण रूप प्रविष्ट
 किया जाता है।
- (६) ने मिनदम् के कर्ता गुणवीर पंडित ने इस ग्रन्थके ९६१ छोकों में असर व शब्दोंका निरूपण किया है।
- (७) अच्छनन्दिमस्यके कर्ता गुण-वीर पंडितन इसमें पिंगडशासका वर्णन किया है। को जगन्धः

चुड़ामणिनिगन्दु-को १९ बध्यायोंमें मण्डलपुरुषने रचापा । यह अपनेको उत्तरपुराण के कर्ता गुलभदावार्यका शिष्य बतलाते हैं। और उत्तरपुराण सन् ८९८ ई० में पूर्ण हवा इत कारणसे तथैर वह राष्ट्रकुट वंशीय राजा भकाक वर्ष कृष्णरायका वर्णन करते हैं जो ८७५-९११ ई० के मध्य राज्य करते ये उस कारणसे भी यह अन्य ईसाकी १०वीं शताब्दि के पूर्व माग में ही रवा गया होगा।

ज्योतिषशास्त्रः

जिनेन्द्मलय-तामिक्ने ज्योतिषका भच्छा प्रनथ है। उसके कर्ता संभवतः चिनेद्र व्या-करणके कर्ता पूज्यपाद स्वामी ही हैं।

अन्य ग्रन्थः

मेरुमन्द्र पुराणम्-१६ सर्गोके १४०६ इक्रोकोंमें बामनावार्य द्वारा कत है। इसमें मेरु और मन्द्र नामक दो आताओंके चरित्रके साथ साथ जैनतस्वोंका दिग्दर्शन कराया है।

तिरुतुत्तरन्धन्धीके कर्ता अविरोधी-नाध है।

तिकरुलम्बकम्के कर्ता उत्तरेव है। इसमें पूर्णतया जैन तत्वोंका वर्णन है।

इन प्रन्योंके अतिरिक्त तामिक मावामें कित-नेक स्तोत्रादि हैं निनमें मगवान व्यक्तिक गुणों का स्मरण है। हमारी जानकारीमें अभी उपर्युक्त प्रन्थ ही जैनावार्य कृत हैं। इनमें से कितने क मद्रास वि० वि० की उच्च परीक्षाओं में प्रविष्ट हैं। और अन्य चमीवकम्बी विद्वानों द्वारा प्रकाशित किए आ चुके हैं। परंतु अति खेद है कि दक्षिण प्रांतीय जैनियोंने इन प्रंथोंके उद्धारार्ष कुछ भी प्रवस्त नहीं किया है।

बहुवादक-कामतामसाद् जैन -बरेली। -->>-®-≪---

🔧 उजहा उद्यान । ६५

देखकर उनकी दशा उद्यानकी । कली मुरझाने लगी है शानकी । पूर्वेमें इसकी अनुपम थी छटा । आम क्यों अस्तत्व इसका है प्रशाशी।

प्रथम ही ये वृक्ष सब उद्यानके ।
हो रहे ये छहछहे सब जानके ॥
किन्तु इनमें चेतनां अब ना रही ।
शुष्क होते जा रहे हैं सब ही ॥२॥

हैं कहां वे अब मनोहर डाडियां। हैं कहां वे अब मनोहर क्यारियां॥ हैं कहां वो सुमनकी विकसी कड़ी। हैं कहां वो सुमनकी मधुर केलेकी फड़ी॥३॥

इस तरह उद्यान सन उताह है। दिखता न उसमें इक हरा भी झाड़ है॥ हे निजाता हम कभी ने दिन पार्चेगे। भनकि इस उद्यानको हरआयँगे॥॥॥

उसनक अहरा रूप कोईने कहा। नयों मुक्त हो अगतमें तुप अहा॥ पर्वेतना ही इस अगतकी रीत है। इस किये करना न इससे प्रीत है॥९॥ को प्रथम ही देश उनति की वा ।। हो गई अश्ठीक्रमब उपकी कथा ॥ को प्रथम ही जाति उनति पा रही । वही अवनतिके विवरमें जा रही ॥६॥

जो प्रथम धनके विद्याशी ही रहे। देखळो वे आन दर दर फिर रहे ॥ ऐसी जनस्थामें घरे जो धीरता। है प्रशंसायोग्य उसकी वीरता॥७॥

हुख हुनसमें जो पिये समता नीरको । उनके बराबर इस जगतमें बीर को । इसक्रिये संसारमें जब तक जियो । छुसद 'गोरेकारू' सपता रस पियो ॥८॥

गोरेलाक-नवेरा (दमोह)

S-2

→ असे संसार दृश्य । अस्

भटनी में हाथीने पंथी,
चेर लिया कहु रक्षक कौन।
बरतर देख पकड़ डालीको,
लटक गया पंथी घर मीन॥
हाथीने तक खूब हकाया,
मधु लता उत्पर या जीन।
उहकर अवस्ती कप्रसे लिक्टी,
बंधी का दुक्सका भीन॥ १॥

डाड़ीको दो मुसे काटे,
नीचे कूप अंध नहिं पार ।
चारों मुखपर विवघर बैठे,
नीचे बैठे अजगर मार ॥
धुरी द्धा पंथीकी इसकर,
सत जन उससे कहे प्रकार ।
आव र तिन महा दुस्सको,
बैठ विमान सुक्स अवतार ॥२॥

कहे अमागा किंचित ठहरो,

शहद बूंद इक गिरती है।

ताकुं चाट वेगि आषत हूं,

यही हमारी विनती है।।

इतनेमें तह दाली दूटी,

यरी क्ष पंथी रोवे।

सर्वे द्वा पहि धानगर मुसमें,

नरतनको सब यों सोवें।। ६॥

हला दृश्य यह भव जीवनका, देखो नया नहिं बीत रही। वन संसार काछ करि पंथी, संसारी इक बीव सही॥ या तरु हाछी अध्य छुटुंबी, मक्सी अहनिस मुसे जान। विषय वासना बूंद पश्च है, सज्जन गुरु उपदेश महान॥॥। देखकुसार जान, विश्-यकुननर।



"जनविजय" प्रस-सुरत र

" जैन समाजनी भू— →भू वर्तमान-परिस्थिति "

્(તિવેદક—મુલચ'દ "નિર'જન" દાહાદાનવાસી.)

भिक्ष सभये, सहस्ते। वर्षा था गंभीर गर्जा करतार ' अहिंसा परमोधर्म' ना हिल्य सिद्धान्तता पाझक, श्री वॉरअगवानना અહિં सामयी અने आत्मिहितेषी धर्मना धारक, जैन अनुयामीथी आ બારત દિગ્ત ભ્યાપી હતા, તે આજ ત્રેત્રીસ કરાહની અંદર આંગળી માના વેઢામાં ગણી શકાય તેટલી ૧૧॥ લાખની સંખ્યામાં આવી રહ્યા છે. અને તેથી પહ્યુ વધુ શાચનીય ચિતાર તા એ ઉદ્ધાની છે કે એ નજીવી સંખ્યાની અંદર અનેક શાલીએદ દિપ્તિગાચર થાય છે. એ ગાલીબિલતા પકાશમાં લાવતાં હદય-બ્યામ શ્રામથી ચિતાર છે કારસ કે અવની અંઘ કરાશી વિરાધ જાય છે કારસ કે અવની અંઘ કવારીયે, આવ ही स्मरीये लाज.

प्रिय समाज पुत्रा ? ज्यारे अहिंद्या परमोधमंती ज्यारताना दिव्य प्रश्नश्च पड़ी रखी छे. ज्यार भात्रना ढह्य-व्यामे, भात्रना ढह्यमां, भाने व्यक्तित्रत ढह्य-व्यामे, भात्रना ढह्यमां, भाने व्यक्तित्रत ढह्य-व्यामे, भात्रे पछी ते ढिंह छे हे सुससमान हो, श्चिम हो हे पारसी ढी, परन्तु भाज ते। महिंसा धर्मना तारहरूप भारती छो, परन्तु भाज ति हव्य भंत्रना नाह माजिश छोपडीमां, भादिसाना हिव्य भंत्रना नाह माजिश छो। छो, तो भनाहिया भादिसामधी सुन्ना धारह-वीरीमे, पोतानी पीरत्नता हाण्यी, भानम प्रयास इरतां सढायह न मेले तेया पूज्य पराक्ष (Indirect) सढायहने भाष्यी। जन्म सिद्ध ढेड मानी सदायहण थवुं भेज स्वयं छे.

પ્યારા સમાજ સેવકા અને વિદાન નેતા-મચુ! જે હરલામ કામ દીર્ઘ સમયથી પશુ-ઓના વધ કરતી પ્રતિહાસમાં આવેખાઇ છે, તે આજ ગાયના વધ કરવા તા શે? પરન્તુ ગાવધ નિષેધાર્થે રાપ્રાચ્યુ સમર્પા નિર્દોષ માથાને સુકત કરે છે. બન્ધુએ ? આપણે દ્યામયી ધર્મના પાલક જે આ અખીલ હિંદમાં પ્રવર્તાએલી ચળવળના ભાગોકાર નહિ થઇશું, તેા સમાજની કેવી વસ્તુ સ્થિતિ થાય તે પર વિચાર કરવા આપને હસ્ત મુકું છું.

અહિંસા ધર્મની દીતેાસાદી (Philosophy) ના અત્યંત બારીક સિહ્યંત કે જે હૃદય શયથી તા શું? પરન્તુ અન વચનથી હિંસા કરવામાં પાપ સમજે છે, કૃપિ છે, ધૂજે છે તે હૃદય આજ પ્રમાદવશ સુરત જો તો હું તો એમજ રાતું કે હજા જૈન સમાજના બાગ્યા-કાશ્વના જ્યાતિકપ સિતારા અત્યંત દૂર છે.

જ્યારે અહિંસા ધર્યના મમેથી અભિન શદ્ધ ખાદીના અંગેકાર કરે છે, તે તમારે એ લોહી અને અરબીના પટથી ખનતાં વિદેશી વસ્તાના મોહમાં મશયુલ ખુશ કેટલી પર્યાય વ્યુતીલ કરવી છે? નહિં; નહિં? એ તા સ્વયમેય નુષ્ટ નિગાદની જંછરામાં જુકાવાલું સાધન છે.

પ્રિયવરા ! શુદ્ધ ખાદીને ધારસુ કરવાથી અહિંસા ધર્મના પ્રચારકના સહાયભૂત સંઘશું, તેટલુંજ નહિં, ળલ્ક આપણી અહિંમા ધર્મની દિલ્ય જોતરતાને પુત: પ્રદીપ્ત કરીશું. રતદેશી ધારસુ કરવાથી આર્થીક દષ્ટિએ દેશને લામદાયક થઇશું તેમજ અખીલ ભારતવર્ષીય દિલ્ જૈન મહા સભાએ પમાર કરેલા પ્રસ્તાવોને દઢ કરી સ્વરાજ્યનાં પશુ હિતંયો થઇશું. અહિંસા મંત્રના પ્રચારકને સંકામરપ શ્વાથી ધર્નિક ઉબલિ, સંગાજ હન તે અને દેશ ઉબલિને હથાત કરવામાં ભાગ્યશાળી અનીશું.

પ્રિય, ભંધુએ ? હું નિ:ત દેવ કહું છું કે આ દિવ્ય મંત્રના સહદય અંગીતર કરયાયા હીત્યન માજના ભાગ્યકાશના નિસ્તેજ થયા હારા પુન: પ્રદિપ્ત થશે. પ્રકાશમય થશે.

આશરે ૩૦-૩૫ વર્ષથી જૈન સમજમાં ધાર્મિક વિદ્યાના પ્રચાવી જૈન પાઠનલામા, જૈન વિદ્યાલયા, મહા વિદ્યાલય, જૈન બ્રહ્મવર્યાત્રમ, જૈન ખેર્ડિંગ હ-ઉસીમ (જ્લાલય) આદિ ચાલી રજ્ઞાં છે. જૈન સમજે, સમાજની પ્રતિદિન થતી ડુંક વસ્તી, તથા દિન પ્રતિદિન થતી ધર્મની ભવનતિ નીરખી આ સંસ્થાઓને આર્થિક સંક્રાયતા પશ્ચ કરી રહી છે. અને તૈનાથી પંડિતા પશ્ચા તૈયાર થયેલા છે કે જેઓથી સમાજ ઉત્તન્ મરીતે પરિચિત છે.

પરંતુ દુ:ખ તો એ શ્વાય છે કે આ સંસ્થાઓના દોવાં છતાં સમાજ સંખ્યા પ્રતિદાન ઘટની ચાલે છે, અને ધાર્મિક વિદ્યાના હાવાં છતાં જ્ઞાનની રાશની ન હાય તો તે આશ્ચર્યજનક કિંવા બીજી શું કહી શકાય ? તેલ બત્તીના હાવા છતાં જો રાહાનીના આભાવ હાય તો અવસ્ય આશ્ચર્યજ શશે.

आबर देखि हो डावता भासम पडे छे हे दलके। જૈનીએ કહેવાતાં છતાં જૈન ધર્મ શં છે. તેનાં શ' સિહાતા છે. તે તેઓને સ્વધ્નવન છે. આજ स्करात तथा अन्य प्रांतमा अवा द्रष्टिगायर श्राय छे हे णमोकार मंत्र ते। शं? परंत तेओने ते। ध्रधरक सभ अने दःभनेः द्यता, छवन अने મરકાતા સમર્પનાર પ્રતીત થઇ રહયા છે. તેઓ हिनशत भृति ते। शं ? रंतु के अध भृति तेमती સમક્ષ હૈાય તેતે. પૂજા કરવામાં ધર્મ માની રદ્ધચા છે. તેઓ અધાર મિધ્યાત્વના સમુદ્રમાં હળી રહય છે. આ ઘટનાં ડિપ્ટ સમક્ષ થતાં હૃદય બિજા થાય છે કે સંરથાઓના હજારા રૂપીઓના વ્યય કરી ધર્મ શિક્ષણ આપવામાં આવે છે તે છતાં સમાજ ધાર તિમિર રૂપ ૧૦૧ વાદિળાઓમાં ગાયાં ખાઇ રહી છે. ઉપદેશકાની પ્રથમ કરજ છે કે તેઓ तेवा स्थल शाधी स्वयमेव धीरती समालता विद्धार हरे.

યુજરાત આજ અન્ય પ્રાતો કરતાં અરીમ પરત લ છે. આજ ગુજરાત પેતાની ધાર્મિક અશ્નિત્વતા જોગની રાખવા માટે એક પંડિક પગ્ન તૈયા કરી લક્યુ નથી. પેતાની સંસ્થાએની પ્રતિજમેં 2-કરવા વ્યવસ્થા કરવા એક વ્યવસ્થાયક પગ્ન બનાવી શક્યુ નથી.

હાય! સાળ સાળ વર્ષીથી હાળરા કપીઆ દિલ્લાથી દુર કરી તાંસ્થાએન ચલાવીરડયા છે, તે સંસ્થામાંથી આજ ગ્રજરાતના ધાર્મિક તત્ત્રમાં પ્રમાણ કરાવતાર નર નહિં તો આથી આશ્વર્ય જનક કિંગ દુઃખપદ ચિતાર બીજો કરી હાઇ શકે?

ગુજરાતની બાહિંગમાંથી, ડાક્ટર્સ, પ્લીડર્સ, લેગર્સ અને સાલીસીટર્સ પસાર થાય છે અને તેઓને હું સહદય, અભિનં દું છું, પરંતુ આ પરિવર્તાનશીલ અસારસંસારમાં અસંખ્ય વાર જન્ય ધી વ્યયહાર કુશળ થતી, મૃદસંતાર ચલાવ્યાં, સુખ યા દુ:ખંથી જીવન વ્યતિત કર્યાં અને મતુષ્યતાં સુખ્ય ધર્મ ધાર્મિક ઉન્નતિ અને આદિમક ઉન્નતિને વિકાર્યો, પરન્તુ વ્યક્તિ માત્રને જન્મ મરણનાં દુ:ખંધી વિરક્ત કરનાર અદિમક ઉન્નતિ અને ધાર્મિક ઉન્નતિને ક્યારીઓ જ્યાં સુધી માત્રય હદયની નાજીક-હદય-કંત્નેમાં પ્રદુષ્ટ્રીત થશે નિદ ત્યાં સુધી મનુષ્યને આદિમક સુખ મોક્ષની પ્રાપ્તિ અતિ દુર્લભ છે.

ખારા વ્હિત સમાજ પત્રકારા પ્રત્યે પશુ તસ્ત્ર તિવેદન છે કે તેઓએ પ્રથમ સ્વદાતીના, રીત-વિજોને, તેઓનાં અદ્યાર મિચ્યાત્ત્રને, તેમજ ક્ષેશ અને અસાંતિના, કાંડા સ્થળને, ગાતી ગાતીને પત્રામાં પ્રકશ્ચિત કરી, ઉપદેશકાને સ્થતા કરી, ઉપદેશ કૃષે તેઓને સુધારવા પ્રયત્તા આદ-રવા અવસ્તતાં છે.

પ્રિય સુધારકા ! સંસ્થાઓતા સંસ્થાપકતા ધ્યેયને વિસારા. તેમતું ધર્મ શિક્ષસ્ આપનાતું દસ્યબિંદુ મત્ર ધર્મપ્રચારજ હતું; પણ આપ્ર પરિવર્તન ધ્યક્ષું દિશોચર થાય છે. આજ ગુજરાતના ઘણાં માંધા પાદશાળાતા અંગે પંડિતા ! પંડિતાના ધર્મા માંકશાળાતા અંગે પંડિતા ! પંડિતાના ધર્મા માંકશાળાતા અંગે પંડિતા ! પંડિતાના સો લોનાને કરયાનું કાંઇ કારણ નથી. ગુજરાતના સંલોનાને કરયાનું કાંઇ કારણ નથી. ગુજરાતના સંલોનાને કર્યાનું કાંઇ કારણ નથી. ગુજરાતના સંલોનાને કર્યાનું કાંઇ કરયાનામાં મહત્ત્વા વિદ્યા પ્રાપ્ત કરાયા અને તે વિદ્યાર્થી એહારા ગુજરાતમાં ધર્મપ્રચાર અને ધાર્મિક વિદ્યાનું કાર્ય લઇ જે તમારા હજારા રૂપીયા અટારકાના રીજી સ ખર્ચમાં બળાદા અઇ જાય છે, તેને અટકારી વિદ્યાન

લયા સ્થાપી ધાર્મિક જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ કરા અને વિદાન પંહિતા તૈયાર કરા

દહાલા ગુર્જર વીરા ! એવી પરતંત્ર સ્થિ-તિ ક્યાં સુધી ૮કશે ? તેના પૂર્જ વિચાર ″કરવા આપનાજ કરકમળે.માં સમર્પું છું.

બંધુઓ ! જ્યારે સમાજ હજારા રૂપીયા ધાર્મિક શિક્ષણના પ્રચારાર્થ દાક્ષયા દૂર કરી રહી છે, તો ૪૦-૫૦ વિદ્યાર્થા કિક્ષા પ્રાચ્ત કરા પંડિત બની પોતાનું શુજરાન કરી શકે; તેમાં આપણે સંતુષ્ટ થવું શું હોઇ શકે ! કારણકે જો સમાજનું એજ લદ્ધયબિંદુ હતું કે, હજારા નવયુ-વકા ધાર્મિક શિક્ષણ પ્રાપ્ત કરી, નિઃસ્તાર્થ બાવધા જૈન ધર્મના પ્રસાર કરે: તથા માત્ર દેશ માંજ નહિ; બલ્કે વિદેશામાં પશુ પરિત્રમના કરી, જેન ધર્મના અહિંસામની દુદું બ નાદને પ્રસારાવે; ત્યારે તેને તેમાંના સહસ્ત્ર બાગ પણ સંરથાઓથી કૃથઇ શક્યો નથી; અને દશા દેખતાં ઘઇ શક્યાની આશા હોવી દ્વામાં કિલ્લા બાંધવા સમાન છે.

જો રહેજ દાર્ધદર્શિયા દેખશા તેં માલમ પડશે કે, જે સરતનો ડુંક સમયમાં રાજ્યના લગામ સુદંઢ કરી તેજ પ્રીરતી માએ સ્વધર્મની પતાકા પશુ હિંદના ગામડે ગામડે દરકાવી સુકી છે.

પ્રિય સમાજસેવકા ! મારા વ્યાભાષાય એમ નથી કે વિદ્યાલયા લાભદાયક નથી: ખલ્કે વિદ્યાન લયોની તો સર્વત્ર તેમજ ખસસકરીને ગુજરાત અત્યંત **-**માવસ્યકતા છે. તીર્થકોત્ર પાવાગઢ પર ચ્યાપસા વિદાન નેતાગરોા વક્ત-ત્વરાહીં યી પ્રસ્તાવ પણ પ્રસાર કરી સુક્યા શુજરાતમાં સંકત ₹. મહાવિદ્યાલય રથાપવાની અત્યંત આવસ્યકતા છે, પરન્તુ દિલગીરી સાથે નિવેદું છું કે. મહાસબા-એાના અને પ્રાંતિક સભાઓના પ્રસ્તાવાનું જીવન ક્ષણ માત્ર છે. ગુજરાતમાં સંવકત વિધાલય અને તે સાથે ધાર્મિક શિક્ષણ આપવાથી, હું :નિઃસ દેહ કહું છું કે જે આજ ગુજરાત ધર્મ ખાખતમાં પછાલ છે, તે વસ્તુ સ્થિતિ હુંક સમયમાં સ્વપ્નકત હતી ન હતો થઇ જશે.

વિદ્યાલયો, પાદશાલાએ અને બાર્ડિંગાના શિક્ષણમાં, ધર્મ પ્રત્યે સાચા પ્રેમ, જતિ ઉત્ધાન અથવા સમાજ સુધારની તીલ્ર ઉર્મીએક, પરાપકાર પુદ્ધિ, સ્વાર્થ-ત્યામ, નિઃકપાય, અને આત્મ કલ્યા- ખૂની પવિત્ર બાવનાતી પ્રેરણા થાય, વિદ્યાર્થીએક સમક્ષ "સ્વર્ગીય પંડીત ગાપાલદાસજના જીવનને આદર્શક્ય સ્થાપન કરી, શિક્ષણ અપાય તો સમાજ આજ નરરતોથી છક્ષકી ઉડે.

જો સમાજ સેવકા, સંસ્થા-મંચાલકા, બાલી વીર સંતાનાની નાજીક હૃદયકું જોમાં ઉપરાક્ત બાવનાના પ્રકાશ પાડતા કડિગહ થાય, તો સમાજ જોક શીતલપસાદ પ્યલ્લાસારીજી તો શું, એક ગાપાળદાસજી તો શું! પરન્તુ હળતી સ્વાર્થ ત્યાંગી વિદાન નરસ્તો સમાજની દિષ્ટિગાચર થશે.

જૈન સમાજના નવ્યુકો ! અહિંસા ધર્મના બઃગિ ધર'ઘરા ! ધર્મના શુભચિંતકો ! સમાજના સુધારકો ! ધાર્યું, હજારા વર્ષી ધાર્યું, અને તેતું પરિચામ પ્રત્યક્ષ નીરખ્યું.

પ્રિયવરા! વાતાવરસુ કટાકટોતું છે, ચેતત થતો. જગતના રચૂવ અધકારમાં જ ખતી ગએલાં ચેતન હલ્યતે પુનઃ સચેત કરા. આત્મ• સ્વરૂપતું ચિંત્વન કરા. નિશ્ચદિન શ્વાસ્ત્ર સ્વાધ્યાય કરા. ધાર્મિક ગાનની વૃદ્ધિ કરા જૈનતત્વ (philosophy)યો પરિચિત અના. દ્યામથી ધર્મના પાલકા ! તમારા હલ્ય દ્યાશન્ય નથી. તમે જૈન સમાજની નિસ્તેજ થતો પરોસ્થિતિના પુનરાહાર કરી શકશા.

ભિતિષ્યતા ધર્માસ્ય'ભેષ્ટ! પ્રમાદતે પરહરેત જીવનના વ્યક્ષિકાને પચુ જૈન સમાજતે ભારતમાં કેન્દ્ર સ્થાન સમર્પી અને—

અહિંસામયી ધર્મને અને વીર પ્રસુતા સાચા સંતાનપદને દીપાવો

નિવેલ્ક:-- } સમાજ શુભચિંતક, "નિરંજન"

खंभातना प्राचीन तीर्थनी यात्रा.

મ્ળાપણા ગુજરાત પ્રાંતમાં કાઠીયાવાડને બાદ કરતાં રહેલા ભાગમાં દિ. દે/તાનાં તીર્થદ્વેત્ર જો કાઇ હોય તા તે સખેદ, પાવાગઢ અને ખંભા તમાં દિ. જૈન મેદિરાજ છે.

હું, રા. અંખાલાસ તથા રા. ખીમચંદ શેંઠ ગત બાદરવા સુદી હ ના રેજ સાંજે હ વાગે કાલ્યુસાથા નીકળા સાયમા સ્ટેશનથી ટ્રેતમાં ખેસી ખંબાત સ્ટેશને ઉત્તયો. ટીકોટ ચાર્જ દોઢખાના આપ્યા સ્ટેશનથી પગે ચાલી હમારા એક સ્તે-હીતે ત્યાં સુધુ રહ્યા, કેમકે મંદિરના અંગે એક પહ્યુ મકાન મુસાક્રેરોને હતરવાનું નથી.

પ્રાતાકારે રામાદાયા પરવારી સ્તાત કરી અષ્ટદ્રવ્ય લઇ મંદિરમાં ગયા. મંદિરમાં પ્રવેશ કરતાંજ નિ:મહી નિ:મહીના ઉચ્ચાર કર્યો. પ્રક્ષાલ પુજરો કરી ગયા હતા, હતાં હતે વધારે કાળછ પુર્વક પ્રક્ષાલ કરવાના ઉદેશ્યથી મજારમાંથી લીંખુ મંગાવ્યા અને પ્રતિમાઓને લીંખુ વડે પ્રદ્યાળ કરી અંગ સાપ્ર કરી અભિષેક પૂજન કહ્યું.

રેલ્વેતે અગિયારના ટાઈમ આવ્યા અને તેમાં કાગ્રીસાથી રા. સુતીક્ષાલ અને સાયમાથી રા. માણેકલાલ દર્શનાથે પધાર્યા.

પ્રતિમાજી પર મેવાડા કોમ સંબંધી કંઇક હકીકત હોય તેઃ તેતું ટાંચણ કરવાના ઉદેસ્પથી પ્રતિમાજીના લેખ તપાસવા માંડ્યા.

મે દિરતી ડાબી બાળ્યુ પરતી પાષાસુતી સ્થિર પ્રતિમાં સેખ સિવાયતી જોઇ હમા સર્વે અજ્વયબ શ્ર્યા ને મંદિર બહુજ ટ્રેપાચીન છે, એમ સા બાહી ઉડયા. પસુ સાયેજ પૂજન પ્રક્ષાસદ્યી અનિયમિતત્તા અને મકાનતી જજેત સ્થિતિ જોઇ મન ઉદ્દેય પામ્યાં.

ખીછ પ્રતિમાં કૃષ્ણ પાયણા પાર્ધ્વનાથ સ્વામીની તપાસતાં તેની ઉપર લખેલું છે કે.

सं १५२९ वर्ष फागण सुक्त र शनी मूड संघे कंदकंदचार्थान्यये महारक देवेंद्रकीर्ति देवा-

and the state of t

स्तरपट्टेश्री विद्यानंदि तत्पट्टेश्री मिल्झिकीर्ति सोबंजा प्रतिष्ठितं॥

આગળ ચાલતાં મુળતાયકના પત્થરતા સિ'-હાસન પર કે જે મિંહાસન કરીથી ચારાદેલું -છે, એ સ્પષ્ટ જસ્યુપ છે. એટલે કે તેની પહેલાંનું તેની નીચે માળાદ છે, જેના લેખ ભુસષ્ટ ગએલો છે. હાલના પર લખેલું છે કે—

तं. १४२९ वर्षे महा वरी ७ सोमे मुहड माया सहनड सुर बारठाड श्रेष्टीन् मुलतंत्रे श्री शांति विवं स्था. प्र० स्त•

णीळ पाषाञ्चती सं. १४९९ हुंबड ज्ञातिय मूठसंच सम्पन्दरोतनु गंत्र (पतणनुं सं १६७९ संघारा शा. छक्ष्मीदास जीवरान अरुपाइस पीनणनी

श्री शांतिमुवणनी सं १६६४ मुद्रसंघे संवारा ज्ञातिये शा. जत-वंत वीरजी

सिद्ध यंत्र पीतणतुं

सं. १६८५ मुछतंचे हुंचड......
कक्षीतुंड यंत्र पीतणतुं

सं. १६८६ मूचसंचे हुंचड......

भाषाधाना व्यंद्रप्रख्यां
सं. १६०७ काष्टासंचे स्तंम तीर्थ.....

સફેદ પાયાચુના આદિનાથ હાસ ખંડિત છે. ખડ્યાસન પ્રતિમા બહુજ મનાહર છે, જે પેટ નિચેના ગામમાંથી ગળતી જાય છે.

सं. ११०१ वर्षे काष्टासंघे संवदरा...... अभव्यी भारत पापाच्य स्थिर सं. १९९४ वैसाग सुरी ७ आचार्य विद्यानंदि

ઉપર પ્રમાણે લેખ ઉતારી લીધા ખાદ ધાતુનાં . ભિંભ તધાસતાં હમારા દરેકનાં હદય રડયા સિવાય રજ્ઞાં નહિ. હાય! જે જૈન સમાજ દર સા**લ** નિવન નવિત મંદિરાના પાયા નાંખતી જાય છે તેનાંજ જીનાં મંદિરામાં પ્રભુખિંબની આમ સ્થિતિ! ખેદ છે કે- ઇષોપ્રિય આપણા ધેતાંગર બંધુઓ આપણાં તીર્થ સ્થાનાની પાછળ ખાઇ પી પડેલા છે. જ્યાં જ્યાં દિલ્ જેન મંદિર પ્રાચીન હશે ત્યાં ત્યાં તેને તેઓ અપનાત્રી ક્ષેવા તૈયાર થવાનાજ. અત્રનાં એ ક્ષેકિનાં કેટલાંક મંદિરામાં આપણી પ્રતિમાઓ છે, છતાં આજે એક મંદિર રહ્યું છે તેને પણ તેઓ પાતાનું કરી ક્ષેવા ચક્ષુ ચોંડ-વાના બ્રમ કરવા ક્ષાગ્યા છે.

પહેલાં જ્યારે મંદિરતા કળજો કાસીસા સાય-ભાની દિલ્ પંચને હસ્તક નહોતો ત્યારે તે ઢાંકોએ કેટલીક પ્રતિમાચ્યાને ચાંદીનાં નેત્ર લગાત્રી દીધેલાં. તે પ્રતિમાઓને ત્યાર ખાદ અલગ મહેલી પશુ ગત કશ વર્ષમાં વળી પાછા તે લોકો વધુ વધુ પ્રયાસ કરના લાગ્યા છે. કિલ્ફેરના ચેવજો નહિ તા તે મ દિરને પાતાન કરી ક્ષેશે, તા તમારું નામ અને સાથેજ ધર્મની પણ દાંસાજ થશે. હમા સં. ૧૯૯૫માં ખંબાત એ માસ ઘર રાખી રહેલા ત્યારે ચલા ચહાવેલી પ્રતિમા ત્રણ હતી, તેને હમે ત્રાજી પર સુધી દીધી હતી. આજરાજ તેજ સ્થળે દક્ષ પ્રતિમાએ! દ્રષ્ટિએ પડે છે. માટે હવે ખરી રીતે તે લોકો આપણી પાછલ પડયા છે, એ સિદ્ધ **લાય**. છે, માટે આપણે તે સ્થાનને સુધારી તેને એવું બના-पत्र की धम ह ते के हाथी प्रवेश करी अध्य નહિ. હાલ ઇમારત એવી સ્થિતિમાં છે કે તેમા સારી રીતે શ્રમ સિવાય પૈસી શકાય છે.

મંદિરતી પ્રાચીનતા તેમાંની ભગ્ય પ્રતિમા જોતાં સ્પષ્ટ થાય છે. વધુ પ્રશ્ના માટે ઉપરના. ૧૧૦૧ની સાલવાળા લેખ ભલુ છે. છેવડમાં છેવડ ખંભાતમાં દિંગ જેતની વસ્તી. સં. ૧૭૫૧ સુધી પણ પુષ્કળ ઢાવી જોઇએ કેમકે ૧ પ્રતિમા તે સાલની પ્રતિષ્ઠિત પીતળની છે. વલી ખંભાતના સોકોના સંખંધ સાછત્રા વાળા સાથે ઢાવાતું પશ્

મંદિર પ્રાચીન છે. દર્જાન કરવા યેાગ્ય છે. ઢાલ મંદિર પાસે એક પાઇ પચુ શિલક નથીન મંદિરમાં પૂજા કરવાની પાસીને માટે જે ખંડમાં પાસ્ત્રીનું ઢાંકુ છે તે ખંડ પસ્ત્ર ભાડે આપેલે છે તે ખાલી કરાવવા હમે નિશ્ચય કર્યા અને હમે પ્રતિશા કરી કે આ સ્થાને દરેક મહિતાતી સુદી ૧૪ એ આવવું અને અભિષેક પૂજન કરવાં.

એવી રીતે યાત્રા કરી હમે બપારના સારતી દ્રેનમાં કાહ્યીસા સ્માવ્યા. સંજે અત્રેતું પાંચ બેગું કર્યું. તે ખંબાતની હકીકત અને હમારી પ્રતિજ્ઞાની હકીકત અને હમારી પ્રતિજ્ઞાની હકીકત અને હમારી પ્રતિજ્ઞાની કરીવતા શક્યાં કર્યા કર્યા કર્યા કર્યા કર્યા કર્યા કર્યા કર્યા તેમ જ માન દરસ્ત કરાત્રી તેમે જ માન દરસ્ત કરાત્રી તેમે જ માન દરસ્ત કરાત્રી તેમે જ માન દરસ્ત કરજો એમ હમને જ સાવ્યું. હમે દુરસ્તીને માટે દ્રવ્યત્તી યાયના કરી. તે સાયમા જ ઇ દીપ કરીવું એમ જ સાવ્યા સર્વ વિખરાઇ ગયા.

બાદરવા વદી ૧ ને દિવસે હમે સંજે ત્યાં પાખીતું જમગ હાવાથી સાયમાં ગયા ગયો. ત્યાં ટીપ કરો. રૂ. ૨૦૦) ખરચવા પરવાનગી આપી. મંદિરતે સુધારતાં રૂ. ૨૦૦૦) થાય તેમ છે તા દરેક દિલ્ જૈન બાઇને નિવંતી કરીએ છીએ કે-ખા તી થેમાં અવસ્ય મદદ આપા. મંદિરતે રૂ. ૫૦)ની આવક હાે ખર્ચ ર. ૧૫૦) તાે છે. કાચીસા સાયમામાં હવે જાહાં મંદિર થઇ ગયા છે. જેથી તેમતે માથે ભાજો વધારે પડે અને તેથી જોયતી કાળજી ત રખાય, પણ જો દગ્યની મદદ હૈાય તા મંદિરની વ્યવસ્થા જોઇએ 'તેત્રી તીર્થ ક્ષેત્ર કમીડીએ જે ધર દીડ ર. ૧)ના કાળા નાખ્યા છે તે કાળામાંથી એ સાજવા સંપ્રાના મેવાડા બાઇએમ આ તીર્થને પાતાના કાળાની રકમ ગજરાત પ્રતિના મંત્રો પાસેયો અપાવે તા આ તીર્ધના જર્ણો હાર થઇ શકે.

પગાર જીજ હોતાથી પ્રુંખરો પણ સારા મળતા નથી જેથી કરચિત પુજન તિવાય પણ રહી જાય છે માટે દ્રગ્યની મદદ ખાસ કરી આપવા તીર્થક્ષેત્ર કમેટીના મદામંત્રીને પણ હમેં સુચના કરીએ છીએ. વળી શેઠ ચુનીલાલ હેમચંદ જરીવાલા જેઓ કમીટીના મહામંત્રી છે તથા રા. લાલચંદ કહાનદાસ કે જેઓ યુજરાત પ્રાંતના મંત્રી છે તેઓએ આ સ્થાનની દશા જેએલી છે, તો તેઓ પાતાની કરજ આ તીર્થ તરફની યુજાવશે એમ સંપૂર્ણ આશા છે.

વળી દરેક દિ હતન બાઇને હમા આયક પૂર્વક વિનાવી કરીએ છે.એ કે તેમણે ખંબાવતી યાત્રા અવશ્ય કરવી.

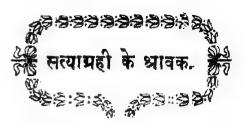
જો કાઇ ઉદાર પ્રહેરથ પાતાના હાથ આ તી ધ તરફ લંભાવશે તા તી ચેના ઉદાર થતાં વાર લાગરા નહિ સાજત્રાની દિલ્ જોન પંચતે પહ્યુ હમા જહ્યાવીએ છીએ કે-તેઓ પાતાના કાળા ખંભાતને મળે એમ ગે દેવહા કરે. પ્રસૃતે કાર્ય સ્રળ પાડા એજ અપેક્ષાપૂર્વક નિરસું છું.

> 🍑 શાતિઃ શાંતિઃ જીબેલિક ઇચ્છક–

માહનલાલ મધુરાદાસ-કા**ણી**સા.

नये २ ग्रंथ मगाइये।

ष्ट्रं निर्वाण विधान १०९६ अमितगति आवकाचार-मागवंदती कृत टीका सहित, अनंतकीर्ति ग्रन्थमाञ्चाका द्वरा छुत्रप ग्रत्य, ए. ४४० मूल्य मात्र (॥=) श्री पद्मपुराणजी (तित्र ए०९२५) ११) पार्श्वनाथचरित्र ए०४२५(पक्की जिल्द) २॥) जैनार्णव (१०० प्रंथका संग्रह) शैलत पदसंग्रह १**−९**(नवीन) 11) शांतिसोपान (व॰ ज्ञानानंदनी कृत) तेनबालबेधकरण्याग(वं,पनालावनी कुत्र)(=) ,, (=) 33 ाहिलाओंका चकवातिस्व 8) मिसंग्रह आवकाचार 4) वित्र केदार व सभी दि जैन प्रन्थ निलनेका पता मैनेमर, दि॰ जैन पुस्तकालय-सूरत।



મહાત્મા ગાંધીજીએ સત્યાચકીએ માટે જે પ્રતિતાઓ ખતાવી છે, તેજ પ્રતિજ્ઞા શ્રાવકા માટે પણ હાેય છેજ, જેથી શ્રાવકતે મટે મથાળાના રાપ્ટ ભારે પડતા ગણી શકાશે નહિ.

આપણા પૂર્વાચાર્યાએ જેવલ નિયમાની યાજના કરી છે, તેનેજ આધારે મું ગાંધીજ અસહકારની લકાઇ ગ્રહ્માવે છે. એમ માફ માનલું છે. આધાર માટે હું નીચેની હકીકલ સરખામગી સાથે રજી કર્ય હું.

- (૧) શ્રાવકનું પહેલું ઘત અહિંસા છે.
- (१) असद्धारनी पहेंद्री प्रविज्ञा अदिसा छे.
- (૨) શ્રાવકા બીજું લત સત્ય પાળે છે.
- (૨) અસરકારના બીજી પ્રતિના સત્યાયદી બતાવી છે કે એટલે સત્યનેજ શ્રદ્ય કરવું.
 - (૩) શ્રાવકતું ત્રીજીં ત્રત ચારી ત્યાગ છે.
 - (3) અસહકારો મા ચારીથી દૂર રહે છે.
 - (૪) બાવકનું ચાર્યું લગ પરસ્ત્રી ત્યામ છે.
- (૪) માંધાજી સ્વરાજ મળતાં સુધી શ્રદાચર્ય પાળવા જણાવે છે.
 - (૫) શ્રાવકનું પાંચસું લગ પરિચક પરિમા<mark>જાનું છે.</mark>
- (૫) અસ**હકારીઓ** ફેશન, માે<mark>હ, વધારાના</mark> ખર્ચ, લ્લાયતી વસ્તુઓતા ત્યાય <mark>કરી હાયે</mark> કાંતી હાયે વચેલું કાયડ સ[ા]દા ક્ષીલાઇયી પહેરે છે.
 - (६) आवस्तुं अर्दुं त्रत हिम्तत भतान्धुं छे.
 - (ર) અસહકારીએ જેલ જવાની પતિના લે છે.
 - (૭) શ્રાવકનું સાતમું ત્રત દેશવત છે.
- (૭) અસહકારતું સ્વરાજ એજ એકજ ધ્યેય છે. દરેક સ્વરાજ્યયાદીએ મરતાં સુધી પણ સ્વરાજ્ય ક્ષેત્રા લહેલું જોઈએ.
 - (૮) આવકાતું આદમું વત દેશાવકાશિક છે.

- (૮) ગાંધીજી દેશને ખાકે અમત્મળળિકાન આપવાની જરૂર જહાય; તો તેમકરતા સમજાવે છે.
- (૯) શ્રાવધાતું નામું લા સમાયિક છે. ને સામાયકિ એપ્ટલે ક્રેટ ંમનાનિગ્રક-ઇ'દ્રિયદમત, અને આત્માપર ક્રેડ નિશ્વય તેજ છે.
- (૯) ગાંધીજી દરેકને ઇ'દિવદમાન, ખેતાનિગ્રહ અને શાંતિમય અસહકારતું પાત્રન કરી જાતપાદ નિશ્રય મેળવતાં શીખવાતું સમજા શે. સત્યાચકી એતે આત્મેયુદ્ધતા સૈનિકા ત્રસેક એલ્લખ્ય છે. એટલે આ લક્ત આત્માપર વિજય મેળવવા શ છે એમ જણાવે છે.
- (૧૦) બ્રાવકાનું દશસું ત્રત પ્રાપ્યાપવાસ છે. એટલે કે—આડમ, ગાદશ વિગર પર્વતી તિથા-એામાં શક્તિ પ્રમાણે આડારના ત્યાગ કરવા નહિ તે ધર્મધ્યાત કરવું.
- (૧૦) અસહાકારી રાષ્ટ્રમાં તસારી અને જાણીતા આગેવનાતી પુષ્ય તિયોએ!એ દાયવાસ કરી ધંધાથી દૂર રકે છે.
- (૧૧) શ્રાત્રધતું અગીયારમું ત્રત દાન કરવું તે છે.
- (૧૧) માંધીજી પાતાના મૈનિકાને પંચાયન કરાડ રૂપીયા જે પારેશમાં કાપડને બદલે ચાલ્યા જાય છે, તે બચાવવા હાથે કાંતેલું, વણેલું, કાપડ પહેરવા પ્રતિના કરાવે છે, તે તે ઉપરાંત કેટીયા ખાદી કેળવણી, સ્તરોજ્ય કાળા ઇત્યાદિમાં દ્રવ્યતી મદદ આપવા જગાવે છે.
- (૧૨) બ્રાયક્ષનું સમ્યક્ત એ દરેક તતની ભૂમિકા છે, કેમકે બ્રહ્મ સિવાય એક તતાનું કળ મેળવી શકાતું નથો.
- (૧૨) અહિમ નિશ્વય એજ સખ્યકેલાં તે અમહકારની પહેલી પ્રિતિજ્ઞાજ છે. અને તે સિવાય રવદેશી વડા લઇ શકાય નહિ, તેમજ દેશારેય માટે જાતની કુરતાની પગુ કરી શકાય નહિ.
- (૧૩) શ્રાવકા મરજાતિ પસુ દારૂ મંસ-જીમાર, મર્જ્યિકા, અને પરસ્ત્રી સેવ'ન કરી શક્તા નથી.
 - (૧૩) અમહકાર તેના ત્યાય કરવા મજબુલ

- બસામણ કરે છે અને દારતે માટે તા પાતે પીરેષ્ટ નહિ, તેમ બીજાને પશ્ચ પીતા દેવા નહિ અને એક જશ્નને ને તે રસ્તેથી પાછા વાળ્યાનું મહદ પૂર્ય બતાવેલું છે.
 - (૧૪) શ્રાવકા જીતે દિવ મણાય છે.
 - (૧૪) અનહકારી પણ છે દિવ ગલાય છે.
- (૧૫) ત્રવો ઉત્તરમુશી જેવાં કે લજળ, દયા, ધમલતા, પરદેષ ઠાંકતા, પરાપકાર, સામ્ય દિષ્ટિ, સુત્ર અંકતા, પરાપકાર, સામ્ય દિષ્ટિ, સુત્ર અંકતા, મિલાર, દેવે વિચાર, દાન, શ્રીલ, કૃતતાતા, ધર્મતાતા, સંતાપ, સ્યાદ્ર કાષણ, અબહ્સત્યામ, છ કર્મમાં સાવધાન વિગેરે ધારસ કરી આદર્શ હવત સુજરે છે.
- (૧૫) અમહકારીઓ પણ લજ્જા, દયા, પ્રસ-લતા, પરાપકાર, સરબા ભાગ એટલે કે-હિંદુ મૃસલમાન એક્યતા સાધવી, દરેકતે ભાઇ સમાન લેખવા, ગુગુવાન બનવું, પારકાનું દુઃખ દૂર કરવા પ્રયાસ કદરે, સર્વ પ્રિય બનવું. શાંત બિજજતા બનવું, પર સંત્રામાં ધન્ય માનવું, શીલ પાળવું, પરમાત્મા પર વિશ્વાસ રાખવા, સંતેત્વો બની શુદ્ધ ભાષ્યુ કરવું, દારૂ માંસાદિના ત્યાંગ, અને કાંત્રવા વસ્ત્ર્વામાં પ્રવીસ્ત્રુ બની અદદ્યો જ્વન માળવા બનતું કરે છે.
- (૧૬) બાવકોને મુક્તિ મેળવતાર બ્રમણ માર્તાચે છીએ.
- (૧૫) અસહકારી સ્વદેશના સિપાઇ છે. વ*મ* દેશને માટે ક્કીરી લોધેલી પણ જણાય છે.
- (૧૭) શ્રાવકા વિતય, વૈવાદત્ય, સ્વાધ્યાય, ધ્યાન એ તપત્રે આદરે છે.
- (૧૭) અસરકારી વિનયે હોય છે. અસરકારમાં સેવા એટમે વૈયાદ્રય ખાસ બતાવેલું છે, સ્વદેશ સેવાનાં પુસ્તકોનું વાંચત અને આત્મન ચિત્તવન અસહકારમાં સુખ્ય છે.

શ્રાવકાનાં દરેક લગ, દરેક ક્રિયા, ક્રદરેક આચ• રહ્યુ એજ અમહાક રીતાં લગ, તિયમ, આચ• રહ્યુ ક્રીય છે.

आतंक को शाक्षयुक्त क्रियावान है। यः तेः ते

સત્યાગઢી છે. સત્યાગઢી એ ગાંધીજીના કરતાન સુકેલ ક્રિયાવાન હાય; તા તે શ્રાવક છે.

શ્રાવક એજ સત્યાયકી છે, અને સત્યાયકી એજ શ્રાવક છે. મહાવીર સ્વામીના ઉપદેશનોજ પ્રચાર કરવા પૂજ્ય ગાંધોજએ સત્યાયકી જીવત કરી સત્યાયકનો ઉપદેશ કરેલા છે એમ આપણે ક્યુલ કરવુંજ પડશે.

મહાવીર સ્વામીના સમયમાં સ્વરાજ્ય હતું. જેથી તેમણે આત્મનિરીક્ષ્ણ્યુદારા મુક્તિના માર્ગને ઉપદેશ કરેશા છે. ગાંધીજીએ હાલની પરતંત્ર-પણાની સાંકળ તાડવી તેનેજ મુક્તિ માની આત્મ-નિરીક્ષ્ણદારા સ્વરાજના ઉપદેશ કરેલા છે.

માંધીજીએ સર્ગ ધર્મનું મનન કરેલું છે તેમાં તેમને જૈન દર્શન વધારે પિય લાગેલું હોતું જોઇએ કેમકે અસહકારીની દરેક પ્રતિશ્રા દરેક હિલયાલ. જૈન શ્રાસ્ત્ર શુક્તજ થયા કરે છે.

અતપણા મહાપુરાષ્ટ્રમાં શુદ્રોને પ્રાથિશ્વ આપી આવક જનાવવા કહેલું છે તેવીજ રીતે હાલ પણ માંધીજી સર્વતે સમાન જનવા એટલે કે અન્યોન્ય પ્રીતિતાળા થવા સુચવે છે. (બોજન માટે નહિ)

મારા સત્યાં પ્રહી શ્રાવક ભાઇ મા અને બહેનો! (સત્યાં પ્રહી અને શ્રાવક સરપીજ ક્રિયાવાળા એ જેથી આ સંખાધત લગાડ્યું છે)

બરતખ'ડમાં અરે તરફ રવરાજ, સ્વરાજની યુમ પડી રહી છે તે વખતે શું તમા ઘેર નિદ્ર માં સુઈજ રહેશા. ગાંધીજી વાણીયા છે તેમની માનની ખાતર ધર્મ અને દેશની ખાતર પણ આપણે આ લદાઇમાં જોડાવે જોઇએ.

અસ્દ્રકારમાં જોડાયા માટે ક્રાંક મુનિ થઇ જયાતું તથી. કે-તામા અચકાવા છા

અસહકારમાં જોડાવા પ્રથમ સંપૂર્ણ સ્વદેશી વત કેતું જેમેઇએ એટલે કે પાસેના પરદેશી કાપ-ડને બાળી દઇ હાથે કાંતેલું હાથે વણેલું કાપડ પહેરવું જોઇએ. દીરૂના ત્યાગ કરવા જોકએ, અહિંશા વત લેવું જોઇએ, સુસલમાન અંત્યજો વિગેરને બાળનાવી ભાળના જોઇએ અને ત્યાર બાદ વધારે ઉંચી પ્રતિસાએ ચઢવાનું છે. ભાષણી જરૂરી માતા આપણે જ પૂરી કરીશું તે દિવસે સ્વરાજ આપણા હાથમાં ઉભું રહેશે.

તમ રાં ધર્મ સ્થાનાની સુરક્ષિતા સાર પણ હાલની સરકાર સુધરવી જોઇએ. અને હિંદમાં જન્મ ધરેલા દરેક જસ્તુની કરજ છે કે-પોતે અન્પાત્યથી સંપ કરી સ્વરાજ લેવા પ્રયાસ કરવા એકએ.

મને લખતાં ખેદ થાય છે કે-

જે વખતે ચામેરથી એક થવાની અમ પડી રહી છે, જે વખતે હીંદુ-મુસલમાન બાદચા- થારાથી જોડાવા લાગ્યા છે, જે વખતે મુસલમાનો એ હિંદુના અંગે તે સાથી જોડાવા લાગ્યા છે, જે વખતે મુસલમાનો એ, તે વખતે હાહી અને શાયી મહાતી, ઉચ્ચ ચારિ- ત્ર્યવાન મણાતી, બાવક કામમાં ધાતાં બર-દિમાં બરતા ટંટા ચાલ રહ્યા છે, બાઇએ ! તીર્થ એ આખા જૈન લગા મનો ધારિશ્યાન છે નહિ કે, ધાતાં બર કે દિશં બરના ?

તમારી ધાર્મિક ળાળત કેવી છે, તે સરન્કાર શું જણે? સરકાર એક વખા તમારા પૈકી એકના લામમાં ફેંસત્રો આપે તા બીજ વખા બીજના લામમાં ફેંમત્રો આપે. કરી વળી પહેલાના લામમાં આપે એમ તેતા અંત લાવની નથા તે તમારા કરાડા રૂપીના બરળાદ થાય છે.

તમારા નિકાલ પંચકારા લાવવા યા વહીસ લ કહી કહી થાકી ગયા. બીક્ત તેતાએ થાકવ, પય તમારી કુંબકરહાની નિંદ્રા ઉડતી નથી. ને તમા ધર્મને રમાતળ પહોંચાડવા ન માયતા હો તેમ કોરટથી છટતાજ નથી. ?

બધુએ, જાગા તે તમા જાએ, ગામડાં કે માં તમારા નિરાધાર શ્રાવકા કેવા તળવળા રડયા છે તે નિહારા, તે તેમતે અચાવવા ખાતર તમરા ખાલી ઘમંડતે બાજી પર મુક્ષી સમેદશાખરાદિતી તક્યરાતો નિકાલ પંચદારા અહ્યુા.

બાઇમા, અમાં તિકાલ પગુશું આચુનાના છે. બંને જૈન છે!-મહાવીર પિતાના પુત્રે છે! તેનો સેવા કરા ને તે પગુ કરે તેમાં બાઇ બાઇમાં લક્સર શા. ! ખેદ છે કે આવશે મહાવાર પિલાને લત્વા બેદા હશે. ?

તમારી **ધાર્મિક મામત દેવી છે તે સે**ર-કાર શું જાણે ?

સરકાર એક વખત તમારા પૈકી એકના લાબમાં ફેંસલા માપે; તા ખીછ વખત ખીજાના લાબમાં ફેંસલા માપે, કરી વળા પહેલાંના લાબમાં માપે એમ તેના માંત લાવતી નથી; ને તમારા કરાડા ફપીયા બરબાદ થાય.

આપણું જ્યાં સુધી માંહામાંહું લહી મરશું; ત્યાં સુધી સરકાર **પાલા દેખકે પેઠ જાના** માક્ક ધુસીજવાની.......ને તેમને કાઈ-દારા લૂંદીખાવાની. આપણું જો એક થઈશું તો ભાર નથી કે એવી સત્તર સલ્તનતા પણ આપણા ધર્મળળને રાકી શકે.

માટે આપણાં ધર્મ અને દેશનાં રક્ષ્યુને માટે હાલના સંજોગામાં અહિંસાત્મક અસહકાર એજ મુખ્ય રસ્તા છે. હે જ્હાલા જૈનમ ધુએક ; તમે માંહામાં હેવા દેવના ત્યામ કરી હાલજ સ્વદેશીની પ્રતિના લ્યા; અને સાથે તમારા દરેક ટંટાને એટ- લેવીજ અટકાવા, તાજ તમાને રાભા છે. બાઇએ!! ઉઠે, તે દેવના ત્યામ કરા. એજ તમારે માટે મુક્તિના રસ્તા છે. એક મહાવાર પિતાના સુપુત્રા! એક સ્ત્યામાં શ્રી શ્રાવકા! હે ક્ષત્રીયવંશ બૂધણા! ઉઠેને જ્યાત થઇ એક્ય કરા; અને તમારા તથારા દ્વારા છે. તમારા તમારા દેશની. તમારા ધર્મની શાલા છે.

ૐ શ્રાંતિઃ શાંતિઃ શી• હુ હું, જૈન માત્રને એક્યતાની ધુંસ**ીએ** જોડાયશે જોવાને ઉત્સુક—

માહનલાલ મધુરાદાસ શાહ-કાણીસા.

प्जनोपयोगी शुर स्वदेशी-प्वित्र काशमीरी केशर।

२।) भी तोका मैनेमा, दि० जैन पुस्तकाळय-सूरत ।



(छे - वर्णी दीपचंदजी परवार नरसिंहपुरनिवासी-दाहोद।)

कार्तिक बदी १४ (गुन० अधिन बदी १४) की राजिकी पिछले पहरमें जनकि अनु-मान ४ बजेथे कि जैनमंदिरका सेवक ब्राह्मण एकाएक जाग पढ़ा और जस्दीसे उठकर हाथसंह घोते २ चिंतात्र होकर अपने आप कहने ह्या. कि बड़ी भूछ हुई न जाने बैरिन नींद क्यों इतनी पग्छतासे आगर्ड कि हवेश ही होगया, पंचलोगोंने कहाथा कि उठकर मन्दी मंदिर उत्राहना, दीवा आदि कगाकर सब जैनी माईयोंके वहां टेडा भी कर देना, सो लोग क्या कहेंगे? प्रथम तो मैं नया आदमी इं सो छोगोंके घर भी बराबर नहीं जानता इं. बड़ी कठिनाईसे तो कर परहों दो दिनमें काड़ के लिये उपरानी की है फिर ऊरासे देरी हो गई, प्रराना सेवक सोमेध्याको तो सब बातकी माहीति होगई थी इत्यादि । कहते २ बाहर निक्का तो पाठशालाकी पड़ीने टन टन टन टन ४ टकोरे दिये, यस इसे कुछ शांति मिछी, अभी बार को हैं ठीक हुआ। शीघ ही उसने मंदिर उवाहकर दीवा छगाये, शाह छगाई, विछात निछाई, चौर चंपाशक (मंदिरका सदैयां सेवक पुनारी) को जगाता हुवा, सबके यहां जाजाकर ¹¹ बाको हंगरा माई निर्वाण हं छाड़ बढ़े छे, बेहला पद्मारो साहब " की आवान देता हुवा किरने **इगा । उसकी आवाजको सुनते ही सिचित्रय**

सोचे हुवे जैन नरनारी शीश्रतासे उउकर पानी गर्म करके नहानेमें, कपड़े सम्हाउनेमें और बालक बालिकार्वोको सजानेमें लग गर्छ, परंतु यात्राके श्रमके कारण थके हुने टेकाचंद तो चुरांटे लेकर सोते ही रहे, भव उनकी स्त्रीने उठकर पानी गरम करके नहा लिया, और बालकोंको भी नहन्ना दिया, तब भीरे भीरे अपने पति देवके पग स्पर्श कर मधुर स्वरसे बोळी, मिट्टनके दहा ये मिट्टनके दहा (पिता) उठी देखी तो बामन कवको बुछा गयो है, मंदिरकी झाछर सोई वन गई है, सबेरोई तो हो गयो, छनत हो, पानी गरम हो गयो है सो सपरहो" इस प्रकार स्त्रीका मधुराकाप प्रनकर टेकचंद मी णमी अईताणं. णयो सिद्धाणं, णयो आयरियाणं, णयो उवज्झा-याणं, जमो छोयेसन्त्रसाइणं, पंचयरमेशीम्यो नमः हे आत्मन संसारमें अईत सिद्ध साध और केवली प्रणीत धर्म ही मंगल स्वरूप, छोकोत्तम और शरणाबार है। तू निरंतर इनका शरण प्रहणकर और सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र रूप मोह मार्गमें अपनी प्रवृत्ति कर । चौबीस तीर्थ-करोंकी जय, महाबीर मगवानकी जय, श्री भीतमस्वामीकी जय, इत्यादि उच्चारण करते हुने हरे और जल्दी स्नानकर शुद्ध (स्वदेशी हाथकी बनी कती खादीके घुड़े और बिना किसीके स्पर्श किये हुने) बल पहिरकर नीचे किसा पद हवा बोडते हवे मंदिरकी ओर चळ दिये ।

षन्य शुभ वड़ी आन गाई। गौतम दे बळज्ञान छहाो, अरु बीर मोश पाई। टेका छोकमें दीपावछि आई। पुण्यवान पावाप्रि कार्वे, हम जिनगृह काई॥ घन्य पुतित हो अष्ट द्वन्य छाई । सुरनर मिछ सन करें महोत्सन छाडू बद्वाई॥ घन्य फेर जिन गुरुन्तुति गाई । सुन उपदेश धर्मेत्रत छेकर अन्म सफड भाई॥ घन्य धर्म जिन महिमा अग छाई । जाकर 'दीवर छहे सुरनर सुख अंत मोक्ष जाई॥ घन्य इनकी पत्नी मी घरका ताला खगाकर ज्योंही बस्राभूषणोंसे सुसज्जित गाती हुई आरही थीं, उन्हें देखकर यह मी उनमें मिछकर गाती हुई जिनमंदिरमें पहुंची। अहा कैसा सुहावना मनन ये खियां एक स्वरसे गाती थीं।

भजन।

जयवीर जिनेश जयवीर जिनेश, सुविध उद्धा-रके सिद्ध भये हिका पाबापुर माहीं, पाबापुर माहीं अवाति करम हन मोक्ष भये।। अरु एक समयमें अरु एक समयमें मुलोक शिखर थिर होय गये ॥१॥ वन बीर जिनेश मयबीर नख केश विना तन् नल केश विना तन, परमाणू उड़ नात भये॥ नख केश मिछातन नख केश मिछातन रच तक अभिकृतार नये ।२। जय बीरजिनेश ० छर मुक्-टमणीसे प्रर मुक्टमणीसे, सु प्रकट अनल तन पहन मधे ॥ तब सुरनर मिक सब तब सुर मिक सब, मस्यी शीस बढ़ाव नये ॥ १॥ नय बीर निनेशः लय । वदिकातिकमावस वदि कातिकमावस, पातं समय शिव वीर सये ॥ अरु ताहि समय गुरू भर ताहि समय गुरु, गौतम केवल झान लये ।।।। अब बीर निनेशः वा विधि दो उत्सव, वा विधि दो टरसर, साथि सरनर करत मये। तक हीसे दिवाकी तक ही से दिवाकी दीप नमत परचार किये ॥५॥ अब बीर निनेश नय ० इस प्रकार स्व हव आश्रवींसे निकलकर इलास सहित जिनगुण गान करते हुवे सर्व नरनारी प्रथम ही जुने मंदिरमें पश्चात नये मंदिरमें इक्तित हुवे ऐसे लान पड़ते थे मानी कि साक्षात ही पतवान बर्द्धवान स्वामीका तथा गौतम स्थामीका. निर्भाण और इल्विक्स्याणक हो रहा है, वहां निमन्य आवायों (मुनियों) और पशुरोंके अतिरिक्त इस प्रकारकी समावोंके देव देवियां, श्रावक स्नाविकार्थ ही इन वर्तेमान नरनारियोंके रूपमें उपस्थित हुवे हों, उक्त दोनों मंदिरों में बहुत ही भीड़ हो रही थी खीर सर्व नरनारी परस्पर बहु भेगमावसे एक दूतरेको अव-गाह देते हुवे बैठे थे सो प्रयम ही अमिपेक पुत्रन हुवा और फिर सबने व्यति हिंदित होकर एक स्वरसे " जब " कहते हुवे छाडू चढ़ाया, और उसी समय जूने मंदिरमें पाठशालीय कीरा पक्षींने झांति सह महाबीराध्क एक मधुर उच और गंभीर स्वरमें गाया और नवे मंदिरमें पंडित सुबने दुनी "विश्व" अध्यापक जै ०पा ०ने

स्य रिवेश महाबीराष्ट्रक व्यपने शिष्यों सहित

बड़े ही जिलाकर्षक स्वरसे पढ़ा। और दोनों मंदिरोंमें इसी समय मैंने प्रथम ही श्री महावीर

स्वामीके निर्वाण और गीतम स्वामीके ज्ञान

महोश्तवकी बात कहकर संक्षिप्त परिचय

"दिवाकी पर्व" का कराया, यहांके मंदिरों पर

नये वर्षके दिनको शामके समय ध्वमा बहुती

थी सो सबेरेके पहर पूत्रनीत्सव करके बढ़ानेको

कहा, भो सबने स्वीकार किया और वैशा ही

किया भी। पश्च त् अहिंसा पर्मेकी महिमा कहते हुवे जनताको खादी (शुद्ध) पहिरनेके लिये उप-देश किया, पश्चात सब लोग शांति विसर्भन करके स्व स्व गृह गये।

माते र टेकचंदमीकी दृष्टि स्थवन्द्भीपर पड़ी सो बड़े प्रसोदसे अहहा यह अचानक मिछाप, घन्य माग, नये वर्षमें पुराना मित्र छाम, वर्छो माई सा ॰ डेरा पर पवारो ।

जयचंद्-जय श्री महावीर प्रमुकी, जय श्री गौतमस्वामीकी, जय मारत मारतीकी, निःसंदेह माई यह अवित्त्य छाम हुवा है ! चलो आप, कहां उहरे हो ?

टेक०-इसी जैन धर्मशालामें, पाके छोग भी हैं। आप तो भकेले ही हैं ना !

नय०-हां एकका ही हूं । बजो भावीभी व बचोंसे भी भिछ छंगा। कही बाजा तो सावन्द दर्द ?

टेक०-वर्षेपसादसे सानन्द हुई, पर आपके साथ कुछ और ही बात होती है (बल्ल खादीके देखकर) क्या बेजंदमाई, यह गांधीकी आंधी दुम्हारे ऊपर भी चछ पड़ी ? मछा कहो हम छोगोंको इन स्वदेशी विदेशीके झगड़ोंमें क्यों पड़ना चाहिये ? अपना बंबा करना, और स्वदेशी विदेशी सुती उनी रेशमी जो वल्ल मिछे सो विना मिलमावके पहिनकर शेषकालमें वर्षारावन करना, सो इन झगड़ोंमें पड़ नावें तो फिर वर्ष-व्यान कर करें ? और अपनेको कुछ विदेशोंसे हेष थोड़े ही करना है ! मछा वही जब उनका व्यापार बंद हो जावेगा, तो वे मुखों न मरेंगे ? क्या इसका पाप गांधी व उनके साधियोंको न

छगेगा ! अहिंसाकी दुहाई देकर संसारको ठगना यह क्या धर्म है ? श्लीमानोंकी गृहदेवियां रहंटा कांते और खादी पहिरें तक गरीन धापीरमें अंतर ही क्या रह जायगा ? आजकल जहां देखी वहां चाहे घर हो या मंदिर या बाजार या वन भरखा, रहंटा, खादी वस यही चर्चा रह गई है। और तत्त्व चर्चा चार अनुयोगोंकी बार्ता तो गई आई। जो देखो खादी २। जमी देखो ना सुनते थे, यहां कोई दीपचंद वर्णी नार माहसे उहरे हैं उनने भी खादीका मावण मंदिरमें किया है। यह भी सना है कि वे तो खादी पहिस्ते ही हैं। पर खादीकी गादी पर ही बैठकर खा-दीके देखनमें बंधे हुदे ग्रन्थोंको बांबते हैं। मिटके, रेशमी, विदेशी क्लोंसे उनको कैसा द्वेष 🕏 ! महा त्यागी वती बनोंको इतना राग द्वेष क्यों ? मंदिर तो माई उपकर्णीसे ही शोमा देता है: उपयोग बगता है। गांबीको तो सर्का-रसे द्वेष होगया है सो वे सबको महकाते हैं! सो बदि मुखं नीच उनका कहना माने तो ठीक है पर तुम्हारे जैसे बुद्धिपान भी फंस गये। त्व क्या कहें ?

नय - माई सा॰ ठीक है और कुछ कहना हो तो कह को । या मैं कहं ?

टेक --(बीचमें) यही धर्मशाका है, अरे मिट्टन जैयंद करका मागये, दरी विञा (बच्चेने दरी विञा-कर) बैचंदशीके पग छवे, प्रणाम किया, मुखाने प्रणाम किया, बच्चोंकी मांने भी अभिवंदन किया। बैचंदने मी सवायोग्य चिरंमीव रहो, श्रीमंत होवो, भीमंत होवो, खुब कुछो फछो बादि कह आशीर्वाद दिया और फिर संशद शुरू हवा)

हाँ जैनंदमाई आप कही ? क्या मेरा कहना अल्लित है! (बीचमें फिर चौकेमेंसे आवाज आहे. काकाजी रसोई तैयार है सो जीमकर पीछे बैठो तो में भी सन्ती। समने वहा ठीक २ । यस सब मोमनसे निर्झित होकर प्रनः सावधान होकर बैठे और संबाद होने अगा ।

मय०-मावीजी आवी तुम भी छुनी, हमारा वर्म भहिंसा है। हम कीग पानीमें रहनेवाके त्रस बीवोंकी रक्षायें उसे अनकर काममें देते हैं. जीवानी यथा स्थान पहुंचाते हैं। मर्वादासे अधिक दिनका पीमा आटा मसाला आदि इन्हीं सक्ष्म भीवोंकी रक्षार्थ नहीं खाते हैं। क्योंकि प्रत्येक कच्चे वक्के सीधे सामानमें सुद्दम अहहय जीव पह जाते हैं। चिकत रस होजाते हैं, विदल मी नहीं खाते. स्थावर की मी यथा संभव रक्षार्थ, साधारण बनस्पतियां (कंद मुकादि) नहीं खाते हैं। यह तो मानते हो ?

देक -- जी हां, सब ही ठीक है।

जय - अच्छा, यह मी मानते होकि स्थाक्रोंकी हिंसामें अधिक पाप है और असमें भी दोसे तीन, तीनसे चार, चारसे यांच इन्द्रीके मारनेमें अधिक पाप है। असेनीसे सेनीको, सेनीमें मी पश्से मनुष्यको, मनुष्योंमें भी वती संयमी बादिको मारनेमें उत्तरोत्तर अधिक पाप है ?

टेक०-जी डां यह भी ठीक है ? सस्य है। नव - अच्छा हिंसा करना और अनुपोदना करनेमें भी समान बाब होता है सो मानते हो ?

टेक ०-नि:सन्देहं ।

जव - चदि कोई पनुष्य निरन्तर सेनी वंचेन्द्री प्राणियों में हिंसा कर कारित अल्बोद-

नामें करता रहें और यह पृता कर बाना करें दान करें थी क्या वह बर्मात्मा कहा सक्ता है! टेक -- कभी नहीं, उसका दान पूना स्वाध्याय बानादि मनकानवत हैं उसे बर्मात्मा कीन कह सक्ता है!

नयं ० - ठीक र अब धुनो, उस तो प्रत्यक्ष निर्देयतासे बनता है कि जब शीतकार में मेड़ मादि नानवरों की रक्षार्थ उनको प्रकृतिद्त्त बार्छ निकलते हैं, तब निर्देयी छोग उनके बार्छ काट छेते हैं उससे भेटकर बस्त बनाते हैं, वे जानवर घोर शीतकी वेदना सहते हैं। और फिर मी उनमें कीड़े छग जाते हैं। वह तो निषद्धिश्च ही है। अब चिछये रेशम व कोसाको देखिये-उसमें चौर्न्दी स्थूछ प्राणी जीते पानीमें उनार्छ जाते हैं। १ शेर रेशमके छिये असुपान २००० कीड़ोंका चात होता है। सो प्रस्थक्ष जीवोंका कहेवर है ?

टेक - यदि ऐसा है तो शाओं में रेश्वमका व्य-बहार क्यों नहीं निष्वा? बड़े बड़े तेरावंधी शुद्धा-स्नाइयोंके मंदिरों में मनो रेशम व्यवहत होता है। मय - नाई, शाओं में तो यों निषेध नहीं है कि पहिके कभी वृशोंसे भी रेशम बनता होगा, जैसे सन् बनेरासे अब भी रेशम सवान बस्त बनते हैं। संमक्ते सुवेके वस्त मसमक नेसे नश्म और नितान्त विकने बनते हैं। रही तेशपंधी शुद्धास्त्रायियों आदिकी बात सो उनकी हिष्ट आमीतक उस और नहीं गई होगी। परन्तु अब क्या तुम जानते हो कि बे क्रीशा मधीनी शुरुष अब भी इसे काममें केंगे कि क्रीशा टेक • — छन और रेशमकी बात तो मानी और मैं तो भाजसे कमी भी रेशम नहीं पहि-रूंगा। भाषकी मानीकी और बर्चोकी बात ने जानें।

नय ० — (मावीसे) क्यों मावी क्या इच्छा है है मावी—छाछाजी—हमारी (खियोंकी) इच्छा ही क्या है? इस तो बाव छोगोंक आधीन हैं, पर ये हमारों रुवयोंके क्छा रखे हैं सो इनका क्या होगा? जय ० —ठीक है ठीक है छुनो । किसी रोगी नरने बहुतसा अवध्य मोनन वध्य जानकर इकट्ठा कर रखा है और वह उसे निम्नांत हुवा खाता है। उनसे उसका रोग नहीं घटता है सो किसी चतुर वैद्यने ठीक जां बकर उसे भी जंगा दिया कि यह कुवध्य मोनन है खौर उसने ही मानिक्या तनवह उस संमहीत मोज्य बस्तुको क्या करे ? खाता जाय, या और कोईको खिला देने ? या निर्मन्तुस्थानमें खाड़ा सोदकर गाढ देने ?

याबीकी-अपने याईसे पूछो, हम तो तैयार हैं। कोई निरंतर आठों पहर तो हम रेशम पहिनतीं ही नहीं है। कमी तिथि पावन आई तब कोकड़ाबके हरसे पहिरती हैं सो यदि आप छोगका दृष्टिविब दूर हो नावे तो, हम को क्या ! यानो कि हम सूर्ख हैं परन्तु वस्त्र छाने और पहिराने बाके तो आप हैं। जो स्विडावो व पहि-नावो, वह मोटा पटछा कैसा भी होते, हमको सा पहिरकर दिन विताना और बच्चे पाछना है। जव = अवहा घन्य मारत, नि:सन्देह तू इन्हीं सती साख्यी नारियोंके ही आधार बीता है। भाषीकी सन्य है। टेक०-चलो रहने दो इन चिकनी चुपड़ी बातोको, उत्तरसे क्यों बुरे बने ! अंतरंगकी श्रीजी जाने। हठ करके तो तुम्हीं मंगाती हो।

माबी-तुम्हारी समझमें ऐसा ही होगा, परन्तु क्या करें ? इम मंगानेको जाबार किये जाती हैं। यदि हम सीबी साबी रहें तो तुम बाजार घूमो क्योंकि तुमको चाहिये चटक मटक नसरावाजी ! सो तुम्हें उस कुमार्गसे रहा कर-नेके लिये हमको सब करना कर्तव्य है।

टेक०-पर जिनके पति नहीं अपवा जिनके पति सादी चाछ चाहते हैं वे क्यों हठकर चटक मटक बनाती हैं। रेशम जरी विदेशी महीन बस्त्र मंगाती हैं?

मावी-ऐसी बहुत कम हैं और जो हैं सो अशिक्षित हैं। इसके सिवाय नया काबुअमें कोई गपा भी नहीं होता है ? हम सच कहती हैं कि बदि प्रस्य वर्गकी दृष्टिका विष दूर हो जावे, वे स्वदार संतोष वतको घारण कर हेवें और स्वयम् हड़ प्रतिज्ञ हो नार्वे, कि हम केवड खादी ही बहिनेंगे. घरवाकोंको पहिरावेंगे, और इटकर विदेशी क्लादि पहिरनेवार्टीके साथ (इससे अ-मित्राय अपने घरवालों व आश्रितमनोंसे है) कोई संस्थन्य न रखेंगे, अनका बनाया हुवा मोजन भी नहीं करेंगे, इत्यादि तो फिर ऐसी कीन बाबाणहृदया मारतीय नारी होगी जो विका असहयोग सहन कर सके ? उन सती साच्यी देवियोंको निश्चयसे वही नीति अनुसरण करना पहेंगी, जो कि उनके पतिकी होगी। जब जब भारतीय देवियोंने पतिके साथ बनमें रहना उन स्वर्गतुरुष महकोंसे कहीं अधिक प्रसद्धारी

समझा है, तन क्या थोड़ीसी खादी पहिश्वेक छिये वे पितपरायणा कभी विमुल होकर उन्हें अपने पितयोंको दुःली कर सक्ती हैं? क्या उनसे सहयोग छोड़ सक्ती हैं? उनकी खाजा और प्रतिज्ञाका भंगकर सक्ती हैं? कभी नहीं २। क्यों सीता, द्रौपवि, अंजना, छुछोचनादि प्राचीन भारतभूषण स्वणियों और आधुनिक आदर्श करतः स्वा गांधी, देवी सरदा चौधरानी, धर्मपरनी दास और नेहरू, छुजीछा, जैन महिकारत्न मगनवाई, पंडिता चंदाबाई आदिको आप नहीं देख रहे हैं? टेक०—छुना अचंदनी, आपकी याबी कुछ मावण करनेमें कम नहीं हैं देखो कैसा छेकचर दे डाछा। परन्तु " परोपदेश कुछछ बहुतेरे जो आचरहिं ते नर न धनेरे" बाछी बात है।

भयचंद बोल्नेवाहे थे कि उनकी माबी बोल उठी ।

मावाजी-छाछाजी सुनते हो (जैचंद चौकले होकर हां, क्या कहो क्या-आपके माई आज्ञा देते हैं कि मैं खादी पहिन्दं रहटा चछाऊं ?

जयचंद (टेकचन्दकी ओर देखकर) कही सिंग्ड्रेजी क्या इच्छा है !

टेक०-माई, इच्छामें तो क्या रखा है !
इसमें मुहे उल्टा काम ही है क्योंकि यही सूत
कार्तेगी और उसे बुनवाकर पहिरोंगी, वर्षोंको
मी पहिरांचंगी, सो मेरा तो येकीका मुंह मी न
खुलेगा। दरवर्ष सैकड़ों स्पर्योंका काम (वचत)
होगा। परन्छ आशंका नहीं है कि कोग क्या
कहेंगे ! क्योंकि अपना चराना तो प्रसिद्ध है।
सो छोटे बड़ेका कुछ भी अंतर नहीं रहेगा।
अय०-यह आंति छोड़ हो। अब संसार प्रका-

शमें भाषा है, शुरा आईनरका समय नहीं रहा है किन्त भाग तो साथे बाह और संस्वे धर्म कर्म वीरोंका भारर होता है, आटंबरी मूर्ल, निर्देजा, दया और विवेकहीन समझे नाते हैं। गत वर्ष सञ्चातमा गांची कांग्रेव पंडालमें और कई हमार मनताने बीचमें केवल लंगोटी सी लगाय फिरते थे, तोमी छोन उन्हें देवता ही जान पूनते थे। ६००००) कमानेवाले देशकंखु दास्त, राज्यभोग करनेवाले पंडित नेहरू आदि इनारों जोग भान सांदीके आदि हो रहे हैं। सो क्या उनके जितना द्रव्य और मान आपको प्राप्त है ? (बुरा न मानना) आपकी थोड़ेसे स्वार्थी ही प्रतशा करते हैं और सर्वसावारण आपको देशदोही ही समझते हैं, यहां तक वर्ष २ जो आप कहते हैं उसके परम कालू ही मानते हैं। कहै कारणोंसे वे आपके मुंह जी हां, हां जी करते हैं परन्तु इनारे जैसे (यदि हमको हितेषी मित्र मानते हो) सो कुछ कहनेसे चुकते भी नहीं है।

* a comercial * * **

टेक ॰ — तो कैसे ? हम छोग ही करोड़ों विदेशी छोगोंकी पाछना कर रहे हैं ? क्या यह धर्म नहीं है ?

जय ० - जी हां, घरवाकों को ने मुखा मरते देखते रहे और उसे दया भी न खाने। परन्तु जयार हिंसाके करनेवाके मांसमदिरा सेवी विदेशी कोगों को उनके द्वारा हिंसासे तैयार किये हुवे बक्जादि खरीदकर बनी बनाना जीर उत्तरोत्तर हिंसाकी परम्परा बढ़ाना सो इसके बराबर और कौन वर्ष हो सक्ता है ? सो आप ही बाने। टेक० - माई कपड़ा छाये और बर यो लिया उसमें किर क्या रह गया है

वय ० - ठीक है शुदको नहस्रकर तिस्क स्थाप दिया, माझ हाथमें देदी, पोथी बगरूमें दबादी और सिषधा वस्त्र धुलाहुवा पहिरा दिया, तब वह बाह्मण हो गया। क्या अच्छी युक्ति ही ? यदि गवा घेड़ा बन जाय, और वेश्याएं प्रति-त्र रा हो जार्वे तो आपकी बात मी सहस्रवार सस्य है।

टेक - यह तो तब रामपंत्रारा हुवा, गरन्तु विदेशी बन्हों वा मिलोंमें क्या हिंसा है ? तो न बताया।

नय ० - क्या आप कभी किसी मिक्को देखने नहीं गये हैं ?

टेक०-गया तो हं ! परंतु सुक्ष्म विचार नहीं किया है । आप बताइये ।

नयोंकि केवल अहमराबाद चाहरकी ५३ मिलोंमें ७०७२४ मन अंग्रेजी चर्ची स्वर्च होती है, तो भारतकी सम्पूर्ण मिडोंमें और विदेशोंसे आनेशके ६० करोड रूप-'याके कपड़ोंको तैयार करनेवाछी पिछोंमें कितनी वर्ध खर्ब होती होगी ! यह वर्ध गाय मेंस. बैक आदि तरुण हृष्टपुष्ट बानवरोंको मारकर निकाली भारती है। इसके अतिरिक्त फेन्सी क-वडोंमें कलप व पालिस अंडोंके रस-से दी जाती है। कितने फेन्सी दोपी आदि बस्रोंमें जानवरोंके परींकी नींचकर बगाये शते है। तथा चमहा मी श्रमाया जाता है।। कई विदेशी बख वर्म मिश्रित बनते हैं। रंगों में कोबी आदिका क्षार दिया नाता है। फिर इन मिलोंमें काम करनेवाले कितनेक मारतीय तथा सर्व विदेशी कीग मांस मदिराका सेवन काते हैं ? तथा मिछ मालिकोंकी मोटों वौहती 🖁 । इससे बेबारे सर्व साधारण मनुष्य तो करोबों दिदि हो नाते हैं और इंछे ह छोग समात्तिशाली हो ज ते हैं और तब वे यनमाने भरवाबार कर मक्ते हैं। इन मिटोंसे सर्कास्को मी खासी भाव है। अब तम समझो कि मिलोंके क्लोंमें क्या दोव हैं ? क्या इतना जानकर भी फिर वे ही विदेशी बख पहिरकर जैनीयना कायम रह सका है ? जिन दल्लोंके पहिरनेमें अनन्तानन्त पंचेन्द्री भीवोंकी हिंसा करानी पहें और उस होती हुई हिंसाका अनुमोदन करना पहे, नवा ने क्ल वित्र हो मक्ते हैं ? स्या उनको पहिरकर श्री बनेन्द्रदेवकी पवित्र प्रमामिषेक, स्वाच्याय, ामायिक, संबबी मतीननोंको भोजनादि दान

कार्य हो सका है ? और क्या कार ह्यं देखें (अंतरायके कारण) कल पहिरकर मोमनकर सका है ? यदि करता है तो जिस प्रश्यके हृदयमें दशका खंकर नहीं वह मनुष्य कैसे जैनी कहा सका है ? माई आग श्री श्रीमहा-खीर स्वामीका पिषण जियां निर्वाणका और गीतम स्वामीके ज्ञान कल्याणकका पित्र दिन है, नया वर्ष मी प्रारम्भ होता है इस छिये इस अपने छोटे माईको नये चर्चकी नई मेंट देकर तथा कृतकारित अनुमोदनासे होने-बाबे मिलोंके द्वारा पापोंके स्वागका प्रस्थास्थान करो, गत कार्लोका प्रतिकाषण आक्रोचना करो । तारप्य-शुद्ध स्वदेशी वस्तुएं खाने और पहिरने (वर्षों) का यावजीब नियम करो।

टेक०-बस मैया अयमंद बहुत हुवा, में नहीं जानता था कि इन सुनी मिलोंके बलोंमें मी इतनी हिंसा होती है। अच्छा इसी समय से मेरे सब विदेशी और मिलोंके भी वख्नोंका त्याग है। में हाथसे कते सुतके हाथ ही के खुने वस्त्र पर्हिस्तेगा। और बदि मुलियाकी बहु शुद सादोंके बल पहिनकर ही भोगन बनावगी व परोसेगी तब ही जीमंगा अन्यपा स्वयं पाकी बदंगा। परन्तु बाहरके द्विये छुटी है। क्योंकि परके सिवाय बन्य किसी पर अपना अधिकार नहीं है।

जय०-शहरा घन्य है। बड़ोंकी बहाई यही है ? (इसरी ओर देस कर। क्यों माबीजी ? माबीजी-अब हमसे पूक्रना ही क्या है ? हमारा भी तो नियम होगवाहै। मेरी ओरसे ही मारके माईने कह दिना है। क्या खादीमें मछमार व रेशमकी गांठ जुड़ती है ई काला इसमें
केवल इनका दवाब नहीं है। मैं भी खादी पहिरना
भाषने आन सहदूषकार किया है। इनको तो
नाये वर्षका नाया लाभ मिला। बदि
आपके कुलकी उच्चता कम न होती होवे तो,
मुझे रहँटा कातनेकी भी आज्ञा दिखाइये। इसमें
दो लाम हैं—समयका सहुपयोग होया, द्रांप भी
बचेगा और अवना उपयोग नहीं निगड़ने
पानेगा। अन्य वहिन वेटियां भी अनुकरण
करेंगी।

भय० — बाह धन्य है तुम तो एक पग आगे बढ़ गईं। (मिट्टनकी ओर देखकर) क्यों बेटा?

मिडन-कका, हम सादी पहिरक्त स्कूछ जाते हैं, तो माष्ट्र साहेन मारते हैं। १ महिने पहिछे दो छड़कोंकी टोपी फाइ डाडी और बहुत मारा। उनके वापोंने इन्स्पेन्टर साठ को छिला, डायरेन्टरको मी छिला परन्तु सुनाई ही नहीं हुई, तब हम कैसे खादी पहिरें !

नय ० — बेटा ठीक है, घत्पर खादी पहिराहरों भीर स्कुलमें भैसा तुम्हारा निर्वाह होने वैसा करो ! इसी छिये तो राष्ट्रीय शालाओं की आव-स्थकता है। सो बहुत नगह तो बाल हुई भी हैं। शेन स्थानों में भी क्रमशः हो कार्वेगी। न्या करें ! अभी असहयोग कार्यक्रमके निरोधी कुछ सर्कारी नौकर, कुछ जमीदार और कुछ माछदार मिछ माछिक हैं। न्यों कि उनके वर्त-मान स्वार्थका इसमें कुछ बात अवस्थ है, उनको न तो अभी अपनी भानी सन्तानका न सर्वे साधारणके हानि छामका और न धर्मकर्मका ही कुछ ध्यान है, सत्य है "अधीं दोषं न पश्यति" वास्तवमें "मेरा पेट हाऊ अक्ट में नहीं दूंगा काऊ " बाजी बात है। परन्तु चिंता नहीं। सदा सत्य हो की जय दुंदिंग बनती है, बेटा थोड़े दिन और कष्टके निकाल को किर तुम विद्यापीठ अहमदाबाद, बनारस आदिमें अथवा शांति निकेतन बोलपुरमें अथवा कि स्थादाद विद्यालय, सिद्धान्त विद्यालय आदिमें चले जाने, वहां तुम स्वधंका यथेण्ड पालत कर सकीगे।

मिट्टन-ठीक है ककका और मुख्यिको क्यूरों महीं सादीके खिये कहा ?

जय ० - बेटा वह जबत क तुम्हारे चार्मे है। तबत क तुम उसे चाहो सो खिलावो व पहिराबो परन्तु विवाह होनेपर उसके सापरे वालोंका अधिकार है। तुम तो उनको खूब पहाबो, उत्तम शिक्षा देवो, सुशील बनावो।

भिट्टन-नहीं ककः, अपन उन्नको स्वदेशमक्तके घर ही व्याहेंगे।

नय०-बेटा टीक है, परन्तुः कर्मका फन्या विचित्र है। अपने हायकी बात नहीं है, हां कोशिश तो करना अपना काम है।

मिडन-न् किनका घर वर देखना अपभा ही काम है। इड विटियां थोड़े ही बरवर देखने माती है।

जग०-ठोक है बेटा, अभी वह बात दूर है। ऐसा ही होगा, और सुम्हले बर तो खादी ही पहिरेगी। क्यों बिटियां ठीक है!

टेक्ट - मेया, तब तो मेरी बड़ी, भूड़ थी निःस-

वेह वर्णी दीपकरद्र जीका वहना सत्य है। धीर बाका भागीरश्वजी वर्णीत तो कदाचित काने बीवनमें केरळ खादी ही पहिरते हैं। पंडित शिरोमणि गणेश्वप्रसादनी वर्णी भी अब खादी ही पहिरते हैं। अब मेरी आंखे खुळीं, मुळियाकी वह खुशीसे रहंटा चळावे, मुना है कि बाईबी श्रीमती चिरौंना सिंगेन सागर मी तो रहंटा कावती हैं, सरोजनी नाइडू, पंडितानी नेहरू आदि भी कातती हैं बस इसमें अब मुझे कोई छज्जा नहीं है जिसे जो कहना हो सो कहे। अब हम झुठे छोकके मधसे कमी भी हिंसाकी अनुमोदना नहीं करेंगे, जहांसे चेते वहीं सम्हालना। अब और कुछ आज्ञा है।

जब०-माई, अब समय बहुत हुना है मुझे बाजारमें कुछ काम है, सो क्षमा कीजिये, फिर मिलुंगा, जाता हूं।

माबोजी-इंडाडा व्यालुको यहीं बनाती हूं।
टेक ० - में भी चकता हूं वर्षोकि मोजन तो
सादी पहिस्कर ही बनाया और खाया जायगा ?
जय ० - भाह तब तो खारये।

टेक ० - मुलिया देखना हम जाते हैं जयचंद-श्रीको लेकर १ घंटेमें आर्वेगे।

मानी-पर खादी तो पहिछे ही मेनना, नहिं तो चूबा उपवासा रहेगा।

दोनों—(जाते जाते) ठीक है।
टेक बंद जी बाजार में गये और दो लाइीकी जनानी घोतियां, दो मर्दानी घोतियां, दो थान
अकः छ फंडकी लादीके काणे, सो घो सुलाकर
पहिरे तम ज्याद्य बनी, बाकी कपड़े सीनेको दिछे,
इतनेमें व्य छूका सप्य हुवा सो जेवंद भी आ

गये। सब छोग खादी पहिने हुवे मोजन करते ऐसे जान पढ़ते ये मानो साक्षात दया घर्मकी ध्वना फहराने वाझे अंगधारी प्रमावनांग ही हों। इस समय इंसते इंसते माबीजी बोडी, छाड़ा गांधीकी आंधी तो यहां भी खलगई। शेष फिर कभी।

श्री वेशल्या देवी।

(जैनकथाके आधार पर |)

(हे - कामताप्रसाद जैन, अखीगंज)

"निज स्वामियोंके कार्यमें समभाग जो लेतीं न वे। अनुरागपूर्वक योग जो उसमें सदा देतीं न वे।। तो फिर कहाती किस तरह अर्द्धाङ्गिनी सुकुमारियां। तात्पर्य यह अनुरूप हीथी नरवरोंकी नारियां।।"

'तान और विज्ञानकी प्राचीन जनमभूमि मारतके आधुनिक युगमें नारी जातिका तनिक भी मान नहीं है। की जातिके उत्पर्स यहां के छोगोंकी मिक और श्रद्धा उठ सी गई। पूननीय नारी जाति आज करुद्धि मिछन, पुर्व जातिकी अविश्व स याजन बनी हुई है। जिस तरह बनवासिनी और आकाश्चमें विहार करनेवाछी भेना इस आशांकासे कि—शायद अवसर पाकर वह उड़ जायगी, और उससे मनोरखनकी सामिग्री नष्ट हो जायगी सदा छोहेके पींजने से बन्द करके रक्ती जाती है, उसी प्रकार महिमाशाछिनी मारतीय इछनाएँ भी आजकछ प्रकाश और ज युश्वन्य प्रकारों मनद करके

रक्ली असी हैं, किन्तु प्राचीन मारतमें उनकी ऐसी अवस्था नहीं थी। उन दिनों उनका विरस्कार और असम्मान करना तो एक ओर रहा, जब कमी किसी शत्रुकी क्ली मी अज्ञान-क्ष यहां के प्रक्षों के सामने आ नाती थी तो वे उसके आगे अपनेको अपराची सा दिखाते थे।.. पर आज मारतके समाजों उनका स्थान बहुत ही नीचे है। न माळूम कियोंने ऐसा कौनसा पाप किया था कि जिससे उनका समस्त म!न और प्रतिष्ठा जाती रही। "

गृहलक्षी वर्ष ११ दशन ७

नहीं, नहीं कहना चाहिए कि भारतवासियोंके कौनसे पापाचारोंका यह फड था कि महिला समानकी मान्यताकी बहांके छोगोंने बाछाए ताक रल दिया जिससे केवछ भारतवर्षको ही नहीं बरिक सारे संसारको आन असीम असातामई अञ्चय परिणामोंकी पराकाष्टाका दिछ दह्छानेवाळा दु:ल-फड बलने पह रहा है। माना कि मध्यकालसे भारतवासी अरनेको मुला बैठे " सत्वेषु मैत्री " जैसे उच उद्देश्यसे विचक्कित हो गए। स्वार्थका भून ऐसा सिर समाया कि न तनकी सुधबुव न यनकी सबर ! फछ वहीं दोकी छड़ाईमें तीसरेने छाम उठाया । विदेशी भाक्रवणींके हरसे माताओंकी प्रतिष्ठा उस समय नगरोंसे उतर गई क्योंकि समानका मारतीय ज्ञान ही हृद्यमें प्रवेश नहीं कर पाता था । खेर गई सो गई अब राख रही-को । अब समय आया है कि हम अपनी पाचीन धर्मनिष्टाको प्रनः भागृत कर्छ । समयने हमारी आंखें खोछ दी हैं। मारतीय छछनाओं को इन

योग्य ननार्वे कि वे अपने प्राचीन पद और सम्मान, सौनन्यता और घर्मपर्यादाको अपनाने हैं। आगा पीछा न करके जल्दी ही आगामी सन्तितिको निश्च उ घर्मा छड़ जार्य्य जातिकी गणनामें काकर खड़ा कर दें।

प्राचीनकालमें अनेको मारतीय वीराङ्ग । ओंने अशातीत आश्चर्यानियत अलीकिक कार्य अपने वर्म बलसे कर करके दिलाए—भिनके सुकृत रलोंका यदि जगमगाता रत्न हार कोई चतुर मणिपारखी रच डाले तो सारा संपार एक दफे अशस्य ही उनकी शांति सौरमसे समतामानकी हिलोंने रोमें डांबाडोक हो जाय। आओ आज पाठिकाओ! चालो श्री रखंदा प्रदीय रामचंद्र नीके रामराज्य की कुछ सरस धुगंवका पान करले जिससे हमार जार्ब और पत्येक पुरुषके हृद्यमें मारतीय रमणीकी प्रतिष्ठा अपना अपना वर कर माय, कलहपूर्ण संप्रति गृह वास्तिविक शांति निकेतन वन आंय।

संसार दुःखसे ज्यास है। धनी दरिद्री-राजा
महाराजा-सेठ साहुकार-रोगी शोकी-स्त्रीपुरुषपशुक्ती सर्व जैतन्य पदार्थ इस कट्ट आवातसे
मुक्त नहीं हैं। अध्युम परिणामोंका फळ मी
अशुम ही निकलेगा। बवूल बोओगे तो कांटे
ही लगेंगे फिर बाहे उसे स्वयं चलानिते ही
क्यों न बीबा हो और दुग्व मिन्ड क्षीरसे ही
बयों न सींबा हो पर लगेंगे उसमें कांट ही
और बदि महान् दरिद्रीने ही एक आज़बृक्ष
समय पर देगा। तात्वर्य यह कि सुल दुलक्दरी

संसार है। और जिससे पटडोंमें स्वार्थमह द:खका पढ़डा ही मारी है। अन्तः चहं ओर इ:खके मेंड कारणकी अवहेडनाकर छोग नाना संकल्प विकल्पमें दिन 'व्यतीत करते हैं। पर यहां यह कैसा दृक्य है। आधि व्याधिका नाम किशान नहीं । सब प्रस्कत गात ही दीखती हैं। जिसके अभी महािवनावन कोहसे पीप झड़ रहा था जो महिन्तुवके तापसे विद्या विद्या बीतकार कर रहा या वही इस शीशेमेंके पद प्रशालन पयसे ष्ट्रसम्प्र होगया-हंतने छमा । उत्तका वह कप्ट जाने कहां काफर हो गया, सब कन्दन ही पहायमान हो एए ! क्या यह भी कोई देवो-पनीत अतिशय है या इन्द्रनाल है ! अथवा पुन्य प्रक्रतिका प्रस्यक्ष प्रभाव है। जी हां! श्री च्क्षमणजीकी भीवनप्रदायक प्रणयनीके पाद महाल्यें यही बस्फ था ! वर्यों और वैसे ! कार्य कारणके सिद्धान्त मानने नैसे ! मीठा बोबा भीटा पाया । अपने पूर्वभवने श्री उक्षपण सहचरी पुण्यातमा वैशल्यादेवीने यह निदान बांब्हर दुर्घर तप किया कि श्री उक्षमणजी ही मेर स्वामी हों। तप इतना महान् और दिशाल किया गया कि बदि वह विदान न बांधती तो निर्वाणपदको हुई होती! घन्य है इस दुर्घर तको! यह भारतीय लहनाएँ ही हैं जो जब तब यम नियममें संसारकी समस्त खियोंकी शिरोभूषण हैं। श्रो केशस्यादेवीने अपने वहुं और सबको मुखी बनाया, पर दूरस्थ देश छंकामें युद्ध हो रक्षया। श्री रक्षमञ्ज्ञी दुराचारी रावणको द्वाह देने गए थे । इक्षमण्डा मी उनके साव

थे । युद्ध वमतान था । इक्षमणके शक्तिशण लगा । वेहोश होते हुए । श्री वेशस्यादेवी उस रणमें भी पहुंची और अपने मःची वितका दुःख दुर करती हुई । इससे बदकर संसारमें पितसे-वाका उदाहरण कहां मिल्लेगा ? पर मारतीयोंको इस बातका गर्व कहां ? नहीं, उन्होंने अपनी पुज्य माताओंकी दशा कभी की सुवार दी हीन होती ? मारतके अन्य समाजोंने तो आंखें खोल भी दीं हैं । परन्तु खेद । परम उदार कहलाने बाली जैनजातिने अब भी इस ओर मीन घारण कर रक्ला है । जब तक माताओंकी दशा न सुबरेगी, जाति की मी अवस्था नहीं सुघर सक्ती।

" जब ठों नहि भारतकी ठळना श्रुत शास्त्र पुराणहिं पाठ करेगी। तब ठों नहिं आरत भारतकी दुल पूर्ण द्शा सुधरेगी ''॥ एवम् शिघमेव भवतु। ॐ शान्ति।

" दुःखमय संसार "

(वृत्त-कामदा)

दुःख फार संसारि तें असे, पापि भी सदा त्यांत हो बसे ।
फार दुःख दे होतसे मनीं, कादि यातुनी भो जिनागुणी ॥
देतुं सद्गती दास भी सदा, फीरवूं नको आस ही कदा ।
नाहिं तात हो तुम्हावासुनीं, कादि यातुनी मो जिनागुणी॥
मात यात्रिण जेंबी नालक, लोक तें जसे बीण चालक ।
भी असे तसे तूज वासुनी, कादि यातुनी भो जिनागुणी॥
या जगीं महा मातृ पितृ तूं, धनपालका चालकास तूं।
शोक सागरी वुक्लो जनीं, कादि यातुनी मो जिनागुणी॥
मोहजा लिने प्रासलो असे, भो दया निधे मी कह कसे।
लीकरी मला काद यातुनी, वंदितो तुला भो जिनागुणी॥

देवेन्द्र तनय-जैन बोर्डिंग, सोसापुर ।

सर्वगदहरण चूर्ण-त्रिफला।

पाठको ! मैंने एक प्रसिद्ध परीपकारी, सर्वगदहारी, जग हितकारी, परमानन्दकारी, स्वक्षेत्र विहारी, परम ब्रह्मचारी, अनंत चतुष्टयचारी, नित्य, अविकारी, आदि अनेक उपमा-घारी वैद्यहारा कथित वैद्यक ग्रन्थमें " श्रिफला " की बहुत प्रशंसा देखी, तथा जिन छोगोंने उस त्रिफछाका सेवन किया और अपने अनादि अनंत दु:खोंसे छूटकर वास्तविक अक्षय स्वास्थ्य प्राप्त किया है. उन लोगोंके कुछ प्रमाण पत्र मी अनेक प्रशंकावींसे भरे हुवे देखे, इससे मेरे आत्मामें भी यह निश्चय होगया कि निःसन्देह यह त्रिकला बढ़ा ही हित-कारी है। मैंने यथाशक्ति उसका सेवन काना प्रारम्भकर दिया और कुछ २ स्वास्थ्य लाम मी किया है। एक दिन जैनमित्र (दीवालीका अंक) पड़ा, उसमें सम्पादक दिगम्भर जैनने अनेक मापाओं के लेखकों से विशेष अंक के लिये लेख मेजनेकी सूचना की है. उसे पड़कर सोचा, कि जैसा रोग मुझे था वह रोग तो प्रायः बहुत भीवोंको है, अतएव मैं वयों नहीं अपनी अनुभूति औषधि कोगों को विधि सहित भेंट बरूं ? ताकि वे भी छाम उठावें. क्योंकि छोग प्राय: बाजार फरीबारे छोगोंके पाससे टटकेके झटकेमें आहर जह बस्तओं के बने हुवे चूरण छेकर खाते हैं, सो उन्हें जब यह चैतन्य सर्वे गद हरण-" त्रिफछा " का चूर्ण मिछेगा तो वे अध्रय ही सेवन करके छाम उठावेंगे ! बत यही सम्झकर यह चूर्ण मेंट करता हूं। आशा है आप लोग वर्षके आरंग ही से इसका पथ्य सहित सेवन कर देवेंगे. और स्वास्थ्य डाम करेंगे।

> सर्वगद्हरण (त्रिफला) त्रूणे। नमृनमृया औषषी, हरण भन्म मृतु व्याधि। "भिन" सेथी खरु सेंथगे, में हैं हैं निरुपाणि॥

मेरा त्रिफछा गुणवान, जिसमें सम्पन्देशेन ज्ञाने ।

मिछकर सच्चेतित्र महान, सचा बना मोल सोपान ॥ चूरण त्रिफछाका ॥ १ ॥

मेरा त्रिफछा है गुणकारी, कहते बढ़े कथा अति मारी ।
नाशे जन्म मरण बीमारी, देता मोल छु:ख अविकारी ॥ चूरण० ॥ १ ॥

जितने गये मोक्ष अवताई, जाते बह मार्चेगे माई ।
सो सब त्रिफछाका गुण पाई, दीना जग कंधेर मिटाई ॥ चूरण० ॥ ३ ॥

अब हुम इस त्रिफछाका व्यान, छुन छो अछग अछग घर घ्यान ।

अरु को चाहो निम बरुपाण, तो फिर सेवो तन मन आन ॥ चुरण० ॥ ४ ॥ सम्याद्दीन दो परकार, निश्चव प्रथम द्वितिय व्यवहार । निश्चय स्वपर स्वरूप विचार, श्रद्धा भात्म तत्त्व मुखकार ॥ चूरण० ॥ ५ ॥ जीवाजीवाश्रवबंधान, संवर निर्फर अरु निर्वाण । सम्दक् सार्तोका श्रद्धान, दूना सम्यम्श्चिन जान ॥ चूरण० ॥ ६ ॥ सच्चे देव शास्त्र गुरु तीन, समकृत कारण ये परवीन । कर परीक्षा इनको चीन, अरु पुनि हो जावो सल्छीन ॥ चूरण० ॥ ७ ॥ अठारह दोष रहित जिनदेव, गुरु निर्फ्रन्थ तनी कर सेव। भागम भाप्त कथित गह लेव, भहिंसा धर्मतनो छल मेव ॥ चुरण ।। ८ ॥ समकत अष्ट अंग युत पाछो, दूषण पांच बीस सब टाछो । निर्मेख सम्बग्दर्श सम्हाक्षी, अनुभव चिदानन्दका पाक्षी ॥ चूरण० ॥ ९ ॥ शंका जिन बबसे तन दीजे, मबपुस इच्छा कबहुं न कीजे। मनमें ग्लानी नाहिं घरीजे, तत्वातत्त्व पिल्लान करीजे ॥ चूरण० ॥ १० ॥ निम गुण पर अवगुण नहिं कहिये, दर्शन चरण चलित थिर करिये। त्रीती साधर्मी पर धरिये, नग निन धर्म प्रकाशित करिये ॥ चुरण० ॥११॥ ये ही आठ अंग घर ध्यान, दोष पत्तीस सुनो दे कान। ना सों होय सत्य श्रद्धान, सहन हि करो स्वपर कल्याण ॥ चूरण० ॥१२॥ उल्टे बसु बसु अँगके जान, कुछ बल आदिक बसु अमिमान । अनायतन इहीं त्रिश्वाठता मान, ये मख्दोष पचीस पिछान ॥ चूरण० ॥१६॥ सम्याजान दोय परकार, निश्चय आत्मरूप निर्धार। संशय विश्रम मोह निवार, पदार्थ नाने सो व्यवहार ॥ चुरण० ॥१४॥ सम्यकचारित दो विधि चीन, निश्चय भाष रूपमें लीन। अरु बत समिति गुप्ति दश तीन, सो व्यवहार चरण परवीन ॥ जुरण । ॥ १ ५॥ ऐता त्रिफ्छा परम रसाछ, जो कोई खाने होय खुशाछ। सो निज काटे विधिका जाक, देवे अन्य मरणको टाक ॥ चूरण० ॥ १६ ॥ तार्ते सेवी यह मन आन, जिससे होवे तुम कल्यान । बरके मन दु:स्रोंकी हान, पानो दीपश्वन्द निर्धान ॥ चूरण त्रिफछाका ॥ १७॥

ब॰ दीयचन्द् परवार नश्तिहपुर निवासी।

क्रमाण्ड्श । क्रमाण्ड्श । क्रमाण्ड्श ।

- (१) हमको हमारे कर्मने ही मनुष्य बनाया है किसी देव, दानव, गा किसी भंत्र तंत्रने हमको मनुष्य नहीं बनाया इस छिये अब हमको ऐना कार्य करना चाहिये जिससे हम फिरसे कर्माचीन न रहकर स्त्रयं अविनाशी (मोस) स्वानमें भाकर सिद्ध बन नावे।
- (२) यह संसार केलेके स्थंभ समान असार है इस लिये संसारमें आकर सार वस्तु (वर्ष) को दुंद आत्महितैयो बनना चाहिये।
- (३) वह विवार मनुष्य मात्रको कर छेना उचित है कि-भारमा क्या बाहता है छुछ, या हु:ल। यदि भाषको पूर्व विश्वास है कि भारमा छुछ बाहता है तो उतके छिये छुछ पास करना तुम्हारा परम कर्तव्य है।
- (४) यदि तुम अपने भारमाको छुखी बनाना चाहते हो तो अपने शक्ति अनुभार छुलकी प्राप्तिके अर्थ धर्म करो।
- (4) नितने जीव संप्रारमें निशास करते हैं, वे सब सुख चाहते हैं और दुःखसे डरते हैं। यदि आप किसीके सुखमें बाबा डरकेंगे तो स्पर् रण रखिये कि आप मी सुख नहीं मोग सरेंगे।
 - (६) यदि तुमको धुलकी बांछा है तो तुप मी सब नीबोंको धुली बनानेकी इच्छा रखो ।
 - (७) मनुष्यके छिये विद्या सर्व प्रकारका आ-भूषण है और धर्म ही सन्ता मित्र है इससे विद्याको प्राप्तकर धर्म सेवन करना चाहिये।

- (८) विद्या शःस करनेके वास्ते मनुष्य मात्रको पूर्णतः उद्योग करना चाहिये किन्तु म स की हुई विद्याको आलस और मोगामिलावी बनकर खो देना मनुष्यकी मुखेताका परिचय है।
- (९) हम जो कुछ करते हैं वह सब अपने ही छिये करते हैं और जो कुछ बाकी रख छोड़ते हैं वह सब दूतरोंके ही छिये।
- (१०) यदि आपके पास धन है तो शक्ति अनुसार कुछ सुरान भी करो क्योंकि विना दान किये तम्हारे धनकी शोमा नहीं।
- (११) घनका संत्रय न्यायपूर्व ह करो क्योंकि अन्यायसे कपाया हुआ चन नर्क छेनानेवाळा है।
- (१२) घर्म कार्योमें घन खर्च करना वर्मकी रक्षा करना है।
- (१३) निर्धन होनेका ग्रुरूय कारण घनको व्यर्धेन्यय करना है।
- (१४) निर्धन रहना अच्छा, परन्तु छछकपट द्वारा दृषरींका धन उगना अच्छा नहीं कारण टगा हुआ धन दुर्गतिका देनेवाला है।
- (१५) घन पाकर भी जो दीन दुः स्वियोंकी सह । यता नहीं करता वह योड़े ही दिनोंमें घन बहित होकर उदर पूर्तिके छिये पराया गुलाम बनता है।
- (१६) जहां कूट है वहां कुट है जिसने कूट फड़को खाया बस वही सर्वथा छुट गया इससे कूटके रेष्ट करनेको श्रेममय ऐस्यता ग्रहण करना चाहिये।
- (१७) प्रेम हा ज्यापार करना जरूरी है किन्तु उसे अधिक नहीं बढ़ाना चाहिये कारण प्रेम ज्याप रके अधिक बढ़नानेसे मनुष्यको हानि

उठानी पहती है। और बहुतोंका दिवाला खुक जाता है जिससे उनका समाजमें आदर नहीं रहता। (१८) सदैव उत्तव विचारों हा उपयोग करना चाहिये । बुरे विचारोंको कभी अपने पास नहीं आने देना चाहिये क्योंकि अच्छे विवारीके द्वारा मनुष्य उन्नतिशील बनता है और बुरे विचारोंसे पतित बनता जाता है।

(१९) परम अहिंसा याव सदा ही बनाये ंस्तना चाहिये। मृडकर मी हिंसक मावरूपी मैटसे अपने अहिंसक निर्मेट मावको मटिन न होने वेना चाहिये।

(९०) मनुब्यके सुकृतकी मालाकपीनहीं मुरहाती, वह सदेव ही संतारमें अगर बनकर सज्जनोंके हृदयका हार बनती है।

(२१) पुरुषार्थको सदा अपनाये रहना सफल ताका चोतक है। पुरुवार्थ नीचेसे नीचे मनुष्यको उखादशके मार्गपर आरुड़ कर देता है।

ः (२२) संसार उन्ही जीवोंके छिये अच्छा 🕏 जो विषय भौगोंको भोगते हुए भी तृत नहीं होते और जो मोर्गोस विशक हैं उनके छिये संपार केडेके स्थंभ प्रमान जतार है।

(१६) हमको कमी न कभी अवस्य माना ही पहेगा फिर क्यों न हम ऐमा काम करें कि निम्मसं हमारे मरनेके बाद हमारा नाम संसारमें अपर बना रहे और हमारे लिये सब छोग रोवें झीर हम हंसते हुए मृत्युके महिमान वर्ने, कारण निस समय हम पेदा हुए ये तब इप रोते थे । (अपूर्ण)

> गोरेलाल पंचरत्व धर्मध्यापक, वि • जैनपाउशाला जनेश-(दमोह)

→ अं धन्य कीन । अं≪ सुनहू सकल सज्जन मन लाई। घन्य सो तन पर स्वारथ आई॥ घन्य घाम जहां अतिथिकी सेवा। जाने गुरु देवा ॥ शिष्य घन्य अनुसरई । घन्य नारि पतित्रत करई ॥ वित्र आज्ञा धन्य प्रश्र चन्य प्राप जो सुर सिर तीरा। तामस विन धीरा ॥ घम्य तपी नगर जहां रजवानी। शना घन्य घर्मे मित सानी॥ वायसु माने । नो घःव दास सेवा पहिचाने ॥ स्वामी जीते । इन्द्री

युवा जो धन्य श्रीति न गाँचे मीते॥

बन्य सो महां पंडित होई।

पंडित घन्य किया युन सोई॥ धनि धन पाय नो त्यागन काई। दरिद्री पाप न धन्ष विषय निबरे। बन्य प्रस्ती जी

धन्य सात्र जो मन संभारे ॥ वन्य सो क्षया सयर मंह आने ।

घनि दःता नहीं दान बखाने॥ छ।गे । दानमें बन्य सो द्रव्य धनि प्रमुता मद मान न नागे॥

हेता । प्रमार्थ कर्म श्च ज्ञान वैराग्य समेता ॥ धन्य जीव जो रत मगवाने। वन्य सो

धन्य सो कवि प्रमु चरित वलाने ॥ वनि नर पर अवगुणहि छिपार्वे । वनि विद्या विकार मिटि नार्वे ॥

दोहा । घन्य वही सेवक बही, जब होवे संग भंग। जन्म तासुको सुक्तव है, को रंगे 'राम'के रंग ॥ रामकृष्णदास प० अ० नेन पाउशाका आगर।।

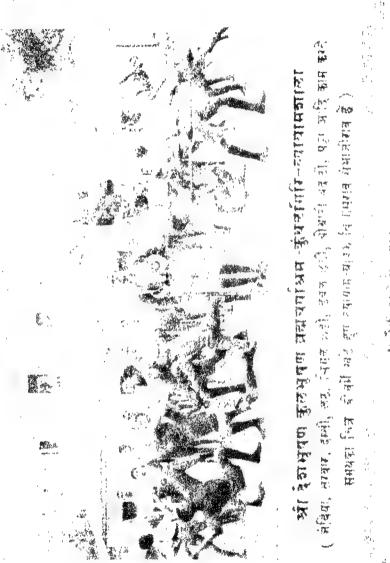
"विरास्क्र जन :





(स्यायामशास्त्रोके सामने बाहुमखीकी पूजा करते समय लिया हुआ चित्र) संस्थाने संस्थापक जिनसेनी क्रा पाइनेसागरजी बांह ओर बैठे हुए हैं मी देशभूषण कुलभूषण ब्रह्मचर्याश्रम-कुथलगिरि।

"जैन विजय" प्रेस-मृत्ता



१ फलाहारकी महिमा। क्ष

हिन्दुवर्भमें, तरादिमें फछाहार करनेकी यहिमाका विशेषक्ष्यसे वर्णन किया गया है। फछाहार करनेसे मन और शरीर स्वस्य रहता है,
इस छिये मनन, पूनन आदिमें मनकी एकामगा
रहती है। किन्दु बहुनसे शौकीन मनुष्य नाके
दिन फछाहारमें ऐसी बहुतसी बस्दुओं को खाते
हैं कि निससे छाभके बदछे शरीर और मनकी
हानि होती है, उसको देखकर आवक्रछ कितने
ही नवीन सम्पतामिमानी हँसी उड़ाबा करते
हैं। इस समय पाख्य त्य देशवासी भी उपवास
एवं फछाहारकी उपयोगिताको समझने छगे हैं।
'' हेल्व एण्ड हेपीनेस '' नामक आरेनी पत्रमें
फछाहारकी महिमाके समन्वये एक छेल प्रकाशित
हुआ है, उसका सारांश पाउकों के छिए नीचे
देते हैं:—

- (१) बदि योग्य रीतिसे श्रारिके पोषणीय-योगी उत्तम फर्जोका सेवन किया नाब तो श्रारिकी परयेक अवस्थामें, हर प्रकारकी आवी हवामें च हे नेता काम करना पड़े और पाचन-शक्ति भी च हे जैसी हो तो भी श्रारिका उत्तमप्रकारसे पोषण हो सकता है।
- (१) फल हारसे अन्य अतिके पदार्थीको मी पनानेकी शक्ति बढती है।
- (१) फलाहार करनेसे शिथिकशा और वृद्धा-बस्या दूर होती है। एवं शरीरको शीण करने बाके पदार्थ शरीरसे बाहर निकल नाते हैं।

- (१) कितने ही रोगों में फर्कों के सिना दूसरें किसी प्रकारके पदार्थ मो मनके लिये नहीं दिये जातकते। फलाहारसे अनेक रोगों की निवृत्ति और शरीरकी यथेए प्रिंट होती है। जिन र पदार्थों के द्वारा शरीर स्वस्थ और नीरोग रह सकता है, उनके विभाग भिन्न र प्रकारसे किये गए हैं, परन्तु अधिकांश लोग निन विभागकों यारते हैं, वह इस प्रकार है:—
- (अ) पानी (व) कार्चीन (क) स्नेह (ड) प्रोटीन (व) छवण ।

[अ] पानी नीवनके लिये अत्यन्त आवश्यक पदार्थ है । जितना यह स्वच्छ होगा, उतना ही उत्तर होगा। सन्तरा, नारंगी, तरवृत आदि फर्लोमें नो पानी होता है उससे अधिक शुद्ध और उत्तम पानी कंहीं नहीं मिल सकता। क्योंकि वह प्रकृतिद्वारा शुद्ध किया हुआ होता है। उसकी अपेसा कुआँ, नदी, तालाव आदिके पानीमें पिट्टी, कूड़ा—कच्या आदिके अथवा किसी रोगके विषेठ जन्तुओं के मिले रहनेका भय रहता है, परन्तु फर्लोमें जो पानी होता है बहसे सब क्षेष्ठ होता है, किन्तु बासो फर्लोका पानी ताले फर्लोक पानीकी स्वान नहीं होता।

- (ब) काबीन-फड़ों ने खांड ग्लुकोसके रूपमें मिली रहती है। शरीर सब प्रकारके हटा चैनाड़े पदार्थीको डाजारस (डा) स्टोबरस Pancreafic Juice) और झातोंके पाचक रसकेद्वारा खंडमें परिणत करके पंछे ग्रहण करता है।
- (क) स्नेह-त्रसा (वर्बी) मोनतके छिये अनेक प्रकारके तेळ, यो आदिकी भी अत्यन्त आद-दशका है। इससे स्वास्थ्य, ओन, चेतन और

(२) वैराज्य (७) षर्संपति-श्रम, ६म, ७परति तिरिक्षा, श्रद्धा ने सभाधान (४) भाक्षेत्र्छाः

हिंग'**भर-**दिशोंऽपि वसनम हिशामा ३५ी વસ્ત્ર ધારમા કરતાર આવશ્સ રહિત. આદિ પિતા આદમ જ્યારે પ્રાથમિક અવસ્થામાં હતા. त्यारै તદન દિગંભર! પણ જયારે ત્રાનાનાનરેપી વક્ષનું કળ ખાઇ પતિત થયા ત્યારથી દૈતભાવ ઉત્પન્ન થયો. દરેક વસ્તમાં દુંદુત્વની **આવના** ઉદ્દિપન માર્ક તે તેણે પાંદડાં (વલ્કલ) વડે પાતાનું શરીર હંક્યું. બાળક વિકારાથી રહિત છે, માટે તે નગ્ન કરી શકે છે. કાદસ્ટેક્સાં છે કે જ્યાં સુધી તામે મ્મલ્પવરક આળકા સમાન ઘરા નહિ ત્યાં કશ્વરના સાત્રાજયમાં પ્રવેશ પામી શકશા નહિ. આક્રિકાની શેન્ડા નામે જાત અત્યારે પણ **દિગમ્ભર** છે. વસ્તુત: જયાં પાપ છે ત્યાં નાગાઇ છે. મતુષ્ય જન્મે છે−તે બરે છે ત્યારે દિગ∻પર આવે છે તે દિગમ્બર જાય છે. આરમ્સ તે અતમાં સમાન રિથતિ છે. કક્ત વચ્ચમાં આવ-રહ્ય યુક્ત જીવન છે. અહંત્વ-મમત્વ ભાવનાઓ એ આવરહ્ય છે. "તામ, ३૫ તે ગુણતા નાશ: ચાયું પદ છે અવિનાશા" અવિદ્યાયા આવિષ્કત ચૈતન્ય **તે** જીવ છે ને તેજ જીવ શિવ રૂ**પે છે. "નર** નરકી કરણી કરે, તા નર નારાયણ હાય." પાછ કર્મ એ અવિદ્યાનું વિરાધી ન હોવાથી જ્ઞાનની ખાસ જરૂર છે. કર્મથી સકિત નથી. કારજાકે સુકિત એ પ્રાપ્તવ્ય નહિ, પણ ત્રેય છે. રત્વત્રયીમાં તેટલા માટેજ દર્શાન પછી ગાનને મૂક્યું છે, તે તદન તર ચારિત્ર લડાય છે. ગીતા-જમાં કુષ્ણભગવાન કહે છે કે ત્રાનરૂપી અગ્નિજ સર્વ ક્રમોને બાળાને બરમસાતુ કરે છે. કાયલાને સા મજ સાયુવડે ધાવાથા સફેદ થશે નહિ, પજ અગ્નિએ કરી વ્યાળવાયીજ તેની કાળાશ નષ્ટધાય: શાય છે. તથેવ 'તાનથીજ મનુષ્ય માક્ષ મેળવે &" (શ્રીમ²ઇ કરાચાર્ય)-સ્વરૂપને **જારો છે.** સ્યુલ, સુદ્દમ, ક્રારણું -એ ત્રણ પ્રકારના શરીરને બાદ કરતાં કરતાં જે રોવ રહે તેજ અસલ સ્વરૂપ છે. ભાગવત્રા સપ્તમ સ્કંધમાં કહ્યું છે કે, અમત્, रवच्न, ते कृषुच्ति भ त्राष्ट्र भवस्थाओं केष्ट्रों अध्याप छे, ते त्राष्ट्र भवस्थाते। साक्षी, भवस्थात्रसंथी शिष्ट स्वांत्रसंद्र-उत्तम पुरुषत्र छे.-भारता छे, ने ते ते। दिशम्भर छे तेने भावन्यप्रती कहर नथी! आधरट अथारे भ्रिशृद्धसंथी उत्थान पाम्या त्यारे तेमना तमाम अपडां धडीन्यानी सृक्ष्या दता! अर्थ्युत् स्विकाने पहेंन्या दता! अर्थ्युत् स्विकाने पहेंन्या दता!

પ્રતિક્રમણ-કરેલાં સદસદ કૃત્યાની સમાક્ષેત્યના કરવી, ને સન્માર્ગ ચાલવાની પ્રતિજ્ઞા કરવી તે. ખોરતી સોકા તેટલા માટેજ પ્રાર્થના કરે છે. ઇશ્વર **ંકઇ આપણાથી દૂર નથી~**ખત્રાત **નથી** કે આપ**રી** તેને આજી ને અરજ કરવી પડે! સેંટપોલ લખે છે કે " આપણામાંના કાઇથી તે (ઇ ધર) વેમળા નથી ક્રેમકે આપણે તેનામાં દાહીએ છીએ, હેોઇએ છીએ તે જીવીએ છીએ." વળા Bible માં મત્યત્ર પણ કહ્યું છે કે "એક દેવ એટલે સર્વના 📌 ખાય, તે સર્વ વડે તથા સર્વ ઉપર **તથા** સર્વમાં **छे. श्रीभद्र श**ंडराश्यार्थना एक एवं हि भृतात्मा वाणा श्वीक्षमां ने शीलाक्षना इश्वरः सर्वे भुवानाम् वाण। સત્રમાં પણ માન્ય પ્રમેય છે. વળી ભાગવતના ચતુર્થસ્ક ધર્મા પુરજેનાષાખ્યાન**માં** છવ **તથા કલરની એકતાના સ્પષ્ટ બોધ કર્યો છે. અળા શો** परमप्पा-धीन्त्र प्रार्थना ओटक्षे ते। સબાધિ. ઉપાસના એટલે આત્મા તથા પરમાત્માનું ओडीडरेश्व डरेवं ते यत्र यत्र मनो याति तत्र तत्र શ્રમાથ્ય: પ્રમાણે ઉત્પ્રસંગે મતતું ભક્ષણ થવું-ખાલા વિકારાથી રહિત ખનતું-ખાત્મદર્શનનું પ્રકા શ્વન થવું એ ખાસ જરૂરી છે. વિચાર વાળી તે વર્ત નેતી સમાક્ષાચના કરવાથી સત્કાર્યની પ્રવૃત્તિ ને 👢 અક્ષતકાર્યની નિષ્ટત્તિ રહેજે થાય છે, તે વખતે ધ્યાન એવું એકતાર થાય કે ઉપર સાપ ચઢે તોન પશ્ર પ્રાર્થીને ખબર પડે નહિ, તે સાપ પછા એમજ જાણે કે છું જુક લાકડાપર દૂક છું. મેતું नाभ प्रार्थना तेना अध्य प्रकार छे-नित्य-नैभिन त्तिक ने क्षाम्या भन, वयन, राया ने इत, कारित, અતુમાદનાથી અસુક સમય સુધી પાંચે પાપાના

ત્યાંગ કરવા, અને સર્વે થી રાગદ્રેપ છાંડીને પાતાના શુદ્ધ આત્મામાં લીન થવું તેને સામાયિક કહે છે ને આ કિયા સવાર સાંજ બે વખત કરતા છે. ખોરત્તી મા પ્રાર્થના પણ પ્રતિ દિવસમાં બે વખત કરે છે. ત્યારે સુસલમાના નિમાજ પાંચ વખત પહે છે. ભિચ્છામી દુક્કડં-હું કરેલા દુષ્કૃત્યાની ક્ષમા યાચું છું. કાઇસ્ટે કહ્યું છે કે જે તમે તમારા બાઇઓના અપરાધ તે માને માદ્દ કરતા નથી તા ઇશ્વર પણ તમારા અપરાધ તમને માદ્દ કરશે નહિ. વળી ખીરતીઓની અભ્યર્થનામાં કહ્યું છે કે " જેમ અમે અમારા શનાઓ અમર્ય કરીએ છીએ તેમ તું પણ અમારા શનાઓ અમને માદ્દ કર " આ એક ક્યુલત છે સરત છે, તેટલા માટે જે એક બીજા પ્રત્યેક ખમાવું છું, ક્ષમા આપુ છું એમ બોલવું જફરી છે.

ઉપવાસ-તે৷ ખરા અર્થ તે৷ પાર્વિવ પદા∙ र्थीथी अविशिक्षत अध परभातभानी सभीप अव અવેર થાય છે, પણ બહુધા નિરાહાર કે એકાશ્વન રહી ઇંદ્રિયે ને શિથિલ કરી વિકારાને વશ કરવા અર્થે ઉપવાસતાં ગાહ્ય પ્રયોજન છે. તેથી ક્ષરીરનં भारे। य सथवान छे. शरीरमार्च सत् धर्मसाधनम्. જૈતામાં પશુપિયાદિ અતિવાર્ય તે પ્રજીયાત છે. પ્રીસ્તી ક્ષેણામાં ઐચ્છીક છે. બધક નથી, ગીતા-જીમાં દેહક્રષ્ટની મના કરતાં વિચાર વાગાહિના તપ સુયવ્યાં છે ને ખારાક માટે પણ સાત્ત્રિક માહાર क्षेत्रानी भास अक्षामञ्ज हरी छे. भन अक भनु-વ્યતે ભધ ને માલતું કારસ છે (ગીતાજી) જેવું અન તેવું તત ને જેવું તત તેવું મન-તે મન પ્રમાણે વિચાર, વાંચી ને વર્તાનના શામાશન પ્રવાહ દૃષ્ટિગાચર થાય છે. માટે હિનથાગ તે અતિયોગ વર્જ્ય છે. છતાં તેમાં અપવાદ છે. સિંદ રાજસી ખારાક લેવા છતાં પણ જિંદગીભરમાં એકજવાર અસિંગતી ઇવ્છા કરે છે. ને ક્રેયુ**ત્**ર કાંકરા ખાય છે, તા પશુ અતિથામ આદર છે. પીપળાતું **વક્ષ નાતું હોય ત્યારે તેને વાડ કરવાની** જરૂર છે. પણ માહું થયા પછી તેના થકે દાયીને બાંધીએ તા પશ્ચ હરકત નથી. અલ્લેમન પ્રથમ " જેમ અર સાગરે તિમિંગલ રમે, હું હરિમાં તાે • ટેલ કેાજા દમે ?' અરુક ફારસી કવિતાના પણ ,માયના એવા છે કે:-

"તુંમાં **છે જે, તું** છે જેમાં પછી શું શાધવું તેને, ત સમજે તેજ ભગાની ભગરગાધિલ હમે કહોએ.'' (ગઝલિસ્તાન)

પશુ આ તા સર્વોચ્ચ કાંઢીના અધિકારીની વાત છે, પ્રથમ તા એકડાજ હુંટવાતા, પછી ગણિતના મહત પમેયા ઉકેલવા.

સૃષ્ટીકર્જીલ—જતીએ કલરતે કરાંતરીકે માનતા નથા. ને પડદર્શન પૈતી સાંખ્ય ને યેત પણ બીલ્કલ અઠતાંત્રાદી છે. વળી ભગવદ્ગીતાના પાંચમાં અધ્યાયના ન કર્તૃત્વે વાળા કરોકથી પણ એજ સિંહ થાય છે. ત્યાં સ્પષ્ટ કહ્યું છે કે દ્વમાવસ્ત્ર પ્રવર્તતે ! પ્રાસ્તીએ કહેં છે કે ઇધર શબ્દ બોલીને સબ્દિ કત્યમ કરી, પણ કબ્રસ્તે સુખ છે નહિ તો શબ્દ શાં રીતે બોલે ? વળી મહાગાની સુલેમાન કહેં છે કે અનંત આકાશાના આકાશમાં પણ છું સમાવેશ પામી શકતા નથી, જ્યારે તેના વિના કાંઈ જગ્યા માલી નથી, તો તે કેઇ જગ્યાએ સાંધ

Gran करे ? वणी काधरट कहे के हे " हेक्ते કદી કાઇ માણસે દીકા નથી કે તેની વાસી સાંભ-ળી નથી. " મુસા પેગમ્બર અલંકારી આપાથી ક્ષ્યરને અતિહાસિક રીતે વર્જાવ્યા છે ને જેનાના નવ તત્વની પેડે મુસાએ પણ રથળ જલાદિ પંચ મહતતાના બાદળલની પ્રાચીન સંદ્વિતાના પારં-ભેજ ગસ્ત્રી ભવાવ્યાં છે. મુળતત્વ માકા**રા** છે. તે તેના સુરા ક્ષળક છે. આકાશ એટકે સાવ ખાલી નહિ પશ અતિ સુદ્ધ મરમાણનાં અસ્તિત્વવાળી પાસાસ જગ્યા. જુમા વાયરક્ષેસ ટેલે યાક. આ આશ્ર હત્વમાં મતિને ક્ષેત્ર થવાથી તેજ પ્રકાશ dra ઉત્પન્ન મધું ને એમ થતાં થતાં છેવટ પૃશ્કી भरितत्त्वमां भाषीः भूगतत्व भाषाश्चने ચેતન્ય પ્રાપ્ટતું દશ્યરપમાં પ્રક્ષેપ પામવું સુષ્ટિના અવિમાંત કે જગદત્પત્તિ ! તૈતિરિયાપ-નિષદમાં કહેલાં અબસુવ્ટિગદ સાથે હાલના પાશ્રા-त्य तत्विद्दानी Vebular Theory विशेष સંપર્ક ધરાવે છે. પારસીમાના ગઢમ્યાર સાથે માઇ બલતી યોજના પશુ સાસ્ય ધરાવે છે. પ્રાથમિક स्थितिना जिज्ञास भाटेक आ Theory छे. ભાકી સબ્ટિત તા આરંબ કે અંત હોઇ શકેજ **નહિ.** ૪૫૮ સાધનતા ને કૃતિ સાધનતા-એ શ્યાચાર્ય વાચરપતિના સમર્થનથી પણ ઇધર કર્તા કરી શકતા નથી. શ્રીસ દેશના સાક્ષરસપ્તક પૈકીના અશ્રિસ્ટાટલ લખે છે કે " સબ્ટિને કર-વામાં દુધરતા કંઈપણ દાય નથી. વળા ઇધર तेन्' नेत्रव पश क्ष्मुब क्रती नधी. तेमक हे भ-रेभ पक्ष राभता नथी "वणी परभात्मा आप्त તે પૂર્ક દ્વાવાથી તેને ૨૫૯ા કે વાંછના-સિસસા-સ્પર્શ કરી શકતી નથી. તેમજ અપચય ને ઉપચય ¥ાહ્યે સર્ગ ને સં'હાર કરવાની કડાકુટમાં પહવાની तेने इशी अहर नथी। तथील कैन तेने अहार દાષ્થા રહિત માતે છે. દરેક મતુષ્ય સ્ત્રય ઉત્પત્તિ. श्रिवि ने सम करनारे। है। नाथी चेतिक क्वी ने પાતાના હવી છે. તેટલા માટેજ ક્રાપ્ટર કહેએ કે " દેવને કદી કાંઇ માળસે જોયા નથી પહ જુઓ મતે જોયા છે, તેણે ક્રેવને જોયા છે. કારજાક इं देवमां धुं ने देव भारामां छे " वजेरे. भारमा से। परभारमा-भप्पा से। परभप्पा-धाता, विष्णु ने शिव भेटते तो सर्ग, दिश्वति ने संदार भश्या उत्पाह, मेल्य ने व्यय. ना सतो विद्यते भावो न सानो विद्यते छतः को श्रुतिवात्त्रपने भाधिनिक विद्यान पण्य प्रवार करे छे Nothing is destroyed and nothing is produced. विकार ते। व्यष्टि परत्वे छे, ने सभष्टि परत्वे निक. कोटते भा स्थिती कर्ता देश कोडे निक.

એ મહાન સત્તા જૈતા કહે છેકે "ઘટે ત રાશ નિગાદના, વધે ન સિદ્ધ અનંત. " ક્રાપ્ટરટે પ્રકત્તિના પદાર્થીને ઓલાંગે કલ્પી દશ કુમારી મોનું સુંદર દર્ણાત અહ્યું છે. તે પૈકી પાંચતે નિર્સુદ ને પાંચને ખુદ્ધિમૃતિ દરાવી છે. આમ બન્તે પશ્કાં મરખાં રહેવાથી સંસારના ખેસ ચાલે છે. એક समय अभवे। अभावे हे कथारे हित्यां परिधी तमाम દુષ્ટતા તિર્મુલન **થ⊎ જાય-એવું અની** શકે નિધ, સત્યયમમાં પશ હરામી લોકા હતા. ને કલિયમમાં પસ અવતારી જીવ હોઇ શકે. ખીરતી તેવા કરલામી લોકો એ મહાન સત્તાને માને છે. ઇશ્વર એટલે રાભતાવાદી અને શૈતાન એટલે અરાભતા-વાદી, શૈતાન એ હૈય બાપાના શબ્દ છે. તેના અર્થ " પ્રતિસ્પર્ધા " એવા થાય છે. એક સત્તા રવર્ગે લઇ જાય છે તે ખીજી સત્તા તરકમાંથી ભ નાવવાને લક્ષચાવે છે તૈયાજ હજારામાંથા કાહ તેને જાણે છે તે જાણનારામાંથી કાંઇકજ તેને શરણે જાય છે. " (ગીતાજી) તેથી જ સ્વર્ગ ભરાતું નથી કે તરક ખાલી પડતું નથી. સેંટ પાલ મહાલ્ય દેલમાં જ એ આવનાઓને ઘટાવે છે ને લખે છે કે " હું જે સારું કરવા ઇચ્છાં છું તે કરતા નથી. ને જે ખાડું હું કરવા કવ્છતા નથી તે સ્ત્રાભાવિક થઇજ જાય છે " ટ્રેક્સ્થ અંતર્થામ મનુષ્યને પાય કરતાં વારે છે, પગુ ઇંદ્રીયાનાં વિકારા તેને ખળજેરાથા પાપમાં ગૌરાવા દે છે. પ્રકૃતિ સળે તા પ્રકૃષ્ટ અપથાંત ઉત્તમ છે. (શ્રી દેવી ભાગવત સાધ ૯) ઇધરની ત્રિયુણા-त्मक प्रकृति अध्य वैषम्यना प्रकावे (म्वेताम्वेतर

હયંનિષદ્) હિધા આવતે ધારેલું કરે છે. મ્યારા પ્રકૃતિ અગ્ટને દાંત પ્રાંત છે છે, જેને વેદાંત પ્રચ કે!શમ્યી તે જેતો નવ તત્વમયી ગણાવે છે. મા અવસ પ્રકૃતિના બીતરમાં રહી જીવન પ્રચાહ સાલ રાખનાર પરા પ્રકૃતિ છે. કારણક જડતાના પાસ વગર પ્રબાર-શક્તિ રહી શકે નહિ. શાકરના ગાંમડા વિના મીઠાશ ક્યાં રહે કે તે હળદાનાં કાંકરા વિના પીળાશ ક્યાં રહે કે તેટકા માટે પંચાસ્તિકાયમાં કું દું કું દાચાર્યા કહે છે કે દ્રગ્ય વિના શુણ નથી તે શુ વિના દ્રગ્ય નથી. તેઓ અબિલ છે. આશ્યર્યોત્પાદક ખૂની એ છે કે આ બંન્તે સત્તાનું મળ એકજ છે! કક્ત પ્રકૃતિના વેમલ માટેલ પ્રાર્થક્ક ખેતી અંદન પ્રકૃતિના વેમલ માટેલ પ્રાર્થકાન મારેલ પ્રાર્થકાન મારેલ પ્રાર્થકાને મહુન મારેલ પ્રાર્થકાને સત્તાનું મળ એકજ છે! કસ્ત પ્રકૃતિના વેમલ માટેલ પ્રાર્થકાન નામનાં બે સત્તાના અંગીકાર કરે છે.

ભલાડ¢થ-સંસ્કૃતમાં કહ્યું છે કે જન્મથી તેા દરેક શહ હાય છે, પણ સંરકાર્ય વિધિ મા થયા પાદ (દ્રજ થાય છે. ફિશ્યીયનામાં જલસેચનના विधि छ जेने भानेश्रमां Baptism हहे छे. તેમાં ઉમેદવારને માથે જહાતા છંટકાવ-અબિયેક કરાય છે, તેપી જુવા માસસપસાની વિકારી વાસનાએ તજી ક્રઇ નવા માર્ગે જીવનપંચનાં ચાલવાની શરૂ ખાત થાય છે. જેના અધ્ટેડવ્યથી પુત્રન કરે છે તેમાં જલ પણ એક છે. મક્ષીન વસ્ત્રને ઉજવક્ષ ને નિર્મલ કરવાના ખાસ ચુગુ પાસોમાં છે તેને હાલના સમજ શાન-દર્જાનથી विश्वरा धेर्म्य नांभवान्ते श्रेतांभर श्यु'-५(५५ ભતવું **એવા ગાસ અર્થ તેમાં સમન્**તીત છે. દરેક મહાન આચાર્યો ક્ષાત્ર રંશા માને રાજકક્ષેત્ર જાજ ્ હતાં જેમક:-રામચંદ્રછ, કૃષ્યુભગવાન, યુદ્ધિમમ વાન, મહાતમાં કાઇસ્ટ, મહાત્રીર સ્વામિ વગેરે. ગાપીયંદને બરથરી જેવાએ પશ્ચ રાજપાટ છાડી ભેખ ધારણ કર્યા! ક્ષતી એટલે : જે ક્ષત-ક્ષત-द्राण (। तारे छे-भयाने छ ते. तेथील ले क्षत्री-भा िंसं अनारराती सूगया रमता हता तेल ષડાંરપુ કપી હિં સક શુણા જે મતુષ્યના અંત્માની अधिभितिन काल करें के तित निरमाल करवाने

તેઓ અવતારી પુરુષ તરીકે પ્રસિદ્ધ થયા છે. अञ्जती आधिभिक्ष ने व्यत्यल अर्थ अक्ष्य विदेश ને કર્મકાંડીએ તેને પત્ર-ખલીકાન પણ દેતા હતા પછીથી અક્તિકાંડ શરૂ થયા હતા એટક્રે અજના માર્થ જાતી ડાંગર જે કરી ઉગી શકે નહિ તે એવો કર્યો એટલે દયા ધર્મની જરા **શરૂઆત** अर्थ पछी तृतीय मानये। भर्मा अजने। अर्थ अप्र-ન્મા (પ્રાહકારણ્યક ૪. ૪. ૨૨ કે ઠાપનિષદ ૨: ૧૮) એવા ભારમાં કરી અહંત્વ-મમત્વનાં છેદન કરી શુદ્ધ સ્વરૂપી આત્માનું અર્પાણ અંગી કર્યું ને એટલેથી જ " દયા ધર્મકા મુક્ષ હૈ " એવું સત્ર સ્થાપિત થયું, ધ્યાદ્મારા, ક્ષત્રો ને વૈસ્ય એ ત્રિવર્જ હિજ મહાય છે. યુર્ભજન્મમાં પ્રકૃતિન પ્રકૃટીકર-ણ તે માં તરસ્ય આત્માના આવિર્માવ મે અનિવાય^{*} છે. તેથી ધર્મના સંરકાર્ય વિધિએના આવશ્યક તે ઉત્કાન્તિકારક છે. દાન, પુજનાદિ ધર્મના અન્વય છે. આદિ પ્રરાહ્ય પર્વ ૪૧, ૧૦૪ શ્રી અમિતમતિ આવકાચાર હત્ર મશ્વરતોલક ૪૬: ૭ શ્રી ધર્મ-સંધેઢ શ્રાવકાચાર હઃ ૨૬ સાગાર ધર્માં કૃત ૧: ૧૫ वजेरे भारते आ हेवपुर्वत, स्वीध्याय, शाउभाव, संयभ तप ने दान की पर क्रीं श्रीरती धर्भमां યસ વિદિત છે.

અહિંસા-ખાર્યાવૃત પર જીવદયાના સિદ્ધાંતથી જૈનાએ મહદુપકાર કર્યો છે. આત્મના પ્રતિकृताન વરેવાં ન સમાસંત ! કે કરડે કહ્યું છે કે એવું તમે ચાહી કે ખોજા તમને કરે તેવું તમે પણ તેઓને કરા. ખતલમકે Action and reaction are equal થઇ શકે છે. દરેકને પાતાના જીવ વહાસા છે. પિંડ તથા હાલાંડ-યુબ્ડિ તથા સમાપ્તિ એકતા છે. પાચીન યાલુદીઓ આંખને બદલે આંખ, દાંતને બદલે દાંત ને જીવને બદલે જી લેતા હતાં. સરું પ્રતિ શઇ તુર્યાત્ ! ના ન્યાયાનુસાર વર્તના હતા, તેથી મુસાપેગમ્બરે બાંધ્યા ત્યારે તેમને ખુન ન કર એવી આત્રા આપી હતી. પણ કાઇસ્ટે તા મન, વચન ને કમેથી પણ અહિંસક રહેવાની સખત તાકીદ આપી છે. કહ્યું છે! ''એ કાઇ તારા એક માલપર મારે તેની

સામે બીજો ધર. વળી જે કાઇ પોતાના બાઇ પર અમધા કાધ કરે છે, કે તેને અપશ્રબ્દ બાલે છે, તે તેનું ખુન કર્યા ભરાભર છે. " કેની અહિં સાત્મક ભાવના ! પુરાતન યાલુદાઓએ એકવાર માંસબક્ષ્યની કચ્છા કરવાથી તેઓમાં બર્ય કર ઉપદ્રવ કાેડી નીક્લ્યો હતા ! છતાં ધર્મ પરિવર્તનમાં પાંચ કારસથી બેદ પડે છે. દ્રબ્ય, કાળ, બવ, બાવ ને ક્ષેત્ર ઉદાં બાહો અહિંસા પરમા ધર્મને માનવા છતાં આહારમાં વિપરિત માલમ પડે છે!

આદર્શવાદ--શ્રીમ-છં કરાચાર્ય કહે છે કે जन्त नाम नरजन्म दुर्रभम् । भनील, प्राधील ने हिलि-અમાં ઉત્તરાત્તર વિકસતું અતું ચૈતન્ય છેવટ भूत्रव्य द्वेद्रभां आवे छे. डार्चिनना इत्हांतिवाइ (Evolution Theory) ને પારસત્ય મિમાંસક भभवान पतं कसिनी प्रकृतिनी भरती-डा. पे। धी-ચરીનું સૃષ્ટિના પદાર્થીનું વળી કરસ્ય−એ દરેક સિંહીતા સાભ્યવાદી છે પણ કેટલાકતું એમ માનવું છે કે મનુષ્ય યાની એ હક્ષચાર્યાથી બહાર 🔊 (વિષ્ણુપુરાણ ને રામાયકની જવાલા પ્રમાદ કૃત શિકા) મનુષ્યતે તેમા સભાવેશ નથી. ક્રિશ્યીયતા પછ મતુષ્યને " દેવીની પ્રતિમાં " રૂપે ખનાવેલું માનતા હોવાથી તેને ઉત્તમપદ આપે છે! વળી क्यारे ते प्रकृतिना पहाथीं पर **घाता**नुं पाइपेय वापर छे-स्वाभित्व भागवे छे त्यारेक ते पुरुष પદવી પ્રાપ્ત કરી મુક્તિ મેળવે છે. જાવાલી ઋષિ लेवाको लगारै छवः शिवनी भेडता रिद्ध डरो-कार्छ-સ્ટેક્શું કે દું દેવમાં છું તે દેવ મારામાં છે. મનસૂરે " અનક્ષદ્ધક " શબ્દાચાર ખદલ દેહાત્સર્ગ કર્યા. ત્યારે કશ્વરના કાર્વ બ્યાપક સ્વરૂપને તછ દ્ધાને મનુષ્યાએ આદર્શવાદ ઉભા કર્યા એટલે જે व्यक्तिक शुक्ष हर्भायारथी सिद्ध गति प्राप्त કરી હતી. તેમને દક્ષિસન્મુખ રાખી પુજ શરૂ કરી તેથીજ જૈતીએ ૨૪ તિર્ધ કરોને માન્યા. હિન્દુઓએ રામચંદ્રજી તે કેળ્ય ભગવાનને માન્યા. ર્વાધ્ધોએ બુદ્ધક્ષમવાનને માન્યા, પ્રીસ્તીમાએ મહાતમાં કાઇરટને ને દરલામી આ મહમદ સાહે. અતે પજય મુખ્યા: આવી રીતે દરેક મહાન ધર્મમાં

" ઉત્તમ " (God શબ્દ Goodનું ડુંક દ્રષ્ય છે.) ની ઉપાસના શરૂ શક્ક જીવાતમાને ઉત્તરિ ક્રમના સાત પગથીમાં ચઢવા પડે છે. છઠા પગથીમાં તે મહાત્મા કહેવાય ને સાતમા પગથીમાં ચઢે એદલે જીવન સુકત શકુ પરમાત્માના સ્વરૂપને પ્રાપ્ત કરે છે. ગીતાજીમાં કહ્યા પ્રમાણે ધર્મના પરામ્પ્ય ને અપમંત્ના વિજય શ્વાની સંધીમાં એક અલાકિક અધિકત પ્રકાશમાં આવે છે. જૈનોના દિવાળી કલ્પમાં આવી અવનારી ને પ્રભાવશાલી વ્યક્તિને " યુગપ્રધાન" કહે છે. આ આદર્શવાદની દ્રષ્ટિએ જૈન દર્શન નાસ્તિક કહી શ્વકાય કે? કદિપણ નહિ.

નિવેદન-વિસ્તાર ભયથી અત્રજ વિરમલું યુકત છે, નહિત્તર દરેક ભાળત પર વિસ્તૃત વિવેચન થાય તો અક ખુડદ્યાંથ બરાય. છેવટ ભગવાન મુદ્ધની આંતર્માત્ર પ્રેરિત નિસ્ત લિખિત પ્રાર્થના કરી સમાપ્ત કરીશું:—

सर्वेत्र सुलिनः सन्तु, सर्वे सन्तु निरामया । सर्वे मदाणि पर्यन्तु, मा कश्चिहःसमाप्तुपात् ॥

हरएक विवाहके समय—

अवस्य २ वां:ने योग्य उपयोगी पुस्तक

→ि पुत्रीको है

माताका उपदेश।

थोकबंद अवद्य मगाइये। पृष्ठ ४० और मृत्य अतीव अल्प =) और 4) सेंकडा।

मगानेका पता-

भैनेनर, दि॰ जैन पुस्तकालय-सुरत्।

वर्ष ! हर्ष !! परमहर्ष !!! जैन शब्दार्णव प्रथम भाग

जैन पारिभाषिक शब्दकोष-तैयार।

इस समय इस बातके प्रकट करनेकी अधिक आवश्यकता नहीं है कि आनक्छ हपारे भाषा जैन साहित्वमें किसी (१) जैन पारिमापिक शब्दकीय बीर (१) कैन ऐतिहासिक शब्दकीवके उपरवन न होनेसे बेन माहित्यका यथार्थ परिज्ञान प्राप्त कर-नेके छिये न केवछ अजैन विद्वानींकी ही जो हमारे जैन प्रन्थोंको सहवे धवलोकन करना और उनमें हैं बड़ी बड़ी कठिनाइयों हा सामना करना पड़ता की तैयारीमें तथा प्रकाशित कराने आदि कार्यों में े किन्त जैन विद्यार्थियों तथा अन्य स्वाध्याय- कितने बहे परिश्रम व धन व्ययका काम है वर्योकि मेमी पहाश्योंको भी शास्त्रोंके कथनका यथार्थ श्रीमान् पं० पत्राकाकजीने अपने उपर्यक्त छेलमें स्थरूप समझनेमें निराश हो माना या कुछका कुछ निमानुभारते इसका अन्दाजा मी बता दिया है कि ही अर्थ अवशाण करहेना पहता है। यहां यह "इस कोषके चान्द्र संग्रह करनेमें बतानेकी भी आवश्यकता नहीं है कि ऐसे की ब कमसे कम दो पंडित निरन्तर बैठकर के अंग्रेनी "साइक्रोपीडिया" के नवीन काम करें तो चार पांच वर्षमें तैयार ढंगकर अकाशदि कापसे तैयार होकर प्रकाशित कर सक्ते हैं" ॥ हो मानेसे जैन व अजैन संसारको कितना वहां किर इसकी प्रेस कापी, जिलने व छपाने आदिमें काम होगा तथा भाषा जीन साहित्य की मरी खर्च और समय आदि नो कुछ लगेगा वह कितनी बड़ी कपीकी किलने अंशोंने पूर्ति होना अलग देखाया है। वह यह मी छिलने हैं कि दमी " इस्रिक्टिये कि आमहरू दिन प्रतिदिन विद्या- " ऐवा एक प्रास्त्रत कीय श्वीगन्दरी जैन साध र का प्रचार अधिक बढते आनेसे विद्याप्रेमी बढ़ाश्य राजिन्द्रसास्त्रजीने बनवाया है नितमें एक कोषकी भाषस्यकताओं को भव मछेपकार समझने | स्वास्त्र रूपा तो केवल बनने में ही लर्च हुये हैं करों हैं तथा जैन समाचार पत्रोंने भी ऐसे कीयकी इस्वादि । उन्धुंक सर्व बानों ही ध्यानमें रखकर तैयारीके लिये कई बार बहुत कुछ आन्दोकन मान्यवर पाठक महोदय विचार सके हैं कि किसी किया मा सुद्धा है' बीरनिक संक १४४४ के मुझ नैसे तुच्छ और अप्तहाय अति अल्पमित दिगार के नेनके विशेषांक नं १, २ वर्ष ११ के व्यक्तिके छिये यह महान कार्य कितना कित्व

पृष्ठ ३४-४६ वर श्रीमात पं० प्रज्ञालालजी बाक्छीबाछका मी एक सबिस्तर छेल भक्ताशित हो खुका है जिसमें उन्होंने ऐसे की वक्र न होनेसे पहुंचनेवाडी हानिया तथा उसके बरत शीध तै-यार होनेकी सारी आवश्यकताओं और उससे पहुंच सकतेबाके अनेक लागीकी मलेबकार दशी दिया है। तथा यह भी बतजा दिया है कि यह कीय किस प्रकारका अपना किस दंगका बनना चाहिये और उसमें क्या क्या बार्वे होना आवश्यकीय हैं।

मुझे यहाँ। यह अतानेकी भी आवश्यकता वर्णन किये हुये कपन हा यक्षार्थ अर्थ समझना चाहते नहीं है कि ऐसे सर्वी खोगी " महान को ख"

२४६५ की उघेट्ठ शुरु ५ (श्रुत पंचमी)से मित्र भाष । निसे अपन वीर नि॰ सं॰ १४४९ में छममन इस प्रकार कमबद्ध शहर किसा जानेपर अब अपने सम्बका अधिक भाग इसीमें छगाया नियसे मेरे मी विवासनुसार निम्न छिखिन दंग पर इस

और दु:साध्य है या यों कहिये कि ऐसे महत्त अब अतीससी सैतीससीसे अधिक शब्द संमह क संके छिये मेरा साहस करना मानी स्वयम् पूरपण होकर अंग्रेजी की पेंके ढंगपर अकारादि कपसे जैसे महासमुद्रको अपने बाहुबलसे तिरणानेकी लिखे मा चुके हैं जिसमें अधिक समय हस्य कल्पना करना है " तौ भी ऐसे कोषके बननेकी आकारके शब्द संग्रह करनेमें देनेसे बारहसी तेर-अत्यात अवदयकताको देखकर खीर यह विचर हमौसे अधिक शब्द तो केवळ हत्व " अकार " कर कि साहस, उद्योग, प्रयत्न, परिश्रन, और हीके हैं यह सर्व ६६०० वा ६७०० से अधिक चित्तकी स्थिरता सम्मुख संभारमें वह कौनसा कार्य शब्द केवल प्रथम अक्षर हीके अपसे नहीं किन्तु है जिसका हो जाना सर्वथा असंगद कहा जा सके, पूर्णाया अंग्रेजी की वीं ही के उंगपर हर शब्दके तथा यह विचारार कि यदि इस कार्यको पार दुपरे तीसरे चौथे आदि सर्व अक्षरींका मात्रासहित म्भकर दिया नायगा तो धर्मध्यानमें समय व्यतीत क्रम बांवहर क्रमबद्ध कर दिये गये हैं निससे होनेक महान लामके अतिरिक्त कुछ न कुछ कार्य अमीष्ट शब्दकी इतने बड़े महान कोवमें हूंदनेमें हो ही रहेगा जिसे कोई न कोई अन्य विद्वान उस शब्दके प्रथम अक्षरके सर्व ही शब्दोंपर दृष्टि महाद्माय मुखारकर पूर्णकर देनेका कार्य संगाल होते। डालनेका व्यर्थ कष्ट न उठाना पढ़े किंत हर अमीष्ट मैंने सर्वथा असमर्थ होनेपर भी चीर नि० सं० शब्द चौषाई मिनिटसे मी कम समयमें तुरन्त ही

२४ वर्ष होगए इस मत्त् शुन कार्यको हिम्मत इनका केवल अर्थादि लिखनेका कार्य शेष है निसके नांवकर प्रारंग करदिया और निन द्रव्यसे हिये अन अधिक समय और परिश्रमकी इतनी मामा टीका सहित श्री गोन्मटसार, त्रिको आवश्यकता नहीं मान पहती नितनी विद्वता और वसर, तन्त्रार्थसुत्रकी सर्भेशिसिद्ध, व अर्थ- बुद्धिवरायणता की है जिसके छिये में अपनेको प्रकाशिका आदि टीनार्थ, भगवति अस्वना नितान्त अयोग्य पता हूं। दश्वि इन सर्वश्चान्दीं हा सार, ६मेंहंग्रहश्रावकाचार, रतनकाण्डश्रावकाः अर्थ अथवा परिमाना और व्याख्या आहि सब चार, सामास्वर्ीमुन, परीक्षामुख, ज्यावर्द विशा, कुछ यथास्यान पाणः उनही अन्धीमें मिळ नाती आदि सी सवासीसे अधिक जिन्मंग संमह करके है, महां नहांसे यह शब्द हंमह किये गये हैं और जितना अधिक से अधिक समय सांसारिक कार्योंसे इस हिये सन्मर था कि महां इतना परिश्रम उठा बचकर निकता रहा उसे बड़े हर्षके साथ रसी हर उर्ध्युक कार्य किया गया है तहां इन कार्यके आबदाकीय श्रम कार्यमें उगा। रहा। केवल इस शेष मानको भी योड्से और परिश्रमसे कुछ इतना ही नहीं किंतु अपनी सरकारी नौकरीसे वर्षीय में ही यथाशक्ति पूर्ण कर हेता तथापि स्वत्व प्राप्त होने पर पुरे दो वर्षकी अर्द्ध वेतनकी श्रीमान् पं प्रमाणाकजीने " दिगम्बर जैन " लुड़ी (कर्डो) मुरुवतया इसी कार्यके किये के तर के उपर्युक्त केखमें दी हुई सम्मन्यतुक्क तथा

महत्कोषका किलाना मेरे छिये संस्कृत व्याकरणकी निर्मे हुंदनेकी आवश्यकता न रहे यथा आवश्यक निवान्त अनमिज्ञानाके भारण केत्रल दु:स:ध्य ही किन्त सर्वथा असाध्य है " सतः जैन िविद्यन मंडलीसे मेरी सविनय पार्थना है कि वह इस अति आबश्यकीय महान कार्यको शीघ पूर्ण करने या करानेका कोई उत्तर प्रवन्य करे और इस प्रकार छिये अस्ता ही महानुपाव अपनी भानी सम्पति "भेनिषत्र" "जैन गरुट" भादि द्वारा प्रकाशित करावें जिससे यह कार्य उत्तनता भीर सगवताके साथ र्जा झ पूर्ण हो जावे और मेरा यह इतने वर्षोत्ता रात्रि दिवसका जीतोड परिश्रम मेरे जीवनहीं में सफडीभूत होसके । "वहां यह बतादेन। भी अनावश्यक नहीं है कि मैं इस सर्व परिश्रनका तथा अपने आर्थिक व्यपके लिये कञ मी मार्थिक बदला पानेशा अभिलाषी लेशा मात्र नहीं हैं। मैंने यह सबै परिश्रम केवल पारमार्थिक इष्टिसे स्वपरीयकारार्थं ही किया है मेरे विचाराजसार यह 'जैन शब्दार्णन' नीचे हिखे प्रमण दो मार्गोमें विभानित करके किस्ता नाना सर्व साधारणके लिये। अधिक टपयोगी और छाम दायक होगा:-

- र जैन पारिभाषिक दाव्द कोष-स्म^{में}
- (१) प्रस्येक शब्द मेंदि असरों में उपर्युक्त अ-कारावि क वसे।
- (१) शब्द किस माबाका, अर्थात् संस्कृत, प्राकृत, या अपश्रंशहिन्दी, गुनराती, मरहती आदि),
 - (६) शब्दोत्वति जैव व्याक्राणानुसार,
 - (४) श्रुट्हा अर्थ व अनेकार्थ सपमाण,
 - (५) शब्दकी जैन परिभाषा स प्रमःण,
- (६) सन्दकी व्याख्या निसे पढ़ कर उन शब्दके क्षा कंपमें कोई आवश्यकीय बात अन्य किसी स्था-

पमाण सहित ।

(७) प्रवाण बाक्योंका यथा आवश्यक मापार्थ मी बह सर बातें छिली नावें।

२ जैन ऐतिहासिक शब्दकोश-इसर्मे उपशुंक महारादि कपसे उन सर्व प्रसिद्ध स्त्री, पुरुषोंके संक्षेप चरित्र लिखे जावें जिनका कुछ भी प्रथमान्योगके जैन प्रत्योंमें आया है या भिन पंचमकालके जैनावायी या अन्य मुनियाँ तथा मापा बैन कवियों वा अन्यान्य प्रसिद्ध नैन व्यक्तियों हा कुछ मी कथन किसी भी नेन या अमैन ऐतिहः सिक प्रन्थों या लेखों भाया हो"

इन भागमें नं चे छिले पुष्य पुरुषों हे व अन्य प्रसिद्ध व्यक्तियोंके यथा आवश्यक चरित्र ऐतिहा-सिक दंगसे किले नाने चाहिये:-

- (१) २४ तीर्थंकरादि ११९ प्रण्य प्रत्व
- (१) २४ तीर्थं हरोंके १३ मुख्य गणधा व सर्व १४९६ गणवरों मेंसे निन निनका कुछ भी चरित्र उपरुठ्य हो ।
- (३) २४ तीर्थकरोंके समक्ताःणमें मुख्य गण-वरोंसे प्रदन करनेबाले २४ मुख्य श्रोता ।
- (४) २४ तीर्थं करोंके समयके तथा उनके अंत-राक कालके अन्य सर्व प्रराण प्रसिद्ध ऋती, मुनी, भावंका, श्रावक,श्राविका,और राजा महारामा भादि।
- (५) वर्तमान पंचमकालके ३ केवली, ५ श्रुति-केवळी, ११ मुनि-११ अंग १० पूर्वके ज्ञाता, ९ मुनि ११ अंगपाठी, ४ मुनि ऋपसे १०, ९ ८ और ७ अंगवाठी ५ मुनि एक अंग पाठी ।
 - (६) बर्तमान पंचमकालके संस्कृत, पाकृत

प्रस्थरविता प्रसिद्ध आचार्य भिनचन्द्र, कुन्दकुन्द, उमास्वामी, समन्तभद्र, नेमचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती, पुरुषपाद, विद्यानिः, माणिस्यनिः, मात्रनिःद **अक्लंकदेव, योगेन्द्रदेव, स्विवेण,** जिनसेन, सिद्धसेन दिवाकर आदि ।

- (७) संस्क्रन, प्राकृत ग्रन्थोंके टीकाकार व हि० मापा जैन प्रत्यत्विता पं० टोडामछ, जय-चन्द्र, दौळतशम, बनारसीदास, वृन्दावन, धानतराय, मुबरदास आदि ।
- वैद्यक, ज्योतिण, गणित, अदि विद्याओं सम्बन्धी वीर विसुके नामको तुम मंत्र सम उरमें बरो । प्रन्य डिसनेबाड़े प्रसिद्ध जैन कवि घनंतव, वारभट्ट, सर्वेस्व ही वह नष्ट हो तो भी स्थपर हित न हरी आशाधर, शाक्टायण, मेधाबी, माबसेन, चन्द्रसेन, महाबीर आदि
- (९) ईडर, कारंगर, ठात्र, अवण बेंगडीर, होमज, ग्वालियर, सौनागिरि, जधपुर, अनमेर, दिहली, भादिकी गहियोंके प्रसिद्ध महारक।
- (१०) वर्तमान समयके ऐडक, झुलक, बहा. चारी आदि त्यागी, उदासीन श्रामक तथा दानी परोपक री सेठ और धर्मज़ विद्वान दि।

नोटः-उ र्युक्त सर्वे स्त्री प्रह्मोंकी संख्या हजार बारह सौके छगमग रहेगी। मेरा अनुपान है कि इस प्रकारके कोषका उपर्युक्त प्रथम माग बहे साइनके रुगमग छह सात सहस्य पृष्टोंमें संक्षितहरू यसे हिसा काहर पूर्ण हो जायगा जो आजक्छकी आवश्यकताओंकी पुर्तिके लिये पर्याप्त होगा ।

> सेवक-बी० ऐड० जैन, सी० टी० (बुलन्दशहरी)

श्री केन मन्दिर, बाराबंकी (बावज)

केश मेरी भावना। १६५

(t)

हा? देश एवं मातिहा, उत्थान कैसे शिष्टा हो । अज्ञान तपका नारा होते, ज्ञान ज्योति दीम हो।। ज्ञान ज्योतिसे हमारी निम निधिकी प्राप्ती हो। न्याय पथ अभवन्य करके तुरत ही शुभ कार्य हो॥

श्रीमान उनति मो पही तो र्रा हा ही कटमध्य हो (८) कोष, अलंकार, लाद, काव्य, व्याकरण, तोड़ो न साहस त्य कभी धर्यादलाबी श्रीघ हो ॥

(1)

पनित्र स्थल मिळ गया अरु इट प्रतिहा न भई। मिलना न मिलना है बराबर उद्योग पीडा व्यर्थ सही पवित्र वाक्यामृत ध्वनी हृद्यमें यदि न गुनी। तो ज्ञात होता की हमारी अन्त सीमा आगई ॥

(8)

सज्जनों! अब कर्तेच्य तुमरा क्रुपा दृष्टि कीनिये। होवे हमारी भारयोक्षति यह भाप भवने दीभिये॥ शिक्षाल्योंका उत्थान कीने द्रव्य दौकत दीनिये उत्यान होवे शिक्षकोंका प्रण्य संख्य की मिथे ॥

(4)

मनी अब सुमति इमको शीघ दीजे मातिउसति में स्मै अतएव आशा है इमारी श्री हा ही इस शंबते॥ केंगतीके कंटक इटाइर स्गतिमें चछने स्में। वीर श्वर हो शीघ उन्नति मंत्र यह नवने हरो ॥

मनोहरलाल बैन

जैन पाठशाना, टीकापटनगर ।

क्रु सम्वाद व प्रतिज्ञा। क्रु

सबेरे आठ श्लेका समय है, सब छोग काममें छग चुके हैं। सब छोट १ बच्चे निजीनोंसे उठ उठ कर हाथ मुँह घोकर अपनी मांसे कह रहे हैं। मां रोटी दे, करूरी यहने आना है, क्योंकि आज शास्त्रोजी अरुदी आनेवाछे हैं....शास्त्रीजी मी अपनी शास्त्रामें १ कोई पेरर बांव रहे ये कि इतनेमें शिष्य आ पहुंचा, और इस प्रकार बातचीत होने छगी—

शिष्य-(शप जोड़ मस्तक नमाकर) गुरूनी प्रणाप !

गुरू०-त्राओ प्ररेन्द्र िशुपाशीः । चिरंगीव हो ! स्टादि ।

शिष्य-गुरुजी, आन नव मैं अभी आपके पास अव्यक्त करनेके लिये आरहा था कि एक असहकारियों का शुंड आपसमें रस्तेमें कहते हुए आरहा था कि '' अगर भारतमें सुराज्य होता तो स्वराज्यकी जरूरत न पड़ती व लोटेर बचे यह कहरहे थे कि मिनिस्ट्रेट सा॰ काहे जेडमें पूरें, मारे, कुछ भी करें परन्त स्वराज्य अवहव होंगे। मेरे सिर पर तो बंग्होर टोपी व काला कोट बदनमें था अतः मैं तो विवारता ही रह गया कि ये लोग गांधी की आंधी में फंसे हुए क्या बक रहे हैं ! मुझे तो मालून मी न था कि गांधी कीन है, और इसकी आंधी यहां वधों कल रही है। परन्त न डोगोंने पहले कहा था कि ''महारमा गाधीकी ज्या" इससे मैंने नाना कि ये तो कोई अच्छा पति छित

कृत्व होना च हिंगे, तभी तो नय बोछ रहे हैं, परन्त क्या वह पंच्यम जो जैसे भी वह गया, जो राजाकी नय न बोजकर उसकी सब नय बोछ रहे हैं ऐसा क्यों हो रहा है ? हम नहीं समझ सके कि इन छोगोंने ऐसा करना बयों शुरू किया है ? और यह मी न समझ सका कि " प्रसाज्य होता तो रसराज्यकी जरूरत न थी" जतः कृत्या रश्च करें ?

गुरु०-धुरेन्द्र, गांधी गुनशत शत तारवी, राष्ट्रीय महासमाका सरमुख्यस्था, एक कि हिसा वर्मपालक माहतमा है। तुम कहीं कठायाई (हीं।,हरदी, मिरच) के सौदा वेननेशलेको गांधी मत समझ छेना क्योंकि उसे भी "गांधी" ही कहते हैं कि इन्होंने सक्कि साथ खिहसत्मक असहकार चाल किया है वे कहते हैं कि सक्कि या तो अपनी नीति धुधारे अथवा प्रनाके अधिकार प्रनाको दे दे, वर्योंकि जो राजा होते हैं वे हमेशा प्रनाकी उसति की ओर इक्ष्य रखकर ही राज्य करते हैं परन्तु अंग्रेनभाई तो प्रतिदिन ज्यादा......

धुरेन्द्र-(बीचमें बातकाटकर) बस बहुत हुआ। अब आप उस वास्यको स्पष्ट करिये ?

गुह्न-हे शिष्य ! धुराच्य शब्दके बोडनेमें जितनी कठनाई पड़ती है, उससे कुछ अधिक उत्तका अबे करने व उसके अबुसार चडनेमें विपत्ति है, तो मी......नेखो (धु-धुण्डु अच्छा स्वतंत्र जहां किसीको किसी प्रकारको रोकटोक न हो, सब अपना २ धर्म स्वतंत्रतासे पाउन कर सके, प्रनाके धुल दुःखों ने जो प्रनाके साथ हो व उसकी उन्नति है छिये अहनिश प्रारन करता हो, नहां हमेशा प्रमाधीशोंको शुप सम्मति दी

जाब इत्यादि। यह धुराज्यका अर्थ है, परन्तु यहां भारतमें ऐपा नहीं दीखता। अब तुप कहोगे यहां क्या नहीं है ?

धुरेन्द्र-गुहनी, विस्कुछ ठीक बात है, हमें तो यहां किसी मी जातिकी त्रुटि देखनेमें नहीं भाती, आप ही देख लीजिये-यहां अंग्रेन मा-बोंके प्रसादसे गांधीकी आंधी रूपी दरी नैसी मोटी खादीसे अच्छे २ महीन पटक मटकदार उत्तम कपड़े, हमारी बहर्नीके पहननेके लिये फॅसी साड़ी, भच्छे १ खिलौने, काड़े सीने, आटा पीतने, पानी निकाडनेकी मनीने, विमछीकी रोशनी आदि हमारों की में हमारे हिल के किये उत्तम २ आगई हैं, जैसे देखिये कि जब हम मंदिरों, उत्सर्वों, समाओं में अच्छे २ कपड़े षद्दनकर जाते हैं तो कैसा मान मिलता है परन्त् गांघीकी खादीबाड़े बाजुरर खड़े रह जाते हैं, हमें कपड़े सीनेकी अखरत हुई तो खर र मसीन चढ़ाई कि जरासी देशमें कपड़ा सिज्कर तैयार हो - गया । हमें आटेकी जरूरत पढ़ी तो मसीनमें गेहं डाछे कि इंनिन्से नशसी देशमें मनों भाटा विव कर सस्ते मावमें दियार हो नाता है जब कि हायसे महिनोंमें भी नहीं होता व तक्कीफ अगतनी पहती है। इन माइयोंने घरर पानीके नक हगवा दिये हैं अतः भन पानीकी जरूरत हुई जरा वैच इचर उधरसे चुमाया कि छर र पानी गिरने छगा, इसमें न रस्सेकी महरत है न कुंद्से घर तक मानेकी खटपट है, इसी प्रकार विजलीकी बर्सी भी है कि हमें जस्दी प्रकाश करना हुआ सो जरा घटन दवाया कि तुरत ही सूर्येके प्रकाश नती चमकती रोशनी हो नाती है, न तो दियासछाईका खर्च है, न तेक छानेकी सारपट है, और न बत्तीको साफ करनेकी ही पंजायत है। अब आप देखछीजिये इन छोंगोने किनती अच्छी सगबड़ की है किए मैं नहीं जान सका आप क्यों बुरा कहते हैं!

गुरु०-हे महाभाग ! जो तुमने कहा सो तो ठीक ही है इसमें किसी प्रकारकी दांका नहीं. परन्त जनसे मास्तमें इन माईबोने पदार्रण किया 🕽 हमें 'दीन'' ''दास'' बना दिश है। कि देखी जब यहां ये माई नहीं थे तब कैसे काम चलता था, रन्होंकी दासताने मारतको हमेशाके क्रिये परतंत्र अस्तस्था व हुर्बेछ बना दिया है। देवी जब हम मोटी २ खादी पहनते थे तक कुछ नहीं होता था परन्त किर कु दिनगद उसी चीनका आपको उपदेश दिये नाने पर आप उसे दूतकारते हैं और कहते हैं कि यह म्बी मोटी है। इनसे सिद्ध है कि परदेशी चर्बी व चर्मसे भरे हुए अशुरू कपड़ोंने तुम्हें शोकीन व कोमल बना दिया है। में पतले २ कपड़े बड़े ही अशुद्ध हैं। इनमें भीवित गाय मेंसोंकी बरबी छगाई माली है। अतः इन्हें पहिन कर नहीं मालूप आप कैसे मोनन व पूना प्रश्ना-अदि करते हैं। देखी मैं खादी ही पहनता हूं भी विष्ठकुछ शुद्ध व टिकाऊ है, तुम तो चरी औरसे इस दासतामें फंसे हो । यहां हाथसे कपड़ा सीने, पानी अतने, बत्ती करने, आटा पीसनेसे शारीर पुष्ट रहता था इत्यादि अने क कायदे थे । आहेकी कथा नहा सुन जीनिये। महीनोंसे जो भाटा विसता है वह गरम र

निकछना है और बेस्बाद हो माता है। नव कि हाथका पिता कितना स्वादिष्ट व शुद्ध होता है सो हम ही जानते हैं। अतः यह कहा जाय कि इन देशी मर्प नोंने भारतको दुर्भिक्ष बनाया तो अत्यक्ति न होगी नयाँकि यहाँ मसीनोंके आनेसे हज रों क्या छाखों मनुष्योंका रोजगार उठ गया व भीख गांगते किस्ते हैं। और इम इनमें इनने फंस गये हैं कि अपने कर्तेव्यवयसे हनारीं कोस दूर ना पहुंचे हैं। महांसे हटकर यथास्थान आना असंपा तो नहीं परन्त दुः साहय है। मानको अगर कन तुम्हारे पर अंग्रेनपाई नारान हो जांब व एतदम सब बंद कर दें तो क्या आप कपड़े विना नंगे फिरना पहंद करेंगे ? पानी विना, बत्ती विना, आहे विना क्या काम चला लेंगे कदापि नहीं। अतः आप ''नव घरमें आग छगी तव कुआ ख़ुदावनको चले" इस कहावतको चरितार्थं न कर शोध ही वर २में रांटर और चक्कीको मान दीनिये निससे ऐना मौका न आग्डे । क्योंकि एक ऐसी भी कहावत है कि "जबसे मस्तीयोंने चकार अधीत् च(खा, चकां, चुछा, अ।दिका त्याम विद्या तपीसे निखारी पन गये। कभी भ तो ऐना होता है कि अगर पानी, आटकी ब रोशनीकी पशंने बिगड माती हैं तो हाय! हय!! होती है, कि अर क्या करें। और तब प्रापडीसमें चक्की व कुएके छिये फिले हैं। अतः अन तम समझ गये होंगे कि यह मारत ''दीन' परतंत्र'' और दस है या नहीं। भी । यहां छुर उप है या यहांकी पना स्रतंत्र-है वा

म्रोन्द्र-गुरुनी, अब मैं अच्छी तरह समझ गया कि इसका यह अर्थ है, परन्तु बीचमें पहछे आपने यह शब्द भी कहे वहे कि ये कपड़ें बड़े अश्चद हैं व चर्नी और चर्म मिश्रित हैं अत: क्या यह बात ठीक है अगर ठीक है तो छीजिये पड़ी कोट और टोपी, मैं न नानता या कि ये कपड़े इतने अशुद्ध हैं, बस अब प्रतिज्ञा करता हं कि कभी ऐसे कपडोंका नाप न छेपा और हमेशाके लिये अहिंसा धर्म पाटक बनता है। गुरुनी-सुरेन्द्र, समय उपादा हो चुका व जीवनेका भी समयहै रसोई उंडी हो रही होगी अतः अब मैं भी माता हूं और तुम भी जाओः सरेन्द्र-अच्छा तो गृहनी प्रणाम परन्त आप-ने तो हमें भी एक प्रश्नके प्रछते पर महात्माके साथ महारमा जैसा बना दिया, धन्य है, कहीं पिनाजी नारान न हों।

मारतकी वर्तमान दशासे दुःखी-

दामोदरदास जैन-सूरत,

ने ट-देखिये एक गुरुका बालक के उत्तर कैसा प्रभाव पड़ा कि उसने सिर्फ ''चरबी'' शब्द व "अशुद्ध" शब्दके सुनते ही अहिसावत लिया, पर तु कीन जाने इस समग्र समानका क्या दुर्वाग्य है! कि इतना र नेताओं के समझानेपर मी कुछ प्रमाव नहीं पड़ता अतः अव शीघ समाजको न गृत होना चाहिये खब गुर्शट लगा-कर गहरी नींदमें सोनेका समय नहीं।

हेस हा

र्नकतेक लड्ड । र

् [जेलक-मोतीलाल पहाइपा, कुनाड़ी (कोटा)]

मेरे घरमें मौत हुई, पंचोंको छह्डू भाते हैं। लहुडू खाने क्या ओत हैं, जीव हमारा खाते हैं।।?।। जाति जिमाना पुरुष बताकर, इसी ओटमें खाते हैं। करने देते दान नहीं ये, लहडूके मदमाते हैं।।२॥ बांध पागड़ी रंग विरंगी, बन पटेल ये आते हैं। छना हुआ पानीका लौटा, झुला हायमें लाते हैं ॥३॥ घरमें रोना मचा हुआ है, छाती पर आ दरते हैं। आंसुंकी बूंदें पीते हैं, तनिक दया नहीं लाते हैं ॥४॥ हड़प हड़पकर भक्षण करते, लड्ड ख़्ब उडाते हैं। पुड़ी जलेबी पालपुओंसे, अपनी आग बुझाते हैं ॥५॥ पंचोंको लड़ड़ न मिलें तो, जनम ठोचका देते हैं। नोता पूरा नहीं लगे तो, जोर जोरसे बदते हैं ॥६॥ व्यास नोतारे टड्डसे, दुकड्या भर भर ले जाते हैं। मराकरे जजमान सदा ही, अझीर बाद दे जाते हैं॥७॥ सारा गांछ विका कर घरका, कोठा अपना भरते हैं। किसी बातसे कमी रहे तो, बदनामी भी करते हैं ॥८॥ मुंखें ऊंची कर करके वे, बाँह चढाकर खाते हैं। नहीं समझमें आती उनको छड़्डू कैसे माते हैं ॥९॥ मरनेवाला मरा करो, इनके तो उम्दा छनती है। पड़ो भादमें पीछेबाका, जब लहड़की गुड़ती है 11१०॥

ખાલી સણામાં હિતવર્ધક સભા-મારાષ માંતિજની દિલ્ જેન હિતવર્ધક સભાના ૧૩ મી वा पी क मेहक व्याद्धीसम्यामां कार्यक वह २-3-४ પર કારકોયા જેઠી સમ માતીય દ જાં ખુડીવાલાના પ્રમુખપગા નીચે મળી હતો, જેમાં આશરે ૫૦٠ દશાહુમક ભાષ્ટએં અને વ્હેના હાજર હતા. ertin vilan જાહિંગ અને સાકરાડા પાડશાળાના વિધાર્પીએાના ગાયના થતાં હત. प्रथम हिंद्धमां प्रतिक तालका समितिना भंत्री ચીમનકાલમાઇ તથા જમમાહનદાન દીરાલાયે ખાદી પહેરવાથીજ ધર્મનું પરન થાય છે એ વિષ વિવેચન કર્યું હતાં. બીજી બેઠકમાં હાંતિ એ બાર્ડિંગના વિદ્યાર્થી આપ્યે કેલવાની વિષે મંત્રાદ કુંગા હતા તથા ચીમનલાક્ષ અને क्राभेद्धनहास अपूरीय हेणावण्या अने धार्मिक કેલવળીના કુગદા દેશાંવ્યા દેતા. એજ રેલ मि(डिंगना इंड सार रुख थतां कथायुं दर्व है शह्मानमा ४५ दना अने दास १८ विधार्थी હે તે અંધા દશા દશાંત્ર છે. મણીલાલ કાંદારાએ જણાવ્યું કે આજ સુધી આવથી આઠ હજાર રાયા ખરચાઇ સક્યા છે છતાં એક પશ્ચ વિદ્યાર્થી नेयार श्या नथा में अकल में देवें छे. डार्थ डती-એના મતું વહેલાં મેરશાને નકશાન થાય છે. કાર્ય कर्ताकाक ते। भान अपमाननी हरधार न करतां मारिभनी इस्तिनाम प्रयत्न प्रया क्रिसंभ ત્રોજી ખેદુકમાં ચારનલાલબાઇ તથા મહોલાલ है। है। इंग्लिस भारी थीं है है। असि छे तेरक परहें थी કાપડમાં ચરમાં જેવી અપવિત્ર વસ્તુરમાં અને પરદેશી કેશરમાં કાંડી તથા પરદેશી ખંડમાં દારકાં છેવી અપતિત્ર ચર્જાના ઉપયોગ થતા દાવાથી તે જૈતેના અ વારંવાર વાપરવી જોઇ અ નહિ લગેરે અણાવ્યા પછી શાહ નેમચંદ ઉગરચંદે हैंरेल नत्रने। की विषने। क्षेण वाक्री संभागान्ये। હતા. એ **પછી** (૧) દેઉરાસરમા અગ્લજ્**રાં તથા** पालंतां क्ला भादाना राख्यां. (र) शुद्ध पवित्र શર ન મલે ત્યા સુધી કેશરને બદલે ચંદન તાપરલું. (૩) દહેરામરામાં પ્રભાવના અને ૯૬ ણીનાં પરદેશી બ્રહ ખાંડ અને તેની બનાવેલી ચાર્જાના

ઉપયોગ નહિ કરવાને સંવંતે હિનંતિ કરતાંશ પસાર થયા હતા. ઝાવિકાશ્રમ મંભાઇના નાની બહેતે કેલવણી વિધે તથા ગૈસાળા માટે પાતાય'ટે દીક વિવચન કર્યું હતું. કેટલીક ખ્હેતાએ સ્વદેશી शपर वापरवा प्रतिमा लीधी हती तेमल सभाती મદદમાં સારી રકમ ભરાઇ હતી. મંત્રીએ મબાતા रिपारी राष्ट्र करता जालाव्य दता के वर्ष हरम्यान ક. ૧૨૮૧ાા ા જમે હતા તેમાંથા ૮૬ નાન જાં પડીતા **સભાના** ખરચ ખાદ જતાં રૂ. ૪૨૧ાટ व्याही कामाज्या दता के तक बेहि। पासे हरेखा છે તે મર્વને આપી ટ્વા વિનાત કરી હતી. છેવટે અલ્વતી એડક ઈડરમાં પેથાયર નિવાસી શેડ અમલા-ક્ષાલ માંકલચંદના પ્રમુખપુષા નીચે ભરવાતા દરાવ થયા હતા નને વકા કર્તાકને ભાલીસગામાં ध्यराज भुशास तरस्थी सवेते जभग अभाष् હતું. દહેરા મુરજીમાં પણ ६००)ની ઉપજ થક હતી.

श्वे० दि० में निवटेरा—तीर्थों के झगड़े में वर्षों से दिगम्बरी श्वेताम्बरी माईयों के लाखों रुपये खर्च हो रहे हैं उसका आपसमें निवटेस करनेकी इलचल दो तीन वर्षसे चल रही थी और अभी खबर मिली है कि लाला नम्बूमसा-दबी हारा खबर मिली है कि दोनों तरफ के वीस र प्रतिनिधि चुने जा चुके हैं और देह शीमें ता० ४ फबरीको कोन्फ्रेन्स होगी।

સુરતમાં દાન -અત્રેના શા. નવલચંદ શાલા-ગય દે પાતાના ભાગેજ અંપાળ્રેનના સ્મભ્યો ૧૦૬) નીચે મુજબ દાન કર્યું છે ૧૦) ભાજનશઃળા સુરત, ૧૦) પાજરાપેળ સુરત, ૧૯) અશકતાશ્રમ, ૧૫) કુલકાર દન્યાજ્ઞાળા, ૧૦) સીખરજ અશકત આશ્રમ, ૧૦) ૩. હ્લા આશ્રમ જયપુર, ૧૯) અનાથાલય આંગપાલય બહનપર ૧૦) હીરાજ્ય અં આ પધાલય, ૫) કુંથલમાર આશ્રમ, ૫) સ્યા. વિદ્યાલય કાશી અને ૨) જીવદયા.

[&]quot;जैन विजय " प्रिन्टर प्रेस खारिया चकडा,-सुरतम मूडचंद किसनदास कापड़िशने मुद्रित किया और "हिगम्बर जैन" आफिन्न, चंदावाड़ी-मुरतसे उन्होंने ही प्रकट किया।

राजस्थानी रेंडपाकी गान।

. .

[एक कुनाही (कोटाराज्य) नियासिमी महिला लिखिन]

भैवर माने रहणे बणवादो-जी-डोक महाने रेटणो संगवादो र सीण् कात मृत जणीकी रेजी बणवादो ॥

खांदा थारे चांदणी, सीण् कातुं सत ।

काचा मृतका तारसुं, बांबू दुरमन दृत ॥ मैवर महाने व रेटणो चक्र सुदर्शणी, यो राजेमो लाज ।

गांधीजीचा हुइम सुं, संग देशको काल ॥ भैवर महाने व काचा मृतका ज़कड़ी, ये गोजंको काम ।

पानेची गोपनको, करसी नाम समाम ॥ भैवर महाने व सात सहल्यां साथ ले, गाउं देशका गीत ।

सत पर बेटी कातस्यू, देखो महाभी रीत ॥ मैवर महाने व राजन् र थांसी वीनती, सुणलो महाभी एक ।

सत कातनो सीखड़ी, रहे देशकी हैक ॥ भेवर महाने व

सुभाशीष.

સમળાં સફળ થાએ વંચવાડી વધ સીસા ભનાવા દેવ અગ્ના પ્રકુષ ચિને સહ શહેલારી થઇ દીવનાં દુ:ખડા હમે સહ સદસાવ રાખી સ્તેરથી આતંદમાં મન રાખશા. નાથને સંભાળીને આગળ વધા સફ નંદ કાર્યના સિદિજ થાયે એ વિના મથળા ખરી: ચાંચળ ખતીને શરૂ કરા ઉદાયનાં કાર્યો નર્મ, દળદરી તમાં કન્ડા હરીને સકળ શામાં મહુ તમે. (૧) મિત્રા તહેં મહિમા વધારા વિદ્યા અને સુ સંપર્થ, શામે. કામે મિત્રતાને કડી કરા રામ સમયી: વ્હાલથી ચાહેા મહુને નિરૂદિન આ જગતમાં, હ્યાબ એ છે ખરેખરા જગદિશાના इरमारमां (3) **ઇ**વ્યક્રીય વસ્તુને અહેર સદ્ વારતા દેખાડીને, ડરશા નહિ ભાષત્તિઓથી ધર્મ રસકસ વિવિધ સાહિત્યમાં વૃદ્ધિ કરતો अद्यक्षिता મચવસા ઉच्यास्थीः (४) મ તના **દિ**'સાદિનાં કાર્યો તજીને પ્રાણાભાન શ્રંકા વગર મત્યાંચદ્રો પ્રશ થતો; દાલો અપકા મોડીને નિર્મળ મને કાર્યો કરા છે ભાવતા એવીજ મારી ઉત્નાવીને તો વરેત, (પ)

लीव 'स्थां मानाएयुं के,"

वीर सेवा मन्दिर
पुस्तकालय
(०४) १(५४) दिशंद्व
काल नं के समया प्रदान प्रदान १, वर्षे